Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

PANCHAGRI

PANCHAKA

L.B.G.K.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
पुस्तकालय

विषय संख्या
पुस्तक संख्या
आगत पंजिका संख्या

पुस्तक पर किसी प्रकार का निशान लगाना वर्जित है। कृपया १५ दिन से अधिक समय तक पुस्तक अपने पास न रखें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

1916
57
1859

यह पुस्तक वितरित न की जाय
NOT TO BE ISSUED

सन्दर्भ ग्रन्थ
REFRENCE BOOK

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

भाग २१] Registered No. A 414 [संख्या १—२

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

प्रति द्वारा मुक्तिः
भाग सं० ११(१)
1973

जूलाई, अगस्त १९१६

सम्पादक—रामचन्द्र वर्म्मा ।

—:०:—

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल । बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल ॥
करहु विलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल । निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सब कों मूल ॥
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार । सब देशन सों लै करहु, भाषा मांहि प्रचार ॥
प्रचलित करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न । राज काज दरबार में, फैलावहु यह रत्न ॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र ।

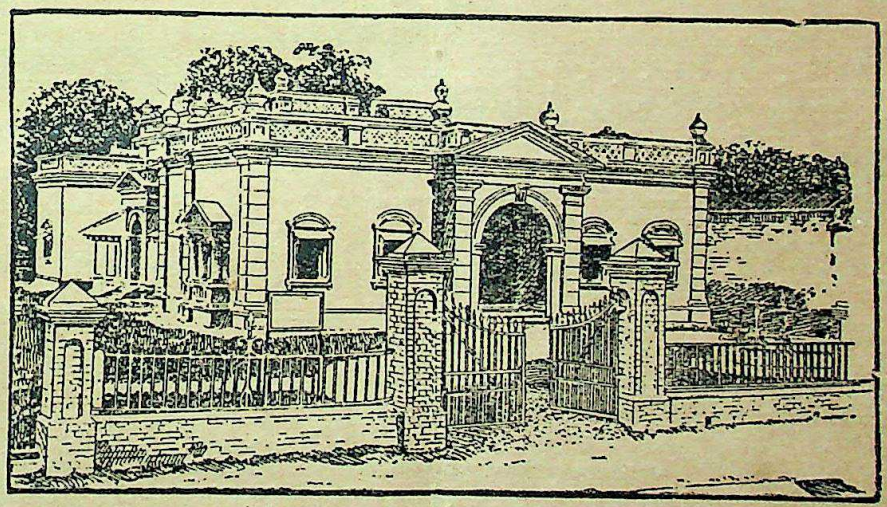

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित ।

श्री अपूर्वकृष्ण बोस द्वारा इंडियन प्रेस, प्रयाग में मुद्रित ।

वार्षिक मूल्य १॥)

प्रति संख्या =)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची।

(१)	नया वर्ष	१	(७)	सभापति का व्याख्यान	३३
(२)	सांख्य-मीमांसा	३	(८)	चौपाए	३५
(३)	मय जाति	६	(९)	प्रेमभवन पुस्तकालय	४३
(४)	कवि-श्रेष्ठ जयदेव	१५	(१०)	भ्रम संशोधन	४४
(५)	अग्नि का आविष्कार	२०	(११)	सम्मेलन की विषयसूची	४४
(६)	पाबू राठौड़	२७	(१२)	सभा का कार्य्यविवरण	४५

श्रीभास्कर रामचन्द्र भालेराव 'कविदास'

सम्पादित।

क्या आपको यह मालूम है कि,

हिन्दी-चित्रमय-जगत्

राष्ट्र-भाषा हिन्दी की उच्चश्रेणी का; हिन्दी-भाषा-भाषियों का अत्यन्त लाड़ला; मराठी, हिन्दी, अँग्रेज़ी, बँगला इत्यादिक भाषाओं के धुरन्धर लेखकों के लेख प्रकाशित करनेवाला; महाराष्ट्र में 'हिन्दी राष्ट्र-भाषा भवतु' का झंडा फहरानेवाला; सामयिक महत्त्वपूर्ण लेख, कविता तथा चित्रों के प्रकाशित करने में युगांतर प्रस्थापक; हिन्दी में अपने ढंग का सब से पहिला और अनूठा मासिक पत्र है?

यदि, नहीं,

तो आप उसे आज ही मंगाकर देखिये! निस्सन्देह आप उसकी अन्तरंग की चटक मटक पर मोहित होंगे और हिन्दी में ऐसे अनूठे पत्रप्रकाशन के साहस पर दांतों उँगली दबायँगे। पत्र की लागत के देखते मूल्य कुछ नहीं। केवल सादा संस्करण ३॥) राजसंस्करण ५॥) तिसपर भी विशेषांक उपहार में! एक प्रति का ।-), ॥)

पता—

मैनेजर, हिन्दी-चित्रमय-जगत्,

पूना सिटी।

पुस्तक संख्या .....
आगत सं० .....
तिथि० .....

आवश्यकता है

हिन्दी पुस्तकों की बिक्री के लिये दो भ्रमणकारी एजेण्टों की। मासिक वेतन १५)० रु० और मार्गव्यय दिया जायगा। ५०) रु० की नगद ज़मानत देनी चाहिए। जिन लोगों को इस काम का पहिले का अनुभव हो वही प्रार्थनापत्र भेजें।

सेक्रेटरी

नागरीप्रचारिणी सभा—काशी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

110762
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
गुरुकुल ग्रन्थालय कांगड़ी
110762

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

भाग २१ | जूलाई, अगस्त १९१६. | संख्या १—२

नया वर्ष ।

प्रति वर्ष जूलाई मास से नागरीप्रचारिणी पत्रिका का नया वर्ष आरम्भ हुआ करता है । गत जून मास में नागरीप्रचारिणी पत्रिका को प्रकाशित होते हुए बीस वर्ष पूरे हो गए और जूलाई १९१६ से उसका इक्कीसवाँ वर्ष आरम्भ हुआ है । अब तक नागरीप्रचारिणी सभा और नागरीप्रचारिणी पत्रिका ने नागरी लिपि तथा हिन्दी भाषा की जो कुछ सेवा की है और उनके प्रचार के लिये जो कुछ प्रयत्न किया है वह हिन्दी-संसार भली भाँति जानता है ; यहाँ उसके विषय में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं । सभा ने इस सम्बन्ध में अपनी ओर से कभी कोई बात उठा नहीं रखी । अब उसे अपने प्रयत्नों में कहाँ तक सफलता हुई है इसका निर्णय विचारवान् लोग स्वयं कर सकते हैं ।

नागरीप्रचारिणी सभा सब की है । हिन्दी-प्रेमी मात्र का उस पर समान रूप से अधिकार है । पर कहते दुःख होता है कि लोग अपने इस अधिकार का जितना चाहिए, उतना उपयोग नहीं करते । वास्तव में सर्वसाधारण से सभा को जितनी सहायता अपेक्षित है; उसे मिलनेवाली सहायता उसके सामने कुछ भी नहीं है । यह बात हमारे, आपके और सब के लिये बड़े ही दुःख और लज्जा की है । अभी गत ७ अगस्त को सभा का जो बाईसवाँ वार्षिक अधिवेशन हुआ था, उसमें सभापति श्रीयुक्त बाबू गौरीशंकरप्रसाद बी० ए० एल एल० बी० ने बड़े ही खेद के साथ कहा था कि इस समय सभा की प्रायः जितनी बातें हमें दिखाई पड़ती हैं, राष्ट्र-भाषा हिन्दी की सर्व-प्रधान सभा के लिये उनमें से एक बात भी उपयुक्त और योग्य नहीं है । ऐसी सभा के जितने सभासद होने चाहिए उतने सभासद नहीं हैं, उसके पास जितना धन होना चाहिए, उतना धन नहीं है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उतना क्या, कुछ भी धन नहीं है—उसके लिये जितना विशाल भवन होना चाहिए, उसके सामने उसका वर्त्तमान भवन कुछ भी नहीं है, उसके कामों में जितने अच्छे अच्छे और अधिक लोगों को योग देना चाहिए, उतने लोग उसके सहायक नहीं हैं। ऐसी सभा के केवल बारह तेरह सौ ही सभासद हों, यह बड़े ही आश्चर्य्य का विषय है। सभा का कोई स्थायी कोश न हो, यह बड़ी ही लज्जा की बात है। पुस्तकालय और स्टाक आदि के बढ़ जाने के कारण सभा का बड़ा हाल रुक जाय और बड़ी सभाएं करने के लिये कोई उपयुक्त स्थान ही न बच जाय, यह कुछ कम दुरवस्था नहीं है। सभा का सारा काम गिनती के ही कुछ आदमियों को करना पड़े और बहुत से समर्थ, कार्य्य-कुशल और योग्य सज्जन दूर से चुपचाप तमाशा देखा करें, कभी कोई अच्छी बुरी सम्मति भी न दें, इसे नागरी और हिन्दी का बड़ा भारी दुर्भाग्य ही समझना चाहिए। ये सब बातें ऐसी हैं जिन पर प्रत्येक हिन्दी-प्रेमी को स्वयं ही विचार करना चाहिए, किसी दूसरे को उनका ध्यान आकर्षित कराने की आवश्यकता ही नहीं होनी चाहिए। लोगों की बहुत अधिक उदासीनता देख कर सभा के अभाव अन्यान्य लोगों के सामने रखने के लिये हम विवश हुए हैं। उनके विषय में विशेष कुछ कहना अनावश्यक है। लोग स्वयं सोचें और समझें कि सभा के प्रति उनका क्या कर्त्तव्य है, सभा की वे किस रूप से और कितनी सेवा तथा सहायता कर सकते हैं। पर इतना अवश्य स्मरण रखें कि वह सारी सेवा और सहायता हिन्दी की होगी, खास सभा की नहीं।

सभा-भवन में स्थान की संकीर्णता है और कोश में धन का नितान्त अभाव है। चाहिए तो यह कि कुछ और नई जमीन ले कर उस पर एक बड़ा हाल बनवाया जाय और दिन पर दिन बढ़ते हुए स्टाक के लिये स्थान का प्रबन्ध किया जाय; पर यदि अभी इतना न हो सके तो सभा-भवन के ऊपर एक और खण्ड तो अवश्य बन जाना चाहिए। इस काम के लिये तो धन चाहिए ही, साथ में लोगों को स्थायी कोश का भी ध्यान रखना चाहिए। जब तक सभा के पास यथेष्ट स्थायी कोश न हो जाय, तब तक उसके जीवन का पूरा भरोसा ही न करना चाहिए। यदि लोग समझते हों कि सभा से हिन्दी का कुछ उपकार हुआ है और आगे उससे कुछ लाभ होने की आशा है, तो उन्हें सभा की आर्थिक अवस्था ऐसी कर देनी चाहिए जिसमें कम से कम उसका जीवन तो संदिग्ध दशा में न रहे। स्थायी कोश बना कर सभा को स्थायी बना देना चाहिए।

जब कहने ही बैठे हैं तो एक बात और भी कह देनी चाहिए। वह बात पत्रिका के सम्बन्ध में है। इधर बरसों से पत्रिका का सिलसिला कुछ बिगड़ सा गया है। उसका सब से बड़ा दोष ठीक समय पर न निकलना है। इस दोष के कारण स्वयं सभा की बहुत कुछ हानि हुई और हो रही है और यदि यह दोष बना रहा तो भविष्य में उसकी और भी अधिक हानि अनिवार्य्य होगी। सभा को इस हानि से बचाना प्रत्येक हिन्दी-प्रेमी का साधारणतः और सभा के प्रत्येक सभासद का विशेषतः परम कर्त्तव्य और धर्म्म है। सभा के सभासदों की सूची में तो बड़े बड़े हिन्दी-सेवियों और अच्छे अच्छे लेखकों के नाम भरे पड़े हैं; पर नागरीप्रचारिणी पत्रिका की ओर से वे लोग जितने उदासीन दिखाई पड़ते हैं, उससे सन्देह होता है कि पत्रिका को लेख देने में कहीं वे अपना अपमान तो नहीं समझते! सभा के जिन सभासदों के लेख बहुत ही साधारण कोटि के पत्र और पत्रिकाओं में छपते हुए दिखाई देते हैं, वे ही सभासद नागरीप्रचारिणी पत्रिका के लिये कभी एक पंक्ति भी लिखने का कष्ट नहीं उठाते। एक आदमी की लिखी हुई सारी पत्रिका पाठकों का कह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तक मनोरंजन कर सकेंगी, इसमें हमें बड़ा भारी सन्देह है। उसमें रोचकता तभी आवेगी जब उसमें भिन्न भिन्न विषयों पर अच्छे अच्छे विद्वानों के लेख निकलेंगे। यह शिकायत कई वर्षों से चली आ रही है। गत दो वर्षों से सभा की वार्षिक रिपोर्ट में भी यह रोना रोया जाता है, पर कभी कोई ध्यान ही नहीं देता। अनेक सभासद सभा के हित की तो बहुत सी बातें कह डालते हैं पर पत्रिका के लिये कभी कुछ लिखने की वे कोई आवश्यकता नहीं समझते। लाचार हो कर हमें पत्रिका में लोगों को यह उलाहना देना पड़ा है। आशा है, विज्ञ लेखक तथा सभा के सभासद इस ओर विशेष ध्यान देंगे और समय समय पर पत्रिका के लिये उपयोगी लेख भेजने की कृपा करेंगे। यदि बाहर से लेखों की थोड़ी बहुत सहायता भी मिल जायगी तो पत्रिका बराबर ठीक समय पर निकलती रहेगी और उसके पिछड़े रहने के कारण सभा की जो हानि होती है, सभा उस हानि से बच जायगी।

आजकल युद्ध के कारण कागज का दाम बहुत बढ़ गया है। पत्रिका की छपाई का व्यय बहुत अधिक होता जाता है। अतः यह निश्चय किया गया है कि जब तक कागज आदि का दाम ठिकाने न आ जाय तब तक पत्रिका के ३२ पेज के बदले २४ ही पेज छापे जायँ। नए वर्ष से पत्रिका तीन ही फार्मों की हुआ करेगी।

सांख्य-मीमांसा।

(लेखक—श्रीयुक्त कन्नोमल एम० ए० सेशन्स जज, धौलपुर।)

सांख्य शास्त्र का उद्देश्य, तीनों प्रकार के दुःखों से छूट कर मोक्ष प्राप्त करना है। इसका साधन सांख्य के २५ तत्त्वों का पूर्ण ज्ञान करना है। ये तत्त्व इस प्रकार हैं:—

१ अव्यक्त
२ बुद्धि
३ अहंकार
४–८ तन्मात्रा (५)
९–१४ज्ञानेन्द्रियाँ (५)
१५–१८ कर्मेन्द्रियाँ (५)
१९ मन
२०–२४ महाभूत (५) और
२५ पुरुष

इनमें से पहले ८ प्राकृतिक तत्त्व कहलाते हैं और उसके पीछे के १६ विकार कहलाते हैं।

अब इनमें से प्रत्येक का थोड़ा थोड़ा विवरण सुनिए।

अव्यक्त—इसे प्रधान, अक्षर, क्षेत्र, प्रकृति, प्रसूता आदि भी कहते हैं।

अव्यक्त का अर्थ है जो व्यक्त या विकसित न हुआ हो। प्रकृति की वह दशा जो संसारोत्पत्ति के पूर्व थी, अव्यक्त थी। अर्थात् उस समय प्रकृति का विकाश नहीं हुआ था। अव्यक्त दशा में प्रकृति अनादि और अनन्त है और यह किसी से उत्पन्न नहीं हुई है। हाँ, वह दूसरों को उत्पन्न करने की शक्ति रखती है। यह शक्ति सत्व, रज, तम, इन तीनों गुणों की कारण है जो उसमें सदैव विद्यमान रहते हैं। जब ये तीनों साम्यावस्था में रहते हैं तब सृष्टि नहीं होती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परन्तु जब इनमें से एक भी अधिक या न्यून होता है तब संसारोत्पत्ति होने लगती है। संसार की सभी वस्तुओं में ये तीनों गुण व्याप्त हैं।

प्रकृति से पहले बुद्धि उत्पन्न होती है।

बुद्धि—महत्, प्रज्ञा, मति, धी आदि इसके दूसरे नाम हैं।

बुद्धि का धर्म किसी बात को निश्चय करना है। वह अध्यवसाय है अर्थात् उसके द्वारा निश्चय होता है कि यह मनुष्य है या पशु या वृक्षादि।

बुद्धि से अहंकार उत्पन्न हुआ।

अहंकार—जिससे अपनापन प्रकट हो उसे अहंकार कहते हैं। जैसे मैं सुनता हूँ या मैं जानता हूँ। बिना अहंकार के जीव में अपनापन नहीं आता। अहंकार से तन्मात्रा, ज्ञान, कर्मेन्द्रियों और मन की उत्पत्ति हुई है।

तन्मात्रा—शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध इन पाँचो के सूक्ष्म तत्त्वों का नाम तन्मात्रा है।

इन्हीं तन्मात्राओं से पंच महाभूत उत्पन्न हुए हैं।

ज्ञानेन्द्रियाँ—श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, जिह्वा और घ्राण।

कर्मेन्द्रियाँ—हस्त, पद, वाणी, पायु और उपस्थ।

मन—यह ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय दोनों के लक्षण रखता है और संकल्प विकल्प इसका धर्म है।

महाभूत—पृथ्वी, जल, आकाश, वायु और तेज।

पुरुष के ये लक्षण हैं:—

अनादि, सूक्ष्म, सर्वव्यापी, साक्षी, निर्गुण, अजन्मा, असृष्टा, निर्मल, सब का ज्ञाता, द्रष्टा और भोक्ता। उसका आदि, अन्त या मध्य नहीं है इस कारण वह अनादि है। उसके खण्ड नहीं हैं और वह इन्द्रियों से परे है इसलिये वह सूक्ष्म है। वह आकाश के समान सर्वत्र व्यापक और असीम है इसलिये सर्वव्यापी है। वह सुख और दुःख देखता है इसलिये साक्षी है। उसमें सत्व, रज और तमः ये तीनों गुण नहीं हैं इसलिये वह निर्गुण है। उसका जन्म नहीं हुआ और न हो सकता है इसलिये वह अजन्मा है। वह प्रकृति के विकारों को देखता है इसलिये द्रष्टा है। साक्षी होने से कह सकते हैं कि उसे सुख दुःख का अनुभव होता है, इसलिये वह भोक्ता है।

निर्गुण और विरक्त होने से उसे कर्त्ता नहीं कह सकते। वह सब पदार्थों के गुणों को जानता है इसलिये सर्वज्ञ है। अच्छे बुरे कर्मों का उससे सम्बन्ध नहीं है इसलिये वह निर्मल है। निर्बीज होने के कारण वह असृष्टा है।

पुरुष एक नहीं अनेक हैं। इसके दूसरे नाम आत्मा, पुमान्, क्षेत्रज्ञ, नर, कवि, ब्राह्मण, अक्षर, प्राण, एक, सत् आदि हैं।

संसारोत्पत्ति और लय-क्रियाएँ।

पुरुष के संग में प्रकृति अपने तीनों गुणों के वैषम्य से सृष्टि उत्पन्न करती है। सृष्टि के विकास का यह नियम है।

अव्यक्त अथवा प्रकृति से पहले बुद्धि उत्पन्न होती है। बुद्धि से अहंकार, अहंकार से तन्मात्राओं, ज्ञानेन्द्रियों, कर्मेन्द्रियों और मन की उत्पत्ति होती हैं। तन्मात्रा से महाभूत उत्पन्न होते हैं।

इस विकाश-क्रिया का नाम संक्रम है। इसके विपरीत होनेवाली क्रिया का नाम प्रतिसंक्रम है। संक्रम-क्रिया को विकाशक्रम अथवा परिणाम परिवर्त्तन भी कहते हैं।

जीव।

पुरुष के लक्षण ऊपर लिख आए हैं। उनको देखते हुए यह सिद्ध नहीं होता कि पुरुष कर्मों के बन्धनों में पड़ कर आवागमन करता है। वह तो निर्मल और सदैव स्वतंत्र है। फिर यह कौन है जो भोगता है। सांख्य का उत्तर है कि एक लिंग-शरीर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है जो आदि से उत्पन्न होता है। यह १७ वस्तुओं का बना है अर्थात् बुद्धि, मन, ५ ज्ञानेन्द्रियाँ पांच कर्मेन्द्रियां और पांच प्राण। जीवात्मा इस शरीर के द्वारा ही फल अथवा मोक्ष की इच्छा करता है। यह शरीर जब तक स्थूल शरीर से नहीं मिले तब तक कुछ अनुभव नहीं कर सकता।

दुःख।

जीव को दुःख तीन प्रकार के होते हैं:—

१—पहले वे दुःख जो शरीर और मन से हों। जैसे,—रोग, शोक आदि।

२—दूसरे वे दुःख जो बाहर से हों। जैसे,—चोर, सर्प इत्यादि के कारण।

३—तीसरे वे दुःख जो दैव की तरफ से हों। जैसे,—अतिवृष्टि, हिमपात, ताप इत्यादि।

ये सब दुःख पूर्व कर्मों से होते हैं। इन सब दुःखों से छुटकारा पाना ही मोक्ष है।

मोक्ष।

मोक्ष तीन प्रकार से होता है,—

१—ज्ञानाधिकता से।

२—इन्द्रियों की विषयों से उपरति होने से।

३—सब कर्म और वासनादि के नाश होने से जिसे निशेष मोक्ष कहते हैं। इस मोक्ष को प्राप्त करने के उपरान्त जीवात्मा फिर संसार में नहीं आता, सदैव परमानन्द रूप हो जाता है।

मोक्ष की प्राप्ति के लिये अविद्या अथवा अविवेक एक बड़ी बाधा है। यह मुख्यतः पांच प्रकार की होती है। तमसा, मोह, मायामोह, तमश्र और अन्धतमश्र।

इसके दूर करने के लिये सांख्य दर्शन में जो २५ तत्त्व कहे गए हैं उनका पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।

मनुष्य को समझना चाहिए कि गुण अर्थात् सत्व, रज और तम प्रकृति में हैं न कि आत्मा में; और जो कर्त्तृत्व है वह सब गुणों में है। अविवेक से मनुष्य समझता है कि कर्त्तृत्व आत्मा में है और कहता है कि मैं करता हूँ; परन्तु यह उसकी मूर्खता है।

आत्मा निर्मल और निर्विकल्प है। (देखो गीता ३ रे अध्याय का २७ वाँ श्लोक और १३ वें अध्याय का २९ वाँ और ३१ वाँ श्लोक।)

सांख्य के मतानुसार, अध्यात्म, अधिभूत, और अधिदैव्यत का अर्थ समझना चाहिए।

बुद्धि, अहंकार, मन, ज्ञानेन्द्रियाँ, कर्मेन्द्रियाँ—इन तेरहों को तीन तरह से समझना चाहिए।

जब इनमें से प्रत्येक अपने रूप में देखी जाती है तब वह एक आन्तरिक भाव है जो अध्यात्म कहलाता है। जिन बाहरवाली वस्तुओं का उससे सम्बन्ध होता है वे अधिभूत हैं।

जो इनमें से प्रत्येक का देवता है वह अधिदैव है, जैसे बुद्धि। बुद्धि स्वयं आन्तरिक भाव है। जिस विषय का उसके द्वारा निश्चय किया जाय वह बाह्य है। इसलिये बुद्धि अध्यात्म है। विषय अधिभूत है और इसके देवता ब्रह्मा आदि हैं। इसी तरह अहंकार, मन आदि को भी समझो।

अध्यात्म और अधिभूत में वही सम्बन्ध है जो ज्ञाता और ज्ञेय में होता है।

सांख्य में तीन प्रकार के प्रमाण हैं,—

(१) प्रत्यक्ष, (२) शब्द और (३) आप्त वचन।

इस शास्त्र के कर्त्ता कपिल मुनि हैं।

—:०:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मय जाति ।

हमारे यहाँ के प्राचीन ग्रन्थों में मय नामक एक दानव का वर्णन है जिसके विषय में यह प्रसिद्ध है कि वह बड़ा भारी शिल्पकार था। रामायण के उत्तर काण्ड में लिखा है कि उसकी माता का नाम दिति था और उसने हेमा नाम की एक अप्सरा से विवाह किया था। हेमा के स्वर्गवासी हो जाने पर मय ने अपने मन-बहलाव के लिये हीरों और मोतियों का एक बढ़िया नगर बनाया था। एक बार जंगल में रावण से उसकी भेंट हो गई। वहीं उसने अपनी कन्या मन्दोदरी का विवाह रावण के साथ कर दिया। जब सीता को हर कर रावण लंका ले गया था तब मय ने ही सीता के रहने के लिये एक बहुत अद्भुत मकान बनाया था जो सात खण्डों का था। महाभारत तथा कई पुराणों में भी इसी प्रकार मय-दानव के कई वर्णन आए हैं जिनमें उसकी तक्षण-कला की निपुणता का बहुत अच्छा उल्लेख है। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के लिये जो प्रसिद्ध और अद्भुत यज्ञशाला बनी थी वह भी मय की ही बनाई हुई थी।

आजकल अमेरिका के कुछ भागों में एक बहुत प्राचीन जाति के लोग पाए जाते हैं जो अपने को मय कहते हैं। किसी समय यह मय-जाति बहुत ही उन्नत, सभ्य और तक्षण-कला में परम निपुण थी। उस जाति के बसाए हुए नगरों के खँडहर अब भी बहुत अधिकता से वहाँ पाए जाते हैं। अनुमान किया जाता है कि भारत में प्राचीन काल में कुछ लोग मय कहलाते थे। सम्भवतः उन्हीं में से कुछ लोग अमेरिका जा कर बस गए होंगे। उनके अनेक आचार-विचार आदि हिन्दुओं से बहुत अधिक मिलते जुलते थे और इसी कारण उक्त अनुमान की सृष्टि और सिद्धि हुई है। इस मय जाति के सम्बन्ध में अनेक बातें बहुत ही मनोरंजक और कुतूहल-वर्द्धक हैं, अतः उसका कुछ वर्णन यहाँ दिया जाता है।

देश-वर्णन ।

अमेरिका की प्राचीन मय जाति वर्त्तमान मेक्सिको प्रदेश के दक्षिणी और मध्य अमेरिका के उत्तरीय भाग में निवास करती थी। इस प्रान्त के दक्षिणी भाग में बहुत सी छोटी छोटी नदियाँ हैं; पर उत्तरी भाग में जिसमें युकेटन प्रायद्वीप भी सम्मिलित है, नदियों आदि का बहुत ही अभाव है। वहाँ स्थान स्थान पर कुछ प्राकृतिक कुएँ हैं, और यदि वे कुएँ वहाँ न होते तो वह प्रदेश बसने योग्य न होता। उस प्रदेश में जल के अभाव का मुख्य कारण यह है कि वहाँ की भूमि ही ऐसी कंकरीली है जिस पर पानी ठहर नहीं सकता और नीचे बैठ जाता है।

इस प्रदेश के दक्षिणी भाग में बहुत से घने जंगल भी हैं जिनके बीच बीच में लंबे चौड़े मैदान हैं जो चरागाह का काम देते हैं। कुछ स्थानों पर कई छोटी बड़ी पहाड़ियाँ भी हैं। एक तो युकेटन प्रान्त की भूमि ही अच्छी नहीं है, दूसरे वहाँ खेती के कामों के लिये यथेष्ट जल भी नहीं मिलता, इसलिये वहाँ यथेष्ट अन्न और वनस्पति की उत्पत्ति नहीं होती, वहाँ भी कहीं कहीं छोटे मोटे जंगल ही हैं।

मय जाति का देश गरम है। वहाँ केवल दो ही ऋतुएं होती हैं,—वर्षा और ग्रीष्म। वर्षा ऋतु बैसाख-जेठ से पूस-माघ तक रहती है; पर भिन्न भिन्न स्थानों में इस ऋतु के आरम्भ और समाप्त होने में बहुत कुछ अन्तर पड़ जाता है।

आजकल भी वहाँ कई तरह के अन्न होते हैं और प्राचीन काल में भी होते थे; और बहुधा उन्हीं पर मय लोग अपना जीवन-निर्वाह करते थे। सूअर और हिरन आदि की जाति के अनेक जानवर भी वहाँ अधिकता से पाए जाते हैं, प्राचीनकाल में मय लोग जिनका खूब शिकार करते थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस समय वहाँ मय भाषा बोलनेवाले प्रायः बीस से अधिक फिरके हैं जिनमें सब मिला कर कोई पाँच लाख आदमी हैं। ये लोग रहते तो अपने पूर्व पुरुषों के प्रदेश में ही हैं, पर उनकी अवस्था और परिस्थिति आदि में बहुत बड़ा परिवर्त्तन हो गया है। पहले अमेरिका में मय जाति की सभ्यता बहुत बढ़ी चढ़ी थी; पर अब वह बात नहीं रही। उस जाति के जो थोड़े बहुत लोग इस समय बचे हुए हैं वे अपनी सब पुरानी रीति-रसम भूल गए हैं और जाति बराबर धीरे धीरे नष्ट होती जाती है।

प्राचीन इतिहास ।

ईसवी पहली या दूसरी शताब्दी तक तो प्राचीन मय लोग असभ्य और जंगली ही थे; पर इसके बाद धीरे धीरे वे लोग सभ्य होने लगे। जितने प्राचीन स्मृति-चिह्न और शिलालेख आदि मिले हैं वे प्रायः सभी पहली या दूसरी शताब्दी के माने गए हैं। वे सब शिलालेख आदि चित्र-लिपि में हैं। बिलकुल असभ्य और जंगली दशा से निकल कर किसी जाति के सभ्य बनने और चित्र-लिपि लिखने के योग्य होने में अवश्य ही बहुत समय लगता है। सब से पुराने जो स्मृति-चिह्न और शिलालेख आदि मिले हैं उनसे पता चलता है कि उस समय इस जाति ने तक्षण-विद्या में बहुत अधिक उन्नति कर ली थी। यही नहीं बल्कि उस समय तक उनके विचार भी बहुत उन्नत और परिष्कृत हो चुके थे। उस समय तक की उनकी जितनी उन्नति का पता चलता है, उतनी उन्नति दस-पाँच पीढ़ियों या सौ दो सौ वर्षों में सम्भव नहीं; उसके लिये कई शताब्दियों का समय चाहिए।

इस बात के अनेक प्रमाण मिले हैं कि ईसवी दूसरी शताब्दी के अन्त में मय जाति अच्छी तरह सभ्य हो चुकी थी। इसके बाद वह जल्दी जल्दी और बहुत ही विलक्षण रूप में उन्नति करने लगी। मय-प्रदेश के दक्षिणी भाग में बराबर एक से एक अच्छे नगर बनने लगे और सबमें विद्या तथा कला की खूब उन्नति होने लगी। चार सौ वर्ष तक—छठी शताब्दी के अन्त तक—मय जाति बराबर उन्नति करती रही। बल्कि यह कहा जा सकता है कि उस समय तक वह उन्नति के शिखर तक पहुँच चुकी थी। तक्षण-कला में इस जाति ने जितनी उन्नति की थी वह अन्यान्य अच्छी अच्छी जातियों की तत्सम्बन्धी उन्नति की टक्कर की थी। उस समय तक मय जाति ने तक्षण-कला को मानों पराकाष्ठा तक पहुँचा दिया था। प्राचीन स्मृति-चिह्नों पर जो तिथियाँ खुदी हुई मिली हैं उनसे पता लगता है कि उस समय दक्षिण प्रदेश के सभी नगरों की सम्पन्नता और विभूति बहुत ही बढ़ी चढ़ी थी। वर्त्तमान दक्षिण मेक्सिको में पैलेंक और मैक्सिचिलन, वर्त्तमान ग्वैटेमाला में पिड्रस, नेगरास, सेबल, टिकल, नरंजो और क्विरिगुआ, तथा वर्त्तमान होंडुरास में कोपन नामक नगर बहुत ही उन्नत और सम्पन्न दशा में थे। उन्हीं तीन चार सौ वर्षों में ये सब नगर बने, उन्नत हुए और अंत में यदि एक दम से नष्ट नहीं हो गए तोभी कम से कम उनका पतन अवश्य आरम्भ हो गया।

दक्षिणी मय प्रदेश में जिन कारणों से सभ्यता का ह्रास हुआ उनका पता नहीं चलता। यह अनुमान किया जाता है कि दूर दक्षिण या पश्चिम से कुछ अधिक बलवान् जातियां वहाँ आ पहुँचीं और उन्होंने मय जाति को यहाँ से हटा दिया, अथवा जैसा कि अन्य जातियों में हुआ करता है, सभ्यता अपना नियत मार्ग समाप्त कर के, आगे बढ़ने की आन्तरिक शक्ति के अभाव के कारण स्वयं ही नष्ट हो गई। इन दोनों कारणों में से चाहे जो कारण ठीक हो पर इसमें सन्देह नहीं कि दक्षिणी नगरों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छठी शताब्दी के बाद का अचानक कोई स्मृति-चिह्न नहीं मिलता जिससे प्रकट होता है कि उस समय ये नगर उजड़ गए थे।

एक कारण अवश्य ऐसा है जो उस समय की अवनति या ह्रास में बहुत कुछ सहायक हुआ था। युकेटेन के निवासियों ने सोलहवीं, सत्रहवीं और अट्ठारहवीं शताब्दियों में मय भाषा के कई प्राचीन हस्त-लिखित ग्रन्थों की नकल की थी। ये ग्रन्थ अलग अलग प्राचीन मय नगरों के सम्बन्ध में थे और प्रत्येक ग्रन्थ में एक एक नगर का प्राचीन इतिहास और विवरण आदि दिया हुआ था। उन ग्रन्थों से पता चलता है कि पाँचवीं शताब्दी के मध्य या अन्त में उन लोगों ने युकेटन प्रान्त का दक्षिणी भाग ढूँढ़ निकाला था और धीरे धीरे वहाँ आ कर बसना भी आरम्भ कर दिया था। छठी शताब्दी में दक्षिण प्रान्त के देश धीरे धीरे नष्ट होने लगे और तब से बाद का एक भी स्मृति-चिह्न नहीं मिलता। उसी समय उत्तर प्रान्त का शिशन इजा नामक नगर स्थापित हुआ और बराबर उन्नति करता गया। उस समय का पूरा पूरा, क्रम-बद्ध और विश्वसनीय इतिहास नहीं मिलता। इसलिये तत्कालीन अनेक घटनाओं की तिथियों का पता नहीं चल सकता। पर तो भी यही सम्भव जान पड़ता है कि युकेटन का पता लगने के उपरान्त दक्षिणी नगर उजड़ने लग गए थे। इसमें सन्देह नहीं कि छठी शताब्दी के अन्त में दक्षिण प्रान्त उजड़ गया और उत्तर प्रान्त बसने लग गया था।

यद्यपि उस समय मय जाति का पुनरुत्थान नहीं हुआ था तो भी युकेटन का पता लगने के कारण उसकी उन्नति और सभ्यता ने एक नया रूप धारण कर लिया था। नए जल-हीन प्रदेश और विलक्षण परिस्थिति में जा कर मय-सभ्यता में बहुत कुछ परिवर्त्तन और सुधार हुआ,. पहले पहल जब कि मय लोग युकेटन में बसने लगे थे उस समय बहुत परिश्रम और अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था और इसी लिये विद्या तथा कला में वे कोई उन्नति नहीं कर सके थे। उस समय तो वहाँ रहने-सहने का प्रबन्ध करने में ही उनकी सारी शक्तियाँ लगी रही होंगी और वहाँ स्थायी रूप से बस कर निश्चिन्तता-पूर्वक काम-धन्धा देखने में ही उन्हें बहुत सा समय लग गया होगा। अपना सुभीता देखते हुए उन्हें बार बार अपने निवास-स्थान बदलने पड़ते होंगे और इसी में उनका अधिकांश समय और बल लगा होगा। ऐसी अवस्था में यदि उस काल में उन लोगों ने शिल्प और कला आदि में कोई उन्नति न की हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। उत्तर में जा कर मय लोगों ने सब से पहले बखलल नामक एक नगर बसाया था पर वहाँ वे केवल साठ ही वर्ष रहे थे। दूसरे नगर शिशन इजा में वे लोग प्रायः सौ वर्ष तक रहे थे; और तदुपरान्त फिर नए निवास-स्थान की चिन्ता में लग गए। वहाँ से पश्चिम चल कर उन लोगों ने आठवीं शताब्दी के आरम्भ में चकनपुटुन नामक नगर पर अधिकार किया। वहाँ वे लोग प्रायः ढाई सौ वर्षों तक रहे। सन् ९६० ईसवी में वह नगर आग लग जाने के कारण नष्ट हो गया और तब वे लोग फिर नए निवास-स्थान की चिन्ता में इधर उधर भटकने लगे। इस नए प्रदेश में आए उन्हें प्रायः चार सौ वर्ष बीत चुके थे। इतने समय में वे वहाँ होनेवाली कठिनाइयों से भली भाँति परिचित हो चुके थे और उनके प्रतीकार के उपाय भी जान चुके थे। उस समय उन्हें फिर शिल्प-कला आदि में उन्नति करने की फुरसत मिली और उनकी शक्तियाँ नए नए कामों में लगीं। उस समय उनका परिवर्त्तन-काल समाप्त हो चुका था और पुनरुत्थान काल आरम्भ हो गया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्यारहवीं शताब्दी के आरम्भ में युकेटन में कई बड़े और महत्त्वपूर्ण राजनीतिक परिवर्त्तन हुए। चकैनपुटुन के नष्ट हो जाने के उपरान्त मय-जाति का कार्य्य-क्षेत्र बढ़ गया। वहाँ से निकल कर कुछ लोग तो शिशन-इजा में चले गए और कुछ लोग मय-पन नामक एक नए स्थान पर जा बसे। सम्भवतः उसी समय उक्समल नामक नया नगर भी बसा था। सन् १००० ईसवी में शिशन-इजा, उक्समल और मय-पन इन तीन नगरों के अधिकारियों का एक संघ स्थापित हुआ और आपस में यह निश्चय हो गया कि वे तीनों मिल कर देश का शासन करेंगे—तीनों के अधिकार समान ही होंगे। इस निश्चय के अनुसार दो सौ वर्षों तक शान्तिपूर्वक कार्य्य होता रहा और उस समय में मय लोगों ने शिल्प और कला में बहुत कुछ उन्नति की।

मय लोगों का यह दूसरा और अन्तिम उन्नति-काल था। पहली बार तो उन लोगों ने तक्षण-विद्या में उन्नति की थी और इस बार वास्तु-विद्या में की। उस समय उन लोगों ने जो विशाल और सुन्दर भवन बनाए थे, उनका भग्नावशेष देखने से पता चलता है कि मय-जाति की वास्तु-विद्या अपनी उन्नति की पराकाष्ठा तक पहुँच चुकी थी। पत्थरों पर बेल बूटे आदि बनाने का काम बहुत ही सुन्दर और मनोहर होता था। सारा युकेटन प्रदेश ऐसे ऐसे नगरों के खण्डहरों से भरा पड़ा है जो किसी जमाने में अपना सानी नहीं रखते थे। पर अब तो लोगों को उनके नाम भी याद नहीं रहे। जिस समय ये नगर अपनी परम उन्नत अवस्था में रहे होंगे उस समय सारा देश मधु-मक्खी के छत्ते की तरह दिन रात काम करनेवाले लाखों मनुष्यों से भरा रहता होगा; क्योंकि इस समय वहाँ जितने अधिक खण्डहर आदि हैं उतने बिना बहुत अधिक प्रजा के निवास के हो ही नहीं सकते।

सन् १२०० के लगभग तक तो मय-जाति बहुत ही शान्ति और सुखपूर्वक उस प्रदेश में रह कर अनेक प्रकार से अपनी उन्नति करती रही पर उसके उपरान्त एक ऐसी दुर्घटना हो गई जिसके कारण देश का राजनीतिक संगठन बेतरह शिथिल पड़ गया और तीनों राज्यों की मित्रता नष्ट हो गई जिसके कारण देश और जाति ने अब तक इतनी उन्नति की थी। तत्कालीन शिशन-इजा के शासक का नाम चैक और मयपन के शासन का नाम सील था। चेक ने सील के विरुद्ध एक षड़यंत्र रचा था। जिसके कारण दोनों में भयंकर युद्ध हुआ। उस समय मैक्सिको की तराई में नहुआ नाम की एक जाति बसती थी। उस जाति की सहायता से सील ने चेक पर विजय प्राप्त की और उसे नगर से मार भगाया। तेरहवीं शताब्दी में इजावालों ने अपना प्राचीन नगर हस्तगत करने के लिये अनेक प्रयत्न किए जिसके कारण बहुत दिनों तक वहाँ युद्ध होता रहा। इसी आपस के झगड़े के कारण मय जाति धीरे धीरे दुर्बल और नष्ट होने लगी और पन्द्रहवीं शताब्दी में उसका सारा प्रभुत्व जाता रहा।

जब पहले के तीनों मित्र-राज्यों की मित्रता नष्ट हो गई तब शासन-कार्य्य के लिये फिर से राज्य का संगठन आवश्यक हुआ। यह एक प्राकृतिक बात है कि ऐसे अवसरों पर जेता जाति ही अधिकांश आवश्यक प्रबन्ध करती है और इसी लिये आगे चल कर सारे देश में मयपनवालों की ही प्रधानता हो गई। नहुआ जाति ने युद्ध में सील की बहुत कुछ सहायता की थी। सम्भवतः इसी लिये सील ने शिशन इजा नगर उन लोगों को दे दिया। कुछ दिनों तक शिशन-इजा में नहुआ जाति की ही तूती बोलती थी। इस समय शिशन-इजा के जो खण्डहर मिलते हैं उनमें बहुत से खण्डहर उन इमारतों के भी हैं जो प्रधानतः नहुआ जाति की ही बनवाई हुई हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ इतिहासज्ञों का मत है कि चौदहवीं शताब्दी में मयपन के शासक नहुआ लोगों की सहायता से अपनी प्रजा का दमन करने के लिये अनेक प्रकार के अत्याचार किया करते थे। एक बार मयपन के कोकम नामक एक शासक ने अपनी दीन प्रजा का धन बलपूर्वक हरण करने के लिये मैक्सिको से बहुत से लोगों को बुलाया था। यदि मयपनवालों को मैक्सिको से आए हुए लोगों का भय न होता तो वे लोग कोकम को अवश्य ही मार डालते। मयपन के शासकों का यह अत्याचार पन्द्रहवीं शताब्दी के मध्य में बहुत अधिक बढ़ गया था। उस समय अन्य कोई उपाय न देख कर मयपन के अनेक प्रतिष्ठित और प्रधान निवासियों ने मिल कर एका कर लिया और उक्समल के शासक की सहायता से उन लोगों ने मयपन के शासक को मार डाला और नगर नष्ट भ्रष्ट कर दिया।

मयपन के नष्ट हो जाने पर युकेटन के दृढ़ राज्य-प्रबंध का मानों अन्त ही हो गया। केवल राज्य-प्रबंध का ही क्यों बल्कि मय-जाति की सभ्यता का भी उसी समय से नाश आरम्भ हो गया। देश की संगठित शक्ति बहुत से टुकड़ों में बँट कर छिन्न भिन्न हो गई और सब लोग एक दूसरे का नाश और अपकार करने पर उतारू हो गए। पुराने वैर निकालने का लोगों को बहुत अच्छा अवसर मिला और सारे देश में घोर कष्ट और अशान्ति का प्रसार हो गया। उसी समय मय-जाति पर ईश्वर का भी कोप हुआ। देश में पारी पारी से सदा अकाल पड़ने लगा और महामारी फैलने लगी जिसके कारण बहुत अधिक संख्या में लोग मरने लगे। यह सब दुर्दशाएँ मानों भविष्य में होनेवाले नाश की पूर्व सूचनाएँ थीं।

सन् १५११ में कुछ स्पेनी एक जहाज ले कर मध्य अमेरिका गए थे; वहाँ से लौटते समय जमायका टापू के निकट उनका जहाज डूब गया। उस जहाज में के केवल दस आदमी बचे थे जो एक छोटी नाव पर सवार हो कर बहते बहते युकेटन के किनारे पर जा लगे थे। वहाँ उन्हें मय लोगों ने कैद कर लिया था और उनके सरदार तथा चार अन्य स्पेनियों को बलि चढ़ा दिया था। बाकी पाँच में से तीन आदमी तो बहुत सी कठिनाइयाँ झेल कर अन्त में भूखों मर गए थे पर दो आदमी किसी प्रकार बच गए और धीरे धीरे उन दोनों ने देश में अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली थी। उनमें से एक तो एक सरदार की कन्या से विवाह कर के स्वयं सरदार बन गया था और दूसरा आगे चल कर आनेवाले स्पेनियों के दुभाषिए का काम करने लग गया था। सन् १५१७ में युकेटन में फ्रान्सिस्को डी कारडोवा की अधीनता में स्पेनियों की पहली मुहिम पहुँची; पर मय लोगों ने उन स्पेनियों को इतना कष्ट पहुँचाया कि अन्त में विवश हो कर उन लोगों को क्यूबा टापू को लौट जाना पड़ा। उन स्पेनियों ने यदि कोई काम किया तो वह यही कि युकेटन प्रदेश को ढूँढ़ निकाला। दूसरे वर्ष जुआन डी ग्रिजल्वा की अधीनता में फिर कुछ स्पेनी वहाँ पहुँचे; पर उन लोगों की भी वहाँ इतनी अधिक दुर्दशा हुई कि लाचार होकर उन्हें भी लौट ही जाना पड़ा। तीसरे वर्ष (सन् १५१९) हरनैंडो कारटेज वहाँ पहुँचा, पर कुछ ही दिनों तक ठहर कर वह भी मैक्सिको चला गया। सात वर्ष बाद, सन् १५२६ में फ्रान्सिस्को मांटेजो अपने साथ तीन जहाज और पाँच सौ आदमी ले कर बड़ी धूम धाम से युकेटन पहुँचा। पहले तो वह देश के उत्तर-पश्चिम तट के पास के एक टापू में उतरा और तब वहाँ से युकेटन पहुँच कर उसने वहाँ स्पेन का झण्डा गाड़ दिया और स्पेन के राजा की ओर से उस देश पर अधिकार कर लिया। पर मय लोग सहज में किसी को टिकने देनेवाले नहीं थे; इसलिये मय और स्पेनियों में लड़ाई-झगड़ा आरम्भ हुआ जो कई वर्षों तक चलता रहा। प्रायः चौदह वर्ष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तक मय लोग विदेशियों से अपने देश की रक्षा करने के लिये झगड़ते रहे। पर अन्त में सन् १५४१ के जून मास में इशेनजीहो नगर के निकट बहुत से पहाड़ी मय-सरदार स्पेनियों से अन्तिम हार हारे। तब से देश में शान्ति स्थापित हुई, स्पेनियों का उस पर अधिकार हुआ और मय-जाति की स्वतंत्रता का अन्त हो गया।

आचार और व्यवहार।

सन् १५४९ में लैण्डा नामक एक पादरी ईसाई धर्म्म का प्रचार करने के लिये युकेटन प्रदेश में गए थे और बहुत दिनों तक वहाँ रहे थे। सन् १५६५ में उन्होंने युकेटन प्रदेश का एक बहुत उत्तम इतिहास लिखा था जो प्रायः तीन सौ वर्ष बाद सन् १८६४ में प्रकाशित हुआ था। मय-पुरातत्त्व के प्रेमियों के लिये वह पुस्तक बड़े काम की है क्योंकि उसमें प्राचीन इतिहास भी दिया गया है और तत्काल की आँखों देखी बातों का वर्णन भी। मय-जाति के आचार-विचार आदि जानने का वह सब से अच्छा साधन है। उस पुस्तक में लैण्डा साहब ने लिखा है कि उस समय के मय लोग लंबे, बलिष्ठ और फुरतीले हुआ करते थे। बाल्यावस्था में ही वे लोग अपने लड़कों का माथा कृत्रिम उपायों से चपटा कर देते थे और बालियाँ तथा नथ पहनाने के लिये उनके कान तथा नाक छेद देते थे। बालियाँ और नथ पहनने के मय लोग बहुत शौकीन हुआ करते थे। भेंगी आँखें बहुत सुन्दर मानी जाती थीं और माताएँ अपने बच्चों को भेंगा बनाने के लिये उनकी दोनों आँखों के मध्य में मोम की गोलियाँ लगा दिया करती थीं। कुछ दिनों तक गोलियों के लगे रहने के कारण बच्चों की आँखों में भेंगापन आ जाता था। कहीं कहीं बालकों के चेहरे गरम कपड़ों से सेंक सेंक कर झुलस दिए जाते थे जिसमें उन पर दाढ़ी के बाल न जमने पावें। स्त्रियां और पुरुष दोनों ही अपने बाल बढ़ाते थे। पुरुष लोग अपने सिर के पिछले भाग में थोड़ा सा स्थान गरम कर के दाग देते थे जिसके कारण उस स्थान पर बाल बहुत ही कम रहते थे। सिर के थोड़े से बालों का तो वे लोग एक छोटा सा जूड़ा बाँध कर पीछे की ओर लटका लेते थे और शेष बाल जटा के रूप में, रस्सी की तरह, सिर के चारों तरफ लपेट लेते थे। स्त्रियाँ अपने बालों को दो भागों में बाँट कर दो रेखाओं में सिर के चारों तरफ लपेट लेती थीं। अपने धार्म्मिक विश्वासों के कारण स्त्रियां और पुरुष दोनों ही अपने मुँह को झुलसा कर बहुत कुरूप बना लेते थे। स्त्रियाँ और पुरुष दोनों ही खूब गोदने गुदाते थे और गोदना गोदने के काम में बड़े प्रवीण हुआ करते थे। पुरुष अपना सारा शरीर लाल रंग से रंग लेते थे पर स्त्रियां अपने सदाचार के चिह्न स्वरूप अपना चेहरा नहीं रँगती थीं, बाकी सारा शरीर लाल रंग से रंग लेती थीं। स्त्रियां अनेक प्रकार के सुगंधित द्रव्य भी लगाती थीं और रेती से रेत कर अपने दाँतों को बहुत चोखा कर लेती थीं। चोखे दाँतों की गिनती सौन्दर्य्य में होती थी।

पुरुषों का पहनावा बहुत ही सादा होता था। कमर में वे लोग कई फेरे लगा कर और खूब कस कर एक प्रकार की धोती बाँधते थे जिसका एक सिरा दोनों जाँघों के बीच में आगे की ओर और दूसरा सिरा पीछे की ओर लटकता रहता था। इन धोतियों पर स्त्रियां बेल-बूटे काढ़ती थीं और तरह तरह के परों से उन्हें सजाती थीं। ऊपर से वे लोग एक चौकोर कफनी सी पहन लेते थे और चमड़े या सन का घुटनों तक ऊँचा जूता पहनते थे। उच्च श्रेणी के तथा धनी लोगों का पहनावा बहुत भड़कीला होता था और उसमें तरह तरह के रँगे हुए पर लगे रहते थे। ऊपर से वे लोग चीते की खाल ओढ़ते थे और अच्छे अच्छे जेवर पहनते थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्त्रियाँ एक प्रकार की साधारण कुरती पहनती थीं और ऊपर से एक दुपट्टा सा ओढ़ती थीं जिससे छाती और बाँहें ढँकी रहती थीं। बहुधा वे एक प्रकार का लंबा चोगा भी पहनती थीं जो हिपिल कहलाता था और कन्धों पर एक दुपट्टा ओढ़ लेती थीं। मय-जाति की स्त्रियों का यही पहनावा आज से एक हजार बरस पहले था और यही आज है।

प्राचीन काल में स्त्रियों में शील और लज्जा बहुत अधिक होती थी। मार्ग में चलते समय जब कभी उन्हें पुरुष मिल जाते तब वे अपना मुँह ढँक लेती थीं और पीठ फेर कर एक ओर खड़ी हो जाती थीं। विवाह प्रायः बीस वर्ष की अवस्था में हुआ करता था पर मँगनी बहुत ही छोटी अवस्था में हो जाती थी। जब लड़का विवाह करने योग्य हो जाता था तब उसके माता-पिता घटक पर उसके विवाह के प्रबन्ध का भार छोड़ देते थे; माता-पिता स्वयं उसका प्रबन्ध करना निन्दनीय और लज्जास्पद समझते थे। वर के लिये बधू ढूँढ़ कर घटक उसके माता-पिता से मिलता था और उन्हें बतला देता था कि वर का पिता बधू के लिये इतना दहेज देगा और उसकी माता अपने पुत्र तथा पुत्र-बधू के लिये इतने कपड़े देगी। विवाह के दिन वर के घर पर उसके सम्बन्धी तथा बिरादरी के लोग एकत्र होते थे और उस दिन भोज का प्रबन्ध किया जाता था। पहले पुरोहित बधू को वर के सुपुर्द कर के विवाह-क्रिया समाप्त करता था और तब भोज होता था जिसमें सब लोग सम्मिलित होते थे। विवाह के उपरान्त वर को पाँच छः वर्ष के लिये ससुराल में जा कर रहना पड़ता था और अपनी जीविका-निर्वाह करने के लिये कठिन परिश्रम करना पड़ता था। यदि वर इस प्रकार परिश्रम करने से भागता तो बधू के माता-पिता उसे अपने यहाँ से निकाल देते थे और तब विवाह-सम्बन्ध टूट जाता था। पर प्रायः इस प्रकार दामाद को घर से निकाल देने की बारी बहुत ही कम आती थी क्योंकि वर की सास ही उसके भोजन आदि का प्रबन्ध कर देती थी।

रँडुओं और विधवाओं का विवाह यों ही, बिना किसी प्रकार की रसम के, हो जाता था; उसमें वर को केवल बधू के यहाँ जा कर भोजन कर लेना पड़ता था। जिन स्त्रियों और पुरुषों के नाम मिलते जुलते होते थे उनका परस्पर विवाह करना दूषित समझा जाता था। सास और साली आदि से विवाह नहीं हो सकता था; पर हाँ, मामा या चाचा आदि की कन्या से विवाह हो सकता था।

पत्नी अथवा पति दोनों ही जब चाहते अपने इच्छानुसार एक दूसरे का परित्याग कर सकते थे। वर-बधू के माता-पिता दोनों में मेल कराने का प्रयत्न करते थे; पर यदि किसी कारण उन लोगों में मेल न होता तो उन दोनों को अपना अपना पुनर्विवाह करने का पूरा अधिकार होता था। यदि सन्तान छोटी अवस्था की होती तो वह अपनी माता के साथ ही रहती थी। पर यदि वह वयस्क होती तो पुत्र पिता के साथ और कन्याएं माता के साथ रहती थीं। यद्यपि विवाह-सम्बन्ध का विच्छेद हो सकता था तथापि प्रतिष्ठित और उच्च-श्रेणी के लोगों में वह बहुत ही दूषित और निन्दनीय समझा जाता था। मय-जाति में बहु-विवाह की प्रथा बिलकुल नहीं थी।

साधारणतः लोगों का निर्वाह खेती-बारी से ही होता था। अन्न खूब बोया जाता था और अकाल आदि कठिन अवसरों के लिये बड़े बड़े खत्तों में भर कर रखा जाता था। खेती-बारी का सब काम प्रायः पंचायती हुआ करता था; सब लोग मिल कर एक दूसरे का काम किया करते थे। बीस बीस और पचीस पचीस आदमी मिल कर निकलते और एक सिरे से सब खेत जोतने और बोने आदि का काम कर चलते थे। शिकार आदि में भी इसी प्रकार पचास पचास और साठ साठ आदमी मिल कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाते थे। जंगलों में शिकार करके वहीं वे लोग मांस भूनते थे और तब उसे अपने साथ गाँव या नगर में ले आते थे। सब से पहले प्रान्त के प्रधान अधिकारी या मुखिया को उसका निश्चित भाग दिया जाता था और तब बाकी का शिकारियों और उनके मित्रों में बाँट दिया जाता था। मछलियों का शिकार भी सब लोग इसी प्रकार मिल कर किया करते थे।

बहुत से लोग अनेक प्रकार का वाणिज्य-व्यवसाय भी करते थे। नमक, कपड़े और गुलामों का व्यापार खूब होता था और ये सब चीजें दूर दूर तक जाती थीं। कहवा और एक प्रकार की बहुमूल्य लाल कौड़ियाँ सिक्के का काम देती थीं। इन चीजों से देश भर की सब प्रकार की चीजें खरीदी जा सकती थीं। लोग आवश्यकता पड़ने पर ऋण लेते और देते थे। लिया हुआ ऋण ठीक समय पर और ईमानदारी से चुका दिया जाता था और ऋण क कोई सूद-व्याज न होता था।

मय-जाति में न्याय बहुत अच्छा होता था। यदि एक गाँव का कोई आदमी किसी दूसरे गाँववाले के प्रति कोई अपराध करता तो अपराधी के गाँव के प्रधान अधिकारी या मुखिया को उसका समाधान करना पड़ता था; और नहीं तो दोनों गाँववाले आपस में लड़ जाते थे। एक ही गाँव में रहनेवाले दो आदमियों में यदि किसी प्रकार का झगड़ा होता था तो एक न्यायकर्त्ता दोनों पक्षों का कथन सुन कर उचित दण्ड देता था। दण्ड बहुधा आर्थिक ही होता था। यदि अपराधी अपना जुरमाना न दे सकता तो वह उसकी स्त्री और सम्बन्धियों को देना पड़ता था। यदि आपस में लड़ाई झगड़ा होने पर अचानक और अनजान में कोई मर जाता, पति-पत्नी में किसी प्रकार का झगड़ा होता, अथवा कोई किसी के मकान में आग लगा देता तो उस दशा में अपराधी को उसके बदले में हरजाना देना पड़ता था। यदि जान बूझकर, द्वेष या दुष्टतापूर्वक कोई अपराध करता तो उसके कारण दंगा-फसाद ही होता था और लहू की नदियाँ बहने तक की नौबत आती थी। यदि किसी मनुष्य की हत्या होती तो निहत के सम्बन्धियों को अधिकार होता था कि वे हत्याकारी को अपने इच्छानुसार दण्ड दें; वे लोग यदि चाहते तो हत्याकारी से हरजाना ले कर उसे छोड़ भी देते थे। और जो कोई कुछ चुराता था, पकड़े जाने पर उसे वह सब लौटा देना पड़ता था। छोटी से छोटी रकम के लिये भी कोई माफी नहीं थी। यदि चोर चुराई हुई चीज लौटा न सकता तो वह गुलाम बना दिया जाता था। व्यभिचारी को प्राण-दण्ड दिया जाता था। व्यभिचारी को पकड़ कर लोग मुखिया के मकान के आँगन में ले जाते थे जहाँ सब लोग एकत्र होते थे। अपराधी खम्भे आदि से बाँध दिया जाता था और तब व्यभिचारिणी स्त्री का पति अपने इच्छानुसार उसे दण्ड दे सकता था। पति या तो उसे क्षमा कर देता था और या भारी पत्थर से उसका सिर कुचल कर उसे मार डालता था। व्यभिचारिणी स्त्री को यद्यपि प्रायः उसका पति छोड़ दिया करता था, तौ भी उसकी बदनामी ही उसकी पूरी सजा समझी जाती थी।

मय-जाति के लोग आतिथ्य-सत्कार करना खूब जानते थे। यदि उनके यहाँ कोई अतिथि आ जाता था तो वे प्रसन्नतापूर्वक उसे खूब भोजन कराते थे। मय-लोगों में बड़े बड़े भोजों की खूब प्रथा की। प्रायः प्रधान लोग एक दूसरों को बहुत बड़े बड़े भोज दिया करते थे, जिनमें नाच-गाना भी होता था। एक एक दिन में कई कई दिनों की आमदनी और रसत खर्च कर दी जाती थी। दो दो या चार चार आदमी मिल कर एक साथ खाने बैठते थे। जमीन पर चटाइयाँ बिछा दी जाती थीं और उन पर खाने के लिये भूना हुआ मांस, कहवा, रोटियाँ और तरकारियाँ आदि परोस दी जाती थीं। जब लोग भोजन कर चुकते थे तब कुछ सुन्दरी युवतियाँ आती थीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और सब लोगों को खूब शराब पिलाती थीं। प्रायः लोग शराब पी कर बदमस्त हो जाया करते थे। चलते समय अतिथियों को कुछ सुन्दर पात्र भेंट स्वरूप दिए जाते थे जिनके ढकने के लिये साथ में एक रूमाल भी रहता था। भोज में प्रायः लोग इतनी अधिक शराब पी लेते थे कि वे उठ कर अपने घर जाने के योग्य न रह जाते थे। उस समय उनकी स्त्रियों को वहाँ आ कर अपने अपने पति को हाथ पकड़ कर अपने साथ ले जाना पड़ता था। इन भोजों के सम्बन्ध में एक बड़ी विलक्षणता यह थी कि जो लोग उनमें सम्मिलित होते थे उन्हें भी बदले में एक वैसा ही भोज देना पड़ता था। इस नियम का पालन इतनी दृढ़ता से होता था कि यदि भोज में सम्मिलित होने के उपरान्त कोई निमंत्रित व्यक्ति बदले का भोज देने से पहले ही मर जाता तो उसके उत्तराधिकारी भोज देने के लिये बाध्य होते थे। कम हैसियत के लोगों को भोज में उतना अधिक खर्च न करना पड़ता था और न उसमें सम्मिलित होनेवालों को बदले में भोज ही देना पड़ता था।

मय लोग नाच गा कर और अनेक प्रकार के हास्यपूर्ण अभिनय कर के अपना मनोविनोद किया करते थे। इन कामों में वे बड़े दक्ष होते थे। उनके वहाँ कई तरह के ढोल, मँजीरे, नरसिंघे, तुरुहियाँ और हड्डी की बनी हुई एक प्रकार की सीटियाँ होती थीं। पर उनके बाजों का शब्द मधुर नहीं होता था और इसी लिये उनका संगीत कुछ उदास माना जाता है।

समय समय पर मय लोगों में परस्पर जो युद्ध हुआ करते थे उनके वर्णन से जान पड़ता है कि उन लोगों का सामाजिक संगठन भी बहुत ऊँचे दरजे का था। मय सेना के दो सेनापति हुआ करते थे। एक सेनापति तो मुखिया या प्रधान होता था जिसका पद वंशानुक्रमिक होता था और दूसरा सेनापति चुना हुआ नियुक्त होता था जो तीन वर्ष तक अपने पद पर रहता और काम करता था। देश भर के सब गाँवों में से थोड़े थोड़े लोग चुन लिए जाते थे जो सैनिकों का काम देते थे। उन लोगों को युद्ध-विद्या की बहुत उत्तम शिक्षा दी जाती थी। इस प्रकार वहाँ युद्ध-विद्या में निपुण सैनिकों की सदा एक अच्छी सेना तैयार रहती थी। उस सेना का वेतन सब लोगों को मिल कर देना पड़ता था। शान्ति-काल में उस सेना के कारण बहुत से उपद्रव भी होते थे। विशेषतः युद्ध की समाप्ति के उपरान्त उसका उपद्रव और भी बढ़ जाता था। किसी भारी युद्ध के समय जब बहुत अधिक सैनिकों की आवश्यकता होती थी तब सैनिक लोग देश के सभी हृष्ट पुष्ट पुरुषों को एकत्र कर लेते थे और उन्हें हथियार आदि चलाने की शिक्षा देते थे। हथियार उनके यहाँ बहुत ही थोड़े होते थे। उनके यहाँ काठ की कमानें होती थीं जिनमें सन की डोरी बँधी होती थी। तीरों के सिरे में हड्डी या इसी प्रकार की और कोई चीज लगी होती थी। उनके यहाँ लंबे भाले और पीतल की कुल्हाड़ियाँ होती थीं जिनमें लकड़ी के दस्ते लगे होते थे। बचाव करने के लिये ढाल होती थी जिस पर हिरन का चमड़ा मढ़ा रहता था। बड़े बड़े सरदार लकड़ी के खोद पहनते थे जिनमें खूब चमकीले पर खोंसे हुए होते थे। सरदार लोग ऊपर से चीते की खाल भी ओढ़ लिया करते थे।

जब सेना को शत्रु पर आक्रमण करना होता था तब वह चुपचाप और बहुत ही गुप्त रूप से अपने गाँव से निकल जाती थी और अचानक शत्रुओं पर जा पड़ती थी। सेना के साथ एक बहुत बड़ा झण्डा या निशान भी चलता था। शत्रु पर उनका धावा अचानक और बहुत ही भीषण होता था और आक्रमण के समय सैनिक लोग बहुत जोर जोर से चिल्लाते थे। आक्रमण से रक्षित रहने के लिये वे लोग पेड़ों और झाड़ियों की आड़ में छिप रहते थे और तीर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न्दाज वहीं से आक्रमण रोकने का प्रयत्न करते थे। कभी कभी शत्रु पर तीरों के अतिरिक्त पत्थर भी फेंके जाते थे। युद्ध की समाप्ति पर विजयी सैनिक निहत सैनिकों के मृत शरीर से जबड़े निकाले लेते थे और उनमें से मांस आदि साफ कर लेते थे। ये जबड़े बाँहों पर जोशनों की तरह पहने जाते थे। यदि शत्रु-दल का कोई सरदार या सेनापति पकड़ा जाता था तो देवताओं के आगे उसका बलिदान होता था। देवताओं के लिये वह बहुत ही उत्तम और उपयुक्त भेंट समझा जाता था। साधारण सैनिकों में से युद्ध-काल में जो जिसे पकड़ता था, वही उसे अपना गुलाम बना लेता था।

मय-लोग मृत्यु से बहुत डरते थे। उनके अनेक धार्म्मिक कृत्य यमराज को शान्त और सन्तुष्ट करने के लिये ही होते थे। किसी के मर जाने पर उसके घर के लोग बहुत दिनों तक शोक मनाते थे; दिन के समय वे लोग निराहार रहते थे और रात को बहुत रोते चिल्लाते थे। साधारण लोग मुरदे को कफन में लपेटते थे और उसके साथ अनाज और पत्थर आदि इसलिये रख देते थे कि जिसमें दूसरे जगत में उसे भोजन और धन के लिये कष्ट न उठाना पड़े। मय लोग लाश को या तो अपने मकान में ही और या उसके पिछवाड़े गाड़ देते थे। कब्र में उसके साथ कुछ मूर्त्तियाँ और मृतक की कुछ खास चीजें भी रखते थे। जिस मकान में कोई मर जाता था वह बहुधा खाली कर दिया जाता था।

बड़े बड़े सरदारों और अमीरों के मृत शरीर का दाह-कर्म्म होता था और उनकी राख मिट्टी के बड़े बड़े बरतनों में भर कर रखी जाती थी। ये बरतन जमीन में गाड़ दिए जाते थे और उन पर समाधि-मन्दिर बनाए जाते थे। बहुत ऊँचे दरजे के आदमियों के मरने पर उनकी राख उनकी मूर्त्तियों में भर कर रखी जाती थी। कहीं कहीं लकड़ी की भी पोली मूर्त्तियाँ बनती थीं जिनमें राख भरी जाती थी। इस प्रकार की मूर्त्तियाँ बहुत पूजनीय समझी जाती थीं और देवताओं की मूर्त्तियों के साथ रखी जाती थीं। जिन मृतकों की ऐसी मूर्त्तियाँ बनती थीं उनके मृत शरीर का कुछ अंश जलाया और कुछ गाड़ा जाता था।

मयपन के राजाओं की अन्त्येष्टि क्रिया और भी विलक्षण होती थी। पहले मृतक का सिर शरीर में से काट लिया जाता था और तब आग में रख कर उसका मांस आदि जला दिया जाता था। तब उस खोपड़ी को आड़े बल में रख कर आरी से दो टुकड़े करते थे; उनमें से एक टुकड़े में माथा, आँख, कान, नाक आदि अंग होते थे और दूसरे में सिर का पिछला भाग। इसके बाद वह खोपड़ी गोंद से भरी जाती थी और फिर मनुष्य की ठीक आकृति बनाई जाती थी। यह आकृति उस पुरुष की आकृति से बहुत ही मिलती जुलती होती थी जिसका वह सिर होता था। ऐसी आकृतियाँ और राख भरी हुई उनकी मूर्त्तियाँ देवताओं की मूर्त्तियों के साथ रखी जाती थीं। जब जब भोज होता था तब तब उन मूर्त्तियों के आगे भी मांस और भोजन परोसे जाते थे जिसमें वे परलोक में भूखे न रहें।

कवि-श्रेष्ठ जयदेव।

[लेखक—श्रीयुक्त पं० गणपति जानकीराम दुबे बी० ए०]

कवि श्रेष्ठ जयदेव उन भगवद्भक्त कवियों में से हैं जिनके काव्यों में श्री राधा-कृष्ण के पवित्र प्रेम का उज्वल रूप दिखाया गया है। प्रेम में अगाध शक्ति है। प्रेम ही ईश्वर का प्रिय विषय है। प्रेम-योग ही भक्त का अति सुलभ साधन है; भक्ति ही उसका एक सहज मार्ग है; यही मार्ग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जयदेव कवि के काव्य में दिखाया गया है । स्वयं जयदेव ही ने कहा है—

यदि हरिस्मरणे सरसं मनः ।
यदि विकास कथासु कुतूहलम् ॥
विमल कोमल कांतपदावलीम् ,
शृणुतरे ! जयदेवसरस्वतीम् ॥

भक्ति, शृंगार, प्रेम और काव्य कृति का रसपरिपाक यदि अनुभव करना हो तो जयदेव की वाणी सुननी चाहिए । आज हम उस अद्वितीय कवि का कुछ हाल पाठकों को सुनाना चाहते हैं ।

इस असामान्य कविवर का जीवनचरित्र केवल दो ग्रन्थों में ही उपलब्ध है । पहला श्रीमच्चंद्र कवि का भक्तमाल नामक संस्कृत ग्रंथ है । इस ग्रंथ के ३९, ४० और ४१, वें सर्गों में जयदेव कवि का चरित्र वर्णन किया गया है । दूसरा मराठी भाषा का भक्ति विजय नामक ग्रंथ है । इन दोनों काव्य-ग्रन्थों में जयदेव कविवर के काल का निर्णय नहीं है* । हमारे यहाँ के प्राचीन कवियों के काल का निर्णय होना प्रायः कठिन ही है क्योंकि उनके काल के सम्बन्ध में स्पष्ट उल्लेख कहीं उपलब्ध नहीं होता ।

गीतगोविंद काव्य में कुछ तो श्लोक हैं और कुछ राग रागिनियों में गाने योग्य तालबद्ध प्रबन्ध हैं । उन्हीं को "अष्टपदियाँ" कहते हैं । लोग कहा करते हैं कि ये अष्टपदियाँ राजा विक्रम की सभा में भी गाई जाती थीं । इसी लिये कुछ लोगों का यह भी मत है कि यह कवि कालिदास कवि के भी पूर्व हुआ । परन्तु जब कालिदास का ही काल निश्चित नहीं हुआ है तो जयदेव का काल निश्चय होना दुस्साध्य है । तथापि डाक्टर बूलर साहब ने यह दृढ़तर अनुमान किया है कि जयदेव कवि बारहवीं शताब्दी में था । क्योंकि बंगदेश में "वैद्य" नाम के जो नरेन्द्र राज्य करते थे उनमें से लक्ष्मणसेन महाराज जयदेव के काल में राजपदारूढ़ थे । इन महाराज का काल संवत् ११७० अर्थात् शालिवाहन शक १०३५ होता है । महाराष्ट्र भाषा के आदि कवि श्री ज्ञानेश्वर ने शालिवाहन शक ११२२ अर्थात् विक्रमीय संवत् १३४७ में "ज्ञानेश्वरी" नामक ग्रंथ की रचना की । इस कारण यह अनुमान करने के लिये एक विश्वसनीय आधार है कि जयदेव कवि इन से अनुमान दो सौ वर्ष पूर्व हुए होंगे ।

इस कविवर का जन्म "बंगदेश" के वीरभूमि जिले में जगन्नाथ पुरी के समीप "किन्दुबिल्व" नाम के एक छोटे से ग्राम में हुआ था । इसके पिता का नाम "भोजदेव" और माता का "राधादेवी" था । इस का एक दूसरा नाम "पक्ष मिश्र" भी था । इस नाम के कारण बहुत लोगों का अनुमान है कि वह कान्यकुब्ज ब्राह्मण होगा क्योंकि "मिश्र" उपाधि केवल कान्यकुब्ज जाति के ब्राह्मणों की ही होती है । यह कवि बाल्यवस्था से ही बहुत कुशाग्र-बुद्धि था । वह बालकपन में ही अपने गुरु से पाक्षिक पाठ ले कर कंठ कर लेता था । इस कारण उसका नाम "पक्ष मिश्र" पड़ा । उसने गुरुमुख की परवा नहीं की और वह शीघ्र ही सब शास्त्रों में प्रवीण हुआ । वह बाल्यावस्था से ही परम भगवद्भक्त और श्री राधारमण का परम उपासक था । इस कारण उसने श्रीकृष्ण के रसविलास का ही एक काव्य ग्रथित किया । यही वह गीतगोविन्द काव्य है ! इस अद्वितीय काव्य के भक्तिरस और ललित मृदु शब्द-स्वारस्य पूर्ण तथा भिन्न भिन्न राग रागिनियों और तालों के हृदयंगम गीत लोगों को इतने प्रिय हो गए थे कि शीघ्र ही सर्व साधारण में उनका बहुत अधिक प्रचार हो गया और घर घर लोग उन्हें गाने लगे ।

इसी समय में जगन्नाथपुरी में एक राजा राज्य करता था । उसका नाम सात्विक था । वह राजा स्वयं उत्तम संस्कृत काव्य बनानेवाला था । उसने भी जयदेव के गीतगोविंद के सदृश श्रीकृष्ण के रासविलास का एक काव्य बनाया था । जब उस

*जयदेव के काल-निर्णय के सम्बन्ध में एक लेख पत्रिका के किसी आगामी अंक में प्रकाशित किया जायगा ।—प० सम्पा०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा को यह मालूम हुआ कि जयदेव नामक किसी एक कवि ने मेरे काव्य के सदृश एक काव्य बनाया है और वह इतना लोक-प्रिय हुआ है कि हर एक व्यक्ति के मुखाग्र हो गया है। तब "बोद्धारोमत्सर-ग्रस्ताः" वाले न्याय के अनुसार उसको जयदेव की कीर्ति दुःसह मालूम होने लगी। जयदेव को परास्त करने का कोई मार्ग उसको नहीं दिखाई दिया। अन्त में उसने एक कठिन अनुशासन करने का विचार किया। प्रथम उसने अपने "श्रीकृष्ण विलास" काव्य की अनेक प्रतियाँ लिखवा कर लोगों को प्रदान कीं और उसी काव्य का पाठ करने की उनको आज्ञा दी। उस नरेश के ऐसे अनुशासन से ज्ञानी लोगों को नितांत दुःख हुआ। परन्तु राजाज्ञा समझ कर कुछ काल तक समाज ने श्रीकृष्ण-काव्य का पठन करने का यत्न किया, तथापि राजा का वह उद्योग व्यर्थ हुआ और लोग स्पष्टतया कहने लगे कि जयदेव कवि के काव्य की तुलना में यह काव्य बहुत ही कम योग्यता का है। राजा ने जन-समाज की सहानुभूति प्राप्त करने का बहुत प्रयत्न किया, परन्तु वह सब निष्फल हुआ। कहते हैं कि अन्त में उसने एक युक्ति सोची। उसने कहा कि जिस प्रकार जयदेव कवि ने अपने काव्य में श्री भगवद्गुणानुवाद वर्णन किया है उसी प्रकार मैंने भी अपने काव्य में वर्णन किया है; इसलिये दोनों ग्रंथ भगवान् के सामने रखे जायं। जो काव्य ग्रन्थ भगवान् को मान्य होगा उसे वह अपने पास रख लेंगे और जो अमान्य होगा उसे मन्दिर के बाहर कर देंगे। यह बात सर्वमान्य हुई; दोनों ग्रन्थ श्री जगन्नाथ जी के सन्मुख रख दिए गए।

पुरी-नरेश ने उस देवालय का चारों ओर से रास्ता बन्द कर के बहुत कड़ा बन्दोबस्त किया। अब क्या चमत्कार होता है यह देखने के लिये जन-समूह अत्यन्त ही उत्कण्ठित हुआ। दूसरे दिन प्रातःकाल के समय प्रेक्षक-गणों के समूह के समूह जगन्नाथ जी के मन्दिर के चारों ओर एकत्र हुए। तब पुरी-नरेश का काव्य-ग्रन्थ मन्दिर के बाहर पड़ा हुआ प्रेक्षकों के दृष्टिगोचर हुआ। यह अद्भुत चमत्कार देख कर जन समाज को बहुत आनन्द हुआ। परन्तु पुरी-नरेश की दशा अत्यन्त ही शोचनीय हो गई। उसके चित्त को इतना अधिक खेद हुआ कि उसने जल मरना निश्चय किया। पुरी-नरेश को इस प्रकार कृत-निश्चय देख भगवान् ने प्रसन्न हो कर, उसका संतोष करने के लिये उसके ग्रन्थ के २४ श्लोक अपने ही कर-कमलों से गीतगोविन्द काव्य में सम्मिलित कर दिए। इस प्रकार जयदेव कवि का यशोध्वज चारों ओर फहराने लगा। सब लोग उसको पूज्य समझ कर उसका सम्मान करने लगे। तथापि इस कवि-श्रेष्ठ को द्रव्य अथवा सम्मान की किंचिन्मात्र भी अभिलाषा नहीं हुई। गाँव के बाहर एक कुटी बना कर उसमें ही वह बहुत दिनों तक निवास करता रहा।

इसी जगन्नाथ क्षेत्र में एक विद्वान् अग्निहोत्री ब्राह्मण रहता था। उसके कोई संतान नहीं थी। इस कारण उसने प्रतिज्ञा की कि यदि जगन्नाथ जी की कृपा से मुझे कोई बालक उत्पन्न होगा तो उसे मैं उन्हीं के चरण-कमलों में समर्पण करूँगा। दैववश उस ब्राह्मण के घर एक कन्या हुई। वह कन्या इतनी रूपसंपन्ना थी कि मानों सौंदर्य की मूर्ति ही थी। इस कारण उसके माता-पिता ने उसका नाम पद्मावती रखा। वह कन्या जैसी रूपसंपन्ना थी वैसी ही गुणशालिनी भी थी। पद्मावती के उपवर होने पर उसके पिता ने अपने प्रतिज्ञानुसार उसको श्री जगन्नाथ के चरण-कमलों में अर्पण करने का विचार किया। प्रसिद्ध है कि तब जगन्नाथ जी ने उस ब्राह्मण को स्वप्न में आज्ञा दी कि "जयदेव कवि साक्षात् मेरा ही अवतार है इस कारण तू अपनी कन्या उसी को अर्पण कर। उसको अर्पण करना मुझ को ही अर्पण करने के बराबर है।" इस स्वप्न के अनुसार उस ब्राह्मण ने अपनी कन्या पद्मावती जयदेव कवि की सम्मति न होने पर भी उसी को अर्पण की। अनन्तर पति-पत्नी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनों सुख से रहने लगे और धीरे धीरे जयदेव कवि की कीर्ति चारों ओर व्याप्त होने लगी। उसके दर्शन के निमित्त चारों ओर से सैकड़ों आदमी नित्य आने लगे। इस श्रद्धायुक्त जन-समूह में एक लखपती महाजन भी था। उसने बहुत आग्रहपूर्वक जयदेव कवि को अपने घर ले जा कर एक मास तक अत्यन्त भक्तिपूर्वक उसकी सेवा की। कुछ समय व्यतीत होने पर कविवर ने वहाँ से चलने की इच्छा प्रकट की। जाते समय उस महाजन ने जो वस्तु और धन उसे दिया था निरीच्छ होने के कारण कविवर ने उसे स्वीकार नहीं किया। तथापि बिना कुछ सन्मान किए गुरु की सेवा की पूर्ति नहीं होती इसलिये उस महाजन ने एक रथ सजाया और उस रथ की बैठक के नीचे कुछ सोना चाँदी और गुरुपत्नी के लिये मुक्ताहार रख कर जयदेव कवि को सादर रथ में बैठा कर, साथ में कुछ सेवक दे वहाँ से विदा किया।

वहाँ से चल कर जयदेव को एक जंगल में से जाना पड़ा। उस जंगल में कुछ लुटेरे छिपे बैठे थे। उन्होंने कविवर के रथ पर अकस्मात् आक्रमण किया। उस समय रथ के साथ चलनेवाले सब सेवक भयवश भाग गए। तब जयदेव कवि को सहज में ही उन चोरों ने पकड़ लिया। उन्होंने चोरों को रथ सौंप कर जाना चाहा, परन्तु चोरों ने इस भय से कवि को न छोड़ा कि महाजन या किसी और को इस बात का पता न लग जाय और कोई उपद्रव न खड़ा हो। सब धन ले कर वे वहाँ से भाग गए और जयदेव कवि के हाथ पाँव तोड़ कर उन्हें एक गड्ढे में फेंक गए। कविवर इस दुर्धर अवस्था में भी शांति से श्रीकृष्ण भगवान् का भजन करते रहे। दैव वश "क्रौंच" नामक एक राजा शिकार खेलता हुआ उसी मार्ग से जा रहा था, उसने जयदेव कवि को उस अवस्था में देखा। उसकी ऐसी दशा और ऐसे दुर्घट प्रसंग में भी समाधान-वृत्ति देख कर, उस राजा के अन्तःकरण में कविवर के संबंध में भक्तिभाव उत्पन्न हुआ। वह तुरन्त बड़े सन्मानपूर्वक स्वामी को पालकी में बैठा कर अपने राज-भवन में लाया। राज्य में ला कर राजा ने जयदेव को राजगद्दी पर बैठाया और सब तरह से उसकी सेवा की।

कुछ समय व्यतीत होने पर एक दिन राजा ने कविवर से सविनय पूछा,—"महाराज वह कौन सा साधन है जिससे संसार में देह की सफलता प्राप्त हो?" स्वामी ने उत्तर दिया "भाई, जो मनुष्य दीन, अतिथि और साधुसंत का आदर और सत्कार करता, उनको यथेच्छ भोजन देता और यथाशक्ति द्रव्य दान दे कर उनको विदा करता है उसी का जीवन सार्थक है।" यह सुन कर राजा ने उसी दिन से अतिथि-सेवा आरंभ कर दी। इस प्रकार जग में राजा की कीर्ति फैल गई और दूर दूर से साधुसंत राजा के पास आने लगे। राजा भी उनका यथावत् सेवा-सन्मान करने लगा। जिन लुटेरों ने जयदेव स्वामी के हाथ पाँव तोड़ डाले थे उन्होंने भी सुना कि क्रौंच राजा साधुसंतों का उत्तम प्रकार से आदर कर के उन्हें यथेच्छ द्रव्य प्रदान करता है। अतः उन्होंने भी साधुवेष धारण कर उसके पास जा कर यथेच्छ द्रव्य माँग लाने का विचार किया। वे सब साधुवेष धारण कर के राजभवन में पहुंचे। नियमानुसार राज-सेवक उन्हें राजभवन में ले गए। सिंहासन पर हस्तपाद-रहित स्वामी जयदेव की मूर्ति स्वयं विराजमान थी। उनके दर्शन होते ही उन वेषधारी साधुओं का दम सूख गया। उन्होंने सोचा कि जंगल में जिसके हाथ पैर काटे थे वह यही स्वामी है, अब अपना ईश्वर ही मालिक है। इस विचार से उनका शरीर मारे भय के काँपने लगा। जयदेव स्वामी ने उनको पहचान लिया था। परंतु तौ भी अपरिचित की भाँति अत्यंत प्रेम से उनका स्वागत किया और राज-सेवा करा कर उन्हें भोजन दिया; और कुछ दिन तक उन्हें राजभवन में रख लिया। यह आदर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देख तस्करों के मन में अत्यंत भय उत्पन्न हुआ। अपने आग्रहपूर्वक रखे जाने का कारण उन्हें यह प्रतीत हुआ कि केवल हमारा घात करना ही स्वामी जी का उद्देश्य होगा। इस भय से साधु-वेषधारी चोर दिन पर दिन दुर्बल होने लगे। अंत में उन्होंने वहाँ से चलने की इच्छा प्रदर्शित की। तब राजा ने रथ भर के उन वेषधारी साधुओं को द्रव्य दे कर, अपने सेवक उन के साथ दे उन्हें रवाना किया। सेवकों को इससे बहुत ही आश्चर्य हुआ क्योंकि इनसे पहले भी बहुत से साधुसंत उपस्थित हुए थे; परंतु उन्हें बिदा करते समय, राजेन्द्र ने अथवा स्वामी जी ने, कभी सेवक नहीं भेजे थे। कुछ दूर पहुंचने पर, उन सेवकों ने उन वेषधारी चोरों से पूछा कि महाराज, स्वामीजी की कृपा सब से अधिक आप पर ही क्यों रही? क्या स्वामीजी का और आप का परिचय पहले से ही था? तब उन्होंने उत्तर दिया,—हाँ, पहले हम एक राजा के यहां नौकरी करते थे। और ये स्वामीजी वहाँ के मुख्य मंत्री के स्थान पर नियत थे। अनंतर किसी कारण से इन पर नरेश की अवकृपा हुई और राजाज्ञा हुई कि स्वामीजी को वन में ले जा कर उनका सिर काट लिया जाय। तब स्वामीजी को हम लोग जंगल में ले आए; स्वामीजी बद्धहस्त हो कर हम लोगों से प्राणदान करने के लिये प्रार्थना करने लगे। तब हमने दया कर केवल उनके हाथ पैर तोड़ कर उन्हें सजीव छोड़ दिया।

कहते हैं कि चोरों की यह असत्य बात समाप्त भी न होने पाई थी कि इतने में पृथ्वी फट गई और वे सब उसी में समा गए। यह चमत्कार देख राजदूत विस्मय-चकित हो गए और लौट के उन्होंने सब हाल राजा से कहा। राजा के पूछने पर जयदेव ने सब बातें सच सच कह दीं और ईश-प्रार्थना कर के कहा कि; हे ईश्वर! आप दीनदयाल हैं, मेरे शत्रुओं की ऐसी दुर्गति क्यों हुई। इस प्रकार स्वामी की हृदय-द्रावक प्रार्थना सुन कर भगवान् प्रसन्न हुए और उन लुटेरों को सद्गति दे कर जयदेव स्वामी को भी पूर्ववत् हाथ पैर प्रदान किए। तब सब को अत्यानंद हुआ। राजा के अन्तःकरण में स्वामीजी के विषय में अत्यंत उत्कट भक्ति उत्पन्न हुई। उसने गुरु-पत्नी पद्मावती को भी बहुत आदर से राजभवन में बुलाया। वह भी अपने पति के सदृश महान् भगवद्भक्त और साध्वी थी।

इस प्रकार क्रौंच राजा के भवन में अपनी प्रिय पत्नी सहित जयदेव स्वामी का ईश-भजन में समय व्यतीत होने लगा। एक दिन रानी के भाई की मृत्यु हो गई और उसकी स्त्री ने उसके साथ सती हो जाना निश्चय किया। यह बात राजदूतों ने रानी से निवेदन की। तब रानी और उसकी सहेलियाँ सहगमन करनेवाली रानी की बहुत प्रशंसा करने लगीं। गुरुपत्नी भी उनके पास थी। उसको अत्यंत शांत और स्तब्धचित्त देख रानी की एक सहेली ने प्रश्न किया। तब गुरुपत्नी ने गंभीर स्वर से कहा "इस प्रकार से सहगमन करने में ऐसी कौन सी बड़ी बात है? वास्तव में पति का शरीरान्त होते ही यदि पत्नी का अपने आप ही देहावसान हो जाय तो वह सती है।" गुरुपत्नी के इस उत्तर ने रानी का हृदय भेद दिया और उसने पद्मावती के पातिव्रत्य की परीक्षा लेना निश्चय किया।

कुछ समय बीतने पर महाराज ने जयदेव को साथ ले कर मृगया के लिये वन में प्रस्थान किया। वह समय उचित समझ कर रानी ने परीक्षा करने का विचार किया। पहले उसने एक विश्वसनीय दूत द्वारा झूठी खबर मँगवाई कि जयदेव कवि को व्याघ्र ने खा डाला। यह दुःख-पूर्ण समाचार रानी ने स्वयं जा कर पद्मावती से कहा। पद्मावती ने शांत चित्त से सुन कर फिर एक बार प्रश्न किया—"सच कहो, क्या मेरे प्राणपति के प्राणों का नाश व्याघ्र ने कर दिया?" रानी ने उत्तर दिया, "हां, निःसंदेह स्वामीजी को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्याघ्र ने खा लिया है।" यह सुन पद्मावती जमीन पर गिर पड़ी और तत्काल उसके प्राण पखेरू उड़ गए। यह चमत्कार देख रानी भय से अत्यंत कम्पित हो गई।

जब राजा मृगया से वापस आए तब उन्हें यह वृत्तांत मालूम हुआ। उस समय रानी पर उन्हें इतना क्रोध हुआ कि उन्होंने उसे मार डालना चाहा। परन्तु क्रोध को दबा कर उन्होंने गद्गद अंतःकरण से, जयदेव स्वामी के चरणों में लिपट कर कहा—"हे महानुभाव! मैंने आपका अक्षम्य अपराध किया है। मुझे जीवित जल मरने की आज्ञा दीजिए।" परंतु स्वामी जी ने उसको समझाया और कहा कि, "हे राजन्! आप यत्किंचित् भी चिंता न करें, मेरी सहधर्मचारिणी का शरीर नश्वर ही था। इस प्रकार दुःख करने का कोई कारण नहीं है।" इतना कह कर जयदेव राजा सहित पद्मावती के शव के पास आए और निज रचित गीलगोविंद काव्य में से चौबीस अष्टपदियों का सुस्वर से गाते हुए, सानंद श्रीकृष्ण-भजन में निमग्न हो गए। तब पद्मावती के शरीर में जीव का आधान हुआ और वह उठ बैठी! इस अद्भुत चमत्कार के कारण सब लोग जयदेव स्वामी को साक्षात् ईश्वर का अवतार ही मानने लगे।

यथावसर जयदेव के काव्य के विषय में फिर कभी लिखेंगे।

अग्नि का आविष्कार।

अग्नि की सहायता से मनुष्य के जितने काम निकलते हैं उनकी गणना करना बहुत ही कठिन है। तिस पर यदि अग्नि से निकलनेवाले कामों की उपयोगिता का ध्यान किया जाय तो उसका महत्त्व और भी बढ़ जाता है। आजकल दियासलाई की सहायता से जब और जहाँ जी चाहे आग जलाई जा सकती है। आतशी शीशे का प्रकाश भी किसी केन्द्र पर डाल कर अग्नि उत्पन्न की जाती है। प्राचीन काल में जब ये दोनों चीज़ें नहीं थीं तब लोग चकमक पत्थर को रगड़ कर अग्नि उत्पन्न किया करते थे। तात्पर्य्य यह कि जब से मनुष्य ने होश सँभाला तब से वह बराबर उससे तरह तरह के काम लेता रहा है। पहले तो केवल खाने-पकाने, सरदी से बचने या प्रकाश आदि करने के लिये ही अग्नि का व्यवहार होता था, पर अब तो उसकी सहायता से रेल और जहाज दौड़ाए जाते हैं और बड़े बड़े कल-कारखाने चलाए जाते हैं। पृथ्वी पर मनुष्य की आबादी कितने दिनों से है यह जानना बहुत ही कठिन है। उसी प्रकार भिन्न भिन्न पदार्थों के आविष्कार आदि का समय जानना भी बहुत मुश्किल है। विशेषतः यह जानना तो और भी अधिक दुस्तर है कि घर घर जलनेवाली आग का आविष्कार मनुष्य ने कब, कहाँ और किस अवस्था में किया था। भारत-सरकार के कंट्रोलर आफ पेटेन्ट्स (Controller of Patents) मि० एच० जी० ग्रेव्स ने बंगाल की एशियाटिक सोसायटी के जरनल की जूनवाली संख्या में एक बहुत ही गवेषणापूर्ण और मनोरंजक लेख लिखा है जिसमें आपने यह ढूँढ़ निकालने का प्रयत्न किया है कि अग्नि का उपयोग मनुष्य जाति ने कैसे और कहाँ जाना। इस स्थान पर आपके उस लेख का कुछ अभिप्राय दिया जाता है।

कलकत्ते के इण्डियन म्यूजियम में मि० जे० कागिन ब्राउन ने अभी हाल में एक व्याख्यान दिया था, जिसमें उन्होंने यह बतलाया था कि भारतवर्ष में धातु का आविष्कार होने से पहले पत्थर के औजारों और हथियारों आदि का व्यवहार कब होता था और उनके बनाने आदि में भारतवासियों ने कब किस प्रकार और कितनी उन्नति की थी। प्रायः सभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देशों और जातियों के इतिहास में ऐसे युग मिलेंगे जिनमें आदिम निवासी इसी प्रकार के औजारों और हथियारों आदि से काम लेते थे। मनुष्य-समाज की यह अवस्था बहुत ही आरम्भ में थी। पीछे अनेक युगों में नए नए आविष्कार होते गए और मनुष्य-जाति बराबर उन्नत और सभ्य होने लगी। संसार के सभी देशों और जातियों के भिन्न भिन्न युगों का यदि क्रम लगाया जाय तो वर्षों में उनका हिसाब करना और वर्षों की संख्या नियत करना प्रायः असम्भव ही होगा। तिस पर अग्नि का आविष्कार तो बहुत ही पुराना है और अनुमान किया जाता है कि यह आविष्कार सम्भवतः कम से कम पाँच करोड़ वर्ष से पहले और दस करोड़ वर्ष के इधर हुआ होगा। इस सम्बन्ध में कोई निश्चित समय तो कभी किसी प्रकार बतलाया ही नहीं जा सकता, केवल थोड़ा बहुत अनुमान ही किया जा सकता है; और वह अनुमान भी कुछ ऐसा प्रबल और विश्वसनीय नहीं हो सकता। भूगर्भशास्त्र के विद्वानों को करोड़ों वर्षों के हिसाब लगाने पड़ते हैं; इसलिये वे लोग स्पष्ट रूप से यह बात स्वीकार करते हैं कि यदि हमारे हिसाब या अनुमान में कहीं दस पाँच लाख वर्ष का हेर-फेर या आगा-पीछा हो जाय तो उसे उतना ही क्षम्य समझना चाहिए जितना किसी बहुत प्राचीन घटना का काल-निर्णय करने में किसी ऐतिहासिक के लिये सौ दो सौ वर्ष का भ्रम क्षम्य होता है। साधारण ऐतिहासिक सौ दो सौ बरस पुरानी घटना का वर्णन करते समय एक दो सप्ताह की भूल को कोई चीज़ नहीं समझते। इसी तरह भूगर्भ-शास्त्र के विद्वानों के लिये दस पाँच लाख वर्ष की भूल कोई बड़ी बात नहीं हो सकती।

अग्नि के आविष्कार अथवा प्रादुर्भाव के कारण मनुष्य-जाति की उन्नति में बहुत बड़ी सहायता मिली है। पर यह न समझना चाहिए कि मनुष्य ने इसका पता एकबारगी ही लगा लिया होगा। नहीं, उसका ज्ञान प्राप्त करने और उपयोगिता समझने में ही उसे अनेक युग बीत गए होंगे। कई बार ऐसा भी हुआ होगा कि मनुष्य उसका उपयोग जान कर भी भूल गया होगा और उसे फिर से उसका उपयोग और महत्त्व जानना पड़ा होगा। आजकल आग जलाना बहुत ही सीधी और सहज बात हो गई है। थोड़ा सा सूखा खर, कुछ सूखे हुए पत्ते, एकाध टुकड़ा कागज या जरा सा कोयला ही आग सुलगाने के लिये यथेष्ट होता है। बस एक दिया-सलाई का काम है। दिया-सलाई लगाइए और आग धकधक जलने लगेगी। अब चाहे आप उस पर भोजन पका लीजिए और चाहे सरदी से बचने के लिये उससे कमरा गरम कर लीजिए। जब आग जरा ठण्ढी पड़ने लगे तब उस पर थोड़ी सी लकड़ियाँ, पत्तियाँ या कोयले डाल दीजिए, वह फिर दहकने लगेगी। पर आरम्भ में थोड़ी सी लकड़ियाँ या पत्तियाँ डाल कर आग को बुझने न देना उतना सहज नहीं था जितना सहज आजकल हम और आप उसे समझते हैं। ढेर सी आग सुलगा दीजिए और उसके पास लकड़ियाँ, पत्तियाँ या कोयले रख दीजिए। जब सरदी लगेगी तब बिल्ली या कुत्ता उसके पास तो आ कर बैठ जायगा पर जब वह आग बुझने लगेगी तब और लकड़ियाँ, पत्तियाँ या कोयले डाल कर उसे फिर से सुलगाना उस बिल्ली या कुत्ते को कभी न सूझेगा। किसी होशियार कुत्ते या बन्दर को सम्भव है कि बुझती हुई आग फिर से सुलगाना सिखलाया जा सके, पर उसमें सब से पहले एक सिखलानेवाले की जरूरत पड़ेगी। प्राचीन काल में मनुष्य को ऐसा गुरु भला कहाँ मिल सकता था जो उसे आग सुलगाना सिखलाता! उसे तो स्वयं अपने ही ज्ञान और अनुभव से सब कुछ सीखना पड़ा था।

प्राचीन काल में मनुष्य को सब से बड़ी शिक्षा उसकी आवश्यकता ही दे सकती और देती थी; पर तो भी आवश्यकता चाहे कितनी ही प्रबल और

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्क्षण क्यों न हो पर अधिक स्पष्ट रूप से वह कोई सम्मति नहीं दे सकती और न कोई उपाय ही बतला सकती है। यह मानना ही पड़ता है कि बहुत आरम्भ में मनुष्य बहुत ही कम समझदार और अनेक बातों में पशुओं से मिलता जुलता ही होता था और वह किसी बात को अनेक बार जान कर भी जल्दी भूल जाता था। अथवा उसकी उपमा एक ऐसे छोटे बालक से दी जा सकती है जिसकी शिशुता अभी हाल में ही समाप्त हुई हो। किसी सँकरे मुँहवाली बोतल में कुछ मिठाई रख कर किसी ऐसे बालक को पकड़ा दीजिए। वह उस बोतल को ले कर इधर उधर जमीन पर पटकेगा और उससे उत्पन्न होनेवाला शब्द सुन कर ही प्रसन्न रहेगा। यदि संयोगवश आपसे आप उसमें से मिठाई का कोई टुकड़ा निकल कर बाहर गिर पड़ेगा तो वह उसे उठा कर खा जायगा। पर बराबर पटक पटक कर बोतल में से मिठाई निकालना उसे बहुत दिनों में आवेगा। और यदि पटकने से ही उसमें से मिठाई न निकले तो किसी पतली छड़ी या तीली आदि की सहायता से उसे निकालने योग्य ज्ञान प्राप्त करने में तो उसे और भी अधिक समय लगेगा। इस बार किसी तीली आदि से मिठाई निकालने के दस ही मिनट बाद वह उस क्रिया को भूल जायगा और उस क्रिया को स्मरण रखने तथा उसका पूरा पूरा अभ्यास करने के लिये उसे कई बार वह प्रयोग करना पड़ेगा; और बीच बीच में वह कई बार उसे भूल भी जायगा।

लाखों करोड़ों वर्ष पहले मनुष्य की दशा भी प्रायः बहुत कुछ ऐसी ही थी। वह आग में लकड़ी फेंकता था और आग जल उठती थी। पर केवल इतने से ही वह यह नहीं समझ सकता था कि लकड़ी फेंकने के कारण ही आग जली है। नई लकड़ी फेंकने पर पहले जब आग सुलगी होगी तब शायद मनुष्य यह तो भूल गया होगा कि मैंने लकड़ी उस पर फेंकी थी और वह खड़ा हो कर आग सुलगने का तमाशा देखने लगा होगा। आग कैसे और किन चीजों से जलती है, इसका तो उस समय उसे ज्ञान था ही नहीं; इसलिये वह उस पर हरी हरी टहनियां या पत्थर भी फेंकता हो तो इसमें कोई आश्चर्य्य नहीं। जब तक अच्छी तरह समझ न आ जाय या बार बार अनुभव करने के कारण ज्ञान न बढ़ जाय तब तक किसी जानवर या बच्चे के लिये आग बुझने न देना और उसे बराबर सुलगाते रहना असम्भव ही है। यही बात उस समय मनुष्य के साथ भी हुई होगी। अग्नि के आविष्कार के सम्बन्ध में इतनी बातें हैं जिन्हें देखते हुए यह मानना पड़ता है कि उनमें से प्रत्येक बात को मनुष्य बहुत बड़ा आविष्कार या उन्नति समझता होगा और प्रत्येक बात को जानने या समझने में उसे बहुत समय लगा होगा।

अब उनमें से कुछ मुख्य बातों को लीजिए। पहले तो इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि आग से हमारा कोई काम भी निकल सकता है। तब उसके बाद आग को निश्चित सीमा के अन्दर बराबर सुलगाए रहने और अनावश्यक रूप से उसे इधर उधर बढ़ने न देने की योग्यता आवश्यक होती है। इसके उपरान्त उसे महीनों बल्कि बरसों तक बुझने न देने और एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने की सामर्थ्य की आवश्यकता होती है और तब उसके उपरान्त आग के अभाव में उसे उत्पन्न करने की शक्ति अपेक्षित होती है और यही सब से बड़ा आविष्कार है। यह मानों आग की सृष्टि करना ही है। अग्नि उत्पन्न करने की योग्यता प्राप्त करने से पहले मनुष्य एक ही आग को सुलगाते रहते होंगे और उसी पर अपना भोजन भूनते तथा उसी को तापते होंगे। और जब कभी किसी कारण से आग बुझ जाती होगी तब समाज को सरदी और भूख आदि के कारण बहुत कष्ट उठाना पड़ता होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस समय आग के लिये या तो बड़ी बड़ी यात्राएं कर के लोगों को ज्वालामुखी पर्वतों तक जाना पड़ता होगा और या पास के जंगलों में रगड़ आदि के कारण आपसे आप आग लगने के समय तक प्रतीक्षा करनी पड़ती होगी। पर जब मनुष्य ने अग्नि उत्पन्न करना जान लिया तब उसे लंबी यात्राएं या अधिक समय तक प्रतीक्षा करने की कोई आवश्यकता नहीं रह गई।

अग्नि उत्पन्न करना सीखने में मनुष्य को कितने हजार बरस लगे होंगे, यह कोई नहीं कह सकता; पर हाँ, हम इतना अवश्य जानते हैं कि दियासलाई जिसके बक्स आज कल दो आने दरजन बिकते हैं, आज से सिर्फ नब्बे बरस पहले बनी थी। इसी एक शताब्दी में रेलें बनी हैं, तार लगे हैं और हवाई जहाज तैयार हुए हैं। लेकिन आजकल के इंजीनियर को ज्ञान और अनुभव का जितना संचित भाण्डार मिलता है, उसके मुकाबले में प्राचीन काल के आविष्कर्त्ताओं को कुछ भी न मिलता था। उसे आविष्कार करने में न जाने कितनी कठिनाइयाँ हुई होंगी और न जाने कितना अधिक समय लगा होगा; पर उसके सारे परिश्रमों और सारी उन्नति का अनुमान करने में हमें एक क्षण भी नहीं लगता।

लैम्ब ने अपने एक निबन्ध में लिखा है कि चीन में एक बार एक गाँव में आग लगी थी। उसमें एक सूअर भी कुछ जल गया था। तभी से वहाँवालों ने भुने हुए मांस की उपयोगिता समझी। बहुत प्राचीन काल में जब जंगलों में आग लगती थी तब उस आग में लोग मांस आदि भूना करते थे। पर तो भी भूने हुए मांस की सुगंधि और स्वाद आदि से परिचित होने के लिये ही मनुष्य को क्षुधा का बहुत कुछ कष्ट सहना और बहुत सा समय बिताना पड़ा होगा। आजकाल तो यह सिद्धान्त सभी लोग जानते हैं कि आग बहुत गरम होती है और उसके पास रहने से सरदी नहीं लगती। पर प्राचीनों ने यह सिद्धान्त उसी समय जाना होगा जब कि वह जाड़े और बरसात की ठंढी रातों में ठिठुरते हुए किसी मैदान में पड़े हुए होंगे और उसी समय पास के किसी ज्वालामुखी पर्वत का प्रकोप हुआ होगा। अथवा जब किसी ने जलती हुई लकड़ी हाथ में ले कर किसी आक्रमणकारी चीते के मुँह के आगे कर दी होगी और उसके डर कर पीछे हट जाने पर उसने समझा होगा कि उसे पत्थर फेंक कर भगाने की अपेक्षा अधिक उत्तम उपाय यही है। जो हो, अग्नि किसी न किसी रूप में सदा प्रस्तुत थी और मनुष्य ने किसी प्रकार उसके गुण जाने और उसका उपयोग करना सीखा।

आग को बराबर जलती रखने में जो कठिनाइयाँ होती हैं उनमें से कुछ का वर्णन ऊपर किया जा चुका है। आग में अच्छी तरह जल सकने योग्य चीजों के जानने और उन्हें ठीक समय पर आग में झोंकना सीखने में ही मनुष्य को बहुत सा समय लगा होगा। और फिर उन जल सकने योग्य चीजों को संग्रह कर के रखने और वर्षा आदि से उसकी रक्षा करने की बुद्धि मनुष्य को एक ही दिन में नहीं आ गई होगी। बन्दरों से मिलते जुलते पृथ्वी के आदिम निवासियों ने आग को इधर उधर फैलने न दे कर एक निश्चित सीमा के अन्दर ही रखना बड़ी कठिनता से सीखा होगा और इससे पहले आग के कारण अपनी बहुत कुछ हानि की होगी। खाने की चीजें पकाने आदि में मनुष्य ने अग्नि का उपयोग कब और कैसे सीखा, यह स्वतंत्र और व्यापक विषय है और इस लेख में उस पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

आग को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने की युक्ति जानना भी बड़ा भारी काम था। पहलेपहल जलती हुई लकड़ी हाथ में उठा लेने की सहज में किसी की हिम्मत ही न पड़ेगी; और फिर यदि साहस करके कोई उसे उठा भी ले तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवश्यकता या अंडस पड़ने पर वह उसे छिपावेगा कहाँ ? आग को अधिक समय तक सुरक्षित रखने के लिये किसी ऐसे पदार्थ की आवश्यकता होती है जो बहुत धीरे धीरे और अधिक समय तक सुलगती रहे और जिसकी अग्नि इच्छानुसार सहज में चैतन्य हो सके। उस चीज के अभाव में लोगों को कितने दिनों तक योंही भटकना पड़ा होगा और कितने कितने चक्कर लगाने पड़े होंगे ! आजकल भी गाँवों, देहातों और जंगलों में जब आग बुझ जाती है और लोगों के पास दियासलाई नहीं रह जाती तो वे आस पास के गाँवों में जा कर आग लाते हैं। यह अनुमान करना बहुत ही कठिन है कि मनुष्य ने बुझी हुई आग को फिर से सुलगाना कितनी कठिनाइयों से और कितने अधिक समय में सीखा होगा; क्योंकि यह सीखना भी आग का उपयोग सीखने से कम कठिन नहीं है।

कई ऐसे प्राकृत साधन भी हैं जिनसे अग्नि प्राप्त होती है। एक साधन तो ज्वालामुखी पर्वत है और दूसरा साधन जङ्गलों में लगनेवाली आग है। इसके अतिरिक्त कुछ स्थान ऐसे भी होते हैं जहाँ की मिट्टी के नीचे एक प्रकार की भभकनेवाली गैस दबी रहती है। उन स्थानों से ऐसी गैस बहुधा निकला करती है जो बहुत जल्दी अग्नि का रूप धारण कर सकती अथवा कर लेती है। यह तो निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि यह गैस फास्फोरस आदि की तरह जलती है या इसमें बिजली अथवा और किसी प्राकृतिक शक्ति की सहायता से लपट निकलती है; पर इसमें सन्देह नहीं कि अनेक स्थानों से अनेक रूपों में यह गैस निकला करती है और यदि नीचे गैस का भण्डार यथेष्ट हो तो उसकी आग बरसों तक बनी रहती है। जिन स्थानों पर नीचे कोयले की खानें आदि होंगी वहाँ भी समय समय पर प्राकृत अग्नि मिल सकेगी।

आजकल तो जङ्गलों में प्रायः मनुष्य ही आग लगाते हैं, पर तो भी कभी कभी उनमें बिजली गिरने, हवा के कारण सूखी टहनियों के परस्पर रगड़ खाने या ज्वालामुखी के प्रकोप आदि के कारण भी आग लग जाती है। कभी कभी खर और घास आदि के ढेरों में भी आपसे आप आग लग जाती है, पर इसे हम आग उत्पन्न करने के प्राकृत साधनों में नहीं गिनते और न मनुष्यों ने कभी वैसी आग का उपयोग ही किया। और न यही माना जा सकता है कि किसी चट्टान आदि के गिरने से चिनगारियाँ निकली हों और उनसे आग लग गई हो। पर तोभी यह सम्भव है कि मनुष्य ने या तो रगड़ लगने के कारण आग को उत्पन्न होते देखा होगा और या चिनगारियों से आग लगने का अनुभव किया होगा और उन दोनों में से किसी एक का उसने उपयोग किया होगा। अथवा यह भी सम्भव है कि उसने दो चीजों को कुछ देर तक रगड़ा होगा, तब उन्हें गरम पाया होगा और कुछ अधिक रगड़ने पर आग को जल उठते देखा होगा।

कुछ लोगों का यह मत है कि मनुष्य ने पहले पहल रगड़ कर आग उत्पन्न करना सीखा और कुछ लोगों का कहना है कि उसने आघात से उत्पन्न होनेवाली आग का सब से पहले अनुभव किया। पर किसी प्रकार निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि दोनों में से किस की बात ठीक है, उतने प्राचीन काल की बातें जानने का कोई सूत्र नहीं है अतः इस सम्बन्ध में कोई निर्णय करना असम्भव है। चकमक या लोहे आदि को रगड़ कर अग्नि उत्पन्न करना सहज तो अवश्य है पर कठिनता यह है कि उस समय चकमक और लोहे का आविष्कार ही नहीं हुआ था। कई तरह के ऐसे पत्थर होते हैं जिनमें गन्धक आदि का कुछ अंश मिला रहता है और जिन पर भारी आघात पड़ने से चिनगारियाँ छूटती हैं; पर मनुष्य को उनके द्वारा आग सुलगाने का ज्ञान होना भी अठिन है; क्योंकि एक तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस समय लोगों को ऐसे पत्थरों का ज्ञान होना ही कठिन था और दूसरे इसके लिये ऐसी चीजों की भी आवश्यकता थी जो एक चिनगारी के पड़ते ही चटपट आग पकड़ सकें। साधारण पत्थरों पर जब तक भारी आघात न पहुँचेगा तब तक उनमें से चिनगारियाँ न निकलेंगी। दियासलाई की तरह की कोई चीज़ तैयार होना तो बहुत ही कठिन काम है। अभी यदि आप से दियासलाई बनाने की बात कही जाय तो कैसी जल्दी और बहादुरी से आप चटपट कह देंगे कि हम ऐसे दियासलाई बना लेंगे और उसे वैसे तैयार कर लेंगे। पर वास्तव में उसका तैयार करना कैसा कठिन है, यह बहुत ही कम लोग जानते हैं।

आजकल चकमक लोहे आदि से प्रायः बहुत ही कम काम लिया जाता है; या तो कुछ अशिक्षित और असभ्य लोग उसका व्यवहार करते हैं और या कुछ विशिष्ट उत्सवों या पर्वों आदि पर ही उनका उपयोग होता है। बाकी सब जगह दियासलाई का ही राज्य है। विलायत में इधर कुछ जेबी केस बने हैं जिनका ढकना खोलते ही एक रेती उसके भीतर लगे हुए लोहे से रगड़ खाती है; उस रगड़ से चिनगारी उठती है और उससे एक छोटा स्पिरिट का लम्प जल उठता है*। आतशी शीशे से भी आग उत्पन्न की जाती है। एक और तरह का पम्प होता है जिसमें से हवा के दबाव के कारण आग निकलती है। पर ये सब बहुत ही हाल के आविष्कार हैं। बारूद का आविष्कार अवश्य ही कुछ पहले हुआ था पर उससे आग उत्पन्न करने के लिये पहले पलीता या इसी तरह की और कोई चीज चाहिए और आघात से सहज में उससे आग नहीं उत्पन्न की जा सकती।

इस लेख में आग सुलगानेवाली चीजों में से केवल लकड़ी का ही जिक्र किया गया है। आग जलाने के लिये और चीजों—कोयले, गैस, तेल—आदि का व्यवहार बहुत बाद में होने लगा है। कृत्रिम गैस का आविष्कार तो बहुत ही हाल में, गत शताब्दी के आरम्भ में ही हुआ है।

लकड़ी के कोयले में किसी तरह का धुआँ नहीं होता और वह सहज में जल सकता है। सम्भव है कि जंगलों की आग बुझ जाने के उपरान्त मनुष्य वहाँ से जली हुई लकड़ियां और कोयले उठा लाता होगा और उन्हीं से अपने यहाँ आग सुलगाता होगा। पत्थर के कोयले और उसकी खानों आदि का आविष्कार बहुत ही हाल का है। प्राकृतिक गैस को एक स्थान से दूसरे स्थान तक नहीं ले जा सकते; पर कई देशों में कुछ विशिष्ट धार्म्मिक उत्सवों में ऐसी आग के सम्बन्ध से सुलगाई हुई आग या जलाई हुई रोशनी का बहुत महत्त्व माना जाता था। अमेरिका में बहुत से ऐसे कुएँ हैं जिनमें इस प्रकार की प्राकृतिक गैस भरी पड़ी है; इधर पचास वर्षों से उन कुओं की गैसों से बहुत काम लिया जाता है। यद्यपि इस निबन्ध में तरह तरह की गैसों और दूसरी जलनेवाली चीजों का इतिहास बतलाना हमारा उद्देश्य नहीं है तथापि इन बातों के कहने का तात्पर्य्य यह है कि ज्यों ज्यों समय बीतता गया और आविष्कार होते गए त्यों त्यों तत्सम्बन्धी उन्नति की गति भी बढ़ती गई; अथवा आविष्कार न होने या उपयोग न जानने के कारण ही पहले बराबर अधिक देर होती रही थी। ज्यों ज्यों पीछे की ओर लौटिएगा त्यों त्यों उन्नति की गति बराबर शिथिल होती हुई मिलेगी।

इस निबन्ध में यही बतलाने का प्रयत्न किया गया है कि आग का उपयोग जानने और उससे काम लेने में मनुष्य कितने धीरे धीरे अग्रसर हुआ है। इसका मुख्य कारण यह था कि बहुत प्राचीन काल

* भारत के बाजारों में भी इस तरह आपसे आप जल उठनेवाले कई तरह के छोटे लम्प सस्ते दामों में मिलते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में पहले तो मनुष्य में इतनी योग्यता ही नहीं थी कि वह किसी घटना को देख कर कोई सिद्धान्त निकाल सके; इसके अतिरिक्त उस सिद्धान्त को स्मरण रखने और आवश्यकता पड़ने पर उससे काम लेने में भी उस समय वह असमर्थ ही था। यह सब बातें शिक्षा के अभाव के कारण ही थीं। उस समय उसमें न तो बुद्धि ही थी और न तर्क-वितर्क आदि की शक्ति ही; और इन्हीं सब कारणों से उन्नति में बहुत बड़ी बाधा पड़ती थी।

कोई बात या घटना हो जाने पर बड़ी जल्दी समझ आ जाती है। प्राचीन काल में मनुष्य को अनेक ऐसी वास्तविक आवश्यकताएँ भी हुआ करती थीं जिनका उसे स्वयं पूरा पूरा ज्ञान न होता था। ऐसी आवश्यकताएँ पूरी करने के साधन ढूँढ़ निकालना सहज नहीं है। अनेक कठिनाइयाँ झेल कर और कष्ट सह कर जिन कठिन समस्याओं का निराकरण इस समय हो चुका है, उनकी पूर्व-कठिनाइयों और कष्टों का अनुमान आजकल के जमाने में बहुत ही कठिन है। आजकल लोग अनेक परिक्रियाओं और यंत्रों आदि का आविष्कार कर के उन्हें पेटेन्ट करा लेते हैं। जब उसी प्रकार का कोई दूसरा आविष्कार होता है और इस बात का झगड़ा खड़ा होता है कि इसके कारण पूर्व आविष्कर्त्ता के अधिकार मारे जाते हैं या नहीं और यह नया आविष्कार उस पुराने आविष्कार की नकल है या नहीं तो अधिकारियों को इस बात का अनुमान करने में बहुत ही कठिनता होती है कि आरम्भ से अब तक उसमें किस प्रकार उन्नति की गई है। बहुत प्राचीन काल में आग की जानकारी प्राप्त करने में ही मनुष्य को इतने अधिक युग लग गए होंगे कि आजकल उस समय के जीवन-क्रम का अनुमान ही नहीं हो सकता जब कि आग का आविष्कार हुआ ही न था।

आजकल बिना दिया-सलाई के ही काम चलाना बहुत कठिन होता है। आजकल इतना ज्ञान बढ़ने और इतनी उन्नति होने पर भी सभ्य जातियों को दिया-सलाई का आविष्कार करने में जितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है उन्हें देखते हुए उन कठिनाइयों का अनुमान करना चाहिए जो बहुत प्राचीन अन्ध और अज्ञान काल में किसी असभ्य और अशिक्षित जाति को अग्नि का आविष्कार करने में झेलनी पड़ी होंगी। उन्नीसवीं शताब्दी तक लोग चकमक और लोहे आदि की सहायता से ही आग जलाते थे! सन् १८२७ में पहलेपहल एक तरह की दिया-सलाई बनी थी जो बहुत कम और वह भी एक शिलिंग (बारह आने) की एक बक्स मिलती थी! फास्फोरस का आविष्कार सत्रहवीं सदी में हुआ था। इससे पहले अवश्य ही और अधिक कठिनाइयाँ थीं।

सन् १८६०—७० में भारत में दिया-सलाई का बक्स एक आने को मिलता था, पर आजकल युद्धकाल में भी दो आने में दिया-सलाई के एक दरजन बक्स मिलते हैं जिनमें से हर एक बक्स में साठ या अस्सी सलाइयाँ होती हैं। कितने थोड़े दाम में कितना अधिक काम निकलता है। इतने सस्ते मिलनेवाले सलाई के बक्स में की प्रत्येक सलाई के सम्बन्ध में यह बात प्रायः निश्चित ही है कि वह एक सेकंड के अन्दर अवश्य ही आग उत्पन्न कर देगी। सलाई का आविष्कार करने में केवल इसी बात की आवश्यकता थी कि उसके सिरे पर कोई ऐसी चीज़ लगी रहे जो जरा सी रगड़ खाते ही जल उठे। हम लोग जन्म से ही दिया-सलाई देखते आए हैं इसलिये उसके आविष्कार के मार्ग में पड़नेवाली कठिनाइयों का अनुमान हम लोग नहीं कर सकते। पहले तो किसी ऐसे सम्मिश्रण की आवश्यकता थी जो रगड़ खाने से एक दम भभक न उठे बल्कि सहज में आग धर ले। और तदुपरान्त यह समस्या उपस्थित हुई कि उस उत्पन्न आग को पकड़ने और ठहराने के लिये लकड़ी की सलाई का व्यवहार किया जाय या लपेटे हुए कागज का। किसी ऐसी चीज की भी आवश्यकता थी जिस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर रगड़ने से अग्नि उत्पन्न हो। यह भी आवश्यक था कि वह सम्मिश्रण सलाई पर इस प्रकार लगाया जाय कि आवश्यकता पड़ने पर वह चटपट रगड़ा जा सके और उससे आग निकाली जा सके। रगड़ने के समय सम्मिश्रण को उस सलाई पर भी लगा रहना चाहिए। स्वयं सम्मिश्रण में इतनी शक्ति भी होनी चाहिए कि वह सलाई को जला सके और सलाई ऐसी होनी चाहिए जो सहज में जल सके और कुछ देर तक बराबर जलती रहे। आदि आदि।

बढ़िया दिया-सलाई तैयार करने में जितनी कठिनाइयाँ हुई थीं उनमें से कुछ का यहाँ उल्लेख हुआ है। सलाई को नमी और सील आदि से भी बचाना चाहिए। रगड़ने के उपरान्त उसका जलता हुआ सिरा गिर न जाना चाहिए और अधिक रक्षा के लिये यह भी आवश्यक है कि वह केवल उसी बक्स पर रगड़ने से ही जले, सब जगह रगड़ने से नहीं। गरमी आदि के कारण वह आपसे आप भी न जल जानी चाहिए। लकड़ी भी उसके लिये ऐसी होनी चाहिए जो जरा से झटके में टूट न जाय, सहज में उसकी सलाइयाँ बन सकें और वह अधिक मान में मिल भी सके। उसमें किसी तरह का विष भी नहीं होना चाहिए; इत्यादि इत्यादि। आजकल हम लोग सलाई का नाम तो झट से ले लेते हैं पर इतनी सलाइयाँ और उनके बक्स तैयार करने में जितने परिश्रम और यंत्रों आदि की आवश्यकता होती है, वह हम बिलकुल भूल ही जाते हैं।

जरा एक बार दिया-सलाई का व्यवहार करनेवाले अपने आपको सौ वर्ष पहले के काल में समझें और अग्नि का व्यवहार करनेवाले अपने आपको करोड़ों वर्ष पहले के उस काल में समझें जब कि मनुष्य की दशा बन्दरों से बहुत कुछ मिलती जुलती होती थी। और तब दिया-सलाई का व्यवहार करनेवाला दिया-सलाई बनाने का उपाय सोचे और आग का व्यवहार करनेवाला आग सुलगाने, उससे काम लेने और उसे निश्चित सीमा के अन्दर रखने की तरकीबें सोचे। आजकल सभ्यता-काल में प्राचीन काल की अग्नि के आविष्कार के सम्बन्ध की कठिनाइयों का अनुमान तभी हो सकता है जब मनुष्य अपना वर्त्तमान ज्ञान बिलकुल भुला दे और अपने आपको उसी प्राचीन और असभ्य दशा में समझे।

—:o:—

पाबू राठौर।

मारवाड़ में पाबू नामक एक बहुत प्रसिद्ध राठौर वीर हो गया है। सारे मारवाड़ में लोग देवता के समान उसका आदर करते हैं। गौओं की रक्षा करने में ही उसके प्राण गए थे, अतः मारवाड़वाले उसे अमर और अपने पशुओं आदि का रक्षक मानते हैं। मारवाड़ में अनेक स्थानों पर पाबू के छोटे छोटे मन्दिर हैं जिनमें उसकी मूर्त्तियाँ स्थापित हैं और जिन्हें लोग देवताओं की मूर्त्तियों के समान पूजते हैं। उसकी अधिकांश मूर्त्तियाँ ऐसी ही हैं जिनमें वह स्वयं एक घोड़े पर सवार है और उसके पीछे एक कतार में उसके सात थोरी साथी हैं जिनके हाथों में चढ़ी हुई कमानें हैं। आजतक थोरी जाति के लोग मारवाड़ के गाँव गाँव में सारंगी पर पाबू का उसी प्रकार गुण-कीर्त्तन करते फिरते हैं जिस प्रकार इन देशों में जोगी बाबा गोरखनाथ और राजा भरथरी के गीत गाते हैं। उन थोरियों के साथ एक बड़ी चादर भी होती है जिसपर पाबू के जीवन-काल की अनेक घटनाएं भी चित्रित होती हैं।

पाबू का जन्म मारवाड़ के कोलू नामक एक गाँव में हुआ था। उसके बाप का नाम धाधल और दादा का नाम आस्थान था। सम्भवतः पाबू का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय सम्बत् १३०० और १४०० के मध्य में था। मन्दिरों में उसकी मूर्त्तियों के नीचे जो सम्बत् आदि मिलते हैं, उनसे तथा दूसरे प्रमाणों से प्रायः यही सिद्ध होता है। कोलू गाँव के आसपास थोरी नामक एक जंगली जाति के लोग रहते थे जो पाबू पर बड़ी श्रद्धा रखते थे और सदा उसके साथ रहा करते थे। कोलू में अब तक कुछ धाधल राठौर रहते हैं जो अपने आपको धाधल के पुत्र उदयसिंह के वंशज बतलाते हैं। शिलालेखों तथा दूसरे प्रमाणों से सिद्ध होता है और कोलू के कुछ धाधल राठौर भी यह बात स्वीकार करते हैं कि धाधल के पन्द्रह बेटे थे जिनमें से सब से बड़े का नाम उदयसिंह और उससे छोटे का नाम बूड़ो था। पाबू अपने पिता का तेरहवाँ पुत्र था। पाबू में अब तक दो मन्दिर हैं जिनके पास एक कुआँ है। गौओं की रक्षा करने के उपरान्त उन्हें पिलाने के लिये इसी कुएं से पानी निकालते समय बालक पाबू मारा गया था। वहीं पास ही एक तालाब है जो पाबू सर कहलाता है और जिसके किनारे पर कई छतरियाँ और समाधियाँ बनी हुई हैं।

मारवाड़ में धाधल राठार के विषय में यह दन्त-कथा प्रसिद्ध है कि वह एक बार गुजरात गया था। वहाँ एक तालाब के किनारे उसे एक बार कई अप्सराएं दिखाई पड़ीं जिनमें से एक को उसने पकड़ लिया। जब धाधल ने उसे अपने साथ कोलू ले चलना चाहा तब उस अप्सरा ने उससे प्रतिज्ञा करा ली कि जब मैं एकान्त में कोई काम करूँ तब तुम लुक छिप कर कभी मेरी टोह न लेना। धाधल ने उसकी बात स्वीकार कर ली और वह उसे अपने साथ ले आया। उस समय कोलू एक छोटा सा राज्य था और वहाँ पेमो या प्रेमो नामक राजा राज्य करता था। पर धाधल और पेमो में अनबन थी और धाधल कभी पेमो के दरबार में नहीं जाता था। कोलू में धाधल ने उस अप्सरा के लिये एक अलग नया महल बनवाया था और उसी में वे दोनों रहते थे। वहीं उस अप्सरा के गर्भ से धाधल को सोनाबाई नाम की एक कन्या और पाबू नाम का एक पुत्र उत्पन्न हुआ। धाधल उस अप्सरा से जो प्रतिज्ञा कर चुका था, उसके अनुसार वह कभी बिना पहले से कहलाए उसके महल में न जा सकता था। पर एक दिन कुतूहल-वश उसने यह जानने की चेष्टा की कि एकान्त में वह क्या करती है और इसी लिये वह चुपचाप छिप कर महल में घुस गया। वहाँ पहुँच कर उसने देखा कि एक शेरनी अपने बच्चे को दूध पिला रही है। वह शेरनी वास्तव में अप्सरा ही थी। धाधल को देखते ही वह फिर अप्सरा बन कर तुरन्त आकाश में उड़ गई। शेरनी के बच्चे ने भी अपना प्रकृत रूप धारण कर लिया, उस समय धाधल ने देखा कि वह पाबू है। धाधल ने दूध आदि पिलाने के लिये उसे एक दाई के सपुर्द कर दिया।

कुछ समय के उपरान्त धाधल का शरीरान्त हो गया। उस समय पाबू और सोनाबाई के अतिरिक्त उसे एक कन्या और एक पुत्र पहले का और था। पुत्र का नाम बूड़ो और कन्या का नाम पेमा (प्रेमा) बाई था। पेमाबाई का विवाह खीची जिंदराव से और सोनाबाई का विवाह सिरोही के राजा देवड़ो से हुआ था। पाबू से बूड़ो बड़ा था इसलिये पिता के मरने पर सारी सम्पत्ति उसी ने सँभाल ली और बेचारे पाबू के लिये कुछ भी न बच गया। पाबू के हाथ किसी तरह से एक साँड़नी आ गई थी; उसी पर सवार हो कर वह इधर उधर से शिकार कर लाता और अपना काम चलाता था।

कोलू के पास ही एक और छोटा सा राज्य था जिसके राजा का नाम आनो था। उसके यहाँ सात थोरी रहा करते थे जो सब आपस में भाई और एक ही पिता के पुत्र थे। एक बार देश में बहुत अकाल पड़ा। जब उन थोरियों को और कुछ न मिला तब उन्होंने एक भैंस मार कर उसी का मांस खा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिया। यह बात आनो के लड़के को बहुत बुरी मालूम हुई और वह उन थोरियों से लड़ पड़ा। लड़ाई में थोरियों ने उसे मार डाला; पर आनो के भय से उन लोगों ने वहाँ ठहरना उचित न समझा और वे सब वहाँ से भाग निकले। जब आनो को यह बात मालूम हुई तब उसने उन सब का पीछा किया और रास्ते में ही उन्हें जा पकड़ा। लड़ाई हुई जिसमें उन सातो थोरियों का बाप मारा गया और वे सातो भाई भाग गए। उन सातो भाइयों ने कई आदमियों के पास जा कर शरण माँगी पर आनो के भय से कोई उन्हें अपने पास न रखता था। अन्त में वे लोग कोलू के राजा पेमो के पास गए; पेमो ने उन्हें धांधल के बेटे बूड़ो के पास जाने को कहा। जब वे बूड़ो के पास गए तब उसने उन्हें पाबू के पास भेज दिया। उस समय पाबू घर पर नहीं था, कहीं जंगल में शिकार करने गया हुआ था। थोरी उसे ढूँढ़ने के लिये जंगल की तरफ चल पड़े। जंगल में उन्हें एक छोटा लड़का हिरन का शिकार करता हुआ मिला। उस लड़के से उन लोगों ने पूछा कि पाबू कहाँ है? उस लड़के ने कह दिया कि पाबू शिकार करने गया है। पाबू के आसरे थोरी वहीं ठहर गए। थोड़ी देर बाद उन्होंने उस लड़के से कहा कि हमें बहुत भूख लगी है, अपनी साँडनी हमें दे दो तो हम लोग उसे मार कर खायँ। लड़के ने वह साँडनी उन लोगों को दे दी और कहा कि तुम लोग इसे मार कर खाओ, मैं जा कर पाबू को बुला लाता हूँ। थोरियों ने उस साँडनी को एक तरफ ले जा कर ज़बह किया और उसका मांस खाया। ज्यों ही वे लोग मांस खा कर उठे त्यों ही वह लड़का एक दाई के साथ वहाँ आ पहुँचा। जब दाई की जबानी उन लोगों को मालूम हुआ कि यही लड़का पाबू है तो उनके आश्चर्य्य का ठिकाना न रहा। आते ही पाबू ने उन लोगों से पूछा कि मेरी साँडनी कहाँ है? उन्होंने कहा कि साँडनी तो तुम हमें दे गए थे, हम लोग उसे मार कर खा गए। पाबू ने कहा,—यह सब कुछ नहीं है, तुम लोग जाओ और उसे ढूँढ़ो। लाचार हो कर वे उसे ढूँढ़ने लगे और ढूँढ़ते हुए वहाँ पहुंचे जहाँ उन लोगों ने उसे काटा था और जहाँ वे उसकी ठठरी छोड़ आए थे। वहाँ उन्हें पड़ी हुई ठठरी की जगह जीती जागती साँडनी खड़ी हुई मिली। तब उन लोगों ने समझ लिया कि यह सब पाबू की ही करामात है और तभी से वे उसके भक्त हो गए।

उस दिन से उन थोरियों ने कभी पाबू का साथ न छोड़ा। जहाँ जहाँ पाबू जाता था, वहाँ वहाँ वे उसके साथ जाते थे और सदा उसके पसीने की जगह अपना खून बहाने को तैयार रहते थे। ऐसे मालिक के साथ रह कर सेवक जो न करें सो थोड़ा है। मालिक के मन में भी जब जो बात आती थी तभी वह उन लोगों की सहायता से उसे पूरा कर लेता था। जब उसके बड़े भाई बूड़ो की लड़की का ब्याह गोगू चौहान से होने लगा तब वह अपनी भतीजी से कह बैठा कि मैं देवो सूमड़ो की साँडनियाँ तुम्हें दहेज में दूँगा। देवो सूमड़ो एक बड़ा जबरदस्त सरदार था और लोग उसे "दूसरा रावण" कहा करते थे। पाबू की बात सुन कर सब लोग हँसने लगे; पर पाबू ने लोगों के हँसने की कुछ परवा न कर के हरियो नाम के एक साथी को देवो का पता लगाने के लिये भेज दिया। इसी बीच में एक और घटना हो गई। उसकी बहन सोनाबाई सिरोही के सरदार के साथ ब्याही गई थी। एक दिन वह अपनी सौत—आनो की कन्या—वाघेली के साथ चौपड़ खेल रही थी। उस समय वाघेली ने बात ही बात में सोना को ताना दिया कि तुम्हारे यहाँ से तो दहेज में एक गहना भी नहीं आया और तुम्हारा भाई तो थोरियों के साथ खाता है। इस पर सोनाबाई ने कहा कि हमारे भइया पाबू के थोरी तुम्हारे राय जी (पति) के अमीरों और सरदारों से अच्छे हैं। इस बात पर राय ने सोना-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाई को बहुत मारा। जब पाबू को यह बात मालूम हुई तब वह राय से बदला लेने के लिये तैयार हो गया।

चलने से पहले वह अपने बड़े भाई बूड़ो से आज्ञा माँगने गया। उस समय उसके थोरी सरदार उसके साथ थे और वह अपनी बढ़िया घोड़ी पर सवार था। उस घोड़ी में अनेक गुण थे और वह पहले काचेला चारणों के पास थी। उस घोड़ी पर बहुत से सरदारों की निगाह थी और सभी उसे लेना चाहते थे। जिंदराय खीची और बूड़ो का भी उस पर दाँत था; पर चारणों ने वह घोड़ी और किसी को न दे कर पाबू को इस शर्त पर दी थी कि जब उन लोगों पर कभी कोई आपत्ति आ पड़ेगी तो पाबू उनकी सहायता करेगा और उनकी ओर से लड़ेगा। पाबू को घोड़ी पर सवार हो कर आया देख उसकी भाभी—बूड़ो की स्त्री—डोडा गहेली ने कहा कि तुम्हें लाज नहीं आती कि जो घोड़ी तुम्हारे बड़े भइया लिया चाहते हैं उस पर आप चढ़े घूमते हो; साथ ही उसने ताने के तौर पर यह भी पूछा कि इस घोड़ी से तुम हल जोतोगे या देश का नाश करोगे? पाबू ने कहा कि अगर यह घोड़ी भइया लेना चाहते हों तो मैं उन्हें दे सकता हूँ। पर जो तुम यह पूछती हो कि तुम इस घोड़ी को ले कर क्या करोगे तो इसका जवाब यह है कि मैं राजपूत हूँ और मुझे सवारी की जरूरत रहती है। अगर तुम मेरी बहादुरी देखना चाहती हो तो मैं अभी तुम्हारे पीहर डोडवानो जा कर तुम्हारे भाइयों को बेड़ियां पहना कर कोलू तक ला सकता हूँ। इस पर डोडा गहेली हँस पड़ी, उसने कोई उत्तर नहीं दिया। उसी समय पाबू वहाँ से चल दिया और कई दिनों बाद लौट कर उसने अपनी भाभी डोडा को अपने यहाँ बुलाया और एक खिड़की में से झाँक कर देखने के लिये कहा। डोडा ने झाँक कर देखा कि उसके भाइयों की मुश्कें बँधी हुई हैं और उनकी आँखों से आँसू बह रहे हैं। ऊपर से थोरी उन्हें मारते और उनके बाल पकड़ कर खींचते हैं।

पाबू ने अपने जिस थोरी साथी को देवो सूमड़ो का पता लगाने के लिये भेजा था उसका नाम हरियो था। इसी बीच में हरियो भी देवो का पता लगा कर लौट आया था। उसने आ कर कहा कि देवो से लड़ना बहुत ही कठिन है। एक तो उसके पास आदमी बहुत हैं और दूसरे उसके रहने का स्थान बहुत सुरक्षित है। पर पाबू ने उन बातों का कुछ ध्यान न कर के उस पर चढ़ाई करना ही निश्चय किया। पर अभी सब से पहले उसे अपनी बहन का बदला लेने सिरोही जाना था। वह अपने सातो थोरी साथियों को ले कर सिरोही की ओर चल पड़ा। और सब थोरी तो घोड़े पर सवार था, खाली हरियो पैदल चलता था। वह सातो थोरी प्रायः उससे कहा करते थे कि जिस प्रकार हो आनो वाघेली से बदला लेना चाहिए, आनो का गाँव सिरोही के रास्ते में ही पड़ता था। आनो के गाँव में पहुँच कर पाबू उससे लड़ा और अन्त में उसने उसे मार डाला। आनो का लड़का अपनी माँ के सारे गहने ले कर पाबू की शरण में आया। पाबू ने उसे क्षमा कर दिया और उसके बाप की गद्दी उसे दे दी। पाबू वहाँ से चल कर सिरोही पहुँचा। वहाँ भी लड़भिड़ कर वह जीता और उसने अपने बहनोई को पकड़ कर कैद कर लिया। अपनी बहन सोना बाई के बहुत कुछ कहने सुनने पर अन्त में उसने उसे छोड़ दिया। रास्ते में आनो की स्त्री के जो गहने उसे मिले थे वे सब उसने अपनी बहन सोना को दे दिए। सोना ने वे सब गहने ले जा कर अपनी वाघेली सौत को दिखलाए और कह दिया कि मेरे भइया पाबू और उसके थोरियों ने तुम्हारे बाप को मार डाला है और वही तुम्हारी माँ के यह सब गहने ले आए हैं।

इस प्रकार अपनी बहन का बदला चुका कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाबू ने देवो सूमड़ो की ओर प्रस्थान किया। रास्ते में उसे मिरजाखाँ की अमलदारी मिली। उसी अमलदारी में उसने पड़ाव डाला और उसकी बागबारी का बहुत नुकसान किया। माली रोते हुए शिकायत करने के लिये मिरजा के पास पहुँचे। पर मिरजा ने पहले ही पाबू की बहादुरी का हाल सुन लिया था इसलिये वह बहुत सी अच्छी अच्छी चीजें ले कर पाबू की नजर करने आया। पर पाबू ने उसमें से केवल एक घोड़ा लिया, और कोई चीज नहीं ली। वह घोड़ा उसने हरियो को दे दिया क्योंकि उसके पास कोई घोड़ा नहीं था। वहाँ से वह फिर देवो की अमलदारी की तरफ बढ़ा। पर जब वह पंचनद पहुँचा तो वहाँ उसे बहुत गहरा जल मिला। उसे पार करने का वहाँ कोई उपाय नहीं था। अन्त में वहाँ उसकी दैवी शक्ति काम आई और वह चटपट अपने साथियों सहित उसे पार कर गया। वहाँ उसे देवो की साँडनियां चरती हुई दिखाई दीं। उसने अपने थोरी साथियों को आज्ञा दी कि तुरन्त इन सब को घेर कर पकड़ लो। उनमें से केवल एक ऊँट उसने छोड़ दिया और उसी ऊँट पर अपने एक आदमी को भेज कर देवो से कहला दिया कि मैं तुम्हारी साँडनियां और ऊँट लिए जाता हूँ; अगर तुम उन्हें बचाने के लिये आना चाहो तो मैं तुम्हारा मुकाबला करने के लिये तैयार हूँ। वहाँ से चल कर वह फिर उसी तरह अपने सब साथियों और साँडनियों सहित पंचनद पार हुआ और गोगू के गाँव सोदरो की ओर चल पड़ा। देवो ने जब सुना कि पाबू मेरी साँडनियां ले गया है तब वह मिरजा के पास पहुँचा। पर मिरजा ने उसे यही सलाह दी कि तुम चुपचाप बैठ जाओ, पाबू से लड़ने मत जाओ; वह बड़ा बहादुर है। लाचार देवो ने उससे बदला लेने का विचार छोड़ दिया और वह चुपचाप अपने घर लौट गया।

पंचनद से जो रास्ता सोदरो की ओर जाता था उस रास्ते में उमरकोट नाम का एक गाँव पड़ता था। उमरकोट से चलते समय वहाँ के सरदार सोधू की कुँआरी कन्या फूलवंती से पाबू की आँखें चार हो गईं। घर जा कर फूलवन्ती ने अपनी माता और सहेलियों से कह दिया कि मैंने प्रण कर लिया है कि मैं पाबू के सिवा और किसी से ब्याह न करूँगी। उसके पिता सोधू ने भी यह बात स्वीकार कर ली और ब्याह की बातचीत पक्की करने के लिये एक आदमी को पाबू के पास भेजा। पाबू ने फूलवन्ती से ब्याह करना तो स्वीकार कर लिया पर यह कहा कि मैं अभी ठहर नहीं सकता; पहले मैं जा कर गोगू को देवो की साँडनियां दूँगा और तब वहाँ से लौट कर ब्याह करूँगा। वहाँ से चल कर वह सोदरो पहुँचा और सब साँडनियां उसने गोगू को दे दीं। गोगू ने उसकी बहादुरी की बहुत सराहना की। पर उसके मन में एक सन्देह उत्पन्न हुआ। उसने सोचा कि कहीं ये साँडनियां किसी दूसरे की न हों और पाबू उसी से छीन कर इन्हें मेरे पास ले आया हो। इसलिये उसने अपने मन में निश्चय किया कि इसकी परीक्षा करनी चाहिए; देखना चाहिए कि वह कितना बहादुर है। इसलिये उसने पाबू से कहा कि एक आदमी से मेरा वैर है; मैं उससे बदला लेना चाहता हूँ। चलो, कल जंगल में चल कर हम लोग शकुन देखें। दूसरे दिन सवेरे वे दोनों जंगल में गए पर वहाँ उन लोगों को कोई शकुन न मिला। उन्होंने घोड़ों को इधर उधर चरने के लिये छोड़ दिया और स्वयं वे लोग दिन भर एक पेड़ के नीचे सोए। तीसरे पहर उठ कर गोगू ने कहा कि चलो, अब घर चलें। पाबू घोड़े लाने के लिये गया; उसने जा कर देखा कि घोड़ों के पैरों में साँप लिपटे हुए हैं। उसने समझ लिया कि यह सब गोगू की चालाकी है। वह चुपचाप लौट आया और आ कर उसने कह दिया कि मुझे घोड़े नहीं मिले। तब गोगू उन घोड़ों को ढूँढ़ने के लिये गया। गोगू ने जा कर देखा कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक बड़ी झील है जिसके बीच में एक नाव खड़ी है और उसी नाव पर दोनों घोड़े सवार हैं। तब उसने समझ लिया कि पाबू में भी कुछ करामात है। वह लौट कर चला आया और तब दोनों मिल कर घोड़े ढूँढ़ने चले। घोड़े ज्यों के त्यों उन लोगों को चरते हुए मिल गए।

जब पाबू वहाँ से लौट कर कोलू पहुँचा तब उमरकोट से सोधू का आदमी फिर उसके पास आया। तब उसने बरात में चलने के लिये जिंदराव, गोगू, बूड़ो और सिरोही के राय आदि सभी सम्बन्धियों को बुलाया। उस समय उसके एक थोरी साथी की सात कन्याओं का विवाह था और वह उसी के प्रबन्ध में लगा था। उसका नाम सादियो था और वही सब से बड़ा था। पाबू ने उसके बदले में उसके छोटे भाई देवियो को अपने साथ ले लिया। बरात चली, पर रास्ते में बुरे बुरे शकुन मिले। इस कारण सब लोग पाबू को छोड़ कर लौट गए, केवल देवियो ही उसके साथ रह गया। पर पाबू उमरकोट पहुँचा और विवाह करके वहाँ से सकुशल लौट आया।

बरात छोड़ कर जिंदराय जब घर लौटने लगा था तब रास्ते में उसने वीरवरी नाम की एक चारणी की कुछ गौएं छीन ली थीं। वह रोती हुई बूड़ो के पास गई, पर बूड़ो ने उसे किसी प्रकार की सहायता देना स्वीकार न किया; उसने बहाना यह किया कि मेरी आँखों में दरद है। वीरवरी तब पाबू के पास गई; उसने उसे वचन दिया कि मैं तेरी गौएं छुड़ा दूँगा। अपने सातो थोरियों तथा सादियो के यहाँ आए हुए बरातियों को साथ ले कर पाबू ने जिंदराय का पीछा किया और जा कर उससे गौएं छुड़ाईं। जब वह उन्हें ले कर कोलू लौटने लगा तब रास्ते में गौओं को बहुत प्यास लगी। वह उन्हें एक कूएं के पास ले गया और अपने हाथ से उनके पीने के लिये पानी खींचने लगा। इसी बीच में वीरवरी की छोटी बहन ने बूड़ो के पास जा कर कहा,—तुम मेरी बहन की गौएं बचाने नहीं गए, इससे तुम्हें क्या मिला? देखो, तुम्हारा छोटा भाई उन्हें छुड़ाने गया और वहाँ वह खीची के हाथों मारा गया। बूड़ो ने इस झूठी बात को सच समझ लिया और वह जिंदराय की तलाश में निकल पड़ा। एक जगह दोनों का सामना हो गया, लड़ाई हुई और बूड़ो मारा गया। अब जिंदराय को बहुत भय हुआ; उसने सोचा कि अब पाबू अपने भाई का बदला लेने आवेगा। इस वास्ते उसने निश्चय किया कि पहले मैं ही चल कर अचानक उस पर टूट पड़ूं। वह कोलू पहुँचा और वहाँ के सरदार को उसने यह कह कर अपनी तरफ मिला लिया कि पाबू तुम्हारी जमीन छीनना चाहता है। उस समय पाबू कूएं पर खड़ा हुआ गौओं के लिये पानी खींच रहा था। इतने में उसे कुछ दूर पर बहुत सी धूल उड़ती हुई दिखाई दी। उस धूल का कारण पूछने पर सोदियो ने कहा कि शायद जिंदराय खीची फिर से लड़ने के लिये आ रहा है। पाबू चटपट घोड़े पर सवार हो कर उसका मार्ग देखने लगा। शत्रु के आ पहुँचने पर पाबू ने बहुत वीरतापूर्वक घोर युद्ध किया। उसी युद्ध में पाबू वीरगति को प्राप्त हुआ। पाबू के मारे जाने पर उसके थोरी साथियों ने जिंदराय को परास्त ही कर के छोड़ा। उसी युद्ध में बूड़ो भी मारा गया था।

पाबू के मरने पर उसकी स्त्री सोधी तथा बूड़ो की स्त्री डोडा दोनों अपने अपने पति के साथ सती हो गईं। बूड़ो की स्त्री ने चिता पर चढ़ते समय अपना पेट काट कर सात महीने का एक बच्चा निकाला था। वह बच्चा एक दाई को देते समय उसने कहा था,—"इस का पालन-पोषण बहुत अच्छी तरह करना क्योंकि यह विलक्षण और अमानुषी शक्ति का आदमी होगा।" वह बालक पेट चीर कर निकाला गया था और उस प्रान्त की भाषा में चीरने या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फाड़ने की क्रिया को "झरड़ो" कहते हैं, इसी लिये उस बालक का नाम भी झरड़ो रखा गया। झरड़ो जब बारह बरस का हुआ तब उसने जिंदराय खीची को मार कर अपने पिता और चाचा का बदला चुकाया। पहले तो वह कुछ समय तक अपने राज्य का शासन करता रहा पर पीछे गुरु गोरखनाथ से उसकी भेंट हो गई; तब से वह अमर और बड़ा भारी सिद्ध हो गया। उस प्रान्त के निवासियों का यही विश्वास है कि वह अब तक जीवित है और इसी संसार में है।

सभापति का व्याख्यान।

[यह व्याख्यान सभा के सभापति श्रीयुक्त, पं० श्यामबिहारी मिश्र एम० ए० का है जो गत ७ अगस्त १९१६ को सभा के वार्षिक अधिवेशन में पढ़ा गया था।]

साल भर के पीछे मैं आप लोगों की सेवा में आज फिर दो चार बातें कहने के लिये उपस्थित हुआ हूँ। तीन वर्ष हुए, मैंने ऐसे ही सुअवसर पर पहलेपहल आप महाशयों का कुछ अमूल्य समय लिया था और सभा का २० वर्ष का अत्यन्त संक्षिप्त हाल आपके सन्मुख कह सुनाया था। उसके पीछे आप महानुभावों के आज्ञानुसार मैं प्रति वर्ष सभा के वार्षिक अधिवेशन के समय उसके साल भर के कार्यों की संक्षिप्त विवेचना और इच्छाओं व आवश्यकताओं का वर्णन करता आता हूँ। मेरी मनोकामना तो यही रहती है कि इन सुअवसरों पर मैं आप महाशयों का कुछ मनोरंजन भी कर सकूँ पर मैं नहीं कह सकता कि इसमें मुझे कुछ भी सफलता होती है या नहीं। मेरा परितोष तो कदापि नहीं होता क्योंकि मैं अपनी त्रुटियों से पूर्णतया अभिज्ञ हूँ तथापि मुझे इस बात की प्रसन्नता अवश्य होती है कि इस सभा के १२०० से अधिक सदस्यों ने, जिन में अनेक नामी और सुप्रसिद्ध विद्वान् सम्मिलित हैं, चार वर्षों से बराबर मुझे यह गौरव दे रखा है कि मैं आप सज्जनों के सन्मुख दो चार बातें सभापति के स्वरूप में निवेदन कर सकता हूँ। इसके लिये मैं आप महानुभावों को हार्दिक धन्यवाद दिए बिना नहीं रह सकता; यद्यपि मैं जानता हूँ कि यदि किसी अच्छे विद्वान् को आप इस उच्च पद के लिये निर्वाचित करते तो अच्छा होता।

मैं अपनी पहली वक्तृता में कह चुका हूँ कि जब से सन् १८९३ ईसवी में इस सभा का जन्म हुआ, बराबर इसके सभासदों की संख्या में कुछ न कुछ बढ़ती ही आती है। विगत वर्ष तक यही दशा रही; पर उस साल इस संख्या में कुछ कमी हो गई थी जिसका कारण मैं परसाल आप लोगों की सेवा में उपस्थित कर चुका हूँ। हर्ष का विषय है कि इस वर्ष हमारे सभासदों की संख्या में फिर बढ़ती हुई है। वर्ष के अन्त में सभा के १२२८ सभासद वर्त्तमान थे और आशा है कि उनकी संख्या और भी बढ़ेगी।

गत वर्ष सभा के कुल मिला कर १९ अधिवेशन हुए जिनमें उपस्थिति का परता १५ रहा जो बुरा नहीं है। कार्यकर्त्ताओं की सूची वार्षिक विवरण में दी हुई है। उनमें से प्रायः सभी ने अच्छा काम किया जिसके लिये मैं सभा की ओर से उन्हें धन्यवाद देता हूँ। पर प्रबंधकारिणी समिति के कतिपय सभ्यों ने उसके अधिवेशनों में सम्मिलित होने की बात तो दूर रही अपनी लिखित सम्मति तक भेजने की बहुधा कृपा न की जो बड़े दुःख की बात है। जो महाशय कोई काम करने की अपनी सम्मति दे चुके हों, उन्हें यों तटस्थ हो बैठना शोभा नहीं देता। यदि काम करने की इच्छा न हो तो उसे स्वीकार करने की ही आवश्यकता नहीं।

हिन्दी ग्रन्थ प्रकाशन का काम इस वर्ष अच्छा रहा। पत्रिका के पिछड़े हुए अंक पूरे हो गए और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष का काम भी प्रायः पूरा हुआ। आशा है कि आगे से यह प्रति मास ठीक समय पर प्रकाशित होती रहेगी। ग्रन्थमाला के चार के ठौर तीन ही अंक निकले पर लेखमाला के निकालने में प्रस की गड़बड़ी से विशेष अड़चन पड़ी। अन्य पुस्तकों में से "शब्द सागर" और 'मनोरंजन पुस्तक माला' का काम बाबू श्यामसुन्दर दास बी० ए० के सुयोग्य प्रबंध में अच्छा चला। शब्दसागर के विषय में अँगरेजी के प्रसिद्ध मासिक पत्र Hindustan Review में एक उत्साह-वर्द्धिनी आलोचना निकली और उसके काम में अनेक सुधार हुए एवं ग्राहकों की संख्या बढ़ कर १०८३ हो गई।

हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों की खोज का काम अनेक कारणों से अभी फिर से जारी नहीं हो सका। हर्ष का विषय है कि हमारी प्रांतीय सरकार ने इस के लिये अब ५००) के बदले १०००) वार्षिक सहायता देना स्वीकार कर लिया है; पर काम के ढंग में कुछ हेर फेर करने की आज्ञा दी है। इस पर विचार हो रहा है और अब नई शैली पर काम चलाया जायगा। तीसरी त्रै-वार्षिक रिपोर्ट लिखी जा रही है।

लिपि-परितोषिक के विषय में यह बात विशेष दृष्टव्य है कि कभी कभी एक ही जिले या स्कूल के विद्यार्थी प्रायः सभी रुपए और प्रशंसापत्र पा लेते हैं जो उचित नहीं प्रतीत होता। इस साल की निम्नलिखित खतौनी कुछ आश्चर्यजनक है:—

नाम स्कूल और जिला	पारितोषिक मिलेः—			प्रशंसापत्र मिलेः—			सब का योग
	मिडिल विभाग	अपर प्राइमरी विभाग	लोअर प्राइमरी विभाग	मिडिल विभाग	अपर प्राइमरी विभाग	लोअर प्राइमरी विभाग	
१. टाउन स्कूल अलमोड़ा	३ में ३	...	...	६ में १	...	...	२४ में ४
२. बैरिया स्कूल बलिया	...	३ में ३	३ में ३	६ में ३	५ में २	४ में २	२४ में १३
३. शेष सब	...	...	...	६ में २	५ में ३	४ में २	२४ में ७

कुल ९ पारितोषिक केवल दो स्कूलोंवाले पा गए और शेष ४६ जिलों के हजारों स्कूलवाले यों ही मुँह ताकते रह गए। उन्हीं दो स्कूलों ने १५ प्रशंसापत्रों में से ८ पाए। क्या यह बात उचित है कि प्रांत भर के दो स्कूल २४ में से १७ परितोषिक और प्रशंसापत्र उड़ा ले जायँ और ४६ जिलों में जो सहस्रों स्कूल हैं उन्हें २४ में से केवल ७ प्रशंसापत्र मात्र मिल सकें? मेरी अनुमति में नियमों में परिवर्तन की आवश्यकता है। एक ही स्कूल को एक पारितोषिक तथा एक प्रशंसा-पत्र से अधिक नहीं मिलना चाहिए।

सभा से कई एक पदक दिए जाते हैं पर उनके लिये बहुत लेख नहीं आते। हिन्दी के सुलेखकों को इस ओर ध्यान देना चाहिए। पुस्तकालय की दशा अच्छी रही। आशा है कि उसकी पूर्ण सूची शीघ्र प्रकाशित हो जायगी।

सभा की आय अभी संतोषजनक नहीं है जो आय व्यय के लेखे से स्पष्ट विदित होगी। जब तक कम से कम १५०००) की निश्चित वार्षिक आय स्थिर न हो जाय तब तक उसका काम सुचारु रूप से नहीं चल सकता। इस समय सभा के १२०० से ऊपर सदस्य हैं पर इनका वार्षिक चन्दा बहुत कम है। मेरी समझ में १२) ८) और ४) वार्षिक चन्दा देने-वाले भिन्न भिन्न अधिकारयुक्त तीन प्रकार के सदस्य होने चाहिए। इस प्रकार कम से कम ६०००) की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्षिक आय चन्दे से हो सकती है। यदि दो लाख रुपए स्थायी कोश में विशेष उद्योग द्वारा इकट्ठे कर लिये जायँ और उन्हें उचित रीति से जमा कर दिया जाय तो उसके सूद की आय ४) सैकड़ा साल के हिसाब से ८०००) वार्षिक हो सकती है। शेष १०००) से अधिक ही अन्य स्रोतों से आ जायँगे। तब आप देखेंगे कि सभा क्या क्या काम कर दिखाती है। इन प्रस्तावों पर मैं सब महाशयों का ध्यान आकर्षित करता हूँ। जिस सभा के अनेक बड़े बड़े नृपतिगण संरक्षक हों और अन्य सैकड़ों भद्र पुरुष सदस्य तथा सहायक हों उनके लिये यह कोई बड़ी बात नहीं है। केवल समुचित उद्योग की आवश्यकता है।

इस वर्ष कागज के अभाव से सामयिकपत्रों तथा पुस्तकों के प्रकाशन में अवश्य बाधाएं पड़ीं पर कुल मिला कर हिन्दी की दशा अच्छी रही। अन्य प्रांतों में भी उसका मान बढ़ता जाता है और उसकी दिनोंदिन उन्नति हो रही है।

—:o:—

चौपाए।*

यदि पृथ्वी के भिन्न भिन्न जीवों की परस्पर तुलना की जाय तो मनुष्यों के उपरान्त दूसरा स्थान चौपायों को ही मिलेगा। मनुष्यों और चौपायों के शरीर की बनावट में समानता, अन्य जीवों की अपेक्षा चौपायों के विशेष सहज-ज्ञान, उनके द्वारा निकलनेवाले मनुष्यों के कार्य्य अथवा उनका चिरस्थायी वैमनस्य देखते हुए मानना पड़ता है कि उनमें अनेक विलक्षणताएँ हैं और वे सृष्टि का एक बहुत मनोरंजक अंग हैं। इस समय तो मनुष्य ने चौपायों को बहुत अच्छी तरह अपने वश में कर लिया है, पर सम्भवतः आरम्भ में वे प्रायः मनुष्य की बराबरी का ही दावा करते थे; पृथ्वी पर रहने के लिये मनुष्य और चौपाए परस्पर लड़ा करते थे। उस समय मनुष्य स्वयं बहुत जंगली दशा में थे और जंगलों को साफ करके बसाने में असमर्थ थे। मनुष्य उस समय नंगे रहते थे। उनके पास हथियार आदि कुछ भी नहीं थे और न उनके पास रहने के लिये रक्षित स्थान ही था; ऐसी अवस्था में जंगली जानवर उनके भयंकर प्रतिद्वन्दी ही थे और वीर मनुष्यों का सब से पहला काम उन्हीं का नाश करना था। पर धीरे धीरे जब मनुष्यों की संख्या बढ़ने लगी और वे नई नई कलाएँ सीखने लगे तब उन्होंने इन शत्रुओं को मार कर बहुत से स्थान साफ कर लिए। बहुत से चौपायों को तो उन्होंने पकड़ कर अपने अधीन कर लिया और बहुतेरों को मार पीट कर जंगलों में भगा दिया।

जो चौपाए पहले मनुष्य के प्रतिद्वन्द्वी थे, वे अब उसके सहायक और सेवक हो गए हैं। वह अब उनसे बहुत कठिन कठिन काम लेता है। चौपाए बहुत ही दीनतापूर्वक उसकी आज्ञाओं का पालन करते हैं और थोड़ा सा प्रतिफल पा कर ही सन्तुष्ट रहते हैं। चौपायों का स्वातंत्र्य-प्रेम नष्ट करने और उन्हें आज्ञाकारी बनाने में मनुष्यों को निरंतर बहुत से कठिन परिश्रम करने पड़े थे क्योंकि जंगली पशुओं की स्वतंत्रता बड़ी कठिनाई से और कई पीढ़ियों में नष्ट होती है। यदि बिलकुल जंगली कुत्तों और बिल्लियों को पकड़ कर पाला जाय तो उनके जो बच्चे पाले जाने के उपरान्त होंगे वे भी बड़े ही भीषण और जंगली होंगे। दूसरी बात यह है कि वह भीषणता चाहे जितनी अधिक रोक या

* प्रसिद्ध अँगरेज लेखक ओलिवर गोल्डस्मिथ के एक निबन्ध के आधार पर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दबा दी जाय पर तो भी वह समय समय पर प्रकट हो ही जाती है। चौपायों को अच्छी तरह पालतू बना कर मनुष्य केवल उनका स्वभाव ही नहीं बदलता बल्कि प्रायः उनका स्वरूप भी बदल देता है। जंगली और पालतू जानवरों में इतना अधिक भेद है कि फ्रान्स के बफन नामक एक प्रसिद्ध विद्वान् ने उनका वर्गीकरण करने में केवल इसी दृष्टि से दो प्रधान विभाग किए हैं।

सरसरी तौर पर चौपायों की बनावट देखने से मालूम होता है कि मनुष्य से उनकी आकृति बहुत कुछ मिलती जुलती होती है। यदि चौपायों को किसी प्रकार अपने पिछले दोनों पैरों पर खड़े हो कर चलना फिरना सिखलाया जा सके तो मनुष्य के साथ उनकी समानता और भी स्पष्ट हो जायगी। उस समय जान पड़ेगा कि उनके प्रायः सभी अंग मनुष्य के अंगों से मिलते जुलते हैं और उनका शरीर मनुष्य के शरीर की एक भद्दी नकल है। बन-मानुस की जाति के कुछ जीवों में तो यह समानता इतनी अधिक हो जाती है कि अच्छे अच्छे प्राणि-शास्त्र-वेत्ताओं को यह जानने में बड़ी ही कठिनता होती है कि मनुष्य के किस अंग में उनकी अपेक्षा कोई विशेषता वा अधिकता है। उस दशा में उन दोनों का अन्तर ढूँढ निकालना बहुत ही कठिन काम है।

यदि चौपायों के शरीर की भीतरी बनावट का मनुष्य के शरीर की भीतरी बनावट के साथ मिलान किया जाय तो दोनों की समानता और भी बढ़ जायगी। हमें अपनी से मिलती जुलती उनमें अनेक ऐसी बातें दिखाई पड़ेंगी जो सृष्टि के निम्न-श्रेणी के दूसरे जीवों में बिलकुल नहीं होतीं। पक्षियों की अपेक्षा उनमें यह विशेषता है कि वे अंडे न दे कर हम लोगों की तरह जीवित बच्चे उत्पन्न करते हैं और मछलियों की अपेक्षा उनमें यह विशेषता है कि वे फेफड़ों से साँस लेते हैं। कीड़ों मकोड़ों की अपेक्षा उनमें यह विशेषता है कि हमारी तरह उनके शरीर की रगों में भी लाल ही रंग का खून दौड़ता है और सृष्टि के अन्य सब जीवों से बढ़ कर उनमें एक बात यह है कि हमारी तरह उनके या तो सब अंग और या कुछ अंग बालों से ढँके होते हैं। कम से कम शारीरिक संगठन को देखते हुए यह मानना पड़ता है कि मनुष्य के बाद दूसरा स्थान चौपायों का ही है। मनुष्य के साथ चौपायों की जो समानता है उसे देखते हुए मनुष्य को अपने लिये शरीर का घमंड करने का बहुत ही कम कारण है।

मनुष्य के साथ एक और बात में भी चौपायों की समानता है। सृष्टि के निम्न-श्रेणी के जीवों में तो भोजन और ऋतु आदि के कारण बहुत कुछ परिवर्त्तन हो जाता है पर मनुष्यों और चौपायों में इस प्रकार बहुत ही कम परिवर्त्तन होता है। भोजन और ऋतु आदि के परिवर्त्तन के कारण पक्षियों का आकार और रंग बहुत जल्दी बदल जाता है। मछलियों पर इस परिवर्त्तन का और भी जल्दी और अधिक प्रभाव पड़ता है। और कीड़े-मकोड़े आदि तो ऋतु-परिवर्त्तन के अनुसार और भी शीघ्र परिवर्त्तित हो जाते हैं। उनसे भी और नीचे उतर कर पेड़ों और पौधों को लीजिए जिनके जीवधारी होने में किसी प्रकार का सन्देह नहीं किया जा सकता। उनका रूप और आकार आदि परिवर्त्तित करने में तो और भी कम कठिनता होती है। प्रत्येक जीव की आकृति को एक प्रकार का वस्त्र या आच्छादन मान सकते हैं जिसमें मनुष्य की संगति के कारण बहुत कुछ परिवर्त्तन हो सकता है। स्वयं मनुष्य की आकृति में होनेवाला परिवर्त्तन नहीं के समान है, चौपायों में यह परिवर्त्तन कुछ कुछ हो जाता है और ज्यों ज्यों निम्न-श्रेणी के जीवों तक उतरते जाइए त्यों त्यों यह परिवर्त्तन और भी सहज तथा बढ़ता हुआ दिखाई देगा।

यद्यपि चौपायों में इस प्रकार की अनेक विशेष-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताएँ हैं तो भी उनमें से कुछ की प्रकृति इतनी विलक्षण है कि उनके विषय में सहज में यह निश्चय ही नहीं किया जा सकता कि उन्हें चौपायों में रखा जाय या उनसे नीचे की श्रेणी में स्थान दिया जाय। यदि भिन्न भिन्न जीवधारियों को मनुष्य के आस पास इस प्रकार बैठाया जाय कि जो जीव उससे बहुत अधिक मिलता जुलता हो वह उसके बहुत पास रहे और उसके बाद वह जीव रहे जो उस पहले जीव से बहुत मिलता जुलता हो तो मुख्य मुख्य जीवों के बैठाए जा चुकने पर बहुत से ऐसे जीव बच रहेंगे जिन्हें उपयुक्त स्थान पर बैठाना बहुत कठिन हो जायगा। चमगादड़ उड़नेवाले जानवरों से बहुत कुछ मिलता जुलता होता है और सम्भव है कि कुछ लोग उसे पक्षी ही समझें। साही के सारे शरीर पर काँटे होते हैं; और ये काँटे बिलकुल उसी श्रेणी के हैं जिस श्रेणी के काँटे पक्षियों के शरीर पर उनकी रक्षा के लिये होते हैं; और इस दृष्टि से साही को भी पक्षियों के अन्तर्गत ही समझना चाहिए। अनेक प्रकार के दरियाई जानवर ऐसे होते हैं—जैसे, सील, दरियाई घोड़े, जल-सिंह आदि—जो हैं तो पशु, पर रहते जल में हैं। ये सब पशु आकृति में मनुष्य से जितने ही भिन्न होते जायँगे, वे उससे उतनी ही दूर बैठाए भी जायँगे।

यद्यपि चौपायों में इस प्रकार की बहुत सी विलक्षणताएँ और उनके भेद हैं तो भी वे मनुष्य के बहुत ही समीप बैठाए जाने के लिये बहुत ही उपयुक्त हैं। कठिनता से कोई ऐसा चौपाया मिलेगा जिसकी आकृति चाहे कितनी ही भद्दी क्यों न हो, पर जो अपनी प्रकृति के अनुसार सुख और आनन्द-पूर्वक रहने के योग्य न बनाया गया हो। मनुष्य के मुकाबले में उसकी आकृति चाहे कितनी ही परिवर्त्तित क्यों न हो पर उसकी सारी बातें उसके लिये निज की, विशिष्ट और सुखदायक होती हैं। एक जानवर होता है जिसे अँगरेजी में स्लाथ (Sloth) कहते हैं। सुस्ती में इससे बढ़ कर संसार में और कोई जीव नहीं होता। इसे एक पेड़ पर चढ़ने में महीनों लग जाते हैं! एक और जानवर होता है जिसे अँगरेजी में मोल कहते हैं; इसकी आँखें अपेक्षाकृत बहुत ही छोटी होती हैं। इन जानवरों को मनुष्य भले ही तुच्छ और निकृष्ट समझ ले पर इसमें सन्देह नहीं कि वे अपनी उसी दशा में बहुत सुख मानते होंगे। मान लिया जाय कि किसी एक विषय में वे आनन्द लेने में समर्थ न हों, पर दूसरे कई विषयों में उन्हें अवश्य ही विशेष आनन्द मिलता होगा। पशुओं तथा निम्न-श्रेणी के सभी दूसरे जीवों पर आपत्तियाँ आती हैं; पर वह आपत्तियाँ किसी दुर्घटनावश या अचानक आती हैं और उन्हें दुखी करती हैं। पर मनुष्य को दुखी करने के लिये आई हुई आपत्तियों के अतिरिक्त एक और साधन होता है। और वह साधन आनेवाली अपत्तियों का पहले से होनेवाला अनुमान है। तात्पर्य्य यह कि प्रत्येक जीव के सुख और दुःख आदि अपनी अपनी अवस्था के अनुकूल और उपयुक्त ही होते हैं और उसके कारण किसी जीव को तुच्छ या निकृष्ट न समझना चाहिए।

यद्यपि चौपायों के सिर की बनावट एक दूसरे से भिन्न हुआ करती है तथापि वह उनकी अवस्था और जीवन-निर्वाह के लिये बहुत ही उपयुक्त होती है। कुछ जानवरों का सिर आगे की ओर नुकीला होता है और जमीन में से खोद कर भोजन निकालने में उन्हें सहायता देता है। कुत्ते आदि का सिर लंबा होता है क्योंकि उन्हें सूँघ कर अपने शिकार का पीछा करना पड़ता है और प्रबल घ्राणेन्द्रिय के लिये सिर के लंबे होने की आवश्यकता होती है। शेर आदि जानवरों को अपने जबड़े और मुँह से ही अधिक काम लेना पड़ता है और इन अंगों की पुष्टि के लिये उनका सिर छोटा और भारी होता है। जो चौपाए घास खानेवाले होते हैं उनकी गरदन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसलिये लंबी होती है जिसमें उनका मुँह जमीन तक पहुँच सके। इसी लिये यदि वे घन्टों जमीन के साथ मुँह लगाए रहें तो भी उन्हें किसी प्रकार का कष्ट नहीं होता और जब चाहें तब वे सहज में ही अपना सिर ऊपर भी उठा सकते हैं।

सब जानवरों के दाँत भी उनके भोजन के लिये बहुत ही उपयुक्त होते हैं। शाकाहारी जीवों के दाँतों की अपेक्षा मांसाहारी जीवों के दाँत बिलकुल भिन्न होते हैं। शाकाहारी पशुओं के अगले दाँत तो धारदार होते हैं जो भोजन के काटने में सहायता देते हैं और पिछले दाँत चौड़े होते हैं जिनसे वे अपना भोजन चबाते हैं। पर मांसाहारी जीवों के दाँत नुकीले होते हैं और किसी चीज को काटने की अपेक्षा पकड़ रखने के लिये अधिक उपयुक्त होते हैं। शाकाहारी जीवों के दाँत चीजों को केवल पीसने के लिये ही उपयुक्त होते हैं पर मांसाहारी जीवों के दाँत रक्षा करने के साधन होते हैं। पर दोनों प्रकार के जीवों में, भोजन को चबाने या पीसनेवाले दाँतों की सतह बराबर नहीं होती; वे इस प्रकार ऊँचे नीचे बने होते हैं कि जब दोनों जबड़े बन्द हों तो ऊपरवाले दाँत नीचेवाले दाँतों पर ठीक बैठ जायँ। दाँतों में यह भेद केवल भोजन के काम के लिये ही होता है; पर जीव की अवस्था अधिक हो जाने पर उनकी सतह घिस कर प्रायः बराबर हो जाती है और यही कारण है कि बुड्ढे जीवों को अपना भोजन चबाने में अपेक्षाकृत अधिक समय लगता है।

दाँतों की तरह जानवरों के पैर भी उनकी आवश्यकताओं आदि के अनुकूल ही होते हैं। जिन जानवरों का शरीर बहुत भारी होता है उनके पैर केवल खूब दृढ़ होते हैं; उनमें लचीलापन या आपेक्षिक सौन्दर्य्य नहीं होता। गैंड़े और हाथी के पैर बिलकुल खम्भे के से होते हैं। यदि वे छोटे या पतले होते तो उतना भारी शरीर न सँभाल सकते। उनके अधिक लचीले और तेज या फुरतीले होने की आवश्यकता नहीं क्योंकि उन्हें भोजन-प्राप्ति के लिये किसी जानवर का पीछा नहीं करना पड़ता। स्वयं उनका शरीर बहुत भारी और बलिष्ठ होता है, इसलिये उन्हें भी किसी से डर कर भागने की आवश्यकता नहीं होती। हिरनों और खरगोशों आदि की टाँगे बहुत पतली और लचीली होती हैं और उनके बहुत तेज दौड़ने में सहायक होती हैं; क्योंकि उनकी रक्षा केवल भागने से ही होती है। अगर उनकी टाँगों में यह विशेषता न होती तो सभी शिकारी जानवर चटपट उन्हें पकड़ कर खा जाते और तब उनकी जाति का ही नाश हो जाता। पर सृष्टि ने जैसी योजना कर रखी है उसके अनुसार आक्रमण करने के साधनों की अपेक्षा रक्षण के साधन ही अधिक और उत्तम हैं; और आक्रमण करनेवाले पशुओं को अपना मनोरथ सफल करने के लिये बहुत अधिक धैर्य्य, अध्यवसाय और परिश्रम की आवश्यकता होती है। जिनके जीवन का निर्वाह केवल मछलियों पर होता है उनके पैर तैरने के लिये ही अधिक उपयुक्त होते हैं। बत्तखों आदि की तरह ऐसे जानवरों के पैर भी जालीदार होते हैं जिनकी सहायता से वे बहुत तेजी से तैर सकते हैं। जिन चौपायों का वैर-विरोध अधिक जीवों के साथ होता है और जो दूसरों को खा कर ही अपना पेट भरते हैं उनके हाथों-पैरों में छोटे और तेज पंजे या चंगुल होते हैं। उनमें से कुछ जानवर ऐसे भी होते हैं जो अपने सुभीते या इच्छा के अनुसार समय समय पर उन्हें बाहर निकाल और भीतर सिकोड़ सकते हैं। पर इसके विपरीत, जिन चौपायों का जीवन शान्तिपूर्वक व्यतीत होता है उनके पैर बहुधा खुरदार होते हैं और कुछ जीवों में वे उनकी रक्षा के साधन होते हैं। जो जानवर आक्रमण करनेवाले होते हैं और जिनके पैर पंजेदार होते हैं उन्हें बड़े बड़े मैदानों और जंगलों को चल कर तै करने में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत कठिनता होती है; पर जो जानवर केवल अपनी रक्षा करना जानते हैं वे अपने खुरदार पैरों की सहायता से बहुत बड़े बड़े मैदान सहज में पार कर लेते हैं।

प्रत्येक पशु के भोजन के अनुसार उसका पेट भी छोटा, मझोला या बड़ा हुआ करता है; इसके अतिरिक्त पेट का आकार भोजन-प्राप्ति के सुभीते के अनुसार भी हुआ करता है। मछली आदि खानेवाले जानवरों का पेट छोटा होता है और उसमें ऐसे ही रस अधिकता से उत्पन्न होते हैं जो उन पदार्थों को अच्छी तरह पचा सकें। उनकी आँतें भी छोटी और पतली होती हैं। पर जो पशु केवल शाक पर ही अपना जीवन निर्वाह करते हैं उनका पेट बहुत बड़ा होता है। ठंढे देशों में पागुर करनेवाले जानवरों के चार पेट होते हैं; उन सब पेटों में पक और सिझ कर तब उनका भोजन पचने के योग्य होता है। पर गरम देशों में, जहाँ के पौधे अधिक बल-वर्द्धक होते हैं, ऐसे जानवरों के चार के बदले केवल दो ही पेट होते हैं। जिस जानवर का जैसा भोजन होता है उसकी आँतें भी उसी के अनुसार छोटी या बड़ी होती हैं। जो जानवर अधिक मात्रा में भोजन करते हैं उनका पेट भी बहुत बड़ा होता है। एक ही जाति के जंगली और पालतू दो जानवर लीजिए। पालतू जानवरों को भोजन अधिक मिलता है, इसलिये उनका पेट भी बड़ा होता है। जंगली जानवरों को भोजन कम और कठिनता से मिलता है, इससे उनके पेट भी छोटे होते हैं और आँतें भी छोटी होती हैं।

इस प्रकार प्रकृति ने सब जीवों को उनकी अवस्था के लिये उपयुक्त और अनुकूल ही बनाया है। बहुत बड़े बड़े जानवर कभी किसी पर आक्रमण नहीं करते और वे बिना किसी दूसरे जानवर को कष्ट पहुँचाए बहुत बड़े बड़े मैदान और जंगल पार कर जाते हैं। जमीन में जो कुछ घास और पौधे आदि उगते हैं उन्हीं से वे अपना पेट भर लेते हैं। वे अपने बल के कारण ही अपनी रक्षा भी कर लेते हैं। न तो वे किसी दूसरे जानवर पर आक्रमण करते हैं और न उससे डर कर भागते हैं। प्रकृति ने जहाँ उन्हें बहुत बलिष्ठ बनाया है वहाँ उन्हें बहुत ही सुशील और सीधा सादा भी बनाया है। नहीं तो उन बड़े बड़े जीवों से सृष्टि का न जाने कितना अपकार होता। यदि चीते या चूहे की तरह हाथी, गैंडे, या भैंसे भी उपद्रवी और भयंकर होते तो वे संसार का कितना अनिष्ट और हानि करते। ऐसे बड़े बड़े जानवरों के मुकाबले के लिये प्रकृति ने कुछ मांसाहारी जीव भी उत्पन्न कर दिए हैं जो यद्यपि बल में तो उनसे बहुत कम हैं पर चपलता और धूर्त्तता में उनसे बहुत बढ़े चढ़े हैं। शेर और चीते आदि प्रायः बड़े बड़े जानवरों पर ही आक्रमण करते हैं। वे अपने शिकार पर अचानक धोखे में जा टूटते हैं और स्वयं भी कभी कभी धोखा खाते हैं। कुत्ते के सिवा और शायद ही कोई ऐसा मांसाहारी पशु निकलेगा जो जान बूझ कर पहले आक्रमण करता हो पर हानि न उठाता हो। ऐसे जानवर प्रायः स्वभाव से ही डरपोक होते हैं और घात में से निकल कर अपने शिकार पर जा टूटते हैं; सामने से आ कर आक्रमण करने का साहस उनमें बहुत ही कम होता है। इसका कारण यह है कि जो जानवर उनसे बड़े होते हैं वे तो उनसे अधिक बलिष्ठ होते हैं और जो उनसे छोटे हैं वे बहुत अधिक तेज और फुरतीले होते हैं और सहज में उनके सामने से भाग सकते हैं।

शेर कभी जल्दी घोड़े पर आक्रमण नहीं करता। हाँ, जब कभी वह बहुत अधिक भूखा होता है तब उसे लाचार हो कर उस पर आक्रमण करना पड़ता है। इटली में शेर और घोड़े की लड़ाई प्रायः देखने में आती है। वहाँ इन दोनों जानवरों को एक अखाड़े

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में छोड़ देते हैं *। शेर बराबर इधर उधर घूमता रहता है और घोड़ा उस पर दुलत्तियाँ झाड़ने की ताक में लगा रहता है। शेर बराबर उसके चारों तरफ चक्कर लगाता रहता है और क्रमशः अपना चक्कर छोटा करता जाता है। अंत में वह ऐसे स्थान पर पहुँच जाता है जहाँ से वह अच्छी तरह घोड़े पर झपट सकता हो। ज्यों ही घोड़े पर शेर आक्रमण करता है त्योंही घोड़ा उस पर दुलत्तियाँ झाड़ता है जिससे शेर पीछे हट जाता है। प्रायः यही होता है कि घोड़े को तो कम चोट आती है और शेर दुलत्तियाँ खा खा कर बेदम हो जाता है। जब शेर बेदम हो कर गिर पड़ता है तब उसे और अधिक परास्त करने के लिये घोड़ा नहीं ठहरता बल्कि तुरन्त वहाँ से चल देता है। पर यदि संयोगवश कभी शेर जीत गया तो फिर वह घोड़े का पीछा नहीं छोड़ता और बहुत जल्दी उसकी बोटी बोटी काट डालता है।

केवल बड़े बड़े जंगली जानवरों में ही वैमनस्य नहीं चलता; बहुत ही छोटे छोटे चौपायों में भी परस्पर वैर-विरोध चलता है और वे अपना काम निकालने के लिये और भी अधिक धूर्त्तता से काम लेते हैं। तेन्दुआ प्रायः भेड़ों और बकरियों का शिकार करता है और गिलहरियों तथा चूहों पर बिल्लियाँ झपटती हैं। जिस मांसाहारी जानवर में बल जितना ही कम होता है उसे उतने ही अधिक धैर्य्य, अध्यवसाय और धूर्त्तता की आवश्यकता होती है। पर तौ भी शिकार करनेवाले जानवरों को उतने छल-बल नहीं आते जितने शिकार बननेवाले जानवरों को आते हैं। इस प्रकार शिकार करनेवालों का बल तो कम रह जाता है और शिकार बननेवाले जानवरों का पक्ष कुछ प्रबल हो जाता है। यदि यह बात न होती तो जंगल में छोटे और दुर्बल जानवर नाम को भी दिखाई न देते; और बड़े बड़े शिकारी जानवर पहले तो छोटे छोटे जानवरों का नाश कर डालते और तब पीछे उन्हें पेट भरने के भी लाले पड़ जाते।

दिन के समय शिकार करनेवाले जंगली जानवर बहुत ही कम हैं क्योंकि उस समय एक तो उन्हें आस-पास की बस्तियों के आदमियों का डर रहता है और दूसरे उस समय तेज धूप और गरमी होती है। अधिकांश ऐसे जानवर रात के समय ही शिकार के लिये निकलते हैं और सवेरा होते ही अपनी माँद में चले जाते हैं। उनके मांद में चले जाने पर हाथी, घोड़े, हिरने और खरगोश आदि की जाति के जीव बाहर निकलते हैं। पर सन्ध्या होते ही फिर उनके आक्रमणकारी और शत्रु जीव निकल आते हैं और उस समय सारे जंगल में तरह तरह की गुर्राहटें मच जाती हैं। अफ्रीका के जंगलों का दृश्य सन्ध्या के समय जैसा भयानक होता है वैसा भयानक दृश्य कदाचित् ही और किसी स्थान का होता होगा। उस समय वहाँ कहीं शेरों की गरज सुन पड़ती है, कहीं चीतों की गुर्राहट और कहीं गीदड़ों की चिल्लाहट। इन सब से बढ़ कर भीषण वहाँ साँपों की फुफुकार सुनाई पड़ती है। कुछ लोगों का कथन है कि वहाँ के साँपों की यह फुफुकार अन्य देशों की चिड़ियों की चहचहाहट से कम नहीं होती।

शिकारी जानवर आपस में एक दूसरे को बहुत ही कम खाते हैं। जब उन्हें बहुत अधिक भूख लगती है और कोई चीज खाने को नहीं मिलती तभी वे ऐसा करते हैं। वे बहुधा हिरन और बकरे आदि सीधे सादे जानवरों को ही ढूँढते हैं जिनसे सृष्टि की शोभा है। प्रायः सभी शिकारी जानवरों को उनका मांस बहुत अच्छा लगता है और इसी लिये

* लखनऊ के नवाब गाजीउद्दीन हैदर के यहाँ भी कई बार एक चीते और एक घोड़े की लड़ाई हुई थी जिसमें सदा घोड़ा ही जीतता था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे या तो उनका पीछा करते हैं और या उन पर अचानक टूट पड़ते हैं। प्रायः बड़े बड़े शिकारी जानवर उन स्थानों में इधर उधर छिपे हुए बैठे रहते हैं जहाँ उनका शिकार पानी पीने आता है; और उसके आते ही झपट कर उसे पकड़ लेते हैं। शेर और चीते प्रायः बीस फुट तक की छलांग भर सकते हैं और अपने शिकार को धर दबाने में उन्हें अपनी फुरती या ताकत से बढ़ कर इसी बात से सहायता मिलती है। हिरन या खरगोश आदि की जाति का कदाचित् ही कोई जानवर ऐसा मिलेगा जो बड़े से बड़े शिकारी जानवर से अपने तेज दौड़ने के कारण न बच सकता हो। इसलिये या तो वे किसी औचट में ही पड़ कर शिकार बनते हैं और या जान बूझ कर।

लेकिन कुछ शिकारी जानवर ऐसे भी होते हैं जो सूँघ कर अपने शिकार तक पहुँचते हैं। इनसे बचना बहुत ही कठिन होता है। पहली बात तो ध्यान रखने योग्य यह है कि ऐसे सभी जानवर झुण्ड में रह कर शिकार करते हैं और जोर जोर से भौंक या गुर्रा कर अपने साथियों को उत्तेजित करते रहते हैं। गीदड़, भेड़िए और कुत्ते इसी श्रेणी के हैं। ये सब उतनी तेजी से तो पीछा नहीं करते पर हाँ उनमें धैर्य्य बहुत अधिक होता है। पहले तो उनका शिकार बहुत तेजी से भागता है और उन्हें मीलों पीछे छोड़ जाता है। पर ये जानवर बराबर उसके पीछे पीछे दौड़ते चलते हैं और बराबर चिल्ला चिल्ला कर अपने साथियों का हौसला बढ़ाते रहते हैं; यहाँ तक कि अन्त में वे अपने शिकार तक पहुँच जाते हैं। प्रायः ऐसा भी होता है कि बड़े बड़े शिकारी जानवर उनकी चिल्लाहट सुन कर उनके झुण्ड के पीछे हो लेते हैं और जब वे आगे पहुँच कर शिकार कर चुकते हैं तब उनका भी पीछा करनेवाला बड़ा शिकारी जानवर वहाँ पहुँच जाता है और उन्हें भगा कर मारे हुए शिकार पर अपना अधिकार कर लेता है। इसी से लोग कहा करते हैं कि शेर प्रायः गीदड़ों की बदौलत ही जीते हैं। पहले तो गीदड़ जा कर शिकार करते हैं और तब ऊपर से शेर पहुँच कर उन्हें मार भगाता और शिकार ले लेता है।

अनेक शक्तियों के रहते हुए भी शिकारी जानवरों को प्रायः भूखे ही रहना पड़ता है और वे प्रायः दुर्बल और शिथिल ही होते हैं। उनके शिकार भागने की इतनी तरकीबें जानते हैं कि उन्हें पन्द्रह पन्द्रह दिनों तक भूखे ही रहना पड़ता है। लेकिन प्रकृति ने उन्हें जैसी विलक्षण स्थिति में रखा है वैसा ही विलक्षण धैर्य्य भी उन्हें दिया है। शिकार उन्हें जितनी कठिनता से मिलता है, उनकी भूख भी उन्हें प्रायः उतना ही कम तंग करती है। ऐसे जानवर अपने शिकार पर गरजते हुए टूटते हैं; उनकी वह गरज या तो अपनी प्रसन्नता के कारण होती है और या अपने शिकार को डराने के लिये। वे अपने शिकार के सब अंग बहुत जल्दी जल्दी खा लेते हैं और तब अपनी माँद में आ कर पड़ रहते हैं। माँद से वे फिर उस समय तक नहीं निकलते जब तक भूख उन्हें फिर न सतावे। पर शिकार करने के लिये वे जितने उद्योग करते हैं, उनमें से अधिकांश शिकार के भाग जाने के कारण निष्फल हो जाते हैं; इसलिये कई कई दिनों तक और कभी कभी सप्ताहों तक उन्हें भूखे ही रहना पड़ता है। उनके शिकारों में से कुछ तो बिलों में जा छिपते हैं और कुछ भाग कर निकल जाते हैं। पर जो जानवर इन दोनों में से किसी एक प्रकार से भी अपनी रक्षा नहीं कर सकते वे झुण्ड बाँध कर शिकारी जानवर का मुकाबला करते हैं। भेड़ को लोग बहुत सीधी और बेचारी समझते हैं, पर वह वास्तव में वैसी नहीं होती। एक तो वे अपने सींगों से अपनी रक्षा कर सकती हैं और दूसरे वे भाग भी बहुत तेजी से सकती हैं। उनमें एक विलक्षणता यह भी होती है कि प्रबल शत्रु से अपनी रक्षा करने के लिये वे मिल कर एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी हो जाती हैं। मादा भेड़ें तो बीच में हो जाती हैं और नर-भेड़ें उनके चारों ओर घेरा बाँध कर खड़ी हो जाती हैं और आक्रमणकारी पशु को सींगों से मारती हैं*। कुछ जानवर ऐसे होते हैं जो केवल किसी विशेष ऋतु में होनेवाले फल आदि ही खाते हैं। ये जिन बिलों में रहते हैं, जाड़े के दिनों में जब कि उन्हें वांच्छित खाद्य पदार्थ नहीं मिलता और सरदी बहुत पड़ती है, उनका ऊपरी भाग ऐसे पौधों आदि से भर कर ढँक देते हैं जिनके कारण कोई उन तक पहुँच ही नहीं सकता। बिल बनाने में भी वे जानवर बड़ी कारीगरी करते हैं। उसमें प्रायः दो रास्ते होते हैं; और जब शत्रु आ पहुँचता है तब वे जानवर दूसरे छोटे और गुप्त रास्ते से निकल भागते हैं। बहुत से जानवर ऐसे भी होते हैं जो अपनी रक्षा के लिये अपने में से चुन कर बारी बारी से कुछ जानवरों को पहरे पर भी नियुक्त कर देते हैं। जब शत्रु आता है तब वे पहरेदार बिल के भीतर-वाले जानवरों को सूचना दे देते हैं; और तब सब भाग जाते हैं। जो जानवर पहरेदारी का काम अच्छी तरह नहीं करते उन्हें यथेष्ट दण्ड भी दिया जाता है। छोटे छोटे चौपाए अपनी रक्षा के लिये इसी प्रकार के और भी अनेक उपाय करते हैं और बहुधा उन्हें सफलता भी प्राप्त होती है। हाँ, मनुष्य ही एक ऐसा जीव है जिसके सामने उनकी कोई चालाकी नहीं लगती। जहाँ जहाँ मनुष्य के चरण पहुँचते हैं वहाँ वहाँ भाग या छिप कर अपने प्राण बचाना उनके लिये बहुत ही कठिन हो जाता है। जहाँ वह पहुँचता है वहीं सब भयभीत हो जाते हैं और उनका सारा प्रबन्ध व्यर्थ हो जाता है। न तो उसके सामने उनकी कोई चालाकी लगती है और न उनकी एकता ही उनकी रक्षा कर सकती है। मनुष्य को छोड़ कर अन्य पशुओं के साथ तो वे बराबरी का दावा रख कर लड़ भिड़ भी सकते हैं; बलिष्ठ शत्रु को धोखा भी दे सकते हैं और उनके सामने से भाग भी सकते हैं; आवश्यकता पड़ने पर मुकाबले के लिये वे अपनी संख्या भी बढ़ा सकते हैं; पर मनुष्य के सामने उनकी एक नहीं चलती। वे जहाँ जा कर छिपते हैं, वहीं से वह उन्हें ढूँढ़ निकालता है—वे अपनी रक्षा के जितने उपाय करते हैं उन सब को वह नष्ट कर देता है। मनुष्य जिन जीवों की रक्षा करना चाहता है उन्हें तो वह बचा कर अपने अधीन कर लेता है और जिनका वह नाश करना चाहता है वे उसका सामना करने में असमर्थ होते हैं और अन्त में मारे जाते हैं। ऐसे जानवरों की संख्या बराबर दिन पर दिन घटती ही जा रही है।

जंगली जानवरों में थोड़े बहुत परिवर्त्तन भी होते हैं। बिलकुल जंगली दशा में तो मुद्दतों तक उनके रंग और आकार आदि में कोई परिवर्त्तन नहीं होता; पर जब मनुष्य उन्हें अपने अधिकार में ला कर पालने लगता है तब प्रायः उनके ऊपरी अंग और कभी कभी भीतरी अंग भी, मनुष्य के साथ रहने के कारण, आकार आदि में बहुत कुछ परिवर्त्तित हो जाते हैं। एक ही जाति के जंगली और पालतू जानवरों में जो अनेक अन्तर दिखाई पड़ते हैं उनका मुख्य कारण यही है। मनुष्य ने जानवरों को पाल पोस कर उनकी प्रकृति में भी बहुत कुछ परिवर्त्तन कर डाला है। पालतू जानवर, सच पूछिए तो आदमी का गुलाम होता है; मनुष्य की आज्ञा का पालन करने के अतिरिक्त और अभिलाषाएं उसमें बहुत ही कम होती हैं। उसे जो कुछ थोड़ा बहुत मिल जाता है, वही वह खा लेता है और धैर्य्य, सहनशीलता तथा मनोयोगपूर्वक मनुष्य की आज्ञाओं का पालन और परिश्रम करता रहता है।

*भारतीय जङ्गलों में गौएं भी अपने बछड़ों को बीच में रख कर और घेरा बाँध कर शेरों और चीतों का मुकाबला करती हैं।

प० सम्पादक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रायः पालतू जानवरों में दासता के अनेक लक्षण स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ते हैं। आपको बहुत से पालतू जानवर तरह तरह के रंगों के दिखाई देंगे और उनके बाल खूब चमकीले, बढ़िया और लंबे मिलेंगे। सम्भवतः बहुत दिनों तक मनुष्य की दासता में रहने के कारण ही उनमें ये बातें उत्पन्न हुई हैं। साधारण कुत्तों और घोड़ों को ही लीजिए; उनमें आपको बहुत अधिक अन्तर्भेद मिलेंगे। उनके पालनेवाले उनसे जितना परिश्रम लेते हैं, उन्हें जिस प्रकार का भोजन देते हैं, उनके साथ जैसा व्यवहार करते हैं और उन्हें जैसे जल-वायु में रखते हैं, उनमें वैसे वैसे परिवर्त्तन भी होते जाते हैं। जान पड़ता है कि प्रकृति मानो अपना प्राकृत स्वरूप ही भूल गई है। पालतू जानवरों में और उनके पूर्वजों तथा जंगली भाइयों में अब तो कोई समानता ही नहीं रह गई।

इस प्रकार पालतू जानवरों में प्रकृति के साथ बल-प्रयोग होता है—उसे जबरदस्ती बदलने या बिगाड़ने की कोशिश होती है। पर जंगली जानवरों का वास्तविक और पूर्व रूप अभी तक ज्यों का त्यों बना हुआ है। सभी जंगली जानवरों का रंग प्रायः एक सा, कुछ मटमैला या भूरा होता है। पर एक ही जाति के पालतू जानवर अनेक रंगों के होते हैं और उनकी आकृति आदि में भी बहुत अंतर होता है। वास्तव में जल-वायु का प्रभाव सब पर पड़ता है; पर इन पशुओं पर और भी विशेष रूप से पड़ता है। मनुष्य उन्हें जो भोजन देता है वह बहुधा उनकी प्रकृति के अनुकूल नहीं होता; उसमें मनुष्य केवल अपने सुभीते का ही ध्यान रखता है। जल-वायु का उन पर पूरा पूरा प्रभाव नहीं पड़ने पाता; प्रायः मनुष्य उन्हें सरदी, गरमी और वर्षा आदि से बचाता है। उनसे तरह तरह के और अधिक परिश्रम के काम लिए जाते हैं। इन्हीं सब कारणों से पालतू जानवरों में अनेक ऐसी विशेषताएं उत्पन्न हो जाती हैं जो जंगली जानवरों में बिलकुल नहीं होतीं। पहले तो ये विशेषताएं आकस्मिक हुआ करती थीं पर समय पा कर पुरुषानुक्रमिक हो गईं। अब तो मनुष्य अपने सुभीते और इच्छा के अनुसार नए नए उपायों से अनेक संकर और नई जातियों के पशु भी उत्पन्न करने लग गया है; ऐसी अवस्था में उसे प्रकृति के नियमों के पालन का ध्यान ही नहीं रह सकता। जिस प्रकार पशुओं में और अनेक परिवर्त्तन हुए हैं, उसी प्रकार उनके भोजन में भी परिवर्त्तन किया जा सकता है; अर्थात् केवल शाकाहारी पशुओं को मांसाहारी भी बनाया जा सकता है। मैंने एक ऐसी भेड़ देखी थी जो मांस भी खा सकती थी और एक ऐसा घोड़ा भी देखा था जिसे एक विशेष प्रकार की मछलियाँ बहुत अच्छी लगती थीं।

(शेष आगे।)

—:o:—

प्रेमभवन पुस्तकालय।

इस पुस्तकालय का प्रथम वार्षिकोत्सव गत रविवार मिती श्रावण कृष्ण ३० तदनुसार ता० ३० जुलाई १९१६ को सन्ध्या समय ४॥ बजे मुट्ठीगञ्ज-रानी फूलपुर की धर्मशाला में श्रीमान् रायबहादुर बा० श्रीशचन्द्र बसु बी० ए०, एल एल० बी०, रिटायर्ड जज के सभापतित्व में सफलतापूर्वक हो गया। निम्नलिखित सज्जन उपस्थित थे,—बा० ननेन्द्रनाथ बसु बी० ए०, एल एल० बी० पं० चन्द्रशेखर शास्त्री, बा० सरकारबहादुर जौहरी बी० ए०, एल एल० बी०, मा० बांकेबिहारीलाल अग्रवाल एम० ए० एल एल० बी०, बा० सङ्गमलाल अग्रवाल एम० ए०, प्रो० लक्ष्मणदास, बा० देवीप्रसाद बी० ए०, एल एल० बी० पं० रामजीलाल शर्म्मा, पं० इन्द्रनारायण द्विवेदी, पं० ब्रजना-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रायण पं० रामकृष्ण सारस्वत, बा० गणेशप्रसाद बी० ए०, बा० जगन्नाथ गुप्त, बा० काशीनाथ गुप्त, इत्यादि।

बा० सङ्गमलाल अग्रवाल एम० ए० के प्रस्ताव तथा पं० इन्द्रनारायण द्विवेदी के अनुमोदन पर रायबहादुर बा० श्रीशचन्द्र वसु ने सभापति का आसन ग्रहण किया।

आरम्भ में 'सोसाइटी आफ़ यूनियन एन्ड प्रोग्रेस' बहादुरगञ्ज (Society of Union and Progress Bahadurganj) के कुछ विद्यार्थियों ने एक प्रार्थना का गान किया। तदनन्तर पुस्तकालय के सहायक मंत्री पं० वैद्यनाथ मिश्र ने वार्षिक विवरण पढ़ा और यह भी बतलाया कि वर्ष भर की आय १०५≡)॥। और व्यय ९३॥।≡)॥। हुआ। वर्ष के अन्त में शेष ११।) रहा। पुस्तकों की संख्या लगभग ४१७ और पत्रों की संख्या लगभग ४० थी। पुस्तकों तथा पत्रों के दानकर्त्ताओं को धन्यवाद दिया गया और पुस्तकालय के मुख्य जन्मदाता श्रीमान् मास्टर चतुर्भुज सहायसिंह जी की असामयिक मृत्यु पर शोक प्रकट किया गया।

रिपोर्ट के पश्चात् पं० व्रजनारायण जी का शिक्षा पर एक व्याख्यान हुआ। तत्पश्चात् पुस्तकाध्यक्ष पं० जगन्नाथ मिश्र ने रमेशकवि कृत प्रेम-परीक्षा शीर्षक एक सुललित कविता पढ़ी।

तदनन्तर पं० रामजीलाल शर्म्मा का व्याख्यान आरम्भ हुआ। उन्होंने अपनी मधुर और ओजस्वी भाषा में 'हिन्दी के प्रचार पर एक सारगर्भित वक्तृता दी। फिर एक लेख पढ़ा गया।

अन्त में सभापति महोदय ने अपनी वक्तृता आरंभ की। उन्होंने अपने उच्च भाव प्रकट करते हुए दर्शाया कि भारतवर्ष के समस्त हिन्दू, मुसलमान तथा ईसाई हिन्दू हैं तथा भारतवर्ष में जो भाँति भाँति की भाषाएं बोली जाती हैं वे सब हिन्दी हैं। व्याख्यानों के बीच बीच में उपदेशप्रद भजन भी होते जाते थे।

अन्त को स्थानीय 'सरस्वती सङ्गीत पाठशाला' के छात्रों ने अपने गान-वाद्य से समस्त श्रोतागणों को मुग्ध कर लिया। भीड़ लगभग चार सौ के हो गई थी।

बा० सरकारबहादुर जौहरी ने अन्त को सभापति तथा उपस्थित सज्जनों को धन्यवाद दिया और तब सभा विसर्जित हुई।

भ्रम-संशोधन।

गतांक में 'हम्मीर-माता और हम्मीर-पत्नी' शीर्षक जो लेख छपा है, उस पर भ्रम से लेखक का नाम—'श्रीयुक्त बा० पुरुषोत्तम दास' छप गया है। वास्तव में उसके लेखक श्रीयुक्त बा० पुरुषोत्तमदासजी के पौत्र बा० बालकृष्णदास हैं। पाठक इसे सुधार लें।

साहित्य सम्मेलन।

विषयों की सूची।

(१) हिन्दी भाषा में भाव-व्यंजकता बढ़ाने का उद्योग किस प्रकार होना चाहिए।
(२) हिन्दी ग्रन्थों में विराम चिन्हों का विचार।
(३) गत सात वर्षों में हिन्दी साहित्य संसार का सिंहावलोकन।
(४) हिन्दी भाषा में नाटक ग्रन्थ और वर्तमान नाटक कम्पनियाँ।
(५) हिन्दी भाषा में उपन्यास।
(६) अन्य भाषा-भाषियों के द्वारा की गई हिन्दी की सेवा।
(७) अंग्रेजी साहित्य का हिन्दी साहित्य पर प्रभाव।
(८) वर्तमान युग में हिन्दी साहित्य का झुकाव।
(९) हिन्दी में वीर साहित्य की आवश्यकता।
(१०) हिन्दी भाषा में स्त्रियों के योग्य साहित्य।
(११) हिन्दी भाषा में बालकों के योग्य साहि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१२) नागपुर बिश्वविद्यालय में हिन्दी को स्थान मिलने की आवश्यकता।

(१३) मध्यप्रदेश की अदालतों में हिन्दी।

(१४) मध्यप्रदेश की भिन्न भिन्न बोलियाँ और हिन्दी।

(१५) हिन्दी में कविता—आधुनिक और प्राचीन—और उसके गुण दोष।

(१६) मातृ भाषा में माध्यमिक तथा उच्च-शिक्षा।

(१७) हिन्दी में विज्ञान-सम्बन्धी पारिभाषिक शब्द।

(१८) राष्ट्र-भाषा और राष्ट्र-लिपि के अधिक प्रचार के उपाय।

(१९) ऐतिहासिक खोज और उसके द्वारा भारतीय इतिहास में परिवर्त्तन।

(२०) हिन्दी में सामयिकपत्रों की वर्तमान दशा और उनके अधिक लाभकारी बनने के उपाय।

(२१) जैन लेखक तथा कवियों द्वारा हिन्दी साहित्य की सेवा।

(२२) संयुक्त प्रांत की अदालतों में नागरी प्रचार की अवस्था और उद्योग की आवश्यकता।

(२३) हिन्दी और अँग्रेजी बही खाते की परस्पर तुलना।

(२४) राष्ट्र-भाषा के लिये राष्ट्र-मिति।

(२५) हिन्दी में संस्कृतादि अन्य भाषाओं के शब्दों के रूप कैसे हों।

(२६) देवनागरी लिपि में कुछ शब्द भिन्न भिन्न रूपोंमें लिखे जाते हैं उनके एकरूप निश्चय होने पर विचार।

उदाहरणः—

गई	गये	हुआ	लिये	चाहिये	नए
गयी	गए	हुवा या हुया	लिए	चाहिए	नये

भवदीय,

रघुवरप्रसाद द्विवेदी बी० ए०,
मनोहर कृष्ण गोलवलकर बी० ए०, एलएल० बी०
दयाशंकर झा० बी० एस० सी०, एलएल० बी०।

मंत्री

स्वागतकारिणी—समिति—जबलपुर।

प्रबन्ध-कारिणी समिति।

शनिवार तारीख २२ जूलाई १९१६ सन्ध्या के ५ बजे

स्थान—सभाभवन।

(१) तारीख २९ मई १९१६ और ६ जून १९१६ के कार्य विवरण पढ़े गए और स्वीकृत हुए।

(२) सन् १९१६—१७ के लिये निम्न लिखित बजेट स्वीकृत हुआ।

४४१=) २	गत वर्ष की बचत
२०००)	सभासदों का चन्दा
११००)	पुस्तकों की बिक्री
१०००)	हिन्दी पुस्तकों की खोज
५००)	पृथ्वीराज रासो की बिक्री
५०)	नागरी प्रचार
१००)	फुटकर आय
४५)	पारितोषिक
६००)	पुस्तकालय
४५००)	हिन्दी कोष
७०००)	मनोरंजन पुस्तकमाला
१७३३६=) २	

व्यय का ब्योरा।

कार्यकर्त्ताओं का वेतन

सहायक मंत्री	६००)
क्लार्क १	२४०)
क्लार्क २	१४४)
चपरासी १	९०)
चपरासी २	७२)
मेहतर	१२)
पंखाकुली	१४)
माली	३६)
फुटकर	१३)
पत्रिका के सम्पादक	१२०)
	१३६५) कुल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३६५) कार्यकर्त्ताओं का वेतन
२६८९) छपाई
८००) डाकव्यय
१२०) नागरी प्रचार
९५) पारितोषिक
६००) पुस्तकालय
१५०) पुस्तकों के लिये पुरस्कार
१०००) पुस्तकों की खोज
२५०) फुटकर व्यय
५०००) मनोरंजन पुस्तकमाला
४५००) हिन्दी कोश
५०) मरम्मत
३४९।=) । अमानत

१६९६८।=) ।

पुस्तकालय

पुस्तकाध्यक्ष १४४)
चपरासी ७२)
दफ़री ७२)
पंखाकुली १८)
सूची की छपाई २००)
पुस्तकें ९४)

६००)

छपाई

नागरीप्रचारिणी पत्रिका की १६ संख्याओं की छपाई १४१४)
नागरीप्रचारिणी ग्रन्थमाला की ४ संख्याओं की छपाई ६७५)
नागरीप्रचारिणी लेख माला की ५ संख्याएँ ४००)
सभा की वार्षिक रिपोर्ट २००)

२६८९)

(३) प्रोफेसर श्रीप्रकाश के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ कि पंडित कन्हैयालाल पुस्तकाध्यक्ष का वेतन १ जुलाई १९१६ से १२) रु० कर दिया जाय।

(४) बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा के प्रस्ताव प निश्चय हुआ कि जब तक कागज़ का मूल्य न घ तब तक नागरीप्रचारिणी पत्रिका की प्रत्येक संख तीन फर्मों की ही निकाली जाय और ग्रन्थमाल तथा लेखमाला की संख्याएँ छ छ फर्मों की। य भी निश्चय हुआ कि इस वर्ष की रिपोर्ट की केव १५०० प्रतियाँ छपवाई जायँ।

(५) बाबू गौरीशंकरप्रसाद जी का यह प्रस्ता उपस्थित किया गया कि श्रीमान् काश्मीर नरेश वार्षिकोत्सव के समय जो १०००) रु० सभा दिया है वह स्थायी कोश में जमा किया जाय।

निश्चय हुआ कि यह रुपया छपाई आदि के बिले के चुकाने में व्यय हो चुका है अतः स्थायी कोश यह जमा नहीं किया जा सकता।

(६) डाक्टर छन्नूलाल स्मारक एदक के लि आए हुए लेखों पर सब कमेटी की सम्मति उपस्थि की गई।

निश्चय हुआ कि लाला सन्तराम बी० ए० मेडल दिया जाय और उनसे प्रार्थना की जाय कि भारतीय दशानुसार अपने लेख में एक अध्या और बढ़ा दें अथवा अपने लेख में उचित परिवर्त कर दें।

(७) पंडित रामनारायण मिश्र के प्रस्ताव प निश्चय हुआ कि प्रबंधकारिणी समिति के सभास के चुनाव के लिये जो सुची बनाई गई है उस काशी में बाबू देवीप्रसाद खत्री का नाम ब दिया जाय।

(८) दादूदयाल की बानी और सबद के सम्ब में रायबहादुर पंडित चंद्रिकाप्रसाद त्रिपाठी चन्द्रधर शर्मा गुलेरी के पत्र उपस्थित किए जिनमें त्रिपाठीजी ने इन पुस्तकों की प्रतियों जला देने की सम्मति दी थी और गुलेरी जी लिखा था कि उनकी भूमिका अथवा वह अंश निका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया जाय जिससे दादू पन्थिओं का जी दुखता है और तब इन पुस्तकों की बिक्री की जाय।

निश्चय हुआ कि इन पुस्तकों की भूमिका निकाल कर इनकी बिक्री की जाय और बानी तथा सबद का मूल्य घटा कर क्रमात् बारह आना और आठ आना कर दिया जाय।

(९) ठाकुर राजेन्द्रसिंह का पत्र उपस्थित किया गया जिसके साथ उन्होंने महाकवि माइकल मधुसूदन दत्त के 'मेघनाद बध' का एक हिन्दी अनुवाद भेजा था और पूछा था कि यह अनुवाद प्रकाशित करने योग्य है वा नहीं।

निश्चय हुआ कि सभा की सम्मति में यह अनुवाद प्रकाशित करने योग्य नहीं है।

(१०) आरे की नागरीप्रचारिणी सभा का १४ जून का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उसने सूचना दी थी कि उसने विहार गवर्नमेण्ट से प्रार्थना की थी कि सरकारी कागजों तथा न्यायालयों आदि में कैथी के स्थान पर नागरी अक्षरों का प्रचार किया जाय और इसपर गवर्नमेण्ट ने कृपापूर्वक यह आज्ञा दे दी है कि जिन छपे हुए रजिस्टरों और फार्मों का व्यवहार न्यायालयों तथा सरकारी आफिसों में होता है वे कैथी के बदले नागरी अक्षरों में छापे जाया करें।

निश्चय हुआ कि इसके लिये आरे की नागरीप्रचारिणी सभा तथा विहार और उड़ीसा की गवर्नमेण्ट को धन्यवाद दिया जाय।

(११) पंडित जगन्नाथ पुच्छरत का १८ जूलाई का कार्ड उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि उन्होंने पंजाब की हिन्दी परीक्षाओं के नियम हिंदी में छपवाए हैं और उन्हें वे सभा को बिना मूल्य दिया चाहते हैं। सभा उन्हें नागरीप्रचारिणी पत्रिका के साथ बँटवा दे।

निश्चय हुआ कि इसके लिये पंडित जगन्नाथ पुच्छरत को धन्यवाद दिया जाय और इन नियमों की प्रतियाँ सभा की वार्षिक रिपोर्ट के साथ बँटवा दी जायँ।

(१२) बाबू गौरीशंकरप्रसाद जी के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ कि बनारस की म्युनिसिपेलिटी से पानी के टिकस की रसीदें, टीका लगाने की नोटिसें, शिक्षा विभाग की रसीदें; फ़ौती और पैदायशी आफ़िसों की रसीदें, तामीरात सम्बन्धी नोटिसें आदि जो निकलती हैं वे नागरी अक्षरों में नहीं रहतीं। इस से गवर्नमेण्ट की आज्ञा का उल्लङ्घन होता है और सर्वसाधारण को बड़ी कठिनता होती है। अतः इस सम्बंध में बनारस म्युनिसिपल बोर्ड को लिखा जाय और मंत्री जी बोर्ड के सेक्रेटरी से स्वयं मिल कर उनसे प्रार्थना करें कि वे कृपापूर्वक ऐसा प्रबन्ध कर दें जिसमें ये रसीदें और सूचनाएँ नागरी अक्षरों में अवश्य लिखी जाया करें।

(१३) बाबू वेणीप्रसाद का पत्र उपस्थित किया गया जिसके साथ उन्होंने बनारस की तहसीलदारी से निकली हुई टिकस सम्बन्धी एक नोटिस भेजी थी जिसकी पूर्त्ति केवल उर्दू में ही हुई थी। साथ ही बाबू गौरीशंकरप्रसाद जी ने सूचना दी कि इस प्रकार की बहुत सी नोटिसें यहाँ से निकला करती हैं जिनकी पूर्त्ति नागरी अक्षरों में नहीं की जाती।

निश्चय हुआ कि बनारस के कलेक्टर और मैजिस्ट्रेट का ध्यान इस ओर आकर्षित किया जाय और उनसे प्रार्थना की जाय कि वे ऐसा प्रबन्ध कर दें जिसमें ये नोटिसें नागरी में अवश्य लिखी जाया करें।

(१४) सभा के २३ वें वर्ष के कार्य विवरण का एक अंश पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।

(१५) संयुक्त प्रदेश के हिन्दी हस्त लिपि परीक्षा के पर्चे उपस्थित किए गए जिन पर विचार कर सम्मति देने के लिये निम्न लिखित सज्जनों की सब कमेटी नियत की गई थी अर्थात् बाबू अमीर सिंह, बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा और बाबू केशवदास।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चय हुआ कि इस सब कमेटी की सम्मति के अनुसार निम्न लिखित बालकों को पारितोषिक और प्रशंसापत्र दिए जायँ।

मिडिल विभाग।

(१) देवीलालशाह कक्षा ६ टाउन स्कूल अलमोड़ा ५)
(२) गोविन्द वल्लभ पाँड़े कक्षा ६ टाउन स्कूल अलमोड़ा ४)
(३) लक्ष्मणसिंह राजपूत कक्षा ६ टाउन स्कूल अलमोड़ा ३)

प्रशंसापत्र
(४) गोविन्द वल्लभ जोशी कक्षा ६ टाउन स्कूल अलमोड़ा
(५) राधाकृष्ण कक्षा ५ हसनपुर स्कूल सुलतापुर
(६) भगवतीशरण कक्षा ५ बैरिया पाठशाला बलिया।
(७) जगदीश पाँड़े कक्षा ५ बैरिया पाठशाला बलिया
(८) प्रेमवल्लभ कक्षा ६ मिडिल पाली स्कूल अलमोड़ा
(९) राम तपस्या उपाध्याय कक्षा ५ बैरिया स्कूल बलिया

अपर प्राइमरी विभाग

(१) रामजतनराम कक्षा ३ बैरिया स्कूल बलिया ५)
(२) कैलाशराम कक्षा ४ बैरिया स्कूल बलिया ३)
(३) सूर्यराम कक्षा ४ बैरिया स्कूल बलिया २)

प्रशंसापत्र
(४) अलीमुहम्मद कक्षा ४ बरिया स्कूल बलिया
(५) पद्मदेव मिश्र कक्षा ३ बैरिया स्कूल बलिया
(६) सुखदेवी कक्षा ४ निस्वाँ स्कूल जिला एटा
(७) काशीराम कक्षा ३ स्कूल महरौनी जि० झाँसी
(८) मुरलीधर कक्षा ४ बिल्हौर स्कूल कानपुर

लोअर प्राइमरी विभाग

(१) बाबूलाल राम कक्षा २ बैरिया स्कूल बलिया ४
(२) मुखासिंह कक्षा २ बैरिया स्कूल बलिया २
(३) राम अनूप कुँवर कक्षा २ बैरिया स्कुल बलिया २

प्रशंसापत्र
(४) देवशरणसिंह कक्षा २ बैरिया स्कूल बलिया
(५) कन्हैयाराम कक्षा २ बैरिया स्कूल बलिया
(६) रामप्रसाद कक्षा २ स्कूल रोंचवारा बाँदा
(७) रामरिछपाल कक्षा २ मदरसा शाख मुहल्ला मारवाड़ी मेरठ

(१६) निश्चय हुआ कि आगामी अधिवेशन पुस्तकालय के निरीक्षक की सम्मति के सहित उ महाशयों की नामावली उपस्थित की जाय जिन यहाँ पुस्तकालय की कोई पुस्तक रह गई हो।

(१७) सभापति को धन्यवाद दे सभा वि र्जित हुई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

भाग २१] Registered No. A 414 [संख्या ३—४
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

सितंबर, अक्तूबर १९१६

सम्पादक—रामचन्द्र वर्म्मा ।

—:०:—

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल । बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल ॥
करहु विलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल । निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सब को मूल ॥
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार । सब देशन सों लै करहु, भाषा मांहि प्रचार ॥
प्रचलित करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न । राज काज दरबार में, फैलावहु यह रत्न ॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र ।

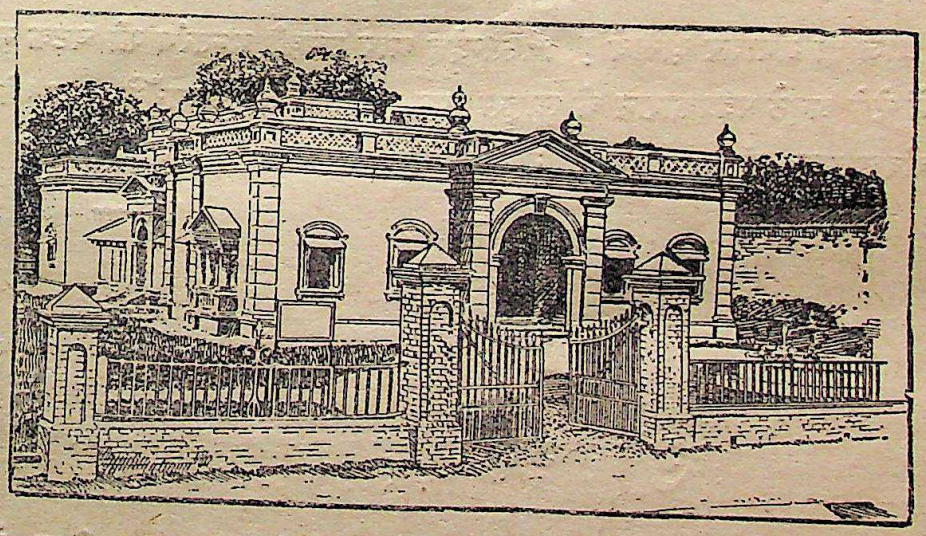

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित ।

श्री अपूर्वकृष्ण बोस द्वारा इंडियन प्रेस, प्रयाग में मुद्रित ।

वार्षिक मूल्य १॥)

प्रति संख्या =)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

विषय-सूची ।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१)	इतिहास के अध्ययन से लाभ ...	४९	(५)	मिट्टी और चमड़े के ग्रंथ ...	६९
(२)	मय-जाति	५५	(६)	सभापति का व्याख्यान ...	७१
(३)	पाश्चात्य तर्थ-शास्त्र ...	६२	(७)	परिश्रम और व्यवसाय ...	८८
(४)	चौपाए	६३	(८)	सभा का कार्य्य विवरण ...	८९

श्रीभास्कर रामचन्द्र भालेराव 'कविदास'

सम्पादित।

क्या आपको यह मालूम है कि,

हिन्दी-चित्रमय-जगत्

राष्ट्र-भाषा हिन्दी की उच्चश्रेणी का ; हिन्दी-भाषा-भाषियों का अत्यन्त लाड़ला; मराठी, हिन्दी, अँग्रेज़ी, बँगला इत्यादिक भाषाओं के धुरन्धर लेखकों के लेख प्रकाशित करनेवाला; महाराष्ट्र में 'हिन्दी राष्ट्र-भाषा भवतु ' का झंडा फहरानेवाला; सामयिक महत्त्वपूर्ण लेख, कविता तथा चित्रों के प्रकाशित करने में युगांतर प्रस्थापक; हिन्दी में अपने ढंग का सब से पहिला और अनूठा मासिक पत्र है ?

यदि, नहीं,

तो आप उसे आज ही मंगाकर देखिये ! निस्सन्देह आप उसकी अन्तरंग की चटक मटक पर मोहित होंगे और हिन्दी में ऐसे अनूठे पत्रप्रकाशन के साहस पर दांतों उँगली दबायँगे। पत्र की लागत के देखते मूल्य कुछ नहीं। केवल सादा संस्करण ३॥) राजसंस्करण ५॥) तिसपर भी विशेषांक उपहार में ! एक प्रति का ।–), ॥).

पता—

मैनेजर, हिन्दी–चित्रमय–जगत् ,

पूना सिटी।

आवश्यकता है

हिन्दी पुस्तकों की बिक्री के लिये दो भ्रमणकारी एजेण्टों की । मासिक वेतन १५) रु० और मार्गव्यय दिया जायगा । ५०) रु० की नगद ज़मानत देनी चाहिए। जिन लोगों को इस काम का पहिले का अनुभव हो वही प्रार्थनापत्र भेजें।

सेक्रेटरी

नागरीप्रचारिणी सभा—काशी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

भाग २१ } सितम्बर, अक्तूबर १९१६. { संख्या ३—४

इतिहास के अध्ययन से लाभ ।

[लेखक,—श्रीयुक्त बा० श्रीप्रकाश बी० ए०
बैरिस्टर एट-ला ।]

आजकल वैज्ञानिक ढँग से पठन-पाठन की प्रणाली प्रचलित है । इस कारण यह बताना बड़ा कठिन हो गया है कि किसी विशेष विषय के अध्ययन से क्या लाभ है। युरोप के किसी विश्वविद्यालय के शास्त्रवेत्ता से पूछिए कि शास्त्र के अध्ययन से क्या लाभ है, तो प्रायः यही उत्तर आपको मिलेगा कि इस प्रकार का प्रश्न ही अनुचित है । ज्ञान से ज्ञान ही की प्राप्ति होती है—वही लाभ समझना चाहिए । उससे और कोई लाभ उठाने की इच्छा रखना शास्त्र का अपमान करना है । ऐसा उत्तर मुझे स्वयं मिल चुका है । अपने इसी अनुभव के कारण मैं ऐसा कह रहा हूँ । केम्ब्रिज विश्वविद्यालय के अन्तर्गत प्रसिद्ध ट्रिनिटी कालेज के दर्शन-शास्त्राध्यापक अपने व्याख्यानों के आरम्भ ही में यह कह देते हैं कि दर्शन शास्त्र का जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं; अर्थात्—दर्शन-शास्त्र का पढ़ना केवल इस बात की जानकारी के लिये है कि दार्शनिक विषयों पर भिन्न भिन्न लेखकों ने क्या लिखा है और कौन से सिद्धान्त निकाले हैं ।

पर हिन्दुओं के विचार ऐसे नहीं हैं । कोष, व्याकरण आदि विषयों पर भी पुस्तकें लिखने के लिये जब कोई लेखक बैठता है तब किसी न किसी प्रकार से वह ईश्वर की वन्दना अवश्य करता है। फिर धर्म से और उसकी पुस्तक से चाहे कोई सम्बन्ध न भी हो । इसके सिवा प्रायः सभी पुरातन लेखकों ने आरम्भ ही में यह कह दिया है कि इस विषय के पढ़ने से मोक्ष की प्राप्ति होगी। यह बात सब ने लिखी है कि सब मनुष्य मुमुक्षु हैं। वे मोक्ष प्राप्ति की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इच्छा रखते हैं। अतएव उसी की प्राप्ति का उद्योग करना सारे लेखकों और विचारशीलों का कर्तव्य है। इस पर यह प्रश्न उठता है कि मोक्ष है क्या वस्तु? जब तक हम यह न जानेंगे तब तक उसकी खोज हो कैसे सकती है? योगवाशिष्ठ वेदान्त के सर्वोत्तम ग्रन्थों में समझा जाता है। उसके भी प्रारम्भ ही में जिज्ञासु यही पूछता है कि कर्म से मोक्ष की प्राप्ति होगी या ज्ञान से? अतएव यदि मैं मोक्ष का मतलब समझाने की चेष्टा करूँ तो अनुचित नहीं। मैंने अपनी ही चित्त-शान्ति के निमित्त इस विषय पर साधारणतः जो कुछ विचार किया है वह यहाँ प्रकट करता हूँ।

मेरी समझ में किसी दुःख, आपत्ति अथवा असंतोष-जनक परिस्थिति से छुटकारा पाना ही मोक्ष है। अवसर-विशेष पर प्यासे को पानी, भूखे को भोजन, शीतार्त को कपड़े लत्ते आदि भिन्न भिन्न अभीष्ट वस्तुओं की प्राप्ति मोक्ष-दायी है। किसी बात के जानने की प्रबल उत्कण्ठा होने पर यदि वह बात मालूम हो जाय तो समझना चाहिए कि उस समय उस विषय में उसे मोक्ष प्राप्त हुआ। परन्तु यह मोक्ष क्षणिक है,—यह छुटकारा थोड़ी ही देर के लिये है। इस कारण विचारवान् मनुष्य उस मोक्ष के पीछे पड़े हुए हैं जिससे दुःख, भूख, प्यास, स्नेह, घृणा आदि सब बातों से पूर्णतया और सदा के लिये छुटकारा मिल जाय।

मैं युरोपीय शास्त्रों के पूर्वोक्त मत से सहमत नहीं। मेरा तो यही विचार है कि प्रत्येक विषय का अध्ययन करते समय विद्यार्थी को अधिकार है कि वह पूछे कि इस शास्त्र के पढ़ने से क्या लाभ है। और यदि शिक्षक यह न बता सके कि उससे क्या लाभ है और उस लाभ की प्राप्ति की कहां तक सम्भावना है—कहां तक उससे मोक्ष मिल सकता है—तो उचित है कि विद्यार्थी दूसरे अध्यापकों के पास जाय और किसी अन्य शास्त्र का अध्ययन करे।

आज मैं इस प्रश्न को हल करना चाहता हूँ कि इतिहास के पढ़ने से क्या लाभ होता है; उससे हम किस प्रकार के मोक्ष की आकांक्षा कर सकते हैं। इस प्रश्न का उत्तर देने के पहले यह बता देना उचित है कि इतिहास है क्या वस्तु। इतिहास का अर्थ संस्कृत में है—"ऐसा हुआ था"। मतलब यह कि पूर्वकाल में जो कुछ हो गया है वही इतिहास है। परन्तु इसके साथ ही साथ वर्त्तमान समय की घटनाएं भी तो इतिहास ही में समाविष्ट हैं। क्या युरोप के इस घोर संग्राम की घटनाएं इतिहास के अन्तर्गत नहीं हैं? सारांश यह कि जो कुछ संसार में हुआ या हो रहा है सभी इतिहास का अंश है।

आरम्भ में प्राणी को मनुष्य का शरीर कैसे मिला, दस लाख वर्ष पूर्व मनुष्य किस प्रकार से शिकार करता था, एक लाख वर्ष पहले वह क्या खाता था, ग्यारहवीं शताब्दी में रूस के निवासी किस प्रकार वाणिज्य करते थे, बारहवीं शताब्दी में अमेरिका निवासी कैसे वस्त्र पहनते थे, तेरहवीं सदी में जापान के लोग किस प्रकार के घरों में रहते थे, चौदहवें शतक में युरोप के निवासी किस तरह के अस्त्रों से लड़ते थे, पन्द्रहवीं शताब्दी में किन किन बीमारियों से कितने मनुष्य मरे थे, सोलहवीं शताब्दी में चीन में कैसी शासन-प्रणाली थी आदि ये और ऐसी सभी घटनाएं इतिहास के अन्तर्गत है। यदि इतिहास अनन्त है, यदि ये सब घटनाएं उसमें समाविष्ट हैं, तो उसका साद्यन्त पढ़ जाना असम्भव है। इतिहास-वेत्ता इस बात को मानते हैं कि हम कदापि सर्वज्ञ नहीं हो सकते। इस समय अपने नगर ही में क्या हो रहा है, यह हम नहीं जानते तो संसार भर की घटनाओं की तो बात ही जाने दीजिए। इस कारण इतिहास भिन्न भिन्न अङ्गों में विभक्त हो गया है। उसके भिन्न भिन्न अंगों के भिन्न भिन्न शास्त्र बने हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब देशों की राज्य-सम्बन्धिनी घटनाओं के वर्णन ही को शुद्ध इतिहास कहते हैं। इसका उदाहरण लीजिए—भारत का इतिहास तीन कालों में विभक्त है—(१) हिन्दू-काल। (२) मुसलमान-काल और (३) अंगरेज-काल। आप यह भले ही कहते रहें कि हमारे सामयिक जीवन में कोई परिवर्त्तन नहीं हुआ, हम आज भी वही पुरवा, कसोरा, हण्डा और गगरा व्यवहार करते हैं जो सैकड़ों वर्ष पहले हमारे पूर्वज बरतते थे,—जैसा कि सारनाथ की प्रदर्शिनी देखने से ज्ञात होता है—हम अब भी अपनी उंगलियों ही से खाते हैं, यद्यपि अँगरेज काँटे और चम्मचों से काम लेते हैं। हम इस समय भी बही में हिसाब लिखते हैं, पृथ्वी पर बैठते हैं, जो अनाज पहले खाया करते थे वही खाते हैं, हमारे जीवन पर राज्यान्तर का कोई प्रभाव नहीं पड़ा है। परन्तु तिस पर भी इतिहास-वेत्ता भारत का इतिहास तीन काल में विभक्त मानते हैं। राजा और राज्य क्यों इतना आवश्यक समझा जाता है, राजाओं ही के मरने जीने के दिन क्यों स्मरण रखे जाते हैं और शुद्ध इतिहास ने राज्य से सम्बन्ध रखनेवाली घटनाओं का वर्णन करना ही क्यों अपना कर्तव्य मान रखा है? इसके कारण ये बताये जा सकते हैं—(१) कितना ही आप क्यों न कहें कि सामाजिक जीवन पर राजा का प्रभाव नहीं पड़ा; परन्तु यह तो मानना ही पड़ता है कि राज्य का बहुत बड़ा प्रभाव प्रजा पर पड़ता है। "यथा राजा तथा प्रजा"। देखिए, अब हम अँगरेजी ढँग के वस्त्र पहनते हैं, अपने देशी बंकों के भी हिसाब अँगरेजी ढंग से रखते हैं, अँगरेजी लालटेन इस्तेमाल करते हैं, अँगरेजी भाषा का ज्ञान सम्पादन करना चाहते हैं और कुरसी और मेज से अपना घर सजाते हैं। अच्छा, जरा और गौर कीजिए। यहीं तक बस नहीं है, अँगरेजी वस्त्रों का प्रभाव तो परदे में रहनेवाली स्त्रियों पर भी पड़ा है। वे अँगरेजी फीते-लैस इस्तेमाल करती हैं और अपनी कुरती का बटन पीछे लगाने लगी हैं। हिन्दुओं के विवाह आदि कितने ही धार्मिक उत्सवों पर भी आप मुसलमानी-सभ्यता का प्रभाव पाइएगा।

लार्ड ब्राइस ने लिखा है—"यह समय विशेषज्ञों (Specialists) का है"। परन्तु जितना ही मनुष्य किसी विशेष विषय के ज्ञान की प्राप्ति में लगा रहेगा उतना ही उसका सम्बन्ध अन्य विषयों के ज्ञान से कम होता जायगा। सम्भव है कि चतुर इतिहासवेत्ता विभाग विशेष के अनुभवियों से अपने मतलब की बात निकाल लें। पर विशेषज्ञ ज्ञान के प्रदेश को सम्पूर्णतः नहीं देख सकता, न वह एक विषय से दूसरे विषय का सम्बन्ध ही समझ सकता है। लार्ड ब्राइस ने इस कथन के द्वारा विशेष ज्ञान के दोष दिखलाए हैं। अब आपका कथन उचित हो चाहे अनुचित।

पूर्वकाल में पण्डित-मण्डली वार्त्तालाप आदि में संस्कृत के श्लोक उदाहरणार्थ और प्रमाण के रूप में उद्धृत करती थी। मुसलमान-राज्य के अन्तिम समय तक के शिक्षित हिन्दू (जिनमें से कुछ अब भी जीवित हैं) सादी और हाफिज की कविता का प्रयोग करते थे और आधुनिक नव-शिक्षित शेली और बायरन की कविता का प्रयोग करते हैं।

जी० लोस डिकन्सन के मत से मैं सहमत नहीं हूँ। तथापि उनके एक कथन का उल्लेख करना उचित ज्ञात होता है। वह कहते हैं*—

"मेरे ख्याल में एक बात पर विचार करना बड़ा आवश्यक है। वह यह है कि पश्चिमी संसर्ग का भारत के कला-कौशल पर क्या प्रभाव पड़ा है? इस कलाकौशल की दशा बड़ी हीन है; कितनी ही कलाएं तो लुप्त हो गईं। इसका एक कारण तो यह है कि पश्चिमी वस्तुओं

*G. Lowes Dickinson: *An Essay on the Civilisation of India, China and Japan* (M.W. F: MXIV, J. M. Pent and Sons. Ltd., London and Toronto) pp. 38-39.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से ये चढ़ा-ऊपरी नहीं कर सकतीं। वस्त्रों पर तो इसका प्रभाव और भी विशेष रूप से देखा जाता है। विदेशी कलों से बनी वस्तुओं ने हाथ से बने देशी वस्त्रों का नाश सा कर दिया है। मैंने भारत में पीतल, लकड़ी आदि का कोई सुन्दर काम नहीं देखा। परन्तु केवल यही कह देना कि विदेशी चढ़ा ऊपरी के कारण भारतीय कलाएं नष्ट हो गईं, उचित नहीं ज्ञात होता। क्योंकि प्रश्न यह उपस्थित होता है कि विदेशी माल को लोग क्यों पसंद करते हैं? इसका उत्तर मिलता है—वे सस्ते हैं। यह कहना दरिद्रों के लिये तो यथार्थ है। सस्ता होने से दरिद्र लोग चाहे पश्चिमी देशों में चाहे पूर्वीय देशों में, उनकी मजबूती आदि किसी बात का विचार नहीं करते। परन्तु इसका मुख्य कारण कुछ और ही है। भारत का कलाकौशल—चित्रकारी, नक्काशी इत्यादि—राजाओं की उदारता पर अवलम्बित था। अब भी धनी राजा विद्यमान हैं, परन्तु वे भद्दी पश्चिमी वस्तुओं पर ही मुग्ध है। क्यों? एक तो उन्हें स्वयं सौन्दर्य्य की परीक्षा नहीं। दूसरे, पश्चिम का बलवान् प्रभाव उनको इतना दबाए है कि वे उसके औचित्य-अनौचित्य का भी विचार नहीं कर सकते। इस कारण वे अपने गृह और वस्त्रादि जहाँ तक हो सकता है, अंगरेजी ढंग ही पर बनवाना चाहते हैं।"

इन सब कारणों से कहना ही पड़ता है कि देश पर राज्य-प्रणाली का प्रभाव मुख्य और प्रधान है। इसी कारण ऐतिहासिक अन्वेषण में विद्वानों का ध्यान सब से प्रथम राज्य और राजा पर गया। धीरे धीरे वे उसी में लग गए और अन्यान्य शास्त्रों को अन्यान्य विद्वानों ने अपना लिया।

राज्य और राजाओं से सम्बन्ध रखनेवाली बातों पर ही इतिहास अधिक ध्यान रखता है। यहाँ तक कि सहस्रों पापियों का संहार और कितने ही नगरों को भस्मावशेष करनेवाले बड़े बड़े भूचालों का भी वह विचार नहीं करता, परन्तु किसी राजा या राज-कर्मचारी के प्राण-घात के निमित्त किसी विद्रोही के द्वारा किए गए सामान्य और असफल यत्न का भी वर्णन इतिहास अवश्य करेगा; क्योंकि पहली बात तो केवल प्रकृति के कोप ही को प्रकट करती है और दूसरी इस बात का प्रमाण है कि किसी मनुष्य या मनुष्य-समुदाय की यह दृढ़ प्रतिज्ञा थी कि राज्य का परिवर्त्तन किया जाय। इतिहास में इंगलिस्तान की महामारी, प्रबल प्लेग, प्रचण्ड अग्नि प्रकोप, और साउथ सी बबल् का आर्थिक गोलमाल, इत्यादि बातों और घटनाओं का वर्णन रहता है; क्योंकि उनका प्रभाव राज्य पर पड़ा है, उससे विप्लव, राज्य-परिवर्त्तन या राज्य-कर्मचारियों को कष्ट हुआ है। हाँ, यदि प्लेग से लोग बिना बोले मर जायँ, दुर्भिक्ष में चुपचाप कष्ट सह लें, बैङ्कों के दिवाले निकलने पर शासन-कार्य्य में गड़बड़ न मचे (जैसी कि कुछ समय पहले भारत में मची थी)। तो ये घटनाएं इतिहास के अन्तर्गत नहीं मानी जायँगी। उस दशा में यह काम वैद्य-शास्त्रियों, मनुष्य-गणकों और अर्थ-शास्त्रज्ञों के सुपुर्द कर दिया जायगा।

अब यह प्रश्न उपस्थित होता है कि क्या राज्य-सम्बन्धी सभी बातों को जानना इतिहास के अध्ययन में आवश्यक है? नहीं, किसी न किसी प्रकार से उसे जानना चाहिए। मनुष्य के जीवन में 'समय' बड़ा महत्त्वपूर्ण और आवश्यक सहचर है। समय की गति को देख कर हम उसी के अनुसार चलने का यत्न करते हैं, समय को हम नहीं छोड़ सकते। इस कारण समय पर अवलम्बित शृङ्खला बद्ध राज्य-सम्बन्धी घटनाओं के वर्णन को इतिहास कहना चाहिए। यह कह देना कि बाबर ने १५२६ में इब्राहीम लोदी को पानीपत के युद्ध में हराया, १८०० में नाना फडनवीस की मृत्यु हुई, १५३० में हुमायूँ राज्य पर बैठा, १६०० में ईस्ट-इंडिया कम्पनी को चार्टर मिला, इतिहास नहीं है। ये सब घटना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतिहास के अन्तर्गत हैं सही; पर इतिहास के वर्णन में आपको इस प्रकार की बातें कहनी पड़ेंगी,—देहली में पठानों का बड़ा दुःशासन था, उत्तरीय सीमा के पार से बाबर ने अपनी आँख भारत पर उठाई, उसने राजपूत-वीर राना सांगा से सहायता की आशा की, पानीपत में लड़ाई छिड़ी, इब्राहीम लोदी मारा गया, राज्य का सङ्गठन करने के पहले ही बाबर मर गया और उसके पुत्र हुमायूँ को राज्य मिला इत्यादि।

बहुत से लोगों का और मेरा भी यह मत है कि इतिहास को केवल राज्य-सम्बन्धी विषयों के ही वर्णन से तृप्त न हो जाना चाहिए बल्कि मनुष्य की सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक दशा पर भी दृष्टिपात करना चाहिए। पर शास्त्र का अन्त नहीं, और सामाजिक स्थित्यन्तरों के समझने में अधिक कठिनता है। क्योंकि राज्य-सम्बन्धी घटनाएँ तो लिखित वर्तमान हैं; पर समाज सम्बन्धी ज्ञान पुराने वस्त्र, बरतन, और इमारत आदि के भीतर छिपा हुआ है। इसी कारण इतिहास के विद्वानों ने अपना क्षेत्र थोड़ा संकुचित कर लिया है।

साधारण रूप से अब हमें यह मालूम हो गया कि इतिहास क्या है और ऐतिहासिक पुस्तकों में हम किस प्रकार का ज्ञान पाने की आशा कर सकते हैं। अब यह प्रश्न रह गया कि हमें इसके अध्ययन से लाभ क्या है? और किस प्रकार के मोक्ष की प्राप्ति इसको पढ़ने से हमें हो सकती है? अच्छा अब इसी का उत्तर लीजिए।

पहली बात तो यह है कि प्रत्येक प्राणी जिज्ञासु है अर्थात् किसी बात को जानने की इच्छा उसे स्वभाव ही से बनी रहती है। यह भाव अच्छे या बुरे किसी न किसी रूप में सब में पाया जाता है। अशिक्षित प्राकृत-पुरुष हर बात में अपना कान दिया करता है। दो मनुष्य यदि बात करते हों तो उसे सुनने का यत्न वह प्रायः किया करता है। यदि दरवाजा बन्द हो तो वह दरारों में से झाँकने की कोशिश करता है। ये काम जिज्ञासा के स्पष्ट प्रमाण हैं। मतलब यह कि हृदय की यह वासना ही है कि संसार की कुछ बातों का ज्ञान हो। इसी वासना की पूर्त्ति करने के लिये शिक्षित मनुष्य देशदेशान्तर की दशा जानने का यत्न करता है, पुरानी इमारतों को गौर से देखता है, उन पर विचार करता है, पता लगाता है कि किसने इन्हें बनाया, कब ये बनी हैं और किस काम में ये आती थीं। अपने घर में किसी पूर्वज का चित्र, उनके विचित्र वस्त्र, व्यायाम करने की भारी भारी नालें या मुग्दल आदि देख कर मनुष्य उनका हाल जानने की कोशिश करता है और उनके समय के आचार-विचार का पता लगाता है। आधुनिक काल की वर्तमान दशा देख कर हमें यह आकांक्षा होती है कि हम यह जानें कि यह दशा कैसे प्राप्त हुई? किन किन कारणों से हम इस उन्नत या हीन दशा को पहुँचे? हृदय में जहाँ ऐसी वासना हुई वहाँ आपने इतिहास-ज्ञान की इच्छा की नींव रखी। इतिहास के अध्ययन से इस आकांक्षा की पूर्ति और इस विशेष प्रकार के मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है।

दूसरी बात यह कि हम सब शान्ति की खोज में हैं। हम सब चाहते हैं कि बिना रोक-टोक स्वतन्त्र भाव से हम सड़क पर चल सकें, देश-प्रदेश में भ्रमण कर सकें और हमें चोर और चाण्डाल आदि का भय न रहे। इस शान्ति की तलाश में राजा और राज्य के अस्तित्व की नींव पड़ती है; और राज्य क्या है, राजा और प्रजा के धर्म और अधिकार क्या हैं, इत्यादि विचार चित्त में आते हैं। इन सब प्रश्नों का उत्तर भी इतिहास ही देता है। इस सम्बन्ध में यह कह देना उचित होगा कि कुछ विचारवान् अर्थ-शास्त्रज्ञ कहते हैं कि शान्ति से बढ़ कर भी एक वस्तु है। वह है—स्वतन्त्रता। इस विषय में इंग्लैंड के भूतपूर्व प्रधान-मन्त्री कैम्बेल-बैनरमैन के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कथन का उल्लेख प्रायः किया जाता है। आपका कथन है कि "सुराज्य से स्वराज्य अधिक अच्छा नहीं समझा जा सकता"। परन्तु यह कहना आवश्यक है कि स्वराज्य का विचार सुराज्य के पश्चात् उत्पन्न होता है। जब मार-काट, असह्य दुःख और अपराध, बली का अभ्युदय और दुर्बल की हीनता इत्यादि बातें होने लगती हैं तब मनुष्य यही चाहता है कि किसी प्रकार शान्ति हो। राजा-विशेष की स्थिति का विचार उस समय प्रधान नहीं होता; उस समय तो चारों ओर शान्ति ही शान्ति की पुकार मच जाती है। पुरातन रोम के प्रजातन्त्र को देखिए, रोमन लोग अपना अभिमान, अपनी स्वतन्त्रता कदापि छोड़नेवाले न थे; परन्तु वहाँ भी जब जब कठिन समय उपस्थित होता तब तब यदि सेनेट और प्रजा-प्रतिनिधि सभाएँ अभीष्ट-सिद्धि नहीं कर सकती थीं तो लोग डिक्टेटर को नियत करते थे, जो छः मास के लिये पूर्ण अधिकारी और राजा हो जाता था। उसकी बात सब को माननी पड़ती थी। शायद आप कहें कि फ्रान्स के विप्लव का इतिहास इस कथन के विरुद्ध है। वहाँ की प्रजा ने जब देखा कि राजा और साहूकार घोर अत्याचार कर रहे हैं तब वहाँ रक्त की नदियाँ बहा कर प्रजातन्त्र स्थापित किया गया। पर मैं इस दलील का कायल नहीं। क्योंकि उसी समय इटली और जर्मनी देशों की प्रजा की दशा फ्रान्स की प्रजा की दशा से अधिक हीन थी। पर वहाँ तो विप्लव नहीं हुआ। अतएव यही कहना पड़ता है कि फ्रान्स में तत्कालीन विचारवान् पुरुषों ने इस मत की सृष्टि की कि राजा को सर्वोच्च अधिकार न दिए जाने चाहिए; यही नहीं, बल्कि प्रजा को भी राज-कार्य में सम्मिलित होना चाहिए। इस मत को ग्रहण कर अपनी अवस्था बदल डालने के ही दृढ़ विचार से फ्रान्सवासियों ने विप्लव मचा दिया। जो हो; कहने का तात्पर्य बस इतना ही है कि इतिहास से राज्य-क्रान्ति का पता लगता है और यह मालूम होता है कि किन किन स्वरूपों को त्याग कर किस क्रम और किस प्रकार से पद रखते हुए हमें वर्तमान दशा प्राप्त हुई है, किस प्रकार से शान्ति का प्रचार हुआ है और होता है और राजा और प्रजा का परस्पर क्या सम्बन्ध है, इत्यादि।

तीसरी बात यह है कि इतिहास से बड़े बड़े नर नारियों का परिचय हमें मिलता है। उनके विचारों को जानने का अवसर प्राप्त होता है और उनकी जीवन-चर्य्या को भी मोटे हिसाब से हम समझने लगते हैं। संसार में किसी महान् व्यक्ति का पैदा होना आश्चर्यजनक घटना है। कैसे, कहां से, और क्यों उनका जन्म होता है और उनके कार्यों का संसार पर क्या प्रभाव पड़ता है, इसे समझने का यत्न करना भी उचित है। हाँ, यह सच है कि इन बारीकियों को पूरी तरह से समझना असम्भव-प्राय है।

योगिराज श्रीकृष्ण ने भगवद्गीता के १० वें अध्याय में अपना वर्णन किया है। सब कुछ कहते कहते अन्त में उन्होंने यही कहा है कि कहां तक कहूँ—

यद्यद्विभूतिमत्सत्वं श्रीमदूर्जितमेव वा
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजांशसम्भवम्।

अर्थात् हे अर्जुन, जो कुछ तुम्हें विभूतिवान्, सत्वपूर्ण, श्रीयुक्त और बृहत् देख पड़े उसको मेरे नेत्र के एक अंश से निकला हुआ समझो। मुझे इसका अर्थ यही ज्ञात होता है कि परिमाण से अधिक जो कुछ हमें देख पड़ता है उस पर ईश्वर की अधिक कृपा समझनी चाहिए। किसी महान् पुरुष का महत्त्व कम से कम मेरे विचार में, किसी सांसारिक कारण पर अवलम्बित नहीं हो सकता। उसका महत्त्व वही है। विद्वान् अवश्य यह सिद्ध करने का यत्न करते हैं कि अमुक पुरुष अमुक कारणों से इतना बड़ा हुआ। परन्तु ये यत्न सफल नहीं होने पाते। श्रेष्ठ, मध्यम और हीन पुरुष सभी अवस्थाओं में सब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जगह पाए जाते हैं। भर्तृहरि के सदृश महाकवि राजमहल में पैदा होता है; फ्रान्सिस थोम्पसन ऐसा कवि अपनी बाल्यावस्था अत्यन्त दारिद्र्य में बिताता है; कालिदास सा कवि राज-सिंहासन की छाया में पलता है और शेक्सपीयर ऐसे कवि के जीवन का किसी को पता भी नहीं। ऐसी भिन्न भिन्न अवस्थाओं में भी एक ही प्रकार की श्रेष्ठता पाई जाती है। पर इसका वैज्ञानिक कारण क्या हो सकता है? और यदि अवस्था ही पर श्रेष्ठता या हीनता अवलम्बित होती तो सभी राजा, सभी दरिद्र बड़े कवि न हो जाते? सिकन्दर और अशोक राजाओं के पुत्र थे। आजन्म राज्याधिकारी थे। उन्होंने कितना महत्त्व प्राप्त किया! क्या सभी राजा ऐसे ही प्रतापी हुए हैं? फिर राज सिंहासन पर नीरो और बोर्जिया ऐसे दुष्ट भी मिलते हैं और प्रत्येक देश के न्यायालय में रोज ही दारिद्र्य-पीड़ित पुरुषों में दुष्टता का उदाहरण मिलता है।

कहने का मतलब यह है कि मैं यह नहीं मानता कि साधारण कारणों को बतला कर किसी महापुरुष का महत्त्व हम समझा सकते हैं। इसी कारण मैं महापुरुषों के जीवनचरित् अनुकरण के विचार से व्यर्थ समझता हूँ। अध्यापक स्कूलों में प्रायः कहते हैं—उपन्यास क्यों पढ़ते हो? किसी महापुरुष का जीवन-चरित पढ़ो, उससे शिक्षा ग्रहण करो, उसकी नकल करके उसके बराबर होने का यत्न करो। यह उपदेश मुझे व्यर्थ प्रतीत होता है। अवश्य, उपन्यास भी पढ़ने चाहिए और जीवन-चरित् भी। अच्छे उपन्यासों से सामाजिक दशा का जैसा अच्छा चित्र आँखों के सामने खिँच जाता है वैसा और ग्रन्थों से नहीं खिँच सकता। जीवन-चरित् से हमको यह ज्ञात होता है कि एक महापुरुष का संसार पर किस प्रकार प्रभाव पड़ा, उसने संसार में किस तरह परिवर्त्तन किया, लोगों को उसने कौन सा नया मार्ग दिखलाया, आदि। जीवन-चरित् से यह लाभ नहीं हो सकता कि उसका पढ़नेवाला भी महापुरुष हो जाय। नेपोलियन का केवल जीवन-चरित् पढ़ने से ही हम नेपोलियन नहीं हो सकते और सारे युरोप के राजसिंहासनों को नहीं डगमगा सकते।

(शेष आगे)

मय-जाति।

(गतांक से आगे।)

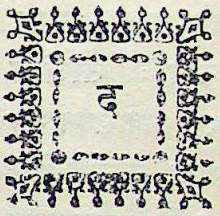

दक्षिणी मय लोगों के राज्य और शासन आदि के सम्बन्ध में तो अभी तक बहुत ही थोड़ी बातों का पता लगा है पर उत्तरीय मय लोगों के शासन आदि के सम्बन्ध में बहुत सी बातें जानी जा चुकी है। उनमें वंश या कुल आदि के विचार से बहुत से लोगों का एक जत्था होता था और अनेक वंशों या कुलों के लोग एक साथ मिल कर किसी बड़े सरदार की अधीनता में रहते थे। देश में इस प्रकार के कई सरदार थे जो अपनी अपनी सीमा में स्वाधीनतापूर्वक शासन करते थे।

सन् १००० से १२०० ईसवी तक उत्तर में केवल तीन ही बड़ी जातियाँ थीं, शिशन इजा, उक्समल और मयपन। मयपन-वालों ने शिशन इजावालों को परास्त करने के उपरान्त अपना बल तथा प्रभुत्व और भी अधिक बढ़ाना चाहा। देश के सब सरदार मयपन नगर में एकत्र हुए और वहाँ के राजा की अधीनता स्वीकार करते हुए उन लोगों ने निश्चय किया कि हम लोग अपने अपने अधीनस्थ देश और प्रजा का स्वयं उत्तमतापूर्वक शासन कर लेंगे।

इस प्रकार सारे देश की शक्तियों को एक ही सूत्र में बाँधने का प्रयत्न किया गया पर यह प्रयत्न सफल नहीं हुआ। आगे चल कर मयपन का राज्या-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धिकार कोकम वंश को दे दिया गया; पर उस वंश का अत्याचार बहुत अधिक बढ़ जाने के कारण वह राज्य-प्रबंध नष्ट हो गया। धीरे धीरे सब सरदार स्वतंत्र हो गए, उनकी एकता का सूत्र टूट गया। जिस समय स्पेनी लोग देश में पहुँचे उस समय वहाँ बड़ी ही अव्यवस्था फैल रही थी। देश में अनेक छोटे बड़े स्वतंत्र सरदार थे जिनका न तो किसी प्रकार का परस्पर सम्बन्ध ही था और जो न किसी की अधीनता ही स्वीकार करते थे।

जिस समय यह अव्यवस्था नहीं फैली थी उस समय यह नियम था कि सब सरदार समय समय पर राजा के दरबार में आते थे और उसकी ताजीम करते थे। जब राजा देश में दौरा करने निकलता था तब प्रायः सब सरदार भी उसके साथ चलते थे। जगह जगह पर खूब दावतें होती थीं। आवश्यक और महत्त्वपूर्ण प्रश्नों पर राजा को सरदार लोग उपयुक्त सम्मति भी दिया करते थे। पर आगे चल कर वह बात न रह गई। राजा को लोगों पर अत्याचार और अपनी रक्षा करने के लिये विदेशी सेनाओं की आवश्यकता पड़ने लगी। तभी से राजा का बल भी बहुत कुछ घट गया।

सरदारी पैतृक हुआ करती थी और प्रत्येक सरदार अपनी सीमा के अन्दर स्वतंत्र शासक हुआ करता था। वृद्ध होने पर सरदार अपने पुत्र या उत्तराधिकारी को सब आवश्यक बातें बतला और सिखला दिया करता था। बहुधा उसका उपदेश यही हुआ करता था कि दीन दुखियों के साथ दया और उदारता का व्यवहार करना चाहिए, शान्ति-भंग न होने देना चाहिए और शिल्प-कला की यथा-साध्य उन्नति करते रहना चाहिए जिसमें सब लोग सुखपूर्वक अपना जीवन व्यतीत कर सकें। मुकदमों का फैसला वह स्वयं करता था और छोटे छोटे कामों के लिये नायब तथा दूसरे कर्म्मचारी नियुक्त करता था। जब वह अपने घर या शहर से बाहर निकलता था तब उसके साथ बहुत से लोगों की भीड़ चलती थी। वह बहुधा अपने नायबों और दूसरे अधीनस्थ छोटे छोटे सरदारों के घर जाता था, वहाँ दरबार या कचहरी करता था और रात के समय लोगों के साथ बैठकर सर्वसाधारण के हित की बातों पर विचार किया करता था। सरदार लोग परस्पर एक दूसरे को भोज, नाच या शिकार आदि का निमंत्रण दिया करते थे। साधारण प्रजा मिल कर अपने सरदार के खेत जोतती थी और उसकी दूसरी आवश्यकताओं की पूर्त्ति करती थी। उनके अधीनस्थ छोटे सरदारों या कर्म्मचारियों के सब काम भी इसी प्रकार हुआ करते थे। सरदार के बाद उससे छोटा अधिकारी उसका नायब हुआ करता था जो उसका प्रतिनिधि समझा जाता था। प्रत्येक नायब के हाथ में सदा एक छोटा पर मोटा डंडा रहता था और यही मानों उसकी पहचान थी। अधीनस्थ सारे देश का प्रबन्ध वही करता था और भिन्न भिन्न प्रान्तों के छोटे छोटे अफसरों और कर्म्मचारियों का वही प्रधान होता था। सब लोगों को वही इस बात की सूचना दिया करता था कि सरदार को आज मछली चाहिए, आज चिड़ियाँ चाहिए, कल गेहूँ और शहद चाहिए, परसों नमक और कपड़ा चाहिए, आदि आदि। उसके आज्ञानुसार लोग सब चीजें सरदार के यहाँ पहुँचा दिया करते थे। सरदार का सारा आफिस उसी नायब के मकान पर हुआ करता था।

सरदार के उपरान्त दूसरा मुख्य पद सेनापति का था। सरदारी तो पैतृक होती थी पर सेनापति होने का अधिकार सब लोगों को था। सेनापति तीन वर्ष के लिये चुना जाता था और जब तक वह अपने पद पर रहता था तब तक उसे सब लोगों से अलग रहना और दृढ़तापूर्वक ब्रह्मचर्य्य का पालन करना पड़ता था।

प्रत्येक गाँव में एक अलग अधिकारी हुआ करता था जो अपने गाँव की प्रजा के सब छोटे बड़े कामों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का प्रबन्ध करता था, उसके पास एक बड़ा ढोल रहता था। जब कभी कहीं नाच या लोगों का जमावड़ा होने को होता, तब वह ढोल बजा कर लोगों को उसकी सूचना देता और उन्हें आने के लिये निमंत्रित करता था।

मय लोगों में उत्तराधिकार के नियम भी बहुत अच्छे थे जब कोई राजा या सरदार मर जाता तब उसका सब से बड़ा लड़का उसके पद पर अभिषिक्त होता था। मृत राजा या सरदार के अन्य छोटे लड़कों का भी राजा या सरदार की तरह ही आदर होता था। यदि सब से बड़ा पुत्र राजपद या सरदारी के अयोग्य होता तो राजा या सरदार स्वयं बतला देता कि अमुक लड़के को मेरे उपरांत मेरा स्थान दिया जाय। यदि उसका और कोई लड़का न होता अथवा प्रस्तुत सभी लड़के अयोग्य होते तो वह किसी दूसरे व्यक्ति को भी अपना पद दे सकता था। तात्पर्य्य यह कि राजपद या सरदारी के लिये योग्यता का ही विशेष ध्यान रखा जाता था। यदि लड़के बहुत ही छोटे होते तो कोई निकटस्थ सम्बन्धी उनका अभिभावक या रक्षक नियत कर दिया जाता था। माताओं का सन्तान पर कोई अधिकार नहीं होता था; पर यदि अभिभावक चाहता तो पालन पोषण के लिये बालकों को वह उनकी माता के सपुर्द कर सकता था। अभिभावक यदि मृत व्यक्ति का भाई और बालकों का चाचा होता तो वह बालकों को उनकी माता से ले लेता था। बालकों के सयाने हो जाने पर अभिभावक सारी सम्पत्ति उनके सपुर्द कर देते थे और यदि वे ऐसा न करते तो बहुत ही निन्दनीय और नीच समझे जाते थे और उनके कारण लोगों में बहुत असन्तोष फैलता था। यदि सरदार या राजा के मरने के समय उसके उत्तराधिकारी वयस्क न होते और उसके छोटे भाई होते तो उनमें से सब से बड़ा या योग्य ही राजपद या सरदारी पाता था; और उसके छोटे बच्चों के अभिभावक सदा उनके साथ रह कर राज्य-सम्बन्धी या सरदारी की सब बातें बतलाया करते थे। वयस्क हो जाने पर भी उन बालकों को सदा अपने चाचा के अधीन रहना पड़ता था। यदि मृत व्यक्ति का कोई छोटा भाई न होता तो पुरोहित तथा नगर या जाति के प्रधान लोग उसके स्थान पर किसी योग्य व्यक्ति को चुन लेते थे। पर उत्तराधिकार के इन नियमों में इस समय बहुत अधिक परिवर्त्तन हो गया है।

पुरोहितों या धर्म्माधिकारियों का पद भी पैतृक ही हुआ करता था। राज्य के भिन्न भिन्न कार्य्य करने के लिये जो बड़े बड़े कर्म्मचारी होते थे, उनका पद भी वंशानुक्रमिक ही होता था। यदि कोई बड़ा कर्म्मचारी मर जाता और उसका कोई उत्तराधिकारी न होता तो उसके स्थान पर राजवंश का कोई योग्य पुरुष नियुक्त किया जाता था। राजवंश के छोटे छोटे बालकों की शिक्षा-दीक्षा आदि का प्रबन्ध पुरोहित या धर्म्माधिकारी ही करते थे और उन्हीं के साथ साथ अपने बालकों को भी शिक्षा देते थे। वे उन्हें गणित, खेल कूद, व्यायाम, आचार-व्यवहार, पूजन, शकुन-विचार, एक प्रकार के ज्योतिष, चिकित्सा, इतिहास, लिखने पढ़ने और शिल्प-कला आदि की बहुत अच्छी शिक्षा दिया करते थे। वंश की मर्य्यादा और वंशवृक्ष की बहुत अच्छी तरह रक्षा की जाती थी। उच्च और प्राचीन कुल के लोगों का विशेष आदर होता था और उनके बालकों की शिक्षा-दीक्षा आदि का बहुत उत्तम प्रबन्ध होता था।

मय-देश के दक्षिण प्रान्त के सम्बन्ध में अभी तक लोगों को बहुत ही कम बातें मालूम हुई हैं। तो भी जो बातें मालूम हुई हैं उनसे पता चलता है कि दक्षिण में भी उत्तर की भाँति शिल्प और कला आदि की बहुत अधिक उन्नति हुई थी और उनकी सभ्यता तथा शिक्षा भी कुछ कम नहीं थी। दक्षिण में टीकुल, नरंजा, पेलेंक और कोपन नाम के चार नगर बहुत बड़े और प्रधान थे और ये सभी नगर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो सा वर्ष से अधिक तक आबाद रहे। नरंजो को छोड़ कर शेष तीनों नगरों का विस्तार भी बहुत था और वहाँ के निवासियों तथा शासकों का आसपास के प्रान्तों पर प्रभुत्व और अधिकार भी बहुत था। देश में प्रायः यही तीनों प्रधान नगर और केन्द्र थे। टीकुल नगर देश के उत्तर में, पेलेंक पश्चिम में तथा कोपन दक्षिण में था। इस प्रकार देश का एक एक भाग एक एक नगर की अधीनता में आ गया था। शासन कार्य्य के लिये देश बहुत से छोटे छोटे भागों में बँटा हुआ था। दक्षिण में जो पुराने चित्र आदि मिले हैं उनसे सिद्ध होता है कि वहाँ के निवासी उत्तरवालों की अपेक्षा अधिक सहिष्णु और शान्तिप्रिय थे और बहुधा लड़ाई झगड़े से दूर रहते थे। प्रधान पुरोहित या धर्माधिकारी ही देश का प्रधन शासक भी होता था और सब राजसूत्र उसी के हाथ में रहते थे। यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि यह पद वंशानुक्रमिक होता था अथवा इसके लिये समय समय पर चुनाव होता था। पर तौ भी यही अनुमान होता है कि दक्षिण में भी प्रायः यही नियम होंगे जो उत्तर में थे। दोनों की सभ्यता और शिक्षा का मूल प्रायः एक ही था; हाँ, उत्तरवालों ने कुछ अधिक उन्नति कर ली थी। कुछ प्रमाण इस बात के भी मिले हैं कि दक्षिण में देश का प्रधान अधिकारी एक "हो तुन" (१२०० दिन) के लिये चुना जाता था और यह चुनाव एक निश्चित वंश के लोगों में से ही हुआ करता था।

धर्म्म और देवता आदि।

प्राचीन मय लोग मूर्त्तिपूजक थे और बहुत से देवताओं की पूजा करते थे। वे प्रायः एक दर्जन बड़े और प्रधान तथा बहुत से छोटे देवताओं को मानते थे। उनके सब से प्रधान देवता का नाम "इजम्ना" था जो सब देवताओं का पिता तथा मनुष्य जाति को उत्पन्न करनेवाला माना जाता था। वह पूर्व दिशा, उदय होते हुए सूर्य्य, प्रकाश, जीवन तथा ज्ञान का देवता माना जाता था। वह आदिपुरुष, मय-सभ्यता का जन्म-दाता और लेखन तथा पठन आदि का आविष्कर्त्ता भी माना जाता था। उसकी जो मूर्त्ति बनाई जाती थी उसमें वह बहुत वृद्ध और टूटे हुए दाँतों के कारण पोपले मुँहवाला दिखलाया जाता था।

पश्चिम दिशा के सर्वप्रधान देवता का नाम कुकुलकन था। इसके विषय में यह प्रसिद्ध है कि यह युकेटन में पश्चिम दिशा से आया था और शिशन इजा में ठहरा था। वहीं बहुत दिनों तक इसने राज्य किया था और एक बहुत बड़ा मन्दिर बनवाया था। मयपन नगर उसी का स्थापित किया हुआ माना जाता है। देश में शान्ति स्थापित कर के तथा उसे सभ्य और संपन्न बना के यह देवता फिर उसी मार्ग से चला गया जिस मार्ग से आया था। चलते समय यह पश्चिमी तट पर चकुनपुटुन नगर में ठहरा था और वहाँ इसने अपने स्मृति-चिह्न स्वरूप एक बहुत बड़ा मन्दिर बनाया था। उसने प्रजा का बहुत अधिक उपकार किया था इसी लिये लोग उसे देवता के समान पूजने लगे थे। वह बड़े बड़े नगरों का संस्थापक और राजनियमों का बनानेवाला माना जाता है। उसके जीवन के सम्बन्ध में जितनी मानुषी बातें प्रसिद्ध हैं उनसे यही अनुमान होता है कि वह वास्तव में कोई बहुत बड़ा और प्रसिद्ध ऐतिहासिक पुरुष था; उसने राज्य और शासन सम्बन्धी बहुत से अच्छे अच्छे नियम बनाए थे और अनेक नगर बसाए थे। उसी को लोग देवता के तुल्य मानने लने और अंत में उसकी मूर्त्तियाँ बना कर पूजी जाने लगीं। यह भी अनुमान किया जाता है कि जब चकुनपुटुन नगर नष्ट हो गया तब उसी ने शिशनइजा नगर फिर से बसाया था। इस देवता के जो चित्र या मूर्त्तियाँ हैं उनमें उसके दो दाँत हैं, एक तो मुँह में आगे निकला हुआ और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरा मुँह के पिछले भाग में। इसके अतिरिक्त उसकी नाक भी बहुत चपटी और लम्बी होती है।

"अहपुस" नामक एक देवता से मय लोग बहुत ही डरते और घृणा करते थे। अहपुस को मय लोगों का यमराज ही समझिए। बल्कि यमराज की अपेक्षा उसमें विशेषता यह है कि वह केवल मृत्यु का ही अधिष्ठाता देवता नहीं है बल्कि अनेक प्रकार के दोषों और दुष्कृत्यों का भी वही देवता है। वह मृत्यु या यमराज के रूप में ही पूजा जाता है। मूर्त्तियों या चित्रों में उसके साथ अनेक और चित्र या मूर्त्तियाँ भी होती हैं जिनमें फाँसी लगा कर आत्म-हत्या करने, प्रसव-काल में ही बालक के मर जाने, अथवा अपराधी के सिर काट लेने आदि के दृश्य होते हैं। मूर्त्तियों आदि में उसका सिर एक मांस-रहित खोपड़ी मात्र होता है और कहीं कहीं उसका शरीर भी मांस रहित ही दिखलाया जाता है जिसमें उसकी हड्डियाँ-पसलियाँ साफ नजर आती हैं। उसकी किसी किसी मूर्त्ति में शरीर पर काले धब्बे भी मिलते हैं। उसकी सभी मूर्त्तियों के गले में परों का एक पट्टा पहनाया रहता है जिसमें छोटी छोटी घन्टियाँ लटकती रहती हैं। सिर, बाँहों और पैरों में भी गहनों की तरह इसी प्रकार की घन्टियाँ पहनाई जाती हैं। मृत्यु का बोध कराने के लिये उसकी आँखें सदा बन्द रहती हैं।

अहपुस या मृत्यु-देवता से मिलता जुलता एक युद्ध-देवता भी है जिसकी कल्पना अहपुस की अपेक्षा और भी भीषण है। उस के चेहरे पर एक काला सीधा या बेड़ा दाग होता है जिसे कुछ लोग घाव का निशान मानते हैं। इसकी मूर्त्ति बहुधा मृत्यु-देवता के साथ ही बनती है। मूर्त्तियों या चित्रों में दोनों के आगे एक मृत शरीर पड़ा रहता है। एक और युद्ध-देवता है जो "एक अहाऊ" या कृष्ण सेनानी कहलाता है। इसके हाथ में या तो भाला रहता है और या कुल्हाड़ी। प्रवाद है कि वह बहुत ही वीर और भयंकर सैनिक था और उसके साथ उसी की तरह के सात और सैनिक रहा करते थे। वह स्वयं उन सातों का सरदार था। उसके सारे शरीर का रंग काला और होंठ बहुत मोटा तथा आगे की ओर लटकता हुआ माना जाता है। उसकी दाहिनी आँख पर दो टेढ़ी लकीरें भी होती हैं। चित्र लिपि में उसके नाम के स्थान पर एक काली आँख बना देते हैं।

मृत्यु और युद्ध आदि के भीषण देवताओं के विरुद्ध मय-लोगों ने कई अच्छे और सुखदायक देवताओं की भी कल्पना की थी। उनमें से प्रधान "यूमफाक्स" या धान्य-देवता है। यह देवता सारी पृथ्वी के धन और धान्य का अधिष्ठाता माना जाता था। अधिकांश चित्रों या मूर्त्तियों में वह खेती बारी के तरह तरह के काम करता हुआ ही मिलता है। उसके सिर पर पत्तियों और अनाज की बालों आदि का मुकुट बना रहता है। चित्र-लिपि में उसके नाम के स्थान पर पत्तियों और बालों से घिरा हुआ एक सिर सा बना देते हैं।

"जेंमन एक" या उत्तरी तारा नामक एक और प्रधान देवता है जो यात्रियों का रक्षक तथा मार्ग-दर्शक और शान्ति तथा सम्पन्नता का अधिष्ठाता माना जाता है। इसके अतिरिक्त उनमें और भी अनेक देवियों की कल्पना है जिनमें से कोई वर्षा की, कोई प्रसव की, कोई ओषधियों की, कोई शिकार की, कोई फाँसी की और कोई चित्र-कला आदि की अधिष्ठात्री मानी जाती है। इनके अतिरिक्त जीवन, शक्ति, अकाल आदि के और भी अनेक देवता हैं। तात्पर्य्य यह कि उनकी देव-संख्या बहुत अधिक है और उनमें सभी तरह के देवता सम्मिलित हैं।

अन्यान्य विश्वास।

प्राचीन मय-लोग पृथ्वी को एक घन पदार्थ समझते थे और उनका विश्वास था कि चारों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिशाओं के चार खम्भों पर आसमान का चन्दोआ तना हुआ है। इसी में से जीवन वृक्ष की उत्पत्ति होती है जिसमें अविनाशी आत्मा रूपी फूल लगते हैं। उसे सींचने के लिये ऊपर आकाश में बादल हैं; उन्हीं बादलों के जल पर सारे संसार का जीवन और अभ्युदय निर्भर है। मुसलमानों और ईसाइयों की तरह उन लोगों का यह भी विश्वास था कि सदा ज्ञान और अज्ञान, प्रकाश तथा अन्धकार में द्वन्द्व-युद्ध होता रहता है। एक ओर सम्पन्नता, शान्ति और जीवन के देवता रहते हैं और दूसरी ओर दरिद्रता, युद्ध और विनाश के। और मानव-समाज पर अधिकार प्राप्त करने के लिये दोनों पक्षों में भयंकर युद्ध होता रहता है। ज्ञान तथा अज्ञान का यह भय चित्रों और मूर्त्तियों आदि में भी दिखलाया जाता है। जीवन का देवता तो एक स्थान पर सुन्दर वृक्ष लगाता है और मृत्यु-देवता उसे उखाड़ कर फेंक देता है। एक देवता लोगों को अन्न आदि देता है और दूसरा बिलकुल खाली बरतन आगे बढ़ाता है जो अकाल का चिह्न है। एक देवता चीजें बनाता है, दूसरा उसे तोड़ता है। यह विरोध और झगड़ा कभी खतम होनेवाला नहीं है, यह सदा चलता रहेगा।

प्राचीन मय लोगों का यह भी विश्वास था कि आत्मा नित्य और अविनाशी है। हिन्दुओं की तरह ही वे लोग परलोक भी मानते थे। वे समझते थे कि मनुष्य इस पृथ्वी पर जैसे कर्म्म करता है, परलोक में उसे वैसे ही फल मिलते हैं। सात्त्विक और सज्जन लोग स्वर्ग में जाते हैं जहाँ उत्तम उत्तम खाद्य पदार्थों की अनन्त राशि लगी रहती है और जहाँ किसी प्रकार के दुःख या कष्ट आदि का नाम भी नहीं है। दुष्ट और दुर्जन लोग नरक में भेजे जाते हैं जिसे "मितनल" कहते हैं। वहाँ हनहाऊ नामक एक भयंकर राक्षस दूसरे राक्षसों के साथ शासन करता है। वहाँ कठिन शीत पड़ता है और खाने को कुछ भी नहीं मिलता। दुष्टों और दुर्जनों को सदा वहीं पड़े पड़े कष्ट भोगना पड़ता है।

मय-जाति में देवताओं के अनेक प्रकार के पूजनों आदि की बहुत ही भरमार थी। अच्छे देवताओं को अपने ऊपर प्रसन्न और कृपालु रखने तथा दुष्ट देवताओं के कोप से रक्षित रहने के लिये सदा कुछ न कुछ पूजन अर्चन करते रहना बहुत ही आवश्यक समझा जाता था। उन लोगों के सभी पूजनों तथा दूसरी धार्म्मिक क्रियाओं के केवल तीन ही उद्देश्य हुआ करते थे,—आरोग्यता, जीवन और जीविका-निर्वाह के साधन। मय लोग जितने धार्म्मिक कृत्य करते थे, उन सब में वे पहले वहाँ से दुष्ट आत्माओं को हटाने का प्रयत्न करते थे। कभी तो यह कार्य्य केवल स्तोत्रों और प्रार्थनाओं आदि से ही किया जाता था और कभी इसके लिये चढ़ावे और बलिदान आदि की भी जरूरत होती थी।

मय लोगों के धार्मिक उत्सव आदि संख्या में बहुत अधिक थे। जीवन-काल में पड़नेवाली सभी आवश्यकताओं और कठिनाइयों आदि के सम्बन्ध में पृथक् पृथक् पूजन या उत्सव हुआ करता था। साधारण से साधारण देवता की भी वर्ष में एक बार विशेष रूप से पूजा होती थी। अनेक बड़े बड़े देवता तो साल में कई कई बार पूजे जाते थे। भिन्न भिन्न ऋतुओं में उन देवताओं के जो पूजन होते थे वे अलग। एक वर्ष की समाप्ति और दूसरे वर्ष के आरम्भ होने पर अनेक पूजन और उत्सव होते थे। उस अवसर पर मानों मय लोगों की दीवाली होती थी। सारे घर की खूब सफाई होती थी और पुराने कपड़ों और बरतनों आदि के स्थान पर नए कपड़े और बरतन आदि रखे जाते थे। शिकारी, मछुए, खेतिहर, बढ़ई, कुम्हार, संगतराश, ठठेरे सभी अपने अपने व्यवसाय-देवताओं के अलग अलग और बड़े समारोह से पूजन करते थे, उत्सव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनाते थे और बड़े बड़े भोज देते थे। नामकरण, विवाह और यात्रा आदि के समय भी अनेक धार्म्मिक कृत्य हुआ करते थे। अकाल, अनावृष्टि, अतिवृष्टि, विजय, पराजय आदि विशेष अवसरों पर होनेवाले विशेष धार्म्मिक कृत्य इनसे भिन्न थे। ऐसे अवसरों पर वे लोग बहुधा मनुष्य तक को बलिदान देते थे।

पुरोहित और धर्म्माधिकारी।

जिन लोगों में इतने अधिक धार्म्मिक कृत्य और पूजन आदि होते हों उनमें बहुत अधिक पुरोहितों और धर्म्माधिकारियों आदि का होना बहुत ही स्वाभाविक और अनिवार्य्य है। सारे देश में एक प्रधान धर्म्माधिकारी होता था जिसके अधिकार बहुत विस्तृत होते थे। यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से देश के शासन आदि से उसका कोई सम्बन्ध न होता था तथापि उसका दबाव इतना अधिक होता था कि बड़े बड़े राजा और सरदार उसकी सम्मति के अनुसार कार्य्य करते थे। प्रायः बड़े बड़े कामों में उसी की बात मानी जाती थी। बड़े बड़े प्रश्नों के सम्बन्ध में देवताओं की सम्मति उसी से पूछी जाती थी और वही अनेक प्रकार के उत्तर देता था। इसी कारण उसका प्रभुत्व और अधिकार बहुत अधिक था। नित्य के साधारण कार्य्यों आदि के लिये पुरोहित या धर्म्माचार्य्य की नियुक्ति वही करता था। जो लोग पुरोहिती का काम करना चाहते थे, वह पहले उनकी परीक्षा लेता था और जो लोग परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाते थे उन्हें उपयुक्त स्थानों पर नियुक्त करता था। उनके कर्त्तव्य और कार्य्य आदि भी वही उन्हें बतलाता था। बहुत बड़े बड़े भोजों या महत्त्वपूर्ण सार्वजनिक कार्य्यों के समय ही वह स्वयं काम करता था, साधारण अवसरों पर वह अपने अधीनस्थ लोगों से ही काम लेता था। उसके निर्वाह के लिये बड़े बड़े राजे और सरदार बहुत कुछ द्रव्य आदि उसे भेंट चढ़ाते थे और सारे देश के छोटे छोटे पुरोहित उसे कुछ मासिक वृत्ति दिया करते थे।

पुरोहिती का काम पुरुष भी करते थे और स्त्रियाँ भी। भिन्न भिन्न कार्य्यों के सम्पादन के लिये पुरोहितों के भिन्न भिन्न पद हुआ करते थे। पुरोहिती का एक पद चिलन कहलाता था जो बहुत ही प्रधान माना जाता था। चिलन को जब घर से बाहर निकलना होता था तब वह आदमियों के कन्धों पर सवार हो कर चलता था। वह लोगों को विज्ञान आदि की शिक्षा देता था, उत्सव और पर्व आदि के दिन नियत करता था, रोगियों को चंगा करता था, देवताओं के आगे बलिदान और भेंट आदि चढ़ाता था और जो लोग किसी विषय में देवताओं से प्रार्थना करते अथवा उनकी सम्मति जानना चाहते थे, उन्हें देवताओं की ओर से उत्तर देता था। एक और पुरोहित होता था जो चक कहलाता था। वर्षा कराना उसी का काम समझा जाता था। इसी प्रकार और भी अनेक पुरोहित हुआ करते थे जो हवा चलाते थे, रोगियों को सुलाते थे अथवा स्वर्गीय आत्माओं से भेंट या बातचीत कराते थे। सब से छोटे पुरोहित का काम बलिदान चढ़ाए हुए पशु की खाल खींचना और उसका मांस निकालना होता था। प्रत्येक उपजाति या समाज में प्रति वर्ष एक मनुष्य चुना जाता था जो सब कार्य्यों में पुरोहित की सहायता करता था। उसे गाँव के बड़े बूढ़े लोग चुना करते थे। जो मनुष्य एक बार चुना जा कर एक वर्ष तक काम कर चुकता था, वह फिर कभी चुना नहीं जा सकता था। मुख्य मुख्य अवसरों पर वह मनुष्य पुरोहितों की सहायता करता था और गौण अवसरों पर वह उनके प्रतिनिधि-स्वरूप कार्य्य करता था।

प्राचीन मय लोगों के सम्बन्ध में सब से मुख्य और ध्यान रखने योग्य बात यह है कि हिन्दुओं की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाँति उनके जीवन के सारे अंग धर्म्म-मय थे। धार्म्मिक कृत्यों और उत्सवों आदि में वे जितना समय और धन लगाते थे उतना समय और धन, प्राचीन आर्य्यों को छोड़ कर, कदाचित् ही और किसी जाति के लोगों ने लगाया हो। तात्पर्य्य यह कि मय-सभ्यता का प्रधान आधार-स्तम्भ धर्म्म ही था।

पाश्चात्य तर्क शास्त्र ।

[लेखक—श्रीयुक्त बा० हरिहरनाथ बी० ए०]

(पृष्ठ ३२६ से आगे)

न्याय-नियम (क्रमागत) ।

(४) कोई पद जो पूर्वावयवों में कहीं विस्तृत न हो वह उपसंहार में कदापि विस्तृत न होना चाहिए।

[इस नियम के भङ्ग को 'अनुचित-प्रक्रिया' नामक तर्काभास कहते हैं। इस नियम की आवश्यकता स्पष्ट है। जब आपने कहा कि केवल इन्हीं चार मनुष्यों को रोग हुआ है तब आप फिर यह कैसे कहेंगे कि नहीं सब को रोग हुआ है। उपसंहार तो पूर्वावयव ही से निकलता है। फिर १) में पाँच चवन्नियाँ या नौ दुअन्नियाँ कैसे निकल सकेंगी ?]

(५) पूर्वावयवों में से उपनय वा उदाहरण को अवश्य विधायक प्रतिज्ञा होना चाहिए।

[क्योंकि यदि ये दोनों निषेधात्मक होंगी अर्थात् जब उपनय और उदाहरण दोनों ही में निषेध रहेगा तब मध्यम पद पक्ष और साध्य में कोई सम्बन्ध नहीं होगा और जब सम्बन्ध नहीं होगा तब दोनों से उपसंहार कैसे निकलेगा ? अतएव दोनों पूर्वावयवों में से एक को अवश्य विधायक होना चाहिए।]

(६) यदि कोई पूर्वावयव निषेधक हो तो उपसंहार भी निषेधक होगा और उपसंहार तभी निषेधक होगा जब कोई पूर्वावयव निषेधक हो।

[क्योंकि यदि एक पूर्वावयव निषेधक हो और दूसरा विधायक तो विधायक के दो पदों में (जिन में से एक मध्यम पद होगा) सम्बन्ध रहेगा परन्तु निषेधक में ऐसे सम्बन्ध का निषेध रहेगा। अर्थात् मध्यम पद के विषय में एक पूर्वावयव में सम्बन्ध का निषेध और दूसरे में विधायकता होगी इसलिये पक्ष और साध्य के सम्बन्ध (जो उपसंहार में होता है) में विधायकता कैसे होगी। ५ वें और ६ ठे नियम के उदाहरण सामने रखने से ये बातें स्पष्ट हो जायँगी।]

ऊपर के नियमों में निम्नलिखित दो नियम अंतर्भूत हैं इसलिये उनको भी न्याय नियम ही समझना चाहिए।

(क) यदि दोनों पूर्वावयव व्याप्य प्रतिज्ञा हों तो कोई उपसंहार निकालना सम्भव नहीं है।

[ऐसी अवस्था में तीन रूप हो सकते हैं,—(१)—दोनों पूर्वावयवों का निषेधक होना (२) दोनों का विधायक होना तथा (३) एक का निषेधक और दूसरे का विधायक होना। पहले के लिये ५वाँ नियम देखो। दूसरी अवस्था उस समय होगी जब दोनों पूर्वावयव आ प्रतिज्ञा होंगे और उनमें का कोई पद विस्तृत न होगा अर्थात् मध्यम पद भी विस्तृत न होगा। नहीं तो अविस्तृत लिङ्ग का दोष आ जायगा (नियम ३ देखो)। तीसरी अवस्था तब होगी जब एक विधायक और दूसरी निषेधक प्रतिज्ञा होगी; उस दशा में उनमें केवल एक पद विस्तृत होगा। अब यह देखना है कि उक्त पूर्वावयवों का उपसंहार निषेधक होगा (देखो नियम ६) अतएव उसका उद्देश्य विस्तृत रहेगा; और इसके अतिरिक्त शुद्ध न्याय के लिये मध्यम का भी विस्तृत होना आवश्यक है। (देखो नियम ३) परन्तु ऊपर कहा गया है कि केवल एक ही पद विस्तृत हो सकता है अतएव ऐसे पूर्वावयवों से शुद्ध न्याय नहीं हो सकता।]

२—यदि एक पूर्वावयव व्याप्य हो तो उपसंहार भी व्याप्य होगा।

[इसमें भी तीन अवस्थाएं हो सकती हैं:—(१) दोनों पूर्वावयवों का निषेधक होना (२) दोनों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का विधायक होना तथा (३) एक का निषेधक और दूसरे का विधायक होना। पहली अवस्था के लिये नियम ५ देखो। दूसरी अवस्था में (जिसमें एक आ और दूसरी ए प्रतिज्ञा होगी) केवल एक ही पद विस्तृत होगा। अब यदि उपसंहार व्यापक होगा तो साध्य विस्तृत होगा और उपनय को भी विस्तृत होना पड़ेगा। (नियम ४ देखो) और मध्यम पद को विस्तृत रहना चाहिए (नियम ३)। परन्तु ऊपर कहा गया है कि ऐसे पूर्वावयवों में एक ही पद विस्तृत होता है अतएव उपसंहार का व्याप्य प्रतिज्ञा होना आवश्यक है। और तीसरी अवस्था में जब एक पूर्वावयव निषेधक हो तो उपसंहार अवश्य निषेधक होगा। (नियम ६) अब यदि उपर्युक्त नियम के विरुद्ध उपसंहार को व्यापक रखेंगे तो वह ई प्रतिज्ञा के अन्तगर्त आ जायगा अर्थात् उपसंहार का उद्देश्य और विधेय दोनों विस्तृत होंगे। इसके अतिरिक्त मध्यम पद का भी विस्तृत होना आवश्यक है। (नियम ३ देखो) तो सब मिलाकर तीन पद विस्तृत हुए परन्तु एक विधायक और एक निषेधक (जिसमें एक व्याप्ति प्रतिज्ञा है) प्रतिज्ञा में मिल कर केवल दो पद विस्तृत होते हैं इसलिये उपसंहार का व्याप्ति प्रतिज्ञा होना आवश्यक है।]

(१६)

सापेक्ष तथा वैकल्पित न्याय।

सापेक्ष न्याय उसको कहते हैं जो सापेक्ष प्रतिज्ञाओं से बना हो।

उदाहरण:—

जब जब क, ख होता है तब तब ग, घ होता है,
और ,, ,, च, छ ,, ,, ,, ,, क, ख ,, ,,
अतएव ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, ग, घ, ,, ,,

वैकल्पिक न्याय उसको कहते हैं जिसमें अनुगम वैकल्पिक प्रतिज्ञा, उपनय निरपेक्ष प्रतिज्ञा और उपसंहार निरपेक्ष वा वैकल्पिक हो। [यदि अनुगम में दो विकल्प होते हों तो उपसंहार निरपेक्ष प्रतिज्ञा और यदि अनुगम में दो से अधिक विकल्प होते हों तो उपसंहार वैकल्पिक प्रतिज्ञा होता है।]

उदाहरण:—(१) क, ख वा ग है;
पर क, ख नहीं है,
अतः क, ग है
(२) क, ग वा घ है,
पर क, ख नहीं है
अतः क, ग वा घ है।

(१७)

उभयतः पाश।

यह एक विचित्र प्रकार का न्याय है। इसके अनुगम में एक वा दो एकीभूत अभ्युपगत प्रतिज्ञाएं होती हैं और इसके उपनय में वैकल्पिक प्रतिज्ञा होती है।

उदाहरण:—

यदि क, ख है तो ग, घ होता है और यदि च, छ है तो ग, घ होता है (अनुगम)। पर या तो क, ख है या च, छ है (उपनय), अतः ग, घ है (उपसंहार)।

(शेष आगे।)

—:०:—

चौपाए।

(गतांक से आगे।)

मनुष्य के साथ रहने के कारण पशुओं के केवल भोजन और आकृति आदि में ही परिवर्त्तन नहीं हो जाता बल्कि उनका स्वभाव आदि भी बहुत कुछ बदल जाता है। जिन स्थानों पर मनुष्य का अभी तक बहुत ही कम प्रवेश हुआ है वहाँ के बहुत से जानवरों में बहुत अच्छा सामाजिक संगठन पाया जाता है। मनुष्य तो परस्पर एक दूसरे पर बहुत कुछ अत्याचार करते हैं, पर उन जानवरों में परस्पर उपकारिता, सहकारिता और मित्रता आदि का बहुत अच्छा सम्बन्ध होता है। ऊद-बिलाव की तरह का एक जानवर होता है जिसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जल-बिलाव कह सकते हैं। यह अमेरिका आदि देशों में बहुत ही एकान्त स्थान में जलाशयों के किनारे झुण्डों में रहता है। अपने रहने के लिये ये जानवर मिल कर बहुत अच्छे अच्छे मकान बनाते हैं। सुयोग्य नागरिकों की तरह इनमें भी शासन-प्रबन्ध आदि पाया जाता है। जिन देशों में ये जानवर पाए जाते हैं उन देशों के निवासी मनुष्यों के बनाए हुए मकानों में उतनी सफाई और सुविधा नहीं होती जितनी इन जानवरों के बनाए हुए घरों में होती है। पर जब वहाँ मनुष्यों के चरण पहुँचते हैं तब जल-बिलाव बहुत ही भयभीत हो जाते हैं, उनका सामाजिक संगठन छिन्न भिन्न हो जाता है, झुण्ड टूट जाता है, हर एक जानवर अलग अलग अपनी रक्षा के लिये स्थान ढूँढ़ता फिरता है और केवल अपने रहने के लिये ही किसी सुरक्षित स्थान में घर बनाने लगता है।

पशुओं पर मनुष्यों का जो प्रभाव पड़ता है वह तो प्रधान ही है; पर उनकी आकृति और प्रकृति पर ऋतु आदि का भी बहुत बड़ा परिणाम होता है। भिन्न भिन्न देशों और स्थितियों आदि में रहने के कारण स्वयं मनुष्यों में ही बहुत कुछ अंतर दिखाई पड़ता है तब फिर उससे निम्न श्रेणी के जीवों में यह अंतर क्यों न पड़े? पशुओं आदि में देश, जल-वायु और ऋतु आदि के कारण जो अंतर पड़ता है वह सहज में ही मालूम हो जाता है। एक तो पशु आदि प्रायः पृथ्वी पर, उसके तल से बहुत ही समीप रहते हैं, दूसरे सूर्य्य के ताप आदि से बचने के लिये उनके पास कोई साधन नहीं होता इसलिये स्थान और जल-वायु के कारण उनमें और भी जल्दी परिवर्त्तन हो जाता है। लेकिन सरसरी तौर पर यह कहा जा सकता है कि जो देश जितना ही ठंढ़ा होगा वहाँ के जानवरों के रोएं भी उतने ही बड़े और गरम होंगे। प्रकृति ने बड़ी ही बुद्धिमत्ता से ऐसा प्रबन्ध किया है कि हर एक जानवर के रोएं आदि उसके निवास-स्थान के अनुकूल ही हों। एक ही जाति के भिन्न भिन्न देशों में रहनेवाले जानवरों में भी यह अंतर पाया जाता है। गरम देशों में रहनेवाले भेड़ियों और लोमड़ियों के रोएं तो छोटे होते हैं पर ध्रुव के निकट के बहुत ही ठंढे देशों में रहनेवाले इन्हीं जानवरों के रोएं अधिक लंबे होते हैं। इंगलैण्ड बहुत ही ठंढा देश है और फलतः वहाँ के कुत्तों के रोएं बहुत गरम होते हैं। यदि उन्हीं कुत्तों को गिनी या किसी दूसरे बहुत गरम देश में ले जाइए तो बहुत ही जल्दी उनके बड़े और भारी रोएं झड़ जायँगे और उनके स्थान पर छोटे और हलके रोएं निकल आवेंगे जो उन गरम देशों के लिये उपयुक्त और अनकूल होंगे। बहुत ही ठंढे देशों में पाए जानेवाले जल-बिलाव आदि पशु अपने रोएं की गरमाहट और मुलायमत के लिये बहुत ही प्रसिद्ध होते हैं; पर हाथी और गैंड़े आदि पशुओं के शरीर पर, जो गरम देशों में रहते हैं, बाल बिलकुल होते ही नहीं। पर मनुष्य एक ऐसा विलक्षण जंतु है जो अपने आवश्यकतानुसार इन प्राकृतिक सिद्धान्तों में भी बहुत कुछ परिवर्त्तन कर देता है। एक ही देश के भिन्न भिन्न भागों में लोग भेड़ों पर अपने इच्छानुसार बड़े या छोटे रोएं उपजाते हैं और उनमें मनमाना परिवर्त्तन करते हैं। बहुत से गरम देशों के लोग भी अपने यहाँ की भेड़ों पर लंबे, मुलायम और गरम रोएं उत्पन्न कर लेते हैं।

पशुओं में उनकी आकृति और शारीरिक संगठन आदि के कारण जो भयंकरता होती है वह तो होती ही है, ऋतु और जल-वायु आदि का भी उनकी प्रकृति पर बहुत प्रभाव पड़ता है। बहुत ही गरम अथवा बहुत ही ठंढे देशों में रहनेवाले मनुष्य जिस प्रकार असभ्य, अज्ञानी और भीषण होते हैं उसी प्रकार उन देशों में रहनेवाले पशु भी भयंकर हुआ करते हैं। दोनों के स्वभाव आदि पर प्रकृति का समान रूप से प्रभाव पड़ता है। ध्रुव और विषु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वद्रेखा दोनों के आस-पास के प्रदेशों में रहनेवाले चौपाए बहुत ही भीषण होते हैं और पाले या सधाए नहीं जा सकते। उन प्रदेशों के पशुओं के स्वभाव की भीषणता मनुष्य भी कम नहीं कर सकता; बल्कि ऋतु आदि की विकटता के कारण दिन पर दिन उनकी भीषणता और भी बढ़ती ही जाती है। बहुत से लोगों ने ध्रुव अथवा विषुवद्रेखा प्रदेश के जानवरों को दूसरे स्थानों में ले जा कर पालना चाहा था, पर किसी को सफलता नहीं हुई। जब तक वे बच्चे रहते हैं तब तक तो बहुत ही सीधे और शान्त रहते हैं पर ज्यों ही वे बड़े होते हैं त्यों ही उनमें स्वाभाविक भीषणता आ जाती है और वे अपने मालिक या पालनेवाले पर ही आक्रमण करने लगते हैं। साधारणः यह भी कहा जा सकता है कि जिन देशों के मनुष्य असभ्य और जंगली होते हैं, उन देशों के मांसाहारी पशु भी बहुत ही भयंकर और भीषण होते हैं। इसका कारण भी बहुत ही स्पष्ट और प्राकृतिक है। जिन देशों के निवासी मनुष्य जितने ही दुर्बल और डरपोक होते हैं, उन देशों के पशु उतने ही सबल और साहसी होते हैं। जिन देशों के मनुष्य अपने स्वत्वों की रक्षा करने में जितने ही असमर्थ होते हैं उन देशों के पशुओं का आक्रमण भी उतना ही प्रबल होता है। इसी लिये ध्रुव और विषुवद्रेखा के आसपास के प्रदेशों के चौपाए बहुत ही भीषण और भयंकर होते हैं। जल-वायु आदि का प्रभाव मनुष्यों पर भी पड़ता है और पशुओं पर भी। अफ़्रिका के मनुष्य भी बड़े भयंकर होते हैं और जानवर भी बड़े ही भीषण। वहाँ के शेर और तेन्दुए भी उतने ही भयंकर होते हैं जितने वहाँ के मगर और साँप। पशुओं और मनुष्यों की यह भयंकरता वहाँ के बहुत ही गरम जल-वायु आदि के कारण ही होती है। बहुत अधिक गरमी में रहने के कारण उनकी भयंकरता इतनी बढ़ जाती है जिन पर अपनी शक्ति की सहायता से मनुष्य न तो विजय प्राप्त कर सकता है और न अपने छल-बल के कारण उन्हें नष्ट कर सकता है। वहाँ के अभागे निवासियों के लिये यही एक बहुत बड़ी बात है कि वहाँ के भयंकर जानवर अकेले ही रहते हैं; मनुष्यों पर आक्रमण करने के लिये वे झुंडों में रहना नहीं जानते। हर एक जानवर अपने ही बल पर शिकार करता है, उसे दूसरे सहायक की आवश्यकता नहीं होती।

एक ही जाति के जानवरों में जो अंतर पाया जाता है, वह बहुत कुछ खाद्य-पदार्थ के भेद के कारण भी होता है। यदि एक ही जाति के कुछ जानवर तराइयों में और कुछ पहाड़ के ऊपर रहते हों तो तराइयों में रहनेवाले जानवर डीलडौल में बड़े और पहाड़ों पर रहनेवाले छोटे होंगे। इसका कारण यह है कि तराइयों में रहनेवाले जानवरों को भोजन यथेष्ट मिलता है पर पहाड़ों पर रहनेवाले जानवरों को कम। इसी प्रकार गरम देशों में रहनेवाले जानवर ठंढे देशों में रहनेवाले जानवरों की अपेक्षा अधिक बड़े होते हैं क्योंकि गरम देशों में वनस्पति अधिक और पुष्ट होती है। भारतवर्ष के मैदानों में बैलों को बहुत अच्छा और अधिक चारा मिलता है इसलिये वे खूब हृष्टपुष्ट होते हैं। पर युरोप के आल्प्स पर्वत पर रहनेवाले बैल छोटे और दुर्बल होते हैं क्योंकि वहाँ उन्हें यथेष्ट चारा नहीं मिलता। अफ़्रीका के जंगलों के पौधों में पोषक द्रव्य बहुत अधिक होता है इसलिये वहाँ के जानवर भी बड़े और भयंकर होते हैं; पर अमेरिका में वैसे जानवर नहीं पाए जाते। हाँ एक बात अवश्य है। अमेरिका के चौपाए तो और स्थानों के चौपायों की अपेक्षा छोटे और दुर्बल होते हैं पर वहाँ के सीसृप या रेंगनेवाले जानवर और देशों के रेंगनेवाले जानवरों की अपेक्षा बड़े और अधिक होते हैं। अमेरिका में सब से बड़ा एक प्रकार का चौपाया होता है जो Tapir कहलाता है; पर अफ़्रीका या एशिया के हाथी के मुकाबले में वह बहुत ही छोटा होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एशिया और अफ्रिका के मांसाहारी जन्तु जितने भीषण, बलिष्ठ और साहसी होते हैं, अमेरिका के वही मांसाहारी जन्तु उतने भीषण बलिष्ठ और साहसी नहीं होते। अफ्रिका या एशिया के शेरों, चीतों और तेन्दुओं के सामने अमेरिका के शेर, चीते और तेन्दुए बच्चे मालूम होंगे और उनमें बल तथा साहस की भी बहुत ही कमी होगी। बंगाल का चीता दुम को छोड़ कर बारह फुट तक लंबा होता है, पर अमेरिका का चीता कदाचित् ही तीन फुट से अधिक लंबा होता हो। उस देश के दूसरे जानवरों में भी अन्य देशों के उन्हीं जानवरों की अपेक्षा बहुत न्यूनता होती है। यह न्यूनता इतनी अधिक होती है कि बहुत से विद्वानों ने उनकी एक अलग कोटि ही मान ली है। कुछ जानवर तो अवश्य ऐसे हैं जो अमेरिका में भी पाए जाते हैं और अफ्रिका, एशिया तथा युरोप आदि में भी; पर अमेरिका के अधिकांश जानवर ऐसे ही हैं जो अफ्रिका, एशिया और युरोप के जानवरों से बहुत कुछ मिलते जुलते पर वास्तव में उनसे भिन्न ही होते हैं। जो जानवर दोनों गोलार्द्धों में पाए जाते हैं, उनके विषय में यही सिद्धान्त स्थिर किया गया है कि ध्रुव प्रदेश का शीत सहन करने में समर्थ होने के कारण वे यहाँ से उत्तर के रास्ते अमेरिका में पहुँचे हैं। भालू, भेड़िए, हिरने, लोमड़ियाँ, जलबिलाव आदि अनेक ऐसे जानवर हैं जो उत्तरी अमेरिका में भी पाए जाते हैं और रूस में भी मिलते हैं। पर दोनों गोलार्द्धों के दक्षिणी भागों में जो जानवर पाए जाते हैं, उनमें परस्पर कोई समानता नहीं होती। जो जानवर दोनों गोलार्द्धों में पाए जाते हैं उनके विषय में यह निश्चित है कि वे यहीं से गए हैं। उन्हें छोड़ कर जो जानवर केवल अमेरिका में पाए जाते हैं उनके विषय में दृढ़तापूर्वक यह कहा जा सकता है कि उनमें अभी तक पूर्णता नहीं आई है और यहाँ के जानवरों की अपेक्षा उनमें बहुत कुछ त्रुटियाँ हैं। उनमें आत्म-रक्षा की शक्ति बिलकुल नहीं होती। उनके न तो दाँत भीषण होते हैं, न सींग और न दुम। उनकी आकृति भी कुछ भद्दी होती है और अंग भी बेडौल होते हैं। वहाँ के Ant-bear और Sloth आदि कई जानवर ऐसे होते हैं जिनमें हिलने-डोलने या खाने तक की भी यथेष्ट शक्ति नहीं होती। वे बिलकुल ही एकान्त स्थान में बड़ी ही दुर्दशा से अपना जीवन बिताते हैं। ये जानवर यदि ऐसे देशों में रहते जहाँ मनुष्यों अथवा भीषण जन्तुओं का निवास होता तो अब तक इन जानवरों का कहीं नाम भी न रह जाता।

अमेरिका के जानवर छोटे और दुर्बल तो अवश्य होते हैं, पर संख्या में वे बहुत अधिक होते हैं; क्योंकि यह एक प्राकृतिक नियम है कि जो जीव जितना ही छोटा होता है वह संख्या में उतना ही जल्दी और उतना ही अधिक बढ़ता है। युरोप की बकरी जब दक्षिण अमेरिका में भेजी जाती है तब वहाँ उनकी सन्तान छोटी और दुर्बल होने लगती है; पर हाँ, वह बच्चे बहुत अधिक देने लगती है। युरोप में जो बकरी एकबार में एक या दो बच्चे देगी, अमेरिका में जाकर वही बकरी एक बार में पाँच बच्चे तक जनाने लगेगी। यह नहीं कहा जा सकता कि यह प्रभाव वहाँ के जल-वायु का है अथवा भोजन का। यदि यह कहा जाय कि दक्षिण अमेरिका में गरमी अधिक पड़ती है और इसलिये वहाँ आ कर बकरी की जनना-शक्ति बढ़ जाती है तो यह बात भी ठीक नहीं है; क्योंकि अफ्रिका के किनारों पर, जहाँ गरमी और भी अधिक पड़ती है, वह बात नहीं होती। उलटे वहाँ पहुँचने पर युरोप की बकरी मोटी ताजी और बलिष्ठ हो जाती है।

सभी चौपायों में यह एक साधारण नियम है कि बड़े और भयङ्कर चौपायों के एक बार में बहुत ही कम बच्चे होते हैं; पर छोटे और तुच्छ जानवरों को एक ही बार में बहुत अधिक बच्चे होते हैं। शेर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

या चीते की मादा को शायद ही कभी एक बार में दो बच्चे होते हों; पर बिल्ली को, जो बहुत कुछ उसी श्रेणी की होती है, एक ही बार में पाँच छः तक बच्चे होते हैं। तात्पर्य्य यह कि जो जीव जितना ही छोटा होता है उसका वंश उतना ही अधिक और शीघ्र बढ़ता है। यदि यह बात न होती तो अपनी दुर्बलता के कारण वे बहुत शीघ्र नष्ट हो जाते। यदि चूहों की संख्या-वृद्धि भी उसी हिसाब से होती जिस हिसाब से हाथी की होती है तो चूहों का नाम-निशान कभी का मिट गया होता। इसी लिये प्रकृति ने बड़ी बुद्धिमत्ता से ऐसा प्रबन्ध कर दिया है कि जो जीव पूरी तरह अपनी रक्षा न कर सकते हों वे अपने वंश की उस क्षति की पूर्त्ति अपनी जनना-शक्ति से ही कर लें जो बहुधा आत्म-रक्षा के साधनों के अभाव के कारण उन्हें सहनी पड़ती है। बहुत से शत्रुओं और नाशकों से घिरे रहने पर भी उनकी संख्या बराबर बढ़ती ही रहती है। इसके विरुद्ध प्रकृति का यह नियम है कि बड़े जानवर संख्या में धीरे धीरे बढ़ते हैं। यदि ऐसा न हो और उनकी संख्या भी जल्दी जल्दी बढ़ने लगे तो आगे चल कर उन्हें जल्दी खाने को भी न मिले और उनमें से अधिकांश भूखों मर जायँ। बड़े जीवों के बल और छोटे जीवों की दुर्बलता को तुल्य रूप से बनाए रखने के लिये ही प्रकृति ने ऐसा नियम किया है। जीवों में से कुछ को छोटा और कुछ को बड़ा बनाना आवश्यक था, एक के जीवन का निर्वाह दूसरे से होने को था इसलिये परमेश्वर ने छोटों और अधीनों को जनना-शक्ति अधिक दी और बड़ों को जनना-शक्ति कम दे कर उनकी वृद्धि रोकी।

इसी नियम का यह परिणाम है कि बड़े जानवर, जिनके एक बार में कम बच्चे होते हैं, उसी समय बच्चे देते हैं जब कि वे पूरी तरह बढ़ लेते हैं। पर इसके विरुद्ध जो जीव एक बार में बहुत अधिक बच्चे देते हैं, वे उसी समय बच्चे देने लग जाते हैं जब कि उनका आकार स्वाभाविक से आधा ही रहता है। घोड़ियाँ और गौएं बच्चा देने से पहले अपना पूरा आकार प्राप्त कर लेती हैं; पर सूअर, खरगोश या चूहे की मादा बहुत ही छोटी अवस्था में ही, पूरी वयस्क होने से पहले ही, बच्चे देने लगती है।

अन्य अवसरों पर जीवों का स्वभाव चाहे जैसा रहता हो, पर जिस समय वे अपने बच्चों की शत्रुओं से रक्षा करने लगते हैं उस समय उनमें एक विलक्षण और विशेष साहस आ जाता है। उस समय किसी प्रकार का भय उन्हें अपने प्रयत्न से विमुख नहीं कर सकता। उस समय बहुत ही छोटा और दुर्बल जानवर सब से बड़े और भीषण शत्रु का भी अपनी पूरी शक्ति से सामना करता है। जब वह रक्षा से निराश हो जाता है तब वह अपने बच्चों को ले कर भागने की कोशिश करता है; और भागने के समय भी वह भारी से भारी आपत्तियों का सामना करने के लिये तैयार रहता है। अमेरिका में एक प्रकार का चौपाया होता है जिसे Opossum कहते हैं। उसकी मादा के पेट में एक थैली होती है। यदि उसके बच्चों पर कोई आक्रमण करे तो वह, अपने बच्चों को उसी थैली में रख कर बड़ी तेजी से भागती है; वह प्रायः इतनी तेजी से भागती है कि उस भागने के कारण ही वह मर जाती है। एक बार कुछ शिकारियों ने एक लोमड़ी का पीछा किया। वह लोमड़ी अपने बच्चे को मुँह में ले कर कई मील तक दौड़ी। अन्त में जब वह एक खेत में से हो कर भाग रही थी, तब अचानक उस पर एक कुत्ता झपटा। उस समय विवश हो कर उसे अपने बच्चे को छोड़ना पड़ा। जब कि बहुत ही तुच्छ और दुर्बल जीवों में अपने बच्चे की रक्षा करने के समय इतनी भयङ्करता आ जाती है तब भीषण और आक्रमणकारी जन्तुओं का तो पूछना ही क्या है? ऐसे अवसरों पर किसी प्रकार की बाधा उन्हें रोक नहीं सकती, किसी प्रकार का भय उन्हें डरा नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकता। उस समय शेर की अपेक्षा शेरनी ही बहुत अधिक बलिष्ठ और भयङ्कर हो जाती है। वह बिना आगा पीछा सोचे मनुष्यों और जानवरों पर आक्रमण कर बैठती और अपने बच्चे को बचाने के लिये उससे जो कुछ हो सकता है वह सब कर डालती है। और इसी प्रकार वह अपने बच्चों को भीषण आक्रमण करने की शिक्षा भी दे डालती है। अन्य पशुओं की अपेक्षा मांसाहारी पशुओं में दूध कम होता है। और शायद इसी लिये बहुधा ऐसे पशु अपने शिकार को जीवित ही अपने निवास-स्थान तक ले आते हैं और बहुधा अपने बच्चों को, दूध वाली त्रुटि की पूर्त्ति के लिये, उसका लहू पिलाते हैं। यही लहू उनके दूध की कमी पूरी करता है।

बच्चे देने के लिये जानवर जो स्थान चुनते हैं वह भी बहुत विलक्षण होता है। बहुधा आक्रमणकारी जाति के जन्तुओं की मादा बच्चा देने के लिये ऐसे सुरक्षित स्थान पर पहुँच जाती है जहाँ उनका नर न पहुँच सके। क्योंकि बहुधा नर ही बच्चों को खा जाते हैं। बड़े बड़े मांसाहारी जानवरों की मादा बच्चा देने के समय अपनी मांद से बहुत दूर निकल जाती है और तब तक अपनी मांद में या नर के पास नहीं आती जब तक उसके बच्चे खूब बलवान् नहीं हो जाते। * जो जानवर बहुत नाजुक होते हैं वे अपने बच्चों को गरम और सुरक्षित स्थानों में ही रखते हैं। आक्रमणकारी पशु प्रायः बहुत ही घने जङ्गलों में बच्चे देते हैं। पर पागुर करनेवाले जानवर मनुष्यों की बस्ती के पास ही किसी छिपे हुए स्थान में बच्चे देते हैं। कुछ जानवर जमीन में गड्ढे खोद लेते हैं, कुछ पेड़ों के खोखले तनों में चले जाते हैं और जो जानवर जल तथा स्थल दोनों में रहते हैं वे जलाशयों के निकट बच्चे देते हैं और जन्म से ही अपने बच्चों को जल और स्थल दोनों में रहने के लिये उपयुक्त बनाते हैं।

इस प्रकार प्रकृति ने उदारतापूर्वक छोटे से छोटे जीवों की रक्षा का भी यथेष्ट प्रबन्ध कर दिया है। पर चौपायों की एक जाति ऐसी भी है जो जनमते ही भाग्याधीन हो जाती है; जिनके माता-पिता न तो उनकी रक्षा करते हैं और न जिन्हें कोई जीवन-निर्वाह करने की शिक्षा देनेवाला होता है। ये चौपाए अंडों से उत्पन्न होते हैं; छिपकिली, कछुए और मगर आदि इसी के अन्तर्गत हैं। इन जानवरों में जनना-शक्ति भी बहुत अधिक होती है। ये प्रायः एक बार में दो सौ तक अंडे देते हैं। पर उनकी संतान संख्या में जितनी अधिक होती है, उनके सम्बन्ध की उनकी चिन्ता भी उतनी ही कम हो जाती है। ये जानवर प्रायः अपने सैकड़ों अंडे किनारों पर बालू में दबा देते हैं और उन्हें भाग्याधीन छोड़ देते हैं। स्वयं उनकी रक्षा आदि का वे कोई प्रयत्न नहीं करते। सूर्य्य का ताप ही उन्हें पूर्ण अवस्था तक पहुँचा देता है। ऐसे जानवर प्रायः अंडे से निकलते ही पूर्णता तक पहुँचे हुए होते हैं। उनमें से अधिकांश अपने सहज ज्ञान के कारण ही, बिना किसी शिक्षक के, तुरन्त पानी की ओर दौड़ पड़ते हैं। रास्ते में उन्हें बहुत से शत्रुओं का भय लगा रहता है। किनारों पर मंडरानेवाली चिड़ियाँ उन पर ताक लगाए रहती हैं, वहाँ आने जानेवाले मांसाहारी चौपायों के भी उनपर दाँत लगे होते हैं और बहुधा उनके माता-पिता भी अन्य पशुओं की भाँति उनके शत्रु बन जाते और उनकी संख्या घटाने लगते हैं। पर इसमें भी एक मसलहत है। ईश्वर ने ऐसे हानिकारक जीवों के इसी लिये बहुत से शत्रु उत्पन्न कर दिए हैं। यदि उनके इतने शत्रु न होते तो अपनी जनना-शक्ति की अधिकता के कारण वे संख्या में बहुत अधिक हो जाते और सारी पृथ्वी उन्हीं से भर जाती।

* खरगोश और चूहों की जाति के कई जानवरों की मादा अपने बच्चों को आप ही खा जाती है। पं० सम्पा०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिट्टी और चमड़े के ग्रन्थ। ❀

[अनुवादक,—श्रीयुक्त पं० त्र्यम्बक देव शास्त्री।]

मनुष्य की उन्नति के लिये जो साधन कारणीभूत हुए हैं, उनमें से लेखनकला भी एक अप्रतिम साधन है। यदि मनुष्य को लेखनकला न आती तो आज न जाने वह किस स्थिति में होता! अथवा इसकी कल्पना भी करना कठिन है कि उसकी दशा कैसी होती। वह केवल अक्षर-शत्रु ही न रहता बल्कि बहुधा पशु के वर्ग में और उसके समान ही होता। इससे कल्पना करनी चाहिए कि परमेश्वर ने "लेखन-कला" कितनी बड़ी और अनुपम देन दी है। यदि लेखन-कला अस्तित्व में न होती तो हम लोग केवल अन्ध बने रहते। इस लेखन-कला का आरम्भ कैसे कैसे और किस किस के द्वारा हुआ इस सम्बन्ध में आज यहाँ थोड़ा विचार किया जाता है।

इस विषय पर यदि साद्यन्त इतिहास लिखना हो तो इसके शोधक लोग इस पर एक अप्रतिम ग्रन्थ ही लिख डालें। न जाने ऐसा ग्रन्थ अभी तक अंग्रेजी में लिखा गया है या नहीं। आज इस विषय में जितना आश्चर्यजनक वृत्तान्त उपलब्ध हुआ है, केवल उतना ही संक्षेप में देने का विचार है। लिपि की कल्पना पहले मनुष्य के चित्त में उद्भव होने का कारण यह जान पड़ता है कि उसे पहले पदार्थ की गिनती जानने की आवश्यकता हुई होगी। इस काम के लिये उँगलियों से लकीरें खींचने अथवा दीवारों पर रेखाएं खींचने की प्राचीन प्रथा है। अभी तक देहातों में यह देखने में आता है कि बन्धी दूध देनेवाली अथवा अन्न पीसनेवाली औरतें, दूध अथवा पिसाई का हिसाब रखने के लिये दीवारों पर प्रति दिन गोबर से उँगलियों का एक एक चिह्न बना देती हैं। चाहे जिस लिपि में देखिए, जैसे भाषा में माता का नाम मकारात्मक होता है वैसे ही एक खड़ी रेखा एक अंक की बोधक होती है। यह गिनती हाथों की उँगलियों पर होती है और हाथ की उँगलियाँ दस होती हैं। इसी से दस तक की गिनती सारे संसार में प्रचलित है। रोमन लोगों में ही थोड़ी सी भिन्न प्रथा थी। वे लोग केवल पाँच तक गिनते थे। क्योंकि एक हाथ में पाँच ही उँगलियाँ होती हैं। इस प्रकार आरम्भ में दीवार पर गोबर आदि से चिह्न बनाना अथवा अन्य पदार्थ से रेखाएं खींचना ही लिपि का मूल जान पड़ता है।

पचास साठ वर्ष के पूर्व हम लोगों में लकड़ी की पट्टियों पर गुलाला वगैरह डाल कर छोटे छोटे बालकों को धूलाक्षर सिखाए जाते थे और सेठ साहूकारों की दूकानों पर टीन के पत्तरों पर स्याही से लिखा जाता था। अब भी यह प्रथा कहीं कहीं पर देखने में आती है। पर अब स्लेट और पेन्सिल का अविष्कार होने के कारण यह प्रथा अधिकांश में नष्ट हो गई है। आजकल तो किताबनुमा स्लेटें निकली हैं जिन्हें किताब की तरह खोल और बन्द भी कर सकते हैं। उसपर का लेख मिटता नहीं, जैसे का तैसा बना रहता है। बड़े बड़े विद्वान् और लेखक आजकल कागज पर ही लिखते हुए दिखाई देते हैं। यह कागज प्राचीन काल में बहुत ही खुरदुरा होता था और उसपर ठीक तरह से लिखा भी नहीं जा सकता था। पचास वर्ष पूर्व (दक्षिण में) कहाड़ी कागज का बहुत प्रचार था। वह कागज ज्यादा रफ होता था इस कारण उस पर लेखनी अच्छी तरह नहीं चलती थी और इसके अतिरिक्त अक्षर दूसरी तरफ फूट कर मोटे हो जाते थे। पर अत्यन्त प्राचीन काल में कागज का नाम भी किसी को मालूम न था। उस समय लोग पेड़ की पत्तियों पर ही लिखा करते थे। अब भी मलाबार

* केरल कोकिल नामक मराठी मासिक पत्र की अगस्त १९१६ की संख्या के एक लेखक का छायानुवाद—अनुवादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रान्त में यह प्रथा देखने में आती है। ताड़ की पत्तियों के गट्ठे के गट्ठे वहाँ बिकने के लिये आते हैं। यह पत्तियाँ सूखने पर कड़ी और टिकाऊ होती हैं। इन पत्तियों पर तद्देशीय लोग फौलाद के नुकीले काँटे से अक्षर खोद कर मजमून लिखते हैं। मलाबार प्रांत में सब जमा खर्च, दस्तावेज आदि ताड़ पत्र पर ही लिखे जाते हैं और सरकारी स्टाम्प भी ताड़पत्र के ही बिकते हैं। इस पत्र के एक तरफ सरकारी मोहर बनी हुई होती है। भारत, भागवत, संहिता आदि बड़े बड़े प्राचीन ग्रन्थ भी ताड़पत्र पर ही लिखे हुए मिलते हैं। इन ताड़पत्रों के दोनों ओर आर पार छेद किया हुआ रहता है और उन छेदों में से डोरी डाल कर उनके पत्रे बाँध दिए जाते हैं। ताड़पत्र के ग्रन्थों को बहुत दिनों तक रखने के लिये पहले उन्हें थोड़ा सा धुआं देते हैं। इससे इन पत्रों का रंग जरा काला हो जाता है जिसके कारण अक्षर अधिक स्पष्ट दिखाई देते हैं और यह ताड़पत्र शीशम के तख्ते की तरह मजबूत हो जाते हैं। कहीं कहीं पर धातुओं के पत्तर पर अक्षर खोदने की चाल है। अनेक स्थानों पर पत्थर पर भी अक्षर खोदे जाते हैं। आजकल जो शिलालेख और ताम्रपत्र मिलते हैं, वे इसका पूर्ण उदाहरण है। प्राचीन काल में धनवान लोग सोने के पत्तर पर मंगल पत्रिका लिखाते थे, और गरीब लोग शीशे के पतले पत्तर पर लिखा करते थे। प्राचीन काल में अनेक देशों में गीली मिट्टी की टिकियाँ बना कर, उनपर अक्षर खोद कर, उन्हें धूप में सुखा कर या भट्टी में डाल कर पका लेते थे जिससे उनपर के अक्षर स्थायी हो जाते थे। ईंटों की तरह अथवा मिट्टी के पक्के बर्तनों की तरह वह टिकियाँ बहुत दिनों तक रहती थीं। बाइबल से इस प्रकार के ग्रन्थों का बैबिलोन में होना सिद्ध होता है। बैबिलोन एक नामांकित नगर था। वहाँ का राजा अनेक देशों पर राज्य करता था। वहाँ के लोगों को लेखन-कला बहुत दिनों से मालूम थी। बैबिलोन और उसके आस पास के कितने ही शहर हजारों वर्ष हुए नष्ट हो गए हैं और उनपर ज्वालामुखी से निकली हुई राख का ढेर पड़ा हुआ है। यह राख का ढेर अब हटाया जा रहा है। उसमें से हजारों मिट्टी की ईंटें निकलती हैं जिन पर अनेक प्रकार के लेख खोदे हुए मिलते हैं। उन लेखों को एकत्र कर के विद्वानों ने बाबिलोन का बहुत सा इतिहास जाना है। यह इतिहास ईसा के जन्म के २००० वर्ष पूर्व का है।

बैबिलोन में जो मृत्तिका ग्रन्थ थे वे मिट्टी की ईंटों के बड़े बड़े प्रचन्ड ग्रन्थ थे! हम लोग आजकल जैसे अलमारियों में पुस्तकें सजा कर रखते हैं वैसे ही वहाँ के लोग यह मृत्तिका ग्रन्थ पेटियों में चुन कर रखते थे। बैबिलोन के एक राजा ने इस प्रकार के हजारों मृत्तिका ग्रन्थों को अपने राजमहल में संग्रह किया था। उस काल की बुद्धि और विद्या इन्हीं ग्रन्थों में भरी हुई है। ये हजारों वर्ष पूर्व के प्राचीन ग्रन्थ हाल में ही खोदते समय मिले हैं। इनके आकार भिन्न भिन्न हैं। कुछ तो ईंटों की तरह हैं और कुछ अठपहलू हैं।

चर्म ग्रन्थ अर्थात् भेड़ के चमड़े की पुस्तकें।

प्राचीन काल में मिस्र देश में एक प्रकार का कागज बनता था। सैकड़ों वर्ष तक लोग उसी पर लिखा करते थे। उस समय की एक पुरानी कथा है कि किसी दूसरे देश के राजा को एक बड़ा भारी ग्रन्थ संग्रह करने की इच्छा हुई, इसलिये उसने मिस्र के राजा से कुछ कागज माँगा। पर मिस्र का राजा दुष्ट और मत्सरी था। इसलिये उसने अपने सारे शहर में मुनादी करवा दी कि हमारे देश से कागज दूसरे देश में न जा सके; जो कोई इसके विरुद्ध कार्य करेगा उसको प्राण दण्ड दिया जायगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकार जब वह दूसरा राजा निराश हो गया तब लिखने के लिये कोई और आधार ढूँढ़ने लगा। उस राजा को ग्रन्थ-संग्रह की बड़ी भारी लालसा थी। इस कारण उसने बहुत से पदार्थों के कागज बनवाए। पर वे सब निरुपयोगी सिद्ध हुए। अन्त में उसने यह निश्चय किया कि चाहे जो हो हम अपने सारे ग्रन्थ चमड़े पर ही लिखेंगे! पर इस काम के लिये अच्छा चमड़ा कौन सा होगा? पहली बात तो यह है कि इस काम के लिये वह चमड़ा बहुत अधिक मान में मिलना चाहिए। साथ ही वह बहुत मोटा भी नहीं होना चाहिए, क्योंकि यदि मोटा हुआ तो उसके वजनी होने के कारण इधर उधर ले आने और ले जाने में कठिनता पड़ेगी। इसके सिवा वह चमड़ा चिकना भी होना चाहिए। यह सब बातें ध्यान में रख कर उस राजा ने अनेक प्रकार के चमड़े तैयार कराए। तब उसको भेंड का चमड़ा पसन्द आया। उसने एक भेंड़ मरवा कर उसका चमड़ा निकाल कर उस पर के बाल साफ करवाए और उसको पत्थर से घोंटवा कर चिकना कराया। और यह निश्चय किया कि कागज से भी इसके ग्रन्थ अधिक अच्छे होंगे।

उस राजा ने और भी कई प्रकार के चमड़े तैयार करवा कर देखे। और फिर निश्चय किया भेंड़ के चमड़े से भी बछिया और मेमने के चमड़े बहुत साफ होते हैं। इसलिये अनेक उत्तमोत्तम ग्रन्थ उसने बछड़ों के चमड़े पर ही लिखवा डाले।

दो हजार वर्ष पूर्व की अन्य देशों की जितनी पुस्तकें हैं वे सब भेंड अथवा बछड़े के ही चमड़े पर लिखी हुई मिलेंगी। भेंड के चमड़े की पुस्तकें आजकल भी बहुत देखने में आती हैं। लंडन शहर में एक बड़ी भारी लाइब्रेरी है। उसमें १५०० वर्ष से भी अधिक पुरानी भेंड के चमड़े पर लिखी हुई पुस्तकें देखने में आती हैं। बाइबिल भी पहले पहल भेंड के ही चमड़े पर लिखी गई थी। एक विशेष चमत्कार की बात यह है कि मनुष्य के चमड़े पर भी लिखे हुए एक दो ग्रन्थ इस पुस्तक संग्रहालय में देखने में आते हैं।

अस्तु; इन सब बातों पर विचार करने से यह मालूम होता है कि आजकल हम लोगों को जो कागज मिलता है वह चाहे टिकाऊ न हो तो भी वह बहुत सहज में मिल जाता है। परन्तु वर्तमान युरोपीय महासमर के कारण जो कागज यहाँ बहुत अधिक मिलता था उसका आजकाल दूना और तिगुना दाम बढ़ गया है। इस कारण छापेखानेवाले और लेखक बहुत चिन्तित हो रहे हैं। ईश्वर करे इस रण-यज्ञ का अवभृथ स्नान शीघ्र हो और मलाबार से ताड़पत्र मँगाने की बारी न आवे।

—:०:—

द्वितीय

प्रांतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन झाँसी

के

सभापति बा० गौरीशंकरप्रसाद बी० ए०. एल एल० बी० का भाषण।

प्रिय सज्जनो,

जिस कृपा के साथ मुझे आप लोगों ने इस ऊँचे आसन पर बैठने की आज्ञा दी है उसके लिये मैं आप लोगों को धन्यवाद देता हूँ।

जब मेरे पास आपकी स्वागतकारिणी सभा की ओर से यहाँ उपस्थित हो कर कार्य्य करने का आदेश तार द्वारा पहुँचा तब उसे पहले मेरे मित्रों ने देखा और मुझे वह समाचार बाद को मिला। मैं अपने को कदापि इस आसन के योग्य नहीं समझता था इसलिये इस पद को स्वीकार करने के लिये उद्यत नहीं था। परन्तु मेरे मित्र लोग मुझसे इस सेवा में प्रवृत्त होने के लिये आग्रह कर रहे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थे। इसी कारण उत्तर देने में दो दिन का विलम्ब हुआ और मेरे एक परम मित्र ने जिनके मित्र होने का मुझे सौभाग्य प्राप्त है मेरी ओर से स्वीकृति का तार उत्तर में भेज दिया। मैं उनकी इच्छा को आदेश मानता हूँ और यथा शक्ति उसके उल्लंघन को दोष समझता हूँ। इस प्रकार मैं आज आपके सन्मुख उपस्थित हुआ हूँ। जब मैं अपनी अयोग्यता का ध्यान करता हूँ तब मुझे आश्चर्य्य होता है कि बड़े बड़े विद्वानों और हिन्दी की सेवा करनेवालों के रहते हुए मुझे आपने इस उच्च आसन के लिये क्यों चुना। मेरी सम्मति में तो यह आता है कि मैं इस स्थान के लिये कदापि योग्य नहीं हूँ। न मैंने कोई रचना या कविता की न कोई ऐसी सेवा ही। दुःख के साथ स्मरण आता है कि इस आसन को वैकुण्ठवासी राय देवीप्रसाद जी पूर्ण ने कैसी योग्यता के साथ गत वर्ष सुशोभित किया था। परन्तु हा! कठोर काल ने उनको हम लोगों की सहायता करने के लिये कुछ दिन तक और नहीं छोड़ दिया। आज इस स्थान पर इस शुभ मुहूर्त में मातृ-भाषा के इतने प्रेमियों को एकाग्रचित्त हो कर मातृभूमि की सेवा में निमग्न देखते हुए जो आनन्द मुझे इस समय हो रहा है उसका वर्णन करना मेरी सामर्थ्य के बाहर है। उसका अनुभव आप लोग अपने अपने चित्त में स्वयं कर सकते हैं। जैसी जागृति चारों ओर आजकल देख पड़ती है और जिस प्रकार उन्नति की लहरें उठी हुई हैं उससे यह अवश्य प्रतीत होता है कि हमारा प्राचीन भारत एक दिन अवश्य उस उन्नति के शिखर पर पहुँच कर संसार भर में उस उच्च आसन को अवश्य ही सुशोभित करेगा जिस पर वह आसीन था। हाँ, वह शुभ दिन चाहे हमारे आपके जीवित रहते देखने का सौभाग्य प्राप्त हो अथवा भविष्य के होनेवालों को वह सुख मिले। जो वृक्ष कोई लगाता है वह स्वयं ही उसके फल खाने की आशा से नहीं लगाता। प्रायः ऐसा ही होता है कि एक पीढ़ीवाले वृक्ष का आरोपण करें और उसके उत्तराधिकारी उसका फल भोगें। बाप दादा नेंव दे जायँ और लड़के पोते घर में निवास करें। इसी प्रकार हम लोगों को भी फल पाने की आशा जल्दी पूरी न होने से हताश नहीं होना चाहिए।

मैं अपने को बहुत बड़ा भाग्यवान् मानता हूँ कि मैं इस समय में हूँ जिस समय उन्नति की नींव पड़ने के पश्चात् अपनी सामर्थ्य भर मैं उस विशाल भवन के निर्माण में कुछ भी परिश्रम करने का सौभाग्य प्राप्त कर सकता हूँ और उससे संतोष से आनन्द लूटता हूँ। जो लोग प्रायः पच्चीस तीस वर्ष पहले काम करनेवालों में थे क्या उनको आज के ऐसी जागृति की कभी आशा होती थी? जब पाठशाला के कुछ विद्यार्थियों ने काशी नागरीप्रचारिणी सभा की स्थापना तेईस वर्ष पहले की थी उस समय अन्य देखनेवाले क्या इस बृहत् वट वृक्ष के आकार को उस छोटे से बीजकण में अनुभव कर सकते थे? मुझे इस बात से भी बहुत बड़ा आनन्द मिलता है कि यद्यपि मैं इस बृहत् सभा के स्थापन करनेवालों में से तो नहीं हूँ किन्तु उसके जन्मदाताओं के साथ कार्य करनेवालों में अवश्य हूँ और ईश्वर ने मुझे यह सौभाग्य प्रदान किया है।

आज से प्रायः साढ़े छः वर्ष पहले काशी की सभा के काम करनेवालों में बंगला, मराठी तथा गुजराती साहित्य सम्मेलनों की देखादेखी यह लालसा उत्पन्न हुई कि प्यारी हिन्दी के लिये क्या ऐसा दिन नहीं देखने को मिलेगा? और फिर सभा के निश्चय द्वारा आज से पूरे छः वर्ष पहिले प्रथम हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन सभा-भवन के बाहर बड़े समारोह के साथ हमारे नेता पूज्यवर पण्डित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मदनमोहन मालवीयजी के सभापतित्व में हुआ। अहा ! धन्य. वह घड़ी है जिसमें ऐसे काम का सूत्रपात हुआ। उसके पश्चात् कई नगरों में यह भारतवर्षीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन होता रहा और इस वर्ष हमारे पड़ोसी जबलपुर के उत्साही भाइयों ने अपने नगर में आगामी कार्तिक शुक्ल ११ को करना निश्चय किया है और उसके निमित्त वे उचित प्रबन्ध कर रहे हैं। जब हिन्दी साहित्य सम्मेलन की चर्चा उठी थी उस समय वही बड़ी बात जान पड़ती थी और कुछ लोगों के चित्त में उसी की सफलता में सन्देह हो रहा था; परन्तु जो लोग दूरदर्शी हैं और कमर बाँध कर काम करने में तत्पर रहते हैं, वे सफलता अवश्य ही प्राप्त करते हैं। उस समय यह कदापि नहीं ध्यान में था कि एक दिन प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन देखने का भी सौभाग्य इतना शीघ्र प्राप्त होगा। गत वर्ष जब गोरखपुर में प्रान्तीय राजनैतिक सम्मेलन होने को था उसी अवसर पर वहाँ के हिन्दी प्रेमी उत्साही सज्जनों ने इसकी भी नींव दी और सम्मेलन का अधिवेशन कई दिन तक स्वर्गवासी राय देवीप्रसाद पूर्ण के सुयोग्य सभापतित्व में समारोह के साथ हुआ। आज अब यह द्वितीय प्रान्तीय सम्मेलन है और ईश्वर से प्रार्थना है कि देश की उन्नति और प्राचीन भारत का उद्धार करने के हेतु वह मातृभाषा हिन्दी का प्रचार दिनोंदिन बढ़ावे और यह प्रान्तीय सम्मेलन स्थान स्थान पर हर साल होता रहे; और हर कमिश्नरी तथा बड़े नगर में जिला सम्मेलम भी हो।

कुछ देशहितैषी महाशय इसके नामकरण में त्रुटि बताते हैं और कहते हैं कि इसका नाम आर्य्य-भाषा सम्मेलन होना चाहिए। सज्जनों ! उनका कहना कई अंशों में ठीक है परन्तु नाम के झगड़े को उठा कर वास्तविक कार्य्य में क्षति डालना उचित नहीं है। हिन्दू तथा हिन्दी शब्द पर भारतवर्षीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनों के कई बड़े बड़े योग्य सभापति महोदयों ने बहुत बड़ी व्याख्या की है और उन्होंने बहुत विद्वत्ता के साथ उस प्रश्न पर विचार प्रकट किया है। उस सम्बन्ध में मेरा कुछ भी कहने का साहस करना अनुचित है। मैं आप लोगों से अनुरोधपूर्वक यही प्रार्थना करूँगा कि नाम के पीछे काम न बिगाड़िए। काम का ध्यान पहले करना चाहिए नाम का ध्यान पीछे।

हिन्दी की उत्पत्ति के सम्बन्ध के प्राचीन इतिहास का तथा संस्कृत और प्राकृत से किस प्रकार हिन्दी प्रचलित हुई इसका वर्णन करना मेरी योग्यता के बाहर है। पण्डितवरों ने इस सम्बन्ध में अच्छी तरह दिखलाया है कि हिन्दी भाषा आज की नहीं है, कई शताब्दियों से यह प्रचलित है और इसके प्रचार में जो बाधाएं तथा रुकावटें धीरे धीरे होती गई हैं और हैं उन्हीं के कारण हमारी अवनति हुई है और उस गिरी अवस्था से हम जल्दी उठने नहीं पाते। हर्ष का विषय है कि अब धीरे धीरे वह बाधाएँ और रुकावटें दूर की जाने लगी हैं और हम लोग उस गिरी हुई अवस्था से निकलने के प्रयत्न में लगे हुए हैं। यदि यह काम बराबर चलता रहा और पूर्ण आशा है कि यह बराबर चलता रहेगा, तो इसमें सन्देह नहीं कि हम लोग बहुत शीघ्र अपने उद्दिष्ट स्थान तक पहुँच जायँगे, हमारा मनोरथ सफल हो जायगा। आवश्यकता केवल इस बात को अच्छी तरह स्मरण रखने की है कि हम किसी दशा में अपनी मातृभाषा से अलग न हों, उसे अपने से बिछुड़ने न दें और उसकी उन्नति तथा प्रचार में सदा तन, मन और धन से लगे रहें। इस प्रकार हम लोग केवल अपनी मातृभाषा की ही उन्नति नहीं कर सकेंगे वरन् अपने समाज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और देश को भी उन्नत तथा अग्रसर कर सकेंगे। क्योंकि यह बात स्वतः सिद्ध है कि जो जाति अपनी भाषा, अपना साहित्य और अपना इतिहास खो बैठती है उसकी अवनति बहुत शीघ्र हो जाती है और उसे नष्ट होने में अधिक समय नहीं लगता। स्वर्गीय भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र का यह कथन अक्षरशः सत्य है कि,—

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिनु निज भाषा-ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल॥

इसलिये—

करहु बिलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल।
निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सब को मूल॥

अच्छा, अब मुख्य विषय हिन्दी को लीजिए। सब से पहली बात तो यह है कि बहुत दिनों से हमारी हिन्दी का उत्तरी भारत के प्रायः सभी मुख्य स्थानों में अखण्ड राज्य चला आया है। यद्यपि विद्वानों ने हिन्दी के जो "पूर्वी हिन्दी" और "पश्चिमी हिन्दी" आदि विभेद किए हैं और उनमें से एक को जो अर्द्ध मागधी से और एक को मागधी से उत्पन्न माना है, सो मेरी अल्प बुद्धि में ठीक नहीं जान पड़ता। मुझे आशा है, आप महानुभावों में से अनेक मेरे इस मत के समर्थक होंगे। इस प्रकार के विभाग करना मानों अपनी माता-तुल्य मातृभाषा के अंगों को काट काट कर अलग करना है। आजकल की पश्चिमी और पूर्वी हिन्दी में देश-भेद के कारण जो थोड़ा सा अंतर है उसे केवल प्रान्तीय न मान कर दोनों को दो अलग भाषाओं से उत्पन्न मानना और पूर्वी का सम्बन्ध जा कर बँगला और उड़िया से मिलाना केवल द्राविड़ी प्राणायाम ही नहीं है किन्तु हिन्दी-हित की दृष्टि से बहुत ही हानिकारक तथा भाषा-विज्ञान की दृष्टि से बहुत कुछ त्रुटि-पूर्ण है। यदि विदेशी सज्जन किसी विशेष कारण से ऐसे विभाग कर भी दें तो कम से कम हमारे देशी भाइयों को तो यह उचित है कि वे ऐसे सिद्धान्तों और विभागों को मानने के लिये तैयार न हो जायँ जिनसे प्रकारान्तर से उनकी मातृ-भाषा का महत्त्व घटता हो; और वह भी विशेषतः ऐसी दशा में जब कि उसके लिये कोई सबल और सयुक्तिक प्रमाण न हो। हमारी समस्त हिन्दी शताब्दियों से बराबर एक ही रही है और उसकी उत्पत्ति भी केवल एक ही उद्गम से हुई है। इस समय एक स्थान की हिन्दी से दूसरे स्थान की हिन्दी में जो अन्तर पाया जाता है उसका कारण देश-भेद के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। पूर्वी हिन्दी पर अधिक से अधिक अर्द्ध-मागधी का कुछ प्रभाव ही माना जा सकता है। पूर्वी तथा पश्चिमी हिन्दी में जितना कम अंतर है उतना कम अंतर केवल प्रान्तीयता के कारण ही हो सकता है; दो भिन्न भाषाओं से उत्पन्न होने पर यह अंतर और अधिक बढ़ जाता।

अब हिन्दी के उत्पत्ति-काल को लीजिए। इस समय आप लोगों को बँगला, मराठी और गुजराती आदि जितनी उन्नत, पुष्ट और साहित्य-पूर्ण भाषाएँ दिखाई पड़ती हैं वे सब हिन्दी के पीछे ही उत्पन्न हुई हैं। मराठी के आदि कवि नामदेव तेरहवीं शताब्दी के मध्य में हुए थे और यही काल मराठी-साहित्य का जन्म-काल माना जाता है। बँगला के आदि कवि चण्डीदास चौदहवीं शताब्दी में हुए थे। गुजराती के आदि कवि नरसी मेहता का समय इससे भी कुछ बाद का है। पंजाबी और मिथिला आदि का तो कहना ही क्या, क्योंकि गुरु नानक और विद्यापति ठाकुर के समय में भी उनका उतना स्पष्ट अस्तित्व नहीं था। इसके अतिरिक्त उनमें बहुत अधिक अंश हिन्दी का ही पाया जाता है। पर हमारी हिन्दी भाषा की उत्पत्ति संवत् ७०० के लगभग मानी गई है। इस सम्बन्ध में एक और विलक्षण बात है। मराठी और गुजराती के आदि कवि नामदेव और नरसी मेहता केवल भक्त थे और इन दोनों के साहित्य की उत्पत्ति धार्म्मिक भजनों आदि से हुई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थी। चण्डीदास ने भी बहुधा भक्ति-पक्ष की ही कविता की है। साहित्य के अन्यान्य अंगों पर उन भाषाओं में बहुत बाद में रचनाएँ होने लगी हैं और ऐसा ही होना बहुत से अंशों में स्वाभाविक भी माना जा सकता है। पर हमारी हिन्दी की दशा इन भाषाओं से बहुत ही भिन्न है। हमारे यहाँ संवत् ७७० में पुंड अथवा पुष्य नामक एक कवि हुआ था जिसने संस्कृत अलंकारों का हिन्दी दोहों में अनुवाद किया था। अभी तक इस सम्बन्ध में इतना ही पता चला है, इससे पहले का पता नहीं लगता। पर तो भी ऐसी दशा में जब कि संवत् ७७० में साहित्य के मुख्य अंश अलंकार पर हिन्दी में ग्रन्थ रचा गया था यह अवश्य ही अनुमान किया जा सकता है कि उससे और पहले हिन्दी में अन्यान्य विषयों पर भी थोड़ी बहुत कविता हुई ही होगी, पर उसका इस समय पता नहीं लगता। यह तो वह समय है जब कि हिन्दी में पहलेपहल कविता हुई थी। किसी भाषा को कविता के योग्य बनने में भी कुछ समय लगता है, इसलिये मुख्य भाषा की उत्पत्ति इससे भी पहले ही की सिद्ध होती है। यह तो हिन्दी की प्राचीनता का प्रमाण हुआ। अब उसकी व्यापकता का वर्णन भी संक्षेप में सुनिए।

आजकल तो प्रायः समाचारपत्रों आदि में आप लोग बराबर पढ़ा ही करते हैं और आपस में भी बातें किया करते हैं कि हिन्दी भाषा सारे भारत में एक सिरे से दूसरे सिरे तक बहुत कुछ बोली और कुछ कुछ समझी जाती है और इसके बोलने तथा समझनेवालों की संख्या सब से अधिक है। पर प्राचीन काल में हिन्दी का यह आधिपत्य और भी बढ़ा चढ़ा था। जिस समय अन्य देशी भाषाएँ पुष्ट तथा प्रौढ़ नहीं हुई थीं उस समय उन पर सबसे अधिक प्रभाव हिन्दी का ही पड़ता था। यही कारण है कि किसी देशी भाषा की जितनी ही पुरानी कविताओं आदि को लीजिए उनमें उतनी ही अधिक हिन्दीपन की झलक दिखाई पड़ती है। इसके प्रचार की अधिकता का यह एक बहुत अच्छा प्रमाण है। यह बात भी अनेक आधारों पर प्रायः सिद्ध ही हो चुकी है कि मुसलमानों के राजत्वकाल में केवल दरबारों और कचहरियों में ही फारसी का प्रवेश था; सर्वसाधारण उससे नितान्त अनभिज्ञ हुआ करते थे। हाँ, संसर्ग के कारण हिन्दी पर फारसी का थोड़ा बहुत प्रभाव अवश्य पड़ा था जो अनिवार्य्य था। पर यह प्रभाव उस समय तक उतने महत्त्व का नहीं हुआ था जब तक कि लोगों ने उसे एक नए "रंग" का स्वरूप नहीं दे दिया। इसी प्रभाव-जन्य नए रंग में रंग कर लोगों ने बिचारी हिन्दी को एक नया स्वरूप दे कर उसे उर्दू बनाना चाहा था। पर सौभाग्यवश लोगों की आँखें बीच में ही खुल गईं और उन्होंने इस बाहरी रंग-पालिश को पहचान लिया। उसी समय उनका प्राचीन साहित्य और इतिहास उनके काम आया और उन्होंने अपनी भाषा का वास्तविक और प्राकृत स्वरूप पहचान लिया। यदि हम लोग सौ दो सौ वर्ष और सोए रह जाते तो सम्भव था कि हम अपनी भाषा के साथ साथ अपना साहित्य और इतिहास भी खो बैठते और तब उस प्रकृत स्वरूप को पहचानने का कोई साधन ही हमारे पास न रह जाता। ईश्वर करे यह स्वरूप चिरस्थायी और हमारे लिये कल्याण-कारक हो।

थोड़ा सा विषयान्तर हो गया। हम पहले कह चुके हैं कि आज से कई शताब्दी पहले भी भारत के अधिकांश निवासी हिन्दी ही बोलते थे। इस हिन्दी का उस समय के मुसलमानों पर प्रायः उतना ही अधिकार था जितना आजकल काश्मीरों पर उर्दू का देखा जाता है। उस समय शिष्ट-समाज की भाषा हिन्दी ही थी और उस हिन्दी के बहुत से नमूने हिन्दी साहित्य में भरे पड़े हैं। यदि शिष्ट-समाज की और सर्वव्यापिनी भाषा हिन्दी न होती तो कुतबन, जायसी, रहीम और खुसरो आदि को कम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से कम उसी भाषा में कविता करने की आवश्यकता न होती। फारसी का जो कुछ प्रवेश था वह मुसलमानी राज्यों के दफ्तरों और दरबारों में ही था। पर दफ्तरों को छोड़ कर दरबारों और सिक्कों आदि पर भी हिन्दी का बराबर कुछ न कुछ अधिकार रहता ही था। गोरखनाथ, कबीर और दादू दयाल को अपने उपदेश आदि इसी लिये हिन्दी में रखने पड़े थे कि सर्वसाधारण केवल हिन्दी ही समझ सकते थे। यहाँ तक की गुरु नानक की रचना का अधिकांश भी इसी कारण हिन्दी में ही है। उसमें गुरुगोविन्दसिंह के समय में तो हिन्दी का प्रचार इतना अधिक था कि उनकी तथा उनके शिष्यों आदि की प्रायः सारी रचनाएँ इसी शुद्ध हिन्दी में हैं। इस अवसर पर प्रसंगवश एक बात यदि आ गई है जिसे कहने का इससे अधिक उपयुक्त अवसर और नहीं मिल सकता। हम लोगों ने बिहार की ओर बढ़ कर विद्यापति आदि को तो न्यायतः अपना लिया है पर पश्चिम की ओर अभी तक किसी का ध्यान ही नहीं गया। सिक्खों के अनेक धर्म्म ग्रन्थ ऐसे हैं जिनकी भाषा विशुद्ध ब्रज-भाषा है और जिनकी कविता बहुत ऊँचे दरजे की है। ये सब धर्म्म ग्रन्थ ऐसे हैं जिनका बहुत से सिक्ख नित्य कुछ न कुछ पाठ किया करते हैं। इनमें से अधिकांश ग्रन्थ गुरुमुखी लिपि में छप भी गए हैं, पर हिन्दीवाले उनके नाम तक नहीं जानते। इनमें से गुरु गोविन्दसिंह के बनाए तथा बनवाए हुए और सन्तोषसिंह के लिखे हुए कई ग्रन्थ बहुत प्रसिद्ध और मुख्य हैं। आकार में भी वे ग्रन्थ बहुत बड़े हैं। कविता और भाषा के अतिरिक्त इतिहास की दृष्टि से भी वे ग्रन्थ बहुत उपादेय हैं। वे सब हैं तो हिन्दी-साहित्य के अंतर्गत ही; पर वे देवनागरी में नहीं छपे हैं और हिन्दीवालों को उनका परिचय नहीं है। गुरु-मुखी में लिखे होने और पंजाबियों के हाथ में रहने के कारण कहीं कहीं उनमें अशुद्धि और दुर्बोधता आ गई है। यदि बड़े बड़े ग्रन्थ-प्रकाशक सम्पादन करा कर शुद्धता-पूर्वक उनके अच्छे संस्करण निकालें तो हमारी मातृ-भाषा का साहित्य सहज में ही बहुत कुछ बढ़ सकता है। इसी प्रकार प्रकाशित करने योग्य और भी बहुत सा साहित्य अन्य स्थानों में भरा पड़ा है। काशी नागरीप्रचारिणी सभा ने हिन्दी पुस्तकों की जो खोज कराई है उसकी रिपोर्ट देखने से ज्ञात होता है कि हिन्दी का प्राचीन और अप्रकाशित साहित्य इतना अधिक है जितना किसी अन्य देशी भाषा का नहीं है। इस पर थोड़ा विचार करने से यह बात सहज में सिद्ध हो जाती है कि इधर कई शताब्दियों से देश में हिन्दी का बराबर अखंड राज्य रहा है। विद्वान् लोग पुराने इतिहास की सहायता से ही भविष्य का बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। आशा है, हिन्दी का पुराना इतिहास आप लोगों को उसके सुन्दर भविष्य का भास करा देगा और आप लोग समझ जायँगे कि उसे राष्ट्र-भाषा के उच्च आसन पर बैठाने की आशा वास्तव में दुराशा नहीं वरन् सदाशा है। पर इस सदाशा को पूर्ण करने के लिये अभी हमको, आपको तथा आनेवाली पीढ़ी को यथेष्ट परिश्रम और आन्दोलन करने की आवश्यकता पड़ेगी। आप लोग कमर बाँध के, साहस कर के परिश्रम आरम्भ कर दीजिए और आन्दोलन में लग जाइए; तब देखिए, आपकी वह सदाशा कितनी शीघ्र पूरी होती है।

हिन्दी की वर्त्तमान अवस्था जितनी अच्छी और सन्तोषजनक है, उसके प्रति लोगों में जितनी जल्दी और जितना अधिक अनुराग बढ़ता जाता है, उसके साहित्य की अनेक प्रकार से जैसी वृद्धि हो रही है, उसके प्रचार में जैसे अच्छे अच्छे लोग सहायक हो रहे हैं और देशी राज्यों में उसका आदर जितना बढ़ता जाता है उन सब बातों को देख कर हिन्दी-प्रेमी मात्र का हृदय आनन्द और उत्साह से भर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता है। हमारे लिये यह कम हर्ष का विषय नहीं है कि उसके पाठकों और प्रेमियों की संख्या बहुत ही शीघ्रता से बढ़ रही है और स्थान स्थान पर उसके प्रचार के लिये सभाएँ स्थापित होने लगी हैं और छोटे छोटे प्रान्तों में भी प्रान्तीय सम्मेलन होने लगे हैं। अन्य भाषा-भाषी अपने सम्मेलनों तथा सभाओं आदि में और फुटकर लेख लिख कर उसके साथ सहानुभूति प्रकट करने लगे हैं। जहाँ आगे अच्छे अच्छे ग्रन्थों का अभाव लोगों को खटका करता था, वहाँ अब प्रायः नित्य एक न एक उपादेय और सुपाठ्य नया ग्रन्थ देखने को मिलता है। नागरीप्रचारिणी सभा की मनोरंजन पुस्तकमाला, हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्य्यालय की पुस्तकमाला तथा इंडियन प्रेस की पुस्तकें हिन्दी साहित्य के भंडार की अच्छी पूर्त्ति कर रही हैं। लोकमान्य तिलक के गीता-रहस्य का अनुवाद सबसे पहले हिन्दी में ही प्रकाशित हुआ है। भिन्न भिन्न नवीन और उपयोगी विषयों पर भी अब पुस्तकें प्रकाशित होने लगी हैं। पर इन पुस्तकों के सम्बन्ध में एक बात मैं यहाँ निवेदन कर देना चाहता हूँ। अब से कुछ समय पहले तक हिन्दी में बहुधा बँगला उपन्यासों के अनुवाद ही निकला करते थे। कुछ अवस्थाओं में लोग मूल लेखकों का बिना नाम दिए ही पुस्तकें अनुवाद कर के अपने नाम से छाप दिया करते थे। यह क्रम कुछ अंशों में अब तक चल रहा है। यह बात बहुत ही निन्दनीय और हिन्दी के लिये हानिकारक है। इससे बंगालियों को यह कहने का अवसर मिलता है कि "हिन्दी में है ही क्या? हमारे यहाँ के उपन्यासों के अनुवाद ही न?" और तब हिन्दी-सेवियों को उनके सामने लज्जित होना पड़ता है। आशा है, हमारे उत्साही हिन्दीसेवी भाई कोई ऐसा काम न करेंगे जिससे उनके और भाइयों को दूसरे भाषाभाषियों के सामने लज्जित होना पड़े अथवा जिससे उनकी मातृभाषा का महत्त्व कम होने की सम्भावना हो। हिन्दी में अब जहाँ पुस्तकें अच्छी और अधिक निकलने लगी हैं वहाँ अनेक पत्र भी उच्च श्रेणी के हैं। दैनिक पत्रों में भारतमित्र हिन्दी का गौरव बढ़ाता है, साप्ताहिक पत्रों में बँगवासी, अभ्युदय और प्रताप उसके महत्त्व की वृद्धि करते हैं और मासिकपत्रों में सरस्वती अन्य भाषाओं की अच्छी मासिक पत्रिकाओं से टक्कर लेती है। हिन्दी की बाल्यावस्था देखते हुए यह कुछ कम आनन्द की बात नहीं है। पर इस सम्बन्ध में भी हमारे कुछ अदूरदर्शी भाइयों के कारण इधर हिन्दी की विशेष हानि होने लगी है। बहुत से लोग उत्साह या आवेश में आ कर साप्ताहिक या मासिक पत्र तो निकाल बैठते हैं पर न तो वे उसके उचित रूप से परिचालन का ही प्रबन्ध करते हैं और न सम्पादन आदि का ही। यह बात ठीक नहीं होती। इससे हिन्दी पर बहुत बड़ा कलङ्क लगता है और पाठकों में असन्तोष तथा अविश्वास फैलता है जिसका बुरा प्रभाव दूसरे पत्रों और पत्रिकाओं पर भी पड़ कर उन्हें हानि पहुँचाता है। आशा है, भविष्य में लोग पत्र या पत्रिका निकालते समय इस बात पर अवश्य ध्यान रखेंगे।

इधर कई वर्षों से देशी राज्यों में हिन्दी का जितनी शीघ्र गति से प्रवेश हो रहा है और उसके संरक्षण में जैसे उत्साह से नृपतियों का हाथ बढ़ रहा है वह उसके उज्वल भविष्य का बहुत अच्छा परिचायक है। इन्दौर और दतिया आदि रियासतों में अभी हाल में ही हिन्दी का प्रवेश हुआ है। इन्दौर में एक महाराज होलकर्स हिन्दी-कमिटी है जो हिन्दी के अच्छे अच्छे ग्रन्थों के लेखकों का धन से सत्कार करती है। अलवर राज्य में तो इसका बहुत ही योग्य आदर हुआ है। श्रीमान् महाराज साहब अलवर ने अपने यहाँ के सब काम केवल नागरी लिपि में ही नहीं किन्तु हिन्दी भाषा में भी करने की आज्ञा प्रदान की है और राज-कार्य्य सम्बन्धी सभी आवश्यक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विदेशी पारिभाषिक शब्दों के स्थान पर हिन्दी के पारिभाषिक शब्द ढुँढ़वाने अथवा बनवाने का प्रशंसनीय आयोजन किया है। सर्वसाधारण में हिन्दी का प्रचार बढ़ाने और लोगों को—विशेषतः नवयुवकों को जिन पर हमारा सारा भविष्य निर्भर है—हिन्दी की ओर प्रवृत्त करने में सम्मेलन की परीक्षाएँ बहुत अच्छा और अधिक कार्य्य कर रही हैं। ये परीक्षाएँ सन्तोषजनक रूप से सर्व-प्रिय होती जाती हैं और दिन पर दिन उनमें सम्मिलित होनेवालों की संख्या बढ़ती जाती है। इन परीक्षाओं का सब से अच्छा परिणाम यह होगा कि केवल हिन्दी जाननेवाले लोग भी भिन्न भिन्न उपयोगी विषयों का ज्ञान प्राप्त कर के शिक्षित-वर्ग में आ जायँगे। भाषा तथा लिपि के सुधार की ओर से भी हम लोग उदासीन नहीं हैं। सम्मेलन की ओर से एक लिंग-निर्णय समिति बन चुकी है जिसने कुछ सिद्धान्त विचारार्थ प्रकाशित कर दिए हैं। सम्भवतः आगामी सम्मेलन में इन पर विचार भी होगा। ऐसी अवस्था में मैं अपनी ओर से एक नम्र निवेदन कर देना आवश्यक समझता हूँ। लिंग-निर्णय समिति के संयोजक पं० कामताप्रसाद जी गुरु ने लिंग-निर्णय के लिये पदार्थों का जो वर्गी-करण किया है वह समुचित नहीं जान पड़ता। केवल यह कह देना कि अवयवों के नाम पुल्लिंग अथवा भोज्य पदार्थों के नाम स्त्री-लिंग होते हैं, यथेष्ट नहीं है। लिंगभेद को किसी विशिष्ट वर्ग में ही बद्ध या परिमित कर देना युक्ति-संगत नहीं प्रतीत होता; उसके लिये शब्दों के रूप का ध्यान रखते हुए ही दूसरे व्यापक नियम बनाने चाहिए। वर्णविचार-समिति की रिपोर्ट भी अभी हाल में स्थायी-समिति द्वारा विचारार्थ प्रकाशित की गई है, जिसमें कई उपयोगी सूचनाएँ हैं। सुनते हैं, महाराष्ट्र-साहित्य-सम्मेलन ने गत वर्ष लिपि के सुधार के सम्बन्ध में कुछ कार्य्य आरम्भ किया था और कई उपयोगी सिद्धान्त भी स्थिर किए थे। हम लोगों को इस सम्बन्ध में उनसे मिल कर और उनकी सहायता से काम करना चाहिए क्योंकि हमारी देवनागरी और उनकी बालबोध लिपि प्रायः एक ही है।

सज्जनो! अब मैं आप लोगों का ध्यान एक बहुत ही आवश्यक और उपयोगी विषय की ओर आकृष्ट करता हूँ। वह विषय है कचहरियों में नागरी-प्रचार। मुसलमान बादशाहों ने जब भारतवर्ष में पदार्पण किया तब भी यहाँवालों की भाषा हिन्दी तथा लिखने के अक्षर देवनागरी थे। अकबर के समय तक भी कर-विभाग में इन्हीं का प्रयोग था, यद्यपि न्यायालयों की भाषा फारसी थी। जब अँगरेजी गवर्नमेंट यहाँ स्थापित हुई उस समय फारसी के स्थान पर अङ्गरेजी भाषा के प्रयोग का प्रस्ताव हुआ। परन्तु सामयिक-शासन-समिति (Court of Directors) ने इसे स्वीकार नहीं किया और उनके आज्ञानुसार सन् १८३७ ई० से फारसी के स्थान पर न्यायालयों के कार्य्य देशी भाषाओं में होने लगे। इस प्रकार भिन्न भिन्न प्रान्तों में उन प्रान्तों की भाषाएँ काम में लाई जाने लगीं। बंगाल में बंगला, ओड़ीसा में उड़िया आदि परन्तु पश्चिमोत्तर देश में उर्दू का प्रवेश हुआ, यद्यपि यहाँ के निवासियों की भाषा हिन्दी थी और है। आप जानते हैं कि जिसके द्वारा चार पैसा मिलता है अथवा आवश्यक कार्य्य का निर्वाह होता है उसी ओर जनता झुकती है। जब से यहाँ के न्यायालयों में उर्दू का समावेश हुआ उसी समय से उर्दू के पठन पाठन की उन्नति होने लगी और हिन्दी की ओर से कुछ अरुचि सी उत्पन्न होने लगी। अन्य प्रान्तों में वहाँ के न्यायालयों में वहीं की भाषा काम में लाई जाने के कारण उनकी बहुत वृद्धि हुई जिसे देखकर हमें हर्ष के साथ ईर्ष्या भी होती है। प्रायः पचास साठ वर्षों में बंगला, मराठी तथा गुजराती साहित्य ने जो उन्नति की है वह हमको आनन्द देती है। यदि यहाँ भी हिन्दी भाषा तथा नागरी अक्षरों का प्रयोग न्यायालयों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसी समय से आरम्भ हो गया होता तो अवश्य ही इसकी उसी भाँति उन्नति देख पड़ती। परन्तु आप कहेंगे कि उर्दू की उतनी उन्नति क्यों नहीं हुई तो उसका उत्तर यही मिलेगा कि उर्दू केवल काम चलाने के लिये प्रवेश कराई गई थी इस कारण उसका प्रचार इतना नहीं हुआ। इसके पहले के प्रेमी तथा कवि और लेखक अधिकतर काश्मीरी ब्राह्मण तथा कायस्थ लोग ही। अब थोड़े दिनों से हमारे मुसलमान भाई जागे हैं और इसकी उन्नति की ओर ध्यान देने लग गए हैं। उर्दू कानफ़रेंस भी करने लग गए हैं। वे केवल उर्दू की उन्नति को ही अपना कर्त्तव्य नहीं समझते किन्तु हिन्दी का गला घोंट कर उर्दू को स्थापित करना भी उचित जानते हैं। हिन्दी को मरी हुई भाषा (Dead language) कहने में भी उन्हें तनिक संकोच नहीं होता। इसके सम्बन्ध में भी लखनऊ के पञ्चम साहित्य सम्मेलन में तीसरे दिवस स्वर्गवासी राय देवीप्रसाद पूर्ण ने सारगर्भित तथा हास्यरस पूर्ण कविता युक्त व्याख्यान दिया था और उसमें भली भाँति सिद्ध किया था कि उन लोगों का हिन्दी पर ऐसा कटाक्ष करना अन्यायपूर्ण तथा असत्य है। कई मुसलमान निष्पक्ष विद्वानों ने स्वीकार किया है कि हिन्दी भाषा तथा नागरीलिपि सर्वाङ्ग पूर्ण है और जैसी शुद्ध यह लिखी तथा पढ़ी जा सकती है वैसी उर्दू नहीं। हिन्दी का सीखना बालकों के लिये कैसा सुगम है इसे कहने तथा सिद्ध करने की आवश्यता बाकी नहीं रही है। प्राचीन कवियों ने इसमें जो अपने विचार प्रकट किए हैं वे आज दिन तक अमूल्य हैं। यदि उसी शृंखला में हिन्दी-प्रचार न्यायालयों में हो गया होता तो हिन्दी अवश्य ही प्रायः उसी प्रकार उन्नत अवस्था को प्राप्त हुई होती जैसी इसकी बहिनें बंगला, मराठी तथा गुजराती को आज दिन प्राप्त है। इसमें संदेह नहीं कि न्यायालयों में उर्दू का आधिपत्य रहते हुए भी हिन्दी अपनी ऐसी अवस्था में भी जीवित देख पड़ती है। यह हमारे सौभाग्य की बात है। यह सत्य है कि जब टामसन साहब यहाँ के छोटे लाट थे तब सरकार ने हिन्दी भाषा का पढ़ना पढ़ाना सन् १८४४ में आरम्भ किया था। यदि ऐसा न हुआ होता तो बेचारी हिन्दी की यह अवस्था भी न देख पड़ती। उसके पश्चात् सन् १८५८ ईस्वी में कुछ लोगों ने न्यायालयों में हिन्दी भाषा के प्रवेश करने की चर्चा उठाई थी पर वह बात वहीं रह गई। जब यहाँ पर सर एण्टनी मैकडानल (जो अब लार्ड पदवी धारण किए हुए हैं) छोटे लाट थे उस समय इस सबन्ध में विशेष उद्योग हुआ था। जो पुस्तक पूज्यवर मालवीयजी ने अंगरेज़ी में "Court Character and Primary Education in the N. W. Provinces and Oudh" न्यायालयों के अक्षर तथा प्रारम्भिक शिक्षा, पर छपवाई थी वह अब भी बहुत ही उपयोगी है। उसमें राजा शिवप्रसाद सी० एस० आई० का कथन जो सन् १८७०—७१ की शिक्षा-विभाग की रिपोर्ट में दिया हुआ है, यह है कि "मेरे विचार में युक्त प्रदेश में कोई आवश्यकता नहीं है सिवा एक बात के जो बहुत सी आपत्तियों की जड़, बड़ी रुकावट तथा सदैव के लिये खेद की है। मेरा अभिप्राय न्यायालयों के अक्षर प्रयोग से है जो फारसी है। बङ्गाल की उन्नति का मुख्य कारण यह है कि जो अक्षर (बङ्गला) दूकानों पर तथा गांवों में प्रचलित हैं वही न्यायालयों में काम में लाए जाते हैं। सर ऐशली ईडन ने बिहार में फ़ारसी अक्षरों के स्थान पर हिन्दी चला कर बड़ा काम किया है। मेरी सम्मति में युक्त प्रान्त बिहार से अधिक मुसलमानी स्थान नहीं है। वहाबी झगड़ा पटने में ही बड़े बल से उठा था। युक्त प्रान्त में प्रारम्भिक शिक्षा जो हिन्दी ही में होनी चाहिए जनता को प्राप्त कराने के लिये लोग उत्सुक हो सकते हैं और इसलिये सार्वजनिक शिक्षा के लिये हिन्दी ही उप-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युक्त माननी पड़ेगी; परन्तु हमारे गांवों के लोगों से जब वे पाठशालाओं में शिक्षा पा कर और पारितोषिक, प्रमाणपत्र तथा छात्रवृत्ति प्राप्त करने के पश्चात् समन, वारंट अथवा किसीप्रकार की आज्ञा पढ़ने के लिये कहा जाता है तब वे अपनी अज्ञानता प्रकट करते हैं। ऐसे अवसर पर गांव के लोगों को जब कोसों चल कर फ़ारसी अक्षर पढ़नेवाला ढूँढ़ना पड़ता है तब वे बालकों, अध्यापकों, पाठशालाओं, शिक्षा तथा गवर्नमेंट को धिक्कारते और कोसते हैं। मेरे विचार में इन प्रदेशों की गवर्नमेंट के लिये बिहार की गवर्नमेंट का अनुकरण करना अधिक लाभदायक होगा। हमारे यहाँ की सार्वजनिक शिक्षा पटवारी के काम से अधिक आशा नहीं दिलाती। यदि लोगों को यह विश्वास हो जाय कि फारसी अक्षरों से जानकारी न रहने पर अन्य रीतियों से सुशिक्षित मनुष्य पेशकार, तहसीलदार, नाजिर अथवा कानूनगो हो सकता है, तो गवर्नमेंट को इस बात पर खेद न करना पड़ेगा कि लोग शिक्षा तथा पाठशालाओं से समुचित लाभ नहीं उठाते।.....पंजाब में प्रारम्भिक शिक्षा ने उचित उन्नति नहीं की, क्योंकि वहाँ मुसलमानों में फारसी अक्षरों का प्रचार था और उन्होंने पाठशालाओं में भी उसी भाषा की पुस्तकों का प्रवेश कराया। बंगाल की उन्नति का मूल कारण यही बीज-कवच है। वहाँ के न्यायालयों में, राजगृहों में, कोठियों में, खेतों तथा खरिहानों में, दूकानों पर, नगरों में और गांवों में एक ही जातीय अक्षरों का प्रचार है। युक्त प्रान्तों के न्यायालयों में आप आज हिन्दी अक्षरों का प्रचार कर दीजिए तो मैं अपनी इस वृद्धावस्था में फिर निरीक्षक (इन्स्पेक्टर) का कार्य्यभार ले कर बङ्गाल के शिक्षा पानेवालें बालकों से अधिक बढ़ी हुई संख्या इन प्रदेशों में दिखा दूँ और नहीं तो अपनी पेंशन से हाथ धो बैठूं"।

सर पेंटनी मेकडानल ने (जो अब लार्ड उपाधिधारी हैं) सन् १९०१ में जो आज्ञा दी थी उसका भी पूर्ण रीति से परिपालन नहीं हो रहा है।

यदि आप लोग एकत्र करना आरम्भ करें तो अधिकतर समन इत्यादि जो अदालतों से निकलते हैं केवल उर्दू अक्षरों में मिलेंगे, यहाँ तक कि जो हिन्दी का पन्ना होता है उसे फाड़ कर उस पर भी उर्दू में कोष्ठक-पूर्ति कर के भेजा जाता है। इसकी औषधि तो यही है कि समय समय पर आप इसकी ओर न्यायाधीशों का ध्यान आकर्षित करते रहें और समन इत्यादि लिखनेवालों को चेतावनी दिलाते रहें। काउन्सिल में जब प्रश्न किया जाता है तब सरकार के कर्म्मचारीगण अज्ञानता प्रकट करते हैं, परन्तु यदि इस प्रकार के नियम विरुद्ध समन एकत्र कर के आप लोग उनके सम्मुख उपस्थित करें तब अवश्य ही उनकी आंख खुलेगी। दीवानी न्यायालयों में कई प्रकार की डिग्रियों में हिन्दी के पन्ने भी छपे रहते हैं परन्तु उनकी पूर्ति नहीं की जाती। इस पर लिखा पढ़ी की गई तो न जाने क्या फल सोच कर न्यायालयों में यह आज्ञा भेजी गई है कि हिन्दी के पन्ने अलग कर के रखे रहें; उनके संबन्ध में जैसी आज्ञा पीछे दी जायगी वैसा करना होगा। हाईकोर्ट की जो डिग्रियाँ जनता को दी जाती हैं उनको देख कर आश्चर्य्य होता है। उनमें आधा अंश अङ्गरेजी और आधा उर्दू में रहता है और दोनों की पूर्ति हुई रहती है। इसका क्या अभिप्राय है, समझ में नहीं आता। पहले तो हाइकोर्ट की डिग्रियों में हिन्दी अंश न होना अन्याय है। जैसे अङ्गरेजी के साथ उर्दू में डिग्री बनी रहती है उसी तरह हिन्दी में भी क्यों न हो? अथवा अङ्गरेजी को उठा कर उसके स्थान पर हिन्दी क्यों न हो जाय जिसमें डिग्री को ले कर दोनों में से किसी प्रकार के अक्षरों के जाननेवाले स्वयं ही पढ़ कर उनका अभिप्राय जान लें। दूसरे यह कि जिले के न्यायालयों की डिग्रियों में हिन्दी का पन्ना रहते हुए भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसकी पूर्ति न की जाय यह बड़े ही आश्चर्य तथा अन्याय की बात है। न्यायालयों के कार्य्यालयों में काम तो कुल उर्दू ही में होते हैं, जिसके सुधार के सम्बन्ध में ऊपर कहा गया है। परन्तु गवाहों की साक्षी का नागरी अक्षरों में न लिखने देना भी बड़ा ही अन्याय और असुविधा है। मैंने नैनीताल के न्यायालय में देखा है कि नागरी अक्षरों में साक्षी भली भाँति लिखी जाती है और अन्यत्र भी साक्षी होते समय कई वकील उसे उतनी ही शीघ्रता से नागरी में लिखते जाते हैं जैसे उर्दू में अभ्यस्त पेशकार। फिर नागरी अक्षरों में साक्षी लिखने की आज्ञा नहीं तो स्वतन्त्रता ही क्यों न दी जाय। न्यायालयों के नियमों में भी कोई बाधा नहीं पाई जाती। फिर ऐसी अवस्था में जो न्यायाधीश नागरी अक्षरों में साक्षी लिखते हैं उनके साथ अनुचित व्यवहार और भीतरी आक्रमण करना नीति-विरुद्ध और घोर अन्याय है। इस सम्बन्ध में भी काशी नागरीप्रचारिणी सभा ने हाई कोर्ट को पत्र भेजा था। उसका उत्तर यह मिला कि हाई कोर्ट इस सम्बन्ध में कोई आज्ञा देने की आवश्यकता नहीं समझती। (परिशिष्ट देखिए) जब कोई आज्ञा देने की आवश्यकता नहीं है तो फिर काम करनेवालों के साथ भीतरी अन्याय क्यों किया जाता है ?

भाइयो! इससे भी अधिक अनर्थ म्युनिसिपेलिटी तथा डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के कार्य्यालयों में हो रहा है। टिकस की रसीदें और माता-छपाई की सूचनाएं यद्यपि तीन प्रकार के अक्षरों में छपी हैं तथापि उनकी पूर्ति नागरी अक्षरों में नहीं की जाती। यही अवस्था नहर-विभाग की भी है। क्या सिक्कों, नोटों और डाक के टिकटों तथा स्टाम्पों पर जो मूल्य अङ्कित रहते हैं वे उन्हीं लोगों के सूचनार्थ रहते हैं जो अङ्गरेजी अथवा फारसी अक्षर ही नहीं किन्तु भाषा भी जानते हों? इसका अनर्थ, क्या कहा जाय। रुपयों पर "वन रूपी" अङ्गरेजी में और "यक रुपियः" फारसी में, अठन्नियों पर "हाफ़ रूपी" और फारसी में 'हश्त आनः, चवन्नियों पर ¼ रूपी' अङ्गरेजी में और "चहार आनः" फारसी में ठप्पा किया रहता है, पैसों पर तो केवल "वन क्वार्टर आना" अङ्गरेजी ही में पाया जाता है और पाइयों पर '१/१२ आना' ही रहता है। सावरेनों पर उनका मूल्य किसी भाषा तथा अक्षर में भी नहीं रहता। परन्तु एकन्नियों पर बिचारी हिन्दी को अन्य चार प्रकार के अक्षरों के साथ स्थान मिला है। नोटों पर उर्दू में पांच तथा दस रुपए लिखे रहते हैं। इनका कारण तनिक भी समझ में नहीं आता। क्या ये सब काम किसी एक मुख्य अधिकारी द्वारा विचारपूर्वक नहीं होते ? जिसका मन जिस सिक्के तथा नोट पर जिन अक्षरों या भाषाओं के रखने को चाहता है उसे वह अपने इच्छानुसार रखवा देता है। यह तो कभी नहीं कह सकते कि जिन अक्षरों में मूल्य अङ्कित रहता है उन्हीं अक्षरों के पढ़नेवाले अधिक हैं। यदि मूल्य अङ्कित करने से यह अभिप्राय है कि जिनके हाथ में ये जांय वे पढ़ कर मूल्य जान सकें तो मैं बलपूर्वक कह सकता हूं कि केवल नागरी अक्षरों में ही मूल्य रहने से अधिक भारतवासियों को इसके द्वारा जानकारी हो सकती है। और यदि यह माना जाय कि मूल्य अंकित करने की आवश्यकता नहीं है जैसे सावरेन को बिना मूल्य अंकित रहते ही लोग चीन्ह लेते हैं तो भाइयो! फिर किसी सिक्के पर किसी अक्षर में मूल्य अंकित न रहना चाहिए। लोगों को उसके आकार तथा वर्ण से ही जानकारी हो जाया करेगी। मैं यह बातें इंगलिस्तान अथवा फारस के सिक्कों और नोटों इत्यादि के सम्बन्ध में नहीं कह रहा हूँ -वरन् उस पुनीत भारतवर्ष के लिये, जहाँ पर अधिक लोग हिन्दी बोलने और समझने की योग्यता रखते हुए निवास करते हैं। यदि इंग्लैंड अथवा फारस में सिक्कों पर नागरी अक्षरों को वह स्थान दिया जाय जो हमारे भारतीय सिक्कों पर अंग्रेजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को प्राप्त है तो आप लोग समझ सकते हैं कि वहां की जनता इस सम्बन्ध में क्या कहेगी। परन्तु दुःख है कि हमारे भारतवासी ही अपने स्वत्वों की ओर उदासीन भाव रखते हैं। इतिहासों से सिद्ध है कि प्रजा की इच्छा के विरुद्ध कोई शासक नहीं चल सकता और न कभी चल सका है। यदि आप उचित रीतियों से बलपूर्वक गवर्नमेण्ट से किसी विषय के निमित्त निवेदन करेंगे तो सम्भव नहीं है कि आपकी बातें न मानी जांय। और जब तवर्नमेण्ट उचित आज्ञा द्वारा आपको कोई अधिकार देती है तो क्या आपका कर्तव्य नहीं है कि आप उससे लाभ उठावें? जब बहुत माँगने पर एक वस्तु प्राप्त हुई और आपने उसका उपयोग नहीं किया तो फिर आप किस मुँह से अधिक माँगने को उद्यत होते हैं?

आपको नागरी अक्षरों में अर्जीदावे, प्रार्थना पत्र इत्यादि न्यायालयों में देने का पूर्ण अधिकार प्राप्त है। परन्तु अपने अपने कामों की ओर ध्यान दे कर आप लोग विचारें तो सही कि हम में से कितने ऐसे हैं जो इससे लाभ उठाते हैं। कामों को न करने के लिये सैकड़ों बहाने होते हैं। कुछ लोग कहते हैं कि लेखक नहीं मिलते, कितनों का यह कथन है कि न्यायाधीश तथा उनके कार्य्यकर्त्तागण अप्रसन्न होंगे इत्यादि इत्यादि। परन्तु भाइयो! मैंने इस प्रकार के बहानों को जब वकालत आरम्भ करने के समय नहीं माना तो अब दस वर्ष से कुछ अधिक काम करने के उपरान्त कुछ अनुभव प्राप्त होने पर कदापि इसे मानने के लिये उद्यत नहीं हूँ। आरम्भ में चाहे इस प्रकार की क्षणिक कठिनाइयाँ उपस्थित हों अथवा होती हुई जान पड़ें परन्तु जब आप कटिबद्ध हो कर काम में तत्पर रहेंगे तो आपका मार्ग स्वच्छ और निष्कण्टक हो जायगा और आपकी आत्मा को आनन्द और संतोष प्राप्त होगा। जैसे जाड़े में गंगा तट पर जा कर स्नान करने के पहले चित्त वृत्ति होती है और फिर यदि आपने साहस कर कपड़े उतारे और जान्हवी के निर्मल जल में डुबकी लगा कर स्नान किया तो उसके पश्चात् जो आनन्द प्राप्त होता है वह उसके अनुभव करनेवाले ही जान सकते हैं। इसी प्रकार यदि आपने कल्पित भूत से न डर कर अपना कर्त्तव्य चेता और अपने कार्य में स्थिर रह कर उसे आरम्भ कर दिया तो थोड़े ही दिन में काम चल निकलेगा और आपको स्वयं बहुत बल तथा आनन्द प्राप्त होगा। यह काम यदि पुराने वकील उठा लें तब तो बड़ा ही उत्तम हो। परन्तु जो नवयुवक भाई इस व्यवसाय में पदार्पण करते हैं उन्हें दृढ़ता के साथ कमर कस कर नागरी अक्षरों में कार्य्य आरम्भ करना चाहिए। बहुत फार्म जो नागरी अक्षरों में सरकार की ओर से छपे हैं उन्हें चाहे आप स्वयं भी छपवा ले सकते हैं। उनमें थोड़ी ही स्थान-पूर्त्ति कर के काम होता है। जैसे मिंसिल मुआयना, गवाहों की खुराक का टेंडर, गवाहों की इस्म नवीसी, नकल की दरख़ास्त इत्यादि के फार्म सरकार की ओर से ही छपे हुए हैं और वकालतनामा, इज्रा डिग्री, मेहनताने का सर्टि-फिकेट और हलफ़नामे इत्यादि के फार्म दीवानी विभाग में और बकाया लगान, बेदखली इत्यादि के कलक्टरी के फार्म मुसन्ने के सहित छपे छपाए कई नागरी प्रचारिणी सभाओं द्वारा मिलते हैं; उनके काम में लाने से यदि नव शिक्षित लेखक भी रहेगा तो सुगमता से काम कर लेगा। प्रार्थनापत्रों, दस्तावेजों और अर्जीदावों इत्यादि के नमूने की जो पुस्तक उद्योगी और हिन्दी के परमहितैषी इंडियन प्रेस प्रयाग ने छापी है, वह यद्यपि पुरानी हो गई है और उसमें अब बहुत संशोधन की आवश्यकता है तथापि उससे सहायता मिल सकती है।

यह तो हुआ वकीलों का कर्त्तव्य। परन्तु जो लोग वकीलों से काम लेनेवाले होते हैं वे भी दोष से मुक्त नहीं हो सकते। इस काम का अधिकांश भार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन लोगों पर ही है। यदि वे हठ के साथ अपने वकील से कहें कि मेरा काम नागरी अक्षरों में ही हो तो वकीलों का साहस नहीं है कि वे अपने अन्न-दाता मोअक्किल की आज्ञा न पालन करें। जैसे और सब काम करनेवाले आपसे पैसा ले कर आपके इच्छानुसार काम करते हैं वैसे ही वकील भी हैं। मुझे इस बात का अनुभव है कि काशी के एक परम देश-भक्त तथा मातृ-भाषा के हितैषी ने अपने कट्टर उर्दू वाले वकीलों से आग्रह किया कि मेरा काम नागरी अक्षरों में ही हो और यदि मेरे पुराने वकील ऐसा न करें तो वकील बदल दिए जायँ। इस पर वकीलों को उनके इच्छानुसार नागरी अक्षरों में काम करना पड़ा। सज्जनों! यह जीविका का मामला है। पैसा दे कर जिससे आप काम लेते हैं यदि वह जान ले कि पैसा देनेवाला अमुक रीति से काम लेने पर दृढ़ है और यदि उसे यह विश्वास हो जाय कि मैं इस भाँति काम न करूँगा तो मेरी जीविका में बट्टा लगेगा तो वह झख मार कर आपके इच्छानुसार काम करेगा। यह प्रकृति का अटल नियम है। इस पर और अधिक कहने के लिये न तो समय है और न स्थान।

यदि मातृभाषा की भक्ति और उसकी उपयोगिता के विचार का संचार बाल्यावस्था से बच्चों के हृदय में कराया जाय तो बड़े होने पर वे स्वयं इसे मानेंगे। यदि आप अपने बालकों को हिन्दी में शिक्षा दें और उसे मुख्य शिक्षा मान कर उनको पढ़ावें लिखावें तो वे उसे ही अपनी मातृभाषा मानेंगे और बड़े होने पर उसी में अपना सब काम करेंगे। अपने घरों में जो जो निज का व्यवसाय आप करते हैं उसे हिन्दी में करें, जो पत्र व्यवहार आप अपने इष्ट-मित्रों से करते हैं उसे हिन्दी में लिखा करें तो इसके द्वारा भी बहुत कुछ प्रचार बढ़ सकता है। आपके मित्र जो पत्र अंग्रेज़ी में भेजें आप उसका उत्तर हिन्दी में दें तो वे स्वयं लज्जित हो कर आप का अनुकरण करेंगे। नित्य की बोल चाल में भी हिन्दी की ओर ध्यान रख कर आप इसका बहुत कुछ प्रचार बढ़ा सकते हैं। मेरे देखते ही देखते समय ने बहुत कुछ पलटा खाया है। एक समय ऐसा था जब केवल हिन्दी जाननेवाले को पढ़े लिखों में नहीं गिना जाता था और ऐसा मनुष्य स्वयं भी लज्जित होता था। अब ऐसा समय है कि जब हिन्दी में लिखी हुई दरखास्त किसी हाकिम के हाथ में दीजिए और उसके सहायतार्थ कहिए कि मैं इसे पढ़ दूँ तो वह हाकिम प्रायः उसे जोर जोर से पढ़ता है और कहता है "मैं भी हिन्दी जानता हूँ।" बातचीत में भी लोगों के सामने यदि आप इसकी चर्चा करते हैं तो जो हिन्दू वकील हिन्दी में काम नहीं करता है लज्जा के मारे अपना सिर झुकाता है और उसके मुख पर मलीन भाव दिखाई पड़ता है। बड़े बड़े प्राचीन कुलों में जहाँ के बच्चे "बिसमिल्लाह रहमाने रहीम" के शब्दों से विद्यारंभ करते थे उनके यहाँ "ओ३म् नमः सिद्धम्" "श्री गणेशायनमः" के साथ विद्यारम्भ होने लगा है। यह शुभारम्भ देख कर कौन ऐसा हिन्दू कहलानेवाला मनुष्य है जिसका हृदय एक बार फड़क नहीं उठता?

शिक्षा में जो अधिक प्रचार नहीं होने पाता उसका अन्य रुकावटों के साथ साथ एक यह भी कारण है कि हिन्दी में शिक्षा नहीं दी जाती। सरकार ने जो हाल में आठवीं कक्षा तक अंग्रेजी भाषा को छोड़ कर अन्य विषयों में देशी भाषाओं द्वारा शिक्षा देने का नियम बनाया है वह अवश्य उपयोगी है। इसी प्रकार यदि शिक्षा का माध्यम हिन्दी कर दिया जाय और अंग्रेजी को केवल एक अलग विषय रख कर उसकी शिक्षा दी जाय तो विद्यार्थियों को बहुत कुछ ज्ञान थोड़े ही समय में प्राप्त हो सकेगा। इसका अनुभव गुरुकुल कांगड़ी के विश्वविद्यालय में भली भाँति हुआ है। विज्ञान के विषयों में यहाँ

सन्दर्भ ग्रन्थ
REFRENCE BOOK
यह पुस्तक वितरित न की जाय
(NOT TO BE ISSUED)
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्य्य भाषा ही द्वारा पढ़ाए जाते हैं। किसी अंश में यह कहा जा सकता है कि पुस्तकें हिन्दी में नहीं बनी हैं। परन्तु इस ओर भी उद्योग आरम्भ हो गया है। फुटकर पुस्तकें निकलने के अतिरिक्त काशी-नागरीप्रचारिणी सभा ने जो मनोरंजन पुस्तक-माला का प्रकाशन आरम्भ किया है उसमें कई उपयोगी विषयों पर पुस्तकें लिखी गई हैं और लिखी जा रही हैं। गहन विषयों पर बहुत सी उत्तम उत्तम पुस्तकें लिखी हुई तैयार हैं और उत्साही लेखक उन्हें लिख रहे हैं; परन्तु द्रव्य के अभाव से काम में रुकावट पड़ रही है। खण्डवा की ग्रन्थप्रकाशक मण्डली ने भी अच्छे ग्रन्थ निकाले हैं। प्रयाग की विज्ञान परिषद् द्वारा अच्छा काम हो रहा है। काशी में 'ज्ञान मण्डल' नाम से एक संस्था आरम्भ हुई है जिसके उद्देश्य ये हैं—

(क) देशी भाषाओं द्वारा संसार के ज्ञान को अपनाना।

(ख) विदेशी भाषाओं द्वारा भारत के ज्ञान को संसार में पहुँचाना।

(ग) संस्कृत में उपस्थित ज्ञान भण्डार की खोज कर उसका देशी और विदेशी भाषाओं द्वारा प्रकाश करना।

(घ) पुस्तकालय, मुद्रणालय और पुस्तकों की दूकान खोलने का प्रबन्ध करना।

प्रयाग के इंडियन प्रेस तथा ओंकार प्रस की पुस्तकें भी अच्छी निकल रही हैं। सत्य-ग्रन्थ-माला की पुस्तकें भी उत्तम हैं। हिन्दी शब्दसागर तथा विश्वकोष ऐसे बड़े ग्रन्थों का हिन्दी में निकलना कम गौरव की बात नहीं है। पण्डितवर मिश्रबन्धुओं ने तथा श्री मैथलीशरण गुप्त ने भी हिन्दी साहित्य की कम सेवा नहीं की हैं। सरस्वती, मर्य्यादा तथा विज्ञान पत्रिका द्वारा भी अच्छा काम हो रहा है। परन्तु यदि आप लोगों में इनके पढ़ने की उत्कंठा प्राप्त न होगी, इनसे आप लाभ न उठावेंगे तो इनके संचालकों को उत्साह कैसे मिलेगा और इसके द्वारा जनता को यथेष्ट लाभ कैसे प्राप्त होगा ?

विद्या विषयक तथा शिक्षा विभाग की जो संस्थाएं हैं उनमें हिन्दी हितैषी उचित संख्या में हों तो उन संस्थाओं द्वारा भी कार्य्य होना अधिक सम्भव है। प्रयाग के विश्वविद्यालय में हिन्दी के हितैषियों की संख्या नितान्त न्यून है; इसी कारण इस विश्वविद्यालय में इस ओर कुछ भी उन्नति नहीं हो रही है। उच्च परीक्षाओं में हिन्दी को अब तक एक मुख्य विषय नहीं बनाया गया। मुझे एक देशहितैषी परन्तु हिन्दी न जाननेवाले विश्वविद्यालय के सभ्य से इस विषय में बातचीत करने का अवसर मिला। उन्होंने कहा कि विश्वविद्यालय की उपाधि ऐसी सस्ती नहीं बनाई जा सकती। परन्तु दुःख के साथ कहना पड़ता है कि यदि उनको हिन्दी के अमूल्य काव्यों से कुछ भी परिचय होता तो वे कदापि ऐसा न कहते। कौन ग्रन्थ अँगरेजी साहित्य में है जिस की बराबरी के ग्रन्थ हिन्दी में नहीं पाए जाते ? चन्द बरदाई से ले कर भारतेन्दु हरिश्चंद्र तक आपको हर प्रकार के काव्य और नाटक ऐसे मिलेंगे जो किसी उपाधि की परीक्षा में नियत किए जा सकते हैं और जिनसे साहित्यविषयक पूरी शिक्षा विद्यार्थी को प्राप्त हो सकती है। ऐसे ग्रन्थों के रहते हुए भी उनका पाठ्य पुस्तकों में प्रवेश न कराना, जनता को उनके ज्ञान से वंचित रखना और मातृभाषा का गला घोंटना कहाँ तक न्याय है ?

यह तो कथा है राजकीय विश्वविद्यालय की जिस में सरकारी कर्म्मचारियों के बीच भारत हितैषियों का बस नहीं चलने का बहाना लाया जा सकता है। परन्तु जो विश्वविद्यालय आपके लिये आप ही के प्रबन्ध से स्थापित हो रहा है उसमें भी मातृभाषा का वैसा ही अनादर होना कहाँ तक सहने योग्य होगा ? यदि इसमें भी हिन्दी साहित्य को उचित स्थान न मिला और यहाँ भी शिक्षा का माध्यम विदेशी भाषा ही रही तो फिर इतना द्रव्य व्यर्थ व्यय करना किस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काम का? इससे तो अधिक उपयोगी यह होता कि इसी धन से प्रारम्भिक शिक्षा द्वारा जनता को ही लाभ पहुँचाया जाता। मेरा अभिप्राय यह नहीं है कि अंगरेजी भाषा की पुस्तकों का पढ़ना पढ़ाना एक दम बंद कर दिया जाय और उसके द्वारा जो ज्ञान की प्राप्ति हो सकती है उसे रोक दिया जाय। हम लोगों में जो इस समय कुछ जागृति हुई है उसके लिये अंगरेजी शिक्षा को धन्यवाद है। परन्तु उसके साथ ही साथ यदि हम देशी भाषाओं की उन्नति का भी ध्यान रखें, देशी भाषाओं के ग्रन्थों को दीमकों के हवाले न कर दें किन्तु उनकी वृद्धि करते हुए उनका भण्डार भरते चलें और जहाँ तक सम्भव हो शिक्षा मातृभाषा द्वारा दें तो विद्यार्थियों को शीघ्र ज्ञान प्राप्त होगा, उनकी रुचि मातृभाषा भण्डार की उन्नति करने पर बढ़ेगी और भविष्य में चल कर हमें कुछ और ही दृश्य देख पड़ेगा। सर गुरुदास बेनर्जी और सर आशुतोष मुकर्जी ऐसे अनुभवी विद्वानों ने भी मैट्रिक्युलेशन तक अङ्गरेज़ी भाषा को छोड़ कर अन्य विषयों की शिक्षा का माध्यम देशी भाषा को ही उपयुक्त बताया है। अभी विगत वर्ष के मार्च मास में भारतीय सरकार की न्याय बनानेवाली महती सभा में श्रीमान् महाशय रायनिङ्गर ने एक प्रस्ताव उपस्थित किया था कि "यह काउन्सिल गवर्नर जनरल-इन-काउन्सिल से अनुरोध करती है कि वह प्रान्तीय सरकारों से परामर्श कर के सारे माध्यमिक (Secondary) स्कूलों में भारतीय विद्यार्थियों के लिये देशी भाषाओं में शिक्षा दिलवाने और अँगरेजी के अध्ययन को दूसरी भाषा की भांति अनिवार्य्य बनाने के उपाय करें।" इस प्रस्ताव के उपस्थित करते समय, अनेक विद्वानों तथा शिक्षा विभाग के अनुभवी सज्जनों के इस विषय पर जो कथन हो चुके हैं उन्होंने उनका उल्लेख किया था जिससे इस प्रस्ताव की पुष्टि होती है। जो-जो आपत्तियाँ अथवा बहाने इसके विरुद्ध उठाए जाते हैं उनको भी उन्होंने काटा है। ऐसी अवस्था में मैं नहीं समझता कि ऐसा सीधा सादा प्रस्ताव क्यों न स्वीकार किया जाय और इसके अनुसार शिक्षा विभाग का सुधार क्यों न हो?

थोड़े दिनों से मुसलमानों के आंदोलन पर हमारी सरकार ने उनके लिये विशेष रूप से शिक्षा का प्रबंध करना निश्चय तथा आरम्भ कर दिया है। इस युक्त प्रदेश में ४८० लाख मनुष्य सन् १९११ की मनुष्य-गणना में पाए गए थे। उनमें से ४३८ लाख हिन्दी बोलनेवाले और ४१ लाख उर्दू बोलनेवाले थे। अर्थात् प्रति सैकड़ा ९१ हिन्दी भाषा में अपने मन की बातें प्रकट करते हैं और ९ से कम उर्दू में। उन कुल निवासियों में ४०९ लाख हिन्दू और ६९ लाख मुसलमान हैं। इनमें हिन्दू शिक्षितों की संख्या १३ लाख ५४ हजार और मुसलमान शिक्षितों की २ लाख २७ हजार है। अर्थात् हिन्दुओं में प्रति सैकड़ा ३·३ अर्थात् ३⅓ और मुसलमानों में भी ३-३ अर्थात् ३⅓ शिक्षित लोग हैं। ऐसी अवस्था में आश्चर्य्य मालूम होता है कि जब हिन्दुओं और मुसलमानों में उसी हिसाब से शिक्षितों का परता आता है तो एक धर्म्मावलम्बी प्रजा को तो शिक्षा देने का विशेष रूप से प्रबंध किया जाय और दूसरी के प्रति उद्योग का कोई विशेष ध्यान न दिया जाय। जब सरकार की दोनों ही प्रजा हैं, दोनों ही से सरकार का सम्बन्ध है, तो फिर यह कहाँ का न्याय है कि एक को पक्षपात की दृष्टि से देखा जाय और दूसरी की कुछ पूछ न हो। मैं यह नहीं कहता कि इस्लामिया स्कूलों का प्रबंध न हो; किन्तु मेरा कथन यह है कि पाठशालाएँ भी उसी भाँति कृपादृष्टि से देखी और खोली जायँ। हिन्दुओं की शिक्षा का भी उचित प्रबंध अवश्य होना चाहिए।

प्यारे मित्रो! मैंने आपका बहुत समय ले लिया। मेरे हृदय में इन विषयों पर तो इतनी बातें भरी हैं कि जो कुछ मैंने कहा है बहुत ही कम है। इन सब विषयों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा अन्य विषयों पर आपके सम्मुख प्रस्ताव उपस्थित होंगे और उनमें से हर एक के सम्बंध में विशेष रूप से आपके समक्ष व्याख्यान होंगे। मैं और अधिक समय आप लोगों का नहीं लेना चाहता। आपका जो बहुमूल्य समय मैंने लिया है उसके लिये क्षमा-प्रार्थी हूं। विशेष कर इसलिये कि यदि आप किसी विद्वान्, पण्डित अथवा कवि को इस स्थान के लिये निमन्त्रित करते तो वे आप लोगों का मनोरंजन करते, जैसा गत वर्ष वैकुण्ठवासी राय देवीप्रसाद जी ने अपने कविता-पूर्ण व्याख्यान से चित्त को मुग्ध कर लिया था। अन्त में मैं आप लोगों से यही कहना चाहता हूँ, जैसा कि पूज्यवर लाला हंसराज जी ने गत वर्ष लाहौर में कहा था—'जैसे मनुष्य के शरीर में रुधिर है वैसे ही किसी देश की जाति के लिये भाषा है। जैसे मनुष्य का शरीर रक्त के न होने और न घूमने से बढ़ नहीं सकता उसी प्रकार कोई जाति प्रफुल्लित वा हरी भरी नहीं रह सकती जब तक उसके आपस में विचार जानने और प्रकट करने के लिये सामान्य भाषा न हो। हर भाषा की कुछ न कुछ परम्परागत कथा हुआ करती है। उसके कुछ ऐसे गूढ़ विचार और उच्च आदर्श विशेष हुआ करते हैं जो उसी भाषा के साथ जीते हैं और उसी भाषा के साथ उनका अन्त भी हो जाता है। ग्रिफिथ साहेब की रामायण का कोई अंश पढ़ने से हम लोगों के चित्त में क्या कभी वैसा उत्साह तथा आनन्द उत्पन्न हो सकता है जैसा तुलसी कृत रामायण के पढ़ने और सुनने से होता है? इत्यादि"

भाइयो! आप बड़े बड़े ऋषियों की सन्तान हैं। आपके पूर्वज बड़े बड़े वीर, विद्वान, त्यागी तथा परोपकारी हो गए हैं। उनका रुधिर आप लोगों के शरीर में अब तक प्रवाह करता है। यदि आप अपने को इस प्रकार भूल जायँ तो बड़े खेद और लज्जा की बात होगी। अब से चेतिए और अपने धर्म्म तथा कर्तव्य का पालन कीजिये।

ओं शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

—०—

परिशिष्ट।

No. $\frac{5174}{23}$, dated 31st March, 191[illegible]

To

THE REGISTRAR,

HIGH COURT OF JUDICATURE, N.-W. P.,

Allahab[illegible]

SIR,

I have the honor respectfully to submit the following few lines on behalf of the Kashi Nagari Pracharini Sabha, for the kind consideration of the Hon'ble Judges of the High Court :—

1. That it has come to the knowledge of the Sabha that a representation has been made to the Hon'ble High Court by a Mohamadan gentleman against the use of Nagari character in recording the proceedings by the Munsif of Bisauli, District Budaun and that the same is under the consideration of the Hon'ble Court.

2. That in the said representation, the Sabha understands, the legality of using the Nagari character by the judicial officer concerned, is questioned.

3. That the provisions relating to the recording of evidence by a presiding officer of a Court as laid down in sections 137 and 138 of the Code of Civil Procedure and also Order XVIII, Rules 4, 5, 6, 7 and 8 of the same Code.

4. That the said provisions relate to the language, in which the proceedings are to be recorded and do not specify the characters which are to be used.

5. That the Nagari character has been recognised by the Government as one which can be employed by the Civil, Revenue and Criminal Courts.

6. That no prohibition, express or implied, so far as the Sabha is aware, exists against the use of the Nagari script in the recording of evidence by the presiding officer of a Court.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

7. That the Sabha believes that several judicial officers still use the Persian character in recording evidence, court proceedings and writing out their judgments and orders and it would be sheer injustice not to allow a judicial officer to use the other vernacular script. In Para 1 of G. O. No. $\frac{585}{III}$ 3430-68 of 1900. "His Honor.....admitted that some advantage might be anticipated from the more general use of the Nagari character in official documents."

8. That the opponents of the use of Nagari character in recording evidence, have, the Sabha understands, based their objection on the ground that those who are not well-acquainted with the Nagari script would be put to much difficulty in inspecting the records, but the Sabha most respectfully submits that when plaints, written statements and other petitions together with notices and other documents, allowed to be filed in the Nagari script, form chief part of the record of a case and when the ministerial officers and pleaders are required to know both the forms of the vernacular, the futility of the objection can well be understood.

9. That the Sabha respectfully invites the attention of the Hon'ble Judges of the High Court the comparative figures of the persons using the different languages and characters contained in the said G. O. as well as in the subsequent Census Reports of these Provinces.

10. That the Sabha thinks it needless to bring to the kind attention of the Hon'ble Judges the fact that the Nagari Script is used as the medium of expression in courts, in most of the Indian States, neighbouring Provinces of Bihar and Central Provinces and even in some of the hilly districts of these Provinces where the evidence of witnesses is recorded in the Nagari character with no less facility than in the Persian character but with better legibility and clearness.

11. That the majority of literate witnesses who give evidence in courts can read Nagari character only; hence if the evidence is recorded in the Nagari character such a witness can read his evidence instead of requiring the services of the Peshkar to read it out to him, suspending the further work of the Court.

12. That the Sabha need not lay stress upon the superior merits of the Nagari script in its greater legibility which ensures correct reading and minimises the commission of mistakes in copying. This radical difference between the Nagari and Persian scripts is very well brought out in the following quotation from the views of the eminent Mohamadan scholar, the late Syed Ali Bilgrami:

'A most useful peculiarity in the alphabet of these Aryan languages is that the vowel sounds are always expressed by means of letters, where in the Semitic languages (with the exception of the Aethiopic) the vowel is expressed by arbitrary signs known as 'Zer,' 'Zabar,' 'Pesh,' and 'Tanwin,' etc. That is to say, while in the one family of languages the vowel sound is a part and parcel of the alphabet, and is invariably expressed in writing, in the other group the vowel is a mere external sign supposed to be placed over or under a consonant, but invariably omitted in practice. It is thus evident that the reading of an Aryan language is very much easier than that of a Semitic language.'

13. The Sabha therefore prays that in view of the facts submitted above, the Hon'ble Court will be pleased to decide and to lay down for future guidance that the Nagari script may be used for the recording of evidence by the presiding officers of Courts.

No. $\frac{1345}{132}$ of 1916.

From

THE REGISTRAR,
HIGH COURT OF JUDICATURE,
N.-W. PROVINCES.

To

THE HONY. SECRETARY,
NAGARI PRACHARINI SABHA,
Benares.

Dated Allahabad, the 15th April, 1916.

SIR,

I am directed to acknowledge the receipt of your letter No. 5174/23, dated the 31st March, 1916, in which you suggest that the presiding officers of the courts in the province of Agra may be permitted to record evidence, etc., in the Nagari script.

2. In reply I am to say that the Court has instituted certain enquiries in the matter, and finds that

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

sufficient cause has not been shown for issuing any rule on the subject.

I have the honor to be
SIR,
Your most obedient servant
(Sd.) B. H. BUNDILLE, I.C.S.,
Registrar.

—o—

परिश्रम और व्यवसाय।

[लेखक,—श्रीयुक्त बा० देवीप्रसाद खत्री।]

समाज की उस अवस्था में जब कि विवेक का राज्य होता है, उत्तम तथा उच्च कक्षा की प्रबुद्धता उन्हीं लोगों में अधिकतर पाई जाती है जिन्होंने अपने जीवन में गाढ़ा परिश्रम किया हो। यह अतिशयोक्ति नहीं है वरन् बिलकुल सत्य है कि मनुष्य को उसका व्यवसाय अथवा दैनिक वृत्ति ही शिक्षित बनाती है। परिश्रम एक बुद्धिमान् मनुष्य को उसकी रोटी ही नहीं वरन् बुद्धि विषयक, सदाचार विषयक तथा अध्यात्म विषयक उपदेश भी देता है। इसके यथोचित प्रभाव से मनुष्य का शरीर गठित हो जाता है तथा शक्ति और बल बढ़ता जाता है।

दृष्टान्त के लिये एक कृषक का ही कार्य्य लीजिए। मानसिक साधनों के लिये यह एक पाठशाला है। किसान को सभी तत्वों का निरीक्षण करना पड़ता है। जिस पृथ्वी को वह जोतता है उसकी मिट्टी किस प्रकार की है? जो पदार्थ उपजते हैं वे किन कामों में आते हैं तथा कब होते हैं? आदि प्रश्नों के उत्तर उसे जानने पड़ते हैं। प्रति दिन उसके नेत्रों के सामने नवीन ज्ञान आता है। और इस प्रकार वह इस योग्य हो जाता है कि अपनी सम्मति स्थिर कर सके। इन कार्य्यों के दिन रात करते रहने से उसे सूक्ष्म दृष्टि से देखने तथा सम्मति स्थिर करने की आदत पड़ जाती है, उसकी विचार-शक्ति बढ़ जाती है तथा उसे उत्तम मार्ग पर चलाती है।

यही बात हर एक व्यवसाय के सम्बन्ध में कही जा सकती है। मल्लाह भी पञ्च-तत्वों का निरीक्षण करता है। वह अपने ज्ञान और शक्ति को कार्य्य में लाने के लिये चैतन्य रहता है क्योंकि उचित प्रकार से विचार करने ही पर उसका जीवन निर्भर है। इस तरह उसकी सम्मति देने तथा कर्त्तव्य स्थिर करने की शक्ति तीव्र हो जाती है। जो शिक्षा मनुष्य अपने व्यवसाय से पाता है वह इतनी विचित्र होती है कि उसके कारण व्यवसायी गम्भीर से गम्भीर और उच्च से उच्च बातों को अपने तौर पर बहुत ही अच्छे प्रकार से कह सकते हैं। मनुष्य के लिये व्यवसाय वही काम करता है जो छात्रों के लिये पाठशाला या विद्यालय। क्योंकि विचार और निर्णय करने का जो अभ्यास अनुभव से होता है वह दूसरों बहुत से लोगों से पढ़े या रटे हुए उच्च विचारों से कहीं बढ़ कर होता है।

परन्तु यह आक्षेप हो सकता है कि यदि ऐसा ही है तो क्या कारण है कि किसान वकीलों के समान योग्य नहीं होते? निसन्देह कुछ कृषक इधर उधर ऐसे मिलेंगे जो उच्च कक्षा के शिक्षित कहे जा सकते हैं। उन लोगों ने पुस्तकें बहुत कम पढ़ी हैं तथापि उनकी निरीक्षण और सम्मति स्थिर करने की शक्ति बहुत चढ़ी बढ़ी होती है। विद्वान् उनसे मिलने पर लज्जित होते हैं तथा इन परिश्रमी जीवों की सादी बुद्धि, तीव्र अन्वेषण शक्ति तथा दूरदर्शिता देख कर चकित होते हैं। परन्तु यह मान लेना पड़ेगा कि साधारणतः मेहनत मजदूरी करनेवाला मनुष्य उतना शिक्षित नहीं होता जितना कि एक वकील। पर इन दोनों में जो अन्तर है वह दोनों व्यवसायों में अन्तर होने के कारण नहीं है वरन् इस कारण है कि वकील अपने व्यवसाय में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रवेश करने के समय पाठशालाओं तथा विद्यालयों के ज्ञान का भंडार प्राप्त कर चुकता है (जो कि कृषक को प्राप्त नहीं है) और इनसे जीवन पर्यन्त लाभ उठाता है। यदि दो नव-युवक एक ही अवस्था तथा एक ही योग्यता के, बीस वर्ष की उमर तक एक ही प्रकार की शिक्षा पाते रहें तथा उचित शारीरिक व्यायाम भी करते रहें और तत्पश्चात् उनमें से एक कानून के अध्ययन में तीन वर्ष व्यतीत करे तथा दूसरा कृषि-विद्या का अध्ययन करे और फिर दोनों अपने अपने पेशों में जी जान से लग जाँय और इसके बाद भी समय मिलने पर पुस्तकावलोकन किया करें और शिक्षित पुरुषों तथा स्त्रियों की संगति में रहें तो क्या इसमें कोई सन्देह है कि चालीस वर्ष की उम्र में कृषक से वकील अधिक शिक्षित पाया जायगा ?

इसी प्रकार व्यवसाय से ही मनुष्य सदाचार भी सीखता है। उसे अपने साथियों से व्यवहार करना पड़ता है। जो विपत्ति में हैं उनसे वह सहानुभूति प्रकट करता है तथा जो दुःखित हैं उनकी सहायता करता है। यदि वह क्रय विक्रय करता है तो उसे धोखा देने के बहुत से अवसर मिलते हैं। वह अपने प्रवर्तकों की आँख में धूल डाल कर अपने कार्य्य की त्रुटियों को छिपा सकता है; परन्तु यदि वह ईमानदार और सत्य-प्रिय हो तो अनेक गुण भी ग्रहण कर सकता है। सद्गुणों के उपार्जन के लिये प्रलोभनों का सामना करना उतना ही आवश्यक है जितना कि तैरने के लिये जल में प्रवेश करना। इसके लिये आवश्यकता है केवल अपने मन और इन्द्रियों को वश में रखने तथा निरन्तर परिश्रम करते रहने की।

———

सभा का कार्य्य-विवरण।

प्रबन्ध-कारिणी समिति।

बुधवार तारीख २ अगस्त १९१६ सन्ध्या के ५½ बजे

स्थान—सभाभवन।

(१) सभा के तेईसवें वार्षिक विवरण का शेष अंश पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।

(२) निश्चय हुआ कि इस मास में हिन्दू युनिवर्सिटी की मीटिंग के समय सभा के संरक्षक श्रीमान महाराजा साहब बहादुर ग्वालियर काशी में आनेवाले हैं। अतः उनसे प्रार्थना की जाय कि इस अवसर पर वे सभा में अवश्य पधारने की कृपा करें।

(३) निश्चय हुआ कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन की परीक्षा का प्रबन्ध सभा के हाल में किया जाय और परीक्षार्थियों के निरीक्षण का भार १० बजे से १ बजे तक बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा को तथा २ बजे से ५ बजे तक बाबू हरिहरनाथ बी० ए० को सौंपा जाय। यह भी निश्चय हुआ कि निरीक्षण के कार्य में लाला भगवानदीन, बाबू जगन्मोहन वर्म्मा और बाबू रामचन्द्र वर्म्मा क्रमात् इन महाशयों की सहायता करें।

(४) निश्चय हुआ कि मध्य प्रदेश के शिक्षा विभाग के डाइरेक्टर से प्रार्थना की जाय कि वे कृपापूर्वक बाबू कामताप्रसाद गुरु को पूरे वेतन पर ३ मास की छुट्टी दें जिसमें वे सभा के लिये हिन्दी व्याकरण शीघ्र तैयार कर सकें।

(५) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

प्रबन्ध-कारिणी समिति।

रविवार ता० २७ अगस्त १९१६ सन्ध्या के ५ बजे

स्थान—सभाभवन।

(१) तारीख २२ जुलाई १९१६ और २ अगस्त १९१६ के अधिवेशनों के कार्य विवरण पढ़े गए और स्वीकृत हुए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) निश्चय हुआ कि प्रबन्धकारिणी समिति के अधिवेशनों में उपस्थित न होने वा उनके सम्बन्ध में सम्मति न भेजने के कारण इस समिति में बाबू अम्बिकाप्रसाद गुप्त, प्रोफेसर लक्ष्मीचन्द, रायबहादुर पंडित विष्णुदत्त शुक्ल, प्रोफेसर श्री प्रकाशजी, पंडित गणपतजानकीराम दुबे बी० ए०, ठाकुर शिवकुमारसिंह और बाबू दामोदरदास राठी के जो स्थान खाली होते हैं उन पर क्रमात् पंडित गोविन्दराव बी० ए० एल एल० बी०, डाक्टर सर रामकृष्ण भण्डारकर, राय बहादुर पंडित विष्णुदत्त शुक्ल, प्रोफेसर श्री प्रकाशजी, राय साहब पंडित सयूंप्रसाद त्रिपाठी, पंडित श्यामविहारी मिश्र एम० ए० और मेहता जोधसिंहजी चुने जाँय।

(३) निश्चय हुआ कि इस वर्ष नागरीप्रचारिणी ग्रन्थमाला के सम्पादक बाबू श्यामसुन्दरदास बी० ए०, ना० प्र० लेखमाला के सम्पादक प्रोफेसर श्री प्रकाश, नागरी प्रचार के निरीक्षक पंडित गोविन्दराव, बी० ए० एल एल० बी०, सुबोध व्याख्यान के निरीक्षक पंडित रामनारायण मिश्र बी० ए० और पुस्तकालय के निरीक्षक पंडित गिरजादत्त वाजपेयी एम० ए० चुने जाँय।

(४) निश्चय हुआ कि ना० प्र० पत्रिका के सम्पादक को लिखा जाय कि समिति को दुःख है कि पत्रिका अब तक ठीक समय पर नहीं निकल सकी है। दिसम्बर १९१६ तक इसके कोई अंक पिछड़े न रहने चाहिए। यदि उस समय तक भी इसके अंक पिछड़े रह जाँय तो यह विषय पुनः दिसम्बर में विचारार्थ उपस्थित किया जाय।

(५) निश्चय हुआ कि इस वर्ष प्रबन्धकारिणी समिति के प्रधान बाबू गौरीशंकर प्रसाद बी० ए० एल एल० बी० चुने जाँय और उपप्रधान पंडित रामनारायण मिश्र बी० ए०।

(६) उदयपुर के राय जोधसिंह मेहता का पत्र उपस्थित किया गया जिसके साथ उन्होंने १०००) रु० की हुंडी भेजी थी और लिखा था कि इसके ब्याज से सभा तीसरे वर्ष उस सज्जन को पुरस्कार दे जिसका हिन्दी ग्रन्थ सर्वोत्तम निकले अथवा यदि यह सम्भव न हो तो और जिस भाँति चाहे इस ब्याज को व्यय करे।

निश्चय हुआ कि राय जोधसिंह मेहता को इस के लिये धन्यवाद दिया जाय, हुंडी भुना ली जाय और इसका रुपया बनारस बंक में फ़िक्स डिपाज़िट में यदि ६) सैकड़े वार्षिक ब्याज मिले तो रखा जाय अन्यथा इसके गवर्नमेन्ट प्रामेसरी नोट खरीद लिए जाँय। यह भी निश्चय हुआ कि बाबू श्यामसुन्दर दास जी तथा पंडित रामनारायण मिश्र जी से प्रार्थना की जाय कि वे कृपापूर्वक इस पुरस्कार के सम्बन्ध में आवश्यक नियम बना दें।

(७) पुस्तकालय के निरीक्षक के पत्र उपस्थित किए गए जिनमें उन्होंने लिखा था कि (क) पुस्तकालय की लगभग १०० पुस्तकें बिना जिल्द या मरम्मत के लिए पड़ी हैं (ख) पुस्तकालय के लिये एक अलमारी की बड़ी आवश्यकता है अतः इसके लिये ४०) स्वीकार किया जाय और (ग) जिन महाशयों के यहाँ पुस्तकालय की पुस्तकें रह गई हैं उनकी नामावली भेजी थी।

निश्चय हुआ कि (क) ठीके पर इन पुस्तकों की जिल्द बनवा ली जाँय (ख और ग) ये प्रस्ताव नए निरीक्षक महोदय की सम्मति के सहित आगामी अधिवेशन में उपस्थित किए जाँय।

(८) वेतन वृद्धि के लिये सुखनन्दन मिश्र और भरोस कहार के प्रार्थनापत्र उपस्थित किए गए।

निश्चय हुआ कि इस वर्ष के बजट में इनके वेतन की वृद्धि के लिये आवश्यक धन नहीं है।

(९) श्रीयुक्त न० चिं० कुलकर्णी का २० अगस्त का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने नागरीप्रचारिणी पत्रिका से पृथ्वीराज चौहान के चरि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का मराठी अनुवाद एक मासिक पत्र में प्रकाशित करने की आज्ञा माँगी थी।

निश्चय हुआ कि इसके लिये उन्हे आज्ञा दी जाय।

(१०) सप्तम हिन्दी साहित्य सम्मेलन की प्रदर्शिनी समिति के संयोजकका पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रदर्शनीय पुस्तकें माँगी थीं।

निश्चय हुआ कि सम्मेलन में काशी से सभा के जो प्रतिनिधि जाँय उन्हीं के साथ प्रदर्शनीय वस्तुएँ भेजी जाँय और वे ही सज्जन उन्हें यहाँ लौटाते लावें। यह भी निश्चय हुआ कि आगामी अधिवेशन में उपमंत्री जी कृपापूर्वक उन वस्तुओं की एक सूची उपस्थित करें जो इस प्रदर्शनी में भेजने योग्य हैं।

(११) निश्चय हुआ कि आगामी ३ वर्षों के लिये हिन्दी पुस्तकों की खोज के निरीक्षक श्रीयुक्त पंडित श्यामविहारी मिश्र एम० ए० चुने जाँय और उनसे प्रार्थना की जाय कि वे कृपापूर्वक इस कार्य के लिये ५०) मासिक वेतन तक एक एजेन्ट शीघ्र नियत कर लें। साथ ही उनसे यह भी प्रार्थना की जाय कि तीसरी त्रैवार्षिक रिपोर्ट को भी वे शीघ्र ही भेजने की कृपा करें।

(१२) बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ कि सभा की नियमावली फिर से संशोधित की जाय और नियमों में क्या क्या परिवर्तन होने चाहिए इस विषय में सम्मति देने के लिये निम्नलिखित सज्जनों की एक सब कमेटी बनाई जाय अर्थात् बाबू गौरीशंकरप्रसाद बी० ए० एल एल० बी०, पंडित रामनारायण मिश्र बी० ए० और बाबू हरिप्रसाद पालधि बी० ए०।

(१३) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

—०—

साधारण सभा।

शनिवार तारीख २९ जूलाई १९१६ सन्ध्या के ६ बजे

स्थान—सभाभवन।

(१) गत अधिवेशन (ता० २७ मई १९१६) का कार्य-विवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।

(२) प्रबंध-कारिणी समिति के तारीख ७ मई, २७ मई, २९ मई और ६ जून १९१६ के कार्य-विवरण सूचनार्थ पढ़े गए।

(३) सभासद होने के लिये निम्नलिखित सज्जनों के फार्म उपस्थित किए गए।

१—पंडित यज्ञनारायण उपाध्याय एम० ए० एल एल० बी० भदैनी काशी १॥)

२—बाबू हनुमानदास बी० ए० एल एल० बी० सुखलाल साहुका फाटक काशी ३)

३—बाबू शिवप्रसाद गुप्त नन्दन साहु की गली काशी १२)

४—राय कृष्णदास हेस्टिंगज हाउस काशी ५)

५—बाबू रुद्रप्रसाद विक्टोरिया पार्क काशी ३)

६—पंडित गोविन्दराव बी० ए० एल एल० बी० काशी ३)

७—पंडित गणपत कृष्ण गुर्जर, लक्ष्मीनारायण प्रेस काशी ३)

८—बाबू भगवानदास जैन, मास्टर मिडिल स्कूल वीना इटावा, सागर १॥)

९—बाबू हरचन्दराम गहोई खुरई जिला सागर १॥)

१०—बाबू विहारीलाल मिस्त्री पो० खुरई—सागर १॥)

११—बाबू नन्दकिशोर—१४२ काटन स्ट्रीट—कलकत्ता ३)

१२—पंडित ब्रजमोहन वाजपेयी सुपरवाइजर कानूनगो सदर परगना—फ़तहपुर ३)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३—बाबू दाताराम—छोटी कुंजगली—काशी १॥)

१४—बाबू लाभचन्द जैनी—सूतटोला—काशी १॥)

१५—बाबू वैजनाथप्रसाद यादव बुलानाला काशी १॥)

१६—पंडित इन्द्रनारायण द्विवेदी—बुद्धिपुरी—सराय आकिल प्रयाग १॥)

निश्चय हुआ कि ये सज्जन सभासद चुने जाँय और पंडित इन्द्रनारायण द्विवेदी के यहाँ जो पिछला चन्दा बाकी है उसमें से १) रु० प्रतिवर्ष ले लिया जाय।

(४) निम्नलिखित सभासदों के इस्तीफ़े उपस्थित किए गए और स्वीकृत हुए।

१—महन्त मथुरादास, बड़ोदा, गुजरात।

२—बाबू खुशालचन्द खजानची—कामटी।

३—बाबू रामकृष्ण वैश्य—भीतर गोदाम-गया।

४—पंडित लक्ष्मणप्रसाद नागर—एल० पी० नागर ऐण्ड को०—मथुरा।

५—कुँअर मूलसिंह वसी हाउस—चाँदपोल दरवाजा—जयपुर।

६—बाबू मदनलाल—दफ्तर गवर्नर—जम्बू।

७—बाबू कल्याणमल बोहरा—खजाना सदर-कृष्णगढ़।

८—पंडित मथुराप्रसाद शुक्ल—सिठमरा—ज़ि० कानपुर।

(५) मंत्री ने निम्नलिखित सभासदों की मृत्यु की सूचना दी जिसपर सभा ने अत्यन्त शोक प्रकट किया:—

१—डाक्टर रामकृष्ण गोपाल भाण्डाकर पूना।

२—पंडित छोटेलाल चौबे डिप्टी कलेक्टर—मथुरा।

(६) निम्नलिखित पुस्तकें धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईं:—

पंडित ओंकारनाथ वाजपेयी, प्रयाग।

महाराणा प्रताप

आत्मवीर सुकरात

संस्कृत साहित्य सम्मेलन कार्यालय हरिद्वार।

संस्कृत साहित्य सम्मेलन के प्रथम वर्ष की निबन्धावली और वेद धर्म व्याख्यान ५ वाँ भाग।

बाबू बलदेवदास गुप्त, बहराइच।

मुकुन्द महिमास्त्रोत्र।

युगल रस माधुरी।

केनोपनिषद्।

कुमार देवेन्द्रप्रसाद जैन, आरा।

सेवा धर्म।

बाबू श्रीकृष्ण—साक्षीविनायक—काशी।

सागर साम्राज्य।

बाबू भगीरथ कसौधन वैश्य वसन्तपुर-गोरखपुर

कसौंधन वैश्योत्पत्ति भास्कर।

परिवर्त्तन में प्राप्त।

पंच पराग।

जावित्री।

पंच पल्लव।

पंच कलिका।

ईसाई सिद्धान्त दर्पण।

होली रंग धोली।

श्री वृन्दावन।

स्त्री दीक्षा विधि।

सावन सोहावन।

लखनऊ की कब्र ५ वाँ भाग।

एशियाटिक सोसाइटी आफ़ बंगाल कलकत्ता।

Journal and Proceedings for July August, September, November and December 1915.

Journal and Proceedings (New Series) Vol. XII, 1916, No. 1.

Memoirs of the Asiatic Society of

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Bengal IV, Vol. No. 2 Vol. No. 3 and Vol. V Extra No.

पाणिनी आफिस प्रयाग

Brihdaranyaka Upanishada Indian Antiquary for April 1916.

(७) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

वार्षिक अधिवेशन।

शनिवार तारीख ५ अगस्त १९१६ सन्ध्या के ६ बजे

स्थान—सभाभवन

(१) प्रबन्ध-कारिणी समिति का तेईसवाँ वार्षिक विवरण पढ़ा गया। बाबू वेणीप्रसाद के प्रस्ताव तथा पंडित निष्कामेश्वर मिश्र के अनुमोदन पर निश्चय हुआ कि इसमें नागरी नाटक मंडली का उल्लेख भी बढ़ा दिया जाय। पंडित रामनारायण मिश्रजी के प्रस्ताव पर सर्व सम्मति से यह विवरण स्वीकृत हुआ और निश्चय हुआ कि बाबू हरिप्रसाद पालधि ने इस वर्ष जिस परिश्रम और योग्यता से कार्य किया है उसके लिये उन्हें धन्यवाद दिया जाय।

(२) पदाधिकारियों और प्रबन्ध-कारिणी समिति के सदस्यों के चुनाव के लिये उपस्थित सभासदों में निर्वाचनपत्र बाँटे गए और उनके भरे जाने पर सभापति ने प्रोफेसर श्रीप्रकाश और बाबू वेणीप्रसाद जीको उनका परिणाम जाँचने के लिये नियत किया।

(३) सन् १९१५—१६ के आय व्यय के हिसाब के सहित आगामी वर्ष के लिये बजेट उपस्थित किया गया।

पंडित गिरिजादत्त वाजपेयी के प्रस्ताव तथा पंडित साँवलजी नागर के अनुमोदन पर सर्व सम्मति से निश्चित हुआ कि यह बजेट स्वीकार किया जाय।

(४) पदाधिकारियों के निर्वाचन का निम्नलिखित परिणाम सूचनार्थ उपस्थित किया गया।

सभापति

बाबू श्यामसुन्दरदास बी० ए०

उपसभापति

बाबू गौरीशंकरप्रसाद बी० ए० एल एल० बी०

पंडित रामनारायण मिश्र बी० ए०

मंत्री

बाबू हरिप्रसाद पालधि बी० ए०

उपमंत्री

बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा

(५) साधारण सभा द्वारा अनुमोदित प्रबन्ध-कारिणी समिति के प्रस्ताव पर सर्व सम्मति से निश्चित हुआ कि श्रीमान महाराजा साहब काश्मीर, कोटा, झालावाड़ तथा डूँगरपुर हिन्दी के बड़े शुभचिन्तक हैं और समय समय पर विशेष रूप से सभा की सहायता करते रहे हैं अतः ये सभा के संरक्षक चुने जाँय।

(६) बोर्ड आफ ट्रस्टीज़ का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि गत वर्ष के वार्षिक अधिवेशन के निश्चय के अनुसार उसके नियमों में सुधार किया जाय। साथ ही बोर्ड द्वारा संशोधित निमय भी उपस्थित किए गए।

निश्चय हुआ कि ये निमय छापकर सभा के सभासदों में बाँट दिए जाँय और तब सभा के एक विशेष अधिवेशन में इन पर विचार हो।

(७) सभा के स्थायी सभापति पंडित श्यामविहारी मिश्र की वक्तृता पढ़ी गई जिसपर सभा ने बड़ा हर्ष प्रकट किया।

(८) सभापति बाबू गौरीशंकरप्रसाद ने कहा कि पंडित श्यामविहारी मिश्र ने तीन वर्ष तक सभा के सभापति का आसन सुशोभित किया है। यद्यपि बाहर रहने के कारण वे यहाँ उपस्थित नहीं हो सके हैं पर तो भी जिस योग्यता और उत्साह से आप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बराबर सभा का कार्य करते रहे हैं उसके लिये आपको जितना धन्यवाद दिया जाय थोड़ा है। प्रबंध-कारिणी समिति के प्रत्येक अधिवेशन में आपकी विचारपूर्ण सम्मति बराबर आती रही है। खोज सम्बन्धी कार्य भी आप बड़े परिश्रम और उत्साह से करते रहे हैं। सभा पर आपकी जैसी श्रद्धा और भक्ति है उसके लिये हम लोग आपको हार्दिक धन्य-वाद देते हैं।

(९) प्रबंध-कारिणी समिति के सदस्यों के निर्वाचन का निम्न लिखित परिणाम उपस्थित किया गया।

काशी से—बाबू माधव प्रसाद
रेवरण्ड ई० ग्रीव्स
पंडित गिरिजादत्त बाजपेयी एम० ए०
बाबू हरिहरनाथ बी० ए०
बंगाल से—बाबू राधामोहन गोकुलजी।
बिहार से—बाबू काशीप्रसाद जायसवाल।
पंजाब से—लाला दयाराम साहनी।

सभापति को धन्यवाद देकर सभा विसर्जित हुई।

साधारण अधिवेशन।

शनिवार तारीख २६ अगस्त १९१६ सन्ध्या के ५½ बजे

स्थान—सभाभवन।

(१) लाला भगवानदीन सभापति चुने गए।

(२) गत अधिवेशन (ता० २९ जूलाई १९१६) का कार्य विवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।

(३) सभासद होने के लिये निम्न लिखित सज्जनों के फ़ार्म उपस्थित किए गए और स्वीकृत हुए:—

१—बाबू राधारमण गुप्त, मछर हट्टा, काशी १॥)

२—पंडित शिवनन्दन पांडेय विद्यार्थी उदयराज हिन्दू स्कूल काशीपुर नैनीताल १॥)

३—पी० पी० सिंह जी, अजयगढ़ स्टेट २)

४—पं० छन्नूलाल नैतराज पंडित अजयगढ़ १॥)

५—बाबू सहदेवसिंह ग्राम गम्भीरवन आजमगढ़ १॥)

६—बाबू कृष्णदेव नारायणसिंह आजमगढ़ १॥)

७—बाबू गयासिंह आजमगढ़ १॥)

८—पंडित देवरत्न शर्म्मा २७ लिटन रोड, देहरादून १॥)

९—डाक्टर मिट्ठनलाल प्रोफेसर, प्रिन्सेज़ आसफिया मेडिकल स्कूल भूपाल १॥)

१०—ठाकुर त्रिभुवनबहादुर सिंह—तअल्लुकेदार चन्दनियाँ पो० जलालपुर धई ज़ि० रायबरेली ५)

११—पंडित कात्यायनी दत्त त्रिवेदी प्राइवेट सेक्रेटरी आनरेब्ल राजा सर रामपालसिंह के० सी० आई० ई० कुर्री सुदौली ३)

१२—बाबू शालिग्रामसिंह वकील उन्नाव १॥)

१३—पंडित विश्वेश्वरदयाल त्रिवेदी—गणेशगंज लखनऊ ५)

१४—पंडित लक्ष्मीशंकर अवस्थी—सम्पादक अभ्युदय प्रयाग १॥)

१५—पंडित विश्वम्भरनाथ वाजपेयी—वकील उन्नाव ५)

१६—पंडित ताराशंकर शर्म्मा चौक लखनऊ १॥)

१७—बाबू रामचन्द्र एम० ए० एडवोकेट—लखनऊ ५)

१८—बाबू विनायकप्रसाद अष्ठाना—आजमगढ़ १॥)

१९—पंडित मुनीश्वर तिवारी—वकील आजमगढ़ ५)

२०—पंडित रामकृष्ण शर्म्मा मा० पंडित शुभकरणदासजी ठेकेदार खारीबावली—कूचा चेला—दिल्ली १॥)

२१—बाबू केदारनाथ—गोएनका—कटरा नवाब साहब चाँदनी चौक दिल्ली ६)

२२—पंडित लालमोहन त्रिवेदी—आनरेरी मजिस्ट्रेट—पुरुलिया ५)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२३—पंडित शंकरराव कापड़े—बाबू माधवजी कोठी—काशी १॥)

२४—बाबू गिरधारीलाल अग्रवाल बी० ए० एल एल० बी० वकील इलाहाबाद ५)

(४) निम्न लिखित सभासदों के इस्तीफ़े उपस्थित किए गए और स्वीकृत हुए:—

१—पंडित गोमतीप्रसाद अग्निहोत्री प्रयाग

२—बाबू रामकृष्णराम वैश्य, भीतर गोदाम, गया

३—बाबू बल्लभदास काशी।

(५) मंत्री ने इस सभा के सभासद श्रीगौरचरण गोस्वामी की मृत्यु की सूचना दी जिस पर सभा ने शोक प्रकट किया।

(६) निम्न लिखित पुस्तकें धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईं:—

पंडित माधवराव सप्रे बी० ए० पूना
गीता रहस्य

बाबू रामचन्द्र वर्म्मा काशी
छत्रसाल

लाला कृष्णानन्द काशी
सुखी रहने का उपाय

पंडित नानकराम, भट्टों का रास्ता जयपुर
हिन्दी विद्यार्थी

स्मिथसोनियन इन्स्टीट्यूशन, वाशिंगटन

The Sense Organs of the mouth part of Honey Bees.

Geology and Palæontology. Wind-Tunnel Experiments in Aerodynamics.

Indian Antiquary for May 1916.

(७) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

साधारण अधिवेशन

शनिवार तारीख ३० सितम्बर १९१६ सन्ध्या के ५ बजे

स्थान सभाभवन।

(१) बाबू रामचन्द्र वर्मा के प्रस्ताव तथा बाबू बालमुकुन्द वर्मा के अनुमोदन पर पंडित गोविन्दराव जोगलेकर सभापति चुने गए। पीछे से सभा के उप-सभापति बाबू गौरीशंकरप्रसाद बी० ए० एल० एल० बी० भी आ गए।

(२) तारीख ५ अगस्त के वार्षिक अधिवेशन और २६ अगस्त के साधारण अधिवेशन के कार्यविवरण पढ़े गए और स्वीकृत हुए।

(३) प्रबन्धकारिणी समिति के २२ जुलाई १९१६ और २ अगस्त १९१६ के कार्यविवरण सूचनार्थ उपस्थित किये गए:—

(४) सभासद होने के लिये निम्नलिखित सज्जनों के फार्म उपस्थित किए गए:—

१—पंडित आत्माराम बी० ए० बी० एस सी० म्युनिसिपल इंजीनियर श्रीनगर—काश्मीर।

२—पंडित गंगाराम दीक्षित बाँधवकर—$\frac{६४}{१८}$ पटनी टोला काशी १॥)

३—महन्त जानकीवल्लभशरण—जेल से उत्तर मठ छपरा ३)

४—बाबू राघवशरण साही—रामलीलावाला स्थान—जेल के समीप छपरा ३)

५—पंडित उपेन्द्रशरण भार्गव—प्राइवेट सेक्रेटरी श्रीमान खनियाधाना नरेश—खनियाधाना स्टेट—रेजीडेंसी ग्वालियर।

६—पंडित बद्रीप्रसाद मिश्र पड़रहा—मौजा बरगी तहसील सिहोरा रोड जि० जबलपुर २)

७—पंडित भागीरथप्रसाद दीक्षित विशारद मुख्याध्यापक नार्मल स्कूल कोटा राज्य १॥)

८—बाबू बालकृष्ण त्यागी झाला हाउस कोटा ५)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९—बाबू गिरिजाप्रसाद मास्टर—लन्दन मिशन स्कूल—काशी ३)

१०—बाबू बनारसीप्रसाद वर्म्मा उपन्यास दर्पण आफिस—कचौड़ी गली काशी १॥)

११—बाबू रामकिशोर सेठ—भूलेटन काशी १॥)

१२—बाबू विजयबहादुर रायजादा—एक्स्ट्रा असिस्टेण्ट कमिश्नर मंडला सी० पी० ३)

१३—बाबू रघुनाथदास चौक काशी १॥)

१४—पं० मिलखीराम, बनारस बंक के नीचे काशी ३)

१५—बाबू लक्ष्मीनारायणलाल—गोलादीनानाथ काशी १॥)

निश्चय हुआ कि ये सज्जन सभासद चुने जाँय।

(५) उपमंत्री ने इस सभा के स्थायी सभासद कुँअर जोधसिंह मेहता की मृत्यु की सूचना दी जिस पर सभा ने बहुत शोक प्रकट किया।

(६) झांसी के प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्वागत कारिणी समिति का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने इस सम्मेलन के लिये सभा के प्रतिनिधियों को भेजने के लिये लिखा था।

निश्चय हुआ कि निम्न लिखित सज्जन प्रतिनिधि चुने जाँयः—

(१) बाबू गौरीशंकर प्रसाद बी० ए० एल एल० बी० (२) बाबू शिवप्रसाद गुप्त (३) पंडित गोलि[illegible] राव जोगलेकर बी० ए० एल एल० बी० (४) पंडित लक्ष्मण नारायण गर्दे (५) पंडित कृष्णराम मेहता बी० ए० एल एल० बी० (६) राव बैजनाथदास (७) बाबू दामोदरदास खंडेलवाल (८) डाक्टर शोभाराम और (९) मिस्टर सी० वाई० चिन्तामणि।

(७) प्रोफ़ेसर श्रीप्रकाश और बाबू शिवप्रसाद गुप्त का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि सभा के सभापति और उपसभापति को प्रबन्ध कारिणीसमिति के अन्य सभ्यों की नाईं उस समिति में बैठने और सम्मति देने का अधिकार है। अतः उनका चुनाव समिति के सदस्य की भाँति न होना चाहिए।

निश्चय हुआ कि नियमों के संशोधन के लिये जो सब कमेटी बनाई गई है उसके पास यह पत्र विचारार्थ भेज दिया जाय।

(८) निम्नलिखित पुस्तकें धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईं:—

हिन्दी साहित्य सम्मेलन कार्यालय प्रयाग

पंचम हिन्दी साहित्य सम्मेलन का कार्यविवरण

पं० पद्माकर द्विवेदी खजुरी काशी

रामायण ३

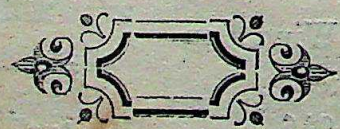

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाग २१] Registered No. A 414 [संख्या ५—६

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

नवम्बर, दिसम्बर १९१६

सम्पादक—रामचन्द्र वर्म्मा ।

—:०:—

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल । बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल ॥
करहु विलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल । निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सब को मूल ॥
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार । सब देशन सों लै करहु, भाषा मांहि प्रचार ॥
प्रचलित करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न । राज काज दरबार में, फैलावहु यह रत्न ॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र ।

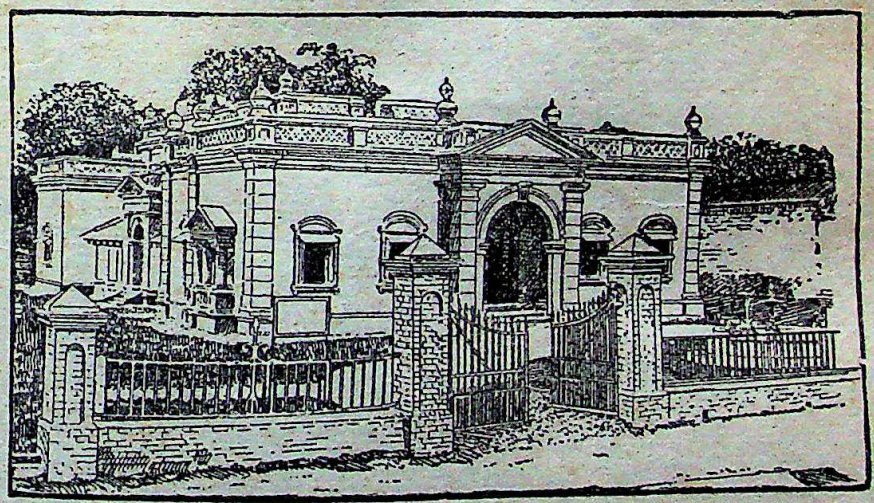

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित ।

श्री अपूर्वकृष्ण बोस द्वारा इंडियन प्रेस, प्रयाग में मुद्रित ।

वार्षिक मूल्य १॥) प्रति संख्या =)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची।

(१)	इतिहास के अध्ययन से लाभ	... ९७	(५)	कोलम्बस की जल-यात्रा	...
(२)	जयदेव कृत गीतगोविंद ..	... १००	(६)	सप्तम हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन	...
(३)	तक्ष-शिला विद्यापीठ ...	... १०४	(७)	प्रवासी और हिन्दी	...
(४)	मोहन की मोटरकार ...	... १०७	(८)	सभा का कार्य्यविवरण	...

पण्डित लक्ष्मीधरजी वाजपेयी

सम्पादित।

क्या आपको यह मालूम है कि,

हिन्दी-चित्रमय-जगत्

राष्ट्र-भाषा हिन्दी की उच्चश्रेणी का; हिन्दी-भाषा-भाषियों का अत्यन्त लाड़ला; मराठी, हिन्दी, अँग्रेज़ी, बँगला इत्यादिक भाषाओं के धुरन्धर लेखकों के लेख प्रकाशित करनेवाला; महाराष्ट्र में 'हिन्दी राष्ट्र-भाषा भवतु' का झंडा फहरानेवाला; सामयिक महत्त्वपूर्ण लेख, कविता तथा चित्रों के प्रकाशित करने में युगांतर प्रस्थापक; हिन्दी में अपने ढंग का सब से पहिला और अनूठा मासिक पत्र है?

यदि, नहीं,

तो आप उसे आज ही मंगाकर देखिये! निस्सन्देह आप उसकी अन्तरंग की चटक मटक पर मोहित होंगे और हिन्दी में ऐसे अनूठे पत्रप्रकाशन के साहस पर दांतों उँगली दबायँगे। पत्र की लागत के देखते मूल्य कुछ नहीं। केवल सादा संस्करण ३॥) राजसंस्करण ५॥) तिसपर भी विशेषांक उपहार में! एक प्रति का ।-), ॥)

पता—

मैनेजर, हिन्दी-चित्रमय-जगत्,

पूना सिटी।

सुघड़ दर्जिन।

(दूसरा संस्करण)

हिन्दी में अपने ढंग की यह पहली पुस्तक है। इसमें सब तरह के कपड़ों की सिलाई और कटाई आदि का वर्णन इतनी उत्तमता से किया गया है कि घर की साधारण स्त्रियाँ भी इसे पढ़ कर सब तरह के कपड़े अच्छी तरह काट और सी सकती हैं। समझाने के लिये इसमें ६०-७० चित्र भी दे दिये गये हैं। मूल्य केवल ॥)

पता—

मन्त्री, नागरीप्रचारिणी सभा—काशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

भाग २१ } नवम्बर, दिसम्बर १९१६. { संख्या ५—६

इतिहास के अध्ययन से लाभ ।

[लेखक—श्रीयुक्त बा० श्रीप्रकाश बी० ए० बैरिस्टर एट ला ।]

(गतांक से आगे ।)

संसार के सर्व-प्रतिष्ठित पुरुषों में से एक का जीवनचरित् उदाहरण के लिये लीजिए। ऐतिहासिक समय में मुहम्मद के बराबर बड़े पुरुष कम हुए हैं। छोटी ही अवस्था में आप माता-पिता हीन हो गए थे। तब आपके मामा ने आप को पाला। अपने दारिद्र्य के दिनों में आपने व्यापार कर के जीवन निर्वाह किया। एक धनी विधवा के आप कारिन्दे हुए। आपकी सत्यशीलता और प्रामाणिकता से प्रसन्न होकर उस विधवा ने आपसे अपना पुनर्विवाह किया। इससे यद्यपि दारिद्र्य का कष्ट जाता रहा तथापि अभी तक आपमें कोई चमत्कार नहीं देख पड़ा। साल में एक बार आप किसी निर्जन पहाड़ पर एकान्त में ध्यान करने के लिये सकुटुम्ब जाया करते थे। ४० वर्ष की अवस्था में आपने एकाएक अपने एक रिश्तेदार और भावी जामाता अली से यह कहा कि जबरईल ने आकर मुझसे कहा है कि एक नया धर्म फैलाओ। मैंने उनसे कहा की कि मुझमें इतनी शक्ति कहाँ? पर वे यही कहते रहे कि नहीं, जाओ, धर्म फैलाओ। क्या मुहम्मद साहब असत्य बोल रहे थे? क्या धन-धान्य, वैभव और कुटुम्ब आदि का सुख छोड़ किसी एक देवदूत की वाणी के बहाने वे नया धर्म फैलाना चाहते थे, जिससे कष्ट और उपहास के सिवा और किसी फल की आशा नहीं की जा सकती थी? चालीस वर्ष में, प्राच्य देशों में, वृद्धावस्था आरम्भ हो जाती है। क्यों ऐसी अवस्था में कोई क्लेश सहने का साहस करेगा? * इन सब विचारों से यह तो

* "अपने हार्दिक विश्वास के मायाजाल में पड़कर अपने धर्म की उत्तेजना के निमित्त मनुष्य अपने वैभव, सुख और प्राण तक त्याग करने को प्रस्तुत हो जाता है।"—Gustave le Bon: *Psychology of Revolution*, p. 26,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवश्य मानना होगा कि कम से कम मुहम्मद साहब को पूर्ण विश्वास था कि देवदूत मेरे पास आए थे।

देवदूत असल में कोई वस्तु है या नहीं, उसका आना संसार में सम्भव है या नहीं, यह अपने अपने विश्वास पर निर्भर है। साधारणतः हम न हाँ कर सकते हैं और न नहीं। इसके बाद उन्होंने कैसे कैसे कष्ट सहे, किस प्रकार उन्हें मक्के से मदीने जाना पड़ा, कैसे बदर की लड़ाई जीती, किस तरह फिर मक्के गए, कैसे धर्म का प्रचार किया यह सब कहने में बहुत समय लग जायगा। पर यथार्थ बात तो यही है कि एक हीन, विभक्त और मूर्ख जाति को उन्होंने थोड़े ही दिनों में बलवती और गण्य-मान्य बना लिया। और उनके मरने के १०० ही वर्ष के अन्दर अरब जाति और इस्लाम धर्म पृथ्वी के कोने कोने में फैल गया। युरोप के पश्चिमी पिरेनीज पर्वत से लेकर भारत के सिन्धु नद के किनारे तक आपकी सफलता की पताका फहराने लगी। आधुनिक युरोप और आधुनिक एशिया का इतिहास मुहम्मद साहब के स्वप्न से ही आरम्भ होता है।

गुस्ताव ले बोन ने लिखा है *—(फ्रान्स के) विप्लव का परिणाम असाधारण हुआ। उस समय फ्रान्स ने बड़ा अत्याचार, कष्ट, मार-काट और दुःख सहा; फिर वह सम्मिलित युरोपीय देशों से लड़ा। इसका कारण यह नहीं था कि कोई नई राज्य-प्रणाली वहाँ स्थापित हो रही थी, बल्कि यह कि फ्रान्स में एक नया धर्म निकला था। धार्मिक विश्वास का क्या प्रभाव पड़ता है, यह इतिहास से ज्ञात होता है। मुहम्मद साहब के धर्म से उत्तेजित हो कर अरब के ग्रामीणों तक ने अजेय रोम का भी सिर नीचा करवाया था। इसी कारण युरोप के राजागण फ्रान्स की दरिद्र सेनाओं का सामना नहीं कर सके थे। अन्य धर्म के नेताओं की तरह वे भी अपना धर्म फैलाने के लिये आत्म-समर्पण कर रहे थे और उनका विश्वास था कि हमारे धर्म के अवलम्बन से संसार की कायापलट हो जायगी।

ऐसी ऐसी महत्त्व की बातों को जानने के लिये महापुरुषों के जीवनचरित् पढ़ने चाहिए; इस लिये नहीं कि मुहम्मद साहब का जीवनचरित पढ़ने से हम भी मुहम्मद हो जायँगे।

बड़े बड़े मनुष्यों के जीवन का जनता पर कितना प्रभाव पड़ता है यह उनकी जीवनचर्य्या के पढ़ने से ही ज्ञात होता है और इसे इतिहास भी मानता है। चन्द्रगुप्त, अशोक, हर्षवर्धन यदि न हुए होते तो उनका जो उज्वल समय भारत के इतिहास पर प्रकाश डालता है और हमारा हृदय अब भी आकर्षित करता है वह और और राजाओं के समयों की तरह अन्धकार ही से आच्छादित रहता। ला ब्राइस अपनी होली रोमन एम्पायर नामक पुस्तक में कहते हैं कि यदि चार्ल्स राजा न होता तो जो होली रोमन राष्ट्र आठवीं शताब्दी से अठारहवीं शताब्दी तक जीवित रहा, उसकी स्थापना न हुई होती। इतिहासवेत्ताओं का यह भी मत है कि यदि बिस्मार्क न पैदा होता तो आज का प्रचण्ड जर्मन राष्ट्र प्रसिद्ध होता और न जर्मन जाति ऐसे वैभव को प्राप्त होती। ऐसी घटनाओं का कार्य-कारण भाव जानना और महापुरुषों का परिचय प्राप्त करना आदि लाभ भी इतिहास के पठन से होते हैं।

बहुत डरते डरते मैं एक बात और भी कहना चाहता हूँ। वह यह कि इतिहास से हमें भविष्य को सम्हल कर चलने की शिक्षा मिलती है। उदाहरण के लिये फ्रान्स के विप्लव को लीजिए। अत्याचार के कारण अमुक राजा मारे गए—यह बात ध्यान में रख हम यह यत्न कर सकते हैं कि फिर वैसा न हो। अंग्रेजी में साधारण कहावत भी है कि—ऐतिहासिक

* Gustave le Bon: *The Psychology of Revolution.* Translated in English by Bernard Miall (T. Fisher London and Leipzic p. 18.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घटनाएं पुनः पुनः होती हैं। परन्तु इसमें मुझे कुछ सन्देह है। प्रथम तो इतिहास में ठीक एक ही प्रकार की घटनाएं दो बार नहीं होतीं। विज्ञान-शास्त्र में हम कह सकते हैं कि ये ये वस्तुएं मिलाने से सर्वत्र और सर्वदा यह परिणाम होगा, परन्तु इतिहास में यह नहीं कहा जा सकता। मनुष्य के जीवन से सम्बन्ध रखने के कारण और मनुष्य के भाव स्थान स्थान और समय समय पर भिन्न होने के कारण इतिहास निश्चित रूप से अपने विचारों, सिद्धान्तों और परिणामों को उपस्थित नहीं कर सकता। मामूली तौर ही से देखिए न, अभी हम प्रसन्न हैं; मित्र ने कुछ हंसी की, हम हंस पड़े; अब हम खिन्न है; उसी मित्र ने वही दिल्लगी की, पर अबकी बार चित्त में चोट लगी, क्रोध आ गया, जन्म भर को वैर हो गया। इसीसे आप समझ लीजिए कि मनुष्य के आचरणों का कोई नियम नहीं। राजाओं में परस्पर कहा सुनी हो गई, बस छिड़ गया युद्ध और होने लगा संसार का संहार। यदि राजाओं या राज्य-सचिवों में वैमनस्य न होता तो शायद युद्ध का जन्म ही न हो पाता।

तिस पर भी मोटे तौर से इतिहास का यह लाभ कहा जा सकता है कि हमको उससे यह शिक्षा मिलती है कि यथाशक्ति और यथाबुद्धि हम ऐसा न होने दें जिससे पहले के सदृश फिर कोई भयङ्कर परिणाम उपस्थित हो। परन्तु यह शिक्षा प्रायः व्यर्थ ही है। मनुष्य किसी के कहने या बताने से कभी शिक्षा ग्रहण नहीं करता, ठोकरें खाता ही चला जाता है। एक बार अधिक भोजन करने का परिणाम हमने भोगा है पर फिर भी वैसी ही गलती करने को हम प्रस्तुत हैं। जैसे हम गलती करते हैं वैसे ही राजा लोग, संसार के राज्य-समूह और प्रजापुञ्ज आदि भी करते जाते हैं। तिस पर भी विचारशील पुरुष यदि चाहें तो कुछ शिक्षा अवश्य ही ग्रहण कर सकते हैं। इस भयानक युरोपीय महायुद्ध ने अन्यान्य बातों के अतिरिक्त यह भी प्रमाणित कर दिया है कि प्राचीनकाल से आज तक मनुष्य का भाव एक ही सा रहा और जैसे युद्ध पहले होते थे वैसे ही अब भी होते हैं; यद्यपि उसे टालने के लिये बड़ी बड़ी सभ्य जातियों ने बड़े बड़े यत्न किए हैं।

अन्त में केवल इतना ही कहना है कि इतिहास बड़ा ही रोचक विषय है। उसकी रोचकता का प्रधान कारण यही ज्ञात होता है कि इतिहास नर-नारियों से सम्बन्ध रखता है। वह नर-नारियों के रहनसहन, बात-चीत, आचार-विचार, यत्न, शक्ति, हारजीत आदि का वर्णन करता है। इसीसे इतिहास मनुष्य को रोचक और प्रिय मालूम होता है।

इतिहास बहुत सी शङ्काओं से मोक्ष दिलाता है, मनुष्य के हृदय के कई आवश्यक प्रश्नों का उत्तर देता है, वर्तमान काल से पूर्व काल का सम्बन्ध दिखलाता है, यह बतलाता है कि हम इस अवस्था को किस प्रकार से प्राप्त हुए, अन्य जातियों से, अन्य-देशवासियों से और अन्य धर्मावलम्बियों से हमारे सम्बन्ध का ज्ञान कराता है, शान्ति और सुख फैलाने के लिये जो यत्न पूर्व काल में किए गए और अब किए जा रहे हैं उनका वर्णन करता है, और उन मनुष्यों के विचार और जीवनचर्या को स्पष्ट रूप से जताता है जिन्होंने मानव जाति को परिवर्तन-रूपी अनन्त सीढ़ियों पर क्रम क्रम से चढ़ाकर उसे वर्तमान अवस्था तक पहुँचाया है।

—:o:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जयदेव कृत गीतगोविन्द ।

[लेखक—श्रीयुक्त पं० गणपति जानकीराम दूबे बी० ए०]

गीत गोविन्द काव्य की सरसता, मधुरता और लोकप्रियता जगत्प्रसिद्ध है। जयदेव कवि के काव्य के रस महार्णव में पर्याप्त अवगाहन करने वाले एक टीकाकार ने लिखा है:—

साध्वी, माध्वीक, चिंता न भवति भवतः,
शर्करे कर्कशासि ।
द्राक्षे, द्रक्ष्यन्ति के त्वाममृत मृतमसि,
क्षीर नीरं रसस्ते ॥
माकंद क्रन्द कान्ताधर धरणितलं,
गच्छ यच्छन्ति भावं ।
यावच्छृंगार सारस्वत मिह जयदेवस्य,
विष्वग्वचांसि ॥ १ ॥

अनुवाद—

सवैया

मान तिहारो वृथा मधु ! है, अति कर्कर शर्कर देति दिखाई। दाख ! लखै दिसि कौन तिहारी ? अमीरस ! फीको न नीको जनाई। नीर भरो रस है तब छीर छकै कोउ तोसों कहा हरखाई। नीरस है वनिताधरहू जब लौं जयदेव गिरा की मिठाई।

यह बात बहुत सत्य है। मधुर, कोमल, कान्त पदावली के कर्त्ता जयदेव की शृंगार गिरा जब तक जीवित है तब तक मधुरता रखनेवाली वस्तुओं की माधुरी फीकी है। सोने में सुगन्ध यह है कि वह मधुर काव्य संगीत में है।

श्रीजयदेव कवि कृत गीतगोविंद में केवल २४ प्रबंध हैं। और इनमें बहुधा आठ आठ पद होने के कारण इन्हें अष्टपदी भी कहते हैं। पहला, दूसरा और दसवाँ पद ऐसा है जिसमें क्रमशः ११, ७, और ५ पद हैं; बाकी २१ गीतों में आठ आठ पद हैं। इन चौबीस अष्टपदियों के अतिरिक्त जो श्लोक हैं वे जयदेव कवि के प्रतीत नहीं होते। जयदेवजी की तो पदावली है। श्लोक उनके नहीं हैं*। यह बात श्रीगीतगोविन्दानन्द के कर्त्ता श्रीयुक्त भारतेन्दु बाबू हरिचन्द्रजी के ध्यान में भी आ गई थी। जब उन्होंने गीतगोविन्द की अष्टपदियों का भाषा गीतों में अनुवाद करना आरम्भ किया तब आरम्भ के चार श्लोकों का अनुवाद तो वे कर गए। वे उन्हें मंगलाचरण के श्लोक समझ कर लिख गए होंगे। वस्तुतः चौथा श्लोक जो "वेदानुद्धरते" इत्यादि से आरंभ होता है वह पहली अष्टपदी की छाया है और श्रीवेंकटेश्वर प्रेस की पुस्तक में पहली अष्टपदी के बाद लिखा है, आरंभ में नहीं। श्रीवेंकटेश्वर प्रेस की प्रति में जो श्लोक है वह श्रीजयदेव कवि की अन्य तत्कालीन प्रसिद्ध कवियों से तुलना दिखाता है। वह इस प्रकार है—

वाचः पल्लवयत्युमापतिधरः संदर्भ शुद्धिं गिरां ।
जानीते जयदेव एव शरणः श्लाघ्यो दुरूहद्रुतेः ॥
श्रृंगारोत्तर सत्प्रमेय रचनैराचार्य गोवर्धनः ।
स्पर्धी कोऽपि नविश्रुतः श्रुतिधरो धोई कविक्ष्मापतिः ॥

इससे ज्ञात होता है कि असल में वह मंगलाचरण का एक ही श्लोक है। भारतेन्दुजी ने उसका अनुवाद इस प्रकार किया है :—

*इस सिद्धांत का समर्थन उस जनश्रुति से भी होता है जिसका वर्णन "कवि श्रेष्ठ जयदेव" शीर्षक लेख में हो चुका है। यहाँ अभिप्राय जगन्नाथ पुरी के उस सात्विक नाम राजा की कथा से है जिसने जयदेव के गीतगोविन्द के साथ अपना "श्रीकृष्ण विलास" नामक ग्रन्थ जगन्नाथ जी के मन्दिर में रखवा दिया था और जो दूसरे दिन मन्दिर के बाहर पड़ा हुआ मिला था। जब राजा ने जल मरना निश्चय किया तब जगन्नाथजी ने उसे संतुष्ट करने के लिये अपने हाथ से उस ग्रंथ के २४ श्लोक गीतगोविन्द में मिला दिए। पं० सपा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेघन सों नभ छाइ रहे बन भूमि तमालन सों भई कारी
सांझ भई डरि है घर याही, दया करिके पहुंचावहु प्यारी
यों सुनि नंद निदेस चले दोउ कुंजन में हरि भानुदुलारी
सोइ कलिन्दी के कूल इकंत की केलि हरै भवभीति हमारी

इसी पद्य को गुर्जर कवि नर्मदा शंकर यों कहते हैं:—

मेघे स्निग्ध घटाभर्युं लसलस्युं, आकाश दीसे अने।
भाजां वृक्ष तमालथी वन भुमी, श्यामावली रात्रि छे॥
आछे व्हीकण तेहने तुंज अरे, राधा लईजा गृहे।
आज्ञाराम थतांज नंदनि हवां, चाल्यां जता मारगे॥
कालिंदी-प्रति कुंजमां द्रम तले, राधा हरी तेहना।
सोहे उत्तम रंगमां. जय सहू, एकांत क्रीड़ा तणा॥

श्री ध्रुव ने उसे इस प्रकार कहा है:—

घेरायो घन राधिके गगनमां, छायां तमालो वने।
व्हीरा बालमुकुन्द आरजनिये, लइजा गृहे राहने॥
रावा वेणथी नंदना विचरतां, सानन्द वृन्दावने।
कुंजे केलि मचेहि धन्य हरि ने, राधातणी निर्जने॥

यह श्लोक इतना प्रसिद्ध है कि विवाह समय के मंगलाचरण के साथ "सावधान" करानेवाले श्लोकों में स्थान पा गया है।

दूसरे ही श्लोक को देखने से मालूम होता है कि ये मंगलाचरण के श्लोक तथा अष्टपदियों के भावों को ले कर बनाए हुए श्लोक किसी वासुदेव नामक कवि के हैं। कवि ने लिखा है—

वाग्देवता चरित-चित्रित-चित्त सद्मा—
पद्मावती चरण चारण चक्रवर्ती॥
श्रीवासुदेव रति-केलि कथा समेत—
मेतं करोति जयदेव कवि प्रबन्धम्॥ १॥

जान पड़ता है कि कवि ने श्लेष में अपना नाम दिया है। उसे पद्मावती का रहनेवाला और जयदेव कवि के अनंतर का होना चाहिए, उसके समय में, उमापतिधर, शरण, गोवर्धनाचार्य नामक के कवि और धोई नाम के कोई राजा थे। इनमें से श्रीगोवर्धनाचार्य की उसने सब से अधिक प्रशंसा की है। इससे ज्ञात होता है कि वह वैष्णव संप्रदाय का होना चाहिए। हमारा आशय यही दिखाने का था कि बाबू हरिश्चन्द्र ने फिर आगे अष्टपदियों के अतिरिक्त अन्य पद्यों का अनुवाद इसी लिये नहीं किया कि वे जयदेव कवि के पद्य नहीं थे। भारतेन्दुजी जब दशावतार वर्णित ११ पद्यों की अष्टपदी का अनुवाद करके दूसरी अष्टपदी के अंत के पद पर पहुँचे तो उन्होंने देखा कि

श्रीजयदेव कवेरिदं कुरुते मुदम्।
मंगलमुज्ज्वलगीत, जय जय देवहरे॥

श्रीजयदेव कवि का यह मंगल नाम का निर्मल गीत जगत् को आनंदित करता है। दशावतार के पश्चात् मंगल गीत गाया हुआ देख कर आपने निश्चय कर लिया कि श्लोकों में दिया हुआ मंगल श्लोकबद्ध गीतगोविंद की छाया का है और आपने फिर किसी श्लोक का अनुवाद नहीं किया। और अन्त में २४ ही अष्टपदियों का अनुवाद करने का उल्लेख करके आपने अपने श्रीगीतगोविन्दानन्द को समाप्त किया है। यथा—

दोहा।

अष्टपदी चौबीस इमि, गाई कवि जयदेव।
भाषा करि हरिचन्द्र सोइ, कही प्रेमरस भेव॥

दसवीं अष्टपदी में ५ ही पद हैं, इससे सन्देह होता है कि ३ पद नष्ट हो गए होंगे। प्राचीन ग्रन्थों की खोज का काम करनेवाले महाशयों से निवेदन है कि यदि उन्हें कहीं गीतगोविन्द की प्राचीनतम प्रति प्राप्त हो जाय और दसवीं अष्टपदी में भी ८ ही पद मिल जायँ तो वे आजकल की प्रतियों की त्रुटि पूरी कर दें।

गीतगोविन्द में बीच बीच में हर एक अष्टपदी के भावों को उठाकर जो श्लोकबद्ध काव्य दिया हुआ है उसके विषय में इस बात की छान बीन होना आवश्यक है कि वह किसका है। यदि कोई प्राचीन प्रति केवल अष्टपदियों की मिल जाय और दूसरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्लोकबद्ध छायावाली प्रति भी मिले तो उनके समय का अनुमान हो सकेगा और कवि का भी पता ठीक ठीक लग जायगा। यदि किसी को इस बात का भ्रम हो कि श्लोकबद्ध छाया गीतगोविन्द के पद्यों की पुनरुक्ति नहीं है तो वह मूल के पद्यों के साथ साथ उन श्लोकों को भी पढ़े तो मालूम हो जायगा कि हमारा कहना यथार्थ है। हम कुछ उदाहरण यहाँ देते हैं।

पहली अष्टपदी में दशावतार वर्णन है। उसका श्लोकबद्ध संक्षेप गीतगोविन्द में यों किया है,—

वेदानुद्धरते जगन्निवहते भूगोल मुद्बिभ्रते।
दैत्यं दारयते, बलिं छलयते, क्षत्रक्षयं कुर्वते॥
पौलस्त्यं जयते, हलं कलयते, कारुण्यमा, तन्वते।
म्लेच्छान्मूर्च्छयते, दशाकृतिकृते, कृष्णाय तुभ्यं नमः॥

भारतेन्दु जी इसका अनुवाद करते हैं—

वेद उधारन मंदर धारन भूमि उबारन ह्वै बनवारी।
दैत बिनासि बली के छली छय कारक छत्रिन के असुरारी।
रावन मारन त्यौं हलधारन वेद निवारन म्लेच्छ विहारी।
यों दस रूप विधायक कृष्णहि कोटिन्ह कोटि प्रनाम हमारी।

तीसरी अष्टपदी है,—

ललित लवंग लता परिशीलन कोमल मलय समीरे।
मधुकर निकर करंबित कोकिल कूजित कुंज कुटीरे॥

गीतगोविंद में इसकी छाया श्लोकबद्ध इस प्रकार है,—

किंचित्स्निग्ध-रसाल-मौलिमु-कुलान्यालोक्यहर्षोदया
दुन्मीलंति कुहूः कुहूरिति कलोत्तालाः पिकानां गिरः॥

अर्थात् कोमल कोमल आम के वृक्षों को देख आनन्द के उदय से कोकिल की वाणी कुहूः कुहूः शब्द ऊँचे ताल में निकालती है।

और भी लीजिए। १९ वीं अष्टपदी में भारतेन्दु जी लिखते हैं,—

मान तजि मानु सुनु प्रान प्यारी।
दहत मोहि मदन तुव विरह जर ज्वाल सों अधर-मधुपान दै लै उबारी॥

श्लोकबद्ध छाया,—

मुग्धे, विधेहि मयि निर्दय दंत—दंशं।
दोर्वल्लिबंधनिविड़स्तनपीड़नानि॥
चंडि, त्वमेवमुदमंचय पञ्चबाण।
चंडालकांडदलनादसवः प्रयान्ति॥

अर्थ— हे सुन्दरी! निर्दयता से मेरे कपोलों चुंबन कर दाँतों से व्रण कर दे, भुजा रूप लताओं मुझे बाँध ले और कठोर स्तनों से पीड़ा दे। अ मानिनि! तू ही मोद उत्पन्न कर नहीं तो चंडाल काम के धनुष के घाव से मेरे प्राण निकले जाते हैं

यदि कोई कहे कि "मुग्धे विधेहि" वाली कवि श्री जयदेव की है तो कोई सहृदय पाठक कोई संस्कृ का ज्ञाता, कोई सरसता और चतुरता का समझ वाला इसे जयदेव की वाणी नहीं कहेगा। क जयदेव की—

"प्रिये चारुशीले, मुंच मयि मानमनिदानं।
सपदि मदनानलो दहति मम मानसं।
देहि मुखकमलमधु पानं"॥

कोमल और कान्त पदावली और कहां

"चंडि त्वमेव मुदमंचय पञ्चबाण चंडालकांड
दलनादसवः प्रयान्ति॥

जैसे नितान्त कठोर कर्ण कटु शब्दों का आघात

हरे राम! दुःख है कि किसी अहंमान्य पंडित जयदेव कवि की काव्य-कोमलता का अनुकरण कर उसे दूषित किया है और उसकी काव्यरूपी धव कीर्ति को अपने दूषित कार्य्य के संसर्ग से अपवि कर दिया है। क्या ही सुन्दर हो, यदि अब आगे च कर गीतगोविन्द के भावों को चुरा कर बनाया हु यह श्लोकबद्ध काव्य अलग कर दिया जाय!

शृंगार रस के लोलुप इस कवि ने अपना का जुदा लिखा है यह बात उसकी सर्ग-प्रणाली से जा पड़ती है। प्रत्येक सर्ग के अंत में आशीर्वाद है।

प्रथम सर्ग चार अष्टपदियों के बाद समाप्त हु है। इस प्रथम सर्ग का नाम "सामोददामोदर" है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरा सर्ग छठी अष्टपदी के बाद समाप्त हुआ है। उसका नाम है "अक्लेश केशव"। तीसरे सर्ग का नाम "मुग्ध मधुसूदन" है, वह सातवीं अष्टपदी के बाद पूरा हुआ है। चौथे का नाम "स्निग्ध माधव" है जो नवीं अष्टपदी के बाद समाप्त हुआ है। पाँचवें का नाम "साकाङ्क्ष पुण्डरीकाक्ष" है जो ग्यारहवीं अष्टपदी पर समाप्त हुआ है। छठे सर्ग को "सोत्कंठ वैकुंठ" कहा है; वह बारहवीं अष्टपदी पर पूरा हुआ है। सातवाँ "श्री नागर नारायण" है और १६ वीं अष्टपदी पर पूरा हुआ है। आठवाँ सर्ग "विलक्षण लक्ष्मीपति" १७ वीं अष्टपदी पर, नवाँ "मुग्धमुकुन्दवदन" १८ वीं अष्टपदी पर, १० वाँ "चतुर चतुर्भुज" १९ वीं पर, ११ वाँ "सानन्द गोविन्द" २२ वीं अष्टपदी पर और बारहवाँ "प्रीतपीताम्बर" २४ वीं अष्टपदी पर समाप्त हुआ है। इस सर्ग-प्रणाली को कायम रख कर कवि ने अष्टपदियों के कुछ श्लोक पहले और कुछ पीछे रख दिए हैं और उसे महाकाव्य की उपाधि से गौरवान्वित कर अपने काव्य को जयदेव कवि का काव्य प्रतीत कराने की चेष्टा की है। परन्तु यह व्यर्थ है। काव्य का रूप, सुन्दरता, रस, माधुरी, कोमलता, मुग्ध-शृंगार वर्णन पटुता इत्यादि गुण जयदेव कवि की कविता में निराले ही हैं, वे अनुकरण से प्राप्त नहीं हो सकते। हम यह मानेंगे कि श्लोकबद्ध काव्य पांडित्यपूर्ण है, बड़े उद्भट पंडित का है, वह कवि शृंगार लोलुप भी था; परन्तु वह जयदेव कवि की पंक्ति में बैठने योग्य नहीं था।

यदि उसकी कविता में कोई चिरजीवी होने योग्य श्लोक हैं तो वे पहले तीन श्लोक हैं जिनमें उसने मंगलाचरण और कविवर जयदेव की प्रशंसा की है। इन श्लोकों के सिवा अन्य किसी श्लोक को हमने उद्धृत होते नहीं देखा। उनमें से दूसरे श्लोक में तो कवि ने आत्मपरिचय ही दिया है। यदि वह छोड़ दिया जाय तो केवल दो ही श्लोक रह जाते हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से एक और श्लोक निःसंदेह उपयोगी है जिसमें जयदेव कवि की माता और पिता का नाम दिया है। वह अन्त में बारहवें सर्ग में है। यथा,—

श्री भोजदेव प्रभवस्य राधादेवीसुत श्रीजयदेवकस्य।
पराशरादिप्रियवर्गकंठे श्रीगीतगोविन्द कवित्वमस्तु॥

अन्त में हम श्रीयुत् भारतेन्दु बाबु हरिश्चन्द्र को धन्यवाद देते हैं जिन्होंने गीतगोविन्द के आनन्द को हिन्दी जगत के लिये सुलभ कर के बड़ा उपकार किया। गीतगोविन्द के सरस और सुन्दर भावों को अपनी मातृ-भाषा में रखते हुए बाबू साहब स्वयं यह बात जानते थे कि जो सौंदर्य मूल में है वह अनुवाद में नहीं आ सकता। उन्होंने लिखा है:—

कहँ कविवर जयदेव वच, कहँ मम मति अति हीन।
पै दोउ हरि गुनगायिनी, एहि हित यह स्रम कीन॥

तथापि संस्कृत काव्य के साथ हिन्दी काव्य का आनन्द उठाते समय जान पड़ता है कि इस काव्य के बनाने में भारतेन्दु जी ने अपनी काव्य-निपुणता की परमावधि कर दी है। गायक जब जयदेव की अष्टपदियां गाते हैं तब श्रोताओं को असीम आनन्द का लाभ सहज में होता है। श्री हरिश्चन्द्र के गीत भी अत्यंत श्रुतिमनोहर हैं, काव्य गुणोपेत हैं और कृष्ण भक्ति के रस से पूरित हैं। वे भी अगर गाए जायँ तो विशेष आनन्ददायक होंगे।

श्री भारतेन्दु के अनुवाद के अतिरिक्त गीतगोविन्द के और भी प्राचीन अनुवाद हिन्दी भाषा में होंगे। यदि नागरी प्रचारिणी सभा का खोज विभाग उनकी खोज करा के उन्हें प्रकाशित कर दे तो हिन्दी साहित्य का बड़ा उपकार हो।

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तक्ष-शिला विद्यापीठ ।

पाली भाषा के अनेक ग्रन्थों में लिखा है कि प्राचीन भारत में तक्ष-शिला विद्यापीठ बहुत प्रसिद्ध और प्रधान था। अनेक प्रकार की कलाएं, विज्ञान और विद्याएं सीखने के लिये देश के भिन्न भिन्न भागों से लोग वहाँ आया करते थे। कोशल के एक राजा की शिक्षा वहीं हुई थी। राजा बिम्बसार की राज-सभा के वैद्य जीवक ने वहीं औषधि तथा अस्त्र-चिकित्सा आदि की शिक्षा पाई थी। अनेक राज्यों के राजकुमार शिक्षा के लिये तक्ष-शिला में ही जाते थे। राढ़ देश के एक प्रसिद्ध युवक विद्वान् की शिक्षा भी वहीं हुई थी। पाली जातकों में कई स्थानों पर यह लिखा हुआ मिलता है कि तक्ष-शिला में बड़े बड़े विद्वान् रहते थे और वहां सभी विषयों की उच्च-शिक्षा का बहुत अच्छा प्रबन्ध था। काशी का एक राजकुमार एक बार एक प्रसिद्ध विद्वान् से विविध कलाएं सीखने के लिये तक्ष-शिला गया था। गुरु को गुरु-दक्षिणा देने के लिये वह अपने साथ एक सहस्र स्वर्ण मुद्राएं लेकर गया था। उन दिनों वहाँ दो प्रकार के विद्यार्थी रहा करते थे; एक तो वे जो अपने गुरु को दक्षिणा-स्वरूप धन देते थे और दूसरे वे जो दिन भर तो दक्षिणा के बदले में गुरु की सेवा-शुश्रूषा और काम-धन्धा किया करते थे और रात के समय उनसे विद्याध्ययन करते थे। विद्यार्थियों को गुरु लोग अपराध करने पर शारीरिक दण्ड भी दिया करते थे। एक स्थान पर लिखा हुआ है कि एक बार एक गुरु ने अपने एक शिष्य राजकुमार को किसी अपराध पर बहुत पीटा था। चित्त-सम्भूत जातक में लिखा है कि शिक्षा केवल ब्राह्मणों और क्षत्रियों को ही दी जाती थी। एक बार दो चांडाल विद्यार्थी ब्राह्मण बन कर वहाँ पढ़ने गए थे; जब लोगों को मालूम हुआ कि वे दोनों चांडाल हैं तब वे लोग वहाँ से निकाल दिए गए थे। वहाँ तीन वेद पढ़ाए जाते थे और अट्ठारह विद्याओं की शिक्षा दी जाती थी। यहाँ यह भी ध्यान रखने योग्य है कि पाली जातकों में केवल ऋग्वेद; सामवेद और यजुर्वेद का ही जिक्र आया है, अथर्ववेद का उनमें कहीं नाम भी नहीं है। अनेक स्थानों पर तो केवल यही लिखा मिलता है कि विद्यार्थी लोग शिल्प की शिक्षा पाते थे; पर जान पड़ता है कि शिल्प से उनका तात्पर्य्य सभी प्रकार की शिक्षाओं से था।

कोसीय जातक में लिखा है कि काशी के राजा ब्रह्मदत्त के राजत्वकाल में बोधिसत्त का ब्राह्मण कुल में जन्म हुआ था और उसने तक्ष-शिला में तीन वेदों और अट्ठारह विद्याओं की शिक्षा पाई थी। शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त काशी में ही वह अध्यापक का कार्य्य करता था और ब्राह्मण-कुमारों तथा क्षत्रिय राजकुमारों को वेदों और विद्याओं आदि की शिक्षा दिया करता था। पर दुर्मेध जातक में लिखा है कि काशी के राजा ब्रह्मदत्त के राजत्व-काल में ब्रह्मदत्त की प्रधान रानी के उदर से ही बोधिसत्त का जन्म हुआ था और उसे लोग ब्रह्मदत्तकुमार कहा करते थे। सोलह वर्ष की अवस्था में वह तक्ष-शिला गया था और वहीं उसने तीन वेदों और अट्ठारह विद्याओं की शिक्षा पाई थी। जिस प्रकार बोधिसत्त ने तक्ष-शिला में तीन वेदों और अट्ठारह विद्याओं की शिक्षा पाई थी उसका विस्तृत विवरण भी कोसीय जातक में दिया हुआ है। कई दूसरे जातकों में भी यह लिखा हुआ है कि बोधिसत्त ने तक्ष-शिला में रह कर तीन वेदों और अट्ठारह विद्याओं की शिक्षा पाई थी।

धनुर्विद्या ।

भीमसेन जातक में लिखा है कि बोधिसत्त ने तक्ष-शिला में धनुर्विद्या सीखी थी और वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका बहुत अच्छा ज्ञाता हो गया था। तक्ष-शिला में तीन वेद और अट्ठारह विद्याएं पढ़ चुकने के उपरान्त वह भीमसेन नामक एक जुलाहे के पास गया। उस जुलाहे से उसने कहा कि तुम कहीं तीर चलाने की नौकरी कर लो, जब आवश्यकता होगी तब तुम्हारे सब काम मैं कर दिया करूँगा। तदनुसार भीमसेन ने काशिराज के यहाँ नौकरी कर ली। उन दिनों काशी के आसपास के जंगलों में एक बड़ा बाघ रहा करता था जो वहाँ के निवासियों को बहुत कष्ट पहुँचाता था। राजा के आज्ञानुसार बोधिसत्त की सहायता से भीमसेन ने उस बाघ को मार डाला जिस पर राजा से उसे यथेष्ट पुरस्कार मिला एक बार उसने एक जंगली भैंसा भी मारा था। अब भीमसेन को अपने पुरुषार्थ और योग्यता का बहुत घमंड हो गया और वह बोधिसत्त को कोई चीज न समझने लगा। कुछ ही दिनों बाद एक राजा ने काशी पर आक्रमण किया। भीमसेन उसके मुकाबले के लिये एक हाथी पर बैठा कर भेजा गया; पर वह शत्रु के भय से इतना डर गया कि हाथी पर से गिरते गिरते बचा। बोधिसत्त ने युद्ध-क्षेत्र से उसे लौटा कर घर भेज दिया और स्वयं लड़ कर उस आक्रमणकारी राजा को परास्त किया। असदीस जातक में लिखा हुआ है कि बोधिसत्त ने तक्ष-शिला में धनुर्विद्या और अट्ठारह दूसरी विद्याएं सीखी थीं। वह काशी के असदीस नामक राजा का सब से बड़ा पुत्र था। उसका एक छोटा भाई और था जिसका नाम ब्रह्मदत्त था। पिता ने उसे अपना राज्य देना चाहा था, पर उसने राज्य स्वयं न लेकर अपने छोटे भाई ब्रह्मदत्त को दे दिया। इस पर कुछ मंत्री असंतुष्ट हुए। बोधिसत्त वहाँ से दूसरे राज्य में चला गया और वहाँ के राजा से मिल कर उसने कहा कि मैं धनुष चलाना बहुत अच्छी तरह जानता हूँ। राजा ने उसे अपने यहाँ नौकर रख लिया। उस राजा के यहाँ पहले से धनुष चलानेवाले जो लोग थे वे बोधिसत्त के आने से मन ही मन कुछ असंतुष्ट हुए थे; पर राजा यह बात अच्छी तरह समझ गया था कि बोधिसत्त धनुर्विद्या में बहुत प्रवीण है। इसलिये सब लोगों को उसकी योग्यता का परिचय दिलाने के लिये राजा ने एक दिन सब के सामने उससे कहा कि तुम एक तीर से सामनेवाले उस पेड़ पर का आम तोड़ गिराओ। तदनुसार बोधिसत्त ने एक तीर चलाया जिससे वह आम जमीन पर गिर पड़ा।

सरभंग जातक में लिखा है कि बोधिसत्त का जन्म एक पुरोहित की स्त्री के गर्भ से हुआ था। उसके पिता ने विद्या और कला सीखने के लिये उसे तक्ष-शिला भेजा था। उसने शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त गुरु को यथेष्ट गुरु-दक्षिणा दी थी। उसे बिदा करते समय गुरु ने उसे एक सुन्दर बहुमूल्य तलवार, भेड़े के सींग का बना हुआ एक धनुष, एक ढाल, एक तरकश और एक पगड़ी दी थी। बोधिसत्त पाँच सौ आदमियों को शिक्षा देकर तब घर लौटा था। राजा ने बोधिसत्त का कौशल देखने के लिये साठ हजार धनुष-बाण चलानेवाले एकत्र किए और नगर में ढिंढोरा पिटवा दिया कि लोग आकर उसकी धनुर्विद्या की प्रवीणता देखें। जब सब लोग एकत्र हुए तब वह हाथ में केवल एक तलवार लेकर उन लोगों के सामने आया। चलते समय उसके गुरु ने जो चीजें उसे दी थीं, उन सब को वह अपने पास ही छिपाए हुए था। पहले उसने उपस्थित लोगों से धनुष-बाण माँगा पर किसी ने उसे अपना धनुष-बाण देना स्वीकार न किया। बोधिसत्त ने राजा से कह कर अखाड़े के बीच की थोड़ा सी जगह चारों ओर कपड़े से घिरवा दी और तब वह उस घिरे हुए स्थान में चला गया। वहाँ जाकर उसने साफा बाँध लिया और अपना धनुष निकाल लिया। उसने बहुत से शब्द-वेधियों और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शर-वेधियों को बुलाया, सब लोगों को तीस तीस तीर दिए और उनसे कहा कि तुम सब लोग एक साथ ही मुझ पर तीर चलाओ और मैं अकेले उन तीरों को रोकूँगा। पहले तो उन लोगों को युवक बोधिसत्त पर तीर चलाने में कुछ संकोच हुआ पर पीछे से वे उस पर शर-संधान करने लगे। बोधिसत्त सब तीरों को अपने नाराच पर रोकता था। तदनन्तर बोधिसत्त ने कहा कि मैं एक ही तीर से तुम सब लोगों को वेधूँगा। इस पर सब लोग बहुत भयभीत हुए। इसके बाद उसने चारों ओर केले के चार पेड़ रखवाए और उन चारों पेड़ों को एक ही तीर से छेद दिया। इस पर बहुत से लोगों ने उसे शरयष्ठी, शर-रज्जु, शर-वेणी, शर-प्रासाद, शर-मंडप, शर-सोपान, शर-पुष्करणी, शर-पद्म आदि अनेक प्रकार के कौतुक दिखलाने के लिये कहा। उसने आठ अंगुल मोटा तख्ता, एक अंगुल मोटी लोहे की चादर, मिट्टी और बालू से भरा हुआ छकड़ा और एक उषभ (२० लाठी) की दूरी से एक बाल छेदा था! पंचबुध जातक में लिखा है कि प्राचीन काल में जब काशी में ब्रह्मदत्त नामक राजा राज्य करता था तब उसके यहाँ बोधिसत्त का जन्म हुआ था। उसके जन्म के समय ही ब्राह्मणों ने कह दिया था कि यह सब प्रकार के शस्त्र चलाने में जम्बूद्वीप में अद्वितीय होगा। शिक्षा प्राप्त करने के लिये वह एक प्रसिद्ध विद्वान् के पास तक्ष-शिला गया था। जब वह शिक्षा प्राप्त कर चुका तब चलते समय उसके गुरु ने उसे पाँचों शस्त्र दिए थे। जब वह तक्ष-शिला से काशी आ रहा था, तब मार्ग में शीलेश-लोम नामक एक यक्ष से उसकी भेंट हुई। जब यक्ष ने बोधिसत्त पर आक्रमण किया तब बोधिसत्त ने पहले विष से बुझे हुए लगातार पचास तीर उस पर चलाए। तदुपरान्त उसने भाले, तलवार और गदा से प्रहार किया। उसने दाहिने हाथ से, बाएँ हाथ से, दाहिने पैर से, बाएँ पैर से और अन्त में सिर से भी गदा चलाई थी! पर जब इन सब शस्त्रों का कोई फल न हुआ और यक्ष ने उसे पकड़ लिया तब अंत में उसने कहा कि मेरे पास वज्रायुध है जिससे मैं तुम्हारे प्राण ले लूँगा। अंत में उसने उस यक्ष को परास्त ही कर के छोड़ा।

सुशीम जातक में लिखा है कि बोधिसत्त एक ब्राह्मण का लड़का था। जब वह सोलह वर्ष का था तब उसके पिता का देहान्त हो गया। उन दिनों राजाओं के यहाँ हस्तिमंडल नामक एक उत्सव हुआ करता था। अपने राज्य में उस उत्सव के सब कृत्य उसका पिता ही कराता था। एक बार जब राजा ने हस्तिमंडल करना चाहा तब उसके मंत्रियों ने उसे सम्मति दी कि इस काम के लिये कोई बड़ा और वृद्ध ब्राह्मण चुन लिया जाय। इस पर बोधिसत्त की माता को बहुत दुःख हुआ। जब बोधिसत्त को अपनी माता के इस प्रकार दुःखी होने का हाल मालूम हुआ तब उसने अपनी माता से पूछा कि हस्तिसूत्रों और तीनों वेदों की शिक्षा कहाँ मिलती है? माता ने उससे कहा कि इसकी शिक्षा तक्ष-शिला में होती है जो यहाँ से बीस हजार योजन है। बोधिसत्त एक दिन में तक्ष-शिला पहुँचा, एक दिन में उसने हस्तिसूत्र पढ़ा और तीसरे दिन वह घर लौट आया। और चौथे दिन वह उस उत्सव में सम्मिलित हुआ।

चाम्पेय जातक में लिखा है कि काशी के एक विद्यार्थी ने तक्ष-शिला में आलंबन-मंत्र सीखा था जिसकी सहायता से वह साँपों को वश में कर लेता था। बोधिसत्त का जन्म अंग और मग्ध देश के मध्य में चम्पा नदी के किनारे हुआ था। वह नाग-राज था और नदी में ही रहता था। वह बहुत ही धर्म्मनिष्ठ था। एक दिन पूर्णिमा के दिन उसने व्रत किया और वह नदी से बाहर निकल आया। उस ब्राह्मण ने उस नाग-राज को देख कर मंत्र-बल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से अपने वश में कर लिया, पर अंत में उसकी स्त्री ने उसे बचा लिया।

जातक में लिखा है कि कोशल के एक राजकुमार ने तक्ष-शिला में निधि--उद्धारण मंत्र सीखा था। उस मंत्र की सहायता से उसने बहुत सा गड़ा हुआ धन ढूँढ़ निकाला और उस धन से सेना एकत्र करके अपने पिता का नष्ट राज्य फिर से प्राप्त किया था। *

—:o:—

मोहन की मोटरकार।

[लेखक—श्रीयुत, बा० देवीप्रसाद खत्री, काशी।]

मोहन का मकान बड़ा ही विचित्र और कौतुकपूर्ण है। उसी की नकल लोग आजकल जलयान, मोटर तथा वायुयान बनाते चले जा रहे हैं। वह घर तिमंजिला है और उसकी प्रत्येक मंजिल के भिन्न भिन्न नाम हैं। सबसे नीचेवाली मंजिल का नाम "उदर" है जहाँ भोजन सम्बन्धी एक से एक बढ़ी हुई कलें और चक्कियां रखी हुई हैं जो दिन रात चला करती हैं। बीचवाली मंजिल को लोग "वक्षस्थल" कहते हैं और उसी में मोहन के कारखाने की भाथी और नहर की इञ्जीनियरी के दफ्तर हैं। तीसरी और सबसे ऊँची मंजिल मोहन की अध्ययनशाला है जो "सिर" के नाम से प्रसिद्ध है। यह तो हुई घर की बनावट की बात। इसके अतिरिक्त इस घर में एक चौथा भाग भी है जिसमें केवल दो डंडे हैं। मोहन इन डंडों को अपनी "टाँगें" कहता है और जब कभी खड़ा होता है तब अपने सारे घर को इन्हीं डंडों पर उठा लेता है। कभी कभी गन्दी जमीन के संसर्ग से बचने के लिये लोग खम्भों पर मकान बना लेते हैं; परन्तु ये खम्भे अपने स्थान से हिलते नहीं। मगर मोहन के डंडे तो (जो खम्भों का काम भी देते हैं) घूमने और सैर करने में बड़े ही तेज हैं।

सच पूछिए तो ये डंडे मोहन को इसी लिये दिए गए हैं कि वह कुतुब की तरह खड़ा न रहे बल्कि इनकी सहायता से चल फिर और दौड़ सके। यह ठीक है कि कभी कभी मोहन महाशय इनके सहारे चुपचाप खड़े भी रहते हैं परन्तु ऐसा बहुत कम होता है क्योंकि लिखने पढ़ने, बातचीत और आराम करने में अधिकतर बैठने ही कि आवश्यकता होती है। हम लोग अपनी टांगों के सहारे खड़े रह सकते हैं। परन्तु चुपचाप खड़े रहने से जी उकता जाता है, थकावट मालूम होती है, टांगों को हानि पहुँचती है, नसें शिथिल हो जाती हैं और पैर सुन्न पड़ जाते हैं। इसी लिये कहा गया है कि टांगों का उद्देश्य बुड्ढों की बैसाखियों की तरह हम लोगों को घुमाना और सैर कराना है।

इससे यह नहीं समझना चाहिए कि घुमाने फिराने का काम डंडों ही से अच्छी तरह हो सकता है, और किसी वस्तु से नहीं। पहिए डंडों से भी अच्छा काम देते हैं। यथार्थ तो यह है कि बिना पहियों के संसार का कोई काम चल ही नहीं सकता। एक्का, घोड़ा-गाड़ी, पैर-गाड़ी, रेल-गाड़ी, हवागाड़ी और रथ ये सब पहियों ही के खेल हैं। इन्हें हम यदि पहियों पर स्थित छोटे छोटे मकान कहें तो अनुचित न होगा। सभी प्रकार की गाड़ियों में पहिए इसी लिये लगाए जाते हैं कि तेज चलने का काम जितनी सरलता से ये कर सकते हैं उतनी सरलता से किसी दूसरे प्रकार के यन्त्र कदापि नहीं कर सकते।

* बंगाल की एशियाटिक सोसायटी के जरनल में प्रकाशित श्रीयुक्त विमलचरण लाल बी० ए के एक लेख के आधार पर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यद्यपि मोहन के ये डंडे विचित्र हैं तथापि इनके कारण शक्ति का अपव्यय होता है। चलने में पहले एक टाँग को आगे बढ़ाते हैं और फिर रोक देते हैं। तत्पश्चात् दूसरी टांग को आगे लाकर पहली को पीछे कर देते हैं और फिर वही रुकावट होती है। इसी प्रकार एक के बाद दूसरी टांग लाई और रोकी जाती है। ऐसा होने से स्नायु-शक्ति का व्यर्थ व्यय होता है और शरीर के सभी अवयवों में रुकावट से धक्का लगता है। यदि मोहन के डंडे कमर में इस प्रकार से लगे होते कि आगे जाकर ठहरते नहीं वरन् ऊपर उठ जाते और पीठ की ओर से होते हुए फिर नीचे आ सकते और यों हीं बराबर घूमा करते तो वे बिलकुल पहियों ही का काम देते। क्योंकि पहियों में महत्व की बात यही है कि जिस भाग का काम हो जाता है वह ठहरता नहीं वरन घूमकर फिर आगे आ जाता है।

एक साधारण स्टीमर के इञ्जिन में दो बड़े बड़े बल्ले होते हैं। एक ऊपर आता है तब दूसरा नीचे जाता है; और जब दूसरा ऊपर आता है तब पहला नीचे चला जाता है; और इन्हींके द्वारा स्टीमर आगे बढ़ता है। जैसे मोहन के डंडे एक ओर से दूसरी ओर तक आया जाया करते हैं वैसे ही स्टीमरवाले बल्ले भी ऊपर नीचे आया जाया करते हैं। परन्तु ऐसा होने से बड़े बड़े उपद्रव हो जाते हैं। इञ्जिन बार बार बिगड़ता है, वाष्पीय शक्ति का अपरिमित व्यय होता है और सारी नौका जूड़ी से पीड़ित रोगी की तरह हिलती और काँपती रहती है। यदि स्टीमर के बल्लों को मोहन के डंडों के समान हर एक धक्के के बाद अपनी चाल को बन्द कर नीचे रहना न पड़ता तो ये उपद्रव भी नहीं उठते। ऐसे इञ्जिन को रेसिप्रोकेटिङ्ग इञ्जिन कहते हैं। क्योंकि जब दोनों बल्ले एक दूसरे के पास से गुज़रते हैं तब एक दूसरे के प्रतिकूल चलते हुए दिखाई पड़ते हैं। इससे यह बात प्रकट है कि मोहन के डंडे और स्टीमरवाले बल्ले एक ही सिद्धान्त पर बन गए हैं।

परन्तु यह जमाना नए नए आविष्कारों का है। अब रेसिप्रोकेटिङ्ग इंजिनवाले स्टीमरों की कदर नहीं रह गई। अब तो हर जगह नए प्रकार के इञ्जिन लगाए जाते हैं जिन्हें टरबाइन कहते हैं। टरबाइन रूपी ओषधि से अब स्टीमरों की जूड़ी रफूचक्कर हो गई। अब वह हिलते काँपते नहीं। इतनी जल्दी उनकी मरम्मत की ही आवश्यकता होती है। और शक्ति का तो इतना थोड़ा व्यय होता है कि उसे देखकर आश्चर्य्य मालूम होता है। पहले पहल ये इंजिन लड़कों के खेलने की किश्तियों में लगाए गए और फिर बड़े बड़े स्टीमरों में, और अब तो बड़े बड़े जहाजों ने भी इनको अपना लिया है। इन टरबाइनों में केवल एक पहिया रहता है जो भाप या खौलते हुए पानी से उसी तरह चलाया जाता है जिस तरह पनचक्की के पहिए ठंढे पानी के द्वारा घूमते हैं। इंजीनियरी विद्या का यह विचित्र आविष्कार जिसका किसी न किसी दिन शायद मोटरकार और वायुयानों में भी प्रयोग किया जाय केवल उसी पहिएवाले सिद्धान्त पर निर्भर है।

अब प्रश्न तो यह है कि मोहन के घर में, जो सब टरबाइन इंजिनों से कहीं कौतुकमय और प्रशंसनीय है, डंडे ही क्यों लगाए गए? इसका कारण मोहन के घर का रहस्यमय इतिहास है। सच पूछिए तो मोहन के डंडे बैसाखियों की तरह काम करने के लिये बनाए ही नहीं गए थे क्योंकि मोहन के पूर्व-पुरुषों को पैरों चलना सीखे हुए अधिक दिन नहीं बीते हैं। और इसी कारण मोहन के घर में ये डंडे और भी हैं। सम्भव है कि मोहन के पूर्व पुरुषों ने इन डंडों से भी बैसाखियों की तरह ही काम लिया हो; और मोहन भी बचपन में जब तक उसने पैरों चलना नहीं सीखा था, इन्हीं के सहारे चला करता था। तथा अब भी जब वह खेल में घोड़ा बनता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रीछ बनता है तब इन्हीं की सहायता से चलता है। ये डंडे मोहन की "भुजाएं" हैं। ईंट या पत्थर के घर का कोई भाग ऐसा नहीं है जिसकी तुलना हम भुजाओं से कर सकें। केवल हवा द्वारा चलनेवाली चक्कियों की भुजाओं से इनकी कुछ तुलना हो सकती है।

अब हम फिर टाँगों की ओर झुकते हैं। यद्यपि ये इतनी अधिक लाभदायक नहीं हैं जितने लाभदायक पहिए हैं, परन्तु फिर भी इनमें एक ऐसा गुण है जिससे हम मोहन के सारे घर को एक "मोटरकार" या "स्वयंचल यंत्र" कह सकते हैं। अर्थात् वह एक ऐसी गाड़ी है जो स्वयं चलती है और किसी वस्तु द्वारा उसे खींचना नहीं पड़ता। अन्तर केवल इतना ही है कि यह पहियोंवाली मोटर नहीं है, वरन् डंडोंवाली है और मोहन इस मोटर का मालिक भी है और ड्राइवर भी।

मोटरकार वा वायुयान का प्रधान अङ्ग इंजिन होता है जिसके भीतर वह शक्ति उत्पन्न की जाती है जिसके द्वारा इंजिन आपसे आप चल सकता है। इस इंजिन को "अन्तस्थ ज्वलन" इंजिन कहते हैं क्योंकि इसका ईंधन किसी अलग भट्ठी में नहीं वरन् उस इंजिन के भीतर ही जलाया जाता है। और फल यह होता है कि इंजिन आपसे आप चलता है। मोहन के घर के डंडे यद्यपि पुराने "रेसीप्रोकेटिङ्ग" इंजिनों के समान चलते हैं तथापि उनमें विचित्रता यह है कि लाखों वर्ष से ये दूसरे प्रकार के नए इंजिनों से, जिन्हें हमने "अन्तस्थ ज्वलन" इंजिन कहा है, इतना अधिक काम लेते आए हैं कि बिना इनके एक कदम भी नहीं चला जा सकता।

मोहन के इन इंजिनों का नाम 'स्नायु' है। स्नायु मोहन के जीते जागते नौकर हैं जिनके द्वारा वह अपने सभी आवश्यक कार्यों का प्रतिपादन कर सकता है। उसके नलों की दीवार इन्हीं स्नायु-कोष्ठकों से बनी हुई है और हर एक स्नायु-कोष्ठक यद्यपि जड़ नहीं चैतन्य है तथापि एक "अन्तस्थ ज्वलन" इंजिन से भी बढ़कर काम देता है। मोहन के डंडों को चलानेवाली स्नायु भी ठीक मोटरकार के "अन्तस्थ ज्वलन" इंजिनों की भाँति कार्य्य करती हैं। और जैसे मोटरकार के इंजिन के भीतर पेट्रोलियम वायु से मिलता है और विद्युत् कणों से जलाया जाता है वैसे ही स्नायु के अन्दर भी अग्नि प्रज्वलित करने के लिये वायु तथा ईंधन की आवश्यकता होती है। अब प्रश्न यह है कि स्नायु तक वायु कैसे पहुँचती है? और ईंधन किस रूप में रहता है?

मोहन के रक्त में बहुत ही छोटे छोटे लाल रंग के कुली होते हैं जिनके कन्धों पर छोटी छोटी ओषजन की गठरियाँ लदी होती हैं। ऐसे ऐसे लाखों कुली बराबर मोहन के स्नायु रूपी इंजिनों में पहुँचा करते हैं और वायु-संचार करते हैं। यह सब ओषजन जो कुली इतने परिश्रम से ले आते हैं, पहले स्नायु-कोष्ठकों के शरीर के अन्तस्थ भाग से भली भाँति मिल जाता है और तब कहीं काम में लाया जाता है। लोग लोहे के इंजिनों को अन्तस्थ-ज्वलन इंजिन कहते हैं परन्तु इनकी भीतरी ज्वाला स्नायु की भीतरी ज्वाला के सामने तुच्छ है। धकाधक चलनेवाले रक्ताशय के हर एक स्नायु के अन्दर ऐसी प्रचण्ड अग्नि प्रज्वलित रहती है जिसका वर्णन ही नहीं हो सकता। और जब पाठकगण इस लेख को पढ़ते होंगे और उनके नेत्र पंक्ति के एक सिरे से दूसरे सिरे तक और दूसरे से फिर पिछले सिरे तक घूमते होंगे तब भी उनकी पुतलियों की स्नायुओं में भीषण ज्वाला उपस्थित होगी। इस पर भी आप आक्षेप कर सकते हैं कि मोटरकार में ओषजन का प्रयोग नहीं होता वरन् वायु का प्रयोग होता है, जिसमें ओषजन के अतिरिक्त नत्रजन भी मिला रहता है। यह बात बहुत ठीक है। परन्तु स्नायुवाले रक्त में भी केवल ओषजन ही नहीं होता वरन्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओषजन और नत्रजन ठीक उसी भाँति मिले होते हैं जिस तरह मोटरकारवाले इंजिन में। क्योंकि दोनों में वायु बाहर से ही आती है। मगर जिस तरह मोटरकार में भी केवल ओषजन ही काम आता है और नत्रजन बेकार पड़ा रहता है, उसी तरह रक्त या स्नायु में भी ओषजन ही का बलिदान होता है और नत्रजन महाशय भारतवर्ष के अमीरों की तरह पड़े पड़े आराम करते हैं।

यह तो हुई वायु पहुँचने की बात। और ईंधन के विषय में कोई मूर्ख भी यह कहने के लिये उद्यत न होगा कि मोहन की टाँगों या और किसी भाग की स्नायु में पेट्रोलियम रहता है। नहीं, पेट्रोलियम तो नहीं रहता पर उसका काम उसकी बहिन शर्करा देती है। यदि हम पेट्रोलियम का पता लगाएं तो मालूम होगा कि इसमें दो पदार्थों का मेल है जिन्हें कार्बन तथा हाड्रोजन कहते हैं। इन तत्वों को ओषजन के साथ मिलकर एक हो जाने की बड़ी उत्कण्ठा रहती है और इस ओषजन-सम्मेलन को लोग "जलना" कहते हैं। परन्तु इस "जलने" से भस्म उत्पन्न नहीं होती वरन् दो भिन्न भिन्न पदार्थ ही पैदा हो जाते हैं। कार्बन और ओषजन के सम्मेलन से तो "कार्बनोषित" गैस बनती है और हद्रजन और ओषजन मिल कर जल हो जाते हैं जो मंसूरी और नैनीताल के बादलों की तरह गैस के रूप में इंजिन के अन्दर छाए रहते हैं। और इंजिन में ये दोनों गैसें बराबर गरम और जलती हुई उत्पन्न हुआ करती हैं इससे ये फैलती जाती हैं; और फैलती भी इस तेजी के साथ हैं कि इंजिन में समा नहीं सकतीं और बाहर निकल भागने के लिये दीवारों पर टक्करें लगाती हैं; और जहाँ ये टक्करें लगीं कि इंजिन वहाँ से चलते हुए।

मोहन के रक्त की शर्करा ही उसके इंजिन का पेट्रोलियम है। और यही कारण है कि शर्करा तथा माँडीदार पदार्थ इतने लाभदायक होते हैं। माँड़ी (starch) भी शरीर में जा कर कुछ रसों से मिल कर शर्करा हो जाती है। और इसी लिये जापानी और अंग्रेज सिपाहियों के भोजन में शर्करावाले पदार्थ बढ़ा दिए गए हैं। जब हम शर्करा का पता लगाते हैं तब पेट्रोलियम से उसकी समानता पूर्णतः प्रकट हो जाती है। शर्करा में कार्बन, हड्रजन तथा ओषजन ये तीन तत्त्व पाए जाते हैं। परन्तु सौभाग्यवश ओषजन इतना अधिक नहीं रहता जितने की शेष दो तत्वों की आवश्यकता होती है। इसलिये शर्करा को हम पेट्रोलियम की तरह जला कर कार्बनोषित गैस और भाप उत्पन्न कर सकते हैं। यही गैसें मोटर इंजिन से निकला करती हैं और यही मोहन के फेफड़ों से भी निकलती रहती हैं।

वही रक्त-वाहिनी नाड़ी जो रक्त ले जाती है अपने प्रवाह में शर्करा रूपी ईंधन भी बहाए जाती है। शर्करा तथा वायु दोनों स्नायुओं के कोष्ठकों में पहुँच कर उनके पदार्थों में सम्मिलित हो जाती हैं और इन्हीं कोष्ठकों में उस समय तक पड़े रहते हैं जब तक कि उनमें बत्ती न लगाई जाय। मगर हर एक स्नायु के भीतर शर्करा तथा वायु का एक भण्डार होता है जिसके कारण स्नायु कुछ देर तक अपना काम उस समय भी कर सकती है जब बाहर से उसे इन पदार्थों की सहायता न मिले। और यही सबब है कि मरे हुए मेंढक की टाँगों की स्नायु, चाहे उनके चारों ओर केवल नत्रजन ही क्यों न हो, अपना काम करती जायँगी। क्योंकि दोनों आवश्यक पदार्थ वहाँ उसी तरह वर्तमान हैं जैसे कि इंजिन में। और यदि बत्ती बराबर लगती जाय तो जब तक वर्तमान भण्डार खाली न हो जाय, काम कदापि बन्द न होगा।

अब प्रश्न यह होता है कि बत्ती के काम कौन पदार्थ करते हैं? साधारण मोटरकार में विद्युद्धारा बहाने के लिये तारों तथा ड्राइवर की आवश्यकता होती है। इन्हीं तारों के समान ही स्नायु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिन में मज्जा-तन्तु होते हैं जो अपना स्रोत कोष्ठकों के भीतर पहुँचाते हैं और वहाँ के एकत्र मसाले में आग लगाते हैं। इससे कहा जाता है कि स्नायु की समानता पुराने भापवाले इंजिन से नहीं वरन् केवल अन्तस्थ-ज्वलन इंजिनों ही से हो सकती है।

इससे एक बात बड़े महत्त्व की मालूम होती है। यदि आपको नए नए लाभदायक आविष्कार करने हों अथवा सुन्दर वस्तुएं, कलें वा इमारतें निर्म्माण करनी हों तो अपने शरीर की बनावट का निरीक्षण और अनुसरण कीजिए। फिर सफलता हाथ जोड़े खड़ी रहेगी। इसी एक दृष्टान्त से विचारिए कि सहस्रों वर्षों से कल इत्यादि के आविष्कार हो रहे हैं और एक के बाद दूसरे आविष्कार कर के लाखों प्रकार के उपाय लोगों ने निकाले हैं, तब कहीं जा कर पहलेपहल वायुमण्डल पर विजय हुई। कैसे? हर एक मनुष्य के शरीर में लाखों कलें काम कर रही हैं और इन्हीं का अनुसरण कर लोगों ने अन्त में "अन्तस्थ-ज्वलन इंजिन" बनाए जिनमें ईंधन और वायु का मसाला तैयार रहता है और केवल बिजली के तारों की आवश्यकता होती है, जो इस मसाले में आग लगावें।

इन सब बातों के अतिरिक्त स्नायु के विषय में हम और कुछ नहीं जानते। इनकी शक्ति रहस्यमय है। केवल इतना ही कह सकते हैं कि जब स्नायु-कोष्ठकों के पदार्थ में आग लगती है तब ये सिकुड़ जाते और मोटे हो जाते हैं। प्रत्येक स्नायु के सभी कोष्ठकों में ऐसा एक ही समय होता है, इससे पूरा बंडल का बंडल सिकुड़ जाता है और दोनों सिरे एक दूसरे के निकट आ जाते हैं। जांघों के सामने की स्नायु, घुटनों की गाँठ पर से होती हुई, रस्सी की तरह बनकर, हड्डी की एक मोटी कील से उस जगह बँधी होती हैं जहाँ से टाँगों का निचला भाग आरम्भ होता है। जब हम चलना चाहते हैं तब इन स्नायुओं को काम करना पड़ता है जिससे ये सिकुड़ जाती हैं और टांगों के निचले भागों को तानकर घुटनों को सीधा कर देती हैं। फिर तो चलना बहुत ही सहज हो जाता है।

इस दृष्टान्त से यह बात प्रकट हो जाती है कि स्नायु केवल अन्तस्थ-ज्वलन इंजिन ही नहीं वरन् एक तराजू के डंडे का भी काम देती हैं। संसार की सभी कलें इस बात में स्नायु के सामने मात हैं। यह स्नायु स्वयं ही इंजिन है और अपना प्रयोग अपने पर आप ही करती है। यह स्वयं ही सिकुड़ या फैलकर अपना कार्य्य सम्पादन किया करती है। चलने या दौड़ने में जितनी स्नायुओं का काम पड़ता है वे इस तरह लगाई गई हैं कि सारे शरीर को गिरने से बचाती भी हैं और आपसे आप ही हिलती डोलती भी हैं। मनुष्य की बनाई हुई सभी कलें इस दैवी कल के सम्मुख भद्दी प्रतीत होती हैं। और एक बात में तो स्नायु मोटरकारवाले इंजिनों से कहीं बढ़ी चढ़ी हैं। क्योंकि मोटरकारवाले इंजिनों में जो गरमी उत्पन्न होती है उसमें ईंधन का व्यय अधिक होता है, वह व्यर्थ जाती है और विशेष रूप से उसे निकालना भी पड़ता है। परन्तु मोहन के इंजन में जो गरमी उत्पन्न होती है वह लाभदायक होती है और निकाली नहीं जाती, वरन् सारे घर को गरम रखने के काम में आती है।

इन सब बातों के होते हुए भी कहना पड़ता है कि मोहन के टाँग रूपी डंडे उनकी भुजाओं से कम कौतुकमय हैं। क्योंकि हाथों और पैरों की उँगलियों की परीक्षा करने से साफ पता चल जाता है कि हाथ अधिक लाभदायक हैं या पैर। मोहन के ये टाँग रूपी डंडे प्राचीन समय से अधिक सादे हो गए हैं। डंडों की बनावट में पेचीदगी की आवश्यकता नहीं होती, उन्हें तो केवल सीधा और मजबूत होना चाहिए। इसी से मोहन की टाँगें आजकल इतनी सादी हो गई हैं और दिन पर दिन जैसे जैसे नए नए मोहन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैदा होते जायँगे वैसे वैसे और भी सादी होती जायँगी। परन्तु यदि हम पैरों का (जो आजकल केवल टाँगों को संभालने तथा शरीर को गिरने से बचाने ही के लिये मालूम होते हैं) निरीक्षण करें तो बहुत सी बनावटों का पता लगेगा जो कि काम में न आने के कारण यद्यपि अब अधूरी रह गई हैं तथापि ठीक उसी प्रकार की हैं जैसी कि हम मोहन के हाथों में पाते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ये बनावटें एक समय बड़ी ही लाभ-दायक थीं। परन्तु बहुत दिनों से मरम्मत न होने के कारण अब बेकार हो गई हैं।

यदि किसी टाइपराइटर को एक पैरवाले स्टूल की जगह रख दिया जाय तो वह स्टूल का काम तो अच्छी तरह देगा ही परन्तु बुद्धिमान् मनुष्य उसकी कुँजियों, खानों तथा अन्य भागों पर दृष्टि डालते ही जान जायगा कि यह कोरा स्टूल ही नहीं है वरन् एक टाइपराइटर है जिसमें कुछ जङ्ग लग गया है और जिसके कुछ अङ्ग काम में न आने से खो या खराब हो गए हैं जिससे यह टाइपराइटर अपना काम बहुत अच्छी तरह नहीं कर सकता। ठीक यही दशा मोहन के पैरों की भी है। आजकल तो ये केवल टाँगों के लिये सहारे ही का काम दे रहे हैं किन्तु किसी समय इनका काम अधिक महत्व का था। यह बात सहस्रों वर्ष पहले के उस समय की है जब कि मोहन के पूर्व-पुरुष वृक्षों पर रहा करते थे। यदि आप इन प्राचीन मनुष्यों के पैरों का अनुभव करना चाहें तो अजायब घरों में जा कर "गिबन" नामक नरपशु को देखिए। तब आपको पता लग जायगा कि हम लोगों के पैर भी पहले हाथों के समान थे और सभी चीज़ों को हाथों ही की तरह आसानी से पकड़ सकते थे। इस समानता से मोहन के पैरों में उँगलियां और जोड़ होने का भेद अच्छी तरह प्रकट हो जाता है। यद्यपि आजकल मोहन अपने पैरों से वह काम नहीं लेता जो उसके पूर्व-पुरुष लेते थे (और यदि वह ले भी तो स्टूलवाले टाइप-राइटर के समान ठीक तरह से काम न होगा) तथा उसके हाथों का निरीक्षण कर के पैरों की बनावट का हाल हम भली भाँति जान सकते हैं।

अब एक प्रश्न और रह गया है। मोहन की मोटर को चलाता कौन है? ऊपर कहा गया है कि मोहन की टाँगों में करोड़ों आश्चर्य्यजनक इंजिन काम किया करते हैं जिन्हें लोग स्नायु-कोष्ठक कहते हैं। इन में रक्त द्वारा शर्करा तथा वायु का प्रवेश होता है और बिजली के तारों की तरह मज्जा-तन्तु इनमें गरमी उत्पन्न करते हैं। परन्तु इन मज्जातन्तुओं से कौन काम लेता है? उत्तर साफ है। मोहन की इच्छा होते ही ये मज्जा-तन्तु अपने अपने काम में लग जाते हैं और इंजिन भी चलने लगते हैं। यही कारण है कि मोहन जब चाहे, दौड़ता है और जब चाहे तब टहलता या खड़ा रहता है।

मोटर को ठीक ठीक चलाने या चाल को यथोचित घटाने बढ़ाने में मोहन के इच्छा-रूपी ड्राइवर कोई बाजी नहीं ले जा सकता। और न ऐसी मोटर ही मिल सकती है जिसमें टूटने का डर इतना कम हो जितना स्नायुओं में है। अब अन्तिम प्रश्न ये है कि मोहन की मोटर जल्दी टूटती क्यों नहीं? और उसका ड्राइवर अपने कार्य्य को इतनी सफलता के साथ कैसे करता है?

आप कह सकते हैं कि ये सब बातें अभ्यास से होती हैं। और यही ठीक भी है। चलने तथा दौड़ने के लिये मोहन को अवश्य अभ्यास करना पड़ा होगा। अपने शरीर के हर एक भाग को पैरों पर स्थिर रखना, उन्हें गिरने से बचाना और फिर उनसे काम लेना, क्या ये सब बातें बिना अभ्यास के संभव हो सकती हैं? परन्तु एक बात और भी है। यदि मोहन को अपनी मोटर की सभी कलों को वश में रखना स्वयं सीखना पड़ता तो लाखों वर्ष के अभ्यास के उपरान्त वह केवल 'खड़ा होना' ही सीखता। यदि उसकी मातहती में सैकड़ों काम करनेवाले अफसर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न होते तो मोहन के विचार तथा इच्छा-शक्ति रूपी ड्राइवरगण कदापि सफल न होते। ये अफसर मोहन के घर की सब से ऊँची मंजिल में और विशेषतः उसकी पृष्ठ-मज्जा में निवास करते हैं और इन्हें लोग तन्तु-कोष्ठकों के नाम से पुकारते हैं। ये तन्तु-कोष्ठक अनगिनत समूहों में विभाजित हैं और हर एक समूह विशेष विशेष कार्य्य करनेवाले स्नायुओं के अलग अलग समूह पर अधिकार रखता है। यदि ये अफसर न रहते तो मोहन को केवल पैर उठाने के लिये झुकानेवाले स्नायु-कोष्ठकों के स्थान, रूप तथा तन्तु-भाण्डार इत्यादि का ज्ञान प्राप्त करना पड़ता और फिर हर एक के पास जाकर उससे काम लेना पड़ता; परन्तु ऐसा नहीं होता है। मोहन केवल इच्छा करता है और उसके इच्छानुसार काम होने लगता है। इसका कारण यह है कि तन्तु-कोष्ठक रूपी शिक्षित अफसरों की एक बड़ी सेना उसके इच्छा रूपी ड्राइवर की आज्ञा के पालन में बराबर तत्पर रहती है। और ये अफसर भी विचित्र ही हैं। लाखों वर्ष से, (जब से मोहन के पूर्वजों ने उसके घर की नीव डाली तभी से) इन्हें जितनी शिक्षाएं मिली हैं ये सब उनका संग्रह करते रहते हैं और उन्हीं के अनुसार कार्य्य करते आते हैं। कुतुब मीनार का निर्म्माण एक दिन में नहीं हुआ। और जिन विद्वानों को मोहन के घर का विशेष ज्ञान है वे इस पर और भी विस्मित हैं कि हजारों वर्षों में भी इतना रहस्यमय मकान कैसे तैयार हो सका। *

*चिल्ड्रेन्स मेगजीन के "जैक्स मोटरकार" नामक एक लेख की सहायता से लिखित।

कोलम्बस की जल-यात्रा।

[लेखक,—श्रीयुक्त पं० हरिशंकरप्रसाद उपाध्याय।]

जितने मनुष्य युरोप के लिये संसार के पथप्रदर्शक हुए हैं उनमें से क्रिसटोफर कोलम्बस सब से प्रधान है। सच पूछिए तो वह कोलम्बस ही था जिसके दृढ़ निश्चय और अध्यवसाय के कारण पश्चिम सागर से होकर सुदूर पूर्व का समुद्रीय मार्ग लोगों को मालूम हुआ और उनके भौगोलिक ज्ञान तथा विकाश में विलक्षण परिवर्त्तन हो गया। उसके अध्यवसाय, धैर्य्य और उद्योग की कथा अत्यन्त रोचक और शिक्षाप्रद है।

क्रिसटोफर कोलम्बस का जन्म-स्थान जनेवा था जहाँ वह १४३६ ई० में पैदा हुआ था। बाल्यावस्था से ही वह मल्लाही के काम में बहुत निपुण था। १४७० ई० में एक बार वह पुर्त्तगाल गया था। वहाँ वह हेनरी नामक एक नाविक की प्रशंसा सुनकर बहुत प्रसन्न और मुग्ध हुआ था। वहीं उसने एक मल्लाह की लड़की से शादी की। उस समय वह अपने परिवार का पालन पोषण मानचित्र बनाकर करता था। यह कार्य्य उसने उन नाविकों से सीखा था जो अफ्रीका के कई युद्धों में सम्मिलित हो चुके थे। इससे और नवीन भौगोलिक विद्या के पठन पाठन से उसने अपना ज्ञान बहुत बढ़ा लिया था। उसकी मित्रता एक डाकूर से हो गई थी जो नाविक के कार्य्य में अधिक निपुण था। इस कारण उसे और भी लाभ पहुँचा। उसने पहलेपहल १४७४ ई० में पश्चिमीय सागर द्वारा भारत-यात्रा करने का विचार किया। उसने अपने विचार जब अपने मित्र डाकूर पर प्रकट किए तब उसने उसे और भी उत्साह दिलाया। लगातार अनेक वर्षों तक उसके सम्बन्ध में पठन पाठन कर, अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचारों को ठीक पाकर वह संतुष्ट हुआ। उसके सम्बन्ध की सारी युक्तियाँ और बातें उसकी समझ में आ गईं। पर अनेक अन्य लोगों ने जिनपर उसने अपने विचार प्रकट किए थे, प्रायः यही कहा कि यह केवल आकाश में सीढ़ी लगाना है क्योंकि यह यात्रा असम्भव है। परन्तु इन बातों से वह हतोत्साह नहीं हुआ।

जनेवा की राजभक्त प्रजा होने के कारण उसने अपने विचारों को पहले वहीं के राज-दरबार में प्रकट किया पर उसके देशवासियों ने उसके उन विचारों और प्रस्तावों का आदर न किया।

इसके बाद उसने पुर्त्तगाल में जाकर अपने विचार प्रकट किए क्योंकि वह जानता था कि पुर्त्तगालवाले समुद्र द्वारा भारत का मार्ग खोजने की चिन्ता में लगे हैं, इससे वहाँ मेरी मनोकामना अवश्य सिद्ध होगी। राजा द्वितीय जान ने उसे अपनी सभा में बुलाया जहाँ उसने अपने विचार प्रकट किए। पुर्त्तगालवाले अफ्रीका के तट की ओर से भारतवर्ष पहुँचने की चेष्टा कर रहे थे पर कोलम्बस इसके प्रतिकूल युरोप और अफ्रीका को पीछे छोड़ कर पश्चिम की ओर से जाना चाहता था। वह इतना हठी और आग्रही था कि उसके उचित कथन से राजा भी सहमत मालूम पड़ने लगा। पर जब राजा ने अपने मंत्रियों से सम्मति माँगी तब उन लोगों ने उसके विपक्ष में कहा। राजा ने असंतुष्ट होकर विद्वानों की एक दूसरी सभा की जिसमें उसके विचारों पर तर्कवितर्क हुआ। मंत्रियों में से एक ने यह सम्मति दी कि उसे कुछ अंड बंड उत्तर दे देना चाहिए, इस बीच में उसके नकशे (Charts) ले लेने चाहिए और एक जहाज तैयार करा के गुप्त रीति से उसकी युक्ति की परीक्षा करनी चाहिए जिससे पता लग जायगा कि उसकी युक्ति में कहाँ तक सच्चाई है। तदनुसार जहाज तैयार करा के भेजा गया पर उस यात्रा में सफलता न हुई। कोलम्बस को जब यह बात मालूम हुई तब वह राजा की इस बेईमानी पर बहुत दुःखी और क्रुद्ध हुआ।

वह पुर्त्तगाल परित्याग कर एक दूसरे राजा दरबार में अपने विचार प्रकट करने के लिये चला जहाँ उसे पूर्ण विश्वास था कि उसका कार्य्य सिद्ध होगा।

अब कोलम्बस के अटल धैर्य्य और दृढ़ विश्वास की कथा आरम्भ होती है। लिसबन छोड़ने के उपरान्त उसने अपने भाई बारथोलोम्यू (Bartholomeus) को इङ्गलैण्ड के राजा हेनरी सातवें के समीप भेजा और वह स्वयं स्पेन गया। दोनों को विश्वास था कि किसी न किसी के द्वारा काम अवश्य सिद्ध होगा। कोलम्बस को अपने पूर्व अनुभव से विदित हो गया था कि लोगों को अपनी बात पर विश्वास दिलाना कठिन कार्य्य है। तो भी उसे पूर्ण आशा थी कि यदि स्पेन का राजा ध्यान न देगा तो राजा हेनरी अवश्य मेरी बात मान लेगा।

बारथोलोम्यू को इङ्गलैण्ड के रास्ते में ही समुद्री डाकू मिल गए, इस कारण उसे इङ्गलैण्ड पहुँचने में बहुत विलम्ब हो गया। यही कारण था कि वह इण्डीज पर पहलेपहल अधिकार करने से इङ्गलैण्ड वंचित रह गया। क्योंकि जब बारथोलोम्यू ने हेनरी की सेवा में कोलम्बस के विचार प्रकट किए तो हेनरी उनसे पूर्ण रूप से सहमत हो गया। तब बारथोलोम्यू स्पेन में कोलम्बस से मिलने के लिये आया। पर कोलम्बस अपने भाई के आने के पहले ही अपनी भयंकर और विशाल यात्रा में प्रवृत्त हो चुका था। बहुत विलम्ब होने के उपरान्त कोलम्बस कारडोवा (Cordova) में रानी इसाबेला की सभा में बुलाया गया। वह वहाँ ऐसे कुसमय में पहुँचा जब कि रानी उसकी बातों पर ध्यान न दे सकती थी। क्योंकि उस समय स्पेनवाले मूर लोगों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ युद्ध में प्रवृत्त थे। युद्ध को छोड़कर उस समय राज्य किसी नए प्रपंच में पड़ने के लिये तैयार न था।

अनेक वर्षों तक कोलम्बस अपना उद्देश्य पूरा करने की आशा में इधर उधर भटकता फिरा। उसने एक बार अपने विचार विद्वानों की एक मण्डली के सम्मुख प्रकट किए और उन पर अधिक जोर डाला कि मेरे विचार रानी इसाबेला और राजा फरडिनैण्ड की सेवा में उपस्थित किए जायँ।

पहले तो लोगों ने प्रायः उसकी हंसी ही उड़ाई थी, पर पीछे कुछ लोग शान्त होकर उसकी बातें सुनने लगे। कई बर्ष के बाद कोलम्बस से यह कहा गया कि यह समय तुम्हारे कार्य्य के लिये उपयुक्त नहीं है।

कोलम्बस इस तरह से बार बार निराश होने के कारण बहुत उदास हो गया। उसने अपने मन में विचार किया कि इस बार किसी ऐसे दरबार में अपना प्रस्ताव उपस्थित करना चाहिए जहाँ निश्चय ही कार्य्य सिद्ध हो। इस बार उसने अपना प्रस्ताव फ्रांस के दरबार में उपस्थित करना चाहा वह फ्रांस की ओर चला। वह रास्ता ही में था कि स्पेन के राजा ने उसके प्रस्ताव पर पुनर्विचार करने के लिये उसे बुला लिया। परन्तु उस समय वह प्रतिज्ञा कर चुका था कि मैं उसी की ओर से यात्रा करने निकलूँगा जो मेरी यात्रा से होनेवाले लाभ का दसवाँ भाग मुझे देना और जिन जिन मुल्कों का मैं पता लगाऊँगा, उन उन मुल्कों का मुझे एडमिरल (Admiral) और वाइसराय (Viceroy) बनावेगा।

उसकी इन प्रतिज्ञाओं के कारण लोग उसकी हँसी उड़ाने लगे पर उसने लोगों के उपहास की ओर ध्यान न दिया। वह अपनी प्रतिज्ञाओं पर दृढ़ रहा। साथ ही उसने यह भी कहा था कि मैं अपनी यात्रा के खर्च का आठवाँ अंश स्वयं अपने पास से दे लूँगा।

वह अपने निश्चय और विश्वास पर कैसा दृढ़ था इसका अनुमान केवल इसी से हो सकता है कि वह बराबर अट्ठारह वर्ष तक इधर उधर भटकता फिरा। पर कहीं उसकी बात न सुनी गई। तो भी उसने अपनी शर्तों में कोई कमी नहीं की। इस तरह से अपने विचार पर अटल रहना उसकी श्रेष्ठता प्रकट करता है। कोलम्बस ने सन् १४९२ ई० में एक बार फिर फ्रांस की यात्रा की। इस बार अनेक मित्रों के प्रार्थना करने पर रानी इसाबेला ने उसको सहायता करने का वचन दिया था। जब वह राजप्रासाद में पहुँचा तब उसकी यात्रा का उचित प्रबन्ध करने में कुछ भी विलम्ब न किया गया। उसकी शर्तें स्वीकार हुईं और निश्चय हुआ कि कोलम्बस जिन मुल्कों को ढूँढ निकालेगा उनका वह एडमिरल और वाइसराय नियुक्त किया जायगा। यह भी निश्चय हुआ कि वहाँ मिलनेवाले मोती, हीरे, पन्ने, सोने, चांदी आदि का दसवाँ हिस्सा भी उसे दिया जायगा। और जो लाभ होगा उसमें से भी आठवाँ हिस्सा उसे प्रदान किया जायगा। १७ अप्रैल १४९२ ई० को यह बातें पूर्ण रूप से निश्चित हुई थीं।

प्रस्थान करने का स्थान स्पेन तट का पालोस नामक बन्दरगाह निश्चित किया गया। दूसरा विघ्न फिर उपस्थित हुआ। पालोस में कोई मनुष्य ऐसा नहीं था जो उस भयङ्कर यात्रा में कोलम्बस का साथ देता। अंत में बहुत लालच देकर और बड़ी बड़ी कठिनाइयों से कुछ लोग उसके साथ जाने के लिये तैयार किए गए; किसी प्रकार यह अड़चन भी दूर हुई। इस यात्रा के लिये तीन जहाज नियुक्त किए गए। तीनों में से सबसे बड़ा जहाज सैन्टा-मेरिया (Santa Maria) कोलम्बस के अधिकार में था। दूसरे जहाज पिन्टा (Pinta) पर मारटिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अलोनजों (Martin Alonzo) और उसका दूसरा भाई फ्रान्सिस्को (Francisco) था। तीसरा जहाज निना (Nina) कोलम्बस के दूसरे भाई के अधिकार में था। जहाजों पर मल्लाहों के अतिरिक्त कई राजकीय अफसर भी थे जो राज्य की ओर से उस यात्रा में साथ जाने के लिये नियुक्त हुए थे।

कोलम्बस ३ अगस्त १४९२ ई० को गिरजाघर से आशीर्वाद ग्रहण कर पालोस (Palos) से रवाना हुआ। उसके तीनों जहाज जो देखने में बहुत छोटे थे, अज्ञात सागर में चल रहे थे। उन पर केवल ९० मनुष्य थे और बारह महीने की रसद और सामग्री उन पर रखी हुई थी।

शीघ्र ही उन पर विपत्ति आ पड़ी। एक सप्ताह के भीतर ही उनके जहाज समुद्र के अयोग्य हो गए इसलिये जहाजों की मरम्मत के हेतु उन्हें केनेरीज (Canaries) में हठात् ठहरना पड़ा।

तीन सप्ताह तक लोग मरम्मत में लगे रहे। कोलम्बस प्रायः उनके इस विलम्ब करने पर बिगड़ा करता था। लोगों को उसके आज्ञानुसार काम करना पड़ता था। जिस दिन लोगों ने अपनी जन्मभूमि छोड़ी थी उसी दिन से वे अपने भाग्य को कोसा करते थे।

निदान मरम्मत का कार्य्य समाप्त हो गया। कोलम्बस ने फिर अज्ञात सागर में प्रवेश किया। जब से उसने केनेरीज छोड़ा तब से वह अपनी यात्रा की प्रत्येक घटना लिखता जाता था क्योंकि उसे भय था कि कहीं मल्लाह बिगड़ न जायँ। ज्यों ज्यों जहाज आगे बढ़ते जाते थे त्यों त्यों उन सीधे सादे मल्लाहों के हृदय में अधिक भय उत्पन्न होता जाता था। कोलम्बस उन लोगों को सदा स्मरण कराया करता था कि जिस कार्य्य में तुम लोग सम्मिलित हो इससे तुम लोगों की कीर्ति अमर हो जायगी; यदि तुम लोग एशिया के तट पर पहुँच जाओगे तो तुम लोगों को सोना, चाँदी और जवाहिरात पारितोषिक स्वरूप मिलेंगे।

कोलम्बस ने दो लेखे बनाए थे। एक गुप्त और ठीक था और दूसरा मल्लाहों के लिये और अशुद्ध था। कोलम्बस जानता था कि जब वे जानेंगे कि वे युरोप से अधिक दूर हैं तब वे अधिक भयभीत होंगे। इसलिये वह उन्हें धोखा देता और कहता था कि अभी हम लोग युरोप के अधिक समीप हैं।

एक दिन जब वे लोग केनेरीज के पश्चिम करीब ३०० कोस के फासले पर थे तब उन्हें राह में किसी जहाज का मस्तूल दिखाई पड़ा। उसे देख मल्लाह भयभीत हुए और उसे असगुन समझने लगे। तीसरे दिन कुतुबनुमा की सुई जो उत्तर दिशा की ओर रहती थी पश्चिम की ओर फिर कर रुक गई। इस भेद को कोलम्बस ने अपनी शक्ति भर गुप्त रखा पर लोगों को शीघ्र ही यह बात मालूम हो गई। कोलम्बस ने अपनी चालाकी से मल्लाहों का भय दूर करना चाहा। परन्तु यह एक स्वाभाविक बात है कि जब लोग अपने रक्षक को असमर्थ होते देखते हैं तब स्वयं भी हतोत्साह हो जाते हैं। मल्लाहों ने प्रत्येक वस्तु को अपरिचित देखा तो समझा कि यह सब विपत्ति आने के चिह्न है।

मल्लाहों ने चौदह सितंबर को सुई का अद्भुत परिवर्त्तन जाना। उसी समय उन्हें भूमि निकट होने के प्रमाण भी मिले। उन्हें दो पक्षी जहाज के समीप उड़ते दिखलाई दिए; तब उन लोगों ने समझा कि अब स्थल दूर नहीं है। एक तरह का नरकट भी बहता हुआ मिला जो चट्टानों और नदियों के तट पर होता है। इन सब प्रमाणों से निश्चित हुआ कि अब भूमि अधिक दूर नहीं है।

लगातार चार दिन तक शान्त रूप से वायु बहती रही। प्रत्येक जहाजवाले दूसरे जहाज से आगे बढ़ने की कोशिश में लगे थे। मल्लाहों को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्साह अधिक बढ़ा हुआ था क्योंकि उन्हें विश्वास था कि भूमि पास ही है। प्रत्येक मल्लाह सोचता था कि मैं सबसे पहले स्थल पर उतर कर राज्य से पेन्शन पाने का अधिकारी बनूँगा।

कई दिन तक यात्रा होती रही। जिन चीजों को उन लोगों ने बहुत प्रसन्नता से भूमि होने का चिह्न समझा था अब उनमें से कुछ भी दिखलाई न पड़ती थीं। अन्त में एक रोज जहाज सेवार में फँस गया। वह सेवार इतनी घनी थी कि जहाज का आगे बढ़ना कठिन हो गया। हवा भी बिलकुल बन्द हो गई थी। मल्लाह अब पहले से भी अधिक बेचैन हो गए। सब सोचने लगे कि इस अज्ञात सागर में हम लोग मरने के लिये भेजे गए हैं। वे सब कोलम्बस के हठ पर मन ही मन कुड़बुड़ाने लगे। उनमें से कुछ तो यहाँ तक बिगड़े कि उसे समुद्र में फेंक कर स्वदेश लौट चलने के लिये तैयार हो गए। कोलम्बस ने बहुत ही मुस्तैदी से सब को रोका और जहाजों को पीछे न लौटा कर आगे ले चलना चाहा। ईश्वर की कृपा से ११ अक्तूबर को फिर भूमि निकट होने के नए चिह्न दृष्टिगोचर होने लगे। इस बार ऐसे स्वाभाविक चिह्न दिखलाई दिए कि किसी को कुछ भी सन्देह न रह गया।

नदियों में होनेवाले घासपात के अतिरिक्त उन लोगों ने एक किस्म की हरी मछली देखी जो चट्टानों के पास रहा करती है। फिर बहुत सी झाड़ियाँ और डालियाँ दिखलाई दीं जो ताजी टूटी हुई मालूम पड़ती थीं। अब सब की बेचैनी दूर हो गई, उनमें उत्साह भर गया और वे सब कोलम्बस का आज्ञा-पालन करते हुए भूमि देखने की आशा करने लगे।

रात हो जाने पर कोलम्बस ने यह विचारा कि कहीं ऐसा न हो कि अंधेरे में जहाज और आगे बढ़ जायँ और जो भूमि निकट मालूम होती है वह भी दूर पड़ जाय। इसलिये उसने आज्ञा दी कि प्रातः-काल तक जहाज रोक दिए जायँ।

उस रात्रि को कोई न सोया, सब लोग जागते रहे। अन्त में उनके संतोष का फल मिला। एक बजे रात को कोलम्बस को जहाज से कुछ दूर फासले पर जलती हुई रोशनी दिखलाई देने लगी। सन्देह दूर करने के लिये उसने अपने साथियों में से एक को वह रोशनी दिखलाई। उसके बाकी साथियों ने समझा कि यह भी उसका केवल भ्रम ही है। पर कोलम्बस ने निश्चय कर लिया था कि वास्तव में यह रोशनी ही है। प्रातःकाल दो बजे एक मल्लाह ने स्थल देखा। वह जोर से चिल्ला उठा कि भूमि मिल गई। अन्त में जब सूर्य्य नारायण उदित हुए तब सब मल्लाहों ने देखा कि कुछ दूर पर पेड़ों से भरा हुआ एक टापू है। उस नए स्थल को देख कर उन लोगों को जैसी प्रसन्नता हुई उसका वर्णन नहीं हो सकता।

उस समय कोलम्बस को जितना आनन्द हुआ होगा, उसका अनुमान पाठक स्वयं कर लें। उसने अपने विचारों की सत्यता प्रमाणित कर दी थी और सब कठिनाइयों पर विजय प्राप्त कर के अनेक वर्षों के परिश्रम और संतोष का फल पाया था।

इस नई भूमि के दर्शन ने कोलम्बस की सब चिन्ताएँ दूर कर दीं। असन्तुष्ट मल्लाहों ने उससे क्षमा-प्रार्थना की। उसने भी प्रसन्नतापूर्वक उन सबको क्षमा किया। सब लोगों ने मिल कर ईश्वर का गुणानुवाद किया और उसकी इस कृपा के लिये उसे धन्यवाद दिया।

(शेष आगे।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सप्तम हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन ।

पहला दिन ।

५, ६ और ७ नवंबर को जबलपुर में सप्तम हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की बैठक बाँकीपुर के साहित्याचार्य्य पं० रामावतार शर्म्मा एम० ए० के सभापतित्व में बड़ी धूमधाम से हो गई। लखनऊ के पंचम साहित्य-सम्मेलन में प्रतिनिधियों और दर्शकों की संख्या बहुत अधिक थी पर जबलपुर के सम्मेलन में प्रतिनिधियों और दर्शकों की संख्या उससे भी अधिक थी। तात्पर्य्य यह कि भीड़भाड़ के विचार से यह सम्मेलन पिछले सब सम्मेलनों से बढ़ चढ़ कर हुआ। मध्य प्रदेशवालों में हिन्दी के लिये जितना उत्साह देखने में आया उतने की किसी को आशा नहीं थी। लोगों के आतिथ्य-सत्कार और ठहरने आदि का प्रबन्ध भी बहुत उत्तम था। सम्मेलन के लिये खर्च भी बहुत किया गया और परिश्रम भी। तथापि सम्मेलन फीका ही रहा, विचारवान् साहित्य-सेवियों का उससे सन्तोष नहीं हुआ। बहुत से साहित्य-सेवी इकट्ठे अवश्य हो गए और उन्हीं का सम्मेलन भी हुआ। पर वास्तव में सम्मेलम के विशेष उद्देश्य की पूर्त्ति नहीं हुई। कोई अच्छी वक्तृता नहीं हुई, कोई काम की बात सुनने में नहीं आई, लोग कोई नए विचार लेकर नहीं लौटे। साहित्य-सम्मेलन में कोई ऐसा काम नहीं हुआ जिससे यह समझा जा सके कि इससे साहित्य का कोई लाभ, उपकार या उन्नति हुई हो। इस दोष का आरोप किसी न किसी अंश में पिछले प्रायः सभी सम्मेलनों पर हो सकता है और इसके लिये स्वयं सम्मेलन और उसके कार्य्यकर्त्ता उत्तरदायी हैं। जिस मार्ग पर सम्मेलन इस समय चल रहा है वह उसका महत्त्व शीघ्र ही घटा देगा और तब सम्मेलन में इतनी कोरी धूमधाम भी देखने में न आवेगी। केवल आवेश या उत्साह दिखलाने और हर साल साहित्य-सेवियों के दर्शन कर लेने से काम नहीं चल सकता। सम्मेलन को वास्तव में साहित्य-सम्मेलन का रूप देना चाहिए मेले का नहीं। हर्ष का विषय है कि कुछ लोगों को यह दोष खटकने लगा है और इसके लिये आन्दोलन भी आरम्भ हो गया है। अब सम्मेलन का रुख बहुत जल्दी पलटना चाहिए। यदि सम्भव हुआ तो इस सम्बन्ध में किसी आगामी अंक में और कुछ लिखा जायगा। अस्तु।

सम्मेलन से एक दिन पहले शनिवार ४ तारीख की सन्ध्या को सात बजे बम्बई मेल से सभापति पं० रामावतारजी जबलपुर पहुँचे। उसी गाड़ी से षष्ठ सम्मेलन के सभापति श्रीयुक्त बा० श्यामसुन्दर दास बी० ए० भी थे। कलकत्ते, बाँकीपुर, काशी, प्रयाग आदि के कोई ७०—८० प्रतिनिधि भी उस गाड़ी से आए थे। सारी गाड़ी प्रायः सम्मेलन आनेवालों से ही भरी हुई थी। मार्ग में मिरजापुर, मानिकपुर आदि कई स्टेशनों पर सभापति का बहुत अच्छा स्वागत हुआ था। जबलपुर स्टेशन के बाहर एक छोटा शामियाना खड़ा किया गया था जहाँ सभापति महाशय की अभ्यर्थना हुई। इसके बाद गाड़ियों पर जुलूस निकला जो प्रायः आध मील लंबा था। मुहर्रम के कारण बाजे न बज सके थे।

रविवार ५ तारीख को गोलबाजार के विस्तृत मैदान में बहुत सुन्दर और सजे हुए विशाल मण्डप के नीचे प्रायः १०॥ बजे सम्मेलन का कार्य्य आरम्भ हुआ। इस सम्मेलन में दर्शकों के टिकट भी दाम लेकर दिए जाते थे। तो भी सारा मण्डप प्रतिनिधियों और दर्शकों से खचाखच भर गया था। मंच पर बहुत से प्रतिष्ठित साहित्य-सेवी, स्वागतकारिणी के अच्छे अच्छे सदस्य जिनमें महाराष्ट्र, ईसाई, मुसलमान और पारसीस भी थे, बैठे हुए थे। साहित्य-सेवियों में से कुछ के नाम यहाँ दिए जाते हैं—बाबू श्यामसुन्दरदास, पं० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेदी, पं० गणेशविहारी मिश्र, पं० माधवराव सप्रे, पं० गङ्गाप्रसाद अग्निहोत्री, बाबू शिवप्रसाद गुप्त, बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन, पं० प्यारेलाल बारिस्टर, श्रीयुक्त कालूराम गंगराडे, श्रीयुक्त मूलचन्द टंडन, रायबहादुर लालविहारीलाल, श्रीयुक्त रविशङ्कर शुक्ल, पं० रामचन्द्र शुक्ल, 'अभ्युदय के' पं० वेङ्कटेश-नारायण तिवारी, प्रो० बद्रीनाथ वर्मा, राय साहब रामरणविजयसिंह, श्रीयुक्त, जगन्नाथ पांडेय, पाटलि-पुत्र के पं० रामानन्द द्विवेदी, श्रीयुक्त नवाब बहा-दुर, पं० रामनारायण मिश्र। सभापति के सभा में आते ही उपस्थित जनमण्डली ने करतल ध्वनिपूर्वक उनका स्वागत किया। पं० लक्ष्मीप्रसाद शर्मा के मङ्गलाचरण करने पर महाराष्ट्रीय महिलाओं ने एक स्वागत गीत गाया।

तदनन्तर माननीय रायबहादुर पं० विष्णुदत्त शुक्ल ने स्वागतकारिणी समिति के अध्यक्ष दीवान बहादुर वल्लभदासजी की—जो पुत्र-वियोग के कारण उपस्थित न हो सके थे— वक्तृता पढ़ सुनाई।

अन्त में आपने पं० रामावतारजी से सभापति का आसन ग्रहण करने का निवेदन किया। आपने यह प्रस्ताव करते हुए पांडेयजी के अङ्गरेजी और संस्कृत के पाण्डित्य और हिन्दी-सेवा का वर्णन किया। इसका अनु-मोदन बाबू श्यामसुन्दरदासजी ने किया। आपने कहा कि मुझे पांडेयजी से संस्कृत पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मैं उनका कृतज्ञ हूँ। इस प्रस्ताव के अनु-मोदन रूप में मुझे अपनी कृतज्ञता प्रकट करने का अवसर मिला है। आगे चल कर आपने कहा कि पांडेयजी संस्कृत के विद्वान् होने पर भी हिन्दी से घृणा नहीं करते, बल्कि उसकी सेवा करना अपना कर्तव्य समझते हैं। संस्कृत के पंडितों में केवल स्वर्गवासी म० म० पं० सुधाकर द्विवेदी और पांडेय जी ने ही हिन्दी को अपनाया है। आशा है, पंडितजी के उदाहरण से संस्कृताभिमानियों का ध्यान हिन्दी की ओर आकर्षित होगा। इसका समर्थन पं० जग-न्नाथप्रसाद चतुर्वेदी ने किया। आपने कहा कि जबलपुर में ई० आई० आर, जी० आई० पी०, और बी० एन० आर० का जैसे जङ्क्शन है, वैसे ही पांडेय जी अङ्गरेजी, संस्कृत और हिन्दी के जङ्क्शन हैं। बी० एन० लाइन छोटी है, इससे कोई यह न समझे कि हिन्दी की ओर आपका ध्यान कम है। गङ्गा और यमुना के साथ सरस्वती गुप्त है, पर उसकी महिमा अधिक है। आप संस्कृत के पूर्ण पण्डित होकर हिन्दी को 'भाखा' समझ उससे घृणा नहीं करते। अङ्गरेजी के विद्वान् होकर भी उसे "स्टूपिड" नहीं समझते बल्कि उसकी सेवा करते हैं। जैसे रामा-वतार के समय मर्यादा का स्थापन हुआ था वैसे ही आज यहाँ भी रामावतार हुआ है। हिन्दी की भी मर्यादा स्थापित हो जायगी। और जैसे रामावतार के समय लङ्का पर विजय प्राप्त हुई थी वैसे ही उर्दू-रूपी लङ्का पर ही हिन्दी की विजय होगी। उर्दू से मेरा विरोध नहीं, मैं हिन्दी उर्दू को एक ही दृष्टि से देखता हूँ, पर कसर इतनी ही है कि वह उलटी चाल चलती है, अगर वह अपनी उलटी चाल छोड़ कर सीधी चाल पकड़े तो हिन्दी उर्दू एक ही है। करतलध्वनि के साथ पांडेयजी ने सभापति का आसन ग्रहण किया।

अनन्तर स्थानीय कई जैन बालकों ने मधुर गीत गाया।

तत्पश्चात् सभापति महोदय उठे। आपने कहा कि मैं कोई वक्ता नहीं हूँ। न मेरी भाषा पं० बद्रीनारायण चौधरी के समान रसप्रवाहिनी है और न मुझमें मेरे मित्र बाबू श्यामसुन्दरदासजी की वक्तृत्व शक्ति है। यह कह कर आपने अपना भाषण पढ़ सुनाया।

सभापति का भाषण हो चुकने पर पं० जगन्नाथ-प्रसाद चतुर्वेदी ने "हमारी शिक्षा किस भाषा में हो" शीर्षक एक रोचक निबन्ध पढ़ा। आप ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बताया कि हमारा सारा जीवन अङ्गरेजी जैसी दुरूह भाषा के अध्ययनमें ही नष्ट हो जाता है। यदि हम अङ्गरेजी दूसरी भाषा के समान पढ़ें तो हमारे ज्ञान की कहीं अधिक वृद्धि हो सकती है। हमें अङ्गरेजी के परिशीलन की आवश्यकता नहीं है, उसके साहित्य की बारीकियां ढूंढ़ना हमारे लिये आवश्यक नहीं है, हमें तो केवल भाषा सीखनी चाहिए—उसके दर्शन, विज्ञान और कला कौशल का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। जापानियों ने इसी प्रकार अपनी उन्नति की! उन्होंने विदेशी भाषाओं के मनन में माथापच्ची नहीं की, उन्होंने केवल भाषा सीखकर उसके ज्ञान विज्ञान को अपनाया। यदि जापानियों की तरह हम भी अङ्गरेजी भाषा मात्र सीखकर उसके ज्ञान विज्ञान को अपनावें, उसका हिन्दी में उलथा कर प्रचार करें तो हमारी उन्नति का मार्ग सुगम हो जाय। लेखक ने भारतीय विश्वविद्यालयों की शिक्षा-पद्धति की त्रुटि दिखाते हुए हिन्दू विश्वविद्यालय के भी उसी पथ के पथिक होने पर खेद प्रकट किया।

इसके उपरान्त सभापति महोदय उठे। चतुर्वेदाजी अँगरेजी के दोष दिखलाते हुए जिस चरम-सीमा तक चले गए थे, सभापति महोदय ने उसके विरुद्ध की चरमसीमा की ओर बढ़ना आरम्भ किया। आपने अँगरेजी की अत्यधिक प्रशंसा करते हुए कहा कि लोगों को अँगरेजी भाषा का अनुशीलन अच्छी तरह करने की बड़ी आवश्यकता है, चाहे उससे उसका स्वास्थ्य ही क्यों न बिगड़ जाय। अँगरेजी साहित्य में रत्न भरे पड़े हैं, उन रत्नों को खूब पहचानने और उन्हें अपनी भाषा में लाने के लिये उसका सम्यक् अध्ययन नितान्त आवश्यक है। इसके बाद उस दिन का अधिवेशन समाप्त हुआ। संध्या के ४॥ बजे से रात के १० बजे तक विषयनिर्वाचनी-समिति की बैठक हुई।

दूसरा दिन।

दूसरे दिन सोमवार को १२ बजे से कार्य्य आरम्भ हुआ। उस दिन भी भीड़ भाड़ खूब थी। इसके अतिरिक्त बहुत से नए प्रतिनिधि भी आए थे, जिनमें से काशी के बाबू गौरीशङ्करप्रसाद, लखीमपुर के पं० सूर्यनारायण दीक्षित, पं० मुरलीधर मिश्र, मिथिलामिहिर के सम्पादक पं० योगानन्द कुँवर, सिन्ध—हैदराबाद के "भाटियामित्र" के सम्पादक श्रीयुक्त नरसिंहदास सिन्धी वकील विशेष उल्लेख योग्य हैं। पहले क्रम से महाराष्ट्रीय महिलाओं, पं० सुखराम चौबे के छात्रों, प्रयाग के पं० माधव शुक्ल तथा खण्डवा बाल समाज के बालकों के गान हुए। अनन्तर सभापति महोदय ने राजभक्तिसूचक प्रस्ताव उपस्थित किया जो इस प्रकार था:—

(१) वर्त्तमान् महायुद्ध में ब्रिटिश सरकार के इस सम्मेलन की पूर्ण सहानुभूति है और यह ईश्वर से प्रार्थना और आशा करता है कि हमारे सम्राट की शीघ्र ही विजय हो।

सभापति ने यह प्रस्ताव उपस्थित करते हुए बताया कि अँगरेजी राज्य से भारत को क्या लाभ पहुँचा। निम्नलिखित दो प्रस्ताव भी सभापति महाशय ने ही उपस्थित किए—

यह सम्मेलन स्वागतकारिणी समिति के सभापति दीवान बहादुर सेठ बल्लभदासजी के पुत्र सेठ मन्नूलालजी की असामयिक मृत्यु पर, तथा स्वागत-कारिणी समिति के प्रधान मंत्री पं० रघुवरप्रसाद द्विवेदी रा० सा० जी की माता जी मृत्यु पर श्रीमान् सेठ बल्लभदास तथा द्विवेदीजी के साथ समवेदना प्रकट करता है।

(ख) यह सम्मेलन उदयपुर के जोधसिंह मेहताजी, वृन्दावन के गौरचरण गोस्वामीजी, बीमानगर के राजा त्रिभुवनदेव सच्चिदानन्दजी तथा बाबू रसिकलाल राय की शोकजनक मृत्यु पर अपना आन्तरिक दुःख प्रकट करता है और उनकी हिन्दी सेवा का स्मरण करता हुआ उनके सम्बन्धियों से अपनी समवेदना प्रकट करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) यह सम्मेलन भारतीय गवर्नमेण्ट से सानुरोध प्रार्थना करता है कि वह नोटों, सिक्कों तथा स्टाम्पों पर शीघ्र नागरी अक्षरों को स्थान दे।

चौथा प्रस्ताव यह था—

हिन्दू-विश्वविद्यालय के सञ्चालकों ने विश्वविद्यालय में शिक्षा का माध्यम हिन्दी रखाने में पूर्ण यत्न नहीं किया इससे यह सम्मेलन अपना असन्तोष प्रकट करता है, और उक्त सञ्चालकों से अनुरोध करता है कि उक्त विश्वविद्यालय में शिक्षा का माध्यम हिंदी कराने के लिये शीघ्र उचित यत्न करें। और जब तक ऐसा न हो तब तक वे उक्त विश्वविद्यालय में हिन्दी को एक अनिवार्य्य विषय की भाँति सब कक्षाओं में पढ़ाने का प्रबन्ध करें तथा अपने प्राच्य शिक्षाविभाग में शिक्षा का माध्यम हिन्दी को बनावें।

इस प्रस्ताव को बाबू श्यामसुन्दरदास ने बड़ी योग्यता से उपस्थित किया। आपने इस बात पर खेद प्रकट किया कि हिन्दू-विश्वविद्यालय के सञ्चालकों ने हिन्दी को शिक्षा का माध्यम बनाने का कोई प्रयत्न नहीं किया। आपने कहा कि सम्मेलन कई वर्षों से विश्वविद्यालय के अधिकारियों का ध्यान इस ओर आकर्षित कर रहा है, पर उन्होंने कोई ध्यान नहीं दिया। हम अँगरेजी शिक्षा को उठाना नहीं चाहते पर हम चाहते हैं कि उसमें व्यर्थ समय नष्ट न हो। अभी अक अँगरेजी सीखने ही में हमारा सारा जीवन नष्ट हो जाता है, अब वह समय आ गया है कि हमें देशी भाषाओं द्वारा शिक्षा दी जाय। मैकाले के समय में यदि हिन्दी शिक्षा को माध्यम बनाया जाता तो वह उद्देश्य सफल न होता। उस समय अँगरेजी शिक्षा के प्रचार करने की आवश्यकता थी। पर अब ज्ञान-सूर्य का उदय हुआ है। जापानियों ने जिस ढंग से विदेशी भाषाएँ सीख कर अपनी मातृभाषा को उन्नति के शिखर पर पहुँचाया उसी प्रकार हमें भी मातृभाषा का भक्त होना होगा। इसी से देश का अज्ञानान्धकार दूर होगा। इसका अनुमोदन काशी के बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने बड़ी ओजस्विनी वक्तृता में किया। आपने कहा कि प्रारम्भ में कहा गया था कि हिन्दू विश्वविद्यालय में शिक्षा का माध्यम हिन्दी होगी, पर अब वह बात नहीं रही। यहाँ तक कि बड़ी व्यवस्थापक सभा में बिल उपस्थित करते समय हिन्दी के माध्यम बनाए जाने की किसी ने चर्चा तक नहीं की। इसे देश का दुर्भाग्य समझना चाहिए। इङ्गलैण्ड में यदि कोई जर्मन वा फ्रेञ्च भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने की चर्चा करे तो उसे लोग क्या समझेंगे? यह हमारा दुर्भाग्य है कि हम लोगों को इस सभा में खड़े होकर हिन्दू-विश्वविद्यालय से हिन्दी के लिये प्रार्थना करनी पड़ती है। १५० वर्ष से भारत में अँगरेजी शिक्षा का प्रचार है, पर कितने विद्वान् निकले? उनकी संख्या नहीं के बराबर है। और ४० वर्षों में जापानियों ने कैसे इतनी उन्नति की? इसका कारण स्पष्ट है। मातृभाषा द्वारा शिक्षा दी जाने का ही यह फल है। और हमारी शोचनीय अवस्था का कारण मातृभाषा में शिक्षा का न दिया जाना ही है। हिन्दू-विश्वविद्यालय के सञ्चालकों ने हमें इस सम्बन्ध में आशा दी थी, पर वह आशा निराशा में परिणत होती दिखाई देती है। आप ने कहा कि सम्मेलन बराबर हिन्दू-विश्वविद्यालय के सञ्चालकों से अनुरोध करता आ रहा है, पर हमारे दुर्भाग्य से वे इधर ध्यान नहीं देते। आज तक उसके सभी कागजपत्र अँगरेजी में ही प्रकाशित होते देखे गए हैं—हाल में एक पत्र हिन्दी में छपा देखने में आया है। इससे जान पड़ता है कि उनका ध्यान हिन्दी की ओर नहीं है। उन्हें रास्ते पर लाना होगा। उन्हें उठते बैठते सोते जागते तङ्ग करने की आवश्यकता है। यह काम देशवासियों को करना होगा। उन्हें डंके की चोट सावधान करना होगा कि महाशयो, हमारी गाढ़ी कमाई का धन नष्ट मत करो—जो आशा दिला कर आपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमसे धन लिया है वह पूरी कीजिए। इस प्रकार देश के खड़े होने पर कार्यकर्त्ताओं को बाध्य होकर आपकी उचित प्रार्थना पर ध्यान देना ही होगा। यदि यह काम सम्मेलन न कर सका तो उसकी फिर आवश्यकता ही क्या है? आगे चलकर आपने विश्वविद्यालय के प्राच्य विद्याविभाग से भी हिन्दी के बहिष्कार की आशङ्का प्रकट करते हुए कहा कि बहुत सम्भव है कि इस विभाग में हिन्दी का स्थान संस्कृत को दिया जाय। यदि ऐसा होगा तो हिन्दू विश्वविद्यालय हिन्दी-शून्य ही होगा। यदि विश्वविद्यालय के सञ्चालक इधर ध्यान न दें तो सम्मेलन की परीक्षाएँ इतनी बढ़ाइए जिसमें वह हिन्दी विश्वविद्यालय का रूप धारण करे। इस सम्बन्ध में खूब आन्दोलन करने की आवश्यकता है। हमारी आशा पर पानी फिर रहा है। हमसे कुछ कह कर धन लिया गया और कुछ किया गया। कहा जाता है कि हिन्दी में पुस्तकें नहीं हैं। यह बहानामात्र है। अन्त में आप ने सर्वसाधारण से इस सम्बन्ध में घोर आन्दोलन करने को कहा। इसका समर्थन बांदे के कुँवर हरप्रसाद ने बड़ी ओजस्विनी भाषा में किया। दुर्ग के बाबू घनश्यामसिंह तथा हरदा के वकील बाबू चन्द्रगोपालसिंह के समर्थन करने पर उक्त प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ।

पाँचवां प्रस्ताव रायपुर के पं० माधवराव सप्रे ने उपस्थित किया जो इस प्रकार था—

(१७) यह सम्मेलन अपना दृढ़ विश्वास प्रकट करता है कि भारतवर्ष में शिक्षा-प्रचार और विद्या की उन्नति के लिये आवश्यक है कि शिक्षा का माध्यम देशी भाषा रखी जाय और गवर्नमेण्ट से प्रार्थना करता है कि वह इस आवश्यक सुधार की ओर बहुत शीघ्र ध्यान दे।

आपने कहा कि हमारी शिक्षा का उद्देश्य स्वाभिमान होना चाहिए। जिस शिक्षा से स्वाभिमानवृत्ति जागृत नहीं होती वह शिक्षा किसी काम की नहीं। हमें "स्व" की शिक्षा मिलनी चाहिए। अभीतक हमें स्वशून्य शिक्षा मिली है। जिसमें हमारे बालकों को प्रकृत शिक्षा मिले इसके लिये हमें प्रयत्न करना होगा। इसके लिये हमें संघशक्ति उत्पन्न करनी होगी वही सरकार से प्रार्थना करेगी। हमारी शिक्षा किसी दूसरी भाषा में होना कृत्रिम है—अस्वाभाविक है। यह हमारा दुर्भाग्य है कि हमारी शिक्षा विदेशी भाषा में होती है। इससे हमारी मानसिक शक्ति नष्ट होती है—मौलिक बुद्धि उत्पन्न नहीं होने पाती। विदेशी भाषा में शिक्षा होने के कारण हमारी बुद्धि विदेशी हो गई है। इसी कारण हम अपने भाई बहनों के साथ विदेशियोंका सा बर्त्ताव करते हैं। इस भाव के दूर करने की आवश्यकता है। यह तभी दूर हो सकता है जब हमें मातृभाषा में शिक्षा मिले। इसी के लिये हमें प्रयत्न करना होगा। तभी हममें स्वाभिमान उत्पन्न होगा—तभी देश का कल्याण होगा।

इसका अनुमोदन काशी के प्रोफेसर श्रीप्रकाश एम० ए० बी० एल० ने किया। आपने कहा कि छात्रावस्था में मेरा मातृभाषा की ओर विशेष ध्यान नहीं था। अँगरेजी शिक्षा के कारण विचार आदि सभी अँगरेजी भाषा में ही उत्पन्न होते थे। जब मैं कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में पढ़ता था, तब एक दिन एक अध्यापक महाशय मेरे कमरे में आए। मेरा रोजनामचा मेज पर पड़ा हुआ था। उन्होंने उसे अँगरेजी में लिखा देख आश्चर्य के साथ पूछा कि क्या तुम्हारी कोई भाषा नहीं है जो तुम अँगरेजी में ही अपनी दैनिक चर्या लिखते हो। मैं लज्जित हो गया। उस दिन से मेरी आँखें खुलीं। जब तक मातृभाषा द्वारा हमें शिक्षा न मिलेगी तब तक हमारी उन्नति असम्भव है। विदेशी ज्ञान हमें मातृभाषा में ही मिलना चाहिए। विदेशी भाषाओं द्वारा ज्ञान प्राप्त करने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है—मातृभाषा से ज्ञानचक्षु शीघ्र ही खुल जाते हैं। इसका समर्थन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पं० सूर्यनारायण दीक्षित एम० ए० और कानपुर के पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी ने किया। अनन्तर सर्वसम्मति से प्रस्ताव गृहीत हुआ।

तदनन्तर साहित्य-सम्मेलन के सहकारी मन्त्री पं० रामकृष्ण सारस्वत ने गत वर्ष का कार्यविवरण और आय व्यय का लेखा सुनाया जो सम्मेलन के प्रधान मन्त्री श्रीयुक्त पुरुषोत्तमदास टण्डन के प्रस्ताव पर सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ। इसके पश्चात् सम्मेलन परीक्षा के संयोजक प्रो० ब्रजराज बहादुर ने परीक्षा-समिति की रिपोर्ट सुनाई और कहा कि यह सन्तोष का विषय है कि परीक्षाएं दिनों-दिन लोकप्रिय होती जा रही हैं। आपने आशा प्रकट की कि शीघ्र ही इन परीक्षाओं के केन्द्र बढ़ाने पड़ेंगे। इसके बाद विशारद-परीक्षोत्तीर्ण कई उपस्थित छात्रों को प्रमाणपत्र दिए गए और प्रथमा तथा मध्यमा के उत्तीर्ण छात्रों के नाम सुनाए गए।

छठा प्रस्ताव सिन्ध—हैदराबाद के श्रीयुक्त नरसिंहदास बी० ए० एल एल० बी० ने उपस्थित किया जो इस प्रकार है—

सम्मेलन को इस बात पर बड़ा खेद है कि यद्यपि बम्बई के विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में कई देशी भाषाएं रखी गई हैं, तथापि हिन्दी नहीं रखी गई। अतएव बम्बई विश्वविद्यलय से निवेदन है कि वहाँ हिन्दी को भी अवश्य स्थान मिले।

आपने हिन्दी में एक छोटी सी सुन्दर वक्तृता दी जिसमें बताया कि बम्बई विश्वविद्यालय के पाठ्य-क्रम में हिन्दी भाषा न रहने से हम सिन्धियों को दूसरी भाषाएँ लेनी पड़ती हैं। सिन्धी हिन्दी नहीं पढ़ सकते। इसके लिये सरकार ही दायी है। आगे चल कर वक्ता ने सिन्ध में नागरीप्रचारिणी सभाओं के खुलने तथा हिन्दी प्रचार का वर्णन किया। आपने कहा कि सिन्ध में हिन्दी का प्रचार उत्तरोत्तर बढ़ रहा है। जहाँ कहीं राजनीतिक, सामाजिक वा धार्मिक परिषदें होती हैं, वहाँ हिन्दी कान-फरेन्स भी होती है। इसी से आपको मालूम होगा कि सिन्धवासियों का अनुराग हिन्दी के प्रति बढ़ रहा है। पर विश्वविद्यालय के पाठ्य-क्रम में हिन्दी न रहने से सिन्धियों को कठिनाई का सामना करना पड़ता है।

इसका अनुमोदन द्रुग के मि० एफ० एफ० तारापुरवाला नामक पारसी सज्जन ने हिन्दी में किया। आपकी वक्तृता विनोदपूर्ण थी। आपने कहा कि बम्बई विश्वविद्यालय में जब मराठी, गुजराती, फारसी को स्थान मिला है, तब कोई कारण नहीं है कि हिन्दी को स्थान न दिया जाय। बम्बई प्रदेश में हिन्दी-भाषा-भाषियों की संख्या कम नहीं है। आशा है, सरकार इधर ध्यान देगी। इसका समर्थन मद्रास के श्रीयुक्त गोदावरी भारद्वाज ने अँगरेजी में किया। आपने कहा कि मद्रास विश्वविद्यालय के पाठ्य-क्रम में भी हिन्दी होनी चाहिए, क्योंकि उसमें जब मराठी को स्थान मिला है तब हिन्दी—संस्कृत की ज्येष्ठ पुत्री हिन्दी—को भी स्थान मिलना चाहिए। उधर हिन्दी को लोकप्रिय करने के लिये सम्मेलन को चेष्टा करनी होगी। आपने लोगों का ध्यान मैसोर विश्वविद्यालय की ओर भी आकर्षित किया, जहाँ उर्दू फारसी को स्थान मिला है, पर हिन्दी को नहीं।

बाबू श्यामसुन्दरदास ने इस प्रस्ताव में मद्रास और मैसोर विश्वविद्यालय जोड़ देने का प्रस्ताव किया। इस पर कुछ लोगों ने कहा कि कदाचित् मैसोर विश्वविद्यालय के पाठ्य-क्रम में हिन्दी रखी गई है। अन्त को निश्चित हुआ कि सम्मेलन के मन्त्री महोदय को यह अधिकार दिया जाय कि यदि उन्हें मालूम हो कि मैसोर-विश्वविद्यालय में हिन्दी को स्थान नहीं दिया गया तो वे उक्त प्रस्ताव में मैसोर विश्वविद्यालय के अधिकारियों को इस सम्बन्ध में लिखें। सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसके उपरान्त रायपुर कन्या पाठशाला की अध्यापिका श्रीमती गोदावरी जी की हिन्दी में छोटी सी वक्तृता हुई। आपने कहा कि मेरी मातृभाषा मराठी है, पर मेरा हिन्दी से बड़ा अनुराग है। मैंने हिन्दी में नार्मल परीक्षा पास की है। मेरी सम्मति में मध्यप्रदेश की मराठी पाठशालाओं में हिन्दी पढ़ाने की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। आपने इस बात पर दुःख प्रकट किया कि हिन्दी में स्त्रीपाठ्य ग्रन्थों का सर्वथा अभाव है। इधर सम्मेलन को ध्यान देना चाहिए। आगामी सम्मेलनों में महिलाओं को भी निमन्त्रण देना चाहिए। राष्ट्रभाषा बनाने के लिये हिन्दी में अच्छे अच्छे स्त्रीपाठ्य ग्रन्थों की बड़ी आवश्यकता है।

इसके बाद स्थानीय जैन बालकों का मनोहर गाना हुआ।

इसके अनन्तर बाबू श्यामसुन्दरदास ने पैसा-फण्ड के लिये अपील की। आपकी वक्तृता बड़ी भाव-पूर्ण और ओजस्विनी हुई थी। अपील पर प्रायः १५००) के वचन मिले जिसमें प्रायः ३००) उसी समय मिले।

पं० लोचनप्रसाद पांडेय की ओर से दो रौप्य पदक छत्तीसगढ़ जिले में हिन्दी पुस्तकों की खोज के लिये दो सज्जनों को दिए गए।

उस दिन ६ बजे सभा विसर्जित हुई। रात को ९ बजे से १२ बजे तक विषय-निर्वाचनी समिति बैठी।

तीसरा दिन।

तीसरे दिन मंगलवार को फिर १२ बजे से कार्य्य आरम्भ हुआ। बालकों का गीत हो चुकने पर ठाकुर शिवकुमार सिंह जी ने राजापुर की तुलसी स्मारक सभा की—जिसका अधिवेशन १६ नवम्बर को राजापुर में होनेवाला है—ओर से उपस्थित प्रतिनिधियों तथा दर्शकों को सभा में पधारने का निमन्त्रण दिया। अनन्तर स्वागतकारिणी समिति के अध्यक्ष दीवान बहादुर वल्लभदास की ओर से एक सज्जन ने उनके उपस्थित न होने का कारण बताते हुए प्रतिनिधियों का स्वागत किया और क्षमा प्रार्थना की। अनन्तर काशी के बाबू वेणीप्रसाद ने निम्न-लिखित प्रस्ताव उपस्थित किया:—

यह सम्मेलन इस बात पर अपना हार्दिक दुःख प्रकट करता है कि पंजाब और प्रयाग के विश्वविद्यालयों ने युनीवर्सिटी कमीशन के सम्मति दे और दोनों गवर्नमेण्टों के उस सिद्धान्त से सहमत होने पर भी अभी तक कालेज विभाग में देशी भाषाओं की उपयुक्त और पूर्ण शिक्षा के लिये उचित प्रबन्ध नहीं किया है। इस सम्मेलन की सम्मति है इन दोनों विश्वविद्यालयों को शीघ्र ही अन्य विषयों की भाँति देशी भाषाओं के साथ हिन्दी की पढ़ाई को भी उपयुक्त स्थान दे कर इस अभाव को दूर करना चाहिए।

कानपुर के पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी के प्रस्ताव, काशी के पं० भगीरथप्रसादजी दीक्षित के अनुमोदन तथा एक और सज्जन के समर्थन करने पर यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

आठवाँ प्रस्ताव इस प्रकार था:—

(२) इस सम्मेलन की राय में देश की उन्नति के लिये मातृभाषा द्वारा शिक्षा देनेवाली एक यूनिवर्सिटी (विश्वविद्यालय) की नितान्त आवश्यकता है, जिसमें उच्च प्रकार की विज्ञान तथा शिल्पसम्बन्धिनी शिक्षा का पूर्ण प्रबन्ध हो और इस उद्देश्य को पूरा करने के लिये हिन्दी के समस्त प्रेमियों से यह सम्मेलन अनुरोध करता है कि वे कम से कम एक छोटा वैज्ञानिक स्कूल अपने अपने नगरों में स्थापित कराने का प्रयत्न करें जिससे आगे चल कर इस विश्वविद्यालय की नींव सुदृढ़ हो जाय।

इसके प्रस्तावक काशी के प्रो० लक्ष्मीचन्द्र एम० ए०, अनुमोदक पं० नन्दलाल एम० ए० और समर्थक इंदौर के पं० सूर्य्यप्रसाद और सोहागपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के पं० काशीराम तिवारी थे। सर्व सम्मति से यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

निम्नलिखित दो प्रस्ताव सभापति ने उपस्थित किए—

यह सम्मेलन शिक्षित हिन्दुस्थानियों से निवेदन करता है कि वे अपने अपने नगरों में हिन्दी-नाटक-समितियाँ स्थापित करें। यह सम्मेलन व्यवसायी नाटक-कम्पनियों का ध्यान देश के प्रति उनके इस कर्त्तव्य की ओर आकर्षित करता है कि वे विचारवान् लोगों से हिन्दी में नाटक लिखवा कर दर्शकों को उच्च आदर्श समझावें और नाट्य-कला का उद्देश्य केवल धन कमाना ही न समझें।

यह सम्मेलन भारतवर्षीय हिन्दी-भाषा-भाषियों की धार्मिक, जातीय, राष्ट्रीय आदि जितनी संस्थाएं हों उनके सञ्चालकों से प्रार्थना करता है कि वे अपनी अपनी सभाओं का काम हिन्दी भाषा में करें और अपने सामयिक पत्र हिन्दी भाषा तथा नागरी अक्षरों में निकालें। यह सम्मेलन विशेष कर निम्न-लिखित संस्थाओं का ध्यान इस प्रस्ताव की ओर आकर्षित करता है—

(१) प्रान्तीय कानफरेंसें (२) भारतधर्म महामण्डल (३) हिन्दू विश्वविद्यालय (४) कायस्थ कान्फरेंस (५) खत्री कान्फरेंस (६) पञ्जाब आर्य्य समाज (७) भार्गव कान्फरेंस।

अनन्तर छिन्दवाड़े के पं० प्यारेलाल मिश्र बैरिस्टर ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया—

यह सम्मेलन मध्य प्रदेश और बिहार के भावी विश्वविद्यालयों के सञ्चालकों से सानुरोध आग्रह करता है कि कालेज विभाग के पाठ्य-क्रम में हिन्दी और दूसरी देशी भाषाओं को उचित स्थान दिया जाना चाहिए।

आपने कहा कि कालेजों में सूर, तुलसी, विहारी और भूषण के ग्रन्थ पढ़ाए जाने चाहिए—केवल अनुवाद ही पर बस न होना चाहिए।

इसका अनुमोदन करते हुए होशङ्गाबाद के पं० शालग्राम द्विवेदी एम० ए० एल एल० बी० ने कहा कि यह बहाना नहीं किया जा सकता कि हिन्दी में ग्रन्थ नहीं हैं। हिन्दी के प्राचीन साहित्य में उच्च कोटि के ग्रन्थ वर्तमान हैं जो एम० ए० तक में पढ़ाए जा सकते हैं।

इसका समर्थन बांकीपुर के प्रो० बदरीनाथ वर्म्मा काव्यतीर्थ एम० ए० ने किया। आपने कहा कि हम विहारियों को इस बात की आशङ्का नहीं है कि पटना-विश्वविद्यालय में हिन्दी को स्थान नहीं मिलेगा क्योंकि जब हम कलकत्ता-विश्वविद्यालय के अधीन थे तब भी हम हिन्दी ले सकते थे। अब आवश्यकता इस बात के आंदोलन की है कि पटना-विश्वविद्यालय में एम० ए० में हिन्दी हो। सुनते हैं, मराठी में एम० ए० परीक्षा की व्यवस्था की गई है। बङ्गाली भी इसके लिये उद्योग कर रहे हैं।

यह प्रस्ताव सर्व सम्मति से पास हुआ।

बारहवां प्रस्ताव रायपुर के पं० गणपतिलाल चौबे ने बड़ी योग्यता से उपस्थित किया जो इस प्रकार है—

यह देख कर कि शिक्षा-विभाग के पाठ्य-क्रम में कभी कभी हिन्दी की ऐसी पुस्तकें भी स्वीकृत की जाती हैं जिन की भाषा केवल भद्दी ही नहीं, किन्तु अशुद्ध भी रहती है, यह सम्मेलन पञ्जाब, संयुक्त प्रदेश, मध्यप्रदेश और बिहार के शिक्षा-विभागों के अधिकारियों से निवेदन करता है कि वे अपनी अपनी टेक्स्ट बुक कमेटियों के हिन्दी जाननेवाले सभासदों की संख्या में से कम से कम तृतीयांश सभासद उन उन प्रान्तों की प्रधान हिन्दी सभाओं के प्रतिनिधि लिया करें जिससे उक्त कमिटियों को उत्तम, उपयोगी और यथासम्भव निर्दोष पुस्तकें चुनने में सहायता मिले।

आपने कहा कि पञ्जाब की पाठ्य पुस्तकों में भाषा के गले पर छुरी फेरी जाती है। इसका यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण है कि पुस्तकें हिन्दी भाषा से अनभिज्ञ लोगों से लिखाई जाती हैं। आपकी सम्मति में प्रत्येक प्रधान नगर में एक एक साहित्य समिति की स्थापना होनी चाहिए जो पाठ्य पुस्तकों की जाँच कर उनकी त्रुटियाँ शिक्षा विभाग के अध्यक्ष पर प्रकट कर दिया करे; इस व्यवस्था से बहुत लाभ होने की सम्भावना है।

इसका अनुमोदन करते हुए लखीमपुर के पं० मुरलीधर मिश्र ने पञ्जाब की एक पाठ्य पुस्तक से एक कविता सुनाई जो बिलकुल भद्दी और अशुद्ध थी। आप ने कहा कि ऐसी पुस्तकों से हमारे बालकों को शुद्ध भाषा नहीं आती। आप ने युक्त प्रदेश की पाठ्य पुस्तकों की भाषा के सम्बन्ध में कहा कि वह न तो हिन्दी ही होती है और न उर्दू ही—एक खिचड़ी भाषा होती है। शिक्षाविभागवालों को चाहिए कि वे स्थानीय विद्वानों से पाठ्य पुस्तकों की भाषा के सम्बन्ध में परामर्श कर लिया करें।

इसका समर्थन पं० हरेकृष्ण शास्त्री ने किया। प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ।

खण्डवे के वकील श्रीयुक्त कालूराम गङ्गड़ाड़े ने तेरहवाँ प्रस्ताव किया—

यह देख कर कि मध्यप्रदेश की सरकार की ओर से सर्वसाधारण के लाभ के लिये जो सरक्यूलर, गजट और दूसरे कागज पत्र हिन्दी में प्रकाशित होते हैं, उनकी भाषा प्रायः भद्दी और अशुद्ध रहती है, अथवा अन्य भाषाओं के दुर्बोध शब्दों से भरी रहती है, यह सम्मेलन मध्यप्रदेश की सरकार से सानुरोध निवेदन करता है कि वह शुद्ध और सरल हिन्दी में उन्हें लिखवाने का प्रबन्ध करे और अपने अनुवाद-विभाग में योग्य हिन्दी-ज्ञाता अनुवादक रखे।

खण्डवे के वकील बाबू माणिक्यचन्द्र जैन के अनुमोदन तथा श्रीयुक्त नाथूराम वकील के समर्थन करने पर यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

चौदहवाँ प्रस्ताव इस प्रकार था—

इस सम्मेलन को इस बात पर खेद है भारतवर्षीय राजाओं के दरबार में राज्य के उत्क का वर्णन करने और प्राचीन लेखों को प्रका करने तथा राज्य का इतिहास आदि लिखने के हिन्दी के कवि और लेखक नियुक्त करने की प्रा प्रथा कम हो गई है। अतएव यह सम्मेलन स भारतवर्षीय राजाओं से प्रार्थना करता है कि वे कवि और राजलेखकों की संख्या स्थापित कर और अपनी मातृभाषा का गौरव बढ़ावें।

इसके प्रस्तावक भी श्रीयुक्त कालूरामजी ही इसका अनुमोदन नांदगाँव के बाबू अजियाल सकसेना ने किया और यह सर्वसम्मति से पास हु

पन्द्रहवाँ प्रस्ताव रायपुर के पण्डित रविश शुक्ल वकील ने किया जो इस प्रकार था,—

बरार कमिशनरी तथा नागपुर कमिशनरी हिन्दी की शिक्षा देने के लिये कोई प्रबन्ध न है, जिससे हिन्दी-भाषा-भाषियों को अपने बाल की शिक्षा में कठिनाई होती है। अतः यह सम्मेल मध्यप्रदेशीय सरकार से प्रार्थना करता है कि वहाँ इस भाषा की शिक्षा का प्रबन्ध करे।

बुरहानपुर के वकील पं० कृष्णप्रसाद मिश्र ए० के समर्थन करने पर सर्वसम्मति से प्रस्त स्वीकृत हुआ।

१६ वाँ प्रस्ताव यह था—

यह सम्मेलन संस्कृत शिक्षा-सञ्चालक स तियों, उनके सञ्चालकों तथा संस्कृत विद्वानों से स रोध प्रार्थना करता है कि वे संस्कृत शिक्षा क्रम हिन्दी भाषा को उचित स्थान दें और उस उन्नति के लिये पूर्ण प्रयत्न करें।

इसके प्रस्तावक हरदा के वकील पं० च गोपाल मिश्र और समर्थक खंडवे के पं० विहारीला दाधीच थे।

३॥ बजे सभापति पं० रामावतारजी ने श्यामसुन्दरदासजी को अपना आसन दे कर सभा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिदाई माँगी, क्योंकि आपको अपने अत्यावश्यकीय कार्य्यवश बांकीपुर जाना था। माननीय राय बहादुर पं० विष्णुदत्त ने सभापति को हार्दिक धन्यवाद दिया और उन्हें माला पहनाई। करतलध्वनि के साथ सभापति सभा से बिदा हुए।

बाबू श्यामसुन्दरदास के सभापति का आसन ग्रहण करने पर खंडवे के दो बालकों ने एक भावमय गीत गाया। इनमें एक बालक का कण्ठ बड़ा ही सुरीला और मधुर था। उसका गाना सुन कर सभी लोग मुग्ध हो गए। प्रयाग के पं० रामजीलाल शर्मा ने इस बालक को ५) की पुस्तकें तथा बा० माणिकचन्द्र जैन ने एक रजत-पदक देने को कहा।

अनन्तर बांदे के कुँवर हरप्रसादसिंह ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया—

यह सम्मेलन अत्यन्त दुःख के साथ प्रकट करता है कि युक्त-प्रान्त की गवर्नमेंट की आज्ञा, समन इत्यादि को नागरी में भी कार्यालयों से निकाले जाने तथा नागरी में अभ्यस्त कार्यकर्त्ताओं के नियत किए जाने के सम्बन्ध में प्रदान की गई है, पर उसका पालन नहीं हो रहा है, इसलिये यह सम्मेलन उस प्रान्त की गवर्नमेंट तथा हाईकोर्ट से सानुरोध निवेदन करता है कि हिन्दी के पूर्ण ज्ञाता विशेष अधिकारी द्वारा समय समय पर इसकी जाँच करा कर रिपोर्ट प्रकाशित किया करे तथा कार्यकर्त्ताओं की परीक्षा लिया करे।

इसका अनुमोदन काशी के बा० गौरीशङ्करप्रसाद ने किया और यह सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ।

बाबू गौरीशङ्करप्रसाद ने एक महत्त्व का प्रस्ताव उपस्थित किया जिसमें बिसौली के मुन्सिफ के मामले में अधिकारियों के कार्य पर असन्तोष प्रकट किया गया था। यह प्रस्ताव भी सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ।

अन्तिम प्रस्ताव स्वयं सभापति महाशय ने उपस्थित किया जो इस प्रकार था—

यह सम्मेलन उन प्रान्तों की गवर्नमेंटों से जहाँ हिन्दी भाषा का प्राधान्य है, सानुरोध निवेदन करता है कि नार्मल स्कूलों तथा ट्रेनिङ्ग कालेजों में हिन्दी के विद्यार्थियों को हिन्दी साहित्य, व्याकरण तथा छंदादि अलंकार के विषय की भी यथार्थ शिक्षा दी जाया करे।

अनन्तर कई सज्जनों ने आगामी मध्यमा परीक्षा पास करनेवाले विद्यार्थियों को पदक देने का वचन दिया। रानीगञ्ज के बा० जगन्नाथ झुनझुनवाले ने स्वर्णपदक देने की प्रतिज्ञा की। जैनरत्नाकर कार्यालय ने जैनतत्त्व पर ग्रंथ लिखनेवाले को ५००) पुरस्कार देने की सूचना दा। आज भी पैसा-फण्ड में कुछ रुपए आए। पाटलिपुत्र के सम्पादक श्रीयुक्त सोना पांडे ने ५०) देने का वचन दिया। पैसा फण्ड में कुल प्राय १७००) आए।

अनन्तर काशी के सिक्ख साधु सन्त मानसिंह जी ने अपने लेख का कुछ अंश पढ़ा जिसमें सिक्ख गुरुओं के हिन्दी-प्रेम का वर्णन था। सिक्ख गुरुओं की रची कई हिन्दी कविताएं भी आप ने सुनाईं।

अनन्तर एक छोटे से लड़के ने छड़ी पर एक रोचक कविता गा कर सुनाई। इसका गाना सुन कर काशी के बाबू शिवप्रसाद ने १०) तथा और कई सज्जनों ने एक एक दो दो रुपए दिए। काशी के बा० वेणीप्रसाद ने एक बनारसी दुपट्टा भेजने की प्रतिज्ञा की। इस लड़के ने पैसा फण्ड में २) दिए।

अनन्तर बा० पुरुषोत्तमदास टण्डन ने सम्मेलन की संशोधित नियमावली का कुछ अंश पढ़ सुनाया। बा० शिवप्रसाद ने यह नियम कराना चाहा कि स्वागतकारिणी सभाएं उन प्रतिनिधियों से जो भोजन करना चाहें भोजन के शुल्क स्वरूप प्रति दिन अधिक से अधिक १) हिसाब से लिया करें। पर बहुसम्मति से यह अस्वीकृत हुआ। निश्चय हुआ कि इस सम्बन्ध में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई नियम न रहे। भोजन कराना और न कराना स्वागत समिति की इच्छा पर निर्भर रहे।

स्थायी समिति का सङ्गठन होने पर सभापति महोदय ने एक छोटी सी सुन्दर वक्तृता में जबलपुर-वालों के उत्साह और उनके आदरातिथ्य की प्रशंसा करते हुए उन्हें धन्यवाद दिया और साथ ही स्वेच्छा-सेवकों के कार्यों की प्रशंसा करते हुए उन्हें आशीर्वाद और धन्यवाद दिया।

इन्दौर की हिन्दी साहित्य समिति की ओर से डाक्टर सरयूप्रसाद ने इन्दौर में सम्मेलन को निमन्त्रण दिया जो सहर्ष स्वीकृत हुआ। माननीय पं० विष्णुदत्त शुक्ल ने सभापति को धन्यवाद दिया। मातृभाषा की जयध्वनि के साथ सभापति ने सभा विसर्जित की।

———

सप्तम हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन जबलपुर की स्वागत कारिणी सभा के सभापति

श्रीयुत दीवान बहादुर सेठ बल्लभ-दास जी की वक्तृता।

प्रिय प्रतिनिधिगण, सज्जनो व बहनो,

उस सर्वशक्तिमान् ईश्वर को कोटिशः धन्यवाद है कि जिसकी कृपा से मध्यप्रदेशान्तर्गत इस जबलपुर नगर में आप सज्जनगण भारतवर्ष के अनेक प्रान्तों से हमारे निमंत्रण को सम्मानपूर्वक स्वीकार करके पधारे हैं और इस उपकारी सम्मेलन को सुशोभित कर रहे हैं। अतएव स्वागतकारिणी सभा की ओर से आप महानुभावों को हार्दिक धन्यवाद है।

ऐसे सुअवसर पर यदि मैं स्वतः उपस्थित हो कर आप सदृश परोपकारियों का स्वागत कर सकता तो मेरा बड़ा ही सौभाग्य होता। परन्तु खेद है कि गत आठ मास के अन्तर्गत मेरे ऊपर अनेक दारुण वियोग-घटनाओं का वज्रपात हुआ। जिसके कारण मैं असीम शोक-सागर में निमग्न हो रहा हूँ, [illegible] हेतु आप लोगों से अपनी अनुपस्थिति के कारण क्षमा का प्रार्थी हूँ, तथापि अपने स्वीकृत कर्तव्य कार्य से पराङ्मुख होना उचित न समझ आप लोगों का स्वागत इस लेख द्वारा ही करने का प्रयत्न करता हूँ।

महाशयो! हम लोगों का अहोभाग्य है कि ईश्वर ने हमें ऐसी न्यायशीला, दयालु और बुद्धिमती सरकार के अधिकार में रखा है जिस राज्य में हम अपने उद्यम का फल सुख से भोग रहे हैं। शोक है कि इस समय हमारी परोपकारिणी सरकार युरोपीय महासमर में प्रवृत्त है इस उद्देश्य से कि न्याय, धर्म और निर्बलों की रक्षा हो, स्वतन्त्रता, सभ्यता और दया का प्रचार हो और उद्दण्डता का दमन हो। इस महायुद्ध में भारतवर्ष की प्रजा अपनी शक्ति के अनुसार अपनी प्रिय सरकार का संग दे रही है, राजा, महाराजा सेना और द्रव्य से, धनवान धन और आवश्यक पदार्थों से, सब सेना में भरती होने से और बालक, वृद्ध और वनिता ईश्वर प्रार्थना से सहायता पहुँचा रहे हैं। अखिल भारत भूमि की ईश्वर से हार्दिक प्रार्थना है कि सर्व शक्तिमान् हमारे पञ्चम जार्ज महाराज को विजयी करे।

यह ब्रिटिश शासन के अटल प्रताप का फल है कि ऐसे गाढ़े समय में भी हम लोगों को राजा और प्रजा दोनों के हित की बातों पर विचार करने का अवकाश मिल रहा है। इन्हीं में से अपनी मातृभाषा की उन्नति करना भी एक है जिसके हेतु आप लोग अर्थ व्यय कर, कष्ट सह कर और अमूल्य समय लगा कर यहाँ एकत्र हुए हैं।

वर्तमान अधिवेशन इस स्थान में श्रीयुत आनन्द बुल राय बहादुर पण्डित विष्णुदत्त शुक्ल बी० ए० के निमन्त्रण से नियत किया गया है। इन महाशय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गत सम्मेलन ही में इस विषय का प्रस्ताव कर सर्व-सम्मति ग्रहण की थी। ये हमारे प्रान्त के अमूल्य रत्न हैं और ऐसे महत् कार्य में परिश्रम करने के लिये मैं इनको हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

जबलपुर नगर जिसमें आपका सम्मेलन विराजमान है श्री नर्मदा जी की पंच-क्रोशी के अंतर्गत है। यह गंगा के सदृश पवित्र है और इसके जल में ऐसा अलौकिक गुण है कि अस्थि को पाषाण कर देता है। मार्कण्डेय ऋषि ने कहा है कि इस देवी के दर्शन मात्र ही से पापपुञ्ज ऐसे नष्ट हो जाते हैं जैसे कपास का ढेर केवल चिनगारी से बात की बात में भस्म हो जाता है। यह नगर भृगुक्षेत्र के भी अन्तर्गत है क्योंकि ११ मील पर श्री नर्मदा जी के किनारे महात्मा भृगु का आश्रम था। ७ मील के अन्तर पर शिशुपालादि प्राचीन चेदी-नरेशों की राजधानी इतिहास-प्रसिद्ध त्रिपुरी थी, जो वर्तमान तेवर नाम से बोली जाती है। इसी स्थान से जाबालि नामक एक विद्वान् यहाँ आकर बसे थे। उसी समय से इस स्थान का नाम जाबालिपत्तन पड़ा और क्रमशः जाबालिपट्टन, जौलीपट्टन और अन्त में जबलपुर हो गया।

हमारा प्रान्त अन्य प्रान्तों के सन्मुख अभी बाल्य अवस्था ही में है क्योंकि इसकी रचना को लगभग ५० वर्ष हुए हैं; तथापि यह प्रान्त कदाचित् अन्य कई प्रान्तों की अपेक्षा अधिक हिन्दी-प्रेमी है। इसके २२ में से १४ ज़िलों में बोलचाल तथा राजदरबार की भाषा हिंदी ही है। यद्यपि शेष जिलों में मराठी भाषा ही प्रचलित है तथापि वहाँ के निवासी हिंदी समझते तथा व्यवहार में लाते हैं। इस प्रान्त के मुसलमान भाई भी हिंदी को अपनाए हुए हैं। कहाँ तक कहा जाय, हमारे भूतभूर्व चीफ़ कमिश्नर आनरेबुल सर रेजिनाल्ड क्रेडक महोदय ने अपनी एक वक्तृता में कहा था कि इस प्रान्त के निवासियों में से कदाचित् सैकड़ा पीछे ३ ही ऐसे हैं जो हिंदी नहीं समझते।

गत २५ वर्ष से हिंदी का प्रचार इस प्रान्त में विशेष रूप से हो रहा है। ग्रामीण शालाएं हिंदी ही की हैं और न्यायालयों में भी अँग्रेजी के अतिरिक्त इसी का उपयोग होता है। आप देखेंगे कि इस प्रान्त के हिन्दी-प्रेमियों का मार्ग, पहले ही से निष्कण्टक चला आ रहा है। इस प्रान्त में अनेक हिंदी-सेवी सज्जन विद्यमान हैं और सम्भव है कि उत्तेजना मिलने पर और भी अनेक हिन्दी-सेवक इस प्रान्त से निकलें।

महाशयो! हर्ष की बात है कि जब से बङ्गाली, महाराष्ट्र और गुजराती साहित्य सेवियों ने अपनी अपनी भाषाओं को अनेक प्रकार से उन्नति के शिखर पर पहुँचाने का प्रयत्न किया है तभी से हिंदी जगत् में भी हिंदी भाषा को प्रशस्त एवं समुन्नत बनाने का आन्दोलन बड़ी उमङ्ग से कई प्रान्तों में हो रहा है और इसका प्रभाव इस प्रान्त में भी पहुँच गया है जिससे हिंदी-प्रेमियों की संख्या दिनोंदिन बढ़ती जाती है।

महाशयो! इस प्रान्त में हिन्दी की उन्नति करने का बहुत कुछ अवसर है क्योंकि यहाँ सरकार का विशेष सहारा है तथा प्रायः सब जाति के लोग हिंदी को अपनाए हुए हैं। उदाहरणार्थ वर्तमान स्वागतकारिणी सभा के सभासदों में महाराष्ट्र, गुजराती, मुसलमान, ईसाई इत्यादि सभी जातियों तथा धर्मों के सज्जन उपस्थित हैं।

भ्रातृगण! हर्ष की बात है कि माननीय चीफ़ कमिश्नर साहिब सर बेंजमिन राबर्टसन बहादुर ने भी पत्र द्वारा इस सम्मेलन से सहानुभूति दर्शाई है। इसके लिये हम उनके कृतज्ञ हैं।

महाशयो! मुझ पर तथा स्वागतकारिणी सभा के अन्य कुछ कार्याध्यक्षों पर अनेक दैवी-आपत्तियों के कारण आप सज्जनों का यथोचित स्वागत तथा सत्कार करने में हम लोग असमर्थ हुए हैं। इस हेतु जो जो त्रुटियाँ आप महानुभावों को असुविधा-जनक दृष्टिगोचर हों उनके लिये हम बारम्बार क्षमा प्रार्थी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। वर्षा इस वर्ष सम्मेलन की तिथि के एक सप्ताह पहिले तक होती रही अतएव पहिले तो हम लोग यह निश्चय ही न कर सके कि किसी बृहत् बन्धेजी स्थान में सम्मेलन की बैठक करें अथवा पिंडाल में। निदान पिंडाल भी किसी न किसी प्रकार खड़ा किया है परन्तु उसको भली भाँति सुसज्जित न कर सके। प्रतिनिधियों के निवास तथा भोजन आदि के प्रबंध में त्रुटियाँ अवश्य रह गई हैं। आशा है कि इन त्रुटियों को भी आप अपने उदारचित्तों में स्थान न देंगे।

महाशयो! अब मैं आप लोगों का विशेष समय न लूँगा, न हिन्दी भाषा सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण विषयों पर कुछ कहने का साहस ही करूँगा। क्योंकि ऐसे सुयोग्य विद्वान् और अनुभवी सभापति की अध्यक्षता में बृहत् समारोह के सन्मुख ऐसा करना मेरी केवल धृष्टता ही समझी जायगी। आप सभी सज्जन हिन्दी भाषा के प्रेमी और ज्ञाता हैं, निज मातृ-भाषा की उन्नति किस प्रकार हो इसके साधनों को विचारने के हेतु एकत्र हुए हैं। सर्व साधारण में हिन्दी भाषा का विशेषता से और शीघ्र प्रचार हो इस हेतु हिन्दी साहित्य को प्रौढ़ और सर्वाङ्ग-सुन्दर बनाने के साथ साथ विविध विषयों की शिक्षा देने के लिये शालाओं में हिन्दी को माध्यम बनाने और सरल तथा बोलचाल की भाषा में आवश्यक ग्रन्थ लिखे जाने की आवश्यकता आदि अनेक उपयोगी प्रस्तावों पर विचार करना है। समय भी अधिक हो गया है। सुयोग्य सभापति महाशय का भाषण सुनने के लिये आप लोग अधीर हो रहे होंगे अतएव आपको उस सुख से अधिक वञ्चित न रख, भ्रातृगण, एक बार फिर आप लोगों का स्वागत सच्चे हृदय से करता हुआ आप लोगों से प्रबन्ध की त्रुटियों के लिये सभा की ओर से प्रार्थना करता हुआ मैं अपना वक्तृत्व समाप्त करता हूँ। आशा है कि आप सब महानुभाव सज्जन अपने सुयोग्य एवं धुरन्धर विद्वान् सभापति के सुशासन में सब कार्य सावधानी से करके यह सिद्ध कर दिखावेंगे कि ६ अधिवेशनों के समान इस प्रदेश में होनेवाले सातवें अधिवेशन का उद्देश्य भी राजभक्ति-पूर्ण अपनी भाषा के साहित्य की उन्नति करना ही है जिससे वह अन्यान्य आगे बढ़ी हुई देश भाषाओं के पद प्राप्त कर इस देश की प्रजा का उतना ही वा उससे अधिक उपकार कर सके जितना वे कर रही हैं क्योंकि वास्तव में भाषा की उन्नति जाति की उन्नति का प्रधान साधन है जैसा कि भारतेन्दु हरिश्चन्द्रजी लिख गए हैं:—

निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल।

—:-०-:—

सभापति साहित्याचार्य्य पाण्डेय रामावतार शर्म्मा एम० ए० की वक्तृता।

देश और देश-भाषा के भक्त बहनो तथा भाइयो!

हिन्दी साहित्य की उन्नति और हिन्दी भाषा प्रचार पर विचार करने के लिये आज सातवीं आप सम्मिलित हुए हैं। इस कार्य में पं० मदन मोहन मालवीय और बाबू श्यामसुन्दरदास आ महोत्साह देश-सेवक और हिन्दी के प्रेमी आपके नेता हो चुके हैं। इस वर्ष भी सरस्वती के प्रौढ़ सेवक पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी, साहित्य समुद्र में से बांधनेवाले पं० श्यामविहारी मिश्र, विश्वकोष खजाञ्ची बाबू नगेन्द्रनाथ वसु, गीता-रहस्य हिन्दी में सुलभ करनेवाले पं० माधवराव स वंगीय हिन्दी-सेवक बा० शारदाचरण मित्र आ हिन्दी मातृक प्रान्तों के तथा अन्य प्रान्तों के हिन्दी सेवी सुजनों में से किसी एक को आप अपना नेता दे सकते थे। मेरी अयोग्यता ऐसी स्पष्ट है कि इ समझने के लिये बहुत अनुसन्धान की अपेक्षा न थी तथापि अखबारवाले लालबुझक्कड़ों ने बड़े परिश्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के साथ इस अयोग्यता का उद्घाटन किया, जिसके लिये उन्हें अनेक धन्यवाद हैं। पर ऐसी घटना आ पड़ी कि, जिस प्रकार किसी बड़े उद्यान में अनेक अद्भुत वनस्पतियों पर न जाकर देखनेवाले की दृष्टि किसी नवजात अंकुर ही पर प्रणयबद्ध हो जाय, उस प्रकार आपकी दृष्टि उपर्युक्त महानुभावों की महती देश-सेवा और देश-भाषा-प्रेम पर न जमी और मेरी हृदय-भूमि में हिन्दी के लिये जो प्रेमांकुर है, उसी पर लुब्ध हो गई। एक गुणाढ्य की एक बृहत्कथा के स्मरण से विहार के महाकवि बाण भट्ट की जिह्वा भीतर खिची जा रही थी और कविता में प्रवृत्त होना नहीं चाहती थी। अब कहिए अनेक गुणाढ्यों की अनेक लम्बी कहानियों का स्मरण करता हुआ आपका यह बिहारी सेवक कैसे अपनी जिह्वा * हिलावे। बाण हर्ष की भक्ति से हर्षचरित् में प्रवृत्त हुए, मैं भी आप हिन्दी-सेवियों में भक्ति के कारण सहर्ष इस उत्साह के अवसर में सम्मिलित होता हूं। मेरे द्वारा बिहार प्रान्त की विनीत सेवा आप लोग स्वीकार करें। विहार की प्राचीन मागधी का नाम तो फूहर है, वहाँ के लोग भी 'हाथी आती है' 'छड़ी अच्छा है' इत्यादि गँवारू बोली बोलनेवाले हैं तथापि यह मागधी केवल मागधी नहीं थी; समस्त भारत की राजभाषा और राष्ट्रभाषा थी और साम्प्रतिक हिन्दी की मातृदेवी है। इस सम्बन्ध का ख्याल रखते हुए आप विहार पर प्रेम रखते हैं और इसकी विनीत सेवा आपको अवश्य स्वीकृत होगी।

कर्त्तव्य के अनेक भेद हैं। कुछ काम ऐसे हैं जो इच्छा के प्रतिकूल करणीय होते हैं, जिनका साधन एक भयानक दण्ड सा मालूम होता है। कुछ कार्य्य ऐसे हैं, जिनका साधन उदासीन बुद्धि से किया जाता है और केवल बाहरी फल के लिये ही ऐसे कार्य्यों में मनुष्य पड़ता है। कुछ कार्य्य ऐसे हैं जिनके साधन के साथ साथ फल का भी लाभ होता जाता है और ऐसे कार्य्यों में मनुष्य बड़े उत्साह से पड़ते हैं। देश-देशान्तरों से आए हुए सज्जनों का समागम एक ऐसा ही कार्य्य है जिसके साधन में अत्यन्त उत्साह होता है और बाह्य फल की अपेक्षा न रख कर कार्य्यारम्भ के समय हीं से चित्त आनन्दित होता जाता है। प्रति वर्ष ऐसा अवसर एक बार आता है, जिसमें आप सज्जनों का सम्मेलन होता है। तथापि यह समागम ऐसा रमणीय है कि, प्रतिवर्ष नवीन ही सा जान पड़ता है। माघ कवि ने कहा है—"क्षणे क्षणे हन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः"।

पचीस तीस वर्ष पहले अङ्गरेजी फीट-फाटवाले बाबू तथा संस्कृत के प्रचण्ड पंडित दोनों ही हिन्दी भाषा की ओर संकुचित दृष्टि से देखते थे। लाटिन, ग्रीक आदि आकर भाषाओं के प्रेम में विह्वल युरोपवाले भी अङ्गरेजी, फरांसीसी, जर्मन, इटालियन आदि नवीन देश-भाषाओं पर पहले ऐसे ही कुदृष्टि रखते थे; पर विज्ञान के विकाश के साथ जब पुरोहित और किरानी आदि से उतर कर कृषीवल, शिल्पी, सौदागर आदि में विद्या पसरने लगी और शिक्षा का असली अर्थ तथा उपयोग लोग समझने लगे, तब समाज के नेताओं की बुद्धि सुधरी और समाज-शिक्षा का मुख्य द्वार देश की प्रचलित भाषा ही हो सकता है, यह बात सबको झलकने लगी। जब संस्कृत के परिचय से युरोप में निर्वचन-शास्त्र का आविर्भाव हुआ, तब से तो देश-भाषाओं का गहन परिचय चला और उनका मूल्य आकर भाषाओं के बराबर व्याकरण-साहित्य की दृष्टि से भी होने लगा। अब तो उक्षपतर, कामसेतु आदि बड़े विश्वविद्यालयों में प्रचलित भाषाओं का अद्भुत वैज्ञानिक

* आढ्यराजकृतोच्छ्वासैर्हृदयस्थैः स्मृतैरपि।
जिह्वान्तःकृष्यमाणेव न कवित्वे प्रवर्त्तते॥
तथापि नृपतेर्भक्त्या भीतो निर्वहणाकुलः।
करोम्याख्यायिकाम्भोधौ जिह्वाप्लवनचापलम्॥
हर्षचरितोपक्रमे॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रणाली पर अध्यापन होता है। भारत में भी अब अवस्था बदलने लगी है। शिक्षाधिकारियों की अभी पूर्ण दृष्टि तो इधर नहीं है, तथापि अब देश-भाषाओं के वैज्ञानिक अध्ययन अध्यापन की ओर प्रवृत्ति जनोद्योग से कुछ काल में हो चले तो आश्चर्य नहीं। विश्वविद्यालयों से कुछ थोड़ी बहुत सहायता आपको इस कार्य्य में भले ही मिल जाय, पर वस्तुतः नागरीप्रचारिणी सभा, विज्ञानपरिषद्, साहित्य सम्मेलन तथा हिन्दी के पत्रों और पत्रिकाओं पर ही यह कार्य्य निर्भर है। अपने गुण से तथा सूर, तुलसी, हरिश्चन्द्र आदि महाकवियों की अपूर्व प्रतिभा से हिन्दी केवल भारत ही में नहीं, द्वीपान्तरों में भी माननीय हो रही है। राष्ट्रभाषा तो हिन्दी ही रही है, थोड़े दिनों में महोत्साह मारवाड़ी भाइयों के भूव्यापक वाणिज्य आदि से सङ्घाय, नन्दन, और नवार्क में भी इसका प्रचार होना दुर्घट नहीं दीख पड़ता।

मुझे जहाँ तक स्मरण है, आपके सुयोग्य सभा-पतियों ने तथा अन्य व्याख्याताओं ने सम्मेलन के भूतपूर्व अधिवेशनों में हिन्दी साहित्य का इतिहास कह सुनाया है; इधर एक बड़ा इतिहास प्रकाशित हो भी चुका है। इसलिये यहाँ इस विषय पर काल बिताना व्यर्थ है। आप अपने साहित्य को भारतीय अन्य भाषाओं के साहित्यों से तथा वैदेशिक साहित्यों से मिला कर देखें। एवं स्वतन्त्र विचार भी करें कि, आपके साहित्य में किन बातों की पूर्ति अभी नहीं हुई है और उनकी पूर्ति किस प्रकार हो सकती है। भारतीय महाकवि वाल्मीकि, व्यास आदि की अपूर्व शक्ति से जगत् में रामायण, महाभारत आदि अद्भुत महाकाव्यों का आविर्भाव हुआ। संस्कृत साहित्य का एक विशेष धर्म यह है कि प्रायः सारा जगत् इसका ऋणी है, पर यह अभी किसी देश के साहित्य का ऋणी नहीं है। यह गुण बढ़ते बढ़ते आज दोष भाव को प्राप्त हो रहा है। और संस्कृत में बाहरी साहित्य से सहायता लेने से इस समय नए नए अच्छे ग्रन्थ नहीं बन रहे हैं। अस्तु, जो कुछ हो, हमारे तुलसी बाबा, सूरदास आदि हिन्दीकवियों ने मौलिक संस्कृत साहित्यसागर से ऐसे रत्न निकाले हैं कि आज संसार की समस्त कविताएं जल जायँ तो भी मानस रामायण ही से केवल भारत ही नहीं सम्पूर्ण भूमण्डल कृतार्थ रहेगा। हमारे यहाँ कविता का अभाव नहीं है। देश के ही धन से भण्डार भरा है। इस भण्डार की पूर्त्ति सभा-समाजों द्वारा हो भी नहीं सकती। काव्य सिद्ध वाङ्मय है। रससिद्ध कवीश्वरों के द्वारा काव्य सुवर्ण की घटना साधारण जड़ी बूटियों से हुआ करती है। लाखों के प्रयत्न से कोटियों के व्यय से ऐसी घटना साध्य नहीं है। चारों ओर की प्राकृत अवस्था के अनुसार ऐसे सिद्धों का जन्म होता है। अवस्था के अनुकूल ही रस-प्रवाह भी देश में उमड़ता है। अवस्था दशा में शृंगार के या वीर के तरङ्ग उठते हैं, मध्यम दशा में रौद्र के झकोरे आते हैं या करुण का आपूर चढ़ता है, गिरी दशा में हास्य और बीभत्स की बढ़ती होती है। मम्मट ने ठीक कहा है कि, काव्य के लिये स्वाभाविक शक्ति, लोक शास्त्र काव्य आदि देखने से निपुणता और काव्य की शिक्षा इन तीन बातों की अपेक्षा है। इन तीनों में मुख्य शक्ति है। जो बनावटी हो ही नहीं सकती—वह प्राकृत अवस्था के अधीन है और इस अवस्था पर किसी एक समाज का सर्वात्मना अधिकार नहीं है। इसलिये अच्छे श्रव्य या दृश्य गद्य-मय या पद्य-मय काव्य आज देश में हों यह बात स्पृहणीय तो अवश्य है; पर साक्षात् साध्य नहीं है।

तथापि सरस्वती भगवती के दो वास-स्थान हैं। सिद्ध-वाङ्मय और साध्यवाङ्मय। सिद्धवाङ्मय घना वन है जहाँ मनुष्य के हाथ पड़ने से शोभा बढ़ती नहीं बल्कि घट जाती है। छेड़छाड़ करने से कवि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खराब होने लगती है। साध्यवाङ्मय कृत्रिम महल और बगीचा है। मुख्यतया मनुष्य के प्रयत्न से बना है। उसी के प्रयत्न से इसका आयाम बढ़ सकता है और उसी के अनुद्योग से यह खँडहर उजाड़ वाटिका के रूप में परिणत हो सकता है। इस साध्यवाङ्मय के दो अंग हैं; अनुवादात्मक और मौलिक। इन दोनों अङ्गों का परितोष और प्रचार इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए।

प्रायः पन्द्रह करोड़ भारतीय हिन्दी-मातृक हैं। अनेक देश-प्रेमी महात्माओं के पवित्र अनुभाव से भारत भूमि के अन्य प्रान्तों में भी अर्थात् महाराष्ट्र, वङ्गीय आदि अंशों में भी हिन्दी-प्रेम अब बढ़ने लगा है। ऐसी अवस्था में सम्मेलन का कर्त्तव्य है कि भारत में कम से कम जन-शिक्षा के दस केन्द्र बनवाने का प्रगाढ़ प्रयत्न करे और एक मध्य केन्द्र प्रयाग के आस-पास स्थापित करे। हरिद्वार, लाहोर आदि में ऋषिकुल और धार्मिक कालेज आदि की वृद्धि देख कर हर्ष होता है। मजहबी और नैतिक समाजों ने अपना कार्य्य आरम्भ कर दिया है। बड़े हर्ष की बात है कि हिन्दू विश्वविद्यालय का भी कार्य्य चल निकला है। आर्य्यसमाजी भाई भी अपने गुरुकुलों का काम उत्साह से चलाए जा रहे हैं। मुसलमान भाइयों का विशाल कालेज, पुस्तकालय आदि देख कर बड़ा उत्साह होता है, पर अभी तक शुद्ध सरस्वती-सेवक किसी समाज ने मजहबी और नैतिक भावों से स्वतन्त्र होकर भारत में विद्याकेन्द्र स्थापित नहीं किए हैं। सम्मेलन को शुद्ध सरस्वती-सेवा का अवसर है। हिन्दू, मुसलमान, कृस्तान, आर्यसमाजी, ब्रह्मसमाजी आदि मतवालों में से तथा गोखलीय तिलकीय आदि दलवालों में से विद्याप्रेमियों को लेकर हमें एक ऐसा समाज घटित करना चाहिए और एक ऐसी संस्था स्थापित करनी चाहिए, जिससे देश की जनता में अज्ञान, दारिद्र्य और दुर्बलता का नाश हो और ज्ञान, धन, बल का क्रम से विकाश होता चले। अर्थार्जन श्लाघनीय कार्य है। छोटे से बड़े पद पर काम करनेवाले देश का उपकार कर रहे हैं। वकील मुखतार आदि भी कितने ही कार्यों का साधन कर रहे हैं, पर शिक्षा में प्रविष्ट सब नवयुवक एक ही प्रवाह में भेड़ियाधसान की शैली से केवल नौकरी और वकालत ही की ओर यदि चलते जायँगे तो थोड़े ही दिनों में देश की दशा अकथनीय विषमता में पड़ जायगी। जितने लोग आज शिक्षायों से निकलते हैं उनके लिये नौकरी या वकालतखाने में जगह नहीं है। शिक्षा में इतना धन, समय, शक्ति का व्यय होता है कि शिक्षित युवक को कृषि, वाणिज्य, शिल्प आदि में सहसा लगना असम्भव सा हो जाता है। नौकरी भी मिलती नहीं। फिर विचारा हताश होकर अनेक दुर्दशाओं में पड़ता हुआ असन्तान, दरिद्र, रोगी हो अल्पायु हो जाता है और मानवलीला का दुःखान्त करुण संवरण कर लेता है। इस पाप का बोझ देश के नेताओं पर है। शिक्षा के लिये जैसा महोद्योग प्रजाप्रिय सरकार करती जा रही है और अनेक अन्य कर्त्तव्यों के रहते भी जहाँ तक हो सकता है, जन शिक्षा से मुँह नहीं मोड़ती उसके आधे परिश्रम से भी जनता यदि सरकार की सहायता और उसके कार्यों की पूर्त्ति करती जाती तो देश में एक भी अशिक्षित बालिका या बालक नहीं मिलता और कृषि, वाणिज्य, शिल्प आदि की अवस्था ऐसी होने नहीं पाती, तथा कोई बालिका या बालक निकम्मे नहीं पड़े रहते और अभाग्य में जीवन नहीं बिताते। सारा देश हरा भरा रहता। यह तो बड़े भाग्य की बात है कि हमारी सरकार महाप्रभाव और विद्यानुरक्त है नहीं तो जनता में जैसा रागद्वेष और आलस्यमय तम का प्राबल्य है, न जाने देश कैसे गढ़े में पड़ा होता। घोर दुर्भिक्ष और प्रबल महाव्याधि जनता के आलस्य से देशभक्षण प्रायः प्रतिवर्ष कर जाते हैं। शहर और गाँव की बस्तियाँ चारों ओर नरक में डूबी पड़ी हैं। सर-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार हजार प्रयत्न कर रही है, पर जनता के अज्ञान और वैमत्य के कारण आपत्तियाँ दूर नहीं होने पातीं,—"आत्मानमात्मना रक्षेत् हन्यादात्मानमात्मना" भगवान् श्रीकृष्ण का वाक्य है। अपनी सफाई, अपनी शुद्धता, अपना व्यवसाय आप किए बिना कभी कल्याण का द्वार खुल नहीं सकता। केवल आत्मश्लाघा, पूर्व पुरुषों की स्तुति और साम्प्रतिक बड़े लोगों की निन्दा करने से आलस्य देव का सन्तोष भले ही हो, अन्य उन्नति की तो क्या कथा उदरपूर्ति की भी सम्भावना नहीं है। ऐसी अवस्था में समस्त भारत की दृष्टि हिन्दी साहित्य-सम्मेलन पर है। सब लोग यही देखना चाहते हैं कि यह विशाल आयोजना किस फल में परिणत होती है। हिन्दी-मातृक लोगों से सामान्यतः प्रति व्यक्ति एक रुपया लेने का प्रयत्न होना चाहिए। जो लोग दीन दरिद्र हैं, उनसे इतना न लेकर उनके अंश की पूर्ति उनके धनी पड़ोसी के द्वारा करनी चाहिए। इस महा धन से ठीक ठीक कार्य किया जाय तो देशभक्त लोग अल्पमात्र आत्मोत्सर्ग करते हुए देश के शिक्षोचित वयवाले सब बालिका और बालकों की नौकरी के योग्य तो नहीं, पर कृषि, वाणिज्य, शिल्प आदि के योग्य अवश्य बना सकते हैं। देश में असली विद्या का अभाव और उसके द्वारा दारिद्र्य और दुर्बलता का प्रचार तीन ही कारणों से हो रहा है। प्रत्येक व्यक्ति को इतना धन नहीं कि उपयुक्त शिक्षा पावे! धन होने पर भी इतना समय नहीं कि राजकीय भाषा का अभ्यास दस पन्द्रह वर्ष करके फिर किसी एक उपयुक्त विज्ञान में पड़े। धन और समय होने पर भी सब की ऐसी शक्ति नहीं कि अनेक परीक्षाओं को पार करता हुआ अपने उद्देश्य की पूर्त्ति करे। ऐसी अवस्था में ऐसे शिक्षा-केन्द्रों की स्थापना जन-समाज के द्वारा होनी चाहिए जिनमें मातृ-भाषा में शिक्षा हो अर्थात् भाषा-शिक्षा का विशेष क्लेश छात्रों को न उठाना पड़े। फीस छात्र व्यक्तियों से न ली जाय, जिससे धनी और निर्धन समान सुविधा से पढ़ें और रस्म के परीक्षाओं का प्रपञ्च न रहे, जिससे थोड़े समय अपने इष्ट विषय को पढ़ कर छात्र किसी कार्य लग जायँ। संक्षेपतः पाँच से दस वर्ष की अवस्था तक बालकों को वर्ण परिचय, थोड़ा गणित, भूगोल इतिहास आदि का ज्ञान कराकर किसी एक कला नात्मक दर्शन आदि का अथवा कार्य्यात्मक कला शिल्प आदि का ज्ञान करा दिया जाय तो वह कला अध्यापन आदि या शिल्प आदि का कार्य्य करा अपना भी कल्याण करेगा और देश का भी उद्धार करेगा—भूखा कभी नहीं मरेगा और असन्तुष्ट होकर दूसरों की हानि करने की आत्महानि पर्यवसायिनी चेष्टा में कभी नहीं फँसेगा। ऐसी शिक्षा के लिए सप्ताह में एक विषय का एक घण्टा अध्यापन पर्याप्त होगा। केन्द्रों की स्थापना में भी कठिनता नहीं है। हमारे दानशील बन्धुवृन्द उत्कण्ठापूर्वक जिधर ने लोग लगा दें उधर ही दानवृष्टि करने को तैयार हैं। केन्द्र स्थपित होते ही भारत के उदार शिक्षित सप्ताह में एक घण्टा समय देने से भी मुँह न मोड़ेंगे। फिर देशोद्धार के ऐसे कार्य के लिए सम्मेलन के नेतृगण क्यों विलम्ब कर रहे हैं? अतन्द्रा का समय नहीं है। ज्ञानपूर्वक और भक्तिपूर्वक पूर्ण उद्योग का अवसर है।

शिक्षा केन्द्रों की स्थापना के लिये उद्योग के साथ साथ अच्छे पत्र, पत्रिका, अनुवाद ग्रन्थ तथा स्वतन्त्र ग्रन्थों की हमें बड़ी अपेक्षा है। मेरा यह अभिप्राय नहीं है कि साम्प्रतिक दशा में हिन्दी साहित्य अच्छे पत्र या ग्रन्थों से सर्वथा शून्य है। बङ्गाल में दैनिक भारतमित्र, कलकत्ता-समाचार, साप्ताहिक हिन्दी बङ्गवासी, बिहार में साप्ताहिक पाटलिपुत्र और शिक्षा, मासिक श्रीकमला, युक्त प्रदेश में साप्ताहिक अभ्युदय, और आनन्द आदि मासिक सरस्वती, मर्यादा, मनोरमा, काशी नागरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रचारिणी पत्रिका और विद्यार्थी आदि मध्य प्रदेश में प्रभा और हितकारिणी पञ्जाब में हिन्दी-समाचार, सद्धर्मप्रचारक बम्बई में दैनिक श्रीवेङ्कटेश्वर और चित्रमय जगत् ये अपनी अपनी शक्ति के अनुसार अच्छा काम कर रहे हैं। युक्त प्रान्त तो आज हिन्दी का महाकेन्द्र ही हो रहा है और अभ्युदय उसके अभ्युदय के लिये प्रयत्न कर ही रहा है। उत्साह की बात है कि अभी मातृ-भाषा की सेवा में कुछ पीछे पड़े हुए मध्यप्रदेश से भी प्रभा की आशाजनक झलक कभी कभी आ जाती है और बूढ़े विहार प्रान्त में भी मातृ-भक्त महाराज हथुवा के अनुग्रह से पाटलिपुत्र के विशेषांक सरीखी उत्तम सुपठ्य पुस्तिका देखने में आई है। वैदिक उषादेवी के सदृश सरस्वती पुरानी होने पर भी युवती है। आज भी हिन्दी जगत् में ऐसी विद्वत्ता और परिश्रम से सम्पादित, उपयोगी उत्तम चित्रों से विभूषित और कोई पत्रिका नहीं है। दैनिक पत्रों में भारतमित्र का सामना करनेवाला दूसरा पत्र नहीं देख पड़ा। हिन्दी के अनन्य भक्त बाबू रामदीनसिंह के तपः फल स्वरूप बाँकीपुर की शिक्षा और प्रयाग का विद्यार्थी बाल-शिक्षोपयोगी अच्छा कार्य्य कर रहे हैं। परन्तु इतने ही से हमारा सन्तोष नहीं, कम से कम एक प्रकृति विज्ञान पर, एक दार्शनिक विषयों पर, एक एक कृषि, शिल्प, वाणिज्य पर और एक ऐतिहासिक अनुशीलन पर अच्छी सम्पत्तिशालिनी नियमपूर्वक निकलनेवाली सुविद्वत् सम्पादित चित्रित पत्रिका अपेक्षित है। दो एक उत्तम कक्षा के दैनिक पत्र अपेक्षित हैं। राजधानियों में मन्दराज की ओर से एक भी हिन्दी का पत्र या पत्रिका नहीं है। हिन्दी में पूर्ण राष्ट्रीयता लाने के लिये दो एक पत्रों की मन्दराज हाते में और निजाम राज्य में बड़ी जरूरत है। देश में दार्शनिक आन्दोलन और वैज्ञानिक अनुसन्धान नहीं के बराबर हैं। इनके बिना जाति निर्जीव प्रायः गर्भावस्था में पड़ी हुई कही जाती है। ऊपरी नैतिक या मजहबी आन्दोलन के आडम्बर से भी बिना दार्शनिक गम्भीरता के, बिना उच्च आदर्श कल्पना के और बिना वैज्ञानिक शक्तिसञ्चार के सजीव जातीयता देश में नहीं लाई जा सकती। जब तक ऐसी स्वतन्त्र पत्रिकाएँ नहीं हैं तब तक विद्वान् लेखकों को सरस्वती और काशी नागरी-प्रचारिणीपत्रिका के द्वारा इस कार्य्य को चलाते रहना चाहिए। छोटे छोटे सुस्पष्ट, सचित्र हृदयग्राही दर्शन, विज्ञान, इतिहास आदि के ग्रन्थ देश में अत्यन्त अपेक्षित हैं। बाबू श्यामसुन्दरदास की मनोरञ्जन पुस्तकमाला, इण्डियन प्रेस की ऐतिहासिक ग्रन्थावली और प्रयागस्थ विज्ञान परिषद् की पुस्तिकाओं से हिन्दी साहित्य का दारिद्र्य कुछ दूर हो रहा है। अभी हाल में आगते महाशय ने ज्ञान-सागर प्रकाशित किया है। यह छोटा सा ग्रन्थ छात्रों के लिये बड़े काम का है और सर्वसाधारण को भी इसे अवश्य हाथ में रखना चाहिए। ऐसे दस बीस ग्रन्थ और बन जायँ तो बड़ा काम हो। गम्भीर, बहुश्रुत, विद्वान् तिलक महाशय का अलौकिक परिश्रम सूचक भगवद्गीता रहस्य पण्डित माधव-राव सप्रे द्वारा हिन्दी में परिणमित हिन्दी जगत् में सुलभ सुपाठ्य दार्शनिक ग्रन्थों की कमी को हटा रहा है। बड़े कार्यों में काशी नागरीप्रचारिणी सभा का हिन्दी शब्दसागर और कलकत्ते का हिन्दी विश्वकोष बड़े महत्त्व के कार्य्य हो रहे हैं। पर हिन्दी के पाठकों के लिये शीघ्र अपेक्षित, प्रत्येक पाठक के हस्त में सदा सन्निहित रहने के योग्य चार ग्रन्थों की बड़ी अपेक्षा है। सम्मेलन का धर्म है कि राजे-महाराजों से, साधारण जनता से चाहे जैसे हो द्रव्य इकट्ठा कर इन चारों ग्रन्थों को शीघ्र संगृहीत तथा प्रकाशित करे और थोड़े मूल्य में सब हिन्दी प्रेमियों के हाथ में दे। एक तो छायापथ से ताराग्रह आदि से निकलने के समय से आज तक का संक्षिप्त जगद्विकाश का इतिहास तैयार होना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरा नर-जातियों के बुद्धि-विकाश का इतिहास बनना चाहिए, जिसमें प्रत्येक जाति की उन्नति-अवनतिका कारण स्पष्ट दिखलाते हुए, किस आदर्श की ओर मनुष्य जा रहा है और किस आदर्श का अनुसरण असल में इसके लिये कल्याणकारक है, यह बात दिखलाई जाय। तीसरा एक अँगरेजी जनशिक्षक (पपुलर एजुकेटर के ढङ्ग का) सर्व सुलभ शैली पर प्रकाशित होना चाहिए जो एक प्रकार का सचित्र बालविश्वकोष का काम करेगा। चौथा, एक दश हजार शब्दों की ऐसी सूची बनने की अपेक्षा है, जिसमें बाइसिकिल, फोनोग्राफ, एलेक्झाण्डर, इंगलैंड आदि वैज्ञानिक, ऐतिहासिक भौगोलिक आदि संज्ञाओं के लिये देशी नाम भी दिए जायँ जिससे देश भर में इन विषयों पर बात चीत करने में कठिनता न पड़े और इतिहास भूगोल आदि का संक्षिप्त खयाल रखने में अँगरेजी नहीं जानते हुए संस्कृत हिन्दी आदि के छात्रों को विशेष कठिनता न पड़े। सम्मेलन प्रायः छोटे छोटे काक-दन्त परीक्षा प्राय कामों में भी उलझा पुलझा करता है। मध्यम दशा में केवल इसी देश में नहीं देशान्तरों में भी लोग ऐसे विचारों में फँसे पड़े रहते थे। ऐसे कार्य्यों में फँसे रहने से समय, शक्ति और धन तीनों का निरर्थक नाश हुआ करता है। सूई की नोक पर कितने देव एक बार खड़े रह सकते हैं और कितने एक ही बार उसके छिद्र से गुजर सकते हैं इत्यादि विचार मध्यम समय के युरोप में विद्वत् सभाओं में हुआ करते थे। ऐसी कुढंगी बातों को छोड़ कर यदि आठ दस उपसमितियाँ हम लोग बना लें और उनके द्वारा, भाषा-निर्वाचन, दर्शनों का तारतम्य, ऐतिहासिक अन्वेषण, साहित्य समीक्षा, वैज्ञानिक अनुसन्धान, ज्योतिष-शैली आदि पर विचार हुआ करे और छोटे बड़े प्रबन्ध इन विषयों पर लिखवाए जायँ तो इस सम्मेलन के द्वारा भारतवर्ष का बड़ा उपकार हो। इस विनीत निवेदन के बाद अपनी टूटी फूटी बातों कह डालने पर क्षमा माँगता हुआ आप हिन्दी-प्रेमियों से मैं उपस्थित कार्य्यों के अनुष्ठान में प्रवृत्त के लिये सानुरोध प्रार्थना करता हूँ। और स्वा कारिणी सभा के उदार सभापति महाशय सदस्यों को तथा अन्य सहायकों को सामान्य पवित्र नर्मदा तट पर वर्तमान इस नगर के उत्सा निवासियों को तथा अनेक कष्ट उठा कर बाहर आए हुए पत्र-सम्पादकों को, प्रतिनिधियों को त समस्त अन्य हिन्दी-प्रेमियों को सविनय सोत्सा अन्त हृदय से कोटिकोटि धन्यवाद देता हूँ और से पुनः प्रगाढ़ विनयपूर्वक आशा करता हूँ हिन्दी के आश्रयदाता महाराज गायकवाड़, महा सिन्धिया, महाराज बीकानेर, महाराज इन्दौ महाराज अलवर, महाराज दतिया आदि उ हृदय महापुरुषों के उत्साह का स्मरण रखते भारतीय मान्य-नेतृवर्ग के हिन्दी के पक्ष में सपरि आन्दोलनों का ध्यान रखते हुए अपने ही जी तक नहीं—पृथ्वी पर मनुष्य जीवन के पर्यवस समय तक आप देश-भक्ति के प्रधान अङ्ग दे भाषा-भक्ति में अटल रहेंगे और इन भक्तियों हृदय में रखते हुए भारतीयों के सर्वस्व राजभ में दृढ़ रहेंगे तथा प्रस्तुत कार्य्य के आरंभ के प हमारे विजयी सम्राट् श्रीजयोर्ज महाराज के उनके दृढ़ संकल्प मित्रों के सीमतट और व दुर्ग पर जो विजय हो रहे हैं उन पर हृदय से मनाते हुए सत्वर उनके विजय और शत्रुओं के न की आशंका कीजिए और एक स्वर से एक श्रीजयोर्ज महाराज की जयध्वनि से कर्णों आनंदित कीजिए। शुभम्।

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रवासी और हिन्दी ।

बँगला का 'प्रवासी' पत्र हिन्दी का स्मरण प्रायः किया करता है। पटने में वंगीय साहित्य-सम्मेलन होनेवाला है। उसके 'कर्म्म-कर्त्ता' बंगाली ही हैं बिहारी नहीं इस पर उक्त पत्र बहुत खिन्न होकर कहता है—"यदि बाँकीपुर में हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन होता तो वहाँ के शिक्षित बिहारी पूरा उद्योग करते, क्योंकि बिहार की किताबी भाषा हिन्दी है।"

अपनी इसी खिन्नता में उसने "बंगाल और बिहार की भाषा" के सम्बन्ध में भी बहुत कुछ विचार कर डाला है। वह कहता है कि "यद्यपि बिहार की साधु भाषा हिन्दी है पर वहाँ की बोल-चाल की भाषा हिन्दी की अपेक्षा बँगला से अधिक मिलती है"। अपने इस कथन की पुष्टि में उसने बंगाल की मर्दमशुमारी की रिपोर्ट के कुछ वाक्य उद्धृत किए हैं जिनका अभिप्राय यह है कि बिहारी के प्रत्यय बँगला के अनुरूप अधिक होते हैं और बिहारी भी उसी मागधी से निकली है जिससे बँगला, आसामी और उड़िया। पर सम्पादक महाशय को समझना चाहिए कि साहित्य के लिये भाषा का ग्रहण स्थानिक भाषा के मूल के विचार से नहीं होता बल्कि उसके प्राप्त रूप के अनुसार होता है। किसी स्थान की बोली के अधिकांश शब्द (केवल प्रत्यय आदि व्याकरण की विशेषताएँ नहीं) जिस दूसरी बोली के अधिकांश शब्दों से मिलेंगे वही उस स्थान की साहित्य की भाषा हो सकती है। 'ल' आदि प्रत्यय जिन्हें डाक्टर ग्रियर्सन ने आर्य्य भाषा के पूर्वीय-वर्ग की भाषाओं का लक्षण माना है, बनारस के और पश्चिम तक पाए जाते हैं। पर बनारस गोरखपुर आदि की बोलियों को हिन्दी के अतिरिक्त और कुछ कहने का पागलपन आज तक किसी ने नहीं किया है। भाषा एक व्यवहार की वस्तु है, अतः उसका विचार व्यवहार की दृष्टि से ही होता है, किसी सिद्धान्त या काल्पनिक निरूपण की दृष्टि से नहीं। पटने की बोली वर्तमान किस भाषा के अन्तर्गत है इसकी परीक्षा यदि करनी हो तो एक आदमी रोहतक जिले से बुलाइए और एक ढाके से, दोनों को पटने की गली में छोड़ दीजिए। देखिए तो किसकी बोली अधिक समझी जाती है। यदि रोहतकवाले की, तो निश्चय पटने की बोली हिन्दी है चाहे उसमें कुछ विलक्षणताएँ भी हों जो प्राचीन भाषा-तत्व के अन्वेषकों के काम की हों। किसी से पूछ देखिए कि बिहार में तुलसीदास की रामायण अधिक पढ़ी जाती है कि कृत्तिवास की। हम तो समझते हैं कि बिहार के अधिकांश लोग कृत्तिवास का नाम तक न जानते होंगे। प्रवासी ने अपनी धुन में एक बड़ी भारी बात की ओर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया है। उसने बिहार के मुसलमानों का कुछ विचार ही नहीं किया है जिनकी भाषा अवधी हिन्दी है (दे० Linguistic Survey of India Vol. V.)। बंगालियों ने अपनी साहित्य-भाषा के गढ़ने में मुसलमानों का कुछ भी खयाल नहीं रखा है। इस बात की शिकायत बराबर सुनी जाती है, पर केवल बँगला पत्रों में ही। हाल की साहित्य-परिषद् पत्रिका (भाग २३-संख्या २) में डाक्टर अब्दुल ग़फ़ूर सिद्दीकी का "मुसलमान ओ वंग-साहित्य" नामक लेख देखिए।

बिहारी और बँगला भाषा का मेल दिखा कर प्रवासी फिर साहित्य की उत्कृष्टता की दुहाई देकर कहता है—"यदि कोई भूखंड अपनी भाषा में साहित्य की सृष्टि करे तो अच्छी बात है नहीं तो उसे अपने पड़ोसी के साहित्य को लेकर अपनाना चाहिए।... पर बिहार की अदालतों में भी अवध और आगरे की भाषा का व्यवहार होता है और साहित्य में भी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोलचाल की भाषा का बँगला से अधिक हेलमेल होने से और आधुनिक हिन्दी-साहित्य की अपेक्षा आधुनिक बंगला साहित्य के अधिक उत्कृष्ट होने से बिहार के लिये स्वाभाविक यही था कि वह बँगला साहित्य को अपना साहित्य बनाता। ऐसा क्यों नहीं हुआ इस पर किसी योग्य बिहार-प्रवासी बंगाली को पटने के सम्मेलन में कुछ कहना चाहिए।"

हम भी कहते हैं कि कहना चाहिए, अवश्य कहना चाहिए, और खूब कहना चाहिए। कहने में कोई कोर कसर न रखनी चाहिए। पर साथ ही यह भी समझ रखना चाहिए कि बिहार जिसको अपना पड़ोसी क्या बिलकुल अपना समझता है उसकी भाषा और साहित्य क्या उसका आचार, विचार, रीति व्यवहार सब कुछ ग्रहण किए हुए है। यह बात न तो सरकार या मिशनरियों के कारण हुई है और न बिहारियों के असंतोष, ईर्ष्या, विरक्ति आदि के कारण, बल्कि आपसे आप, स्वभावतः, बिना किसी प्रकार की दैवी या मानुषी प्रेरणा के हुई है। जहाँ तक हम जानते हैं, बिहारी बंगालियों से किसी प्रकार की ईर्ष्या नहीं रखते। बंगाली ही अपने मिथ्याभिमान में उन्मत्त होकर अनेक प्रकार के अनर्गल प्रलाप और व्यवहार किया करते हैं। बंगाली ही बैठे बैठे गिनती लगाया करते हैं कि कितने बंगालियों को सरकारी नौकरियाँ मिलीं, कितने मलेरिया में मरे, कितने बंगाली पागलखाने में गए, इत्यादि इत्यादि।

अब रही बंगालियों को 'भीरु' आदि समझना सो अपने अपने विश्वास की बात है। यह विश्वास धीरे धीरे विरुद्ध प्रमाण पाते पाते हट सकता है, गाली गलौज से नहीं। गाली तो भीरुता का ही एक चिह्न समझी जाती है। 'खोट्टा' कहनेवाले 'भीरु' भतखौओं को हिन्दुस्तानी उपेक्षा की दृष्टि से नहीं दया और सहानुभूति की दृष्टि से देखते हैं।

बड़े ही दुःख का विषय है कि आजकल के बंगाली आधुनिक हिन्दी की वृद्धि और उन्नति देख कर संतुष्ट नहीं होते। हिन्दी के प्रति सबसे पहला कोप [illegible] वालों का और उसके बाद दूसरा कोप बंगलावा[illegible] का है। गुजराती और महाराष्ट्र साहित्य-सेवी स[illegible] कभी हिन्दी पर कटाक्ष करते नहीं देखे गए और कभी उन्होंने इस प्रकार हिन्दी को दबाने का प्रयत्न किया। बंगाली एक तो बात का बतंगड़ बना[illegible] खूब जानते हैं, जरा सी बात को झंडे पर च[illegible] में बड़े सिद्ध-हस्त होते हैं। दूसरे अन्य प्रा[illegible] वालों को वे प्रायः तुच्छ और उपेक्षा की दृ[illegible] से देखते हैं। उनका यह दोष अभी ह[illegible] में बहुत बढ़ गया है। बंकिम-काल के बंग[illegible] साहित्य-सेवी ऐसे नहीं थे। हिन्दी के प्रति उन[illegible] नीति बहुत ही उदार थी। राष्ट्र-भाषा के पद[illegible] लिये वे हिन्दी को ही सबसे अधिक उपयुक्त सम[illegible] थे। बँगला को राष्ट्र-भाषा बनाने का स्वप्न तो [illegible] ही कल के बंगाली देखने लगे हैं। स्वर्गीय राजे[illegible] लाल मित्र, राजा राममोहनराय, पंडित ईश्वर[illegible] विद्यासागर, मि० आर० सी० दत्त आदि सभी हि[illegible] के बड़े पक्षपाती और पोषक थे। वे यह कभी [illegible] चाहते थे कि बँगला उचित और अनुचित स[illegible] रूपों से हिन्दी को हड़प कर जाय। आजकल [illegible] बात तो नहीं कह सकते, पर हाँ किसी स[illegible] प्रवासी-सम्पादक रामानंद बाबू के हिन्दी-सम्[illegible] विचार भी बहुत अच्छे थे। नागरीप्रचारिणी स[illegible] के गृहप्रवेशोत्सव के समय आपने काशी में [illegible] नागरी और हिन्दी-प्रेम का अच्छा परिचय दिया [illegible] उस समय आपने एक चतुर्भाषी पत्र निकालने का [illegible] विचार किया था और उसका सम्पादन बा० रा[illegible] कृष्णदास करनेवाले थे। अतः अब क्या यह [illegible] लिया जाय कि रामानंद बाबू के विचार बदल [illegible] अथवा वह नोट प्रवासी में बिना उनकी जान[illegible] के निकल गया?

बँगलावाले हिन्दी से द्वेष रखते और उसे [illegible] समझते हैं, इस बात का बहु अच्छा प्रमाण [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाल में सरस्वती ने दिया है। प्रयाग के पाणिनि आफिस से साहित्य-सम्बन्धी डाइरेक्टरी निकलती है। उसकी भूमिका में कई बातें ऐसी हैं जो बहुत खटकनेवाली हैं। पर सरस्वती-सम्पादक ने उन सबका उत्तर बहुत अच्छी तरह दे दिया है। आशा है, उससे बंगालियों की आँखें खुलने में बहुत कुछ सहायता मिलेगी। पर साथही इस अवसर पर हम यह भी कह देना चाहते हैं कि भारतवर्ष और गृहस्थ आदि कई ऐसे बंगला पत्र भी हैं जिनके हिन्दी-सम्बन्धी विचार बहुत ही उदार हैं और जिनके कारण बंगला तथा हिन्दीवालों में बहुत कुछ सद्भाव फैलने की सम्भावना है।

हिन्दी का प्रचार अब अच्छी तरह आरम्भ तो हो ही गया है, वह किसी के रोके रुक नहीं सकता। ऐसे समझदारों की गिनती बहुत ही कम होगी जो हिन्दी के अतिरिक्त किसी दूसरी देशी भाषा के राष्ट्र-भाषा होने की आशा रखते हों। ऐसी दशा में व्यर्थ आपस में वैमनस्य उत्पन्न करना ठीक नहीं है। सच पूछिए तो बँगलावालों को हिन्दी का बहुत ही उपकृत और कृतज्ञ होना चाहिए। जिन रवीन्द्र बाबू को वे "साहित्य-सम्राट्" कहते हैं उनकी कीर्त्ति का कारण वास्तव में हिन्दी काव्य ही है। गीतांजलि वैष्णव कवियों के हिन्दी-काव्य की ही कृपा का फल है और कबीर-कसौटी तो हिन्दी की सम्पत्ति ही है। तुलसीकृत रामायण के बँगला में तीन तीन अनुवाद निकल चुके हैं जिनसे बँगला-साहित्य की शोभा बढ़ती है। हिन्दी में अनुवादित अपने जिन थोड़े से बँगला उपन्यासों का बँगालियों को बड़ा अभिमान है, उनसे हिन्दी की कोई विशेष शोभा नहीं बढ़ी। और फिर कोई पूछे कि उनमें से कितने ग्रन्थ बंगालियों ने केवल अपने ही मस्तिष्क से निकाले हैं? अजी साहब, यह तो साहित्य का काम है, यह खूब मिल जुल कर होना चाहिए। अपनी अपनी भाषा की उन्नति सब लोग करें और एक दूसरे का साहित्य बढ़ाने में सहायक हों। अन्याय और बलपूर्वक दूसरी भाषा का गला घोंटना और उसका स्थान हड़पने का प्रयत्न करना प्रशंसनीय नहीं है।

नागरीप्रचारिणी सभा अथवा नागरीप्रचारिणी पत्रिका का किसी दूसरी भाषा या साहित्य के साथ किसी प्रकार का वैमनस्य, द्वेष या ईर्ष्या आदि नहीं है। और न किसी के साथ लड़ना भिड़ना या वादा-विवाद करना ही उसका उद्देश्य है। सभा या पत्रिका का ही क्या, किसी हिन्दी-सेवी का भी कभी ऐसा उद्देश्य नहीं रहा है। और न किसी सभ्य मनुष्य, संस्था या समाज का कभी ऐसा उद्देश्य होना चाहिए। हिन्दीवाले जितनी शान्ति और नम्रतापूर्वक अपना काम करते हैं, वह किसी से छिपा नहीं है। पर शायद अपनी इसी सिधाई के कारण वे समय समय पर दूसरों से ऐसी वैसी बातें भी सुनते हैं। अभी हाल ही में, गत वर्ष जब कि बर्दवान में वंगीय साहित्य-सम्मेलन हुआ था तब हिन्दीवालों के लिये बहुत कुछ कहने सुनने का अवसर था। क्योंकि यह बात प्रायः सभी लोग स्वीकार करेंगे कि महाराज बर्दवान से सहायता पाने का बंगला की अपेक्षा न्यायतः हिन्दी को ही अधिक अधिकार था; पर हिन्दीवालों ने उस समय चूँ तक न की। यदि किसी बंगला-भाषी श्रीमान् की संतान कलकत्ते के हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की उससे आधी भी सहायता करती जितनी कि महाराज बर्दवान ने बंगीय साहित्य-सम्मेलन की की थी, तो बहुत से बंगाली जमीन सिर पर उठा लेते। बल्कि यदि उसके सहायता करने से पहले ही बहुत से बंगाली उनकी सेवा में डेपुटेशन लेकर पहुँच जाते और उसे हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की सहायता करने से रोकने का प्रयत्न करते तो भी कोई आश्चर्य्य न था। पर हिन्दीवालों को स्वप्न में भी ऐसी बातों का ध्यान ही न आया। अस्तु। इस लेख के लिखने से हमारा अभिप्राय केवल यही है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि बंगाली लोग और विशेषतः प्रवासी सम्पादक की कोटि के लोग आगे से कुछ उदार हो जायँ और व्यर्थ बैठे बैठाए बेचारी हिन्दी से छेड़छाड़ न किया करें।

प्रेम-भवन पुस्तकालय।

गत बुधवार मिती मार्गशीर्ष शुक्ल ४-५ तदनुसार ता० २९ नवम्बर को प्रातःकाल लग भग ९ बजे श्रीमान् मि० एस० एच० फ्रीमेन्टल ने प्रेम-भवन, पुस्तकालय का निरीक्षण किया। लाला सीताराम बी० ए० तथा पुस्तकालय के कार्य्यकर्त्ताओं ने उनका स्वागत किया। लाला सीताराम बी० ए०, बा० सङ्गमलाल अग्रवाल एम० ए०, प्रो० कालीसहाय बी० एस सी०, प्रो० रामनमोंप्रसाद बी० ए०, बा० भगवानप्रसाद सिनहा बी० ए०, पं० लक्ष्मीशंकर अवस्थी, बा० बजरङ्ग बहादुर श्रीवास्तव, बा० बङ्किमचन्द्र राय वकील, बा० बैजनाथ रौल, बा० मङ्गलराम, रेवेन्ड जे घोष आदि सज्जन उपस्थित थे। सभापति का आसन लाला सीताराम बी० ए० ने ग्रहण किया था। आरम्भ में जगदीश नामक एक अल्प-वयस्क बालक ने ईश्वर-प्रार्थना का एक गान गाया। तत्पश्चात् सहायक मंत्री ने अभिनन्दन-पत्र पढ़ कलेक्टर साहब को अर्पित किया।

तदनन्तर उप-सभापति बा० सङ्गमलालजी ने पुस्तकालय का अर्थाभाव तथा स्थानाभाव दर्शाते हुए बतलाया कि भवन में इस समय २७३ हिन्दी पुस्तकें, ६२ उर्दू और ११२ अंगरेज़ी पुस्तकें योग ४४७; हैं तथा ४ दैनिक, ८ साप्ताहिक, २ पाक्षिक, और ३० मासिक कुल ४४ समाचार-पत्र आते हैं। तदुपरान्त मि० एस० एच० फ्रीमेन्टल ने पुस्तकालय-भवन का अवलोकन किया और उत्तर दिया कि अनेक संस्थाओं के आरम्भ में लोग बड़े उत्साह से कार्य्य करते हैं फिर उत्तरोत्तर उनका उत्साह तथा प्रेम घटता जाता है। ऐसा नहीं चाहिए। इसके पश्चात् उन्होंने सदस्यों का ध्यान आकर्षित किया कि जिसने जो कुछ चन्दा लिखा हो वह बराबर देते रहें। अन्त में उन्होंने स्थानीय फूलपूर की धर्मशाला का निरीक्षण किया जिसके पुस्तकालय के लिये स्थान मिलने के हेतु बा० सङ्गमलाल ने अपने व्याख्यान में प्रस्ताव किया था तथा निम्नलिखित निरीक्षण नोट लिखाः—

I was very glad to see this little enterprise started by some students to provide Library and Reading room for Mutthiganj. Such an institution seems to be badly required and if it can be put on a permanent footing it ought to secure much local support and increase and flourish. I gladly do what I can to provide it with more spacious accommodation which it badly requires and I am subscribing Rs. 5 to its funds.

(Sd.) S. H. FREMANTLE.

30th November, 191

भवन फूल-पत्तियों से भली भाँति सजाया गया था। उपस्थिति लगभग ८० के थी।

प्रयाग } वैद्यनाथ मि
स० मंत्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधारण सभा।

शनिवार तारीख २८ अक्तूबर १९१६ सन्ध्या के ५ बजे

स्थान—सभाभवन।

(१) बाबू रामचन्द्र वर्म्मा के प्रस्ताव तथा बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा के अनुमोदन पर बाबू शिवप्रसाद गुप्त सभापति चुने गए।

(२) गत अधिवेशन (तारीख ३० सितम्बर १९१६ का कार्यविवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।

(३) सभासद होने के लिये निम्नलिखित सज्जनों के आवेदनपत्र उपस्थित किए गए और स्वीकृत हुए:—

१—पंड्या पुरुषोत्तम भाईराम, गोला गली, सेलट जी की गली में, काशी १॥)

२—पंडित रविशंकर शुक्ल वकील, रायपुर ५)

३—पंडित द्वारकानाथ बी० ए० एलएल० बी० वकील दुर्ग ५)

४—पंडित हीरानन्द पाठक जुडीशल मोहर्रिर तहसील बाँसगाँव ज़ि० गोरखपुर १॥)

५—पंडित गंगादीन जी, ईश्वर गंगी, नई बस्ती, काशी १॥)

६—पंडित रामनाथ मिश्र गऊ मठ काशी १॥)

७—पुरोहित वेणीप्रसाद जी, राजिम सी० पी० १॥)

८—पंडित मनराखन व्यास ब्राह्मण पाड़ा राजिम १॥)

९—बाबू ब्रजभूषणलाल, जमीदार, कोमा, राजिम ३)

१०—बाबू देवीचरण निर्गुण बी० एस सी० एल एल० बी० वकील बालाघाट १॥)

११—बाबू शिवनारायणप्रसाद, ठि० मास्टर बाबू गिरिधरदास रईस, गोरखपुर १॥)

(४) निम्नलिखित सभासदों के इस्तीफे उपस्थित किए गए और स्वीकृत हुए।

१—बाबू ओंकारमल सराफ, कलकत्ता।

२—बाबू बिहारीलाल सराफ, रानीगंज।

३—बाबू शिवबिहारीलाल, देईपार, पो० असनहरा ज़िला बस्ती।

(५) पंडित जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी का इस्तीफा उपस्थित किया गया।

निश्चय हुआ कि इनसे प्रार्थना की जाय कि कृपा पूर्वक ये अपने इस्तीफे का कारण लिख भेजें।

(६) हिन्दी साहित्य सम्मेलन के लिये निम्न लिखित सज्जन प्रतिनिधि चुने गए:—

(१) बाबू राधारमण गुप्त (२) पंडित रामनारायण मिश्र बी० ए० (३) बाबू गौरीशंकरप्रसाद बी० ए० एलएल० बी० (४) बाबू शिवप्रसाद गुप्त (५) प्रोफेसर श्रीप्रकाश जी बारिस्टर (६) पंडित लक्ष्मणनारायण गर्दे (७) बाबू रामचन्द्र वर्म्मा (८) बाबू श्यामसुन्दरदास बी० ए० (९) पंडित रामचन्द्र शुक्ल (१०) बाबू जगन्मोहन वर्म्मा (११) बाबू कृष्णदेवप्रसाद वर्म्मा (१२) बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा (१३) पंडित गिरिजाकान्त ओझा (१४) पंडित ब्रजभूषण ओझा (१५) बाबू कालिदास माणिक (१६) मुन्शी भगवानदीन और (१७) पंडित जानकीशरण त्रिपाठी।

(७) निम्न लिखित पुस्तकें धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईं:—

बाबू लक्ष्मीनारायण गुप्त काशी
कर्णाटक जैन कवि
बादशाह का बुलावा
समर्थ गुरु रामदास
नेपोलियन बोनापार्ट
गुरु गोविन्दसिंह
आत्मवीरसुकरात
रंग की पुस्तक भाग १

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेल वार्निश, मोमबत्ती और साबुन बनाने की पुस्तक

स्वामी दयानन्द

महात्मा गोखले

स्वामी रामतीर्थ

महाराणा प्रताप

स्वामी विवेकानन्द

सुगन्धित साबुन बनाने की पुस्तक

श्रीयुक्त मेनेजर दामोदार प्रिंटिंग वर्क्स आगरा

उपनिषद् रहस्य

डूँगरपुर दरबार

विजय हजारा

उपनिषद् रहस्य कार्यालय कोंडा बागान हवड़ा

उपनिषद् रहस्य सं० १

Indian Antiquary for July 1916.

डेकेन कालेज पूना

Government Collections of Manuscripts

Physical Anthropology of the Lenape or Delawared and of the Eastern Indian General

भारत की गवर्न्मेन्ट

Fauna of British India Vol. VI.

(८) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई ।

प्रबन्ध-कारिणी समिति।

शुक्रवार ता० ३ नवम्बर १९१६ सन्ध्या के ५ बजे

स्थान–सभाभवन ।

(१) श्रीयुक्त बाबू श्यामसुन्दरदास जी सभापति चुने गए ।

(२) गत अधिवेशन (तारीख २७ अगस्त) का कार्य-विवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ ।

(३) पंडित रामनारायण मिश्र का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि सभा के उपसभापति होने के कारण उन्हें प्रबन्ध कारिणी समिति का सदस्य रहने की आवश्यकता नहीं है । इस कारण उनके स्थान पर बाबू शिवप्रसाद गुप्त [illegible] समिति के सदस्य चुने जाँय ।

निश्चय हुआ कि पंडित रामनारायण मिश्र [illegible] ने इस समिति से अपने पद त्याग करने का [illegible] कारण लिखा है वह ठीक नहीं जान पड़ता [illegible] उनका पद-त्याग-पत्र अस्वीकार किया जाय ।

(४) वेतन वृद्धि के लिये बाबू शम्भूप्रसाद एजे[illegible] का प्रार्थनापत्र उपस्थित किया गया ।

निश्चय हुआ कि उनका मासिक वेतन २५) [illegible] कर दिया जाय और तीन मास के अनन्तर उन[illegible] कार्य का विवरण समिति की सूचना के लिये उपस्थि[illegible] किया जाय ।

(५) पंडित व्रजवल्लभ मिश्र का पत्र उपस्थि[illegible] किया गया जिसके साथ उन्होंने वल्लभ हिन्दी कानू[illegible] कोश का कुछ अंश सभा की सम्मति के लि[illegible] भेजा था ।

निश्चय हुआ कि यह कोश बाबू गौरीशंक[illegible] प्रसाद जी के पास सम्मति के लिये भेजा जाय ।

(६) पंडित राजमणि त्रिपाठी के निम्नलिखि[illegible] प्रस्ताव उपस्थित किए गए अर्थात् भारत के [illegible] प्रदेशों के अंग्रेजी स्कूलों, संस्कृत पाठशाला[illegible] और प्राइवेट शालाओं के छात्रों की हस्तलि[illegible] परीक्षा सभा द्वारा हुआ करे । हिन्दी टा[illegible] राइटिंग और शार्ट हेण्ड राइटिंग की परीक्षा[illegible] भी हुआ करें, हिन्दी साहित्य सम्मेलन [illegible] परीक्षा की पढ़ाई का प्रबन्ध किया जाय और पा[illegible] पुस्तकें बिक्री के लिये प्रस्तुत रखी जाँय, का[illegible] में नार्मल स्कूल खुलवाया जाय, संस्कृत पाठशा[illegible] लाओं के लिये हिन्दी की पढ़ाई का एक स्कीम [illegible] दिया जाय, प्रत्येक जिले में शाखा सभाएँ स्थापि[illegible] की जाँय, संयुक्त प्रान्त के हर जिले में हिन्दी में [illegible] हुए अदालती फार्मों का स्टाक रखा जाय, अदाल[illegible] में हिन्दी के लेखक नियुक्त कराए जाँय, हिन्दी में स[illegible] से अधिक अर्जियाँ लिखने के लिये प्रदक और प्रशं[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्र दिए जांय और जिन पुस्तकों के नाम उन्होंने लिखे हैं उन्हें शीघ्र प्रकाशित कराने का उद्योग किया जाय।

निश्चय हुआ कि इनमें से अनेक प्रस्ताव ऐसे हैं जो हिन्दी-साहित्य सम्मेलन से सम्बन्ध रखते हैं अतः इन प्रस्तावों के विषय में सम्मेलन की स्थायी समिति से सम्मति माँगी जाय।

(७) पुस्तकालय के निरीक्षक का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि पुस्तकालय के लिये एक अलमारी का बनवाना आवश्यक है।

निश्चय हुआ कि इसके लिये ४०) स्वीकार किया जाय।

(८) स्वर्गवासी कुँअर जोधसिंह मेहता ने हिन्दी में सर्वोत्तम ग्रन्थ के लेखक को पुरस्कार देने के लिये जो द्रव्य प्रदान किया है उसके सम्बन्ध में सब कमेटी की सम्मति उपस्थित की गई।

निश्चय हुआ कि इसके लिये निम्नलिखित नियम बनाए जाँयः—

(क) कुँअर जोधसिंह मेहता ने जो १०००) रु० प्रदान किया है। उसके ब्याज से २००) रु० का "जोधसिंह पुरस्कार" दिया जाय। यदि ब्याज की आय २००) रु० से कम हो तो सभा अपने कोष से उसकी पूर्त्ति कर दे।

(ख) तीन वर्षों में जो सब से उत्तम ग्रन्थ हिन्दी में छपेगा और जिसकी प्रति इस सभा को भेजी जायगी उसे प्रति तीसरे वर्ष निश्चित करके उसके रचयिता को यह पुरस्कार प्रति तीसरे वर्ष दिया जाय।

(ग) पहला पुरस्कार १ जनवरी १९१७ से ३१ दिसम्बर १९१९ तक प्रकाशित होनेवाले ग्रन्थों के लिये दिया जायगा।

(घ) सभा एक समिति संगठित कर आए हुए ग्रन्थों पर सम्मति लेगी और उस पर विचार कर पुरस्कार देने के विषय में निश्चित करेगी।

(ङ) जो ग्रन्थ सभा में आवेंगे उनकी सूची एक अलग पुस्तक में बराबर लिखी जायगी।

(९) पंडित गौरीशंकर वाजपेयी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने कुछ नियमों पर उन सज्जनों से चन्दा वसूल करने के लिये लिखा था जिनका नाम सूची "ख" में लिखा हुआ है।

निश्चय हुआ कि उनके नियम स्वीकार नहीं किए जा सकते।

(१०) मध्य प्रदेश के शिक्षा-विभाग के डाइरेक्टर का ९ सितम्बर का पत्र सूचनार्थ उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि पंडित कामताप्रसाद गुरु को नियमों के अनुसार पूरे वेतन पर तीन मास की छुट्टी नहीं दी जा सकेगी।

(११) इण्डियन प्रेस के अध्यक्ष का १ नवम्बर का पत्र उपस्थित किया गया जिसके साथ उन्होंने गोस्वामी तुलसीदासजी के कुछ ग्रन्थ भेजे थे और लिखा था कि सभा के पुस्तकालय में इस ग्रन्थावली की जो प्राचीन प्रति है उसके अनुसार उनकी भेजी हुई प्रति का पाठ ठीक करा दिया जाय।

निश्चय हुआ कि सभा के पुस्तकालय में यदि कोई ऐसी प्रति हो तो वह इण्डियन प्रेस को भेज दी जाय।

(१२) बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ (क) व्यय के वाउचरों पर "उपमंत्री" के स्थान पर "मंत्री" के हस्ताक्षर हुआ करें। (ख) सभाभवन के फाटक के आगे से जो पत्थर म्युनिसिपेलिटी ने उठवा लिए हैं उन्हें फिर से लगवा देने के लिये म्युनिसिपेलिटी को लिखा जाय। (ग) कुछ दिनों के लिये एक ऐसा आदमी रख लिया जाय जो पत्रिका, ग्रन्थमाला और लेखमाला की फुटकर संख्याओं को छाँट दे और पुस्तकालय के अंग्रेजी विभाग की पुस्तकों की सूची ठीक कर दे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१३) वेतन-वृद्धि के लिये देवनन्दनसिंह और पंडित विशेश्वरनाथ तिवारी के प्रार्थनापत्र उपस्थित किए गए।

निश्चय हुआ कि इस समय इनके वेतन में वृद्धि नहीं की जा सकती।

(१४) निश्चय हुआ कि स्वर्गवासी कुँवर जोधसिंह मेहता के स्थान पर राजपूताने से रा बहादुर ठाकुर राजसिंह जी बेदला इस समिति के सदस्य चुने जाँय।

(१५) सभापति को धन्यवाद दे सभा वि जित हुई।

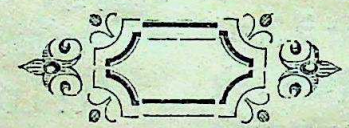

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Registered No. A 414 [संख्या ७—८

भाग २१]

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

जनवरी, फरवरी १९१७

सम्पादक—रामचन्द्र वर्म्मा ।

—:०:—

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल । बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल ॥
करहु विलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल । निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सब को मूल ॥
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार । सब देशन सों लै करहु, भाषा मांहि प्रचार ॥
प्रचलित करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न । राज काज दरबार में, फैलावहु यह रत्न ॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र ।

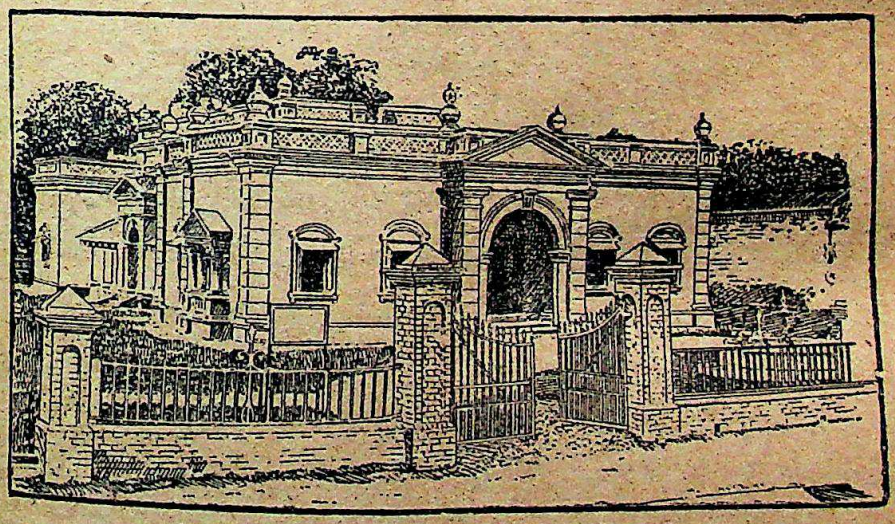

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित ।

श्री अपूर्वकृष्ण बोस द्वारा इंडियन प्रेस, प्रयाग में मुद्रित ।

वार्षिक मूल्य १॥)

प्रति संख्या =)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची।

(१) जयदेव का समय १४५
(२) स्वतंत्रता १५०
(३) पाश्चात्य तर्कशास्त्र १५४
(४) राष्ट्रलिपि १५५
(५) कोलम्बस की जल-यात्रा... ... १६३
(६) प्रतिमोक्ष सूत्र १६६
(७) राष्ट्र भाषा के गुण ... ... [illegible]
(८) वारों का क्रम ... ... [illegible]
(९) योगदर्शन ... ... [illegible]
(१०) पक्षी ... ... [illegible]
(११) सभा का कार्य्यविवरण ... ... [illegible]

पण्डित लक्ष्मीधरजी वाजपेयी

सम्पादित।

क्या आपको यह मालूम है कि,

हिन्दी-चित्रमय-जगत्

राष्ट्र-भाषा हिन्दी में उच्चश्रेणी का; हिन्दी-भाषा-भाषियों का अत्यन्त लाड़ला; मराठी, हिन्दी, अँग्रेज़ी, बँगला इत्यादिक भाषाओं के धुरन्धर लेखकों के लेख प्रकाशित करनेवाला; महाराष्ट्र में 'हिन्दी राष्ट्र-भाषा भवतु' का झंडा फहरानेवाला; सामयिक महत्त्वपूर्ण लेख, कविता तथा चित्रों के प्रकाशित करने में युगांतर प्रस्थापक; हिन्दी में अपने ढंग का सब से पहिला और अनूठा मासिक पत्र है?

यदि, नहीं,

तो आप उसे आज ही मंगाकर देखिये! निस्सन्देह आप उसकी अन्तरंग की चटक मटक पर मोहित होंगे और हिन्दी में ऐसे अनूठे पत्रप्रकाशन के साहस पर दांतों उँगली दबायँगे। पत्र की लागत के देखते मूल्य कुछ नहीं। केवल सादा संस्करण ३॥) राजसंस्करण ५॥) तिसपर भी विशेषांक उपहार में! एक प्रति का ।-), ॥)

पता—

मैनेजर, हिन्दी-चित्रमय-जगत्,

पूना सिटी।

—:०:—

सुघड़ दर्जिन।

(दूसरा संस्करण)

हिन्दी में अपने ढंग की यह पहली पुस्तक है। इसमें सब तरह के कपड़ों की सिलाई और कटाई आदि का वर्णन इतनी उत्तमता से किया गया है कि घर की साधारण स्त्रियाँ भी इसे पढ़ कर सब तरह के कपड़े अच्छी तरह काट और सी सकती हैं। समझाने के लिये इसमें ६०-७० चित्र भी दे दिए गए हैं। मूल्य केवल ॥)

पता—

मन्त्री, नागरी प्रचारिणी सभा—काशी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

भाग २१ | जनवरी, फरवरी १९१७. | संख्या ७—८

जयदेव का समय ।

[लेखक,—श्रीयुक्त पं० हरिप्रसाद जी पालधि बी० ए०]

श्रीयुत पं० गणपति जानकीराम दुबे महाशय ने जूलाई-अगस्त की नागरी-प्रचारिणी पत्रिका में कविवर जयदेवजी की एक छोटी सी जीवनी लिखी है। उसमें दुबेजी ने जयदेव का काल १२ वीं शताब्दी स्थिर किया है। पत्रिका के सम्पादक महाशय के अनुरोध से मैं जयदेव के काल के विषय में, जहाँ तक मुझको पता चला है, कुछ बातें आप लोगों की सेवा में भेंट करता हूं।

प्रोफेसर विलसन् महोदय ने लिखा है कि कवि जयदेव रामानन्दी संप्रदाय के थे और १४ वीं शताब्दी के शेषार्द्ध अथवा १५ वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में हुए होंगे। एलफिन्स्टन् साहब ने जयदेव को १४ वीं शताब्दी का कहा है। बाबू रजनीकान्त गुप्त महाशय ने, जिन्होंने वंग भाषा में कवि जयदेव की जीवनी लिखी है, उनको १३ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध अथवा १४ वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध का ठहराया है। प्रोफेसर लासेन का मत है कि जयदेव का जन्मकाल सन् ११०० और ११५० ईसवी के मध्य में है।

राजा लक्ष्मणसेन वंग देश (गौड़) के प्रसिद्ध राजा हो चुके हैं। उनके महल के राजद्वार पर एक शिला लेख मिला है जिस पर निम्न लिखित श्लोक खुदा हुआ है:—

गोवर्द्धनश्च शरणो जयदेव उमापतिः ।
कविराजश्च रत्नानि समितौ लक्ष्मणस्य च ॥

अर्थात्—गोवर्द्धन, शरण, जयदेव, उमापति और कविराज, महाराज लक्ष्मणसेन की सभा के रत्न थे।

मिथिला देश में प्रसिद्ध है कि जयदेव नाम के दो कवि हो गए हैं। इसलिये यह देखना है कि कौन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से जयदेव महाराज लक्ष्मणसेन की सभा के रत्न थे। इस झगड़े का निपटारा गीतगोविन्द ही से हो जाता है जिसमें निम्नलिखित श्लोक मिलता है:—

वाचः पल्लवयत्युमापतिधरः, सन्दर्भशुद्धिं गिरां
जानीते जयदेव एव, शरणः श्लाघ्यो दुरूहद्रुतेः।
शृङ्गारोत्तरसत्प्रमेय रचनैराचार्य गोवर्द्धनः,
स्पर्द्धा कोऽपि न विश्रुतः श्रुतिधरो धोयी कविः क्ष्मापतिः॥

अर्थात्—कवि जयदेव ने अपने सम सामयिक प्रसिद्ध कवियों का उल्लेख करते हुए अपनी प्रशंसा की है। इस श्लोक में जयदेव के नाम के साथ साथ गोवर्द्धन, शरण और उमापति के नाम आए हैं जो महाराज लक्ष्मणसेन की सभा के रत्न थे। इससे यह सिद्ध हुआ कि गीतगोविन्द ही के रचयिता जयदेव महाराज लक्ष्मणसेन की सभा के रत्न थे। यदि शिलालेख में उल्लिखित "कविराज" ही का नाम "धोयी" रहा हो तो सभा के पंच-रत्नों ही का उल्लेख दोनों श्लोकों में है। इससे यह सिद्ध हुआ कि कविवर जयदेव और महाराज लक्ष्मणसेन सम-सामयिक थे। यदि लक्ष्मणसेन का समय निर्द्धारित हो जाय तो जयदेव का काल भी स्वतः निर्द्धारित हो जाता है। महाराज लक्ष्मणसेन के राजत्वकाल के निर्द्धारण करने के पहले मैं "पत्रिका" के पाठकों का ध्यान "पृथ्वीराज रासो" के एक पद की ओर दिलाता हूं जिसमें कविवर जयदेव का नाम आया है। कवि चन्द बरदायी ने अपने पूर्व के प्रधान कवियों की स्तुति की है। उसने व्यासदेव से प्रारम्भ किया है और कालिदास इत्यादि का नामोल्लेख करते हुए आठवें स्थान में जयदेव की स्तुति की है। यथा,—

"जयदेव अट्ठं कवी कव्वि रायं।
जिनै केवलं कित्ति गोविन्द गायं॥

इससे यह स्पष्ट होता है कि मेरे लेख के नायक, गीतगोविन्द के रचयिता कविवर जयदेव ही की स्तुति में यह पद लिखा गया था। अतः यह स्वयं सिद्ध है कि वंगीय कवि जयदेव की ख्याति इतनी हो चुकी थी कि राजपूताने के सर्वोत्तम कवि पृथ्वीराज रासो के रचयिता, कविवर चन्द बरदाई ने उनको व्यासादिक की श्रेणी में रख कर उनके विषय में यह कहा कि उनका ग्रन्थ उक्त कवियों से उच्छिष्ट मात्र है। देखिए कि जयदेव की ख्याति किस मात्रा तक चढ़ी बढ़ी थी? प्राचीन काल में न रेल थी और न डाक ही का कोई सिलसिला था, केवल सौदागरी करनेवाले और एक राज्य से राज्यान्तर में घूमनेवाले साधु-संन्यासियों को छोड़ कर और कोई दूर देशों में जाता आता न था। इससे यह विचार करने की बात है कि गौड़ देश से राजस्थान तक कवि जयदेव की कीर्त्ति के पहुंचने में कितने वर्ष लगे होंगे; यदि ४० वा ५० वर्ष न लगे हों तो २० वा २५ वर्ष तो अवश्य ही लगे होंगे। चन्द कवि महाराज पृथ्वीराज के सम-सामयिक थे। टाड साहब ने राजस्थान में लिखा है कि शहाबुद्दीन गोरी ने संवत् १२४९ में पृथ्वीराज को परास्त किया था और इसी के कुछ आगे पीछे कवि चन्द ने रासो का लिखना भी प्रारम्भ किया होगा। इससे यह सिद्ध होता है कि सम्वत् १२४९ अर्थात् सन् ११९२ से बहुत पूर्व ही कवि जयदेव ने गीतगोविन्द लिखा होगा। इस विचार से यह कहना पड़ता है कि जिन महाशयों ने जयदेव का काल तेरहवीं, चौदहवीं और पंद्रहवीं शताब्दी में लिखा है वे सब भ्रम में पड़ गए हैं। जयदेव का काल १२ वीं शताब्दी के बाद हो ही नहीं सकता। जब रेल गाड़ी न थी और न डाक का प्रबन्ध था और न हजारों कापियाँ ही किसी पुस्तक की छप कर दूर दूर के देशों में पहुंच सकती थीं, और जब पुस्तकों का प्रचार हस्त लिखित प्रतियों ही पर निर्भर था तब क्या यह कहना अत्युक्ति होगा कि गीत गोविन्द का प्रचार राजपूताने में उसके लिखे जाने से कम से कम ५० वर्ष में हुआ होगा। यदि इस विचार में कुछ भी सत्यता हो तो गीत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोविन्द सन् ११४० के लगभग लिखा गया होगा और कविवर जयदेव का जन्मकाल ११०० सन् के होगा। सन् ११७२ के बाद तो गीतगोविन्द का लिखा जाना एक प्रकार से असम्भव सा जान पड़ता है। पाठक गण! यह मत भूलिए कि यह विचार केवल "रासो" के आधार ही पर है।

महाराज लक्ष्मणसेन महाराज वल्लालसेन के पुत्र थे और न केवल वंग देश पर वरन् आस पास के सब देशों पर उनका अधिकार था। महाराज विक्रमादित्य की तरह महाराज लक्ष्मणसेन ने भी अपना संवत् चलाया था जो आज तक मिथिला देश के पंचांगों में और और संवतों के साथ लिखा जाता है। यह तो सर्व विदित है कि महाराज विक्रमादित्य की सभा में नौ रत्न थे। ऊपर आपने देखा है कि महाराज लक्ष्मणसेन की सभा में नौ की जगह पांच ही रत्न थे। अब यह देखना है कि महाराज लक्ष्मणसेन का संवत् कब चला। मिथिला के पंचांगों से मालूम पड़ता है कि ईसवी सन् ११०५ में महाराज लक्ष्मणसेन के संवत् का प्रारम्भ हुआ था। चाहे यह ठीक हो या न हो परन्तु यह तो अनुमान किया जा सकता है कि जब लक्ष्मणसेन ने अपने आपको चक्रवर्त्ती महाराज समझा होगा तभी संवत् चलाया होगा और तभी महाराज विक्रमादित्य का अनुकरण करके अपनी सभा में पाँच रत्न भी नियुक्त किए होंगे। यदि महाराज लक्ष्मणसेन का संवत् सन् ११०५ ही में प्रारम्भ हुआ हो, जैसा कि मिथिला के पंचांगों से जान पड़ता है तो यह मानना पड़ेगा कि जयदेव ने गीतगोविन्द की रचना सन् ११०५ के पूर्व्व ही की होगी और उस दशा में कवि का जन्म-काल एकादश शताब्दी के शेषार्द्ध का मानना पड़ेगा। इस विचार में केवल यह त्रुटि है कि यह नहीं जान पड़ता कि किस आधार पर और कब से पंचांगवाले लक्ष्मणसेन के संवत् का प्रारम्भ ११०५ से मानने लगे हैं। आईन अकबरी के ग्रन्थकार को निश्चय इन पंचांगों की कुछ खबर न थी नहीं तो महाराज लक्ष्मणसेन का काल निर्द्धारण करने के समय इन पंचांगों का उल्लेख भी होता और आईन अकबरी का निर्द्धारित काल भी इन पंचांगों के अनुकूल होता; पर वास्तव में ऐसा नहीं है। मैं यह नहीं कहता कि आईन अकबरी के ग्रन्थकार का निर्द्धारित काल ठीक है, बल्कि मैं निश्चय रूप से यह कह सकता हूं कि आईन अकबरी में दिया हुआ काल ठीक नहीं है, क्योंकि "रासो" के आधार पर निर्द्धारित काल से वह एक दम भिन्न है। शहाबुद्दीन का काल मुसलमानी इतिहासों में निस्सन्देह रूप से मिलता है; जिससे पृथ्वीराज और चन्द वरदायी का काल भी स्थिर हो जाता है। चन्द ने जयदेव की स्तुति की है, जिससे जयदेव चन्द के पूर्व्व के स्थिर होते हैं, फिर आईन अकबरी को मान कर जयदेव को चन्द से १०० वर्ष के पीछे का कैसे माना जा सकता है।

आईन अकबरी के ग्रन्थकार ने लक्ष्मणसेन का काल इस भाँति दिया है:—

महाराज युधिष्ठिर के राज्यारंभ से वंग देश में क्षत्रिय राजाओं ने २४१८ वर्ष राज्य किया; फिर क्रमशः कायस्थ-वंशोद्भव राजाओं ने ५२०, ७१४ और ६९८ वर्ष तक राज्य किया। इसके अनन्तर वैद्य-कुलोद्भव महाराज सुखसेन और बल्लालसेन ने ५३ वर्ष राज्य किया था और तब महाराज लक्ष्मणसेन सिंहासनारूढ़ हुए थे। अर्थात् महाराज युधिष्ठिर के राज्यारंभ से २४१८+५२०+७१४+६९८+५३=४४०३ वर्ष पीछे महाराज लक्ष्मणसेन का राज्यारंभ हुआ था*। आईन अकबरी में यह भी लिखा है कि वह अकबरशाह के राज्य के ४० वें वर्ष में लिखी गई थी, जो युधिष्ठिराब्द ४६९६ और विक्रम संवत् १६५२ † में

* Ayeen Akbary—Translated by Francis Gladwin, Edited by Jagadis Mukhopadhyaya, B.A., Ed. 1897, p. 313-314.

† Ayeen Akbary, p. 223.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। अर्थात् अकबर शाह का राज्यारंभ युधिष्ठिराब्द ४६५६ और संवत् १६१२ में हुआ था। इससे यह सिद्ध होता है कि महाराज लक्ष्मणसेन का राज्यारंभ, अकबर शाह के राज्यारंभ से ४६५६—४४०३=२५३ वर्ष पहले हुआ था। यदि संवत् १६१२ में से २५३ घटा दें तो महाराज लक्ष्मणसेन के राज्यारंभ का काल निकल आवेगा, अर्थात् आईन अकबरी के अनुसार महाराज लक्ष्मणसेन का राज्यारंभ संवत् १३५९ (सन् १३०२) में ठहरेगा। पर यह समय मानने योग्य नहीं है।

आगे चल कर ऐसे और प्रमाण भी दिए जायँगे जिनसे यह सिद्ध हो जायगा कि आईन अकबरी के ग्रन्थकार को कुछ भ्रम हो गया था। जिन महाशयों ने आईन अकबरी को भ्रमशून्य मान कर केवल उसी के आधार पर जयदेव के काल का निर्णय किया है, उन्हीं लोगों ने जयदेव को चौदहवीं शताब्दी का कहा है।

महाराज लक्ष्मणसेन के पिता महाराज वल्लालसेन ने अपने राज्य-काल में 'दान सागर' और 'अद्भुत-सागर' नाम के दो ग्रन्थ रचे अथवा रचवाए थे। 'दानसागर' की एक प्रति इण्डिया आफिस में है, जिसमें निम्नलिखित वाक्य मिलता है:—

"निखिलचक्रतिलकश्रीमद् बल्लालसेनेन पूर्णे
शशिनवदशमिते शकवर्षे दानसागरो रचितः"

'शशिनवदशमिते' से १०९१ शक निकलता है। इस प्रति में अंकों में भी १०९१ शक वर्ष दिया हुआ है। 'दानसागर' की एक प्रति बाबू नगेन्द्रनाथ वसु के पुस्तकालय में भी है। उसमें भी ऊपर लिखा हुआ वाक्य मिलता है और साथ ही निम्नलिखित वाक्य भी मिलते हैं:—

रवि भगणाः शरशिता ये भूता दानसागरस्यास्य
क्रमशोऽत्र सम्परि दानुदाद्या वत्सराःपंच।
तदेवं एकनवति अधिक वर्ष सहस्रारेन्विते
शाके संवत्सराः पतन्ति विश्वपादारभ्यच।

अर्थात् इन दोनों प्रतियों के अनुसार दानसागर १०९१ शाका में रचा गया था। 'समयप्रकाश' नामक ग्रंथ में लिखा है कि 'दानसागर' के रचे जाने के तीन वर्ष पीछे महाराज लक्ष्मणसेन सिंहासनारूढ़ हुए थे अर्थात् १०९४ शाका में वे राजा हुए थे। आज शाका १८३८ और अँगरेजी सन १९१७ है और इन दोनों का अन्तर प्रायः ७८ वर्ष का है। इसलिये यदि १०९४ शाका में ७८ वर्ष जोड़ दिए जायँ तो महाराज लक्ष्मणसेन के राज्यारम्भ का ईसवी सन् निकल आवेगा जो ११७२ होता है। यदि राज्यारम्भ के समय अथवा इससे कुछ पीछे महाराज लक्ष्मणसेन ने जयदेव को अपनी सभा का रत्न बनाया हो तो यह सिद्ध हो जायगा कि सन् ११७२ के पूर्व ही जयदेव ने गीतगोविन्द की रचना की थी और उनकी ख्याति और प्रतिष्ठा इतनी हो चुकी थी कि वह राजसभा के रत्न चुने जाने योग्य समझे गए थे। कितने दिन पूर्व गीतगोविन्द रचा गया था यह केवल अनुमान किया जा सकता है, सिद्ध केवल इतना ही होता है कि ११७२ सन् से पूर्व ही गीतगोविन्द रचा गया। पाठक देखें कि दानसागर के आधार पर जो समय जयदेव का निकलता है वही समय टाड साहब के 'राजस्थान' और 'पृथ्वीराज रासो' के आधार से भी निकला था। यह दोनों प्रमाण एक दूसरे से एकदम निराले हैं, इसलिये एक दूसरे को पुष्ट करते हैं और आईन अकबरी के मत का समर्थन करते हैं।

(नोट—दानसागर की और भी प्रतियाँ मिली हैं जिनमें ऊपर लिखे हुए वाक्य नहीं मिलते; जिससे यह संदेह किया जा सकता है कि ऊपर लिखे हुए वाक्य उक्त प्रतियों के लेखकों ने अपनी जानकारी से दिए हैं। यह भी हो सकता है कि जिन प्रतियों में ये वाक्य नहीं मिलते उनमें से ये खण्डित हो गए हों। कुछ ही क्यों न हो, यह तो स्पष्ट ही है कि लेखकों के समय या तो पुरातन प्रतियों में, सब में नहीं तो किसी किसी में तो अवश्य, ये वाक्य पाए जाते थे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

या ऐसी किम्वदन्ती थी या कोई ऐसा प्रमाण उपस्थित था जिसके आधार पर लेखकों ने ग्रन्थ की समाप्ति पर उक्त वाक्यों को अपनी अपनी प्रतियों में लिख दिया।

बंबई गवर्नमेंट के पुस्तकागार में अद्भुतसागर की एक प्रति है जिसमें निम्न-लिखित श्लोक मिलता है।

खनवखऐन्दव अब्दे आरेभे अद्भुतसागरम्।
गौड़ेन्द्रकुञ्जरालान स्तम्भबाहुर्म हीपतिः॥

ख-नव-ख-ऐन्दव से १०९० निकलता है। अर्थात् गौड़ेन्द्र महाराज वल्लालसेन ने १०९० शाका में 'अद्भुतसागर' नाम के ग्रन्थ की रचना प्रारम्भ की। 'दानसागर' १०९१ शाका में संपूर्ण हुआ था, अर्थात् ये दोनों ग्रन्थ साथ ही साथ रचे गए थे। इससे यह सिद्ध होता है कि जब बल्ललासेन १०९० शाका अर्थात् ११६९ सन् में जीवित थे तब १३०२ सन् में लक्ष्मणसेन राज्यारंभ नहीं कर सकते थे। 'दानसागर' और अद्भुतसागर भी एक दूसरे को पुष्ट करते हैं, इससे दृढ़ता के साथ कहा जा सकता है कि आईन अकबरी में दिया हुआ काल ठीक नहीं है।

राजा शिवसिंह का दिया हुआ एक दानपत्र मिला है जिसके अनुसार शिवसिंह ने मिथिला के प्रसिद्ध कवि विद्यापति को विसापि नाम का ग्राम दान दिया था। इस ताम्रपत्र में निम्न-लिखित श्लोक हैं:—

अब्दे लक्ष्मणसेनभूपतिमतेवह्निग्रहद्वयङ्किते
मासे श्रावणसंज्ञके मुनितिथौ पक्षे बलक्षे गुरौ॥
वाग्वत्यास्सरितस्तटे गजरथेत्याख्या प्रसिद्धेपुरे
दिस्सोत्साहविवृद्धिबाहुपुलकः सभ्याय मध्ये
शुभम्।

इसी ताम्रपत्र के शेष में—

"सन् ८०७ संवत १४५५ शाके १३२१ शुभमस्तु।" लिखा हुआ है। अर्थात् इस ताम्रपत्र के अनुसार लक्ष्मणसेनाब्द २९३ और संवत् १४५५ और शाका १३२१ एक हैं। इसलिये यदि संवत् १४५५ में से २९२ घटा दिया जाय तो १४५५—२९२=११६३ बचा। अर्थात् उससे यह सिद्ध होता है कि संवत् ११६३ (सन् ११०६) में लक्ष्मणसेन का संवत् जारी हुआ था। यदि महीनों की कसर निकाल दी जाय तो यह भी कहा जा सकता है कि मिथिला देश के पंचांगों में दिया हुआ सन् ११०५ राजा शिवसिंह के दानपत्र के आधार पर निकले लक्ष्मणाब्द से मिल जाता है। पाठक देख चुके हैं कि दानसागर के आधार पर लक्ष्मणाब्द का आरंभ सन् ११७१ में सिद्ध हुआ था। इन दोनों सनों में ६५ वर्ष का अन्तर है। क्यों यह अन्तर हुआ, मैं अब तक नहीं कह सकता; और कौन सा प्रमाण अधिक पुष्ट है इस की जाँच, यदि सम्भव हुआ तो, किसी दूसरे लेख में करूँगा। कोई कोई शिवसिंह के दानपत्र को जाली कहते हैं। वे क्यों उसे जाली कहते हैं इसकी जांच करने का अवसर मुझको अब तक नहीं मिला है। यदि भविष्य में मिला तो जांच कर जो सिद्ध हुआ वह पत्रिका के पाठकों की सेवा में फिर भेंट करूँगा।

पं० गणपति जानकीराम दुबे महाशय ने अपने लेख में महाराज लक्ष्मणसेन का राज्यारंभ संवत् ११७० अर्थात् सन् १११३ लिखा है। किस आधार पर उक्त महाशय ने ऐसा लिखा है, मैं नहीं जानता। डाक्टर कीलहार्न ने लक्ष्मणसेन का राज्यारंभ सन् १११८ बतलाया है।

दुबे जी ने आशा दी है कि वे जयदेव के विषय में फिर कुछ लिखेंगे। यदि वह कृपा करके अपने भावी लेख में यह भी लिखें कि किस आधार पर उन्होंने महाराज लक्ष्मणसेन का काल संवत् ११७० स्थिर किया है तो मैं अत्यन्त अनुगृहीत होऊँगा। यह भी नहीं मालूम होता कि कवि जयदेव की जीवनी में, जिसे दुबेजी ने लिखा है, उनका महाराज लक्ष्मणसेन की सभा के रत्न होने का उल्लेख क्यों नहीं किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया है। क्या जयदेव महाराज लक्ष्मण को छोड़ कर राजा क्रौंच की सभा में चले गए थे ?

—:०:—

स्वतन्त्रता।

[लेखक—श्रीयुक्त बाबू शारदाप्रसाद एम० ए०, वकील हाईकोर्ट।]

राजनीति के कुछ विशेषज्ञों का मत है कि स्वतन्त्रता बिना स्वाधीनता के असम्भव है। उनका कथन है कि जब कोई मानव-समाज अपने राजनीति-सम्बन्धी प्रबन्धों के लिये किसी दूसरे बाहर के समाज वा दल के आश्रित रहेगा तब उसके लिये स्वतन्त्रता नहीं हो सकती। अपनी सामाजिक आवश्यकताओं के पूरे होने के लिये भी स्वाधीनता होनी चाहिए। यह सिद्धान्त सर्वथा यथार्थ नहीं है। जो स्वतंत्रता केवल ख़याली हो उससे और उस स्वतंत्रता से जो साधारण रीति से मनुष्यों की स्थिति देखते हुए सम्भव है, बड़ा भेद है। समाज में प्रत्येक व्यक्ति तब ही पूरा स्वतंत्र हो सकता है जब मनुष्यों का परस्पर एक दूसरे के साथ सम्बन्ध न हो।

समाज में एक व्यक्ति दूसरे का अनेक प्रकार से आश्रित रहता है। एक दूसरे के साथ इस प्रकार जो सम्बन्ध रहता है उसके कारण कुछ अधिकार और कुछ कर्त्तव्य उत्पन्न हो जाते हैं। यदि अधिकारों के विचार से बहुत से अंशों में मनुष्य स्वतंत्र हो जाता है तो जो कर्तव्य उत्पन्न होते हैं उनसे वह बँध भी जाता है। जैसे उदाहरण की रीति से देखिए। हर आदमी को अधिकार है कि वह अपने आराम के लिये अपने मकान में हवा या रोशनी का प्रबन्ध जिस प्रकार चाहे, करे। लेकिन समाज में उसके पास या साथ जो लोग रहते हैं उनके आराम का भी उसको ध्यान रखना ही पड़ेगा। इसी प्रकार से अपने सब कामों में मनुष्य को रोक टोक या बाधाएं है। समाज में रहने के लिये व्यक्ति और मनुष्य के मध्य में एक प्रकार का प्रतिबंध समझा जाता है। इस प्रतिबंध की यद्यपि दूसरे निश्चित साधारण प्रतिबंधों की भांति कोई लिखा पढ़ी नहीं होती तो भी कानून के बरताव के लिये यह बिना लिखा पढ़ा हुआ प्रतिबंध भी, लिखे हुए प्रतिबन्धों की तरह ही समझा जाता है। यदि दो व्यक्तियों के मध्य में कोई लिखित प्रतिबंध हो और उसकी कोई शर्त तोड़ दी जाय तो उस शर्त के तोड़नेवाले व्यक्ति को अदालत से दंड दिया जाता है। इसी प्रकार समाज और व्यक्ति के मध्य में भी शर्तें समझी जाती हैं। इनको तोड़ कर भी व्यक्ति बिना दंड पाए नहीं बच सकता। ये शर्तें क्या हैं इनको राजनीति और कानून के विशेषज्ञों ने निश्चित किया है। यह स्पष्ट है कि समाज में जो शासक होता है उसकी आज्ञा का पालन आवश्यक है। बिना शासक के एक व्यक्ति का दूसरे के साथ संबंध स्थापित नहीं किया जा सकता। स्वच्छन्दता से रहने के लिये यह बात आवश्यक है कि एक व्यक्ति को दूसरा कष्ट न दे। मानुषी स्वभाव में स्वार्थ प्रबल है। इसके कारण स्वाभाविक रीति से अपनी लाभदायक और हितकारी वस्तुओं के प्राप्त करने में मनुष्य दूसरे की हानि प्रायः नहीं देखता। इस प्रकार की चेष्टाओं से केवल धन और शरीर की सुस्थिति ही असम्भव है बल्कि उसी व्यक्ति के पूर्ण सुख में भी बाधा पड़ने की सम्भावना है। ऐसी दशा में यह विदित होता कि स्वतंत्रता से हमको क्या तात्पर्य्य समझना चाहिए। समाज के हित के साथ जहाँ तक स्वतंत्रता सम्भव है वहाँ तक व्यक्ति उसको प्राप्त कर सकता है। जिन कार्य्यों से किसी प्रकार समाज को हानि पहुँचने की शंका या सम्भावना हो उनको बिलकुल ही ग्रहण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना होगा। इन सिद्धान्तों के अनुसार, पाश्चात्य-समाज-शास्त्र के ज्ञाताओं ने प्रसिद्ध विद्वान् मिल्टन के विख्यात निबन्ध "एरियो पेगेटिका" के विचारों को ध्यान देने योग्य नहीं समझा।

यद्यपि उक्त विचार-पूर्ण ग्रन्थ में स्वतन्त्रता को पूर्ण सीमा तक फैलाने के लिये अनेक युक्तियाँ बताई गई हैं, तथापि मनुष्यों में जिस क्रम से समाजों आदि की वृद्धि होती है, उसके अनुसार ये सब युक्तियाँ यथार्थ नहीं सिद्ध होतीं। तथापि इङ्गलैन्ड के साहित्य और समाज पर सुकवि मिल्टन के इस निबन्ध का बड़ा प्रभाव पड़ा। न केवल गद्य के लेखकों ने ही बहुत से अंशों में इसका अनुकरण किया, बल्कि पद्य की रचनाओं में भी आदर सहित इसके सिद्धांत ग्रहण किए गए। मिल्टन से इस सिद्धान्त को बड़ी ही दृढ़ युक्ति से पेश किया है कि जाति और समाज की उन्नति बिना व्यक्ति की पूर्ण स्वतन्त्रता के नहीं हो सकती। उस का कथन है कि—"समुद्र या पहाड़ों से बिलग किए जाने से मनुष्य वस्तुतः एक दूसरे से इतने भिन्न या अलग नहीं हो जाते कि उनमें कोई सम्बन्ध ही न रह जाय। जो ऐसा समझते हैं वे बड़ी भूल करते हैं। मनुष्य चाहे पश्चिमी समुद्र के तट पर बसते हों और चाहे पूर्वीय समुद्र के तट पर, उनके पारस्परिक स्नेह और भ्रातृ-भाव में कोई अंतर न होना चाहिए। मिल्टन का कथन है कि यह सिद्धान्त किसी प्रकार उचित नहीं कहा जा सकता कि अपने देश में स्वतन्त्रता को यथार्थ कहें और अन्य देशों में क्रूरता का व्यवहार करके स्वतन्त्रता को असंगत ठहरावें। प्रसिद्ध कवि वर्ड्स्वर्थ ने भी अपनी कविता में मिल्टन के इन उच्च विचारों का पोषण और समर्थन किया है। वह कहता है कि किसी जाति के लिये इससे अधिक और कौन सी शोचनीय दशा हो सकती है कि वह स्वतंत्रता छोड़ कर अपने को बँधुए के समान मिथ्या सुख, आलस्य, निरुत्साह और निश्चेष्टता आदि से दृढ़ की हुई जंजीरों से जकड़ कर रखे। इङ्गलैन्ड कभी किसी विजेता के आगे अपना सिर न झुकाएगा, क्योंकि उसका इन सिद्धान्तों पर ध्यान है और उनके अनुसार वह आचरण भी करता है। प्रत्येक जाति को अपने पिछले महत्त्व का अभिमान होना चाहिए, क्योंकि उस महत्त्व के वर्णन से उसके जातीय इतिहास भरे हुए हैं। उस जाति को इस अभिमान के साथ इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि उसकी भावी स्थिति समयानुसार हर तरह ठीक रहे।" वर्ड्स्वर्थ के इन सर्वसम्मत सिद्धान्तों से सामान्यतः किसी को विरोध नहीं हो सकता। सच तो यह है कि स्वतंत्रा सभ्यता के साथ साथ बढ़ती है। सभ्यता का इतिहास, सच पूछिए तो, स्वतंत्रा का ही इतिहास है। वर्तमान समय में पाश्चात्य देशों में सभ्यता की जो उन्नति दिखलाई पड़ती है उसका इतिहास ध्यान देने योग्य है। उसके देखने से विदित होता है कि व्यक्ति की स्वतंत्रता प्राप्त करने में जो चेष्टाएं की गईं उन्हीं के कारण समस्त जाति की उन्नति हुई। इस सम्बन्ध में प्रायः यह प्रश्न होता है कि जंगली जातियों में व्यक्तिगत स्वतंत्रता तो उपस्थित रहती है परन्तु उनमें सभ्यता का नितान्त अभाव क्यों होता है? परन्तु वस्तुतः ऐसा नहीं है। स्वतंत्रता का जो वास्तविक आशय होता है उसका इन जंगलियों की स्वतंत्रता में अभाव होता है। इन लोगों में व्यक्तिगत धन और जीवन की सुरक्षा नहीं होती। इन जंगलियों में यह भी देखा जाता है कि दल का जो शासक होता है वह उस दल के व्यक्तियों के साथ मनमाना अत्याचार कर सकता है। ऐसी दशा में स्पष्ट है कि व्यक्ति की स्वतंत्रता नाम मात्र की हो सकती है। सामाजिक और आत्मिक गुणों के उपार्जन के लिये जिस स्वतंत्रता की आवश्यकता होती है, वह इन जंगलियों में बिलकुल नहीं होती। और सभ्यता के लिये भी आत्मिक और सामाजिक गुणों में बहुत वृद्धि की आवश्यकता होती है। सभ्यता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की ओर व्यक्ति की जितनी उन्नति हो, उसके लिये उतनी ही स्वतंत्रता की प्राप्ति भी समझनी चाहिए। अर्थात् व्यक्ति की स्वतंत्रता केवल उसके शरीर की स्वतंत्रता से सम्बन्ध नहीं रखती। उसके लिये आन्तरिक या मानसिक सद्गुणों का उपार्जन भी आवश्यक है। इसी से बाइबिल में कहा है कि केवल सदाचरण ही एक ऐसा मार्ग है जिस पर चल कर कोई जाति वा समाज उन्नति के शिखर पर पहुँच सकता है। सभ्यता के लिये व्यक्ति को जिस स्वतंत्रता की आवश्यकता होती है उसके कारण सदाचरण और शिक्षा ही हैं। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति के मानसिक तथा व्यावहारिक गुणों की पूर्ण उन्नति करना है। इसके लिये व्यक्ति को अपनी स्वच्छंद वृत्ति के अनुसार आचरण करने का अधिकार (Voluntarism) होना चाहिए। जिन समाजों में जाति की प्रथा प्रचलित है और एक जाति स्वयं श्रेष्ठ बन कर दूसरों के ऊपर दबाव डाल सकती है, स्पष्ट है कि उन समाजों में स्वच्छन्दाचार का अभाव है। कुछ पश्चात्य विद्वानों का मत है कि हिन्दू जाति की पूर्ण उन्नति में यही बात बाधक है। इसमें संदेह नहीं कि यदि हिन्दू जाति में आत्मिक और बुद्धि सम्बंधी पूर्ण उन्नति न होती तो इस बाधा से बहुत कुछ हानि की सम्भावना थी। यह अवश्य है कि इस जाति-प्रथा के कारण हमारी सभ्यता की वृद्धि में कुछ दोष और बाधाएँ उत्पन्न हो गई हैं। परन्तु अपने पूर्वजों की सभ्यता और उसका महत्त्वपूर्ण इतिहास सदा पूर्णतया हमारे ध्यान में रहता है। हिन्दू जाति का प्रत्येक बालक पूर्व संचित आत्मिक शक्ति का अंश अपने साथ ले कर पैदा होता है। यह शक्ति उसकी सृष्टि में होती है। और जैसा कि वर्ड्स्वर्थ ने वर्णन किया है, यही प्राकृतिक बुद्धि, यही स्वाभाविक विचार और पूर्व-महत्त्व का यही ध्यान उसको भावी उन्नति की ओर अग्रसर होने के लिये प्रेरणा करेगा। इसी कारण हिन्दू जाति स्वयं अपने बाधक दोषों को दूर करके पाश्चात्य सभ्यता और वर्तमान आवश्यकताओं के अनुसार उन्नति कर रही है। अस्तु, अब हम फिर अपने विषय की ओर लौटते हैं। जैसा कि हमने आरम्भ ही में कहा है, स्वतंत्रता और स्वाधीनता के मध्य में, बहुतेरों का ध्यान है कि, एक बहुत ही आवश्यक और अनिवार्य्य सम्बंध है। अर्थात् उनका कथन है कि व्यक्ति की सभ्यता के लिये जैसी स्वतंत्रता की आवश्यकता होती है, वह तभी हो सकती है जब कि समाज स्वाधीन हो और अपने से पृथक् किसी पराए शासक की अधीनता में न हो। उन्नीसवीं शताब्दी के इंगलैन्ड के शेली और बैरन नामक कवियों ने भी अपनी अपनी कविताओं में इस सिद्धान्त का भली भाँति वर्णन किया है। फ्रांस देश में सन् १७८९ ईसवी में जो घोर परिवर्त्तन हुआ था और जिसमें शासक दल के बहुतेरे लोगों को मार कर प्रजा ने अपने हाथ में शासन ले लिया था, उस उपद्रव के विरुद्ध भी बहुतेरों ने लिखा है। परन्तु उक्त सुकवियों के मतानुसार सामान्य प्रजा पर जो दबाव रहता है उसके हटाने के लिये बिना तलवार चलाए काम नहीं चल सकता; जिस दबाव से बेचारे लोग कष्ट पाते हैं, उससे उनके उद्धार की और कोई युक्ति नहीं है। मध्यम श्रेणी के सभ्य लोग अपनी स्वतंत्रता में मग्न रहते हैं। बेचारे दीन-दुखियों को कौन पूछता है और उनकी कौन परवा करता है। मैरेडिथ आदि अन्य अंगरेज़ी सुकवियों ने भी इसी मत का समर्थन किया है। पर प्रसिद्ध सुकवि लार्ड टेनिसन को इस मत से विरोध है। उनके कथनानुसार क़ानून और रस्म रवाज का आदर स्वतंत्रता के साथ ही साथ बढ़ना चाहिए। राजनीति के बहुतेरे प्रामाणिक ज्ञाता टेनिसन के इस सिद्धान्त से सहमत हैं। उनके कथनानुसार प्रजातंत्र राज्य में यह बड़ा दुर्गुण है कि लोगों में निरादर का भाव बढ़ता जाता है। गत और वर्त्तमान समय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यवस्थाओं और संस्थाओं को व्यक्ति तुच्छ समझने लगता है। ऐसी दशा में सभ्यता के मुख्य अंग आत्मिक उन्नति की सम्भावना जाती रहती है। परन्तु यह भी अब एक आदृत सिद्धान्त हो गया है कि जातियों की उन्नति का मुख्य उद्देश्य प्रजातंत्र राज्य की प्राप्ति होना चाहिए। इस कारण उत्तम प्रथा यही समझी जाती है कि प्रजातंत्र और एक-तंत्र (किसी अन्य एक शासक द्वारा शासन) की दोनों विधियों को सम्मिलित कर के शासन की एक नई प्रथा निकाली जाय। अर्थात् प्रजा को वे समस्त अधिकार दिए जायँ जो प्रजातंत्र राज्य में प्राप्त हो सकते हैं। परन्तु साथ ही एक ऐसा बन्धेज भी कर दिया जाय जिससे वे शासक के अधिकारों में हस्त-क्षेप न कर सकें। उनके कथनानुसार एक शासक का आधिपत्य उत्तम है, चाहे उसको बिना प्रजा की सम्मति के कोई कार्य्य करने का अधिकार न हो। इस ध्यान से उनके कथनानुसार इंगलैन्ड की शासन-प्रणाली जिसमें शासक का आधिपत्य और प्रजातंत्र राज्य दोनों मिले हुए हैं, व्यक्ति के स्वतंत्रता-सम्बन्धी सद्गुणों की उन्नति और वृद्धि के लिये बहुत उप-योगी है। ऐसे राज्य में आत्मिक गुणों की भी उन्नति होती है क्योंकि एक शासक के प्रति भक्ति होने के कारण शुद्ध वृत्तियाँ उत्पन्न होती हैं। फ्रांस और अमेरिका में जहाँ प्रजा-तंत्र राज्य प्रणाली प्रच-लित है, राजभक्ति के अभाव के कारण आत्मिक तथा धार्मिक उन्नति की ओर पूर्णतया ध्यान नहीं रखा जाता। इंगलैन्ड में धार्मिक वृत्तियों की शिक्षा, राजभक्ति की शिक्षा के साथ साथ दी जाती है। यद्यपि समयानुसार निरादर भाव का दोष अँग-रेजों में भी है, परन्तु वह औरों से कम है।

सारांश।

ऊपर के कथन से यह स्पष्ट है कि बिना सभ्यता के किसी जाति की उन्नति नहीं हो सकती। इस सभ्यता के लिये सामाजिक और आत्मिक दोनों प्रकार के सद्गुणों का उपार्जन आवश्यक है।

व्यक्ति इन गुणों का उपार्जन नहीं कर सकता जब तक कि वह स्वतन्त्र न हो। इसके लिये व्यक्ति को समाज के हितानुसार स्वच्छन्द वृत्ति से आचरण करने का अधिकार होना चाहिए। और राजभक्ति के कारण आदर भाव और दूसरे उत्तम विचारों की उन्नति होती है इस कारण समाज में एक शासक का आधिपत्य भी होना चाहिए। परन्तु प्रजा के अधिकार की वृद्धि स्वतन्त्रता की क्रमशः वृद्धि के साथ साथ होती है और इसलिये शासन संबंधी प्रबन्धों में प्रजा को भी पूर्ण अधिकार होना चाहिए। अपने इङ्गलैन्ड के इतिहास में मेकाले ने कहा है कि इस इतिहास से विदित है कि वस्तुतः स्वतन्त्रता की जो समाज के हित के लिये आवश्यक है, क्रमशः वैसी ही उन्नति करनी चाहिए जैसी इङ्गलैन्ड देश में हुई है। उस देश में प्रजा की स्वतन्त्रता की क्रमशः वृद्धि ऐसी प्रथा से हुई है कि उसके कारण राजभक्ति और राजा-धिपत्य में कोई बाधा नहीं पड़ी है और न व्यक्तिगत सद्गुणों में ही कोई कमी हुई है।

—:o:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाश्चात्य तर्क-शास्त्र।

[लेखक,—श्रीयुत बा० हरिहरनाथ बी० ए०]

(पृष्ठ ६३ से आगे।)

हेत्वाभास।

साधारणतः तर्क के किसी नियम-भङ्ग को हेत्वाभास कहते हैं। अथवा हेत्वाभास वहाँ होता है जहाँ ऊपर से देखने में तो ठीक अनुमान का स्वरूप होता है परन्तु वस्तुतः वह शुद्ध नहीं रहता। प्रधान हेत्वाभास ये हैं:—

(जिन हेत्वाभासों का उल्लेख न्याय-नियम के पाठ में किया गया है उनको यहाँ नहीं लिखा।)

१. वाक्छल (द्व्यर्थकभाषण)—ऐसे शब्दों का प्रयोग करना जिनके एक से अधिक वा सन्दिग्ध अर्थ हों। जैसे:—महादेव हरि हैं, बन्दर हरि हैं, अतः महादेव बन्दर हैं।

२ संकलन—यह हेत्वाभास तब होता है जब पूर्वावयव में किसी जातिवाचक शब्द का प्रयोग उस जाति के अलग अलग व्यक्ति को सूचित करने के लिये किया गया हो और संहार में उसका प्रयोग उस जाति के सम्पूर्ण व्यक्तियों को सूचित करने के लिये किया जाय।—जैसे:—मेघदूत, शकुन्तला तथा ऋतु-संहार एक एक दिन में पढ़े जा सकते हैं, और ये सब कालिदासकृत काव्य हैं, अतः कालिदासकृत (सब) काव्य एक एक दिन में पढ़े जा सकते हैं।

३. व्यवकलन—(संकलन का उलटा) जिस शब्द का संयोग जाति के सम्पूर्ण व्यक्ति को सूचित करने के लिये किया गया हो उसका प्रयोग प्रत्येक व्यक्ति को सूचित करने के लिये किया जाय। जैसे:—कालिदासकृत काव्य एक एक दिन में नहीं पढ़े जा सकते, मेघदूत भी कालिदासकृत है अतः वह भी एक दिन में नहीं पढ़ा जा सकता।

४. अलङ्कारजन्य—जैसे:—राम का मुख चन्द्र के समान है, चन्द्र में कालिमा है, अतः राम के मुख में भी कालिमा है।

५. उपाधि—यह हेत्वाभास तब होता है जब (१) साधारण नियम को विशेष नियम समझने लगते हैं (२) विशेष नियम को साधारण अथवा (३) एक विशेष नियम को दूसरा विशेष नियम समझने लगते हैं। जैसे:—(क) जो तुम आज खरीदोगे उसको कल खाओगे, आज तुमने घोड़ा खरीदा, अतः कल घोड़ा खाओगे। (ख) बराबर पाने से लेनेवाले का लालच बढ़ता है, दान द्वारा मनुष्य पाता है अतः दान लालच बढ़ाता है। (ग) छूरी भोंकनेवाला दण्डनीय है, डाकूर छुरी भोंकता है, अतः वह भी दण्डनीय है।

६. सिद्धसाधन—जिसको सिद्ध करना है उसी को हेर फेर से सिद्ध मान लेना। जैसे (क) यह पूछने पर कि 'शीशे से क्यों आर पार दिखाई देता है'? उत्तर देना 'क्योंकि शीशा पारदर्शी है' (ख) अ, ब है। स, ब है, अतः स, अ है। इसमें जब पूछा जाय कि ब अ क्यों है तो उत्तर देना कि 'क्योंकि स, अ है' (दोनों उदाहरणों में जो सिद्ध करना है उसी को केवल मान लेते हैं, सिद्ध नहीं करते।)

७. खण्डनानभिज्ञता—इस हेत्वाभास का प्रयोग प्रायः हारनेवाले लोग करते हैं। इसमें जिस पक्ष को सिद्ध करना चाहिए (उसे सिद्ध न कर सकने पर) उसको छोड़ कर तत्सम्बन्धी दूसरी बात सिद्ध करने लगते हैं कि कदाचित् उससे आदमी गड़बड़ा जाय और अपनी हार न हो। जैसे:—जिस चोर के विरुद्ध तीन प्रत्यक्ष चोरी को देखनेवाले साक्षी उपस्थित हों उन साक्षियों को झूठा बनाने के लिये चोर का यह कहना कि ३० आदमी इस बात के साक्षी हैं कि हम भलेमानुस हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह हेत्वाभास कई प्रकार से होता है। उनमें से प्रधान ये हैं।

(१) पक्ष-साधन छोड़ कर विपक्षी के पांडित्य, चालचलन आदि पर आक्षेप करना। जैसे—'भला आप ब्राह्मण होकर वेदों के विरुद्ध बात करते हैं'।

(२) विपक्षी जिस विषय को नहीं जानता उस को उठा कर उसे भुलाना। जैसे कथा है कि शंकराचार्य ब्रह्मचारी से कामशास्त्र का प्रश्न किया गया था।

(३) शास्त्रार्थ करते करते लट्ठम-लट्ठा करने लगना।

(४) प्रायः शब्द प्रमाण मानना—अर्थात् यह कहना कि अमुक प्रतिष्ठित व्यक्ति ने ऐसा कहा है, इसलिये यह ठीक ही है।

८. नैतत्फलति—ऐसा उपसंहार निकालना जिसका पूर्वावयवों से कोई सम्बन्ध न हो।

९. अकारणे कारणत्वग्रहः—जो कारण नहीं है उसी को कारण मान लेना। जैसेः—मरने के १५ दिन पहले से अमुक मनुष्य आलू खाता था अतः आलू उसकी मृत्यु का कारण है।

१०. नानाप्रश्न—ऐसा प्रश्न करना जिसके कई उत्तर हो सकें परन्तु एक से अधिक उत्तर न चाहना—जैसेः—'क्या तुमने चोरी करना छोड़ दिया' इस प्रश्न का उत्तर 'हाँ या नहीं' से पर्याप्त न होगा, यह स्पष्ट ही है।

—:o:—

राष्ट्र लिपि।

काशी नागरीप्रचारिणी सभा की ओर से सभा-भवन में समय समय पर जो सुबोध व्याख्यान हुआ करते हैं, उन्हीं के अन्तर्गत श्रीयुक्त बा० श्यामसुन्दरदासजी बी० ए० का एक व्याख्यान गत १३ जनवरी को सन्ध्या के ६ बजे राष्ट्र लिपि पर हुआ था। यद्यपि उसी दिन और उसी समय मकर संक्रान्ति का पर्व था, तो भी सारा हाल प्रायः श्रोताओं से भर गया था। उस दिन जैसी भीड़ हुई थी वैसी कदाचित् ही किसी और सुबोध व्याख्यान में हुई हो। उपस्थिति लगभग दो सौ के थी; प्रायः सभी पढ़े लिखे और प्रतिष्ठित लोग आए हुए थे। बा० श्यामसुन्दरदास एक तो प्रसिद्ध वक्ता हैं, दूसरे विषय राष्ट्र लिपि भी बहुत ही महत्त्वपूर्ण था। ऐसे विषयों पर व्याख्यान सुनने के लिये इतने अधिक लोगों का एकत्र होना प्रकट करता है कि जन साधारण का ध्यान ऐसे विषयों पर अच्छी तरह से होने लगा है और वे लोग भली भाँति उनकी आवश्यकता और उपयोगिता समझने लगे हैं।

इस व्याख्यान की सफलता और उपस्थिति आदि देख कर, आशा है सुबोध व्याख्यान के निरीक्षक पं० रामनारायण मिश्र बी० ए० भविष्य में प्रायः ऐसे ही उपयोगी विषयों पर प्रसिद्ध विद्वानों और वक्ताओं से व्याख्यान दिलवाने का प्रयत्न करेंगे। कदाचित् यहाँ यह बतलाने की आवश्यकता नहीं है कि हिन्दी और देवनागरी के सुन्दर भविष्य के ये बहुत अच्छे लक्षण हैं।

बाबू साहब ने अपना व्याख्यान आरंभ करते हुए कहा—"महाशयो! जिस विषय पर मैं आप लोगों के सामने निवेदन करने के लिये खड़ा हुआ हूँ वह विषय राष्ट्र-लिपि का है। इस विषय का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्बन्ध दो और विषयों से है—एक तो राष्ट्र-भाषा और दूसरे जातीय-शिक्षा। इनमें से किसी एक विषय पर विचार करते समय हम दूसरे विषय को छोड़ नहीं सकते। राष्ट्र-लिपि के सम्बन्ध में कुछ निवेदन करते समय जातीय शिक्षा का प्रसंग भी आप ही आप आ जाता है। और ये दोनों ही विषय बहुत आवश्यक और महत्त्वपूर्ण हैं। आजकल भारत की प्रायः सभी बातों में—क्या राष्ट्रीय और क्या जातीय, क्या सामाजिक और क्या आर्थिक—परिवर्तन का एक विलक्षण स्रोत बह रहा है और आशा होती है कि यह स्रोत अब किसी प्रकार न रुकेगा। भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक लोगों के हृदयों में एकता के भाव उत्पन्न हो रहे हैं। एकता के लिये इन बातों की आवश्यकता है कि हम अपने भावों को एक दूसरे पर सहज में प्रकट कर सकें। उन्नति चाहे किसी प्रकार की हो,—चाहे वह राष्ट्रीय हो, चाहे जातीय हो और चाहे सामाजिक हो—उसके लिये मुख्य आवश्यकता केवल इसी बात की है कि समस्त देश के निवासी इस योग्य हो जायँ कि वे एक दूसरे के भावों को सहज में समझ सकें और हममें सब दृष्टियों से एकता का प्रचार हो। यदि हममें किसी प्रकार की भिन्नता होगी तो हमारा उद्योग सफल न हो सकेगा। पहले अपने देश के धर्म्म-सम्बन्धी इतिहास को देखिए। अनेक धर्म्म-प्रवर्तकों ने देश में घूम घूम कर जितना उद्योग किया उतना ही उनके धर्म्म का प्रचार हुआ। महात्मा बुद्ध केवल वर्षा-काल को छोड़ कर सदा देश के भिन्न भिन्न भागों में घूमते और लोगों को शिक्षा देते थे। इसी कारण किसी समय देश में बौद्ध धर्म्म का बहुत अधिक प्रचार था। शंकराचार्य्य ने भी स्थान स्थान पर घूम-कर इसी प्रकार उद्योग किया था। तात्पर्य्य यह कि किसी प्रकार की उन्नति करने के लिये सब प्रकार के लोगों तक अपने भाव और विचार पहुंचाने की आवश्यकता होती है। यदि भाव महत्व के और उपयोगी होते हैं तो लोग उनपर विचार करते हैं और उत्साहपूर्वक उस उद्योग में सहायक होते हैं। अपनी अपनी स्थिति के अनुसार सब लोगों को उद्योग करना पड़ता है। बुद्ध को उद्योग करने की आवश्यकता हुई, शंकराचार्य को उद्योग करने की आवश्यकता हुई और दयानन्द को भी उद्योग करने की आवश्यकता हुई। उन लोगों ने समस्त देश में इस प्रकार अपने भाव प्रकट किए जिससे सब लोग समझ गए और उन्हें सफलता हुई। आजकल जातीय उन्नति के लिये जो साधारण सभाएं होती हैं उनमें लोग अपनी प्रान्तीय भाषाओं में विचार प्रकट करते हैं। थोड़े से समुदाय में तो प्रान्तीय भाषाओं से काम चल सकता है; पर देश के समस्त भागों में अपने भाव प्रकट करने के लिये किसी ऐसी भाषा का आश्रय लेना पड़ता है जिसे सब प्रान्तों के लोग समझ सकें। यद्यपि भूमंडल के कुछ राष्ट्रों के ऐसे उदाहरण भी मिल सकते हैं जिनमें देश में अनेक भाषाएं होने पर भी राष्ट्र का निर्माण हुआ हो, और जिससे यह सिद्ध होता है कि राष्ट्र-निर्म्माण के लिये एक भाषा या एक लिपि का होना नितान्त आवश्यक नहीं है तो भी इसमें सन्देह नहीं कि यदि हमारी भाषा और लिपि एक हो तो हमारे कार्य्य में उससे बहुत अधिक सहायता मिल सकती है। तीन बातें ऐसी हैं जिनसे राष्ट्रीयता के निर्म्माण में बहुत सहायता मिलती है। लोगों का धर्म्म एक हो, लोग एक राज्य के निवासी हों और उनकी भाषा एक हो। धर्म्म-सम्बन्धी एकता बहुत ही कठिन है; कम से कम भारत में तो इस सम्बन्ध में सफलता नहीं हुई है। अभी हाल में काशी में ही एक अद्भुत दृश्य देखने में आया था। एक ही नगर के रहनेवाले परस्पर का सौहार्द छोड़ कर एक दूसरे को बुरा भला कहने लगे थे। बड़े ही दुःख का विषय है कि ऐसे अवसर पर जब कि सारे देश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में एकता का उद्योग हो रहा हो, सब लोग एक माता के पुत्र कहलाने के प्रयत्न में लगे हों तब इस प्रकार का विच्छेद और विभेद करके विष-वृक्ष बोया जाय और एकता के सुन्दर भावों का नाश किया जाय। जैसा कि आप लोगों ने देखा है, इस प्रकार के विवादों से कुछ लाभ नहीं हो सकता, उनसे कोई बात स्थिर नहीं हो सकती। धर्म्म का आधार विश्वास है। यदि किसी के हृदय में किसी धर्म्म पर श्रद्धा और विश्वास हो तो हम विवादों से वह श्रद्धा या विश्वास हटा नहीं सकते। यदि वह टल सकता है तो विचार से, विवाद से नहीं। टेनिसन ने कहा है।—

Strong son of God, Immortal Love,
Whom we that have not seen thy face,
By faith, and faith alone embrace,
Believing where we cannot prove.

अर्थात् हममें से जिन लोगों ने आपके दर्शन नहीं किए हैं वे अपने विश्वास के कारण ही आपको मानते हैं, इसीसे हम तेरे अनुयायी हैं। यही सिद्धान्त सब धर्म्मों में लगता है। ऐसी अवस्था में इस विभेद की कोई आवश्यकता न थी क्योंकि उसके कारण समाज को हानि पहुँची है। धर्म्म-सम्बन्धी बातों में लोगों को उनके विश्वास पर छोड़ देना चाहिए। अस्तु, दूसरी एकता राज्य-सम्बन्धी आवश्यक होती है और यह बात सौभाग्यवश आपको प्राप्त है। आप लोग एक ही राज्य में बसते हैं, एक ही राजा के अधीन हैं। और नहीं तो कम से कम इससे आप एकता की शिक्षा अवश्य ग्रहण कर सकते हैं। अब भाषा को लीजिए जिसके द्वारा अपने भाव एक दूसरे पर प्रकट करने में सहायता मिलती है। कुछ दिनों पहले इस देश के शिक्षित निवासियों का विश्वास था कि यहाँ की राष्ट्र-भाषा अँगरेजी होगी, पर वह विश्वास अब दूर हो गया। पहले लोग अँगरेजी के राष्ट्र-भाषा होने का स्वप्न देखते थे, पर अब लोग उसका स्वप्न भी नहीं देखते। इस देश में प्रतिवर्ष ५० हजार विद्यार्थी अँगरेजी भाषा में शिक्षा पाते हैं। अब आपही हिसाब लगाइए कि इस प्रकार कितने दिनों में आप तेंतीस करोड़ आदमियों को शिक्षित बना सकेंगे। स्मरण रहे कि देशी भाषाओं में प्रतिवर्ष पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त करनेवाले विद्यार्थियों की संख्या ढाई लाख है। आप स्वयं समझ सकते हैं कि अँगरेजी द्वारा प्रतिवर्ष पचास हजार विद्यार्थियों को शिक्षा देने में हमारा कल्याण है कि देशी भाषा में प्रतिवर्ष ढाई लाख विद्यार्थियों को शिक्षा देने में। एक बात का और भी ध्यान रखना चाहिए। हम लोग एक बड़ी भारी भूल यह करते हैं कि विद्या और उसकी प्राप्ति के साधन—भाषा—को एक समझते हैं पर वास्तव में विद्या या ज्ञान और ही वस्तु है, भाषा से उसका वैसा सम्बन्ध नहीं है जैसा हम समझते हैं। बिना किसी विशिष्ट भाषा के, हम केवल अपनी मातृभाषा में ही समस्त ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। जो लोग यह समझते हैं कि हम केवल अँगरेजी से ही समस्त ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं वे भूल करते हैं। मैं अभी बतला चुका हूं कि देशी भाषाओं द्वारा जितने विद्यार्थी शिक्षा पाते हैं, अँगरेजी द्वारा शिक्षा पानेवाले उनका पाँचवां भाग हैं। अर्थात् जाति की उन्नति यदि अँगरेजी की सहायता से दो हजार वर्ष में हो सकती है तो देशी भाषाओं की सहायता से केवल पाँच सौ वर्षों में ही हो सकती है। अब तो लोग अँगरेजी के राष्ट्र-भाषा होने पर विचार भी नहीं करते। इस बात की कोई सम्भावना नहीं है कि किसी समय इस देश के सब निवासी अपना सारा काम अँगरेज़ी में ही करने लगेंगे। अब लोग मातृभाषा द्वारा शिक्षा देने की आवश्यकता और उपयोगिता समझने लगे हैं। आप लोग यह न समझें कि मैं अँगरेजी शिक्षा का विरोधी हूं। बल्कि नहीं, हमें अँगरेज़ी जानने की भी बहुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवश्यकता है। अँगरेज़ी साहित्य में जो विद्या, जो ज्ञान भरा हुआ है, हमें उसके जानने की आवश्यकता है। वह ज्ञान प्राप्त करके हमें उसका प्रचार अपने देशी भाइयों में करना चाहिए। जो लोग अँगरेज़ी शिक्षा प्राप्त करते हैं उनका कर्त्तव्य है कि वे अपने प्राप्त ज्ञान का देशी भाषाओं में, अपने देश-भाइयों में प्रचार करें। भाषा की आवश्यकता केवल ज्ञान की प्राप्ति के लिये ही होती है; पर हम लोग तो बहुधा ज्ञान को छोड़ कर केवल भाषा के ही पीछे पड़ जाते हैं और भूल से ज्ञान तथा उसकी प्राप्ति के साधन को एक समझने लगते हैं।

यह एक साधारण सिद्धान्त है कि जो पदार्थ हम खाते हैं वह जब तक हमारे शरीर में जाकर बिलकुल एकरूप नहीं हो जाता तब तक उससे हमारे शरीर की उन्नति नहीं हो सकती, तब तक वह हमें पुष्ट नहीं कर सकता। विद्या प्राप्त करने के लिये भी यह बात आवश्यक है कि जो ज्ञान हम प्राप्त करें वह हमारे मस्तिष्क में बिलकुल एकरूप हो कर मिल जाय। यदि आप प्राप्त-ज्ञान को अपनी मातृभाषा में ही अच्छी तरह लोगों को न समझा सकें तो कहना होगा कि आपने वास्तव में वह ज्ञान नहीं प्राप्त किया। आजकल भिन्न भिन्न विषयों की जो शिक्षा दी जाती है, उसमें विद्यार्थियों को अँगरेजी के ही पारिभाषिक शब्द बतलाए जाते हैं। यह अनावश्यक है। हम लोग गणित, इतिहास, भूगोल, दर्शन आदि अनेक विषयों की शिक्षा अपनी मातृभाषा में ही दे सकते हैं। मातृभाषा में जो शिक्षा दी जाती है वह हृदय-पटल पर दृढ़ता से अंकित हो जाती है। पर विदेशी भाषा में वह बात नहीं होती। विद्यार्थी को विदेशी भाषा सीखने के लिये भी परिश्रम करना पड़ता है और ज्ञान प्राप्त करने के लिये भी। परिणाम बहुधा यही होता है कि हम विद्या को तो भूल जाते हैं और केवल भाषा के पीछे लग जाते हैं। ग्रन्थों में हमें नित्य नए नए शब्द और मुहावरे मिलते हैं और हमारी अधिकांश शक्ति उन्हीं को समझने में ल जाती है। हमें सारा उद्योग तो केवल यह जान के लिये करना पड़ता है कि उस ग्रन्थ का मर्म क है, जो कुछ उसमें लिखा हुआ है उसका अभिप्रा क्या है। विषय का वास्तविक ज्ञान हमें नहीं हो पाता। इससे विद्या-प्राप्ति में बड़ी बाधा पड़ रही है इसी लिये लोग मातृभाषा में शिक्षा देने की आवश्य कता समझने लगे हैं। मैंने लोगों को यह कहते सुना है कि यदि बालकों को शिक्षा अँगरेजी भा में न दी जायगी तो वे अँगरेजी के विद्वान् न हो सकेंगे। जब मैं विद्यार्थी था तब मिडिल तक सारी पढ़ाई उर्दू और हिन्दी में ही होती थी, इस बाद आगे के दरजों की पढ़ाई अँगरेजी में हो थी। तो भी मैं कह सकता हूं कि और विषयों मैं भले ही कमजोर रहा होऊँ, पर अँगरेज़ी में क कमजोर नहीं रहा। यह विश्वास मिथ्या है कि देश भाषा द्वारा शिक्षा अँगरेजी की शिक्षा में बाध होती है। और यदि यह बात थोड़ी देर के लि मान भी ली जाय तो भी हमारे देश-हित के का में कोई बाधा नहीं होती। हमें अधिक से अधि केवल इसी बात की आवश्यकता हो सकती है हम साधारणतः अंगरेजी पढ़, लिख और सम सकें। आगे जिन लोगों की रुचि हो वे उद्योग क और अँगरेजी साहित्य के रसास्वादन में ल सर्वसाधारण के लिये आवश्यकता केवल ज्ञान है। हमारे कार्य्य के लिये वही यथेष्ट है। हम ल चाहते हैं कि द्वेष मिटे, सब में सौहार्द स्थापित और शिक्षा का प्रचार हो। इसके लिये सब लो को अपनी अपनी मातृभाषा की उन्नति क चाहिए। हम यह नहीं कहते कि गुजराती, ल गुजराती भाषा छोड़ दें, महाराष्ट्र मराठी छोड़ मुसलमान उर्दू छोड़ दें। नहीं, कभी नहीं, वि हम चाहते हैं कि सब लोग अपनी अपनी मातृभा पर अधिक प्रेम करें, उसका अधिक आदर-सत्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करें और उसका भांडार बढ़ाने का प्रयत्न करें। हमें आवश्यकता है केवल जातीय भावों को जानने की और लोगों में उनका प्रचार करने की। और केवल इस काम के लिये हमें उस भाषा की सहायता लेनी चाहिए जिससे हमारे कार्य्य में विशेष सुगमता हो सके। इस कार्य्य के लिये हमें हिन्दी के अतिरिक्त और कोई भाषा उपयुक्त नहीं जान पड़ती। हिन्दी का नाम मैं इसलिये नहीं लेता कि वह हमारी मातृभाषा है, बल्कि इसलिये कि अनेक गुणों में कोई भाषा हिन्दी के सामने खड़ी नहीं हो सकती। देश में जितना विस्तार उसका है, उतना और किसी भाषा का नहीं है। केवल हिन्दी जाननेवाला भारत के सभी प्रान्तों में जा कर अपना काम चला सकता है, पर दूसरी भाषा जाननेवाला उस प्रकार अपना काम नहीं चला सकता। केवल हिन्दी जाननेवाला मदरास में जा कर भी अपने भाव प्रकट कर सकता है। पर केवल मदरासी जाननेवाला यहाँ आ कर अपना काम नहीं चला सकता। हाँ, यदि वह अपनी भाषा के शब्दों के साथ टूटी फूटी हिन्दी में भी अपने भाव प्रकट करे तो उसका काम चल जायगा। व्याकरण आदि की दृष्टि से उसकी भाषा चाहे कितनी ही निकृष्ट क्यों न हो पर उसे लोग समझ अवश्य लेंगे। इसके महत्त्व का मुख्य कारण यही है कि देश के सब भागों में लोग इसे समझ लेते हैं। इसके महत्त्व और प्रचार का दूसरा कारण यह है कि इसका साहित्य बहुत पुराना है। जितने पुराने ग्रन्थ हिन्दी-साहित्य में हैं उतने प्राचीन ग्रन्थ और किसी देशी भाषा के साहित्य में नहीं हैं। अपने प्राचीन इतिहास का गौरव बतलाने में भी यह हमारी बहुत बड़ी सहायक होती है। इसकी प्रधानता का तीसरा कारण यह है कि यह बहुत ही सुगमता से सीखी जा सकती है। इसे सीखने में अधिक समय नहीं लगता क्योंकि यह जिस प्रकार लिखी जाती है उसी प्रकार पढ़ी भी जाती है। यह देवनागरी लिपि में लिखी जाती है; जिसकी रचना पर यदि ध्यान दिया जाय तो उन महर्षियों के लिये साधुवाद निकलता है जिन्होंने इसे निकाला। अन्य लिपियों में यह दोष है कि उनके अक्षरों का उच्चारण कुछ और तथा काम कुछ और होता है। अँगरेजी में अक्षर का नाम तो 'ए' होता है पर कहीं उससे काम लिया जाता है 'अ' का और कहीं "आ" का। अक्षर को कहते हैं "बी" और उससे काम लेते हैं "ब" का। अक्षर को कहें 'सी' और काम कहीं 'स' का लें और कहीं 'क' का। कोई निश्चित सिद्धांत ही नहीं है, उच्चारण कुछ और तथा काम कुछ और। किसी लिपि में, बहुत से उच्चारणों के लिये कोई चिह्न ही नहीं है और कहीं एक ही प्रकार के उच्चारण के लिये कई कई चिह्न हैं। पर देवनागरी में यह दोष नहीं है। बालक को जिस चिह्न का उच्चारण हम 'अ' बतलाते हैं वह सदा 'अ" ही कहलावेगा, उसके उच्चारण का स्वरूप कभी बदल नहीं सकता। यह गुण और किसी लिपि में नहीं है। दूसरी सभी लिपियों में अवस्था के अनुसार अक्षरों के उच्चारण में परिवर्त्तन होता है। एक सप्ताह परिश्रम करके किसी बालक को देवनागरी वर्णमाला का ज्ञान करा दीजिए, बस फिर वह सब पुस्तकें आप ही आप पढ़ने लग जायगा। यदि वर्णमाला के अक्षरों का उच्चारण समय समय पर बदलता रहे तो उससे बालकों के मस्तिष्क को कष्ट होता है और उन्हें पढ़ने में बहुत कठिनता होती है। पर देवनागरी में यह बात नहीं है। देवनागरी में यह एक ऐसा गुण है कि यदि हम भारतवासियों के पास अपने पूर्वजों का दिया और कुछ भी न होता तो केवल एक इसी लिपि के कारण भारतवासियों को इस बात का गौरव हो सकता था कि हमारी वर्णमाला के ऐसे अक्षर हैं जिनकी किसी दूसरी वर्णमाला के अक्षरों से तुलना हो ही नहीं सकती! अपनी वर्णमाला पर यदि आप और भी गूढ़ विचार करें तो आपको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालूम हो जायगा कि क्यों 'अ' के बाद 'आ' है, क्यों "इ' के बाद 'ई' है, क्यों 'क' के बाद 'ख' और क्यों 'क' वर्ग के बाद 'च' वर्ग है। इसकी बनावट बिलकुल वैज्ञानिक है। जिस क्रम से बालक के कंठ से अक्षरों का उच्चारण होता है उसी क्रम से इस वर्णमाला में अक्षर भी रखे हुए हैं। इसके इसी गुण के कारण हमें अभिमान होना चाहिए। और इसी कारण इस लिपि में यह सब से अधिक विशेषता है कि इसके अक्षरों का ज्ञान एक सप्ताह में प्राप्त किया जा सकता है; और जहाँ किसी ने अक्षर पहचाने तहाँ वह चल पड़ा। आवश्यकता केवल वर्णमाला के अक्षर पहचानने की है, भाषा तो बालक पहले ही से जानता है। उस समय विषय का जानना उसके लिये कठिन नहीं रह जाता। देखिए, कितनी सुगमता है! सौभाग्य है उन लोगों का जिनकी शिक्षा इसी लिपि में होती है। सब लोग जानते हैं कि हम सब आर्य्य हैं, हमारा देश आर्य्यावर्त्त है और हमारा धर्म्म आर्य्य है। कोई कारण नहीं है कि हम अपनी भाषा को अनार्य्य रूप दें और उसे लिखने के लिये अनार्य्य-लिपि ग्रहण करें। अपनी भाषा को हमें वही भूषण और वस्त्र आदि पहनाने चाहिए जो उसके आर्य्य रूप के अनुकूल हों। उर्दू भी कोई दूसरी भाषा नहीं है, वह इसी हिन्दी से ही कट कर अलग हो गई है। वह वास्तव में आर्य्य होने पर भी अब अनार्य्य (Semetic) हो गई है। हिन्दी और उर्दू को हम एक अंश में भिन्न कह सकते हैं पर वास्तव में वे भिन्न नहीं हैं। किसी भाषा के रूप का निर्णय इस सिद्धान्त पर होता है कि उसके शब्दों की बनावट कैसी है और उनके रूपों में परिवर्त्तन किस व्याकरण के अनुसार होता है। यदि हम किसी दूसरी भाषा के शब्द को लेकर अपनी भाषा के रूप में ढाल लें तो वह शब्द हमारी भाषा का हो गया। अँगरेज़ी में 'लैम्प' शब्द है, हमने उसे हिन्दी में 'लम्प' कर लिया। हमने अँगरेज़ी से 'लैंटर्न' शब्द लिया पर उसका हिन्दी रूप 'लालटेन' बना कर। चाहे कोई कितना ही पढ़ा लिखा क्यों न हो पर वह अपने नौकर से यह नहीं कहेगा कि 'लैन्टर्न' ले आओ, वह सीधी तरह से यही कहेगा कि लालटेन ले आओ क्योंकि हमने उस शब्द को ग्रहण करके अपना लिया है। उसका बहुवचन रूप हम 'लालटेनें' करेंगे "लैंटर्न्स" नहीं। हम सदा यही कहेंगे कि बाजार से चार लालटेनें लीं, यह नहीं कहेंगे कि चार लैंटर्न्स लीं। और सभी लोग ऐसा करते हैं। अँगरेज लोग हमारे यहाँ से जंगल शब्द ले गए हैं पर उसका बहुवचन वे 'जंगलें' नहीं करते "जंगल्स" करते हैं। तात्पर्य्य यह कि शब्दों के रूपों में जिस व्याकरण के नियमों से परिवर्त्तन होता है उसी व्याकरण की भाषा का वह शब्द माना जाता है। आजकल जिसे लोग उर्दू कहते हैं, वह वास्तव में हिन्दी ही है और उसका काम हिन्दी के व्याकरण से ही चलता है; उसमें शब्द केवल अरबी और फारसी के अधिक भर दिए जाते हैं। पर इतने ही से वह हिन्दी से बिलकुल भिन्न और स्वतंत्र भाषा नहीं हो सकती। उर्दू में सारी क्रियाएं—खाना, पीना, सोना, उठना, बैठना, लिखना, पढ़ना, जाना, आना—हमारी हिन्दी की हैं। उर्दू के विद्वानों से मैं प्रार्थना करूँगा कि वे भला एक वाक्य तो ऐसा बोलें जो उर्दू का हो और जिसमें हमसे ली हुई क्रियाएं न हों। यदि उनसे प्रार्थना की जाय कि महाराज आप जो चाहे सो बोलिए पर दया करके हमारी क्रियाएं छोड़ दीजिए तो उनका बोलना बंद हो जायगा। वास्तव में उर्दू और हिन्दी दोनों एक ही थीं, पहले केवल हिन्दी ही थी, पीछे से उर्दू उस से छँट कर अलग हो गई। आरम्भ में लोगों ने हिन्दी भाषा में आवश्यकतानुसार अरबी और फारसी के शब्द मिलाने आरम्भ किए थे। उस समय तक तो हमारी कोई हानि नहीं थी, क्योंकि हमारी भाषा का भांडार ही बढ़ता था। पर हानि उस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय आरम्भ हुई जब वह अनार्य्य, फारसी लिपि में लिखी जाने लगी और जब फारसी और अरबी के कठिन शब्द बढ़ने लगे। आजकल जो उर्दू लिखी जाती है वह स्वयं ही वास्तव में उर्दू नहीं है। आजकल लोग दिल्ली की उर्दू को मुख्य उर्दू मानते हैं, पर दिल्ली की भाषा में फारसी और अरबी के उतने कठिन शब्द नहीं होते जितने लिखी हुई उर्दू में मिलते हैं। मैंने एक बड़े मौलवी से पूछा तो उन्होंने कहा कि आजकल की लिखी जानेवाली उर्दू वास्तव में उर्दू नहीं है। बल्कि बिलकुल बनावटी उर्दू है। कोई विद्वान् 'वालिद' कभी न कहेगा, वह जब कहेगा तब यही कि हमारे बाप ऐसा कहते थे, हमारे बाप ऐसा करते थे। उन्होंने जोर देकर कहा था कि मैंने दिल्ली में किसी को 'वालिद' कहते नहीं सुना, सब बाप ही कहते हैं और वही असली उर्दू है। आजकल हम लोग जो हिन्दी लिखते हैं वह भी बनावटी है। दोनों ही ओर से विभिन्नता और खींचातानी है, पर इससे विशेष हानि नहीं है। हमें सब भाषाओं के शब्द लेने चाहिए और अपनी सम्पत्ति बढ़ानी चाहिए। पर अपना वास्तविक स्वरूप और अपने व्याकरण के नियम नहीं छोड़ने चाहिएँ, हिन्दी को हिन्दी ही समझना चाहिए। बड़े बड़े हिन्दी-लेखक लिखते हैं—वह पहाड़ दस हजार फीट ऊँचा है। कोई उनसे पूछे कि महाशय, ये फीट शब्द आपने कहाँ से लिया, यह तो अँगरेजी फुट का अँगरेजी बहुवचन रूप है। आप केवल फुट शब्द लीजिए और उसका बहुवचन अपने व्याकरण के नियम के अनुसार बनाइए। किसी को कुछ कहने की जगह न रहेगी।

आजकल हिन्दी और उर्दू में जो भेद है वह केवल दो भिन्न लिपियों में लिखे जाने के कारण है। जिस दिन यह भेद मिट जायगा, जिस दिन उर्दू भी देवनागरी लिपि में ही लिखी जाने लगेगी, उस दिन उर्दू और हिन्दी का भेद मिट जायगा। भारत की राष्ट्र-भाषा तो हिन्दी ही होगी, चाहे उसमें फारसी या अरबी के शब्द मिले रहें और चाहे तामील और तेलगू के। भाषा वह हिन्दी ही रहेगी। पर जहाँ यह प्रश्न होगा कि भारत की राष्ट्र-लिपि कौन हो, वहाँ भेद पड़ जायगा। फारसी लिपि का इस देश में प्रचार हो, यह असम्भव है। वह लिपि कभी हमारे अनुकूल नहीं हो सकती। मराठी तो देवनागरी में ही लिखी जाती है। गुजराती और बँगला के अक्षर हिन्दी से बहुत कुछ मिलते जुलते होते हैं। इसके अतिरिक्त गुजराती या बँगला की पुस्तकों में जहाँ संस्कृत श्लोक उद्धृत किए जाते हैं वहाँ देवनागरी से ही काम लिया जता है। गुरुमुखी भी देवनागरी से ही मिलती जुलती बल्कि उसी से निकली हुई है, पर वह अधिक आपूर्ण है। संस्कृत इसी देवनागरी लिपि में लिखी जाती है। जिस प्रकार भविष्य में भारत की यदि कोई एक भाष हो सकती है तो वह हिन्दी ही हो सकती है, उसी प्रकार यदि भारत में कभी किसी एक लिपि का प्रचार हो सकता है तो देवनागरी लिपि का ही हो सकता है। और भारत की एक भाषा होने से पहले आवश्यकता एक लिपि होने की है क्योंकि लिपि के एक हो जाने से भाष। के एक होने में बहुत सहायता मिलेगी। किसी न किसी समय भारत में एक भाषा—हिन्दी—और एक लिपि—देवनागरी—का प्रचार अवश्य होगा। यह सम्भव है कि उनके मार्ग में कठिनइयाँ उपस्थित हों, पर उनका प्रचार रुक नहीं सकात। नदी के मार्ग में कोई भारी चीज या काठ पड़ कर इसके प्रवाह को बंद नहीं कर सकता, हाँ, थोड़ी देर के लिये उसे रोक अवश्य सकता है और उसके समुद्र तक पहुँचने में कुछ विलम्ब अवश्य कर सकता है। वह अवस्था थोड़े ही समय तक रहेगी, कठिनाइयों को मार्ग से अवश्य हटना पड़ेगा।

पहले कांग्रेस आदि में केवल अँगरेजी में भाषण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ करते थे। हिन्दी या उर्दू का वहाँ प्रवेश नहीं था। पर जब लोगों ने देखा कि अँगरेजी में सारी काररवाई करने से सब बातें, सब भाव हमही तक रह जाते हैं, प्रजा तक नहीं पहुँचने पाते और बिना प्रजा तक उन भावों को पहुँचाए काम नहीं चलता तब उन्हें देशी भाषा की सहायता लेनी पड़ी। अब प्रेसीडेंट के भाषण के हिन्दी और उर्दू अनुवाद भी छपते हैं। जो प्रस्ताव उपस्थित किए जाते हैं, उन पर दो एक व्याख्यान अँगरेजी में और दो एक उर्दू-हिन्दी में भी होते हैं। यदि कांग्रेसवालों से दस बरस पहले कोई कहता कि आप दो एक व्याख्यान उर्दू या हिन्दी में भी कराइए तो वे कहते—वाह! हमारी राष्ट्र-भाषा तो अँगरेजी होनेवाली है, हम उर्दू या हिन्दी में व्याख्यान क्यों दें? पर अब लोगों ने अपनी भूल समझ ली है। अब समस्त देश में राष्ट्रीय जीवन का संचार हो रहा है और उसमें सहायता देने के लिये राष्ट्र-भाषा और राष्ट्र-लिपि की आवश्यकता है। हिन्दी को किसी समय भारत में वह स्थान अवश्य मिलेगा जो इस समय युरोप में फ्रेंच को प्राप्त है और जिसके कारण उसे लोग Lingua Franca कहते हैं। यदि उस समय राष्ट्र-भाषा और राष्ट्र-लिपि के आसन पर कोई भाषा और लिपि बिराजेगी तो वह हिन्दी और देवनागरी ही। यह बात दूसरी है कि उनके वर्त्तमान रूप में कुछ परिवर्त्तन हो जाय। कुछ क्या उसमें बहुत अधिक परिवर्त्तन हो सकता है, तेलगू और तामिल तक के शब्द उसमें आकर मिल सकते हैं। पर तो भी वह रहेगी हिन्दी ही। जिस रूप में हम इस समय हिन्दी बोलते हैं, राष्ट्र-भाषा होने पर चाहे उसका वह रूप न रह जाय, पर तो भी उसके लिये हमारे वर्त्तमान व्याकरण का ही आश्रय लेना पड़ेगा। अन्य मार्गों से शब्द आ आकर उसका भांडार बढ़ा देंगे और तब उसका स्वरूप राष्ट्रीय हो जायगा। लिपि की भी यही दशा है। सम्भव है कि हमारी देवनागरी में भी कुछ परिवर्त्तन हो जाय और कुछ नए संकेत भी बढ़ जायँ, पर तो भी वह रहेगी देवनागरी ही। देवनागरी को वर्त्तमान रूप भी बहुत से परिवर्त्तनों के उपरान्त ही प्राप्त हुआ है। बहुत प्राचीन काल में लोग शिलाओं और ताम्रपत्रों पर लोहे की कीलों से लिखते या खोदते थे। उस समय स्वभावतः अक्षरों में उतने अधिक कोण आदि नहीं बन सकते थे जितने आजकल मुलायम कागज पर बढ़िया कलम से बन सकते हैं। ज्यों ज्यों लिखने के साधनों आदि में परिवर्त्तन होता गया त्यों त्यों लिपि में भी परिवर्त्तन हुआ। यदि हम देवनागरी अक्षरों का प्राचीन और क्रमशः विकसित होनेवाला रूप देखें तो उस परिवर्त्तन का ठीक ठीक पता चल जायगा। सम्भव है कि हमारी देवनागरी में आगे चल कर और भी परिवर्त्तन हों। जिस प्रकार मध्य प्रदेश और गढ़वाल में लोग शीर्ष-रेखा छोड़ देते हैं, उसी प्रकार समस्त देश में लोग शीर्ष-रेखा छोड़ दें। पर तो भी वह देवनागरी ही रहेगी और वही भारत की राष्ट्र-लिपि होगी। यदि मेरे इस निवेदन से आप लोगों को इस बात का कुछ भी विश्वास हुआ है कि देवनागरी ही राष्ट्र-लिपि और हिन्दी ही राष्ट्र-भाषा होगी तो आप भी इसमें यथासाध्य सहायता दें और निश्चय कर लें कि अपने बालकों को हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि में ही शिक्षा देंगे और सदा इन दोनों के प्रचार का प्रयत्न करेंगे। उस समय वह सुन्दर भविष्य बहुत ही निकट आ जायगा जिसकी सब लोग बड़े चाव से प्रतीक्षा कर रहे हैं।

—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोलम्बस की जल-यात्रा।

[लेखक,—श्रीयुक्त पं० हरिशंकरप्रसाद उपाध्याय।]

(गतांक से आगे।)

कोलम्बस जिस भूमि का पथ-प्रदर्शक बना था उसमें वह पहलेपहल १२ अक्तूबर १४९२ ई० को उतरा था। ऐसे अपूर्व अवसर पर उसका उतरना बहुत ही धूमधाम के साथ हुआ। उसने राजा के प्रतिनिधि स्वरूप अपने पद के उपयुक्त वस्त्र और हाथ में स्पेन का राजकीय झण्डा धारण किया। उतरने पर उसने जमीन पर घुटनों के बल बैठ कर उसे चूमा, झण्डे को खड़ा किया और अपने साथियों से कहा कि यह नई भूमि हमारे स्पेन के राज्य का एक अंश होगी।

वह टापू अधिक बसा हुआ विदित होता था। वहाँ के निवासियों द्वारा कोलम्बस को मालूम हुआ कि उसका नाम ग्वानाहानी (Guanahani) है। कोलम्बस ने उसका नाम सान सालवेडर (San Salvador) रखा। लोग अभी तक उसे इसी नाम से पुकारते हैं। वह टापुओं का एक समूह है जो बहामा (Bahamas) के नाम से प्रसिद्ध है और मेक्सिको की खाड़ी के मुहाने पर है।

वहाँ के निवासियों ने जब जहाजों को तट की तरफ आते हुए देखा तब वे आपस में पूछने लगे कि यह कौन सी आश्चर्य-जनक वस्तु है? जब मल्लाहों ने जहाज किनारे पर लगाए तब वे भागने लगे। परन्तु जब उन्होंने देखा कि कोई हमारा पीछा नहीं कर रहा है तब वे हिम्मत करके पीछे लौटे और चकित होकर कोलम्बस के धर्म-सम्बन्धी कृत्यों की विधि देखने लगे। कोलम्बस की यह धारणा हुई कि जिस भूमि का मैंने पता लगाया है वह इण्डिया (India) है इसलिये वह वहाँ के निवासियों को इण्डियन (Indian) के नाम से पुकारने लगा। वर्त्तमान समय में भी नए संसार अमेरिका (New World) के आदिम निवासियों को लोग इण्डियन (Indian) कहते हैं। अपनी इस जलयात्रा की अधिक खोजों के बाद टापुओं के उस समूह का नाम उसने वेस्ट-इण्डीज (West Indies) रखा जिससे सिद्ध होता है कि कोलम्बस को भारतवर्ष के निकट होने का विश्वास था। कोलम्बस के साथियों ने वहाँ के निवासियों को खिलौने और छोटे छोटे गहने देकर उन लोगों से मित्रता करली। कोलम्बस और उसके साथी उन लोगों के सुनहरे गहनों को देख कर उन्हें पाने के लिये लालायित हुए और पूछने लगे कि यह अमूल्य धातु कहाँ से प्राप्त होती है। उनके प्रश्न के उत्तर में उन सब ने दक्षिण की ओर हाथ से इशारा किया। कोलम्बस ने मन में सोचा कि बिना समय नष्ट किए हुए हम लोगों को स्वर्णमयी भूमि (Land of gold) की ओर चलना चाहिए। सान सालवेडर के तट की परिक्रमा के बाद १४वीं अक्तूबर को वहाँ के सात निवासियों को मार्गदर्शक की भाँति ले वह वहाँ से रवाना हुआ।

कोलम्बस अपने मार्गदर्शकों के कथनानुसार जहाजों को उन कई टापुओं की ओर खे ले चला जो उसकी दृष्टि के सामने थे। इण्डियन लोगों के कथनानुसार वहाँ अनेक टापू थे। कोलम्बस ने उन सब की बातों से यह निर्णय किया कि वह उन टापुओं के समूह के आसपास है. वेनीशियन यात्री मार्को पोलो (Marco Polo) ने जिनका वर्णन किया है और जो व्यापार-सम्बन्धी अमूल्य वस्तुओं से मालामाल हो गया है। अनेक टापुओं में उतरने पर भी कोलम्बस को सोने का कहीं कोई चिह्न न मिला। मल्लाह लोग व्यर्थ इधर उधर सोने की खानें और पहाड़ ढूँढ़ते रहे; प्रत्येक टापू के निवासी और अधिक दूर दक्षिण की ओर इशारा करते थे जहाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का राजा बहुत ही धनी और शक्तिमान् था। कम से कम कोलम्बस ने उनके इशारे का अर्थ यही समझा था।

लोगों को कोलम्बस ने एक टापू का नाम क्यूबा कहते हुए सुना; और इण्डियनों के संकेत से कोलम्बस ने निर्णय किया कि यह अवश्य सिपानजो या जापान (Cipango, Japan) होगा और कैथे (Cathey) तट पर पड़ता है। कोलंबस का विश्वास था कि वह सोने और बहुमूल्य जवाहिरात से भरा हुआ है।

अक्तूबर के अन्त में क्यूबा पर स्पेन राज्य के नाम से अधिकार किया गया। वहाँ का वैभव और सुन्दरता देखकर कोलम्बस ने अपने मन में निश्चय किया कि यह सिपानजो (Cipango) है। इस विश्वास पर कार्य्य करता हुआ वह इधर उधर सोना तलाश करता रहा जिसके पाने के लिये सब लोग लालायित थे। मल्लाहों को देखते ही वहाँ के निवासी भयभीत हो कर भाग चले पर शीघ्रही वे संतुष्ट हो गए और समझ गए कि विदेशी लोग हमें हानि न पहुंचावेंगे। वे शीघ्र उनके पास आए और उन लोगों के मित्र हो गए। संकेत के द्वारा उनसे बातचीत करने पर कोलम्बस ने यह निर्णय किया कि वास्तव में यह क्यूबा है। पर संकेत द्वारा बातचीत होने के कारण उसने मनमें सोचा कि हो न हो यह एशिया (Asia) ही हो और वह सोना पानी का उद्योग करने लगा। सारा टापू छान डालने के उपरान्त उसने एक दूत कैथे के प्रधान को खोजने के लिये भेजा। पर विफल हो कर कोलम्बस ने अधिक प्रयत्न करना व्यर्थ समझा और आगे दूसरे टापू की खोज में पूर्व की ओर प्रस्थान किया। समुद्र में तूफान होने के कारण उसे एक टापू में हठात् लङ्गर डालना पड़ा। पिण्टा (Pinta) जहाज, जो मारटिन एलोनजो पिनजन के अधिकार में था, पीछे छूट गया था। पिनजन एक उत्साही पुरुष था और कोलम्बस समझता था कि वह अब अकेले स्वतंत्रता-पूर्वक समुद्र में यात्रा कर सकता है। बहुत देर तक उसके आसरे ठहरने के बाद वहां से कोलम्बस आगे बढ़ा। ६ दिसम्बर को उसे एक भारी सुन्दर टापू दिखलाई दिया।

तट के किनारे किनारे मल्लाह लोग कई दिन तक चलते रहे। जब कोलम्बस ने उस टापू में स्पेन में सादृश्य पाया तब उसका नाम हिसपानिओला (Hisponiola) रखा। वहां के निवासियों ने अपने अतिथियों का आदर-सत्कार किया। मामूली खिलौनों के लिये वहाँ के निवासी अपने सोने के गहने तक उतार कर मल्लाहों को दे देते थे। इससे मल्लाह लोग भी बहुत अधिक प्रसन्न हो गए थे।

मल्लाहों ने अनेक प्रकार से उन लोगों की परीक्षा की पर उन्होंने सदा विश्वास और मित्रता के साथ व्यवहार किया। सब ने ध्यानपूर्वक उनके संकेत देखे और उस टापू के वैभव की बातें सुनीं।

कोलम्बस पर अब एक भारी आपत्ति आ पड़ी। उसकी असावधानता से उसका जहाज सेन्टा मेरिया (Santa Maria) नष्ट हो गया। बड़ी कठिनता से वह और उसके मल्लाह नीना (Nina) जहाज पर आरूढ़ हुए। यह उपद्रव रात को हुआ था। प्रातःकाल वहाँ के निवासी भी मल्लाहों को, नष्ट हुए जहाज पर से जो अभी तक टुकड़े टुकड़े नहीं हुआ था, बोझ उतारने में सहायता देने लगे।

इस विपद ने कोलम्बस को अधिक दुःखी कर दिया। पर शीघ्र ही उसका उत्साह यह सुन कर बढ़ गया कि इस पासवाले टापू में सोने की कई खानें हैं। यह सूचना सच निकली, क्योंकि वास्तव में उस भूमि में सोने की खानें थीं।

अपनी सफलता की सूचना देने के लिये कोलम्बस ने स्पेन लौटने का विचार किया। पर जब उस टापू के धन का उसे ध्यान हुआ तब उसने सोचा कि कुछ मनुष्यों को यहाँ रहने के लिये छोड़ दिया चाहिए। इस कार्य्य के लिये उसने चालीस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्यों को चुना जो वहाँ रहने के लिये तैयार हो गए। उन सब ने वहीं आनन्द से जीवन बिताना निश्चय किया। वहाँ के देशियों से उनकी अधिक मित्रता भी हो गई। कोलम्बस ने उन लोगों को देशियों की भाषा सीखने और उनसे सोना लेने के लिये व्यापार करने की सम्मति दी और यह भी कहा कि टापू में सोने की खानें खोजते रहना। उन के रहने के लिये एक किला बनाया गया जिसका नाम ला नाविडेड रखा गया।

इस कार्य्य को पूर्ण कर कोलम्बस ४ जनवरी सन् १४९३ ई० को ला नाविडेड (La Navidad) से अपने जहाज नीना (Nina) पर पूर्व की ओर के टापुओं के पास से होता हुआ चला। थोड़े दिनों के बाद वह पिनजन से मिला, जिसने जान बूझ कर कोलम्बस को इसलिये छोड़ दिया था कि मैं ही पहले सोने की जमीन खोज निकालूँ। कोलम्बस उससे अधिक अप्रसन्न नहीं हुआ और अपने गुस्से को रोक कर वह दोनों जहाजों के साथ घर की ओर रवाना हुआ। चौदहवीं फरवरी को उन्होंने एक भयङ्कर तूफान का सामना किया जिसने जहाजों को पृथक् कर दिया और नीना डूबते डूबते बचा। दूसरे दिन तूफान बन्द हो गया और १७ वीं फरवरी को वे सेण्ट मेरी (St. Mary's) के टापू में पहुँचे। वहाँ कोलम्बस ने अपने जहाज की मरम्मत की। जोखिम से बचते हुए और विपदों का सामना करते हुए कोलम्बस २४ वीं फरवरी को वहाँ से रवाना हुआ। पर फिर उसे दूसरे तूफान का सामना करना पड़ा। बेकाम होकर टेगस (Tagus) के मुहाने पर जहाज बह गया। कोलम्बस ने चाहा कि वह अपनी सफलता का समाचार पहले पुर्त्तगालवालों को सुनाए क्योंकि वहाँ के राजा ने पहले उसकी प्रार्थना अस्वीकृत कर दी थी। उसको लिसबन में ठहरने की आज्ञा मिल गई। राजा ने कोलम्बस के मुख से उसकी सारी कथा सुनने के लिये उसे बुलाया। पुर्तगालवाले उस समय उस पर इतने बिगड़े थे कि बहुत से दरबारियों ने उसे मार डालने का प्रस्ताव किया। पर राजा ने उसे सकुशल बिदा कर दिया और १५ मार्च को प्रायः आठ महीने के बाद वह पालोस पहुँचा।

वहाँ कोलम्बस का बड़ी प्रसन्नता के साथ स्वागत किया गया। जो लोग पहले उसके विचार के विरुद्ध थे अब वही बहुत आनन्द से उसका स्वागत करने लगे। मल्लाह लोग नगरवासियों के साथ गिरजाघर में ईश्वर की प्रार्थना करने और उसे धन्यावाद देने गए।

जब यह कार्य्य समाप्त हो गया तब कोलम्बस ने एक पत्र बारसिलोना के दरबार में अपने लौटने और सफलता की सूचना देने के लिये लिख कर भेजा। दरबार में भी उसका स्वागत बहुत अच्छी तरह किया गया। कोलम्बस के साथ बड़ी भारी भीड़ थी। लोग उसकी प्रशंसा करते हुए उसके साथ राजा के सम्मुख उपस्थित हुए। राजा और रानी ने अपने सिंहासन से उतर कर उसका स्वागत किया और उसकी यात्रा की सारी रोचक कथा ध्यानपूर्वक सुनी। क्यूबा आदि के कुछ निवासियों को जिन्हें वह अपने साथ लाया था और अनेक प्रकार के सोने के गहने और दूसरी चीजें प्रमाण स्वरूप उसने राजा के सम्मुख उपस्थित कीं। बातें समाप्त होने के उपरान्त कोलम्बस को पारितोषिक दिया गया। कुछ समय के लिये कोलम्बस मानों दरबार और देश के लिये देवता हो गया।

इस प्रकार कोलम्बस की पहली जलयात्रा समाप्त हुई। उस समय उसे और उसके साथियों को पूर्ण विश्वास था कि जिस टापू को उन्होंने खोज निकाला है वह एशिया के समीप है; और अब भी कोलम्बस को पूर्ण आशा थी कि वह पश्चिम के मार्ग से फिर उस महादेश में पहुँच सकता है।

(शेष आगे।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिमोक्ष सूत्र।

[अनुवादक—श्रीयुक्त कुँवर कन्हैया जू।]

(तिब्बती भाषा में "सो सार थार पा" नामक एक बौद्ध ग्रन्थ है, जो वास्तव में संस्कृत के प्रतिमोक्ष-सूत्र नामक ग्रन्थ का अनुवाद है। मूल संस्कृत ग्रन्थ शायद अब कहीं नहीं मिलता, पर उसका अनुवाद तिब्बती भाषा में मौजूद है। उस ग्रंथ में बौद्ध साधु या भिक्खु-समाज के लिये आचार-व्यवहार आदि के सम्बन्ध में बहुत से नियम या कानून दिए गए हैं जो वास्तव में प्रायः सभी धर्मों के त्यागियों और विरक्तों के लिये बहुत ही उपयोगी और काम के हैं। कलकत्ते के सुप्रसिद्ध विद्वान् महामहोपाध्याय पं० सतीशचंद्र विद्याभूषण जी एम० ए० ने उसका अँगरेजी में अनुवाद किया है जो बंगाल की रायल एशियाटिक सोसायटी के जरनल के मार्च-अप्रैल सन् १९१५ वाले युग्म अंक में प्रकाशित हुआ था। बम्बई-प्रवासी श्रीयुक्त कुँवर कन्हैया जू ने उसका एक अच्छा अनुवाद करके नागरी-प्रचारिणी पत्रिका में प्रकाशित करने के लिये भेजा है जिसके लिये हम उनके कृतज्ञ हैं। यह अनुवाद पत्रिका में क्रमशः प्रकाशित किया जायगा। आशा है, पाठकगण इससे कुछ लाभ उठावेंगे। प० सम्पा०)

निवेदन।

इस समय इस देश का काया-पलट हो रहा है। हिन्दू जाति की सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और व्यावहारिक सब बातों में परिवर्तन हो रहा है। दूरदर्शी नेतागण हर पहलू से जातीयता के संगठन और समाज के सुधार में तत्पर हैं और वस्तुतः यह सुधार उन्नति-शील पाश्चात्य देशों के ढंग पर हो रहा है। सब जातियों, सब देशों और सब तरह के लोगों में सुधार और उन्नति की धुन समाई हुई है। यदि इन विषयों की कहीं कुछ भी चर्चा नहीं है तो वह केवल हिन्दू-जातीय साधु समाज में नहीं है। साधु समाज की यह अवस्था केवल उन्हीं के लिये बुरी नहीं हैं। इससे सारे देश का सर्वनाश हो रहा है। यहाँ यदि यह भी कहा जाय कि साधु-समाज के सुधार हुए बिना हिन्दू-समाज का वास्तविक सुधार होना कठिन ही नहीं वरन् असंभव है तो भी अत्युक्ति न होगी।

अतएव हिन्दू जाति के शुभचिंतकों और समाज के संशोधकों को चाहिए कि वे साधु-समाज के सुधार की ओर भी ध्यान दें। यदि वे ध्यान दें और साधु-सुधार के लिये किसी आधार की आवश्यकता का प्रश्न उपस्थित हो तो उस दशा में यह निकले बल्कि यों कहिए कि पुस्तक विशेष प्रयोजनीय हो सकती है; यही विचार कर मैं ने इस शुष्क-विषय-पूर्ण पुस्तक का अनुवाद करने में अपना समय व्यय किया है।

इस पुस्तक में कोरे कानून का संग्रह ही नहीं है, इसमें एक समय की सामाजिक दशा का आभास भी विद्यमान है। उस आभास में और वर्तमान दशा में बहुत कुछ समानता पाई जाती है।

यदि यह बात सर्व सम्मत और सर्वमान्य हो कि पहले अपराध या अनाचार की सृष्टि होती है और तब उसके प्रतिबन्ध के लिये कानून की रचना होती है तो यह भी अवश्य मानना पड़ेगा कि किसी समय बौद्ध मत में साधु-समाज अधिक हो गए थे और उनके द्वारा पुण्य के बदले पाप और सदाचार के बदले अनाचार का प्रचार होने लगा था; और तब इस कानून की रचना आवश्यक हुई। इस पुस्तक में साधु-समाज-संबन्धी ऐसे कठिन नियमों का समावेश है जिनका निर्वाह साधारण या बनावटी व्यक्ति से कभी नहीं हो सकता। यही मानों साधुओं की संख्या कम करने और उनकी आचरण-शुद्धि की युक्ति का साधन हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसी कानून के आधार पर यदि वर्तमान हिन्दू साधुओं के लिये भी कोई नियमावली संगठित की जाय तो उससे साधुओं तथा उनके श्रद्धालु गृहस्थ शिष्यों का समान रूप से लाभ हो सकता है।

इससे लेश मात्र के लिये भी मेरा यह अभिप्राय नहीं है कि हिन्दू साधु-समाज में साधु-नियमों का सर्वथा अभाव है; इस कारण उन्हें बौद्ध मत के नियमों का आश्रय लेना उचित है। परन्तु बात यह है कि अपने धर्म-ग्रन्थों में जो सारगर्भित उपदेश भरे पड़े हैं वे इस समय समुद्र के उदर में पड़े हुए मोती के समान हैं। अतएव यह विशेष प्रयोजनीय है कि उनको बाहर निकाल कर एक सूत्र में पिरोया जाय, जिससे उनकी भी शोभा बढ़े और अपना भी कल्याण हो।

इस पुस्तक को पढ़ कर मठाधीश, धर्माधीश तथा धनी साधुसेवी सज्जन बहुत कुछ लाभ उठा सकते हैं।

इस अनुवाद की भाषा कुछ बे-डौल है। कारण यह कि इसमें अँग्रेजी मूल के शब्दार्थ पर विशेष ध्यान दिया गया है और देशी भाव और मुहावरे पर कम ध्यान दिया गया है। आशा है कि हिन्दी भाषा के व्याकरणी विद्वान् सज्जन मुझे इस अपराध के लिये क्षमा प्रदान करेंगे—अनुवादक।

अनुवादक और संपादक की भूमिका।

यह जिस ग्रंथ का अनुवाद है वह असल में तिब्बती भाषा में है। उस भाषा में इसका नाम "सो-सार-थार-पा" है जो चीनी भाषा के 'पो-लो दि मो को' की नाईं है। इसी को संस्कृत में प्रतिमोक्ष और पाली में पतिमोक्ख कहते हैं जिससे "प्रत्येक के पापों का उद्धार" की ध्वनि निकलती है। किन्तु वास्तव में इसमें साधुओं के लिये उपयोगी नियममात्र हैं। कङ्ग्यूर की 'क' नामक पुस्तक का अनुवाद न कहीं हुआ है न वह स्वयं प्रकाशित हुई है। यहां व्युत्पत्ति में सो सार-थार पा का सूक्ष्म सार पाया जाता है जिसका अँग्रेजी अनुवाद एलेक्जेंडर कोसमा डी-कोरोस ने किया है। उसी लेखक द्वारा एशियाटिक रिसर्चेज की जिल्द २० में प्रकाशित किए गए 'हुल्व' के अध्यायों में भी इसका पता चलता है। तिब्बती ग्रंथ मूल ग्रन्थ नहीं है; वह भी संस्कृत का अनुवाद है। उस मूल संस्कृत ग्रंथ का नाम प्रति-मोक्ष था जो कि अब अप्राप्य है। तिब्बती ग्रंथ के देखने से यह प्रतीत होता है कि कश्मीर के किसी बौद्ध साधु ने उसे अनुवदित किया था। उसका नाम जैन मित्र था। उसने यह कार्य्य क्लुहि-रग्यल-म्लशन नामक तिब्बती दुभाषिए की सहायता से किया था जो कि कोग्र का रहनेवाला था। जैन-मित्र आर्य्य-मूलसार वास्ति शाखा का बड़ा पंडित था। यह भी निश्चय किया जाता है कि उसके द्वारा संस्कृत से तिब्बती भाषा में अनुवादित यह ग्रन्थ उसी शाखा से संबन्ध रखता है।

यह निश्चय नहीं हो सकता कि श्रावस्ती शाखा के संस्कृत के प्रतिमोक्ष की रचना कब हुई। अनुमान किया जाता है कि इसकी रचना निश्चय ही धम्म पद और महापरिनिब्बान सूत्र के पश्चात् हुई है। क्योंकि इसके आदि और अंत में धम्म पद के अवतीर्ण श्लोक दिए हुए हैं। आर्य्य मूल सर्वास्थिवेद-शाखा-सन् ७८ ईसवी में महाराज अशोक के समय में विद्यमान थी।

जैनमित्र कश्मीर का निवासी और तर्क-ग्रंथ न्यायबिंदु पिंडार्थिक का रचयिता था। सर्वजिनदेव, दानशील और अन्य कई पंडितों के साथ वह तिब्बत गया और वहाँ उसने राजा 'क्रीरल' के राजकाल में संस्कृत पुस्तकों का तिब्बती भाषा में अनुवाद किया। क्रीरल का दूसरा नाम 'राल-पा-कान" भी प्रसिद्ध है। इस राजा का जन्मकाल सन् ८६४ ईसवी है। अतएव जैन मित्र भी नवीं शताब्दी के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तरार्द्ध में हुआ होगा और यही समय संस्कृत प्रतिमोक्ष का तिब्बती "सो-सार-थार-पा" के रूप में अनुवादित होने का है।

गत ११०० वर्षों से तिब्बत में इस ग्रन्थ का बड़ा आदर है। प्रत्येक विहार या संघ में यह ग्रन्थ बड़ी श्रद्धा से प्रति पक्ष पढ़ा जाता है। संघ का श्रेष्ठ लामा इसको पढ़ता है। इसे सुनने के लिये आसपास के लामा लोगों का बड़ा समारोह होता है। सोसार-थार-पा, जिसमें साधुओं के जानने और स्मरण रखने योग्य बातें हैं वहाँ "खिम्स" कहलाता है। सोसार थार-पा की तरह की एक दूसरी पुस्तक भी तिब्बती भाषा में है। उसे वे लोग "कांगे" कहते हैं और इसमें भी साधुओं के नियमों का समावेश है। यही पुस्तक अधिकांश विहारों में पढ़ी जाती है, जिसके पाँच भाग हैं।

(१) स्योरवाही चोगा—इस सम्मेलन-खंड में घंटी बजा कर साधुओं को एकत्र करने की व्यवस्था का वर्णन है।

(२) फराग हत्सालवान—अभिवादन-दल में वह वर्णन है कि जो व्यक्ति बुद्धदेव, धर्म और संघ को अभिवादन करे उसे हाथ जोड़कर सीधा खड़ा होना चाहिए।

(३) शुल खिम्स क्विम्डो—आचरण-व्यवस्था। इसमें यह वर्णन है कि श्रावस्ती के अनाथ पिंड के जैतवन में बुद्धदेव ने आचरण के विषय में क्या उपदेश किए।

(४) स्पी ब्रसग्स—साधारण पश्चात्ताप। इसमें इस बात का वर्णन है कि कोई साधु अपने मानसिक, वाचिक और कायिक पापों को साधु समाज में किस प्रकार से प्रकट करे।

(५) गुसोस्योम—पाप शुद्धि। इसमें बतलाया गया है कि पापों से मुक्त होने के लिये साधुओं द्वारा निर्वाचित कैसी कठिन तपस्या करनी चाहिए।

प्रतिमोक्ष सूत्र।

यह कहा जा चुका है कि तिब्बती सोसार थार चीनी पो-लो-टि मो का और पाली पतिमोक्ख मिलता है। 'पो-लो-टि मो का' का अङ्गरेजी अनुवा रेवरेंड एस वेल ने किया था और वह ग्रेट ब्रिटे और आयरलेण्ड की रायल एशियाटिक सोसाइ के मासिकपत्र में सन् १८६२ में प्रकाशित हु था। यह चीनी 'पो लो टि मो का' भी संस्कृत प्रतिमोक्ष का अनुवाद है जो कि अब दुष्प्राप्य है। य प्रतिमोक्ष उस प्रतिमोक्ष से बिलकुल नहीं मिल था जिसके आधार पर तिब्बती सो-सार थार-पा रचना हुई है। क्योंकि चीनी भाषा में अनुवाद हो वाला प्रतिमोक्ष धर्मगुप्त की शाखा का था। ची पो-लो-टि मो का का मूल संस्कृत प्रतिमोक्ष 'चतु विनय पीठिका' में शामिल था, जिसको धर्मगु विनय भी कहते हैं। "बनिव्यू नंज्यो" की सूची पता चलता है कि चीनी अनुवाद सन् ४०५ ई० हुआ था। धर्मगुप्त की शाखा को धर्मगुटी या ध गुट्टिका भी कहते हैं, जो बुद्धदेव के निर्वाण पश्चात् दूसरी शताब्दी में प्रकट हुई। यह उन शाखाओं में से एक है जिनमें कनिष्क के राजका में सन् ७८ई० में बौद्धमत विभाजित था।

पाली भाषा का पतिमोक्ख अवश्य इन दो संस्कृत प्रतिमोक्षों से प्राचीन प्रतीत होता है जि आधार पर चीनी पोलोटि मोका और तिब्बती सो-सा थार-पा की रचनाएं हुईं। पतिमोक्ख का अङ्गरे अनुवाद रेवरेण्ड डा० गोर्जली ने ग्रेट ब्रिटेन आयरलेण्ड की एशियाटिक सोसाइटी के मासिक में सन् १८६२ ई० में प्रकाशित किया था। इसी दूसरा अनुवाद फिर १८८१ में प्रकाशित किया ग द्राविड़शाखा का पाली 'पतिमोक्ख' प्रसिद्ध है। शाखा को बुद्धदेव ने स्वयं ईसा से ५०० वर्ष स्थापित किया था। यह बुद्धदेव के मौखिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देश थे और कुछ दिनों तक उनका उसी मौखिक अवस्था में प्रचार रहा। तब वे लंका टापू में वत्थुगामनि के राजकाल में (१४०-७६ ई० पू०) लिपिबद्ध किए गए।

सोसार-थार-पा में २५८ सूत्र हैं; पर पो-लो-टिमोका में २५० और पतिमोक्ख में २२७ सूत्र हैं। यह अंतर प्रायश्चित्त धर्मवाले खंड में का है। इसमें पाली ग्रन्थ में ९२ सूत्र हैं और चीनी और तिब्बती में ९० हैं। "जानने योग्य नियम" के खंड में भी भिन्नता है जिसमें पाली में ७५, चीनी में १०० और तिब्बती में १०८ * सूत्र हैं। तिब्बती ग्रन्थ की प्रस्तावना भी चीनी और पाली ग्रन्थों से भिन्न है। तीनों ग्रन्थों के सूत्रों में भी परस्पर विभिन्नता है।

तिब्बती सोसार-थार-पा का यह अनुवाद करने में मैंने पाली पतिमोक्ख के अनुवाद का विशेष अध्ययन किया है। मैंने इस अनुवाद में मूल के तद्वत् शब्दानुवाद करने की चेष्टा की है। और वह इसलिये कि जिसमें तिब्बती सूत्रों का अविकल भाव इसमें अवतीर्ण हो जाय। कठिन सूत्रों के विषय में मैंने तिब्बती सो-सार-थार-पा की टिप्पणियों से सहायता ली है।

प्रथम पुस्तक।

(१) प्रस्तावना।
(२) भ्रष्ट होने के सम्बन्ध में चार नियम।
(३) साधुता से पतित होने के सम्बन्ध में तेरह नियम।
(४) अनिश्चित विषय विषयक दो नियम।
(५) वित्तहरण की व्यवस्था के संबंध में तीस नियम।

दूसरी पुस्तक।

(१) प्रायश्चित्त-विषयक पापों के नब्बे नियम।
(२) पश्चात्ताप-विषयक चार नियम।
(३) जानने योग्य अनेक नियम।
(४) निपटारे के सात नियम।
(५) उपनय।

प्रातिमोक्षसूत्र।

प्रथम खंड।

निदान १

प्रतिमोक्ष सूत्र का माहात्म्य।

उस सर्वज्ञ एक (पुरुष) को नमस्कार है।

जीवधारियों में अग्रगण्य, जिसके प्रताप की पताका त्रैलोक में फहराती है, जिसने सिंहनाद से पवित्र धर्म का उच्चारण किया, जिसने सर्वज्ञता का अमूल्य भाण्डार प्राप्त किया, ब्रह्मा और इन्द्र के मुकुट-मणि जिसके चरणों को स्पर्श करते हैं और जिसने इस अथाह और अपार भव-सागर को पार किया है उसके सामने मैं अपना मस्तक नवाता हूँ। (१)

यह प्रतिमोक्ष-सूत्र सर्वज्ञता की शिक्षा का आधार है। यह रत्नों का मंजूषा साधु समाज में पृथक् रखा है। बौद्ध-धर्म-नियम रूपी जल से भरा हुआ यह सुविस्तृत सरोवर है। इस अथाह और अपार संसार सागर में जो कुछ विद्यमान् है यह सब का सार-रूप है। (२)

धर्म के अधिष्ठाता द्वारा उपदेश किए गए पवित्र सिद्धांतों का यह सुबृहत् सोपान है। साधु समाज की यदि व्यापारियों से तुलना की जाय तो उनके लिये यह यावत् शिक्षाप्रद पक्षार्थों का संग्रहालय है। (३)

चरित्र-नियमों का उल्लंघन करने के कारण जो

* "जानने योग्य नियम" के खंड के भाषण में ११२ सूत्र पढ़े जाते हैं। पर वास्तव में वे हैं केवल १०८। इस अंतर का कारण यह है कि ६९ से ७२ तक के सूत्र दोबार कहे जाते हैं। इसी प्रकार "मिथ्या दोषारोपण" के चार नियम और भिक्षापात्र-सम्बन्धी दस नियम भी दोहराए जाते हैं। सार सूत्र के अनुसार तो यहाँ १०७ ही सूत्र होते हैं क्योंकि ५९ से ६३ तक की गणना इसमें नहीं की गई है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्लान्त हैं उनकी व्याधि शमन करने के लिये यह महौषधि है। और जो युवा आयु के मद में मस्त हैं उनके लिये यह लोहे का चाबुक है। (४)

इस आवागमनमय संसार-सागर को पार करने का यह प्रधान द्वार है और जो जीवन की उत्तम सीमा की ओर जाना चाहते हैं उनके लिये यह पुल या दृढ़ नौका स्वरूप है। (५)

यह आपत्तियों पर विजय-लाभ की ओर जानेवाला मार्ग है। राजाओं के लिये यह सर्वोत्तम मार्ग-दर्शक है और यह मोक्ष-नगर का प्रस्तुत सोपान भी है। (६)

"जब मैं निर्वाण प्राप्त करूँगा तब सोसार-थारपा तुम्हारा उपदेष्टा होगा" यह वाक्य स्मरण करके हे साधुओ, इसके कथनोपकथन के लिये उसी श्रद्धा से एकत्र हो जो तुम स्वयं बुद्धदेव में रखते हो। (७)

संपूर्ण संसार में बुद्ध का नाम दुर्लभ है। मनुष्य का जन्म पाना दुर्लभ है। इस पर साधु होना और साधु हो कर भी साधु-आचरण के नियमों का परिपालन करना और भी दुर्लभ है। वस्तुतः चरित्र भी शुद्ध हो, पर आत्मिक शुद्धि होना तो बहुत ही कठिन है। (८)

ध्यान रहे कि इस पृथ्वी पर बुद्धदेव के दर्शन होना दुर्लभ है और मनुष्य का जन्म पाने, साधु होने, शुद्ध आचरण रखने या आत्मशुद्धि प्राप्त करने के लिये वे बुद्धजन जो अपने आश्रितों का भला करना चाहते हैं और फल-प्राप्ति के लिये दोनों मार्गों में बढ़ने की लालसा रखते हैं, सो-सार-थारपा को सुनें। (९—१०)

त्याग में दृढ़, साधुओं में प्रधान और उपदेश-पूर्ण नियमों के शिक्षक, मोक्ष-प्राप्ति के सच्चे इच्छुक बुद्धदेव ने सो-सार-थार-पा की रक्षा की। (११)

सहस्रों वर्षों में भी सो-सार-थार-पा का सुनना समझना और मनन करना कठिन है। इसका पालन करना तो बहुत ही कठिन है। (१२)

बुद्धदेव का जन्म धन्य है! धर्म का उद्घाटन भी धन्य है!! साधु समाज में समता ही परमानंद है और जो समता में हैं उनके प्रति श्रद्धा होना परमानंदमय है। (१३)

बुद्ध के दर्शन पुनीत हैं, पवित्र आत्माओं का सत्संग भी पुनीत है और पापिष्ठ पुरुषों का दर्शन भी न होना वास्तव में अनंत आनंद है। (१४)

सच्चारित्रता के नियमों को पालन करनेवाले के दर्शन धन्य हैं, एक विद्वान् व्यक्ति के दर्शन भी धन्य हैं। पुनर्जन्म से मुक्ति पाने के हेतु अर्हतों के दर्शन धन्य हैं! (१५)

आनंदमय किनारोंवाली सरिता धन्य है और धार्मिक विषयों का मनन करनेवाला व्यक्ति धन्य है। इसी प्रकार न्यायबुद्धि की प्रवृत्ति और अहंबुद्धि की निवृत्ति धन्य है। (१६)

उन पुरुषों का अस्तित्व धन्य है जिन्होंने अपनी इन्द्रियों को जीत लिया है। शान्तिमय साधु संघों में रह कर जो वृद्ध हो गए हैं तथा जिन्होंने अपनी युवा अवस्था विद्वज्जनों के साथ बिताई है वे भी धन्य हैं। (१७)

सो-सार-थार-पा का भाषण करनेवाले साधु का वक्तव्य।

हे भाइयो! वर्ष की कुछ ऋतुएं व्यतीत हो गईं कुछ आने वाली हैं। कितनी? अनेक, असंख्य। भाइयो! वृद्धावस्था और मृत्यु शीघ्रता से आ रही है और उपदेष्टा के उपदेश समाप्त होनेवाले हैं। साधुओं के समाज को उचित है कि वह उपदेशों का मानन करे। तथागत अर्हत ने पूर्ण बौद्ध-प्रतिज्ञा को अंगीकार किया; कुछ लोगों ने उनका अनुकरण करके धर्म की प्राप्ति के लिये आग्रह-पूर्वक प्रयत्न किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुद्धदेव के चरणों में अनुरक्त हमारा साधुओं का समाज यहाँ तुच्छ सम्बन्धों में लिप्त है। हमारे कर्म घृणित हो रहे हैं। हमको विचारना चाहिए कि हमारे साधु-समाज का मुख्य कर्त्तव्य क्या है।

हमको सम्मति लेने दो और जो साधु नहीं आए हैं उनकी पवित्रता के विषय में जाँच करने दो। तदनंतर मैं आगे भाषण प्रारम्भ करूँगा।

हाथ जोड़ कर और शाक्यसिंह को नमस्कार करके अपनी आचरण-शुद्धि के हेतु तुम मुझ से प्रतिमोक्ष-सूत्र सुनो जिसका मैं भाषण करता हूँ। (१८)

हे बुध-जनों ! उपदेश सुन कर तुम्हें उसी के अनुसार आचरण करना चाहिए और तुम्हें दृढ़ता के साथ लेश मात्र पाप से भी परे रहने में प्रवृत्त होना चाहिए (१९)

जो व्यक्ति बुद्धदेव के मुख से उच्चारण किए हुए आदेशों का पालन करने के हेतु अपने अश्व रूपी विचारों को निरन्तर कोड़े मार मार कर सीधा करने का प्रयत्न करते हैं उनके लिये यह सोसार-थारपा वास्तव में लगाम है (२०)

वे महज्जन, जो वचनों द्वारा भी उचित मार्ग से भ्रष्ट नहीं होते कुलीन घोड़ों के समान हैं जो आपत्तियों के युद्ध में अवश्य विजय लाभ करते हैं। (२१)

जिनको लगाम नहीं लगी है और जो इसकी इच्छा भी नहीं करते वे आपत्तियों के युद्ध में घबरा जाते हैं और इधर उधर मारे मारे फिरते हैं। (२२)

हे भाइयो! मेरी बात सुनो, मैं निवेदन करता हूँ। साधु-समाज की सभा होने के लिये आज चान्द्रायण मास का १४वाँ (या* १५) दिन है। यदि समाज को यह सुविधा जनक हो तो हमको सभा करके सोसार थारपा का संभाषण करने दो। हे भाइयो ! हम सभा का उत्सवकार्य्य करते हैं और सोसार-थारपा का भाषण करते हैं।

तुम लोगों में से किसी ने यदि कोई अपराध किया हो तो वह उसे कथन करे। यदि किसी ने कोई अपराध नहीं किया तो कोई कुछ न कहो। यदि कुछ न कहा गया तो मैं समझूँगा कि सब भाई सर्वथा पवित्र हैं। यदि किसी साधु से पृथक् प्रश्न किया जाय तो वह उसका उत्तर दे। इसी प्रकार तीन बार सब साधु-समाज से जब कोई प्रश्न किया जाय तब प्रत्येक साधु को उसका उत्तर देना चाहिए। ऐसे समाज में उपस्थित जो साधु तीन बार प्रश्न करने पर भी अपने ऐसे अपराधों को कथन न करे जिनका प्रमाण उपस्थित है तो वह जान कर झूठ बोलने का अपराधी है। हे भाइयो ! यह बुद्धदेव का वचन है कि झूठ बोलना मार्ग का कंटक है। इसलिये किसी साधु ने यदि कोई अपराध किया हो और वह उससे निवृत्ति चाहता हो तो उसे स्पष्ट कथन करना चाहिए। यदि उसे स्मरण है, और वह उस पर पश्चात्ताप करके उसे कथन नहीं करता तो वह सुखी न होगा।

---

* यदि किसी एक सौर्य्य दिन में तीन चांद्रायण तिथियों की संधि हो तो मध्य का अंश लिया जाता है। जब शुक्ल पक्ष की परिवा अनिश्चित हो तो १४ को सोसार थारपा का भाषण होता है। सभा तीन प्रकार की होती हैं (१) वह जो शुक्ला १४ को हो (२) वह जो कृष्णमावास्या को हो और (३) वह जो साधु-समाज की सम्मति से किसी दिन हो। साल भर में तीन ऋतुएं होती हैं—जाड़ा, गरमी और बरसात। प्रत्येक ऋतु में आठ बार सोसारथारपा का संभाषण होता है। तीसरा और सातवाँ सम्मेलत चतुर्दशी को होता है। शेष भाषण प्रति पूर्णिमा और अमावास्या को होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे भाइयो! मैं सोसार थारपा की भूमिका का वर्णन कर चुका हूँ। अब मैं पूछता हूँ कि क्या तुम सब लोग इस विषय में सर्वथा पवित्र हो? मैं तुम से दूसरी बार और तीसरी बार पूछता हूँ। इस विषय में भाइयो (तुम लोग) सर्वथा पवित्र हो इसलिये कुछ भी नहीं कहते, यह मैंने समझ लिया।

भ्रष्ट होने के विषय में चार नियम।

पाराजिका।

सार—अपवित्र आचरण, (कुशील) चोरी, हत्या और असत्यता—यही चार पाप हैं जिन के विषय में यहाँ नियम दिए गए हैं।

हे भाइयो! प्रति पक्ष में संपूर्ण होनेवाले सोसार-थार-पा से जाने गए बहिष्कार के विषय में चार नियम ये हैं।

(१) किसी साधु ने जिसने नियमों की शिक्षा पाकर उन्हें परित्याग नहीं किया और न भंग किया है यदि वह किसी जंगली जंतु के प्रति भी अपवित्रता या दुःशीलता के व्यवहार में तत्पर होता है तो वह बहिष्कार का भागी है और फिर उसे साधु-समाज में न रहना चाहिए।

(२) किसी गाँव, विहार या संघ में रहनेवाला साधु जो बिना दी हुई वस्तु इस प्रकार लेता है जिसकी चोरी में गणना हो सकती है या जिसके लिये राजा या राजमंत्री उसे पकड़ कर निधन करवा सकता है, या कारावास या निर्वासन का दंड दे सकता है और कह सकता है कि "तू चोर है, तू मूर्ख है, तू बेईमान है" वह बहिष्कार का भागी है और फिर उसे साधु-समाज में न रहना चाहिए।

(३) जो साधु जान बूझ कर किसी मनुष्य के प्राण लेता है या उसे मारने के लिये कोई हथियार देता है या किसी मारनेवाले को भेजता है या किसी को आत्महत्या के लिये प्रेरित करके मृत्यु की प्रशंसा करता है और कहता है कि रे मनुष्य! पापिष्ठ, अपवित्र और तुच्छ जीवन से क्या लाभ है, जीवित रहने से तुमको मर जाना ही अच्छा है अर्थात किसी को जान बूझ कर आत्महत्या के लिये इस प्रकार से उत्साहित करता है कि जिसके परिणाम में वह मर जाय तो वह बहिष्कार के योग्य है और फिर उसे साधु-समाज में न रहना चाहिए।

(४) कोई साधु जो स्पष्ट और पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति के बिना अपने आप कहता है कि मुझे दैवी ज्ञान प्राप्त है, मैं सर्वोपरि हूँ, मैं सिद्ध-हस्त हूँ, मैं यह जानता हूँ, मैं यह देखता हूँ, बिना ऐसे अभ्यास के न तो कोई चीज़ देखी जा सकती है न जानी जा सकती है, और यह जान कर कि ऐसे वक्तव्य से कोई पाप प्रकट हुआ है और उस पाप से अपने को पवित्र रखने के लिये वह साधु दूसरी बार, पूछे बिना पूछे यह कहता है "भाइयो! जब मैं नहीं जानता था तब मैंने कहा कि मैं जानता हूँ, मैंने नहीं देखा और कहा कि देखा है। तो अत्यन्त विश्वस्त होने पर भी वह बहिष्कार का भागी है और फिर उसे साधु-समाज में न रहना चाहिए।

हे भाइयो! बहिष्कार के विषय में चार नियमों का वर्णन मैंने किया है। यदि इनमें से किसी नियम के भंग के कारण उत्पन्न होनेवाला पाप किसी ने किया तो वह बहिष्कार का भागी है। अब उसे साधु-समाज में न रहना चाहिए क्योंकि वह अपने स्वत्व से वंचित हो चुका।

(शेष आगे

—:o:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र-भाषा के गुण

[लेखक—एक हिन्दी-प्रेमी।]

एक सम्पादक महाशय अपनी मासिक पत्रिका में राष्ट्र-भाषा के लक्षण निश्चित करने की चेष्टा करते हुए उस भाषा में तीन गुण आवश्यक समझते हैं।

(१) देश के अधिकांश निवासी उसे समझते हों,
(२) उसके सीखने में विशेष कठिनाई न पड़ती हो और
(३) अन्यान्य देशी भाषाओं से वह मिलती जुलती हो।

ये तीनों गुण क्रमाङ्क लगाकर आपने अलग अलग लिखे हैं; पर क्या पहला और तीसरा गुण एक दूसरे से भिन्न है? जिस भाषा को देश के अधिकांश निवासी समझते हों, वह क्या अन्यान्य भाषाओं से मिलती जुलती न होगी? यदि नहीं तो वे लोग उसे समझ ही कैसे सकेंगे? और फिर ऐसा भी तो हो सकता है कि राष्ट्र-भाषा और और देशी भाषाओं से मिलती जुलती न हो, तो भी उसकी व्यापकता के कारण वे उसे समझ सकते हों।

सम्पादकजी ने हिन्दी को लक्ष्य करके इन गुणों की कल्पना की है; पर आपका सूचित किया हुआ तीसरा गुण हिन्दी में नहीं है; क्योंकि यह भाषा द्राविड़ी भाषाओं से मिलती जुलती नहीं है। कदाचित् इसी लिये आप आगे चल कर लिखते हैं कि "ऐसी भाषा हिन्दी ही समझी गई है" पर आप स्पष्ट रूप से यह नहीं बताते कि हम स्वयं उसे ऐसी भाषा समझते हैं या नहीं। और न आप के तीसरे नियम से यह सूचित होता है कि यह मेलजोल आप भारत की सब भाषाओं से चाहते हैं या केवल अधिकांश आर्य-भाषाओं से ही। यदि आप अपने इस नियम में 'अधिकांश' शब्द रख देते तो आपका यह नियम पहले नियम से पृथक् हो जाता और इसमें बहुत कुछ स्पष्टता आ जाती। जान पड़ता है कि आपने जान बूझ कर यह शब्द छोड़ दिया है।

आपके "मिलती जुलती" शब्द भी विचारणीय हैं; क्योंकि इनमें भी अस्पष्टता भरी है। यह मिलना-जुलना व्याकरण का है या कोश का? अथवा दोनों का? और यह गुण राष्ट्र भाषा में स्वभावसिद्ध हो अथवा कृत्रिम उपायों से लाया जाय? सम्पादकजी के इन रहस्यों का पता उनके अगले वाक्यों से लगता है जब आप स्पष्ट रूप से यह कहते हैं कि भाषा को ऐसा रूप देना चाहिए कि वह निरी हिन्दुओं की भाषा न हो जाय। आपके इस वचन से प्रकट है कि हिन्दी को कृत्रिम उपायों के द्वारा अन्यान्य भाषाओं से "मिलती जुलती" बनाने की आवश्यकता है और आपके "रूप" शब्द से यह प्रतीत होता है कि हिन्दी को राष्ट्र-भाषा बनाने के लिये उसमें व्याकरण और कोष सम्बन्धी हेरफेर करना चाहिए। आपने इन हेरफेरों की कोई स्पष्ट सूची नहीं दी है, तथापि आपकी यह इच्छा अवश्य दिखाई देती है कि हिन्दी राष्ट्र-भाषा होने पर अहिन्दुओं* की समझ में आने लगे; क्योंकि आपके कथनानुसार यह देश अब निरे हिन्दुओं का निवास-स्थान नहीं है। मुसलमान, पारसी अँगरेज आदि कई जाति के लोग इसमें बसते हैं। इन सब के सुभीते की ओर ध्यान रखना प्रत्येक-देशहितैषी सज्जन का कर्त्तव्य है।

यद्यपि आपके इस विषय के लेख के समान आपकी सूचनाओं में भी स्पष्टता नहीं है—क्योंकि एक जगह आप यह कहते हैं कि हिन्दी निरी हिन्दुओं

*आप "हिन्दू, हिन्दी, हिन्दुस्थान" का मंत्र जपनेवालों के नाम से बहुत चिढ़ते हैं; पर आप इस बात का विचार करने का कष्ट नहीं उठाते कि जाति, धर्म, भाषा और देश के नामों में बहुधा सम्बन्ध (सादृश्य) रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की भाषा न हो जाय और दूसरी जगह आपको यह डर है कि हिन्दी भी संस्कृत के समान कहीं थोड़े से विद्वानों भर की भाषा न रह जाय—तथापि आपकी समझ में संस्कृत शब्दों का प्रचार कम करने, तद्भव शब्दों का प्रचार बढ़ाने और उर्दू रूप में लिखने से हिन्दी अहिन्दुओं की समझ में भी आ सकेगी और तभी वह राष्ट्रभाषा बन सकती है। इनके सिवा और भी दो चार छोटे मोटे हेरफेर आपके लेख से सूचित होते हैं और वे शब्दों के वर्ण-विन्यास से सम्बन्ध रखते हैं। इस विषय में आपके कहने का सारांश यही जान पड़ता है कि हिन्दी भाषा (आगे को) ऐसी होनी चाहिए जो हिन्दू तथा अहिन्दू और शिक्षित तथा अशिक्षित, सब की समझ में आ सके।

आपके लेख का गूढ़ सङ्केत उर्दू के शब्दों और उसके वर्ण-विन्यास के प्रचार की ओर अधिक दिखाई देता है; और कदाचित् इसी विचार से आपने राष्ट्र-भाषा के तीसरे गुण को सर्वव्यापी बना दिया है। आप "हिन्दुस्तान" को "हिन्दुस्थान" और "अजुध्या-प्रसाद" को "अयोध्याप्रसाद" लिखना राष्ट्रभाषा के लिये अनुचित समझते हैं; पर आप यह नहीं विचारते कि जब "हिन्दू" शब्द संस्कृत से व्युत्पन्न सिद्ध हो गया है तब उसमें उर्दू का "इस्तान" प्रत्यय कैसे लगाएँगे ? आपकी इच्छा हो तो आप श्मशान के बदले "कब्रिस्तान" अथवा मरुस्थल के लिये 'रेगिस्तान' भले ही कह लीजिए; पर कृपा कर हिन्दु-स्थान को उर्दुस्तान न बनाइए ! "अयोध्या" को जो लोग "अजुध्या" कहते हैं वे "प्रसाद" को "परसाद" अथवा "परशाद" भी कहते हैं; तब आप "अजुध्या" के साथ "प्रसाद" लगाने की उदारता व्यर्थ ही दिखा रहे हैं। आधा सत्य बहुधा भयङ्कर होता है।

आप हिन्दी और उर्दू को एक ही भाषा समझ कर यह लिखते हैं कि मुसलमान लोग उसमें अरबी-फारसी के अधिक शब्द भरते हैं और आजकल के कई हिन्दी-लेखक कठिन कठिन संस्कृत शब्द। इस युक्ति से आपने संस्कृत के पहले दो दो "कठिन" विशेषण लगा कर उसे और भी कठिन बना दिया; पर अरबी फ़ारसी शब्दों के लिये कुछ न लिखा कि ये सहज हैं या कठिन। यदि उर्दू के अरबी फ़ारसी शब्द कठिन नहीं हैं तो आप उर्दू को हिन्दी ही क्यों नहीं कहते, जो कि आप उर्दू भाषा के प्रचलित शब्दों को संस्कृत में देने के विरोधी हैं और स्वतन्त्रता से उन्हें हिन्दी में लिखने के पक्षपाती हैं ?

उर्दू शब्दों के प्रचार से मुसलमानों के साथ साथ अँगरेज़ों और पारसियों को भी लाभ हो सकता है, क्योंकि ये सब अहिन्दू हैं। पर द्रविड़ लोगों को जिनकी संख्या अहिन्दुओं से कम नहीं है, उर्दू शब्दों से क्या लाभ होगा ? यद्यपि द्राविड़ी भाषाएँ संस्कृत नहीं हैं, तथापि उनमें संस्कृत शब्दों की अधिकता है, यहाँ तक कि कई द्रविड़ों की मातृभाषा ही संस्कृत है। फिर कई एक अहिन्दू जातियाँ जैसे जैन, सिक्ख, गोंड, भील, आदि ऐसी हैं जिन्हें संस्कृत शब्द सहज मालूम होते हैं। इसके सिवा भरतखंड की अधिकांश आर्य भाषाओं में भी उर्दू शब्दों की उतनी बहुतायत नहीं है जितनी हिन्दी में आजकल संस्कृतयुग में भी पाई जाती है। इन शुद्ध उर्दू शब्दों के प्रयोग से एक का लाभ होगा तो दस की हानि होगी।

भाषा की सरलता अथवा कठिनता विषय के अनुसार होती है। राष्ट्र-भाषा की नियुक्ति किस्से-कहानियाँ लिखने के लिये नहीं होती; किन्तु गम्भीर विचारों का प्रसार करने के लिये होती है। भाषा का ज्ञान या तो पुस्तकें पढ़ने से होता है अथवा सम्भाषण के अभ्यास से; इसलिये किसी अर्द्ध-परिचित भाषा को केवल सहज कर देने ही से काम नहीं चलता। पढ़ने के अभ्यास से तो यहाँ तक देखा गया है कि गोविन्दराम हिन्दी की चौथी कक्षा पास कर अपना दावा समझने लगे हैं और उसका जवाब भी कानून

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी में लिख लेते हैं। जिन लोगों के सुभीते का विचार सम्पादक जी ने किया है वे यदि लैटिन-लदी अँगरेजी और अरबी-लदी उर्दू समझ सकते हैं तो साधारण संस्कृतमय हिन्दी समझने में उन्हें क्या हुआ! थोड़ा-बहुत अभ्यास अवश्य करना पड़ेगा। वह दिन सचमुच परम आनन्द (निहायत ख़ुशी) का होगा जब अहिन्दुओं में अँगरेज़ लोग, जिनका निवास-स्थान इस देश में है, राष्ट्र-भाषा का सरल रूप ही समझने लगेंगे और उसको स्वीकार कर लेंगे।

दूसरे लोगों के सुभीते के लिये अपनी भाषा को सरल करने की बात बहुत कम सुनने में आई है। बच्चों के लिये अवश्य सहज भाषा लिखी जाती है और तरुणों के लिये उससे कुछ कठिन भाषा लिखते हैं; पर शिक्षितों के लिये शिक्षितों ही की भाषा उपयोग में लाई जाती है। क्या लाट साहब की कौंसिल की कार्रवाई ऐसी भाषा में लिखी जाती है जिसे एफ० ए० कक्षा का विद्यार्थी सहज में ही समझ सके? यदि ऐसा नहीं है तो रामन्ना बटलर उसे कैसे समझ सकता है? तब क्या राष्ट्र-भाषा की हिन्दी इतनी सहज कर दी जाय कि उसे पुनऊ कोटवार सुनते ही समझ जाय? सच बात तो यह है कि सब कामों के लिये एकरूप भाषा लिखना कठिन क्या असम्भव है। हिन्दी में जो नए नए रूप दिखाई देते हैं—भाषा के स्वाभाविक और सामयिक परिवर्त्तनों को कोई रोक नहीं सकता—वे भाषा को कठिन नहीं बनाते हैं; किन्तु भाषा में स्थिरता लाते जाते हैं और दूसरी आर्य-भाषाओं से उसे "मिलाते जुलाते" हैं। सम्पादक साहब जिन हलन्त शब्दों के प्रचार की शिकायत करते हैं वे इसी रूप से बंगला, मराठी, गुजराती आदि भाषाओं में भी व्यवहृत होते हैं। हाँ इन बातों का मेल केवल उर्दू से नहीं मिलता; पर उसके लिये उपाय ही क्या है? क्योंकि हम लोग तो अलिफ़ के नाम भाला भी नहीं जानते। इसी एक दोष के कारण सम्पादक जी हिन्दी भाषा में कठिनाइयों की कल्पना करते हैं और जीभ दबा कर यह कहते हैं कि इन सब नए नए परिवर्त्तनों से भाषा की सरलता, जो उसके राष्ट्र-भाषा होने का एक गुण बतलाई जाती है, अब लुप्त होती जाती है। आप भाषा को सहज बनाने के लिये कैसी ही चेष्टा क्यों न करें पर आपके हिन्दुओं ही में कायस्थ लोग यही कहेंगे कि—

"हजरत चितरगुपत साहिब, तसलीम करूँ या तिरपनताम"।

इस अवस्था में मुसलमानों के लिये तो यही कहना पड़ेगा कि:—

"जहँ अस दशा जड़न की बरनी।
को कहि सकै सचेतन करनी॥"

सम्पादक जी के तद्भव शब्दों के प्रचार के विचार से हम कुछ कुछ सहमत हैं; पर इस विषय में भी आपकी सम्मति स्पष्ट नहीं है। आप लिखते हैं कि यदि हम संस्कृत शब्दों और संस्कृत प्रयोगों से ही बोलचाल की भाषा को भरते जायँगे तो वह अन्य भाषा-भाषियों के लिये उतनी ही अधिक कठिन होती जायगी। आपके इन वचनों में दो पद प्रधान हैं—(१) बोल चाल की भाषा और (२) अन्य-भाषा-भाषियों की कठिनाई। "बोल चाल की भाषा" कहने से यह समझ में नहीं आता कि यह कौन सी भाषा है और किस प्रकार की भाषा में आप संस्कृत शब्दों और प्रयोगों का निषेध करते हैं। क्या आप आज तक "भरे" हुए शब्दों से अधिक भरती नहीं चाहते अथवा आज तक की भरती ही को रद करने की सम्मति देते हैं?

यदि प्रस्ताव, अनुमोदन, स्त्रीशिक्षा, व्यायाम, आदि दो चार ही शब्द निकाल दिए जाँय तो इनके स्थान में किन शब्दों की योजना की जायगी? यह बस हम अनुमान से कह रहे हैं; क्योंकि लेखक महाशय के गूढ़ भाव समझना कठिन है। अन्य-भाषा-भाषियों की कठिनाई के विषय में सम्पादक जी की निरन्तर चिन्ता से यह जान पड़ता है कि आप राष्ट्र-भाषा के निर्माण में भारतीय राष्ट्र को साथ लेकर चलना चाहते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। इसके लिये जब तक असपरान्तो Esperanto के समान कोई नई भाषा न रची जायगी, तब तक आपके अन्य-भाषा-भाषियों (अहिन्दुओं) को सन्तोष न होगा। हिन्दुस्थान में जिस प्रकार की असपरान्तो प्रचलित हो सकती है उसका नमूना कदाचित् यह होगाः—"मन घरते कापड़ो आनता छूँ" (मैं घर से कपड़ा लाता हूँ) संभव है कि कोई प्रतिभाशाली सम्पादक इस प्रकार की भाषा प्रचलित करने का उद्योग करें। इतना होने पर भी लिपि का बखेड़ा बना ही रहेगा; क्योंकि अहिन्दुओं को हमारे अक्षर भी कठिन जान पड़ेंगे। देवनागरी के "ख" में "र, व" का, "घ" में "ध" का और "ल" में "त" तथा "न" का धोखा होने का डर है। इसलिये यदि किसी एक कल्पित भाषा के साथ कोई एक कल्पित लिपि भी उत्पन्न कर दी जाय तो राष्ट्र-भाषा की कठिनाई राष्ट्र-भर में बँट जायगी और परस्पर की ईर्ष्या भी न रहेगी।

अन्त में हम सम्पादक महाशय की भाषा का एक उदाहरण देकर इस लेख को समाप्त करते हैंः—

"हमारा यह पुराना मत है कि ट्रेनिङ्ग कालेज तथा नार्मल स्कूल के पाठक यदि चाहें तो अपने शिक्षक भ्राताओं को बहुत कुछ लाभ पहुँचा सकते हैं। ये महाशय शिक्षा-शास्त्र के अच्छे ज्ञाता होते हैं। अतएव थोड़ा सा अधिक परिश्रम करने से वे शिक्षण-कला के सिद्धान्तों तथा विधियों को अपने सह-व्यवसाइयों के सन्मुख ला सकते हैं। हाँ, इस बात को हम स्वीकार करते हैं कि दूसरों को भी इनके जानने की इच्छा होनी चाहिए जो खेद के साथ कहना पड़ता है कि बहुतेरों में नहीं पाई जाती। पर क्या मिशनरी महोदयों के उपदेश सुनने के लिये अन्यान्य मतावलम्बी जन सदा उत्सुक रहते हैं; फिर वे क्यों अपना कर्त्तव्य करने से नहीं चूकते ?"

इस अवतरण के सम्बन्ध में हमें केवल इतना ही कहना है कि हिन्दी के अधिकांश प्रतिष्ठित लेखक बहुधा इसी प्रकार की हिन्दी लिखते हैं। यदि सम्पादक जी की भाषा हिन्दी है और वह राष्ट्र-भाषा हो सकती है तो यह कहना कि "जिस भाषा को राष्ट्र भाषा बनाने का विचार किया जा रहा है वह अति कठिन हो रही है" नितान्त भ्रामक है। सम्पादक महाशय की और स्पष्ट सर्वग्रासी सम्मतियों से पाठकों के मन में राष्ट्र-भाषा तथा हिन्दी के सम्बन्ध में भ्रम तथा कुतर्क उत्पन्न होने की सम्भावना है इसलिये हमें विवश होकर उनके विषय में इतना लिखना पड़ा।

—:०:—

वारों का क्रम।

[ले०—श्री पं० केदारनाथ शर्मा काव्यमाला-सम्पादक राज ज्योतिषी, जयपुर।]

आदित्यवार के बाद सोमवार ही क्यों है

प्रायः संसार के एक तृतीयांश भाग में वारगणना प्रचलित है। यह वारगणना कितने काल से प्रचलित है और इस गणना का प्रथम आविष्कार किस देश में हुआ इत्यादि विषयों में युरोप तथा अन्य देशों के विद्वानों ने कई बार विचार किया है। और प्रायः स्थिर कर लिया है कि यह वारगणना सब से पहले कैल्डियन् लोगों में प्रचलित थी और वहाँ ही इसका आविष्कार होना भी संभव है। मि० लैंग्स Mr. Lings नामक विद्वान् Origins of Human नाम किताब में लिखते हैं कि यह वारक्रम ईसा के ३८ वर्ष पूर्व कैल्डियन् लोगों में प्रचलित था। भारत में यह गणना कब से आरम्भ हुई इसका कोई प्रमाण तो नहीं मिलता किन्तु ईसा के १६०० पूर्व के ग्रन्थों में इन वारों तथा बारह राशियों के नामों का उल्लेख नहीं मिलता; इस कारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहना अनुचित न होगा कि ईसा से १६०० वर्ष पूर्व के बाद ही भारतवर्ष में इसका प्रचार हुआ। वारगणना-प्रवृत्ति का काल निर्णय करना इस लेख का उद्देश्य नहीं है, इस कारण मैं इस विषय को यहीं छोड़ कर केवल इस बात को लिखना चाहता हूँ कि आदित्यवार के बाद सोमवार ही क्यों है। यद्यपि इस विषय में सूर्यसिद्धान्त भूगोलाध्याय में लिखा है कि—

मन्दादधः क्रमेणास्युश्चतुर्थादिवसाधिपाः ॥ ७८ ॥

अर्थात्—शनैश्चर से चौथा, फिर उससे चौथा इस नियम से कक्षाक्रम के अनुसार नीचे की तरफ़ गिनने से दिन के स्वामी होते हैं।

देखो S. Laing's Human Origins. Chap. V. pp. 144-158.

और यह श्लोक और यह विषय कई बार विद्वानों की दृष्टि में तो आया है किन्तु इस विषय को जन-साधारण के आगे स्वच्छता से किसी ने उपस्थित नहीं किया, इस कारण मैं इस विषय पर सूर्य-सिद्धान्त आदि भारतवर्षीय-संस्कृत ग्रन्थों के आधार से कुछ लिखना चाहता हूँ।

यह वारक्रम होरा के आधार पर है। 'होरासार्ध-द्विनाड़िका' के अनुसार २॥ घड़ी अर्थात् ६० मिनट अथवा १ घण्टे (Hour) को होरा कहते हैं। यह होरा शब्द संस्कृत नहीं है, किन्तु ग्रीक है। होरा-क्षितिज (Horizon) तथा आवर (Hour) शब्द होरा (Hora) शब्द से बहुत सन्निहित हैं। वराहमिहिर ने जो छठी शताब्दी में हुआ था अपने बृहज्जातक नामक ग्रन्थ में होरा शब्द को संस्कृत सिद्ध करने के विषय में यों लिखा है—

'होरेत्यहोरात्रविकल्पमेके वाञ्छन्ति पूर्वापरवर्णलोपात्'

अर्थात्—अहोरात्र शब्द के प्रथम अक्षर 'अ' तथा चतुर्थ अक्षर 'त्र' के निकल जाने से होरा शब्द को कुछ लोग अहोरात्र का अपभ्रंश मानते हैं। वराहमिहर ने इस श्लोक में होरा शब्द के विषय में अपनी सम्मति प्रकट नहीं की, किन्तु इसके विरुद्ध भी कहीं नहीं लिखा इस कारण वह भी प्रायः इस उपपत्ति से सम्मत था। अस्तु। फलितशास्त्र (Astrology) होरातन्त्र, होराशास्त्र, आदि नामों से ही भारतवर्ष में प्रसिद्ध है। वराहमिहिर लिखता है—

होरातन्त्रमहार्णवप्रतरणे भग्नोद्यमानामहं।
स्वल्पंवृत्तविचित्रमर्थबहुलं शास्त्रप्लवं प्रारभे ॥
(बृहज्जातक प्रथमाध्याय)

होरातन्त्र रूपी समुद्र में तैरने में जिनका उत्साह टूट गया है उनके लिये मैं शास्त्ररूपी नौका बनाता हूँ। शास्त्ररूपी नौका छोटी, इस तरह की है जिसमें छन्द कई प्रकार के और अर्थ बहुत हैं। नौका-पक्ष में नौका छोटी, गोल, खूबसूरत, अर्थ-बहुल (अर्थ=द्रव्य जिसमें ज़्यादा हो) समुद्र पार करने को अच्छी होती है।

वराहमिहिर ने होरा शब्द का 'होरेति लग्नं भवनस्य चार्धम्' इस श्लोक-खण्ड से यह अर्थ किया है कि क्रान्तिवृत्तीय-राशि (Zodiacal Signs) के आधे भाग का नाम होरा है। राशियां (Zodiacal Signs) संख्या में १२ हैं और एक सूर्योदय से दूसरा सूर्योदय होने तक के काल में पृथ्वी का एक पूरा भ्रमण हो जाता है, इस कारण क्रम क्रम से ये बारह राशियां क्षितिज (Horizon) पर आ जाती हैं। और वराहमिहिर के कथनानुसार एक राशि में दो होरा होती हैं, इस कारण १२ राशि=२४ होरा हुईं। राशिचक्र या क्रान्तिकवृत्त का विषुवद्रेखा से २३°२७ का कोण है इस कारण प्रत्येक स्थान पर एक होरा के उदय होने का समय एक नहीं हो सकता। तथापि २४ होरा का उदय स्थान (अर्थात् Zodiacal Point) जो क्षितिज पर है वही ठीक २४ घण्टे के बाद प्रत्येक देश में फिर से क्षितिज पर आ जाता है। सब देशों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में ६६ अक्षांश (66 Latitude) के भीतर पूरे २४ घण्टों में ही यह उदय होता है। उसका २४ वाँ भाग १ होरा होता है। इस प्रकार मोटे हिसाब से एक होरा एक घण्टे के बराबर सिद्ध होती है।

होरा के देवता कैल्डियन् लोगों की अभिमत ग्रहस्थिति (Solar System) के अनुसार शनि, बृहस्पति, मङ्गल, सूर्य, शुक्र, बुद्ध और चन्द्र ये सात ग्रह क्रम से हैं। सूर्यसिद्धान्त में लिखा है—

मन्दादधः क्रमेणस्युश्चतुर्था दिवसाधिपाः।
वर्षाधिपतयस्तद्वत्तृतीयाश्च प्रकीर्तिताः ॥७८॥
ऊर्ध्वक्रमेण शशिनो मासानामधिपाः स्मृताः।
होरेशाः सूर्यतनयादधोधः क्रमशस्तथा ॥७९॥

इसका अर्थ यह है कि शनैश्चर से नीचे के क्रम से चौथे चौथे ग्रह दिन के मालिक हैं, तीसरे तीसरे ग्रह वर्ष के मालिक हैं, चन्द्रमा से ऊर्ध्वक्रम से ऊपर के ग्रह क्रम से मास के स्वामी हैं और शनैश्चर से नीचे के ग्रह क्रम से होरा के मालिक हैं।

यहाँ यह लिखना भी परम आवश्यक है कि कक्षा क्रम क्या है—

मन्दामरेज्यभूपुत्रसूर्यशुक्रेन्दुजेन्दवः।
परिभ्रमन्त्यधोऽधःस्थाः सिद्धविद्याधरा घनाः ॥

अर्थ—मन्द=शनि, अमरेज्य=बृहस्पति, भूपुत्र=मङ्गल, सूर्य, शुक्र, इन्दुज=बुध, इन्दु=चन्द्र ये अधोऽधःस्थाः अर्थात् एक के नीचे एक परिभ्रमण करते हैं। और उनके नीचे सिद्ध, विद्याधर घन (मेघ) परिभ्रमण करते हैं। यहाँ इण्डियन या कैल्डियन सोलर सिस्टम (ग्रह-स्थिति) और युरोपियन सोलर सिस्टम की तुलना की जाय तो सबसे प्रथम दो बातों का विचार करना चाहिए। (१) भारतवर्षीय अथवा कैल्डियन लोग पृथ्वी का भ्रमण नहीं मानते। (२) हर्शल और नेपच्यून ये दोनों ग्रह जो वर्तमान सोलर सिस्टम में ग्रह माने जाते हैं, पहले अविदित थे। पृथ्वी का भ्रमण न मानने के कारण युरोपियन सोलर सिस्टम और कैल्डियन या इण्डियन सोलर सिस्टम में भेद विभिन्नता हो गई है। किन्तु वारक्रम होरा-सिस्टम के आधार पर है और होरा-सिस्टम कैल्डियन सोलर सिस्टम के आधार पर है। इस कारण प्रथम युरोपियन और कैल्डियन सोलर-सिस्टम की तुलना करके कैल्डियन सोलर-सिस्टम का पृथक्करण आवश्यक है। हर्शल और नेपच्यून ये दोनों ग्रह तो उनको बिलकुल अविदित थे और युरोपियन सोलर-सिस्टम में ये दोनों ग्रह थोड़े ही दिन से लिए गए हैं। कारण उनको तो छोड़ ही देना पड़ेगा।

इण्डियन या कैल्डियन सोलर सिस्टम	युरोपियन पुराना सोलर सिस्टम
शनि	शनि
बृहस्पति	बृहस्पति
मङ्गल	मङ्गल
सूर्य	पृथ्वी
शुक्र	चन्द्र
बुध	शुक्र
चन्द्र	बुध
पृथ्वी	सूर्य

युरोपियन सोलर-सिस्टम में जहाँ पृथ्वी है वहाँ पर कैल्डियन या इण्डियन सोलर-सिस्टम में सूर्य रखा है। और जहाँ सूर्य है वहाँ चन्द्र से पृथ्वी रखी है। इसका एक मात्र कारण पृथ्वी का भ्रमण न मान कर सूर्य का ही भ्रमण मानना है। अस्तु।

यह पहले लिखा जा चुका है कि होरा १ घण्टा (Hour) की होती है। दिन रात में २४ होरा और २४ घण्टे होते हैं। एक एक घण्टे का एक एक देवता माना गया है। यह देवता कैल्डियन या इण्डियन सोलर सिस्टम के ग्रहों के क्रम से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। कल्पना कीजिए कि शनिवार को प्रातःकाल ६ बजे से ७ बजे तक एक घण्टे (Hour) का मालिक या देवता शनि है तो दूसरे घण्टे (७ बजे से ८ बजे तक) का देवता बृहस्पति होगा, तीसरे का मङ्गल, चौथे का सूर्य, पाँचवें का शुक्र, छठे का बुध, सातवें का चन्द्र, आठवें का फिर शनि, नवें का फिर बृहस्पति, दसवें का फिर मङ्गल, ग्यारहवें का फिर सूर्य, बारहवें का शुक्र, तेरहवें का बुध, चौदहवें का चन्द्र, पन्द्रहवें का फिर तीसरी बार शनि, सोलहवें का बृहस्पति, सत्रहवें का मङ्गल, अठारहवें का सूर्य, उन्नीसवें का शुक्र, बीसवें का बुध, इक्कीसवें का चन्द्र इस प्रकार २१ घण्टे में पूरे तीन पर्याय (चक्र) सात ग्रहों की होराओं के हुए। एवं बाइसवें में फिर चौथी बार शनि, तेईसवें में फिर चौथी बार बृहस्पति, चौबीसवें में फिर चौथी बार मङ्गल इस प्रकार चौबीस घण्टे समाप्त होने पर दूसरे दिन का पहला घण्टा यानी २४ वीं होरा, मङ्गल के आगे कक्षा-क्रम में सूर्य के होने के कारण, सूर्य की होगी, और सूर्योदय भी सूर्य की होरा ही में होगा इस कारण उस दिन का देवता सूर्य होगा। और वह सूर्यवार (Sunday) कहलावेगा। इसी प्रकार (Sunday) के चौबीस घण्टों के देवता सूर्य से गिनने चाहिएँ। २१ घण्टे में पूरे तीन चक्र ख़तम होकर २२ वें घण्टे का देवता फिर सूर्य, २३ वें का शुक्र, २४ वें का बुध इस प्रकार सूर्यवार ख़तम होकर सूर्य का उदय चन्द्र की होरा में होगा, क्योंकि कैलिडियन सोलर-सिस्टम में बुध के बाद चन्द्र है। इस दिन का देवता चन्द्र और इस दिन का नाम चन्द्रवार (Monday) होगा। आगे इसी क्रम से सब दिनों के देवता नियत होंगे।

एक-होरा का एक देवता जो उन लोगों ने माना था, उसी के अनुसार वे लोग उस देवता की शुभता और अशुभता के अनुसार उस एक घण्टे अर्थात् १ होरा में काम किया करते थे। और उसको साइत (*Sait*) भी कहते थे।

वसिष्ठसंहिता नाम की पुस्तक में इस होरा को क्षणवार के नाम से लिखा है। और यह भी लिखा है कि यह होरा-प्रवृत्ति लङ्का के सूर्योदय से, अर्थात् जहाँ का अक्षांश (Latitude) वे लोग शून्य (Zero) मानते थे, होती है। इस होरा-प्रवृत्ति का नाम उन्होंने वार-प्रवृत्ति रखा था। और एक हिसाब भी साथ ही जोड़ दिया था जिससे यह मालूम हो कि लङ्का में सूर्योदय प्रत्येक स्थान के सूर्योदय से कितने पूर्व या पश्चात् होता है।

वारप्रवृत्तेर्विज्ञानं क्षणवारार्थमेव हि।
अखिलेष्वपिकार्येषु दिनादिरुदयाद्भवेत्॥

वसिष्ठ

इसका अर्थ यह है कि वार-प्रवृत्ति का जानना केवल क्षणवार अर्थात् होरा के लिये है। और सब कामों में दिन का आरम्भ सूर्योदय से होता है।

फिर वशिष्ठ जी लिखते हैं—

प्रभाकरस्योद्गमनात् पुरेस्या-
द्वारप्रवृत्तिर्दशकन्धरस्य।
चरार्धदेशान्तर नाडिकाभि-
रूर्ध्वं तथाधोऽथ परत्र तस्मात्॥

(दशकन्धरस्य) रावण के पुर लङ्का अर्थात् जहाँ अक्षांश शून्य (Latitude-zero) है, वहाँ वार-प्रवृत्ति सूर्य के उदय से होती है। बाकी स्थानों में चरार्ध देशान्तरनाडिका (Ascensional difference) के अनुसार पीछे और पहले वार-प्रवृत्ति होती है।

नारद-प्रभृति के नाम से जितने ग्रन्थ मुहूर्त-विद्या के हैं उनमें होरा निकालने का प्रकार प्रायः सब में है। एक घण्टे का एक देवता क्यों माना और उनका क्रम ग्रहों की कक्षाओं (Orbit) के क्रम से क्यों माना इसका मूल कारण पूर्ण रूप से नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलता। अनुमान से यह प्रतीत होता है कि इस नियम का आधार शायद राशिचक्र (Zodiac) का एक अहोरात्र में एक परिवर्तन और क्रान्तिवृत्तीय राशियों (Zodiacal twelve Signs) का तथा होराओं का हर एक ग्रह का विभाग (Distribution) हो सकता है। अब मैं यहाँ अपने विचारानुसार दो कर्तव्य लिख कर इस लेख को समाप्त करता हूँ।

१—कैल्डियन लोगों को हर्शल और नेपच्यून यह दो ग्रह अज्ञात थे इस कारण होरा-गणना में उनको स्थान नहीं मिला, इसी कारण उनका वार भी नहीं है। सो अब प्रथम कर्तव्य यह है कि इन दोनों ग्रहों को इस क्रम में स्थान देना चाहिए। और उसी के अनुसार वार-गणना में भी; और उसी के अनुसार तीस दिन का महीना माननेवाले सूर्य-सिद्धान्त आदि जिस क्रम से होरा-क्रम के आधार पर मासपति और वर्षपति मानते थे उसी क्रम से मास के मालिक और वर्ष के मालिक भी बनाने चाहिएं।

२—यदि हर्शल और नेपच्यून को स्थान न मिले तो जो सिद्धान्त पृथ्वी के भ्रमण न मानने के कारण कैल्डियन लोगों ने सोलर-सिस्टम के बारे में किया था और जिस क्रम के आधार से होराक्रम और होराक्रम के आधार से वाराक्रम की कल्पना की थी उस सिद्धान्त के अब बदलने के कारण सूर्यवार के बाद अब मङ्गलवार मानना चाहिए। अथवा इस सारे झगड़े को मिटाने के लिये युरोपियन सोलर-सिस्टम के अनुसार सूर्यवार, बुधवार, शुक्रवार, पृथ्वी=चन्द्रवार, मङ्गलवार, बृहस्पतिवार यह वारों का क्रम मानना चाहिए। आशा है, ज्योर्वितिद्या के विद्वान् इस पर विचार करेंगे।

(—ब्रह्मचारी।)

—:०:—

योग दर्शन।

[लेखक,—श्रीयुक्त कन्नोमलजी एम० ए०]

योग का अर्थ मिलना है; परन्तु ईश्वर और जीव तो एकही हैं इसलिये ईश्वर से जीव का मिलना इसका अर्थ नहीं हो सकता। योग का अर्थ चित्तवृत्ति निरोध अर्थात् चित्त की वृत्तियों को रोकना है, जैसा कि पतंजलि के योग दर्शन के आरम्भ में कहा गया है।

योग का सांख्य के साथ घनिष्ट सम्बन्ध है। सांख्य के उपदेश से मन को पूरा ज्ञान हो सकता है परन्तु इन्द्रियों की चेष्टाओं से संसार सम्बन्धी चिन्ताओं में चित्त फिर लिप्त हो सकता है। इसलिये ऐसे साधन बताने की परमावश्यकता थी जो चित्त को सदैव वश में रख सकें और मोक्ष-प्राप्ति में उपयोगी हों। ये साधन योग शास्त्र में कहे गए हैं।

चित्त के ये कार्य हैं:—सत्य ज्ञान, मिथ्या ज्ञान, संकल्प-विकल्प, निद्रा और स्मरण।

सत्यज्ञान तीन प्रमाणों के द्वारा होता है अर्थात् प्रत्यक्ष, अनुमान और आप्तवचन।

मिथ्या ज्ञान का उदाहरण है:—रज्जु में सर्प का भान होना अथवा सीपी में चाँदी का भान होना।

संकल्प-विकल्प का उदाहरण है—वर्ग वृत्त का संकल्प करना जो असंभव है।

निद्रा और स्मरण के अर्थ और उदाहरण स्पष्ट हैं लिखने की आवश्यकता नहीं। इन सब वृत्तियों को वशीभूत करने के साधन योगाभ्यास और वैराग्य हैं। अभ्यास से मन स्थिर होता है। संसार तथा मन को जीत लेना और सर्वथा निरभिलाषी होना वैराग्य है बताता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योग के आठ अङ्ग हैं; अर्थात् यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि।

योग से मन चलायमान नहीं होता और एक चीज पर जमा रहता है।

ध्यान।

सब वस्तुओं को छोड़ कर एक लक्ष्य पर मन लगाने का नाम ध्यान है। इसमें देशादि का अवलम्बन करना पड़ता है।

समाधि।

देशादि का अवलम्बन छोड़ कर ध्यान करना समाधि है। जिसका ध्यान किया जाय उसका आकार बन जाना अर्थात् उसके साथ एक हो जाना समाधि है। यह दो प्रकार की है—(१) सम्प्रज्ञात, सबीज अथवा सविकल्प और (२) असम्प्रज्ञात, निर्बीज अथवा निर्विकल्प। किसी निश्चित लक्ष्य पर मन का एक हो जाना पहले प्रकार की समाधि है और ध्यान में इस अवस्था को पहुँच जाना कि ध्यान का कोई विषय ही नहीं रहे, दूसरे प्रकार की समाधि है। समाधि प्राप्त करने के कई उपाय हैं जैसे प्राणायाम, ईश्वर-ध्यान अथवा सांख्य के २४ तत्त्वों का ध्यान करना इत्यादि।

समयम।

धारणा, ध्यान और समाधि मिल कर समयम कहलाते हैं और इससे सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।

यम।

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य्य और परिग्रह ये पांच यम हैं।

नियम।

तप, स्वाध्याय (जप), संतोष, शौच और ईश्वर-पूजन ये पाँच नियम हैं।

आसन।

आसन ८४ प्रकार के हैं जिनमें से कुछ का वर्णन करते हैं:—पद्मासन—बाँई जांघ पर दांएँ पैर को रखना और बांएँ पैर को दाँई जांघ पर रखना; दोनों हाथों को इस तरह रखना कि दांएँ हाथ से बांएँ पैर का अंगूठा पकड़ा जाय और बांएँ हाथ से दांएँ पैर का अंगूठा, दृष्टि को नाक की नोक पर लगाना। इस आसन से सब बीमारियां दूर होती हैं।

स्वस्तिकासन—सीधे बैठ कर पैरों को आमने सामने की जांघों के नीचे रखना।

वीरासन—प्रत्येक पैर को जांघों के नीचे खड़ा रखना।

आसनों के सिवा मुद्राएँ भी हैं जिनमें शरीर के ऊपर के अवयवों को नियुक्त करना पड़ता है। योगी के लिये भोजन वसनादि के भी नियम बताए गए हैं।

प्राणायाम।

शरीर की वायु का नाम प्राण है। "आयाम" उसका रोकना है। प्राणायाम शरीर की वायु का रोकना है। प्राणायाम के तीन विभाग हैं—रेचक, पूरक और कुम्भक। रेचक बाहर की तरफ़ स्वांस फेंकना, पूरक उसको खींचना और कुम्भक साम्य-भाव से स्थित रखना है। १२ मात्राओं का प्राणायाम मन्द है, २४ मात्राओं का मध्यम है और ३६ मात्राओं का श्रेष्ठ है।

प्रत्याहार।

विषयों में विचरती हुई इन्द्रियों को उनसे अलग करने का नाम प्रत्याहार है। आसन और प्राणायाम के प्रयोग से इन्द्रियों को उनके विषय से अलग कर सकते हैं। पुरुष और प्रकृति का भेद जानने में यह आवश्यक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारणा।

नासिकाग्र, नाभि, मूर्द्धि आदि में से किसी एक स्थान में चित्तबन्धन करने का नाम धारणा है।

सिद्धियां और ऋद्धियां।

१—भूत और भविष्यत् घटनाओं का जानना।
२—पशु पक्षियों की बोली समझना।
३—पूर्वजन्मों का हाल जानना।
४—दूसरे के मन की बात जानना।
५—अदृश्य हो जाना।
६—मृत्यु का हाल जानना।
७—हाथी का बल प्राप्त करना।
८—जो वस्तुएं दूसरों को नहीं दिखाई दें, उन्हें देखना।
९—एक शरीर छोड़ कर दूसरे शरीर में चले जाना अर्थात् रूपान्तर कर लेना।
१०—आकाश में गमन करना।
११—रूई के समान कोमल हो जाना।
१२—श्रवण-शक्ति अपरिमित कर लेना।
१३—इन्द्रियों को जीतना।
१४—काल पर अधिकार कर लेना।
१५—शीत, तापादि को जीतना।
१६—सूर्य पर ध्यान लगाने से भूगोल का हाल जानना।
१७—चन्द्रमा पर ध्यान लगाने से ज्योतिष का हाल जानना।
१८—ध्रुव पर ध्यान लगाने से नक्षत्रों की गति जानना।
१९—नाभि पर ध्यान लगाने से शरीर के भीतर का सब हाल जानना।
२०—क्षुधा पिपासा पर अधिकार करना।
२१—आकाश के अदृश्य दृश्य देखना।
२२—दृढ़ता प्राप्त करना। आदि आदि।

इस प्रकार की बहुत सी सिद्धियां हैं। कोई चीज़ ऐसी नहीं है जो समयम करने से नहीं मालूम हो सकती हो। बहुत से योगी इन सिद्धियों के गौरव को देख कर मोक्ष-प्राप्ति की चेष्टा से डिग जाते हैं। ऐसा नहीं होना चाहिए। मोक्ष पद पर ही लक्ष्य रखना चाहिए।

संस्कार और वासनाएं।

कर्मों के फल वासना या स्मृति के रूप में रहते हैं, दिखाई नहीं देते। इन्द्रियों के विषय-भोग से वासनाओं की उत्पत्ति होती है। विषय-भोग इच्छा से उत्पन्न होते हैं और इच्छा अज्ञान से। ज्ञान और योग से यह अज्ञान उसी प्रकार नष्ट हो सकता है जैसे अग्नि से बीज जल सकता है। वासनाओं को बीज समझना चाहिए। जैसे बीज से वृक्ष उत्पन्न हो जाता है उसी तरह वासनाओं से शुभ और अशुभ कर्मों की उत्पत्ति होती है और संसार-जाल दिखाई देने लगता है। योग के साधन से इसका नाश हो जाता है और कैवल्य (मोक्ष) की प्राप्ति होती है।

सांख्य में ईश्वर का वर्णन नहीं है परन्तु योग दर्शन में ईश्वर को सब पुरुषों का अधिष्ठाता बताया है। वह संसार भर को मोक्ष दे सकता है। वह अनादि, दयालु और सर्वज्ञ है। उसी का नाम प्रणव है। उसी के ध्यान से चित्त वृत्तियों का निरोध होता है और समाधि होती है।

—:०:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पक्षी।*

जीवों में पक्षी बड़े सुन्दर और बोलने या गानेवाले होते हैं। वे हमारे जंगलों की शोभा बढ़ाते हैं और जब हम लोग टहलने के लिये निकलते हैं तब वे अपने मधुर स्वर से हमारा चित्त प्रसन्न करते हैं। एकांत स्थान भी उनके कारण हमें सूना नहीं जान पड़ता। उनसे हम लोग किसी प्रकार भयभीत भी नहीं होते क्योंकि वे हमें किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचाते। उनकी सभी बातें प्रकृति के चित्र में मानों जान डालनेवाली होती हैं।

सृष्टि का कोई अंश जीवों से खाली नहीं है। जङ्गल, जल, स्थल आदि सभी में जीवों का निवास है। यहाँ तक कि वायु में भी, और वह भी इतनी ऊँचाई तक जहाँ मनुष्य की पहुँच नहीं हो सकती, झुंड के झुंड परम सुन्दर जीव संचार करते हैं।

सभी श्रेणियों और जातियों के जीव अपनी अपनी जीवन-स्थिति के लिये बहुत ही उपयुक्त होते हैं; पर पक्षियों से बढ़ कर और किसी श्रेणी के जीव उतने अधिक उपयुक्त नहीं जान पड़ते। वे मजबूत चौपायों की तरह और उनके साथ साथ वनस्पति आदि खाते हैं और अपेक्षाकृत निर्बल होने पर भी बहुत तेज होते हैं। जिस शक्ति के आक्रमण का वे सामना नहीं कर सकते उससे बचने के लिये उनमें आकाश में उड़ने की शक्ति है।

ऐसा जान पड़ता है कि पक्षियों का शारीरिक संगठन केवल भाग कर जीवन निर्वाह करने के लिये ही है। उनके शरीर का अंग प्रत्यंग तेजी और फुरतीलेपनके लिये ही उपयुक्त है। उसकी सृष्टि आकाश में उड़ने के लिये ही हुई है; इसलिये उसके सब अंश अपेक्षाकृत हलके होते हैं और अधिकल चौड़े होने पर भी ठोस या भारी नहीं होते।

यदि मनुष्य के शारीरिक संगठन से पक्षियों के शारीरिक संगठन की तुलना की जाय तो जान पड़ेगा कि पक्षियों की बनावट बहुत ही मोटी और अपूर्ण है। चौपाए तो भला किसी तरह सधाए भी जा सकते हैं, पर पक्षी तो साधारणतः सधाने के लिये बिलकुल ही अयोग्य जान पड़ते हैं। जिन जीवों की आँखें प्रायः उतनी ही बड़ी हों जितना बड़ा कि उनका मस्तिष्क है, भला उन जीवों में समझ होने की कोई कहाँ तक आशा कर सकता है? तो भी प्रकृति-मन्दिर में यद्यपि उनका स्थान चौपायों से नीचे है और मनुष्यों के से गुण उनमें बहुत ही कम हैं तथापि शारीरिक संगठन और समझदारी आदि में वे मछलियों और कीड़ों आदि से कहीं बढ़ चढ़कर और अच्छे हैं।

कलों आदि में जो पुरजे बहुत अधिक विलक्षण कार्य्य करते हैं उनकी बनावट भी वैसी ही पेचीली होती है। शारीरिक संगठन की भी ठीक यही दशा है। यदि मनुष्य का शरीर या उसकी भीतरी बनावट देखी जाय तो उसके सभी अंग एक दूसरे से बहुत ही भिन्न मिलेंगे; चौपायों के शरीर में यह भिन्नता कुछ कम होगी, अर्थात् उनकी बनावट से ही उनकी त्रुटियों का पता लग जायगा; पक्षियों के शरीर की बनावट और भी अधिक सादी होती है; मछलियों के अंग आदि और भी कम होते हैं; और कीड़ों में तो यह अपूर्णता सब से अधिक मिलेगी। उनमें केवल थोड़े से ऐसे अंग मिलेंगे जिनके कारण उनमें और वनस्पति में केवल भेद ही किया जा सके। मनुष्य सब जीवों से अधिक पूर्ण है, लेकिन उसकी केवल तीन या चार ही जातियाँ मिलेंगी। चौपायों की जातियाँ संख्या में अधिक होंगी, पक्षियों की जातियाँ उनसे अधिक और मछलियों की

* सुप्रसिद्ध अँगरेज लेखक ओलिवर गोल्डस्मिथ के एक निबंध के आधार पर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जातियाँ पक्षियों की जातियों से भी अधिक मिलेंगी; और कीड़ों के तो इतने अधिक भेद मिलते हैं कि बड़े बड़े विद्वान् भी उनका पूरा पता नहीं लगा सकते।

चौपायों के शरीर का भीतरी संगठन मनुष्य के शरीर के भीतरी संगठन से बहुत कुछ मिलता जुलता होता है; पर पक्षियों के शरीर की भीतरी बनावट इन दोनों से बहुत ही भिन्न होती है। वे वायु और आकाश में ही रहने के लिये बनाए गए हैं और उनका शारीरिक संगठन भी उन्हीं में रहने के लिये अधिक उपयुक्त है। अतः इस अवसर पर पक्षियों का इतिहास और विवरण देने से पहले उनके शारीरिक संगठन के सम्बन्ध में कुछ बातें संक्षेप में बतला देना अधिक उत्तम जान पड़ता है।

पक्षियों के शरीर के ऊपरी बनावट देखने से जान पड़ता है कि वे द्रुत गति के लिये ही बहुत अधिक उपयुक्त हैं। उनका शरीर आगे की तरफ नुकीला होता है जिसमें वे तेजी से हवा में आगे की ओर बढ़ सकें। पक्षी के शरीर के अगले भाग की ओर से ज्यों ज्यों पीछे की ओर जाइए त्यों त्यों उसका शरीर अधिक मोटा मिलता जायगा और अंत में जाकर वह एक फैली हुई दुम पर समाप्त हो जायगा। शरीर के अगले भाग तो अपनी फुरती के कारण तुले रहते हैं और दुम उन्हें हलका तथा स्थिर रखती है। इसी प्रकार की बनावट के कारण लोग प्रायः हवा में उड़नेवाले पक्षी की उपमा जल में चलनेवाली नाव से दिया करते हैं। उनके शरीर का मध्य भाग नाव के मध्य भाग का, सिर गलही का, दुम पतवार का और डैने डाँड़ों का काम देते हैं।

पक्षियों की ऊपरी बनावट में जो और अच्छी बात है वह यह है कि उनके पर बड़े ही उपयुक्त स्थान पर होते हैं और उन सब का रुख एक ही तरफ होता है। इस कारण उनका शरीर गरम, फुरतीला और रक्षित रहता है। परों का रुख बहुधा पीछे की ओर ही रहता है और वे एक निश्चित क्रम के नियम से एक दूसरे के ऊपर होते हैं; और ऊपर से और ऐसी विलक्षणता और दृढ़ता से एक दूसरे से मिले हुए होते हैं कि जिसके कारण ऋतु का प्रभाव शरीर पर नहीं पड़ने पाता। यदि उड़ने में हवा के तेज झोंकों अथवा तरी के कारण परों पर झटके पहुँचे अथवा उनमें कोई दोष आ जाय तो उस अवस्था के लिये पक्षियों की पीठ पर एक गिलटी होती है जिसमें यथेष्ट मात्रा में एक प्रकार का तेलवाला तरल पदार्थ होता है। पक्षी अपना मुँह फेर कर चोंच से उस गिलटी को दबाता है जिसके कारण उसमें से वह तरल पदार्थ निकल कर सब परों में लग जाता है। इस प्रकार परों की क्षति की पूर्ति हो जाती है,—मानों उन पर मरहम लग जाता है। यह गिलटी पीठ पर होती है और उसका एक छोटा सा मुँह होता है जिस पर मुसव्वरों के बुरुश की तरह छोटे छोटे परों का एक गुच्छा होता है। जब परों को किसी प्रकार की चोट पहुँचती है अथवा वे इधर उधर छितरा जाते हैं तब जानवर अपना मुँह पीछे की ओर फेरकर चोंच से उस गिलटी को दबाता है और उसमें से वह तरल पदार्थ निकाल कर क्षतिग्रस्त परों पर छिड़क लेता है। साथ ही वह अपने परों को फैला कर उन्हें फिर से ठीक और दुरुस्त कर लेता है और उन्हें यथा स्थान और यथा क्रम लगा देता है। इस प्रकार पर फिर एक दूसरे से सट कर ठिकाने आ जाते हैं। जो पक्षी बहुधा छाया हुए या नीचे स्थानों में रहते हैं उनकी अपेक्षा खुली हवा में या ऊँचाई पर रहनेवाले पक्षियों की मिलती में यह तरल पदार्थ अधिक मात्रा में होता है। मुरगियों को तो इस प्रकार के 'तरल' पदार्थ की कोई आवश्यकता ही नहीं होती और न उनमें यह रहता ही है। बत्तखों और हंसों आदि ऐसे पक्षियों में जो जल में रहते हैं, जन्म से ही उनके एक पर की जड़ में यह तरल पदार्थ रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तात्पर्य यह कि जिस पक्षी को उसकी जितनी और जिस प्रकार आवश्यकता होती है, प्रकृति उसे उतनी ही मात्रा में और उसी प्रकार यह तेल देती है। किसी किसी पक्षी का मांस, इस तरल पदार्थ के संसर्ग के कारण बहुत ही बेस्वाद हो जाता है, और खाने लायक नहीं रहता। यद्यपि इसके कारण पक्षी का मांस खराब हो जाता है तथापि परों की उससे वृद्धि, वृद्धि और रक्षा होती है।

पक्षियों के पर भी कुछ कम प्रशंसनीय नहीं होते। जिन सींकों में पर लगे होते हैं वे बहुत दृढ़ होते हैं और साथ ही पोले तथा हलके रहते हैं। सींकों में जो पर निकलते हैं वे जड़ की तरफ तो पतले और कम मजबूत होते हैं और ज्यों ज्यों आगे की ओर बढ़िए त्यों त्यों वे लंबे और मजबूत होते जाते हैं। इसका कारण यह है कि उड़ने में अधिक काम बाहर की ओर के परों को ही करना पड़ता है। स्वयं पर भी बड़ा ही कुशलता से बने होते हैं। यदि पर स्वयं बिलकुल एक नहीं होता; यदि वह एक होता तो उसके कट या टूट जाने पर उसकी मरम्मत बहुत ही कठिन होती। इसलिये उसमें अलग अलग कई तहें होती हैं और प्रत्येक तह मानों स्वयं एक पर होती है। ये तहें एक दूसरी से बिलकुल सटी हुई होती हैं। सींकों की ओर के पर कुछ चौड़े और अर्द्ध-चन्द्राकार होते हैं। इसी कारण वे एक दूसरे से अधिक दृढ़ रहते हैं और जिस समय पक्षी उड़ता है उस समय ये एक दूसरे से खूब सटे रहते हैं। बाहर की ओर ये पर कुछ पतले और इसी लिये लचीले होते हैं। नीचे की ओर तो ये चिकने होते हैं और ऊपर की ओर दो बालदार धारों में विभक्त होते हैं। हर एक धार में अलग तरह के बाल होते हैं। पर सब बाल जड़ की ओर चौड़े और ऊपर की ओर पतले होते हैं। एक ओर के बाल सीधे और दूसरी ओर के बाल अर्द्ध-चन्द्राकार होते हैं। अतः इन बालों ऐसे क्रम से होते हैं कि सीधे बालों की प्रत्येक पंक्ति के उपरांत चन्द्राकार बालों की पंक्ति पड़ती है जिसके कारण वे सब दृढ़तापूर्वक मानों एक दूसरे से जकड़े रहते हैं।

पक्षियों के शरीर में दूसरा ध्यान देने योग्य अंग उनका डैना है जिसकी सहायता से वे हवा में उड़ते हैं। पक्षियों के लिये डैने प्रायः वही काम देते हैं। जो चौपायों के लिये उनके आगे के दोनों पैर देते हैं। डैने के सिरे उँगलियों से कुछ मिलते जुलते होते हैं इनकी जड़ शरीर में अपेक्षाकृत अधिक गहरी और हड्डी के बहुत समीप होती है। इन पर जो बाल होते हैं वे एक ओर चौड़े और दूसरी ओर सँकरे होते हैं, जिसके कारण पक्षी को हवा में आगे बढ़ने में बहुत सहायता मिलती है। जब पक्षी उड़ने लगता है तब वह पहले जमीन से उचक कर ऊपर उठता है। ऊपर उठने पर उसे डैने हिलाने के लिये स्थान मिलता है जब उसे डैने हिलाने के लिये यथेष्ट स्थान मिल जाता है तब वह उन डैनों से अपने शरीर के नीचेवाली हवा पर जोर से झटका देता अथवा आघात करता है। इसके बाद जब वह डैनों को ऊपर उठाता है तब वह उन्हें सिकोड़ लेता है जिसमें ऊपरवाली हवा पर भी उतने ही जोर का आघात न पहुँचे। इस प्रकार पक्षी पहले की अपेक्षा कुछ और ऊँचे स्थान पर पहुँच जाता है और वहाँ से नीचे की हवा पर दोबारा झटका देता है। पक्षियों के ऊपर उठने और उड़ने का मुख्य कारण यही है कि उनके डैनों के नीचे की ओर तो हवा अधिक रहती है और ऊपर की ओर कम। मुरगे की जाति के बड़े बड़े पक्षियों के आकाश में न उड़ सकने का मुख्य कारण यह है कि एक तो उन्हें अपने डैने हिलाने के लिये स्थान नहीं मिलता और दूसरे जब वे ऊपर की ओर उठने लगते हैं तब हवा उनके डैनों के बिलकुल ठीक नीचे नहीं रहती।

डैनों को हिलाने के लिये सब पक्षियों में पसली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की हड्डियों से उभड़े हुए दोनों ओर दो बहुत दृढ़ पुट्ठे होते हैं। पक्षियों के इन पुट्ठों को देखते हुए चौपायों के ये पुट्ठे कोई चीज नहीं हैं। चौपायों और मनुष्यों में जो पुट्ठे पैरों को गति देते हैं वे तो बहुत अधिक दृढ़ होते हैं पर हाथों के पुट्ठे बहुत ही दुर्बल होते हैं। पर पक्षियों में, जिन्हें अपने डैनों से काम लेना पड़ता है, इससे बिलकुल विपरीत होता है। डैनों को गति देनेवाले पुट्ठे तो बहुत अधिक दृढ़ होते हैं पर पैरों को गति देनेवाले पुट्ठे बहुत ही कमजोर और हलके होते हैं। इन पुट्ठों की सहायता से पक्षी अपने डैनों को इतने वेग से हिलाता है जो उसका आकार देखते हुए बहुत ही अधिक है। हंस के डैने के पूरे झटके से आदमी की टाँग टूट जायगी; और गिद्ध के डैने के एक ही झटके से एक बार एक आदमी तुरन्त मर गया था। डैने इतने हलके होने पर भी इतने दृढ़ होते हैं कि मनुष्य उतनी हलकी और उतनी दृढ़ कोई और चीज बना ही नहीं सकता। मनुष्य की बनाई हुई कोई कल इतनी हलकी किसी चीज में इतनी अधिक गति नहीं दे सकती। लोगों ने अब तक बार बार आकाश में उड़ने का जो निरर्थक प्रयत्न किया है उसका यही कारण है; और इसी लिये लोगों को इस बात की आशंका है कि आकाश में उड़ने के प्रयत्न में मनुष्य को कभी सफलता न होगी। क्योंकि मनुष्य जब अपने उड़नेवाले यंत्र की शक्ति बढ़ावेगा तब उसे विवश हो कर अपना भार भी बढ़ाना ही पड़ेगा। *

केवल रात में देखने या उड़नेवाले पक्षियों को छोड़ कर शेष सब पक्षियों का सिर अपेक्षाकृत छोटा होता है; पक्षियों को इससे यह लाभ है कि उड़ने के समय वह हवा को बहुत सहज और चटपट विभक्त कर लेता है और उनके शरीर के लिये मार्ग बना के उनके आगे बढ़ने में सहायक होता है। चौपायों की अपेक्षा उनकी आँखें भी अधिक चिपटी और दबी हुई होती हैं। उनकी आँखों के चारों ओर छोटी छोटी हड्डियों का एक घेरा होता है जो सब प्रकार के आघातों से उनकी रक्षा करता है। इसके अतिरिक्त पक्षियों की आँखों में परदे की तरह की एक और झिल्ली होती है जिससे पक्षी अपने इच्छानुसार अपनी आँखें ढँक लेते हैं; पर उनकी आँखों की पुतलियाँ प्रायः समय भी खुली ही रहती हैं। यह झिल्ली उनकी आँखों की सतह को साफ करने और तर रखने में सहायक होती है। पक्षियों की आँख देखने में कितनी ही छोटी क्यों न जान पड़ें पर उनकी प्रत्येक आँख प्रायः उनके मस्तिष्क के बराबर ही होती है। पर मनुष्य के दिमाग का उसकी आँखों के घेरे से प्रायः बीस गुना बड़ा है। इसके अतिरिक्त पक्षियों की आँखों में एक विशेष प्रकार की शक्ति होती है जिसकी सहायता से वे अपनी आँखों पर थोड़ा सा जोर देकर प्रत्येक वस्तु को बहुत ही साफ और अच्छी तरह से देख सकते हैं।

उनकी आँखों की इस प्रकार की बनावट से सिद्ध होता है कि और सब प्रकार के जीवों की अपेक्षा पक्षियों की आँखें कहीं अधिक अच्छी और बढ़ चढ़ कर होती हैं। पक्षी के निर्वाह और उन्नति के लिये इस प्रकार की तीव्र दृष्टि बहुत ही आवश्यक जान पड़ती है। अगर पक्षियों की दृष्टि इतनी तीव्र न होती तो अपनी तीव्र गति के कारण कदाचित् वह मार्ग में पड़नेवाली हर एक चीज से टकरा जाते और यदि पक्षियों में बहुत ऊँचे आकाश से नीचे की चीजों को अच्छी तरह देखने की शक्ति न होती तो उसका निर्वाह बड़ी ही कठिनता से होता।

*इस प्रकार की आशंका गोल्डस्मिथ के समय में ही लोगों को हुआ करती थी। आजकल तो हवा से हलके और हवा से भारी दोनों प्रकार के इतने बड़े बड़े और इतने शक्ति-सम्पन्न आकाश-यान बनने लगे हैं जिनके जोड़ की आकाश में उड़नेवाली कोई चीज स्वयं प्रकृति ने भी अभी तक नहीं बनाई थी। प० सम्पा०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाज इतनी दूर से लवा को देख सकता है जितनी दूर से मनुष्य या कुत्ता कदापि नहीं देख सकता। बादलों में से पक्षी अपने शिकार पर अचूक गिरता है। तात्पर्य यह कि पक्षियों की दृष्टि अन्य प्रकार के जीवों की अपेक्षा कहीं अधिक तीव्र होती है।

पक्षियों के कान बाहर निकले हुए नहीं होते। उनमें कानों के केवल छेद होते हैं जो शब्दों को ग्रहण करते हैं। दो तीन तरह के पक्षी अवश्य ऐसे होते हैं जिनके कान बाहर निकले हुए जान पड़ते हैं; पर वे वास्तव में कान नहीं होते। वे सिर के दोनों ओर उठे हुए पर मात्र ही होते हैं और वे सुनने के काम के लिये आवश्यक नहीं होते। कान के छेद के चारों ओर जो पर होते हैं सम्भवतः बाहरी कानों की त्रुटि को वही पूरा कर देते हैं और शब्दों को संग्रह करके भीतर पहुँचा देते हैं। लेकिन पक्षी जितनी जल्दी और जितनी अच्छी एरह से तरह तरहकी बोलियाँ, उनके ठीक ठीक उच्चारण सहित, सीख लेता है इससे सिद्ध है कि उसका यह अंग बहुत ही पूर्ण और कोमल है।

साधारणतः पक्षियों में घ्राण-शक्ति भी कुछ कम नहीं होती। बहुत से पक्षी बहुत ही दूर से अपने शिकार की गंध पाकर उनका पीछा करते हैं और बहुत से पक्षी अपने पीछे आनेवाले शिकारी जानवर की बहुत दूर से गंध पाकर भाग निकलते हैं। अनेक देशों में जहाँ लोग जाल में बत्तखें फँसाते हैं वे अपने मुँह के आगे एक जलती हुई बत्ती सी रखते हैं और उसी पर साँस छोड़ते हैं यदि वे ऐसा न करें तो बत्तखों को दूर से ही मनुष्य की गंध लग जाय और वे निकल भागें। इससे सिद्ध होता है कि पक्षियों और विशेषतः बत्तखों की घ्राण-शक्ति भी बहुत ही तीव्र होती है।

अब पक्षियों के पैरों को लीजिए। आकाश में उड़ने के लिये वे बहुत ही हलके होते हैं। कुछ पक्षियों की उँगलियाँ तो जालदार होती हैं जिनके कारण वे जल में चल सकते हैं और कुछ पक्षियों की उँगलियाँ एक दूसरी से अलग होती हैं। उँगलियों के अलग होने से पक्षी को चीजों के ग्रहण करने अथवा अपनी रक्षा के लिये पेड़ों की डालें पकड़ने में बहुत सहायता मिलती है। जिन पक्षियों के पैर लंबे होते हैं उनकी गरदन भी लंबी होती है। यदि ऐसा न होता तो जल या स्थल में उन्हें भोजन न मिल सकता। पर हंस आदि की जाति के अनेक पक्षियों में यह बात नहीं होती। उनके पैर तो छोटे होते हैं और गरदन बहुत लंबी होती है।

तात्पर्य्य यह कि ऊपर पक्षी के जिन बाहरी अंगों का वर्णन हुआ है वे सब के सब उसकी अवस्था और जीवन-क्रम को देखते हुए बहुत ही उपयुक्त हैं। इसी प्रकार उसके भीतरी भाग भी चाहे उड़ने के लिये कुछ कम उपयुक्त हों तो भी उनकी रक्षा के लिये कम आवश्यक या उपयुक्त नहीं हैं। पक्षियों के प्रत्येक अंग की हड्डियाँ पतली और हलकी होती हैं और केवल डैनों को हिलानेवाले पुट्ठों को छोड़ कर शेष सब पुट्ठे बहुत ही हलके और निर्बल होते हैं। उनकी दुम जो केवल परों की होती है उनके सिर और गरदन को सँभाले रहती है और उनके लिये लंगर का काम देती है। पक्षियों के उड़ने में वह पतवार की तरह उनका संचालन करती है और ऊपर चढ़ने या नीचे उतरने में बहुत अधिक सहायता देती है।

अगर हम पक्षी के भीतर के अंगों को देखें तो हमें मालूम होगा कि उनकी सारी बनावट आकाशीय जीवन के लिये बहुत ही उपयुक्त है; प्रत्येक अंग ठोस नहीं बल्कि पोला, फैला हुआ और हलका होता है। उनके फेफड़े पसलियों और पीठ के साथ सटेहुए होते हैं और बहुत ही कम फैल या सिकुड़ सकते हैं। पर इस त्रुटि की पूर्त्ति करने के लिये उनकी श्वास-वाहिनी नाली के सिरे पर की छोटी छोटी नसें उन्हीं फेफड़ों में जाकर खुलती हैं। इन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फेफड़ों का संबंध आगे पेट से होता है। इस प्रकार पक्षी साँस में जो हवा खींचता है वह उसके सारे बदन में फैल जाती है। इन सब अंगों में से एक दूसरे में हवा जाने के लिये बड़े ही सुगम मार्ग होते हैं। यदि किसी जल-पक्षी के फेफड़े में कोई सलाई की जाय तो वह बहुत ही सहज में उसके पेट तक पहुँच जायगी; और यदि उसकी श्वास-वाहिनी नाली में फूँक कर अथवा और किसी प्रकार हवा भरी जाय तो उससे उसका सारा शरीर फूल जायगा। यही कारण है कि चौपायों की अपेक्षा पक्षी अधिक लंबी या गहरी साँस ले सकते हैं। कुछ पक्षियों की श्वास-वाहिनी नाली बहुत चक्करदार होती है; पर यह बतलाना कठिन है कि उसमें इतने अधिक घुमाव-फिराव क्यों होते हैं।

श्वास-वाहिनी नाली का उक्त अंतर एक ही प्रकार के जानवरों में भी पाया जाता है। पालतू हंस की नाली सीधी फेफड़ों में चली जाती है; पर जंगली हंस की, जिसकी ऊपरी आकृति पालतू से बिलकुल ही मिलती जुलती होती है, यह नाली पहले छाती की हड्डी तक जाती है और तब कई स्थानों पर घूम फिर कर फेफड़ों तक पहुँचती है। नाली के इन चक्करों से पक्षी के बोलने में भी किसी प्रकार की सहायता नहीं मिलती, क्योंकि जिन जल-पक्षियों में ये चक्कर नहीं होते वे भी बहुत अच्छी तरह बोलते हैं। और कुछ पक्षी ऐसे भी होते हैं जिनकी नाली में चक्कर तो होते हैं, पर वे बिलकुल नहीं बोलते। इसलिये यह नहीं कहा जा सकता कि कुछ पक्षी क्योंकर इतने ऊँचे और तेज स्वर में बोल सकते हैं। हम केवल यही कह सकते हैं कि पक्षियों का आकार देखते हुए उनका स्वर अपेक्षाकृत बहुत ऊँचा और तेज होता है; क्योंकि बैल की ऊँची आवाज भी मोर की धीमी आवाज से अधिक तेज नहीं होती।

साधारणतः सभी पक्षियों की भीतरी बनावट एक सी होती है; पर कुछ पक्षियों की भीतरी बनावट में कुछ अंतर भी होता है। यों तो यही कहा जाता है कि सब पक्षियों का एक ही पेट होता है पर कुछ पक्षी ऐसे भी होते हैं जिनके लिये में यह बात ठीक नहीं घटती। मांस या मछली खाने वाले पक्षियों के पेट की बनावट विलक्षण होती है। उनका गला ही प्रायः एक पेट का काम देता है। उनके भोजन का बहुत सा अंश गले में ही गल जाता है और उनके पेट को उसके पचाने के लिये बहुत ही थोड़ा काम करना पड़ता है। उनका गला शरीर को देखते हुए बहुत बड़ा होता है और चारों ओर चरबी से लिपटा होता है। इस चरबी से उनकी गरमी और पाचन-शक्ति बहुत कुछ बढ़ जाती है।

जो पक्षी केवल फल या अनाज आदि ही खाते हैं उनकी आँतों की बनावट मांसाहारी पक्षियों की आँतों की बनावट से बहुत भिन्न होती है। उनके गले के आखिरी भाग में छाती की हड्डी के ऊपर एक छोटी सी थैली होती है। उसमें थूकवाली गिलटियाँ होती हैं जिनकी सहायता से उनका भोजन बहुत मुलायम हो जाता है। यह गिलटियाँ संख्या में बहुत अधिक होती हैं। पक्षी का सूखा भोजन कुछ समय तक उस थैली में रह कर नरम और गीला हो जाता है और तब वहाँ से पेट में जाता है। मांसाहारी पक्षियों का पेट भीतर से नम और मुलायम होता है; शाकाहारी पक्षियों के पेट में दो पुट्ठे होते हैं जो चक्की की तरह उनका भोजन पीसते हैं। उन पुट्ठों के भीतर की ओर एक कड़ा अस्तर होता है जो कड़ी से कड़ी चीज को पीस सकता है। पक्षियों के पेट में वह अस्तर प्रायः वही काम करता है जो आदमियों या चौपायों के मुँह में दाँत करते हैं। इस प्रकार पक्षियों में पाचक अंगों का क्रम उलटा है। चौपाए पहले दाँतों से अपने भोजन को कुचलते हैं और तब वह नरम होकर पचने के लिये पेट में जाता है। पर पक्षियों में इससे बिलकुल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विपरीत होता है। उनका भोजन पहले गले की थैली में मुलायम होकर गलता है और तब पेट में जाकर पिसता है। इसी लिये पक्षी बहुत सावधान होकर दाने चुगते हैं। वे बालू, कंकड़ या और कोई बड़ा पदार्थ नहीं खाते, जिसमें पेट की चक्की पर अधिक रगड़ न पड़े।

पक्षियों के शरीर की बनावट इतनी सादी है कि उन्हें बहुत ही कम रोग होते हैं। पर उनमें एक रोग ऐसा विलक्षण होता है जिससे चौपाए आदि बचे हुए हैं। प्रत्येक पक्षी को वर्ष में एक बार अपने पुराने पर छोड़ने और नए ग्रहण करने पड़ते हैं। उस समय उनका स्वास्थ्य बिलकुल ही बिगड़ जाता है। बड़े बड़े भीषण पक्षियों की भीषणता भी उस समय जाती रहती है। और जो पक्षी बहुत दुर्बल होते हैं वे तो प्रायः इस परिवर्त्तन के समय मर ही जाते हैं। उस समय किसी प्रकार का भोजन उनकी शक्ति को स्थिर नहीं रख सकता। उस समय वे जनन-कार्य्य भी छोड़ देते हैं। जो पदार्थ बच्चा उत्पन्न करने के लिये उनके शरीर में पहुँचता है वह भी नए पर उत्पन्न करने में खप जाता है।

पर बदलने के समय पक्षियों को बड़ा कष्ट होता है; पर कृत्रिम उपायों से वह कष्ट कुछ कम किया जा सकता है। जो लोग गानेवाले पक्षी पालते हैं वे इसका उपाय कर लेते हैं। वे लोग पक्षी के पिंजड़े पर गिलाफ चढ़ा कर उसे बिलकुल अँधेरे और बहुत गरम स्थान में रखते हैं; मानों वे उसे कृत्रिम ज्वर चढ़ा देते हैं। इस क्रिया से पुराने पर समय से पहले झड़ जाते और नए निकल आते हैं। ये नए पर पुरानों की अपेक्षा अधिक चमकीले और सुन्दर होते हैं। पक्षी पालनेवालों का यह भी कथन है कि इस प्रकार पक्षियों की आवाज भी खुल कर अच्छी हो जाती है। पर साथ ही यहाँ यह कह देना भी आवश्यक है कि इस क्रिया से प्रायः एक तृतीयांश पक्षी मर जाते हैं।

बात यह है कि पक्षियों के पर शरीर से निकलने के उपरान्त ज्यों ज्यों बढ़ते हैं त्यों त्यों बहुत कड़े और मोटे होते जाते हैं और उनकी जड़ों पर एक प्रकार की चमड़े की परत चढ़ जाती है। ऊपर की ओर से तो जड़ मोटी होती जाती है, पर भीतर से वह सिकुड़ती और कम होती जाती है। जिस आधार पर वह भीतर शरीर के साथ जुड़ा होता है वह आधार घट कर दुर्बल होता जाता है और अंत में बिलकुल अलग होकर गिर जाता है। उसी समय उनके स्थान पर छोटे छोटे नए परों का जमना आरम्भ हो जाता है। पहलेवाले पर का चमड़ा एक बहुत छोटी थैली का रूप धारण कर लेता है जिसे एक प्रकार से छाला कह सकते हैं। उस छाले के नीचे एक छोटी और मुलायम नस होती है जिसमें से पर के लिये पोषक द्रव्य आता रहता है। जब पर अच्छी तरह बढ़ जाता है और उसे पोषक द्रव्य की आवश्यकता नहीं रह जाती तब वह नस पतली होकर धीरे धीरे घटने लगती है और अंत में बिलकुल मुँद जाती है। थोड़ा सा पोषक द्रव्य पर की जड़ के खोखले भाग में रह जाता है और उसी से उस पर का कुछ महीनों तक पोषण होता रहता है। पर की कलम बनाने के समय कभी कभी यह पोषक द्रव्य उसमें पाया भी जाता है। जब वह द्रव्य समाप्त हो जाता है, तब पर झड़ जाता है और पर जमने की वही क्रिया फिर से आरम्भ होती है।

परों के बदलने का समय साधारणतः ग्रीष्म और वसन्त के मध्य में होता है। प्रायः जाड़े में पक्षियों को यह कष्ट भोगना पड़ता है। प्रकृति ने ऐसी व्यवस्था कर दी है कि यह परिवर्त्तन उसी समय होता है जब कि पक्षियों के लिये भोजन भी कम होता है; क्योंकि उस समय उन्हें भूख भी बहुत ही कम लगती है। वसन्त ऋतु के आरम्भ में जब कि खाद्य पदार्थों की अधिकता होती है, पक्षियों में बल भी आ जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभा का कार्य्य-विवरण ।

साधारण अधिवेशन ।

शनिवार तारीख २५ नवम्बर १९१६ सन्ध्या के ५ बजे

स्थान—सभाभवन ।

(१) बाबू रामचन्द्र वर्मा के प्रस्ताव और बाबू अमीरसिंह के अनुमोदन पर पंडित रामचन्द्र शुक्ल सभापति चुने गए ।

(२) गत अधिवेशन (ता० २८ अक्तूबर १९१६) का कार्य-विवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ ।

(३) प्रबन्धकारिणी समिति का २७ अगस्त १९१६ का कार्य विवरण सूचनार्थ उपस्थित किया गया ।

(४) सभासद होने के लिये निम्नलिखित सज्जनों के आवेदन-पत्र उपस्थित किए गए:—

१ पंडित कुंजविहारी लाल अग्निहोत्री—वकील विलासपुर सी० पी० ५)

२—पंडित शिवबालक, हेडमास्टर एँगलो वर्नाक्यूलर मिडिल स्कूल खुरई जि० सागर ३)

३—पंडित गोपालप्रसाद तिवारी, म्युनिसिपल टाइपिस्ट रायपुर १॥)

४—रायबहादुर अनन्तलाल, दीवान, उदयपुर स्टेट, पो० धर्मजयगढ़ ५)

५—बाबू नारायणप्रसाद जी वकील कानपुर ३)

६—मिस्टर सी० वाई चिन्तामणि इलाहाबाद ३)

७—बाबू नारायण प्रसाद अष्ठाना—वकील हाईकोर्ट इलाहाबाद ३)

८—बाबू हरेकृष्णधवन—गोलदर्वाजा—लखनऊ ५)

९—श्रीयुत सी० एस० लियर सम्पादक ऐडवोकेट लखनऊ ३)

१०—पं० गणपत राव अमृत कवीटकर—छत्रीबाजार लश्कर ३)

११—पंडित दामोदर राव केलकर मुंसिफ़—चौ[illegible] लखीमपुर ३)

१२—बाबू दौलतसिंह वकील—नरसिंहपुर ५)

१३—बाबू श्रीकृष्णदास—कोठी गणेशप्रसा[illegible] ब्रजमोहनदास लक्खी चौतरा—काशी ३)

१४—बाबू हीराचन्द्रसिद्ध—पेन्शनर सब इन्स्पे[illegible] कूर पुलिस गोंडा १॥)

१५—पंडित बलदेवप्रसाद—ले० ए० अमी[illegible] ज़िला रायपुर ३)

१६—बाबू राधेश्याम, ठि० मन्नूलाल जगन्नाथ प्रसाद चौक काशी १॥)

१७—पंडित लक्ष्मीनारायण शर्म्मा—लाहौरी टोला—काशी १॥)

१८—बाबू माताप्रसाद खत्री—गायघाट-काशी १॥)

१९—बाबू कृष्णदास—आसभैरव-काशी १॥)

२०—बाबू गजराज राय—क्षेमेश्वर घाट काशी १॥)

२१—कुँवर पृथ्वीसिंह जी—खनियाधाना स्टे[illegible] ग्वालियर रेसिडेन्सी ।

२२—श्रीमती महाराजी देवी—अध्यापिका—संस्कृत पाठशाला—परस्पुर—प्रान्त गोंडा १॥)

निश्चय हुआ कि ये सज्जन सभासद चुने जाँ[illegible]

(५) निम्नलिखित सभासदों के इस्तीफ़े उपस्थि[illegible] किए गए और स्वीकृत हुए:—

१—बाबू रामनाथ खंडेलवाल, अहरौरा जि[illegible] मिर्जापुर ।

२—बाबू पुत्तूलाल वर्म्मा, मिश्रीटोला, इटावा ।

३—बाबू फूलचन्द सेठ, बुन्देलखंड अनाथालय बाँदा

४—पंडित विश्वम्भरनाथ शर्म्मा, ठठेरवाड़ा मेरठ सिटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५—बाबू वैद्यनाथदास, सब जज बरेली
६—पं० भागूलाल दुबे, मिश्रजी की दूकान।
७—बाबू भोलानाथ पीताम्बर वाले, चौक, काशी

(६) निम्न-लिखित पुस्तकें धन्यवाद-पूर्वक स्वीकृत हुईं:—

लाला भगवानदीन काशी
अलंकारमंजूषा
पंडित प्यारेलाल मिश्र बैरिस्टर छिंदवाड़ा
विलायती समाचारपत्रों का इतिहास
पंडित चतुरानन्द ब्रह्मचारी तिलमापुर बनारस
निर्माल्यरत्नाकर
बाबू श्यामसुन्दरदास बी० ए० लखनऊ
रामचरित मानस

खरीदी गईं तथा परिवर्त्तन में प्राप्त

राजकुमारी
रामकथा खं० १
नेपोलियन बोनापार्ट
अर्थ में अनर्थ भाग ३
जादू का महल भाग १
विद्यासागर
मनुष्यविचार
मानसिक आकर्षणद्वारा व्यापारिक सफलता
संयुक्त प्रदेश की गवर्नमेंट
District Census Statistics of Sitapur District.

(७) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

साधारण सभा।

शनिवार तारीख ३० दिसम्बर १९१६ सन्ध्या के ५ बजे

स्थान—सभाभवन

(१) गत अधिवेशन (ता० २५ नवम्बर १९१६) का कार्य-विवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।

(२) सभासद होने के लिये निम्न-लिखित सज्जनों के फ़ार्म उपस्थित किए गए:—

१—पंडित राधाकृष्ण शर्म्मा एकाउण्टेण्ट, नहर शेषपुरा लाहोर १॥)

२—पंडित दुर्गाचन्द्र जोशी कनखल जि० सहारनपुर ३)

३—पंडित श्रीकृष्ण शुक्ल लहंगपुरा शर्का काशी १॥)

४—बाबू कृष्णानन्द ईश्वरगंगी नई बस्ती काशी १॥)

५—बाबू शम्भूदयाल बी० ए० ३७ ला-होस्टल इलाहाबाद १॥)

६—ठाकुर बाघसिंह जी—झुझणे पो० शेखावाटी मँडरेला।

७—बाबू साहबबख़श श्रीवास्तव रिकाबगंज फ़ैज़ाबाद १॥)

८—बाबू सालिकसिंह—विश्वेश्वरगंज काशी १॥)

९—बाबू केदारनाथ अग्रवाल—ठि० लाला शिवचरन लाल खजानची—नौगाँव (बुन्देल खण्ड) १॥)

१०—श्रीयुत पी० शेषाद्रि—वाइस प्रिंसिपल सी० एच्० कालेज—काशी १॥)

११—बाबू मोतीलाल खत्री—सती चौतरा—काशी १॥)

१२—पंडित श्रीनाथ शास्त्री बेताल—महल्ला दूध विनायक—काशी १॥)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३—बाबूलालमन गुप्त—ठि० लाला शालिग्राम नारायणदास—फर्रुखाबाद ५)

१४—बाबू विजयनारायणसिंह—नईबस्ती—ईश्वरगंगी—काशी १॥)

१५—बाबू रमणलाल केशवलाल—पेटलाद—बरोदा १॥)

निश्चय हुआ कि ये सज्जन सभासद चुने जाँय।

(३) आजमगढ़ के बाबू मधुसूदनदास गर्ग का इस्तीफ़ा उपस्थित किया गया और स्वीकृत हुआ।

(४) निम्न लिखित पुस्तकें धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईं:—

बाबू जीतनसिंह जी रीवाँ
फ्राँस-जर्मनी युद्ध
बाबू वैजनाथप्रसाद यादव बुलानाला, काशी
अहीर जाति का इतिहास
भ्रमजाल नाटक
शिवमाला
उपदेशमञ्जरी
पंडित गोविन्दप्रसाद घिलड्याल बी० ए०
उथेलो
डाक्टर त्रिलोकीनाथ वर्म्मा लखनऊ
हमारे शरीर की रचना
पंडित लक्ष्मणनारायण गर्दे काशी
महाराज छत्रसाल
बाबू रामनारायणलाल बहराइच
साधुसर्वस्व
पंडित रामनारायण मिश्र काशी
बालोपदेश
डाक्टर मिट्ठनलाल आगरा
कन्याहितैषिणी
पंडित रामनरेश त्रिपाठी
मारवाड़ी मनोरंजन
पंडित शिवनारायण काशी
स्वरूपसागर
सस्तु साहित्य वर्द्धक कार्यालय
हिन्दी लेखकमाला भाग १
संयुक्त प्रदेश की गवर्न्मेण्ट
District Census Statistics of Jalaun

(५) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

—:०:—

पुरस्कार और पदक।

जयपुर के स्वर्गवासी कुअर जोधसिंहजी मेहता ने काशी नागरीप्रचारिणी सभा को एक हजार रुपया नक़द दान दिया था। सभा ने निश्चय किया है कि इस रकम के ब्याज से होनेवाली आय में कुछ द्रव्य अपने पास से मिला कर प्रति तीसरे वर्ष दो सौ रुपया नकद पुरस्कार उस ग्रन्थकार को दिया जाया करे जिसका ग्रन्थ भारतवर्ष में हिन्दी में निकले हुए सब ग्रन्थों में श्रेष्ठ हो। पहला पुरस्कार १ली जनवरी सन् १९१७ ई० से ३१ वीं दिसम्बर सन् १९१९ ई० तक प्रकाशित होनेवाले ग्रन्थों में सर्वोत्तम ग्रन्थ के लेखक को दिया जायेगा। इसके अतिरिक्त प्रति वर्ष के नियमानुसार इस वर्ष भी निम्न-लिखित लेखों के लिये इस प्रकार के पदक दिए जायँगे। (१) डाक्टर छन्नूलाल, स्वर्णपदक—विषय,—नगरों का निर्माण। (२) राधाकृष्णदास, रजत-पदक,—विषय,—भारतवर्ष की शासनप्रणाली। (३) रेडिंग, रजत-पदक। विषय,—मनुष्यों का भोजन। पदकों के लिये लेख आगामी ३१ वीं दिसम्बर सन् १९१९ ई० तक मंत्री नागरीप्रचारिणी सभा काशी के पास पहुंच जाने चाहिएँ। मंत्री, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Registered No. A 414
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाग २१] [संख्या ९—१०

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

मार्च, अपरैल १९१७

सम्पादक—रामचन्द्र वर्म्मा ।

—:०:—

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल । बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल ॥
करहु विलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल । निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सब को मूल ॥
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार । सब देशन सों लै करहु, भाषा मांहि प्रचार ॥
प्रचलित करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न । राज काज दरबार में, फैलावहु यह रत्न ॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र ।

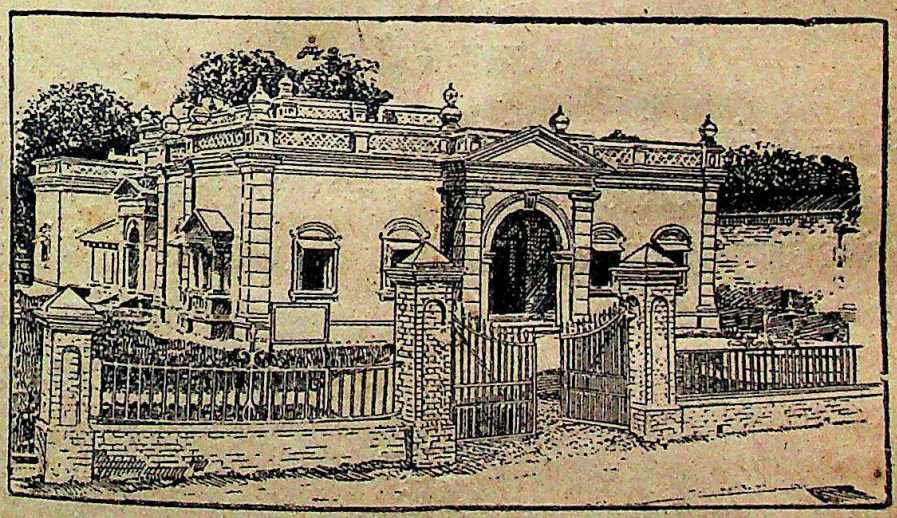

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित ।

श्री अपूर्वकृष्ण बोस द्वारा इंडियन प्रेस, प्रयाग में मुद्रित ।

वार्षिक मूल्य २॥)

प्रति संख्या =)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची ।

(१) दर्शन सिद्धान्त १९३
(२) वैदिककाल का ज्योतिषशास्त्र ... १९७
(३) हिन्दी और बंगला साहित्य १९९
(४) जातीयता का विकाश २०८
(५) वेदों में दानचर्चा... ... ... २११
(६) प्रतिमोक्ष सूत्र २१
(७) नारद भक्ति-सूत्रों का सारांश... ... २१
(८) काउन्सिल में हिन्दी २१
(९) कोलम्बस की जल-यात्रा २१
(१०) एक बंगाली मुसलमान की हिन्दी ... २१
(११) सभा का एक विशेष अधिवेशन ... २१

पण्डित लक्ष्मीधरजी वाजपेयी

सम्पादित ।

क्या आपको यह मालूम है कि,

हिन्दी-चित्रमय-जगत्

राष्ट्र-भाषा हिन्दी में उच्चश्रेणी का ; हिन्दी-भाषा-भाषियों का अत्यन्त लाड़ला; मराठी, हिन्दी अँग्रेज़ी, बँगला इत्यादिक भाषाओं के धुरन्धर लेखकों के लेख प्रकाशित करनेवाला; महाराष्ट्र में 'हिन्दी राष्ट्र-भाषा भवतु ' का झंडा फहरानेवाला; सामयिक महत्त्वपूर्ण लेख, कविता तथा चित्रों के प्रकाशित करने में युगांतर प्रस्थापक; हिन्दी में अपने ढंग का सब से पहिला और अनूठा मासिक पत्र है ?

यदि, नहीं,

तो आप उसे आज ही मंगाकर देखिये ! निस्सन्देह आप उसकी अन्तरंग की चटक मटक पर मोहित होंगे और हिन्दी में ऐसे अनूठे पत्रप्रकाशन के साहस पर दांतों उँगली दबायँगे । पत्र की लागत के देखते मूल्य कुछ नहीं । केवल सादा संस्करण ३॥) राजसंस्करण ५॥) तिसपर भी विशेषांक उपहार में ! एक प्रति का ।-), ॥)

पता—

मैनेजर, हिन्दी-चित्रमय-जगत्,

पूना सिटी ।

—:०:—

सुघड़ दर्जिन ।

(दूसरा संस्करण)

हिन्दी में अपने ढंग की यह पहली पुस्तक है । इसमें सब तरह के कपड़ों की सिलाई और कटाई आदि का वर्णन इतनी उत्तमता से किया गया है कि घर की साधारण स्त्रियाँ भी इसे पढ़ कर सब तरह के कपड़े अच्छी तरह काट और सी सकती हैं । समझाने के लिये इसमें ६०-७० चित्र भी दे दिये गये हैं । मूल्य केवल ॥)

पता—

मन्त्री, नागरी प्रचारिणी सभा—काशी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

भाग २१ } मार्च, अप्रैल १९१७. { संख्या ९—१०

दर्शन सिद्धान्त ।

[लेखक—श्रीयुक्त बाबू हरिहरनाथ बी० ए०]

कहा जाता है कि सांख्य सिद्धान्त दो प्रकार का है। एक नास्तिक और दूसरा आस्तिक। पतञ्जलि का योग-दर्शन सिद्धान्त आस्तिक है और कपिल का सांख्य-दर्शन सिद्धांत नास्तिक है।

कपिल के अनुसार मुक्ति ज्ञान से होती है और पतञ्जलि के अनुसार योग से। परन्तु योगी को भी उसी ज्ञान की आवश्यकता होती है जो कपिल के सिद्धांत में आवश्यक है।

(१)

योग सिद्धान्त ।

इस सिद्धांत में भी सांख्य में कहे २५ तत्त्व माने गए हैं।

इस सिद्धान्त के अनुसार मुक्ति केवल ज्ञान से नहीं होती। मुक्ति के लिये पहले योगद्वारा शरीर को दोषों से रहित अर्थात् शुद्ध कर लेना चाहिए। यह शरीर पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश इन पाँच तत्त्वों से बना है। परन्तु इस शरीर का मालिक (आत्मा) इससे भिन्न वस्तु है।

मनुष्य अपने और अपने शरीर में का भेद न जानने के कारण स्वार्थ और कर्मों के बन्धन में फँसा रहता है और अपने पराए आदि के मोह में लिप्त रहता है। यह सब क्लेश अज्ञान ही के कारण है। अज्ञानता के कारण आत्मा अपने वास्तविक स्वरूप को नहीं पहचानता। जैसे एक सफेद मणि के सामने एक लाल फूल रखने से वह मणि भी लाल ही दिखाई देती है, यद्यपि वह वास्तव में सफेद ही रहती है। वैसे ही शुद्ध रहते हुए भी अज्ञानता से आत्मा अपने को "हम, तुम, अपना, पराया, सुख, दुःख" आदि झगड़ों से लिप्त समझता है। अर्थात् मनुष्य अपने को अपनी वृत्तियों के सारूप्य मानता है। वह यह नहीं समझता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि दुःख दूसरी वस्तु है और हम दूसरे हैं, अतः अपने ही को दुःखी मानता है।

सम्पूर्ण अज्ञानता का नाश योग द्वारा ही होता है। चित्त की सब वृत्तियों के निरोध को योग कहते हैं। चित्तवृत्तियों का निरोध ओंकार के जप *ईश्वर में भक्ति तथा ध्यान से होता है। आलस्य, व्याधि, प्रमाद तन्द्रा, संशय, भ्रम, दुःख, दौर्मनस्य, विषय-लोलुपता, श्वासप्रश्वास, सर्वांग कम्पन इत्यादि योग में विघ्न करते हैं। इनका निवारण तप, जप, ध्यान, दया आदि के अभ्यास द्वारा मन की शुद्धि करने से होता है। जब इन यत्नों द्वारा मन एकाग्र होता है तब सच्चा ज्ञान मिलता है।

(१) यम (२) नियम (३) आसन(४) प्राणायाम (५) प्रत्याहार (६) धारणा (७) ध्यान और (८) समाधि ये योग के आठ अंग कहे जाते हैं। अहिंसा, अस्तेय; (चोरी न करना) ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह, ये यम कहलाते हैं। शौच, सन्तोष, तप (सुख, दुःख इत्यादि द्वंद्वों का सहना) स्वाध्याय (शास्त्राध्ययन) और ईश्वर-प्रणिधान (सब कर्मों का फल ईश्वर को समर्पित करना और विषयों से इन्द्रियों को खींचना) प्रत्याहार कहलाता है। चित्त को एकाग्र करना धारणा कहलाता है। किसी एक वस्तु पर चित्त को लगाना ध्यान कहलाता है। केवल उसी ध्येय वस्तु के अतिरिक्त और सब की शून्यता को समाधि कहते हैं। इस अवस्था में पुरुष अपने शुद्ध स्वरूप में स्थित रहता है। योगी को सुषुम्ना, इडा, पिंगला आदि नाड़ियों का ज्ञान होना चाहिए। यम नियम आदि के सिद्ध होने से अणिमा[1], लघिमा[2] महिमा[3] आदि आदि अनेकानेक सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं।

मनुष्य के शुभ कर्मों से उसके और प्रकृति के बीच की बाधाएँ दूर हो जाती हैं और तब प्रकृति की सहायता से मनुष्य एक जाति या शरीर से दूसरी जाति या शरीर में जा सकता है (पर-काय-प्रवेश) और दूसरी जाति में भी उसका वही चित्त रहता है; क्योंकि सब चित्तों का नियन्ता वही एक चित्त है। भिन्न भिन्न शरीरों में भ्रमण करने से नई नई वासनाओं की उत्पत्ति नहीं होती क्योंकि योगी का चित्त वासनाहीन और ध्यान से शुद्ध किया रहता है। और योगियों के कर्म का फल भला वा बुरा कुछ भी नहीं होता। जो फल दिखलाई पड़ता है वह उन्हीं कर्मों का होता है जिनके अनुरूप उस मनुष्य की अवस्था रहती है। परन्तु योगी की अवस्था न भली ही होती है और न बुरी। (द्वन्द-हीनता)। यद्यपि वासनाएँ कभी कभी अपने अनुरूप अवस्था को पाकर अवश्य दिखलाई पड़ती हैं तथापि उन वासनाओं के कारण (अर्थात् कर्मविपाक, ज्ञाता और ज्ञेय की भेद बुद्धि) के नाश होने से उसका भी नाश हो जाता है। सत्व, रज और तम इन तीन गुणों के सम्बन्ध में हेर फेर होने से अर्थात् उनके अवस्था-भेद से समय का ज्ञान होता है। गुणों के अवस्था-भेद से भिन्न भिन्न वस्तुओं का ज्ञान होता है। यह अवस्था-भेद नियमित रूप से होता है, इस कारण वस्तुओं में एकता देख पड़ती है, उनमें गड़बड़ी नहीं होती। मनुष्य एक ही अवस्था को कई रूपों में देखता है इससे सिद्ध होता है कि ज्ञाता एक से अधिक हैं। और जैसे जैसे गुणों का अवस्था-भेद होता है वैसे वैसे भिन्न वस्तुएँ दिखाई पड़ती हैं।

*इस सिद्धान्त में अविद्या (विपरीत ज्ञान) आस्मिता (बुद्धि और पुरुष को एक समझना) राग, द्वेष, अभिनिवेश, कर्म विपाक (कर्मों का फल) वासना से रहित पुरुष विशेष को ईश्वर मानते हैं। ईश्वर के अस्तित्व का यह प्रमाण दिया जाता है कि जैसे एक से दूसरा बड़ा है और दूसरे से तीसरा और तीसरे से चौथा वैसे ही एक ऐसा ईश्वर भी है जो सब से बड़ा है।

१ बहुत छोटा हो जाना, २ बहुत हलका हो जाना, ३ बहुत बड़ा हो जाना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वस्तु तभी दिखाई देती है जब अवस्था-भेद होता है और जब चित्त की देखने की वृत्ति होती है। अतः चित्त में सभी वस्तुओं को एक ही साथ देखने की सामर्थ्य होने पर भी वह उसी वस्तु को देखता है जिसकी उसे इच्छा होती है।

अब जैसी इच्छा होती है वा जैसी त्रिगुण की अवस्था होती है उसी के अनुसार ज्ञान होता है। इससे सिद्ध हुआ कि इन दोनों का नियामक एक सर्व-शक्तिमान् विशेष पुरुष (ईश्वर) है जो स्वतः प्रकाशमान् है; क्योंकि वह परिणामहीन है; और वही स्वतः प्रकाशमान हो सकता है जो परिणाम-हीन हो (इसी कारण चित्त जो परिणामी है स्वतः प्रकाशित नहीं है)। इसके अतिरिक्त यदि चित्त और बाह्य वस्तुओं का नियामक ईश्वर न होता तो पुरुष को चित्त और वस्तु दोनों का ज्ञान अथवा एक चित्त को अपना और दूसरे का ज्ञान एक ही समय में नहीं हो सकता। चित्त स्वयं ज्ञाता नहीं है वह केवल वासनाओं का ढेर है और उसमें जानने की शक्ति पुरुष द्वारा ही आती है।

इस सिद्धान्त में प्रत्यक्ष, अनुमान और शाब्द तीन प्रमाण माने गए हैं। संक्षेपतः इस सिद्धान्त में पुरुष (जिसको अन्य सिद्धान्त में आत्मा कहा है) ईश्वर और प्रकृति (जिसको अन्य सिद्धान्त में सृष्टि कहा है) की स्थिति मानी गई है।

(२)

सांख्य सिद्धान्त।

इस सिद्धान्त में २५ तत्त्व माने गए हैं। उनके नाम ये हैं:—

(१) पुरुष (२) प्रकृति (३) महत् (४) अहङ्कार (५) शब्द (६) स्पर्श (७) रूप (८) रस (९) गन्ध (१०) कान (११) चमड़ा (१२) आँख (१३) जीभ (१४) नाक (१५) वाक् (१६) हाथ (१७) पैर (१८) लिंग (१९) गुदा (२०) उपस्थ (२१) मन (२२) पृथ्वी (२३) जल (२४) तेज और (२५) आकाश।

पुरुष।

पुरुष (जिसको दूसरे सिद्धान्तों ने जीव कहा है) नित्य है। न तो यह किसी से उत्पन्न ही हुआ है और न यह किसी को उत्पन्न करता है। यह चेतन, द्रष्टा और भोक्ता है। इसके अस्तित्व के प्रमाण ये हैं:—देखा जाता है कि पदार्थ जड़ है। इस कारण वह न अपने को देख ही सकता है और न भोग सकता है। इस से यह सिद्ध होता है कि जब एक वस्तु है तो उसका भोक्ता या द्रष्टा भी अवश्य होगा। फिर जब पदार्थ जड़ की स्थिति सिद्ध हुई तो उसका उलटा चेतन भी अवश्य ही होगा जो उस जड़ पदार्थ का नियन्ता हो। ऐसे ही इस सिद्धान्त में पुरुष सिद्ध किया जाता है। पुरुष अनेक हैं। क्योंकि कोई मरता है, कोई जन्म लेता है, कोई दुःख भोगता है, कोई सुख भोगता है, किसी को कोई एक वस्तु दिखाई देती है, दूसरे को दूसरी दिखाई देती है इत्यादि बातों से सिद्ध हुआ कि पुरुष अनेक हैं। यदि अनेक न होते तो एक के मरने पर सब मरते। एक के देखने पर सब देखते इत्यादि।

प्रकृति।

सत्व, रज और तम इन तीनों गुणों की साम्यावस्था (समान भाग में रहना वा अधिक और कम न होना) को प्रकृति कहते हैं।

इसका यह अर्थ नहीं है कि प्रकृति एक भिन्न वस्तु है जिसका गुण सत्व, रज और तम हैं। त्रिगुण ही को प्रकृति कहते हैं। ये दो भिन्न वस्तुएं नहीं हैं। जैसे समुद्र और तरङ्ग ये दो वस्तुएं नहीं हैं वैसे ही प्रकृति और त्रिगुण भिन्न नहीं हैं। प्रकृति का कारण कोई नहीं है परन्तु वह सब का कारण है। प्रकृति का कारण इसलिये नहीं मानते कि जब इसका (जो सबका कारण है) कारण मानेंगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब उस कारण का भी कारण मानना होगा और फिर उसका भी एक और कारण मानना होगा जिससे अनवस्था हो जायगी। इसलिये प्रकृति ही को अन्ततः सबका कारण मानते हैं।

सृष्टि।

प्रकृति और पुरुष के संयोग से सृष्टि होती है। (कहा जाता है कि बद्ध पुरुषों को मुक्ति के साधन का अवकाश देने के लिये सृष्टि होती है) पुरुष सदा कूटस्थ और कार्यहीन है तथापि त्रिगुणों के प्रभाव से वह कार्य करता हुआ जान पड़ता है। प्रकृति (जड़) अचेतन और पुरुष चेतन है। इसलिये उन दोनों का संयोग लँगड़े और अन्धे के साथ के सदृश होता है।

सतोगुण के प्रभाव से सुख, शान्ति, इन्द्रियजय और ज्ञान की उत्पत्ति होती है। रजोगुण के प्रभाव से विकार, अहंकार और सांसारिक बुद्धि की उत्पत्ति होती है। और तमोगुण के प्रभाव से आलस्य, बुद्धि की मन्दता और पापादि की उत्पत्ति होती है।

प्रकृति से महत् (बुद्धि जिससे ज्ञान प्राप्त होता है) की उत्पत्ति होती है। उससे अहंकार ('हम हैं' का ज्ञान) और उससे पञ्चतन्मात्रा, (शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध) कर्म-इन्द्रिय, ज्ञानेन्द्रिय और मन (जो कर्म और ज्ञान दोनों ही का साधक है) उत्पन्न होता है। पञ्चतन्मात्रा से फिर महाभूत (पृथ्वी जल, तेज, वायु और आकाश) की उत्पत्ति होती है।

फिर प्रलय होने पर ये सब उसी प्रकृति में लीन हो जाते हैं, जहाँ से वे पहले परिणाम द्वारा उद्भूत हुए थे। सृष्टि के पहले ये सब उसी प्रकृति में उसी प्रकार रहते हैं जैसे सरसों में तेल रहता है।

मुक्ति।

मनुष्य का सबसे बड़ा उद्देश्य दुःखों का नाश कर मुक्ति पाना है। दुःखों के सम्पूर्ण नाश को मुक्ति कहते हैं। यज्ञादिक से मनुष्य सांसारिक अभीष्ट प्राप्त करते हैं परन्तु जब तक संसार है तब तक दुःख का सम्पूर्ण नाश कहाँ? इसलिये ज्ञान द्वारा ही मुक्ति होती है।

यद्यपि स्वयं तो पुरुष निर्लेप है तथापि प्रकृति के संयोग से वह अपनी शुद्धता का पता नहीं पाता। इस लिये पुरुष सदैव यही चाहता है कि मैं कर्मों को भोग कर मुक्ति पाऊँ। कर्मों को भोगने के लिये उसे एक सूक्ष्म शरीर दिया गया है जो बुद्धि, अहंकार, मन, पाँच कर्मेंद्रियों, पाँच ज्ञानेन्द्रियों और पाँच तन्मात्राओं से बना होता है। इस शरीर का प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं होता। इस शरीर द्वारा यद्यपि भावनाएँ होती हैं तथापि मनुष्य पदार्थों का भोग नहीं कर सकता। भोग करने के लिये मनुष्य के लिये पाँच महाभूतों का बना स्थूल शरीर होता है। स्थूल शरीर का मृत्यु से नाश हो जाता है। परन्तु लिंग-शरीर ठहरता है और पुनर्जन्म-द्वारा दूसरे स्थूल शरीरों में जाता है। इस भौतिक सर्ग—पाँच भूतों की सृष्टि में बहुत से पुरुष स्थूल शरीर में बँधे हुए रहते हैं। ये १४ प्रकार के हैं और तीन भागों में विभक्त हैं। एक विभाग उत्तम पुरुषों का है जिसमें ८ प्रकार के (ब्रह्मा, प्रजापति, इन्द्र, पितृ, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, पिशाच) पुरुष हैं। दूसरा विभाग निकृष्ट जीवों (धातु, वृक्ष, पशु, पक्षी आदि) का है जिसमें पाँच प्रकार हैं और तीसरा प्रकार वह है जिसमें केवल मनुष्य हैं।

ऊपर के लोकों में सत्त्व है, नीचे के लोकों में तम है और मध्य में रजोगुण है जहाँ मनुष्य दुःख भोगते हैं।

ज्ञान से मुक्त हो जाने पर फिर मनुष्य का जन्म नहीं होता। ज्ञान से पुरुष को यथार्थ बोध हो जाता है कि पुरुष शुद्ध, बुद्ध और निर्गुण है और प्रकृति केवल जड़ है। केवल अज्ञानता ही से मनुष्य अनेक कार्य करता हुआ जान पड़ता है। किन्तु वास्तव में न कहीं हम हैं और न कुछ हमारा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईश्वर, वेद और प्रमाण।

इस सिद्धान्त में प्रत्यक्ष, अनुमान और शाब्द प्रमाण मानते हैं। शाब्द प्रमाण को मानने के कारण वेद को भी प्रमाण मानते हैं। परन्तु ईश्वर के विषय में कहा है कि वह सिद्ध नहीं होता। क्योंकि यदि ईश्वर को क्लेशादिक से हीन मानें तो फिर उसमें अहंकार, इच्छा और प्रवृत्ति न होगी। तब फिर वह सृष्टि कैसे करेगा? और यदि उसे क्लेशादिक से युक्त मानें तो फिर वह साधारण मनुष्य के समान हो जायगा। वेदादिक में जो ईश्वर के नाम से स्तुति की गई है वह केवल मुक्त आत्मा ही की स्तुति है और जो स्तुति ईश्वर को सृष्टि का कर्ता कहती है वह शिव, विष्णु आदि सिद्ध पुरुषों की स्तुति है जो यथेच्छ काम कर सके थे। प्रकृति और पुरुष को मिलानेवाले (नियन्ता) की भी आवश्यकता नहीं है क्योंकि जैसे चुम्बक को लोहे के पास रखने ही से दोनों मिल जाते हैं वैसे प्रकृति और पुरुष अपने आप ही मिल जाते हैं। उनके मिलाने के लिये भी ईश्वर की आवश्यकता नहीं होती।

(शेष आगे)

—:०:—

वैदिक काल का ज्योतिष शास्त्र।

[लेखक, श्रीयुक्त पं० गणपति जानकीराम दुबे, बी० ए०]

वेदों में ज्योतिषशास्त्र के कौन कौन और कैसे कैसे विषय आए हैं इसके सम्बन्ध में विचार करने का आज यत्न किया जाता है। कहना न होगा कि वेद ज्योतिषशास्त्र के ग्रन्थ नहीं हैं। इससे उनमें ज्योतिषशास्त्र के विषय में विशेष रूप से कोई बात नहीं कही गई है। प्रसंगवश और विचारों के साथ ज्योतिषशास्त्र संबंध की कुछ बातें उसमें साधारणतः आई हैं, उन्हीं को देख कर उनसे कुछ सामान्य अनुमान किया जा सकता है। और ऐसा अनुमान करने के लिये भी यदि पर्याप्त सामग्री न मिल सकी तो जो जो बातें उपलब्ध होंगी उन्हें वैसे ही कह देना होगा। इससे अधिक और क्या हो सकता है?

ऊपरी तौर पर भी यदि देखा जाय तो प्रथमतः यह मालूम होगा कि हमारे पूर्वजों की सृष्टि का निरीक्षण और विशेषतः आकाश के चमत्कारों का अवलोकन करने की बड़ी रुचि थी। कोई वेद अथवा वेद भाग अथवा कोई प्रपाठक ही आप उठा लीजिए, उसमें आकाश, चंद्र, सूर्य, उषा, सूर्यरश्मि, नक्षत्र, तारा, ऋतु, मास, दिवस और रात्र, वायु, मेघ, इत्यादि के विषय में थोड़ा बहुत वर्णन अवश्य ही मिलेगा। और वह वर्णन अत्यंत मनोहर, प्राकृतिक, सुन्दर, आश्चर्यमय और अनोखा होगा। इस प्रकार के सभी वर्णन यदि यहाँ दिए जायँ तो विषयान्तर के साथ विस्तार भी बहुत होगा, इसलिये उस इच्छा को रोकना ही उचित है

अब आरम्भ में जगत् की उत्पत्ति अर्थात् सृष्टि की रचना के विषय में वेदों में जो कुछ कहा गया है उसे लीजिए।

विश्वोत्पत्ति।

ऋग्वेद संहिता अ० १०—७२ में निम्न लिखित मंत्र आए है।

"देवानां नु वयं जाना प्रवोचाम विपन्यया।
उक्थेषु शस्यमानेषु यः पश्यादुत्तरे युगे ॥१॥

ब्रह्मणस्पतिरेतासं कर्मार इवाधमत्।
देवानां पूर्व्ये युगेऽसतः सदजायत ॥२॥

देवानां युगे प्रथमेऽसतः सदजायत।
तदाशा अन्वजायन्त तदुत्तानपदस्परि ॥३॥

भूर्जज्ञ उत्तानपदो भुव आशा अजायन्त।
अदितेर्दक्षो अजायत दक्षाददितिः परि ॥४॥

अदितिर्हयजनिष्ट दक्ष या दुहिता तव।
तां देवा अन्वजायन्त भद्रा अमृतबंधवः" ॥५॥

अर्थः—हम देवों के जन्म स्पष्ट शब्दों में कहते हैं। जो देवगण (पूर्व युग में उत्पन्न होने पर भी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तर युग में (यज्ञों में) शास्त्रों के गीत गाए जाने के समय स्तोता को) देखते हैं ॥१॥ कर्मार की भाँति ब्राह्मणस्पति ने इन देवों के जन्मों को बनाया । देवों के पूर्व युग में असत् से (कुछ नहीं से) सत् हुआ ॥२॥ देवों के प्रथम युग में असत् से सत् उत्पन्न हुआ । जिससे दिशाएँ हुईं । उनके अनन्तर उत्तानपाद हुए ॥३॥ उत्तानपाद से पृथ्वी हुई । पृथ्वी से आशाएँ हुईं । अदिति से दक्ष हुआ । दक्ष से अदिति हुई ॥४॥ हे दक्ष ! अदिति जो तेरी दुहिता है उसने तुझे उत्पन्न किया उसके पश्चात् स्तुत्य और अमर देवों का जन्म हुआ ॥५॥

ऋग्वेद की निम्नलिखित ऋचा देखिए:—

"ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत ।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः ॥१॥
समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत ।
अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी ॥२॥
सूर्याचंद्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् ।
दिवं च पृथिवीं चांतरिक्षमथो स्वः" ॥३॥

ऋ० सं० १०–१९०

अन्य वेदों में भी ये मंत्र आए हैं । तैत्तिरीय ब्राह्मण में भी निम्नलिखित वर्णन आया है:—

आपोवा इदमग्रे सलिलमासीत् । तेन प्रजापतिरश्राम्यत् । कथमिद ँ स्यादिति । सोपश्यत्पुष्करपर्णं तिष्ठत् । सोमन्यत । अस्ति वै तत् । यस्मिन्निदमधितिष्ठतीति । स वराहो रूपं कृत्वोपन्यमज्जत् । स पृथिवीमध आर्छत् । तस्याउपहत्योदमज्जत् । तत्पुष्करपर्णेऽप्रथयत् । यदप्रथयत् । तत्पृथिव्यै पृथिवित्वं ।

अष्टक १ अध्याय १ अनुवाक ३.

इसमें कहा है कि प्रथम उदक था, फिर पृथ्वी उत्पन्न हुई, इत्यादि वर्णन है । तैत्तिरीय संहिता में भी इसी तरह की उत्पत्ति दी है । यथा:—

"आपो वा इदमग्रेसलिलमासीत् । तस्मिन् प्रजापतिर्वायुर्भूत्वा चरत्स इमामपश्यत्तां वराहो भूत्वाऽहर्त्तां विश्वकर्मा भूत्वा व्यमार्त् सा प्रथत सा पृथिव्यभवत् तत्पृथिव्यै पृथिवित्वं" ॥

अष्टक ७ अध्याय १ अनुवाक ५.

इसमें उदक के बाद वायु और अनन्तर पृथ्वी की उत्पत्ति बतलाई गई है । और उपनिषदों में विशेष स्पष्टता से क्रम दिखाया है । यथा:—

"तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः संभूतः । आकाशाद्वायुः । वायोरग्निः । अग्नेरापः । अद्भ्यः पृथिवी । पृथिव्या ओषधयः । ओषधीभ्योऽन्नं । अन्नाद्रेतः । रेतसःपुरुषः" ॥

तैत्तिरीयोपनिषद् २. १. (ब्रह्मवल्ली)

उससे (अर्थात् उस परमात्मा से) आकाश की उत्पत्ति हुई । आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल और जल से पृथिवी बनी । पृथिवी से ओषधियाँ (वनस्पति) ओषधियों से अन्न और अन्न से पुरुष उत्पन्न हुए ।

अन्य ग्रंथों में भी बहुत जगह सृष्टि की उत्पत्ति का वर्णन मिलता है ।

यद्यपि सृष्टि की उत्पत्ति, उसका क्रम इत्यादि बातें वेदों में अनेक स्थानों में बतलाई गई हैं तथापि सृष्टि का वास्तविक कारण जानना असंभव है । वह किसी को ज्ञात नहीं है । इसी आशय का स्पष्ट और आश्चर्यजनक वर्णन तैत्तिरीय ब्राह्मण में एक जगह आया है । यथा:—

"नासदासीन्नोसदासीत्तदानीं नासीद्रजो नो व्योमापरो यत् । किमावरीवः कुहकस्य शर्म्मन्नंभःकिमासीद्गहनं गभीरं । न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि न रात्र्या अन्हः आसीत्प्रकेतः । आनीदवात ँ स्वधयातदेकं तस्माद्धान्यन्न परः किंच नासः । तम आसीत्तमसा गूढमग्रेऽप्रकेतं सलिल ँ सर्व मा इदम् । तुच्छेनाभ्वपिहितं यदासीत्प । तमसस्तन्महिमा जायतैकम् । कामस्तदग्रे समवर्तताधि मनसोरेतः प्रथमं यदासीत् । सतो बंधुमसति निरविंदन् हृदप्रतीष्या कवयो मनीषा । तिरश्चीनो विततो रश्मिरेषामधस्विदासी ३ दुपरिस्विदासी ३त् । रेतोधा आसन् महिमान आसन् स्वधा अवस्तात्प्रयतिः परस्तात्" ।

इस वर्णन से ज्ञात होता है कि पूर्व सृष्टि का प्रलय होने के बाद उत्तर सृष्टि होने के पहले सत् नहीं था और असत् भी नहीं था । आकाश नहीं था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उदक नहीं था। मृत्यु नहीं थी, अमृत नहीं था। रात्रि और दिवस को प्रकाशित करनेवाला कोई नहीं था। केवल ब्रह्म मात्र था। आगे चल कर उसके मन में सृष्टि उत्पन्न करने की इच्छा हुई। फिर सब जगत् उत्पन्न हुआ। इत्यादि।

इसके बाद और कहा है:—

"को अद्धा वेद क इह प्रवोचत् कुत आजाता कुत इयं विसृष्टिः। अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनेनाथा को वेद यत आबभूव। इयं विसृष्टिर्यत आबभूव यदि वा दधे यदि वा न। यो अस्याध्यक्षः परमे व्योमन्। सो अंग वेद यदि वा न वेद।

फिर भी एक स्थल पर लिखा है:—

किं स्विद्वनं क उस वृक्ष आसीत् यतो द्यावापृथिवी निष्टत॥

अर्थात् यह विविध सृष्टि कहाँ से पैदा हुई, क्यों हुई, यह वस्तुतः कौन जानता है? अथवा कौन कह सकता है? देव भी बाद में हुए। फिर जिससे सृष्टि उत्पन्न हुई उसे कौन जानता है? जिससे पृथिवी बनी वह कौन वृक्ष है? वह किस वन में था, यह कौन जानता है। इन सब का अध्यक्ष परमाकाश में है। वही जानता है। अथवा वह भी जानता है या नहीं यह भी किसे मालूम?

जगत् की उत्पत्ति का कारण जाननेवाला कोई नहीं है अर्थात् उत्पत्ति-क्रम का प्रत्यक्ष किसी को ज्ञान नहीं है। यही भाव उक्त विचारों में व्यक्त किया गया है।

ऋग्वेद में एक जगह कहा है:—

"तिस्रो द्यावः सवितुर्द्वा उपस्थां एका यमस्य भुवने विराषाट्। आणिं न रथ्यममृताधितस्थुरिहब्रवीतुपड तश्चिकेतत्।

ऋ० सं० १-३५-६

अर्थात् द्युलोक तीन हैं, उनमें से दो सविता के उदर में और एक यम के भवन में है। (चंद्रतारादि) अमर उस पर बैठे हैं। आगे चल कर उसी ऋचा के उत्तरार्द्ध में ऋषि ने कहा है:—

"इह ब्रवीतु य उ तच्चिकेतत्"।

अर्थात्—यदि यह सब बातें कोई जानता हो तो वह यहाँ आ कर कहे।

तात्पर्य इतना ही है कि जगदुत्पत्ति का आदि कारण कहनेवाला कोई नहीं है; यही बतलाने का ऋषि का तात्पर्य था।

इतना होने पर भी इसमें सन्देह नहीं कि वैदिक काल में ऋषियों को इस बात का ज्ञान अवश्य था कि वर्त्तमान जगत् की उत्पत्ति एक साथ ही नहीं बल्कि क्रम क्रम से हुई है।

(शेष आगे।)

हिन्दी और बँगला साहित्य।

[लेखक,—श्रीयुक्त बा० प्रियनाथ बसाक बी० ए० एल० टी०।]

भाषाओं की उत्पत्ति।

कहते हैं कि जब त्रिगुणात्मक त्रिकालज्ञ भगवान् की सृष्टि करने की इच्छा हुई तब प्रथम ही आदि शक्ति ने "शब्द" उत्पन्न किया। यह शब्द 'प्रणव' था जिसमें केवल तीन मात्राएँ अथवा तीन अक्षर ही नहीं थे बल्कि त्रिगुण-मयी माया, त्रिदेव और त्रिशक्ति अर्थात् तीनों लोक की समस्त वस्तुएं वीर्य रूप में विद्यमान थीं। इसी वीर्य से क्रमशः सब वर्ण, शब्द और तीन वेद उत्पन्न हुए। प्रकृति के त्रिगुणात्मक होने के कारण सब सृष्टि भी उसी प्रकार हुई और चेतन सृष्टि के उत्तम प्राणियों में भी उन्हीं तीन गुणों के अनुसार देवता, मनुष्य और राक्षसों की उत्पत्ति हुई। भाषा की भी वही अवस्था थी। प्रकृति से उत्पन्न उसी एक ब्राह्मी भाषा से तीन भाषाएं हुईं। प्रथम देववाणी, जो कि देवताओं और विज्ञ मनुष्यों द्वारा शुद्ध रूप में रक्षित हुई; दूसरी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधारण मनुष्यों द्वारा अशुद्ध रूप में परिणत हुई और तीसरी राक्षसों द्वारा विकृत और विपरीत हो विस्तृत हुई। पहली का नाम देवभाषा अथवा वैदिक-भाषा हुआ; दूसरी का वैदिक अपभ्रंश अथवा मूल प्राकृत, और तीसरी का राक्षसी भाषा हुआ जिसकी वृद्धि इतनी अधिक हुई कि यह भारत-वर्ष की सीमा उल्लंघन कर दूर देशव्यापी हो गई। हमें केवल प्रथम दो भाषाओं से ही मतलब है।

देववाणी क्रमशः व्याकरण और साहित्य के विविध अंगों से विभूषित हो इतनी उन्नत अवस्था पर पहुँची कि आज भी संसार की प्रायः सभी भाषाएं इसके सम्मुख मस्तक अवनत किए हुए हैं। पहले यही देश-भाषा थी परंतु फिर राज-भाषा हुई और व्याकरण आदि के नियमों से इस प्रकार जकड़ गई कि विद्वानों को छोड़ अन्य मनुष्य इसे समझ भी नहीं सकते थे। अतएव एक दूसरी-देश-व्यापी भाषा की आवश्यकता हुई। यह भाषा वैदिक अप-भ्रंश अथवा प्राकृत भाषा हुई जो कि विज्ञों द्वारा क्रमशः परिमार्जित हो आर्यभाषा के नाम से प्रचलित हुई। इसी समय से दूसरी भाषा का भी सूत्रपात हुआ। इस भाषा की समयान्तर में अनेक शाखाएं हुईं और अंत में देश-भाषा हो यह महाराष्ट्री भाषा के नाम से प्रसिद्ध हुई। फिर राज-भाषा और राज-भाषा से धर्म-भाषा होने लगी। अंत में मागधी और पाली रूप में परिणत हो यह अन्य भाषाओं की जननी होने लग गई।

कालानुसार इस त्रिपथगा-देववाणी की मृत्यु-लोक की धारा वैदिक अपभ्रंश या प्राकृत गंगोत्री से आर्ष प्राकृत नाम धारण कर प्रवाहित हुई और क्रमशः अनेक नाम और रूप धरती हुई सहस्रों स्रोतों से युक्त होकर भारतवर्ष के अनेक स्थानों से होती हुई सागर में जा मिली। इसी से शौरसेनी, मागधी, आवन्ती आदि भाषाएं उत्पन्न हुईं जिनकी सन्तति आज तक भारतवर्ष में विद्यमान हैं। इन संतान-भाषाओं में पंजाबी, गुजराती, मराठी, बँगला और हिन्दी प्रधान हैं।

रूप और प्रभेद।

अनेक मनुष्यों की धारणा है कि मध्य भारत से ही सब भाषाओं का विस्तार हुआ है और हिन्दी भाषा ही अन्य भाषाओं का स्तंभ है क्योंकि यह भी प्राकृत भाषा से ही अवतीर्ण है। प्राकृत, बँगला और हिन्दी शब्दों की तुलना करने से यह स्पष्ट रूप से निश्चित हो जायगा।

प्राकृत।	बँगला।	हिन्दी।
पथ्थर।	पाथर।	पत्थर।
लोन।	नून।	नोन।
वक्कल।	बाकल।	बक्कल।
लट्ठी।	लाठी।	लाठी।
हथ्थी।	हाथी।	हाथी।

दूसरी बात यह है कि अन्य भाषा-भाषियों की अपेक्षा हिन्दी भाषाभाषियों की संख्या बहुत अधिक है। हिन्दी ही खानि है, इसी से लोग मणियाँ निकाल कर अन्य प्रान्तों में ले गए हैं और उन्हें माँज कर उन्होंने और भी उज्ज्वल कर रखा है। प्राकृत, मागधी आदि से बहिर्गत हो कर बँगला भाषा अन्य प्रान्तीय भाषाओं से अधिक अग्रसर हो गई, यह उसके कवियों और ग्रंथकारों आदि की अच्छी मानसिक शक्ति का उदाहरण है। यह बात उनके अध्यवसाय के कारण ही है, भाषा के आदि रूप के कारण नहीं। जिस प्रकार हिन्दी भाषा संस्कृत के शब्दों से भरी होने के कारण अधिक परिपुष्ट है उसी प्रकार अन्य भाषाएं भी हैं। किन्तु हिन्दीवाले प्रान्तों में मुगल सम्राटों का प्रभाव अधिक और बहुत काल तक था, इसी कारण हिन्दी भाषा में उर्दू शब्दों की अधिकता है; पर बँगला में वैसा नहीं है। इसके अतिरिक्त इन दोनों भाषाओं में उच्चारण-प्रभेद भी है। इसी से हिन्दी सब की समझ में आ जाती है; नहीं तो दोनों भाषाओं के शब्दों में हिन्दी शब्दों का उच्चारण बिलकुल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीमा और ठीक होता है इसलिये बहुत कम भेद है। जैसे बल, बन, मन, सागर, वसन्त, वार्ता, कुटीर, इत्यादि। इसी प्रकार अक्षरों में भी बहुत कम अंतर है जैसे इ, ई, उ ऊ, क क ग ग, घ घ, ज ज, ड ड, ण ण, ल न, स, श इत्यादि। 'ऋ' और 'ऌ' बँगला भाषा में नहीं है। बँगला में 'ण' और 'न' और 'श' 'ष' तथा 'स' एक से ही उच्चरित होते हैं किन्तु हिन्दी में इनके उच्चारण भिन्न भिन्न हैं। व्याकरण संबंध से यही कह सकते हैं कि संस्कृत की तरह बँगला भाषा में क्रिया का लिंग-परिवर्त्तन नहीं है परंतु हिन्दी में है। जैसे 'से जाइते छे' पुरुष और स्त्री दोनों के लिये कह सकते हैं परंतु हिन्दी में क्रिया का भी पुलिंग या स्त्रीलिंग रूप होता है जैसे वह गया, वह गई आदि। पर क्रिया का लिंग-विचार बँगला में नहीं है इसी कारण अनेक बंगाली महाशय हिन्दी में 'हम बाजार पुस्तक लाने गई थीं' या "बेटी तुमसे वहाँ जाने कहा था, तुम नहीं गया ?" आदि कहते हैं। इन विभिन्नताओं को छोड़ अन्य जो भेद पाए जाते जाते हैं वे ठीक उसी प्रकार के हैं जिस प्रकार कि बंगाल देश में पूर्व और पश्चिमी बंगाल की भाषाओं अथवा हिन्दी में ब्रजभाषा, मिश्रित अथवा खड़ी बोली में पाए जाते हैं। यह भेद केवल स्थानिक ही है, भाषा की भिन्नता नहीं है। दोनों भाषाएं बँगला और हिन्दी मूलतः एक ही हैं, उनके रूप मात्र में अंतर हो गया है। अतएव मुक्तकंठ से स्वीकार कर सकते हैं कि भाषा एक ही है परंतु उसका रूप पृथक् पृथक् है। जब वह प्राकृत हुई उस समय उसमें केवल अंग का ही पार्थक्य हुआ किन्तु मूल एक ही था; उसी प्रकार हिन्दी, बँगला, गुजराती, मूल में एक ही हैं केवल उनके रूप और उच्चारण में भेद है।

कथित और लिखित भाषा में अर्थात् बोली जानेवाली और साहित्य की भाषा में सदा अंतर रहता है; परंतु उस अंतर की भी सीमा है। उस सीमा का अतिक्रम करते ही लिखित भाषा मृत हो जाती है और उसके स्थान में फिर कथित भाषा विशुद्ध और परिमार्जित होकर लिखित भाषा में परिणत हो जाती है। लिखित भाषा उत्तरोत्तर उन्नत हो शिक्षित समाज में सीमाबद्ध हो जाती है। क्रमशः शब्दों की श्रीवृद्धि करने के प्रयास के कारण लिखित भाषा को जन साधारण नहीं समझ सकते और भाषा विप्लव की आवश्यकता होती है। यही संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी, बँगला आदि की उत्पत्ति और विभिन्नता का कारण है।

साहित्य।

इन दोनों भाषाओं की उत्पत्ति, वर्णों और शब्दों आदि की एकता और विभिन्नताओं का विचार कर अब साहित्य की ओर ध्यान दिया जाता है। साहित्य क्या है और इसमें कौन कौन काव्य सम्मिलित हैं यह जानना अत्यंत आवश्यक है। साहित्य शब्द 'सहित' शब्द से बना है; सहित के भाव को ही साहित्य कहते हैं। अतएव साहित्य का अर्थ संग, साहाय्य, अथवा मिलन हैं। सब विषयों के एकीकरण का नाम ही साहित्य है। अपने मन के भावों को लिखित भाषा में स्थायी रूप देकर उन्हें जीवित रखने, उनकी पुष्टि करने और उनका संग्रह करने का नाम ही साहित्य है। ऐसा अर्थ लेने से साहित्य और सभ्यता में कोई अंतर नहीं मालूम होता। जहाँ सभ्यता रहती है वहाँ उसका प्रतिबिम्ब स्वरूप साहित्य-भंडार भी रहता है। जहाँ जितनी अधिक सभ्यता होगी वहाँ उतना अधिक साहित्य भी होगा। साहित्य क्या है इसको हिन्दी के प्रधान कवि स्वर्गीय राय देवीप्रसादजी पूर्ण ने अच्छी तरह दर्शाया है। उन्होंने कहा है:—

'जगत मध्य आकाश सम छाया है साहित्य।
कार्य क्षेत्र में ब्रह्म की माया है साहित्य॥
विद्या के आदित्य की छाया है साहित्य।
कार्यतत्व हैं प्राण तो काया है साहित्य॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंधकार का अपहरण करता है आदित्य।
सत कर्तव्य सुपंथ का सूरज है साहित्य॥
है सुख और विपत्ति में जन-हितकर साहित्य।
सचिव और सच्चा सखा है गुरुवर साहित्य॥
अवनति रूपी ग्रीष्म में पाला है साहित्य।
खेती को उद्योग की घनमाला साहित्य॥
निगमागम साहित्य हैं है पुराण साहित्य।
जेन्दावस्ता बाइबिल है कुरान साहित्य॥
शिल्प नीति विज्ञान शुभ बिविध काव्य इतिहास।
आदि ग्रंथ समुदाय सब है साहित्य विकास॥

अधः पतित जाति और देश को उन्नति के उच्चासन पर बैठने के लिये उत्साहदाता, उत्तेजक, और धीरतापूर्वक कार्य करानेवाला साहित्य ही है। सब प्रकार के संस्कार और संशोधन साहित्य पर ही अवलम्बित हैं। अपने कुटुम्ब, समाज और देश के प्रति भक्ति या श्रद्धा उत्पादन करने का कार्य साहित्य का ही है। धर्म-मार्ग में चलाना, अधर्म से विरत करना, जीवन का कर्तव्य समझाना, संसार का हित-साधन कराना, धन, मान, बल आदि के अर्जन का द्वार खोलना यहाँ तक कि मनुष्य का जीवन सफल कराना भी साहित्य द्वारा ही संभव है।

साहित्य-विभाग।

साहित्य के मुख्य दो विभाग हैं—गद्य और पद्य। सब स्थानों में देखा जाता है कि साहित्य की उत्पत्ति पद्य से ही हुई है। अतएव हम भी पद्य से ही आरंभ करेंगे। गद्य और पद्य के अनेक अंग प्रत्यंग हैं। यथा,—

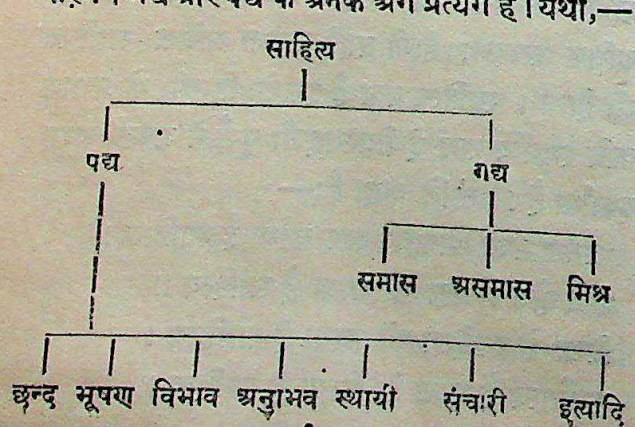

हिन्दी में पद्य काव्य का पिंगल शास्त्र सम्प्रति जगन्नाथप्रसादजी भानु कवि ने रचा है। इसमें अनेक प्रकार के छन्द हैं। इनमें कई प्रधान हैं। इनके का नाम उदाहरण सहित्य दिया जाता है।

(१) चौपाई—इसमें १६ या १७ मात्राएं रहती हैं।
यथा—राम रमापति तुम मम देव।
नहिं प्रभु होत तुम्हारी सेव॥
मुनि आगमन सुना जब राजा।
मिलन गयउ ले विप्र समाजा॥

(२) रोला—इसमें २४ मात्राएं होती हैं। यथा—
रामकृष्ण गोविंद भजे सुख होत घनेरो।
इहाँ प्रमोद लहत्त, अंत वैकुंठ बसेरो॥
मृग तृष्णा सो विषै, तुच्छ अति बंधन जी के।
तातें छाँड़ि कुसंग, गहो शरणों हरि हीके॥

(३) सार—(२८ मात्राएं)
उर अभिराम राम अरु लछमन मधुर मनोहर जोरी।
बारों सकल विश्व की शोभा, जो कछु कहों सो थोरी॥
पीत चौतनी धरे शीश ये, पीतम्बर मन मानें।
पीत यज्ञ उपवीत विराजत, मनो वसन्ती बानें॥

(४) मरहटा—(२९ मात्राएं)
इक दिन रघुनायक, सीय सहायक,
रतिनायक अनुहारी।
सुभ गोदावरि तट, बिमल पंचवट,
बैठे हुते मुरारी॥

(५) चवपैया—(३० मात्राएं)
भये प्रकट कृपाला, दीनदयाला,
कौशल्या-हितकारी।
हर्षित महतारी, मुनिमन-हारी,
अद्भुत रूप निहारी॥
लोचन अभिरामा, तनु घनश्यामा,
निज आयुध भुजचारी।
भूषन बनमाला, नयन विशाला,
शोभा सिंधु खरारी॥

(६) वीर—(३१ मात्राएं)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुमिरि भवानी जगदम्बा का
श्री शारद के चरन नवाय ।
आदि सरस्वति तुम का ध्यावों
माता कंठ बिराजो आय ।
जोति बखानों जगदम्बा के
जिनकी कला बरनि न जाय ।
शरद चंद्र सम आनन राजे
अति छबि अंग अंग रहे धाय ।

(७) सवैया-(३२ मात्राएं)

आनन में मुसकानि सुहावनि
बंकुरता अंखियानि छई है ।
बैन सुने मुकले उर जात
जकी बिथकी गति ठौनि ठई है ।
दास प्रभा उछले सब अंग
सुरंग सुवासता फैलि गई है ।
चंदमुखी तनु पाय नवीन
भई तरुनाई अनंदमई है ।

(८) दोहा-(२४ मात्राएं)

श्री रघुवर राजिव-नयन, रमा-रमण भगवान ।
धनुष बाण धारण किए, बसहु सु मम उर आन ॥

(९) सोरठा-(२४ मात्राएं)

रमा रमण भगवान, श्री रघुवर राजिव नयन ।
बसहु सु मम उर आन, धनुष बाण धारण किए ॥

(१०) कुंडलिया-

मेरी भव-बाधा हरो, राधा नागरि सोय ।
जातन की झांई परे, श्याम हरित दुति होय ॥
श्याम हरित दुति होय, कटें सब कलुष कलेशा ।
मिटे चित्त को भरम, रहे नहिं कछुक अंदेशा ॥
कह पठान सुलतान, काटु यम दुख की बेरी ।
राधा बाधा हरहु, हहा विन्ती सुनि मेरी ॥

(११) छप्पय-

अजय विजय बल कर्ण वीर बेताल विहंकर ।
मर्कट हरिहर ब्रह्म इन्द्र चंदन जु सुभंकर ।
श्वान सिंह शार्दूल कच्छ कोकिल खर कुंजर ।
मदन मत्स्य ताटंक शेष सारंग पयोधर ।
शुभ कमल कंद बारण शलभ,
भवन अजंगम सर सरस ।
गणि समर सुसारस मेरु कहि,
मकर अली सिद्धिहि सरस ॥

(१२) भुजंगप्रयात—

अहो देव शंभो दया देख तेरी,
रहेगी सदा ये ऋणी आत्म मेरी ।
कहेगी सदा ही तुम्हारी कहानी;
गहेगी तुम्हारी शरण शूलपानी ।
चहेगी चरण चित्त करने सुसेवा,
बहेगी हिए से सरित प्रीति देवा ।
अकूपार तुम्हों उसी ओर धावे,
महादेव हर हर शरण दास पावे ।

(१३) चकोर—

भासत ग्वाल सखी गन में,
हरि राजत तारन में जिमि चन्द ।
नित्य नयो रचि रास मुदा,
ब्रज में हरि खेलत आनंद कंद ।
या छवि काज भए ब्रजवासि,
चकोर पुनीत लखें नंद नंद ।
धन्य वही नर नारि सराहत,
या छवि काटत जो भव फंद ।

(१४) मत्तगयंद—

भासत गंग न तो सम आन,
कहूँ जग में मम पाप हरैया ।
बैठि रहे मनु देव सबै तजि,
तो पर तारन भारन मैया ।
या कलि में इक तू ही सदा,
जनकी भव पार लगावत नैया ।
है तु इके हरि अम्ब खरी अथ,
मत्त गयंदहि नास करैया । इत्यादि ।

बँगला भाषा में छन्द प्रकरण इस प्रकार है:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१) पयार—

(अ) मेनकार हईल ज्ञान देवीर दयाय,
मनोहर वर हरे देखिबारे पाय।
जटा जूट मुकुट देखिला फनि मनी,
बाघ छाल दिव्य वस्त्र दिव्य पैता फनी।

(ब) अन्य भूप, लोलुप से देश अधिकारे,
बिपुल बिक्रमें जदि करे आक्रमण
हेन का पुरुष नहीं अव्याभे ताबाधे।
प्रस्तुत से प्रिय भूमि करिते अर्पण॥

(२) त्रिपाठी

(क) कैलास भूधर, अति मनोहर,
कोटि शशी परकाश।
गंधर्व किन्नर, यक्ष विद्याधर,
अपसरगनेर वास॥

(ख) ओरे बाछा धूमकेतु, माबापेरय हेतू
केटे फेलो चोरे, छाड़ि देह मोरे,
धर्मेर बांधहु सेतू।

(ग) जिनि कोटि शशिधर, किवा मुख मनोहर,
मनिमय मुकुट माघाय।
ललित कवरि भार, ताहे मालतीर हार,
भ्रमर भ्रमरि कल गाय॥

(घ) हाय हाय कि कब बिधीरे
सम्पद घटाय धीरे धीरे।
शिरोमनि मस्तकेर, मनिहार हृदयेर
दिये लये सुखेर निधीरे॥

(३) ललित—

नयन अमृत नदी, सर्वदा चंचल यदी,
निजपति बिना कभू, अन्य जने चाय ना।
हास्य अमृतेर सिंधू, भुलाय बिद्युत बिन्दू
कदाच अधर बिना, अन्य दिके धायना॥

(४) मिश्रछन्द—

(क) यूथ सह छिले तूमी स्वाधीन जखन।
जथा इच्छा सेई स्थाने करिते चरन॥
नामिया हदेर जले, पद्मबने पद दले।
कोमल मृणाल छिड़े करिते भक्षण॥
से सुख तोमार करिगिया छे एखन।

(ख) हे बसुधे जगत जननी!
दयावती सती तुमी बिदित भुवने!
जबे दशानन अरि
विसर्जिला हुताशनि जानकी सुन्दरी
तूमि गो राखिलो बरानने!
तूमी धनि द्विधा होये वैदेहीरे कोले लये
जुड़ाले काहार ज्वाला वासुकि रमणी।

(ग) बादलेर वारिधारा प्राय
पड़े अस्त्र बादलेर गाय
बर्म चर्म ठेके बान, हये शत शत खान,
अविरत पड़िछे धराय।
हेनकाले निशा आगमन,
अस्ताचले चलित तपन।
तिमिरे पूरित विश्व, किछूई ना हय दृश्य,
अस्थिर होइल सेनागन॥

(घ) अमित्राक्षर—

कनक आसने बसे दशानन बली—
हेमकूट-हैमशिरे श्रृंगवर यथा
तेजःपुंज। शत शत पात्र मित्र आदि
सभासद, नतभावे बसे चारि दिके।
भूतले अतुल सभा-स्फटिक गठित;
ताहे शोभे रत्न राजि, मानस सरसे
सरसे कमल फूल विकासित जथा। इत्यादि

समय-निरूपण।

इन दोनों भाषाओं में काव्यरचना प्रायः एक ही समय से आरंभ हुई। आरंभ काल से आज तक इनका जिस प्रकार विकास हुआ उसका समय-विभाग इस प्रकार किया जा सकता है—(१) पूर्व प्रारम्भिक (२) उत्तर प्रारंभिक (३) पूर्व माध्यमिक (४) प्रौढ़ माध्यमिक (५) पूर्वालंकृत (६) उत्तरालंकृत (७) परिवर्तन और (८) आधुनिक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्वप्रारंभिक। ६५०—१२८६ ईसवी।

ब्रह्मभट्ट कवि लोग ही हिन्दी साहित्य के जन्मदाता माने जाते हैं। ये लोग अपने अपने राजाओं का गुण गान कविता में करते थे। हिन्दी भाषा में काव्यरचना प्रथम ७७० संबत में आरंभ हुई जिस समय कि पुष्य कवि ने संस्कृत से अलंकार विषयक ग्रंथ का अनुवाद किया। इसके पश्चात् ८९० संवत के लगभग किसी भाट कवि ने अपने राजा की प्रशंसा में 'खुमानसिंह रासो' रचा। फिर १२२५—४९ के मध्य चन्द्रवरदाई ने २५०० पृष्ठों का एक बृहत् ग्रंथ रचा जो 'पृथ्वीराज रासो' के नाम से प्रसिद्ध है। पृथ्वीराज रासो के मंगलाचरण की भाषा संस्कृत के अनुकरण पर है यथा—'प्रथमय भुजंगी सुधारी ग्रहन्नम। जिने नाम एकम अनेकम कहन्नम। द्वि ती लभ्यभ्यम देवतम जीवितेशम। जिने विश्व राखो बली यंत्र शेषम।

और अन्तर्गत भाषा इस प्रकार है—

'कहं लगि लघुता बरनवों, कविनदास कविचन्द।
उन कहिते जो उब्बरी, सो व कहों करि छन्द॥
सरस काव्य रचना रचों, खल जन सुनि न हसंत।
जैसे सिंधुर देखि मग, श्वान सुभाव भुसंत॥

और भी—

हंस हेत गति भंग मोर कटु बद्द उचारे,
रोवत कोंच कुरंग सुकपि छंडत आहारे।
सुआ वमन करंत निकुल कुर्कुट मित्राई,
ऐसे चरित करंत जानि आगनम दिनाई॥
क्षीर परस्पर हित रहित, कहत चन्द पारष्ष लहि।
हिंदुआज आनि रष्षत इनहिं भूपति भोजन साल महि॥

कहा जाता है कि इसी समय 'जगनिक' कवि द्वारा 'आल्हा' की रचना हुई। बंगला भाषा में उस समय 'जयदेव' के 'गीतगोविंद' के अनुकरण पर कई सौ बंगला पद रचे गए। प्राचीन साहित्य में गणेश, रामचन्द्र आदि से आरंभ कर मनसा देवी और दक्षिणराय तक के स्तोत्र अनेक ग्रंथों में पाए जाते हैं। किन्तु जिनकी मधुर कहानियों में एक अपूर्व आदर्श मिलता है, जिनका आत्मसंयम यथार्थ में एक बृहत् काव्य का विषय है उन बुद्धदेव की एक साधारण वंदना भी प्राचीन बंग व हिन्दी के साहित्य में नहीं है। माणिक्यचन्द के गान, गोविन्दचन्द्र के गान, डाक व खना के वचन प्रभृति इसी समय के हैं। हिन्दी भाषा में भी राजाओं की प्रशंसा में वंदी-वचन आदि मिलते हैं।

उत्तर प्रारंभिक और पूर्व माध्यमिक अवस्था।
(१२८६—१५०३ ई०।)

बंगला भाषा में यह गौड़ीय युग और साहित्य में चैतन्य-पूर्व-साहित्य कहलाता है। जिस प्रकार पहिले बौद्ध राजाओं की स्तुति ही वंगीय काव्य का विषय थी उसी प्रकार गौड़ेश्वरों का महिमा-कीर्तन इस समय का विषय हुआ। गौड़ेश्वर की आज्ञा के अनुसार ही कीर्तिवास रामायण की रचना में प्रवृत्त हुए। अतएव वे गर्व के साथ कहते हैं,—"पंचगौड़ चापिया जे गौड़ेश्वरा राजा। गौड़ेश्वर पूजा केले गुनेर हय पूजा॥" 'श्रीकृष्णविजय' के लेखक भी गौड़ेश्वर की दया से 'गुनराजखां' की उपाधि से भूषित हुए थे। गौड़ेश्वर नशरतखां ने महाभारत का उल्था कराया था। इस समय विद्यापति, विजयगुप्त, माधवाचार्य, मुकुन्दराम, भारतचन्द्र आदि कवि हुए। कीर्तिवास की कविता इस प्रकार है।

पात्र मित्र सबे बले सुनो द्विजराजे।
जाहा इच्छा हय ताहा चाहो महाराजे॥
कार किछु नाहि लई करि परिहार।
जथा जाई तथाय गौरव मात्रसार॥
जतो जतो महा पंडित आछे ये संसारे।
आमार कविता केह निन्दिते ना पारे॥

रामायण से—

(१) रामेर जनम सुनि, नाचेन सकल मुनि,
दंडकमंडलु करि हाथे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वर्गे नाचे देवगन मर्त्ते नाचे मर्त्यजन,
हरिषे नाचिछे दशरथे ॥
श्रीदेव जानिवसंगे , नाचिछेन ब्रह्मा रंगे,
शची संगे नाचे शचीपति ।
स्थावर जंगम आर , सबे नाचे चमत्कार,
उल्लाषित नाचे वसुमति ॥

(२) गोदावरी तीरे आछे कमल कानन,
तथाकि कमलमुखी करेन भ्रमन ॥
पद्मालया पद्ममुखी सीतारे पाइया;
राखिलेन बूझि पद्म बने लुकाइया ।
चिर दिन पिपासित करिया प्रयास,
चन्द्रकला भ्रमें राहु करिल कि ग्रास ॥
राजच्यूता हयेछि यद्यपि आमि बटे,
राजलक्ष्मी आमार छिलेन सन्निकटे ।
आमार से राजलक्ष्मी हारालाम बने,
कैकयीर मनोभीष्ट सिद्ध ऐतो दिने ॥

यद्यपि हिन्दी भाषा में रामायण के रचयिता तुलसीदासजी का इस समय जन्म नहीं हुआ था, तौ भी दोनों भाषाओं के रामायणों की तुलना यहाँ की जा सकती है । रामजन्म के समय तुलसीदासजी कहते हैं,—

मंदिर मँह सब राजहिं रानी ।
शोभा शील तेज की खानी ॥
सुख युत कछुक काल चलि गयऊ ।
जेहि प्रभु प्रकट सो अवसर भयऊ ॥
जोग लग्न ग्रह बार तिथि , सकल भए अनुकूल ।
चर अरु अचर हर्ष युत , राम जन्म सुख मूल ॥
नवमीं तिथि मधु मास पुनीता ।
शुक्ल पक्ष अभिजित हरि प्रीता ॥
मध्य दिवस अति शीत न घामा ।
पावनकाल लोक विश्रामा ॥
शीतल मंद सुरभि बह बाऊ ।
हर्षित सुर संतन मन चाऊ ॥
बन कुसुमित गिरि गण मनियारा ।
स्रवहिं सकल सरितामृत धारा ॥
सो अवसर विरंचि जब जाना ।
चले सकल सुर साजि बिमाना ॥
गगन बिमल संकुल सुर यूथा ।
गावहिं गुण गंधर्व बरूथा ॥
वर्षहिं सुमन सुअंजलि साजी ।
गहगह गगन दुंदुभी बाजी ॥
अस्तुति करहिं नाग मुनि देवा ।
बहु बिधि लावहिं निज निज सेवा ॥
सुर समूह बिन्ती करि , पहुँचे निज निज धाम ।
जगनिवास प्रभु परगटे , अखिल लोक विश्राम ॥
भये प्रकट कृपाला, दीनदयाला,
कौशल्या हितकारी ।
हर्षित महतारी, मुनिमनहारी,
अद्भुत रूप निहारी ।
लोचन अभिरामा तनु घनश्यामा,
निज आयुध भुजचारी ।
भूषण बनमाला, नयनविशाला,
शोभासिंधु खरारी ।
इत्यादि

सीता के विरह में रामचन्द्र बहुत विलाप उपरान्त कहते हैं—

हा गुण-खानि जानकी सीता ।
रूप शील व्रत नेम पुनीता ॥
सुनु जानकी तोहि बिनु आजू ।
हर्ष सकल पाय जनु राजू ॥
किमि सहि जात अनख तोहि पाहीं ।
बेगि प्रिया प्रगटसि कस नाहीं ॥

वर्णन-शक्ति में तुलसीदास कीर्तिवास से कर हैं । उन्होंने भिन्न भिन्न प्रकार के छन्दों का उ योग कर कविता को अत्यंत मनोमुग्धकर बना डा है ! सत्य ही इस प्रकार का ग्रंथ जिसमें संसार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सब रस, भाव, उपदेश, स्तुति, मनुष्य की भिन्न भिन्न अवस्थाएं और उनके कर्तव्य आदि विशद भाव से वर्णित हों, संसार के किसी साहित्य में अभी तक देखने में नहीं आया और न आगे आने की कोई संभावना ही है। संक्षेप में, रामायण सब विषयों में आदर्श ही है।

इसके उपरान्त बँगला में संजय, कवीन्द्र, परमेश्वर, और श्रीकरनन्दी ने महाभारत का अनुवाद किया। इनकी भाषा इस प्रकार है:—

संजय लिखित—

फलित पुष्पित बन बसन्त समय।
सदा ये सुगंधी वायु मन्द मन्द वय।
विचित्र जे अलंकार विचित्र भूषने,
कन्या सब नाना रंग करे सेई बने।
केहं मिष्ठ फल खाय केह मधू पिये,
शर्मिष्ठा से देवयानी चरण सेवये।

कवीन्द्र रचित—

एक दिन देवयानी, हृदये हरष गुनि
शर्मिष्ठा लईया राजसुता।
ऋतुराज मधुमास, क्रीडाखंडे अभिलाष
चलि आइलो पुष्प बन यथा। इत्यादि।

परमेश्वर कवि की रचना—

तार पाछे द्रौपदी सैरंध्री रूप धरि,
अधिक मलिन वस्त्रे गेला एकेश्वरी।
दूर हइते जाय जेनों वासित हरिणि
नगरेर नारी सब पुछन्त काहिनी।

श्रीकरनन्दी का छन्द-प्रकरण भी इसी प्रकार है। संजय रचित महाकाव्य के स्कंधों में अनेक कवियों ने शाखा काव्य लिखा है। शकुन्तला-उपाख्यान को राजेन्द्रदास कवि ने उत्कृष्ट खंड-काव्य में परिणत कर संजय-काव्य के अन्तर्गत कर दिया है। गोपीनाथ कवि ने द्रोणपर्व संलग्न किया है। ऐसे ही अन्य कवियों ने भी किया है।

हिन्दी में उस समय महाभारत नहीं लिखा गया था। इस भाषा में महाभारत पहलेपहल गद्य भाषा में लिखा गया; वह भी बहुत समय पीछे।

इन दोनों ग्रंथों की रचना के पीछे बंगला में 'मन्सा' 'मंगलचंडी', 'षष्ठी' 'सत्यनारायण की कथा' इत्यादि धार्म्मिक पुस्तकें लिखी गईं। ये सब विजयगुप्त, केतकादास, क्षेमानन्द, जनार्दन, आदि कवियों द्वारा लिखी गई थीं।

इसके पश्चात् बंगला भाषा में 'पदावली' साहित्य का आरंभ हुआ जिसके चंडीदास, रामी, और विद्यापति ही प्रधान कवि थे। इन पदों का बँगला भाषा में ठीक उसी प्रकार आदर होता है जिस प्रकार हिन्दी साहित्य में सूरदास, तुलसीदास, कबीर और मीरा के पदों का। पदावली साहित्य प्रेम और भक्ति-रस से पूर्ण है।

चंडीदास का पद—

बंधु, तूमि हे आमार प्राण

देह मन आदि तोहांरे सोंपेसिछि, कुल, शील, अभिमान। अखिलेर नाथ तूमि हे कालिया, योगीर आराध्य धन। गोप गोपालिनि हम अति हीना, ना जानी भजन पूजन।

सूरदास आदि और चंडीदास आदि के पदों में घनिष्ठ संबंध विद्यमान है। उनके भाव और रचना एक ही प्रकार की हैं। यथा कबीर—

जग में राम भजा सो जीता।
कब शबरी काशी को धाई कब पढ़ि आई गीता।
झूठे फल शबरी के खाए तनिक लाज नहिं कीता।

सूरदास—

अँखिया हरि दर्शन की प्यासी।
बिन देखे वह सुरति साँवरी, मन में रहति उदासी।

मीरा—

बसो मेरे नैनन में नंदलाल।
मोहनि मूरति, सांवरी सूरति, नैना बने रसाल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोर मुकुट मकराकृत कुंडल, अरुण तिलक दिए भाल ।
अधर सुधारस मुरली राजत, उर बैजन्ती माल ।

इनके उपरान्त बंगला में ऐतिहासिक काव्य लिखा गया। यह दो भागों में विभक्त है । 'श्रीधर्म-मंगल' गौड काव्य और राजमाला है। इसको छोड़ बहुत सी छोटी छोटी पुस्तकें भी लिखी गईं ।

इस समय बंगला भाषा में कई भेद दृष्टिगोचर होते हैं। इसमें बहुत से मैथिली भाषा के शब्द जैसे,-(येतके, तेतके, पाकना, शोयास्ति, भैलो, बड़ा, पालटाय, आदि) आ गए हैं । हिन्दी से भी पागड़ि, लम्बोदर, नाभि, घाघरा, आदि आ मिले हैं और संस्कृत से भी अनेक शब्द लिए गए हैं।

हिन्दीसाहित्य में इस समय गोरखनाथ कवि द्वारा प्रथम हिन्दी गद्य काव्य लिखा गया और कबीरदास भी इसी समय में हुए थे।

(शेष आगे।)

—:०:—

जातीयता का विकास ।

[ले०—बाबू शारदाप्रसाद जी एम० ए० वकील हाईकोर्ट]

(पृष्ठ २२१ से आगे)

इसके पूर्व के लेखों में हमने बतलाया है कि जातीयता का ज्ञान मनुष्यों में किस प्रकार उत्पन्न होता है। मनुष्यों में यह एक प्राकृतिक इच्छा पाई जाती है कि सब लोग एकत्र हो कर और मिल जुल कर रहें। इसी इच्छा के प्रभाव से समाजों की स्थिति होती है और इसी इच्छा के कारण जितने समाज बनते हैं वे क्रम से वृद्धि को पहुँचते हैं। संसार के भिन्न भिन्न भागों में जो समाज पाए जाते हैं उनके पिछले इतिहास को देखने से इस सिद्धान्त की भली भाँति पुष्टि होती है; इस इच्छा के ठीक रीति से अपना पूरा फल दिखला[illegible] के लिये उसमें बाधा डालनेवाले कारण न हो[illegible] चाहिए । ऐसी स्वाभाविक इच्छा होते हुए [illegible] जिन कारणों से मनुष्यों में फूट उत्पन्न हो जा[illegible] है और समाज टूट जाते हैं उनको पिछले इति[illegible] हास को देख कर वैज्ञानिकों ने निश्चित [illegible] लिया है। प्रायः समाज में ऊपरी कारणों [illegible] जितना विघ्न नहीं पड़ता उतना आन्तरिक कार[illegible] से ही पड़ जाता है। इन आन्तरिक कारणों का कु[illegible] ऐसा हानिकारक प्रभाव पड़ता है कि मनुष्य की य[illegible] एकत्र रहने की इच्छा बिलकुल जाती रहती है। ए[illegible] देखा गया है कि जब तक किसी प्रकार का बुद्धि [illegible] विचार का सम्बन्ध इस इच्छा से नहीं होता, तब त[illegible] इस इच्छा को भली भाँति दृढ़ता प्राप्त नहीं होती [illegible] इससे यह विदित होता है कि जातीयता और सभ्य[illegible] का परस्पर बड़ा सम्बन्ध है। सभ्यता के लिये साहि[illegible] की उन्नति अत्यन्त आवश्यक है। जिस देश में साहि[illegible] की उन्नति भली भाँति नहीं होती, वहाँ के इतिह[illegible] से विदित होता है कि जातीयता की जड़ वहाँ [illegible] पूर्ण प्रकार से नहीं जमी। हमने इसके पूर्व के लेख[illegible] इंगलैंड के इतिहास को उदाहरण की रीति से ले[illegible] दिखलाया है कि प्राचीन समय में जो लोग उस दे[illegible] में बसते थे उनमें साहित्य के पूर्ण न होने के कार[illegible] जातीयता के ज्ञान की पूर्ण वृद्धि नहीं हुई थी। इं[illegible] लैंड के उन प्राचीन निवासियों को ऐंगलो सेक्स[illegible] (Anglo Saxon) कहते थे। इतिहास से ये[illegible] विदित होता है कि इन लोगों में समाज के क्रम में [illegible] नियमों का बिलकुल अभाव नहीं था। शासन के लि[illegible] राजा और राज्य के कर्मचारी उचित और नि[illegible] रीति से नियुक्त किए जाते थे। राज्य के प्रबन्ध [illegible] लिये भी ठीक ठीक उपाय होते थे और जो कर्मचा[illegible] इस हेतु नियुक्त किए जाते थे, उनके लिये नियम [illegible] उचित प्रकार से बनाए जाते थे और न्याय के लि[illegible] कचहरियाँ भी बनाई जाती थीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन कचहरियों में जो कानून बरता जाता था उससे उस देश के लोगों की सामाजिक उन्नति के विषय में पता लगता है। इस कानून को देखने से मालूम होता है कि यह ऐंगलो सेक्सन जाति बिलकुल असभ्य नहीं थी, बल्कि शासन के सिद्धान्तों से इतनी परिचित हो गई थी कि जितना होना सामाजिक उन्नति के लिये आवश्यक है। परन्तु जैसा हमने ऊपर में कहा है इस जाति ने साहित्य को उचित प्रकार से उन्नत और ठीक करने की चेष्टा नहीं की थी। इस समय उसके साहित्य का जो कुछ अवशेष है वह थोड़े से गीत ही हैं; इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं मिलता। इतिहास से विदित है कि साहित्य के इस दोष के कारण उन लोगों में जातीयता के ज्ञान का यथोचित रीति से विकाश नहीं हुआ था। अस्तु, अब हम इंगलैण्ड ही के इतिहास से अभी ऐसे उदाहरण दिखलावेंगे जिनसे यह अधिक स्पष्ट हो जायगा कि जातीयता के विकाश के क्या सिद्धान्त हैं। इसके पश्चात् तब हम अपने निज देश भारत के भी प्राचीन और वर्त्तमान इतिहास से ऐसे उदाहरण लेकर दिखलावेंगे जो इस विषय के लिये उपयोगी होंगे। अब इंगलैण्ड के इतिहास से कुछ बातें बतलाते हैं।

ईसाई मत में यद्यपि ऐसे अनेक सिद्धान्त हैं जिनसे मनुष्यों के आचरण की शुद्धि ही नहीं होती, बल्कि उनके मन के भाव भी उच्च हो जाते हैं। इस मत का एक विशेष प्रभाव प्रायः यह देखा गया है कि उसके सिद्धान्तों के ग्रहण से मनुष्यों में एक विशेष प्रकार की गम्भीरता और उदासीनता उत्पन्न हो जाती है। मनुष्य इस उदासीन भाव के कारण स्वभावतः दयालु और कुछ न कुछ उदार हो जाता है। परन्तु यदि इस मत के तत्व भली भाँति न ग्रहण किए जायँ तो इस प्रकार के भाव नहीं उत्पन्न हो सकते। इंगलैण्ड में रहनेवाली ऐंगलो सेक्सन जाति पर यूरोप के अन्य देशों के ईसाई मत के शिक्षकों का पूर्ण प्रभाव नहीं पड़ा। कारण यह था कि वे शिक्षक स्वयं ईसाई मत के सिद्धान्तों का भली भाँति पालन नहीं करते थे। न उन शिक्षकों के आचरण से विदित होता था कि उन लोगों ने इस मत के सिद्धान्तों के अनुसार अपने को ठीक कर लिया था। ऐसी दशा में यह कोई आश्चर्य्य की बात नहीं है कि ईसाई मत का कुछ भी प्रभाव सेक्सन जाति पर न पड़ा हो और वह पहले की तरह ही अशिक्षित रह गई हो। परन्तु युरोप के अन्य देशों में इन लोगों की बड़ी निन्दा होती थी। ऐसा कहा जाता था कि ये सब जङ्गली, असभ्य और अशिक्षित मनुष्य पेट भर खाने के अतिरिक्त और कुछ नहीं जानते थे और न उनसे उतनी विद्या तथा अधिक उन्नति की कुछ आशा की जा सकती थी। हाँ, उस देश में उस समय ऐसी अनेक ऐतिहासिक घटनाएँ हो गईं जिनके कारण बड़ा परिवर्त्तन हो गया। संसार में बल के कारण समाजों में बड़ा परिवर्त्तन हो जाता है; वही बात वहाँ भी हुई। फ्रान्स देश से नारमन (Norman) जाति के लोगों ने इंगलैंड पर आक्रमण करके सेक्सन जाति के लोगों को परास्त किया। वास्तव में इस प्रकार से उनका परास्त होना उनके लिये लाभदायक ही हुआ। इंगलैंड देश का इतिहास वास्तव में यहीं से आरम्भ होता है क्योंकि सेक्सन जाति पर नारमन जाति का जो प्रभाव पड़ा उसके कारण उन लोगों में जातीयता के ज्ञान की न केवल उत्पत्ति ही हुई, बल्कि भली भाँति क्रम क्रम से उसका विकाश भी हुआ। जब नारमन जाति से परास्त हो कर सेक्सन अपने देश में राजा से प्रजा बन गए तब इसका पहला परिणाम यह हुआ कि उन लोगों ने यह चेष्टा की कि वे बिलकुल नष्ट न हो जायँ। उनकी संख्या नारमन जाति के लोगों से कहीं अधिक थी। वास्तव में नारमन लोगों के वे बीस गुने थे। परन्तु उनका बल कुछ ऐसा कम था कि उनसे कुछ न बन पड़ता था। उन लोगों ने अत्यन्त उद्योग किया कि नारमन लोग जितना चाहें उतना उन्हें बध न कर सकें और उनको बिलकुल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिटा कर इङ्गलैण्ड में अधिकार न जमा सकें। इस चेष्टा का सैक्सन जाति के आचरण तथा विचारों पर बड़ा प्रभाव पड़ा। अपनी स्वतन्त्रता बचाने के लिये और अपने अधिकारों को हाथ से न जाने देने के लिये जो उद्योग किए गए उनसे न केवल सामाजिक एकता बढ़ी; बल्कि जातीयता का ज्ञान भी बहुत दृढ़ हुआ। क्योंकि अपने समाज को बचाए रखने की इच्छा से जातीयता का भाव भी आपसे आप बढ़ता गया। इसमें नारमन राजाओं और शासकों के व्यवहार से भी बड़ी सहायता मिली। उन शासकों को विवश हो कर सैक्सन जाति पर बहुत सी बातों के लिये निर्भर होना पड़ा। जैसा हमने ऊपर कहा है, नारमन जाति के लोगों की संख्या बहुत थोड़ी थी, और इसलिये सैक्सन जाति के लोगों से उनको बाहर के आक्रमण रोकने में सहायता लेनी पड़ी। सैक्सन जाति के लोगों ने इस काम में बड़ी प्रसन्नता और उत्साह से सहायता दी क्योंकि उनका तो देश ही था जिसको बचाना उनके लिये सब तरह से आवश्यक था। इस प्रकार नारमन और सैक्सन धीरे धीरे एक दूसरे के साथ मिलते गए। दोनों जातियों में एकता बढ़ी और दोनों मिल कर एक जाति ही बन गईं। सैक्सन जातिवाले देशी होने के कारण कृषिकर्म्म करते थे। परन्तु उसके साथ ही उनसे सैनिक काम भी लिया जाने लगा और इस कारण पारलीमेंट अर्थात् व्यवस्थापक महासभा में भी उन को स्थान दिया गया और वे उसके सभासद बनाए गए। इस प्रकार ५०० वर्ष में नारमन जाति की विजय के उपरान्त इङ्गलैण्ड देश में इन दोनों जातियों के मेल से समाज में जातीयता का जो विकाश हुआ, वह वास्तव में आदर्श है। जो अधिकार और उन्नति के अंकुर आरम्भ में नारमन जाति की विजय के समय दब गए थे वही ऐतिहासिक कारणों से दोनों जातियों के एक साथ मिल जाने से फिर यथा-स्थान आ गए।

सैक्सन जाति का अधिकार और बल प्रति दिन बढ़ता गया और दोनों जातियों के मेल से एक मिश्रित जाति उत्पन्न हुई जिसमें जातीयता के भाव अत्यन्त दृढ़ रूप से समा गए। सैक्सन जाति के लोग स्वतः ही से युद्ध में निपुण थे और जो नया प्रभाव उन पर पड़ा उससे उनकी वीरता में कोई अन्तर नहीं पड़ा था। नारमन जाति के उच्च श्रेणी के अमीर लोग दुर्व्यसनों में लग गए, इससे उनकी वीरता में शक्ति की बड़ी हानि हुई। परन्तु सैक्सन जाति के मेल से इस दोष से कुछ अधिक हानि नहीं होने पाई क्योंकि नारमन लोगों में जो सुस्ती आ गई थी उसकी पूर्ति सैक्सन लोगों की वीरता से हो गई। साहित्य यद्यपि नारमन की विजय के समय, और उसके कुछ दिनों बाद तक भी, बुरा प्रभाव पड़ा था परन्तु धीरे धीरे दूर होता गया। प्रायः किसी नवीन जाति के आ जाने से विजित जाति के साहित्य की हानि होती है। पर समय पाकर इसकी पूर्ति भी हो जाती है। सैक्सन जाति के लोग प्रायः वीर थे, युद्ध में चतुर थे, कृषिकर्म्म में दक्ष थे और प्रायः सभी प्रकार के काम करने में साहसी और निपुण थे। परन्तु अधिकतर शारीरिक परिश्रम करते रहने के कारण उन्हें जैसा प्रायः होता है, अपनी मानसिक शक्तियों के विकाश करने के लिये बहुत ही कम समय मिलता था और उनकी उस ओर विशेष रुचि भी नहीं होती थी। परिणाम यह हुआ कि साहित्य में उन्होंने कुछ उन्नति न की। यदि उनमें से किसी ने साहित्य सम्बन्ध में कुछ किया भी तो दो चार इधर उधर के धर्म्म सम्बन्धी साधारण भजन, अथवा सामान्य विचारों से पूर्ण छोटे छोटे निबन्ध ही लिखे। नारमन जातिवाले अन्य देश से आकर इङ्गलैण्ड में बसे थे इसलिये वहाँ के रहनेवालों के साहित्य और विचार का उन पर बड़ा प्रभाव पड़ा। नारमनों की जीत के उपरान्त ५०० वर्ष के बीच में हमें उनकी कोई चमत्कार पूर्ण रचना नहीं मिलती।

एक तो बात यह है कि वे दो तीन सौ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिनको माध्यमिक युग (Middle ages) कहते हैं अर्थात् ग्यारहवीं शताब्दी ई० से प्रायः चौदहवीं शताब्दी तक प्रायः बिलकुल ही सूखे गए और बुद्धि और विचार का कहीं जरा भी विकाश नहीं हुआ। परन्तु इसके अतिरिक्त यह भी था कि विजेता लोगों की नई सभ्यता से देश की पुरानी सभ्यता दब गई थी, बल्कि प्रायः नष्ट सी हो गई थी; और नई सभ्यता जो दूसरे देश से वहाँ आई थी, वह पहले आने के समय ही ऐसी प्रबल न थी कि साहित्य की उन्नति भली भाँति सहायक होती और उसकी वृद्धि को पराकाष्ठा तक पहुँचाती। जब धीरे धीरे यह दशा बदली और नई तथा पुरानी सभ्यता मिल कर एक हो गई तब साहित्य, बुद्धि और विचार पर पूर्ण प्रभाव पड़ा।

(शेष आगे।)

वेदों में दान-चर्चा।

[लेखक—एक ग्रामीण।]

दान की महिमा पुराणों में जगह जगह भरी पड़ी है। आज मैं कुछ मन्त्र वेदों से लेकर आप लोगों के समक्ष रखता हूँ जिनमें दान की महिमा बड़ी विचित्रता के साथ बतलाई गई है।

न वा उ देवाः क्षुधमिद्वधं ददुरुताशितमुपगच्छन्ति मृत्यवः।
उतोरयिः पृणतो नोपदस्यत्युतापृणन्मर्डितारं न विन्दते॥

ऋग्वेद १०।११७।६

अर्थात् यह सत्य है कि देवताओं ने भूख को ही मृत्यु का कारण नहीं बनाया है, क्योंकि खाते पीते खानेवाले को भी मृत्यु प्राप्त होती है। और देनेवाले का धन नहीं छीजता। हाँ न देनेवाला अपने ऊपर कृपा करनेवाला नहीं पाता।

जिसके हृदय में यह भय हो कि यदि हम अपने धन को दान में व्यय कर देंगे तो भूखों मर जायँगे, उसकी यह चिन्ता व्यर्थ है क्योंकि मरने का कारण भूख ही नहीं है। यह बात तो उस समय सोचनी चाहिए जब दान देने से कुछ कम हो जाय। यहाँ तो दान देने से धन नहीं छीजता। किन्तु न देनेवाले की बड़ी भारी हानि यह होती है कि उस पर दया करनेवाला कोई मिलता ही नहीं।

देखा गया है कि लोग कृपण का सवेरे नाम लेने में भी सकुचते हैं इसलिये कि उसका नाम ले लेंगे तो आज हमें भोजन भी नहीं मिलेगा। इसी वास्ते संकेत के लिये उसका नाम 'वे नाम' रख देते हैं।

य आघ्राय चकमानाय पित्वोऽन्नवान्त्सन्रफितायोपजग्मुषे।
स्थिरं मनः कृणुते सेवते पुरोतो चित्स मर्डितारं न विंदते॥

१०।११७—२

भावार्थ—जो अन्नवान् हो कर समीप आनेवाले, अन्न को चाहनेवाले, दुर्बल तथा दुखिया के प्रति अपना मन कठोर कर लेता है और उसके सामने अन्न का सेवन करता है वह स्वयं भी अपने ऊपर कृपा करनेवाले को नहीं पाता।

संसार में ऐसे लोग भी हैं जो भिक्षुक को झिड़क कर अपना उदर भरने में तत्पर हो जाते हैं। ऐसे लोग भी देखे गए हैं जो भोजन-काल में यदि किसी भिक्षुक की आवाज़ सुन लें तो उसको गाली देने लगते हैं और कहते हैं कि यह नालायक भोजन ही के समय आता है। होना यह चाहिए कि मनुष्य यह समझ कर प्रसन्न हो कि अच्छा हुआ कि एक भिक्षुक को देकर तब हम भोजन करेंगे। यह बात प्रायः बड़े बड़े धनियों में पाई जाती है। गरीबों का आतिथ्य प्रायः अत्यन्त प्रशंसनीय होता है। यही कारण है कि उन पर सबकी कृपा होती है। कृपण धनाढ्यों पर कृपा तो किसी की नहीं होती, हाँ उससे डरते सब हैं; इसलिये कि वह धनाढ्य है और दूसरों की हानि कर सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स इद्भोजो यो गृह्वे दात्यन्नकामाय चरते कृशाय।
अरमस्मै भवति यामहूता उतापरीषु कृणुते सखायम्॥
१०-११७-३

भाषार्थ-वह ही भोक्ता है जो अन्न की कामना करते हुए फिरनेवाले दुर्बल भिखारी को देता है। उसके पास बिना बुलाए (माँगे) पर्याप्त धन होता है। और वह परलोक में भी अपने लिये मित्र बना लेता है।

आज दान-दाताओं की सूची में नाम छपाने के लिये देनेवालों की कमी नहीं; पर फिरनेवाले दुर्बल भिखारी को देने के नाम "गाली" देनेवाले और दो चार टेढ़ी सीधी सुना देनेवाले तो बहुत मिलेंगे लेकिन उसके पेट की आग बुझानेवाले कम लोग होंगे। 'पेट होम' करनेवाले तो ज़रूर दरिद्र हो जायँगे पर पात्र को दान देनेवालों के पास दिन दिन धन बढ़ता जायगा। उसको मित्रों की भी कमी नहीं रहेगी। बात यह है कि भिखारियों को भिक्षा देते देते उसका हृदय पवित्र हो जायगा। और जिसका हृदय पवित्र है उसका संसार में कोई शत्रु नहीं हो सकता।

न स सखा यो न ददाति सख्ये स चाभुवे सचमानाय पित्वः।
अपास्मात्प्रेयान्न तदोको अस्ति पृणन्तमन्यमरणं चिदिच्छेत्॥
१०।११७ ४।

भाषार्थ—

वह मित्र नहीं है जो साथ रहनेवाले अथवा आए हुए मित्र को अन्न नहीं देता है। उससे दूर चले जाना चाहिए। वह घर नहीं है, दूसरे देनेवाले अनात्मीय को ढूँढ़ना चाहिए।

तात्पर्य्य यह है कि कृपण आत्मीय से दाता अनात्मीय अच्छा है।

पृणीयादिन्नाधमानायतव्यां द्राघीयांसमनुपश्येत पन्थाम्।
ओ हि वर्त्तन्ते रथ्येव चक्रान्यमन्यमुपतिष्ठन्त रायः॥ १०-१७-५

भाषार्थ—धनाढ्य माँगनेवाले को अवश्य दे, अत्यन्त दीर्घ मार्ग की ओर दृष्टि करे। क्योंकि धन रथ के पहियों की तरह घूमता है और कभी किसी को कभी किसी को प्राप्त होता है।

गिरधरदास ने कहा है,—

दौलत पाय न कीजिए सपने में अभिमान।
चंचल जल दिन चारि को ठाँव न रहत निदान।
ठाँव न रहत निदान जियत जग में यश लीजै।
मीठो वचन सुनाय विनय सब ही सों कीजै।
कह गिरधर कविराय अरे यह सब घट तौलत।
चंचल जल दिन चारि रहत सब ही के दौलत।

असल बात तो यह है कि याचक लोग दा[illegible] को भला बनने का अवसर देते हैं। कृपण अप[illegible] सारा धन पृथ्वी पर छोड़ जायगा और अपयश [illegible] पर लाद कर चला जायगा। और दानी धन दे [illegible] यश भी प्राप्त कर लेगा और अपना इहलोक त[illegible] परलोक भी सुधारेगा।

मोघमन्नं विन्दते अचेताः सत्यं ब्रवीमि वध इत्स त[illegible]
नार्यमणं पुष्यति नो सखायं केवलाघो भवति केवल[illegible]
१०.११७ ६

भाषार्थ—(वह) मूर्ख व्यर्थ अन्न प्राप्त क[illegible] है। मैं सच कहता हूँ वह उसका नाशक ही है। वह आर्यमा को पालता है न मित्र को। अकेला [illegible] वाला अनन्य पापी होता है।

अन्न खाने और खिलाने के लिये प्राप्त किया जा[illegible] है। वह महामूर्ख है जो यह समझ कर अन्न [illegible] रता है कि हम खूब खायँगे; औरों को देने लेने [illegible] कुछ लाभ नहीं। ऐसे आत्मपोषक को कष्ट के स[illegible] कोई साथी नहीं मिलता; वह केवल पापी होता [illegible]

अगर हम संसार में सुखी रहना चाहते हैं [illegible] लोगों को दे कर खायँ। आत्मपोषक रहने से [illegible] किसी योग्य नहीं रहेंगे।

धनियों को इस लेख पर दृष्टि देनी चाहि[illegible] भिखारियों को भी अवश्य दृष्टि दौड़ानी चाहि[illegible] उनके विषय में वेदों ने क्या कहा है। याचकों [illegible] लिए यह नजीर है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिमोक्ष सूत्र ।

[अनुवादक,—श्रीयुक्त कुँवर कन्हैया जू ।]

(गतांक से आगे ।)

संघाधिशेष ।

साधुता से पतित होने के विषय में १३ नियम ।

सार—वीर्य्यपात, लगाव, संघर्ष, शारीरिक सेवा, मध्यस्थता, घर, संघ (विहार), निर्मूल वादविवाद, भेद-उत्पादन, पक्षपात, परिवार बिगाड़ना और कटुवाद ।

हे भाइयो ! प्रति पक्ष भाषण होनेवाले सोसार-धारणा में पतित होने के जो तेरह नियम कहे गए हैं वे ये हैं—

(१) स्वप्न के अतिरिक्त, किसी प्रकार सचेत अवस्था में वीर्य्यपात करना एक ऐसा पाप है जिसके कारण साधु साधुता से पतित होता है ।

(२) कोई साधु जो बुरे विचार से किसी स्त्री के साथ शारीरिक लगाव रखता है, उसका हाथ, कंधा या चोटी के बाल पकड़ता है या आनंद अनुभव करने की लालसा से उसका कोई अंग स्पर्श करता है वह पाप करता है और साधु समाज से पतित होने का भागी होता है ।

(३) कोई साधु जो बुरे विचार से, किसी स्त्री के प्रति संभोग करने की पापेच्छा से संघर्षण करता है या किसी कुमारी का पाणिग्रहण करता है वह पाप करता है और साधु-समाज से पतित होने का भागी होता है ।

(४) कोई साधु जो किसी स्त्री से अपनी शारीरिक सेवा कराने के हेतु अनुचित विचार से उसके संमुख कहता है कि मेरे जैसे सच्चरित्र और पवित्र साधु की सेवा में अपने शरीर का व्यवहार करना सर्वोत्तम सेवा है और इस प्रकार से वह स्त्री की शारीरिक सेवा को अंगीकार करता है वह पाप करता है और साधु-समाज से पतित होने का भागी है ।

(५) कोई साधु जो किसी स्त्री का संदेशा पुरुष को पहुँचाता है या पुरुष का संदेशा स्त्री को देकर मध्यस्थता का काम करता है वह चाहे किसी वेश्या वृत्तिवाली ही स्त्री की बात क्यों न हो पर वह पाप करता है और साधु-समाज से पतित होने का भागी है ।

(६) यदि कोई साधु अपने लिये घर बनवाने के हेतु किसी कारीगर की सम्मति के बिना सामान इकट्ठा करे तो उचित नाप के विषय में सावधानी रखे । यहाँ नाप का परिमाण यह है। बुध के बामा से बारह बामा लम्बाई और सात बामा चौड़ाई होनी चाहिए और निरीक्षण के लिये किसी साधु-समाज को लाना चाहिए जो देखे कि घर बनाने के लिये स्थान समुचित है, वहाँ किसी प्रकार का भय तो नहीं है और वायु भी सरलता से आती है ! यदि कारीगर की सम्मति के बिना साधु ऐसे स्थान पर घर बनाने का मसाला जमा करता है जहाँ भय की संभावना है, वायु का संचार भी सुगमता से नहीं होता तथा उचित नाप के विरुद्ध अनुसंधान करता है और स्थान-निरीक्षण के लिये साधु-समाज को भी नहीं बुलाता तो वह पाप करता है और वह साधु-समाज से पतित होने योग्य है ।

(७) यदि कोई साधु साधुओं के लिये ही बड़ा विहार या संघ बनवाना चाहता है जिसमें कारीगर का हस्ताक्षेप या सम्मति है तो उसे भी निरीक्षण के लिये साधु-समाज को बुलाना चाहिए जो देखे कि स्थान समुचित है, वहाँ किसी प्रकार के भय की संभावना तो नहीं तथा वायु का संचार भी सुगमता से होता है। यदि कोई साधु कारीगर की सम्मति के बिना ऐसे स्थान पर साधुओं के लिये विहार बनवाता है जहाँ स्थान समुचित नहीं, भय की संभावना है तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वायु का संचार सुगमता से नहीं होता और साधु-समाज को भी निरीक्षण के लिये नहीं बुलाता तो वह पाप करता है और साधु-समाज से पतित होने का भागी है।

(८) यदि कोई साधु ईर्ष्यावश किसी अन्य साधु पर बहिष्कार का दोष आरोपित करता है जो कि सर्वथा निर्मूल है और जो यह सोच कर करता है कि मैं उसे किसी प्रकार पवित्रता के मार्ग से भ्रष्ट कर दूँ और फिर कभी पूछे जाने पर या बिना पूछे कहता है कि वह अपराध निर्मूल था और ऐसा केवल ईर्ष्यावश किया गया था तो वह पाप करता है और इसलिये वह साधु-समाज से पतित होने का भागी है।

(९) यदि कोई साधु किसी अन्य साधु पर किसी दूसरे झगड़े के कारण यह सोच कर ईर्ष्यावश झूठ मूठ बहिष्कार का अपराध आरोपित करता है कि इस प्रकार से उसे पवित्रता से भ्रष्ट कर दूँ और फिर किसी दूसरे समय पूछे जाने पर या बिना पूछे ही कहता है कि वह आरोप सर्वथा झूठ था और किसी दूसरे झगड़े के कारण ईर्ष्यावश ऐसा किया गया था और वह आपस के तुच्छ वादविवाद का प्रपंच मात्र था तो वह पाप करता है और साधुता से पतित होने का भागी है।

(१०) जो कोई साधु संगठित साधुसमाज में अनैक्य उत्पन्न करने का प्रयत्न करे या किसी ऐसी बात पर जोर दे जिससे अनैक्य उत्पन्न होना संभव हो तो उसे साधु समाज इस प्रकार संबोधन करे:—

हे भाई! जिस साधु-समाज में एकता है उसमें फूट उत्पन्न करने की चेष्टा मत करो; न किसी ऐसी बात पर जोर दो या जिद करो जिससे साधुसमाज में फूट उत्पन्न होना सम्भव हो। जिस समाज में एकता है वहाँ कोई नवीनता (नया मत) न होगी और जिनमें शान्ति है उनमें कोई झगड़ा न होगा। दूध में पानी की तरह मिल कर रहो। ऐसा करने से बुद्धदेव के उपदेशों का साधु प्रकाश करेंगे और प्रसन्नता से जीवन व्यतीत करेंगे। हे भाई! तुम साधु-समाज में अनैक्य उत्पन्न करानेवाली अपनी चेष्टा त्याग दो।" यदि वह साधु अन्य साधु जनों से इस प्रकार संबोधित होकर अपनी चेष्टा त्याग देता है तो उत्तम है; यदि नहीं तो उसे दूसरी बार और तीसरी बार सचेत किया जाय। इस प्रकार नियमित रूप से सचेत किए जाने पर भी यदि वह अपनी कुचेष्टा त्याग दे तो अच्छा है; यदि नहीं त्यागता है तो वह पाप करता है और पतित होने का भागी है।

(११) यदि एक, दो या अधिक साधु मित्रता के विचार से ऐसे साधु का पक्ष-समर्थन करते हैं जो अनैक्य-उत्पादक वचन बोलता है और वे साधु समाज को इस प्रकार संबोधन करते हैं—"हे भाइयो! इस अनैक्य-उत्पादक को भला बुरा कुछ न कहो क्योंकि हे भाइयो! वह साधु नियम और उपदेशों के अनुसार बोलता है। उसने उपदेशों और नियमों को सावधानी से ग्रहण और धारण किया है और वह ज्ञानपूर्वक बोलता है न कि अज्ञान-पूर्वक। जब उससे इच्छा प्रकट की गई है तब वह बोलता है। यह हमारी इच्छा है कि वह बोले" तब साधुओं का समाज उन साधुओं को इस प्रकार उत्तर दे—"महाशयो! यह न कहिए कि अनैक्य-उत्पादक साधु नियमानुसार बोलता है तथा उपदेशों के अनुसार बोलता है। यह भी न कहिए कि उसने नियमों और उपदेशों को ग्रहण तथा धारण किया है और तदनुसार ही वह बोलता है। वह ज्ञान-पूर्वक बोलता है न कि अज्ञान-पूर्वक और वह तभी बोलता है जब कि उसपर बोलने की इच्छा की गई है। और यह हमारी इच्छा है कि वह बोले" क्योंकि हे महाशयो! यह अनैक्य-उत्पादक साधु नियमानुसार तथा उपदेशों के अनुसार नहीं बोलता। उसने नियमों और उपदेशों का यथावत्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अध्ययन नहीं किया और न सावधानी से उनका मनन किया है। वह अज्ञानवश ऐसा बोलता है न कि ज्ञानवश। वह तभी बोलता है जब कि उस पर इच्छा प्रकट की गई है। अतएव महाशयो! उससे ऐसी बातें बुलवाने की इच्छा न करो। महाशयो! साधु समाज में अनैक्य की इच्छा न करो, इसके विरुद्ध यह इच्छा करो कि साधु-समाज में ऐक्य रहे। जिस समाज में ऐक्य होगा वहाँ नवीनता न उत्पन्न होगी, उसमें शान्ति रहेगी और कोई झगड़ा न होगा। साधु दूध में पानी की तरह मिले रह कर बुद्धदेव के उपदेशों को उज्वल करेंगे और प्रसन्नतापूर्वक रहेंगे। हे महाशयो! इस साधु का पक्ष समर्थन न करो जो समाज में अनैक्य की बात कहता है।" यदि समाज से इस प्रकार संबोधित हो कर वे साधु अपना पक्ष त्याग देते हैं तो अच्छा है; यदि वे नहीं छोड़ते हैं तो उन्हें दुबारा या तिबारा सचेत किया जाय। इस प्रकार सचेत किए जाने पर भी यदि वे अपना आग्रह त्याग देते हैं तो अच्छा है; यदि नहीं तो वे पाप करते हैं और साधुता से पतित होने के भागी हैं।

(१२) यदि कोई साधु गाँव या नगर के समीप रह कर कुकर्म करे और परिवारों को भ्रष्ट करे और उनसे भ्रष्ट किए हुए परिवार देखे जायँ; सुने जायँ या जाने जायँ और किए हुए कुकर्म भी देखे, सुने या जाने जायँ तो वे साधु साधु-समाज से इस प्रकार संबोधित किए जायँ—"हे भाइयो! तुम परिवारों के भ्रष्ट करनेवाले और कुकर्म करनेवाले हो! तुम्हारे द्वारा भ्रष्ट किए गए परिवार देखे गए, सुने गए या जाने गए हैं और तुम्हारे कुकर्म भी देखे, सुने या जाने गए हैं। हे भाइयो! तुम यहाँ बहुत दिन रह चुके हो; अब इस स्थान से चले जाओ। इस प्रकार संबोधन किए जाने पर यदि वे चाहें तो इस प्रकार उत्तर दें—"हे भाइयो! तुममें से कुछ लोग दुर्वासना से, कुछ ईर्ष्या से, कुछ भ्रम से और कुछ भय से यहाँ विचर रहे हो और इसी प्रकार के अपराधों के कारण किसी को तुम हटाते हो और किसी को नहीं।" तब समाज से इस प्रकार प्रत्युत्तर दिया जाय—"हे भाइयो! यह न कहो कि हम में से कुछ दुर्वासना से, कुछ ईर्ष्या, भ्रम और भय से यहाँ विचरते हैं और एक ही प्रकार के अपराधों के कारण किसी को हम हटाते हैं और किसी को नहीं! क्योंकि हम लोग दुर्वासना, ईर्ष्या, भ्रम और भय से नहीं विचर रहे हैं। हे भाइयो! तुम परिवारों को भ्रष्ट करनेवाले और कुकर्म करनेवाले हो। तुम स्वयं देख चुके हो, सुन चुके हो और जान चुके हो कि परिवारभ्रंशक और कुकर्मियों की क्या गति होती है। तुम यह संभाषण छोड़ो कि हम साधु-वर्ग दुर्वासना, ईर्ष्या, भ्रम और भय से प्रेरित विचरते हैं।" यदि साधु-समाज से इस प्रकार संबोधित किए जाने पर वे साधु अपने कुमार्ग का परित्याग करते हैं तो अच्छा है; यदि नहीं करते तो उन्हें नियमानुसार दुबारा और तिबारा सावधान किया जाय। यदि वे अपने कुमार्ग का परित्याग करते हैं तो अच्छा है; यदि नहीं तो वे पाप करते हैं और साधुता से पतित होने के भागी हैं।

(१३) यदि कोई साधु कटुवादी है और जब उससे बुद्धदेव के कहे हुए नियमों और उपदेशों के परिपालन के संबंध में साधु समाज से कुछ संबोधन किया जाय तब वह कहे कि—"हे भाइयो! मुझ से भला बुरा कुछ भी न कहो; मैं भी तुम से भला बुरा कुछ न कहूंगा। हे भाइयो! तुम मुझ से बोलने से निवृत्त हो; मैं भी तुमसे बोलने से निवृत्त होउंगा क्योंकि कहने सुनने की कोई बात ही नहीं है।" तब साधु समाज उसे इस प्रकार से संबोधन करे "हे भाई! जब कि बुद्धदेव के कहे हुए नियमों और उपदेशों के पालन के संबंध में कोई बात तुमसे कही जाती है तब तुम वह व्यक्ति न बनो जिससे इस विषय में कुछ नहीं कहा जा सकता। वरन् तुम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने को वह व्यक्ति बनाओ जिससे हम सब कुछ कह सकते हैं। हे भाई! जब साधु लोग तुमसे नियमों और उपदेशों के विषय में कुछ कहें तब तुम भी उसी विषय में उनसे बोलो, परस्पर के वाद-विवाद और शिक्षाओं द्वारा एक दूसरे को पाप में पतित होने से बचाओ। इस प्रकार से विचारशील बुद्धदेव द्वारा स्थापित किया हुआ साधु समाज वृद्धि प्राप्त करता है। धन्य, मान्य, तथागत बुद्धदेव अजेय शत्रुओं का विजेता था। हे भाई! अपने से न बोले जाने का साहस त्याग दो।" यदि इस प्रकार संबोधन किए जाने पर वह अपना साहस त्याग देता है तो उत्तम है; यदि नहीं तो नियमानुसार दुबारा और तिबारा उसे सावधान किया जाय। यदि वह मान जाय तो उत्तम है; यदि फिर भी वह आत्म-साहस नहीं त्यागता तो वह पाप करता है और साधुता से पतित होने का भागी है।

हे भाइयो! मैंने उन पापों के विषय में तेरह नियमों का भाषण किया है जिनके कारण साधुवर्ग से साधु पतित या च्युत होता है। इनमें से प्रथम नौ तत्क्षण पाप हो जाते हैं, शेष चार तीसरे प्रमाण तक पाप नहीं होते। यदि कोई साधु इनमें से कोई पाप करे तो उसे, अपनी इच्छा के विरुद्ध भी, उतने दिनों तक पृथक् निवास कराना चाहिए जितने दिनों तक उसने जान बूझ कर पापों को छिपा रखा हो। यह सब हो चुकने के बाद छः दिन तक और भी साधु पद के हेतु आत्म-परिष्कार करना चाहिए। तब नियमों के अनुसार आचरण करते हुए उसे किसी ऐसे स्थान में पुनः साधु पद को धारण करना चाहिए जहाँ कम से कम बीस साधुओं की जमात हो। यदि साधुओं की जमात में बीस से एक भी कम हो तो उस जमात में पुनरभिषिक्त साधु का पुनरभिषेक माननीय न होगा और वह जमात भी अपराधी होगी। यही इस विषय का खुलासा विवरण है।

हे भाइयो! मैं तुमसे पूछता हूँ, क्या तुम इस विषय में सर्वथा पवित्र हो? मैं तुमसे दूसरी बार और तीसरी बार पूछता हूँ कि क्या तुम इस विषय में सर्वथा पवित्र हो? जो भाई इस विषय में सर्वथा पवित्र हैं उन्हें कुछ न कहना चाहिए, बस मैं समझ जाऊँगा।

अनिश्चित विषयों के विषय में दो नियम।

अनियत धर्म।

सार—सुरक्षित स्थान में अकेले बैठना।

हे भाइयो, प्रतिपक्ष भाषण किए जानेवाले सोसार थारपा में प्रसिद्ध अनियत विषयों के विषय के दो नियम यहाँ कहे जाते हैं।

(१) यदि कोई साधु किसी ऐसे सुरक्षित स्थान में किसी स्त्री के साथ अकेला बैठता है जहाँ कुचेष्टाएं या बुरे कार्य्य हो सकते हैं और निश्चित शुद्धाचरण भक्त स्त्री उस पर एक, दो या तीन अपराधों का आरोप करती हैं और उसके लिये प्रायश्चित्तों की आवश्यकता है तो वह साधु यदि स्वीकार करे कि वह ऐसे बैठा तो वह उस अपराध का अपराधी होगा जो उसने किया है या जो उसपर आरोपित हुआ है। यह एक अनियत धर्म है।

(२) यदि कोई साधु किसी ऐसे सुरक्षित स्थान में किसी स्त्री के साथ अकेला बैठता है जो कि कुचेष्टाओं के लिये योग्य है और भक्त स्त्री वास्तव में जो पवित्राचारिणी है उस पर एक या दो ऐसे अपराधों का आरोप करती है जिनके पतन या प्रायश्चित्त आवश्यक है तो वह साधु यदि स्वीकार करे कि वह ऐसे बैठा था तो वह उस अपराध का अपराधी होगा जो उसने किया या जो उस पर आरोपित किया गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे भाइयो! मैंने दो अनियत नियम यहाँ भाषण किए हैं। मैं पूछता हूं—क्या आप लोग इन विषयों में सर्वथा पवित्र हैं? मैं दुबारा और तिबारा भी आप से पूछता हूं कि क्या आप इन विषयों में सर्वथा पवित्र हैं? यदि आप लोग सर्वथा पवित्र हैं तो कोई कुछ न कहे। बस मैं समझ जाऊँगा।

वित्त हरण संबंधी पापों के विषय में तीस नियम।

निस्सर्गीय धर्म।

सार—संग्रह, त्याग, धरोहर रखना, धुलाई, स्वीकृति माँगना, ऊपर और नीचे के पहनावे के लिये दाम, पृथक् पृथक् लेना और भेजना।

प्रतिपक्ष भाषण किए जानेवाले सोसार थारपा उन पापों के विषय में तीस नियम कहे गए जिनके कारण वित्त-हरण हो सकता है।

(१) वह साधु जिसको एक जोड़ कंथा* प्राप्त हो चुका है और वह उसे तैयार करा चुका है तो वह एक और पहनावा दस दिन अपने पास रख सकता है। यदि वह दस दिन से अधिक रखता है तो पाप करता है और उसका वह वित्त हरण होना चाहिए।

(२) यदि कोई साधु एक जोड़ा कंथा प्राप्त करके तैयार करा चुका है और वह हँसी में एक रात्रि के लिये भी अनुमोदित वस्त्रों में से एक को भी साधु समाज की आज्ञा के अतिरिक्त छोड़ता है तो वह पाप करता है और उसका वह वित्त हरण होना चाहिए।

(३) एक कंथा वस्त्र प्राप्त हो चुकने और बन कर तैयार हो चुकने के पश्चात् किसी साधु को अन्य वस्त्रों में यदि दूसरा वस्त्र दिया जाय तो देनेवाले के इच्छानुसार वह स्वीकार किया जा सकता है। स्वीकार होने के पश्चात् यदि उसमें लम्बाई आदि या नाप में कोई दोष हो तो उसी समय वह दुरुस्त किया जाना चाहिए। यदि उसी समय उसके बनवाने में लाचारी हो पर वह उसे बनवाना चाहता हो तो उस जोड़े को एक मास तक रख सकता है। यदि वह इतने समय से अधिक उसे अपने पास रखता है तो पाप करता है और वित्त हरण के दण्ड का भागी है।

(४) यदी कोई साधु अपने वस्त्र किसी ऐसी साधुनी से धुलाता, रंगाता या इस्तरी कराता है जो उसकी सम्बंधिनी नहीं है तो वह पाप करता है और उसका वह वित्त हरण होना चाहिए।

(५) वह साधु जो किसी ऐसी साधुनी के हाथ से वस्त्र ग्रहण करता है जो उसकी संबन्धिनी नहीं है तथा जिसका बदला भी नहीं किया गया है तो वह पाप करता है और वह वित्त हरण के योग्य है।

(६) यदि कोई साधु ठीक समय के सिवा किसी ऐसे श्रमजीवी या श्रमजीविनी स्त्री से वस्त्र माँगता है जो उसके संबन्धी नहीं हैं तो वह पाप करता है और उसका वह वित्त हरण के योग्य है।

यहाँ ठीक समय से यह भी आशय है कि जब साधू के वस्त्र कोई चुरा ले या वस्त्र नष्ट हो जायँ, जल जायँ या हवा में उड़ जायँ।

(७) यदि किसी साधु के वस्त्र चोरी चले जायँ, नष्ट हो जायँ, जल जायँ, हवा में उड़ जायँ या पानी में बह जायँ तो वस्त्र के लिये वह किसी ऐसे गृहस्थ के घर जा सकता है जहाँ उसका कुछ भी सम्बन्ध न हो, यदि वह गृहस्थ उसे बहुत से वस्त्र दिखा कर पसंद करने को कहे तो उसमें से ठीक नाप के अनुसार ऊपर के और नीचे के वस्त्रों के लिये सामान ले सकता है। यदि वह नाप से अधिक सामान लेता है तो पाप करता है और उसका वह वित्तहरण के योग्य है।

* बौद्ध साधुओं की पोशाक जो एक दिन रात्रि में बनकर दाता किसी साधु को कम से कम पाँच साधुओं के लिये देता है। कंथा बहुधा आश्विन और कार्तिक के शुक्ल पक्ष में साल में एक बार समर्पण किया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(८) यदि किसी गृहस्थ स्त्री या पुरुष ने किसी विशेष साधु के वस्त्रों के लिये यह कह कर कुछ धन अलग रख छोड़ा हो कि अमुक साधु जब कभी मेरे यहाँ आवेगा तब उसे मैं इस धन से ऐसी ऐसी पोशाक खरीद कर दूँगा और अगर वह साधु संकल्प होने के पूर्व ही उस गृहस्थ के घर जा कर और भी उत्तम वस्त्र पाने की लालसा प्रकट करके कहता है,—"महाशय! मेरे हेतु वस्त्र खरीदने के लिये आप ने जो दाम अलग कर रखे हैं उनसे आप ऐसी पोशाक अमुक समय में मुझे बनवा दें।" इस तरह से यदि वस्त्र बनवाए जायँ तो वह साधु जो ऐसी इच्छा प्रकट करता है पाप करता है और उसका वह वित्त हरण होने योग्य है।

(९) यदि किसी गृहस्थ या उसकी स्त्री ने या दोनों ने एक जोड़े वस्त्र का मूल्य किसी ऐसे साधु को देने के लिये अलग रख छोड़ा हो जो उन दोनों में से एक का भी संबन्धी नहीं है और उन्होंने यह कह कर मूल्य रक्खा हो कि जब अमुक साधु आवेगा तो उसके लिये ऐसी ऐसी पोशाक खरीद देंगे और यदि वह साधु संकल्प किए जाने के पूर्व ही उस गृहस्थ के या उसकी स्त्री के पास उत्तम वस्त्र पाने की इच्छा से जाकर कहता है—"हे महाशयो! आप लोगों में से प्रत्येक ने मुझे वस्त्र देने के लिये जो मूल्य पृथक् रख छोड़ा है उससे आप ऐसा ऐसा वस्त्र खरीद और बनवा कर मुझे पहना दें।" और यदि इस प्रकार से वस्त्र बनवाया जाय तो जो साधु इच्छा प्रकट करता है वह पाप करता है और उसका वह वित्त हरण होने के योग्य है।

(१०) यदि कोई राजा, राजमन्त्री, ब्राह्मण, भवन-पति, नागरिक, गांवटी, धनी या व्यापारी किसी वाहक के द्वारा वस्त्रों का मूल्य किसी खास साधु के लिये भेजता है और वह वाहक साधु के द्वार पर सभ्यता से कहता है—"हे महाशय! मेरे द्वारा जो यह वस्त्रों का मूल्य आया है इसे आप कृपा कर स्वीकार करें" तब साधु उस वाहक को इस प्रकार उत्तर दे—"हे मित्र, वस्त्रों का मूल्य लेना योग्य नहीं है परन्तु हम ठीक समय पर उचित रीति से बने हुए वस्त्र स्वीकार कर सकते हैं।" इस पर भी यदि वह इस प्रकार उत्तर देता है—"मान्यवर! क्या आपकी आवश्यकताओं का निरीक्षक कोई प्रतिनिधि है?" तब साधु निरीक्षक को किसी ऐसे सेवक को बताए जो उसकी आवश्यकताओं को पूर्ण करता हो। उस वाहक को बताए हुए व्यक्ति के पास जाकर इस प्रकार कहना चाहिए—"मेरे मित्र प्रतिनिधि, मेरी बात सुनिए। आप इस वस्त्र के मूल्य से ऐसी ऐसी पोशाक बनवा कर अमुक साधु को पहना दें।" सब बात साफ साफ समझा कर वाहक को पुनः साधु के पास जाना चाहिए और उस से इस प्रकार कहना चाहिए—"मान्यवर आपके बताए प्रतिनिधि को मैं सब बातें स्पष्ट समझा आया हूँ और जब आप वहाँ जायँगे तब उसी क्षण आपको वह वस्त्र पहनाएगा।" वस्त्र पाने की इच्छा रखनेवाला साधु प्रतिनिधि के यहाँ जाय और इस प्रकार कहे—"हे मित्र मैं एक जोड़ा वस्त्र चाहता हूँ।" उस प्रतिनिधि को दोबारा या तिबारा समझाया जाय और उस वस्त्र के जोड़े का स्मरण दिलाया जाय। यदि दूसरी या तीसरी बार समझाने पर और स्मरण दिलाने पर भी वह वस्त्र का जोड़ा पा लेता है तो अच्छा है यदि नहीं तो साधु उस प्रतिनिधि के यहाँ चौथी पाँचवीं और छठी बार तक जा सकता है। यदि पाँचवीं और छठी बार तक शान्त रह कर वह पोशाक पाने में सफलता प्राप्त करता है तो अच्छा है, किन्तु यदि छठी बार तक प्रतीक्षा करने पर भी वह साधु वह वस्त्र का जोड़ा नहीं पाता है और छठी बार से भी अधिक प्रयत्न करके वह वस्त्र पाने में सफल मनोरथ होता है तो वह पाप करता है और उसका वह वित्त हरण के योग्य है।

वस्त्रों का जोड़ा न पाने की अवस्था में वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का मूल्य भेजनेवाले के पास दूत भेजा जाय या कर खुद जाकर कहे—"हे महाशय आप को मालूम हो कि आपने जो एक साधु के वस्त्रों के लिये मूल्य भेजा था उससे उसका कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं हुआ। हे महाशय, आप अपने रुपए की खबर लें जिसमें वह अकारथ न जाय।" इस विषय में यही उचित कर्त्तव्य है।

सार—रेशम का टुकड़ा, शुद्ध ऊन, दो भाग, छः वर्ष, पूरा बामा, पर्य्यटन, धोना, सोने और चाँदी की मुद्रा, क्रयविक्रय।

(११) जो साधु नई रेशमी चादर लेता है वह पाप करता है और उसका वह वित्त हरण योग्य है।

(१२) जो साधु केवल काली बकरी के ऊन की बनी हुई चादर लेता है वह पाप करता है और वह वित्त हरण के योग्य है।

(१३) साधु को ऐसी चादर लेनी चाहिए जिसमें दो भाग काली बकरी का ऊन हो, तीसरा भाग श्वेत ऊन हो और चौथा भाग धुँधले रंग का ऊन मिश्रित हो। यदि कोई साधु ऐसी चादर लेता है जिसमें दो भाग काला ऊन तीसरा भाग श्वेत ऊन और चौथा भाग धुंधला ऊन नहीं है तो वह पाप करता है और उसका वह वित्त हरण होना चाहिए।

(१४) साधु जो चादर पावे उसे वह अपनी इच्छा के विरुद्ध भी छः वर्ष पर्य्यंत काम में लावे। यदि छः वर्ष के भीतर ही कोई साधु साधु-समाज की आज्ञा के विना दूसरी चादर ले ले, चाहे उसने पुरानी चादर त्यागी हो या नहीं, तो वह पाप करता है और वह वित्त हरण होना चाहिए।

(१५) यदि कोई साधु अपनी आसनी के लिये कपड़ा गलीचा ले तो उसे भद्दा करने के लिये उसमें वह बुद्ध के बामा की चौड़ाई भर कपड़ा अपने बरते हुए पुराने बिस्तर में से लेकर गूँथ दें। यदि कोई साधु नवीन आसनी को भद्दी करने के लिये अपने पुराने बिस्तरे के सब भागों में से बुद्ध के बामा की चौड़ाई भर टुकड़े लेकर उसे नहीं गूँथता है तो पाप करता है और उसका वह वित्त हरण के योग्य है।

(१६) यदि किसी साधु को पर्य्यटन के समय बकरी का ऊन मिले तो यदि वह चाहे तो ले सकता है। यदि कोई ले जानेवाला न मिले तो उसे वह तीन मील तक अपने हाथ में लिए हुए जा सकता है। इसके आगे भी यदि वह ले जाता है तो पाप करता है और उसका वह वित्त हरण के योग्य है।

(१७) जो साधु किसी ऐसी स्त्री का धोया, रंगा या साफ किया हुआ ऊन लेता है जो उसकी संबंधिनी नहीं है तो वह पाप करता है और वह वित्त हरण के योग्य है।

(१८) जो साधु अपने हाथ में सोना या चाँदी लेता है या अपने हेतु दूसरे से लिवाता है वह पाप करता है और वह वित्त हरण के योग्य है।

(१९) जो साधु लेन देन * या व्यापार करता है वह पाप करता है और उसका वह वित्त हरण के योग्य है।

(२०) जो साधु अनेक प्रकार के क्रयविक्रय, व्यापार धंधे और लेन देन में समय बिताता है वह पाप करता है और उसका वित्त हरण के योग्य है।

सार—कमंडल के विषय में दो नियम, बुननेवाले के विषय में दो नियम, दिया हुआ लौटा लेना, ग्रीष्म ऋतु का अंतिम मास, एकान्तवास, पोशाक के लिये सामग्री, उचित संग्रह कर रखना।

(२१) साधु दस दिन पर्य्यंत एक अधिक कमंडल

* अँग्रेजी अनुवादक ने Transaction in silver coin लिखा है जिसका शुद्ध अर्थ रुपयों का लेन है। इसी संबंध में उन्होंने टिप्पनी देकर प्रकट किया है कि इस स्थान पर मूल पुस्तक में "मनमत्सनकन" शब्द है जो संस्कृत रूपिका के तुल्य है और जिसका अर्थ चाँदी का सिक्का भी हो सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने पास रख सकता है। यदि वह इससे भी अधिक रखता है तो पाप करता है और वह वित्त हरण के योग्य है।

(२२) जिस साधु के पास ऐसा कमंडल हो जो पाँच जगह से न टूटा हो और काम देने लायक हो पर वह उसके बदले में दूसरे अच्छे कमंडल की तलाश में हो तथा अपने पासवाले कमंडल के स्थान में दूसरा कमंडल ले, तो वह पाप करता है और वह वित्त हरण के योग्य है।

उस साधु का नया कमंडल साधु समाज ले ले और साधु समाज में जो सब से बुरा कमंडल हो यह कह कर उसके बदले में उस साधु को दे दिया जाय—साधु, तुम्हारा कमंडल यह है और जब तक यह फूट न जाय इसे न तो त्यागना न खो देना। इस विषय में यही कर्त्तव्य है।

(२३) जो साधु भिक्षा में ऊन पावे और उसे वह ऐसे बुननेवाले के पास ले जाय जो उसका संबंधी नहीं है और वह कपड़ा बुन दे और वह (साधु) उस कपड़े को ले ले, तो वह पाप करता है और उसका वह वित्त हरण होने योग्य है।

(२४) यदि कोई गृहस्थ पुरुष या स्त्री किसी साधु के हेतु वस्त्र बनवाने के लिये किसी ऐसे बुननेवाले को बुलावे जो उनका संबंधी न हो और संकल्प किए जाने के पूर्व साधु बुननेवाले के मकान पर जा कर इस प्रकार कहे कि "हे मित्र, ज्ञात हो कि जो कपड़ा तुम बना रहे हो वह मेरे लिये है; उसे तुम लम्बा चौड़ा बनाओ और बुनाई भी अच्छी करना। यदि तुम ऐसा करोगे तो मैं तुमको पुरस्कार दूँगा या खाने पीने की कोई चीज दूँगा।" यदि वह साधु पोशाक के लिये जरा सी भी चीज पुरस्कार स्वरूप देता है तो पाप करता है और उसका वह वित्त हरण होने योग्य है।

(२५) जो साधु किसी अन्य साधु को वस्त्रों [illegible] जोड़ा देता है परंतु पीछे फिर कुछ क्रुद्ध या अप्रस[illegible] हो कर उसे ले लेता है या यह कह कर लेता है [illegible] "वह वस्त्रों का जोड़ा तुमको दिया नहीं गया था; [illegible] वापस करो" और वह साधु अपने पास दूसरा जो[illegible] होने के कारण उसे वापस कर देता है तो पह[illegible] साधु पाप करता है और वह वित्त हरण योग्य है।

(२६) यदि किसी साधु को ग्रीष्म ऋतु [illegible] अंतिम दशमी (ज्येष्ठ-शुक्ला गंगा-दशमी) के पू[illegible] कोई वस्त्र का जोड़ा दिया जाय तो वह उसे व[illegible] दिए जाने के समय तक अपने पास रख सक[illegible] है। यदि उससे भी अधिक समय तक वह उ[illegible] (वस्त्र के जोड़े को) अपने पास रखता है तो प[illegible] करता है और उसका वह वित्त हरण होने योग्य है।

(२७) यदि किसी साधु का निवास-स्थान [illegible] या आक्रमण से अरक्षित है और वह भय के का[illegible] उस स्थान को त्यागता है तब यदि बरसात [illegible] अन्त हो गया हो और यदि वह चाहे तो (गाँव भीतर) किसी झोपड़े में अपने पहनने के एक दो वस्त्र छोड़ सकता है और यदि कोई उचि[illegible] कारण उपस्थित हो तो वह निवास-स्थान से [illegible] दिन तक के लिये बिना वस्त्र चला जा सकता है। यदि वह अपने वस्त्रों को छः दिन से भी ज्या[illegible] समय के लिये अलग करता है तो वह पाप कर[illegible] है और वह वित्त हरण होने योग्य है।

(२८) जब गरमी के दिनों का एक मास [illegible] रह जाय तब साधु अपने बरसाती पहनावे (पोशा[illegible] के लिये ऊन लावे और जब आधा महीना शेष [illegible] जाय तब वह उसे बनवावे और पहने। यदि गर[illegible] के मौसिम का एक मास से अधिक शेष रहने के पू[illegible] साधु ऊन संग्रह करता है और केवल पंद्रह दि[illegible] शेष रहने के पूर्व वस्त्र बनवाता है और पहन[illegible] है तो वह पाप करता है और वह वित्त ह[illegible] योग्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२९) किसी साधु-समाज के लिये अपेक्षित सम्पत्ति पर जो साधु जान बूझ कर स्वार्थ से अधिकार करता है वह पाप करता है और उसका वह वित्त हरण के योग्य है।

(३०) बीमार साधुओं के लिये बुद्धदेव ने ये औषधियां नियत की हैं—मक्खन, तेल, मधु और शक्कर। बीमार साधु इन्हें स्वीकार करके सात दिन तक के उपयोग के लिये इनका संग्रह अपने पास कर सकता है। यदि सात दिन से अधिक के लिये वह इन वस्तुओं को अपने पास रखता है तो पाप करता है और उसका वह वित्त हरण के योग्य है।

हे भाइयो मैं उन पापों के संबंध में तीस नियम भाषण कर चुका जिनके लिये वित्त-हरण की व्यवस्था है। इन्हीं के विषय में, हे भाइयो, मैं आप से पूछता हूँ कि क्या आप सब पूर्णतया पवित्र हैं? दूसरी बार और तीसरी बार मैं आपसे पूछता हूँ कि क्या आप सर्वथा पवित्र हैं? इस विषय में जो सर्वथा पवित्र हैं वे कुछ भी न कहें। बस मैं समझ जाऊँगा।

(शेष आगे।)

—:o:—

नारद भक्ति-सूत्रों का सारांश।

[लेखक,—श्रीयुत कन्नोमल एम० ए०]

भक्ति का स्वरूप।

भक्ति परम प्रेम और अमृत-स्वरूपा है। यह प्रेम अनिर्वचनीय है। जैसे गूँगा स्वाद नहीं कह सकता है वैसे ही भक्त प्रेम-स्वरूप को नहीं बता सकता। यह प्रेम गुण और कामनाओं से रहित है, सदैव बढ़नेवाला है, एक रस है, सूक्ष्म से सूक्ष्म है और केवल अनुभव स्वरूप है।

भक्ति के विषय में मत-भेद।

पाराशर्य का मत है कि ईश्वर-पूजनादि में अनुराग करना भक्ति है। गर्ग कहते हैं कि कथादि में अनुराग होने का नाम भक्ति है। शांडिल्य का मत है कि आत्मा में निरन्तर रति करना भक्ति है। परन्तु नारदजी के मतानुसार ईश्वर में सब आचारों का अर्पण कर देना और उस के विस्मरण में परम व्याकुल होना भक्ति है। यथार्थ में है भी यही। परन्तु इसमें एक आवश्यक अंश और है और वह यह है कि जिसकी भक्ति की जाय उसके माहात्म्य का ज्ञान रहे अर्थात् उसकी श्रेष्ठता का सदैव स्मरण रहे; नहीं तो उस ज्ञान के बिना भक्ति व्यभिचारियों के प्रेम के बराबर है। श्रेष्ठ भक्ति कर्म, ज्ञान और योग से बढ़ कर है। क्योंकि कर्म, ज्ञान और योग तो साधन ही हैं और भक्ति फल रूप है। किसी किसी का मत है कि भक्ति के लिये ज्ञान होना भी आवश्यक है और भक्ति और ज्ञान एक दूसरे पर अवलम्बित हैं। परन्तु नारदजी ज्ञान को आवश्यक नहीं समझते, क्योंकि जैसे भोजन का ज्ञान होने से क्षुधा की तृप्ति नहीं होती उसी तरह ईश्वर का ज्ञान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने से भक्ति नहीं हो जाती; क्योंकि भक्ति हृदय के प्रेम का विषय है और ज्ञान बुद्धि का।

भक्ति के प्रकार।

सत्व, रज और तम इन तीन गुणों के भेद से अथवा जिज्ञासुओं के भेद से भक्ति तीन प्रकार की है। पहली दूसरी से उत्तम है और दूसरी तीसरी से। अपने रूप में एक होने पर भी भक्ति १० प्रकार की है:—

१—ईश्वर के गुण और माहात्म्य सुनने की,
२—ईश्वर के रूप की,
३—पूजा की,
४—स्मरण करने की,
५—दास्य करने की अर्थात् दास-भाव की,
६—सखा भाव की,
७—कान्ता भाव की,
८—आत्म निवेदन की,
९—तन्मय की और
१०—परम विरह की।

भक्ति-मार्ग की उत्कृष्टता।

और मार्गों की अपेक्षा भक्ति अति सुलभ है क्योंकि उसकी सिद्धि में और बातों की आवश्यकता नहीं है। वह स्वयं सिद्ध, शान्त और परमानन्द रूप है। दूसरे मार्ग केवल साधन-रूप ही हैं परन्तु भक्ति फल-रूप है।

भक्ति-साधन।

भक्ति-साधन दो प्रकार का है, एक त्याग-सम्बन्धी और दूसरा कर्तव्य सम्बन्धी।

त्याग-सम्बन्धी साधन।

१—इन्द्रिय-विषय और सांसारिक संगति त्यागना अर्थात् सांसारिक चीजों से निवृत्त होना।
२—अभिमान और दंभादि का त्याग।
२—स्त्री, धनी, नास्तिक और वैरियों के चरित्र को नहीं सुनना।
४—वाद का अवलम्बन नहीं करना क्योंकि वाद से संशय और बहुलभाव उत्पन्न होता है।
५—दुस्संग सर्वथा छोड़ देना, क्योंकि यह काम, क्रोध, मोह, स्मृति-भ्रंश, बुद्धि-नाश और सर्वनाश होने का कारण है। बुरे संग से इनकी तरंग समुद्र की तरंग के समान बड़ी हो जाती है।

कर्तव्य सम्बन्धी साधन।

१—निरन्तर भजन करना चाहिए।
२—भगवत् के गुण सुनना और कीर्तन करना चाहिए।
३—महात्माओं का संग जो दुर्लभ, अगम्य और सिद्धि-दायक है, करना चाहिए। यह ईश्वर की कृपा से ही प्राप्त होता है। ईश्वर में और ऐसे महात्माओं में कोई भेद नहीं है। इसलिये इनका संग सर्वथा ग्रहण करना चाहिए।
४—जब तक भक्ति नहीं हो तब तक लोक-व्यवहार तो करना चाहिए परन्तु कर्मों के फल का सर्वथा त्याग कर देना चाहिए।
५—अपने सब आचारों को ईश्वर के अर्पण करना और काम, क्रोध, अभिमानादि भी उसी के प्रति करना चाहिए।
६—जैसे परम स्वामिभक्त दास और परम पतिव्रता सती दोनों अपने स्वामी और पति की सेवा करते हैं वैसे ही ईश्वर के भक्त को ईश्वर का भजन करना चाहिए; उसके प्रेम का स्वरूप ही बन जाना चाहिए।
७—सुख, दुःख, इच्छा, लाभादि को छोड़ कर और काल की प्रतीक्षा करते हुए आधा क्षण भी व्यर्थ नहीं खोना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८—अहिंसा, सत्य; शौच, दया, आस्तिकता आदि के नियमों का पालन करना चाहिए।

९—सर्वदा सब भावों से निश्चिन्त होकर केवल भगवान् का ही भजन करना चाहिए।

१०—सारांश यह है कि महात्माओं की कृपा अथवा ईश्वर-कृपा से ही भक्ति प्राप्त होती है।

ईश्वर की जिस पर कृपा होती है उसी के हृदय में भक्ति का प्रकाश और अनुभव होता है।

भक्तों के लक्षण।

भक्त सांसारिक सुखों को त्याग देते हैं, महात्माओं का संग करते हैं, अभिमानादि छोड़ देते हैं, एकान्त स्थानों में भ्रमण करते हैं और भक्ति के आनन्द में ही मग्न रहते हैं। ये संसार-बंधनों से दूर रहते हैं, सत्व, रज और तम तीनों गुणों के परे जाने की चेष्टा करते हैं, ममत्व और सम्पत्ति सब छोड़ देते हैं, कर्म और उनके फलों की कामना भी त्याग देते हैं और सदैव निर्भय रहते हैं। पूर्ण भक्त वेदाध्ययनादि भी त्याग देते हैं, निरन्तर शान्त-चित्त से ईश्वर का भजन करते हैं और केवल भक्ति विषय का ही वार्तालाप गद्गद वाणी और आनन्द-पूर्ण अश्रुधारा से करते हैं। इनमें जाति, विद्या, सौन्दर्य, कुल या धन-सम्बन्धी कोई भेद नहीं रहता। ये केवल ईश्वर के ही हो कर उसी में लीन रहते हैं। भक्ति प्राप्त करने पर वे सिद्धावस्था को पहुँच जाते हैं अर्थात् निरन्तर आत्मानन्द हो जाते हैं। इनके मन में इच्छा, द्वेष अथवा अपनी उन्नति की वृत्ति कभी नहीं उठती। ऐसे मनुष्य पृथ्वी को और उस कुल को जिसमें वे जन्म लेते हैं पवित्र करते हैं। इनसे तीर्थ-स्थान पवित्र हो जाते हैं। अच्छे कामों में श्रेष्ठता आ जाती है और धर्म-ग्रन्थों में सत्यता का प्रादुर्भाव हो जाता है। इनके पूर्वज सदा के लिये सुखी हो जाते हैं। इनकी महिमा देवता तक गाते हैं और पृथ्वी उनको अपना अमूल्य रत्न समझती है। ऐसे भक्त भव-सागर से स्वयं पार हो जाते हैं और दूसरों को भी पार लगा देते हैं।

—:०:—

काउन्सिल में हिन्दी।

गत २३ फरवरी को लखनऊ के गवर्नमेण्ट हाउस में संयुक्त प्रान्त की लेजिस्लेटिव काउन्सिल का जो अधिवेशन हुआ था उसमें प्रयाग के श्रीयुक्त सी० वाई० चिन्तामणि ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया था कि मैनुअल आफ गवर्नमेण्ट आर्डर्स के १४३ ए (बी) पैरे में जहां इस प्रान्त में नियुक्त होनेवाले सब-जजों और मुन्सिफों के लिये फारसी अक्षरों में हिन्दुस्तानी (उर्दू) का जानना आवश्यक बतलाया गया है वहाँ नागरी अक्षरों में हिन्दी का जानना भी आवश्यक कर दिया जाय। यह प्रस्ताव उपस्थित करते समय आपने कहा था कि गत ११ नवम्बर सन् १९१६ को भी मैंने काउन्सिल में यही प्रश्न किया था, जिसका उत्तर सरकार की ओर से नकारात्मक मिला था। जिस समय बिसौली के मुन्सिफ के मुकदमे की कार्रवाई और गवाही आदि हिन्दी में लिखने पर झगड़ा चला था, उस समय भी जनवरीवाली बैठक में मैंने प्रश्न किया था कि क्या हाल में सरकार ने किसी मुन्सिफ को यह आज्ञा दी है कि वह गवाही आदि नागरी में न लिखा करे और क्या सरकार इस आशय की विज्ञप्ति प्रकाशित कर सकती है कि मुन्सिफ लोग अपने इच्छानुसार नागरी या फारसी अक्षरों का व्यवहार कर सकते हैं। उस समय उत्तर मिला था कि सरकार प्रचलित प्रथा में किसी प्रकार का परिवर्त्तन नहीं कर सकती। इसमें विशेष ध्यान रखने योग्य यह बात है कि फारसी अक्षरों में गवाही आदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखने की प्रथा मात्र ही है, इसके लिये कोई नियम नहीं है। आपने यह भी कहा था कि भिन्न भिन्न विभागों के सम्बन्ध में जो सरकारी आज्ञाएं हैं उन्हें देखते हुए तो इस प्रकार के प्रस्ताव उपस्थित करने की कोई जगह ही नहीं है; पर सरकार जैसे उत्तर देती है उन्हें देखते हुए ऐसे प्रस्ताव उपस्थित करने की आवश्यकता होती है। इस सम्बन्ध में सरकारी आज्ञा का अभिप्राय केवल इतना ही है कि नियुक्त होनेवाले मनुष्य को इस प्रान्तकी भाषा का अच्छा ज्ञान होना चाहिए और उसमें अँगरेजी तथा फारसी अक्षरों में हिन्दुस्तानी (उर्दू) पढ़ और लिख लेने की योग्यता होनी चाहिए। यदि इस प्रान्त में केवल एक ही भाषा हो (और जैसी कि वास्तव में है सम्पा०।) तो उसे हिन्दुस्तानी (उर्दू) ही मानना क्यों आवश्यक है। डिप्टी कलक्टरों के विषय में केवल यही आवश्यक है कि वे प्रदेश की एक भाषा अवश्य जानें; उनके लिये विशेष रूप से हिन्दुस्तानी (उर्दू) नहीं बतलाई गई है। एक दूसरे नियम में डिप्टी कलक्टरों के लिये हिन्दी और उर्दू दोनों का जानना आवश्यक बतलाया गया है; तब फिर मुन्सिफ और सदर आला के लिये हिन्दी का जानना क्यों आवश्यक नहीं है। वकीलों और सिविल सर्विस के मेम्बरों के लिये भी हिन्दी और उर्दू दोनों का जानना आवश्यक है और पुलिस ट्रेनिंग में जानेवालों के लिये भी। अदालत में दरख़ास्तें नागरी अक्षरों में भी दी जा सकती हैं और फारसी में भी। ऐसी दशा में यदि कोई मुन्सिफ नागरी में कार्रवाई लिखे तो उससे प्रथा भले ही भंग हो पर नियम कभी भंग नहीं होता। इसके बाद आपने सन् १८९८ वाले उस डेपुटेशन का जिक्र किया जो स्वर्गीय महाराजा अयोध्या की अध्यक्षता में सर (आजकल लार्ड) एन्टनी मेकडानल की सेवा में उपस्थित हुआ था। उस डेपुटेशन के अभिनन्दन के उत्तर में सर एन्टनी ने स्पष्ट शब्दों में स्वीकार किया था कि इस प्रदेश के न्यायालयों और दस्तावेजों आदि में वास्तव में हिन्दी का ही व्यवहार होता है और यहाँ के अधिकांश निवासियों की भाषा हिन्दी ही है। सर एन्टनी ने यह भी स्वीकार किया था कि यहाँ उर्दू जाननेवाले बहुत ही थोड़े और वह भी मुसलमान हैं, और हिन्दी पढ़ने लिखनेवालों की संख्या बराबर बढ़ती जाती है; और इसलिये सरकारी अफसरों का हिन्दी भाषा और नागरी अक्षर जानना भी बहुत आवश्यक है। पर मुसलमान इसका विरोध करते हैं इसलिये एक मध्यम मार्ग का अवलम्बन होना चाहिए। सन् १९०० में इस प्रदेश की सरकार ने बहुत कुछ विचार करने के उपरान्त यह निश्चय किया था कि इस प्रान्त की सब अदालतों में लोग अपने अपने इच्छानुसार फारसी अथवा नागरी लिपि में अपनी अपनी दरख़ास्तें या दावे आदि उपस्थित कर सकते हैं, सरकार की ओर से सम्मन, विज्ञप्ति अथवा इसी प्रकार की और जो चीज जारी की जायगी वह फारसी और नागरी दोनों लिपियों में होगी और उसमें नागरी के खाने भी उसी प्रकार भरे जायँगे जिस प्रकार फारसी के भरे जाते हैं; और जिन दफ्तरों में केवल अँगरेजी का व्यवहार होता है उन्हें छोड़ कर बाकी दफ्तरों में आगे से कोई ऐसा मनुष्य न नियुक्त किया जायगा जो दोनों भाषाएं न जानता हो। इत्यादि। इसके उपरान्त आपने गत मनुष्यगणना के आधार पर यह सिद्ध कर दिखलाया कि इस देश के निवासियों में उर्दू जाननेवालों की अपेक्षा नागरी जाननेवालों की संख्या बहुत अधिक है। हिन्दी बोलनेवाले ४,३७,६९,६५ और उर्दू जाननेवाले केवल ४०,९५,७२८ हैं। अर्थात् प्रति १०००० मनुष्यों में से ९११६ मनुष्य हिन्दी जाननेवाले हैं और केवल ८५३ उर्दू बोलनेवाले हैं। प्रान्तीय सिविल सर्विस के अधिकारियों की नियुक्ति के सम्बन्ध में भारत सरकार की यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आशा है कि उन्हें प्रान्त की भाषा का अच्छा ज्ञान होना चाहिए। इस देश के अधिकांश निवासियों की भाषा हिन्दी ही है और इस प्रस्ताव में कोई बात विवादात्मक या आपत्ति-जनक नहीं है, अतः यह स्वीकृत होना चाहिए।

आन० श्रीयुक्त लाला मधुसूदनदयाल ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया।

यह प्रस्ताव कितना सीधा, उपयोगी और आवश्यक था, यह साधारण बुद्धि का मनुष्य भी बहुत भली भाँति समझ सकता है। इस प्रदेश में १०० में से ९१ मनुष्य हिन्दी ही बोलते हैं और प्रायः महाजनों और कोठीदारों के बही-खाते देवनागरी अथवा महाजनी आदि किसी ऐसी लिपि में ही होते हैं जो देवनागरी जाननेवाला सहज में पढ़ सकता है। हैण्ड नोट, सरख़त और हुण्डियां आदि भी इसी में लिखी जाती हैं। केवल हिन्दू ही नहीं, बल्कि अधिकांश मुसलमान व्यापारी भी अपने बही-खाते किसी न किसी प्रकार की हिन्दी में ही रखते हैं। दीवानी अदालतों में जो दरख़ास्तें वकीलों आदि के द्वारा पड़ती हैं, प्रचलित प्रथा के कारण चाहे उनमें से अधिकांश उर्दू में ही क्यों न हों, पर वादी या प्रतिवादी की ओर से प्रमाण स्वरूप जो कागज आदि उपस्थित किए जाते हैं और जिनके आधार पर विचार होता है वे सब नागरी में ही होते हैं। ऐसी दशा में यदि यह कहा गया कि मुन्सिफों आदि के लिये देवनागरी और हिन्दी का ज्ञान प्राप्त करना भी आवश्यक कर दिया जाय, तो क्या बुरा किया गया? पर नहीं, काउन्सिल के मुसलमान मेम्बर इसे सहन नहीं कर सके। आप कह सकते हैं कि इस प्रस्ताव से उर्दू की किसी प्रकार की हानि की सम्भावना तो थी ही नहीं, तब फिर मुसलमान मेम्बरों ने इसका विरोध क्यों किया? तो उसका उत्तर इसके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं हो सकता कि इससे देवनागरी और हिन्दी के थोड़े बहुत प्रचार की तो सम्भावना थी। इस सम्बन्ध में मुसलमान मेम्बरों ने जो कुछ कहा था, और जिसका सारांश आगे दिया गया है, उससे सिद्ध होता है कि ऊपर से तो वे लोग हिन्दी का अस्तित्व ही स्वीकार नहीं करते और अन्दर अन्दर उसका अस्तित्व मिटाने का प्रयत्न करते हैं।

इस प्रस्ताव का सबसे पहले नवाब अब्दुलमजीद ने विरोध किया। और मि० बर्न, सैय्यदरजाअली तथा सैय्यद आले नबी ने उनके मत का समर्थन किया। यह विरोध उन्होंने क्यों किया और कैसे हृदय से किया, इसके यहाँ बतलाने की आवश्यकता नहीं; क्योंकि स्वयं उनकी बातें ही इन प्रश्नों का उत्तर दिए देती हैं। यह बात बहुत दिनों से देखी जाती है कि जब कभी हिन्दी-उर्दू का प्रश्न उठता है है तब अपने उद्देश्य की सिद्धि में सरकार को सहायक बनाने के लिये मुसलमान कह बैठते हैं कि इससे हिन्दुओं और मुसलमानों में बड़ा भारी झगड़ा खड़ा हो जायगा। यह बात नहीं है कि पढ़े लिखे मुसलमान इतना न समझते हों कि स्वयं मुसलमानों में ही बहुत से लोग हिन्दी ही बोलते हैं और उर्दू के पक्षपाती बहुत ही इने गिने शिक्षित मुसलमान हैं; और साथ ही जिस उर्दू का उन्हें इतना अधिक घमण्ड है उसका और उसके साहित्य का बहुत कुछ निर्माण हिन्दुओं ने ही किया है। भाषा-तत्त्व समझनेवाला प्रत्येक मनुष्य बिना आगा पीछा किए यह भी कह सकता है कि इस देश की स्वाभाविक भाषा हिन्दी ही है और उर्दू बिलकुल बनावटी और गढ़ी हुई भाषा है। यही नहीं, बल्कि उर्दू भाषा और साहित्य के मन्दिर का निर्माण बल और अन्यायपूर्वक हिन्दी ही की जमीन पर और हिन्दी ही के खण्डहरों के माल-मसाले से हुआ है। बल्कि यों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहना चाहिए कि हिन्दी-साहित्य-मन्दिर के एक भाग पर अधिकार करके ही कहीं उसके चौखटे और किवाड़े बदल कर और कहीं कुछ नई चित्रकारी कर के उर्दू-मन्दिर की रचना की गई है। यदि यह बात यहीं तक होती और मुसलमान लोग यदि उसी मन्दिर में रहकर सन्तुष्ट हो जाते तो किसी को कोई आपत्ति न थी। पर विलक्षणता तो यह है कि वे लोग सारे हिन्दी-मन्दिर में बलपूर्वक वैसा ही परिवर्त्तन कर के उसे उर्दू-मन्दिर बनाना चाहते हैं। एक तो बलपूर्वक दूसरे की वस्तु पर अधिकार कर के उसे अपनाना, और दूसरे यदि उसका मालिक उसकी रक्षा करना चाहे अथवा उसे उचित स्थान पर रखना चाहे तो उस पर झगड़ा खड़ा करने का अभियोग लगाना, बस यही आजकल के पढ़े लिखे उर्दू के पक्षपाती मुसलमानों की नीति है। हम नवाब अब्दुलमजीद और उनके समर्थक मेम्बरों से पूछते हैं कि यदि उनके मकान का कोई भाग बलपूर्वक कोई दूसरा दबा बैठे और कुछ दिनों पीछे वह कहने लगे कि नवाब साहब कौन होते हैं, यह सारा मकान तो मेरा है तो नवाब साहब क्या समझेंगे, क्या कहेंगे और क्या करेंगे? यही समझेंगे न कि वह बड़ा भारी डाकू या जालिया है, उससे मकान छोड़ देने के लिये ही कहेंगे न और यथासाध्य उसको अपने मकान से निकाल देने का ही प्रयत्न करेंगे न? और अधिकारों की रक्षा की दृष्टि से उनका यही कर्त्तव्य भी है। ठीक यही दशा हिन्दी और उर्दू की भी है। बल्कि हिन्दीवाले तो इससे भी अधिक कोमल और सभ्यतापूर्ण व्यवहार यह करते हैं कि वे उर्दूवालों को अपनी जगह से निकालने का प्रयत्न नहीं करते। झगड़े से बचने के लिये ही वे चाहते हैं कि अपनी-अपनी सीमा के अन्दर दोनों अपना अपना प्रचार करें। पर उर्दूवालों को हिन्दी का तनिक भी प्रसार सहन नहीं हो सकता; इसका सबसे अच्छा प्रमाण वह वाद-विवाद है जो इस प्रश्न पर काउन्सिल में हुआ था। मि० चिन्तामणि ने यह नहीं कहा था कि मुन्सिफ लोग उर्दू न सीखें, उनका कथन तो केवल यही था कि वे उर्दू के साथ साथ हिन्दी का ज्ञान भी प्राप्त करें। पर मुसलमान मेम्बरों का जहाँ तक बस चले वहाँ तक थोड़े से अधिकारी क्यों हिन्दी सीखने पाएं? क्यों हिन्दी का थोड़ा सा प्रचार भी आवश्यक बनाया जाय? क्यों हिन्दी जाननेवालों की संख्या में थोड़ी सी भी वृद्धि हो? और तिस पर विशेषता यह कि हिन्दी के पक्षपातियों पर हिन्दुओं और मुसलमानों में विरोध उत्पन्न करने का अपराध लगाया जाय। कैसी उच्च कोटि की न्याय-परता है!! कैसी अच्छी नीतिमत्ता है!!!

इस प्रस्ताव का विरोध करने में नवाब अब्दुलमजीद ने भी इस अस्त्र को छोड़ना ठीक न समझा और यह बे सिर-पैर की बात कह ही डाली कि इससे हिन्दुओं और मुसलमानों में विरोध उत्पन्न होगा। यही नहीं बल्कि आपने दुःस्साहस करके यह भी कह डाला कि उर्दू सारे भारत की राष्ट्र भाषा है। सरकार को अपने पक्ष में करने के लिये आपने उसकी भी खुशामद कर डाली और उर्दू को इस उन्नत दशा में लानेवाले अँगरेजी शासन के प्रति कृतज्ञता भी प्रकट कर दी! सबसे विलक्षण बात आपने जो कही वह यह थी कि अँगरेजी शासन के प्रारम्भिक काल में हिन्दी भाषा का कहीं नाम भी न था। लेकिन यह बात आप साफ डकार गए कि स्वयं मुसलमानी शासन के आरम्भ में मुसलमानों को हिन्दी का ही आश्रय लेना पड़ा था। आप बहुत दूर मत जाइए, मौलवी मुहम्मदहुसेन साहब आजाद की आबे-हयात नामक पुस्तक ही उठा कर देख लीजिए जिसमें स्पष्ट शब्दों में लिखा हुआ है कि आरम्भ में मुसलमान इसी देश की भाषा को अपनी भाषा समझते थे। उर्दू को अपनी भाषा कहने की लियाकत तो मुसलमानों में अब आई है। नहीं तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आबे-हयात के लेखक के कथनानुसार ही, नवाब साहब की उर्दू किसी जमाने में—"फ़क़त शोअरा (शायरों) की ज़बान पर थी।" अर्थात् उर्दू की सृष्टि हो चुकने के उपरान्त भी शायरों को छोड़ कर और साधारण मुसलमान उर्दू से एकदम अपरिचित होते थे और अपना सब काम इसी देश की भाषा में—जिसे चाहे आप हिन्दी कह लें और चाहे अधिक से अधिक "बिरज भाशा" कह लें—करते थे। नवाब साहब का यह कथन कि—"अँगरेजी शासन के आरम्भ में हिन्दी का कहीं नाम भी नहीं था।" इतना पोच है कि उस पर विचार करने अथवा कुछ कहने को जी ही नहीं चाहता। हम हिन्दू कवियों और लेखकों को छोड़ देते हैं; भला नवाब साहब यही बतलावें कि कुतबन, मलिक मुहम्मद, खुसरो खानखाना, रहीम और नूरमुहम्मद आदि की कविताएं किस भाषा की हैं। जिस प्रकार आपने यह कहने का दुस्साहस किया है कि कुछ ही दिन पहले कोई हिन्दी का नाम भी नहीं जानता था, क्या उसी प्रकार आप यह कहने का दुस्साहस भी कर सकते हैं कि इन सब कवियों की कविता उर्दू में थी? मलिक मुहम्मद जायसी की कविता का जिक्र करते हुए खुद आजाद को लिखना पड़ा है—"बल्कि साबित होता है कि मुसलमान इस मुल्क में रह कर यहां की जबान को किस प्यार से बोलने लगे थे। इसकी बहर भी हिन्दी रक्खी है और वरक़ के वरक़ उलटते चले जाओ, फारसी अरबी का लफ़्ज़ नहीं मिलता।" उर्दू के एक माननीय विद्वान् और भाषा-विद् तो हिन्दी को सनातन और प्रधान तथा उर्दू को आधुनिक और गौण बतलाएं और नवाब साहब को भरी काउन्सिल में यह कहने में तनिक भी संकोच न हो कि उर्दू भारत की राष्ट्र-भाषा है और हिन्दी कोई चीज ही नहीं है। यह बात नहीं है कि नवाब साहब को अपने घर की खबर न हो, उन्हें खबर है और पक्की खबर है; पर क्या करें, बिना उसे दबाए हिन्दी का गला जो अच्छी तरह नहीं घोटा जा सकता। अजी हजरत! यदि इधर दो तीन सौ बरसों से हिन्दू इतने अधिक अज्ञान न हो जाते और अपने पराए का कुछ भी ज्ञान उन्हें होता तो आज दिन उर्दू का कहीं नाम भी सुनने में न आता। लेकिन उन्होंने तो उदारता दिखलाई और "वसुधैव कुटुम्बकम्" वाली कहावत चरितार्थ की और उसीका फल भी आज उन्हें भोगना पड़ता है। इस समय कुछ मुसलमान हिन्दी का जितना विरोध करते हैं, यदि उर्दू के प्रारम्भिक काल में हिन्दू उसका दसवाँ भाग भी विरोध करते तो उर्दू की सृष्टि ही नहीं हो सकती थी; उर्दू के लिये हिन्दी की प्रतिद्वन्द्विता करना तो बहुत दूर की बात थी!

नवाब साहब का खण्डन क्या था मानों मिथ्या और अनर्गल बातों का भाण्डार था। लेकिन लोग कहते हैं कि झूठ के पैर नहीं होते; और इसी लिये कदाचित् एक ही दो मिनट के अन्दर नवाब साहब के मुँह से दो परस्पर विरुद्ध बातें निकल गईं। झूठ ठहर न सका और सत्य ने अपनी झलक दिखला ही दी। जब आपने कहा कि अँगरेजी शासन के आरम्भ में हिन्दी का कहीं नाम भी न था, उसके एक ही वाक्य के उपरान्त आपके मुँह से निकल गया कि मुसलमानों के राजत्व-काल में उर्दू का बहुत अधिक प्रचार देख कर कुछ हिन्दुओं ने हिन्दी नाम की एक नई भाषा का गढ़ना आरम्भ कर दिया! भला अँगरेजी शासन के आरम्भ से पीछे हट कर मुसलमानों के समय तक तो हिन्दी पहुँची! इसके उपरान्त हिन्दी और उसके पक्षपातियों के सम्बन्ध में जो कुछ आपके मुँह में आया वह सब आपने कह डाला, कोई कसर नहीं छोड़ी। कहा कि हिन्दी-वाले उर्दू की जड़ खोदना चाहते हैं और इसके लिये तरह तरह के उपाय रचते हैं; अगर सरकार उनकी चालाकियों को समझ न जाती तो अब तक उर्दू रसातल को पहुँच चुकी होती; उर्दू पर बराबर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दीवालों के आक्रमण होते रहे; हिन्दी की गढ़ाई लोग ऐसे ढङ्ग से करने लगे जिसे वे उसके अस्तित्व का पक्का प्रमाण सा समझते थे; यहाँ तक कि मनुष्य-गणना के समय उर्दू बोलनेवालों ने भी अपनी भाषा हिन्दी बतलाई; नागरी लिपि स्वयं लिखनेवालों से ही नहीं पढ़ी जाती; उसके लिखने में बहुत समय लगता है; चिन्तामणि के विचारवाले लोग हिन्दुओं और मुसलमानों में मेल नहीं होने देना चाहते; और नहीं तो इस प्रस्ताव के उपस्थित करने में उनका और क्या उद्देश्य है; दुनिया को दिखलाने के लिये तो व्याख्यानों आदि में मुसलमानों को अपना भाई बतलाया जाता है और जब भाई-चारे का काम पड़ता है तब उन्हें मारने को कटार निकाली जाती है; सारे भारत में उर्दू बोली और समझी जाती है पर हिन्दी बोलने और समझने-वाले बहुत ही थोड़े से वही लोग हैं जो उसे गढ़ रहे हैं; इत्यादि इत्यादि। धीरे धीरे अनर्गलता जोर पकड़ती गई और आप आपे से बाहर होते गए। राजनीतिक सुधारों का जिक्र करते हुए आप ने हिन्दुओं और मुसलमानों के पारस्परिक अवि-श्वास का भी उदाहरण दे डाला और इन सब खन्दकों-खाइयों को पार कर के आप कांगरेस तक जा पहुँचे। यदि आपका यह व्याख्यान किसी सार्वजनिक सभा में होता तो आपकी इतनी हँसी उड़ती, इतनी तालियाँ पिटतीं और इतना "हिश् हिश्" का शोर मचता कि आपको लज्जित होकर सभा-स्थल से हट जाना पड़ता; पर कुशल इतना ही था कि लाट साहब की काउन्सिल थी; इसलिये बचत हो गई। उप-सभापति महाशय ने इतना ही कह कर आपको रोक दिया कि आप विषय का अतिक्रमण कर रहे हैं। तब आप केवल इतना कह कर बैठ गए कि मैं इस प्रस्ताव का विरोध करता हूँ।

यदि नवाब साहब के कथन में दो ही चार बातें भ्रमपूर्ण अथवा युक्ति-रहित होतीं तो उनका उत्तर दिया जा सकता था; पर जहाँ सभी बातें ऐसी हों वहाँ क्या कहा जाय! दूसरे, नवाब साहब की प्रायः सभी बातें ऐसी हैं, जिन की असत्यता और अप्रामा-णिकता सब पर प्रकट है। इसलिये उनके विषय में मौन रहना ही सर्वोत्तम है। हाँ, एक बात हम अवश्य बतला देना चाहते हैं। नवाब साहब ने हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि को बहुत कठिन बतलाया है। इसलिये हम आप का ध्यान सुप्रसिद्ध विद्वान् स्वर्गीय डाक्टर सैय्यदअली बिलग्रामी की ओर आकर्षित करते हैं जिन्होंने एक बार साहस-पूर्वक मुक्त-कण्ठ से कह दिया था कि मुसलमानों के शिक्षा में पिछड़े रहने का कारण दोष-पूर्ण फारसी लिपि ही है जिसके सीखने के लिये विद्यार्थियों को व्यर्थ दो बरस गँवाने पड़ते हैं; पर नागरी अक्षर बहुत ही थोड़े समय में उत्तमता-पूर्वक सीखे जा सकते हैं। जो लोग यह जानना चाहते हों कि हिन्दी कठिन है या सहज, उन्हें उचित है कि उक्त दोनों वक्ताओं की योग्यता आदि का विचार कर के उन्हीं के कथनों से इसका निर्णय कर लें।

अब सरकार की ओर से इस प्रस्ताव का विरोध करने के लिये मि० बर्न उठे। आपने कहा,—मैं यही नहीं समझ सका कि इस प्रस्ताव के पास हो जाने से क्या लाभ होगा। मि० बर्न हमें क्षमा करें, इस प्रस्ताव का लाभ तभी समझ में आ सकता है जब कि धैर्य्यपूर्वक उस पर विचार किया जाय। क्या चिन्ता थी, यदि मि० चिन्तामणि ने अपने वक्तव्य में इस प्रस्ताव का कोई लाभ नहीं बतलाया; आप स्वयं समझ सकते थे कि इस प्रान्त के बहुत अधिक निवासी जो भाषा बोलते और जो लिपि लिखते हैं, उसका जानना व्यापार-कर्त्ताओं के लिये उपयोगी है या नहीं। इस अवसर पर हम अपनी ओर से कुछ अधिक न कह कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनिक भारतमित्र के कुछ वाक्य उद्धृत कर देना यथेष्ट समझते हैं।

"युक्तप्रदेश की सरकार के चीफ सेक्रेटरी मि० बर्न हिन्दी को किस दृष्टि से देखते हैं यह इतनी प्रसिद्ध बात है कि इसका उल्लेख व्यर्थ है। पर नवाब अब्दुलमजीद की तरह उनकी भूलें क्षन्तव्य नहीं हैं।

"मि० बर्न ने हाईकोर्ट के एक भारतीय जज का यह वक्तव्य पढ़ सुनाया कि युक्तप्रदेश के शिक्षितों को हिन्दी अक्षर पढ़ने में बड़ी कठिनाई होती है! मि० बर्न को यह समझना चाहिए कि यदि हाईकोर्ट का कोई जज दिन को रात कह दे तो भी लोग उसे रात न मानेंगे। हाईकोर्ट के जज की दुहाई देने से ही काम नहीं चल सकता। प्रश्न यह है कि जो लोग हिन्दी सीख चुके हैं उन्हें उसे पढ़ने में कठिनाई होती है या उन्हें जिन्होंने कभी उसका ककहरा भी नहीं पढ़ा। यदि हिन्दी न जाननेवाले हिन्दी नहीं पढ़ सकते, तो उसमें हिन्दी का क्या दोष है? क्या उर्दू अथवा संसार की कोई भाषा बिना सीखे भी कोई मनुष्य पढ़ सकता है? यदि हिन्दी अक्षर सीख कर कोई उसे न पढ़ सके तो अवश्य ही हिन्दी अक्षरों का दोष है, पर ऐसा नहीं होता। मि० बर्न ने कौन्सिल में उपस्थित वकीलों की दुहाई दे कर कहा कि जो हिन्दी अदालतों में आती है, उसे पढ़ने में उन लोगों को भी कठिनाई होती है। यह बात ठीक नहीं जान पड़ती। नागरी अक्षरों में लिखी हिन्दी के विषय में कोई सिद्ध नहीं कर सकता कि उसका जाननेवाला भी उसे नहीं पढ़ सकता। हम मि० बर्न को चैलेञ्ज देते हैं कि आप इसे सिद्ध करें। हाईकोर्ट के जज वा वकीलों की दुहाई देने से काम नहीं चल सकता। मि० बर्न का यह कथन सर्वथा निराधार है कि नागरी अक्षरों में लिखी हिन्दी पढ़ने में देर लगती है।"

दैनिक भा० मि० १३-३-१७

और सब बातों का अर्थ तो हमारी समझ में आ गया, पर मि० बर्न के इस कथन का अर्थ हमारी समझ में बिलकुल नहीं आया कि हिन्दी पढ़ने में देर लगती है। किसी भाषा के पढ़ने में देर लगने का तो कभी कोई अर्थ ही नहीं हो सकता। किसी लिपि के लिखने अथवा भाषा के सीखने में भले ही देर लग सकती हो, पर उसका जल्दी या देर में पढ़ा जाना केवल पढ़नेवाले की योग्यता पर निर्भर करता है, लिपि से तो उसका कोई सम्बन्ध ही नहीं है। जिसे जिस लिपि या भाषा का जितना ज्ञान है, उसके पढ़ने में उसे उतना ही समय लगता है। यदि किसी वकील को हिन्दी का बहुत ही थोड़ा अभ्यास हो और इस कारण वह उसे अटक अटक कर पढ़े तो इसमें बेचारी हिन्दी का क्या दोष? जिसे उर्दू का थोड़ा ज्ञान होगा वह उसे भी अटक अटक कर पढ़ेगा। हाँ, लिखने में देर लगने का आक्षेप अवश्य किया जा सकता है। सो लिखना भी बहुत से अंशों में अभ्यास से ही सम्बन्ध रखता है। सन् १८९८ में जब युक्तप्रदेश के तत्कालीन छोटे लाट सर जेम्स लाटूश काशी आए थे, तब सभा का एक डेपुटेशन उनके पास गया था। बातें करते समय सर जेम्स ने कहा कि हिन्दी उतनी शीघ्रता से नहीं लिखी जा सकती जितनी शीघ्रता से उर्दू लिखी जाती है। उस अवसर पर डेपुटेशन के एक मेम्बर स्वर्गीय महामहोपाध्याय पं० सुधाकर द्विवेदी ने तुरन्त उनके सामने ही हिन्दी के कुछ वाक्य इतनी शीघ्रता से लिख कर दिखला दिए जितनी शीघ्रता से कोई साधारण मुंशी उर्दू लिख सकता है। जल्दी लिखे जाने का सेहरा केवल उर्दू के सिर तो बँधा ही नहीं है, अभ्यास करने से सभी लिपियाँ जल्दी लिखी जा सकती हैं; अथवा यदि उसमें कुछ कठिनाई हो तो प्रयत्न कर के उसे शीघ्र लिखने के योग्य बनाया जा सकता है। तो भी हिन्दी का लिखना न तो उतना कठिन है और न उसमें इतना विलम्ब ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगता है। देवनागरी शीघ्र लिखने के सम्बन्ध में वृन्दावन के ५७ वर्ष के वृद्ध पं० राधाचरण गोस्वामी ने १७ मार्च के अभ्युदय में मि० बर्न के नाम एक चैलेंज छपवाया है जिसमें उन्होंने लिखा है कि मैं एक घन्टे में सौ श्लोक लिख सकता हूँ; और अपने आनरेरी मजिस्ट्रेट के पद का कुल काम हिन्दी में ही सरलतापूर्वक करता हूँ। काशी में प्रथम हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के अवसर पर सभापति पं० मदनमोहन मालवीय का व्याख्यान लिखने के लिये सभा ने लखनऊ के रीड्स क्रिश्चियन कालेज से उर्दू की संक्षेप-लिपि (शार्ट-हेण्ड) लिखनेवालों को बुलवाया था। पर वे लोग मुँह ही ताकते रह गए और बा० हरिकृष्ण जौहर ने सारा व्याख्यान बिना किसी प्रकार की संक्षेप लिपि की सहायता के ही नागरी में पूरा पूरा लिख डाला था। स्वयं इन पंक्तियों के लेखक ने बा० श्यामसुन्दरदास बी० ए० के दो व्याख्यान भाषण के समय ही बिना किसी प्रकार की संक्षेप लिपि की सहायता के अविकल लिखे हैं जिन में से एक फरवरी १९१६ की ना० प्र० पत्रिका में और दूसरा जनवरी फरवरी १९१७ की पत्रिका में प्रकाशित हुआ है। यदि मि० बर्न या काउन्सिल के और कोई मेम्बर महाशय यह जानना चाहते हों कि हिन्दी कहाँ तक शीघ्रता से लिखी जा सकती है तो वे इन पंक्तियों के लेखक को काउन्सिल में बुलाएं और उसके सामने तेज से तेज बोलनेवाले का व्याख्यान उर्दू या हिन्दी में कराएं, वह उसे अक्षरशः लिखने के लिये तैय्यार है। हिन्दी के शीघ्र लिखे जाने का इससे अच्छा और कोई प्रमाण नहीं हो सकता।

मि० बर्न के उपरान्त सैय्यद रजा अली ने इस प्रस्ताव में एक परिवर्त्तन कराना चाहा। आपने कहा कि "देवनागरी लिपि में हिन्दी" के बदले "फ्रेंच, रशियन, इटालियन और फारसी" कर दिया जाय! विरोध हो तो ऐसा हो! वैमनस्य हो तो ऐसा हो! फ्रान्सीसी, रूसी ही नहीं आप जंगलियों तक की भाषा सीखने के लिये तैयार हो सकते हैं; पर देवनागरी लिपि और हिन्दी सीखने के लिये कभी तैयार नहीं हो सकते। पंजाबी मसल का अभिप्राय है—"हमारे सम्मान की दीवार अवश्य गिरे, चाहे हम स्वयं ही उसके नीचे क्यों न दब जायँ।" देवनागरी और हिन्दी का नाश अवश्य हो, चाहे हमें कितनी ही कठिनाइयाँ क्यों न सहनी पड़ें। जिन नवाब अब्दुलमजीद ने कहा था कि हिन्दू अवसर पड़ने पर मुसलमानों को मारने के लिये कटार निकालते हैं, वे ज़रा आँखें खोल कर देखें कि उनके भाई मुसलमान ने हिन्दुओं की प्राणप्रिय देवनागरी और हिन्दी का सिर काटने के लिये खाँड़ा खींचा है या नहीं। मि० रजाअली की भी अनर्गलता देवी ने इतना अधिकार जमा लिया कि सभापति महाशय को उन्हें कई बार टोकना पड़ा और अन्त में बैठा ही देना पड़ा।

नवाब मुजम्मिल-उल्लाह खाँ ने बड़ी कृपा की इतना ही कह कर रह गए कि ऐसे प्रश्न उपस्थित करने के लिये यह उपयुक्त समय नहीं था। तो भी आपके व्याख्यान से यह भ्रमात्मक ध्वनि अवश्य निकलती है कि यह विषय बहुत विवादपूर्ण है।

इसके बाद पं० तारादत्त गैरोला उठे जिन्होंने कहा कि इस विषय पर शान्ति-पूर्वक और धार्मिक मत-भेद का ध्यान छोड़ कर विचार करना चाहिये। आपने स्वयं अपने अनुभव से बतलाया कि कचहरी की अदालतों में काम करनेवाले कई मुसलमान और अँगरेज सज्जनों ने एक ही महीने में अच्छी तरह नागरी पढ़ना सीख लिया है और वहाँ के बहुत से मुसलमान अफ़सर कमाऊँवालों से भी कहीं अच्छी नागरी जानते हैं। मिस्टर बर्न के कथन का खण्डन करते हुए आपने यह भी कहा कि नागरी की अपेक्षा उर्दू पढ़ने में ही अधिक कठिनाई होती है। उन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह भी कहा कि यदि मुसलमानों को उर्दू से प्रेम है तो हिन्दी से प्रेम करने के कारण मि० रजाअली उन्हें कभी दोषी नहीं ठहरा सकते। मुसलमान मेम्बर इतने गरमा गए थे कि लाला सुखवीरसिंह को भी उन्हें यही सम्मति देनी पड़ी कि इस विषय पर मित्र-भाव से विचार कीजिए; और इस प्रस्ताव से हिन्दू-मुसलमान के झगड़े का कोई सम्बन्ध नहीं है। पं० राधाकृष्णदास ने भी प्रस्ताव का समर्थन करते हुए यही बात कही कि इसमें मुसलमानों के क्रुद्ध होने का कोई कारण नहीं है। यदि नवाब अब्दुलमजीद तथा और मेम्बरों के कथनानुसार हिन्दी का नाम लेने से मुसलमानों का जी दुखता हो तो उर्दू के नाम से तो हिन्दुओं का और भी जी दुखना चाहिए। यदि इस प्रान्त में नागरी और हिन्दी जानने-वालों की संख्या अधिक हो तो न्याय यही कहता है कि यह प्रस्ताव स्वीकृत हो। यह कहना कि "हिन्दी कोई भाषा ही नहीं है" बड़ा भारी दुस्साहस है। इसी जमाने में हिन्दू ही नहीं बल्कि मुसलमान भी हिन्दी सीखना उचित समझते थे। यदि मुसलमानों को अपनी भाषा का इतना ध्यान हो तो हिन्दुओं का भाषा-प्रेम देख कर उन्हें कभी नाराज न होना चाहिए। अंत में आपने कहा कि हिन्दी बहुत ही थोड़े समय में भली भाँति सीखी जा सकती है और उर्दू सीखने में बरसों लग जाते हैं।

खां बहादुर सैय्यद आले नबी ने भी इस प्रश्न को विवादात्मक ही बतलाया और सैय्यद वजीरहसन ने कहा कि इस प्रस्ताव के स्वीकृत होने से कोई लाभ नहीं हो सकता। इसके बाद सब का उत्तर देने के लिये मि० चिन्तामणि उठे। आपने कहा कि इस विवाद में बहुत सी बातें तो ऐसी ही कही गई हैं जिनका इस प्रस्ताव से कोई सम्बन्ध ही नहीं है। हाँ, चीफ सेक्रेटरी मि० बर्न की कुछ बातें अवश्य विचारणीय हो सकती हैं। पर सबसे सीधी बात तो यह है कि जब तक सरकारी नियमों में नागरी और हिन्दी का अस्तित्व स्वीकार किया जाता है और जब तक दूसरे सरकारी विभागों के कर्मचारियों के लिये हिन्दी और देवनागरी जानना आवश्यक है तब तक यह बात कभी गम्भीरतापूर्वक कही ही नहीं जा सकती कि न्याय-विभाग के कर्मचारियों के लिये हिन्दी या देवनागरी जानना आवश्यक नहीं है; और विशेषतः ऐसी दशा में जब कि लोगों को नागरी में कागज आदि न्यायालय में उपस्थित करने का अधिकार है। यदि नागरी में लिखे हुए कागज पढ़ने में देर लगती है तो और लिपियों में लिखे हुए कागजों के पढ़ने में भी देर लगती है। और इस देर का कारण केवल बुरी लिखावट ही हो सकती है। इसके बाद आपने मि० बर्न के कुछ आक्षेपों का उत्तर देकर कहा कि मेरी समझ में नहीं आता कि लोग मेरे प्रस्ताव और भाषण पर इतने गरमा क्यों हो गए। अब यदि मैं इस प्रस्ताव को लौटा भी लूँ तो उसका कारण यह नहीं होगा कि उसमें कोई बात आपत्ति-जनक या विरोध उत्पन्न करनेवाली है, बल्कि केवल इसी लिये कि लोग गरम हो गए हैं।

इसके उपरान्त वोट लिए गए; इसके विपक्ष में अधिक सम्मतियाँ आईं और इसलिये प्रस्ताव रह गया।

हमें इस बात का तनिक भी दुःख नहीं है कि यह प्रस्ताव पास न हो सका। यदि दुःख है तो केवल इसी बात का कि सन् १९१७ में भी ऐसे गैरे मुसलमान नहीं बल्कि काउन्सिल के मेम्बर ऐसे मुसलमान भी हैं जो केवल अपने स्वार्थ के लिये और पक्षपातवश दूसरों पर वृथा दोष लगाते हैं और रस्सी को साँप सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं। वास्तव में जो दोष उन लोगों ने हिन्दुओं और देव-नागरी के पक्षपातियों पर लगाए हैं, वे सब दोष स्वयं उनमें तथा उर्दू के पक्षपातियों में ही हैं। उर्दू-वाले ही हिन्दी की जड़ काटते हैं. हिन्दीवाले उर्दू की नहीं। भाषा के विषय में भी यही बात है। भाषा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वास्तव में हिन्दी ही है; उर्दू कोई भाषा नहीं है। जैसा कि लखनऊ के सम्मेलन के अवसर पर स्वर्गीय राय देवीप्रसादजी पूर्ण ने कहा था, भाषा का मुख्य चिह्न क्रिया है और उर्दू में स्वयं अपनी कौन कहे अरबी और फारसी की भी कोई क्रिया नहीं है। क्रियाएं सब हिन्दी की ही हैं; केवल अरबी और फारसी की संज्ञाएं उसमें अधिक हैं। पर किसी भाषा का स्वतंत्र अस्तित्व संज्ञाओं के आधार पर कभी नहीं हो सकता; जब होगा तब क्रियाओं के आधार पर ही होगा; और उर्दू में निज की क्रियाएँ नहीं है इससे वह कदापि स्वतंत्र भाषा सिद्ध नहीं हो सकती। कदाचित् संसार की भाषाओं में उर्दू का ही एक ऐसा अनोखा उदाहरण है जिसे कुछ लोग केवल संज्ञाओं के आधार पर ही एक स्वतंत्र भाषा कहने का दुस्साहस करते हैं। हम इसी बात से बहुत प्रसन्न हैं कि भला काउन्सिल में हिन्दी का पक्ष ले कर कुछ कहनेवाले लोग तो निकलने लगे। श्रीयुक्त चिन्तामणि, पं० तारादत्त, लाला सुखवीर-सिंह और पं० राधाकृष्णजी का हम हृदय से अभिनन्दन करते और उन्हें धन्यवाद देते हैं क्योंकि काउन्सल में निर्भयतापूर्वक उन्होंने अपने कर्त्तव्य का पालन किया है। न्याय-विभाग के थोड़े से कर्मचारियों के हिन्दी सीखने और न सीखने से, कम से कम प्रचार के सम्बन्ध में, हिन्दी का कुछ होता जाता नहीं। हिन्दी-का स्रोत आप ही वेग-पूर्वक बह रहा है, वह अब किसी के रोके नहीं रुकता। हाँ, मातृ-भाषा का अभिमान रखनेवाले सर्वसाधारण तथा वकीलों आदि से हम इतनी प्रार्थना अवश्य करते हैं कि वे अदालती कामों में जहाँ तक हो सके देवनागरी का ही व्यवहार करें। काउन्सिल में इस प्रस्ताव के स्वीकृत न होने का आनन्द तो तभी है जब कि देवनागरी में लिखे हुए अदालती कागजों की भरमार देख कर, बिना किसी के प्रस्ताव के, स्वयं सरकार को ही यह नियम बनाना पड़े कि न्याय-विभाग के कर्मचारियों के लिये हिन्दी और देवनागरी जानना भी परम आवश्यक है। हमें अपने कर्त्तव्य में दृढ़तापूर्वक लगे रहना चाहिए; कार्य्य-सिद्धि अवश्य होगी।

कोलम्बस की जलयात्रा।

(गतांक से आगे)

[लेखक, पं० हरिशंकरप्रसाद उपाध्याय, काशी।]

उस समय के नियमानुसार कोलम्बस के लिये यह आवश्यक था कि वह ईसाई धर्म के प्रधान आचार्य्य से, जिसको पोप कहते थे और जो इटली देश के रोम नगर में रहते थे, एक आज्ञापत्र अपने ढूँढे हुए प्रदेश के अधिकार के लिये प्राप्त करता। कोलम्बस ने पोप से इस आज्ञापत्र के लिये प्रार्थना की और पोप ने एक आज्ञापत्र अपने हस्ताक्षर से उसको दे भी दिया जिसके अनुसार अजोर्स (Azores) नामक द्वीप के दक्षिण की समस्त भूमि का अधिकार उसको मिल गया। परन्तु इस द्वीप के पूर्व भाग में जो भूमि थी और जिसका पता कोलम्बस ने लगाया था वह सब पुर्त्तगालवालों के अधिकार में थी।

अब राजा फरडिनेण्ड को भी यह सब बातें देख कर निश्चय हो गया कि कोलम्बस की बातें केवल कपोल-कल्पित ही न थीं बल्कि उनमें तथ्य भी था। इस हेतु फरडिनेण्ड ने आज्ञा दी कि कोलम्बस अपनी यात्रा में एक बार फिर उद्योग करे; और इसके निमित्त राजा की आज्ञा से सन् १४९३ ई० में जहाजों का एक बेड़ा ठीक किया गया जो कोलम्बस को इस कार्य्य में सहायता देने के लिये था। यह सब देख कर पुर्त्तगाल के राजा के चित्त में ईर्ष्या उत्पन्न हुई और उसको ज्ञात हुआ कि पहले जो उसने कोलम्बस की यात्रा की सफलता के विषय में सन्देह किया था उसके कारण पुर्त्तगाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राज्य की कितनी हानि हुई। यह विचार कर उसने उद्योग किया कि स्पेन के राजा के साथ किसी प्रकार से वह कुछ प्रतिबन्ध कर ले जिसमें उस देश में जो लाभ हो उसमें से वह भी कुछ भाग पाये। इसलिये इन दोनों में परस्पर बहुत सी बातें तैं हुईं जिनमें से अधिकांश ऐसी थीं जिनका पालन ईमानदारी के साथ नहीं किया गया। दोनों ही ओर से चालाकी की गई थी और दूसरे की हानि करके स्वयं लाभ उठाने का उद्योग किया गया था। इस विषय के अधिक विवरण की यहाँ अवश्यकता नहीं है। परन्तु, इस पारस्परिक ईर्ष्या और कपट का परिणाम यह हुआ कि स्पेन के राजा ने कोलम्बस से आग्रह किया कि वह शीघ्र ही प्रस्थान करे। कोलम्बस तो इस बात के लिये तैयार ही था; उसको इस आज्ञा के मानने में किसी प्रकार का संकोच नहीं हुआ।

इस समय जो तैयारी कोलम्बस कर सका था वह पहले से कहीं अधिक थी। सन् १४९२ ई० में जब वह पहली बार पेलास (Palos) नगर से चला था तब उसके साथ केवल तीन छोटे छोटे जहाज थे। अबकी बार उसके साथ सत्रह छोटे और बड़े जहाजों का बेड़ा था और इन सब जहाजों पर अनेक चतुर कारीगर और व्यवसायी मनुष्य थे जिनको उस नई भूमि पर बसाने का विचार था। इसके अतिरिक्त अनेक प्रकार के घरेलू पालतू पशु और गौएं-भैंसे भी कोलम्बस अपने साथ ले गया। भिन्न भिन्न प्रकार के बीज, पौधे और वृक्षों की कलमें भी इस बार इस नए प्रदेश में ले जाने के लिये कोलम्बस ने अपने साथ ले ली थीं; क्योंकि उसका विचार था कि वहाँ की उपजाऊ भूमि में इन सब को लगाया जाय। पूर्व की यात्रा से एक विशेष बात इस बार यह थी कि कोलम्बस के साथ जाने के लिये न केवल अनेक नाविक ही बल्कि सर्वसाधारण में से भी कितने ही मनुष्य तैयार हो गए थे। वास्तव में जितने लोगों से कोलम्बस ने अपने साथ चलने के लिये कहा था उनसे बहुत अधिक लोग आपसे आप ही उसके साथ चलने के लिये तैयार हो गए थे। कारण यह था कि स्पेन देश-वासियों में इस नवीन देश के उपजाऊ होने तथा वहाँ अनेक प्रकार से धन-उपार्जन की सुगमताओं की बहुत चर्चा फैल रही थी। कोलम्बस के साथ के लौटे हुए नाविक जो पहली यात्रा में उस नए महाद्वीप को देख आए थे, इसके विषय में कुछ बढ़ा कर भी अद्भुत कथाएं अपने देश-वासियों से कहते थे और इस कारण सब ही लोगों में वहाँ जा कर लाभ उठाने का अत्यन्त उत्साह उत्पन्न हो गया था।

२५ सितम्बर सन् १४९३ ई० को कोलम्बस अपनी इस द्वितीय यात्रा के लिये चला। जिस स्थान से यह बेड़ा रवाना हुआ वह स्पेन देश का केडिज़ (Cadiz) नाम का बन्दर था। इस बन्दर से कोलम्बस को विदा करने के लिये बहुत से लोग एकत्र हुए थे। कोलम्बस के साथ जानेवाले लोगों को तथा स्वयं उसको सब ने अत्यन्त आदरपूर्वक बिदा किया और ईश्वर से प्रार्थना की कि वह उनकी यात्रा सफल करे। परन्तु इसके साथ ही यात्रा करनेवाले लोगों के साथ सब को एक प्रकार की ईर्ष्या थी। ईर्ष्या इसलिये कि सब लोग समझते थे कि उनको अधिक आर्थिक लाभ होगा। अबकी बार कोलम्बस पूर्व की राह से नहीं गया, कुछ अधिक दक्षिण की ओर का पथ उसने ग्रहण किया। उसका अनुमान था कि इस ओर से जाने से उसको कदाचित् वे सब प्रदेश भी मिल जायँगे जिनके विषय में नवीन महाद्वीप निवासी कहते थे कि वहाँ सोने की बहुत सी खानें हैं।

एक पक्ष तक यात्रा करने के उपरान्त दो नवम्बर को कोलम्बस को यह मालूम पड़ा कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब वह किसी भूमि के समीप पहुँच रहा है। कोलम्बस को यात्रा करते करते इतना अनुभव हो गया था कि समुद्र का रङ्ग देखकर और वायु की विशेष अवस्था से उसको भूमि के समीप होने का अनुमान हो जाता था। इस अनुभव के अनुसार कोलम्बस ने अपने नाविकों को आज्ञा दी कि रात्रि के समय वे सावधान रहें। प्रातःकाल होते होते भूमि दिखलाई पड़ी और कोलम्बस डोमिनका द्वीप (Dominica) में पहुँचा। जिस दिन कोलम्बस इस नए द्वीप में उतरा उस दिन रविवार था। कोलम्बस और उसके सब साथी जहाज से उतर कर इस द्वीप में इधर उधर भ्रमण करने लगे। नाविकों और कारीगरों की प्रसन्नता बढ़ गई थी; क्योंकि उन्होंने देखा कि इस द्वीप से मिले हुए और भी अनेक द्वीप हैं।

वास्तव में कोलम्बस को जो यह द्वीपों का पुंज मिला था वह वही था जिसको इस समय लेसर आनटाइलस् (Lesser Antilles) कहते हैं। यह द्वीप-पुंज दक्षिण अमेरिका के उत्तर की ओर और केरबियन समुद्र तथा एटलानिटिक (Atlantic) महासागर के मध्य में है। डोमिनिका में जहाजों का लंगर डालने के लिये कोई उत्तम स्थान न मिला इसलिये कोलम्बस वहाँ से चल कर दूसरे द्वीप में पहुँचा जिसका नाम उसने मेरी गेलानटी (Mari Galanti) रक्खा। यहाँ से वह उससे मिले हुए दूसरे द्वीप में गया जिसका नाम उसने ग्वाडालोप (Guadaloupe) रक्खा। कोलम्बस अपने जहाज को वहीं ठहरा कर उतर पड़ा और कुछ लोगों को साथ ले कर द्वीप में गया। कुछ दूर चल कर उसको वहाँ के निवासियों के छोटे छोटे घर मिले जिनमें रहनेवाले युवा और वृद्ध, स्त्री और पुरुष, सब ही कोलम्बस और उसके साथियों को देख कर अपने बच्चों तक को छोड़ कर भागे। कोलम्बस ने उन बच्चों को झूठे गहने और खेलौने इत्यादि दिखा कर बहलाया और गोद में उठा लिया। परन्तु कोलम्बस के किसी उपाय से भागे हुए द्वीपवासी नहीं लौटे, क्योंकि वे स्पेन-निवासियों को देख कर अत्यन्त भयभीत हो गए थे। इसमें सन्देह नहीं है कि लौट कर उन्होंने अपने बच्चों के पास नए प्रकार के गहने तथा खेलौने देखे होंगे तो उनके चित्त का उद्वेग और भी बढ़ गया होगा। अस्तु, कोलम्बस और उसके साथियों ने द्वीप में अनेक प्रकार के विचित्र दृश्य देखे। कई अद्भुत प्रकार के बाण और धनुष उन्हें दिखलाई पड़े और कई प्रकार के फल इत्यादि भी उन्हें मिले जिन्हें कोलम्बस और उनके साथियों ने चखा और बड़ा आनन्द पाया। परन्तु इन सब के साथ ही उनको मनुष्य की खोपड़ियाँ और हड्डियाँ भी दिखलाई पड़ीं जिससे स्पष्ट रीति से विदित होता था कि ये सब द्वीप-निवासी नरमांस-भक्षक हैं। इस सन्देह को मिटाने के लिये कोलम्बस को बहुत परिश्रम नहीं करना पड़ा क्योंकि उसी द्वीप से मिले हुए दूसरे द्वीप में कुछ दूर पर उसको कुछ वृद्ध स्त्रियाँ और बालक मिले जिनको धमका कर इशारों से उसने पूछ लिया और उसे पता लग गया कि इस द्वीप के निवासी मनुष्यों को मार कर खा जाते हैं। इसके साथ ही यह दुर्घटना भी हुई कि कोलम्बस के साथियों में से डिगो मार्क (Diego Marque) नाम का एक मनुष्य कुछ और लोगों को साथ ले कर उस द्वीप में एक ओर निकल गया था और वह सन्ध्या तक न लौटा। कोलम्बस ने उसको ढूँढ़ने के लिये इधर उधर मनुष्यों को भेजा पर कुछ पता न लगा। जब दूसरे दिन प्रातःकाल भी डिगो मार्क इत्यादि न लौटे और न बहुत परिश्रम से खोजने पर भी उनका कहीं कुछ चिह्न मिला तब कोलम्बस को निश्चय हो गया कि उसका सन्देह अनुचित न था और इस द्वीप के वासी अवश्य मनुष्यों का मांस खानेवाले हैं। ऐसा विदित होता था कि द्वीप में केवल स्त्रियाँ ही स्त्रियाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थीं; पुरुष सब इधर उधर शिकार के लिये चले गए थे; जो मनुष्य उन्हें मिलता उसको पकड़ कर वे बन्दी कर लेते थे। यह सब समाचार कोलम्बस को दूसरे द्वीप की स्त्रियों से मिला जो वहाँ पकड़ कर आई थीं और जिन्होंने कोलम्बस से प्रार्थना की कि हमको भी जहाज़ पर लेते चलो। कोलम्बस की यह इच्छा न थी कि अपने खोए हुए साथियों को छोड़ कर वह उस द्वीप से प्रस्थान करे; इसलिये उसको आगा पीछा हो रहा था और वह निश्चय न कर सकता था कि क्या करे। इस अवसर पर उसके साथियों में से राजकुल के एक मनुष्य ने जिसका नाम डौनएलोनज़ोडीओजेडा था (Don Alonzode Ojeda) और जो विशिष्ट रूप से उसके साथ कर दिया गया था, बड़ी वीरता से और उत्साह पूर्वक यह भार अपने ऊपर लिया कि मैं उन खोए हुए मनुष्यों को ढूँढ़ निकालूँगा। और इस कार्य्य के लिये कुछ लोगों को साथ ले कर वह द्वीप में चारों ओर भ्रमण करने लगा।

ओजेडा के साथ चालीस मनुष्य थे। इस द्वीप के घने जङ्गल में जिसमें प्रवेश करना कठिन था, बड़े साहस के साथ रास्ता बना कर जहाँ तहाँ उसने और उसके साथियों ने उन खोए हुए मनुष्यों को बहुत कुछ ढूँढ़ा परन्तु कुछ भी पता न चला। तब लाचार हो कर वे सब कोलम्बस के पास फिर लौट आए। इसी बीच में जब कि ओजेडा इत्यादि लोगों को ढूँढ़ने गए थे, कोलम्बस ने जहाज़ पर पीने का पानी द्वीप से मँगा कर भर लिया था; ओजेडा के लौटते ही उसने लंगर उठाने का विचार किया क्योंकि उसको शीघ्र हिस्पानेलिया नामक द्वीप में पहुँचना था। परन्तु ज्यों ही कोलम्बस लंगर उठा कर चलने को था त्यों ही उसके खोए हुए सब साथी भी लौट आए। उन लोगों ने कहा कि घने जङ्गल में जा कर हम सब रास्ता भूल गए थे और कहीं लौटने के लिये पथ नहीं मिलता था। वे कहते थे कि जङ्गल इतना घना था कि उसके कारण वे आकाश पर के तारे भी नहीं देख सकते थे। यह भी भय उत्पन्न हुआ कि सब लोग हमको अवश्य छोड़ कर चले जायँगे और इसी द्वीप में इधर उधर भटक कर हमें प्राण देने पड़ेंगे। कोलम्बस को उनके लौट आने से अत्यन्त हर्ष हुआ और उसने कहा कि यद्यपि प्रस्थान के लिये मैं तत्पर ही था और बिना तुम लोगों के आए भी मैं चला ही जाता परन्तु तुम लोगों के बिना मुझे बहुत कठिनता होती। अब तुम लोगों के लौट आने से सब काम ठीक हो गया।

अब कोलम्बस आगे बढ़ा और इस स्थान से चलकर करेबियन नाम के अनेक द्वीपों के चारों ओर भ्रमण करने लगा। उसने जो जो नए द्वीप अथवा स्थल देखे उनके नाम भी वह रखता चला गया। चौदह नवम्बर को एक नए द्वीप में कोलम्बस पहुँचा जिसका नाम उसने सैन्टाक्रूज (Santa Cruz) रक्खा। इस द्वीप में कोलम्बस उतर पड़ा। वहाँ पर उसने कुछ स्त्रियों और बालकों को पकड़ा; उसी जाति के और भी बालक तथा स्त्रियाँ उसको वहाँ मिलीं। कोलम्बस के कुछ साथी दो एक नावों में इधर उधर भ्रमण कर रहे थे; उनको एक प्रकार की नाव पर सवार उस देश के कुछ निवासी दिखलाई पड़े। इस नाव में वहाँ के जो निवासी सवार थे वे सब कोलम्बस के साथियों को देख कर भागने लगे। और पूर्ण रीति से उन्होंने यह बात प्रकट की कि हम लोग किसी प्रकार से अपने आपको न पकड़ावेंगे। यद्यपि बड़े क्रोध और बलपूर्वक यह चेष्टा की गई थी पर कोलम्बस के साथियों ने अंत में द्वीप-वासियों को पकड़ ही लिया।

यहाँ से फिर कोलम्बस करेबियन समुद्र में और इधर उधर इसलिये फिरने लगा कि कोई और नई भूमि मिले तो उसको अपने अधिकार में कर लूँ। पर जब उसको अन्य कोई भूमि न मिली तब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह उसी समुद्र में अपने पुराने हिस्पानियोला (Hislaniopa) नाम के द्वीप में जा कर अपने साथियों सहित उतर पड़ा । इस द्वीप में पहुँच कर सभी यात्रियों को बड़ी खुशी हुई। परन्तु उनका चित्त इस कारण दुःखी भी हो गया कि उस द्वीप में उनको कुछ लाशें भी नजर आईं जिनमें से एक दो गोरे आदमियों की थीं।

कोलम्बस का सन्देह और भय अनुचित न था; क्योंकि जो घटनाएँ आगे चल कर हुईं उनसे उन्हें बहुत ही कष्ट पहुँचा। कोलम्बस ने द्वीप में उतर कर तोप की सलामी कराई परन्तु इतने पर भी कोई स्पेन-निवासी वहाँ न आया। जो लोग दिखलाई पड़े वे केवल वहीं के कुछ साधारण देशी थे जो इधर उधर वृक्षों की आड़ में छिप कर खड़े हुए थे। यह घटना ला नेविडाड (La Navidad) नामक द्वीप पर पचीस नवम्बर की सन्ध्या को हुई।

जो छोटा सा किला कोलम्बस ने पहले वहाँ बनवाया था उसका भी निशान तक वहाँ न बच गया था। उसको वहाँ के निवासियों ने बिलकुल जला कर राख कर दिया था। कोलम्बस को आशा थी कि जिन स्पेन-निवासियों को वह वहाँ बसा गया था, उनसे वहाँ भेट होगी। और जिस खजाने की कोलम्बस को बड़ी आशा थी कि उन लोगों ने वहाँ इकट्ठा कर लिया होगा और मुझको मिलेगा, उसका भी वहाँ नाम तक न था। खजाने के बदले उसको कई कबरें वहाँ अवश्य दिखलाई पड़ीं।

द्वीप के निवासियों से कोलम्बस ने वहाँ का जो वृत्तान्त सुना वह अत्यन्त शोकजनक था । उस वृत्तान्त में जो कुछ समाधानकारक बात थी वह केवल यह थी कि यह भयानक घटना देशियों के कारण नहीं हुई थी बल्कि वास्तव में जिस कारण से यह हुई थी उसका प्रभाव देशियों पर भी पड़ा था। जिन स्पेनियों को कोलम्बस पूर्व की यात्रा में वहाँ आबाद कर गया था खुद उनकी करतूत से ही यह घटना हुई थी। ऐसा मालूम हुआ कि इन विदेशियों ने वहाँ बड़ा अत्याचार करना आरम्भ कर दिया था। अनेक प्रकार के दुराचार, व्यापार में बेईमानी, लाभ के लिये अत्यन्त लोभ, अनुचित और अनेक प्रकार के धर्म-विरुद्ध व्यवहार आदि उन लोगों ने आरम्भ कर दिए थे। और इसी कारण यह सब विपत्तियाँ उन पर पड़ी थीं। एक निकटवर्त्ती देशियों दल के सरदार ने इन सब उपद्रवों से लाभ उठाया। इन कारणों से वहाँ के स्पेनियों में फूट उत्पन्न हो गई थी जिसके कारण वे विभक्त हो गए थे। उस सरदार ने उन लोगों पर चढ़ाई की और सहज में उनको जीत लिया। किला जो कोलम्बस ने बनाया था उसने उसे जला दिया और स्पेनियों को प्रायः मार डाला।

(शेष आगे)

एक बंगाली मुसलमान की हिन्दी

"काउन्सिल में नागरी" शीर्षक लेख के लिखे जाने के कई दिन बाद सभा के कार्य्यालय में कूचबिहार की साहित्य-सभा के मंत्री श्रीयुत अमानतउल्ला अहमद खाँ चौधरी का देवनागरी लिपि और हिन्दी भाषा में एक पत्र आया जिसकी अविकल प्रतिलिपि यह है—

१० चैत
ई० २३ मार्च १९१७
शुक्रवार
कोचबिहार राजधानी।

परम माननीय श्रीयुक्त मन्त्री महाशय "नागरी प्रचारिणी सभा समीपेषु—काशी ।

परमसम्मानास्पदेषु । सविनयनिवेदनमिदम्—

हमारी विज्ञप्ति यह है कोचबिहार-राज्याधीश्वर परम माननीय श्री श्री महाराज भूप बहादुर के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभिभावकता में प्राय वत्सराधिक काल यह राज-धानी में "कोचबिहार साहित्य सभा" स्थापित हुई है। साहित्य सभा का उद्देश्य भारतवर्षीय प्राचीन और नवीन साहित्य व ज्ञान विज्ञानों का महिमा प्रचार और उसकी उन्नति विधान करना। आपकी श्रीमती नागरीप्रचारिणी सभा का उद्देश्य भी यह है। आपकी श्रीमती सभा हिन्दी भाषा और देव-नागरी लिपि का प्रचार में जो यत्न करती हैं उसकी तुलना भारत में नहीं है।

हमारी यह बालिका सभा "नागरीप्रचारिणी" की बड़ी बहन बुभ्र के और मान के उनके साथ आत्मीयता सम्बन्ध स्थापन करना चाहती है। मेरी प्रार्थना यह है कि आपकी सभा "कोचबिहार साहित्य सभा" को निज अन्तरङ्ग सखी बोल के ग्रहण करें—और उनकी प्रकाशित पत्रिका और पुस्तिकाएँ परिवर्त्तन में दें। हमारी सभा श्रीमती नागरीप्रचारिणी को तुल्य सम्बन्ध में ग्रहण करेगी और हमारी पत्रिका "परिचारिका" (मासिक) और पुस्तिकाएँ बराबर भेजते रहेगी।

हमारा यह प्रस्ताव में श्रीमती नागरीप्रचारिणी सभा की सम्मति अवश्य ही होगी यह आशा हम करते हैं और यह मित्रता स्थापन के लिये आपको हम सानुरोध यह प्रार्थना करते हैं कि आप इससे उपयुक्त ध्यान देकर यह आशा सफल करें।

आपकी सम्मति मिलने पर मैं सभा की पत्रिका और वार्षिकी कार्य्यविवरणी भेजूँगा निवेदमिति।

शेष प्रार्थना यह है कि हमारी यह हिन्दी लिपि में जो त्रुटियाँ हुई वह आप कृपया क्षमा करें।

आपका कृपाभिलाषी—
श्री अमानतउल्ला आहाम्मद
(ख़ान चौधरी)
मन्त्री कोचबिहार साहित्य सभा
कोचबिहार।

इस प्रान्त के जो मुसलमान सज्जन यह कहा करते हैं कि मुसलमानों का काम बिना उर्दू के चल ही नहीं सकता, वे देखें कि बङ्गाल के एक मुसल-मान सज्जन ने उर्दू के बिना अपना काम कितनी उत्तमतापूर्वक चलाया है। केवल पंजाब और युक्त प्रान्त को छोड़ कर बङ्गाल, गुजरात, मध्यप्रदेश, तथा दक्षिण आदि सभी प्रान्तों के मुसलमानों का काम इसी प्रकार बिना उर्दू की सहायता के बहुत अच्छी तरह चला करता है। जो उर्दू-प्रेमी उर्दू को (Lingua Franca) कहते और समस्त भारत में उसके प्रचार का स्वप्न देखते हैं वे बतलाएं कि क्या बङ्गाल, गुजरात और महाराष्ट्र के मुसलमानों में वे कभी उर्दू का प्रचार करने में समर्थ हो सकते हैं? हम जोर देकर कह सकते हैं—कभी नहीं। उक्त सब प्रान्तों के निवासी अपने अपने प्रान्त की लिपि और भाषा का ही व्यवहार करते हैं; और उन प्रान्तों की लिपियाँ देवनागरी लिपि का ही रूपान्तर मात्र हैं। और उनकी भाषाएँ भी हिन्दी ही की तरह संस्कृत मिश्रित हैं। ऐसी दशा में यह आशा करना कि महाराष्ट्र, गुजरात या बङ्गाल आदि के मुसलमान अपनी मातृभाषा की जातीय भाषा हिन्दी और अपने देश की प्रधान लिपि से बहुत कुछ मिलती जुलती लिपि देवनागरी को छोड़ कर उर्दू भाषा और अरबी लिपि ग्रहण करेंगे, मृगतृष्णा के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। पंजाबी मुसलमानों के उर्दू-प्रेमी होने का कारण केवल यही है कि पंजाबी भाषा और गुरुमुखी लिपि में पुष्ट साहित्य नहीं है, नहीं तो वे लोग भी हिन्दी और देवनागरी को ही उर्दू की अपेक्षा अधिक उत्तम समझते और उन्हीं को ग्रहण करने के लिये तैयार होते। हठ-धर्म्मों की बात दूसरी है; और नहीं तो यदि पक्षपात छोड़कर उर्दू-प्रेमी विचार करें तो उन्हें मालूम होगा कि उर्दू भाषा और अरबी लिपि के प्रचार की अपेक्षा हिन्दी-भाषा और देवनागरी लिपि के ही प्रचार की बहुत अधिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्भावना है, क्योंकि सर्वसाधारण का सुभीता इसी भाषा और लिपि के ग्रहण करने में है।

—:०:—

सभा का एक विशेष अधिवेशन ।

गत ५ अप्रेल १९१७ की सन्ध्या के ५॥ बजे काशी नागरीप्रचारिणी सभा का एक विशेष अधिवेशन सभाभवन में, श्रीयुक्त बा० गौरीशंकरप्रसाद के सभापतित्व में हुआ था। काउन्सिल में मिस्टर चिन्तामणि के हिन्दी-सम्बन्धी प्रस्ताव पर कुछ मुसलमान सज्जनों ने हिन्दी और देवनागरी पर जो अनुचित आक्षेप किए थे, उन पर विचार करने तथा हिन्दी का पक्ष लेनेवाले मेम्बर महाशयों को धन्यवाद देने के लिये ही यह विशेष अधिवेशन हुआ था। नगर के बहुत से प्रतिष्ठित और गण्य-मान्य सज्जनों के अतिरिक्त प्रायः डेढ़ दो सौ हिन्दी-प्रेमी दर्शक भी थे। श्रीयुक्त बा० श्रीप्रकाश बी० ए० बैरिस्टर ने निम्न-लिखित पहला प्रस्ताव उपस्थित किया,—

(१)-(क) यह सभा इस बात पर सन्तोष प्रकट करती है कि माननीय महोदय सी० वाई चिन्तामणिजी ने इस प्रान्त की काउन्सिल में इस विषय का प्रस्ताव उपस्थित किया कि सब-जजों और मुंसिफों के पदों पर नियुक्त होनेवालों को हिन्दी भाषा तथा नागरी लिपि का जानना आवश्यक है। जो प्रमाण प्रस्ताव-कर्त्ता महाशय ने इस विषय के पक्ष में वहाँ उपस्थित किए हैं उनसे यह सभा पूर्णतया सहमत है।

(ख) यह जान कर सभा को सन्तोष है कि काउन्सिल के कई सदस्यों ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया।

(ग) इन कार्यों के लिये सभा उन महाशयों को धन्यवाद देती है।

आपने इस प्रस्ताव को उपस्थित करते हुए सब से पहले तो श्रीयुक्त चिन्तामणि को धन्यवाद दिया जिन्होंने मदरासी होकर भी इस देश के लिये सियों की आवश्यकता समझी और काउन्सिल हिन्दी तथा देवनागरी-सम्बन्धी प्रस्ताव उपस्थित किया। तदुपरान्त आपने यूरोप तथा अमेरिका आदि के इतिहासों से कई ऐसे उदाहरण दिए जिन विजित देश के निवासियों ने राज्य-स्थापन के समय ही जेताओं से दृढ़तापूर्वक निश्चय करा लिया था न्यायालयों आदि में इसी देश की भाषा और लिपि का व्यवहार होगा। आपने यह भी बतलाया कि भाषा का जातीयता के साथ घनिष्ट सम्बन्ध है और देश में, उसके कारण, एकता की बहुत कुछ वृद्धि होती है। श्रीयुक्त पं० यज्ञनारायण उपाध्याय एम० ए० एल एल बी० ने इस प्रस्ताव का समर्थन करते हुए कहा कि न्यायालयों में बीस बीस बरस के पुराने पेशकार भी शिकस्त उर्दू अच्छी तरह नहीं पढ़ सकते और कुछ के कुछ नाम पढ़ जाते हैं। एक पेज पढ़ने में बीस पचीस मिनट तक लग जाते हैं। दो मिनट में घसीट कर बड़ी कठिनता से लिखना और उसी को दस मिनट में पढ़ना कभी लाभदायक नहीं हो सकता। पहले पाँच मिनट में लिखना और पीछे मिनट में पढ़ना ही कहीं अच्छा है। बाबू वेणीप्रसाद ने इस प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुए बतलाया कि काशी के अधिकांश मुसलमान व्यापारियों के बही खाते आदि सब हिन्दी में ही हैं। बाबू कन्हैया लाल मुख़्तार ने कहा कि उर्दू के कागजों में पढ़ने में बड़ी कठिनता होती है। और यदि अधिकारियों को केवल शीघ्रता का ही ध्यान हो तो उर्दू को निकाल कर शार्टहैण्ड का प्रचार करना चाहिए *।

सर्व सम्मति से इस प्रस्ताव के पास हो चुकने के उपरान्त श्रीयुक्त बा० शिवप्रसाद गुप्त ने निम्न लिखित दूसरा प्रस्ताव उपस्थित किया,—

* उर्दू की अपेक्षा शार्टहैण्ड सीखा भी जल्दी सकता है। पं० सम्पादक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) (क) सभा को इस बात पर बहुत खेद है कि काउन्सिल के कुछ माननीय सभासदों ने हिन्दी भाषा की प्राचीनता और सुबोधता आदि के सम्बन्ध में निर्मूल और मिथ्या आक्षेप किए।

(ख) यह सभा अरबी लिपि के प्रेमी सज्जनों से सादर अनुरोध करती है कि वे देश की वर्त्तमान स्थिति का ध्यान रख कर इस समय देवनागरी लिपि के प्रेमियों के साथ मिल कर इस बात का निश्चय कर लें कि इस देश में नागरी लिपि का व्यवहार अधिक उपयोगी और सुगम है अथवा अरबी लिपि का; क्योंकि इस समय अधिकतर मतभेद केवल लिपि के सम्बन्ध में ही है।

आपने आरम्भ में कहा कि भारत को छोड़ कर संसार में और कोई ऐसा अभागा देश नहीं है जिसमें यह प्रश्न उठता हो कि न्यायालयों आदि में इसी देश की भाषा और लिपि का व्यवहार हो अथवा बाहरी। चीन के मुसलमान अपने आप को चीनी कहते और उनकी भाषा भी चीनी ही है। युरोप और अमेरिका में जाकर यहाँ के मुसलमान भी अपने आप को हिन्दू ही कहते हैं; पर इस देश में रह कर हिन्दी को ग्रहण करना नहीं चाहते, यह बड़े दुःख की बात है। इसी देश में उनका जन्म होता है और यहीं की मिट्टी में वे गाड़े जाते हैं; पर तो भी उनमें स्वाभाविक देश प्रेम और जातीयता का अभाव होता है। भारत के अन्य प्रान्तों में इस प्रकार का भाषा-सम्बन्धी प्रश्न इस लिये नहीं उठता कि वहाँ के समस्त निवासी अपने ही प्रान्त की भाषा बोलते हैं; और इस प्रान्त में यह प्रश्न केवल इसी लिये उपस्थित होता है कि यहाँ के कुछ निवासी इस देश की भाषा को छोड़ कर एक दूसरी ही भाषा का आश्रय लेते हैं। * * * * * उर्दू को Lingwa Franca कहने-वाले कभी यह नहीं सोचते कि मदरास में कभी उर्दू का प्रचार हो सकता है या नहीं। इसके उप-रान्त आपने यह बतलाया कि प्राचीन मुसलमानों ने कभी हिन्दी के साथ द्वेष नहीं किया और प्रायः उस की बहुत कुछ सेवा की है। इसी प्रकार हिन्दुओं ने भी उर्दू और फारसी की बहुत कुछ सेवा की है। फारसी का एक बहुत अच्छा और बड़ा कोश, जिसका मान फारस तक में है, एक हिन्दू का ही बनाया हुआ है। * * * * यदि उर्दू में ही सब से अधिक सुभीता है तो क्यों नहीं अंगरेजी दफ़्तरों से अंगरेजी निकाल कर उसका स्थान उर्दू को दिया जाता?

श्रीयुक्त पं० गोविन्दराव जोगलेकर बी० ए० एल एल० बी० ने इस प्रस्ताव का अनुमोदन करते हुए कहा कि अधिकतर महत्त्व के काम दीवानी अदालतों में ही होते हैं, इसलिये उनके अधिकारियों का हिन्दी जानना बहुत ही आवश्यक है। उर्दू की कठिनाइयाँ बतलाते हुए आपने कहा कि मुंशी लोग किसी कागज को पढ़ते समय एक घन्टे में पचास गलतियाँ करते हैं। * * * * अदालत के वकालतनामे और अरजी दावे आदि यदि निकाल कर देखे जायँ तो उनमें सौ में से पंचानबे पर नागरी में ही हस्ताक्षर होंगे। पर अदालतों में नागरी का प्रचार न होने में बहुत कुछ अपराध हम लोगों का भी है। जब कि हम लोगों को अरजीदावे और वकालतनामे आदि देव-नागरी में दाखिल करने का अधिकार है तब हम लोग उस अधिकार का पूरा पूरा उपयोग क्यों नहीं करते? मुवक्किलों को चाहिए कि वे अपने वकीलों पर हिन्दी में काम करने के लिये जोर दें। अगर सौ में साठ अरजीदावे नागरी में लिखे हुए हों तो सब जज और मुन्सिफ आपसे आप नागरी पढ़ने लगें। यहाँ तक कि पेशकारों को भी विवश हो कर नागरी सीखनी पड़े। वकील साहब को जब मिसिल मुआ-एने में देवनागरी के ही अधिक कागज मिलेंगे तो वे भी नागरी सीखेंगे। इसका समर्थन श्रीयुक्त विष्णु भास्कर केलकर एम० ए० ने किया और सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव भी स्वीकृत हुआ। तदुपरान्त श्रीयुक्त बाबू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गौरीशङ्करप्रसाद ने कूच विहार के श्रीयुक्त अमानत-उल्ला अहमद खाँ चौधरी का हिन्दी में लिखा हुआ वह पत्र पढ़ सुनाया जो स्थानान्तर में प्रकाशित किया गया है। इसके अनन्तर श्रीयुक्त रायकृष्णदास ने निम्न-लिखित तीसरा प्रस्ताव उपस्थित किया,—

(३) निश्चय हुआ कि ऊपर लिखे प्रस्तावों की एक एक प्रति काउन्सिल के माननीय सभासदों तथा सरकार की सेवा में सूचनार्थ भेज दी जाय।

श्रीयुक्त राय शम्भूप्रसाद के अनुमोदन करने पर सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव भी स्वीकृत हुआ।

सभापति को धन्यवाद देकर सभा विसर्जित हुई।

प्रान्तीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन।

इस वर्ष प्रान्तीय राजनैतिक कान्फरेंस का अधिवेशन सीतापुर में होगा इस कारण प्रान्तीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन भी उन्हीं दिनों में करने के लिये बाबू अक्षयकुमार बोस के सभापतित्व में ३१ मार्च सन् १९१७ को नगरनिवासियों की एक सभा हुई जिसमें निम्नलिखित प्रस्ताव पास किए गए,

(१) जिन दिनों सीतापुर में राजनैतिक कान्फरेंस हो उन्हीं दिनों प्रान्तीय हिन्दी साहित्य-सम्मेलन किया जाय और उसका समय प्रातः ७॥ बजे से १०॥ बजे तक रखा जाय॥

प्रस्तावक पं० ठाकुरप्रसाद शर्म्मा।

अनुमोदक पं० सोमेश्वरदत्तजी शुक्ल।

(२) स्वागतकारिणी-समिति बनाई जाय जिसका शुल्क २) हो तथा प्रतिनिधि-शुल्क १) रखा जाय।

प्रस्तावक हकीम शिवदयालसाह राजवैद्य।

अनुमोदक बाबू सोहनलाल वर्म्मा।

(३) नीचे लिखे व्यक्ति स्वागतकारिणी-समिति के पदाधिकारी चुने जाँय।

अध्यक्ष राजा सूर्यबख्शसिंह ताल्लुकेदार

उपाध्यक्ष ठाकुर ललिताबख्शसिंह ताल्लुकेदार नीलगाँव

ठाकुर रामेश्वरबख्शसिंह ताल्लुकेदार परसेहरा

ठाकुर राजेन्द्रसिंह ,, [illegible]

कुँवर श्रीप्रकाशसिंह ,, [illegible]

सेठ रामेश्वरदयाल ,, [illegible]

पं० सोमेश्वरदत्तजी शुक्ल सीतापुर

पं० कालिकाप्रसादजी त्रिवेदी वकील

पं० गयाप्रसादजी तिवारी

पं० शंकटाप्रसादजी पाँड़े

मंत्री पं० दुर्गाप्रसादजी वकील

पं० कृष्णविहारीजी मिश्र वकील

पं० ठाकुरप्रसाद शर्म्मा

बा० रामजीदास

महाशय शिवनारायणलालजी

कोषाध्यक्ष बा० बद्रीप्रसादजी गुप्त वकील

सेठ नन्दरामजी मारवाड़ी

पुस्तक-प्रदर्शनी

ठाकुर लक्ष्मणसिंह

बा० कृष्णचन्द्र जैनी

पं० वैद्यनाथजी

बा० देवीप्रसादजी निगम

(४) अवध में हिन्दी-प्रचार का कार्य सम्पन्न करने के लिये एक स्वतंत्र सभा की आवश्यकता है इसलिये हिन्दी साहित्य-सम्मेलन अवध के नाम एक सभा स्थापित की जाय और साहित्य-सम्मेलन प्रयाग से लिखा पढ़ी करके शीघ्र स्वीकृति प्राप्त की जाय।

प्रस्तावक पं० ठाकुरप्रसाद शर्म्मा

अनुमोदक पं० कृष्णविहारी मिश्र

चन्दा वसूल करनेवाले सज्जनों की सूची के उपरान्त सभापति जी का हिन्दी-प्रचार के विषय में छोटा सा व्याख्यान हुआ तथा पं० सोमेश्वरदत्त जी शुक्ल और बद्रीप्रसादजी गुप्त ने सभापति को धन्यवाद दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Registered No. A 414

भाग २१] [संख्या ११—१२

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

मई—जून १९१७

सम्पादक—रामचन्द्र वर्म्मा ।

—:०:—

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल । बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल ॥
करहु विलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल । निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सब को मूल ॥
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार । सब देशन सों लै करहु, भाषा मांहि प्रचार ॥
प्रचलित करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न । राज काज दरबार में, फैलावहु यह रत्न ॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र ।

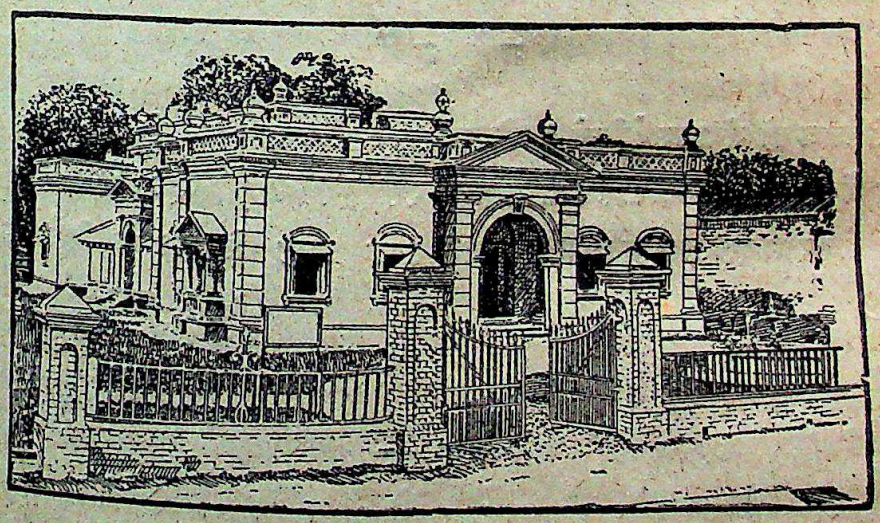

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित ।

श्री अपूर्वकृष्ण बोस द्वारा इंडियन प्रेस, प्रयाग में मुद्रित ।

वार्षिक मूल्य १॥)

प्रति संख्या =)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची ।

(१)	हिन्दी-उर्दू	... २४१	(६)	हिन्दी और बँगला साहित्य	... २५६
(२)	दर्शन-सिद्धान्त ...	... २४४	(७)	कौंसिल में हिन्दी-उर्दू का प्रश्न	... २६३
(३)	हिन्दी पर श्रीयुक्त गांधी के विचार	... २४८	(८)	वैदिक काल का ज्योतिष शास्त्र	... २६९
(४)	फैलनेवाले रोग ...	... २४९	(९)	प्रतिमोक्ष सूत्र ...	... २७०
(५)	आर्य भाषा और जातीयता	... २५३	(१०)	सभा का कार्य्य विवरण ...	... २७१

पण्डित लक्ष्मीधरजी वाजपेयी

सम्पादित ।

क्या आपको यह मालूम है कि,

हिन्दी-चित्रमय-जगत्

राष्ट्र-भाषा हिन्दी में उच्चश्रेणी का ; हिन्दी-भाषा-भाषियों का अत्यन्त लाड़ला; मराठी, हिन्दी, अँग्रेज़ी, बँगला इत्यादिक भाषाओं के धुरन्धर लेखकों के लेख प्रकाशित करनेवाला; महाराष्ट्र में 'हिन्दी राष्ट्र-भाषा भवतु' का झंडा फहरानेवाला; सामयिक महत्त्वपूर्ण लेख, कविता तथा चित्रों के प्रकाशित करने में युगांतर प्रस्थापक; हिन्दी में अपने ढंग का सब से पहिला और अनूठा मासिक पत्र है ?

यदि, नहीं,

तो आप उसे आज ही मंगाकर देखिये ! निस्सन्देह आप उसकी अन्तरंग की चटक मटक पर मोहित होंगे और हिन्दी में ऐसे अनूठे पत्रप्रकाशन के साहस पर दांतों उँगली दबायँगे । पत्र की लागत के देखते मूल्य कुछ नहीं । केवल सादा संस्करण ३॥) राजसंस्करण ५॥) तिसपर भी विशेषांक उपहार में ! एक प्रति का ।-), ॥)

पता—

मैनेजर, हिन्दी-चित्रमय-जगत्,

पूना सिटी ।

—:०:—

सुघड़ दर्जिन ।

(दूसरा संस्करण)

हिन्दी में अपने ढंग की यह पहली पुस्तक है । इसमें सब तरह के कपड़ों की सिलाई और कटाई आदि का वर्णन इतनी उत्तमता से किया गया है कि घर की साधारण स्त्रियाँ भी इसे पढ़ कर सब तरह के कपड़े अच्छी तरह काट और सी सकती हैं । समझाने के लिये इसमें ६०-७० चित्र भी दे दिए गए हैं । मूल्य केवल ॥)

पता—

मन्त्री, नागरी प्रचारिणी सभा—काशी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभासदों से निवेदन।

१. जैसा कि सर्वदा से होता आता है नई वार्षिक रिपोर्ट, (सन् १९१६-१७ की) जो शीघ्र ही तैयार होगी, सभासदों की सेवा में वी. पी. द्वारा भेजी जायगी।

२. जो महाशय चाहैं मनीआर्डर द्वारा ही अपना चन्दा भेज दें। मनीआर्डर पाने पर उन के पास वी. पी. न भेजा जायगा।

३. यदि वी. पी. मिलने पर किसी महाशय को जान पड़े कि हिसाब में कुछ अशुद्धि है तो कृपया वी. पी. को पोष्ट आफिस ही में रोक कर यहां पत्र भेज कर हिसाब समझ लें। वी. पी. लौटाना न चाहिए, इस से सभा की हानि होती है।

इस सभा का कार्य बहुत बढ़ रहा है जिससे व्यय भी बहुत बढ़ गया है। ऐसी अवस्था में सभासदों को उचित है कि चंदे का रुपया शीघ्र भेज कर सभा की सहायता करें।

हरिहर नाथ बी० ए०

मन्त्री

नागरी प्रचारिणी सभा।

कृष्ण यन्त्रालय काशी—२६-८-१७—९००

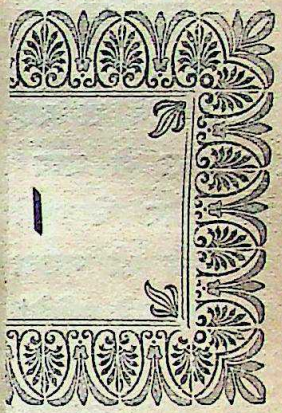

{ संख्या ११—१२

उर्दू-सम्बन्धी प्रश्न की मीमांसा
यता मिलेगी। मुगलवंश के
हों की राजभाषा फारसी थी,
राज्य के आने के पहले बल्कि
ाल में भी राज्य सम्बन्धी सब
सी में होती थी उर्दू में नहीं।
से अधिक नहीं हुए हैं जब से
दूसरी रियासतों में जिन पर
का प्रभाव था, फारसी की
पढ़ी प्रारम्भ हुई है।

भाषा सरकारी कागज़ात के
व्यवहारों में नहीं आवे अथवा
उसमें कुछ पुस्तकें नहीं लिखी जाँय तब तक
उसका स्थान गौरव-सम्पन्न भाषाओं में नहीं हो
सकता। कोई ऐसा प्रमाण नहीं मिलता जिससे
यह मालूम हो कि अँगरेजी राज्य आने के पहले
भारत में लिखा पढ़ी उर्दू भाषा द्वारा होती थी।

हुए हैं। मुझे उर्दू की ऐसी कोई पुस्तक नहीं
मिली जो १५० वर्ष की अथवा उसके पहले की
लिखी हो। यदि कोई हिन्दू अथवा मुसलमान
महाशय कृपा कर ऐसी पुस्तक बता देंगे तो उनका
उपकार केवल उर्दू के प्रेमी मनुष्यों पर ही नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची ।

(१) हिन्दी-उर्दू २४१
(२) दर्शन-सिद्धान्त २४४
(३) हिन्दी पर श्रीयुक्त गांधी के विचार ... २४८
(४) फैलनेवाले रोग २४९
(५) आर्य भाषा और जातीयत
(६) हिन्दी और बँगला साहित्य ... २५६
(७) कौंसिल में हिन्दी-उर्दू का प्रश्न ... २६३
(८) वैदिक काल का ज्योतिष शास्त्र ... २६९
(९) प्रतिमोक्ष सूत्र २७०

पण्डित लक्ष्मीधरजी वाजपे

हि

राष्ट्र-भाषा हिन्दी में उच्च
अँग्रेज़ी, बँगला इत्यादिक भाषा
राष्ट्र-भाषा भवतु ' का झंडा फह
करने में युगांतर प्रस्थापक; हिन्दी में

तो आप उसे आज ही मंगा
होंगे और हिन्दी में ऐसे अनूठे प
मूल्य कुछ नहीं । केवल सादा सं
प्रति का ।-), ॥)

हिन्दी में अपने ढंग की यह पहली पुस्तक है । इसमें सब तरह के कपड़ों की सिलाई और कटाई आदि का वर्णन इतनी उत्तमता से किया गया है कि घर की साधारण स्त्रियाँ भी इसे पढ़ कर सब तरह के कपड़े अच्छी तरह काट और सी सकती हैं । समझाने के लिये इसमें ६०-७० चित्र भी दे दिए गए हैं । मूल्य केवल ॥)

पता—

मन्त्री, नागरी प्रचारिणी सभा—काशी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

भाग २१ } मई—जून १९१७. { संख्या ११—१२

हिन्दी-उर्दू ।

(प्राप्त ।)

संयुक्त प्रदेश की फरवरी मास की कौन्सिल में हिन्दी-सम्बन्धी प्रश्न पर जो घोर विवाद हुआ है उस सम्बन्ध में मैं हिन्दी-भाषा-प्रेमियों के सूचनार्थ एवं उनके उपकारार्थ यह जानना चाहता हूं कि उर्दू में गद्य या पद्य में क्या कोई ऐसी पुस्तक है जो भारत में अँगरेज़ी राज्य होने के पहले की लिखी हो? भारत में अँगरेज़ी राज्य को हुए लगभग १५० वर्ष के हुए हैं। मुझे उर्दू की ऐसी कोई पुस्तक नहीं मिली जो १५० वर्ष की अथवा उसके पहले की लिखी हो। यदि कोई हिन्दू अथवा मुसलमान महाशय कृपा कर ऐसी पुस्तक बता देंगे तो उनका उपकार केवल उर्दू के प्रेमी मनुष्यों पर ही नहीं होगा वरन् उससे उर्दू-सम्बन्धी प्रश्न की मीमांसा में भी बड़ी सहायता मिलेगी। मुगलवंश के प्रभावशाली बादशाहों की राजभाषा फारसी थी, उर्दू नहीं। अँगरेज़ी राज्य के आने के पहले बल्कि उसके प्रारम्भिक काल में भी राज्य सम्बन्धी सब लिखा पढ़ी फारसी में होती थी उर्दू में नहीं। चालीस पचास वर्ष से अधिक नहीं हुए हैं जब से मुसलमानी तथा दूसरी रियासतों में जिन पर मुसलमानी भाषा का प्रभाव था, फारसी की जगह उर्दू में लिखा पढ़ी प्रारम्भ हुई है।

जब तक कोई भाषा सरकारी कागज़ात के लिखने तथा दूसरे व्यवहारों में नहीं आवे अथवा उसमें कुछ पुस्तकें नहीं लिखी जाँय तब तक उसका स्थान गौरव-सम्पन्न भाषाओं में नहीं हो सकता। कोई ऐसा प्रमाण नहीं मिलता जिससे यह मालूम हो कि अँगरेजी राज्य आने के पहले भारत में लिखा पढ़ी उर्दू भाषा द्वारा होती थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस बात के तो अभ्रान्त प्रमाण हैं कि उस समय हिन्दी भाषा प्रचलित ही नहीं थी बल्कि हिन्दी कविता के सभी अच्छे अच्छे ग्रन्थ लिखे जा चुके थे। चन्द्र कवि हिन्दी का चौसर (Chaucer) था जो सुप्रसिद्ध महाराज पृथ्वीराज के समय दशवीं शताब्दी में हुआ था। भिखारीदास कवि का समय सन् १७२३ ई० है जो भारत में अँगरेज़ी राज्य आने से पहले का है। चन्द और भिखारीदास के मध्य के काल में अनेक प्रभावशाली और ओजस्वी कवि हुए हैं। इन सब के नामों की गणना करना दुस्साध्य है तथापि इनमें से थोड़े कवियों के नाम उदाहरणार्थ लिखे जाते हैं।

शार्ङ्गधर, कबीर, नानक, नाभादास, मीराबाई, गङ्ग, गोस्वामी तुलसीदास, बिहारी, केशवदास, सूरदास, स्वामी हरिदास, देव, सबलसिंह चौहान, भूषण, मतिराम, गोप, तोष, श्रीगुरु गोविन्द, हिन्दी-कवि कालिदास, गिरधर, ग्वाल इत्यादि। इनमें से कुछ कवि शेक्सपियर, मिल्टन, बैरन, वर्डस् वर्थ तथा अन्य नामी अँगरेज़ी कवियों के जोड़ के हैं। कबीर, तुलसीदास, बिहारी, केशव, सूरदास, भूषण और गिरधर कवियों की कविता हिन्दी काव्य की वाङ्ग देवी के परमोत्कृष्ट और अत्योजस्वी उद्गार हैं और भूमण्डल के काव्य-साहित्य में अद्वितीय हैं। संसार में जहां कहीं हिन्दी जाननेवाले हैं वहाँ वे इन कविताओं को अवश्य पढ़ते हैं और उनका सत्कार करते हैं। तुलसीदास की रामायण तो हिन्दी संसार की बाइबिल ही हो गई है। इसका कई भाषाओं में अनुवाद भी हो गया है।

पूर्वोक्त कवियों में कई प्रखर प्रभावशाली धर्म-प्रचारक और समाजसुधारक भी थे। वे जिस समय में हुए हैं उस पर उनके प्रभाव की छटा बहुत कुछ पड़ी है। इन सब ने अपने ग्रन्थ हिन्दी भाषा में ही लिखे हैं। इनके ग्रन्थों ने ही हिन्दी साहित्य को इतना बढ़ाया है। भारत में अँगरेज़ी राज्य आने के पहले हिन्दी साहित्य पूर्ण रूप से विकसित हो चुका था। उर्दू के विषय में देखते हैं कि अँगरेजी राज्य आने से पहले इसमें किसी नामी कवि अथवा लेखक ने कोई ग्रन्थ नहीं लिखा था। उर्दू को किसी मुसलमान बादशाह ने राष्ट्र-भाषा नहीं बनाया और न उसके प्रचार में ही उत्साह दिखाया। मैं यह सब बातें अँगरेज़ी राज्य आने से पहले की कहता हूं, पीछे की नहीं। इसका कारण स्पष्ट है और वह यह है कि उस समय उर्दू कोई भाषा ही नहीं थी। कई विद्वान मुसलमानों ने भी जिन्होंने अपने ग्रन्थों को किसी कारण से फ़ारसी में नहीं लिखना चाहा हिन्दी में ही लिखा है। अँगरेज़ी राज्य आने के पहले के मुसलमानों ने हिन्दी ग्रन्थ लिखे हैं साहित्य में जिनका स्थान बहुत ऊँचा है।

इन सब बातों से ज्ञात होता है कि उर्दू कोई भाषा ही नहीं है। फ़ारसी अरबी के शब्द प्रयोग कर हिन्दी भाषा को फ़ारसी लिपि में लिखना ही उर्दू है। इसमें हिन्दी भाषा की ही क्रिया और विभक्तियाँ हैं। उन मुसलमानों के सुभीते के लिये जो फ़ारसी नहीं जानते थे हिन्दी भाषा फ़ारसी लिपि में लिखी जाने लगी और वही कालान्तर में उर्दू हो गई। उर्दू कोई स्वतन्त्र भाषा नहीं है और न कोई मुसलमान बादशाह इसे अपने साथ ईरान, अरब अथवा अफ़ग़ानिस्तान से लाया है। हिन्दुओं की हिन्दी दशवीं शताब्दी से चली आती है बल्कि इससे पहले से भी। यह प्राकृत भाषा से निकली है जो ईसा से पांच शताब्दी पहले बुद्ध भगवान् के जन्म काल से चली आती है। प्राकृत भाषा अपभ्रंश संस्कृत है।

इस समय भी बहुत से देशी ईसाई जो न अँगरेज़ी न हिन्दी और न उर्दू लिख सकते हैं हिन्दी अथवा उर्दू बोली को रोमन लिपि में लिख कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपना काम चलाते हैं। देश की प्रचलित भाषा को रोमन लिपि में लिख देने से कोई नवीन स्वतंत्र भाषा नहीं बन जाती। अतः रोमन कोई भाषा नहीं है, केवल लिपि है। सम्भव है कि कालान्तर में जब रोमन लिपि का प्रचार बढ़ जाय और उस बोली में जो इस लिपि में लिखी जाती है अँगरेज़ी के शब्द और पद प्रवेश कर जायँ तब हिन्दुस्तानी ईसाई भी दावा करने लगें कि यह हमारी स्वतन्त्र भाषा है। सम्भव है कि वे हिन्दी या उर्दू का तिरस्कार करने लगें और कहने लगें कि यह भाषाएँ सभ्य मनुष्यों के योग्य नहीं हैं। उर्दू की विकास-क्रिया भी ऐसे ही है। इसलिये जो दावा किया जाता है वह भी ऐसा ही है।

जब किसी भाषा के लिखने में कोई विदेशी लिपि काम में लाई जाती है तब उस भाषा के व्याकरण के नियम और तत्सम्बन्धी दूसरी बातें बिगड़ जाती हैं। जो उस भाषा के ओजस्वी गुण होते हैं वे नष्ट हो जाते हैं क्योंकि विदेशी लिपि लिखनेवाले उन तत्त्वों को नहीं जानते। वह कालान्तर में ऐसी परिवर्त्तित हो जाती है कि एक नवीन स्वतंत्र भाषा सी दिखाई देने लगती है। जो लोग उसकी उत्पत्ति के इतिहास से परिचित नहीं होते वे सचमुच विश्वास करने लगते हैं कि यह एक स्वतंत्र भाषा है। इस विश्वास में उन लोगों का पुश्तैनी स्वाभाविक पक्षपात भी बड़ी सहायता करता है। परन्तु जो असली बात को जानते हैं वे ताड़ जाते हैं कि मामला क्या है। असली भाषा के बोलनेवालों की दृष्टि से जो जो दोष उस भाषा में विदेशी लिपि द्वारा लिखने से उत्पन्न हो जाते हैं वे उन लिपि लिखनेवालों की दृष्टि से उसके गुण दिखाई देने लगते हैं। इन लोगों को यह बात नहीं याद रहती कि जिस भाषा को हम अपनी लिपि में लिख रहे हैं वह दूसरों की थी और हमारे पूर्वजों ने अपने सुभीते के लिये ग्रहण कर ली थी। वे उसे अपनी ही स्वतंत्र भाषा कहने लगते हैं और दावा करने लगते हैं कि हमने ही इस भाषा को बनाया है और उसके हम ही जन्मदाता हैं। यदि वे लोग जिनकी कि वह भाषा थी उसे उसकी स्वाभाविक लिपि में लिखने की चेष्टा करें क्योंकि वह लिपि ही उस भाषा का स्वाभाविक आभूषण है और उसको सुशोभित करता है—तो विदेशी लिपि लिखनेवाले वावैला करने लगते हैं और कहते हैं कि भाषा को हमारी ही लिपि में लिखो, उसी को ठीक समझो और उसी का सन्मान करो।

जब ऐसी दशा है तब आश्चर्य्य ही क्या है कि कौन्सिल के मुसलमान मेम्बरों में से एक ने उठ कर यह घोषणा कर दी कि अंगरेजी राज्य आने के पहले हिन्दी कोई भाषा ही नहीं थी। यदि थी तो उसे कोई सभ्य आदमी काम में नहीं लाता था। हिन्दी के विषय में इस तरह कह देना केवल एक बड़ी और असाधारण धृष्टता ही नहीं है बल्कि ऐतिहासिक सत्यता का बिलकुल नाश करना है। यह अधिक उचित होगा कि मुसलमान देशहितैषी फ़ारसी भाषा को राष्ट्रभाषा बनाने की चेष्टा करें क्योंकि अंगरेजी राज्य से पहले मुसलमानों की यही भाषा थी। यदि वे ऐसा आन्दोलन करें तो ऐतिहासिक सत्यता में कोई त्रुटि नहीं होगी। परन्तु हिन्दी को असभ्य लोगों की भाषा कह कर उर्दू का प्रचार करने की चेष्टा करना सर्वथा अयुक्त है। भारतवर्ष में हिन्दी भाषा का प्रचार दशवीं शताब्दी से चला आता है। अंगरेजी राज्य के समय मुसलमानों ने इसे फ़ारसी लिपि में लिखना प्रारम्भ कर दिया क्योंकि वे फ़ारसी भाषा पढ़ने और सीखने में उतना परिश्रम नहीं कर सके जितना कि उनके पूर्वजों ने किया था। इस तरह उर्दू भाषा उत्पन्न होगई और उसका प्रचार हो गया। —'हिन्दी'।

[२८ मार्च सन् १९१७ के 'लीडर' अखबार में प्रकाशित एक लेख का अनुवाद।]

—:o:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दर्शन-सिद्धान्त।

(गतांक से आगे ।)

[लेखक,—श्रीयुक्त बा० हरिहरनाथ बी० ए०]

न्याय-सिद्धान्त।

इस न्याय सिद्धान्त के अनुसार मनुष्य को ज्ञान द्वारा ही मुक्ति मिलती है। यह ज्ञान नीचे लिखी १६ वस्तुओं के जानने से होता है:—

१. प्रमाण २. निर्णय ३. संशय ४. प्रयोजन ५. दृष्टान्त ६. सिद्धान्त ७. अवयव ८. तर्क ९. वाद १०. जल्प ११. वितण्डा १२. हेत्वाभास १३. छल १४. जाति १५. निग्रह और १६. प्रमेय। इनका ज्ञान हो जाने से मनुष्य को यथार्थ तत्वज्ञान की प्राप्ति होती है जिससे कर्म, दोष, भ्रम, दुःख तथा जन्म-मरणादि का नाश हो जाता है और मनुष्य मुक्त हो जाता है।

ऊपर लिखी १६ वस्तुओं का अलग अलग वर्णन यह है:—

१. प्रमाण—जिसके द्वारा यथार्थ अनुभव होता है उसको प्रमाण कहते हैं। प्रमाण चार प्रकार का माना गया है:—प्रत्यक्ष, शाब्द, उपमान और अनुमान।

१. प्रत्यक्ष—उसको कहते हैं जो इन्द्रिय और अर्थ (पदार्थ) का संयोग होने से होता है। जैसे शब्द, गंध, आकार, स्वाद, स्पर्श आदि।

(जिस पदार्थ का प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं हो सकता वह शेष तीन प्रमाणों द्वारा जाना जाता है।)

२. शाब्द—वह है जो यथार्थ कहनेवाले पुरुष का वाक्य हो। जैसे वेद शास्त्रादि तथा महर्षियों के वाक्य।

३. उपमान—वह है जिससे सादृश्य का ज्ञान होता है, अर्थात् जो ज्ञान उदाहरण द्वारा होता है। जैसे, जिसने गीदड़ न देखा हो उसको बतलाना कि गीदड़ कुत्ते के सदृश होता है।

४. अनुमान—उसको कहते हैं जो व्याप्ति और पक्ष-धर्मता का विचार करके प्राप्त किया जाता है। सर्वदा साथ रहने को व्याप्ति कहते हैं जैसे जहाँ जहाँ धूआँ है वहाँ वहाँ अग्नि है। पर्वत में धूम की संभावना को पक्षधर्मता कहते हैं। अर्थात् जिसमें व्याप्ति हो (धूम) उसकी पर्वत में (पर्वत) संभावना होनी चाहिए। अनुमान इस प्रकार किया जाता और उसके ये पाँच अंग होते हैं:—

१. पर्वत में अग्नि है (प्रतिज्ञा)
२. क्योंकि उसमें धूआँ है (हेतु)
३. जहाँ जहाँ धूआं है वहाँ वहाँ अग्नि भी है जैसे चूल्हा (उदाहरण)
४. पर्वत में भी धूआँ है (उपनय)
५. इसलिये पर्वत में अग्नि है (अनुमिति)

२. निर्णय—किसी वस्तु के पक्ष और विपक्ष दोनों को विचार कर एक बात का निश्चय करना निर्णय कहलाता है।

३. संशय—किसी वस्तु का ठीक ठीक ज्ञान न होने को कहते हैं।

४. प्रयोजन—किसी काम को करने के पहले जिस अर्थ को मनुष्य प्रस्तुत करता है उसको प्रयोजन कहते हैं।

५. दृष्टान्त—जिसमें सादृश्य (समानता) हो उसको दृष्टान्त कहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. सिद्धान्त—वह है जो प्रमाणित या निर्धारित हो चुका हो।

६. अवयव—प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण, उपनय और निगमन ये अवयव हैं।

७. तर्क—किसी वस्तु के (अज्ञात) तत्व को (उसके कारण आदि का विचार करके) जानने को तर्क कहते हैं।

८. वाद—प्रमाण और तर्कादि की सहायता से तत्त्व-निश्चय की बातचीत को वाद कहते हैं।

९. जल्प—उस बातचीत को कहते हैं जो मनुष्य केवल जीतने की अभिलाषा से करता है।

१०. वितण्डा—उस बातचीत को कहते हैं जिसमें मनुष्य अपने पक्ष की पुष्टि नहीं करता, केवल बक बक करता है।

११. छल—जब बातचीत में मनुष्य ऐसी बात या पद का प्रयोग करता है जिसका अर्थ स्पष्ट न हो या कई अर्थ हों तो उसे छल कहते हैं।

१२. निग्रह—जब मनुष्य अपना पक्ष स्थापित नहीं कर सकता अथवा विफलता या अशुद्धतापूर्वक स्थापित करता है तब उसको निग्रह (पराजय) कहते हैं।

१३. जाति—जिससे अपने पक्ष की हानि हो उसे जाति कहते हैं।

१४. हेत्वाभास—उसको कहते हैं जो केवल ऊपर से तर्क जान पड़ता है परन्तु वस्तुतः अशुद्ध होता है।

१५. प्रमेय—आत्मा, शरीर, इन्द्रिय, अर्थ, बुद्धि, मन, प्रवृत्ति, दोष, प्रेत्यभाव, फल, दुःख और अपवर्ग ये प्रमेय हैं।

१. शरीर—वह है जिसमें चेष्टा और इन्द्रियार्थ रहें।

२. इन्द्रिय—नाक, जीभ, आँख, कान और चमड़ा (जिस से स्पर्श ज्ञान हो) ये इन्द्रिय हैं। (पृथ्वी, जल, तेज, आकाश और वायु ये भूत हैं।)

३. गन्ध, रस, रूप स्पर्श और शब्द ये अर्थ हैं [ये ही भूतों के गुण भी हैं।]

४. बुद्धि—जो अनुभव आदि सब व्यवहार का हेतु है उसे बुद्धि कहते हैं।

५. मन—जिसके द्वारा कई इन्द्रियों से प्राप्त कई प्रकार के ज्ञान का एक काल में अनुभव होता है उसे मन कहते हैं।

६. प्रवृत्ति—मन, बुद्धि और शरीर से जो यत्न किया जाता है उसको प्रवृत्ति कहते हैं। यही पुण्य, पापादि का कारण है।

७. दोष—जिसके द्वारा प्रवृत्ति उत्पन्न होती है उसे दोष कहते हैं। जैसे, राग, द्वेष, मोह आदि।

८. फल—प्रवृत्ति की योजना तथा दोष के हेतु से होनेवाले सुख दुःख को फल दुःख कहते हैं।

९. दुःख—बाधा, पीड़ा, ताप आदि को दुःख कहते हैं।

१०. आत्मा—इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख और ज्ञान ये आत्मा के लक्षण हैं। आत्मा नित्य और अनादि है। जब बालक जन्म लेता है तब बिना कारण ही हँसता, रोता और डरता है और बिना सिखाए ही दूध पीता है; उसको रागादि भी रहता है। इस कारण यह सिद्ध होता है कि इन सब का कारण उस बालक के पूर्व जन्म की स्मृति ही है। इससे पूर्व जन्म तथा आत्मा का नित्य होना सिद्ध होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११. प्रेत्यभाव—यह स्पष्ट ही देखा जाता है कि शरीर नष्ट होता है और यह सिद्ध हो ही गया कि आत्मा नित्य है अतएव शरीर के नाश होने के अनन्तर आत्मा की स्थिति को प्रेत्यभाव कहते हैं।

१२. अपवर्ग। जैसे सोने की अवस्था में जब स्वप्न नहीं देख पड़ता तब रागादिक क्लेशों का अभाव रहता है वैसे ही अपवर्ग में भी होता है।

ईश्वर ।

[नोटः—ईश्वर अथवा ईश्वर-सिद्धि न्यायदर्शन के सूत्रों में विशेष रूप से नहीं मिलती।]

इस सिद्धान्त में सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, अनादि, अनन्त परमात्मा (ईश्वर) की स्थिति मानी जाती है। जैसे घड़े के होने से अनुमान किया जाता है कि इसका बनानेवाला भी कोई अवश्य ही है वैसे ही इस संसार के होने से उसका कर्ता (ईश्वर) भी सिद्ध हाता है। इसका अनुमान यों होगाः—

सृष्टि का कर्ता ईश्वर है (प्रतिज्ञा)
क्योंकि सृष्टि कार्य है (हेतु)
जो कार्य है उसका कारण अवश्य होता है जैसे घड़ा (उदाहरण)
सृष्टि कार्य है (उपनय)
इसलिये सृष्टि का कर्ता ईश्वर है (अनुमिति)

इस पर लोग शंका करते हैं कि सृष्टि तो कार्य ही नहीं है, उसका कारण क्या होगा—सृष्टि अनादि और अनन्त है। इसका समाधान यह है कि देखा जाता है कि घड़े की उत्पत्ति होती है और फिर उसको तोड़ने से उसका नाश हो जाता है। ऐसे ही सृष्टि के सभी भाग (घड़े के सदृश) अनित्य हैं। अतएव जब संसार के भाग अनित्य हैं तब संसार नित्य नहीं हुआ। और जब सृष्टि अनित्य है तब वह कार्य अवश्य हुई और उसका कर्ता ईश्वर सिद्ध हुआ।

परमाणु ।

[न्याय सूत्रों में यह भी विशेष रूप से नहीं मिलता

जितने भूत हैं वे सब परमाणुओं से बने हैं खिड़की से जब सूर्य की किरण भीतर आती है जो कनखे (कण) चमकते हुए दिखाई देते हैं उन १६ वें अंश का एक परमाणु होता है। परमाणुओं प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं होता। केवल अनुमान किया जा है। ये परमाणु नित्य माने गए हैं।

वेद ।

इस सिद्धान्त में वेद भी अनादि और यथार्थ का कारण माना गया है क्योंकि जिस ईश्वर ने दिया वह यथार्थ ज्ञान का मूल है।

वैशेषिक सिद्धान्त ।

इस सिद्धान्त में ६ पदार्थ माने गए हैं उन नाम ये हैं:—द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष समवाय।

पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, दिशा, आ और मन ये ९ द्रव्य हैं।

मनुष्य में 'हम हैं' का भाव होने से आ की सिद्धि होती है। आत्मा दो प्रकार का है जीवात्मा दूसरा परमात्मा।

शब्द, स्पर्श, स्वाद, रूप, गन्ध, संयोग, वि संख्या, द्रवत्व (बहना) संस्कार, परिमाण, विभा प्रयत्न, सुख, दुःख, इच्छा, वृद्धि, द्वेष, पृथक् (अलग होना), परत्व, अपरत्व, धर्म, अधर्म गौरव (भारीपन) ये २४ गुण हैं।

कर्म पांच प्रकार के हैं:—प्रसार (फैलाव) आ ऊचन (समेटना) उत्क्षेप (ऊपर फेंकना) गति (चा अवक्षेपण (नीचे फेंकना)।

सामान्य दो प्रकार का है:—एक परसामा जो बहुत बड़ा विभाग है जिसका उदाहरण 'सत्' (स्थिति) है और दूसरा अपरसामान्य जिस उदाहरण 'द्रवत्व' है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष वह है जिसके द्वारा एक पदार्थ दूसरे पदार्थ से अलग वा भिन्न (विशेषता युक्त) जान पड़ता है। यह न होता तो सभी पदार्थ एक ही जान पड़ते। विशेष पदार्थों में रहता है।

समवाय सम्बन्ध को कहते हैं। पदार्थ और उनके गुणों में समवाय सम्बन्ध रहता है।

ऊपर कहे हुए ६ पदार्थों से सृष्टि होती है। इन्हीं पदार्थों के साधर्म्य और वैधर्म्य के ज्ञान से मुक्ति होती है।

ईश्वर।

प्रकृति, पुरुष, कर्म इत्यादि जितने कहे गए हैं उन सब में जीव को उसके कर्मों का फल देने की सामर्थ्य नहीं है; क्योंकि प्रकृति और कर्म तो जड़ ही हैं और पुरुष कार्य ही नहीं कर सकता। फिर यदि पुरुष को कर्म का फल देने की शक्ति होती तो वह अपने को पाप से बचा कर केवल स्वर्गादि का ही साधन कर लेता। इस कारण कोई ऐसा परमात्मा अवश्य है जो कर्मों का फल देता है और उसकी शक्ति अपार होने के कारण वह सर्वशक्तिमान् है।

वेद।

इस सिद्धान्त में वेद भी माना जाता है। वेद में जो आयुर्वेद, ज्योतिष आदि हैं उनमें लिखी बातों को करने से आरोग्यता-साधन और ग्रहण आदि का यथार्थ ज्ञान होता है। और कर्मकाण्ड मन्त्र आदि के संयोग द्वारा वर्षा आदि होती है। इन सबसे सिद्ध होता है कि वेद प्रमाणित हैं और उनमें कही हुई क्रियाओं को करने से उनमें कहे हुए फलों की प्राप्ति होती है। और जब वेद प्रमाणित हैं तब उनमें कहे हुए स्वर्ग नरक आदि भी प्रमाणित हैं।

—:o:—

लोकायतिक (चार्वाक) सिद्धान्त।

इस सिद्धान्त में पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु यही चार तत्त्व माने गए हैं। इन्हीं चार तत्त्वों के मिलने से चेतनता उत्पन्न हो जाती है। जैसे पान के पत्ते, सुपारी, खैर और चूने से एक भिन्न लाल रंग उत्पन्न हो जाता है वैसे ही चार जड़ पदार्थों के योग से चेतनता की उत्पत्ति होती है। जब यह संयोग नष्ट होता है तब चेतनता का भी नाश हो जाता है। अतः जीव और ईश्वर की स्थिति नहीं मानी जाती। सुख-दुःख, प्रकृति की विचित्रता, परिणाम इत्यादि स्वभावतः हुआ करते हैं, उनका कोई कारण नहीं है।

प्रमाणों में केवल प्रत्यक्ष प्रमाण मान्य है क्योंकि जो परोक्ष है उसका ज्ञान कैसे होगा और जब किसी वस्तु का ज्ञान होगा तब वह प्रत्यक्ष ही हो जायगी।

वेद का महत्त्व, परलोक, स्वर्ग, नरक तथा भाग्य अदृष्ट इत्यादि गप्प हैं। सुख ही स्वर्ग और दुःख ही नरक है। जो लोग मिष्ठान्न खाते हैं, युवतियों से समागम करते हैं और सुन्दर कपड़े गहने पहनते और ऐश्वर्य भोगते हैं वे ही स्वर्गीय हैं और जो शत्रु, शस्त्र, रोग इत्यादि से पीड़ित होते हैं वे ही नारकी हैं।

धर्म और अधर्म केवल लोभियों की कपोल-कल्पित बातें हैं। मनुष्य के जीवन का उद्देश्य यही है कि अपनी इन्द्रियों द्वारा जहाँ तक हो सके 'मज़ा उड़ावे' और दुःख से भागता रहे।

अग्निहोत्रादि वेद की कथाएँ मिथ्या हैं। जब यह शरीर नष्ट हो जाता है तब चेतनता भी नष्ट हो जाती है और मनुष्य को मोक्ष मिल जाता है। इसके अतिरिक्त मोक्ष और कोई वस्तु नहीं है।

—:o:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी पर श्रीयुक्त गांधी के विकार।

हिन्दी ही हिन्दुस्तान के शिक्षित समुदाय की सामान्य भाषा हो सकती है यह बात निर्विवाद सिद्ध है; कैसे हो सकती है केवल यही विचार करना है। जिस स्थान को आज कल अँगरेज़ी भाषा लेने का प्रयत्न कर रही है पर जिस को लेना उसके लिये असम्भव है वही स्थान हिन्दी को मिलना चाहिए; क्योंकि उस पर हिन्दी का पूर्ण अधिकार है यह स्थान अँगरेज़ी को नहीं मिल सकता क्योंकि वह विदेशी भाषा है और हमारे लिये बड़ी कठिन है। अँग्रेज़ी की अपेक्षा हिन्दी का सीखना हाथ का खेल है। हिन्दी बोलनेवालों की संख्या प्रायः ६½ करोड़ है। बंगला, बिहारी उड़िया, मराठी, गुजरातीराजस्थानी, पंजाबी और सिन्धी हिन्दी की बहिनें हैं। उक्त भाषाओं के बोलनेवाले थोड़ी बहुत हिन्दी समझ तथा बोल लेते हैं। इन सब को मिलाने से संख्या प्रायः २२ करोड़ हो जाती है। जिस भाषा का इतना प्रचार है उसकी बराबरी करने के लिये अँगरेज़ी जिसे एक लाख भी हिन्दुस्तानी ठीक ठीक नहीं बोल सकते क्योंकर समर्थ हो सकती है। आज तक हमारा देशी काम और व्यवहार हिन्दी में नहीं होने लगा है इस का कारण हमारी भीरुता, अश्रद्धा और हिन्दी भाषा के गौरव का अज्ञान है। यदि हम भीरुता छोड़ दें, श्रद्धावान् बनें और हिन्दी का गौरव समझ लें तो हमारी राष्ट्रीय और प्रान्तिक परिषद् तथा सरकारी धारा सभा का भी व्यापार हिन्दी में चलने लगेगा। आरम्भ प्रान्तिक राष्ट्रीय मण्डलों से होना आवश्यक है। इस कार्य में यदि कुछ कठिनता भी है तो वह प्रायः तामिल, द्रविड़ आदि भाषा-भाषियों के लिये है पर इसकी भी औषधि हमारे हाथ में है। उत्साही, साहसिक, स्वभावाभिमानी हिन्दी के जोशीले पुरुषों को बिना मूल्य हिन्दी की शिक्षा देने के लिये मदरास आदि प्रान्तों भेजना चाहिए। वे हिन्दी के पराक्रमी प्रचारक जायँ तो अल्प ही काल में मद्रास आदि प्रान्तों के हि वर्ग हिन्दी सीख लेंगे। यदि हम में उचित हो तो इस प्रश्न का उत्तर केवल त्रैराशिक पर रहता है। जितने अधिक शिक्षक भेजे जायँ उतना शीघ्र हिन्दी का प्रचार हो जायगा। शिक्षकों के भे के साथ ही साथ स्वयं शिक्षण-पुस्तकें भी बन चाहिएं, इन पुस्तकों का प्रचार बिना मूल्य हो आवश्यक है। भाषा सीखने की आवश्यकता बतल के लिये प्रतिष्ठित वक्ताओं का भेजना भी आवश्यक

जैसा प्रचार द्रविड़ देश में करना आवश्यक वैसा ही प्रचार बम्बई आदि प्रदेशों में भी उचित मराठी और गुजराती भाषा-भाषियों के लिये भी हि पुस्तकें तैयार करनी चाहिएं और उन प्रदेशों में प्रचारक भेजे जाने चाहिएं।

इस कार्य में द्रव्य की आवश्यकता है। ह धनाढ्य समुदाय को यह कार्य बोझ रूप न समझ चाहिएं, उनका यह कर्त्तव्य है कि इस बृहत्कार्य सहायता दें।

प्रबन्ध करने के लिये एक छोटी सी समि बनाने की आवश्यकता है। इतना ध्यान रखना उचि है कि इस समिति में केवल कार्य करनेवाले चुने जायँ।

इस निवेदन में एक गर्भित बात आ जाती है। यह है कि हिन्दी और उर्दू के बीच में भेद नहीं गया है। वास्तव में ये लिपि के भेद से भिन्न हैं बहुत अंश में एक हैं। लिपि के विषय में हम इस्लामी भाइयों से क्यों झगड़ें? वे उर्दू लिपि पढ़ें। हम में से थोड़े लोग उर्दू लिपि भी जानते तथा और अधिक लोग सीख लेंगे। जब तक इस्ला भाई देव नागरी लिपि नहीं पढ़ लेंगे तब तक हम राष्ट्रीय कार्य दोनों लिपियों में हुआ करेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो, इस प्रश्न का निपटारा हम इस्लामी भाइयों के साथ भ्रातृभाव से कर सकते हैं। अभी उक्त लिपि से सारे भारतवर्ष में भाषा का प्रचार करना एक मुख्य कर्तव्य है।

—:०:—

फैलनेवाले रोग।

[लेखक,—श्रीयुक्त "पाठक"।]

कुछ वर्ष हुए, अमेरिका के सानफ्रांसिसको नगर में ब्यूबोनिक प्लेग फैला था जिससे बहुत से आदमी काल के ग्रास हुए थे। परन्तु साथ ही प्रजा ने अनेक उपाय किए जिससे वह रोग बिलकुल नष्ट ही हो गया। पर हमारे यहां सदैव एक न एक रोग बना ही रहता है। उदाहरणार्थ राजयक्ष्मा, प्लेग, फसली ज्वर, माता, हैजा आदि। इस लेख में संक्षिप्त रूप से इन्हीं बीमारियों के विषय में कुछ उपयोगी बातें बतलाई जाती हैं।

(१) क्षय रोग—यह रोग इतनी भयंकर प्रबलता रखता है जिसे सुन कर बहुत ही चकित होना पड़ता है। इसके सामने प्लेग, हैजा, मलेरिया आदि रोग कोई चीज नहीं हैं। इसकी भयंकरता सुनिए—यह यमराज-राक्षस प्रति वर्ष ११ लाख के लगभग मनुष्यों का आहार करता है। प्रति दिन ३ हज़ार और प्रति मिनट २½ दो मनुष्यों के हिसाब से लोग इस रोग से मरते हैं। मनुष्य जाति इस रोगराज के कारण आर्थिक, सामाजिक और आर्थिक हानि तथा शारीरिक और मानसिक वेदना भोग रही है वह बहुत ही भीषण है। यह रोग उस समय आक्रमण करता है जब मनुष्य के दिन खाने कमाने के होते हैं। १८ से ४५ वर्ष की आयु तक के जितने लोग मरते हैं उसके तृतीयांश के मरने का कारण क्षय रोग है।

बीमारी फैलने का कारण—डाक्टरी परीक्षा से यह सिद्ध हो चुका है कि इस रोग के फैलानेवाले एक प्रकार के कीटाणु हैं। वे इतने छोटे होते हैं कि बिना सूक्ष्मदर्शक यंत्र की सहायता के दिखाई नहीं देते। यदि वे एक इंच लम्बाई में रखे जायँ तो लगभग १२०० के होंगे। यह रोगी के कफ में पैदा होते हैं और फिर जहाँ रोगी थूकता है वहाँ की मिट्टी में मिल कर हवा में उड़ते फिरते हैं। दूसरे मनुष्य के साँस लेते समय हवा द्वारा उसके शरीर में प्रवेश कर जाते हैं। बाजार में जो दूध बिकता है उससे भी क्षयरोग होता है क्योंकि कई जानवर भी क्षयरोग से ग्रस्त रहते हैं। बच्चों की आँतों में जाकर ये कीड़े कब्जियत और दस्त की बीमारी, गिल्टी में जाकर कण्ठमाल की बीमारी और जोड़ों में जाकर फोड़े पैदा करते हैं। खराब बीड़ी पीने से, अधिक धुएं अथवा धूल में साँस के साथ भीतर जाने से, कई दिन तक खाँसी सहित ज्वर आने से तथा अधिक चिन्ता से इस रोग के बढ़ने में सहायता मिलती है। इस रोग की पहचान यह है कि खाँसते समय मुँह से कफ के साथ रुधिर निकालता है।

क्षय रोग की पहचान।

फेफड़े के क्षय रोग में।

(१) खाँसी तथा थूक में रुधिर आना।
(२) हलका ज्वर विशेष कर शाम को आना।
(३) कलेजे में दर्द होना।
(४) साँस लेने में कठिनाई मालूम होना।
(५) रात को पसीना आना।
(६) भूख की कमी होना।
(७) धीरे धीरे शरीर का दुर्बल होता जाना।
(८) हृदय की धड़कन।
(९) मांस खाने और प्रसंग करने की बलवती इच्छा होना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(७०) यदि बच्चों को यह बीमारी हो तो उनके कान का बहना।

रोग के कीटाणु शरीर में किस प्रकार प्रवेश करते हैं।

(१) साँस के साथ फेफड़ों में पहुँच कर। (२) ऐसे गरिष्ठ भोजन के पेट में पहुँचने से जिसमें इस रोग के कीटाणु मिले रहते हैं। और (३) किसी घाव के द्वारा रुधिर में कीड़ों के मिलने से। खाँसने, जोर से बोलने या छींकने से क्षय रोग के जो कीटाणु बाहर निकलते हैं उनसे बचना दुःसाध्य है। ये कीटाणु तीन फुट से अधिक नहीं उड़ सकते। इस रोग के और भी कई भेद हैं—जैसे, हड्डियों की क्षयी, आँतों की क्षयी, कण्ठमाला आदि।

बचने के उपाय—(१) रोगी को अलग, स्वच्छ, हवादार और प्रकाशयुक्त कमरे में रखना, (२) उसके वस्त्रों से अलग रहना, (३) थूक जमीन में न गिरने देना (इसके लिये पीकदान चाहिए) (४) रोगी से चार फुट की दूरी पर बैठना, (५) आरंभ से ही चिकित्सा कराना। इससे रोगी अच्छा हो सकता है। इसका रोगी एक हजार दिन तक जीता है। (६) रोग शुरू होते ही चतुर डाक्टर की सलाह लेना, (७) जहाँ तक हो मुँह के द्वारा साँस न लेना, मुँह बंद करके नाक से साँस लेना, (८) गर्मी में नीम की छाया में रहना, (९) जाड़े के दिनों में आध घंटे तक मरीज की छाती पर सूर्य्य की किरणें पड़ने देना; लेकिन सिर धूप से बचा रहे, (१०) दालान में या खुली छत पर तेज हवा और तेज़ धूप से बचना, (११) शीतकाल में गरम कपड़े ओढ़ कर शरीर को गरम रखना, (१२) सोते समय कपड़ों से मुँह बंद न करना और पैर गर्म रखना (१३) झाड़ने बुहारने का काम बहुत सावधानी से करना चाहिए। इस बात का ध्यान रहे कि धूल न उड़ने पावे और जगह साफ हो। क्योंकि धूल साँस द्वारा फेफड़े में पहुँच कर विकार उत्पन्न करती है। (१४) घर में शक्कर का धुआँ सवेरे, दोपहर और शाम को कर देना क्योंकि इससे इस रोग के कीटाणु मर जाते हैं, (१५) दूध खूब पका कर पीना, (१६) धीरे धीरे गाने का अभ्यास करना; यह भी अत्यंत हितकारी है। (१७) स्वच्छ हवा और धूप में रहने के सिवा आहार विहार आदि नियम से करना और मादक पदार्थ और प्रसंग से बचना। (१८) अधिक मानसिक या शारीरिक परिश्रम न करना। (१९) सदैव प्रसन्न रहने का यत्न करना। इस में गाना और चित्त प्रसन्न रखना अत्यंत लाभकारी है। इन नियमों का ध्यान सदैव रखा जाय।

(२) प्लेग—इस बीमारी को सब लोग जानते हैं। यह बीमारी चूहों और उनके पिस्सुओं से होती है; इसलिये जहाँ तक हो सके इनका नाश कर देना अति आवश्यक है। क्योंकि यदि चूहे रह गए तो पिस्सू उनका विकारयुक्त रुधिर पी कर मनुष्य के शरीर को काट कर उसके द्वारा विकारयुक्त खून में प्रवेश करेंगे जिससे बीमारी बढ़ेगी। इसलिये चूहों को पकड़ कर पानी में डुबा कर मार डालो और फिर उन्हें आग पर जला दो। ओढ़ने बिछाने के कपड़ों में पिस्सू रहने लगते हैं इसलिये कपड़ों को धूप में डाल दो जिसमें वे नष्ट हो जायँ। जिस घर में चूहे मरें उसे शीघ्र ही छोड़ देना चाहिए और समझना चाहिए कि बीमारी शुरू हो गई। जहाँ तक हो सके गाँव भी छोड़ दिया जाय। यह बीमारी ठण्ढ पाकर होती है। चूहों के पंजे नरम होने के कारण वे इसे सह नहीं सकते। मनुष्यों में भी यह बीमारी पंजों के ही द्वारा प्रवेश करती है। जहाँ यह बीमारी फैली हो वहाँ इन नियमों का पालन किया जाय, यही अच्छे अच्छे डाक्टरों की राय है। (१) प्लेग का टीका लगवाया जाय। इसमें कोई विकार नहीं पड़ती, सिर्फ एक दिन मामूली बुखार आता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। इससे लाभ यह है कि गरम दवा नश्तर के द्वारा पेट में पहुँचाई जाती है जिससे प्लेग की बीमारी ठण्ड से होती है, दब जाती है। (२) पाँव में मोजे और जूते सदैव पहने रहो जिसमें सरदी न पहुँच सके। (३) गरम कपड़े पहनो और ओढ़ो। (४) घर में सोने बैठने रसोई आदि के स्थानों को खूब स्वच्छ रखो। (५) घर में चूहे बिल न बनाने चाहिएं; उन्हें भगाने के लिये बिल्ली अवश्य पालनी चाहिए। (६) घर में हवा का आवागमन ठीक हो। (७) ठण्ढ में नहीं घूमना चाहिए।

(३) मलेरिया याने फसली बुखार—भारतवर्ष में मलेरिया ने ऐसा विकराल रूप धारण किया है कि वह प्लेग आदि रोगों से किसी प्रकार कम नहीं है। परन्तु इसका नाम प्लेग, हैजे आदि की तरह भयंकर नहीं है। इसने अगणित नर नारियों को भक्षण कर डाला है। इसका विष शरीर में घुस जाने पर एकाएक बाहर नहीं निकलता, यदि निकलता भी है तो कठिनता से। इसका विष दिन पर दिन भयंकर रूप धारण करता है और कुछ काल में मनुष्य के जीवन का ग्राहक बन जाता है। मलेरिया का विष हैजे प्लेग आदि के विष से किसी प्रकार कम नहीं है। यह एक प्रकार के जंतुओं से होता है। ये जंतु मच्छड़ों के पेट में रहते हैं। मच्छड़ों के काटते ही ये जंतु उसके सूँड़ के द्वारा मानव शरीर में प्रवेश कर जाते हैं। इन जन्तुओं के कारण कुछ समय पश्चात् बुखार आने लगता है, बुखार आने के पहले खूब जाड़ा लगता है। इसी जाड़े के कारण इसका नाम जूड़ी बुखार पड़ गया है।

इसके कई भेद हैं—जैसे इकतरा, तिजारी, चौथिया आदि। जहाँ पानी, कूड़ा करकट आदि चीजें सड़ा करती हैं वहीं इसका राज्य होता है। जहाँ जमीन में खूब कीचड़ होता है और उसमें घास, फूस आदि चीजें सड़ती रहती हैं और उसमें धूप लगती रहती है वहाँ उसका बिष बहुत होता है। बरसात के अंत में इस रोग की बहुत अधिकता हो जाती है। कुआँर कार्त्तिक आदि महीनों में यह रोग अधिक भयंकर रूप धारण करता है। जहाँ पानी और झाड़ियाँ अधिक होती हैं वहाँ भी यह रोग खूब होता है। इसी प्रकार नदी या तालाब आदि के किनारों की बस्तियों में भी जहाँ खेत सींच कर धान की खेती की जाती है, यह रोग खूब होता है। ऐसे स्थान के निवासियों के पेट प्रायः ढोल के समान फूल और बढ़ जाते हैं क्योंकि बार बार मलेरिया का उत्पात होने से उनकी तिल्ली बढ़ जाती है। यह रोग अधिकतर गरम देशों में होता है। हमारा देश गरम है। लेकिन यहाँ के आदमी सफाई आदि की ओर विशेष लक्ष नहीं करते इसी से यहाँ उसका विष अधिकता से होता है। इसी के कारण लाखों भारतवासी काल का कलेवा हुआ करते हैं।

मच्छड़ों की अनेक जातियाँ होती हैं, पर उन सब में विष नहीं होता। जिनके काटने से मलेरिया फैलता है वे एक छोटी जाति के होते हैं। उन्हें एकाएक पहचानना कठिन है। उनका रंग ढंग बैठने उठने की रीति से पहचान लिया जाता है। मलेरिया के मच्छड़ों के पंखों पर काले दाग होते हैं और वे साधारण मच्छड़ों की तरह शब्द नहीं करते। यह जान ही नहीं पड़ता कि उन्होंने कब काटा है। उनके बैठने की रीति भी निराली होती है। बैठते समय उनका सिर अगले पैरों के ऊपर होता है और उनके पैरों का कुछ हिस्सा उनकी खोपड़ी पर। सिर छोटा और काला होता है। शरीर छोटा और पैर लम्बे होते हैं। इनकी उत्पत्ति गरमी में होती है। इनमें नर मादा का भी भेद है। मलेरिया का विष मादा से उत्पन्न होता है। नर वनस्पति खाता है। जिस समय उसे वनस्पति नहीं मिलती उस समय वह भी खून पीने लगता है। परन्तु मादा स्वभाव से ही रक्त की प्यासी होती है। दिन में ये घने अंधकार में छिपे रहते हैं और स्थिर पानी पर अपने अंडे देते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अड़तालीस घंटे बाद वे फूट जाते हैं। एक हफ़्ते में इनके पंख निकल आते हैं। मनुष्य के खून में दो प्रकार के कण होते हैं, लाल और सफ़ेद। पाँच छः लाल कणों में एक सफेद कण होता है। कीटाणु शरीर में घुसते ही लाल कणों को खाने लगते हैं। जितना भाग ये खा लेते हैं उतने भाग का स्थान काला हो जाता है। वहाँ इन कीटाणुओं की संख्या खूब बढ़ने लगती है। लाल कणों को खा कर ये कीटाणु जब बच्चे देने लगते हैं तब रोगी को जाड़ा लगता है और बुखार आ जाता है। रोगी को भूख नहीं लगती, थोड़ा सा ही खाने पर तृप्ति हो जाती है और कमजोरी बढ़ने लगती है। ऐसी दशा में रोगी को और भी कई रोग आ दबाते हैं। अंत में रोगी की मृत्यु हो जाती है।

रोकने के उपाय—(१) घर में बाहर या भीतर कहीं पानी इकट्ठा न होने दो (२) घर में कूड़ा कचरा न इकट्ठा होने पावे (३) घर के आसपास गड्ढे हों तो पाट दिए जायँ (४) जहाँ मच्छड़ अधिक हों वहाँ मिट्टी का तेल छिड़कना चाहिए (५) यदि बाहर सोना पड़े और वहाँ मच्छड़ हों तो शरीर में तारपीन का तेल लगा लेना चाहिए। (६) क्विनाइन का व्यवहार किया जाय। इसमें कीड़ों के मारने की शक्ति रहती है और यह रोग को दूर करती है।

(४) हैजा—जिस समय यह बीमारी अपना विकराल रूप धारण करती है उस समय बड़ा ही अनर्थ होता है। मुहल्ले के मुहल्ले और गाँव के गाँव खाली कर देती है; यहाँ तक कि कहीं कहीं तो बेचारा घर बिना स्वामी का ही खड़ा खड़ा रोता है। यह बीमारी दूसरे मनुष्य को बहुत जल्दी लगती है। यह हवा बिगड़ने के कारण छोटे छोटे कीड़ों से उत्पन्न होती है। ये कीड़े पेशाब, दस्त और वमन के साथ बाहर निकलते हैं और खाने की चीजों के साथ मनुष्य के शरीर में प्रवेश करते हैं। मक्खियाँ भी इस बीमारी को फैलाती हैं।

बचने के उपाय—(१) रोगी जिस मकान में हो वह स्थान स्वच्छ हो; वहाँ गंधक और लोबान की धूनी दी जाय जिसमें वायु स्वच्छ हो। (२) रोगी के खाने या ओढ़ने और बिछाने की चीज़ें यदि छूनी पड़ें तो अपना हाथ धो डालना चाहिए। (३) रोगी के कपड़े और बिस्तर तेल डाल कर अवश्य जला दिए जायँ। जिस तालाब से पीने के लिये पानी लिया आता हो उसमें कभी रोगी के कपड़े न धोने चाहिएं (४) रोग में पचनेवाली चीजें न खानी चाहिएं। (५) पानी को छान या औट कर पीना चाहिए। (६) अर्क कपूर और क्लोरोडाइन का- व्यवहार दस्त और कै शुरू होने के पहले ही कर देना चाहिए। (७) मन में धीरज रखना चाहिए, घबराना न चाहिए। (८) कुएँ में लाल दवा (पोटास परमगनास) जो अस्पताल में मिलती है डालनी चाहिए (९) बीमारीवाले गाँव के आदमी को अपने गाँव में न आने देना चाहिए। इन बातों का ध्यान रखना बहुत ही लाभदायक है।

(५) माता—इसे सब जानते हैं। इस बीमारी में सिर्फ इतनी विशेषता है कि इसमें अंग कुरूप हो जाता है और कभी कभी कोई कोई अंग, जैसे आँख, जाता भी रहता है। इसमें गरमी अधिक होती है और बुखार खूब जोर से आता है। इसके भी कई भेद हैं, जैसे, छोटी माता, बड़ी माता, मटना माता और मदरा आदि। इस बीमारी के रोकने का उपाय सिर्फ टीका लगाना है। जब से टीके की प्रथा प्रचलित हुई है तब से यह बीमारी उतनी अधिक नहीं होती। और जैसे जैसे टीके का प्रचार होता जायगा वैसे वैसे क्रमशः इसकी जड़ भी उखड़ती जायगी। यदि दो बार टीका लगाया जाय तो अति उत्तम हो।

—:०:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्य भाषा और जातीयता ।

[लेखक—कविवर पं० श्रीधर पाठक ।]

(यह भाषण आपने इस वर्ष आर्यभाषा-सम्मेलन के आरम्भ में पढ़ा था ।)

हम यहां हिन्दी या आर्यभाषा की उन्नति और प्रचार के विषय में विचार करने को एकत्र हुए हैं। यह विषय नया नहीं है, पुराना है; और उतना ही पुराना है जितना कि हमारी जातीय उन्नति का विषय है। हमारी मातृ-भाषा की उन्नति का प्रश्न हमारे जातीय जीवन या कौमी ज़िन्दगी का प्रश्न है। यदि हमारी जाति को जीवित रहना है तो उसके साथ साथ हमारी भाषा का भी जीवित रहना ज़रूरी है। जीवन से तात्पर्य उन्नति या उन्नति-शील जीवन से है। बिना उन्नति के जो जीवन हो, वह जीवन नहीं है, मरण है।

भाषा या वाणी के बिना, मनुष्य-जीवन का कोई कार्य सम्भव नहीं।

बिना भाषा के एक मनुष्य दूसरे मनुष्य को रोककर अपने मन की बात जता सकता है। यह छोटी बात सभी समझते हैं। जब पृथ्वी के किसी भाग में जहां लाखों करोड़ों लोग बसते हों, एक ही भाषा काम में लाई जाती है, तब वह उन लोगों की या उस देश की जातीय या देशीय भाषा कहलाती है। उसी भाषा के द्वारा उस देश के सब आन्तरिक और कभी कभी बाह्यिक) व्यवहार निर्वाहित होते हैं।

बहुत बड़े देशों में, जैसे कि हमारा भारतवर्ष है, दूरवर्ती भिन्न भिन्न प्रान्तों में भिन्न भिन्न भाषाओं का होना स्वाभाविक है। ऐसे देशों में यदि शासन एक हो तो उसके निर्वाह के अर्थ समस्त देश के लिये एक सामान्य भाषा की आवश्यकता होती है। यदि शासन-कर्ताओं और प्रजाजनों की जातीयता एक ही हो अथवा बहुत मिली जुली हो तो उसी सामान्य भाषा से सामान्य-शासन के अतिरिक्त दूसरे सार्वदेशिक कार्य भी निर्वाहित हो सकते हैं।

हमारे सम्पूर्ण देश का राज्य या शासन-प्रबन्ध आजकल एक विदेशीय जाति के हाथ में है। अतः इस देश की राजकीय या शासन-भाषा उसी जाति की भाषा है। परन्तु वह इतनी अधिक विदेशीय है कि यद्यपि सामान्य-शासन उससे चल रहा है, पर प्रजा के यावत् कार्य और व्यवहार उससे नहीं चल सकते। क्योंकि उसमें उनके लिये उपयुक्तता नहीं है। हमारे आदर्श और हमारी परम्पराएँ जो कि हमारी जातीय सम्पत्ति हैं उसके द्वारा सुरक्षित नहीं रह सकतो। अतः वह हमारी जातीय भाषा या राष्ट्र भाषा या देश भाषा नहीं मानी जा सकती। वह केवल हमारी राज-भाषा है।

अतः हमारे इस विस्तृत महाद्वीप के लिये एक ऐसी भाषा की आवश्यकता है जिसके द्वारा समस्त देश के सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक तथा अन्य नैतिक व्यवहार बिना राज-भाषा का आश्रय लिए, क्योंकि राजभाषा इन सब के लिये अनुपयुक्त है, भिन्न भिन्न प्रान्तों के बीच परस्पर में उपयुक्त हो सकें। इस प्रयोजन के उपयुक्त एक भाषा हमारे देश में विद्यमान है। वह हिन्दी या आर्यभाषा है जो भारतवर्ष के सब से बड़े भाग में बोली जाती है और प्रत्येक प्रान्तिक विभाग में थोड़ी बहुत समझी जाती है। यह भाषा हमारी संपूर्ण जातीय विशेषताओं के उपयुक्त है और यह उपयुक्तता हमारे हजारों बरसों के जातीय या सामाजिक तथा धार्मिक संघर्ष का फल है।

इस कारण यह भाषा भारतवर्ष के प्रत्येक निवासी की सामान्य वस्तु है। उस पर सब का समान स्वत्व है। इतना ही नहीं, अपनी जातीय-भाषा पर प्रत्येक का उतना ही स्वत्व है जितना अपने शरीर या आत्मा या सन्तति या धन-सम्पत्ति पर है। तथैव भाषा का भी प्रत्येक पर वही स्वत्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

या ममता है जो माता-पिता को अपनी सन्तति पर होती है। हमारी भाषा हम को अपनी माताओं के स्तन-पान के साथ मिलती है। वह हमारी माताओं की देन है, वह हमारी मातृ-भाषा है। ऐसी भाषा का हमारे जीवन के प्रत्येक अंग के साथ सम्बन्ध है। भाषा के प्रत्येक शब्द में शक्ति होती है, प्रत्येक शब्द में जीव और आत्मा होती है। प्रत्येक शब्द एक एक व्यक्तिवत्, एक एक विश्ववत् है। प्रत्येक शब्द में पवित्र जातीयता होती है, प्रत्येक शब्द किसी न किसी जातीय परम्परा का द्योतक होता है। प्रत्येक शब्द अपना इतिहास रखता है जो इतिहास उस शब्द की जन्मभूमि के इतिहास से सम्बद्ध होता है। अतः जो शब्द हमारे हैं, चाहे वे परम्परा से ही हमारे हों, अथवा किसी कारण-विशेष से हमने अपने बना लिए हों, उनसे हमारा सम्बन्ध है। जो शब्द हमारे नहीं हैं उनमें हमारी जातीयता और हमारा अपना-पन नहीं है। हमारे देश में एक ऐसी भाषा है जिसे हम अपनी जातीय भाषा कह सकते हैं और वह हिन्दी या आर्य भाषा है। जिस वस्तु को जो अपनी मानता है उसके साथ वह अपने सगों का सा बरताव करता है। अब प्रश्न यह है कि क्या ऐसा बरताव हम इस अपनी मातृ-भाषा के साथ करते हैं? क्या हम अपने सब काम आर्यभाषा और आर्यलिपि में करते हैं? क्या हम अपनी चिट्ठी पत्री, लिखत-पढ़त, लेन देन, हिसाब किताब आर्यभाषा और आर्यलिपि में करते हैं? क्या हमारे सब ग्रन्थ, सब सामयिकपत्र जो हमारी जातीय सम्पत्ति हैं आर्यभाषा और आर्यलिपि में होते हैं?

इन प्रश्नों का उत्तर यदि एक स्वर और मुक्त-कंठ से "हां" हो तो निस्सन्देह हम अपनी भाषा का उचित व्यवहार कर रहे हैं और अपने जातीय जीवन को पुष्टि प्रदान करते हुए अपनी जाति को अमर बना रहे हैं। परन्तु यदि उत्तर कुछ अंश में भी नकारात्मक हो तो हम अपना धर्म अपनी मातृ-भाषा की ओर नहीं निबाह रहे हैं और अपनी स्थिति शोचनीय बना रहे हैं। क्या इस प्रश्न का आंशिक उत्तर वह पुस्तक-पुण्यशालाएं नहीं दे रही हैं जो प्रत्येक गुरुकुल-यात्री को कुल-भूमि में पदार्पण करते ही अनेकों फ़ारसी लिपि की पुस्तकों से परिचय कराती हैं। क्या किसी अपढ़ व्यक्ति के लिये में उन पुस्तकों को देख कर दुःख नहीं होता? क्या ऐसा दृश्य किसी दूसरे देश या दूसरी जाति में संभव है? क्या आप में से किसी ने भारतीय आर्य से भिन्न किसी जाति को अपने साहित्य या धर्म ग्रन्थ अपनी जातीय भाषा से भिन्न भाषा या अक्षर में अपने लिये लिपिबद्ध करते देखा या सुना है? क्या यह बात सत्य नहीं है कि आर्यसमाज और हिन्दूसभा के बहुत से समाचारपत्र उर्दू भाषा और फ़ारसी लिपि में प्रकाशित होते हैं? क्या यह अपनी मातृ-भाषा का उचित व्यवहार है?

यह स्मरण रखने योग्य सिद्धांत है कि प्रत्येक जाति की यावत् शक्तियों का पूरा और सच्चा विकास उस जाति की मातृ-भाषा ही के द्वारा संभव है। यदि किसी जाति का आंशिक विकास किसी विदेशी भाषा के द्वारा हुआ हो या होना आरम्भ हो गया हो तो समझिए कि, यदि वह जाति अपनी मातृ-भाषा को शीघ्र ही उचित व्यवहार में न लावेगी तो अन्त को वह विदेशी भाषा ही उस जाति की मातृ-भाषा हो जायगी।

यह भी स्मरणीय है कि विश्व प्रपंच के विविध विभागों में सच्चा और सजीव सौन्दर्य तभी संपादित होता है जब योग्य को योग्य स्थान मिलता रहता है। जो वस्तु जहाँ रहने योग्य हो उसे वहाँ रखना या रहने देना ही सौन्दर्य का सम्पादक है। यह परमात्मा की सृष्टि का एक नियम है। हमारी बड़ी कमाई से बनाई हुई हमारी परंपरा की भाषा आर्यभाषा या हिन्दी भाषा हमको शोभा देती है क्योंकि वह हमारी है और हम उसके हैं। हम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सका स्थान है और उसमें हमारा स्थान है; और
र संबन्ध (जैसा कि एक बार निवेदित किया जा
का है) सैकड़ों, सहस्रों बरसों के सहज संयोग
र सतत संदर्भ से बना है। इस सम्बन्ध का
ाकरण प्रत्येक आर्य का परम धर्म है। इसके
ये प्रत्येक आर्य पुरुष और प्रत्येक आर्य-रमणी को
ह प्रतिज्ञा कर लेनी चाहिए।

अपनी मातृ-भाषा की ओर हमारा इतना ही
र्तव्य नहीं है। देखिए, एक समय था जब कि हम
ाकों को शक्ति बाँटते थे। अपनी अमूल्य
द्या-शक्ति को बिना मूल्य दूसरों को देने में
नन्द मानते थे। परन्तु क्रमशः हम इतने दानी
गए कि अपना सब कुछ औरों को दे डाला,
प कोरे रह गए और अपनी सारी शक्ति
ा बैठे। अब औरों की ओर ताकते हैं। वह हमारी
टी हुई शक्ति अन्यत्र पहुँच कर हज़ार गुनी हो
है। वह आज दसों दिशाओं में देदीप्यमान
ाई देती है। सिर्फ हमारे ही घर में उसकी कमी
। इस कमी को मातृ-भाषा की सेवा द्वारा हम दूर
र सकते हैं। सारे संसार के रत्नों से उसका
ार भरिए और सारे संसार की शक्ति उसके
ारा आकर्षित कर अपनी शक्ति में मिलाइए।

भारतवर्ष में हिन्दू (आर्य) मुसलमान, ईसाई
दि मत-भेद से भिन्न भिन्न जातियाँ बसती हैं।
सबको एक साथ इस देश में रहना है। उन्हें
ई शक्ति, सिवा ईश्वरी शक्ति के, एक दूसरी से
कुल अलग नहीं कर सकती। उसका एक
ह रहना ज़रूरी है। धर्म और मत के सम्बन्ध
पृथक् पृथक् हैं, परन्तु राष्ट्र-सम्बन्ध में वे
माला के दाने हैं। इस सम्बन्ध में उनका
हित्य एक हुए बिना उनकी राष्ट्रीय उन्नति संभव
हीं। राष्ट्रीय साहित्य राष्ट्रीय भाषा में ही हो सकता
। अतः राष्ट्रीय मंगल के लिये इस राष्ट्रीय आर्य
भाषा को बिना विलम्ब सब को अपनाना चाहिए और अपना कर उचित व्यवहार में लाना चाहिए।

यदि हम अपनी मातृ-भाषा की सेवा और आराधना जारी रखें तो क्या यह संभव नहीं कि वह समय शीघ्र ही आवेगा जब कि इस गुरुकुल की भाँति भारतवर्ष भर में स्थान स्थान पर आर्यभाषा के विश्वविद्यालय देखने में आवेंगे और असंख्य हिन्दी पुस्तकालयों से देश भूषित हो जायगा। उस समय देश देशान्तरों से विद्यार्थी हमारी भाषा द्वारा ज्ञान उपार्जन करने के हेतु हमारे द्वार पर पुनः पूर्ववत् आया करेंगे।

विज्ञान की कृपा से इस पृथ्वी पर पुराण-प्रसिद्ध आकाश-यान फिर बनने लग गए हैं जिनके द्वारा अन्य देशों में अनेकों कार्य होते सुने जाते हैं। ये यान कुछ दिनों में अवश्य संसार-व्यापी हो जायँगे। तब क्या यह सम्भव न होगा कि हमारे आर्यभाषा के विद्यालयों और पुस्तकालयों से लाभ उठाने के लिये, पृथ्वी के देशान्तरों ही के नहीं, किन्तु सुदूर नक्षत्रों के निवासी भी विमानों में बैठ बैठ कर आया करेंगे! (?) हमको आर्यभाषा की उन्नति के सम्बन्ध में ऐसा ही सपना देखना चाहिए और उसको प्रत्यक्ष कर दिखाने का प्रयत्न करना चाहिए। तभी हमारे आर्य नाम की सार्थकता संपन्न होगी।

—:०:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी और बँगला साहित्य।

[लेखक,—श्रीयुक्त बा० प्रियनाथ बसाक बी० ए० एल० टी०।]

(गतांक से आगे।)

प्रौढ़ माध्यमिक काल १५००–१६२३

यह समय बँगला साहित्य में "श्री चैतन्य-साहित्य काल" और "नवद्वीप का प्रथम युग" के नाम से विख्यात् है। इस में पदावली साहित्य भी मिलित है। पदकल्पतरु, रसमंजरी, गीत चिन्तामणि, पदकल्प लतिका, इत्यादि पुस्तकें इसी समय में लिखी गईं। कवियों में अनन्तदास, उद्धवदास, कालीकिशोर, गोविन्ददास, ज्ञानदास, बलरामदास, आदि प्रधान थे। चैतन्य देव के जीवन के संबंध में चैतन्यमंगल, चैतन्यभागवत, चैतन्यचरितामृत, भक्तिरत्नाकर, प्रेमविलास आदि ग्रंथ लिखे गए। इनके अतिरिक्त भक्तमाल, कृष्णमंगल आदि की भी रचना हुई।

इस समय में हिन्दी साहित्य में विशेष उन्नति हुई। आजकल जिस प्रकार अँगरेजी भाषा का राज्य है उस समय उसी प्रकार ब्रज-भाषा का राज्य था। आजकल जिस प्रकार हम मातृ-भाषा के साथ अँगरेजी मिला कर अपनी विद्वत्ता दिखलाते हैं उस समय उसी प्रकार बँगला में चार आना ब्रज-भाषा बिना मिलाए भाषा नहीं कहलाती थी। इसी लिये उक्त ग्रंथों में ब्रज-भाषा की बहुत भरमार है। यथा—

चैतन्य चरितामृत से—

प्रयाग पर्यन्त दोहें तोमा संगे जाबो।
तोमार चरण संग पुनः कहाँ पाबो।
म्लेच्छ देश केह कहाँ करवे उत्पात।
भट्टाचार्य पंडित कोहिते न जाने बात।

नरोत्तमविलास से—

होईलूँ उद्विग्न वृन्दा बिपिन देखिते।
ताहा न होइलो, गैलूँ अद्वैत गृहेते।
सबे महा दुःखी होईला आमार संन्यासे।
सभा प्रबोधिलूँ रहि अद्वैतेर वासे। इत्यादि

यदि यह कहा जाय कि गोविन्ददास और सल राम ने तो ब्रज-भाषा ही लिखी है तो भी अत्युक्ति न होगी। जैसे उदाहरण स्वरूप—

काँहे को सोच करे मन पामर
राम भज तूँह रैना दिना।
इष्ट कुटुम्बक छोड़ दे आशा
ये संसार असार एक उह नाम बिना।
जो कीट पतंग के आहार जोगाइत
पालक है वहि एक जना।
कवि सत्य कहे मन थिर रहो
जिनि दिहा दंत सो देगा चना।

बँगला भाषा की पद-रचना में इस समय अनेक छन्द प्रवर्तित हुए। पदकल्पतरु इत्यादि पुस्तकों में कविता एक पुष्पिता लता की भाँति नाना छन्दों में अपनी छटा देती हुई दिखाई पड़ती है। यथा—

धनि रंगिनि राई
विलसहि हरि संगे रस अवगहई।
हरि सुंदर मुखे
ताम्बूल देई चुम्बई निज सुखे।

और भी—

आमार अंगेर बरण लागिया पीत बास पोरे श्याम
प्राणेर अधिर कोरेर मुरलि लईते आमार नाम।

उक्त उदाहरणों से विदित होता है कि बँगला भाषा में हिन्दी ने स्थायी चिह्न छोड़ रखा है। जैसे—हर्ष–हरिष, मग्न–मगन, गर्ज्जन–गरजन, निर्म्मल–निरमल, प्रकाश–परकाश इत्यादि। ब्रज-भाषा की कविता में शब्दों का यही रूप मिलता है। वैष्णव युग की कविता में ये शब्द बहुत अधिक परिमाण में पाए जाते हैं; किन्तु इनकी संख्या क्रमशः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलती गई है। हिन्दी भाषा के अनुनासिक शब्द भी बँगला भाषा में बहुत आ गए हैं यथा—आँखि, कूँड़ा, चाँद, आदि। फारसी भाषा का प्रभाव भी कुछ कुछ देख पड़ता है; सहर, फसल, इमारत, फानूस, बालि, वजीर, पेयादा आदि शब्द आ घुसे हैं।

जिस प्रकार बँगला भाषा में वैष्णव धर्म सम्बन्धी काव्य लिखे गए उसी प्रकार हिन्दी भाषा में भी उस युग के धर्म काव्य अतुलनीय हैं। इस समय में सूरदास जिनके पद संपूर्ण भारतवर्ष में प्रसिद्ध हैं, मलिक मुहम्मद जायसी, जिन्होंने पद्मावत की रचना की है, मीराबाई, बीरबल, गंग, अब्दुलरहीम खानखाना, तुलसीदास, केशवदास आदि कवि हुए। धर्म-विषय में दोनों साहित्यों का मेल छोड़ इन दोनों भाषाओं के ऐतिहासिक-काव्यों में भी इस समय समता देखी जाती है। पदादि के उदाहरण दिए गए हैं। परन्तु कवित्तों के उदाहरण नहीं दिए गए। उनकी रचना अधिक हुई और इनमें बँगला भाषा की भाँति सहस्रों फारसी शब्द मिले हुए हैं। इसका कारण मुगल राज्य का प्रभाव ही है। राजभाषा का स्थानिक भाषा पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। मुसलमानों के राज्य के विस्तार के साथ साथ उनकी भाषा भी स्थानिक भाषाओं में मिलने लगी और उन पर अपना आधिपत्य जमाने लगी। इस समय इसको देशी भाषाओं से निकालना बड़ा कठिन हो गया है। किन्तु इससे हिन्दी भाषा की सरलता नष्ट नहीं हुई। क्योंकि उस समय के हिन्दू और मुसलमान कवि प्रायः मिश्रित भाषा ही में कविता रचा करते थे। उदाहरण स्वरूप—

शाह अकबर बाल की बाँह
अचिंत्य गही चलि भीतर भौने।
सुन्दरि द्वारहिं दृष्टि लगाय के
भागिबे को भ्रम पावत गौने।
चौंकत सो सब ओर बिलोकत
संक सकोच रही मुख मौने।

यों छबि छैल छबीले के छाजत
मानो बिछोह परे मृग छौने।
मानुष हों तो वही रसखान
बसों मिलि गोकुल गाँव के ग्वारन।
जो पशु हों तो कहा वश मेरो
चरों नित नंद की धेनु मझारन।
पाहन हों तो वही गिरि को
जो कियो करि छत्र पुरंदर धारन।
जो खग हों तो बसेरो करों
वा कलिंदी के कूल कदंब की डारन।
रह्यो चकित चहुँघा चितै, चित मेरो मति भूल।
सूर उदे आई रही, दृगन सांझसी झूल॥
रहिमन राज सराहिए जो बिधु के बिधि होय।
कहा निगोड़ो तरनि यह उठत तरैयन खोय॥

मुसलमान काल में कवित्त साहित्य में नायिका-भेद, उद्दीपन, ऋतुवर्णन, विभाव, अनुभाव, संचारी-भाव, रस, शब्दालंकार, आदि अनेक विषय अधिक परिमाण में लिखे गए। ये विषय बँगला में भी विद्यापति, ज्ञानदास आदि के काव्यों में मिलते हैं।

मेचक कवचि साज बाहन बयारि बाजि
गाढ़े दल गाजि उठे दीरघ बदन के।
भूषण भनत समसेर सोई दामिनी है
हेत नर कामिनि के मान के कदन के।
पैदर बला के धुरवान के पताके देखि
घेरि घेरि आवें चहुँ ओर ही सदन के।
नाकर निरादर पिया सों मिल सादर
ये आए बीर बादर बहादर मदन के।
मोरपखा सिर ऊपर राजि के
गुंज की माल हिए पहरोंगी।
ओढ़ि पितम्बर ले लकुटी बन
गावत गोधन संग फिरोंगी।
भावेरि तोहि कहा रसखान
सो तेरे लिये सब सोंग करोंगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

या मुरली मुरलीधर की
अधरान धरी अधरा न धरोंगी ।
पीय निकट जाके, नहीं घाम चाँदनी ताहि ।
पीय निकट जाके नहीं, घाम चाँदनी ताहि ॥
हता राम कपि ने जबहि, हरषी जनक सुताहु
राक्षसगण रोवत फिरहिं, हा हा राम हताहु ॥
भयो अपत कै कोपयुत, कै बौरो यहि काल ।
मालिन मोसों कहे न क्यों, वा रसाल को हाल ॥
इत्यादि ।

पूर्वालंकृत काल १६२३–१७३३

पूर्वालंकृत समय बँगला भाषा में संस्कार समय गिना जाता है। यह दो भागों में विभक्त है (१) लौकिक धर्म शाखा और (२) अनुवाद शाखा ।

समाज के इतिहास में सर्वत्र ही नए और पुराने समय के द्वन्द्व युद्ध में भावी समाज गठित होता है। नए सम्प्रदाय का अदमनीय तेज होने के कारण पुराने समाज की बातें उसके सन्मुख नहीं ठहर सकतीं। परन्तु उसके साथ ही मणिमुक्ता आदि न बह जायँ, इस विचार से रक्षणशील व्यक्ति समाज-स्रोत के विपक्ष में रहते हैं और प्राचीन बातों को नवीन साँचे में ढाल उसकी रक्षा करते हैं। इस समय रामायण, महाभारत, चंडी, मनसार, प्रभृति सब पुस्तकों के संस्करण प्रकाशित हुए। यही संस्कार हुआ। माधवाचार्य, मुकुन्दराम, केतकीदास, क्षेमानन्द आदि कवियों ने इन पुस्तकों को नूतन भाव, मौलिकता, नए नए रस, चरित्रों की श्रेष्ठता, नाटकीय कौशल, सामाजिक अवस्था आदि के द्वारा वर्धित कर नए रूप में परिणत किया। संस्कृत से भी कई ग्रंथ, जैसे भागवत, प्रभासखंड आदि अनुवादित हुए। इन सब काव्यों में बंगाल देश के आचार विचार आदि सुचारु रूप से वर्णन किए गए हैं। परंतु इनमें वीर रस का प्रायः अभाव ही है।

बँगला साहित्य में इसके पीछे के युग में कुछ हुआ हिन्दी में वह इसी काल में आरंभ हो परिपक्व हो गया। इस युग में हिन्दी में काव्य विन्यास और लिपि कौशल का विकाश विशेष रूप से हुआ। औरंगजेब के अत्याचारों के कारण भारतवर्ष में जातीयता जागृत हुई और हिन्दू योद्धाओं को उत्साह देने के लिये बहुत सी वीररस-पूर्ण कविताएँ लिखी गईं। इस समय में सेनापति जिन्होंने ऋतुओं का वर्णन बड़ी उत्तमता-पूर्वक किया है, बिहारी जिनकी सतसई भारतवर्ष में प्रसिद्ध है और जो कविरत्नों में एक हैं और भूषण कवि जो वीर-रस के मानों अवतार ही थे, हुए। इनकी एक कविता इस प्रकार है—

हैवर हरद साजि गैवर गरद सम,
पैदर के ठट्ठ फौज जुरी तुरकाने की।
भूषण भनत तहाँ चम्पति को छत्रसाल,
रोप्यो रन ख्याल ह्वै के ढाल हिन्दुआने की।
कैयक हजार एक बार बैरी मार डारे,
रंजक दगिनि मानो अगिनि रिसाने की।
सैद अफगन सैन सगर सुतन लागी,
कपिल सराप लों तुराप तोपखाने की।

वर्षा ऋतु के संबंध का इनका एक कवित्त पहले ही दिया गया है। इनके उपरान्त निवाज कवि हुए जिन्होंने संयोग-शृंगार की कविता की है—

छतियाँ छतियाँ से लगाय दुवौ,
दुवौ जी में दुहूँ के समाने रहें।
गई बीति निशा पे निशा न भई,
नए नेह में दोऊ बिकाने रहें।
पट खोलें निवाज न भोर भए,
लखि द्योस को दोउ सकाने रहें।
उठि जैबे को दोऊ डराने रहें,
लपटाने रहें पट ताने रहें।

इनके उपरान्त महाकवि देवदत्त का आविर्भाव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ। ये हिन्दी साहित्य के कालिदास हैं। हम
ा सूरदास जी की उपमा सूर्य के साथ और
सीदास जी की चन्द्रमा के साथ देते हैं; परंतु
नों से बढ़ चढ़ कर हैं और इनको गगनमंडल
कहना चाहिए जिसमें कई सूर्य और चन्द्रमा
राजमान हैं। लोकोक्ति, उपमा, रस आदि में
की कविता अनुपम है। यथा—

अनुराग के रंगनि रूप तरंगिनि
अंगनि ओप मनो उफनी।
कवि देव हिए सियरानि सबै
सियरानि को देख सुहाग सनी।
वर धामन बाम चढ़ी बरसैं
मुसकानि सुधा घनधार घनी।
सखियान के आनन इन्दुन ते
अँखियान की बंदनवार तनी।

इनके उपरान्त लाल कवि, नागरीदास, हरिकेश,
ाल, आदि बहुत से कवि हुए। हिन्दी साहित्य
इस समय को 'अगस्टन एज' कह सकते हैं।

उत्तरालंकृत, परिवर्त्तनकाल १७३३–१८८८
और वर्त्तमान काल।

यह बँगला में कृष्णचन्द्रीय युग अथवा नवद्वीप
का द्वितीय युग कहलाता है। इसके साथ ही वर्त्त-
मान काल के साहित्य को दो भागों में विभक्त करेंगे—
पद्य और गद्य। पद्य रचना में अवनति हुई है, भावों
में अधःपतन हुआ है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।
हिन्दी और फारसी के प्रेमिक-प्रेमिका-भाव से यह
कलुषित हुई है। विद्या-सुन्दर काव्य, आलोयाल
कवित पद्मावती आदि में मुसलमानी भावों की
अधिकता है। राय गुणाकर रचित अन्नदामंगल में
देवचरित्र अपमानित हुए हैं। वर्णन प्राणशून्य कहें
तो भी कोई हानि न होगी। दो एक अच्छे ग्रंथ
अवश्य रचे गए थे परंतु वे उच्च श्रेणी के कदापि
नहीं कहे जा सकते। एक बात यह अवश्य हुई कि
इस समय में बँगला भाषा में प्रथम ही वीर-रस का
आविर्भाव हुआ। माइकेल मधुसूदनदत्त का मेघनाद-
बध काव्य इसका ज्वलन्त दृष्टांत है। रवीन्द्रनाथ
टागोर की कविता नई प्रतीत होती है किन्तु उसमें
अँधेरे में दीपशिखा के समान पुराने भाव नए
आवरण में जड़े गए हैं, यही विशेषता है।

गद्य-रचना आरंभ हुए अभी अधिक समय
व्यतीत नहीं हुआ। गद्य को पहले से क्यों भाषा में
स्थान नहीं दिया गया इसका ठीक ठीक कारण
निर्णय करना कुछ सहज नहीं है। परंतु इतना
अवश्य कह सकते हैं कि पद्य की भाँति गद्य जल्दी
याद नहीं हो सकता और उसमें बहुत विस्तारपूर्वक
लिखना पड़ता है। यही कारण जान पड़ता है। छापने
की अथवा ग्रन्थों के सहज प्रचार की कोई सुगम युक्ति
न होने के कारण ही इसका व्यवहार नहीं हुआ।
जो हो, हमें विद्यापति और चंडीदास के गद्यपद्य मय
लेख मिले हैं। चैतन्यदेव के प्रिय शिष्य रूप
गोस्वामी रचित 'कारिका' नाम की एक क्षुद्र पुस्तक
भी मिली है और अनेक विज्ञ पुरुषों का विश्वास है
कि चार सौ वर्ष पूर्व बँगला गद्य भाषा अच्छी
प्रांजल और गुरुतर विषय रचना के लिये सर्वप्रकार
से योग्य थी। उदाहरण स्वरूप—

'श्री श्री राधाविनोद जय। अथ वस्तु निर्णय।
प्रथम श्री कृष्णेर गुण निर्णय। शब्द गुण, गंध
गुण, रूप गुण, रस गुण, स्पर्श गुण, एई पाँच
गुण। एई पाँच गुण श्रीमती राधिका तेओ बसे'
इत्यादि। ११८५ बँगला सन् की एक हस्तलिखित
'भाषा-परिच्छद' नामक पुस्तक की भाषा इस प्रकार
है—'गोतम मुनि के शिष्य सकल जिज्ञासा कोरिलेन,
आमादेर मुक्ति की प्रकारे हय? ताहा कृपा करिया
बलह। ताहाते गोतम उत्तर कोरिते छेन तावत
पदार्थ जानिलेई मुक्ति हय। ताहाते शिष्येरा सकलि
जिज्ञासा कोरिलेन पदार्थ कतो? ताहाते गौतम
कहिते छेन—पदार्थ सत प्रकार'—इत्यादि। इसी
प्रकार क्रमशः गद्य भाषा उत्तरोत्तर वृद्धि प्राप्त करती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गई। राजा राममोहनराय ने बँगला भाषा का व्याकरण और गद्य में कई छोटे छोटे ग्रंथ लिखे। ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने बँगला की असाधारण पुष्टि साधन की है। इनके उपरान्त कालीप्रसन्न और बंकिमचन्द्र बँगला के प्रवर्तक और संस्कारक हुए। यही दोनों इस भाषा के 'मेकाले' और 'स्काट' हैं। इनके पश्चात् बहुत से नाटक, उपन्यास आदि लिखे गए हैं और लिखे जा रहे हैं। अनेक स्थानों में इन पुस्तकों में हिन्दी को भी स्थान मिला है। यथा 'आबू-होसेन' में 'मेलो आँखि चिड़िया मिठी बोले' 'आसमाँ में निकला है सुरख आफताब,; 'अलिबाबा' में 'छि छि इत्ता जंजाल। इतना बड़ा बाड़ी इसमें इत्ता जंजाल।'' आदि।

हिन्दी साहित्य में भिखारीदास ने शृंगारादि विषय में, वृन्दावनहित ने पद्य साहित्य में, गिरिधरदास ने नीतिविषय में और पद्माकर ने रसभेद और भाव-भेद में कविताएं की हैं। इस समय तक हिन्दी में रचना ब्रजभाषा में ही हुई परन्तु आधुनिक रचना मिश्रित है अर्थात् ब्रजभाषा में भी होती है और खड़ी बोली में भी।

गद्य—हिन्दी गद्य का लिखना संम्वत् १२२९ से आरंभ हुआ है। किन्तु पहले इसका अधिक प्रचार न था। हिन्दी साहित्य में लल्लूलाल ही प्रथम गद्य-लेखक माने जाते हैं। इन्होंने १९ वीं शताब्दी के प्रारंभ में 'प्रेमसागर' नामक ग्रंथ लिखा। इसकी भाषा बोलचाल की ही है, साहित्य की नहीं। इसमें उर्दू बहुत कम है और अलंकारादि कुछ भी नहीं हैं। इनके उपरान्त राजा शिवप्रसाद ही को हिन्दी का सुलेखक और परमाचार्य मानना चाहिए। क्योंकि इन्होंने बहुत मधुर और उत्तम भाषा लिखी है ये सरल उर्दू शब्द और प्रचलित संस्कृत शब्दों के पक्षपाती थे। बाबू हरिश्चन्द्र भी पहले उन्हीं के सिद्धान्त के पक्षपाती थे परन्तु अंत में वे फारसी भाषा के शब्दों के हिन्दी में व्यवहार के विरोधी हुए। आजकल हिन्दी गद्य के अच्छे अच्छे लेखक विद्यमान हैं हिन्दी में अनेक समाचारपत्र भी निकलते हैं विविध विषयों पर पुस्तकें भी लिखी जा रही हैं हिन्दी-साहित्य की उत्तरोत्तर उन्नति के लिये अनेक सभाएँ भी स्थापित हुई हैं और उनमें नागरी प्रचारिणी सभा काशी विशेष तत्परता दिखा रही है गद्य भाषा में भी विशेष उन्नति हुई है। निम्न-लिखित उदाहरणों से यह बात स्पष्ट विदित हो जायगी।

प्रथम युग का हिन्दी का गद्य—

'स्वस्ति श्री श्री चीत्रकोट महाराजाधीराज तपराज श्री श्री रावलजी श्री समरसीजी बचनातु अमा आचारज ठाकुर रसीकेष कस्य थाने दली डायजे लाया अणीराज में औषद थारी लेवेगा. औषद ऊपरे माल की थाकी है ओ जनाना में थारा वंशटाल ओ दुजो जावेगा नहीं और थारी बैठक दली ही जी प्रमाणे परधान बरोबर कारण होवेगा'

इसका अर्थ—

श्री सम्पन्न चित्तौर स्थान के शासक महाराजाधिराज तपेराज श्री श्री रावलजी समरसी आज्ञा से आचार्य ठाकुर ऋषीकेश को दिया गया, तुमको दिल्ली से दायज में लाए हैं। इस राज्य तुम्हारी औषध की जावेगी। औषध विभाग के तुम निरीक्षक रहोगे। जनाने में तुम्हारे वंशधरों को छोड़ कर कोई दूसरा नहीं जायगा। दिल्लीमें जैसे तुम्हारी बैठक (दरबारी) प्रधान के पास थी वैसे ही यहाँ भी रहेगी।

संबत् १४०३ की हिन्दी—

महात्मा गोरखनाथजी। सो वह मनुष्य सम्पूर्ण तीर्थ अस्नान करि चुकौ, अरु सम्पूर्ण पृथ्वी ब्राह्मणों को दै चुको अरु सहस्र जज्ञ करि चुकौ, अरु देवतन सर्व पूजि चुकौ, अरु पितरनि को सन्तुष्ट करि चुको स्वर्गलोक प्राप्ति कर चुकौ, जो मनुष्य के मन में मात्र ब्रह्म के विचार बैठो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सं० १६०० के पश्चात् की—

गोस्वामी विट्ठलदासजी। जमें के शिर पर
मायमान करत है त्रिबिध वायु बहत है हे निसर्ग
सखी कूं संबोधन, प्रिया जू नेत्र कमल कूं
मुद्रित दृष्टि होय के बारंबार कछु सखी कहत
यह मेरो मन सहचरी एक क्षण ठाकुर को त्यजत
हीं।

सं० १७५० के लगभग की—

धन पाए ते मूर्खहु बुद्धिवंत ह्वै जातु है और
वस्था पाए ते नारी चतुर ह्वै जात है, उपदेश
लक्षणा सो मालूम होत है और वाक्य हू में
ट है।

सं० १८६० लल्लूलाल की—

इस बीच अति व्याकुल हो सुधि बुधि देह की
सारे मन मारे रोती यशोदा रानी उद्धवजी के
कट आय रामकृष्ण की कुशल पूंछ बोली कहो
द्धवजी हरि हम बिन वहां कैसे इतने दिन रहे और
संदेशा भेजा है कब आय दर्शन देंगे ?

सं० १९४१ शिवप्रसाद—

जब विपत के दिन आते हैं तो सारे सामान ऐसे
बँध जाते हैं निदान राजा नल ने चलते समय
मयन्ती की साड़ी काट कर आधी उसमें से अपने
हिरने को ली और आधी उसके बदन पर रहने दी।

हरिश्चन्द्र—

महाराज फिर संतोष ने बड़ा काम किया। राजा
सब को अपना चेला बना लिया। अब हिन्दुओं
खाने मात्र से काम, देश से कुछ काम नहीं। रोज-
र न रहा तो सूद ही सही। वह भी नहीं तो घर
ही सही। 'संतोषं परमं सुखम्' रोटी ही को
राह सराह कर खाते हैं। उद्यम की ओर देखते ही
हीं।

वर्तमानकाल की—

मेरे विचार में राम ने सीता-निर्वासन-जनित घोर पाप का प्रायश्चित्त अपने विलापों से किया है। प्रबल अश्रुधारा से उन्होंने अपने चरित्र की कालिमा को बहुत अंशों में धो दिया है।

इत्यादि।

विशेष वक्तव्य।

आधुनिक समय में बंगला भाषा में जो उन्नति हुई है वह अति आश्चर्यजनक है। मुसलमान राज्य में हिन्दी-भास्कर मध्याह्न गगन में था, बंगला की भी इन दिनों वही दशा है। हिन्दी भाषा की उतनी क्यों उन्नति नहीं हुई इसके अनेक कारण हो सकते हैं। प्रथम, इस प्रान्त के वासियों के वैसे अधिकार नहीं हैं जैसे बंगभाषियों के हैं। यहां मनुष्यों को उस प्रकार शिक्षा नहीं दी जाती, राजकार्यों में भी हिन्दी का वह स्थान नहीं है। हिन्दी में किसी का साहित्य में उत्साह देख उसे उत्तेजना देनेवाला भी कोई नहीं है। इतने पर भी समालोचकों की विडम्बना से हिन्दी और भी हीन दशा को प्राप्त हो गई है। ब्रजभाषा और खड़ी बोली के झगड़े ने भी कुछ बाधा खड़ी की है। इसी प्रकार के और भी अनेक कारण हैं। पर इतना अवश्य कहा जा सकता है कि हिन्दी में भी वीर, करुणा आदि रसपूर्ण, भक्ति, धर्म, नीति, इतिहास, पुराण, आचार-व्यवहार, मतान्तर, कथा, वैद्यक, ज्योतिष, काव्य, कोष, छन्द, वेदान्त, विज्ञान आदि विषय के ग्रंथ हैं किन्तु उनकी अवस्था अत्यन्त हीन है। कुछ उपन्यास नाटक आदि बँगला से भी अनुवादित हो रहे हैं किन्तु अनुवाद का महत्त्व अनुवादक पर ही निर्भर है। इनको छोड़ इन दोनों भाषाओं की लोकोक्ति में भी बहुत कुछ समानता है, यद्यपि देश भेद के अनुसार प्रभेद भी पाया जाता है।

नाच न आवे आंगन टेढ़ा।
नाचते न जान लेई उठानेर दोष।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो गरजता है सो बरसता नहीं।
असारेर गर्जन तर्जन सार।
बाप न दादे खाए पान, दाँत निपोरे गए प्राण।
अद्याखलार होलो घोटि जल खेते खेते दाँत कपाटि।
सिखाए पूत दरबार नहीं चढ़ते।
ऐंटी पात्रे धोयां स्वर्गे जायना।

हिन्दी और बँगला साहित्य के विषय में ऊपर कुछ थोड़ा सा कहा गया है। अब मैं थोड़ी आलोचना करके इस लेख को समाप्त करूँगा। आजकल बँगला भाषा का साहित्य भारतवर्षीय अन्य भाषाओं के साहित्यों से बढ़ा चढ़ा है। हिन्दी का साहित्य बहुत कम है अवश्य, किन्तु हिन्दी भाषा-भाषियों का ध्यान अब इस अभाव की ओर आकर्षित हुआ है और लेखकगण साहित्य को पुष्ट और सर्वांगपूर्ण करने का प्रयत्न कर रहे हैं। अंगरेजी, बँगला, मराठी, आदि भाषाओं से अनुवाद करके और स्वतंत्र पुस्तकों द्वारा इस अभाव की पूर्ति करना हिन्दी समितियों, सभाओं और सम्मेलनों का उद्देश्य है।

पद्य के विषय में विशेष रूप से कहा गया है। गद्य के विषय में यह कह सकते हैं कि हिन्दी में गद्य साहित्य बहुत कम है और वह अनुवाद द्वारा बढ़ाया जा रहा है। परंतु यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिए कि गद्य में नाटकों और उपन्यासों से ही साहित्य की पूर्ति नहीं होती। इसमें समाचारपत्र, विज्ञान और व्याकरण आदि का समावेश भी रहना चाहिए। इनकी संख्या बँगला में बहुत अधिक है। आशा की जाती है कि हिन्दी की यह त्रुटि शीघ्र ही दूर हो जायगी।

हिन्दी भाषा में वैज्ञानिक पुस्तकों का सब प्रकार से अभाव है। एक 'जीव विज्ञान विटप' अथवा 'पदार्थ विज्ञान विटप' या एक आध रसायनशास्त्र या ऐसे ही और ग्रंथों का होना न होना बराबर ही है। इन पुस्तकों से किसी ज्ञानांश की पूर्ति नहीं होती।

कोष और व्याकरण के संबंध में आजकल अनेक चेष्टाएं की जा रही हैं परंतु इनकी उतनी आवश्यकता नहीं है। कोष और व्याकरण न रहने से साहित्य रचना में कोई बड़ी बाधा नहीं पड़ती (?)। सूरदास, तुलसीदास, हरिश्चन्द्र आदि कवियों ने कभी व्याकरण अथवा कोष सन्मुख रख कर ग्रंथ रचना नहीं की। बँगला भाषा में कोष हाल ही बनाया गया है। 'सूर्य सर्वदा पूर्व में उदय होता है,' 'सूर्य का उदय सदा पूर्व में होता है' 'प्रति दिन सूर्य पूर्व में उदय होता है' 'पूर्व ही सूर्य का उदय-स्थान है' यही सब लोग कहेंगे। व्याकरण न जानने पर कोई न कहेगा—'है होता में पूर्व सदा उदय सूर्य का' विशुद्ध, सरस, अलंकार-युक्त भाषा लिखने में कोष अथवा व्याकरण की आवश्यकता अवश्य होती है, परंतु भाषा लिखने का यही एक साधन नहीं है। इसके लिये अभ्यास और पुस्तकावलोकन की आवश्यकता भी है। फिर व्याकरण और कोष का मनन कर के ही कोई अच्छा लेखक नहीं हो सकता। मेरा यह तात्पर्य नहीं है कि हिन्दी में एक बृहत् कोष अथवा बृहत् व्याकरण की रचना न हो, परन्तु उद्देश्य यही है कि उनके न होने पर भी साहित्य के अन्य अंगों की भी पुष्टि हो सकती है।

इस भाषा में इतिहास अवश्य है किन्तु अधिक नहीं। यही बात जीवनी के संबंध में भी कह सकते हैं। पर्यटन विषयक पुस्तकों का भी अभाव है। काव्य और नाटक की उत्तरोत्तर उन्नती हो रही है। प्रायः नाटक उर्दू के ही खेले जाते हैं, परंतु हर्ष का विषय है कि थिएटरों आदि में हिन्दी नाटक भी स्थान पाने लगे हैं। क्रमशः इनका प्रचार अधिक होगा इसमें कोई संदेह नहीं। आशा की जाती है कि शिक्षित युवक हिन्दी नाटक लिखकर साहित्य बढ़ावेंगे।

हिन्दी में उपन्यास बहुधा अन्य भाषाओं से अनुवादित हैं। अनुवाद की इतनी धूम है कि आशा की जाती है कि शीघ्र ही हिन्दी में बहुत अच्छे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह पुस्तक वितरित न की जाय
NOT TO BE ISSUED

अच्छे उपन्यास भी लिखे जायँगे और इनके द्वारा समाज और साहित्य की विशेष उन्नति होगी।

इनको छोड़ पुरातत्त्व, भूगोल, भवन्निर्माण, शिल्प, व्यापार आदि संबंधी पुस्तकें हिन्दी में प्रायः नहीं हैं। इनमें उन्नति की विशेष आवश्यकता है।

पद्य की दशा 'दो मुल्लाओं में मुर्गी हराम' के समान अवश्य है और इसी लिये ब्रजभाषा और खड़ी बोली के विवाद से और मौलिकता के अभाव के कारण हिन्दी की कविता प्रायः स्थिर भाव से खड़ी है।

बंगला साहित्य की अपेक्षा हिन्दी साहित्य की अवस्था हीन होने पर भी यह असंतोष-जनक नहीं है, क्योंकि हिन्दी का प्रचार धीरे धीरे देश-व्यापी हो रहा है। भारतवर्ष के प्रायः सब प्रान्तवासी हिन्दी में ही अपने भाव दूसरों पर प्रकट करते हैं। बंगला भाषा में भी वैष्णव युग के समान हिन्दी अपना आसन जमा रही है। बँगला लेखक, चाहे जिस कारण से हो, अपने ग्रंथों में हिन्दी को स्थान दे रहे हैं और अपने मुँह से 'हम अच्छी हिन्दी लिखते हैं' कह कर आत्मगौरव प्रकाश करते हैं। बहुत से इसी को राष्ट्र-भाषा भी बनाना चाहते हैं। बाबू रमेशचन्द्र का कथन है—'If there is a language which will be accepted in a larger part of India, it is Hindi'—डाक्टर भांडारकर का कहना है—'The honour of being made a common language for inter-communication between various provinces must be given to Hindi.' ग्वालियर के भूतपूर्व न्यायाधीश राव बहादुर चिन्तामणि विनायक वैद्य कहते हैं—Hindi is from every point of view by far the most suitable language to be selected as lingua franca of India. बंकिम बाबू ने बंगालियों को संबोधन कर लिखा है—"इंगराजि भाषा द्वारा जाहा हउक, किन्तु हिन्दी भाषाय पुस्तक व वक्तृता द्वारा भारतेर अधिकांश स्थानेर मंगल साधन करिबेन। केवल बांगला व इंगराजिचर्चाय चलिबे ना। भारतेर अधिवासीर सहित तुलना करिले बांगला ओ इंगराजि कय जन लोक बलिते ओ बूझिते पारेन? बांगलार न्याय जे हिन्दीर उन्नति होइते छे ना ता इहा देशेर दुर्भाग्य। हिन्दी भाषार साहाज्ये भारतवर्षेर विभिन्न प्रदेशेर मध्ये जांहारा ऐक्य बंधन स्थापन करिते पारिबेन ताहराई प्रकृत भारतबंधू नामे अभिहित होइबार जोग्य'। मुसलमान भाई भी इसी भाषा को राष्ट्रभाषा बनाने के पक्षपाती हैं (?)। कलकत्ता विश्वविद्यालय में हिन्दी को बी० ए० तक स्थान दिया गया है, यह क्या कम गौरव की बात है? किन्तु खेद है कि प्रादेशिक भाषा होने पर भी प्रयाग विश्वविद्यालय इसे एफ० ए० में भी स्थान नहीं देता! राष्ट्र-भाषा होने के संबंध से हिन्दी ही बँगला की अपेक्षा श्रेष्ठ है।

जो हो, कला-कौशल का अंत नहीं है। ज्ञान-सागर अनन्त है। सब देशों और भाषाओं से लेकर अपनी भाषा में रत्नों का भरना आवश्यक है। 'निज भाषा उन्नति अहे, सब उन्नति को मूल' अतएव सब देशहितैषियों को अपनी जाति-भाषा और देश-भाषा का सब स्थानों में प्रचार कर अपना जीवन सार्थक करना चाहिए।

कौंसिल में हिन्दी-उर्दू का प्रश्न।

युक्त प्रदेश की कौंसिल में श्रीयुत चिन्तामणि के हिन्दी-उर्दू वाला प्रस्ताव पेश करने पर, हमें अपने मुसलमान भाइयों से सिवा विरोध के, जो कि उन्होंने किया, और कुछ आशा नहीं थी। यद्यपि प्रस्ताव में कोई ऐसी बात नहीं चाही गई थी जो विवादार्थियों के आराम के लिये आवश्यक नहीं थी, तथापि इस प्रस्ताव से कुछ सभ्य तो इतने बिगड़े कि उन्होंने अपने विचारों को प्रकट करने में अच्छा बुरा कुछ न सोचा

संदर्भ ग्रन्थ
REFRENCE BOOK
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आनरेबल नवाब अब्दुलमजीद तो यहाँ तक बढ़े कि उन्होंने ब्रिटिश शासन के पहले हिन्दी के अस्तित्व का निषेध कर दिया। उन्होंने इस भाषा को बनावटी भाषा कहना उचित समझा। यानी यह भाषा कुछ संस्थाओं की स्थापना से या कुछ पत्रों के प्रकाशित होने से उत्पन्न हुई है। जो भाषा कि दो तिहाई मनुष्यों द्वारा बोली जाती है, निश्चय उस भाषा के विषय में यह एक बड़ा आश्चर्यजनक सिद्धान्त है। ब्रिटिश शासन के पहले उत्तरीय भारत के मनुष्य या तो उर्दू बोलते थे या वस्तुतः गूंगे रहते थे, जैसा कि आजकल के हिन्दुओं की नम्रवाणी से प्रकट होता है!

नवाब साहब को यह समझ रखना चाहिए कि हिन्दी का अस्तित्व स्वयं मुसलमानों ने ब्रिटिश शासन के ही पहले नहीं, किन्तु मुसलमानी शासन से भी पहिले स्वीकार किया है।

जब कि उर्दू के कवि 'इनशा' ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासनारम्भ में अपनी "ठेठ हिन्दी की कहानी" नामक पुस्तक लिखी, तब उसने विस्तृत क्षेत्र में नाम पाने की स्वाभाविक इच्छा से प्रेरित होकर उस भाषा में इस पुस्तक को लिखा, जो भाषा कि उन दिनों लोगों की प्रचलित भाषा थी। खुसरो, जायसी इत्यादि और बहुत से मुसलमान कवि हुए हैं जिन्होंने कि हिन्दी में लिखा है। हिन्दी के कवि तो स्वतः प्रसिद्ध हैं ही। इससे साफ जाहिर है कि जिस आदमी को इतना भ्रम हो सकता है कि हिन्दी कोई भाषा नहीं है उसके भ्रम के बढ़ने पर सम्भव है कि उसको हिन्दुओं और हिन्दुस्तान के भी अस्तित्व में शक होने लगे।

इतना बड़ा निषेध करके नवाब साहब आगे कहते हैं कि 'सम्भव है कि हिन्दी भाषा के अक्षर उस समय मौजूद रहे हों परन्तु उन अक्षरों में लिखना किसी सभ्य या शिक्षित पुरुष का काम नहीं समझा जाता था'। हाँ! ठीक उसी तरह जैसे फारसी अक्षरों में लिखना आजकल उन लोगों का काम समझा जाता है जो लोगों की उन अक्षरों से अनभिज्ञता से लाभ उठाने में कभी नहीं हिचकते।

यदि विद्या और शिक्षा की बात है तो हमारे मुसलमान मित्रों को परलोकगत डा० सैयद अली बिलग्रामी के शिक्षापूर्ण शब्दों को नहीं भूलना चाहिए जिन्होंने जोर देकर इस बात को कहा था कि 'शिक्षा विषय में मुसलमानों के पिछड़े रहने का कारण उनकी दोषपूर्ण फारसी लिपि है जिसके सीखने में उनके बच्चों को बरसों टक्कर मारनी पड़ती है'। उन्होंने इन अक्षरों की अपेक्षा, नागरी भाषा के अक्षरों को, जो कि कुछ महीनों में ही आ सकते हैं, स्थान देना उचित समझा। मैं इतना और कहता हूँ कि दोष की जड़ इससे भी गहरे में है अर्थात् स्वयं उर्दू भाषा में ही है। एक भाषा जिसका कि निज का कोई शब्द ही नहीं है, भाषा के नाम से न पुकारी जा सकती और उसके जाननेवाले को शब्द की व्युत्पत्ति के विषय में भी कुछ मालूम नहीं हो सकता। ऐसा ज्ञान किसी भाषा का ज्ञान नहीं कहा जा सकता और अज्ञान के तुल्य है।

हिंदी में जहाँ तहाँ जो संस्कृत के शब्द आ जाते हैं, खास कर वे नवाब साहब को बहुत खिन्न करते हैं। हिन्दी भाषा संस्कृत की सन्तान है, और बहुत सी हिन्दुस्तानी भाषाओं के समान यह भी संस्कृत भाषा से बहुत से शब्द लेती है और सम्बन्ध रखती है। यह बात कोई नई नहीं है किन्तु इतनी ही पुरानी है जितनी कि हिन्दी भाषा। यह किसी नई तरकीब या युक्ति से नहीं निकली है।

भारत में एक राष्ट्रभाषा करने की इच्छा बढ़ रही है अतः ऐसी सब भाषाओं के, जो कि हिन्दी भाषा की तरह अपने वैज्ञानिक और गहन विचारों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को प्रकट करने में संस्कृत की सहायता लेती हैं, प्रतिनिधि जल्दी या देर में इस बात के लिये प्रेरित होंगे कि सब मिलकर एक ऐसी ही भाषा की नींव डालें, जिसका प्रचार सहज हो। और वे उसको विदेशीय, बेमेल तथा अस्वाभाविक भाषाओं के आक्रमणों से बचाने की चेष्टा करेंगे।

बङ्गाली, हिन्दी, मराठी और गुजराती भाषाएँ आपस में इतनी मिलती जुलती हैं कि उनके एक दूसरे के प्रान्त में फैल जाने की बहुत सम्भावना है और यह भविष्य सन्तानों का कार्य होगा कि वे किसी ऐसी वस्तु को इसमें न घुसने दें जिससे कि मेल भङ्ग हो। तमाम हिन्दुस्तानी भाषाओं में संस्कृत ही के शब्द ऐसे हैं जो कि उनको एक सूत्र में बद्ध करने में सहायता देते हैं। अतः कोई ऐसी भाषा, जो कि संस्कृत भाषा से शब्दों को नहीं ग्रहण करती इस भाषा-मैत्री में नहीं मिल सकती।

उर्दू ही एक ऐसी भाषा है जो कि संस्कृत शब्दों को जानकर त्याग करती है और अरबी और फारसी शब्द ग्रहण करती है। जब इसके अन्दर वह मसाला ही नहीं है जिससे और भाषाओं से मेल खाता है, तब यह हमेशा अलग रहेगी। अपने बिलकुल बेमेल लक्षणों से रहित उर्दू भाषा बिलकुल हिन्दी से मिलती है जो कि अरबी और फारसी के ऐसे शब्दों को स्वच्छन्दता से व्यवहार में लाती है, जो कि भाषा के बनते बनते व्यवहार में आते गए हैं। हर एक विद्वान् जानता है कि उर्दू कोई स्वतंत्र भाषा नहीं है। यह पश्चिमी हिन्दी भाषा की एक शाखा है जिसको मुसलमानों ने अपने मत और रुचि के अनुसार एक नए सांचे में ढाल लिया है।

अतः जब हिन्दी और उर्दू एक ही भाषा के दो रूप हैं तब यह सोचने की बात रह गई कि वह भाषा क्या है कि और भाषाओं से बहुत मिलती जुलती है या वह जो सबसे बिलकुल अलग है। अतः वह समय अब कुछ दूर नहीं है जब कि लोग उर्दू की अपेक्षा मराठी, गुजराती या हिन्दी को उसी प्रकार अधिक पसंद करेंगे जिस प्रकार सैयदरजाअली ने कहा था कि वे हिन्दी की अपेक्षा, रूसी, फ्रेंच या इटालियन भाषा रखना पसन्द करेंगे।

हिन्दी के विरुद्ध पवित्र धर्म-युद्ध में नवाब अब्दुलमजीद साहब वे सब युक्तियां काम में लाते हैं जो उनके ऐसे लोगों को खूब मँजी होती हैं। वे बात को और की और बताते हैं, उसके उलटे माने लगाते हैं, धमकी देते हैं, शेखी हाँकते हैं, प्रशंसा करते हैं, धिक्कारते हैं सब कुछ करते हैं परन्तु कदापि दृढ़ता से तर्क नहीं करते। वे अँगरेजों के न्याय की प्रशंसा करते हैं जिससे कि हिन्दी इतने दिन तक निकाली रही। वे हिन्दुओं को याद दिलाते हैं कि पहले जमाने में वे मुसलमानों की प्रजा थे। परन्तु वे बड़ी भारी भूल करते हैं क्योंकि दिल्ली के मुसलमान सम्राट् अँगरेजों के शासन के नीचे आने से पहले मरहठों की रक्षा में थे। सिक्खों का राज्य और मरहठों का राज्य पुराने जमाने के मुसलमानी राज्य की अपेक्षा आदमियों को अधिक याद है।

अपनी स्वाभाविक असंगति के अनुसार नवाब साहब कहते हैं कि 'उर्दू वह भाषा है जिसको सारे भारतवर्ष के गँवार तक समझ लेते हैं और हिन्दी अपने मनोहर संस्कृत शब्दों से सम्मिलित होकर केवल उन्हीं मनुष्यों द्वारा समझी जाती है जो कि हिन्दी भाषा बना रहे हैं।' अल्पज्ञानवाला मनुष्य, भी नवाब साहब की इस गलती को, उर्दू की जगह हिन्दी, हिन्दी की जगह उर्दू और संस्कृत की जगह अरबी बनाकर शुद्ध कर सकता है। हरेक मनुष्य जानता है कि गँवार लोग उर्दू का नाम तक भी नहीं जानते। वस्तुतः वे लोग इसे 'अरबी फारसी' कहते हैं और जब कोई उनसे इसे बोलता है तब वे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसको समझने तक की चेष्टा नहीं करते । वे ही लोग, जब कि उनके पास कोई समन आ जाता है, मुंशी को ढूँढ़ते फिरते हैं जो कि उन्हें उस समन का मतलब उन्हीं की भाषा अर्थात् हिन्दी में समझा दे । मैं नीचे अदालत के एक नोटिस की नकल देता हूँ—"लिहाजा बजरिए इस तहरीर के तुम रामपदारथ मजकूर को इत्तिला दी जाती है कि अगर तुम जर मजकूर यानी मुबलिग १५।=) जो अज़रूए डिगरी वाजिबुल अदा है इस अदालत में पन्द्रह रोज तारीख मौसूल इत्तिलानामा हाज़ा से अदा करो । वरना वजह ज़ाहिर करो कि मुन्दरजा ज़ैल खेतों से जिनके बाबत डिगरी शुदा वाजिबुल अदा है, बेदख़ल क्यों न किए जाओ ।"

इस नोटिस में संज्ञा और क्रिया को छोड़कर सब शब्द अरबी या फारसी के हैं और उनकी बुद्धि के बाहर हैं जिन्होंने मौलवी से नहीं पढ़ा है । इसे तनिक समझने योग्य करने के लिये, नोटिस इस प्रकार हिन्दी में लिखा जा सकता है—

"सो इस लेख से तुमको जताया जाता है कि तुम ऊपर कहा हुआ रुपया जिसकी तुम्हारे ऊपर डिगरी हो चुकी है, इस नोटिस के पाने से पन्द्रह दिन के भीतर इस अदालत में चुकता करो, नहीं तो कारण बतलाओ कि तुम नीचे लिखे खेतों से जिनके ऊपर डिगरी का रुपया आता है क्यों न बेदखल किए जाओ ।"

इस बात पर डा० फैलन की बनाई हुई क़ानून और तिजारत की हिन्दुस्थानी और अँगरेज़ी की डिक्शनरी की भूमिका पढ़ने योग्य है । उसमें लिखा है—

'क़ानूनी अदालतों की भाषा बिलकुल विदेशीय अरबी और फारसी के शब्दों की बनी हुई है । बहुत से उदाहरणों में अरबी शब्दों के बराबर में दिए हुए हिन्दी के पर्यायों से यह साफ प्रकट होता है कि अरबी भाषा किसी और कारण से नहीं रखी गई किन्तु केवल इसी कारण से कि यह पढ़े लिखों की भाषा समझी जाती है और हिन्दी इस देश के रहने वालों की भाषा है ।

हिन्दी शब्दों की सूची, जिनकी जगह जबर्दस्ती ही अरबी के शब्द रखे गए हैं, बहुत शिक्षाजनक है ।

नवाब अब्दुलमजीद साहब मर्दुमशुमारी की संख्याओं को ठीक नहीं मानते, क्योंकि वे कहते हैं कि जो आदमी उर्दू बोलते थे, उन्होंने हिन्दी लिखा दी है । हम भी उन संख्याओं को ठीक मानते नहीं चाहते क्योंकि हम जानते हैं कि लोगों ने केवल स्कीम ही के अनुसार अपनी भाषा उर्दू न लिखा दी है किन्तु बहुत से पुरुषों ने अज्ञानवश भी अपनी भाषा उर्दू लिखा दी है । इस प्रकार हिन्दी की संख्या कम करने की कारणभूत दो बातें हैं एक तो अज्ञान और दूसरा पक्षपात ।

पूर्वीय और पश्चिमी हिन्दी में डा० ग्रीयरसन ने बहुत बड़ा भेद दिखाने पर भी, मर्दुमशुमारी करने वाले लोगों ने उन सब लोगों की भाषा उर्दू ही लिख ली जो कि खड़ी बोली बोलते हैं । (खड़ी बोली वह भाषा है जो दिल्ली, मेरठ और रुहेलखण्ड के कुछ हिस्से में बोली जाती है) । हरेक आदमी 'हम आवत हैं, तुम जात हो' की जगह 'हम आते हैं, तुम जाते हो' बोलता हुआ पाया गया, बस वह उर्दू बोलनेवाला लिख लिया गया । इस का अद्भुत उदाहरण बनारस में देखा गया जहाँ कि मर्दुमशुमारी करनेवाले ने एक पण्डित की भाषा लिख ली जो कि उस भाषा से बिलकुल अनभिज्ञ थे ।

हम नवाब साहब को धन्यवाद दिए बिना नहीं रह सकते जिन्होंने दो बड़ी बड़ी जातियों में सम्बन्ध-भेद न होने की बड़ी उत्कंठा प्रकाशित की है । चूँकि ऐसे मौके बहुत कम हाथ लगेंगे जब कि उनके दिमागवाले आदमी न्याय की तरफ झुकें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस मौके पर बता देना उचित समझता हूँ कि ऐसे सम्बन्ध सहनशीलता ही के भावों से स्थिर रह सकते हैं। यदि एक जाति दूसरी जाति के आराम को अपनी बड़ी भारी हानि समझे तो ऐसा सम्बन्ध स्थिर नहीं रह सकता। यदि मुसलमान लोग नागरी के आन्दोलन के इतिहास को अपने दुःखों का इतिहास समझते हैं, जैसा कि आनरेबल सैयद रजाअली ने कहा है, तो वे ऐसे सम्बन्ध के स्थिर रखने की इच्छा का कोई प्रमाण नहीं देते।

हिन्दू लोगों का यह अभिप्राय है कि सर्वसाधारण के आराम के लिये अदालतों मे नागरी का प्रचार हो परन्तु मुसलमान लोग अपनी राजनैतिक प्रधानता बनाए रखने के लिये केवल उर्दू ही को प्रधान रखना चाहते हैं। यदि श्रीमान् चिंतामणिजी यह कहते कि अदालतों में से उर्दू या फारसी के अक्षर बिलकुल उड़ा दिए जायँ तो मुसलमानों को बेशक विरोध प्रकट करने की बहुत जगह थी। परन्तु प्रस्ताव में तो 'उर्दू की तरह हिन्दी का भी प्रचार दीवानी अदालतों में हो' यह कहा गया था जिससे मुसलमानों को कुछ भी कष्ट नहीं था। उन में से हरेक तीन चार महीनों में नागरी पढ़ सकता है जैसे कि माल, पुलिस आदि महकमों में बहुत से मुसलमानों ने पढ़ी है। लेकिन हमारे मुसलमान मित्र ऐसी रियायत नहीं चाहते। वे हम से कहते हैं कि या तो अपनी भाषा छोड़ दो या हमारे मेल की आशा छोड़ दो। पर जैसा कि लार्ड मोर्ले ने कहा है, "राजनीति एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें उत्तम के समाज में प्रायः मध्यम ही पर संतोष करना पड़ता है और जिसमें अकसर दो भूलों में से किसी एक भूल पर चलना पड़ता है।" अतः लाचार हमें मेल की आशा ही छोड़ने को तैयार होना पड़ता है।

आनरेबल सैयद वजीरहसन ने हिन्दी भाषा के अस्तित्व को स्वीकार करते हुए कहा है कि जो भाषा रामायण में पाई जाती है वह इन प्रान्तों की लिखने अथवा बोलने की भाषा है या नहीं?। आनरेबुल साहब यह भी पूछ सकते हैं कि जो भाषा चासर या स्पेन्सर में पाई जाती है वह आजकल बोलने या लिखने की भाषा है या नहीं? जिसे हम आजकल की हिन्दी भाषा कहते हैं यह वही भाषा है जिसमें कि मासिक पुस्तकें और समाचार पत्र छपते हैं। यह वही भाषा है जिसको लोग आपस की चिट्ठीपत्री या बातचीत में व्यवहार में लाते हैं। यह वही भाषा है जो इनशा ने अपनी पुस्तक 'रानी केतकी की कहानी' में और लल्लूलाल ने अपने प्रेमसागर में लिखी है।

आनरेबल मि० रजाअली ने मि० चिन्तामणि से ऐसा कोई सरकारी कागज दिखाने के लिये कहा था जिससे यह प्रकट होता हो कि सरकार ने हिन्दी को भी भाषा माना है और जो सन् १८९८ से पहले का हो। चूँकि आनरेबल मेम्बर सिवा सरकारी कागजों के और कुछ नहीं देखना चाहते हैं, मैं उनकी सेवा में कई कागज उपस्थित करता हूँ। जब कि सन् १८३९ में भाषाओं का प्रश्न पश्चिमोत्तर प्रान्त की सदर दीवानी अदालत में पेश किया गया था तब यह आज्ञा जारी हुई थी।

'सरकार की यह इच्छा है कि पहलेपहल कार्रवाई या जिरह को समझ में आने योग्य हिन्दी या उर्दू में लिखवाए जाने का ध्यान रहे'।

सन् १८४४ में पश्चिमोत्तर प्रान्त के सरकारी मन्त्री ने (अपनी चिट्ठी नं०७५० ता०१७ अगस्त१८४४) आगरा कालिज के प्रिंसिपल को लिखा था कि "हिन्दी यहां की देश-भाषा है"।

पश्चिमोत्तर देश के 'रेविन्यु बोर्ड' ने (नं० ८ सन् १८५७) सब कमिश्नरों और कलक्टरों के नाम आज्ञापत्र में लिखा है—

'बोर्ड सरकार के इस प्रस्तावकी ओर सब कलेक्टरों और कमिश्नरों का ध्यान दिलाता है कि पटवारी लोग अपनी कार्रवाई उस भाषा और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन अक्षरों में लिखें जो जनसाधारण जानते हों। वह भाषा हिन्दी होगी और अक्षर नागरी। इसमें फेरफार भी हो सकता है पर कमिश्नर की आज्ञा से।'

और इधर आइए। पश्चिमोत्तर प्रान्त की सरकार की सन् १८७४-१८७५ की शिक्षाप्रचार की रिपोर्ट में लिखा है कि "हिन्दी जनसाधारण की भाषा होने के कारण मातृभाषा के नाम से पुकारी जा सकती है"।

अब नवाब अब्दुलमजीद साहब की एक ही बात और विचारने की है, वह यह है कि 'हिन्दी जिसमें लिखनेवाला अपने लिखे को नहीं पढ़ सकता, उर्दू की अपेक्षा अधिक देर में लिखी जाती है और मुसल्मानों से मुश्किल से पढ़ी जा सकती है"। फारसी के अक्षरों की स्पष्टता तो इतनी मशहूर हो गई है कि हम यहाँ केवल सन् १८७३ के १० जनवरी के 'पायोनियर' में निकले एक लेख को ही उद्धृत करते हैं—

'फारसी के अक्षर बड़ी जल्दी लिखे जा सकते हैं। परन्तु यदि विषय नया हो और लेखनशैली भी नई हो तो फारसी के अक्षर चाहे कितने ही साफ़ क्यों न लिखे गए हों करीब करीब बिलकुल अस्पष्ट होते हैं। किसी लेख या दस्तावेज़ के लिये इसकी अक्षरमाला इतनी ही ख़राब है जितनी कि कोई हो सकती है।"

इसका एक मनोरंजक उदाहरण नीचे दिया जाता है-एक सब इन्स्पेक्टर पेशी के काम में नियुक्त हो कर कुछ कागज़ ठीक कर रहे थे जिनको पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट के सामने रखना था। जब उनको बहुत देर लगी तब सुपरिण्टेण्डेण्ट ने घबरा कर पूछा कि 'तुम क्या कर रहे हो?' जवाब मिला—'श्रीमान मैं नुकते लगा रहा हूँ'। उन्होंने पूछा, 'इसका क्या मतलब?' उत्तर मिला कि 'कागजों में कुछ जगहों और मनुष्यों के नाम उर्दू में लिखे हैं अतः बिना ठीक किए पढ़े ही नहीं जा सकते'।

सब विद्वानों की यही सम्मति है कि फारसी के अक्षर ठीक नहीं हैं।

अब हम मि० बर्न की बात पर आते हैं जिन्होंने कहा कि मैं सरकार के इस प्रस्ताव को पास करने में कुछ फ़ायदा नहीं देखता। चूंकि फायदे कौंसिल के हिन्दू मेम्बरों ने पूरी तौर पर दिखा दिए हैं अतः उनको यहां दोहराना नहीं चाहता। मुसल्मान मेम्बर फायदों की ओर से आँख मींच कर भी यह सिद्ध कर सके कि यदि सरकार इस प्रस्ताव को भी मान लेती तो कोई बड़ा अनर्थ हो जाता। यह एक बड़ी निराली विरुद्ध बात है कि जब वादी और प्रतिवादी प्रार्थना पत्रों को हिन्दी में लिखकर ले जायँ तो कुछ अफसर पढ़ सकें और कुछ न पढ़ सकें। चूँकि उर्दू लिखने की प्रणाली एक रीति पर चल सी निकली थी अतः सरकार उसको नष्ट करने के लिये किसी बात को भी स्वीकार नहीं करेगी। परन्तु कोई परिपाटी ऐसी नहीं है जो अनुभव के साथ सदा न बदल जाय। हम आशा करते हैं कि सरकार कुछ काल में असली बात को समझेगी।

इस प्रस्ताव के विरुद्ध कारणों में से मि० बर्न का एक बड़ा आश्चर्यजनक कारण यह है कि एक मुंसिफ का काम सिर्फ़ दीवानी अदालत से ही रहता है किन्तु डिप्टी कलेक्टर और सिवीलियन अफसरों को और बाहर भी काम रहता है!

इस प्रकार आनरेबल मि० बर्न अपने ही ढंग पर दो भाषाओं के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं—एक बाहरी भाषा और एक भीतरी भाषा। यदि ऐसा ही है तो बाहर और भीतर एक ही भाषा क्यों न रखी जाय और यदि यह कठिन समझा जाय तो दूसरी भाषा को भी अन्दर आने की आज्ञा क्यों न दी जाय?*

* १६ अप्रैल १९१७ के "लीडर" में प्रकाशित श्रीयुत पं० रामचन्द्र शुक्ल के एक लेख का अनुवाद। श्रीवेङ्कटेश्वर समाचार से कुछ संशोधन करके उद्धृत।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैदिक काल का ज्योतिष शास्त्र।

[लेखक,—श्रीयुत पं० गणपति जानकीराम दुबे बी० ए०]

(गतांक से आगे।)

विश्व-संस्था।

सम्पूर्ण जगत् के विषय में "रोदसी," द्यावा, पृथिवी, अथवा इनके पर्य्याय-वाची शब्दों के द्वारा आकाश और पृथ्वी के विषय में समुच्चय वाचक रूप में कहा हुआ वेदों में बहुत जगह मिलता है। अर्थात् यह जान पड़ता है कि जगत् के द्यौ और पृथ्वी ये दो भाग माने गए थे। कहीं कहीं द्युलोक तीन भी कहे गए हैं। ऋग्वेद-संहिता में तीन द्युलोकों का कितने ही स्थानों में उल्लेख है। कहीं द्यु का अर्थ धरातल, स्वर्ग या अति उच्च भाग का स्वर्ग भी दिया है। तथापि बहुत जगह जगत् के तीन ही भाग—द्यु, अंतरिक्ष और पृथ्वी—माने गए हैं। उनमें द्यौ और पृथ्वी के बीच में अन्तरिक्ष है, और वह वायु, मेघ और विद्युत् का स्थान है। पक्षी इसी अंतरिक्ष में विहार करते हैं।

नाभ्या आसीदंतरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत। पद्भ्यां भूमिः।

इस सुप्रसिद्ध पुरुषसूक्त की ऋचा में तीनों भाग स्पष्ट कहे हैं और उनके ऊपर या नीचे स्थित होने के अनुसार ही विराट् पुरुष के मस्तक, नाभि और पाँव से उनकी उत्पत्ति की कल्पना की गई है। निम्नलिखित ऋचा देखिए।

यः पृथिवीं व्यथमानामदृंहद्यः पर्वतान् प्रकुपिताँ अरम्णात्॥
यो अन्तरिक्षं विममे वरीयो यो द्यामस्तभ्नात् स जनास इंद्रः॥

ऋ० सं० २-१२-२

जिसने कंपायमान पृथिवी को स्थिर किया, जिसने विशाल अन्तरिक्ष को व्यवस्थित किया, जिसने द्यु को धारण किया, वह, हे जन! इन्द्र है।

यौ अश्विना दिव्यानि भेषजा त्रिः पार्थिवानि त्रिरुदत्तमद्भ्यः।

ऋ० सं० १. ३४. ६.

अर्थात् हे अश्विनीकुमार! आप हमें तीन बार द्युलोक की, तीन बार पृथ्वी की और तीन बार अंतरिक्ष की ओषधियाँ दीजिए।

इसमें मूल में जो "अद्भ्यः" पद है उसका अर्थ यह है कि जिस प्रदेश में मेघोदक होते हैं उस प्रदेश से अर्थात् अंतरिक्ष से दीजिए। इसके कितने ही प्रमाण हैं और उन शब्दों से यह स्पष्ट मालूम होता है कि मेघोदक जिसमें होते हैं वही अंतरिक्ष है। जैसे,

ये महो रजसो विदुर्विश्वेदेवासो अद्रुहः। मरुद्भिरग्न आ गहि।

ऋ० सं० १. १९. ३

हे अग्नि! जो देव महान् अंतरिक्ष में रहते हैं उन सब मरुत देवों सहित आप यहाँ आइए। इससे यह प्रत्यक्ष है कि मरुत् अर्थात् वायु का स्थान अंतरिक्ष है।

वेदा यो वीनां पदमन्तरिक्षेण पततां।

ऋ० सं० १. २५. ७

जो (वरुण) अन्तरिक्ष में उड़नेवाले पक्षियों का मार्ग जानता है। इससे स्पष्ट है कि पक्षियों के गमन का जो मार्ग है वह अंतरिक्ष है। और भी।

द्यौरन्तरिक्षे प्रतिष्ठितान्तरिक्षं पृथिव्यां

ऐ० ब्रा० ११. ६.

ऐतरेय ब्राह्मण के इस वाक्य में तो यह स्पष्ट ही कहा है कि पृथिवी और द्यौ के मध्य में अन्तरिक्ष है।

यह कई जगह कह गया है कि भगवान् सूर्य्य द्युलोक के अत्यंत उच्च प्रदेश में से संचार करते हैं। निम्नलिखित ऋचा देखिए।

उद्यन्नद्य मित्रमह आरोहन्नुत्तरां दिवम्।
हृद्रोगं मम सूर्य हरिमाणं च नाशय॥

ऋ० सं० १. ५०. ११

अर्थ—हे अनुकूल तेजवाले सूर्य! आप अत्यन्त ऊँचे द्युलोक में चढ़कर मेरा हृद्रोग दूर कीजिए।

भगवान् सूर्य पृथ्वी से बहुत दूर से प्रकाश करते हैं, यह बात भी निम्नलिखित वाक्यों से ज्ञात होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"यथाग्निः पृथिव्या समनमदेवं मह्यं भद्राः सन्नतयः सन्नमंतुः। वायवे समनमदंतरिक्षाय समनमद् यथा वायुरंतरिक्षेण सूर्याय समनमद् दिवे समनमद् यथा सूर्यो दिवा चंद्रमसे समनमन्नक्षत्रेभ्यः समनमद् यथा चन्द्रमा नक्षत्रैर्वरुणाय समनमत्।"

अर्थात्—"अग्नि पृथ्वी से वायु और अन्तरिक्ष को नत हुई। वायु अन्तरिक्ष से सूर्य और द्यु को नत हुई। उसी प्रकार सूर्य द्यु से चंद्र और नक्षत्रों को नत हुआ और चन्द्रमा नक्षत्रों से वरुण को नत हुआ"। इससे स्पष्ट है कि अग्नि पृथ्वी पर है। वायु अन्तरिक्ष का आश्रय किए हुए है। सूर्य द्युलोक में संक्रमण करता है और चन्द्रमा नक्षत्र-मंडल में विहार करता है। सूर्य की अपेक्षा चन्द्र अधिक दूर है।

"लोकोसि स्वर्गोसि। अनन्तोस्यपारोसि। अक्षितोस्यक्षय्योसि। तपसः प्रतिष्ठा"।

तै० ब्रा० ३.११.१

यहाँ कहा गया है,—"तू लोक है, स्वर्ग है, अनंत है, अपार है, अक्षित है, अक्षय है। इसमें लोक शब्द से समस्त विश्व का तात्पर्य्य है।

दिवः प्रतिष्ठा।...द्यौरसि वायौ श्रिता। आदित्यस्य प्रतिष्ठा।...। आदित्योसि दिवि श्रितः। चन्द्रमसः प्रतिष्ठा।...। चन्द्रमा आदित्ये श्रितः। नक्षत्राणां प्रतिष्ठा।...। नक्षत्राणि स्थ चन्द्रमसि श्रितानि संवत्सरस्य प्रतिष्ठा युष्मासु।...संवत्सरोसि नक्षत्रेषु श्रितः। ऋतूनां प्रतिष्ठा।...।ऋतवः स्थ संवत्सरे श्रिताः। मासानां प्रतिष्ठा युष्मासु।...।मासा स्थर्तुषु श्रिताः। अर्धमासानां प्रतिष्ठा युष्मासु।...।अर्धमासाः स्थमासुश्रिताः। अहो रात्रयोः प्रतिष्ठा युष्मासु।...। अहोरात्रे स्थोर्धमासेषु श्रिते। भूतस्य प्रतिष्ठे भव्यस्य प्रतिष्ठे। पौर्णमास्यष्टकामावास्या। अन्नादाः स्थान्नदुघो युष्मासु—

तै० ब्रा० ३. ११. १

यहाँ संवत्सर, ऋतु, मास, पक्ष, अहोरात्र इत्यादि ज्यौतिष की कालदर्शक-पद्धति को स्पष्ट दिया है। हर एक अवयव का उत्तरोत्तर संबन्ध कैसा है, यह बात भी साफ तरह से बतलाई है।

इन सब वाक्यों में सर्वत्र ऊर्ध्वाधो भाव ही नहीं दरसाया है किन्तु कहीं कार्य-कारण भाव, कहीं व्याप्य-व्यापक भाव और कहीं अंगांगि-भाव भी दरसाया है। पृथ्वी के ऊपर को अंतरिक्ष और उससे परे द्यौ है और सूर्य द्युलोक का आश्रय किए हुए है इत्यादि बातें भी इसी जगह दी हैं।

आदि ऊपर के विवेचन से यह दिखलाई देगा कि विश्व के विभाग पृथ्वी, अंतरिक्ष और द्यौ (आकाश) माने जाते थे। उसमें मेघ, वायु, विद्युत् उपादि जिन प्रदेशों में भरे हैं वे पृथ्वी से निकट हैं। साथ ही इस बात का भी स्पष्ट उल्लेख वेदों में है कि सूर्य, चंद्र और नक्षत्रों से व्याप्त प्रदेश पृथ्वी से बहुत दूर है। स्वर्ग, मर्त्य (पृथ्वी) और पाताल ये विभाग वेदों में कहीं नहीं पाए जाते।

———

प्रतिमोक्ष सूत्र।

[अनुवादक,— श्रीयुक्त कुँवर कन्हैयाजू।]

(गतांक से आगे।)

दूसरी पुस्तक।

प्रायश्चित्त योग्य पापों के संबंध में ९० नियम।

१ प्रायश्चित्त धर्म।

सार—मिथ्या बोलना, बुराई करना, साधु पर दोषारोपण, झगड़ना, उपदेश देना, भाषण, आचरण भंग करना, सर्वोपरि शक्ति प्रकट करना, तुच्छों को नष्ट करना।

हे भाइयो! प्रतिपक्ष भाषण किए जानेवाले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(सोसारथारपा) प्रतिमोक्ष सूत्र के अनुसार उन पापों के संबंध में ९० नियम कहे जाते हैं जिनमें प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(१) जान बूझ कर झूठ बोलना ऐसा पाप है जिस के लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(२) किसी व्यक्ति की बुराई करना ऐसा पाप है जिसके लिये प्रायश्चित्त की आवश्यकता है।

(३) किसी साधु पर मिथ्या दोषारोपण करना भी ऐसा पाप है जिसके लिये प्रायश्चित्त की आवश्यकता है।

(४) जो साधु जान बूझ कर किसी ऐसे साधु के साथ झगड़ा खड़ा करता है जिसने धार्मिक आदेशों के अनुसार फैसला कर लिया हो वह (झगड़ा उठाने वाला) ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त की आवश्यकता है।

(५) जो साधु, अन्य किसी ऐसे व्यक्ति की उपस्थिति के बिना जो उसकी बातों को समझ सके, किसी स्त्री को पांच छः शब्दों से अधिक धर्मोपदेश करता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त की आवश्यकता है।

(६) जो साधु किसी अधिकार-विहीन व्यक्ति के साथ मिल कर धर्म के उपदेशों का भाषण करता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(७) जो साधु किसी अनधिकारी व्यक्ति से किसी साधु के आचरण-भ्रंश के विषय में कहता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(८) जो साधु किसी अनधिकारी व्यक्ति से अपनी तथा दूसरे साधु की अलौकिक शक्तियों का बखान करता है—चाहे उसका कथन सत्य ही हो—पर वह ऐसा पाप करता है कि जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(९) जो साधु पहले ऐसा काम कर चुका है जो कि उसके योग्य है और उसके बाद इस प्रकार कहता है—"साधु जन, मित्रता के विचार से समाज की संपत्ति अपने ही आदमी को दे चुके हैं" वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(१०) जो साधु (सोसारथारपा) प्रतिमोक्ष सूत्र का भाषण होते समय कहता है—"हे भाइयो साधुओं के पश्चात्ताप के हेतु प्रतिपक्ष प्रतिमोक्ष सूत्र के छोटे छोटे और तुच्छ नियमों के भाषण से क्या लाभ है"? या ऐसी बात ध्यान में लाता है या ऐसी बात पर विश्वास करता है और इस प्रकार से छोटे नियमों की अवहेलना करता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

सार—बीज, परिहास, उपदेश न सुनना, पलंग, कुशासन, देर से आनेवाले का स्थान छीनना, चलायमान, पानी छिड़कना, मकान बनाना।

(११) एकत्र बीजों तथा जीवधारियों के निवास-स्थान को नष्ट करना या कराना ऐसा पाप है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(१२) किसी व्यक्ति का परिहास करना या उसे दुर्वचन कहना ऐसा पाप है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(१३) धर्म के उपदेशों को न सुनना ऐसा पाप है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(१४) जो कोई साधु किसी साधु-समाज के पलंग, कुरसी, स्टूल, कम्मल, तकिए आदि को जमीन पर बिछा कर उस पर आप आराम करता है या दूसरे को ऐसा करने के लिये इंगित करता है और फिर उसे यथा स्थान रखे बिना चला जाता है या दूसरे को ऐसा करने के लिये इंगित करता है, चाहे ऐसा करने का कोई विशेष कारण भी न हो, तो वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(१५) जो साधु कुशासन को फैलाता है या दूसरे से फैलवाता है और उसे किसी साधु-समाज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के निवास-स्थान में, बिना लपेटे ही छोड़ कर आप चला जाता है या दूसरे को ऐसा करने के लिये इंगित करता है, चाहे ऐसा करने का कोई कारण नहीं हो, तो वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित करना आवश्यक है।

(१६) जो साधु किसी अन्य साधु पर क्रुद्ध या अप्रसन्न होकर उसे साधु-समाज के विहार में से निकालता या निकलवाता है,—और ऐसा करने का कोई आधार भी नहीं है—वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(१७) जो साधु किसी साधु-समाज के विहार में जाकर किसी दूसरे साधु के स्थान पर यह सोच कर अपना अड्डा जमाता है कि यदि उसे असुविधा होगी तो वह चला जायगा, वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(१८) जो कोई साधु किसी साधु-समाज के विहार की ऊपरी मंजिल पर जाकर वहां अपने पूरे भार से किसी ऐसे पलँग या स्टूल पर बैठता है जिसके पाए चल सकते हैं वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(१९) जिस पानी में कीड़े हों उसे यदि कोई साधु घास, गोबर या राख पर छिड़कता या छिड़कवाता है, वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(२०) यदि किसी साधु के लिये बड़ा विहार बनता हो तो वह दरवाजे, चौखट, देहरी, खिड़की की जांच करके उन्हें काम में लावे और ईंट चूने के मकान को एक, दो या तीन बार बनवावे; यदि वह इससे अधिक बार बनवाता है तो ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

सार—अनियुक्त, सूर्य्यास्त, चावल, दिए गए वस्त्र, बने हुए वस्त्र, पर्य्यटन, नौका, एकान्त स्थान में बैठना, स्त्री द्वारा आकर्षित होकर एकान्त में खड़ा होना।

(२१) जो साधु साधु-समाज द्वारा नियुक्त हुए बिना, तथा इस प्रकार की नियुक्ति के लिये शुद्ध श्रद्धा हुए बिना ही किसी स्त्री को धर्मोपदेश करता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त की आवश्यकता है।

(२२) यदि कोई साधु साधु-समाज से नियुक्त किए जाने पर भी सूर्य्यास्त के पश्चात् भी किसी स्त्री को धर्मोपदेश करता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(२३) यदि कोई साधु साधुओं की किसी जमात से इस प्रकार कहे—"साधु लोग भात का गफ्फा मारने के लिये स्त्रियों को उपदेश देते हैं" तो वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(२४) यदि कोई साधु किसी ऐसी स्त्री को अपना (उतारन का) कपड़ा देता है जो उसकी संबंधिनी नहीं है तो वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(२५) यदि कोई साधु ऐसी स्त्री के लिये वस्त्र बनाता है या बनवाता है जो उसकी संबंधिनी नहीं है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(२६) ठीक समय के अतिरिक्त, जो साधु तैयार करके किसी स्त्री (साधुनी) के साथ पर्य्यटन करता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

ठीक समय वह है जब कि वे पर्य्यटन करते हों तब उनका मार्ग भय और आशंकापूर्ण प्रसिद्ध हो।

(२७) एक मात्र नदी पार करने के प्रयोजन के सिवा जो साधु जल के उतार या चढ़ाव में किसी स्त्री (साधुनी के) साथ नाव में बैठता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(२८) जो साधु किसी प्रच्छन्न एकान्त स्थान में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी स्त्री के साथ आसन पर बैठता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित आवश्यक है।

(२९) जो साधु प्रछन्न एकान्त स्थान में किसी स्त्री के पास खड़ा होता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त की आवश्यकता है।

(३०) जो साधु जान बूझ कर ऐसा भोजन करता है जो किसी स्त्री से ऐसे स्थान में सिद्ध किया गया है जहां उसका निमंत्रण न हुआ हो वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रयश्चित्त की आवश्यकता है।

सार—पुनः पुनः जाना, घर, धर्मशाला, आटा, भोजन, समर्पण, उचित समय, अनुचित समय, संग्रह, सुस्वाद और वासना मार्ग।

(३१) उचित समय के अतिरिक्त जो पुनः पुनः भिक्षा लेने जाता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

उचित समय वह है जब कि साधु बीमार हो, जब कि उसे कुछ कार्य्य हो, जब कि वह प्रवास में हो या जब कि वस्त्र दिए जाते हों।

(३२) जो साधु तत्क्षण आया हो और जो बीमार न हो वह एक बार धर्मशाला में भोजन करे। यदि वह इससे अधिक बार भोजन स्वीकार करता है तो ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(३३) यदि कोई ब्राह्मण या सद्गृहस्थ अपने यहाँ आए हुए साधुओं को आटा या टिक्कड़ दे, तो यदि वे चाहें तो दो या तीन अंजुली ले लें, यदि वे इससे अधिक लेते हैं तो ऐसा पाप करते हैं जिसके लिये प्रायश्चित आवश्यक है।

दो या तीन अंजुली लेकर वे बहिःप्रान्त में जाकर उसे साधुओं में यह कह कर वितरण करें—"हम भोजन कर चुके हैं"। यही उचित रीति है।

(३४) कोई साधु जो एक बार भोजन कर चुका हो, पर अपने छोड़े हुए अन्न (उच्छिष्ट) के सिवा, आमंत्रित होकर पुनः भोजन या पान करता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(३५) जो साधु जानता है कि अमुक साधु भोजन कर चुका है पर उसे, छोड़े हुए अन्न के सिवा, और भी भोजन-पान करने को बुलाता है और कहता है—'हे भाई यहां आओ और यह खाओ' वह उसे आचरण भ्रष्ट करने की इच्छा से ऐसा करता है; वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(३६) उचित अड़चन के अतिरिक्त अपने आप भोजन मँगाना ऐसा पाप है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

यहाँ उचित अड़चनें ये हैं—जब कि बीमारी हो, कोई काम हो, यात्रा में हो, जब कि भारी भीड़ हो या जब साधुमात्र का निमंत्रण हो।

(३७) जो साधु त्याज्य समय पर भोजन पान करता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(३८) जो साधु संचित किया हुआ भोजन—कठोर हो या कोमल—करते हैं वे ऐसा पाप करते हैं जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(३९) जो साधु दंतमंजन और जल के अतिरिक्त, भोजन या बिना दिया हुआ अन्य पदार्थ मुख में रखता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(४०) मान्यवर बुद्धदेव ने साधुओं के लिये ये सुस्वाद पदार्थ वर्जित किए हैं—दूध, दही, मक्खन, मांस, सूखा हो या ताजा। जो साधु बीमार न हो पर इन पदार्थों को आत्मपोषण के लिये गृहस्थ के घर से लेता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

सार—सजीव, सोने के स्थान में बैठना, निहंग नागा सेना, दो दिन, युद्धलिप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेना के पास जाना, स्नान, धमकाना और दुराचरण।

(४१) जो साधु ऐसा पानी काम में लाता है जिसमें वह जानता है कि सजीव पदार्थ हैं, वह ऐसा पाप करता है जिस के लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(४२) जो साधु यह जानकर किसी घर में जाता है कि वहाँ स्त्री और पुरुष एकट्ठे सो रहे हैं और वहाँ पलंग पर बैठता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(४३) जो साधु किसी ऐसे घर में एकान्त प्रच्छन्न स्थान में खड़ा होता है जहाँ वह जानता है कि स्त्री पुरुष एकत्र सो रहे हैं वह ऐसा पाप कहता है जिसके लिये प्रायश्चित्त की आवश्यकता है।

(४४) जो साधु किसी जंगम निहंग नागे को, स्त्री हो या पुरुष, अपने हाथ से भोजन देता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(४५) जो साधु युद्ध क्षत्र में गई हुई सेना को देखने जाता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(४६) यदि किसी साधु को युद्ध समय पर ही सेना के पास जाने की आवश्यकता आ पड़े तो वह वहाँ दो दिन तक रह सकता है, इससे अधिक रहने पर वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(४७) युद्ध क्षेत्र में दो दिवस रहते हुए भी यदि कोई साधु युद्ध में जाकर वहां की ओजमय उत्तुंग चतुरंगिनी[२] सेना के ओज आदि का ध्यान अथवा स्मरण रखता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(४८) जो साधु क्रुद्ध या अप्रसन्न हो कर किसी साधु को मारता है वह ऐसा पाप करता है जिसके प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(४९) जो साधु किसी साधु से क्रुद्ध या अप्रसन्न होकर उसे धमकाता है या घूँसा दिखलाता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(५०) जो साधु जान बूझ कर किसी अन्य साधु का दुराचरण छिपाता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

सार—प्रमोद, अग्नि, जमात, असंस्कृत, गुप्त वाणी, नवीन साधु, वस्त्र, रत्न और ग्रीष्म।

(५१) कोई साधु जिसे सहवास की इच्छा हो और वह इस कारण से किसी दूसरे साधु से कहे भाई यहां आओ गांव में चल कर भिक्षा कर लाएं किन्तु फिर भिक्षा को न जाकर कहता है—हे भाई गम्यताम् तुम्हारे पास बैठना या तुम से वार्ता करना मुझे नहीं भाता! मैं एकान्त में बैठ कर अपने आप से बातें करने में प्रसन्न हूं, वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित आवश्यक है।

(५२) कोई साधु जो बीमार नहीं है, पर अपने आराम के लिये आग जलाता है या जलवाता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(५३) कोई साधु जो किसी एक जमात के एक साधु को कोई वस्तु दे पर फिर उससे रुष्ट हो अप्रसन्न होकर उस पर ऐसा दोष आरोपण करे जिस के लिये वित्त हरण हो सकता है और यह कहे "मैंने वह वस्तु जमात को दी थी न कि तुम को" वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(५४) जो साधु किसी असंस्कृत पुरुष के पास

१ उस समय युद्ध-पताकाओं में बैल, मगर, सिंह, और सर्प के ये चार चित्र रहते थे।

२ हाथी घोड़ा रथ पदाति मिल कर चतुरंगिनी सेना होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिन से अधिक रहता है वह ऐसा पाप करता है जिस के लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(५५) जो कोई साधु कहता है—"इस तरह से तो मैं पूज्यवर बुद्धिदेव के आदेशों को खूब समझता हूं जिन्होंने जिन गुणों को आत्मोन्नति के मार्ग का बाधक बताया है वास्तव में वे वैसे नहीं हैं!" वह साधु जमात द्वारा इस प्रकार संबोधित किया जाना चाहिए "हे आयुष्मन् ऐसा न कहो, बुद्धदेव के सिद्धान्तों के विरुद्ध वचन न बोलो, यह अच्छा नहीं है। बुद्धदेव व्यर्थ नहीं कहेंगे। जिन गुणों को उन्होंने आत्मोन्नति के मार्ग में बाधक बताया है वे वास्तव में बाधक हैं। और इसकी बुद्धदेव ने अनेकों प्रकार से घोषणा की है।" यदि वह साधु साधुसमाज से इस प्रकार कहे जाने पर विचार शुद्ध कर ले तो अच्छा है, यदि विचार नहीं बदलता तो दूसरी बार और तीसरी बार चेतावनी दी जाय। फिर भी विचार बदल ले तो अच्छा है यदि नहीं तो वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(५६) जो साधु यह जान कर कि उपर्युक्त ५५ नियम में कहा हुआ साधु नियमानुसार आचरण नहीं करता और अपने दूषित विचार को नहीं बदलता, उसे आदर देता है, उससे वार्तालाप करता है। उसके साथ रहता है, उसके साथ भोजन करता है या उसके पास सोता भी है तो वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(५७) यदि कोई नवीन साधु भी इस प्रकार कहे कि—"मैं भी बुद्धदेव के आदेशों को खूब समझता हूं, जिन वासनाओं को बुद्धदेव ने आत्मोन्नति के मार्ग में बाधक बताया है वे वास्तव में बाधक नहीं हैं।" वह साधु-समाज से इस प्रकार संबोधित किया जाना चाहिए—"हे नवीन साधु! ऐसा न कहो। बुद्धदेव के विरुद्ध वचन न बोलो, यह अच्छा नहीं है कि तुम बुद्धदेव पर लाञ्छन लगाते हो। बुद्धदेव ने कभी ऐसा उपदेश नहीं किया जैसा कि तुम उन पर आक्षेप करते हो। हे भाई नवीन साधु! बुद्धदेव ने अनेकों बार स्पष्ट घोषणा की है कि वासनाएं आत्मोन्नति के मार्ग में बाधक हैं। हे नवीन साधु! तुम अपने विचार छोड़ दो।" यदि वह साधुओं के समाज से इस प्रकार संबोधित होने पर अपने विचार बदल देता है तो उत्तम है। यदि नहीं तो उसे तीन बार इसी प्रकार चेतावनी दी जाना चाहिए। तीसरी बार समझाने पर भी यदि वह अपने विचार छोड़ देता है तो उत्तम है। यदि नहीं छोड़ता तो साधु समाज द्वारा उसे इस प्रकार संबोधन किया जाना चाहिए—"हे नवीन साधु! आज से अब यह न कहना कि पूज्यवर बुद्धदेव तथागत हमारे शिक्षक हैं। साधु के पद पर मत रहो अब से तुम साधुओं के अधिकार से च्युत किए जाते हो और अब से तुम किसी साधु के पास दो रात्रि विश्राम भी न कर सकोगे, रे निन्दक! चले जाओ, हट जाओ।" जिस नवीन साधु का इस प्रकार से बहिष्कार किया गया हो उसकी संगति में जो साधु रहता है, उससे बातें करता है, उसके साथ भोजन करता है या उसके पास सोता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(५८) जो साधु नवीन वस्त्र पावे उसे उसको कुरूप कर देना चाहिए, (वस्त्र) कुरूप करने की जो तीन विधियाँ हैं उनमें से किसी एक का प्रयोग करे, यानी उसके एक भाग को नीला, लाल या नारंगी रँग डाले, यदि वह नवीन वस्त्र का उपयोग, बिना कुरूप किए हुए करता है तो ऐसा पाप करता है जिस के लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(५९) निवास-स्थान या उपदेश-स्थान के अतिरिक्त अन्य जगह से जो साधु ऐसी वस्तु उठाता है या उठवाता है जिस की गणना रत्नों में है, तो वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

निवासस्थान या उपदेशस्थान से रत्नादि इस इच्छा से उठा सकता है कि जिसका वह है उसी को दे दिया जाय। इस विषय में यही उचित कर्त्तव्य है।

(६०) पूज्यवर बुद्धदेव की आज्ञा है कि प्रति पक्ष स्नान करना चाहिए, पर जो साधु ठीक आवश्यक समयों के सिवा बहुधा स्नान करता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित आवश्यक है।

आवश्यक समय ये हैं:—डेढ़ महीने गरमी के और पहला महीना बरसात का, ये ढाई महीने ग्रीष्म ऋतु के और जब कुछ बीमारी हो, या जब कुछ काम हो या हवा और पानी हो।

सार—क्षुद्र जंतु, पश्चात्ताप, उँगली, सहवास, डरना, छिपना, नियमानुसार अकेली स्त्री के साथ यात्रा में जाना।

(६१) जो कोई साधु जान बूझ कर किसी क्षुद्र जंतु के प्राण लेता है वह ऐसा अपराध करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त की आवश्यकता है।

(६२) जो साधु जान बूझ कर किसी अन्य साधु के विषय में कहता है कि उसे एक क्षण के लिये भी प्रसन्नता प्राप्त नहीं है और इस प्रकार से उसके पश्चात्ताप का कारण उत्पन्न करता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(६३) यदि कोई साधु किसी अन्य व्यक्ति को उँगली से दबाता है तो वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(६४) जो साधु पानी में खिलवाड़ करता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(६५) जो साधु किसी स्त्री के पास एक ही स्थान पर सोता (सहवास करता) है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(६६) जो साधु हँसी में भी किसी अन्य साधु को डराता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(६७) जो साधु किसी साधुनी या अवधूतिनी या शिष्य या नवीन साधु या नवीन अवधूतिनी आदि के ही कमंडल, वस्त्र, आसनी, सुई, कमरबंद आदि वस्तुओं को अकारण छिपा कर रखता या रखवाता है वह ऐसा पाप करते है जिसके लिये प्रायश्चित्त की आवश्यकता है।

(६८) जो साधु किसी साधु को वस्त्र समर्पण करके उसे न दिए हुए के समान बरतता रहे वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(६९) जो साधु किसी शुद्ध चरित्र और पवित्र साधु से अप्रसन्न या क्रुद्ध होकर उस पर पतित होनेवाले पाप अरोपित करता है और वह (आरोप) निराधार है तो वह (आरोपी) ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(७०) जो साधु किसी पुरुष सहगामी से रहित स्त्री के साथ यात्रा करता है चाहे सन्निकट ही के गाँव की ही क्यों न हो—वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

सार—डाकू, बीस वर्ष की आयु के भीतर का शिष्य, खोदना, निमंत्रण, शिक्षा, झगड़ा, कुछ कहे बिना ही चले जाना, व्यवहार-भंग, असमय पान।

(७१) जो साधु यात्रा में डाकुओं के दल के साथ साथ मार्ग चलता है, चाहे एक गाँव से दूसरे गाँव तक का ही मार्ग क्यों न हो, वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(७२) जो साधु बीस वर्ष से न्यून आयुवाले को साधुओं में मिलाने के लिये शिष्य स्वीकार करता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

वह दीक्षा (शिष्यता) मान्य न हो और वह साधु निंदित हो, इसका यही उचित उपचार है।

(७३) जो साधु अपने हाथ से पृथ्वी खोदता है किसी दूसरे से खुदवाता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(७४) कोई साधु चार मास तक के लिये निमंत्रण स्वीकार कर सकता है। यदि वह इससे अधिक समय का निमंत्रण स्वीकार करता है तो ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

पृथक् पृथक् निमंत्रण या बार बार निमंत्रण या किसी विशेष सामयिक निमंत्रण या निरंतर निमंत्रण की बात दूसरी है। ये उपर्युक्त नियम के बंधन से मुक्त हैं।

(७५) 'हे भाई तुम को इस प्रकार की शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए' साधु समाज से जो इस प्रकार संबोधन किए जाने पर इस प्रकार उत्तर देता है कि जब तक मैं नियमों, आदेशों और उपदेशों के अधिष्ठाता साधुओं से अपना संदेह दूर न कर लूँगा तब तक तुम्हारे कहने ही से अमुक शिक्षा को स्वीकार नहीं करूँगा, तुम बच्चे की नाईं अज्ञान हो तुम अविचारी हो और मूर्ख हो!"—वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

जो साधु सर्वज्ञता प्राप्त करने का इच्छुक हो उसे शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए और उपदेशों आदि के जो साधु अधिष्ठाता हैं उनसे भी प्रश्न करना चाहिए। इस विषय में यही उचित मार्ग है।

(७६) जो साधु अन्य साधुओं को लड़ते झगड़ते या असम्मतिपूर्वक वादविवाद करते देख कर अनसुनी करके चुप रहता है और 'वे लोग क्या कहते हैं' यह जानने की इच्छा से जो चुप रहता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(७७) जब कि साधुसमाज में नियमानुसार प्रश्न हो रहे हों और उस समाज में से कोई साधु पास बैठे हुए शेष साधुओं से बिना कुछ कहे सुने अकारण ही उठ कर चला जाता है तो वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त की आवश्यकता है।

(७८) ऊपर कहा हुआ साधु यदि सभ्यता का व्यवहार नहीं करता है तो वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(७९) जो साधु अन्न-मद्य या अन्य किसी प्रकार का मद्य मतवाला होने के लिए पीता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(८०) जो साधु असमय गाँव में जाकर वहाँ के निवासी साधु से एक शब्द भी नहीं बोलता और यदि ऐसा करने का कोई कारण नहीं हो तो वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

सार—भोजन करना, उषाकाल, प्रथम समय, सूई-दानी, आसनी, खुजली, पहरन और सूक्त वस्त्र।

(८१) जो साधु किसी घर में भोजन करने के लिये बुलाया गया हो वह यदि भोजन करने के पूर्व्व ही किसी दूसरे घर को चला जाय या भोजन के पश्चात् निमंत्रण देनेवाले से कहे बिना ही, अकारण ही चला जाय तो वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(८२) जो साधु सूर्य्योदय के पूर्व्व ही उषा काल में, जब कि यह विचार हो सकता है कि अभी रत्न संग्रह न किए गए होंगे, किसी अभिषिक्त क्षत्री राजा के द्वार पर से जाता हुआ देखा जाता है, और ऐसा करने का कोई खास कारण नहीं हो, तो वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

(८३) कोई साधु, जब कि आधे महीने पर प्रतिमोक्षसूत्र का भाषण हो रहा हो, इस प्रकार कहता है "यह पहले पहल मेरे ध्यान में आया है कि यह नियम भी प्रतिमोक्षसूत्र में सम्मिलित है।" और यदि दूसरे साधु उस साधु के विषय में कहें कि वह साधु प्रतिमोक्षसूत्र के भाषण में दुबारा या तिबारा बैठा है तो इस भूल के लिये उसे माफी न मिलनी चाहिए। उसके लिये इस प्रकार पश्चात्ताप प्रकट किया जाना चाहिए—"हे भाई यह एक बुराई है। यह तुम्हारे लिये हानिकारक है कि जब प्रतिमोक्षसूत्र का भाषण हो रहा है तब तुम उसे श्रद्धा-पूर्व्वक नहीं सुनते, तुम इसे पवित्र और महत्त्वपूर्ण नहीं समझते, तुम इस पर ध्यान नहीं देते न इसकी चिंता करते हो। तुम्हारे मस्तिष्क पर इसका कुछ प्रभाव नहीं पड़ता; न तुम कान लगा कर सुनते हो और न तुम सच्चे हृदय से इसका मनन करते हो।" जिस साधु के लिये इस प्रकार पश्चात्ताप प्रकट किया जाता है वह साधु ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त की आवश्यकता है।

(८४) जो साधु हाथी-दाँत, हड्डी या सींग की सुई-दानी बनवाता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है। वह सुई-दानी तोड़ दी जानी चाहिए।

(८५) जब कोई साधु अपने लिये (साधना के लिये) कोई तखत या कुरसी लेता हो तो उसे ध्यान रहे कि तखत या कुरसी के पाए बुद्धदेव की अंगुलियों से आठ अंगुल से अधिक न हों, तखत या कुरसी के भीतर रहनेवाला भाग इस नाप से अलग है। पर जो साधु इस नाप को उल्लंघन करता है वह ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

तखत या कुरसी का अधिक भाग काट दि[illegible] जाना चाहिए।

(८६) जो साधु साधना के हेतु ऐसा तखत [illegible] ऐसी कुरसी बनवावे जिस पर रुई लगी हो [illegible] ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त [illegible] आवश्यकता है।

उस तखत या कुरसी से रुई निकाल डाल[illegible] चाहिए।

(८७) जब एक साधु बैठने के लिये आसन [illegible] तैयार करता हो तो वह ठीक नाप की हो[illegible] चाहिए। यहाँ ठीक नाप ये हैं,—बुद्धदेव के बालि[illegible] (बेता) से दो बालिश्त लम्बाई और डेढ़ बालि[illegible] चौड़ाई हो। यदि वह इस सीमा को उल्लंघन कर[illegible] है तो ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चि[illegible] आवश्यक है।

आसनी का अधिक भाग काट डालना चाहि[illegible]

(८८) साधु दाद या खुजली ढाँकने के लि[illegible] जो कपड़ा बनाना चाहे वह ठीक नाप का हो[illegible] चाहिए। यहाँ खुजली के कपड़े की ठीक नाप [illegible] है—लम्बाई में चार बालिश्त और चौड़ाई [illegible] दो बालिश्त बुद्धदेव के बालिश्तों के अनुसा[illegible] यदि वह इस सीमा को उल्लंघन करता है तो ऐ[illegible] पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक [illegible]

वस्त्र का अधिक भाग काट डालना चाहिए।

(८९) साधु जो बरसाती वस्त्र बनवाना [illegible] वह ठीक नाप का होना चाहिए—बरसाती वस्त्रों [illegible] ठीक नाप यह है,—लम्बाई ६ बालिश्त और चौड़ [illegible] ढाई बालिश्त बुद्धदेव के बालिश्तों से। यदि वह [illegible] प्रमाण को उल्लंघन करता है तो ऐसा पाप क[illegible] है जिसके लिये प्रयश्चित्त आवश्यक है।

वस्त्र का अधिक भाग काट डालना चाहिए।

(९०) जो साधु अपने लिये वस्त्र बनवाना चाह[illegible] है और वह नाप से अधिक बनवाता है तो [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसा पाप करता है जिसके लिये प्रायश्चित्त आवश्यक है।

वस्त्र की नाप यह है—दस बालिश्त लंबाई और ६ बालिश्त चौड़ाई (बुद्ध के बालिश्तों से)

हे भाईयो! यहाँ मैंने प्रायश्चित्तवाले पापों के विषय में ९० नियमों का भाषण किया है। इसी विषय में हे भाइयो मैं आपसे पूछता हूँ, क्या आप सर्वथा शुद्ध हैं? दूसरी बार और तीसरी बार भी आपसे पूछता हूँ—क्या आप सर्वथा शुद्ध हैं? अस्तु भाई इन विषयों में सर्वथा पवित्र हों वे कुछ न कहें, बस मैं समझ जाऊँगा।

(शेष आगे।)

प्रबन्धकारिणी समिति।

रविवार तारीख १३ जनवरी १९१७ सन्ध्या के ५ बजे।

स्थान सभाभवन।

(१) प्रबन्धकारिणी समिति का ३ नम्बर १९१६ का कार्य्यविवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।

(२) पंडित गिरिजादत्त वाजपेयी का ५ नवम्बर का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने काशी चले जाने के कारण पुस्तकालय के निरीक्षक के पद से इस्तीफा दिया था।

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय और बाबू शिवप्रसाद गुप्त पुस्तकालय के निरीक्षक नियत किये जायँ।

(३) निश्चय हुआ कि इस समिति के नगरस्थ सदस्यों में पंडित गिरिजादत्त वाजपेयी का जो स्थान खाली हुआ है उस पर बाबू शिवप्रसाद गुप्त चुने जायँ।

(४) पंडित श्रीलाल उपाध्याय का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने "ग्रामों की सफाई और तन्दुरुस्ती" के लेख की अवधि बढ़ा देने के लिये लिखा था।

निश्चय हुआ कि इस लेख की अवधि २८ फरवरी १९१७ तक बढ़ा दी जाय।

(५) मंत्री ने सूचना दी कि इस वर्ष सभा के पदकों के लिये कोई लेख नहीं आया।

निश्चय हुआ कि सन् १९१७ के लिये निम्नलिखित विषय नियत किए जाँय, इसकी सूचना समाचारपत्रों में प्रकाशित करा दी जाय और नागरीप्रचारिणी पत्रिका की प्रत्येक संख्या में इसका विज्ञापन छपा करे।

डाक्टर छन्नूलाल स्मारक पदक।

नगरों का निर्माण (Town planning)

राधाकृष्णदास पदक।

भारतवर्ष की शासन पद्धति।

रोडिचे पदक।

मनुष्य का भोजन।

(६) बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने प्रस्ताव किया कि नागरीप्रचारिणी पत्रिका में लेखमाला भी सम्मिलित कर दी जाय।

निश्चय हुआ कि बाबू शिवप्रसाद गुप्त और बाबू हरिहरनाथ से प्रार्थना की जाय कि वे इस सम्बन्ध में जाँच कर सभा को सूचित करें कि इस प्रस्ताव की स्वीकृति से सभा को क्या आर्थिक लाभ या हानि होगी।

(७) बाबू श्यामसुन्दरदास जी के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ कि भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के जो ग्रन्थ बाँकीपुर के खड्गविलास प्रेस द्वारा प्रकाशित हुए हैं और जिनका मूल्य बहुत अधिक रखा गया है उनके संस्करण शुद्ध तथा उत्तम नहीं हैं और न न्यायतः उक्त प्रेस ही उन ग्रन्थों के प्रकाशन करने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का एक मात्र अधिकारी है। अतः सभा भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र कृत सत्य हरिश्चन्द्र नाटक का एक सुन्दर, शुद्ध और सस्ता संस्करण प्रकाशित करे और उसके प्रकाशन में हाथ लगाने से पहले उक्त प्रेस के अध्यक्ष महाशय से रजिस्टरी नोटिस के द्वारा यह भी जान ले कि उक्त ग्रन्थों के प्रकाशन के स्वत्व के सम्बन्ध में उनके पास क्या प्रमाण है। बाबू श्यामसुन्दरदास जी ने यह भी सूचित किया कि एक हिन्दी-हितैषी ने सत्य हरिश्चन्द्र की छपाई का व्यय सभा को कृपापूर्वक देना स्वीकार किया है।

(८) बाबू श्यामसुन्दर दास जी के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ कि सभा-भवन में अब स्थान की बड़ी संकीर्णता है। अतः बाबू शिवप्रसाद गुप्त, पंडित रामनारायण मिश्र, बाबू गौरीशंकरप्रसाद, लाला छोटेलाल और राय कृष्णदास की एक सब कमेटी नियत कर दी जाय जो सभा को इस सम्बन्ध में सम्मति दे कि नया हाल बनवाने के लिये क्या प्रबन्ध होना चाहिए।

(९) निश्चय हुआ कि आदर्श जीवन की बहुत थोड़ी प्रतियाँ सभा में रह गई हैं। अतः इस पुस्तक की एक हजार प्रतियों का दूसरा संस्करण प्रकाशित किया जाय।

(१०) निश्चय हुआ कि पंडित श्यामविहारी मिश्र जी से पूछा जाय कि हिन्दी पुस्तकों की खोज के लिये वे क्या प्रबन्ध कर रहे हैं और सन् १९१२-१४ की त्रय-वार्षिक रिपोर्ट कब तक तयार हो जायगी।

(११) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

साधारण सभा।

शनिवार तारीख २७ जनवरी १९१७ सन्ध्या के ५ बजे।

स्थान—सभाभवन।

कोरम पूरा न होने के कारण अधिवेशन न हो सका और निश्चय हुआ कि अब यह अधिवेशन आगामी शनिवार तारीख ३ फरवरी १९१७ को किया जाय।

साधारण सभा।

शनिवार तारीख ३ फरवरी १९१७ सन्ध्या के ५ बजे।

स्थान—सभाभवन।

(१) पंडित व्रजभूषण ओझा के प्रस्ताव तथा बाबू हरिप्रसाद पालधि के अनुमोदन पर पंडित रामचन्द्र शुक्ल सभापति चुने गए।

(२) तारीख ३० दिसम्बर १९१६ और ३ जनवरी १९१७ के कार्य्यविवरण पढ़े गए और स्वीकृत हुए।

(३) प्रबन्ध कारिणी समिति का ता० ३ नवम्बर १९१६ का कार्यविवरण सूचनार्थ उपस्थित किया गया।

सभासद होने के लिये निम्न लिखित सज्जनों के फार्म उपस्थित किए गए:—

(१) बाबू सोहनलाल वर्म्मन सिद्धेश्वर काशी १॥)

२—बाबू नन्दलाल गुप्त, चौक, काशी १॥)

३—बाबू कन्हैयालाल, हेड क्लार्क, डाकखाना बाँदा हेड आफिस ५)

४—डाक्टर कृष्णदत्त पाठक, मध्यमेश्वर काशी १॥)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५—बाबू बनारसीदास गुप्त, जार्ज प्रेस काशी १॥)

६—बाबू जदुवंशसहाय, सब रजिस्ट्रार, सीतामढ़ी जिला मुजफ्फरपुर ५)

७—पं० त्रिवेणीप्रसाद, सब इन्स्पेक्टर आफ पुलिस थाना बाँसडीह बलिया ३)

८—बाबू शिवनाथप्रसाद बेरी १९ रामघाट काशी १॥)

९—श्रीयुत एस० पी० सी० दास, अंधरा का पुल काशी १॥)

१०—बाबू कृष्णामोहन c/o मुंशी विन्ध्येश्वरीप्रसाद वकील राजघाट काशी १॥)

११—बाबू आनन्दबहादुर महल्ला जकाती बरेली १॥)

१२—पंडित मुंशीराम शर्म्मा ड्यकोट ज़िला लायलपुर ३)

१३—बाबू गणपतिप्रसाद अग्रवाल, गोपीगंज बनारस स्टेट १॥)

१४—पंडित श्रीधर विनायक पेण्डसे १०८ दूध विनायक काशी १॥)

१५—पंडित झब्बूलाल वाजपेयी हेडमास्टर स्कूल पांडुका ज़िला रायपुर ।

१६—बाबू रामप्रसाद हेड मास्टर स्कूल मगर लोहड़ पो० पांडुका ज़िला रायपुर ।

१७—बाबू चमारराय हेड मास्टर स्कूल कुरुद ज़िला रायपुर

१८ बाबू देवीसिंह हेडमास्टर स्कूल मवरौद ज़िला रायपुर ।

निश्चय हुआ कि ये सज्जन सभासद चुने जायँ ।

(५) निम्नलिखित पुस्तकें धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईं :—

पंडित गणेसप्रसाद पंड्या, फर्रुखाबाद—
होम यज्ञ
नामकरण
मद्य दोष

बाबू मक्खनलाल गुप्त भरतपुर—
स्त्री धर्मशिक्षा
स्वयं चिकित्सक
अनुराग वाटिका
हिन्दी-महत्त्व
महिला जीवन
सत्यनारायण

मध्यभारत हिन्दी साहित्य समिति इन्दौर—
स्त्री जीवन
भारत विनय

संयुक्त प्रदेश की गवर्नमेण्ट—
General Report on Public Instruction in U. P. for the year ending 31st March 1916.

कुमार देवेंद्रप्रसाद आरा—
त्रिवेणी

पंडित कन्हैयालाल मेरठ—
राजभक्ति

पंडित माधव शुक्ल प्रयाग
महाभारत नाटक (पूर्वार्द्ध)

(६) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई ।

साधारण अधिवेशन ।

शनिवार तारीख २४ फरवरी १९१७—सन्ध्या के ५ बजे ।

स्थान सभाभवन ।

(१) बाबू रामचन्द्र वर्म्मा के प्रस्ताव तथा बाबू हरिप्रसाद पालधि के अनुमोदन पर मुंशी भगवानदीन सभापति चुने गए ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) गत अधिवेशन (तारीख ३ फरवरी १९१७) का वार्षिक विवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।

(३) प्रबन्धकरिणी समिति का तारीख १३ जनवरी १९१७ का कार्य्यविवरण सूचनार्थ उपस्थित किया गया।

(४) सभासद होने के लिये निम्नलिखित सज्जनों के फार्म उपस्थित किए गए:—

१—बाबू गंगाधर मत्तैल कलाभवन बड़ोदा ५)

२—बाबू देवीदास सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस पलास्या इन्दौर १॥)

३—बाबू गयाप्रसाद टंडन प्रथम वर्ष क्वीन्स कालिज काशी १॥)

निश्चय हुआ कि ये सज्जन सभासद चुने जायँ।

(५) हरदोई के सरस्वतीसदन के मंत्री का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि बाबू भगवानदास गुप्त इस क्लब की ओर से ही सभा के सभासद हैं और अब बाबू भगवानदास का नाम सभासदों की नामावली से काट दिया जाय तथा पत्रिका 'मंत्री श्री सरस्वतीसदन हरदोई" के पते से भेजी जाया करे।

निश्चय हुआ कि बाबू भगवानदास का नाम सभासदों की नामावली से काट दिया जाय और श्री सरस्वतीसदन का नाम ना० प्र० पत्रिका के ग्राहकों में लिख लिया जाय।

(६) निम्नलिखित पुस्तकें धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईं:—

बाबू ब्रजनन्दनसहाय, बाबू बाजार, आरा—
गोस्वामी तुलसीदास

पंडित अमरनाथ औदीच्य देहरादून—
उदयप्रकाश

पंडित ज्वालादत्त शर्म्मा मुरादाबाद—
गल्पपंचदशी

संयुक्त प्रदेश की गवर्नमेण्ट—

Census Statistics of Lucknow District.
,, ,, ,, Hamirpur District.
,, ,, ,, Bahraich District.
Indian Antiquities for September, October, November and December, 1916.

(७) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

———

विशेष अधिवेशन।

गत ५ अप्रैल १९१७ को, सन्ध्या के ५॥ बजे काशी नागरीप्रचारिणी सभा का एक विशेष अधिवेशन श्रीयुत बाबू गौरीशंकरप्रसाद बी० ए० एल एल० बी० के सभापतित्व में, सभा-भवन में हुआ था जिसमें सभा के बहुत से सभासदों के अतिरिक्त नगर के अनेक प्रतिष्ठित और गण्य मान्य सज्जन भी उपस्थित थे। निम्नलिखित प्रस्ताव उपस्थित और सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए।

१ (क) यह सभा इस बात पर सन्तोष प्रकट करती है कि माननीय सी० वाई० चिन्तामणि जी ने इस प्रान्त की कौन्सिल में इस विषय पर प्रस्ताव उपस्थित किया कि सब-जजों और मुन्सिफ़ों के पदों पर नियुक्त होनेवालों को हिन्दी भाषा तथा नागरी लिपि का जानना आवश्यक है। जो प्रमाण प्रस्तावकर्ता महाशय ने इस विषय के पक्ष में वहाँ उपस्थित किए हैं उनसे यह सभा पूर्णतया सहमत है।

(ख) यह जान कर सभा को सन्तोष है कि काउन्सिल के कई सदस्यों ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ग) इन कार्यों के लिये सभा उन महाशयों को धन्यवाद देती है।

प्रस्तावकर्ता—बा० श्रीप्रकाश बी० ए० बारिस्टर।

अनुमोदनकर्त्ता—पं० यज्ञनारायण उपाध्याय एम० ए० एलएल० बी०।

समर्थनकर्त्ता—बा० बेणीप्रसाद।

,, ,, स्वामी विद्यानन्द।

,, ,, बा० कन्हैयालाल मुख़तार।

(क) सभा को इस बात पर बहुत खेद है कि कौन्सिल के कुछ माननीय सभासदों ने हिन्दी भाषा की प्राचीनता और सुबोधता आदि के सम्बन्ध में निर्मूल और मिथ्या आक्षेप किए।

(ख) यह सभा अरबी लिपि के प्रेमी सज्जनों से सादर अनुरोध करती है कि वे देश की स्थिति का ध्यान रख कर इस समय देवनागरी लिपि के प्रेमियों के साथ मिलकर इस बात का निर्णय कर लें कि इस देश में नागरी लिपि का व्यवहार अधिक उपयोगी और सुगम है अथवा अरबी लिपि का; क्योंकि इस समय अधिकतर मतभेद केवल लिपि के सम्बन्ध में ही है।

प्रस्तावकर्ता—बा० शिवप्रसाद जी गुप्त।

अनुमोदनकर्त्ता—पं० गोविन्दराव जोगलेकर बी० ए० एल एल० बी०।

समर्थनकर्ता—पं० विष्णु भास्कर केलकर एम० ए०।

(३) निश्चय हुआ कि ऊपर लिखे प्रस्तावों की एक एक प्रति कौन्सिल के माननीय सभासदों तथा सरकार की सेवा में सूचनार्थ भेज दी जाय।

प्रस्तावकर्ता—राय कृष्णदास जी।

अनुमोदनकर्ता—राय शम्भूप्रसाद।

सभापति को धन्यवाद देकर सभा विसर्जित हुई।

प्रबन्धकारिणी समिति।

शनिवार ता० १० फरवरी १९१७ सन्ध्या के ५ बजे

स्थान—सभाभवन।

(१) गत अधिवेशन (ता० १३ जनवरी १९१७) का कार्यविवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।

(२) बाबू शिवप्रसाद गुप्त का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि जिन लोगों को सभा के पुस्तकालय से पुस्तकें लेने का अधिकार है उनसे चन्दे के अतिरिक्त २) वा ५) रु० जमा करा लिया जाय जिसमें किसी पुस्तक के खो जाने पर इस रुपए से वह खरीदी जा सके।

निश्चय हुआ कि प्रचलित प्रणाली को तीन मास तक देखने के उपरान्त बाबू शिवप्रसाद गुप्त जी इस प्रस्ताव को कृपा-पूर्वक उपस्थित करें।

(३) अहमदाबाद के भीखाभाई सी० चौधरी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने "जीवन के आनन्द" का गुजराती में अनुवाद प्रकाशित करने की आज्ञा सभा से माँगी थी।

निश्चय हुआ कि उन्हें इसकी आज्ञा इन नियमों पर दी जाय कि वे अपने अनुवाद में सभा की पुस्तक का उल्लेख कर दें और उसके टाइटिल पृष्ठ पर भी सभा की पुस्तक का नाम दे दें। अनुवाद के छपने पर वे कृपापूर्वक उसकी ६ प्रतियाँ सभा को भेज दें।

(४) पंडित राधाचरण गोस्वामी का १७ जनवरी का कार्ड उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने अपने पुत्र श्री गौरचरण गोस्वामी के स्मरणार्थ ५०) रु० की एक वार्षिक वृत्ति सभा को देने की इच्छा प्रकट की थी और पूछा था कि सभा किस आवश्यक कार्य्य में इसे व्यय करना उचित समझती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चय हुआ कि पंडित राधाचरण गोस्वामीजी से निवेदन किया जाय कि इस समय सभा को अपने पुस्तकालय के लिये एक नवीन भवन बनवाने की बड़ी आवश्यकता है जिसमें अनुमानतः पाँच छ हजार रुपया व्यय होगा। अतः यदि वे अपने पुत्र के स्मारक स्वरूप यह भवन बनवा दें अथवा जो वार्षिक वृत्ति सभा को वे दिया चाहते हैं उसके सूद के हिसाब से मूल धन इस भवन के बनवाने में लगा दें तो बड़ा उपकार होगा। अन्यथा उनकी जो इच्छा हो उसी के अनुसार यह रुपए का व्यय किया जायगा।

(५) बाबू हरिहरनाथ का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि नागरीप्रचारिणी पत्रिका की शुष्कता को दूर करने के लिये उसमें बहुत बड़े लेख न छापे जायँ वरन् उसमें अनेक विषयों के लेख रहें तथा पद्य और हास्य रस को भी स्थान दिया जाय। साथ ही पत्रिका के लिये लेख मँगवाने और उसे ठीक समय पर निकालने का भी विशेष उद्योग किया जाय।

निश्चय हुआ कि नागरीप्रचारिणी पत्रिका और लेखमाला को एक में ही सम्मिलित करने के सम्बन्ध में सभा को सम्मति देने के लिये गत अधिवेशन में जो छोटी कमेटी बनाई गई है उसकी सम्मति मिलने पर यह प्रस्ताव उपस्थित किया जाय और उस कमेटी में बाबू माधवप्राद तथा पंडित रामनारायण मिश्र के नाम बढ़ा दिए जायँ और बाबू शिवप्रसाद गुप्त जी उसके नियोजक नियत किए जायँ।

(६) पंडित श्यामविहारी मिश्र एम ए० का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने हिन्दी पुस्तकों की खोज के लिये बाबू देवनारायण महता को जिन नियमों पर नियुक्त किया था उसकी सूचना दी थी।

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय।

(७) वल्लभ हिन्दी कानूनी कोश के विषय में बाबू गौरीशंकरप्रसाद जी की सम्मति उपस्थित की गई कि ऐसे कोश की बहुत आवश्यकता नहीं है वरन् इस समय जिस प्रकार के कोश की आवश्यकता है उसमें एक कोष्ठ में प्रचलित कानूनी शब्द होने चाहिएं दूसरे में तदर्थी अंग्रेजी शब्द, तीसरे में उनका अर्थ और चौथे में हिन्दी का पर्यायवाची शब्द जिनका प्रयोग प्रचलित अदालती शब्दों के स्थान में सुगमता से हो सके।

निश्चय हुआ कि पं० व्रजवल्लभ मिश्र के पास यह सम्मति भेज दी जाय।

(८) बाबू हरिहरनाथ का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि मनोरंजन पुस्तकमाला के जो अंक अब निकाले जायँ उनकी कुछ प्रतियाँ बादामी कागज पर छपवाई जायँ और उनकी जिल्द न बँधवाई जाय जिसमें कम मूल्य पर उनकी बिक्री करना सम्भव हो।

निश्चय हुआ कि "आदर्श जीवन" का जो दूसरा संस्करण छपनेवाला है उसमें ८०० प्रतियाँ अच्छे कागज पर छपवाई जायँ और दो सौ प्रतियाँ बादामी कागज पर छपवा ली जायँ।

(९) खड्गविलास प्रेस का १ फरवरी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के ग्रन्थों के प्रकाशन का स्वत्व केवल उन्हें ही प्राप्त है अतः सभा के लिये इन ग्रन्थों का प्रकाशित करना उचित नहीं होगा।

निश्चय हुआ कि यह पत्र आगामी अधिवेशन में उपस्थित किया जाय।

(१०) निश्चय हुआ कि "महाराणा प्रताप" की एक हजार प्रतियों का नया संस्करण शीघ्र निकाला जाय।

(११) बाबू शिवप्रसाद गुप्त के प्रस्ताव पर निश्चित हुआ कि स्मिथसोनियन इन्स्टीट्यूशन और काँग्रेस लाइब्रेरी को मनोरंजन पुस्तकमाला, हिन्दी-शब्द-सागर तथा सभा द्वारा प्रकाशित सब पुस्तकें बराबर बिना मूल्य भेजी जाया करें।

(१२) पं० नोखेलाल शर्म्मा का पत्र उपस्थित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि वे अब सभा को वार्षिक चन्दा देने में असमर्थ हैं अतः उनका चन्दा क्षमा किया जाय।

निश्चय हुआ कि यह पत्र आगामी अधिवेशन में उपस्थित किया जाय।

(१३) बाबू माधवप्रसाद जी ने प्रस्ताव किया कि मनोरंजन पुस्तकमाला का जो दूसरा संस्करण निकाला जाय उसका मूल्य लागत से दूना रखा जाय और बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने प्रस्ताव किया कि सभा की सभी पुस्तकों का मूल्य सदैव लागत से दूना रखा जाया करे।

निश्चय हुआ कि यह प्रस्ताव आगामी अधिवेशन में उपस्थित किया जाय।

(१४) सभापति को धन्यवाद दे कर सभा विसर्जित हुई।

———

प्रबन्धकारिणी समिति।

रविवार ता० ६ मई १९१७ सन्ध्या के ५½ बजे।

(१) गत अधिवेशन (ता० १० फरवरी १९१७) का कार्यविवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।

(२) पंडित राधाचरण गोस्वामी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि वे ५०) रु० की जो वार्षिक वृत्ति सभा को दिया चाहते हैं उससे निम्नलिखित कार्यों में से किसी का प्रबंध किया जाय (क) मदरास प्रान्त में हिन्दी का प्रचार (ख) पूने में जिस प्रकार हेमन्त-व्याख्यानमाला मराठी में हुआ करती है वैसे हिन्दी में काशी में हो। (ग) ब्रजभाषा के काव्य की उत्कृष्ट परीक्षा।

निश्चय हुआ कि सभा की सम्मति में सुबोध स्थानों में इस धन का व्यय करना उत्तम होगा।

(३) पं० रामचन्द्र शुक्ल तथा पाँच अन्य सभासदों का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि यदि किसी अनुवादक को "जोधसिंह पुरस्कार" देना उचित समझा जाय तो उसे पूरा पुरस्कार न देकर केवल १०० रु० दिया जाय अथवा सौ सौ रुपए के दो पुरस्कार बना कर दो उत्तम अनुवादकों को दिए जायँ।

निश्चय हुआ कि पुरस्कार देने के संबंध में विचार करने के लिये जो समिति बनाई जाय उसके पास यह प्रस्ताव भी सम्मति के लिये भेज दिया जाय।

(४) काशी के सनातन धर्म्म विद्यालय के मंत्री का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने अपने पुस्तकालय के लिये सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें बिना मूल्य माँगी थीं।

निश्चय हुआ कि मनोरंजन पुस्तकमाला और हिन्दी-शब्दसागर को छोड़ कर अन्यान्य पुस्तकें उन्हें अर्द्ध मूल्य पर दी जा सकती हैं।

(५) श्री पं० म० ला० स्मारक सार्वजनिक वाचनमन्दिर के उपमंत्री का कार्ड उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि वे "पलाशीर युद्ध" नामक काव्य के सर्वोत्तम अनुवादक को एक स्वर्णपदक देना चाहते हैं; अनुवादों पर विचार करने के लिये सभा-काव्य-मर्मज्ञों की एक समिति संगठित कर दे।

निश्चय हुआ कि अनुवादों के मिलने पर सभा एक समिति संगठित कर देगी। स्वर्णपदक किस मूल्य का होगा यह भी पूछा जाय।

(६) हिंदी पुस्तकों की खोज के विषय में पंडित श्यामविहारी मिश्र जी की सन् १९१५ तक की रिपोर्ट उपस्थित की गई।

निश्चय हुआ कि पंडित रामनारायण मिश्र जी को सौंपी जाय कि वे इसे देख कर गवर्नमेंट के पास भेजने के लिये सभा के मंत्री के पास भेज दें और यदि कहीं कुछ परिवर्त्तन की आवश्यकता हो तो पंडित श्यामविहारी मिश्र जी से परामर्श कर के इसे ठीक कर दें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(७) बाबू वेणीप्रसाद का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि मदरास प्रान्त में नागरी लिपि और हिन्दी भाषा के प्रचारार्थ तामिल, तेलगू, कनाडी-हिन्दी की प्राइमर प्रकाशित की जाय। इस सम्बन्ध में बाबू शिवप्रसाद गुप्त का यह प्रस्ताव कि तामिल के द्वारा हिन्दी भाषा सिखाने के लिये पंडित मथुराप्रसाद मिश्र की "प्रैक्टिकल इंगलिश" के ढंग पर ढाई सौ पृष्ठों की एक पुस्तक छपवाई जाय, इसके रचयिता को १००) का पुरस्कार दिया जाय और पुस्तक तयार करवाने के लिये मदरास के समाचार-पत्रों में विज्ञापन दिया जाय। इसका सब व्यय बाबू शिवप्रसाद गुप्त जी ने इस शर्त पर देना स्वीकार किया कि इस पुस्तक की बिक्री से आय होने पर उनका मूल धन उन्हें लौटा दिया जाय। निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय।

(८) पंडित श्यामविहारी मिश्र जी का २७ मार्च १९१७ का पत्र पढ़ा गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि वे इस वर्ष प्रबन्ध-कारिणी-समिति के सदस्य नहीं रह सकेंगे।

निश्चय हुआ कि उनके स्थान पर ठाकुर शिवकुमारसिंहजी समिति के सदस्य चुने जायँ।

(९) बाबू कृष्णप्रसाद गौड़ और पंडित रामप्रसाद पाण्डेय का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने नागरीप्रचारिणी पत्रिका को ठीक समय पर निकालने के लिये अवैतनि के रूप से इसका सम्पादन करने के लिये लिखा था।

निश्चय हुआ कि लेखमाला को नागरीप्रचारिणी पत्रिका में सम्मिलित करने के संबन्ध में विचार करने के लिये जो उपसमिति बनाई गई है उसके पास यह प्रस्ताव विचारार्थ भेजा जाय।

(१०) बाबू रामचन्द्र वर्म्मा का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि आगामी गौरूलाई से वे नागरीप्रचारिणी पत्रिका का सम्पादन न कर सकेंगे अतः इसके सम्पादन का कोई और प्रबन्ध किया जाय।

निश्चय हुआ कि यह पत्र भी उक्त समिति के पास भेजा जाय।

(११) अहमदाबाद के श्रीयुत भीखा भाई लाल चौधरी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने गुजराती भाषा में 'लाल चीन' का अनुवाद प्रकाशित करने की आज्ञा माँगी थी।

निश्चय हुआ कि जिन नियमों पर उन्हें "जीवन के आनन्द" के अनुवाद को प्रकाशित करने की आज्ञा दी गई है उन्हीं नियमों पर वे "लाल चीन" का अनुवाद भी प्रकाशित कर सकते हैं।

(१२) पंडित गणपति जानकीराम दुबे का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने धर्म-सेवक प्रकाशित करने के लिये 'बुद्धदेव' का ब्लाक माँगा था।

निश्चय हुआ कि ब्लाक उन्हें मँगनी दिया जाय।

(१३) ग्वालियर की हस्तलिपि परीक्षा के पर्चे उपस्थित किए गए।

निश्चय हुआ कि इन परचों पर विचार करने के लिये बाबू वेणीप्रसाद, बाबू हरिप्रसाद पालधि और बाबू अमीरसिंहजी नियत किए जायँ और बाबू वेणीप्रसादजी इस उपसमिति के नियोजक रहें।

(१४) खड्गविलास प्रेस के स्वामी के नाम सभा का ता० २७ अप्रैल १९१७ का पत्र नं० २४ उपस्थित किया गया जिसमें उन्हें लिखा गया था कि सभा "सत्य हरिश्चन्द्र" का एक संस्करण ३० मई तक निकालना चाहती है, इस पुस्तक का मूल्य आना रखा जायगा और यदि उनके पास इसका कापी राइट हो तो सन् १९१४ के कापी राइट एक्ट के परिशिष्ट १ की धारा ३ के अनुसार वे एक एक पैसे के एक हजार चिपकानेवाले लेबिल सभा के पास वी० पी० द्वारा भेज दें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय।

(१५) बाबू शिवप्रसाद गुप्त का यह प्रस्ताव कि सभा की सब पुस्तकों का मूल्य लागत से दूना रखा जाय और बाबू माधवप्रसाद का यह प्रस्ताव कि मनोरंजन पुस्तकमाला का दूसरा संस्करण जब छपे तो उसका मूल्य लागतसे दूना रखा जाय उपस्थित किया गया।

प्रोफेसर श्रीप्रकाशजी के प्रस्ताव पर अधिक सम्मति से यह निश्चय हुआ कि सभा की प्रत्येक पुस्तक का मूल्य प्रबन्धकारिणी-समिति निर्धारित किया करे। इसमें मनोरंजन पुस्तकमाला और हिन्दी शब्दसागर भी सम्मिलित हैं। बाबू गौरीशंकरप्रसाद जी के प्रस्ताव पर यह भी निश्चय हुआ कि जिस समय यह समिति किसी पुस्तक को प्रकाशित करने का निश्चय करे उसी समय उसका मूल्य भी निश्चित कर दिया करे।

(१६) पंडित नोखेलाल शर्म्मा का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने अपना चन्दा क्षमा किए जाने के लिये लिखा था।

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार नहीं किया जाय।

(१७) बाबू शिवप्रसाद गुप्त के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ कि साधारण सभा और प्रबन्धकारिणी समिति के सब अधिवेशनों के कार्य्य-विवरण अधिवेशन के समय ही लिखकर स्वीकृत करा लिए जायँ।

(१८) निश्चय हुआ कि विशेष कार्य्यों के लिये समिति का अधिवेशन मंगलवार ता० ८ मई १९१७ सन्ध्या के ५½ बजे किया जाय।

———

(८)

प्रबन्धकारिणी समिति।

मंगलवार तारीख ८ मई १९१७ सन्ध्या के ५½ बजे।

स्थान सभाभवन।

(१) गत अधिवेशन (ता० ६ मई १९१७) का कार्य्यविवरण पढ़ा गया।

स्वीकृत हुआ।

(२) मिरजापुर के डिप्टी इंस्पेक्टर आफ स्कूल्स का १७ फरवरी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने उन बालकों के परचे देखने के लिये माँगे हैं जो हिन्दी हस्तलिपि परीक्षा में मिडिल अपर प्राइमरी और लोअर प्राइमरी विभागों में सर्वोच्च हुए हैं।

भेज दिया जाय।

(३) प्रोफेसर श्रीप्रकाशजी का ६ मई का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा है कि महामंडल प्रेसवालों ने कई मास से उनके पास लेखमाला का प्रूफ नहीं भेजा जिससे लेखमाला की केवल एक संख्या अब तक निकल सकी।

महामंडल प्रेसवालों से पूछा जाय कि वे क्यों समय पर प्रूफ नहीं भेजते। यदि इस प्रेस से काम न चल सके तो मंत्री कोई दूसरा उचित प्रबन्ध करें।

(४) आगामी वर्ष के पदाधिकारियों और प्रबन्धकारिणी समिति के सभासदों के चुनाव के लिये निम्नलिखित सूची तयार की गई:—

एक सभापति और दो उपसभापति।

पंडित महावीरप्रसाद द्विवेदी

उपाध्याय पंडित बदरनीरायण चौधरी

बाबू श्यामसुन्दर दास बी० ए०

पंडित श्यामविहारी मिश्र एम० ए०

बाबू गौरीशंकरप्रसाद बी० ए० एल एल० बी०।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंडित रामनारायण मिश्र बी० ए०
रेवरेण्ड ई० ग्रीव्स।

एक मंत्री और एक उपमंत्री।

बाबू गौरीशंकरप्रसाद बी० ए० एल एल० बी०
बाबू वेणीप्रसाद
बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा
पंडित साँवलजी नागर
बाबू शिवप्रसाद गुप्त
प्रोफेसर श्रीप्रकाश
पंडित गोविन्दराव जोगलेकर

प्रबन्धकारिणी समिति के सदस्य।

काशीसे ४
बाबू वेणीप्रसाद
प्रोफेसर श्रीप्रकाश
पंडित साँवलजी नागर
बाबू हरिप्रसाद पालधि
पंडित देवीप्रसाद उपाध्याय
बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा
राय कृष्णदास
बाबू केशवदास
बाबू बाँकेविहारीलाल
बाबू देवीप्रसाद खत्री।

मध्यभारत से एक—राय साहब पंडित सूर्यप्रस
त्रिपाठ

पंडित कामताप्रसाद गुरु

संयुक्तप्रदेश से एक—पंडित श्यामविहारी
एम० ए०

ठाकुर शिवकुमारसिंहजी

राजपूताने से एक—रायबहादुर ठाकुर राजसिं
वेद

पंडित गौरीशंकर हीराचंद ओझा
पं० चन्द्रधर शर्म्मा गुलेरी बी० ए०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Registered No. A 414

[संख्या १—२

भाग १२]

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

जुलाई, अगस्त १९१७

सम्पादक—वेणीप्रसाद ।

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल । बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल ॥
करहु विलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल । निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सबको मूल ॥
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार । सब देशन सों लै करहु, भाषा माँहि प्रचार ॥
प्रचलित करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न । राज काज दरबार में, फैलावहु यह रत्न ॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र ।

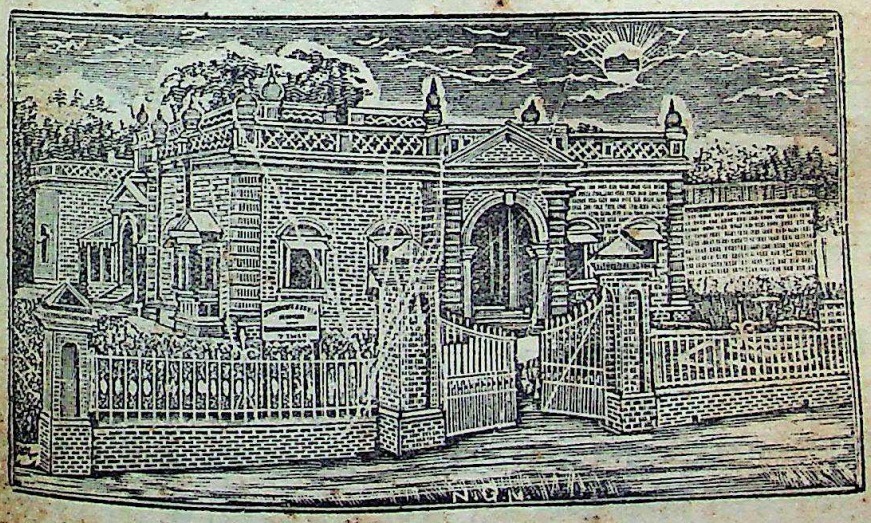

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित ।

गणपति कृष्ण गुर्जर द्वारा श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस, काशी मे मुद्रित ।

वार्षिक मूल्य रा॥)

प्रति संख्या ≈।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय सूची ।

(१) हिन्दी १
(२) शिक्षा का माध्यम २
(३) आंखो देखा नक्षत्र जगत ३
(४) कोलम्बस की यात्रा ६
(५) प्रतिमोक्ष सूत्र ५२ ... ... १८
(६) हरदोई साहित्य सम्मेलन १९
(७) पृथ्वी की आयु २१
(८) सभा का कार्य्य-विवरण २३

मुफ्त ! मुफ्त !! मुफ्त !!!

धन्वन्तरी ।

यह आयुवदीय मासिक पत्र योग्य वैद्य, डाक्टर और हकीमों को विना मूल्य भेजे जाते हैं, सर्व साधारण को नहीं ।

मैनेजर धन्वन्तरी विजयगढ, अलीगढ ।

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकों की सूची ।

अखरावट—मालिक मुहम्मद जायसी रचित । इसमें कवि ने हिन्दी वर्णमाला के क्रम से एक एक अक्षर आदि में देकर विश्वात्मक ब्रह्मज्ञान विषय का काव्य किया है । मू० ≡) डा०)

इन्द्रावती—कवि नूरमहम्मद कृत । इस ग्रन्थ में कवि ने एक कथा का वर्णन किया है । सम्पूर्ण पुस्तक की रचना चौपाई और दोहा छन्दों में है । मूल्य ।॥)

कविवर बिहारीलाल—बाबू राधाकृष्णदास लिखित । इस छोटे से लेख में बिहारी सतसई के रचयिता कवि कुल चूड़ामणि बिहारीलालजी का संक्षेप जीवनचरित्र वर्णन किया गया है । मूल्य =) डा०)॥

कालबोध—इसमें भिन्न भिन्न प्रकारों और मतों से समय के विभाग आदि दिए गए हैं । मू० ≡)

निःसहाय हिंदू—हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक स्वर्गीय बाबू राधाकृष्णदास लिखित एक वियोगान्त उपन्यास । मूल्य ।) डाकव्यय)॥

परिचर्याप्रणाली—इसमें रोगी मनुष्य का घर में शुश्रूषा करने का विषय सरल रीति से लिखा गया है । मूल्य ।) डा०)॥

प्राचीनलेखमणिमाला—इस पुस्तक में शताब्दि अवरोहण क्रम से भारतवर्ष के शिलालेखों तथा दानपत्रों का सूचीस्वरूप में वर्णन है । मू० १)

पृथ्वीराजरासो—महाकवि चन्द बर्दाई कृत । यह ग्रन्थ हिन्दी साहित्य का आदि काव्य है । जिस प्रकार हिन्दी ग्रन्थरचना में यह सब पुस्तकों से पुराना है उसी प्रकार इसकी काव्यशैली भी अद्वितीय है । इस ग्रन्थमें कवि ने भारतवर्ष के अन्तिम क्षत्री सम्राट राजा पृथ्वीराज का जीवनवृत्तान्त विस्तार पूर्वक लिखा है जो आदि से अन्त तक विचित्र घटनाओं से भरा हुआ है । इस ग्रन्थ की भाषा कुछ कठिन है । इसलिए सभा ने समस्त ग्रन्थ का सारांश सरल हिन्दी भाषा में मूल ग्रन्थ के साथ ही लगा छपवाया है, जिससे पाठकों को मूल ग्रन्थ के पठन-पाठन में बड़ी सहायता और आनन्द मिलता है । इसके ६९ समय २२ खण्डों में छपे हैं । मू० २०) डा० १॥)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

भाग २२ } जुलाई, अगस्त १९१७ । { संख्या १-२

हिन्दी ।

(१)

हिन्दी भाषा विश्व की, भाषन माँहि प्रधान ।
याके सेवक हो गये, सूर, चन्द गुणवान ॥
सूर, चन्द गुणवान हुए हैं लाल बिहारी ।
तुलसी और पजनेस भये पद्माकर भारी ॥
यह, भाषा माहिं, लेख, कविता, तुकबंदी ।
होवे प्रचलित शीघ्र, हमारी प्यारी हिंदी ॥

(२)

प्यारे ! हिन्दी ने किया, है कितना उपकार ।
जो अपनाते हैं इसे, उनको करती प्यार ॥
उनको करती प्यार ज्ञान-भण्डार बताती ।
कीर्ति सिखलाय, उन्हें कर्तव्य सुझाती ॥
है विचित्र वे लोग रहें जो इससे न्यारे ।
करि अपनो कर्तव्य पढ़ो सब हिन्दी प्यारे ॥

(३)

तन मन धन सब दीजिये या हिन्दी के काज ।
नित प्रति उन्नति कीजिये कर साहित्य समाज ॥
कर साहित्य समाज ध्यान प्रिय रखिये याको ।
गौरव बढ़तो रहे सदा हिन्दी भाषा को ॥
आर्य ईसाई जैन, यवन अरु सर्व सनातन ।
भारत में हिन्दी के हित त्यागहु तन मन धन ॥

(४)

गिनती हो सकती नहीं सब कवियन की मीत ।
जिनने हिन्दी से रखि, शुद्ध अनूपम प्रीत ॥
शुद्ध अनूपम प्रीत सदा उर अपने लाए ।
कई यवन गुणवान गोद इसकी में आए ॥
केशव और कबीर, न इनकी थाहें मिलती ।
जैसे तारों की न किसी से होती गिनती ॥

(५)

रामायण को देखिये है हिन्दी का ग्रंथ ।
याकी शिक्षा गहत हैं सकल धर्म अरु पंथ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकल धर्म अरु पंथ इसे हित चित से ध्याते।
रचना ऐसी करो जिसे हों सब अपनाते॥
हिन्दी का भंडार भरो प्रिय विनती मम सुन।
हो जावें तैयार यहाँ अगणित रामायण॥

'दास'

शिक्षा का माध्यम।

गत वर्ष श्रीमान वायसराय की कौंसिल में विद्यालयों में देशी भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने के लिए कई माननीय सभासदों ने बहुत बल दिया था इसी उद्देश्य को लक्ष्य में रख कर गत तारीख २१ अगस्त को शिमला शैलनिवास में इस विषय पर विचार करने के लिए एक सम्मेलन हो गया। कई सर्कारी कर्म्मचारियों के अतिरिक्त एकीस गैर-सरकारी सभासद भी उपस्थित थे। सभापति थे शिक्षा विभाग के मंत्री सर शंकरन नैयर। विचारणीय विषय यह था कि विद्यालय में बालकों को किस श्रेणी से अंगरेजी की शिक्षा आरंभ कराई जाय और किस श्रेणी तक उन्हें केवल मातृभाषा द्वारा शिक्षा दी जाय। किस प्रकार से बालक अधिक योग्य और शिक्षित हो सकेंगे? पर असल में तात्पर्य्य यही था कि किस प्रकार से अंगरेजी की शिक्षा अच्छी हो सकेगी? बालक अंगरेजी में पक्के हो जाँय चाहे वास्तव में योग्य हों या न हों। लक्ष्य यही रहा जो सभासदों के वादानुविवाद से स्पष्ट प्रगट हो रहा है? इस सम्मेलन का परिणाम भी सुन लीजिए। ग्यारह सभासदों की तो यही सम्मति रही कि ऊँची चार श्रेणीयों में देशी भाषा फटकने न पावे। पर तीन महाशय चार को घटाकर केवल दो ही श्रेणी से देशी भाषा को निकालना चाहते थे। पांच सज्जनों की यह सम्मति थी कि विद्यालयों में अंगरेजी भाषा केवल दूसरी भाषा (गौण विषय) की रीति पर रखी जाय। बारह सभासदों ने यह सम्मति दी कि केवल अंगरेजी परीक्षापत्रों को छोड़ कर अन्य विषयों के परीक्षापत्रों का उत्तर विद्यार्थी चाहे जिस भाषा में दें स्वतन्त्रता उन्हें दी जाय। यह सब विचार सम्मेलन समाप्त हो गया। हम नहीं कह सकते विद्यार्थियों को अधिक योग्य बनाने की ओर अधिक लक्ष्य न देकर केवल वह अङ्गरेजी ही में पढ़े जांय ऐसा क्यों सोचा जाता है? क्या देशी भाषा में उच्च विचार या उच्च आदर्श हैं ही नहीं? अफसोस तो उन देशी सभासदों की सम्मति पर जिन्होंने अपनी मातृभाषा को जिसे उन्होंने दूध के साथ पान किया था, बिसार दिया और राजसभा में बिचारी देशी भाषा को तुच्छ करा दिया। जरा विडंबना तो देखिए। पहले दस वर्ष एक विदेशी भाषा का अभ्यास कीजिए, फिर कहीं अच्छे आदर्श या वास्तविकशिक्षा के में प्रवेश कर पाइएगा। यद्यपि इस प्रांत में विद्यालयों की कुछ नीची श्रेणीयों में देशी भाषा माध्यम बनाया गया है पर उससे शिक्षा का उद्देश्य पूरा सिद्ध होने के बदले उल्टे विद्यार्थी को भी कठिनाई में पड़ जाते हैं। पूरा सुविधा तभी हो सकता है जब आदि से अंत तक विद्यार्थी को, चाहे जिस भाषा में परीक्षा देने की स्वतन्त्रता रहे। कई अदूरदर्शी इस भय से भी देशी भाषा से दूर भागते हैं कि देशी भाषाएँ तो सैकड़ों किसे प्रमाण माना जायगा। यह भी अनूठे विद्वान की निराली कल्पना है जिन्होंने एक हिन्दी पूर्वीहिन्दी, पश्चिमीहिन्दी, बिहारी हिन्दी, भागों में अपनी माता के टुकड़े टुकड़े करना चाहा है पर वास्तव में क्या पश्चिमभारत वाला पूर्व्वी, हिन्दी नहीं समझता या बिहारी पश्चिमी हिन्दी नहीं समझते? अजी इसकी बात तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...। एक पंजाबी और बंगाली या गुजराती ... बिहारी परस्पर बोलते समय टूटी फूटी ...दी ही का सहारा लेते हैं? क्या इस बात को ...स्विकार कर सकता है? क्या सूर्य्यवत् ...बात प्रगट नहीं हो रही है कि हिन्दी—और ...केवल हिन्दी ही—इस देश की सार्वजनिक ...या है और हो सकती है फिर हमारे बच्चों ...शिक्षा के माध्यम को उनकी मातृभाषा ...बनाकर अन्य भाषा को बनाना सरा-सर ...नुचित है या नहीं। क्या कोई भी विद्वान ...बात की हिमाकत कर सकता है कि एक ...विद्यार्थी की नैतिकशिक्षा के लिए तुलसीदास ...रामायण में यथेष्ट सामग्री नहीं? फिर यह ...हुंदना क्यों? क्या उनकी समझ में अब भी ...भरमें एक भाषा प्रचार करने का समय ...नहीं आया?

आंखों देखा नक्षत्र जगत।

विश्व ब्रह्माण्ड की यदि कोई प्रत्यक्ष ऐसी वस्तु है जो हमारे मन में युगपद विस्मय और आनन्द के प्रवाह को प्रवाहित कर देती है तो वह आकाश मंडलके ज्योतिर्मय पदार्थ हैं। सहस्रों, नहीं लक्षों वर्ष और न जाने कितने ...पूर्व जब मनुष्यों में बुद्धी का विकाश हुआ था ...उन्होंने अपना एक स्वतंत्र अस्तित्व माना ...पहले पहल उन्हें इन्हीं ज्योतिर्मयपदार्थों ने ...चित और विस्मित किया था और इन्हीं की ...शा में उन्होंने सुन्दर और नैसर्गिक स्तोत्रों ...चना की थी जिनसे हमारे वेद भगवान ओत ...प्रोत हैं। कौन ऐसा जड़ मतिमन्द प्राणी होगा ...आकाश के तारापुंजों की शोभा निरख पुलकित न होता हो। शरत्चन्द्र की विमल चांदनी अपनी शोभा अलग रखती है सही पर शरदाकाश के अमावस्या की रात्रि भी अपनी शोभा में उससे कम नहीं। उन दिनों जब आकाश पर दृष्टी डालिए, अगणित नक्षत्रपुंज जगमगाते दिखाई देते हैं। मानों पृथवी पर गोल गुम्मज दार काला घटा टोप ढका है जिस पर अगणित हीरे की जरदोजी बूटियां टकी हैं। कौन ऐसा मूढ़ हृदय होगा जो इस शोभा को निरख एक बार अलौकिक जगत में विचरण न करने लगेगा। जब भगवान अंशूमाली अस्त होते हैं और पृथवी के सारे प्राणी निद्रा की गोद में विश्राम करते हैं, तो पृथवी माता भी मानो काली जरदोजी की बूटीदार चादर ओढ़ लेती है और उषाकाल के आते ही उस चादर को धीरे धीरे सरका कर पुनः अपना सुन्दर रूप प्राणियों को प्रत्यक्ष कराती है। वास्तव में रात्रि समय जगमगातेनक्षत्रों को देख कर एक अपूर्व भाव मन में उदय होता है और क्या कभी कभी यह इच्छा नहीं होती कि हम जानें कि यह ज्योतिपुंज वास्तव में क्या हैं? यह वासना स्वभाविक है, केवल हमारे ही नहीं हमारे प्राचीनतम पूर्वजों को भी इन्हें जानने और इनसे विशेष परिचित होने का कौतूहल मनमें उत्पन्न हुवा था और आज दिन भी हमारा यह कौतूहल घटा नहीं है। वरं नए नए दूरवीक्षण यंत्रा के आविष्कार से और नए नए नक्षत्रों के पता लगने से यह कौतूहल और भी बढ़ गया है। इन सूक्ष्म दूरबीनों से बहुत से नवीन ग्रह उपग्रह और नक्षत्रों का पता लगा है पर ऐसे दूरबीनों का संग्रह करना और कार्य्य में लाना सब के लिए सुगम नहीं है। इन नवीन सामानों के साथ गगण दर्शण करने में बहुत से सामान और शिक्षा की भी आवश्यकता है। इस लेख में उनके सविस्तार वर्णन करने की इच्छा नहीं है। यहां तो बिना किसी प्रकार के यंत्र की सहायता के हमारे चिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिचित स्वाभाविक यंत्र "अभी हलाहल मद भरे, स्वेत श्याम रतनार," उपमा वाले यंत्र, इन नयनों ही से पर्य्यावेक्षण करके इन ज्योतीपुँजों के जो जो रहस्य उद्घाटित हो सकते हैं, उन्हीं का जिकर करना है, जिसमें यदि किसी को इन नक्षत्रों के पर्य्यावेक्षन का कौतूहल उत्पन्न हो तो वह इस लेख की सहायता से सहज ही में अपने कौतूहल की निवृत्ती करके इस चिर शोभाशील, रोचक ज्योती जगत की आलोचना में अग्रसर हो सकें।

इन नक्षत्रों को कोरी आंखों से देखने में जो आनन्द है वह दूरबीन से देखने में नहीं है। यद्यपि दूरबीनों से बहुत से सूक्ष्म नक्षत्र दिखाई देते हैं पर बड़े बड़े नक्षत्रपुंजों की शोभा दिखाने में उक्त अमूल्य दूरबीनें असमर्थ हैं। साधारणतया जब कोई पर्य्यावेक्षक किसी आकाशस्थ नक्षत्र को देखना चाहता है तो पहले ही अपनी दूरबीन उसकी ओर लगा नहीं देता। उसके पास एक नक्षत्रों की तालिका संयुक्त पुस्तक रहती है, जिनमें सब नक्षत्रों के नाम और पता तथा उनकी स्थिती लिखी रहती है; मानों अपनी "आफिशीयल डाइरेक्टरी" में अपने अभिलषित पुरुष का पता लगा कर तब दूरबीन का चश्मा आंखों पर चढ़ाता है और उसी विशेष नक्षत्र के पर्य्यावेक्षण में लग जाता है, उसके आस पास के अन्य नक्षत्रों से उसे उस समय कोई मतलब नहीं रहता। कई नक्षत्रपुंज तो इतने विशाल हैं कि दूरबीन से केवल उनका एक ही अंश दिख सकता है। एक समय में उस सारे के सारे ज्योतिर्मयपदार्थ को देखना असंभव हो जाता है, पर 'कोरी आंखें सारे गगन मंडल को एक ही दृष्टी में देख सकती हैं "जहाँ तक गगन में स्थान पाइए, दृष्टी दौड़ाते चले जाइए" आपकी दृष्टी को सिवाय * क्षितिज के और कोई रोकने वाला नहीं, क्योंकि कोरी आंख से किसी भी नक्षत्र का पता लगाने के लिए विश्व ब्रह्माण्ड का यह ज्योतीर्मय नकशा सब का सब आंखों के सामने फैला रहना आवश्यक है। हमारे पूर्व्वजों ने इस नकशे की बदौलत अपने ज्योतिष शास्त्र की रचना की है। नहीं, नहीं—ज्योतिष शास्त्र की रचना के पहले बहुत पहले सूर्य्य और चन्द्र के उदय अस्त, विशेष ग्रह उपग्रह और नक्षत्रों के उदय अस्त उनकी गति—सीधी और वक्र गति-अयन और वर्ष की गिनती, नक्षत्रों की दूरी, चंद्रमा से इनका समन्ध और इनकी आपस की खींच तान का पता लगाया था और इन्हीं कोरी आंखों से लगाया था। अब भी जो इस बात के शौकीन हों और इस "जगमगाते जगत" की छानबीन करना चाहें इन्हीं कोरी आंखों से वह काम ले सकते हैं पर ऐसे शौकीनों को नगर की अट्टालिकाएँ छोड़ कर सुरम्यक्षेत्र के मैदान में जाना चाहिए जहां दृष्टी को बाधा देने वाले कोई बनावटी पदार्थ न हों और तब "आंखों देखे नक्षत्र जगत" का आनन्द लेना चाहिये।

आप जब इस इच्छा से मैदान में जाँयगे और आकाश की ओर दृष्टी उठायेंगे तो सबसे पहले सबसे अधिक ज्योतिवाला नक्षत्र ही आपकी दृष्टी को आकर्षण करेगा और उसी से परिचित होकर उसे अपना अंतरंग मित्र बनाकर तब आप इधर उधर बढ़िये अर्थात् उसी को केन्द्र मान कर उसके आस पास के नक्षत्रों से जान पहचान बढ़ाइए, उनके स्थान और चाल ढाल का पता लीजिए। इस काम को करते करते धीरे धीरे और भी नक्षत्र आपको दिखते जांयगे और आकाश में चन्द्रमा का मार्ग परिवर्तन भी आपको दृष्टी गोचर हो जायगा। इन नक्षत्रों को प्रतिदिन देखते देखते आपको विदित हो जायगा कि ऋतु भेद से चंद्रमा के मार्ग में भी भेद पड़ता जाता है। चलो बिना यंत्र के एक ज्योतिष शास्त्र

* जहां आकाश और पृथवी मिली दिखती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गत तो मालुम हुई। आपका शौक बढ़ने लगेगा और अन्य नक्षत्रों की चाल और गति में भी धीरे धीरे भेद पड़ता आपको साफ दिखाई देगा। यदि आप इस रोचक प्रत्यक्ष जगमगाते जगत के अध्ययन को जारी रखना चाहते हैं तो उत्तम होगा कि एक 'नोट बुक' में इन परिवर्तनों को चिन्हित करते जाएं और भी सूबीता करने के लिए एक नक्षत्रों का नकशा संग्रह कर रखना उचित होगा। ज्यों ज्यों आप इस पर्य्यावेक्षन में अग्रसर होते जायंगे, कौतूहल और रोचकता बढ़ती ही जायगी।

इस कार्य्य को आरंभ करने वाले को सबसे पहले गगनमंडल की जो लीला देखने में आवेगी वह टूटते हुए तारे हैं। आप में से बहुतों ने रात्रि के समय आकाश से "तारों को टूटते" देखा होगा।

दूसरा पदार्थ छाया पथ या आकाशगंगा है। स्वच्छ आकाश में रात्रि समय श्वेत बादल की लंबी लहर सी फैली दिखाई देती है। यह अगणित सूक्ष्मनक्षत्रपुंजों की समष्टी है जो बहुत दूर या छोटे होने के कारण कोरी आंखों से साफ नहीं दिखते और इनकी ज्योति या छाया एक साथ मिलकर आकाशगंगा या छायापथ की सृष्टि करती है।

तीसरी राशीचक्र की ज्योति है अर्थात् जो बारह राशिओं के नाम हम सुनते हैं। (मेष, कुम्भ, मीन) इत्यादि यह भी आकाश को कोरी आंखों ही से देखकर चिन्हित किए गए हैं। जैसे कि कुंभ यह नक्षत्रों का एक समूह है जो आस पास आकाश में इस ढंग से सजा हुआ है कि कुछ हेर फेर से ठीक एक पनभरा मानों जल की कलशी कंधे पर लिये खड़ा है ऐसा प्रतीत होता है। वास्तव में इन राशीचक्रों के चित्रों को गगनमंडल से खोज निकालने में बड़ा आनन्द आता है।

चौथी वस्तु जो अपनी रोचकता में किसी से कम नहीं 'धूमकेतु' तारा है। यद्यपि यह तारा सदा सर्वदा दिखाई नहीं देता, पर जब दिखता है, इसमें छानबीन करने की बहुत सी सामग्री रहती है और इसकी रोचकता भी कम नहीं।

पंचम पूर्ण ग्रास का सूर्य्य ग्रहण है। ऐसे अवसरों पर जब सूर्य्य भगवान के बिलकुल ढँप जाने के कारण रात्रि सा अंधिकार हो जाता है तो कई नक्षत्र दिखाई दे जाते हैं। इस काम के शौकीनों को वह अवसर भी हाथ से जाने देना न चाहिए। उस अवसर पर भी यह कोरी आँखें बहुत से नए दृश्यों से परिचत हो लेती हैं।

छठवां एक और बड़ा ही विचित्र पदार्थ है उसका नाम 'अरोरा बोरएली' है पर वह हमें दिखाई नहीं देता। उत्तरी ध्रुव के महाशीत ऋतु के वर्फीले मैदान में डेरा जमाने वाले कर्म्मवीर शौकीन लोग ही इस अलौकिक दृश्य का आनन्द लेते हैं।

संक्षेप से 'कोरी आंखों देखे नक्षत्र जगत' के पर्य्यावेक्षन के चार विभाग किए जा सकते हैं।

पहला तो मुख्य नक्षत्रों की आकृति का वर्णन जिसमें वह सहज ही चिन्हाई दे सकें जैसा कि राशीचक्रों के विषय में कहा गया है। साथही इन नक्षत्रों का अमुक अमुक नाम किस कारण से हुआ यह भी बतलाना रोचकता से खाली न होगा।

दूसरा, आकाश के इन ज्योतिपिंडों की गति या चाल के निरीक्षण करने से सम्बन्ध रखता है और यह गति कोरी आँखों से स्पष्ट ही लक्षित होती है तथा इस गति को देखकर हमारे बड़ों ने वर्ष मास ऋतु की गिनती निर्द्धारण की है।

कोरी आँखों से दिखने वाले तीसरे पदार्थ 'उल्का' या टूटने वाले तारे, आकाशगंगा, राशीचक्रों की ज्योति और अरौरा की ज्योति है। ध्यानपूर्वक देखने से रंग विरंग के तारे भी दिखाई देते हैं। किसी साधारण जेबी दूरबीन से देखने से यह रोचकता और भी बढ़ जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब इन्हीं चारों विषयों का आगे सविस्तार वर्णन किया जायगा।

कोलम्बस की यात्रा।

क्युबा की पुनर्यात्रा।

(ले० पं० हरशङ्कर प्रसाद उपाध्याय, एम, एस, पी०)

यद्यपि केवल कोलम्बस की यात्रा ही का वर्णन करना इस स्थान पर आवश्यक है परन्तु यदि थोड़ासा वर्णन उसके प्रबन्ध का भी किया जाय जो उसने नई बस्तियों में किया था तो अनुचित न होगा।

लानेविडा में जो बस्ती बसाई गई थी उसके टूट जाने से कोलम्बस के नाविकों का दिल कुछ छोटा हो गया था और यद्यपि कोलम्बस को सुवर्ण के खानों के खोजने की इच्छा न थी परन्तु लोनेविडा की बस्ती के बिगड़ जाने से उसे नई बस्ती का बसाना आवश्यक हो गया था।

एक अच्छा स्थान देखकर जहाज का लंगर डाला गया। कोलम्बस ने भलीभाँति देखकर उस स्थान को पसन्द किया क्योंकि अब उसका इरादा केवल एक दुर्ग बनाने का न था बल्कि उसनें सोचा कि अधिक अच्छा यह होगा कि एक छोटा सा नगर वहाँ बसा दिया जाय।

इस नगर का नाम कोलम्बस ने अपने संरक्षिका रानी ऐसावेला (Isa b.lla) के नाम पर ऐसावेला रक्खा। और नगर बनाने का काम आरम्भ करके कोलम्बस ने ओलोनजोड़ीओजोड़ा नाम के अपने साथी को उस दीप के मध्य के स्थानों की ओर भेजा कि वहाँ जाकर देखे कि कुछ सोने के खानों का पता चलता है या नहीं जिसके विषय में वहाँ के रहनेवाले प्रायः कहा करते थे।

कुछ दिनों यात्रा करके ओजेड़ा अपने साथियों के सहित एक ग्राम में पहुँचा जहाँ उसको यह मालूम हुआ कि सुवर्ण वर्तमान हैं। उस ग्राम के समीप एक नदी थी जिसके तह पर बहुत सा सोना था इसमें से ओजेड़ा ने जितनी इच्छा हुई निकाला और अपने साथियों के पास भेज दिया। उसका विश्वास था कि उतने से कोलम्बस और उसके साथी सन्तुष्ट हो जायँगे। कुछ दिनों के उपरान्त ओजेड़ा अपने साथियों के पास लौट आया।

तब कोलम्बस ने अपने स्वामी स्पेन के राजा के पास यह समाचार भेजा कि दिसपानीओला में बड़ा धन है जिसको प्राप्त करके आशा है कि स्पेन के वासी बड़े धनी हो जायँगे।

कोलम्बस ने जो दुर्ग ऐसावेला के नाम से बनाया था उसको भलीभाँति दृढ़ किया। यह सब करके तब कोलम्बस क्यूबा की ओर चला क्योंकि उसकी इच्छा थी कि यह निश्चय करे कि यह केवल एक द्वीप है अथवा किसी महाद्वीप का एक भाग है।

कुछ दिनों बाद यात्रा करके कोलम्बस क्यूबा पहुँचा परन्तु यहाँ अधिक वह न ठहरने पाया क्योंकि उसके साथियों ने वहाँ के देशियों से सुना कि थोड़ी दूर पर दक्षिण की ओर समुद्र में एक द्वीप है जहाँ बड़ा सोना है और विवश होकर कोलम्बस को उसी ओर चलना पड़ा। इस खोज में कोलम्बस उस द्वीप में पहुँचा जिसको अब जमेका के नाम से पुकारते हैं परन्तु उस समय कोलम्बस ने उसका नाम सेनटीयागो रक्खा था।

यहाँ कुछ दिन कोलम्बस ने खोज किया। यद्यपि वहाँ के निवासियों ने उसकी ओर मित्रता प्रगट की और उसको सहायता दी परन्तु कोलम्बस को सुवर्ण का पता न लगा। तब वहाँ कुछ दिन ठहर कर कोलम्बस फिर क्यूबा की ओर लौटा। उसकी दृढ़ इच्छी थी कि यह निश्चय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर कि क्यूबा किसी प्रकार एशिया महाद्वीप से मिला है कि नहीं, जिसके खोज के लिये वास्तव में कोलम्बस चला था। कोलम्बस को पूर्ण विश्वास था कि क्यूबा का किनारा जो अत्यन्त विस्तृत मालूम पड़ता है अवश्य किसी महाद्वीप का किनारा है और वह महाद्वीप अवश्य एशिया ही होगा।

कुछ दिन किनारे २ कोलम्बस चला गया परन्तु अंततक न पहुँचा था कि उसके जहाज के मरम्मत होने के कारण अधिक यात्रा के योग्य न रह गये। यह आश्चर्य की बात है कि ऐसा चतुर और बुद्धिमान खोज करने वाला होने पर भी कोलम्बस के चित्त से मरते दम तक यह भ्रम न गया कि क्यूबा एक महाद्वीप का किनारा है। अस्तु, अपने जहाजियों के बिगड़ जाने से कोलम्बस हिसपिनियोला द्वीप की ओर लौटा। रास्ते में उसे दो एक द्वीप और मिले जिनके उसने नाम रख दिये और आप जमेका द्वीप पर जा ठहरा। उस स्थानों के निवासियों ने कोलम्बस से बड़ा मित्र-भाव प्रकट किया। यहांतक कि उसके साथ स्पेन देश तक जाने को तय्यार हो गये। एसा बेला पहुँचकर कोलम्बस का शरीर नितान्त क्लेशित हो गया। इसका कारण यह था कि गत सप्ताहों में इधर उधर वेग से भ्रमण करने और खोजने में जो परिश्रम पड़ा उससे वह बहुत थक गया था।

हिसपिनीयोला में उत्पात।

(Trouble in Aispaniola)

ऐसवेला द्वीप में कोलम्बस बहुत ठीक समय पर पहुँचा। इस द्वीप में एक व्यक्ति भारगराईट नामका कोलम्बस की ओर से प्रबन्ध करता था। उसने वहां के निवासियों के ऊपर ऐसा जुल्म किया कि वहां कई छोटे २ सर्दार बिगड़ खड़े हुवे और लड़ने को तय्यार हो गये अस्तुत कोलम्बस ने भारगराईट से प्रबन्ध छीन लिया कोलम्बस से विरुद्ध होकर तथा कुछ और लोगों को भी अपने साथ लेकर और बहकाकर मागराईट स्पेन चला गया कि वहां के राजा से जाकर कहे कि कोलम्बस द्वीप वासियों पर बड़ा अन्याय कर रहा है अस्तु उसके चले जाने पर कोलम्बस ने ओजेडा को भेजा कि जाकर सर्दारों को शान्त करे अथवा उन से लड़कर उनको परास्त करे। ओजेडाने वहां पहुँचकर उन सर्दारों को बंदी कर लिया।

फिर शान्ति होने पर कोलम्बस ने यथोचित प्रबन्ध किया और अनेक नये कर और महसूल लगाये परन्तु इन सब बखेड़ों के कारण कोलम्बस ने जो प्रतिज्ञा की थी, कि वह स्पेन सोना भेजेगा, वह कुछ न भेज सका कि जिससे उसके जलयात्रा में जो व्यय हुआ था, वह राज्य को लौट जाय। कोलम्बस ने तब स्पेनदेशियों को पकड़कर वहां भेज दिया कि वे गुलाम के तौर पर बेच दिये जाँय। खेद की बात है कि ऐसी उदारप्रकृति का होकर भी कोलम्बस ने ऐसा किया। परन्तु हर्ष की बात है कि रानी ऐसाबेला ने बड़ी उदारता दिखलाई और जब ये देशवासी उसके सामने पकड़ कर गये तब उन सबको उसने छोड़ दिया और स्वदेश लौटा दिया।

परन्तु कोलम्बस की जान यह सब करके भी न बची। उसके विरोधी मारगराइट ने जाकर स्पेन के राजा को कुछ ऐसा मंत्र पढ़ा दिया था कि कोलम्बस की ओर से उसका चित्त बिलकुल ही फिर गया था, और उसने बड़ा कड़ा हुक्म जारी किया कि कोलम्बस स्पेन को लौट आये। कोलम्बस के सौभाग्य से उसको इस समय सुवर्ण की खानें मिल गईं जिनमें से उसने बहोत अधिक सुवर्ण निकाला और उसको लेकर स्पेन पहुँचा। सुवर्ण ने अपना प्रभाव दिखलाया और कोलम्बस के बैरियों की कुछ न चली। राजा का क्रोध शान्त हो गया, और सन् १४९६ ई० में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोलम्बस की बहुत कुछ प्रतिष्ठा करके और उसको अधिकतर मान मर्य्यादा और आदर देकर उसे फिर यात्रा करने की आज्ञा दी गई।

कोलम्बस की तृतीय जलयात्रा।

राजनैतिक कारणों से जो अनेक झगड़े पड़ गये थे उन सब को दूर करके सन् १४९८ ई० में कोलम्बस ने अपने तीसरे जल-यात्रा के लिये पुनः प्रस्थान किये। इस समय उसके साथ ६ जहाज थे। कानेरीज द्वीप में पहुंचकर उनमें से तीन जहाजों को उसने सीधे हिसपिनीओला द्वीप की ओर भेज दिया। और तीन को लेकर स्वयं दक्षिण की ओर नये द्वीपों के खोज में चला। यदि कोलम्बस को यह भ्रम न हुआ होता कि क्यूबा नाम का द्वीप इसी बड़े महाद्वीप का भाग है तो वह कभी का अमेरिका का पता लगा चुका होता। परन्तु यह इस भ्रम ही का परिणाम था कि कोलम्बस बहुत दिनों तक इधर उधर भटकता फिरा। अबकी बेर कोलम्बस ने दृढ़ विचार कर लिया था कि जो भूमि मिलेगी उसको ईसाई मत के त्रिमूर्ति के नाम से पुकारेंगे। संयोग से इसको प्रथम ही तीन पहाड़ की चोटियां मिलीं जिनका नाम अपने विचार के अनुसार उसने ट्रीनीडाड रख दिया।

कोलम्बस को पीछे से यह पता लगा कि यह पहाड़ की चोटियां एक बड़े पृथ्वी के टुकड़े से मिलीं हुई हैं जो बहुत दूर तक फैला हुआ था और एक महाद्वीप का सा मालूम होता था। कोलम्बस ने इस द्वीप को होली आइलैंण्ड अर्थात् पवित्र द्वीप के नाम से पुकारा। पहाड़ के नीचे इस द्वीप के किनारे पर कुछ देशी मनुष्य दिखलाई पड़े, जिनका रंग बहुत मैला न था बल्कि कुछ साफ ही था। यह देखकर कोलम्बस के साथियों को कुछ आश्चर्य भी हुआ क्योंकि प्राकृतिक क्रम से पृथ्वी के उस मध्य भाग के निवासियों का वर्ण काला ही होना चाहिये था। अस्तु, कोलम्बस के साथियों ने बड़ी चेष्टा की कि देशियों को अपने समीप बोलायें परन्तु वे सब भयभीत ही रहे और उनके समीप न आये। तब कोलम्बस के विचार में यह आया और उसने अपने साथियों को आज्ञा दी कि जहाजों पर बाजा बजाकर नाचें और इस प्रकार से देशियों का अपनी ओर ध्यान दिलायें। इस पर भी कुछ सिद्धी न हुई और प्रसन्न होने के स्थान पर देशियों ने क्रुद्ध होकर कोलम्बस के साथियों पर तीर की बौछार करनी आरम्भ कर दी। इस पर कोलम्बस को भी क्रोध आया और उसने गोलियां छोड़ने की आज्ञा दी जिससे देशियों को कुछ हानि हुई। इसके उपरान्त थोड़े काल में कुछ देशी एक छोटी सी डोंगी में कोलम्बस के जहाज़ों के पास आये। स्पेनियों ने इस छोटी डोंगी को उलट दिया और जब देशी समुद्र में गिर पड़े तो उनको पकड़ कर जहाज पर लाये। वहां जहाज पर कोलम्बस ने देशियों के साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार किया और उनको कुछ भूषण चमकीले गहने इत्यादि भी दिये। इससे वे सब देशी प्रसन्न हो गये और द्वीप में जाकर उन्होंने अपने साथियों से कोलम्बस की ऐसी प्रशंसा की कि वे सब भी कोलम्बस के पास मिलने आये। उन्हीं से कोलम्बस को पता लगा कि उस द्वीप का नाम पेरा है और वह एक महाद्वीप का भाग है।

कोलम्बस वहाँ पर उतर पड़ा और द्वीप के अन्दर गया। उसको वहाँ सोना और मोती दोनों अधिकता से मिले जिससे वह बहुत प्रसन्न हुआ। भूमि उस स्थान की ऐसी हरी भरी और मनोहर थी, कि कोलम्बस को यह भासित पड़ा कि शायद सृष्टि के आरम्भ में आदम का निवासस्थान जो स्वर्ग के समान उपवन था, वह शायद यही है। कोलम्बस यहाँ से किनारे २ कुछ दूर तक चला गया और कुछ दूर तक यात्रा करने के उपरान्त उसे पता लगा कि एक नदी ताजे पानी की उस स्थान पर समुद्र में मिलती है। यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देख कर कोलम्बस ने अनुमान किया कि वह नदी अवश्य कहीं दूर से आती होगी जो एक द्वीप होगा। यहाँ से कुछ दूर पृथ्वी पर चलने पर कोलम्बस को तम्बाकू के कुछ खेत भी मिले। अब कोलम्बस को निश्चय हो गया कि पेरा एक महाद्वीप का भाग है और यह भी उसको विश्वास हो गया कि यह महाद्वीप एशिया नहीं है जैसा वह पहले समझता था बल्कि कोई भिन्न महाद्वीप है। कोलम्बस और भी इस नई भूमि के विषय में पता लगाता परन्तु उसकी आँखों में रोग हो गया जिसके कारण शीघ्र ही उसको हिसपिनिओला की तरफ लौट जाना पड़ा। इस द्वीप में उसने अपने भाई बारथोलोमियो को प्रबन्ध के लिये नियुक्त किया था। बारथोलोमियो को कुछ दिन के उपरान्त यह मालूम पड़ा कि जिस स्थान पर ऐसा वेला नगर बसाया गया है वहाँ का जल वायु ठीक नहीं है। इस कारण वहाँ से हट कर उसने एक दूसरा नगर बसाया। इस नये नगर में बारथोलोमियो के प्रबन्ध से असन्तुष्ट होकर नगर वासियों ने उपद्रव खड़ा किया था परन्तु कोलम्बस ने वहाँ पहुँच कर सब शान्त कर दिया। इस प्रकार घूमघाम कर सन् १४९८ ई० के अगस्त मास में कोलम्बस हिसपिनिओला द्वीप में पहुंच गया।

यद्यपि इस द्वीप का कोलम्बस ने यथाशक्ति बहुत अच्छा प्रबन्ध किया था परन्तु उसके विरोधियों ने स्पेन के राजा को यह विश्वास दिलाया कि कोलम्बस ने वहाँ बहुत अत्याचार किया है। इसका परिणाम यह हुआ कि कोलम्बस का दुःख यहीं से आरम्भ हुआ क्योंकि स्पेन के राजा का मन कोलम्बस से पलट गया और विरुद्ध हो गया तथा उसने स्पेन से बोबाडिला नाम के मनुष्य को प्रबन्ध कर्त्ता नियुक्त कर के हिसपिनिओला भेज दिया। बोबाडिला ने द्वीप में पहुँच कर कोलम्बस और उसके भाई पर अत्याचार का दोष लगाया और वहाँ के देशीयों की कुछ इधर उधर की गवाहियाँ लेकर कोलम्बस और उसके भाई को दण्ड के लिये हथकड़ी पहना कर स्पेन भेज दिया। कोलम्बस के दुर्भाग्य से रानी एसाबेला भी उससे इस समय अप्रसन्न हो गई थी क्योंकि कोलम्बस ने बँधुवे पकड़ २ कर जो गुलाम बनाने को भेजे थे वह रानी की उदार प्रकृति के विरुद्ध था। परन्तु यह खेद का विषय है कि ऐसा साहसी मनुष्य जिसने अपने देश के लिये, बल्कि संसार के लिये इतनी चेष्टा कर के उपकार किया उसकी परस्पर की ईर्षा और द्वेष के कारण यह दुर्दशा की गई। अस्तु, कोलम्बस और उसका भाई हथकड़ियाँ पहिने हुए जहाज पर सवार हो स्पेन की ओर चले। रास्ते में इस जहाज के कप्तान ने कई बार चाहा की कोलम्बस की बेड़ियाँ खोल दें परन्तु उसने ऐसा नहीं करने दिया और कहा कि इनको रहने दो मैं इन्हें अपने जन्म भर पहने रहूँगा। मेरे राजा और देशने मुझे गाढ़ परिश्रम का यह पारितोषिक दिया है। परन्तु हर्ष की बात है कि स्पेन पहुँच कर कोलम्बस का निरपराध होना भलीभाँति विदित हो गया और तब बड़े आदर पूर्वक राजा ने उसका यथोचित सत्कार किया। कुछ दिनों के उपरान्त स्पेन के राजा को यह मालूम हुआ कि बोबाडिला का प्रबन्ध ठीक नहीं है और तब उसने एक दूसरे मनुष्य डेनाम को हिसपिनिओला द्वीप के प्रबन्ध के लिये भेजा। पर परिणाम कुछ सन्तोषजनक नहीं हुआ और सन् १५०० ई० के उपरान्त स्पेनीओं का अत्याचार हिसपिनिओला द्वीप में जो उन्होंने सोने की लालच से देशियों को सता कर विना मूल्य दिये उनसे मजदूरी का काम ले कर किया वह सब इतिहास में प्रसिद्ध है। अस्तु, हमको इस स्थान पर विस्तार पूर्वक इन सब के वर्णन करने की आवश्यकता नहीं है। केवल कोलम्बस की चतुर्थ और अन्तिम यात्रा का हम वर्णन करते हैं। जिसके लिये स्पेन के राजा की आज्ञा से वह फिर चला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चतुर्थ जल यात्रा।

अब कोलम्बस फिर नई यात्रा करने के लिये बड़े परिश्रम पूर्वक तैयारी कर रहा था कि जिसमें नई भूमियों का और द्वीपों का पता लगावे। यह विश्वास उसको अब तक था कि क्यूबा एशिया महाद्वीप का भाग है परन्तु पेरा (Peria) को वह किसी दूसरे महाद्वीप में कहता था। कोलम्बस का दृढ़ विश्वास था कि जैसे होगा हिंदुस्तान पहुँचने का रास्ता वह ढूँढ़ निकालेगा क्योंकि पोर्चूगाल देश ने जो लाभ वास्कोडीगामा के हिन्दुस्तान पता लगाने से उठाया था उसको स्पेन वाले जानते थे। इन स्पेनियों की भी बड़ी इच्छा थी कि हिन्दुस्तान का धन उनके हाथ भी आवे। अस्तु, कोलम्बस तैयारी करके सन् १५०२ ई० में चार छोटे ४ जहाजों के साथ जिन पर केवल १२० मनुष्य थे हिसपिनीओला की ओर रवाना हुआ। इस द्वीप में पहुँच कर यद्यपि उसने बहुतेरा चाहा कि किनारे तक जाँय परन्तु द्वीप वालों ने उसे रोका। क्योंकि बोबाडीला बहुत सी जहाजों पर सोना इत्यादि लाद कर स्पेन के राजा तथा अन्य उच्च श्रेणियों के लोगों के लिये स्पेन देश को जा रहा था। इनमें से एक जहाज पर कोलम्बस के लिये भी सोना था। कोलम्बस से कहा गया कि इन जहाजों के कारण तुम्हारे जहाजों को किनारे जाने का मौका नहीं है। कोलम्बस ने अपने पूर्वअनुभव से आकाश की ओर देख कर जान लिया कि बहुत कड़ा तूफान शीघ्र ही आने वाला है और उसने उन लोगों को मना किया कि तुम भी समुद्र में मत जाओ और हमको भी किनारे आजाने दो। परन्तु उन लोगों ने अपने हठ से न माना और थोड़ी दूर भी नहीं गये होंगे कि तूफान बड़े वे[illegible] से उनके सिर आ टूटा और २० जहाज [illegible] पलट कर डूब गए और जो बचे वह भी टूट [illegible] गए। संयोग से जो जहाज बिल्कुल [illegible] कर स्पेन देश को पहुँचे वह वही थे कि जिस [illegible] कोलम्बस के लिये सोना लदा था।

तूफान का वेग कम होने पर कोलम्बस अ[illegible] साथियों के साथ अपनी यात्रा पर फिर चला [illegible] यदि वह उचित रीति से किनारे २ चला जा[illegible] तो अवश्य मेक्सिको देश के किनारे पहुँच जा[illegible] पर उसका यह ध्यान था कि इस [illegible] से भारतवर्ष पहुँचेंगे इस कारण वह इस ठी[illegible] रास्ते से भटक कर उस स्थान पर पहुँचा जि[illegible] को अब हनडूरस कहते हैं। यहाँ से [illegible] किनारे २ फिर चला गया और चोटोंकीटो न[illegible] के बन्दर पर पहुँचा और रास्ते में उसे निका[illegible] गुआ भी मिला। अभी तक कोलम्बस [illegible] उसके साथियों को स्थान २ पर जो देशी मि[illegible] थे उसके साथ मित्रभाव से मिले थे परन्तु [illegible] विपत्ति का आरम्भ हुआ। बड़े वेग का तुफान [illegible] दिन तक चलता रहा। इस तुफान के का[illegible] कोलम्बस स्वयं बीमार पड़ गया। उस[illegible] सब साथी बहुत घबड़ा गये। कई दिन के उप[illegible] रान्त वे एक द्वीप में पहुँचे जहाँ कुछ शां[illegible] मिली। इससे उस द्वीप का नाम उन लोगों [illegible] शुभ द्वीप रक्खा। अब सबका विचार हुआ [illegible] लौट चलें। इस इच्छा से सब लोग प्र[illegible] हनडूरस को आए।

कोलम्बस को यह मालूम था कि वेराग्[illegible] द्वीप में सोना मिलेगा। इससे वहाँ के नि[illegible] सियों के साथ मित्रता करके उसने चाहा [illegible] अपने साथियों की छोटी सी बस्ती स्थापित क[illegible] दें कि जिसमें उस द्वीप के खानों से वे लोग सो[illegible] निकालें। परन्तु इसमें उसको निष्फलता हु[illegible] क्योंकि वहां के देशियों ने इतने वैर भाव से [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर आक्रमण किया कि कोलम्बस और उसके साथियों का वहां ठहरना कठिन हो गया और वहां से मजबूर होकर उनको हिसपियोनोला की ओर भागना पड़ा। परन्तु इस वृद्ध और साहसी पुरुष के बुरे दिन आ गये थे। क्योंकि हिसपिनीओला तक जहाज पहुँचने न पाये थे कि ऐसा मालूम हुआ कि वे अब यात्रा के योग्य नहीं है। अतः कोलम्बस को रास्ते ही में जमे-का द्वीप में ठहरना पड़ा। वहां से उसके साथियों में मेनेडज नाम का एक मनुष्य एक छोटी डोंगी पर सवार होकर हिसपिनीओला की ओर वहाँ के शासक के पास सहायता माँगने को चला। रास्ते में साथियों ने उसे पकड़ लिया और मार डालना चाहा पर वह भाग निकला और हिसपिनीओला की ओर फिर चला। पर कोलम्बस और उसके साथियों का जमेका द्वीप में बड़ा बुरा हाल था, एक एक दिन उनके लिये कठिन था। इस पर विपत्ति यह हुई कि कोलम्बस के साथियों में से बहुत से कोलम्बस के विरुद्ध हो गए और जो जहाज वहां टूटा फूटा मौजूद था उसी पर सवार होकर हेसपिनिओला की ओर चले। जो कोलम्बस के साथ जमेका में बच गए उनको देशीयों ने सताना आरम्भ किया। उनसे बचने के लिए कोलम्बस ने एक उपाय सोचा। उसको ज्योतिष से मालूम हुआ कि चन्द्र-ग्रहण शीघ्र होने वाला है और उसने देशियों को डरवाया कि यदि गोरे आदमियों को सताओगे तो उनका ईश्वर चन्द्रमा को काला कर देगा। जब कुछ दिनों बाद चन्द्रग्रहण हुआ तो देशी डर गए और फिर तब से उनको सताना छोड़ दिया। निदान आठ महीने के इन्तजार के बाद एक जहाज लेकर मेनडिज् हिसपियोनोला द्वीप से वापस आया। पर यह जहाज ऐसा छोटा और खराब था कि कोलम्बस के साथियों ने अप्रसन्न होकर कहा कि इसे लौटा दो, और वह चला गया।

इस जहाज के चले जाने के बाद कोलम्बस के जो थोड़े साथी उसके साथ बच गये थे उनकी असंतुष्टता प्रति दिन बढ़ती गई। अन्त में वे कोलम्बस से बिगड़ खड़े हुए और उन्होंने चाहा कि कोलम्बस को कैद कर लेवें। इस अवसर पर कोलम्बस के भाई बारथीलोमियो ने बड़ा साहस किया। बलवा करने वालों को परास्त किया, और शान्ती स्थापित की। अब हेसपिनिओला के शासक ओआनडो के भेजे हुए दो जहाज भी जमेका आए। जिस पर हर्ष पूर्वक कोलम्बस और उसके साथी सवार होकर हेसपिनिओला की ओर चले। इस द्वीप में पहुँच कर कोलम्बस ने देखा कि वहाँ के शासक ओआनडो से और उससे न पटेगी, तब उसने दृढ़ इरादा कर लिया कि स्पेन को लौट चलें। निदान अगस्त सन् १५०४ में वह फिर स्पेन की ओर लौटा। रास्ते में उस पर फिर नई विपत्ति पड़ी और उसके एक जहाज का मस्तूल टूट कर गिर पड़ा जिससे वह बेकाम हो गया। लाचार कोलम्बस ने उसे हेसपिनिओला की ओर लौटा दिया। निदान बड़ी दुर्दशा से नवम्बर सन् १५०४ ई० में वह फिर स्पेन पहुँचा। अपने देश पहुँच कर उसने देखा कि उसके बैरियों की संख्या बहुत बढ़ गई है और राजा भी उससे नाराज़ है। उसकी संरक्षिका रानी ऐसाबेला का स्वर्गवास हो गया था। और अब कोई कोलम्बस का सहायक इस राज्य में न रह गया था। यद्यपि उसने कई बार प्रार्थना की कि उसके अधिकार उसे फिर मिलें पर कुछ भी न सुना गया। इसी प्रकार अनेक संकट झेलते हुए यह चतुर, वीर तथा मनस्वी नेता अपने ६१ वें वर्ष में सन् १५०६ ई० में परलोक को सिधारा। उसके अनादर को कहाँ तक कहें, इसीसे समझ लीजिये कि उस समय के स्थानीय पत्रों ने उसकी मृत्यु का समाचार भी नहीं छापा। कितने खेद का विषय है कि अपने देश और राजा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का जिस मनुष्य ने ऐसी चेष्टा करके इतना भला किया, उसके साथ ऐसा निन्दनीय बर्त्ताव किया जावे। आशा है कि अब इतिहास में इस पथप्रदर्शक का उचित आदर और सत्कार किया जायगा।

प्रातिमोक्ष सूत्र ५२

(पूर्व्व प्रकाशित के आगे)

प्रतिदेस्तन्य धर्म।

व उस के हाथ से कोमल या कठोर भोजन स्वीकार कर के उसे खाता पीता है तो उसे साधुओं की कुटियों में जाकर इस प्रकार कहना चाहिये "हे भाइयो मैंने ऐसा नीच और अनुचित कर्म किया है जो कह दिया जाना चाहिये और मैं कहता हूं"। एक विषय यह है जो कहा जाना चाहिये।

२. जब कि किसी गृहस्थ के यहां बहुत से साधुओं का निमंत्रण हुआ हो और वहां कोई अवधूतिनी उपस्थित होकर कहे-यहां साग दो, यहां चावल दो, यहां रसा दो, यहां फिर परोसो तो साधुओं को चाहिये कि वे उसे इस प्रकार टोक दें "बहिन, एक तरफ हो जाओ, जब तक साधु भोजन समाप्त न कर चुकें यदि उन में से एक भी साधु अवधूतिनी को टोकने की हिम्मत न कर सके तो उन सब साधुओं को बाहर कुटियों में जाकर अन्य साधुओं से इस प्रकार कहना चाहिये "हे भाइयो हमलोगों ने एक ऐसा नीच और अयोग्य कर्म किया है जो कहा जाना चाहिए और हम कहते हैं" एक विषय यह है जो कहा जाना चाहिए।

३ जो गृहस्थ दीक्षित हो चुका हो और कोई साधु उस के यहां बिना बुलाए ही जाकर कोमल या कठोर किसी प्रकार का भोजन स्वीकार करता है उसे बाहर कुटियों में जाकर अन्य साधुओं से कहना चाहिये "हे भाइयो मैंने ऐसा नीच और अयोग्य कर्म किया है जो कह देना चाहिये। अस्तु मैं कहता हूँ।

४. जो साधु ऐसे एकान्त और अरक्षित स्थान में रहता हो जहां अनेक प्रकार के भय हों वा वह कठोर या कोमल किसी प्रकार का ऐसा भोजन न पावे जिस की उसे प्रथम से सूचना न हो और जब कि उस के पास जाने में भोजन लेजाने वाले को प्राणभय की संभावना है और साधु उस भोजन को खाता है तो उसे बाहर कुटियों में जाकर अन्य साधुओं से इस प्रकार कहना चाहिये "हे भाइयो, मैंने एक ऐसा नीच और अयोग्य कर्म किया है जो कहा जाना चाहिये। अस्तु, मैं कहता हूँ। एक विषय यह है जो कहा जाना चाहिए।

हे भाइयो, कहे जाने योग्य विषयों के संबंध में चार नियम भाषण कर चुका। इसी संबंध में भाइयो क्या मैं आप से पूछ सकता हूं "क्या तुम सर्वथा पवित्र हो दूसरी बार और तीसरी बार भी मैं तुम से पूछता हूं भाइयो, क्या आप सब विषयों में सर्वथा पवित्र हैं। जो भाई सर्वथा पवित्र हैं वे कुछ न बोलें बस मैं समझ जाऊँगा

प्रकट किए जाने योग्य विषयों के संबंध में चार नियम।

प्रतिदेसान्य धर्म।

सार—गांव अन्य घर, शिष्य की गृहस्थी में एकान्त स्थान, पूज्यवर बुद्धदेव ने इन चार विषयों के लिये प्रगट करने या कह देने की ही घोषणा की है।

सीखने योग्य बहुत से नियम

शिक्षा धर्म।

सार—भीतरी वस्त्रों के संबंध में सात नियम ऊपरी वस्त्रों के संबंध में सात नियम, कमरबंद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संबंध में सात निमय इत्यादि। शारीरिक विषय के पांच नियम आसन के विषय में नौ नियम और देने और लेने के विषय में आठ नियम।

हे भाइयो! प्रति पक्ष भाषण होनेवाले इस प्रतिमोक्ष सूत्र के अनुसार यहां सीखने योग्य अनेक नियम बर्णन किये जाते हैं।

१ मुझे अपने भीतरी वस्त्र सँभाल कर पहनना चाहिये।

२ मुझे अपने भीतरी वस्त्र ऐसे न पहनना चाहिए कि जकड़ जाय।

३ मुझे भीतरी वस्त्र ऐसे ढीले ढाले न पहनना चाहिए कि वे डरझ कर धरती पर लटुरे।

प्रतिमोक्ष सूत्र ५४।

शिक्षा धर्म।

४ मुझे अपने भीतरी वस्त्र ऐसा न पहनना चाहिए कि वह हाथी की सी सूँडसा लटकता रहे।

५ मुझे भीतरी वस्त्र ऐसे न पहनना चाहिए जो ताड़ के पत्ते की तरह घरी किये गये हों।

६ मुझे भीतरी वस्त्र ऐसे न पहिनना चाहिये जो जव की सी रोटी देख पड़े।

७ मुझे अपने भीतरी वस्त्र ऐसे पहनना चाहिए कि वह फैलाए हुए साँप के फन सरीखे देख पड़ें।

८ मुझे ऊपरी वस्त्र शरीर को ढाँक कर पहनना चाहिए।

९ मुझे ऊपरी वस्त्र ऐसे न पहिना चाहिए जो बहुत चुस्त हों।

१० उपरी वस्त्र ऐसे पहनना चाहिए जो बहुत ढीले भी न हों।

(१) यहाँ भीतरी वस्त्र का मतलब लँगोटा या कौपीन है।

(२) उपरी वस्त्र साधुओं के पहनने का अंगा कफनी इत्यादि।

११ मुझे कपड़े खूब कसकर घरों में जाना चाहिए।

१२ अपने वस्त्रों को अच्छी तरह सँभाल कर घरों में जाना चाहिए।

१३ मुझे घरों में जा कर कम बोलना चाहिए।

१४ मुझे गाँव में जा कर इधर उधर नजर न डालना चाहिए।

१५ गाँव में जा कर गर्दन की सीध में दृष्टि रखनी चाहिए।

१६ विना सर ढाँके हुए ही गाँव में जाना चाहिए।

१७ चेहरे की सजावट बनावट किये विना ही घरों में जाना चाहिए।

प्रतिमोक्ष सूत्र ५५।

शिक्षा धर्म।

१८ मस्तक को कंधों में दबाए विना ही घरों में जाना चाहिये।

१९ हाँथ बाँध कर गर्दन पर रखे घरों में न जाना चाहिये।

२० बगली हाथ दबाये बिना ही घरों में जाना चाहिए।

२१ विना उछले कूदे शान्त रूप से घरों में जाना चाहिए।

२२ शरीर को अकड़ाए विना ही (सीधी चाल से) घरों में जाना चाहिए।

२३ एड़ी और अंगूठों के बल चल कर घरों में न जाना चाहिए।

२४ छाती के बल झुक कर घरों के बीच में न जागा चाहिए।

२५ बगल की तरफ झुक कर घरों के बीच में न जाना चाहिए।

२६ शरीर को झटकारे विना ही घरों में जाना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२७ हाथ हिलाते हुए घरों के बीच न जाना चाहिए।

२८ अपने मस्तक को (सीधा रख कर) हिलाए विना ही घरों में जाना चाहिए।

२९ बाहुओं को इकट्ठा कर के घरों में न जाना चाहिए।

३० हाथों को मरोड़ते हुए घरों में न जाना चाहिए।

३१ जब कि मैं घरों में हूँ तो विना कहे हुए पलँग पर न बैठूँगा।

३२ जब कि मैं घरों में हूँ तो किसी आसन की जाँच किये विना उस पर न बैठूँगा।

३३ जब कि मैं घरों में हूँ किसी आसन पर अपने शरीर का पूरा बोझ दे कर न लदूँगा।

३४ जब कि मैं घरों में हूँ पैर के ऊपर पैर रख कर न बैठूँगा।

३५ जब कि मैं घरों में हूँ जाँघ पर जाँघ रख कर न बैठूँगा।

प्रतिमोक्ष सूत्र ५४।

३६ जब कि मैं घरों के बीच में हूँ पिंड़ली पर पिंड़ली रख कर न बैठूँगा।

३७ जब कि मैं घरों में हूँ मुझे बैठ कर पैर न हिलाना चाहिए।

३८ जब कि मैं घरों में हूँ मुझे टाँगे फैला कर न बैठना चाहिए।

३९ जब कि मैं घरों में हूँ मुझे इस प्रकार न बैठना चाहिए कि गुप्त अंग देख पड़ें।

४० मुझे उचित प्रमाण से भोजन करना चाहिए

४१ मैं अपना भोजन रख न छोड़ूँगा।

४२ मैं अपने कमंडल भर शरबत न भराऊँगा

४३ मैं अपने कमंडल और उसकी परिधि को न निहारूँगा।

४४ जब तक भोजन कठोर या कोमल न हो जाय मैं कमंडल को नहीं पकड़ूँगा।

४५ मैं चटोरेपन से कभी रस को चावलों में सान कर न रखूँगा।

४६ मैं चटोरेपन से कभी चावलों को रस में सान कर न रख छोड़ूँगा।

४७ भोजनों के ऊपर की थाली को न पकड़ूँगा भोजन कठोर हो या कोमल ?

सार—अच्छा खाने के विषय में छः नियम पाँच नियम इसु इसु (isu isu) के विषय में पाँच नियम हाथ छाँटने के विषय में—

४८ मैं उचित रीति से भोजन करूँगा।

४९ भुक्त ग्रास बहुत ही छोटे न होंगे।

प्रतिमोक्ष सूत्र ५७।

शिक्षा धर्म।

५० भुक्त ग्रास बहुत बड़े न होंगे।

५१ भुक्त ग्रास साधारण प्रमाण के होंगे।

५२ ग्रास मुख में देने के सिवा और कभी मुँह न बायेंगे।

५३ मुँह में ग्रास रहते हुए कुछ भी न बोलना चाहिए।

५४ मैं 'शू शू' शब्द नहीं करूँगा।

५५ मैं 'कग कग' शब्द नहीं करूँगा।

५६ मैं 'इ इ' शब्द नहीं करूँगा।

५७ मैं 'फ फ' शब्द नहीं करूँगा।

५८ मैं जिह्वा के मिठास के लिये भोजन नहीं करूँगा।

५९ मैं एक प्रकार के अन्न से दूसरे की तुलना नहीं करूँगा।

६० मैं एक स्वाद की दूसरे स्वाद से तुलना न करूँगा।

६१ मैं अपने गाल नहीं चिकनाऊँगा। भोजन

कठोर भोजन से रोटी, चने, मास उर्द आदि गरिष्ठ भोजन से और कोमल में चाँवल दूध मधु आदि सात्विक पदार्थों का अर्थ मालूम होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने बाद उच्छिष्ट भोजन से हाथ धो कर गालों पर न फेरूँगा।

६२ मैं अपनी थाली नहीं चाटूँगा।

६३ मैं ग्रास को खूब चबाए बिना न खाऊँगा।

६४ मैं अपने हाथ नहीं चाटूँगा।

६५ मैं अपना कमंडल नहीं चाटूँगा।

६६ मैं अपने हाथ नहीं फटकारूँगा।

६७ मैं अपना कमंडल नहीं फटकारूँगा।

६८ मैं अपने भोजन को किसी प्रतिमाकार कर के न खाऊँगा।

सार—मिथ्या दोषारोपण (लाञ्छन लगाने) के विषय में चार नियम, कमंडल माँगने के संबंध चार नियम, ढके सिर के विषय में चार नियम, गाड़ी पर चढ़ने के संबंध में चार नियम, बालों के दाढ़ी के संबंध में पाँच नियम, छः नियम हाथ डंडा लेने के संबंध में और चार नियम बीमारी के संबंध में।

प्रतिमोक्ष सूत्र ५९।

शिक्षा धर्म।

६९ मैं अपने पास बैठे हुए साधु को लाञ्छन लगाने की वासना से उसके कमंडल को नहीं छूऊँगा।

७० जब कि मेरा हाथ उच्छिष्ट से भरा हुआ है मैं जल के पात्र को न पकड़ूँगा।

७१ मैं अपने पास में बैठे हुए साधु पर उच्छिष्ट भरा हुआ जल न डालूँगा।

७२ मैं मालिक-मकान की आज्ञा विना उच्छिष्ट सहित जल को घर के आंगन में न डालूँगा।

७३ मैं अपने कमंडल में का शेष अन्न नहीं खाऊँगा।

७४ मैं विना किसी सहारे के अपना भिक्षा पात्र पृथ्वी पर न रखूँगा।

७५ मैं ढरकोने में, गड़हे में या किसी भी ऊँची चीज़ पर अपना कमंडल न रखूँगा।

७६ मैं खड़े होकर कमंडल न धोऊँगा।

७७ मैं अपने कमंडल को ऊँचा खाली ढालू या गड़हे पर न धोऊँगा।

७८ मैं बहती हुई नदी में धार के सामने करके कमंडल में जल नहीं भरूँगा।

७९ मैं खड़े होकर बैठे हुए आदमी को धर्म न सिखाऊँगा। यदि वह बीमार नहीं है।

८० मैं उस व्यक्ति को धर्म शिक्षा न दूँगा जो विना बीमारी के लेटा हुआ है।

८१ मैं नीचे स्थान में बैठ कर ऊँचे स्थान पर बैठे हुए व्यक्ति को यदि वह बीमार नहीं है, धर्म न सुनाऊँगा।

८२ यदि कोई व्यक्ति बीमार नहीं है और वह आगे जा रहा है उसके पीछे पीछे चल कर धर्म न सिखाऊँगा।

प्रतिमोक्ष सूत्र ५८।

शिक्षा धर्म।

८३ मैं मार्ग के किनारे पर चलता हुआ ऐसे व्यक्ति को धर्म नहीं सुनाऊँगा जो मार्ग के बीच में होकर जा रहा है और बीमार भी नहीं है।

८४ मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म नहीं सुनाऊँगा जो सर ढाके हुए है और बीमार नहीं है।

८५ मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म नहीं सुनाऊँगा। जिसके वस्त्र चुस्त हैं और वह बीमार भी नहीं है।

८६ मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म नहीं सुनाऊँगा। जो बीमार न होते हुए भी दूसरे से लपटा हुआ है।

८७ मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म नहीं सुनाऊँगा जो बीमार नहीं है और हाथों को गरदन पर चढ़ाए हुए हो।

८८ मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म नहीं सुनाऊँगा जो अपने बाहु का गुर्री मारे है पर बीमार नहीं है।

८९ मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म नहीं सुनाऊँगा जो बालों की जटा बांधे है पर बीमार नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९० मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म न सुनाऊँगा जो बीमार न होते हुए भी टोपी लगाए है।

९१ मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म नहीं सुनाऊँगा जो बीमार नहीं है और सर पर मुकट रखे हुए है।

९२ मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म न सुनाऊँगा जो बीमार नहीं है और सर पर माला पहने हुए है।

९३ मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म न सुनाऊँगा जिस का सिर लपटा हुआ है और वह बीमार नहीं है।

९४ मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म नहीं सुनाऊँगा जो बीमार नहीं हैं और हाथी पर चढ़ा हुआ है।

९५ मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म न सुनाऊँगा जो बीमार नहीं है और घोड़े पर बैठा है।

९६ मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म न सुनाऊँगा जो बीमार नहीं है पर पालकी में जा रहा है।

प्रतिमोक्ष सूत्र ६०।

शिक्षा धर्म।

९७ मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म नहीं सुगाऊँगा जो गाड़ी में बैठा है पर बीमार नहीं है।

९८ मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म नहीं सुनाऊँगा जो ऊँची एड़ी के जूते पहनता है, पर बीमार नहीं है।

९९ मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म नहीं सुनाऊँगा जो बीमार न होते हुए भी हाथ में डंडा रखता है।

१०० मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म नहीं सुनाऊँगा जो छाता लिए हुए है पर बीमार नहीं है।

१०१ मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म नहीं सुनाऊँगा जो कोई शस्त्र लिए हुए है पर बीमार नहीं है।

१०२ मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म नहीं सुनाऊँगा जो तलवार लिये है पर बीमार यहीं है।

१०३ मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म नहीं सुनाऊँगा जिसके हाथ में फरसा है पर वह बीमार नहीं है।

१०४ मैं ऐसे व्यक्ति को धर्म नहीं सुनाऊँगा जो बख्तर पहने है पर वह बीमार नहीं है।

१०५ मैं खड़े खड़े मलमूत्र त्याग नहीं करूँगा अगर मैं बीमार नहीं हूँ।

१०६ मैं जल में विष्टा मूत्र थूक खकार रेंट उलाट आदि न ड़ालूँगा यदि मैं बीमार नहीं हूँ।

१०७ मैं हरित-तृण संकुलित भूमि पर विष्टा मूत्र थूक खकार रेंट उलाट आदि न डालूँगा यदि मैं बीमार नहीं हूँ।

१०८ मैं किसी वृक्ष पर आदमी की उँचाई से अधिक ऊपर न चढ़ूँगा, यदि मुझे किसी भय के कारण दबाव न पड़े।

मैंने शिक्षा प्राप्त करने योग्य अनेक नियम भाषण किये हैं। इनके संबंध में मैं आप लोगों से पूछता हूँ क्या आप सर्वथा पवित्र हैं। मैं दूसरी बार और तीसरी बार भी पूछता हूँ क्या आप इन विषयों में सर्वथा पवित्र हैं? जो भाई सर्वथा पवित्र हैं वे कुछ न बोलें। बस मैं समझ जाऊँगा

प्रतिमोक्ष सूत्र ६१।

अधिकरनसमथ धर्म।

झगड़े निबटाने के लिये सात नियम

(अधिकरण–समथ्य–धर्म)

सार--समक्ष में, स्मरण, अपने आपे से बाहर न होना, बहुमत से, वास्तविक स्थिति की जाँच करने से, ऊपर से ढांकना, जैसे घास इत्यादि से और स्वीकृति से,

हे भाई, प्रति पक्ष भाषण किये जाने वाले प्रतिमोक्ष सूत्र के अनुसारझगड़े निबटाने के विषय में सात नियम कहता हूं।

१ समक्ष में तय होने वाला जो झगड़ा है उस की कार्य्यवाही दोनों पक्षों के समक्ष में होनी चाहिए।

२ यदि स्मरण से झगड़ा तय होने वाला है तो अभियुक्त के स्मरण से कार्य्यवाही प्रारम्भ होनी चाहिए।

३ यदि ऐसे व्यक्ति के लिये कोई झगड़ा तय होना है जो आप से बाहर (पागल) है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस अवस्था से कार्य्यवाही प्रारम्भ होनी चाहिए कि वह पागल नहीं था।

४ जो झगड़ा साधुओं के बहुमत से तय होने वाला है उसकी कार्य्यवाही बहुमत से प्रारम्भ होनी चाहिए।

५ यदि किसी झगड़े का तय होना उसकी वास्तविक स्थिति पर निर्भर है तो उसकी कार्य्यवाही जाँच से प्रारम्भ होनी चाहिए।

६ जो झगड़ा घास से ढक कर तय होने का है उसकी कार्य्यवाही घास से ढक कर होनी चाहिए।

७ यदि कोई झगड़ा स्वीकृति से तय होने वाला है तो उसकी कार्य्यवाही अभियुक्त की स्वीकृति से प्रारम्भ होनी चाहिए।

प्रतिमोक्ष सूत्र । ६२

अगर झगड़े उठें तो वे तय किये जाने चाहिए आगे कहे हुए आदेशपूर्ण सात नियमों के अनुसार। वे पूर्णतयः उसी प्रकार से तय किये जाना चाहिए जैसे कि विशिष्ट नियमों के निर्माता ने बताए हैं।

हे भाइयो झगड़ों के तय होने के विषय में मैं सात नियम भाषण कर चुका, उन्हीं के सम्बन्ध में आप से पूछता हूँ, भाइयो क्या आप सर्वथा पवित्र हैं? हे भाइयों मैं दूसरी बार और तीसरी बार आप से पूछता हूँ, क्या इनमें तुम सर्वथा पवित्र हो? जो भाई सर्वथा पवित्र हैं वे कुछ न बोलें बस मैं समझ जाऊँगा।

हे भाइयो!

प्रतिमोक्ष सूत्र की प्रस्तावना का भाषण समाप्त हुआ।

भ्रष्ट होने के चार नियमों का भाषण समाप्त हुआ।

साधुता से पतित होने के १३ नियमों का भाषण समाप्त हुआ।

अनिश्चित विषयों के सम्बन्ध में दो नियमों का भाषण समाप्त हुआ।

उन तीस नियमों का भाषण समाप्त हुआ जिन में वित्त हरण की व्यवस्था है।

उन पाचों के विषय में ९० नियमों का भाषण समाप्त हुआ जिन में प्रायश्चित्त होना चाहिए।

ऐसे चार नियमों का भाषण समाप्त हुआ जिन्हें कह देना चाहिए (जिन पर पश्चात्ताप करना चाहिए)

ऐसे अनेकों—एक सौ बारह नियमों का भाषण समाप्त हुआ जो सीखने योग्य है।

झगड़ों को तय करने के सम्बन्ध में सात नियमों का भाषण समाप्त हुआ।

प्रतिमोक्ष सूत्र ६३।

भगवान् तथा गत अर्हित सम्यक संबुद्ध ने इन नियमों का उच्चारण किया है जो इस ग्रंथ से सम्बन्ध रखते हैं या इसमें हैं। (सम्भव है) धर्म के विषय में दूसरे नियमों का उद्घाटन हो उनके प्रति भी तुमको श्रद्धालु होना चाहिए, सम्मत होना चाहिए, आवाहन करना चाहिए, और निर्विवाद रूप से उन्हें हृदय में धारण करके तुम्हें उनका स्मरण और सावधानी से अनुशीलन करना चाहिए।

[उपनेत वाक्य]

बुद्धदेव कहते हैं कि संतोष ही उत्कृष्ट तपश्चर्या है और यही सर्वोत्तम निर्वाण है, वह साधु (कुटीकच) नहीं है जो दूसरों को हानि पहुँचाता है और वह भी साधु (जंगम] नहीं है जो दूसरों का अपमान करता है।

वह व्यक्ति जिसके नेत्र हैं और जिसमें चलने फिरने की शक्ति है सब व्याधियों [खतरों] से बच सकता है अस्तु तुम भी इस संसार में बुद्धिमानों के जीवन का अनुकरण कर के सम्पूर्ण पापों से बचो।

न निन्दा करो न हानि पहुँचाओ नियमित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन निर्वाह करो परमित भोजन करो एकान्त में सोओ और बैठो और सदैव ऊँचे विचारों में रहो वास्तव में यही बुद्धदेव का उपदेश है।

जिस प्रकार मधुमक्खी किसी पुष्प पर बैठ कर न तो पुष्प को खराब करती है और न उसके रंग को परन्तु रस ले कर के उड़ जाती है इसी प्रकार बुधजन को अपने गांव में रहना चाहिए।

बुद्धिमान न तो किसी के विरोध पर ध्यान देता है और न किसी के किए अनकिए पर किन्तु वह सदैव अपने ही आचरण का विचार रखता है कि वह शुद्ध है या नहीं ?

प्रतिमोक्ष सूत्र। ६४

जिस व्यक्ति के विचार ऊँचे होते हैं वह साधु पुरुषों की स्वाभाविक वृत्ति का अध्ययन करता है और निरन्तर शान्ति का विचार करता रहता है वही अक्षय निर्द्वंहता और निर्वाण प्राप्त करता है।

दानशील पुरुष के यश का विस्तार होता है, सब परमित पुरुष का कोई शत्रु नहीं होता, पवित्र पुरुष पापों से परे रहता है और जिसके दुःख समाप्त हो गए हैं वह निर्वाण प्राप्ति का अधिकारी है।

कोई पाप न करना भलाई में अभ्यास करना अपने मस्तिष्क [विचार] को शुद्ध रखना यही बुद्धदेव की दीक्षा है।

शरीर को जीतना अच्छा है, वचन को जीतना अच्छा है, मस्तिष्क [विचारों] को जीतना अच्छा है तात्पर्य्य जितेन्द्रियता सर्वश्रेष्ठ है। जितेन्द्रिय साधु सब दुःखों से मुक्त होता है।

जो सँभाल कर वचन बोलता है, जो अपने मिजाज़ को परमित रखता है और जो शरीर को कुकर्मों के अभ्यास से रोकता है, अपने इन तीनों आचरणों को शुद्ध करने वाला व्यक्ति बुधजनों द्वारा निर्वाचित मार्ग को प्राप्त करता है।

(Xipasyi) विपस्यीपूर्ण दूरदर्शी, सिखी, उज्वल मुकुट को धारण करने वाला, विश्ववर्त सबका संरक्षक, क्रकुचन्द (Krakueehan आवागमन की शृंखला का भ्रंशक, कनक मु उच्चकोटि बुद्धिमान, कश्यप प्रकाश के रक्षक शाक्य मुनि गौतम देवताओं के देवता, संसार के सात स्वामियों ने बड़े और बुद्धिम के संरक्षकों ने इस

प्रतिमोक्ष सूत्र की विधिवत् शिक्षा की इसका विस्तार किया।

संपूर्ण बुद्ध और श्रावकों में यह मान्य इसमें श्रद्धा करने से ही तुम निर्वान को प्राप्त यह स्वयं सिद्ध है।

सावधान ! अपने नवीन जीवन का प्रारंभ करो बौद्धमत को अंगीकार करो और राज पर इस प्रकार से विजय प्राप्त करो हाथी घास के छप्परको विदार देता है।

जो पुरुष शुद्ध अंतरात्मा से इन उपदेशों अभ्यास करता है, वह जन्ममरण से मुक्ति पा सब (सांसारिक) दुःखों से छूट जाता है।

आचरण रक्षा में एक दूसरे की सहा करना और उपदेशों का विस्तार करना—प्रति सूत्र के इस सूत्र का भाषण होना चाहिए साधु समाज से सब पापों का परिहार जायगा।

जिन से इस सूत्र का भाषण किया गया और जिन्हें पापों की शुद्धि का विवरण बत गया है उन्हें इन नियमों की इस प्रकार से करनी चाहिए जैसे बंदर अपनी पूँछ को बचाता

मैंने प्रतिमोक्ष सूत्र के भाषण से जो प्रति प्राप्त की है उसी से संपूर्ण संसार को उस स परि बुद्धिमान का पद प्राप्त हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरदोई साहित्य सम्मेलन।

हरदोई प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का द्वितीय अधिवेशन ६, ७, ८ एप्रिल को शाहाबाद में श्रीयुत ठाकुर राजेन्द्रसिंह जी (टिकारानिवासी) के सभापतित्व में निर्विघ्न समाप्त हो गया.....

नगर कीर्तन—छः तारीख को सन्ध्या के ३ बजे सभामंडप से नगर कीर्तन आरम्भ हुआ, भजन मंडलियों ने अच्छे २ शिक्षाप्रद भजन ऊँचे स्वर से गाये और पं० देवीदत्त जी ने विचारपूर्ण व्याख्यान प्रभावशाली शब्दों में यथोचित स्थानों पर दिये। बाजार में भीड़ खचाखच थी और जनसमुदाय पर नगर कीर्तन का प्रभाव बहुत अच्छा पड़ा। लगभग ११ बजे रात्रि को नगर कीर्तन समाप्त हुआ।

स्वागत—७ तारीख की प्रातकाल ३ बजे वाली गाड़ी से सभापति ठाकुर राजेन्द्रसिंह जी शाहाबाद पहुँचे। इसी गाड़ी में स्वागतकारिणीसमिति के सभापति श्रीयुत बाबू ब्रजकिशोर जी तथा हरदोई के लगभग चालीस प्रतिनिधि भी थे। चूँकि प्रातःकाल जुलूस निकलने वाला था अतएव स्टेशन के पास ही शामियाने में कुछ समय के लिये प्रधान जी ठहराये गये। स्टेशन पर प्रातः ८ बजे स्वागतकारिणीसमिति के सभापति, उपसभापति तथा अनेक मान्य प्रतिनिधि आपके स्वागत के लिये उपस्थित हुए। लगभग ९ बजे स्टेशन से जुलूस निकला। जुलूस में आगे आगे स्वयं सेवकों की पंक्ति चलती थी और हिन्दी साहित्य सम्मेलन का झंडा लहराता था। उसके पश्चात् भजनमंडली गाड़ी पर बैठी हुई स्वागत गान गा रही थी। अंग्रेजी बैंड (बाजा) अपना मनोहर स्वागत वाद्य बजा रहा था। प्रधान जी हाथी पर और आपके पीछे अनेक मान्य महोदय हाथियों तथा गाड़ियों पर पैदल चलते थे। जुलूस लगभग आध मील लम्बा था मार्ग में स्थान २ पर सभापति जी की आरती उतारी गई। पुष्पों की वर्षा होती जाती और स्वागत भी होता जाता था। समस्त नगर झंडियों तथा झंडों से जिन पर मातृ-भाषा की जय, जय हिन्दी भाषा की वन्दे मातरम इत्यादि सूत्र लिखे हुए थे—सजाया गया था—बारह बजे के लगभग सभापति महोदय अपने निवास स्थान को पधारे और जुलूस का कार्य्य समाप्त हुआ।

प्रथम दिवस—शनिवार ७ तारीख को ट्रेनिंग स्कूल के मैदान में बहुत सुन्दर और सजे हुए विशालमण्डप के नीचे ठीक ५ बजे सम्मेलन का कार्य्य आरम्भ हुआ। समय से एक घंटा पहिले ही मंडप खचाखच भर गया था दर्शकों की संख्या चार हजार के लगभग थी और प्रतिनिधियों की दो सौ—प्रान्त के सभी कस्बों और गावों से प्रतिनिधि आये थे। मंच पर प्रतिष्ठित साहित्यसेवी उपदेशक, स्वागत कारणी के सभापति तथा अन्य सज्जन विराजमान थे। सभापति के मंडप में आतेही करतल ध्वनि हुई और उपस्थित प्रतिनिधियों और दर्शकों ने आप का स्वागत किया। हिन्दी माता की जय—सभापति की जय आदि मनोहर शब्दों से सभामंडप गूँज उठा—पं० महेश्वरी प्रसाद मिश्र साहित्याचार्य्य ने स्वरचित छन्दों में मंगलाचरण किया। तदन्तर पं० मायाप्रकाश जी ने पं० महेश्वर प्रसाद जी के रचित छन्दों से प्रधान जी का स्वागत किया।

तत्पश्चात स्वागतकारिणीसमिति के सभापति बाबू ब्रजकिशोर जी पिहानी निवासी ने सभापति महोदय, प्रतिनिधियों तथा उपस्थित सज्जनों का स्वागत किया और अपनी गंभीर वक्तृता उच्च स्वर में पढ़ सुनाई, जिसकी छपी प्रतियां पहले ही से बांट दी गई थीं। तदन्तर बाबू ब्रजकिशोर जी ने श्रीमान् ठाकुर राजेन्द्र सिंह जी को सभापति का आसन ग्रहण करने के लिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रस्ताव किया। ठाकुर जगन्नाथ सिंह जी बरखेरा निवासी ने आपका अनुमोदन किया और बाबू शिवनारायण जी ने समर्थन किया। करतल ध्वनि के साथ ठाकुर साहब ने सभापति का आसन ग्रहण किया। तदन्तर सरस्वती सदन हरदोई की ओर से बाबू रामजन्द्र जी उपमन्त्री ने अभिनन्दन पत्र दिया। ठाकुर साहब ने उसे स्वीकार करते हुए उसका उत्तर दिया और सौ मुद्रा का दान दिया। तत्पश्चात सभापति महोदय उठे और अपनी गम्भीर चित्ताकर्षक, भावपूर्ण वक्तृता पढ़ सुनाई। सभापति की वक्तृता हो चुकने के पश्चात पं० रामरत्न जी ने शिक्षा पर एक मनोहर व्याख्यान दिया। तत्पश्चात् श्रीयुत स्वामी सत्यदेव जी परिव्राजक ने साहित्य और चरित्रसंगठन पर ऊंचे स्वर से एक सारगर्भित व्याख्यान दिया। आपके व्याख्यान को सुनकर लोग मुग्ध हो गये। इसके पश्चात् रात के साढ़े नौ बजे काररवाई समाप्त हुई।

द्वितीय दिवस—रविवार ८ तारीख़ को प्रातःकाल के छः बजे विषयनिर्वाचनी समिति की प्रथम बैठक हुई। सम्पूर्ण सदस्य, प्रतिनिधि तथा मन्त्री और उपमन्त्री आदि उपरोक्त वर्णित विशाल मंडप के नीचे एकत्रित हुए। मंगलाचरणादि के पश्चात् चौदह प्रस्ताव उपस्थित हुए जो अंत में अंकित हैं। तत्पश्चात् शाहाबाद, हरदोई, संडीला, बिलग्राम पिहानी आदि के नवीन सदस्य चुने गए। लगभग १० बजे प्रथम बैठक सानंद समाप्त हुई।

द्वितीय बैठक—उपरोक्त दिवस ठीक ३ बजे सम्मेलन का कार्य्य आरम्भ हुआ। लगभग २ बजे सम्पूर्ण मंडप मनुष्यों से परिपूरित हो गया। दर्शकों की संख्या प्रथम दिवस से ड्योढ़ी थी और सदस्यों की संख्या उपरोक्त वर्णित की हुई थी तथा मंच पर प्रतिनिधि तथा साहित्य सेवी उपदेशक आदि आकर बैठते गए। प्रधान जी के शुभागमन होते ही हिन्दी माता की जय मनाई गई। दर्शकों तथा सदस्यों ने आपका स्वागत किया। भजनीकों ने सुरीली बाणी से करतल ध्वनि सहित गान किया। पुनः लेखकों के लेख और कवियों की कविता ध्यानपूर्वक सुनी गई, तिसके पश्चात पं० बद्रीनाथ जी का अत्युत्तम व्याख्यान लोगों ने श्रवण किया। फिर कवियों तथा लेखकों को पारितोषिक में पदक तथा पुस्तकादि बाँटी गईं। तदनन्तर श्रीमान् स्वामी सत्यदेव जी परिव्राजक का सारगर्भित व्याख्यान हुआ जिसको सर्व सज्जनों ने मुग्ध मन से सुना और अत्यन्त हर्षित हुए। पुनः सभा विसर्जन पर आनन्द मनाया गया और लगभग ग्यारह बजे रात्रि को सम्मेलन का कार्य्य निर्विघ्न आनन्दपूर्वक समाप्त हुआ।

प्रस्ताव।

(१) यूरोपीय राज्यों में इस समय जो युद्ध हो रहा है उसमें ब्रिटिश सरकार को सम्मेलन को पूरी सहानुभूति है और परमात्मा से विनीत प्रार्थना है कि हमारे प्रजाप्रिय राजराजेश्वर का पक्ष शीघ्र ही विजयी हो।

(२) यह सम्मेलन प्रस्ताव करता है कि गवर्नमेंट ने यह मान लिया कि हिन्दुस्तानी भाषा नागरी और फ़ारसी दोनों लिपियों में लिखी जा सकती है तो न्यायाधीशों व सरकारी अफ़सरों को उन कागजों को जो हिन्दुस्तानी में लिखे गए हैं नागरी या फारसी लिपि में से किसी भी लिपि में लिखने का पूर्ण अधिकार होना चाहिए। प्रान्तिक सरकार की ओर से उत्तर देते हुए कहा गया है कि मुंसिफ वादियों व प्रतिवादियों के बयान नागरी लिपि में नहीं लिख सकते इस सम्मेलन को असंतोष है और इसको अत्यन्त अनुचित समझती है।

(३) (अ) यह सम्मेलन प्रस्ताव करता है कि मुंसिफों और सबजजों के लिये नागरीदारों को जानना उसी भाँति अनिवार्य किया जाय जिस भाँति डिप्टी और तहसीलदारों के लिए है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ब) प्रान्तिक कौंसिल के कुछ सदस्यों के इस कथन को कि हिन्दी कोई भाषा नहीं है, उर्दू के लोगों ने उसको जन्म दिया तथा हिन्दी देर में लिखी और पढ़ी जाती है, यह सम्मेलन सिद्धान्त निर्मूल समझता है, और इन सभ्यों की अज्ञानता पर शोक प्रगट करते हुए इसका विरोध करता है।

(स) यह सम्मेलन श्रीमान् माननीय सी० आर० चिन्तामणि तथा अन्य माननीय सदस्यों को इस अंश में हिन्दी की सहायता करते हैं धन्यवाद देते हुए आशा करती है कि वे इसी भाँति मातृभाषा की सेवा करते रहेंगे।

(४) इस सम्मेलन को इस्लामियाँ स्कूलों और मकतबों के खोलने में गवर्नमेंट से विरोध नहीं है परन्तु दुःख है कि गवर्नमेंट ने हिन्दी की शिक्षा के लिए ऐसा कोई प्रबन्ध नहीं किया है जैसा उसने इस्लामियाँ स्कूल खोल कर उर्दू शिक्षा के लिए किया है, अतः यह सम्मेलन गवर्नमेंट से निवेदन करता है कि हिन्दी की पढ़ाई के लिये भी हिन्दी बोलने वालों की संख्या के अनुसार वैसी ही सुविधायें कर दे जैसी उसने उर्दू के लिये की हैं।

(५) यह सम्मेलन प्रस्ताव करता है कि हरदोई प्रान्त के प्रत्येक गाँव में हिन्दी की एक पाठशाला कम से कम अपर प्रायमरी कक्षा तक हो जाय और कम से कम दीन तथा अछूत जातियों को यह शिक्षा बिना मुल्य दी जाय और आशा करता है कि गावों के जमीदार व महाजन इस कार्य्य में सहायता करेंगे।

(६) (अ) यह सम्मेलन शिक्षा विभाग के आठवें कक्षा तक देशी भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाने के लिये धन्यवाद देता है।

(ब) और साथ ही प्रार्थना करता है कि दसवीं कक्षा तक देशी भाषाओं की शिक्षा को माध्यम बनाया जाय।

(७) इस सम्मेलन की सम्मति है कि हिन्दी शिक्षा का प्रबन्ध इस प्रान्त में अत्यन्त असंतोषजनक है क्योंकि अधिकांश अध्यापिकायें अयोग्य हैं, इसका सुधार डिस्ट्रिक्ट बोर्ड ट्रेनिङ्ग स्कूल खोल कर करें।

(८) यह सम्मेलन भारतीय महासम्मेलन से प्रार्थना करता है कि वह हिन्दी भाषियों में से बंगाली, मरहटी, गुजराती आदि भाषाओं के अध्यापक तय्यार करे और सम्बन्धित सभाओं तथा प्रान्तिक सम्मेलनों से भी यही आशा रखता है।

(९) यह सम्मेलन सप्तम हिन्दी साहित्य सम्मेलन जबलपुर के सर्व प्रस्तावों के साथ सहानुभूति प्रकट करता है।

(१०) यह सम्मेलन हिन्दू विश्वविद्यालयों के संचालकों से प्रार्थना करता है कि वे उसका नाम और काम सार्थक करने के लिये उक्त विश्वविद्यालय में शिक्षा का माध्यमहिन्दी रक्खें।

(११) यह सम्मेलन अपने प्रान्त के राजों ज़मीदारों, वकील, मुख्तारों, अर्जीनवीसों, महाजनों, व्यापारियों तथा सर्व साधारण हिन्दूजनों से सविनय प्रार्थना करता है कि वे अपने बालकों की शिक्षा नागरी अक्षरों तथा हिन्दी भाषा द्वारा करावें और यथासाध्य अपने आधीनस्थ सर्वकार्य्यों को भी नागरी अक्षरों और हिन्दी भाषा द्वारा करने कराने का प्रबन्ध करें।

(१२) चुँगी टैक्स आदि की रसीदें तथा अन्यान्य नोटिस आदि जो जो कि सर्व साधारण को म्युनीसिपैल्टी, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, शिक्षा विभाग नोटीफाइडएरिया और आबपाशी विभाग आदिसे पहुंचती हैं वह अंग्रेजी तथा उर्दू में हुआ करती हैं, इसलिये हिन्दी जानने वालों को बड़ा कष्ट होता है अतः वह सम्मेलन म्यूनीसिपैल्टी आदि उपरोक्त लिखित संस्थाओं से प्रार्थना करता है कि वह अपने नोटिस आदि हिन्दी में प्रकाशित किया करें।

(१३) यह सम्मेलन हिन्दू विद्यार्थियों तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्य हिन्दीप्रेमी हिन्दूजनों से प्रार्थना करता है कि वे अपनी छुट्टी के समयों में जहां कहीं जायं यथा-शक्ति हिन्दी के प्रचार का प्रयत्न करें।

(१४) यह सम्मेलन ३२ सज्जनों की एक स्थायी समिति बनाकर उसको अधिकार देता है कि वह सम्मेलन के मन्तव्यों की पूर्ति के निमित्त वर्ष दिनपर्य्यन्त आगामी सम्मेलन का अधिवेशन होने तक उचित कार्य्य करती रहे।

रामेश्वर सहाय सिंह
मंत्री स्वागत कारिणी समिति।

सभापति का भाषण।

प्रिय भ्रातृगण

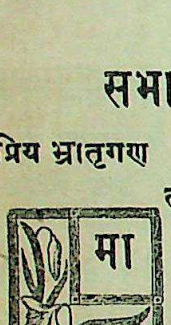

मातृभाषा के प्रतिनिधि का पद बड़े गौरव का है उसके अधिकारी वही हो सकते हैं, जिन्होंने मातृभाषा की सेवा में अपना तन मन और धन लगा दिया है, जिन्होंने संसार के कंटकों को फूल समझ कर उनसे हताश होने के बदले में हर्ष मनाया है अथवा जिन्होंने बागदेवी के आशीर्वाद से शब्दब्रह्म का जयनाद किया हो। महाशयो, मुझमें कोई योग्यता नहीं और मैं इस देव दुर्लभ पद का अधिकारी कदापि नहीं, पर फिर भी आप लोगों ने मुझे यह गौरव प्रदान करने की कृपा की है यह आप लोगों की मनोमहत्ता ही है। आप की आज्ञा मैंने इस-लिये शिरोधार्य्य नहीं की है कि मैं अपनी त्रुटियों को नहीं पहचानता वरन् इसलिए की है कि इसी बहाने मुझे मातृभाषा के मंदिर में आपसे मिलने और आपकी थोड़ी बहुत सेवा करने का अवसर मिलेगा। एक तो मुझमें यों ही साहस तथा योग्यता का अभाव था तिस पर से आपके स्वागत ने और भी स्तब्ध कर दिया। इसी विचार में हूं कि क्या करूँ शेष तथा शारदा की शक्ति कहाँ से लाऊं जो समुचित धन्यवाद दूँ। महाशयो महात्मा तुलसीदास, सूरदास, केशवदास, बिहारी, महि-राम भूषण सेनापति रहीम जायसी आदि सरीखे भारतियों ने जिसकी सेवा में अपना जीवन अर्पण कर दिया उसकी सेवा में मैं अकिंचन क्या कर सकता हूँ। पर वह समय और था और यह समय और ही है। साहित्य के प्राचीन चतुर शिल्पी जो सुन्दर भवन निर्माण कर गए हैं हम लोगों से तो उसकी रक्षा होना भी कठिन है। नये नये भवन बनाना तो दूर रहा अगर हम किसी प्रकार से मातृभाषा की कुछ भी सेवा कर सकें तो हमें अपने बड़े भाग्य समझने चाहिए। परमात्मा इस विषय में हमारी मनोकामना पूर्ण करें। महा-शयो, पहले पहल जब मुसलमानों का आगमन इस देश में हुआ उस समय भी हिन्दी में खुमाण रायसा सरीखी पुस्तकें साहित्य का गौरव बढ़ा रही थीं। उसके अनन्तर कविचन्द का पृथ्वीराज रा-सा प्रसिद्ध हुआ और तब से हिन्दी की उन्नति धारा प्रवाह हो रही है, यह प्रत्यक्ष है। खेद है कि हिन्दी का महत्व न जानकर उसको कुछ न समझने वाले कुछ लोग हिन्दी नाम की भाषा का अस्तित्व भी स्वीकार नहीं किया चाहते। मानों कहते हैं कि सूर्य्य निकलता तो अवश्य है परन्तु यह प्रकाश उस का नहीं है। यह बात मानने के लिये हम तैयार नहीं है। ऐसे सज्जनों के द्वारा हिन्दी को उतनी हानि नहीं पहुच सकती कि जितनी पहुँचाना चाहते हैं, जिसका पक्ष वे लेना चाहते हैं। जिसके अस्तित्व जिसकी महत्ता और जिसके राष्ट्र भाषा होने की वे ढोल पीटना चाहते हैं उल्टी उसी की कुछ हानि होना सम्भव है।

महाशयो, हिन्दी और उर्दू जुदी भाषायें नहीं हिन्दी ही उर्दू है, फार्शी शब्द प्रचुरता से भर दिये जायं तो हिन्दी वालों पर जो यह दोष लगाया जा रहा है कि उर्दू की जान के लिये बरबस हिन्दी को गढ़ कर खड़ा कर दिया है दूर हो जावे। परन्तु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह असम्भव है। ऐसा करने से हिन्दी राष्ट्र भाषा न हो सकेगी, कारण यह है कि हिन्दी जो अभी तक अन्य प्रान्तीय भाषाओं से मिलती जुलती है, फिर उर्दू के समान ही सब से पृथक हो जावेगी और हमारा मनोरथ सिद्ध न होगा। क्योंकि राष्ट्र भाषा होने के लिये यह गुण अनिवार्य्य है। हमारी सीधी सादी हिन्दी में मन माने फ़ारसी और अरबी शब्द मिला कर और उसका रूप बिगाड़ कर और बदल कर आपने उसका नाम उर्दू रख दिया है और अब आप उसका अस्तित्व मानने में हिचकते हैं जब आपके आज़ाद ऐसे उस्ताद उस की उत्पत्ति व्रज भाषा ही से बतलाते हैं। यह कैसी हठधर्मी है। हिन्दी को जबरदस्ती उर्दू का जामा पहनाने वालों को इतना करके भी सन्तोष नहीं। वे हिन्दी के लिये कहनी न कहनी सभी बातें कहकर उसे भारतवर्ष में रहनेही नहीं दिया चाहते। ऐसा उनकी हरकतों से मालूम होता है कि यदि धोती और दुपट्टा वाला एक हिन्दू कल पाजामा चपकन अथवा कोट पतलून पहन ले तो क्या केवल इतना ही करने से वह हिन्दू न कहला सकेगा। केवल कपड़ा बदलने से क्या कोई मनुष्य कुछ का कुछ हो सकता है, बस यही सम्बन्ध हिन्दी उर्दू का है। उर्दू के आचार्य्य मौलाना आज़ाद ने आबहयात नामक एक पुस्तक लिखी है उसमें उन्होंने बड़ी योग्यता से उर्दू साहित्य का विकाश दिखाया है। उनकी विचारपूर्ण बातों को मानते हुए भी कभी कभी हमारे मुसलमान भाई हिन्दी के प्रति जो घृणा प्रदर्शित करते और कटुवाक्यों का प्रयोग करते हैं, उसको पढ़कर खेद के साथ आश्चर्य्य हुए बिना नहीं रहा जाता। जरा पहले मुसलमान कवियों की कविता तो देखिये और विचार तो कीजिये कि उनसे क्या सूचित होता है? एक प्राचीन मुसलमान कवि बली जो उर्दू का पहला कवि है कहता है। दिलवली का लिया दिल्ली ने, छीना जा कहो कोई मुहम्मद शाह सो यहां हिन्दी के प्रसिद्ध कवि घनानन्द जी का एक उदाहरण देखिये।

सलोने श्याम प्यारे क्यों न आओ।
दरश प्यासी मरें तिनकी जियाओ॥
कहां हौजू कहां हौजू कहां हो।
लगे ये प्रान तुमसों हैं जहां हो॥

इन उदाहरणों से उर्दू का जितना विकाश प्रमाणित होता है उतना ही हिन्दी का भी हो रहा है। तात्पर्य यह है कि हिन्दी और उर्दू कोई दो भाषायें नहीं।

ऐसे ऐसे सैकड़ों उदाहरण भरे पड़े हैं। पर इतना सब होने पर भी हिन्दी को कुछ न कुछ समझना और उसका अस्तित्व ही स्वीकार न करना इसके लिए क्या कहा जाय कुछ समझ में नहीं आता है। अब मैं साहित्य की ओर जाता हूं। पहले कहा जा चुका है कि आज से नहीं वरन् सैकड़ों वर्षों से हिन्दी साहित्य में ग्रन्थरत्नों का निर्माण किया जा रहा है और यदि इन सबकी नामावली सुनाई जाय तो आपलोगों का बहुत अमूल्य समय नष्ट होगा, क्योंकि हज़ारों लेखकों के और हज़ारों पुस्तकों के नाम न मिलने पर भी हज़ारों ही नाम मिलते हैं, यहां इतना ही कह देना समुचित होगा कि यदि तुलसी सूर नानक कबीर और दादू सरीखे केवट न होते तो हिन्दू जाति की नाव का पता आज किस रूप में और कहां मिलता अथवा मिलता भी या नहीं यह सोचकर अब भी हृदय विचलित होजाता है। महाशयो वह समय बड़ा बेड़ा था जब शान्ति का राज्य नहीं था उस समय निर्बलों पर जो बीती थी उसके अनेक चिन्ह हमारी हिन्दू जाति में आज भी दिखलाई पड़ते हैं। पर निर्धन का जो धन है और निर्बल का जो बल है उस परमात्मा को यह स्वीकार न था कि गौतम, कणद, कपिल, मनु और पातञ्जलि आदि ऋषियों की सन्तान पृथ्वी पर से लुप्त होजाय अथवा उसमें से आत्मावलम्बन और आत्मरक्षा का भाव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नितान्त ही जाता रहे। यही कारण है कि आज हम शान्तिपूर्वक यहां अपनी मातृभाषा की चर्चा करने के लिये एकत्रित हुये हैं। महाशयो, दो तीन शताब्दी पहले के हमारे पूर्वज इस तरह मिलकर निर्भयतापूर्वक धार्मिक राजनैतिक तथा और २ विषयों की चर्चा कर सक्त थे या नहीं यह बतलाने की हमें कोई आवश्यकता नहीं। हम तो परमात्मा का धन्यवाद करते हैं कि उसने संसार की आधुनिक सभ्यता की प्रतिनिधि स्वरूप बृटिश जाति से हमारा सबंध करा कर कूप मण्डूक भाव नष्ट कर दिया है। ईश्वर करे शीघ्रही हमारी बृटिश जाति दुनिया में रहे सहे और अत्याचार को दूर करने में पूर्णरीति से समर्थ हो।

महाशयो, जिसको आधुनिक हिन्दी के नाम से पुकारा जाता है वह कोई नई भाषा नहीं क्योंकि हिन्दुओं के ही नहीं वरन् सैकड़ों वर्ष पुराने जैसे अमीर खुसरो आदि मुसलमानों के लेख भी उस में मिलते हैं। हां, जितना पुराना पद्य मिलता है उतना पुराना गद्य नहीं मिलता किन्तु गद्य भी लल्लू जी लाल और सदल मिश्र से बहुत पहले का मिलता है। इसमें सन्देह नहीं कि लल्लू जी लाल की सी मधुरभाषा उस समय के लेखकों में बहुत कम देखने में आती है और इस हिसाब से लल्लू जी लाल आधुनिक हिन्दी गद्य के जन्मदाता भी कहे जायं तो कुछ अत्युक्ति नहीं। हम लल्लू जी लाल को प्रथम स्थान दे सकते हैं क्योंकि हिन्दी संसार में पहले उन्हीं की रचना देखी और हिन्दी संसार के चरणों में बैठी हुई प्रेमसागर नामक पुस्तक दिखलाई दी।

महाशयो, कुछ पहिले की बात सोचिये, निराशा का घोर जङ्गल है, उत्साह का जल कहीं भी दिखलाई नहीं देता, कोई चाहे अपनी जान भलेही देदे फिर भी उसकी योग्यता और उसके स्वार्थत्याग का उचित रूप से सम्मान करनेवाला कहीं भी दिखलाई नहीं देता, ऐसे कठिन समय में जिन महापुरुषों ने अपना सर्वस्व देकर और हरिश्चन्द्र की तरह अपने को बेच कर इस हिन्दी का पालन पोषण किया है उनका ध्यान करते ही हमारा हृदय भर आता है। जिन दिनों की बात हम कहते हैं उर्दू नामवाली हिन्दी की सब जगह तूती बोल रही थी जैसी कुपुत्र वाली विधवा की दशा होती है। यही दशा बेचारी हिन्दी की थी। हमारे पढ़े लिखे भाई घर के रत्नों की ओर न देख कर बाहर के पत्थरों को इकट्ठा करने में दी अपना शान समझते थे। जो लोग दीन अनाथ हिन्दी की सेवा करते थे वे अपने ही भाइयों द्वारा गँवार और असभ्य समझे जाते थे, यह घरही में फूट थी। ऐसे समय में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, स्वामी दयानन्द सरस्वती, प्रतापनारायण मिश्र, राजा लक्ष्मणसिंह आदि पुरुषसिंहों ने हमारी टूटी फूटी नाव को संभाला। हिन्दी भाषा भाषी इन के ऋण से कभी उऋण नहीं हो सकते। हमारे हर्ष का ठिकाना नहीं रहता जब हम देखते हैं कि उन महापुरुषों में से भारतेन्दु के बाद सखा पंडित बद्रीनारायण चौधरी प्रेमघन, गोस्वामी राधाचरण, पण्डित अमृतलाल चक्रवर्ती, पंडित गोविन्द नारायण मिश्र आदि महानुभावों से है। अब जिन्होंने उपरोक्त महानुभावों का हाथ इस काम में बटाया है तथा आज भी हिन्दी के लिये प्राण से चेष्टा कर रहे हैं उन सज्जनों में से पं० मदनमोहन मालवीय, पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी, बाबू श्यामसुन्दर दास, बाबू पुरुषोत्तमदास टंडन आदि सज्जनों की नामावली बहुत बड़ी है और हर्ष की बात है कि दिन परदिन बढ़ती जा रही है। सच पूछिये तो ऐसे स्वार्थत्यागियों को पाकर ही हिन्दी भाषा आज उन्नति की ओर इतने वेग से अग्रसर हो रही है।

वर्तमान साहित्य पर विचार।

वर्तमान साहित्य की अभिवृद्धि भलीभांति हो रही है, इसमें सन्देह नहीं, पर तौभी इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय में बहुत कुछ करना बाकी है। सच पूछिये तो उत्तमोत्तम मौलिक तथा गवेषणापूर्ण ग्रन्थ लिखने की ओर अभी ध्यान ही नहीं गया है। अनुवाद करना तो अच्छा है पर केवल अनुवादित पुस्तकें पढ़ने वाला साहित्य उतने सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जा सकता। अतएव हमारे यहां मौलिक ग्रन्थों की रचना होनी चाहिए। हर्ष की बात है कि इधर कुछ दिनों से लोगों का इस ओर झुकाव हुआ है और वे गद्य तथा पद्य के मौलिक काव्य-प्रसूनों से आज मातृभाषा का अनूठा शृंगार कर रहे हैं। दूसरी भाषाओं के साहित्य की अपेक्षा हम अभी निरे कंङ्गाल हैं। इसमें सन्देह नहीं कि हमारे यहां काव्य प्राचीन ग्रंथ-रत्न प्रचुरता से विद्यमान हैं। पर सज्जनों, निरे काव्य ग्रन्थों से ही किसी भाषा का साहित्य पूर्ण रूप से समृद्धिशाली नहीं समझा जा सकता। काव्य के अतिरिक्त नाटक, इतिहास, सामाजिक और उत्तम उपन्यास, पर्यटन, जीवनचरित्र, समालोचना, गल्प, विज्ञान के नाना अङ्ग (जैसे रसायन शास्त्र विद्युत् शास्त्र आदि) कला विज्ञान आदि विषयों पर जहां सैकड़ों हजारों ग्रन्थों की आवश्यकता है वहां दस बीस भी अच्छी तरह ढूंढे नहीं मिलतीं यह कितने खेद और लज्जा की बात है। हम हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाना चाहते हैं पर जब उसके आधुनिक साहित्य की ओर दृष्टि करते हैं तो आँखें नीची करनी पड़ती हैं। इस का कारण क्या है? क्या हमारे यहां लेखकों की कमी है? हां, कुछ अंश तक है, पर वह पूरी की जा सकती है। महाशयो, समय कड़ा है, जिस देश में पहले दो रुपये में एक गृहस्थ का भली भांति निर्वाह हो जाता था उसमें अब बीस रुपये भी कम पड़ते हैं, ऐसे समय में केवल साहित्य-सेवा कर के अपना जीवन व्यतीत करना एक असम्भव सी बात है। अतएव जिन पर लक्ष्मी की कृपा है उन्हें इस विषय में आगे बढ़ना चाहिए, और अपनी रुचि के अनुसार ग्रन्थ लिखवा कर लेखकों को उत्साहित करना चाहिये। ऐसा करने से नाम और काम दोनों बातें हो जायँगी। मुझे खेद के साथ कहना पड़ता है कि धनवानों ने इस विषय की ओर अभी ध्यान नहीं दिया है और इस लिये हमारी भाषा दरिद्रता-प्रसविनी हुई है। मेरा विचार है कि अनुकूल परिस्थिति होने पर लेखकों का अभाव नहीं रहेगा और मैं अपने धनवान भाइयों से प्रार्थना करता हूँ कि वे इस विषय में स्थायी हिन्दी-साहित्य सम्मेलन तथा नागरी प्रचारिणी सभाओं की सहायता कर के उन्हें प्रोत्साहन दें। स्वर्गीय राजा कमलानन्द सिंह और राजा रामपाल सिंह का आदर्श हमारे सामने है। उस आदर्श पर उस कर्तव्य पथ पर चलना न चलना हमारे अधीन है। मातृभाषा के पवित्र मन्दिर में धनी और निर्धन राजा और रङ्क का भेद भूल कर सभी को अपनी योग्यता और सामर्थ्य के अनुसार यथाशक्ति योग्य दान देना चाहिये। इस मन्दिर की पवित्र वेदी पर हिन्दू जाति के तन मन और धन की आहुति की आवश्यकता है। जिससे हम लोग अपने पूर्वसंचित उदासीनता या विरोध रूपी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष पापों से छुटकारा पा सकें।

प्राचीन तथा आधुनिक काव्य।

प्राचीन तथा आधुनिक काव्य के गुण दोष दिखलाने का मुझे कोई अधिकार नहीं, पर तोभी इस विषय में कुछ निवेदन करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूं, क्योंकि ऐसे महत्व के विषय को अछूता छोड़ देना भी ठीक नहीं। प्राचीन तथा आधुनिक काव्य के साधारण रीति से परिशीलन करने पर दो तरह के भेद दिखलाई पड़ते हैं। पहला तो है खड़ी बोली और ब्रजभाषा का और दूसरा है काव्य सम्बन्धी विषयों पर। भाषा के सम्बन्ध में तो मुझे यहां कहना है (भाव अनूठा चाहिये भाषा कोई होय)। आशा है कि इतने ही से आप मेरा तात्पर्य भली भांति समझ गये होंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवियों से मेरी यही प्रार्थना है कि जहां तक हो सके वे सरल भाषा का ही प्रयोग करें, क्योंकि सब लोग संस्कृत, प्राकृत या पुरानी चाल की भाषा के पण्डित नहीं। सर्वसाधारण को अपना प्रयोजन समझाने के लिये भाषा भी ऐसी ही होनी चाहिये जो सर्वसाधारण की समझ में आसानी से आजावे। जिस कवि के भावों को समझने के लिये भावुक को बार २ कोष की शरण लेनी पड़ती है उसकी कविता का उद्देश्य ही नष्ट सा होजाता है। अतएव कवियों को यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि वही रचना अधिक लोकप्रिय और काम की होगी जो सुगमता से समझ में आवेगी। समय की अनुकूलता और ईश्वर की कृपा से अब नये नये और अच्छे विषयों की अधिकता हो गई है। अतः शृंगार के अतिरिक्त अन्यान्य उपयोगी विषयों पर ध्यान देना चाहिये। ऐसे काव्य की आवश्यकता है जिसे पढ़ कर हमारे नवयुवकों में उत्साह, निर्भयता तथा देश प्रेम की जागृति हो इन विषयों पर बहुत ही अच्छी रचनाएँ की जा सकती हैं। कारण यह है कि ये विषय अभी पददलित नहीं हुए हैं। एक सरल तथा भावपूर्ण रचना छोटी होने पर भी कई बड़ी बड़ी तुकबन्दियों से कहीं अच्छी है। हमारे हिन्दी कवि यदि बाहुल्यता की ओर न जाकर विशेष चमत्कार या गुण की ओर ही अपना लक्ष्य रक्खें तो बहुत जल्दी हमारे आधुनिक काव्य में सजीवता आ जावे। इस कथन से मेरा यह तात्पर्य कदापि नहीं कि आजकल जो रचनाएँ की जा रही हैं वह निरी निर्जीव हैं। मेरा तात्पर्य यही है कि उसकी रही सही शिथिलता भी दूर हो जानी चाहिए।

पत्र पत्रिकाएँ।

किसी भाषा के साहित्य-संसार से पत्र पत्रिकाओं का वही सम्बन्ध है जो विषय सूची का किसी पुस्तक से हो सकता है। अर्थात् जैसे किसी पुस्तक की विषय सूची पढ़ने से उस पुस्तक के विषय का ज्ञान हो सकता है उसी तरह किसी भाषा के पत्र पत्रिकाओं को देख कर उसकी समृद्धि और दरिद्रता का ज्ञान हो सकता है। कोई बीस वर्ष पहले हिन्दी संसार में दो ही तीन साप्ताहिक और एक आध मासिक पत्र ऐसा था जो अच्छा कहा जा सके। जो पत्र निकलते थे उन्हें बड़ी बड़ी अड़चनों का सामना करना पड़ता था; न ग्राहक मिलते थे और न गुणग्राहक। खेद है कि गुणग्राहकों का अभाव अभीताइ है। हां, ग्राहकों का अभाव चाहे उतना भले ही न हो। इन्हीं कारणों से उस समय भी बहुत से नये नये पत्र निकल कर बन्द हो गए और जो चलते भी रहे सो बिचारे बड़ी कठिनता से। अब वह कठिनाई बिल्कुल नहीं रही हैं ऐसा नहीं कहा जा सकता। आजकल तो लड़ाई के कारण और भी नई ऐसी कठिनाइयाँ उत्पन्न हो रही हैं जिनसे पत्र और उनके संचालकों का नाक में दम है। परन्तु इतना सब होने पर भी आज हिन्दी पत्र के पाठकों की संख्या में आशातीत वृद्धि हो रही है। सब पत्रों को हजारों ग्राहक मिल जाते हैं ऐसी बात नहीं। आज भी बहुत से पत्र निकल कर जुगुनू की तरह अपनी ज्योति दिखा कर विलीन हो जाते हैं। यह खेद की बात है। पर इस विषय में पाठकों पर उतना दोषारोपण करना ठीक नहीं जितना कि किया जाता है। अब यह नहीं कहा जा सकता कि हिन्दीवाले सामयिक पत्रों के महत्व को नहीं समझते, दशा बिल्कुल ही सुधर गई या अब इस विषय में शिकायत की कुछ भी जगह बाकी नहीं, यह भी नहीं कहा जा सकता है। मतलब यह है कि पहले की अपेक्षा अब दशा बहुत अच्छी है और दिन पर दिन अच्छी होती जाती है। मासिक और साप्ताहिक पत्र तो निकल ही रहे हैं। हर्ष की बात है कि इस समय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनिक पत्र भी हिन्दी की सेवा कर रहे हैं। पर हमें इतने पत्र और पत्रिकाओं से सन्तुष्ट न रहना चाहिये। क्योंकि हिन्दी बोलनेवालों की संख्या भारतवर्ष में सब से अधिक है। इस हिसाब से जितने पत्र और पत्रिकाएँ निकल रही हैं उनकी संख्या कुछ भी नहीं और न उन सब की आर्थिक दशा ही अच्छी है, जिससे कहा जा सके कि इनमें से किसी पत्र को अर्थ सङ्कट का सामना नहीं करना पड़ रहा है या नहीं करना पड़ेगा। कारण यही है कि न तो पढ़े लिखे आदमियों ने मातृभाषा के प्रति अपने कर्तव्य को अभी तक यथार्थ रूप से समझा है और न उसकी सेवा करना वे गौरव का काम ही समझते हैं। संसार में ऐसा उदाहरण कि जहां के पढ़े लिखे अपनी मातृभाषा से इस प्रकार उदासीनता प्रकट करते हों कहीं न मिलेगा। साहित्य को उन्नतावस्था पर पहुँचाने के लिए जिन्हें कमर कस कर तैयार हो जाना चाहिए वे उधर ध्यान ही नहीं दें तो यह समझदार हिन्दुओं के लिए घोर परिताप और लज्जा की बात है। ऊपर कहा जा चुका है कि पहले की अपेक्षा पत्रों और पत्रिकाओं का अधिक प्रचार है। पर यह उतना नहीं जितना कि चाहिए। इसका एक बड़ा प्रबल कारण शिक्षा का अभाव भी है, जितना ही शिक्षा का प्रचार होगा भाषा की उतनी ही उन्नति होगी। सर्वतोमुखी जातीय उन्नति के लिये इस बात की आवश्यकता है कि शिक्षा का जहां तक अधिक हो सके प्रचार किया जाय। और मातृभाषा ही के द्वारा हर एक विषय की शिक्षा दी जाय। मातृभाषा के द्वारा शिक्षा देने के विरोध में यह कहना कि पुस्तकों का अभाव है ठीक नहीं। क्योंकि यह अभाव बहुत जल्द दूर हो सकता है। जिस विषय में आप चाहें पुस्तकें लिखवा सकते हैं। देशीय विद्वान जो अंगरेजी में पुस्तकें लिखते हैं वे हिन्दी में भी लिख सकते हैं। हां, उन्हें उत्साह कुछ अवश्य मिलना चाहिए। बिना ऐसा किए, बिना लेखकों को अवसर दिए ऐसा दोषारोपण करना ठीक नहीं।

राष्ट्र भाषा तथा राष्ट्र लिपि।

हिन्दी का राष्ट्र भाषा होना और नागरी का राष्ट्र लिपि होना इन दोनों में कोई विशेष भेद नहीं वरन् यह कहा जा सकता है कि यह दोनों बातें एक ही प्रश्न के दो अङ्ग हैं। हर्ष की बात है कि इस विषय में हिन्दी और नागरी के बड़े बड़े धुरन्धर विद्वानों ने—जिनमें मदरासी विद्वानों के अतिरिक्त अंगरेज़ तथा मुसलमान सज्जन भी सम्मिलित हैं—एक मत है। मराठी साहित्य सम्मेलन तथा गुजराती साहित्य सम्मेलन में जो इस विषय में चर्चा हुई है अथवा प्रस्ताव पास हुए हैं उनसे यही विश्वास होता है कि हज़ारों झंझटों के रहते हुए भी हिन्दी भाषा और नागरी लिपि अपना उचित स्थान प्राप्त करेगी। लोकमान्य महात्मा कर्मवीर गान्धी ने जो प्रयत्न किया है और कर रहे हैं वह सर्वथा सराहनीय है। इन्दौर में होने वाले मराठी साहित्य सम्मेलन ने भी हिन्दी के विषय में जिस उदारता का परिचय दिया है उसकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। इस विषय में हमारे अन्य प्रान्तीय भाई यदि हमारा हाथ बटावेंगे तो हमारा उद्देश्य बहुत जल्द सफल होगा इसमें जरा भी सन्देह नहीं। हां, बंगाल की ओर से हमें अभी उतना आश्वासन नहीं मिला है। पर जब भारत के सभी प्रान्त एक बात पर दृढ़ निश्चय कर लेंगे तब आशा है कि हमारे बङ्गाली भाई भी प्रसन्नता से हमारा साथ देंगे। श्रीयुत जस्टिस शारदाचरण मित्र सरीखे जिस हिन्दी के प्रेमी थे उस हिन्दी का बङ्गालियों द्वारा उचित सम्मान न होगा यह शङ्का हमारे हृदय में न उठनी चाहिये। इधर कुछ लोगों को नागरी के स्थान पर रोमन लिपि के प्रचार करने की धुन समाई हुई है। रोमन लिपि के पक्ष पर जो निस्सार प्रमाण तथा युक्ति-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

याँ उपस्थित की जाती हैं वे बड़ी ही लचड़ हैं और उनका मुँहतोड़ उत्तर भी कई बार दिया जा चुका है। पर फिर भी वे लोग अपनी धृष्टता को नहीं छोड़ते। सर्वाङ्ग पूर्ण नागरी लिपि का स्थान रोमन लिपि को देना ऐसा ही होगा जैसे खड़ाऊँ और पीताम्बर के ऊपर हैट लगाना। अधिक क्या कहें हमें इन रोमन पक्षपातियों के विषय में चिन्ता करने की तनिक भी आवश्यकता नहीं। जब उनकी बात कोई न सुनेगा तब वे स्वयं चुप हो रहेंगे। यदि हम लोग दृढ़ता से अपने काम में लगे रहें तो इनका किया कुछ न होगा। किन्तु महाशयो, हमें इन बाहरी आक्रमणकारियों से उतना भय नहीं है जितना अपने घरवालों से है। हिन्दी तथा नागरी की उन्नति में एक बड़ी भारी रुकावट यह भी हो रही है कि इसे कचहरियों में स्थान न मिला। लार्ड एन्टनी मेकडालन की कृपा से यह रुकावट बहुत कुछ दूर भी हुई थी; फिर भी हम से कुछ करते धरते न बना। कचहरियों में नागरी को उचित स्थान दिलाना हिन्दुओं का काम था पर खेद है कि कचहरी के कर्मचारी और वकील इस ओर से उदासीनता प्रकट करते रहे हैं। अपने नाम मात्र लाभ और सुबिधा के कारण करोड़ों मनुष्यों की हानि कर के जातीय उन्नति के मार्ग में कांटे बखेरना अपने को तथा अपने पूर्वजों को लज्जित करना है। पर खेद है कि कचहरी के सब छोटे मोटे कर्मचारियों से लगा कर सैकड़ों और हज़ारों रुपया मासिक कमानेवाले हमारे वकील भाइयों तक सब स्वार्थवश नागरी का निरादर करते हैं जिससे कि हमारे प्रतिपक्षियों को हमारी हँसी उड़ाने का अवसर मिलता है। अपनी भाषा और अपनी लिपि की हानि करना अथवा उसका प्रत्यक्ष विरोध करना क्या सूचित करता है, क्या यह बात उनको मालूम नहीं? महाशयो. सोचने की बात है कि जो अपना होकर अपने ही को हानि पहुँचाता है वह दूसरों को कब लाभ पहुँचावेगा। यह इन्हीं बातों का परि णाम है कि गवाहों का बयान फारसी लिपि में लिखे जाने के पक्ष में उस रोज सरकार की ओर से जो कुछ कहा गया है वह नितान्त असन्तोष जनक था। सरकार की ओर से जो प्रमाण इस विषय में दिये गए थे उनमें ज़रा भी सार न था और अपनी बातों से माननीय मेम्बर (जिन्होंने सर्कार की ओर से उत्तर दिया था) ने न हिन्दी के विरोधियों को भले ही खुश कर लिया हो पर हिन्दी के पक्षपातियों का उनसे ज़रा भी समाधान न होसका और हिन्दीवाले अब भी सर्कार के विषय में वैसा ही मतभेद रखते हैं जैसा माननीय मिस्टर चिन्तामणि के प्रश्न करने के पहले रखते थे। माननीय मेम्बर की बातों से वे ज़रा भी सन्तुष्ट नहीं हैं। माननीय मेम्बर की योग्यता के विषय में शङ्का नहीं, पर इस प्रश्न पर विवाद करने का उनका ढङ्ग ज़रा भी सतोषदायक नहीं और हम उनसे साफ़ तौर से यह बात कहदेना चाहते थे कि आप का यह गोरखधन्धा हमारी समझ में ज़रा भी नहीं आता। यह केवल वितण्डावाद है। अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है। यदि हम वकील भाई चाहें तो अब भी नागरी का सिक्का कचहरियों में जमा सकते हैं पर प्रश्न तो यह है कि क्या वे ऐसा करेंगे? कही कहीं कुछ सज्जनों ने हिन्दी में काम करना आरम्भ कर दिया है यह कुछ सन्तोष की बात अवश्य है। पर अभी इस विषय में घोर आन्दोलन करने की आवश्यकता है। हम चाहते हैं कि वह समय शीघ्र आवे जब लोगों को यह कहने का अवसर न मिले कि हिन्दू लोग ही हिन्दी और नागरी के विरुद्ध हैं। उस प्रयाग विश्व-विद्यालय की समिति की बैठक में मुसलमान मेम्बरों ने जो हिन्दी के प्रति अपने भाव प्रकट किये हैं उनको भी हम भूल नहीं सकते। मालूम नहीं कि हिन्दी की बात सुनते ही उन्हें उर्दू के लिये क्यों भय होने लगता है? हिन्दी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के पक्षपाती उर्दू को मटियामेट करना नहीं चाहते जैसा कि वे लोग समझते हैं। वरन् वे तो उर्दू को हिन्दी ही मानते हैं। उर्दू के पक्षपातियों को न जाने क्यों हिन्दी की ओर से ऐसा डर बना रहता है। प्रयाग विश्व-विद्यालय की उस बैठक की कारवाई को भी हम हठधर्मी के सिवा और किसी नाम से पुकारने को तैयार नहीं।

देशी रजवाड़े और हिन्दी।

खेद और आश्चर्य्य की बात है कि बहुत सी देशी रियासतों ने अभी तक अपनी पुरानी चाल नहीं बदली। उन्हों ने अभी तक अपने यथार्थ स्वरूप को नहीं पहचाना। उन्हों ने अभी तक एक भाषा और एक लिपि के लाभों से अपने आप ही अपने को वंचित कर रक्खा है। रीवां, ग्वालियर, इन्दौर आदि कुछ रियासतों को छोड़ कर जिधर देखिए उधर अभी तक वही पुराना राग अलापा जा रहा है। हिन्दी सम्मेलन के कार्य्यकर्ताओं को भी इस विषय में सचेत होने की आवश्यकता है। कितनी ही देशी रियासतों में प्राचीन तथा अप्रकाशित ऐसे २ ग्रन्थ पड़े हैं जिनका नाम अभी तक मालूम नहीं उनका वहां से जीर्णोद्धार कर के प्रकाशित करने के लिये मेरे विचार से एक समिति बनाना चाहिये। इस काम में धन खर्च होगा इसलिये उन समर्थजनों को-राजा महाराज सेठ साहूकारों को-लेना चाहिए जो और किसी प्रकार से हिन्दी की सेवा करने में अपने को समर्थ पाते हैं।

हरदोई और हिन्दी।

बहुत पहले ही से हरदोई प्रान्त हिन्दी की कुछ न कुछ सेवा करता आरहा है। बादशाहों के समय में भी यहां कई अच्छे अच्छे कवि होगए हैं। जिलों में संदीले के अमीन सूरदास भी एक अच्छे लेखक होगए हैं। इनके अतिरिक्त विहानी के क़ादिर मुबारिक, मल्लावां, घासीराम, सन्दीले के वंशीधर मिश्र कुरसठ के मोहनलाल कायस्थ आदि अनेक उत्तमोत्तम लेखक होगए हैं। कहांतक नाम गिनावें। हर्ष की बात है कि आज आप लोग उस पुरानी बात को बनाए रहने के लिये तन मन धन से लगे हुए हैं। हरदोई के सरस्वती सदन पुस्तकालय के सदस्यों ने जिस स्वार्थत्याग और परिश्रम से हिन्दी की उन्नति में योग देकर अपनी कर्त्तव्य निष्ठा का परिचय दिया है वह सर्वथा श्लाघनीय है। पर जैसा कि मैं पहले कह आया हूँ केवल इतने ही से काम न चलेगा। हर्ष की बात है कि आप इस बात को शर्तियः जानते हैं और यह उसी का फल है कि आज दो वर्ष से हरदोई प्रान्तीय सम्मेलन स्थापित है। ईश्वर आप को उपयुक्त साधन प्रदान करें जिससे अपने कर्तव्य पथ पर आप और भी दृढ़ता से बढ़ें हिन्दी का घर घर प्रचार करें, साहित्य की वृद्धि करें, देश तथा जाति का कल्याण करें, अपने भूले भटके भाइयों को रास्ते पर लावें, उन्हें कर्तव्य पालन की शिक्षा दें और संसार के सामने स्वार्थत्याग, आत्मनिर्भयता और आत्मभावावलम्बन का अनुपम आदर्श खड़ा करें।

पृथ्वी की आयु।

प्रायः लोग परस्पर मिलने पर और अधिक परिचित होने पर पूछ बैठते हैं कि "आप की आयु कितनी है" "आप इतने बड़े तो नहीं मालूम पड़ते" पर इस चिरपरिचित पृथ्वी माता की आयु पूछने की क्या कभी हमारी इच्छा नहीं होती? जो तत्वदर्शी और खोज करने के शौक़ीन हैं उन्हें आवश्य ही होती है और अपनी खोज के बल से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिल्कुल यथार्थ नहीं तौ भी बहुत कुछ ठीक पता उन्होंने लगा लिया है। मनुष्यों की आयु का सबसे ठीक पता जन्म कुँडली द्वारा लगाया जाता है। अब देखा चाहिये कि इस भूमंडल की वह जन्मपत्री कौन सी है जिसे देखने से उसकी आयू का ठीक ठीक पता लग सके। सबसे पहली पृथ्वी की जन्मपत्री उसकी बनावट है। जैसे किसी मनुष्य के शरीर की आकृति को देख कर उसकी आयू का बहुत कुछ अनुमान हो जाता है, उसी प्रकार से पृथ्वी की बनावट की खोज करने से उसकी आयू का बहुत कुछ पता चलता है और इसकी यथार्थ आयू जानने के लिए जन्मकुंडली की तरह इसके प्रत्येक परत को उलर उलट कर देखना आवश्यक है।

जब आप इस कार्य्य में अग्रसर होंगे और पृथ्वी की बनावट की परीक्षा आरम्भ करेंगे तो सबसे पहले वही भाग—उसका सबसे ऊपरी भाग—जिस पर हम चलते फिरते हैं हमें दिखाई देगा। अब यदि इस भूभाग को हम अन्वेषण की दृष्टि से देखेंगे अर्थात् खूब सावधानी से वैज्ञानिक रीति से परिक्षा करेंगे तो स्पष्ट दिखाई देगा कि यह भूखंड एक ही मिट्टी का साबूत ढोका नहीं है वरं एक पर एक, फिर उस पर एक इस प्रकार से परत पर परत कई परत एक पर एक जमे हुए हैं। ठीक जैसे इस पुस्तक के पृष्ठ परत की तरह एक पर एक रखे हैं उसी प्रकार से पृथ्वी की तह परतह या परत पर परत जमी हुई है। अब देखना यह है कि इस परत से तात्पर्य्य क्या है। परत आप कहते किसको हैं। परत यहां पर उसीका नाम है जो मिट्टी या बालू जल की गति द्वारा लाए जाकर दिन पर दिन जमा होते जाते हैं। पृथ्वी भर में सब कहीं इन पदार्थों के लानेवाला सिवाय जल के और कोई नहीं है। वरुण देवता ही प्रति वर्ष नाना प्रकार के ढोके, बालू, मिट्टी, धातू इत्यादि ला ला कर यहां जमाते जाते हैं और हमारी भगवती जान्हवी, सिंधु नद या ब्रह्मपुत्र यह बड़े बड़े नद नदि रात दिन इसी कार्य्य में व्याप्त हैं और अपने प्रवाह के साथ नाना प्रकार की मिट्टी, बालू और धातव पदार्थ; पशु पक्षियों की हड्डी, सीप और भी न जाने क्या क्या पदार्थ अपने प्रवाह के साथ लाला लेकर इस परत की पुष्टी करते जाते हैं। नद नदियों से परिपूरित समुद्रतल में ये सब प्रदार्थ संग्रहीत हो कर पृथ्वी के परत रूप में जमते रहते हैं। एक तो अपने साथ बहते जल के सारे प्रवाह दूर दूर से यह पदार्थ ला ला जमा करते जाते हैं, दूसरे समुद्र देवता भी स्वयं इस काम से निश्चिन्त नहीं हैं, वह भी दिन प्रति दिन अपनी लहरों की थपेड़ से अपने किनारे करारों को तोड़ तोड़ कर अपने गर्भ में गिराते रहते हैं। जहां के पत्थर या मिट्टी के करार मुलायम हैं वह शीघ्रता से और जहां अधिक कठिन हैं वहां विलंब से टूटकर या चूर चूर हो कर इन करारों को अन्त में समुद्रगर्भ में लीन होना ही पड़ता है और इस प्रकार से समुद्र तीर की भूमि क्रमशः क्षय होती जाती है। ये करारे सब पहले लुड़कते पुड़कते ढोके हो हो कर गिरते हैं, फिर पिस पिसा कर बालु या रेणु में परिवर्तन होजाते हैं या चिकनी मिट्टी का रूप धारण करके समुद्रतल में जमते जाते हैं पर यह जमाव अस्तव्यस्त भाव से नहीं नियमपूर्वक नम्बरवार एक पर एक तह तह इस प्रकार से होता है। इनमें से किसी पर घोंघे या अन्य प्रकार के जल जीव मुद्दतों तक निवास करते हैं और फिर जब बालू या मिट्टी की दूसरी परत आकर उन्हें ढांप लेती है उनके क्षुद्र शरीर अपने क्षुद्र अस्थि पंजर समेत नीचे दबे रह जाते हैं और सहस्रों वर्ष बाद खोदने से निकलते हैं जिस से भूगर्भ-विद्या न्वेषियों को अपनी ज्ञान वृद्धि करने की बहुत सी सामग्री प्राप्त होती है। यह प्रक्रिया सृष्टि के आरम्भ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से अब तक बराबर हो रही है और आगे भी होती रहेगी। क्योंकि बड़े बड़े पार्वतीय चट्टानों के अध्ययन से प्रतीत होता है कि वास्तव में उन पर भी यह आपदा बीत चुकी है। इस पृथ्वी की सारी सतह इन्हीं स्रोतों द्वारा आगत पदार्थों से बनी हैं, केवल जहां जहां किसी ज्वालामुखी पर्वतों द्वारा गलित धातू, पत्थर इत्यादि उबल कर छितराए गए हैं, वहीं कहीं कहीं इस नियम का व्याघात हुआ है। कई विद्वानों की तो यह भी सम्मति है कि यह छितराए पत्थर के ढोके भी किसी समय में इस प्रकार की परत पर परत जम कर बने थे और किसी समय में उन पर गर्मी और बोझ का इतना चाप पड़ा कि वह गल कर अग्निमय पिंड की आकार के बन गए और फिर क्रमशः ठंढे होते होते स्फटिक पत्थरों की आकार में आगए। इनके बीच यदि किसी जीव जन्तु का कंकाल या सीप इत्यादि ऐसी बोली थी भी तो वह अधिक उताप से भस्म होकर पत्थर ही में परिणत होगई और यही कारण है कि ऐसी चट्टानों के बीच किसी जीवधारी के निवास करने का चिन्ह नहीं पाया जाता। यदि ऐसी चट्टानों की बात एक ओर रहने दें तो भी इस बात के यथेष्ट प्रमाण वर्तमान हैं कि वास्तव यह भूखंड तह पर तह जम कर ही बना है और तह या परत बननेवाले पदार्थ जल के स्रोत द्वारा ही लाए गए हैं।

अब देखना यह है कि यह नदियां उक्त तह या परत बनाने के लिए मिट्टी बालू इत्यादि लाती कहां से हैं? यह तो हो ही नहीं सकता कि अपने में से उत्पन्न कर देती हों। वास्तव में जिस भूमि पर से होकर वह प्रवाहित होती हैं, वहीं की मिट्टी को अपने स्रोत की तीव्रता से उखाड़ उखाड़ कर अपने साथ लेती आती हैं। जैसे समुद्र की लहरें अपने थपेड़ों से किनारे के करारों को तोड़ कर क्षय करता जाता है उसी प्रकार से भूमि भी क्षय होती जाती है। यदि कहीं एक गज मोटी मिट्टी की परत आकर जमेगी तो अवश्य है कि दूसरे स्थान पर उतनी ही मोटी भूमि की परत का क्षय हो जायगा। यह बात बहुत ध्यान में रखने की है क्योंकि पृथ्वी की आयू का पता लगाते हुए जब हम इन एक-एक परतों की आयू की जांच करेंगे तो अवश्य ही खोजना पड़ेगा कि इन एक एक परतों को बनते और क्षय होते कितना समय लगा है। अर्थात् इतनी मोटी परत या तह बनने में कितना समय लगा है? ज्योतिष शास्त्र के अध्ययन करनेवालों से यह बात छिपी नहीं है कि सृष्टि के आरंभ में सूर्य्य की तरह हमारी पृथ्वी भी अग्नि का अँगारा थी या अग्नि की ज्वाला मात्र थी, फिर वह गलित धातू के रूप में आयी और क्रमशः ठंढी होती होती सख़्त चट्टान के रूप में परिणत हुई, पर यह अग्निमय गोलक का बाष्प जब ठंढा होने लगा तो पहले बाष्प या भाप जैसे ठंढा होने पर पानी का रूप धारण करता है उसी प्रकार से पहले यह बाष्प ठंढा होकर पानी का श्रोत बना और यदि सृष्टी के इसी जल-श्रोत ने इस अग्नि पिंड के ठंढे होकर बनी हुए चट्टानों को अपने प्रवाह से क्षय करना आरंभ किया और धो धोकर उसके अंश को अपने तल में परत के रूप में जमाना आरंभ किया और उस समय के समुद्र ने क्रमशः इन चट्टानों को अपनी गहरी परत से ढक दिया और यह चट्टानें पुनः गर्मी और चाप से स्फटिक के आकार की बन गईं और बार बार पानी के बाहर निकलती और डूबती रहीं अर्थात् जब परत पर परत जमा होते होते ऊँची हो गई तो पानी के बाहर निकल आईं और जब पुनः जल की बाढ़ अधिक हुई तो नीचे डूब गईं और नए परत के बनाने का कारण हुईं और यों ही बार बार होता रहा।

इस परत पर परत ढकने की प्रक्रिया से एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात और लक्ष्य करने में आई है और वह यह है कि उक्त प्रत्येक परत या स्तर एक पर एक ठीक समान भाव से जमते हैं, अस्त व्यस्त भाव से नहीं और इस रीति से जमते हैं जिसमें सबसे नीचे वाले स्तर को सबसे प्राचीन और सबसे ऊपरी परत को सबसे आधुनिक कहा जा सकता है। एक दृष्टान्त से यह बात और स्पष्ट हो जायगी। मान लीजिए कि एक कांच का पात्र है और उसमें पानी भरा है। आपने उसमें थोड़ा सा स्वेत बालू छोड़ दिया और जब वह बालू नितर कर नीचे बैठ गया तब थोड़ीसी पीली बालू छोड़ दी और उसके नितरने के बाद थोड़ीसी लाल बालू छोड़ दी अब कुछ देर बाद आप को उस कांच के पात्र में बाहर से स्पष्टतया तीन स्तर क्रम से सजे हुए दिखाई देंगे। पहला स्वेत, दूसरा पीला और तीसरा लाल। सबसे नीचे का पहला स्तर या परत वही स्वेत है। इससे स्पष्टतया प्रमाणित हो चुका कि सबसे नीचे का स्तर ही प्राचीनतम है और सबसे ऊपर का आधुनिक है। अब यदि जितने प्रकार के स्तर या परत जो आदि काल से अब तक पृथ्वी पर क्रमरुप से जमते चले आए हैं ज्यों के त्यों रहते और उनमें किसी प्रकार की छेड़ छाड़ न होती और यदि कोई ऐसा उपाय होता कि एक ही दृष्टी में हम उन कुल स्तरों के प्रत्येक सिरे को देख सकते—जिनकी कि मोटाई प्रायः पचीस मील बतलाइ जाती है—तो सहज ही में पता लग जाता कि किस स्तर पर कौनसा स्तर है और कौन कौन से स्तर की आकृति कैसी है और वह कितने लंबे चौड़े हैं। परन्तु यह होना निरा असंभव सा है, क्योंकि एक ही समय में जमे हुए स्तर कई प्रकार के हैं अर्थात् एक ही स्तर में की बनावट में नाना प्रकार के भेद हैं और एक ही दृष्टी में सब स्तर देखे भी क्यों कर जा सकते हैं? एक ही समय के एक ही स्तर की भिन्नता का प्रमाण प्रत्यक्ष है। इसी समय इस हमारी पृथ्वी के भिन्न भिन्न खंडों में भिन्न भिन्न प्रकार के स्तर बन रहे हैं। अटलान्टिक महासागर के तल में आजकल खड़ीया मिट्टी सा एक प्रकार का कीचड़ जम रहा है और हमारे भारतीय महासागर के बंगीय उपकुल में और अमरीका के मेक्सीको के उपकुल में नदियां सब खूब महीन चिकनी मिट्टी ला कर भर रही हैं और प्रशान्त महासागर, भारतीय महासागर तथा लाल समुद्र के तल नाना प्रकार के प्रवाल पुंजों (मुँगे) से ढक रहे हैं। अब यदि किसी समय सब पानी सूख जाने पर कोई भूगर्भ तत्वान्वेषी, इन स्थानों की भूमि खोदने पर इन भिन्न प्रकार के पदार्थों को पावेगा तो वह क्यों कर निर्णय कर सकेगा कि उक्त पदार्थ सब एक ही समय के और एक ही स्तर के हैं?

इसका भी एक उपाय है और वह बहुत सहज उपाय है। मान लीजिए इस समय हमारे सम्राट पञ्चम जार्ज की नामांकित एक रजत मुद्रा को प्रत्येक समुद्र-तलों में छोड़ दी जाय और भविष्य में खोदने पर तब कहीं भूगर्भ अन्वेशियों को एक ही समय की मुद्रा मिले तो उसे अब कोई सन्देह नहीं रह जायगा कि रङ्ग रूप में भिन्न भिन्न होने पर भी यह स्तर एक ही समय का बना हुआ है। अब देखिए कि प्रकृति माता ने हमारे लिए इन स्तरों में कौनसा राज-चिन्ह डाल रक्खा है जिसे देख कर हमें स्तरों के समय का ठीक निर्णय हो सके? वह राज-चिन्ह इन स्तरों के बीच पाए गए घोंघे, सीपी और अन्य जीव जन्तुओं के कंकाल हैं और जब हम एक स्तर के भिन्न भिन्न स्थानों और भिन्न भिन्न रूप रङ्ग होने पर भी सब जगह एक ही प्रकार के इन राज-चिन्हों को पाते हैं तो सहज ही निर्णय हो जाता है कि यह स्तर एक ही समय का है, क्योंकि प्रत्येक स्तर का अपना अपना भिन्न भिन्न उद्भिज और जांतव अवशेष है जो एक दूसरे से बहुत निकट सम्बन्ध रखते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ भी अपनी भिन्नता की छाप अपने सिर से मिटा नहीं सकता। दृष्टान्त रूप से जैसे लम्बे तनेवाले वृक्षों का अवशेष एक स्तर में पाया गया तो दूसरे स्तर में सर्वत्र उससे छोटे तने का वृक्ष मिलता है, जो कहीं भी पहले स्तर में नहीं मिलता था। इसी प्रकार से किसी विशेष प्रकार के रीढ़ का अङ्गवाले जन्तू का अवशेष सर्वत्र एक स्तर में एक ही सा मिलता है और दूसरे स्तर में सर्व्वत्र दूसरे ही प्रकार का। इससे पता लगता है कि उस समय अमुक अमुक लक्षण युक्त उद्भिज और जन्तु इस पृथ्वी पर निवास करते थे और उसके बाद के समय में या उससे पूर्व्व के समय में अमुक अमुक भिन्न प्रकार के उद्भिज और जन्तु थे। चाहे एक स्तर की बनावट में कितने ही प्रकार की भिन्नता हो पर इन जांतव चिन्हों से उनके एक कालिन समय का निर्णय बहुत ठीक है, यह नाना प्रकार की परिक्षा द्वारा सिद्ध हो चुका है। अब जो दूसरी बात जानने वाली रही, वह यह है कि इन स्तरों की मोटाई और इनके क्रम का पता क्यों कर लगे अर्थात् कितनी मोटी स्तर कौनसी अर्थात् किस समय की है और कौन स्तर किसके बाद की है इसका निर्णय क्योंकर हो। यह तो हम देख ही चुके हैं कि स्तरों के चट्टान सब जल श्रोत द्वारा ही जम जम कर बने हैं और इस कारण से एक पर एक समान भाव से रखे हैं, पर यह इस प्रकार से रहने पाते नहीं, क्योंकि यदि ज्यों के त्यों बने रहते तो आज से बहुत काल पूर्व्व इन स्तर विशिष्ट चट्टानों का बनना बन्द हो गया होता क्योंकि भूमिखण्ड क्षय क्षय होते होते एक बार ही समुद्र के तह को पहुँच जाती और जब क्षय करने के लिए समुद्र को कोई उच्च भूमि मिलती ही नहीं तो फिर स्तरों का बनना भी कब का बन्द हो गया होता। अन्त को पृथ्वी के सतह के ऊच्च स्थानों का कुछ परिचय मिलना तो दूर रहा, हमें बड़े बड़े खाई खन्दकों ही को पृथ्वी को सतह मानना पड़ता। पर प्रकृति इस टण्टे को सहज ही में निपटा रखती है। पृथ्वी की भीतरी गर्म्मी और उस गर्म्मी पर ऊपर के प्रबल दबाव से समय समय पर भयानक भूमिकम्प आते रहते हैं जिससे जल के स्थान पर पर्व्वत निकल आते हैं और कहीं पर्व्वत घुस कर पृथ्वी गह्वर में प्रविष्ट हो जाता है। इसी प्रकार से नदी और समुद्रों के क्षय के आभव की पूर्ति हो जाती है। कहीं की भूमि बहुत क्षय हो गई तो कहीं एकाएकी बहुत ऊँची भी हो गई और इस प्रकार से पृथ्वी की समानता का वजन या परिमाण स्थिर रहा और समुद्रतल का जो स्तर वास्तव में समभाव से रखा हुआ था वह उलट पलट होकर पानी से बाहर निकल आया और पानी के सतह से कहीं कहीं मीलों ऊँचा हो गया। यही कारण है कि ऊँचे पर्वतों पर जल जन्तुओं के कङ्काल या घोंघे की खोलियाँ अधिकता से पाई जाती हैं। कहीं कहीं तो कोसों तक आप इन पर चले जाइये अन्त ही नहीं होता।

भूमिखण्ड की मोटाई क्योंकर नापी गई, यह जानना कोई कठिन नहीं है। किसी पुस्तक को जब आप पढ़ रहे हैं और जब यह खुली हुई आपके सामने रखी है तो केवल एक ही पृष्ठ आपकी दृष्टि के सामने है। अब आगे पढ़ने के लिए पृष्ठ उलटते चलिए, यहाँ तक कि आप एक एक कर के पूरे पांच सौ पृष्ठ उलट गए और फिर उन कुल पृष्ठों को हाथ में लेकर किनारे की ओर से देखिए तो इन पाँच सौ पृष्ठों की जथा आप को प्रायः एक इञ्च की मोटाई में दिखाई देगी अर्थात् पाँच सौ पृष्ठों का थोक, परत या स्तर मोटाई में एक इञ्च है या दो इञ्च है। अथवा बहुत मोटा कागज हुआ तो इससे अधिक भी हो सकता है। इसी प्रकार से भूगर्भविद्या के खोज करनेवालों ने भी पृथ्वी रूपी पुस्तक के प्रत्येक पृष्ठ या स्तर को देख देख कर उसकी बनावट और आकृति का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतिहास जाना है। जैसे जब इस स्तर का एक पृष्ठ उलटते हैं कहीं पहले मिट्टी मिलती, फिर लाल बालू, फिर काली मिट्टी, फिर खड़िया, फिर कोयला, फिर लाल या भूरे रङ्ग का पत्थर, इसी प्रकार से क्रमशः पृष्ठ पर पृष्ठ उघड़ते जाते और अपना इतिहास बखानते जाते हैं। ठीक जैसे एक पुस्तक के भिन्न भिन्न अध्याय होते हैं और एक अध्याय के भिन्न भिन्न पृष्ठ होते हैं वैसे ही इस पृथ्वी रूपी पुस्तक का भी भिन्न २ अध्याय और भिन्न युग रूपी और काल रूपी पृष्ठ भी हैं जिसके अङ्कित अक्षरों (अर्थात् जांतव अवशेषों) से उसके इतिहास का स्पष्ट पता चलता है। सम्भव है कि इस स्तर रूपी पुस्तक में कहीं कहीं कुछ भ्रम भी रह गया हो। क्योंकि कहीं स्तर बनते समय एक स्थान पर नदी और सूखी धरती दोनों रही और नदी के नीचे तो स्तर बनता रहा पर सूखी भूमि ज्यों की त्यों रही। ऐसे स्थानों में वैज्ञानिक रीति से छानबीन कर के, इधर उधर के बिखरे हुए सामग्रियों को जोड़ तोड़ कर सिद्धान्त निर्णय करना पड़ता है, क्योंकि बारह आने से अधिक अंश पृथ्वी का समुद्र गर्भ में है और समुद्रतल की खोदाई तो हुई ही नहीं जिससे पता लगता कि उसके नीचे और कौन कौन से रहस्य छिपे पड़े हैं, तौभी जहाँ तक सम्भव होसका भूगर्भ विद्या के आचार्य्यों ने अपने अन्वेषण से जो निर्णय किया है उसका सार इस प्रकार है:—

"इस समय स्तरों की कुल मोटाई नाप में एक लाख तीस हजार फीट अर्थात् प्रायः पचीस मील के है अर्थात् पृथ्वी के सतह से लेकर उसके मध्य बिन्दू केन्द्र या बीचोबीच तक का जो माप है उसका एक सौ साठवां हिस्सा $\frac{1}{160}$ है। इस एक लाख तीस हजार फीट के मोटे स्तरों को तीन भागों में बाँटा गया है, जिसका नाम सुबीते के लिए लौराटी कम्बारी और सेलूरी रख लीजिए। इनमें से सबसे प्राचीन तम स्तर जिसका नाम लौराटी रक्खा गया है तीस हजार फीट मोटा है उसके ऊपर का स्तर जिसे कम्बारी कहा गया अठारह हजार फीट मोटा है और सबके ऊपर सेलूरी बाईस हजार फीट मोटा मापा गया है यह तीनों स्तर मिल कर आदि युग के स्तर जाते हैं। सबसे नीचेवाले लौराटी नामक स्तर केवल एक ही प्रकार के जीव का शरीरावशेष पाया गया है। यह किसी एक ऐसे जीव का क्षय हुआ भग्न कङ्काल है जिसके शरीर पर अजस्र छिद्र और ऊपर उसके चारखाने के आकृति की खोल थी। यह सब जहाँतक देखभाल कर मनुष्य बुद्धी से निर्णय हो सकता है वहीं तक लिखा गया है, क्योंकि मुद्दतों से भूमि के नीचे दबे हुए उत्ताप और चाप के कारण इन अस्थि अवशेषों का आकार कई प्रकार से बदल गया है और कइयों के तो स्तर विभाग का चिन्ह तक अवश्य ही लोप हो गया होगा।

दूसरे कम्बारी नामक स्तर और ऊपर सिलूरी स्तर में जीवों के चिन्ह विशेषता से पाए जाते हैं, जिनमें एक साधारण जाति के समुद्रिय उद्भिज की प्रधानता है। सिलूरी स्तर के ऊपरी भाग में तो अगणित जीवों के चिन्ह पाए जाते जिनमें सीपी, घोंघे और ऊपरी स्तर के कई प्रकार की मछलियों का भी अवशेष पाया जाता है इनमें से घोंघे जाति के जीव तो अब तक ज्यों त्यों ऊपरी स्तर में भी पाए जाते हैं और इनमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। कई प्रकार सीपी की भी यही अवस्था है। तात्पर्य्य यह निकला कि सिलूरी युग से ही हमारी पृथ्वी वर्तमान गठन का आरम्भ हुआ है। इस युग आज ही कल की तरह वर्षा होती, पवन चलता नदियाँ बहतीं तरङ्गों के थपेड़ों से चट्टानें धसकतीं सीपी और घोंघे जीते और मरते तथा केंकड़े और अन्य जलीय कीड़े रेंग रेंग कर तीर पर आते और प्रत्येक तरङ्गों के साथ सूख सूख कर वहीं रह जाते थे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस आदि युग के बाद का जो समय आया उसके स्तरमें प्राचीन लाल रेणुकायुक्त चट्टान, कोयले की चट्टान और ढोके तथा नवीन लाल बलुवा पत्थर मिले हैं। इन तीनों की मोटाई एक साथमिला कर बयालिस हजार फूट मापी गई है। इस समय को बनजंगल और मछलियों का युग भी कह सकते हैं और इन्हीं बनजंगलों से कोयला बना है और बाद की दिवोनी या परेमी नामधारी स्तर में मछलियों का अवशेष अधिकता से पाया जाता है।

तीसरे बड़े विभाग में जो स्तर संयुक्त हैं, उनका नाम तृआसी, जूरा और कृटाशी या खड़ीए का स्तर रखा गया है और इन सबों की मोटाइ कुल पंद्रह हज़ार फूट है।

इस युग में सरिसृप जंतूओं की अधिकता पाई जाती है। जैसे इससे पहले के युग में मछलियों का समय था और पहले युग में जैसे केवल सिवार या छोटे छोटे घास के पौधे पाए जाते हैं। इस दूसरे युग में कुछ उन्नति हुई और ऐसी विटप श्रेणी दृष्टिगोचर हुई जिनमें विना छिलके के बीज लगे हुए थे जैसे कि देवदारु के वृक्ष इत्यादि होते हैं। इस युग में बड़े बड़े भयानक पक्षयुत विशाल काय सर्प जातीय जीव समुद्र में निवास करते थे और पृथ्वी पर भी दानवी-असुर नाम के ऐसे ही शरीरधारी राक्षसों का निवास था और आकाश मंडल में भी एक प्रकार की विशालकाय रक्ताशी पक्षयुत छिपकिली जाति का प्राणी उड़ता फिरता था। नाना प्रकार के सरीसृप जातीय जंतु जैसे, छिपकिली, मगर और कछुए इत्यादि जल स्थल दोनों स्थानों में अधिकता से विद्यमान थे। स्तनपायी जंतु और पक्षियों के भी कुछ कुछ चिन्ह उस समय दिखने लगे थे, जिससे पता लगता है कि इन जीवों की सृष्टि भी आरंभ हो गई थी। इसी प्रकार से पहले युग में भी सरीसृप जाति के जंतुओं के चिन्ह भी मिलते हैं, पर स्तनपायी जंतुओं का जो साधारण सा चिन्ह इस समय में मिला भी वह साधारण से जंतुओं का चिन्ह है जिनकी पूरी परिणति तब तक नहीं हुई थी और पक्षी सब भी सरीसृप और वास्तविक पक्षी जाति के बीच के एक प्रकार के अद्भुत जीव से प्रतीत होते हैं। इस युग का अंत खड़िए के स्तर से हुआ है जो समुद्रतल में थाक का थाक जमा है और इसमें किसी पृथ्वी पर चलनेवाले प्राणी के चिन्ह मिलना दुर्लभ है।

इसके बाद भूचारी युग का समय है। जब कि आधुनिक जाति के पेड़ पल्लव और जीव जंतुओं का आविर्भाव हुआ। सरीसृप से स्तनपायी जीव प्रबल हो कर बढ़ चले, नाना प्रकार के आधुनिक जाति और श्रेणी के प्राणी दिखाई देने लगे और छिलकेयुक्त बीजवाले उद्भिजों से हमारे आधुनिक पेड़ पल्लवों की तरह भूमि हरी भरी हो गई। इस स्तर की पूरी मोटाई केवल तीन हज़ार फूट मापी गई है। इसके बाद नितान्त आधुनिक युग का समय है, जिसमें आधुनिक बनावट का उपरी स्तर संयुक्त है और जिसमें मनुष्य और इनके श्रेणी के जीवों के चिन्ह विद्यमान हैं। इन मानवी प्राणियों में से कइयों का वंश तो लोप हो गया है और कई विद्यमान हैं। पृथ्वी की आयु का पता लगाने में हमें प्राणीय स्तरों ही से विशेष सहायता मिलेगी इस लिए इस नवीनतम स्तर का ब्योरेवार वर्णन यहाँ नहीं किया जाता। अवश्य ही जब कभी "मानवीवंश की प्राचीनता" पर कोई लेख लिखने का अवसर आवेगा तो वहाँ इसका वर्णन आप ही आ जायगा।

पृथ्वी के स्तरों में जो जो परिवर्तन हुए हैं और जिनके होने में कोटानुकोटि वर्ष लग गए हैं उनका सब से उत्तम और सठीक अनुमान कोयले की बनावट को देख कर होता है। पर वास्तव में यह कोयले का युग पृथ्वी की लंबी आयु में केवल एक अंश मात्र है। यह स्तर कोयले के थाक से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बना है तथा वह थाक, उद्भिज पदार्थों के जम घट का परिणाम है, जो जम कर एक इंच से लेकर तीस फूट तक मोटे हो गए हैं और एक पर एक क्रम भाव से सजे हुए हैं, और प्रत्येक थाक के ऊपर नीचे नाना प्रकार की बनावट की पथरीली चट्टानें भी विद्यमान हैं। कोयले का प्रत्येक स्तर एक मुलायम मिट्टी के स्तर पर सजा है और ऊपर से बलुवे पत्थर द्वारा ढँका है। इसी प्रकार से थाक पर थाक सजा हुआ है। प्रत्येक थाक के नीचे ऊपर इसी प्रकार का दो आवरण या खोल है अर्थात् जहाँ सौ सौ पचास पचास थाक है वहाँ इसी प्रकार से क्रमानुसार ऐसे दो आवरणों ही के बीच एक पर एक सजे हुए हैं। कहीं कहीं एक एक कोयले की थाक तीस तीस फूट मोटी है और कोयले युग के कुल स्तरों की मोटाई चौदह हजार फूट मापी गई है।

(क्रमशः)

पृ.-६२५

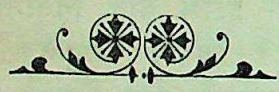

सभा का कार्य्य-विवरण ।

(११)

साधारण अधिवेशन ।

शनिवार तारीख २८ अप्रेल १९१७ सन्ध्या के ५½ बजे

स्थान—सभाभवन ।

(१) तारीख २४ फरवरी १९१७ के साधारण अधिवेशन और ५ अप्रेल १९१७ के विशेष अधिवेशन के कार्य-विवरण पढ़े गए और स्वीकृत हुए।

(२) सभासद होने के लिये निम्नलिखित सज्जनों के फार्म उपस्थित किए गए :—

१—पण्डित जौहरी लाल शर्म्मा हेड पण्डित, गवर्न्मेंण्ट हाई स्कूल, बुलन्दशहर १॥)

२—बाबू भगवान स्वरूप भटनागर अध्यापक गवर्न्मेंण्ट हाईस्कूल, बुलन्दशहर १॥)

३—पण्डित रामचन्द्र, लाला-नानक-चन्द लक्ष्मी नारायण की दूकान, बुलन्दशहर १॥)

४—ठाकुर जमराव सिंह, ज़मींदार, मौज़ा रजपुरा, पोस्ट शिकारपुर, बुलन्दशहर १॥)

५—पण्डित मोतीराम उपाध्याय, दफ़्तर जुडीशनल कमिश्नर, लखनऊ १॥)

६—पण्डित टीकाराम गणेशदत्त वैद्य, अनूपशहर, बुलन्दशहर २)

७—पण्डित करुणानन्द वैद्य, अनूपशहर, बुलन्दशहर १॥)

८—बाबू श्रीकृष्ण लाल तहसीलदार अनूपशहर, बुलन्दशहर ३)

९—पण्डित बालूशंकर शर्म्मा, मुख़्तार, अनूपशहर, बुलन्दशहर ३)

१०—बाबू केशवराम, अनूपशहर, बुलन्दशहर

११—बाबू कन्हैयालाल, जहांगीराबाद, बुलन्दशहर ५)

१२—बाबू हरदयाल वैश्य, जहांगीराबाद, बुलन्दशहर ५)

१३—बाबू गुलजारी सिंह शिवदयालु, जहांगीराबाद, ज़ि० बुलन्दशहर ३)

१४—लाला दुर्गाप्रसाद जी, जहांगीराबाद, ज़ि० बुलन्दशहर ३)

१५—पण्डित हरिदत्त शर्म्मा वैद्य, जहांगीराबाद, ज़ि० बुलन्दशहर १॥)

१६—पण्डित टूकीराम, उपप्रधान आर्य्य समाज, जहांगीराबाद, ज़ि० बुलन्दशहर १॥)

१७—बाबू हरज्ञान सिंह, रामसभा कार्यालय, सिकन्दराबाद, ज़ि० बुलन्दशहर ५)

१८—सेठ जवाहिरलाल जैनी, सिकन्दराबाद, ज़ि० बुलन्दशहर ३)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९—बाबू शान्तिप्रकाश, जमींदार, स्याना, ज़िं० बुलन्दशहर १॥)

२०—परिव्राजक देवनारायण महता, एजेण्ट आ० प्र० सभा, काशी १॥)

२१—बाबू जुगलकिशोर, साहूकार, स्याना, ज़िं० बुलन्दशहर १॥)

२२—चौधरी हरवंश सिंह जी, स्याना, ज़िं० बुलन्दशहर ५)

२३—बाबू गौरीशंकर गोयनका, खुर्जा, पो० पी० ३)

२४—बाबू गोविन्दराम वैद्य, खुर्जा, ज़िं० बुलन्दशहर ५)

२५—रायबहादुर मेवाराम जी, खुर्जा ज़िं० बुलन्दशहर ३)

२६—बाबू मनोहर लाल भार्गव, मंत्री समाचार पत्रालय, खुर्जा, ज़िं० बुलन्दशहर ५)

२७—बाबू शिवदत्त, ट्रेनिङ्ग क्लास, स्याना, ज़िं० बुलन्दशहर १॥)

२८—बाबू जगनलाल, प्यूपिल टीचर, स्याना, ज़िं० बुलन्दशहर १॥)

२९—बाबू गंगाबल, प्यूपिल टीचर, स्याना, ज़िं० बुलन्दशहर १॥)

३०—बाबू गुलाब सिंह, प्यूपिल टीचर, स्याना, ज़िं० बुलन्दशहर १॥)

३१—बाबू कंचन सिंह, प्यूपिल टीचर, स्याना, ज़िं० बुलन्दशहर १॥)

३२—बाबू फकीर चन्द, नायब मुदर्रिस, स्याना, ज़िं० बुलन्दशहर १॥)

३३—बाबू बांकेलाल, ज़मींदार, स्याना, ज़िं० बुलन्दशहर १॥)

३४—बाबू रघुनन्दन शरण, ज़मींदार, स्याना, ज़िं० बुलन्दशहर १॥)

३५—बाबू फूलचन्द लेमेचू जन, जनरल मर्चेण्ट, दाल की मण्डी, काशी १॥)

३६—बाबू रामकृष्ण राव कुदले०, पंचगंगा, काशी १॥)

३७—बाबू बलराम प्रसाद, अध्यापक, प्राइमरी स्कूल, राजघाट काशी १॥)

३८—बाबू महावीर प्रसाद, मुन्सरिम, सब-जज्जी, काशी १॥)

३९—पण्डित देवदत्त शास्त्री अग्निहोत्री, दाऊदनगर, ज़िं० गया १॥)

४०—पण्डित कमलाकान्त पाण्डेय, हेड पण्डित, हरिश्चन्द्र हाईस्कूल, काशी १॥)

४१—श्रीयुत मिस्टर शिवलाल शाह, आई० सी० एस०, काशी ५)

४२—कुमार फूलसिंह आफ़ कामा, भिनगाराज कोठी, दुर्गाकुण्ड, काशी १॥)

४३—बाबू रामचरण प्रसाद, खजुरी, नई बस्ती बनारस १॥)

४४—बाबू रेमल, अध्यापक, कन्या महाविद्यालय, जालन्धरनगर १॥)

४५—बाबू राधारमण अग्रवाल, चौक बाज़ार, भूपाल १॥)

४६—पण्डित नौबत राय पाण्डेय, ऑडिटर, एकाउण्ट्स आफ़िस, भूपाल १॥)

४७—पण्डित व्यंकटेश गणेश दामले, दुर्गाघाट, काशी १॥)

(३) गोरखपुर के बा० भवानी प्रसाद श्रीनाथ अग्रवाल का इस्तीफ़ा उपस्थित किया गया और स्वीकृत हुआ।

(४) निम्नलिखित पुस्तकें धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईं:—

बाबू गोपालराम, गहमर, ग़ाज़ीपुर:—

ठनठन जासूस
तीन जासूस
चक्करदार खून
जासूस की डाली
बनबीर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लंका यात्रा

कुमार देवेन्द्र प्रसाद, आराः—

प्रेमपुष्पांजलि

भावना लहरी

श्री जुबिली नागरी भंडार, बीकानेर

वासन्तिक उपहार

श्री० नाथूलाल प्रेमी, हिन्दी ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय, बम्बईः—

हिन्दी जैन साहित्य का इतिहास, The Karma Philosophy, The Yoga Philosophy, गुण स्थान क्रमारोह, स्थूल भद्र स्वामि चरित्र, षट् पुरुष चरित, सम्यक्त्व परीक्षा, उपदेश शतक और माणिक चन्द्र दिगम्बर जैन ग्रन्थ माला सं० १ से ८ तक।

बाबू रामचन्द्रवर्म्मा, काशी—

मेवाड़ पतन

बाबू अम्बिका चरण चक्रवर्ती, काशीः—

हिन्दू समाज का विराट मूर्ति सन्दर्शन

स्मिथसोनियन इन्स्टीट्यूशन, वाशिंगटन, अमेरिकाः—

29th annual Report of the Burean of American Ethnology 1907–8

30th annual Report of the Burean of American Ethnology 1908-09

Annual Report of the Smith Sonian Institution 1915.

संयुक्त प्रदेश की गवर्नमेंण्टः—

District Gazetteers of the United Provinces-Lucknow Division

" " " —Jhansi Division.

Indian antiquary for January 1917.

खरीदी गईं:—

ज्योतिषशास्त्र, चन्द्रहास, भारतसार, त्रिशती, जापान का उदय, गुणों की पिटारी, खूबचन्द चिकित्सा, राजरत्नाकर, स्वदेश सेवा, औरंगजेब नामा तीसरा भाग, गुप्तभेद, मदनकोश, क्या स्त्री डिबिया, गृह लक्ष्मी, माधवी कंकण, आर्य्यमल्ल विद्या प्रकाश, मेगास्थिनीज का भारतवर्षीय वर्णन सती सुचरित्र, वाशिंगटन, भारतवर्ष में हार्ड अमेरिका की स्वतंत्रता का इतिहास, सुकाल स्वास्थरक्षा, विलायती दम्पति, पत्र-चन्द्रिका चँवरपुराण, करुण कहानी; रोहिणी, मिहि व्याकरण बोध, संगीत रत्नमंजूषा, अपर व्याकरण बोध, श्यामाश्याम, अनुताप, प्रणपालन, विदुर दूसरा भाग, हृदय कंटक, आसमानी लाश, निर्व गतत्त्व दर्पण, हिन्दू विवाह आदर्श, विचित्र जा और व्यापार शिक्षा।

स्वामी सत्यदेवजी प्रयाग

अमेरिका भ्रमण

शिक्षा का आदर्श

लेखन कला

हिन्दी का सन्देश

राष्ट्रीय सन्ध्या

बाबू द्वारिकादास केदारबक्स भगत, क

कत्ताः—श्रीरामनामामृत

बाबू कृष्णचन्द्र, चौखम्भा, काशी—

उत्तर रामचरित्र

लाला भगवानदीन, काशी—

शिवाबावनी

पंडित श्यामनारायण काशी—

भूमिहार ब्राह्मण परिचय

चौबे राधाचन्द्र जी वैद्य, मथुरा—

विष्णुसहस्रनाम का भाषापद्यानुवा

मुंशी कृष्णानन्द, काशी—

सुखी रहने का उपाय

बाबू जगदीशनारायण सिंह गहलोत-जो

पुर—मारवाड़ का संक्षेप वृतान्त

कृषि सुधार सीरीज़ नं० १

वर्णप्रभाकर

सूरज का सांड (३ प्रतियां)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पण्डित नीलमणि शर्म्मा-राजिम-रायपुर
श्रीकरुणा पच्चीसी
प्रह्लादनाटक
पं० अम्बिकापद मुखोपाध्याय, गाज़ीपुर—
साकार रहस्य
बाबू कृष्णाप्रसाद सिंह चौधरी-बांकीपुर—
पैसा
पण्डित जीवानन्द शर्म्मा-तिर्हुत—
विद्याप्रचारिणी सभा, मुज़फ़्फ़रपुर आदर्श हिन्दू विवाह

(५) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

---

(१२)

साधारण सभा।

शनिवार तारीख २६ मई १९१७-सन्ध्या के ५½ बजे

स्थान-सभाभवन।

(१) तारीख २८ अप्रैल १९१७ का कार्य-विवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।

(२) प्रबन्धकारिणी समिति के १० फरवरी १९१७, ६ मई १९१७ और ८ मई १९१७ के कार्य-विवरण सूचनार्थ पढ़े गए।

(३) सभासद होने के लिये निम्नलिखित सज्जनों के फ़ार्म उपस्थित किए गए।

१—बाबू बनवारीलाल गुप्त वकील, महावन, मथुरा १॥)

२—बाबू मदनमोहन लाल बल्लभदास, मेनेजर, सेठ प्रेमजी काला की धर्मशाला, गोकुल, ज़िला मथुरा १॥)

३—बाबू नानकचन्द, गवर्नमेण्ट पेन्शनर, मथुरा १॥)

४—बाबू मिश्रीलाल बोहरा, गोलपाड़ा मथुरा १॥)

५—पण्डित लक्ष्मीनारायण शर्म्मा, गौड़ हेड-मास्टर, स्कूल पुष्कर, ज़ि० अजमेर ५)

६—लाला लल्लोमल, नयाबाजार, मथुरा ५)

७—बाबू द्वारकाप्रसाद भरतिया, नयाबाज़ार, मथुरा ५)

८—पण्डित दयाशंकर पाठक, रोशनगंज, मथुरा ५)

९—पण्डित राधा वल्लभ पाठक, मथुरा ५)

१०—बाबू गोकुलचन्द जगन्नाथ वकील, सतघरा, मथुरा ५)

११—पण्डित आनन्दी प्रसाद चतुर्वेदी, मथुरा ३)

१२—पण्डित इन्द्रदत्त शर्म्मा, अ० मंत्री, कन्या गुरुकुल सभा, काशी १॥)

१३—बाबू गया प्रसाद, ६५।२२५ बड़ी पियरी, काशी १॥)

१४—सन्त बेला सिंह जी, नेपाली खपड़ा, काशी १॥)

१५—पण्डित कमला प्रसाद दूबे, नवाब की ड्योढ़ी, काशी १॥)

१६—बाबू बनवारीलाल गुप्त, कासगंज, ज़ि० एटा ३)

१७—श्रीयुत जी० सी० नरंग एम० ए०, पी० एच० डी० बैरिस्टर, लाहोर

१८—स्वामी शान्तिपुरी, काश्मीरीमठ, मेमारी, बंगाल १॥)

१९—स्वामी सुमेश्वरानन्द भारतीय, काश्मीरी मठ, मेमारी, बंगाल १॥)

२०—बाबू मीठूराम गोड, काश्मीरीमठ, मेमारी, बंगाल १॥)

२१—लाला गोपाल नारायण श्रीवास्तव, काश्मीरीमठ, मेमारी, बंगाल १॥)

२२—बाबू भोलानाथ ख़ानदेशी, काश्मीरीमठ, मेमारी, बंगाल १॥)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२३—बाबू टीकमदास धुमनमल, सखरानी हवेली, लखीगेट, शिकारपुर, सिन्ध ५)

२४—पण्डित कविनारायण गोसेवक, गौशाला उद्धवकुण्ड गोवर्द्धन, मथुरा (॥)

२५—पण्डित आनन्द वल्लभ गोवर्द्धन, मथुरा३)

२६—संगवी कृष्णसिंह जी रईस, गोवर्द्धन, ज़ि० मथुरा ३)

निश्चय हुआ कि नं० १८ से २३ तक के फार्म आगामी अधिवेशन में उपस्थित किए जाँय और शेष सज्जन सभासद चुने जाँय।

(४) मुंशी भगवानदीन तथा चार अन्य सभासदों का पत्र उपस्थित किया गया जिस में उन्होंने लिखा था कि प्रबन्धकारिणी समिति ने तारीख़ ६ मई १९१७ के अधिवेशन में जो यह निश्चय किया है कि मनोरंजन पुस्तकमाला और हिन्दी शब्दसागर का मूल्य भविष्य में वह समिति निश्चय किया करेगी, उससे वे लोग अत्यन्तुष्ट हैं, और चाहते हैं कि नियम ४३ (१०) के अनुसार इस सभा में इस निश्चय पर विचार किया जाय।

बाबू रामचन्द्र वर्म्मा के प्रस्ताव तथा बा० कृष्णानन्द के अनुमोदन पर बहुत कुछ वादविवाद के अनन्तर अधिक सम्मति से निश्चित हुआ कि प्रबन्धकारिणी समिति के ६ मई १९१७ के १५ वें निश्चय में से "इसमें मनोरंजन पुस्तकमाला और हिन्दी शब्दसागर भी सम्मिलित हैं" के स्थान पर "परन्तु जब तक मनोरंजन पुस्तकमाला और हिन्दी शब्दसागर समाप्त न होजाय तब तक उनके मूल्य में किसी प्रकार का परिवर्तन न हो" रख दिया जाय।

(५) निम्नलिखित पुस्तकें उपस्थित की गईं—

मदरास की गवर्नमेंट—

South Indian Inscriptions vol. II Part. V Pallaya copper Plate grants from vehrpalayan and Tandantottam.

संयुक्तप्रदेश की गवर्नमेण्ट—

District Census Statistics of 1911—
" " Partabgarh District
" " Etah District
" " Budaun District
" " Gonda District
" " Unao District
" " Dehradun District
" " Mainpuri District
" " Farrukhabad District

बनारस म्युनिसिपल बोर्ड—

Administration Report for 1916-

पण्डित श्रीनाथ शास्त्री वेताल, काशी—

जैमिनिसूत्रम्
शिक्षापत्रीध्वान्तभास्कर
लघुपराशरी
एकादशीव्रतनिर्णय
ईशावास्य उपनिषद

(६) सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि प्रबन्धकारिणी समिति का ध्यान नियम ३९ (२) और ४३ (९—१) पर दिलाया जाय और उससे प्रार्थना की जाय कि वह अपने ६ मई १९१७ के वें निश्चय पर पुनः विचार करे।

(७) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

(१३)

साधारण सभा।

शनिवार ता० ३० जून १९१७ ई० सन्ध्या के ६ बजे

स्थान—सभाभवन।

(१) गत अधिवेशन (ता० २६ मई १९१७) का कार्य-विवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।

(२) प्रबन्धकारिणी समिति के ता० १५ और २९ जून के कार्य-विवरण सूचनार्थ उपस्थित किए गए।

(३) सभासद होने के लिए निम्नलिखित सज्जनों के फार्म उपस्थित किए गए:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१—बाबू बटुकप्रसाद सिंह, बुकिंग क्लार्क, पियरी कलां, काशी १॥)

२—बाबू गङ्गाप्रसाद अरोड़ा, नीलकण्ठ, काशी १॥)

३—बाबू बैजनाथ जी, कोसी कलां, मथुरा १॥)

४—पण्डित जयनाथप्रसाद शर्म्मा, मोहर्रिर थाना, तहसील कामा, राज्य भरतपुर ३)

५—बाबू हरिप्रसाद मेनेजर, कोसी, ज़ि० मथुरा १॥)

६—बाबू गयालाल, कोसी, ज़ि० मथुरा ३)

७—बाबू रामनिरंजन लोहिया, पशुपतेश्वर महादेव, काशी १॥)

८—स्वामी शान्तिपुरी, काश्मीरीमठ, मेमारी, बंगाल १॥)

९—स्वामी सुमेश्वरानन्द भारतीय, काश्मीरी मठ, मेमारी, बंगाल १॥)

१०—बाबू मीठूराम गोड, काश्मीरीमठ, मेमारी बंगाल १॥)

११—लाला गोपालनारायण श्रीवास्तव, काश्मीरी मठ, मेमारी, बंगाल १॥)

१२—बाबू भोलानाथ खानदेशी, काश्मीरीमठ, मेमारी, बंगाल १॥)

१३-प्रोफ़ेसर रामदास गौड़, पियरी, काशी १॥)

निश्चय हुआ कि नं० ८ से १२ को छोड़ कर अन्य सज्जन सभासद चुने जाँय। नम्बर ८ से १३ तक के फ़ार्म प्रस्ताव-कर्ता और अनुमोदनकर्ता के हस्ताक्षर न होने के कारण लौटा दिए जाँय।

(४) निम्नलिखित सभासदों के इस्तीफ़े उपस्थित किए गए।

१—बाबू घनश्याम दास, मऊनाटभञ्जन

२—बाबू लक्ष्मण दास, कोसी, ज़ि० मथुरा

३—पण्डित नाथूराम शर्म्मा, नाहन सरमौर

निश्चय हुआ कि इन सज्जनों के इस्तीफ़े स्वीकार किए जाँय।

(५) निम्नलिखित पुस्तकें उपस्थित की गईं और स्वीकृत हुईं।

राय पूरनचन्द्र पटना—

मेघदर्पण

बाबू जगन्नाथ प्रसाद, बिलासपुर—

छन्द सारावली

श्रीयुत गंगाधर बापूजी वैद्य, मंदसौर (मालवा)-

स्वधर्म सर्वस्व

क्रिश्चियन लिटरेचर सोसायटी, यूनाइटेड प्रोविन्सेज़ ब्रांच, इलाहाबाद—

नरसिंग लेसन्स

पण्डित गणेशदत्त शर्म्मा वैदिक "इन्द्र" आगर—

उपदेश कुसुमांजलि

स्वास्थ्य उपदेश

गड़ा धन

पण्डित चन्द्रकुमार मिश्र, मुंगेर—

हिन्दी नाटिका

पण्डित इन्द्रदत्त शर्म्मा, काशी—

वेद अपौरुषेय हैं

वैदिक शिक्षा दर्पण

कन्या शिक्षावली (प्रथम भाग)

ईश्वर प्रार्थना

संस्कृत प्रवेशिका

एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल—

Journal and Proceedings Vol XIII, 1917, No. 1.

Memories of the Society Vol. V, No. 4, and Vol VI pp 1-74

मदरास की गवर्नमेंण्ट—

A triennial catalogue of manuscripts collected during the trieunium 1913-14 to 1915-16 for the Government oriental manuscripts library, Madras Vol. II-Part I-Sanskrit A. B. & C.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंजाब की गवर्नमेंण्ट—

Annual Progress Report of the Superintendent, Hind and Buddhist monuments, Northern circle for the year ending 31st March 1916.

संयुक्तप्रदेश की गवर्नमेंण्ट

Indian Education in 1915-1916.

श्रीयुत पी० जे० मेहता एम० डी० बैरिस्टर, अहमदाबाद—

Vernaculars as media of Institution in Indian Schools and Colleges.

पण्डित दुर्गाप्रसाद बी० ए० एल० एल० बी० वकील मेरठ आचार्यप्रभाकर—

Indian antiquary for February 1917

(६) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

प्रबंध कारिणी समिती।

रविवार तारीख १ जुलाई १९१७ संध्या के ५½ बजे

उपस्थित

बाबू श्यामसुन्दर दास बी० ए०
बाबू गौरीशंकर प्रसाद बी० ए० एल० एल० बी०
बाबू शिवप्रसाद गुप्त
बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा

कोरम पूरा न होने के कारण अधिवेशन न हो सका और निश्चय हुआ कि अब यह अधिवेशन मंगलवार ता० ३ जूलाई १९१७ ई० को सन्ध्या के ६ बजे किया जाय।

(१२)

मंगलवार तारीख ३ जुलाई १९१७ सन्ध्या के ६ बजे

स्थान—सभाभवन।

उपस्थित

बाबू गौरीशंकर प्रसाद बी० ए० एल० एल० बी०
बाबू श्यामसुन्दर दास बी० ए०
बाबू शिवप्रसाद गुप्त
बाबू हरिहर नाथ बी. ए.
पं० गोविन्दराव जोगलेकर बी० ए० एल० एल० बी०
बाबू हरि प्रसाद पालधी बी. ए.
बाबू बालमुकुन्द बर्म्मा

(१) निम्नलिखित बजेट तैयार किया गया और इसके तैयार करते समय वेतन-वृद्धि के लिये पं० विश्वेश्वरनाथ क्लार्क, बा० देवनन्दन क्लार्क, पं० कन्हैयालाल पुस्तकाध्यक्ष और सुखनन्दन मिश्र चपरासी के प्रार्थना पत्र भी विचारार्थ उपस्थित कर दिए गए थे।

आय का ब्योरा।

जमा।

५।१४।)	५ गत वर्ष की बचत
२१५०)	सभासदों का चन्दा
१२५०)	पुस्तकों की बिक्री
१५००)	हिन्दी पुस्तकों की खोज
६००)	पृथ्वीराज रासो की बिक्री
२०)	नागरीप्रचार
१२५)	फुटकर आय
२८०)	पारितोषिक
७५०)	पुस्तकालय
८०००)	हिन्दी कोश
५०००)	विशेष सहायता
५०)	पुस्तकों के लिये पुरस्कार
१२६००)	मनोरंजन पुस्तकमाला
३२८३९।)५	

खर्च।

१५५०)	कार्यकर्ताओं का वेतन
४३२०)	छपाई
५००)	डाकव्यय
१२०)	नागरीप्रचार
३५०)	पारितोषिक
८६०)	पुस्तकालय
१०००)	हिन्दी पुस्तकों की खोज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५५०) फुटकर व्यय	
(७६००) मनोरंजन पुस्तकमाला	
८०००) हिन्दी कोश	
२५) मरम्मत	
११९।) अमानत	
(२००) विशेष	
(१८९४।)	

व्यय का ब्योरा।

कार्यकर्ताओं का वेतन।

सहायक मंत्री (वेतन तथा पुरस्कार)			६५०)
क्लर्क १		”	१९२)
क्लर्क २		”	१५४)
क्लर्क ३	...	...	१२०)
चपरासी	...	..	९०)
कर्राश	...	...	६०)
माली	...	...	३६)
मेहतर	...	...	१२)
संखाकुली	...	...	१४)
पहरेदार	...	...	९६)
पत्रिका के सम्पादक		...	१२०)
फुटकर	...	...	६)
			१५५०)

हिन्दी कोश।

चार संख्याओं की छपाई		...	२५००)
सम्पादकों आदि का वेतन		...	३५००)
पिछले बिल	...	...	२०००)
			८०००)

पुस्तकालय।

पुस्तकाध्यक्ष	...	...	१४४)
चपरासी	...	...	७२)
पुरस्कार और फुटकर		...	१८)
पुस्तकालय की सूची		...	२००)
बिलकें	...	...	१५४)
जिल्दबन्दी	...	...	७२)
अलमारी ५	...	...	२००)
			८६०)

छपाई

नागरीप्रचारिणी पत्रिका की १२ संख्या		१११०)
ना० प्र० ग्रन्थमाला की ४ संख्याएँ		७४०)
ना० प्र० लेखमाला	...	५००)
सभा की वार्षिक रिपोर्ट	...	२००)
फुटकर	... ...	७५।=)॥
पिछले बिल	... ...	१६९४॥-)॥
		४३२०)

(२) निश्चय हुआ कि १९१६-१७ के लिये स्वीकृत बजेट से फुटकर व्यय में ५२॥=)॥।, मनोरंजन पुस्तकमाला में ६४५॥।, और हिन्दीकोश में ५१९॥≡)॥ जो इस वर्ष में अधिक व्यय हो गया है वह स्वीकार किया जाय।

(३) निश्चय हुआ कि इस वर्ष के प्रारम्भ से प्रत्येक पुस्तक और पत्रिका आदि का जुदा जुदा लेखा डाला जाय और वर्ष का हिसाब हानि लाभ के चिट्ठे के रूप में दिखलाया जाय। इस चिट्ठे में जिसका जितना देना वा पाना हो वह भी दिखलाया जाय।

(४) निश्चय हुआ कि मंत्री और उपमंत्री के चुनाव की नामावली में बाबू बांकेबिहारीलाल का नाम भी बढ़ा दिया जाय।

(५) बाबू शिवप्रसाद गुप्त का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि सभा उनके व्यय से भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र रचित "भारतदुर्दशा" नाटक का नवीन संस्करण छपवावे और इस पुस्तक की बिक्री से आय हो जाने पर उनका मूलधन उन्हें लौटा दे।

निश्चय हुआ कि इस पुस्तक की २००० प्रतियों का नवीन संस्करण प्रकाशित किया जाय। पुस्तक का मूल्य सवा आना रक्खा जाय और इण्डियन कापी राइट ऐक्ट के अनुसार जिस प्रकार "सत्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरिश्चन्द्र" के विषय में खड्गविलास प्रेस के स्वामी को सूचना दी गई थी उसी प्रकार इस पुस्तक के विषय में भी दी जाय।

(६) उपसमिति की यह रिपोर्ट उपस्थित की गई कि हिन्दू विश्वविद्यालय की भिन्नभिन्न परीक्षाओं के लिये निम्नलिखित हिन्दी पुस्तकों को नियत करने की प्रार्थना की जाय।

१ रामचरित मानस (संक्षिप्त संस्करण)
२ सूरदास की विनय पत्रिका (संशोधित)
३ राजा लक्ष्मणसिंह की शकुन्तला (गद्य)
४ सौ अजान और एक सुजान (संशोधित)
५ भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र का "सत्य हरिश्चन्द्र" नाटक

इन्टर्मिडियट की परीक्षा।

१ मलिकमोहम्मद जायसी की पद्मावती (संक्षिप्त संस्करण)
२ दीनदयालगिरि का अन्योक्ति कल्पद्रुम
३ कबीर बचनावली भाग १ (अयोध्या सिंह उपाध्याय
४ प्रिय प्रवास पाठ १ से १० ("
५ बा० राधाकृष्णदास रचित राजस्थान केशरी अथवा बाबू देवीप्रसाद का चन्द्रकला भानुकुमार नाटक
६ राधाकृष्णदास रचित स्वर्णलता
७ पण्डित गंगाप्रसाद अग्निहोत्री रचित निबन्धमालादर्श
८ जसवन्त सिंह का भाषा भूषण

बी० ए० की परीक्षा

१ कबीर बचनावली भाग २
२ गुमान मिश्र का नैषध
३ सूरदास का भ्रमरगीत
४ बिहारी सतसई
५ केशव के उत्तम उत्तम अंशों का संग्रह
६ चन्द का रासो
७ गद्य काव्य मीमांसा
८ पण्डित महावीर प्रसाद द्विवेदी का "नैषध चरित चर्चा"
९ बा० रामदास गौड़ रचित 'भारीभ्रम"
१० मुद्राराक्षस
११ अलंकार मञ्जूषा
१२ परीक्षा गुरु
१३ श्यामा स्वप्न
१४ हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास (मु० भगवान दीन का हिन्दीभाषासार संग्रह पढ़ाया जा सकता है)

निश्चय हुआ कि यह सूची हिन्दू विश्वविद्यालय को भेज कर प्रार्थना की जाय कि वह इस पर पूर्णतया विचार करे। साथ ही हिन्दी साहित्य सम्मेलन की परीक्षा समिति के पास भी यह सूची विचारार्थ भेजी जाय।

प्रबन्धकारिणी समिति

शनिवार ता० २८ जुलाई १९१७ सन्ध्या के ६ बजे

स्थान—सभाभवन।

उपस्थित

बाबू गौरीशंकर प्रसाद बी० ए० एल एल० बी० सभापति

रेवरेण्ड ई० ग्रीव्स
बाबू हरिप्रसाद पालाधि बी० ए०
बाबू हरिहर नाथ बी० ए०
पण्डित रामनारायण मिश्र बी० ए०
बाबू शिवप्रसाद गुप्त
बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा
पण्डित गोविन्दराव जोगलेकर
पण्डित कृष्णराव पावगी

(१) तारीख २९ जून, १ जूलाई और ९ जूलाई १९१७ के कार्य-विवरण पढ़े गए और स्वीकृत हुए।

(२) सभा का चोबीसवां वार्षिक-विवरण पढ़ा गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चय हुआ कि इसमें अंग्रेजी के शब्दों के स्थान में यथासाध्य हिन्दी के शब्द रक्खे जांय, हिन्दी शब्दसागर और मनोरंजन पुस्तकमाला का आय व्यय लिखा जाय और इनके कितने पृष्ठ छपे हैं यह भी दिया जाय। पण्डित रामनारायण मिश्र और बाबू वेणी प्रसाद जी से प्रार्थना की जाय कि वे इस रिपोर्ट को ठीक कर दें।

(३) बाबू शिवप्रसाद गुप्त के प्रस्ताव पर निश्चय यह हुआ कि आगामी वर्ष से प्रत्येक विभाग के निरीक्षक अपनी वार्षिक रिपोर्ट मंत्री के पास भेजा करें, वे रिपोर्टें रक्षापूर्वक सभा कार्यालय में रक्खी जाँय और उनके आधार पर वार्षिक विवरण लिखा जाया करे।

(४) बाबू शिवप्रसाद गुप्त के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ कि सभा का वार्षिक-हिसाब जब तक दो जांच कर्ताओं द्वारा जँचवा न लिया जाय तब तक वह वार्षिक-रिपोर्ट में न छापा जाय।

(५) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

---

(१)

प्रबन्ध कारिणी समिति।

शनिवार तारीख १८ अगस्त १९१७ सन्ध्या के ५½ बजे

स्थान—सभाभवन।

(१) गत अधिवेशन (तारीख २८ जुलाई १९१७) का कार्यविवरण पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय।

(२) नागरीप्रचारिणी पत्रिका, नागरीप्रचारिणी ग्रन्थमाला और नागरीप्रचारिणी लेखमाला के सम्पादकों, नागरी प्रचार, सुबोध व्याख्यान और सभा के पुस्तकालय के निरीक्षकों के चुनाव का विषय उपस्थित किया गया।

निश्चय हुआ कि ना० प्र० पत्रिका सम्पादक समिति द्वारा सम्पादित हो जिसके सदस्य बाबू बांके बिहारीलाल, बाबू वेणीप्रसाद और बाबू मुरारीदास जी हों; लेखमाला के सम्पादक बाबू हरिहरनाथ और ग्रन्थमाला के सम्पादक बाबू श्यामसुन्दर दास बी० ए० चुने जाँय। नागरी प्रचार के निरीक्षक सेयुएल पी० सी० दास, सुबोध व्याख्यान के निरीक्षक पण्डित रामनारायण मिश्र बी० ए० और पुस्तकालय के निरीक्षक बाबू शिवप्रसाद गुप्त नियत किये जाँय।

(३) मंत्रियों के कार्यविभाग का विषय उपस्थित किया गया।

निश्चय हुआ कि डाक का प्रतिदिन देखना और उस पर उचित आज्ञा लिखना, सभा की छपी हुई रसीदों पर हस्ताक्षर करना, वाउचरों पर रुपया देने की आज्ञा देना, सभा के प्रत्येक विभाग का समय समय पर निरीक्षण करना और आवश्यकता पड़ने पर त्रुटियों की सूचना निरीक्षक तथा प्रबन्धकारिणी समिति को देना मंत्री का कर्तव्य होगा। साधारणतः पत्रों पर हस्ताक्षर करना, मंत्री की सर्वथा सहायता करना तथा उनकी अनुपस्थिति में उनका सब कार्य करना उपमंत्री का कर्तव्य होगा। मनिआर्डरों पर हस्ताक्षर करना, वी० पी० आदि भेजने तथा पुस्तकों की मांग आने पर उनके भेजने का प्रबन्ध करना, सभा के आय व्यय का यथाक्रम हिसाब रखना और उसके सम्बन्धी रजिस्टरों पर हस्ताक्षर करना, सभा के लेखकों तथा नौकरों को काम बांटना और उनके कार्य का निरीक्षण करना, मंत्री की आज्ञा के अनुसार प्रति दिन की डाक में आए हुए पत्रों का उत्तर देना, सभा के कार्यलय और पुस्तक भण्डार का निरीक्षण करना तथा कार्यालय सम्बन्धी अन्य कार्यों का प्रबन्ध करना सहायक मंत्री का कर्तव्य होगा।

(४) प्रबन्धकारिणी सम्मिति के प्रधान और उप प्रधान का चुनाव।

निश्चय हुआ कि प्रधान पण्डित रामनारायण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिश्र और उपप्रधान गोस्वामी रामपुरी जी चुने जाँय।

(५) सैयद मीर अली का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि मुसलमान भाइयों को इस सभा का सभासद बनाने के लिये कुछ उपाय करना चाहिए।

निश्चय हुआ कि सैयद मीर अली से इसके लिये उपाय पूछा जाय।

(६) पुरोहित देवनाथ जी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने "वीरविनोद" के कुछ अंश की नक़ल करने की आज्ञा मांगी है।

निश्चय हुआ कि पुरोहित देवनाथ जी को इसकी आज्ञा दी जाय।

(७) बाबू रामचन्द्र वर्म्मा आदि ७ सभासदों का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि नियमों के संशोधन और परिवर्तन आदि के सम्बन्ध में वार्षिक अधिवेशन में यथेष्ट रूप से विचार नहीं हुआ। अतः इन पर पुनः विचार करने के लिये सभा का एक विशेष अधिवेशन किया जाय।

निश्चय हुआ कि समिति बाबू श्याम सुन्दर दास जी की इस सम्मति से सहमत है कि जो बात वार्षिक अधिवेशन में निश्चित हो चुकी है उस पर प्रबन्धकारिणी समिति वा साधारणसभा को विचार करने का अधिकार नहीं है।

(८) साहित्य सम्मेलन की परीक्षा के लिये निरीक्षकों की नियुक्ति के सम्बन्ध में विचार निश्चय हुआ कि ता० १९ अगस्त १९१७ को प्रातःकाल बाबू गौरीशंकरप्रसादजी तथा बाबू हरिहरनाथ जी तथा सायंकाल मंत्री जी, तारीख २० अगस्त १९१७ को दोनों समय मंत्री जी निरीक्षण करें और उसके उपरान्त मंत्री जी कोश के सम्पादकों द्वारा निरीक्षण का प्रबन्ध कर लें।

(९) ठाकुर लक्ष्मणसिंह का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रान्तिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन के साथ होने वाली प्रदर्शिनी के लिये सभा से पुस्तकें माँगी थीं।

निश्चय हुआ कि सभा की प्रकाशित पुस्तकें और हस्तलिपि के पर्चे भेज दिये जाँय और हस्तलिखित पुस्तकें बाबू गौरीशंकर प्रसादजी अपने साथ लेते जांय और उन्हें अपने साथ ही लेते आवें।

(१०) सन् १९१७-१८ के बजट में कार्यकर्ताओं को जो पुरस्कार देना निश्चित हुआ है उसे देने के सम्बन्ध में निश्चय हुआ कि जिन लेखकों का कार्य पिछड़ा न हो और जिनके कार्य से मंत्री जी संतुष्ट हो उनको पुरस्कार दे दिया जाय।

(११) सन् १९१५-१६ के हिसाब के विषय में पण्डित निष्कामेश्वर मिश्र जी (जाँचकर्ता) की रिपोर्ट उपस्थित की गई।

निश्चय हुआ कि (५) पांच रुपया प्रति मास तक सहायक मंत्री बिना मंत्री की आज्ञा के फुटकर व्यय कर सकते हैं जिसका मासके अन्त में एक ही वाउचर बनाकर उसके हवाले से रोकड़ में लिख दिया करें और उसकी रसीद दाम पाने वालों से लेने की आवश्यकता नहीं है। और रिपोर्ट पढ़ी गई।

(१२) बाबू शिवप्रसाद गुप्त तथा अन्य सज्जनों का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि सभा का वर्ष विक्रमीय सम्वत के अनुसार माना जाय, सभा के हिसाब किताब में हिन्दी की तिथि लिखी जाय और पत्र व्योहार में भी यथासाध्य हिन्दी तिथि लिखी जाया करे।

निश्चय हुआ कि यह प्रस्ताव बाबू शिवप्रसाद जी की उपस्थिति में उपस्थिति किया जाय।

(१३) गत वर्ष प्रबन्ध कारिणी समिति के अधिवेशनों में उपस्थित न होने अथवा सम्मति न भेजने के कारण रेवरेण्ड ई० ग्रीव्स, बाबू माधव प्रसाद, लाला राधामोहन गोकुल जी, बाबू काशी प्रसाद जायसवाल, राय साहब लाला दयाराम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहनी, बाबू छन्नू लाल, डाक्टर सर रामकृष्ण भाण्डार कर और रायबहादुर पण्डित विष्णुदत्त शुक्ल के जो स्थान खाली हुए हैं उनकी पूर्ति के लिये ८ सज्जनों के चुनाव का विषय उपस्थित किया गया।

निश्चय हुआ कि रेवरेण्ड ईव्ग्रीव्स के स्थान पर बाबू केशवदास, बा० माधवप्रसाद जी के स्थान पर बाबू वेणीप्रसाद और बाबू छन्नूलाल के स्थान पर रेवरेण्ड ई० ग्रीव्स चुने जाँय। ला० राधामोहन गोकुल जी के स्थान पर बाबू दामोदर दास खण्डेवाल, बाबू काशीप्रसाद जायसवाल के स्थान पर रायपूरन चन्द्र नियत किए जाँय। पंजाब से रायसाहब लाला दयाराम साहिनी ही सदस्य रहें, डाक्टर सर रामकृष्ण भाण्डारकर के स्थान पर बम्बई प्रान्त के सभासदों से पूछा जाय और रायबहादुर पण्डित विष्णुदत्त शुक्ल के स्थान पर पण्डित माधवराव सप्रे चुने जाँय।

(१४) पण्डित जगन्नाथ पुच्छरन का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि उनका नाम सभा के सभासदों में बिना चन्दा के ही लिखा जाय।

निश्चय हुआ कि उनसे प्रार्थना की जाय कि वे कृपा पूर्वक वार्षिक चन्दा देकर सभा की सहायता करें।

(१५) प्रयाग की नागरी प्रवर्धिनी सभा का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने नागरी प्रचारिणी पत्रिका बिना मूल्य दिए जाने की प्रार्थना की थी।

निश्चय हुआ कि इसके सम्बन्ध में बाबू पुरुषोत्तम दास टंडन से सम्मति मांगी जाय।

(१६) बाबू ब्रजरजदास का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि यदि सभा उन्हें मनोरंजन पुस्तकमाला बिना मूल्य दिया करे तो वे परिवर्तन में सभा के पुस्तकालय के लिये "लीडर" भेजा करेंगे।

निश्चय हुआ कि मनोरंजन पुस्तकमाला की अब तक जितनी संख्याएं प्रकाशित हुई हैं उन्हें यदि वे खरीद लें तो लीडर के बदले में उन्हें पुस्तकमाला दी जाया करे।

(१७) सुखनन्दन मिश्र का प्रार्थना पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उसने ६ दिन की छुट्टी का वेतन जो कट गया है, दिये जाने की प्रार्थना की थी।

निश्चय हुआ कि रविवार का पूरा वेतन और ५ दिनों का आधा वेतन उसे दिया जाय।

---

(२)

प्रबन्धकारिणी समिति।

शुक्रवार तारीख ७ सितम्बर १९१७ सन्ध्या के ५ बजे

स्थान—सभाभवन।

(१) तारीख १८ अगस्त १९१७ का कार्य-विवरण पढ़ा गया।

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय।

(२) पण्डित ब्रजवल्लभ मिश्र का पत्र उपस्थित किया गया जिसके साथ उन्होंने हिन्दी कानूनी कोश के ७ फार्म जिसे वे नए क्रम से छपवा रहे हैं सभा की सम्मति के लिये भेजे थे।

निश्चय हुआ कि यह बाबू गौरीशंकर प्रसाद, बाबू श्यामसुन्दरदास बी० ए० तथा बाबू पुरुषोत्तमदास टंडन के पास सम्मति के लिए भेजे जाँय।

(३) बाबू रामचन्द्र बर्म्मा तथा अन्य सज्जनों का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि नियमावली में कोई ऐसा नियम यदि हो जिसमें प्रबन्ध कारिणी समिति या साधारण सभा को वार्षिक अधिवेशन की निश्चित बात पर विचार करने का निषेध हो तो उसकी सूचना उन्हें दी जाय अन्यथा ऐसी अवस्था में जब वार्षिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिवेशन में कोई नियम-विरुद्ध कार्रवाई हो गई है तो उस पर अवश्य फिर से विचार करने का इन्हें पूर्ण अधिकार है।

निश्चय हुआ कि यह पत्र बाबू श्यामसुन्दरदास जी की सेवा में सम्मति के लिये भेजा जाय

(४) जिन पुस्तकों की प्रतियाँ अब सभा के स्टाक में नहीं रह गई हैं उनकी सूची उपस्थित की गई।

निश्चय हुआ कि ये पुस्तकें कब छपी थीं, कितना मूल्य है, कितने दिनों में इनकी बिक्री हुई, इनके छपाने में क्या व्यय होगा। इसके विवरण के सहित यह सूची पुनः उपस्थित की जाय।

(५) बाबू मुरारीदास और बाबू बाँकेबिहारी लाल के पत्र उपस्थित किए गए जिनमें उन्होंने नागरीप्रचारिणी पत्रिका का सम्पादन करना अस्वीकार किया था।

निश्चय हुआ कि बाबू बेणीप्रसाद जी से प्रार्थना की जाय कि वे इस वर्ष नागरीप्रचारिणी पत्रिका का सम्पादन करें।

(६) पण्डित व्रजभूषण ओझा का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रस्ताव किया था कि महात्मा कर्मचन्द मोहनचन्द गांधी सभा के आनरेरी सभासद चुने जाँय।

निश्चय हुआ कि यह प्रस्ताव स्वीकृति के लिये साधारण सभा में भेजा जाय।

(७ बाबू शिवप्रसाद गुप्त का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रस्ताव किया था कि जिन सज्जनों का कुछ चन्दा बाकी रहने वा पुस्तकें रह जाने के कारण पुस्तकालय के सहायकों में से नाम काट दिया गया हो उनका नाम सहायकों में पुनः लिखने के पहले उनसे ५) रु० अवश्य जमा करवा लिया जाय।

निश्चय हुआ कि जिन कारणों से किसी सहायक का नाम काटा गया हो उसके दूर करने पर वे पुनः सहायक हो सकेंगे।

(८) बाबू केशवदास जी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रबन्धकारिणी समिति का सदस्य होना अस्वीकार किया था।

निश्चय हुआ कि बाबू केशवदास जी से प्रार्थना की जाय कि वे इस सम्बन्ध में पुनः विचार कर अपना त्याग पत्र लौटा लें

(९) बाबू बेणीप्रसाद का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि समिति के अधिवेशनों की जो सूचनाएँ छपा करती हैं वे स्पष्ट नहीं होतीं।

निश्चय हुआ कि भविष्य में समिति की सूचना साफ होनी चाहिए जिससे पढ़ने में सुगमता हो।

(१०) बाबू हरिहरनाथ, मुंशी भगवानदीन और बाबू गोपालदास का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने कुछ नियमों पर अघट घटना, तुलसी शिक्षावली और बिनय पत्रिका की लगभग आठ आठ सौ प्रतियाँ सभा को देने के लिये लिखा था।

निश्चय हुआ कि ये पुस्तकें बाबू गौरीशंकर प्रसाद जी के पास सम्मति के लिये भेजी जाँय।

(११) निश्चय हुआ कि नागरीप्रचारिणी पत्रिका के सम्पादक को पुस्तकालय के अंग्रेज़ी विभाग से पुस्तकें लेने का अधिकार दिया जाय।

(१२) निश्चय हुआ कि बाबू श्यामसुन्दरदास और पण्डित रामनारायण मिश्र की सम्मति के अनुसार सभा की पुस्तकों का विज्ञापन समाचार पत्रों में छपवाया जाय।

(१३) निश्चय हुआ कि बनारस म्युनिसिपल बोर्ड से प्रार्थना की जाय कि वह अपने नए उपनियमों (Bylows) का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करावे। सभा इसका उचित प्रबन्ध कर सकती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नेहलीला—कवि आनन्दघन कृत। मूल्य =) डाकव्यय)॥

विरुदावली—प्रसिद्ध पद्माकर कवि रचित। वीररसात्मक सर्वांग पूर्ण काव्य है। मूल्य ।=) डा० -)

तेन्दुचरित—हिन्दी के एक मात्र जन्मदाता भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रजी की जीवनी। मूल्य ॥) डा० -)

नामा—कवि श्रीधर रचित। इस ऐतिहासिक काव्य में दिल्ली के बादशाह बहादुरशाह के पुत्रों जहांदारशाह और फ़र्रुखसियर की लड़ाई का वर्णन है। काव्य-रचना सरल सुन्दर प्रभावोत्पादक और मनोरंजक है। मूल्य ॥।)

ग्रंथावली—कविवर भूषण के समस्त काव्य ग्रन्थों का संग्रह। वीररस की ऐसी अनूठी कविताओं का संग्रह और कहीं देखने को न मिलेगा। मूल्य ॥।)

मृदुवाणी—जोधपुर निवासी मुंशी देवीप्रसाद द्वारा लिखित। इसमें भारतवर्ष की विदुषी स्त्रियों की संक्षिप्त जीवनी और साथ ही उनके काव्य तथा साहित्य सम्बन्धी अन्य कार्यों का उल्लेख है। मूल्य ॥)

दर्शन—साहित्याचार्य पंडित रामावतार पाण्डेय एम० ए० लिखित। इसमें यूरप के दर्शन शास्त्र का पूर्ण इतिहास अत्यन्त सुन्दरता से दिया है। मूल्य ॥)

व्यायाम—इसमें बालिकाओं के व्यायाय करने के लिए ५१ चित्रों द्वारा तरह तरह से ड्रिल करना दिखलाया गया है। मू० ।=)

लेखप्रणाली—अर्थात् हिन्दी के शार्टहेण्ड की पुस्तक। मूल्य ॥) डा०)॥

रासो—जोधराज कविकृत। यद्यपि इस काव्य में भी उसी कथा का वर्णन है जिसका वर्णन हम्मीरहठ के विषय में किया जा चुका है किन्तु इसकी काव्य-प्रणाली बड़ी ही रोचक और हृदय-ग्राहिणी है। मूल्य १)

न्द्र—अयोध्या के प्रातःस्मरणीय महाराज हरिश्चन्द्र का चरित्र मनोहर छन्दों में। मू० =)

तेजा—राजपुताने के एक प्रसिद्ध वीर का वृत्तांत। =)

ग्रंथावली—अनन्य कवि के ग्रन्थों का संग्रह। मूल्य ≡)

शिक्षा—बालकों की शिक्षा किस प्रकार होनी चाहिए इसका इसमें सविस्तर वर्णन है मू० ।)

सुधार—प्रसूति का गृह में किन किन बातों का ध्यान रखना चाहिए इसका इसमें वर्णन है। मूल्य ॥)

वाले रोग और उनसे बचने के उपाय— मूल्य १)

बन्ध शिक्षा—राजाओं और रईसों को अपनी रियासत के प्रबन्ध में किन बातों का ध्यान रखना चाहिए इसका इसमें वर्णन है। पुस्तक बहुत ही उपयोगी है। मू० ॥)

मंत्री नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनोरंजन पुस्तकमाला

अर्थात्

हिंदी के सौ उत्तम उत्तम ग्रंथों की पुस्तकावली ।

अब तक निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

(१) आदर्श-जीवन—लेखक रामचंद्र शुक्ल ।
(२) आत्मोद्धार—लेखक रामचंद्र वर्म्मा ।
(३) गुरु गोविंदसिंह—लेखक वेणीप्रसाद ।
(४) आदर्श हिंदू १ भाग—लेखक मेहता लज्जाराम शर्म्मा ।
(५) ,, २ ,, ,,
(६) ,, ३ ,, ,,
(७) राणा जंगबहादुर—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा ।
(८) भीष्म पितामह—लेखक चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्म्मा ।
(९) जीवन के आनंद—लेखक गणपत जानकीराम दूबे बी. ए. ।
(१०) भौतिक-विज्ञान—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी ।
(११) लालचीन—लेखक वृजनंदन सहाय ।
(१२) कबीरवचनावली—संग्रहकर्त्ता अयोध्यासिंह उपाध्याय ।
(१३) महादेव गोविंद रानडे—लेखक रामनारायण मिश्र बी. ए. ।
(१४) बुद्धदेव—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा ।
(१५) मितव्यय—लेखक रामचंद्र वर्म्मा ।
(१६) सिक्खों का उत्थान और पतन—लेखक नंदकुमार देव शर्म्मा ।
(१७) वीरमणि—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम. ए. और शुकदेवबिहारी मिश्र बी. ए.
(१८) नेपोलियन बोनापार्ट—लेखक राधामोहन गोकुलजी ।
(१९) शासनपद्धति—लेखक प्राणनाथ विद्यालंकार ।
(२०) हिंदुस्तान, पहला खंड—लेखक दयाचंद्र गोयलीय बी. ए. ।
(२१) ,, ,, दूसरा खंड— ,, ,, ,,
(२२) महर्षि सुकरात—लेखक वेणीप्रसाद ।
(२३) ज्योतिर्विनोद—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी. ।
(२४) आत्मशिक्षण—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम० ए० और शुकदेव बिहारी मिश्र बी.

प्रत्येक पुस्तक का मूल्य १) है समस्त ग्रंथमाला के स्थायी ग्राहकों से ।।।) लिया जाता है। डा० ब

मिलने का पता—

मंत्री—नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Registered No. A 414 [संख्या ३—६

नागरीप्रचारिणी पत्रिका।

सितंबर, अक्तूबर, नवम्बर, दिसंबर १९१७

सम्पादक—वेणीप्रसाद।

सब भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल। बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल॥
तासु विलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल। निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सबको मूल॥
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार। सब देशन सों लै करहु, भाषा माँहि प्रचार॥
उन्नति करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न। राजकाज दरबार में, फैलावहु यह रत्न॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र।

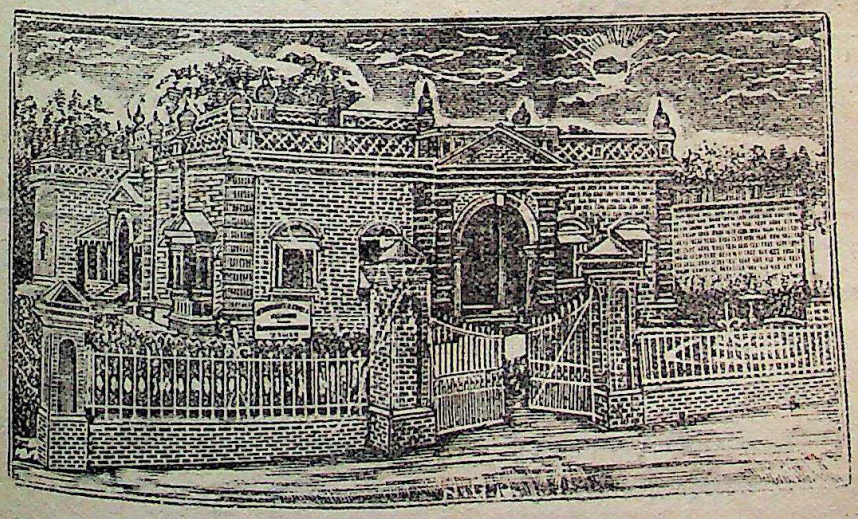

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित।

गणपति कृष्ण गुर्जर द्वारा श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस, काशी में मुद्रित।

वार्षिक मूल्य ३॥) प्रति संख्या =)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय सूची ।

१—नागरी प्रशंसा (कविता) ... ४९
२—अष्टम हिन्दी साहित्य सम्मेलन ... ५०
३—हिन्दी साहित्य विद्यालय, काशी ... ५२
४—नागरीप्रचारिणी सभा का वार्षिकोत्सव ५३
५—द्वितीय राष्ट्र भाषा सम्मेलन, कलकत्ता ६८
६—आर्य भाषा और जातीयता ... ७५
७—प्रोफेसर भोंदू ७८
८—पृथ्वी की आयु ९२
९—प्राचीन भारतकी लेख (लिपि) सामग्री १०४
१०—आचार्य जगदीशचंद्र बसु का व्याख्यान ११२
११—लोकांतर यात्रा ... ...
१२—अदालतों में नागरी ... ...
१३—द्वितीय हिंदी साहित्य सम्मेलन पीटर मेरित्सबर्ग ... ...
१४—एक मतलब की बात ... ...
१५—काशी नागरीप्रचारिणी सभा के नियम ...
१६—काशी नागरीप्रचारिणी सभा का कार्य विवरण ... ...
१७—हिंदी के सामयिक पत्रों का इतिहास ...
१८—आत्मधर्म्म सम्मेलन ... ...

मुफ्त ! मुफ्त !! मुफ्त !!!

धन्वन्तरी ।

यह आर्युवेदीय मासिक पत्र योग्य वैद्य, डाक्टर और हकीमों को बिना मूल्य भेजा जाता सर्व साधारण को नहीं ।

मैनेजर धन्वन्तरी विजयगढ, अलीगढ

पदक ।

सभा द्वारा उत्तमोत्तम विषयों पर लेख लिखने के लिये प्रति वर्ष स्वर्ण और रजत दिए जाते हैं । सन् १९१८ में इनके लिये निम्नलिखित विषय नियत हैं:—

छन्नूलाल स्वर्ण पदक—नगरों का निर्माण ।

राधाकृष्णदास रजत पदक—प्राचीन भारतवर्ष की शासन प्रणाली ।

रेडिच रजत पदक—मनुष्य का भोजन ।

इन विषयों पर लेख सभा में ३१ दिसम्बर १९१८ के पूर्व आजाने चाहिएँ ।

हरिहरनाथ बी० ए०
मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा काशी

सूचना ।

सभा के २९ वें नियम के अनुसार सब सभासदों को सूचना दी जाती है कि इस वर्ष अन्त में प्रबन्धकारिणी समिति से निम्नलिखित सज्जनों के स्थान खाली हो जायँगे—(१) पं० रामनारायण मिश्र बी० ए० काशी (२) बाबू गौरीशंकर प्रसाद बी० ए० एल एल बी० काशी (३) रेवरेंड ई० एम० (४) पं० गोविन्दराव जोगलेकर काशी (५) बाबू श्यामसुन्दर दास बी० ए० लखनऊ (६) डाक्टर रामकृष्ण भण्डारकर, बम्बई और (७) पं० माधवराव सप्रे, रायपुर । आगामी वार्षिक अधिवेशन में इन सज्जनों के स्थान पर नवीन चुनाव होगा तथा सभापति- उपसभापति, मंत्री और उपमंत्री भी चुने जायंगे । अतः सभासदों से प्रार्थना है कि नवीन चुनाव के लिए उन्हें जिन महाशयों के लिये मत देना करना हो उसकी सूचना वे कृपापूर्वक ११ जून १९१८ तक सभा को दे दें ।

हरिहरनाथ बी० ए०
मंत्री नागरीप्रचारिणी सभा काशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

भाग २२ } सितंबर, अक्टूबर, नवम्बर, दिसंबर १९१७ । { संख्या ३—६

नागरी प्रशंसा ।

(कवित्त)

दीपन की जालसी रसाल मुक्तमाल किधौं,
रतनि की अवलि नवल ओप आगरी ।
जीवन अधार बुधजन मन हंसन की,
सुवरण जोति पोत परम उजागरी ।
हरण तिमिर पुंज हिमकर कर सम,
माधुरी सी मधुर पीयूष पुट पागरी,
गागरी गुणन भरी सरल सुहागरी सी,
भव्य भोग भागरी सी दिव्य देवनागरी ॥१॥

पन्नालाल (प्रेमपुंज वा पुंज)
रिटायर्ड हेडमास्टर
पतमादपुर जिला आगरा ।

अष्टम हिन्दी साहित्य सम्मेलन ।

स्वागतकारिणी समिति
इन्दौर ता० ९।११।१७

प्रिय सम्पादक महोदय,

कृपया यथा शीघ्र इस पत्र के साथवाले लेख को अपने अमूल्य पत्र में स्थान प्रदान कीजिये । यदि सम्मेलन के सम्बन्ध में अपने विचारों को अपने पत्र में प्रकट कर स्वागतकारिणी समिति को सफलता का मार्ग प्रकाशित करेंगे तो एतदर्थ उक्त समिति आप की कृतज्ञा होगी ।

भवदीय—
सरजूप्रसाद, मन्त्री ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अष्टम हिन्दी-साहित्य सम्मेलन ।

गत पूर्व सप्ताहों में कितने ही सामयिक पत्रों ने टिप्पणियाँ कर तथा कितने ही हिन्दी प्रेमियों ने पत्र लिख कर हमसे यह बात जाननी चाही थी कि इस वर्ष हिन्दी-साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन कब तक होगा, स्वागतकारिणी समिति क्या कर रही है। सम्मेलन के सभापति कौन सज्जन होंगे, इत्यादि इत्यादि। सर्वसाधारण की जानकारी के लिए इन सब बातों को बताना स्वागतकारिणी समिति अपना कर्तव्य समझती है। समाचारपत्रों के पाठकों से यह बात छिपी नहीं है कि इस समय इन्दौर नगर में प्लेग का प्राबल्य है। प्लेग का प्राबल्य ही एक मात्र ऐसा कारण है जिससे सम्मेलन की तिथियां अब तक निर्णीत नहीं हो सकीं। इस बार सम्मेलन का अधिवेशन जो कि अष्टम अधिवेशन होगा, प्लेग के कारण नवम्बर या दिसम्बर में तथा सन् १९१८ के जनवरी महीने के पूर्व भी नहीं हो सकता, क्योंकि यह बात अनुभव से जानी हुई है कि इन्दौर नगर में जनवरी महीने के पूर्व तक प्लेग का प्रकोप पूर्णतया निःशेष नहीं होता। इसलिये इस बार सम्मेलन का अष्टम अधिवेशन सम्भवतः ईस्टर की छुट्टियों में होगा। स्वागतकारिणी समिति सम्मेलन के सम्बन्ध का अपना कार्य कर रही है। इंदौर राज्य के ज़िलों में हिंदी प्रचार का आन्दोलन कराना उसने आरंभ कर दिया है। इस कार्य को उसकी ओर से दो प्रचारक सुचारु रूप से कर रहे हैं। ये प्रचारक सम्मेलन के व्यय के लिए धन भी एकत्र करते हैं। स्वागतकारिणी समिति शीघ्र ही मध्यभारत की अन्यान्य रियासतों में भी हिन्दी प्रचार का आन्दोलन करने के लिए तथा स्वागतकारिणी समिति के सहायतार्थ धन संग्रह करने के निमित्त प्रचारक भेजनेवाली है। ग्वालियर, इंदौर, रीवां, सैलाना और सीतामऊ के नरनाथों ने अष्टम हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट की है। सम्मेलन सम्बन्धी व्यय के लिए अब तक स्वागतकारिणी समिति को लगभग साढ़े आठ सौ रुपये प्राप्त हो चुके हैं, तथा लगभग तैंतीस सौ रुपये के वचन मिल चुके हैं। जिन विषयों पर लेख लिखाए जाँयगे उनकी विषय सूची स्वागतकारिणी समिति ने बहुत पहले ही समाचार पत्रों में प्रकाशित करा दी थी। विषय-सूची में लेखकों से यह प्रार्थना की गई थी कि "वे उन विषयों पर लेख लिखने की कृपा करें; लेख ३१ अक्तूबर सन् १९१७ तक मंत्री साहित्य विभाग, अष्टम हिन्दी साहित्य सम्मेलन स्वागतकारिणी समिति, तुकोगंज इंदौर के पते पर भेजे जाने चाहिए।" किन्तु खेद है अब तक केवल दो एक लेख प्राप्त हुए हैं। स्वागतकारिणी समिति की इच्छा थी और अब भी है कि सम्मेलन होने के पूर्व ही लेखमाला प्रकाशित कर दी जाय। किन्तु हिन्दी-लेखकों की इस प्रकार की ढिलाई के कारण स्वागतकारिणी समिति को अपनी इस इच्छा की पूर्त्ति होना कठिन दिखाई देता है। अब भी समय है। यदि लेखक महाशय हमारी प्रार्थना पर ध्यान देंगे और ३१ दिसम्बर तक लेख भेज देने की कृपा करेंगे तो सम्मेलन होने के पूर्व लेखमाला निस्सन्देह प्रकाशित हो जायगी। तो भी लेखक महाशयों से कृपा कर स्वागतकारिणी समिति को यह सूचना तो अभी से ही दे देनी चाहिये कि वे अमुक विषय पर लेख लिख रहे हैं और वह इस अवधि तक समाप्त होकर स्वागतकारिणी समिति को मिल जायगा।

स्वागतकारिणी समिति से संबंध रखने वाली अन्यान्य बातें भी समाचार पत्रों में यथा समय प्रकाशित हो चुकी हैं। फिर भी यदि किसी हिन्दीप्रेमी को कोई बात पूछनी हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे हमसे पत्र व्यवहार करने की कृपा करें।

सम्मेलन के इस अष्टम अधिवेशन के सभापति श्रीमहाशय होंगे इस बात को भी हम यहाँ हिन्दी-प्रेमियों की उत्कण्ठा दूर करने के लिए प्रकट कर देना चाहते हैं। उससे उनकी उत्कण्ठा भी दूर हो ही जायगी किन्तु हमें पूर्ण विश्वास है कि उससे उनको परम आनन्द भी प्राप्त होगा।

सम्मेलन के इस अष्टम अधिवेशन के सभापति का आसन जो सज्जन ग्रहण करेंगे उनका नाम है हिन्दीहितैषी महामान्य महात्मा मोहनदास कर्मचन्द गांधी। महात्मा गांधी जी की अध्यक्षता में इस बार का सम्मेलन कैसी अभूतपूर्व सफलता प्राप्त करेगा इसका अनुमान समाचारपत्रों के हिन्दी-प्रेमी पाठक, जो कि हिन्दी के संबंध के उनके अमूल्य विचारों और भावों को समय समय पर पढ़ते रहते हैं, सहज ही कर सकते हैं।

सरजूप्रसाद (रायसाहेब)
मन्त्री—स्वागतकारिणी समिति।

अष्टम हिन्दी साहित्य सम्मेलन ।

हिन्दी साहित्य प्रदर्शनी के नियम ।

१ यह प्रदर्शनी अष्टम हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अवसर पर इन्दौर नगर में होगी। यह प्रदर्शनी सम्मेलन की तिथियों के दो दिन पूर्व आरम्भ हो कर सम्मेलन समाप्त होने के दो दिन बाद तक रहेगी।

२ हिन्दी के नए और पुराने पत्र, जो मिल सकेंगे, इस प्रदर्शनी में रक्खे जावेंगे।

३ हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्य-सेवियों के चित्र भी जो प्राप्त हो सकेंगे प्रदर्शित किये जावेंगे।

४ प्राचीन हिन्दी साहित्यसेवियों की हस्त-लिपियाँ भी संगृहीत की जावेंगी।

५ हिन्दी की हस्तलिखित और प्रकाशित प्राप्य पुस्तकें एकत्रित की जावेंगी।

६ भारतवर्ष में हिन्दी की जितनी ग्रन्थमालाएँ हैं उनकी पुस्तकों की एक एक प्रति प्रदर्शनी में रक्खी जावेगी।

७ शिलालेख, ताम्रलेख तथा अन्यान्य हिन्दी सम्बन्धी वस्तुओं का यथासाध्य संग्रह किया जावेगा।

८ प्रान्तीय भाषाओं के मासिकपत्र तथा ग्रन्थ-मालाओं का यथासाध्य प्रदर्शन किया जावेगा; जिससे हिन्दी के पत्रों और ग्रन्थों के साथ उनकी तुलना की जा सके।

९ जो लोग प्रदर्शनी के लिये पुस्तकादि कोई वस्तु भेजेंगे उन्हें वह वस्तु प्रदर्शनी के बाद दो सप्ताह के भीतर रजिस्ट्री द्वारा अवश्य लौटा दी जावेगी। परन्तु भेजनेवालों को चाहिए कि हस्तलिखित पुस्तकें तथा मूल्यवान वस्तुएँ रजिस्ट्री द्वारा भेजें।

१० प्रदर्शनी में दिखाने योग्य पुस्तकादि भेजने-वालों को अपनी वस्तुएँ तथा छपे हुए फार्म पर उनका विवरण ३१ जनवरी सन् १९१८ तक भेज देना चाहिए। छपे हुए विवरण पत्र स्वागतकारिणी समिति से मिल सकेंगे। विवरण में मुख्यतः निम्न-लिखित बातों का उल्लेख होगा।

(क) नाम शिलालेख, ताम्रपत्र पुस्तकादि, (ख) पृष्ठ संख्या और संक्षिप्त विवरण, (ग) ग्रन्थ-कर्ता का नाम, (घ) कब का लिखा है, (ङ) मूल्य, (च) भेजनेवाले का नाम और पूरा पता और (छ) विशेष।

११ प्रदर्शनी में वस्तु भेजनेवालों को यह आवश्यक है कि अपनी वस्तुओं की फेहरिस्त की दो प्रति वस्तुओं के साथ भेजें, जिसमें से एक प्रदर्शनी-कमेटी के पास रहेगी और दूसरी भेजने-वाले को रसीद स्वरूप लौटा दी जावेगी।

१२ जो वस्तुए प्रदर्शनी में आवेंगी, उन पर किसी प्रकार की फीस नहीं ली जावेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३ प्रदर्शनी में आई हुई वस्तुओं की जवाबदेही मंत्री स्वागतकारिणी समिति की होगी।

१४ प्रदर्शनी में जो वस्तुएँ आवेंगी, उनके मँगाने तथा भेजने का व्यय प्रदर्शनी कमेटी देगी।

१५ प्रदर्शनी में शिला लेख, ताम्रपत्र पुस्तकादि भेजनेवाले महाशय यदि भेजी हुई वस्तुओं का मूल्य लिख कर विक्रय के लिये अनुमति पत्र भेजेंगे तो निर्दिष्ट मूल्य पर वे वस्तुएँ यदि कोई खरीदना चाहेगा तो उसके हाथ बेंच दी जावेंगी और प्राप्त मूल्य प्रेषक के पास भेज दिया जावेगा। जो महाशय इस विषय में पत्रव्यवहार करना चाहें वे कृपा कर मंत्री साहित्य विभाग, अष्टम हिन्दी साहित्य सम्मेलन स्वागतकारिणी समिति, तुकोगंज इंदौर के पते से करें।

बनारसीदास चतुर्वेदी,
मंत्री 'साहित्य विभाग'

हिन्दी साहित्य विद्यालय, काशी।

गत ४ नवम्बर १९१७ को काशी के ला० भगवानदीन जी के गृह पर कुछ हिन्दी प्रेमियों ने एकत्रित होकर यह निश्चय किया कि गत दो वर्षों से जो हिन्दी साहित्य के अध्यापन एवं सम्मेलन की परीक्षाओं के लिए परीक्षार्थियों को तैयार करने का कार्य अनिश्चित रूप से हो रहा है; जिसमें विद्यार्थियों को सुचारु रूप से सहायता नहीं मिलती यह अब एक संस्था के रूप में परिणत करके उसका स्थायी प्रबन्ध कर दिया जाय जिसमें परीक्षार्थियों को पूर्ण सहायता मिल सके एवं कार्य भी व्यक्तिगत न होकर संस्था के रूप में स्थायी हो। इसी उद्देश्य की पूर्त्ति के लिये निम्नलिखित प्रस्ताव उपस्थित किये गये और उपस्थित सज्जनों की सम्मति से स्वीकृत हुए।

१. विद्यालय का नामकरण—निश्चय हुआ कि 'हिन्दी-साहित्य विद्यालय' नाम रखा जाय।

२. विद्यालय के लिये स्थान का निर्णय-निश्चय हुआ कि स्थानीय सनातनधर्म्म विद्यालय के मंत्री जी से प्रार्थना की जाय कि वे उक्त विद्यालय में सायंकाल २ घंटे के लिये स्थान दें तथा आवश्यकतानुसार कुर्सी बेञ्च इत्यादि भी काम में लाने की आज्ञा दें और एक साइनबोर्ड बाहर लटकाने की अनुमति प्रदान करें।

३. विद्यालय का समय निर्णय—निश्चय हुआ कि शिक्षा का आधुनिक समय ६ से ८ तक सायंकाल में होगा एवं आवश्यकतानुसार इसमें परिवर्तन होता रहेगा।

४. आवश्यक व्यय के लिये प्रबन्ध—विद्यार्थी और अध्यापक गण यथासाध्य स्वेच्छानुसार कुछ नियमित द्रव्य से सहायता करें। यदि इससे न काम न चले तो अन्य नागरिक सज्जनों से अपनी आवश्यकता दिखला कर सहायता की प्रार्थना की जाय।

५. अध्यापकों का निश्चय, प्रबन्धकारिणी के सदस्यों तथा पदाधिकारियों का चुनाव—निश्चय हुआ कि अभी अरायजनवीसी तथा मुनीबी को छोड़ कर प्रथमा के कुछ विषय, मध्यमा के साहित्य, इतिहास, अर्थशास्त्र, धर्म्मशास्त्र, दर्शन, संस्कृत अनुवाद तथा उत्तमा का केवल साहित्य पढ़ाया जाय। समयानुसार उपयुक्त अवैतनिक अध्यापक मिलने पर शेष विषयों का भी प्रबन्ध किया जायगा।

निम्नलिखित सज्जनों ने अवैतनिक अध्यापन का कार्य करने की प्रतिज्ञा की है।

श्रीयुत पं० गोविन्दनारायण जी मिश्र, ला० भगवान दीन जी, कवि रामप्रिया जी पाठक साहित्याचार्य्य; प्रो० गंगाप्रसाद जी मेहता एम. ए., प्रो० जीवन शङ्कर याज्ञिक एम. ए., एलएल. बी., पं० बटुकप्रसाद मिश्र वैद्यरत्न, पं० रामप्रसाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाण्डेय, पं० श्रीकृष्ण जी शुक्ल बा० बद्रीदासजी, पं० वैजनाथदासजी, बा० कृष्णदेवप्रसादजी गौड। बा० भगवानदीन सभापति, पं० श्रीकृष्ण शुक्ल जी मंत्री, पं० केदारनाथ जी कोषाध्यक्ष नियत हुए।

उपर्युक्त पदाधिकारियों एवं निम्नलिखित ४ सज्जनों की एक प्रबन्धकारिणी समिति नियत हुई—पं० रामप्रसाद पाण्डेय, पं० बद्रीनाथ जी पाण्डेय पं० लक्ष्मीनारायण जी, बा० बद्रीदासजी, नियम और उद्देश्य—मंत्रीजी को तैयार कर आगामी बैठक के समय उपस्थित करने की आज्ञा दी गई।

सभापति को धन्यवाद देकर सभा विसर्जित हुई।

श्रीकृष्ण शुक्ल, मंत्री।

हिन्दी-साहित्य-विद्यालय, काशी की प्रतिष्ठा।

गत २ दिसम्बर १९१७ रविवार को हिन्दी के सुप्रसिद्ध विद्वान एवं द्वितीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभापति पं० गोविन्द नारायण मिश्र के सभापतित्व में विद्यालय की प्रतिष्ठा हो गई और अध्ययन का कार्य्य भी आरम्भ हो गया। वर्तमान में निम्नलिखित विषयों की शिक्षा दी जाती है—

(१) प्रथम परीक्षा के सम्पूर्ण विषय। मध्यमा के साहित्य, इतिहास, वैद्यक, दर्शन, धर्म शास्त्र, अर्थ शास्त्र, तथा दोनों अनुवाद। एवं उत्तमा का केवल साहित्य।

(२) शिक्षा का आधुनिक समय ६ से ८ बजे की रात्रि में है। समयानुसार समय में परिवर्तन होता रहेगा।

(३) विद्यालय का वर्तमान स्थान स्थानीय सनातन धर्म विद्यालय (पुराना पोस्ट आफिस) के बीचबाग में है।

शिक्षक सभी अवैतनिक एवं परमोत्साही हैं। शिक्षा अशुल्क दी जाती है।

दूसरे केन्द्रों के परीक्षार्थ तथा परीक्षार्थियों के लिये विशेष सुबिधा यह है कि उपर्युक्त विषयों में से किसी भी विषय में पाठ सम्बन्धी कुछ कठिनाई हो तो एक आने का टिकट आने पर वह शीघ्र पत्र द्वारा निवारण की जायगी।

सब प्रकार के पत्र आदि "मन्त्री, हिन्दी साहित्य विद्यालय" के पते से भेजने चाहिएँ।

श्रीकृष्ण शुक्ल,
मन्त्री।

गत मार्गशीर्ष शुक्ला १० रविवार को विद्यालय की प्र० का० समिति ने सदस्यों तथा पदाधियों में निम्नलिखित परिवर्तन तथा परिवर्द्धन किया।

पं० गोविन्दनारायण मिश्र	सभापति
ला० भगवानदीन	उप सभापति
पं० रामनारायण मिश्र बी० ए०	निरीक्षक
बा० हरिहरनाथ बी० ए०	सदस्य
बा० जगन्मोहन वर्मा	,,
पं० रामचन्द्र शुक्ल	,,
बा० कृष्णदेव प्रसाद गौड़	,,
ला० दातारामजी, कुञ्जगली	,,

श्रीकृष्ण शुक्ल,
मन्त्री।

नागरी प्रचारिणी सभा का वार्षिकोत्सव।

ता० ५ दिसंबर बुधवार को सभा का वार्षिकोत्सव बड़े समारोह के साथ हुआ। सभा के बाहर एक विशाल मंडप तोरण और वंदनवार से सुसज्जित किया गया था, जिसमें प्रायः एक सहस्र से अधिक सज्जन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपस्थित थे। मञ्च पर निम्न लिखित हिन्दी प्रेमी भी विराजमान थे—

पं० गोविन्दनारायण जी मिश्र
„ ब्रजभूषण मिश्र जी
„ श्यामसुन्दर त्रिपाठी
„ सरजूप्रसाद पाण्डेय
बाबू ठाकुरप्रसाद जी
राय ब्रजराजकृष्ण बहादुर (पटना) बी. ए., बी. एल.
बाबू गोपीनाथ वर्म्मा बी. ए., बी. टी. पटना
राय गोपालकृष्ण (पटना)
बाबू रामप्रसाद गुप्त (आरा)
बा० बलदेवदास मु० कमिश्नर
ठाकुर शिवकुमार सिंह
बाबू हरिप्रसाद पालधी
प्रोफेसर जीवनशङ्कर याज्ञिक ए., ए., एल. एल. बी.
„ गंगाशंकर मेहता एम० ए०
बाबू लालजी सिंह—सम्पादक क्षत्रियमित्र
„ शिवनाथप्रसाद बेरी, बी० ए०, एल० एल०बी०
पं० जानकीशरण त्रिपाठी
रेवरण्ड ई० ग्रीव्स
बाबू श्यामसुन्दरदास
बा० भगवानदास एम० ए०
पं० इकबालनारायण गुर्टू एम. ए., एल., एल. बी.
बाबू शिवप्रसाद गुप्त
रायबहादुर मु० रविनन्दनप्रसाद
पं० लक्ष्मीनारायण चौबे डिप्टी कलेक्टर
प्रिंसिपल शेषाद्री अय्यर, एम० ए०
मि० चपलानी एम० ए० प्रोफेसर

बाबू श्यामसुन्दरदास जी के प्रस्ताव और बाबू गौरीशंकर प्रसाद जी के अनुमोदन पर टिकरा के ठाकुर राजेन्द्र सिंह जी ने सभापति का आसन ग्रहण किया।

आरम्भ में कुछ गायन के पश्चात श्रीयुत हरिहर मणिक जी ने निम्नलिखित वंदना की।

(१)

जय जय जगदाधार जगत गुरु जय व्रजमंडन।
जय जय त्रिभुवन नाथ, जयति जय खलबल खंडन।
जय दानवकुल गंजन, जयजय जनमन रंजन।
जय जय खंजन नयन जयति जय भवभय भंजन।
जय गावत श्रुति गुन गाथ जै, रमानाथ असरन सरन
जय अनादि कारन करन जय जगमोहन दुखहरन॥

(२)

भुवमधि जम्बूद्वीप द्वीपसम अति छवि छायो।
तामें भारतखंड मनहुँ विधि आपु बनायो।
ताहू में अतिरम्य आरजावर्त मनोहर
सकल कर्म की भूमि धर्म्मरत जहँ के नर वर।
मनु वालमीकि व्यासादि से पूजनीय जहँ के अतिथ
भे मनुज अबौ जग के सबै मानत जिनकी आनँ नित।

(३)

जहँ हरि लिय अवतार राम कृष्णादि रूप धरि
जहँ विक्रम बलि भोज धरमनृप गे कीरति करि
जहँ की विद्या पाय भये जग के नर सिच्छित
जहँ के दाता सदा करत पूरन मन इच्छित।
जहँ गंगा सी पावन नदी हिम सों ऊँचो शैलवर
जहँ रत्न खानि अगनित लसत मानहुँ मनिमय सकल

तदन्तर सभा के उत्साही मन्त्री श्रीयुत हरिहरनाथ बी० ए० ने सभा का संक्षिप्त विवरण इस भाँति पढ़ सुनाया।

काशी नागरीप्रचारिणी सभा के उद्योगों का दिग्दर्शन।

मान्यवर सभापति महोदय तथा सज्जनवृन्द!

जगत्पिता परमेश्वर को धन्यवाद है जिसकी असीम कृपा से सभा ने अपने जीवन के पच्चीसवें वर्ष में पदार्पण किया है। अभी दो ही वर्ष हुए ऐसे ही अवसर पर आप लोगों को सभा का २२ वर्षों का विवरण सुनाया गया था। उसकी प्रतिलि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज भी आप लोगों को समर्पित हैं। इन दो वर्षों में सभा अपने निर्धारित मार्ग पर चलती रही है और सब प्रकार अपनी गति को बढ़ाती रही है। गत वर्ष का वार्षिक विवरण भी आज आपके हाथों में है। अतएव इस अवसर पर मेरा कर्तव्य आप लोगों को सभा के प्रधान कार्यों का दिग्दर्शन करा देना ही है।

काशी नागरीप्रचारिणी सभा, जिसका कीर्ति-सौरभ सारे भारतवर्ष को मुग्ध कर रहा है, तथा जिसके उदय से आज दिन तद्विरुद्ध भाषाओं के पक्षपातियों का भी बहुत कुछ भ्रम दूर हो गया है, १८९३ में स्थापित हुई।

हिन्दी को मुसलमानी राजभाषा की टक्कर से बहुत बड़ा आघात पहुँच गया था, यहाँ तक कि ग्रामों ही का आश्रय ले कर इसको अपनी रक्षा करनी पड़ी। उस अवस्था के अनुमान के लिए यह कहना कदाचित् पर्याप्त होगा कि नगरों में उर्दू का डंका पिट गया था सभ्य समाज की भाषा उर्दू कही जाती थी और हिन्दी के नाम से लोगों को गँवारी भाषा का ध्यान होता था।

ऐसे समय में नागरीप्रचारिणी सभा के जन्म की समता अवतार से देना अत्युक्ति नहीं हो सकती। यद्यपि हिंदी का अस्तित्व बहुत प्राचीन काल से था तथापि इस सभा को हिंदी भाषा की सभी सामग्री के लिये वैसा ही उद्योग करना पड़ा जैसा भगवान् शंकराचार्य को हिंदू धर्म के उद्धार के लिए करना पड़ा था।

सब से पहले सभा का ध्यान प्राचीन हिंदी पुस्तकों की खोज की ओर गया और इस काम में एशियाटिक सोसाइटी और सरकार ने सहर्ष सभा का हाथ बँटाया। एशियाटिक सोसाइटी ने १९०५ में कई ऐसी अज्ञात पुस्तकों का पता लगाया जिससे यह सिद्ध हुआ कि केशव दास के पहले भी काव्य लक्षणों के संबंध में अनेक ग्रंथ लिखे जा चुके थे। खोज का काम प्रायः उक्त सोसाइटी ही द्वारा होता रहा परंतु उसकी मंदगति संतोषप्रद न थी। सन् १८९९ में सरकार से ४००) रु० वार्षिक सहायता तथा सभा द्वारा तैयार की हुई रिपोर्ट को छपवा देने की स्वीकृति मिली जिससे लगभग एक वर्ष में २५७ नए ग्रंथों का पता लगाया गया था। सन् १९०२ में सरकार ने अपनी वार्षिक सहायता को बढ़ाकर ५००) रु० कर दिया और सन् १९१६ से १०००) कर दिया है। इस खोज के काम से हिन्दी तथा भारत के इतिहास की सामग्री में क्या वृद्धि हुई है यह खोज की रिपोर्टों द्वारा भली भाँति जाना जा सकता है।

इसी खोज द्वारा प्राप्त पुस्तकों के प्रकाशन के लिए सभा ने सन् १९०० में त्रैमासिक ग्रंथमाला निकलना आरंभ किया। इस माला में चंद्रावती सुजानचरित्र आदि कई महत्वपूर्ण ग्रंथ प्रकाशित हुए हैं।

प्रारंभ ही से सभा का संकल्प हिंदी में एक सर्वांग सुंदर कोष तैयार करने का था और उसने १२५) रु० महाराजा दर्भंगा से प्राप्त भी किया था परंतु जिसमें लाखों की आवश्यकता थी वहां इतने से क्या होता। बहुत दिनों तक यह कार्य स्थगित रहा। सन् १९०७ में सभा ने इसके करने का बीड़ा उठाया और सरकार तथा राजा महाराजाओं की सहायता प्राप्त कर बड़ी धूम धाम से सन् १९०८ से कार्यारंभ किया। यह कोष अंग्रेज़ी की Imperial Dictionary के ढंग का होगा अतएव यह सुगमता से अनुमान किया जा सकता है कि इस कार्य को निर्विघ्न समाप्त कर लेने के लिये कितने धैर्य और कितनी शांति की आवश्यकता है। हर्ष है कि अबलों इस कार्य में कोई विशेष विघ्न नहीं पड़ा है और इस समय 'र' का संपादन हो रहा है। आशा है कि यदि ऐसे ही कार्य होता रहा तो लगभग तीन वर्षों में संपूर्ण कोश साहित्यप्रेमियों के कर-कमलों को सुशोभित करेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह साहित्य-संस्था ही कैसी जिसमें साहित्य चंचरीकों को रसास्वादन का आनन्द लेने के लिये एक हरा भरा पुस्तकालय न हो। इसी विचार से अपने जीवन के पहले ही वर्ष में सभा ने नागरीभंडार के नाम से एक पुस्तकालय की स्थापना की। सन् १८९८ में स्वर्गीय बाबू गदाधर सिंह ने मानों लोने में सुगंध का संचार किया और अपना 'आर्यभाषा' नामक बहुत बड़ा पुस्तकालय और अपनी सारी संपत्ति सभा को अर्पित की। इस वृहद् पुस्तकालय में लगभग ७००० से अधिक हिंदी पुस्तकें उपस्थित हैं और भारतवर्ष में इसका जोड़ नहीं दिखाई देता।

हिंदी की विजय ही सभा का परम लक्ष्य था। अतएव अपनी दो ही वर्ष की अवस्था से इसे हिंदी के साम्राज्य स्थापन के निमित्त युद्ध आरंभ करना पड़ा। पहला मोर्चा अदालतों पर अधिकार जमाने के लिये लेना पड़ा। सभा की पहिली विजय Board of Revenue द्वारा सम्मनों को हिंदी और उर्दू दोनों में लिखे जाने की आज्ञा से प्राप्त हुई। परंतु दरख्वास्तों तथा अदालती अन्य कागज़ों पर अधिकार प्राप्त करने के लिये सभा को कई वर्षों तक अत्यंत धैर्य, पराक्रम तथा दक्षता के साथ घोर संग्राम करना पड़ा। उसी समय 'रोमन लिपि' का दल भी कुछ उपद्रव कर रहा था परंतु जिस रण-क्षेत्र में सभा के पैंफलेटरूपी भीषणास्त्रों का प्रयोग होता रहा उसमें उतरने का साहस रोमन दल को नहीं हुआ। अंततः १८ अप्रैल सन् १९०० को सभा की विजय हुई और प्रांतीय सरकार ने दरख्वास्तों तथा दावों के हिंदी में लिखे जाने, सम्मन, नोटिस अथवा अन्य ऐसे पत्रों के हिंदी और उर्दू में भरे जाने तथा वर्नाक्यूलर आफिसों के कार्यकर्ताओं का हिंदी जानना आवश्यक करने की आज्ञा दे दी। इधर रीवा और ग्वालियर नरेशों ने अपने राज्यों में हिंदी को पूर्ण अधिकार प्रदान किया। २० जून सन् १९०८ को प्रयाग हाईकोर्ट से यह अधिकार प्राप्त हुआ कि दस्तावेजों को दाखिल करते समय कोई उसका उर्दू अनुवाद देने को बाध्य न किया जाय। अब क्या था सभा के डिप्यूटेशन, एजेंट तथा पत्रों द्वारा हिंदी के राज्याभिषेक की ध्वनि समस्त भारतभूमि में गूँज गई। सन् १९०९ में भारतसचिव ने मानों राज्याभिषेक पर बधाई का यह संदेसा भेजा कि सिविल सर्विस के परीक्षार्थियों के लिये हिंदी और नागरीलिपि का भी जानना आवश्यक होगा।

विचारों की विभिन्नता से विविध हाथों में हिंदी के अनेक अथवा अनिश्चित स्वरूप हो जाने की आशंका से सभा ने भारतीय प्रामाणिक पंडितों की सम्मति लेकर भाषा की शैली का निर्धारण करते हुए विदेशी शब्दों के रूप, विभक्ति, प्रत्यय, बिंदु, चन्द्रबिंदु आदि विवादग्रस्त विषयों के संबंध में विशिष्ट सिद्धांतों को भी निर्धारित कर दिया।

आधुनिक काल में प्रचार के सब से साधक पत्र और पत्रिकाएं समझी जाती हैं अतएव सभा ने १८९६ में ही त्रैमासिक पत्रिका निकालना आरंभ कर दिया था जो आज प्रति मास सभा से सम्बन्ध रखनेवालों के हस्तगत होती है। *

भाषा के वैज्ञानिक अंश की पुष्टि के लिये सन् १८९८ में वैज्ञानिक कोश के बनाने का कार्य आरंभ कर दिया गया था और विविध विद्यालंकारों ने अत्यंत खोज और परिश्रम से सन् १९०६ में एक वैज्ञानिक कोश प्रस्तुत किया गया।

सभा हिंदी भाषा के सर्वांगपूर्ण व्याकरण बनवाने का प्रयत्न भी बहुत दिनों से कर रही है।

*इधर कई कारणों से पत्रिका समय पर नहीं निकल रही है, पर इस त्रुटि को दूर करने की यथा-साध्य चेष्टा की जा रही है। संपादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषा की ऐसी अवस्था में जब कि दिनों दिन उसमें कुछ न कुछ नवीनता ही निकलती रहती है, यह काम अत्यंत कठिन है। तथापि बड़े परिश्रम से संपूर्ण मान्य पण्डितों की सम्मति से सभा ने व्याकरण की शैली निर्धारित कर दी है जिसके अनुसार शीघ्र ही एक व्याकरण प्रकाशित हो कर विद्वानों की समीक्षारूपी कसौटी पर चढ़ेगा।

इस प्रकार हिंदी साहित्य की नींव दृढ़ और चिरस्थायी करके सभा का ध्यान उस साहित्य के निर्माण की ओर गया जिसके बिना किसी जाति की दशा तिरस्कृत, उसका जीवन अनिश्चित तथा उसकी स्थिति डाँवाडोल रहती है। यद्यपि हिंदी साहित्य की पूर्ति में प्राचीनों ने कुछ उठा न रक्खा था, सूरदास के भाव, तुलसी की भक्ति, केशव की पंडिताई, भूषण की वीरता, रहिमन की उक्ति, रसखान की रसिकता, बिहारी और मतिराम की रसज्ञता ने हिंदी का सिर ऊंचा कर रक्खा था तथापि समय के परिवर्त्तन, विचारों के हेर फेर और नवयुग की लालसाओं की पूर्ति के लिये नवीन रत्नों से हिंदी साहित्य मंडप को खचित करना सभा ने अपना परम कर्त्तव्य समझा। इसमें भी सभा की सफलता थोड़ी न रही। विद्वत्तापूर्ण साहित्य, इतिहास, शुद्ध पाठों के रामायण तथा अनेक स्फुट ग्रंथों को प्रकाशित कर यह सभा अब उस मणिमाला को गूँथ रही है जिससे अपने कंठ को सुशोभित करने में हिंदी साहित्य प्रेमी अपना बहुत बड़ा गौरव समझते हैं। लाइट आफ़ एशिया नामक अनोखा ग्रंथ भी हिंदी काव्य के सांचे में ढाला जा रहा है।

सभा का कार्यक्षेत्र विस्तृत और कर्त्तव्य विशाल है। अपना हाथ बंटानेवाले की आवश्यकता को अनुभव कर समय समय पर वह सहायक सभाओं का पोषणादि सदैव करती रही है। सन् १९१० के मई में उसने हिंदी साहित्य सम्मेलन नामक संस्था की सृष्टि की जिसके उद्योग से आज दिन भारतीय नवयुवकों में साहित्य का प्रेम जग गया है यहां तक कि अंग्रेज़ी उपाधि-प्राप्तों के हृदयों में भी हिन्दी साहित्य की तरंगे उमड़ रही हैं और उनकी दृष्टि में आज सम्मेलन की उपाधियों का वैसा ही आदर और गौरव है जैसा कि आंग्ल विद्यापीठों की उपाधियों का होता है।

काशी नागरीप्रचारिणी सभा के अनुपम पराक्रम के इस दिग्दर्शन मात्र ही से क्या कोई ऐसा हृदय है जो इसके धैर्य और वीरता द्वारा अर्जित साम्राज्य के आगे सिर झुकाने में हिचक सकता हो। कैसाही निष्ठुर हृदयवाला, कितना ही कठोर समालोचक क्यों न हो पर न्यायसंगत गौरव को मिटाने की सामर्थ्य वाङ्मनोतीत परमात्मा की सृष्टि में किसी को नहीं है। भारतीय मान्य नररत्नों ने दूर दूर से आ कर सभा के प्रति आदर भाव प्रकट किया है। अनेक लेफ़्टिनेंट गवर्नरों ने पदार्पण कर सभा को गौरवांजलि दी है। काश्मीर प्रमुख नरपतियों ने सभा का मान किया है। कई बार सहस्रों विद्यादिग्गजों ने सम्मिलित होकर सभा से सहानुभूति प्रगट की है। न्यायशील गवर्नमेंट तथा आंग्ल देशियों ने भी University Committee और International Congress of Orientalists में सभा को उच्च पद प्रदान किया था। विदेश में हिंदी प्रेमोत्पादन का प्रमाण इससे बढ़कर क्या होगा कि इंगलैंड और जर्मनी में भी सभा की पुस्तकों के एजेंट नियुक्त हैं। अमेरिका के Smithsonian Institution ने अपनी बहुमूल्य पुस्तकें सभा को भेंट की हैं।

परंतु सृष्टि कर्ता की लीला कुछ ऐसी है कि संसार में अपने आदर्श तक पहुंचनेवाले इनेगिने ही हुआ करते हैं। कुछ ऐसी माया है कि कार्य करते जाइये और कार्यक्षेत्र बढ़ता जाता है। यह वैचित्र्य सभी ओर समस्त भूमंडल में व्याप्त है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर सभा इसके प्रभाव से कैसे बची रह सकती है। अब भी सभा के सामने कर्तव्यों के पर्वत खड़े हैं और कार्यों का सागर उमड़ रहा है। अभी सभा ने प्राचीन साहित्य के क्षेत्र में प्रविष्ट होकर प्रकाशन तथा संपादन का कौशल बहुत थोड़ा ही दिखाया है। हिंदी कोश, व्याकरण, शैली निर्धारणादि सभी कुछ करने पर भी लेख शैली के प्रखर प्रवाह को बाँध कर समुचित प्रणाली में बहाने की सफलता सभा ने अब तक प्राप्त नहीं की है। अन्य भाषाओं को हिन्दी में कोई अथवा कितना हस्तक्षेप करने का अधिकार है इसका अब तक ऐसा प्रबल निर्धारण नहीं हुआ जो समस्त लेखकों को शिरोधार्य करना ही पड़े। अदालतों में अधिकार-प्राप्ति का स्वत्व पाकर भी अभी तक उसकी ऐसी रक्षा नहीं हुई कि उसे क्षति पहुंचानेवालों का साहस निर्मूल हो जाय। कितने ऐसे पोच हैं जो सभा की इस संपत्ति को चुराकर भी दंड से बच जाते हैं। अब भी हिंदी का साम्राज्य निर्विवाद नहीं हुआ। अब तक हिंदी कौमुदी ने अनेकों के तमोपूर्ण हृदय को प्रकाशित नहीं किया है! अबलों मोहरात्रि में खर्राटे भरनेवाले अधिकतर वकील और मुख्तारों के कानों तक हिंदी के डंके का शब्द सभा ने नहीं पहुँचाया। सभा ने अब तक हिंदी साहित्य पर, अंग्रेजी के उन कुप्रभावों पर प्रहार नहीं किया जिनके कारण गद्य और पद्य दोनों में भयंकर परिवर्त्तन हो रहा है। दुःख की एक बात यह है कि हमारे कार्यालय में उतना संतोषजनक कार्य नहीं हो सकता कि अपना काम सब समय पर कर सकें। कार्य अधिक है और कार्यकर्ता कम। इन सब के लिये सभा को एक बार फिर वही भीषण रूप धारण करना होगा जिसकी आवश्यकता सन् १९०० के पूर्व पड़ी थी।

हमें यह कहते भी कष्ट होता है कि धनाभाव से अननेरी एडिटर नियुक्त किए गए हैं जिससे हिसाब के जाचने में विलंब हो जाता है। हम अपना इस वर्ष का हिसाब भी आपके सामने बिना जचवाए उपस्थित करते हैं। इसमें हमें प्रति वर्ष कोई न कोई अड़चन हो जाया करती है।

हर्ष का विषय है कि सभा के सहायकों और पोषकों की असीम अनुकंपा से सभा की भुजाएं इतनी विशाल और बलवती हो रही हैं कि मुझे विश्वास हो रहा है कि जिस सर्वशक्तिमान् विश्वेश्वर ने उसे इतनी सफलता का भागी बनाया है वही इसको ऐसी शक्ति प्रदान करेगा जिससे सभा अवश्य अपने भविष्य कर्त्तव्यों के भार को सरलता पूर्वक उठा सकने के योग्य हो जायगी। एवमस्तु।

इसके अनन्तर हिन्दी शब्दसागर के प्रधान सम्पादक पं० रामचन्द्रशुक्ल जी ने निम्नलिखित स्वरचित कविता का पाठ किया।

हमारी हिंदी।

(१)

मन के धन वे भाव हमारे हैं खरे
जोड़ जोड़ कर जिन्हें पूर्वजों ने भरे
उस भाषा में जो है इस स्थान की,
उस हिन्दी में जो है हिन्दुस्तान की।
उसमें जो कुछ रहेगा वही हमारे काम का
उससे ही होगा हमें गौरव अपने नाम का।

(२)

'हम' को करके व्यक्त प्रथम संसार से
हुई जोड़ने हेतु सूत्र जो प्यार से,
जिसे थाम हम हिले मिले दो चार से,
हुए मुक्त हम रोने के कुछ भार से
उसे छोड़ कर और के बल उठ सकते हैं नहीं।
पड़े रहेंगे, पता भी नहीं लगेगा फिर कहीं।

(३)

पहले पहल पुकारा था जिसने जहाँ
जिन नामों से जननि प्रकृति को, वह वहाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सदा बोलती उनसे ही, यह रीति है।
हमको भी सब भाँति उन्हीं से प्रीति है।
जिस स्वर में हमने सुना प्रथम प्रकृति की तान को
वही सदा से प्रिय हमें और हमारे कान को।

(४)

'भोले भाले देशभाइयों से ज़रा
भिन्न लगें' यह भाव अभी जिनमें भरा,
जकड़ मोह से गए, अकड़ कर जो तने,
बानी बाना बदल बहुत बिगड़े, बने,
धरते नाना रूप जो, बोली अद्भुत बोलते,
कभी न कपट-कपाट को कठिन कंठ के खोलते,

(५)

अपनों से हो और, जिधर वे जा बहे
सिर ऊँचे निज नहीं, पैर पर पा रहे।
इतने पर भी बने चले जाते बड़े
उनसे जो हैं आस पास उनके पड़े।
अपने को भी जो भला अपना सकते हैं नहीं
उनसे आशा कौन सी की जा सकती है कहीं?

(६)

अपना जब हम भूल, भूलते आपको
हमें भूलता जगत्—हटाता पाप को।
अपनी भाषा से बढ़ कर अपना कहाँ?
जीना जिसके बिना न जीना है यहाँ।
हम भी कोई थे कभी, अब भी कोई हैं कहीं
यह निज वाणी-बल बिना बिदित बात होगी नहीं

रामचन्द्र शुक्ल

इसके बाद सभा के परम हितैषी काशी के प्रसिद्ध वकील बा० गौरीशंकर प्रसाद जी ने 'अदालतों में नागरी' शीर्षक निबंध पढ़ा।

अदालतों में नागरी।

कितने ही सज्जन जिनको किसी न किसी रूप है, चाहे हाकिम, चाहे वकील या उनके लेखक, चाहे मुकदमा लड़नेवाले होकर, अदालतों में काम पड़ता है बिना विचारे कह बैठते हैं कि अदालतों में भाषाओं अथवा अक्षरों के प्रयोग का झगड़ा क्यों खड़ा किया जाता है? किसी भाषा और किसी लिपि द्वारा काम होने से मतलब है। किन्तु, सज्जनो, काम होने से ही मेरा भी अभिप्राय है, किसी का काम होने से उसी काम तक नाता रहता है और कोई उसी काम को परिपूर्ण होने के साथ तथा उसकी परिपूर्णता के साथ साथ दूर तक उसका विस्तृत क्षेत्र अपने सम्मुख रखता है। आज इस बात को कहने की आवश्यकता नहीं है कि अदालतों में हिन्दी भाषा तथा नागरी लिपि का प्रवेश न होने से हमारे इन प्रान्तों में शिक्षा का कैसा अभाव हो रहा है और जिन प्रान्तों में वहां की भाषा और लिपि का व्यवहार है उनमें शिक्षा ने कैसा चमत्कार दिखाया है—इन बातों को कह कर समय व्यर्थ लेना नहीं चाहता—कितने ही अनुभवी विद्वानों का मत है कि यदि हिन्दी भाषा और नागरी अक्षरों का प्रयोग हमारी अदालतों में होता तो जनता की शिक्षा कई गुनी बढ़ जाती और अविद्या का घोर अंधकार दूर हो जाता। भाषा हिन्दी का होना एक विषय है और नागरी लिपि का प्रयोग एक दूसरा विषय है-नागरी अक्षरों के सम्बंध में निवेदन करने के पहिले संक्षेप में हिन्दी भाषासम्बन्धी कुछ बातें कह देना चाहता हूं-जब अदालतों की भाषा फ़ारसी थी उस समय बड़े बड़े अरबी और फ़ारसी के शब्द काम में लाए जाते थे। जब फ़ारसी उठा कर नई भाषा काम में लाई जाने लगी जिसका नाम उर्दू रखा गया है उस समय भी वही फ़ारसी और अरबी के शब्द प्रयोग होते रह गये। इतना अधिक समय बीता किन्तु वह चाल वैसी ही अब तक है। जिन भावों को सहज सर्व साधारण के बोध होने योग्य शब्दों में हम प्रगट कर सकते है उन्हें हठ करके पहले की रीति के अनुसार कठिन अरबी और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ़ारसी शब्दों के प्रयोग से ही प्रकट करते हैं—उदाहरण रूप से:—

हस्ब ज़ैल, विनाय मुख़ासिमत, आहिनी, नुकरई, तिलाई, मिस्सी, विरंजो, सर्क़ा इमारत, ख़िश्ती सङ्गी सिफ़ालेदोश इत्यादि से जो भाव प्रकट होते हैं उन्हें जनता के सुबोध-नीचे लिखे, झगड़े की जड़, लोहियां, सोनहली या सोने की, रुपहली या चाँदी की, ताम्बे की, पीतल की, चोरी मकान या घर, ईंटों का, पथरीला, खपरैल इत्यादि शब्दों से काम ले सकते हैं। मेरा कदापि यह अभिप्राय नहीं है कि उनके स्थानों में संस्कृत शब्दों का प्रयोग किया जाय यद्यपि मुझे संस्कृत शब्दों से बहुत प्रेम है। ऐसे सुबोध शब्दों के प्रयोग करने मे कोई सर्कारी नियम भी बाधक नहीं है किन्तु सरकारी आज्ञा है कि कठिन अरबी और फ़ारसी के शब्दों का प्रयोग न किया जाया करे, परन्तु हमारे कचहरी के काम करनेवाले इस प्रकार के कठिन शब्दों के प्रयोग करने में अपना गौरव अथवा अपनी विद्वत्ता समझते हैं—यदि कोई गवाह अपनी साक्षी में कहता है कि अमीन साहेब ने ताला तोड़ कर लोहे की संदूक से सोने की हसुली कुर्क की तो पेश्कार या वकील के मुहर्रिर इस भाव को यों लिखने में अपनी बड़प्पन मानते हैं-अमीन साहेब ने व शिकस्तगी क़ुफ़्ल संदूक़ आहिनी से हसली तिलाई कुर्क किया—बिचारा गवाह कुछ कहता है और उसका अभिप्राय कुछ ही लिखा जाता है—इसलिये मेरे विचार में तो इसमें सर्कार का कोई दोष नहीं है दोष है केवल शिक्षा प्रणाली का—नियमों का बिना उल्लंघन किये वरन उनका पालन करते हुए हमलोग सहज शब्दों का प्रयोग कर सकते हैं और सुबोधता के साथ काम हो सकता है—जो मैंने अभिप्राय उलट फेर होजाने की आपत्ति पहले कही है वह तो शब्दों के अदल बदल से हो जाती है किन्तु घोर आपत्ति उर्दू अर्थात् फ़ारसी लिपि में लिखे जाने के कारण होती है। यदि नागरी अक्षरों को काम में लाया जाय तो बहुत अंशों में अनर्थ से बचाव हो सकता है।

यद्यपि मेरा विषय केवल नागरी लिपि से सम्बन्ध रखता है तथापि भाषा सम्बन्धी कुछ कहने के लिये मुझे आप लोग क्षमा करेंगे—

एक मुक़द्दमे में वारंट गिरिफ़्तारी छगन लाल के लिये निकला-संयोग वश छगन लाल का सहोदर भाई जगन लाल है, इस कारण दोनों के पिता का नाम, जाति तथा रहने का ठिकाना सब एक ही था किन्तु उर्दू में वारंट रहने के कारण छगनलाल के बदले जगनलाल पकड़ कर अदालत में लाया गया। उसका कई महीने तक मुक़द्दमा चला और बहुत खर्च तथा कष्ट और व्यर्थ समय नष्ट करने के बाद उसको छुटकारा मिला यह बनावटी कथा नहीं है किन्तु आंखों देखी घटना है जो काशी की सब-जजी में हुई थी।

ऐसे कई उदाहरण मिले हैं जहाँ उर्दू की अस्पष्टता और नागरी की न प्रयोग होने से जनता को कठिनाई और अदालतों के हाकिमों का व्यर्थ समय नष्ट होता है—

एक मुक़द्दमे में "हैं" के स्थान पर "नहीं" पढ़ा गया और मतलब उलट पुलट हो गया। काशी की अदालतों में तो यह भी नियम हो गया है कि मुक़द्दमों में मुद्दई मुद्दालेह का नाम और गवाहों को सम्मन निकलवाने की इस्मनवीसी में गवाहों का नाम पता यदि उर्दू में लिखा रहे तो उसे नागरी अथवा अंगरेजी में भी लिखना होता है।

इन कठिनाइयों के विशेष और उदाहरण देकर आप लोगों का अधिक समय न लूँगा। अभी थोड़े दिन हुए माननीय चिंतामणि महोदय ने सब जजों और मुंसिफों की नियुक्ति संबंधी नियमों में कुछ सुधार कराने का प्रयत्न किया था

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनका उद्देश्य यह नहीं था कि हिंदी और नागरी
ही में काम हो किंतु वे यही चाहते थे कि उन
कर्मचारियों को हिंदी और नागरी के पढ़ने लिखने
की योग्यता रखना भी आवश्यक कर दिया जाय।
यह प्रस्ताव प्रांतीय व्यवस्थापक सभा में गत
फरवरी मास के अंत में उपस्थित किया गया था।
इस पर जो आंधी बवंडर उठाया गया उसे समा-
चार पत्रों के पढ़नेवालों ने देखा होगा। उनका
विरोध भी कई सज्जनों ने पत्रों में छापा छपवाया
और उसके संबंध में सभाओं ने अपने मंतव्य
पूरा असन्तोष तथा विरोध प्रकट किये। उक्त
प्रस्ताव के विरोधियों ने बहुत सी निर्मूल तथा
असत्य बातों को कह कर उस विषय में अपनी
अनभिज्ञता का छिछलापन सिद्ध किया। यदि
उनके कथन का पूरा पूरा खंडन किया जाय तो
उसमें बहुत समय तथा स्थान लगेगा। ऐसा करने
का उद्योग न करके उनमें से दो चार बातों पर
अपना विचार प्रकट करूँगा।

माननीय नवाब अब्दुल मजीद ने बृटिश राज्य
के आरंभ में हिंदी भाषा का नाम तक नहीं सुना
किंतु उनका उत्तर तो एक दूसरे विरोधी
माननीय सैयद वज़ीर हसन ने ही दे दिया कि
तुलसीकृत रामायण का नाम जिसने सुना है वह
ऐसी बात नहीं कह सकता और नवाब साहब के
विचार की अस्पष्टता उन्होंने इस आक्षेप का कारण
बताया। नवाब साहब के विचार में तो मुसल्मा-
नों की भूत प्रजा एक नवीन भाषा हिंदी नाम की
स्थापित करके उनकी सुंदर उर्दू की जड़ खोदने
की चेष्टा कर रही है। दुःख है कि नवाब साहब
को इतिहास का ज्ञान बहुत ही सूक्ष्म अथवा
घटा है। यदि हिंदी का इतिहास उन्हें मालूम
होता अथवा उसके जानने की चेष्टा वे करते तो
उन्हें ज्ञान पड़ता कि बारह तेरह सौ वर्ष के पहले
हिंदी भाषा तथा हिंदी साहित्य के अस्तित्व
का पता चलता है और उस समय के हिंदी काव्य
ग्रंथ प्रस्तुत हैं। जिस उर्दू भाषा पर उनको इतना
गर्व है वह अधिक से अधिक शाहजहाँ सम्राट् के
समय की कही जा सकती है।

माननीय सैयद वजीर हसन ने रामायण की
स्थिति तथा हिंदी भाषा के अस्तित्व को माना
परंतु आपने यह कहा कि क्या रामायण की
भाषा बोल चाल की भाषा है। क्या यह उनकी
भाषा है जो कचहरियों में आते जाते हैं।

मैं सैयद साहब को सानुरोध गावों में उन
चौपालों और छप्परों तथा कोल्हुआड़ों में जा कर
अनुभव प्राप्त करने के लिए सलाह दूँगा जहाँ पर
सर्वप्रिय तथा सुबोध घर घर व्यापी हिंदी काव्य
तुलसीकृत रामायण का पाठ होता और आनन्द
रूपी अमृत की वर्षा होती है। उस समय सय्यद
साहब इस प्रश्न का उत्तर दे सकेंगे कि तुलसी-
कृत रामायण को लोग अच्छी तरह समझ सकते
हैं या अदालती उर्दू को।

अन्य विरोधी सज्जनों की बातों का उत्तर देने
में समय न ले कर माननीय मिस्टर बर्न की कुछ
बातों का जवाब देना चाहता हूँ।

(१) उन्होंने एक स्थान पर यह कहा है कि
मुँसिफ़ों का काम कचहरियों ही में रहता है और
इससे यह अभिप्राय निकाला कि डिप्टी कलक्टरों
और पुलिस अफ़सरों की तरह उन्हें देहातों में
काम नहीं करना पड़ता। किंतु वह इस बात
पर दृष्टि नहीं डालते कि मुंसिफ़ों के सामने जो
मुक़दमें आते हैं उनमें गावों के रहनेवाले और
गावों से संबंध रखते हुए लोग ही अधिकांश
हुआ करते हैं।

(२) एक हिंदुस्तानी जज की राय उन्होंने
वर्णन की है कि पढ़े लिखे लोगों को हिंदी
पढ़ने में कठिनाई होती है किंतु मैं नहीं जानता वे
जज महोदय कौन हैं और उनकी राय किस प्रकार
के पढ़े लिखों के संबंध में है। यह ब्योरा बिना जाने
उनकी राय का मूल्य कुछ भी नहीं हो सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) एक बारिस्टर का कथन उन्होंने बताया कि उन्हें हिंदी के एक पत्र को पढ़ने के लिए प्रयाग भर में कोई न मिल सका। मुझे ऐसे बारिस्टर साहब पर बहुत ही शोक होता है। न जाने वह कौन और कैसे बारिस्टर हैं। कैसा पत्र था जिसको वे पढ़वाना चाहते थे और कहाँ उन्होंने पढ़नेवाले के लिए खोज की या कराई।

महाशय इन बातों को सुनकर तो हमारा पक्ष नागरीप्रचार का और भी पुष्ट होता है। यदि बारिस्टर जी नागरी पढ़ सकते और वह पत्र नागरी में होता तो ये सब कठिनाइयाँ और दुर्दशा उन्हें न भोगनी पड़तीं।

(४) बर्न महोदय ने यह भी कहा है कि लोग स्वयम् दरखास्त इत्यादि नहीं लिखते किंतु वकीलों के पास जाते हैं और वकीलों में बहुत कम ऐसे हैं जो नागरी लिखने की योग्यता रखते हों वा नागरी लिखने के लिये उद्यत हों।

मैं अपने अनुभव से कह सकता हूँ कि जब लोगों ने नागरी में दरखास्त इत्यादि देते और उनमें सफलता होते देखा और विरोध की कमी का अनुभव किया तब कितने ही लोगों ने नागरी में स्वयम् नक़ल इत्यादि की दर्खास्तें लिख कर दीं और वे अब भी देते हैं परंतु वकीलों और मवक्किलों की हिचक का बहुत बड़ा कारण हाकिमों और दफ़्तर वालों की नागरी अक्षरों से अज्ञानता और नाक भौंह सिकोड़ना तथा निर्बल को दबोच लेना ही है। नागरी न पढ़ सकनेवाले हाकिम अपनी अयोग्यता पर दुःख न प्रकट करके प्रायः अपने आसन के घमंड में नागरी में दर्खास्त देने वाले ही पर रुष्ट होते हैं और इस प्रथा को रोकना या तोड़ना चाहते हैं, यद्यपि यह बात दृढ़व्रती लोगों के साथ वे नहीं करते।

(५) बर्न साहब का यह भी कथन है कि नागरी लिखने पढ़ने में बड़ी देर लगती है। बर्न साहब के कथन का यह अंश पढ़ कर हँसी आती है। चाहे नागरी लिखने में अनभ्यस्त लोगों को कुछ देर लगती हो किंतु पढ़ने में तो एक छोटा बच्चा भी नागरी के लेख चाहे कैसी ही भाषा में न हो बहुत ही सुगमता तथा स्पष्टता के साथ पढ़ सकता है। मैं अपने अनुभव से कह सकता हूं कि यद्यपि मैंने शीघ्रता से लिखने का अभ्यास तो नहीं किया है परंतु जब कचहरियों में इज़हार उर्दू के अभ्यस्त पेशकार लिखते रहते हैं तो तथा मेरे कई साथी उसी इज़हार को पेशकार कम शीघ्रता के साथ नहीं लिखते और फिर जब इज़हार गवाह को सुनाया जाता है उस समय पेशकार अपना ही लिखा इज़हार पढ़ कर सुनाने में भटकते हैं और उस समय नागरी में हम लोगों का जो लिखा हुआ होता है उसे पढ़ कर उनकी गति सुधारी जाती है।

(६) बर्न साहेब ने समनों के संबंध यह कहा कि समनों के दोनों लिपियों में लिखे जाने पर गवर्नमेंट बलपूर्वक आग्रह करती है यह ठीक भी है। ऐसी दृढ़ता का हाल सुन कर पढ़ कर मैं बर्न साहेब तथा सर्कार को धन्यवाद देता हूँ परन्तु वह आज्ञा प्रायः कागज ही पर कार्य में नहीं लाई जाती। मैं नित्य देखता हूँ कि समनों में प्रायः उर्दू ही का भाग लिखा जाता है और नागरी के पर्त फाड़ कर उन पर प्रायः उर्दू ही में कोष्ठ-पूर्ति करके चलता किया जाता है। हाल थोड़े से ऐसे समन जिनमें नागरी के पर्त लिखे या उर्दू से भरे हुए थे मैंने सभा में भेजे हैं कि वे पर्त न्यायाधीशों के पास भेज कर उनका ध्यान इस ओर आकर्षित किया जाय। अभी आज ही की मुंसफ़ी के सामने वाले पटरे पर हिंदी वाले इश्तहार नीलाम के में भरे रँगे पाए गए हैं। जो लेखक कचहरियों में नियत किये जाते हैं उनकी नियुक्ति संबंधी गवर्नमेंट की आज्ञा पालन नहीं होती। प्रायः नागरी लिखने की योग्यता नहीं या बहुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ते हैं और इसी कारण समनोंवाली आज्ञा का ...पालन नहीं होता। गावों के लोग अब भी वही ...के समन लेकर पढ़ाने के लिये कोसों दौड़ते ...करते हैं और दूसरों का मुंह ताकते हैं। प्रायः ...वों के पंजे में पड़ कर वे धोखा खाते और हानि ...करते हैं। यदि और कुछ न भी हो और मवक्किल ...लोग अपने वकीलों को नागरी अक्षरों में काम ...करने के लिये विवश करें तो भी इस ओर बहुत ...कुछ काम हो सकता है ।

यह निबंध बहुत ही उपयुक्त हुआ और ...उपस्थित सज्जनों ने करतलध्वनि द्वारा इससे ...अनुभूति प्रकट की ।

इसके बाद आजमगढ़ के प्रसिद्ध खड़ी बोली ...कवि पं० अयोध्या सिंह उपाध्याय की कविता ...पुत भगवान दीन जी ने पढ़ी क्योंकि उक्त ...कवि जी किसी कारणवश स्वयम् उपस्थित नहीं ...सके थे।

एक विनय ।

छतुका ।

बड़े ही ढँगीले बड़े ही निराले ।
अछूती सभी रंगतों बीच ढाले ॥
दिलों के घरों के कुलों के उँजाले ।
सुनो ऐ सुजन पूत करतूत वाले ॥
तुम्हीं सब तरह दे सके हो सहारे ।
तुम्हीं हो नई सूझ आँखों के तारे ॥ १ ॥

तुम्हीं आज दिन जाति हित कर रहे हो ।
हमारी कचाई कसर हर रहे हो ॥
तनिक, उलझनों से नहीं डर रहे हो ।
निचुड़ती नसों में लहू भर रहे हो ॥
तुम्हीं ने हवा वह अनूठी बहाई ।
कि यों बेलि हिन्दी उलहती दिखाई ॥ २ ॥

रसे देख हम हैं न फूले समाते ।
मगर यह विनय प्यार से हैं सुनाते ॥
तुम्हें रँग वे हैं न अब भी लुभाते ।
कि जिनमें रँगे क्या नहीं कर दिखाते ॥
किसी लाग वाले को लगती है जैसी ।
तुम्हें आज भी लौ लगी है न वैसी ॥ ३ ॥

सुयश की ध्वजा जो सुरुचि की लड़ी है ।
सुदिन चाह जिसके सहारे खड़ी है ॥
सभी को सदा आस जिससे बड़ी है ।
सकल जाति की जो सजीवन जड़ी है ॥
बहुत सी नई पौधही वह तुम्हारी ।
नहीं आज भी जा सकी है उबारी ॥ ४ ॥

जननि गोद ही में जिसे सीख पाया ।
जिसे बोल घर में मनों को लुभाया ॥
दिखा प्यार जिसका सुरस मधु मिलाया ।
उमग दूध के साथ मा ने पिलाया ॥
बरन ज्योत के साथ जिसके सुधारे ।
कढ़े तोतली बोलियों के सहारे ॥ ६ ॥

सभी जाति के लाल सुध बुध के सँभले ।
वही मा की भाषा ही पढ़ते हैं पहले ॥
इसी से हुए वे न पचड़ों से पगले ।
पड़े वे न दुबिधा में सुबिधा के बदले ॥
भला किस लिये वे न फूले फलेंगे ।
सुकरता सुकर जोकि पकड़े चलेंगे ॥ ६ ॥

मगर वह नई पौध कितनी तुमारी ।
अभी आज भी हो रही है दुखारी ॥
लदा बोझ ही है सिरों पर न भारी ।
भटकती भी है बीहड़ों में विचारी ॥
बिकल हैं विजातीय भाषा के मारे ।
अहह लाल सुकुमार मति वे तुमारे ॥ ७ ॥

सुतों को पड़ोसी मुसलमान भाई ।
पढ़ायेंगे पहले न भाषा पराई ॥
पड़ी जाति कोई न ऐसी दिखाई ।
समझ बूझ जिसने हो निजता गँवाई ॥
मगर एक ऐसे तुम्हीं हो दिखाते ।
कि अब भी हो उलटी ही गंगा बहाते ॥ ८ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुमारे सुअन प्यार के साथ पाले।
भले ही सहें क्यों न कितने कसाले॥
उन्हें क्यों सुखों के न पड़ जाँय लाले।
पड़े एक बेमेल भाषा के पाले॥
मगर हो तुम्हीं जो नहीं आँख खुलती।
नहीं किस लिये जी की काई है धुलती॥९॥

भला कौन लिपि नागरी सी भली है।
सरलता मृदुलता में हिन्दी ढली है॥
इसी में मिली वह निराली भली है।
सुगमता जहाँ सादगी से पली है॥
मृदुलमति किसी से न ऐसी खिलेगी।
सहज बोध भाषा न ऐसी मिलेगी॥१०॥

मगर इन दिनों तो यही है सुहाता।
रखे और के साथ ही लाल नाता॥
सदा ही कलपती रहे क्यों न माता।
मगर तुम बना दोगे उसको विमाता॥
अलिफ़ बे का सुत को रहेगा सहारा।
सुधा की कढ़े क्यों न हिन्दी से धारा॥११॥

अगर अपनी जातीयता है बचाना।
अगर चाहते हो न निजता गँवाना॥
अगर लाल को लाल ही है बनाना।
अगर अपने मुंह में है चंदन लगाना॥
सदा तो मृदुल बाल मति को सँभालो।
उसे बेलि हिन्दी बिटप की बना लो॥१२॥

समय पर न कोई प्रभो चूक पावे!
भली कामना बेलि ही लहलहावे॥
विकसती हृदय की कली दब न जावे।
स्वभाषा सभी को प्रफुल्लित बनावे॥
खिले फूल जैसे सभी के दुलारे।
फलें और फूलें बनें सब के प्यारे॥१३॥

इसके अनंतर हिंदी की दशा पर मि० एडचिन ग्रीव्स का व्याख्यान हुआ जिसका सारांश यह है।

मिस्टर एडचिन ग्रीव्स साहब के व्याख्यान का सारांश।

आज छत्तीस वर्ष से इस देश में रहता हुआ मैं इस देश की उन्नति के लिये परमात्मा से प्रार्थना कर रहा हूँ। किसी देश की उन्नति का उस देश के साहित्य से घनिष्ठ संबंध है, वैसे ही इस देश की उन्नति का हिंदी साहित्य से घनिष्ठ संबंध है। देश की उन्नति के साथ साथ साहित्य की भी उन्नति होना स्वाभाविक है क्योंकि साहित्य से उस देश के तत्कालीन अधिवासियों की भाषा, भाव और चाल चलन का पता चलता है। इसलिये नवीन उन्नति के विचार लोगों में फैलाने के लिये लेखकों को उचित है कि साधारण से साधारण सरल भाषा में पुस्तकें लिखें। उन्हें फल की ओर ध्यान देना चाहिए और उस फल से जो भावी उन्नति का बीज बोया जायगा उसका ध्यान रख कर पुस्तकें लिखना उचित है, केवल अपनी चतुराई और विद्वत्ता दिखलाने की भाषा से सुंदर नयनाभिरामी पुष्पों की रचना करने से कोई लाभ नहीं हो सकता। नख सिख और रस विषय की पुस्तकें लिख कर एक बात को बार बार दोहराने की अपेक्षा नवीन नवीन विचार का सरल भाषा में प्रचार करना अधिक लाभदायक है। केवल यही नहीं कि मैं विदेशी होने के कारण भाषा की किसी किसी पुस्तकों को कठिनता से समझ सकता हूँ पर मेरा विश्वास है कि इस देश के अधिकांश निवासी भी आज कल की प्रकाशित बहुत सी पुस्तकों की भाषा नहीं समझ सकते। परलोक निवासी महामहोपाध्याय पं० सुधाकर द्विवेदी जी ने भी इस सिद्धांत को अपने में स्वीकार किया था। कठिन भाषा के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषयक ग्रंथों के लिखने से क्या लाभ है। दृष्टांत के तौर पर मैं बिहारी लाल की सतसई के विषय में कहता हूँ कि हिंदी जगत में यह बड़ा अनूठा ग्रंथ माना जाता है, पर मेरी समझ में इन सात सौ दोहों में से छः सौ दोहे यदि समुद्र में डुबा दिए जाँय तो देश की कुछ भी हानि न होगी। क्योंकि इसकी भाषा ऐसी कठिन है और इसमें इस विषय की बातों की इतनी भरमार है कि इससे सर्वसाधारण की उन्नति या शिक्षा में कुछ भी लाभ नहीं पहुँच सकता।

तदनन्तर बाबू श्यामसुन्दर दास जी ने अपनी स्वाभाविक ओजस्विनी भाषा में व्याख्यान दिया जिसका सारांश नीचे दिया जाता है—

किसी देश का इतिहास उस देश के साहित्य से जाना जाता है। नागरीप्रचारिणी सभा स्थापित होने के पूर्व पढ़े लिखे लोगों की हिंदी पर विशेष रुचि न थी। भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र ने हिन्दी में नाटक इत्यादि ग्रन्थों के प्रचार को बहुत बढ़ाया अथवा यों कहना चाहिए कि एक प्रकार से हिंदी के रूप को स्थिर किया, इस लिए भारतेंदु जी को आधुनिक हिंदी का जन्मदाता कह सकते हैं। पचास वर्ष के पहले हिंदी की अवस्था अच्छी नहीं थी, विद्वान् लोग इधर कुछ भी ध्यान नहीं देते थे। जब से सभा ने कर्म्मक्षेत्र में डग बढ़ाया तब से हिंदी में नाना प्रकार के पत्र और पत्रिकाएँ निकलने लगीं और पुस्तकों का प्रचार भी अधिकता से होने लग गया है जिससे प्रमाणित है कि हिंदी के पाठकों की संख्या भी दिनों दिन बढ़ रही है। पर यद्यपि लेखक और पाठक दोनों बढ़ रहे हैं पर अभी तक हिंदी का कोई वास्तविक रूप निश्चित नहीं हो सका जिसका मुख्य कारण गवर्नमेंट की उदासीनता है क्योंकि पाठशाला और विद्यालयों में जिस ढंग की पुस्तकें पढ़ाई जाँयगी वैसी ही हिंदी के साहित्यज्ञ विद्यार्थी भी निकलेंगे। जब इन पाठ्य पुस्तकों के रचियता हिंदी भाषा, हिंदी कोष और व्याकरण का ज्ञान नहीं रखते फिर उनकी रचित पुस्तकें ठीक क्यों कर हो सकती हैं और इन पुस्तकों को पढ़ कर हमारे बालक मातृभाषा से सम्यक परिचित होकर विद्या का लाभ क्यों कर उठा सकते हैं। जो व्याकरण इस समय सर्कारी पाठशालाओं में पढ़ाया जाता है उससे बालकों को हिंदी भाषा का ज्ञान होना तो दूर रहा उलटे नाना प्रकार की भ्रान्तियाँ अवश्य उत्पन्न हो सकती हैं। इनमें से एक व्याकरण जो हाल ही में प्रकाशित हुआ है विभक्ति और संज्ञा के अनेक अशुद्धियों से पूर्ण है। ग्रन्थकर्ता को कर्ता और क्रिया का समुचित ज्ञान भी है, ऐसा तो प्रतीत नहीं होता और यही व्याकरण बड़े धूम धाम से प्रकाशित करके सर्कार की ओर से पाठशालाओं में पाठ्य क्रम में नियत किया गया है। अस्तु हमें विवश हो कहना ही पड़ता है कि हिंदी साहित्य की यह दुर्दशा गवर्नमेंट की बदौलत ही हो रही है। यदि उचित ढंग से उत्तम पुस्तकें लिखवाई जाँय तो क्यों यह दुर्दशा हो। कोई भाषा बिना व्याकरण और कोष की सहायता के सुधर नहीं सकती और इन्हीं से भाषा में स्थिरता आती है। शायद लोग यह कहें कि साहित्य के पांव में बेड़ी डालने से उसकी उन्नति में बाधा पहुँचेगी। मैं भी भाषा को बाँधने का पक्षपाती नहीं हूं। लोग लिखें और स्वतंत्रता से लिखें पर उच्छृंखलता किसी अवस्था में भी अच्छी नहीं क्योंकि कोई भी परिवर्तन जो प्रकृति के नियमानुसार होता है, लाभदायक होता है। इस उच्छृंखलता का नमूना "मिश्र बंधु विनोद" नामक ग्रंथ है जिसमें इसकी इतिश्री कर दी गई है। अब भाषा की कठिनता और सरलता के विषय में कुछ कहना है। कुछ लोगों की सम्मति यह है कि हिंदी से संस्कृत के शब्दों को निकाल कर अरबी फारसी के शब्द ठूँस देने से भाषा सरल हो जाती है, पर यह विचार कहां तक भ्रमात्मक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है यह सभी विचारवान पुरुष समझ सकते हैं। हमारी हिंदी कठिन है पर अदालती हिंदी सरल है क्योंकि उसमें अरबी के शब्दों की अधिकता है। भाषा को इस नाप से तौलनेवालों की बलिहारी है क्योंकि भाषा की कठिनता और सरलता विषय पर निर्भर है। जहां जैसा विषय हो वैसी ही भाषा का प्रयोग आवश्यक होता है। अंगरेजी में भी ऐसे बहुतेरे ग्रंथ हैं जिनमें विषय जटिल होने के कारण भाषा जटिल हो गई है और विवश हो ऐसा करना ही पड़ता है। भाव और भाषा जटिल होने के कारण चाहे कुछ विदेशी विद्वान बिहारी के छः सौ दोहों को भलेही समुद्र में डुबा देने की सलाह दें पर हमारे लिए तो उनके एक एक दोहे अनमोल रत्न हैं। जो कुछ हो यह तो स्पष्ट ही प्रतीत हो रहा है कि हिंदी का भविष्य बड़ा मनोहर है, क्योंकि देश की उन्नति साहित्य की उन्नति पर निर्भर है और जबसे हिंदी का प्रचार बढ़ा है तबसे देश में कितनी अधिक जाग्रति हुई है। समाचार पत्र और पत्रिकाओं की कितनी वृद्धि हुई है, नवीन नवीन ग्रंथ प्रकाशन की ओर कैसी प्रबल चेष्टा हो रही है यह तो सब ही देख रहे हैं। अंगरेजी के धुरंधर देशहितैषी विद्वान भी अब यह समझ रहे हैं कि बिना हिंदी भाषा की सहायता के वे अपने विचार जनता तक नहीं पहुंचा सकते। 'हिंदी की उन्नति' इस समय 'देशकी उन्नति' की सिढ़ी हो रही है। हिंदी के प्रचार का देश की उन्नति से कैसा घनिष्ठ संबंध है यह बात महात्मा गांधी जी ने भली भाँति अनुभव कर ली है और गुजरात प्रांत के निवासी होने पर भी वे हिंदी प्रचार के लिये कटिबद्ध हो रहे हैं। यद्यपि थोड़े से मुसलमान भाई समय समय पर इसका विरोध कर बैठते हैं पर उन्हें भी अनुभव हो रहा है कि अब बिना इसे स्वीकार किए कोई चारा नहीं है, क्योंकि जिस डग से हिंदी आगे बढ़ रही है वह विचारवानों से छिपा नहीं है—हिंदी राष्ट्र भाषा हो चली है या उर्दू यह तो उनमें से भी आंखवाले देख ही रहे हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि हम अवश्य ही गवर्नमेंट की सहायता चाहते हैं पर साथ ही हम अपने पैरों पर भी आप खड़ा होना चाहते हैं और इसी का यह परिणाम है कि इस समय अधिकांश लोग हिंदी जानने लगे हैं और उर्दू की अपेक्षा हिंदी पाठक बहुत अधिक बढ़ रहे हैं। अपनी मातृभाषा का उसकी संतान यदि उचित आदर करने लगे तो उसे फिर किसी की भी सहायता की आवश्यकता नहीं है। प्रत्येक हिंदू संतान का धर्म्म है कि वह हिंदी की उन्नति के मार्ग को सुंदर और प्रशस्त कर दे। शोक की बात है कि हिंदी भाषा के प्रचारार्थ नागरीप्रचारिणी सभा को उचित सहायता नहीं मिल रही है और उसके काम में बाधा पड़ रही है। यह बड़ी लज्जा की बात है कि देश के कल्याण का जो एक मुख्य द्वार हो रही है उस हिंदी भाषा की सहायता जैसी चाहिए वैसी नहीं हो रही है। देश के कल्याण चाहनेवालों को अपनी मातृभाषा के अर्थ इस समय अवश्य ही तन मन धन अर्पण करना चाहिए।

बा० श्यामसुंदरदास जी के व्याख्यान समाप्त होने पर सभापति जी ने १०००) रु० गोसांई राधापुरी जी ने १००) देने और ४००) दिलाने का अन्य एक सज्जन ने २५१) रुपया दान देने का वचन दिया और फिर सभापति जी ने अपना व्याख्यान यों पढ़ सुनाया—

सभापति जी का व्याख्यान।

ऐसे धुरन्धर सेना-नायकों के दल में जिनकी असि लेखनी के बल से हिंदी माता का यश दिग्दिगंत में व्याप रहा है, जिन्होंने मातृ-भाषा के विजय-मार्ग में आपद विपद के कंटकों को कोमल कमल कलिका से भी अधिक सुखकर समझा है, मुझ ऐसे अनुभवहीन तथा अकर्मण्य का इस महान प्रतिष्ठित पद पर आसीन होना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूजा नहीं तो और क्या है। मेरे पास तो समु-चित शब्द सुमन भी नहीं जो धन्यवाद के हार ही आपकी भेंट करूँ। धन्य है वह मान जो जनता किसी को स्वेच्छा से प्रदान करे। मैं कदापि इसके योग्य नहीं और न मैं इसको स्वीकार करता परंतु सभा तथा समाज की आज्ञा पालन करना अपना परम धर्म्म समझता हूँ। अतः मुझसे जो कुछ सेवा हो सके उसके लिये मैं उपस्थित हूँ। मेरी त्रुटियों को क्षमा कीजिए और विनीत प्रार्थनाओं पर ध्यान दीजिए।

महाशयो! आज चौबीस वर्षों के प्रचुर परिश्रम से जो कुछ इस सभा ने कर दिखलाया है उस पर उसको उचित अभिमान हो सकता है। केवल साहित्य ही नहीं इसके कार्य्य-क्षेत्र में और भी अनेक विषय सम्मिलित हैं। सभा कभी भी अपने लक्ष्य से विचलित नहीं हुई। हिंदी माता को जब जहां जैसी सहायत की आवश्यकता हुई पहले इसी ने उसका हाथ पकड़ा। वह कौन सा उपाय है जो इसने उसकी उन्नति के लिये नहीं किया। खोज का काम, ग्रन्थप्रकाशन, उत्तम लेखकों को और शीघ्र लिखनेवालों को उपहार, पुस्तक-प्रदान तथा व्याख्यानादि से जो सेवा इसने हिंदी माता की की है वह किसी से छिपी नहीं है। अब तो अब सर्वसम्मति से सिद्ध ही हो चुका है कि देश के कल्याण के लिये एक राष्ट्रभाषा तथा एक राष्ट्रलिपि की अत्यंत आवश्यकता है और वह भाषा हिंदी और लिपि नागरी है जो इस महान् प्रतिष्ठित पद पर पहुँचने की योग्यता रखती है परंतु दुःख से कहना पड़ता है कि सब कुछ योग्यता रखने पर भी यह अपनी अन्य कनिष्ठा बहिनों की अपेक्षा दरिद्रता का दुःख भोग रही है। इसका साहित्य कोष अत्यन्त शोचनीय अवस्था में है। हिंदीवालों का यह प्रथम कर्तव्य है कि उन लोगों के हाथ बटावें जो इस सद् कार्य्य में प्राणपण से चेष्टा कर रहे हैं। और इस सभा के संबंध में यह कहना कुछ अत्युक्ति नहीं कि "सब हिंदुन की जो सजीवन मूरि सो हिंदिही बूड़त लीन्हो उबारि।" हिंदी की पुकार को इसने ही राजा और प्रजा के कानों तक पहुँचाया है और दोनों ही इसके सहायक हैं। किंतु इस के विस्तृत कार्य्यों को देखते हुए यह सहायता संतोष-जनक नहीं। हिन्दी ग्रंथमाला और लेखमाला के अतिरिक्त यह सभा हिंदी शब्द-सागर और मनोरंजन पुस्तक-माला दो अमूल्य रत्न प्रकाशित कर रही है जिन के न होने से हिंदी संसार शून्य हो रहा था। प्रत्येक त्रुटि को दूर करने के लिये सभा सदा प्रस्तुत रहती है। सभा सदैव अपना काम करती रहती है किंतु हम अपना काम नहीं करते। महाशयो! हमको वह उत्साह और कार्य्य कर के दिखला देना चाहिये जिसकी उपमा मिलना कठिन ही नहीं वरन् असंभव हो। जिस माता के इतने सपूत तथा उपासक हों उसकी यह दशा! खेद! क्या हम ऐसे सद्कार्य्य के लिये कुछ भी नहीं बचा सकते। समस्त संसार के महात्मा एक स्वर से उपदेश करते हैं कि वह जाति गिर गई जिस का साहित्य गिर गया। वह खो-गया जिस का साहित्य खोगया। अतः हमलोगों का परम धर्म्म है कि अपने साहित्य को समयानु-कूल बनाने में तन मन धन से स्वयं चेष्टा करें और यथाशक्य सभा की सहायता करें जिस में हम सब का कल्याण है। ॐ३ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

सभापति जी के बैठने पर उन्हें धन्यवाद देते हुए श्रीमान् पं० गोविंद नारायण मिश्र ने कहा कि "मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि सभापति जी को धन्य-वाद देने का कार्य्य मेरे सपुर्द हुआ है। क्योंकि मातृभाषा के नाते हम सब भाई हैं और एक भाई के प्रति दूसरे के सत्कार का कार्य्य सौंपा जाना बड़े आनंद की बात है। क्योंकि यहां सभापति जी के सत्कार से मातृभाषा का सत्कार है किसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यक्ति विशेष का नहीं, क्योंकि करोड़ों पुत्रों की माता को यदि उसके पुत्र न पूछें तो बड़े दुःख की बात होगी। माता की सेवा करना प्रत्येक पुत्र का धर्म्म ही है, ऐसी अवस्था में धन्यवाद की तो कोई आवश्यकता न थी, पर जब माता की सेवा रूपी धर्म्म के रहते हुए भी हम मातृ सेवकों का अभाव देखते थे तो अब लोगों को इस कार्य्य के लिए जाग्रत होते और उनमें विशेष विशेष महाशयों को इस भूले हुए धर्म्म पर दृढ़तापूर्व्वक आरुढ़ होते देख कर आनंद से धन्यवाद का शब्द स्वयम् ही उच्चारित हो जाता है। गाय का बछड़ा अपनी माता को पहचान कर शब्द करता हुआ उसकी ओर दौड़ता है, माता के शब्द सुन कर तत्काल ही उस ओर धावता है। पशुओं में भी यह बात विद्यमान है, पर यह बड़े दुःख की बात होगी यदि हम अपनी माता के शब्द को न चीन्हें और उससे विमुख रह कर शुद्ध मातृस्तन की अमृतधारा को छोड़ कर विमाता के धोखे पूतना का विष मिश्रित पयपान करते रहें। इसका परिणाम सिवाय जातीय मृत्यु के और क्या हो सकता है? हमें अभी बहुत कुछ करना है केवल गवर्नमेंट से कहने ही से काम नहीं चल सकता। बंगली, महाराष्ट्री और गुजराती भाषाएं जिस शीघ्रता से उन्नति कर रही हैं वह हमारे लिए आदर्श होना चाहिए। हिंदी की अवस्था पर यदि उसके धनवान पुत्र ध्यान दें तो उसका बहुत कुछ दुःख दूर हो जाय। आज की सभा के सभापति जी का उत्साह और उनकी उदारता प्रशंसनीय है और एतदर्थ हम सब हृदय से उनको धन्यवाद देते हुए आशा करते हैं कि ऐसे और भी माता के सपुत्र माता के दुःख दूर करने में अग्रसर हों।" इस प्रकार से यह उत्सव सानन्द समाप्त हुआ।

दूसरे दिवस संध्या के चार बजे सभापति श्रीमान् ठाकुर साहब के सम्मानार्थ एक प्रीति-भोज दिया गया जिसमें कुछ गान वाद्य का भी प्रबंध था और समागत जनों का चित्र भी लिया गया।

द्वितीय राष्ट्र-भाषा सम्मेलन कलकत्ता।

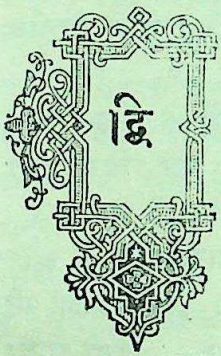

द्वितीय राष्ट्रभाषा सम्मेलन का उत्सव तारीख ३० दिसंबर १९१८ को प्रातः काल आठ बजे कलकत्ते के अलफ्रेड नाटक मंडली के रंगमंच पर बड़े समारोह से हुआ। यद्यपि जातीय महासभा के मंडप ही में सम्मेलन के प्रधान उद्योगी पं० जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी जी ने प्रवेश-पत्र प्रदान करने की कृपा की थी पर प्रवेश-द्वार पर प्रबंध बहुत ही खराब था जिसके कारण निर्धन हिंदी प्रेमियों की बात तो एक ओर रही, कई धनाढ्य मारवाड़ी सज्जन भी धक्के खा खा कर अपनी प्रतिष्ठा लिए हुए वापस गए। यहाँ तक कि लोकमान्य तिलक महाराज को भी जो आज की सभा के सभापति होने वाले थे, द्वार पर कई मिनटों तक रुकना पड़ा। कोई स्वागत करनेवाला तो वहाँ काहे को आता। इतनी ही खैर हुई की लोकमान्य महाराज जी त्यों कर बड़ी कठिनाई से प्रवेश कर पाए और बड़ों का पल्ला पकड़ कर हम भी पार हो गए। भीतर जाकर समागत जनों की उपस्थिति देख कर अवश्य ही आनंद हुआ पर समागत जनों में से अधिकांश जितने सभापति जी के दर्शणार्थी थे उतने मातृभाषा के प्रेमी न थे। सभापति जी के प्रवेश करते ही समागत जनों ने खड़े हो कर करतलध्वनि के साथ उनका स्वागत किया और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोकमान्य जी के आसीन होने पर पं० छोटू-लाल मिश्र के प्रस्ताव तथा एक बंगाली सज्जन के अनुमोदन और भारतमित्र के संपादक पं० अम्बिका प्रसाद वाजपेयी जी के समर्थन पर तिलक महाराज ने सभापति का आसन ग्रहण किया। मंच पर उनके पार्श्व में महात्मा गांधी जी तथा मालवीय जी महाराज विराजमान थे और एक ओर श्रीमती सरोजनी नायडू भी शोभा बढ़ा रही थीं।

लोकमान्य तिलक महाराज का व्याख्यान।

लोकमान्य तिलक महाराज ने अपने सभापति चुने जाने पर समागत जनों को धन्यवाद देते हुए अंगरेजी में कहा कि—"यद्यपि मैं हिन्दी भाषा में बोल नहीं सकता और यह बात मैंने सम्मेलन के उद्योगियों से प्रगट भी कर दी थी, फिर भी जब उन लोगों ने आग्रह किया कि अवश्य ही मैं यहाँ आकर राष्ट्र भाषा के विषय में अपने कुछ विचार प्रगट करूँ तो मैंने उस आज्ञा को शिरोधार्य्य किया और इस समय इस विषय पर आप लोगों के सम्मुख कुछ शब्द कहूँगा।

मुझे जहाँ तक अवगत है भारत भर में राष्ट्र-भाषा फैलाने के लिए यह सभा उद्योगी हुई है। इसकी आवश्यकता के विषय में दो एक बातें कहूँगा। भाषा बोलने के शब्द का नाम है। भाषण बिना भाषा के नहीं हो सकता। भाषा ही द्वारा मनुष्य और पशुओं का पार्थक्य बोध होता है। यद्यपि पशुओं की भी अपनी भाषा है पर बहुत सा काम वे लोग इंगित द्वारा या अस्पष्ट भाषा द्वारा चलाते हैं। सांगोपांग विशुद्ध रीति से भाषा का प्रयोग मनुष्य ही ने किया। कहते हैं कि परमात्मा ने आदि में भाषा ही का दान दिया है। वेदों में भी शब्द को ब्रह्म कहा है इस से सिद्ध होता है कि भाषा कोई साधारण वस्तु नहीं है, ईश्वर का एक अंश है। भाषा का उच्चारण, अर्थात् बोलने की शक्ति, मनुष्य के प्रति परमात्मा का यह सब से पहला दान है। बाइबल में भी कहा है कि प्रारंभ में एक ही भाषा थी, किसी समय ईश्वर ने क्रोधित हो भाषा में भेद डाल दिया और इसी प्रकार से नाना प्रकार की भाषाओं की रचना हुई। मनुष्यों के पाप के लिए परमात्मा की ओर से उन्हें यह दंड मिला। प्राचीन समय में भाषा एक ही थी यह तत्व प्राचीन ग्रंथों में स्वीकृत है। भाषा विज्ञान (Science of languages) नाम की पुस्तक में प्रोफ़ेसर मैक्स-मूलर साहब ने कहा है कि मनुष्यों की आदि संपत्ति या थाथी भाषा ही है और इसी के क्रम-विकाश से मनुष्य की उन्नति हुई है। पहले कहा जा चुका है कि यथाविहित स्वर द्वारा वैज्ञानिक रीति से भाषा का उच्चारण मनुष्यों ही से संभव हुआ है, पर इस समय मनुष्यों में प्रधानतः कई भाषाएँ प्रचलित हैं यथा आर्य्य (Aryan) सेमिटिक (Semitic) द्राविड़ी (Dravadiau) चीनी (Chinese) इत्यादि। किस प्रकार से और क्यों कर भाषा का यह विभाग हुआ इसका पता वैज्ञानिक जनों ने नहीं बतलाया है। भिन्न भिन्न देशों में बसने के कारण वहाँ की ऋतु के प्रभाव से भी संभव है कि भाषा भिन्न भिन्न हो गई हो, पर एक सर्वतंत्र भाषा की आवश्यकता सर्वदा रही है। जब अपने विचार भाषा ही द्वारा दूसरों पर प्रकट किए जाते हैं तो बिना एक सर्वतंत्र भाषा हुए उन्नति नहीं हो सकती। मिश्र देश में पक्की मिट्टी की शिला पर लिखा हुआ एक त्रैभाषिक कोष तीन या चार सहस्र वर्ष पूर्व का पाया गया है, जिससे साबित होता है कि प्राचीन समय में भी एक सार्वजनिक भाषा की आवश्यकता प्रतीत हुई थी और इस ओर चेष्टा भी हुई थी। महाभारत में भी लिखा है कि इस देश में छः प्रकार की भाषाएँ थीं। जब छः प्रकार की भाषाएँ थीं तो परस्पर के विचार समझने के लिए एक सर्वतंत्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषा की आवश्यकता अवश्य ही हुई होगी।

उपनिषदों में भी विदेशी भाषा काम में लाई गई। इनमें केलीआई शब्द (Caledonion) काम में आए हैं जिससे पता चलता है कि यदि कोई सार्वजनिक भाषा उस समय न थी तो यह विदेशी भाषा यहां क्योंकर आई। आर्य्य लोग जहां जहां गए अपनी भाषा संग लेते गए। यही कारण है कि उत्तर भारत में आर्य्य भाषा का प्रचार है और दक्षिण ने अपनी द्राविड़ी भाषा कायम रखी है। एक लिपि का उत्तर भारत में प्रचार हो जाना सहज है क्योंकि उल्टी सीधी हिंदी उत्तर भारत के सभी निवासी समझ लेंगे। लिपि एक कर देने से सारे उत्तर भारत में शीघ्र ही एक विचार फैल सकेगा। संस्कृत कठिन है इसलिए बंगालियों ने उसे सरल बनाकर अपना काम लिया है। अंगरेजों ने भी पुराने प्रांतीय रूप को छोड़कर एक शुद्ध रूप को कायम रखा है। यह बात विलायत जाकर उन लोगों से बात चीत करने से स्पष्ट प्रगट हो जाती है। उसी प्रकार से हमें भी एक शुद्ध अनुपम भाषा की आवश्यकता है। वह काम संस्कृत से नहीं चल सकता। वह शुद्ध अनुपम ऐसी भाषा हो जिसे सब कोई समझ सके। पंडित जन तो संस्कृत में बोल सकते हैं और प्राचीन काल में यही राष्ट्र-भाषा थी। इस कथन पर आप आश्चर्य न करें क्योंकि जैसे आज कल हम लोग अंगरेजी द्वारा अपना काम निकालते हैं वैसेही प्राचीन समय में पंडितजन संस्कृत को राष्ट्रभाषा बनाए हुए थे यहां तक कि स्त्रियां भी आगे संस्कृत समझती और बोलती थीं। अब यह स्थान अंगरेजी ले रही है पर विदेशी भाषा होने के कारण इसका प्रचार होना कठिन है क्योंकि थोड़े से पढ़े लिखे लोग ही इसे समझ या बोल सकते हैं। हमें तो एक ऐसी राष्ट्र-भाषा की आवश्यकता है जिसे सर्वसाधारण विद्वान से लेकर अपढ़ किसान सहज ही में बोल और समझ सके और साथ ही उसमें यह गुण भी हो कि पढ़ने वाले बालक उसे शीघ्र ही सीख भी सकें। ऐसा न होना चाहिए कि भाषा सीखने में उन्हें दस दस वर्ष लग जांय।

नेपोलियन के बाद युरोप की राष्ट्रभाषा फ्रेंच हो गई और अब युरोपीय महाभारत की रंगभूमि में सिपाही लोग फ्रेंच और जर्मन दोनों भाषाओं में बोलते हैं। इसी प्रकार से पहले युद्ध में और फिर व्यापार में एक सार्वजनिक भाषा का प्रयोग और प्रचार होता है। एसपेरेंटो नाम की एक भाषा संसार भर की सार्वजनिक भाषा बनाने के लिए चुनी गई थी, पर वह कार्य्य के लिए उपयुक्त नहीं पाई गई।

सौभाग्य से भारतवर्ष इस समय एक राज्य के अधीन है और हम एक जाति बनना चाहते हैं और एक राष्ट्रभाषा का प्रचार भी इसका एक साधन है। मुझे यह देख कर प्रसन्नता हुई है कि एक संस्था इसके लिए स्थापित है। यद्यपि पादरी तथा शासक लोग रोमन अक्षरों का प्रचार करना चाहते थे पर वह उपयोगी साबित न होने के कारण त्याग दिए गए। जापान में भी यह चेष्टा व्यर्थ हो चुकी है। इसके लिए केवल नागरी अक्षर ही उपयुक्त हैं पर उनका रूप भी इस प्रकार का बना डालना चाहिए जिसमें द्राविड़ देशी लोग भी सहज ही में उसे अंगीकार कर लें। देश भर में राष्ट्रभाषा चाहनेवालों को पहले एक लिपि फैलाने की चेष्टा करनी चाहिए। काशी नागरीप्रचारिणी सभा बहुत दिनों से यह चेष्टा कर रही है और अदालतों में भी नागरी प्रचार का बीड़ा इसने उठाया हुआ है। चेष्टा करने से द्राविड़ी देश में भी नागरी लिपि का प्रचार हो सकता है क्योंकि वे लोग संस्कृत जानते हैं और हमारे अधिकांश धार्मिक ग्रंथ नागरी लिपि ही में छपे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलकत्ता विश्वविद्यालय के संस्कृत विद्या-
थियों को नागरी लिपि में उत्तर लिखने की स्वतं-
त्रता है। ऐसा ही मद्रास में भी हो सकता है।
यह कोई नई बात नहीं है। मद्रास देश में भी
लोग इसकी आवश्यकता अनुभव करते हैं और
वे लोग इस बात के इच्छुक हैं कि ऐसी कोई
सार्वजनिक भाषा हो जिसके द्वारा हम ऐक्य
का प्रचार कर सकें। अपने धर्म के प्रचारार्थ
पादरियों को भी एक राष्ट्रभाषा की आवश्यकता
है। प्राचीन समय में बुद्ध भगवान् को भी ऐसी
आवश्यकता पड़ी थी। जातीयता का प्रचार करने
के लिए तो एक भाषा, एक लिपि एक धर्म सब ही
की आवश्यकता है। यद्यपि एक भाषा ही का होना
नितान्त ही आवश्यक नहीं है क्योंकि भिन्न भिन्न
प्रान्तों भाषी भी एक हो सकते हैं पर एक सार्व-
जनिक भाषा होने से इस कार्य्य में बहुत कुछ
सुगमता हो सकेगी। सरकार ने देश भर में एक
प्रमाणिक समय (Standard time) नियत कर
दिया है वैसे ही क्या वह एक 'प्रमाणिक भाषा'
(Standard language) नियत नहीं कर
सकती।

यह प्रश्न विचारने का है कि भारतवर्ष भर
में कौन सी एक राष्ट्रभाषा हो सकती है। यद्यपि
हमारा लक्ष्य हर प्रांत में एक भाषा ही चलाने का
है पर सारी प्रांतीय भाषाएँ एका एकी दबाई नहीं
जा सकतीं और हम भी उनका लोप करना नहीं
चाहते और न उनको अपने सिंहासन से च्युत
करना चाहते हैं। हम तो एक ऐसी राष्ट्रभाषा
चाहते हैं जिसे सारे प्रांतवासी समझ सकें और
इसकी चेष्टा भी होनी चाहिए। यह भाषा यदि
हिंदी हो सकती है तो हिंदी ही हो सकती है जैसा
कि पहले कहा जा चुका है। पंजाब से बंगाल तक
तो यह कार्य्य सहज ही हो जायगा पर मंद्राज
देश में भी यह कार्य्य उतना कठिन नहीं है। वहां
संस्कृत का प्रचार कम नहीं और संस्कृत के
बहुत से शब्द उस प्रांत की भाषा में मिले हैं। *
इसलिए हिंदी भविष्य भारत की भाषा बनाई
जा सकती है।

कुछ दिन हुए वंगदेश से 'देवनागर' नाम का
एक पत्र भी निकला था जिसमें नागराक्षरों ही में
सब भाषा के लेख लिखे जाते थे। इस प्रकार की
चेष्टा जारी रहनी चाहिए। प्रत्येक स्कूली पुस्तकों
में हिंदी के कुछ पाठ रहने चाहिएँ। यदि यह बात
हो गई तो धीरे धीरे और बातें भी फैल जांयगी।
यह दुर्भाग्य की बात है कि सर्कार इस ओर से
उदासीन है। महाराष्ट्र देश में भी नागरी लिपि
प्रचलित होगई है और वहां की पुरानी लिपि
मोड़ी को उठाने का प्रस्ताव हो रहा है। सर्कार
का भी इस ओर कुछ थोड़ा बहुत उद्योग है पर वह
'भारत के हृदय' का उद्योग नहीं कहा जा सकता।
यह चेष्टा लोगों द्वारा जैसी होना चाहिए वैसी
नहीं हो रही है। हमारे सारे राष्ट्रीय विचारों को
सुफल करने के लिए एक भाषा की बहुत आव-
श्यकता पड़ेगी इसलिए ऐसी संस्थाए को उन्नत
करने की चेष्टा करना हमारा कर्तव्य है। जब भारत
देश की महाभारत नामक एक राष्ट्रीय पुस्तक विद्य-
मान है तो चेष्टा करने से क्या एक राष्ट्रीय भाषा
नहीं हो सकती? राष्ट्र-संगठन के लिए एक भाषा
की बहुत आवश्यकता है।

इसलिए भारत भर में एक भाषा और एक
लिपि के प्रचार के प्रस्ताव को आप सब लोगों के
सम्मुख उपस्थित करता हुआ मैं यह आशा करता
हूँ कि आप सब लोग इसे स्वीकार करेंगे।" तिलक
महाराज का भाषण समाप्त होने पर महात्मा गांधी
जी खड़े हुए जिनका उपस्थित जनों ने करतल
ध्वनि द्वारा बड़े उत्साह से स्वागत किया। आप

* उदाहरणार्थ मंद्राज प्रांत की एक भाषा में
पानी को 'नीडू' कहते हैं जो संस्कृत 'नीर' का अप-
भ्रंश है। सं०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने खड़े होते ही हिंदी भाषा ही में बोलना प्रारंभ किया जैसा कि वे किया ही करते हैं और समागत जनों के प्रति कहा कि "मैं आप लोगों से एक प्रश्न पूछता हूँ। आप बतलाए कि सभापति महाराज के भाषण को कितने लोग समझे हैं? (यह भाषण अंगरेजी में हुआ था)। बहुत से लोगों ने हाथ उठाया।

ऐसा कौन है जो मेरा वक्तव्य नहीं समझता? सबों ने समझने की सम्मति जनाई। इसके अनंतर महात्मा जी ने कहा कि "सभापति जी के व्याख्यान से मैं सुखी और दुःखी दोनों हुआ हूँ, क्योंकि आप ने आज जो विद्वत्तापूर्ण बातें कही हैं वे यदि हिंदी में कही गई होतीं तो कितना लाभ होता, परंतु हमारे हृदय में उनके प्रति ऐसी श्रद्धा और सम्मान का भाव है कि हम उनके दर्शण ही से तृप्त हो जाते हैं, पर हमें इस बात की भी तृष्णा है कि उनमें जो बातें हैं वह हममें भी आ जांय, इसलिए उनके लिए हिंदी सीख लेना कोई कठिन नहीं है, जब कि लार्ड डफरिन ने और महारानी विकटोरिया ने हिंदी सीख ली थी। हम सर्कार का दोष देते हैं, पर इधर हमारे बहुत शिक्षित वर्ग यह कहते हैं कि बिना अंगरेजी के हमारी उन्नति नहीं हो सकती। करोड़ों हिंदू एक दम से अंगरेजी सीख नहीं सकते। स्वराज्य के लिए सबसे बड़ा आंदोलन तिलक महाराज कर रहे हैं। आप बड़े हैं आप सहज ही में हिंदी को राष्ट्र भाषा बना सकते हैं। कांग्रेस का काम हमारे हाथ में है उसमें यदि हमारे सभापतिजी और मालवीय जी महाराज सहायता करेंगे तो आगामी कांग्रेस में हमें अंगरेजी शब्द सुनने में नहीं आवेंगे। मालवीयजी से मेरी एक प्रार्थना और है। वह यह है कि आपने कांग्रेस में हिंदी में भाषण क्यों न किया। सर्कार के पास पीछे जांयगे। पहले अपने घर वालों को तो देख लें। अंगरेजी तो सब नहीं समझ सकते पर मेरी इस हिंदी को चाहे वह टूटी फूटी है सब लोग समझ तो रहे हैं। प[illegible] और हमरे बच्चे मर रहे हैं, पर बिना अंग्रेजी सम[illegible] उन्हें कोई चारा नहीं। जब हमारे लीडर लोग हिं[illegible] में अपने विचार फैलावेंगे तो अंगरेजी भाषा [illegible] फिर कौन पूछेगा?" महात्मा गांधी जी के [illegible] ख्यान पर लोगों ने बड़े उत्साह से करतल[illegible] की। इसके बाद हिंदू पत्रिका के संपादक रा[illegible] बहादुर यदुनाथ मजुमदार खड़े हुए और बंगा[illegible] होने पर भी आपने खिचड़ी हिंदी में कहना आ[illegible] किया। आप बोले "हमारी भाषा चाहे टूटी फू[illegible] हो वह हिंदुस्तानी होनी चाहिए। हम दूस[illegible] भाषाओं को दूर करना नहीं चाहते पर हिं[illegible] स्तानी सब के लिये हो जाय ऐसा चाहते हैं[illegible] स्वयम् हनुमान जी महाराज द्राविड़ और उत्[illegible] भाषा के बड़े पंडित थे। देखिए हनुमान जी द्रावि[illegible] देश निवासी, रामजी कोशलपुर के और जानकी[illegible] मैथिल थीं, पर हनुमान जी उस समय की [illegible] भाषा को जानते थे और सीता जी को राम [illegible] का संदेश पहुँचाते समय उन्होंने उसी भाषा [illegible] काम लिया। वह भाषा प्राकृत थी और त्रेतायु[illegible] में भी इस राष्ट्रभाषा का प्रचार था। हम स[illegible] देशों में रह चुके हैं। मेरी दी हुई बंगला पुस्त[illegible] को संस्कृत के विद्वान महाराष्ट्र पंडित ने सह[illegible] ही में समझ लिया था और मुझे तुलसीकृ[illegible] रामायण पढ़ने में विशेष कठिनता नहीं पड़ी[illegible] इससे साबित है कि हिंदी ही एक ऐसी भाषा [illegible] जिसे सब लोग समझ सकते हैं। इनके अनंत[illegible] प्रसिद्ध वागेश्वरी श्रीमति सरोजनी नायडू [illegible] संभाषण विशुद्ध उर्दू भाषा में हुआ। आपने क[illegible] कि "हाजरीन जलसा अगर हमें मुल्क से मु[illegible] ब्बत है तो हमें जरूरी अपनी मादरी जुबान [illegible] बोलना चाहिए। जब हमारे भाई हमारी बा[illegible] समझें ही नहीं तो उनसे बोलने से क्या फाय[illegible] होगा। हिंदी उर्दू का क्या फरक है मैं नहीं समझती [illegible] जबान एकही है। मौलवी साहब उसमें अरबी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाराज और मालवीय जी उसमें संस्कृत के अल्फाज मिलाकर बोलते हैं। इसलिए उर्दू को संस्कृत की बच्ची कहें तो क्या हर्ज है। जरूरत पड़ने पर मुगलों ने उर्दू पैदा की। तीन सौ वर्ष पहले भी हिंदू मुसलमान दोनों एक ही जबान से अपना काम चलाते थे। यह कौमी खिदमत है कि सब लोग मिल कर हिंदी को आम फहम बनावें। अपनी अपनी जबान रखिए। आपको उसे छोड़ने के लिए कोई नहीं कहता पर कौमी खिदमत के लिए हिंदी या उर्दू जरूर पढ़ो। फकत अंगरेजी से गांवों में स्वराज्य का पैगाम क्योंकर पहुँच सकेगा। यहां मजहब का जिक्र नहीं हिंदुस्तान का जिक्र है। हिंदुस्तान हमारा क्यों कर हो, इसका जिक्र है। इसलिए सब लोग अपनी अलग अलग जुबान रखते हुए भी एक जुबान कायम कर के उसी जुबान से भारत माता की पूजा करें, क्योंकि अजनबी जुबान से हममें इत्तिफाक नहीं हो सकता।" इनके अनन्तर हिन्दी जगत् के पुराने कर्णधार श्री मालवीय जी महाराज खड़े हुए जिनका करतलध्वनि द्वारा उपस्थित जनों ने बड़े उत्साह से सत्कार किया। आपने कहा—"पृथ्वी पर यही एक विचित्र देश है जहाँ सब काम विदेशी भाषा में होता है। सन १८३७ में गवर्नमेंट ने इस देश की प्रांतीय भाषा (जो उस समय फारसी थी) को अदालतों में प्रचार किया था पर अब तो अंगरेजी का प्रचार हो रहा है। उस समय हाकिम लोग हमारी भाषा सीखते थे। सन १८५४ के खरीते (Despatch) में स्पष्ट रीति से लिखा है कि अंगरेजी भारतवर्ष की राष्ट्रभाषा कदापि नहीं हो सकती, यह बात अधिकारी लोग मान चुके हैं और उन्होंने यह भी कहा है कि सर्वसाधारण की शिक्षा के लिए देशी भाषा पढ़ाई जायगी।" उसके अनुसार कहीं कहीं कुछ कुछ काम भी हुआ है। बंगाल, महाराष्ट्र और गुजरात में बहुत कुछ काम हुआ है। देश में हमें इस समय इस ओर से केवल अंगरेजी के विद्वानों के कर्तव्य की अवहेलना का अभिनय दिखाई दे रहा है अंगरेजी अखबार हमें जो थप्पड़ मारते हैं वह यथार्थ है और इसमें हमारा ही दोष है कि हमने अंगरेजी पढ़ कर जो कुछ लाभ उठाया उसे अपनी भाषा द्वारा जनता में नहीं फैलाया। यदि मिल साहब के विचार चालीस वर्ष पहले देशी भाषा में प्रचलित हो जाते तो आज दिन स्वराज्य के विचार प्रचंड मार्तंड की किरणों की तरह देश भर में फैल जाते। हम यदि स्वराज्य चाहते हैं, अपनी दरिद्रता दूर करना चाहते हैं; संसार में अपनी प्रतिष्ठा चाहते हैं तो आइए देशी भाषा द्वारा संस्कृत और अंगरेजी के विचार अपने भाइयों के सामने उपस्थित करें। क्या हर्ज है; यदि हम प्रत्येक घर में अपनी मातृभाषा के साथ प्रांतीय भाषा भी पढ़ावें, इससे राष्ट्रभाषा के प्रचार में सहायता होगी। एस्परेंटो के राष्ट्रभाषा होने में तो बहुत कुछ संदेह है पर एशिया के बड़े भाग में हिंदी या उर्दू भाषा प्रचलित है। उर्दू हिंदी में मैं भेद करवाने का पक्षपाती नहीं हूँ। मुसलमान भाई अवश्य ही अपने धार्म्मिक ग्रंथों के पढ़ने के लिए अपनी लिपि पढ़ेंगे। मुझे यह आग्रह नहीं कि वे अपनी लिपि या भाषा छोड़ दें। पर जो देश भर की उन्नति चाहते हैं उनका कर्त्तव्य है कि वे उस हिंदी को जिसे हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक प्रायः सब ही जानते हैं राष्ट्रभाषा बनाने में संकोच न करें, क्योंकि स्वराज्य मिलने पर हमें एक राष्ट्रभाषा की आवश्यकता विशेष पड़ेगी। जैसे विलायत के गाड़ीवान भी वहां के तात्कालिक राजनैतिक विचार जानते हैं वैसे ही हमारी शक्ति का सिक्का भी तभी जमेगा जब देश की राजनैतिक और व्यवस्थापक सभा के सारे व्याख्यान देशी भाषा में छप कर जनता के हाथ में पहुँचेंगे। कल कांग्रेस में दूर दूर से आए हुए हमारे मदरासी प्रतिनिधियों के सत्कारार्थ अपनी इच्छा के विरुद्ध भी मुझे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंगरेजी में बोलना पड़ा। महात्मा गांधी जी का और मेरा प्रण एक है और इस विषय में विवश हो मुझे ऐसा करना पड़ा। भला जिस शब्द को हमने माता के दूध के साथ पान किया है उससे बढ़ कर हमारा प्यारा और कौन है। अतएव आप सब सज्जनों से प्रार्थना है कि आप अपने अपने प्रांत की भाषा भले ही पढ़ें पर एक उर्दू हिंदी की ऐसी प्राइमर बना लें जो सुगमता से सारे प्रांत के लोग पढ़ सकें। आप लोगों को सुन कर हर्ष होगा कि हिंदू विश्वविद्यालय में भी हिन्दी की शिक्षा एम० ए० तक ली जायगी" अनन्तर एक मंदराजी विद्वान स्वामी कृष्ण मूर्त्याचार्य्य का व्याख्यान हुआ। आपने संस्कृत भाषा में कहा कि "मैं हिन्दी में बोल नहीं सकता और मुझे विदेशी भाषा में यहां बोलते भी संकोच मालूम पड़ता है इस लिये मुझे देववाणी का सहारा लेना पड़ा। बिना एक भाषा के एकता क्यों कर हो सकती है। देशी भाषाओं में गुजराती, मराठी, हिंदी इत्यादि बहुतसी भाषाएँ हैं। पर यह स्पष्ट है कि सब लोग हिंदी अवश्य समझते हैं। हम मंदराजी भी अन्य प्रांतीय भाषाओं की अपेक्षा हिंदी अधिक ही समझते हैं और इसे फैलने की चेष्टा भी अपने प्रांत में कर रहे हैं।"

इनके अनंतर दूसरे एक मंदराजी सज्जन ने अंगरेजी में अपना व्याख्यान देते हुए कहा कि मंदराज प्रांत में हिंदी प्रचार की चेष्टा हो रही है और वहां के लोग इसके पक्ष में हैं। क्योंकि स्वराज्य के विचार फैलाने के लिए यह नितांत आवश्यक है। हमारे प्रांत में सिखाने के लिये कई निशा शालाएँ (night schools) खुली हैं और अब बहुत से लोग हिंदी समझने लगे हैं। हिंदी लिपि में मंदराजी भाषाओं के लिखने की भी चेष्टा हो रही है और इस उद्देश्य से हम लोग सब एक प्राण हैं।"

अनंतर मध्यप्रांत के इंदौरनिवासी महाशय जालिम सिंह जी ने उठ कर सूचित किया कि आगामी ता० २९ ३० और ३१ मार्च को इंदौर में अष्टम हिंदी साहित्य सम्मेलन होगा और महात्मा गांधी जी सभापति का आसन ग्रहण करेंगे। आप सब सज्जनों को वहां पधारने का निमंत्रण देता हूं।

बाद सभापति जी ने प्रस्ताव किया कि तृतीय राष्ट्र-भाषा-सम्मेलन आगामी वर्ष दिल्ली में हो और इस सम्मेलन में विचारार्थ विषयों के निर्धारणार्थ एक समिति नियत की जावे। पश्चात् इस कमेटी के सभासदों के नाम पढ़ कर सुनाए गए जिनमें प्रायः सभी प्रसिद्ध नेताओं के नाम थे और इस सभा के मुख्य मंत्री राय यतींद्रनाथ चौधरी हुए।

अब हिंदी संसार के वर्तमान हास्यरसावतार पं० जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी जी ने सभापति को धन्यवाद देते हुए कहा कि "भारत के भाल तिलक महाराज को आज सब लोगों की ओर धन्यवाद न दे कर मैं उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करता हूं। जैसे अशोक बन से सीता का उद्धार हुआ था वैसे ही तिलक माहाराज की कृपा से मातृभाषा का उद्धार होगा इसमें कोई भी संशय नहीं।" इसके बाद श्रीमान खेतान जी ने प्रस्ताव का मोदन करते हुए कहा कि "इस प्रस्ताव का अनुमोदन मैं तो क्या सारे भारतवासी हृदय से करते हैं" अनंतर पं० माधव शुक्ल ने हिंदी की प्रशंसा पर कुछ गायन किया और सानंद दिन के ग्यारह बजे यह सम्मेलन समाप्त हुआ।

[एक दर्शक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्य भाषा और जातीयता।

[लेखक—कविवर पं० श्रीधर पाठक।]

(यह भाषण आपने इस वर्ष आर्यभाषा-सम्मेलन कांगड़ी के आरम्भ में पढ़ा था।)

हम यहां हिंदी वा आर्यभाषा की उन्नति और प्रचार के विषय में विचार करने को एकत्रित हुए। यह विषय नया नहीं है, पुराना है; और उतना पुराना है जितना कि हमारी जातीय उन्नति का विषय है। हमारी मातृ-भाषा की उन्नति का प्रश्न हमारे जातीय जीवन या कौमी जिंदगी का प्रश्न है। यदि हमारी जाति को जीवित रहना है तो उसके साथ साथ हमारी भाषा का भी जीवित रहना जरूरी है। जीवन से तात्पर्य उन्नति या उन्नति-शील जीवन से है। बिना उन्नति के जो जीवन हो, वह जीवन नहीं है, मरण है।

भाषा या वाणी के बिना मनुष्य-जीवन का कोई कार्य्य संभव नहीं।

बिना भाषा के एक मनुष्य दूसरे मनुष्य को रोकर अपने मन की बात जता सकता है। यह छोटी बात सभी समझते हैं। जब पृथ्वी के किसी भाग में जहां लाखों करोड़ों लोग बसते हों, एक भाषा काम में लाई जाती हैं तब वह उन लोगों की या उस देश की जातीय या देशीय भाषा कहलाती है। उस भाषा के द्वारा उस देश के सब आंतरिक (और कभी कभी बाह्यिक) व्यवहार निर्वाहित होते हैं।

बहुत बड़े देशों में, जैसा कि हमारा भारतवर्ष है, दूरवर्ती भिन्न भिन्न प्रांतों में भिन्न भिन्न भाषाओं का होना स्वाभाविक है। ऐसे देशों में यदि शासन एक ही हो तो उसके निर्वाह के अर्थ समस्त देश के लिये एक सामान्य भाषा की आवश्यकता होती है। शासन-कर्ताओं और प्रजाजनों की जातीयता एक ही हो अथवा बहुत मिली जुली हो तो उसी सामान्य भाषा से सामान्य-शासन के अतिरिक्त दूसरे सार्वदेशिक कार्य भी निर्वाहित हो सकते हैं।

हमारे संपूर्ण देश का राज्य वा शासन-प्रबंध आजकल एक विदेशीय जाति के हाथ में है। अतः इस देश की राजकीय वा शासन-भाषा उसी जाति की भाषा है। परंतु वह इतनी अधिक विदेशीय है कि यद्यपि सामान्य-शासन उससे चल रहा है, पर प्रजा के यावत् कार्य और व्यवहार उससे नहीं चल सकते। क्योंकि उसमें उनके लिये उपयुक्तता नहीं है। हमारे आदर्श और हमारी परम्पराएँ जो कि हमारी जातीय सम्पत्ति हैं उसके द्वारा सुरक्षित नहीं रह सकतीं। अतः वह हमारी जातीय भाषा या राष्ट्र भाषा या देश भाषा नहीं मानी जा सकती। वह केवल हमारी राज-भाषा है।

अतः हमारे इस विस्तृत महाद्वीप के लिये एक ऐसी भाषा की आवश्यकता है जिसके द्वारा समस्त देश के सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक तथा अन्य नैतिक व्यवहार बिना राजभाषा का आश्रय लिए, क्योंकि राजभाषा इन सब के लिये अनुपयुक्त है, भिन्न भिन्न प्रांतों के बीच परस्पर में हो सकें, इस प्रयोजन के उपयुक्त एक भाषा हमारे देश में विद्यमान है। वह हिंदी वा आर्यभाषा है जो भारतवर्ष के सब से बड़े भाग में बोली जाती है और प्रत्येक प्रांतिक विभाग में थोड़ी बहुत समझी जाती है। वह भाषा हमारी संपूर्ण जातीय विशेषताओं के उपयुक्त है और यह उपयुक्तता हमारे हजारों बरसों के जातीय या सामाजिक तथा धार्मिक संघर्ष का फल है।

इस कारण यह भाषा भारतवर्ष के प्रत्येक निवासी की सामान्य वस्तु है। उस पर सब का समान स्वत्व है जैसे कि भारतवर्ष के आकाश और पृथ्वी पर प्रत्येक भारतवासी का समान स्वत्व है। इतना ही नहीं, अपनी जातीय भाषा पर प्रत्येक का उतना ही स्वत्व है जितना अपने शरीर वा आत्मा वा संतति वा धन-सम्पत्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर है। तथैव भाषा का भी प्रत्येक पर वह स्वत्व वा ममता है जो माता-पिता को अपनी संतति पर होती है। हमारी भाषा हम को अपनी माताओं के स्तन-पान के साथ मिलती है वह हमारी माताओं की देन है, वह हमारी मातृ-भाषा है। ऐसी भाषा का हमारे जीवन के प्रत्येक अंग के साथ संबंध है। भाषा के प्रत्येक शब्द में शक्ति होती है, प्रत्येक शब्द में जीव और आत्मा होती है, प्रत्येक शब्द एक एक व्यक्तिवत्, एक एक विश्ववत् है। प्रत्येक शब्द में पवित्र जातीयता होती है। प्रत्येक शब्द किसी न किसी जातीय परंपरा का द्योतक होता है। प्रत्येक शब्द अपना इतिहास रखता है जो इतिहास उस शब्द की जन्मभूमि के इतिहास से संबद्ध होता है। अतः जो शब्द हमारे हैं, चाहे वे परंपरा से ही हमारे हों, अथवा किसी कारण-विशेष से हमने अपने बना लिए हों, उनसे हमारा संबंध है। जो शब्द हमारे नहीं हैं उनमें हमारी जातीयता और हमारा अपनापन नहीं है। हमारे देश में एक ऐसी भाषा है जिसको हम अपनी जातीय भाषा कह सकते हैं और वह हिंदी वा आर्य भाषा है। जिस वस्तु को जो अपनी मानता है उसके साथ वह अपने सगों का सा बरताव करता है। अब प्रश्न यह है कि क्या ऐसा बरताव हम इस अपनी मातृ-भाषा के साथ करते हैं? क्या हम अपने सब काम आर्य भाषा और आर्य लिपि में करते हैं? क्या हम अपनी चिट्ठी-पत्री, लिखत-पढ़त, लेन-देन, हिसाब-किताब आर्य भाषा और आर्य लिपि में करते हैं? क्या हमारे सब ग्रंथ, सब सामयिक पत्र, जो हमारी जातीय संपत्ति हैं, आर्य भाषा और आर्य लिपि में होते हैं?

इन प्रश्नों का उत्तर यदि एक स्वर से मुक्त-कंठ "हां" हो तो निस्संदेह हम अपनी भाषा का उचित व्यवहार कर रहे हैं और अपने जातीय जीवन को पुष्टि-प्रदान करते हुए अपनी जाति को अमर बना रहे हैं। परंतु यदि उत्तर कुछ अंश में भी नकारात्मक हो तो हम अपना धर्म अपनी मातृ भाषा की ओर नहीं निबाह रहे हैं और अपनी स्थिति को शोचनीय बना रहे हैं। क्या इस प्रश्न का आंशिक उत्तर वह पुस्तक-पण्यशालाएं नहीं दे रही हैं जो प्रत्येक गुरुकुल-यात्री को कुल-भूमि में पदार्पण करते ही अनेकों फ़ारसी लिपि की पुस्तकों का परिचय कराती हैं। क्या किसी आर्य व्यक्ति के चित्त में उन पुस्तकों को देखकर दुःख नहीं होता? क्या ऐसा दृश्य किसी दूसरे देश या दूसरी जाति में संभव है? क्या आप में से किसी ने भारतीय आर्यों से भिन्न किसी जाति को अपने साहित्य वा धर्मग्रंथ को अपनी जातीय भाषा से भिन्न भाषा वा अक्षरों में अपने लिए लिपिबद्ध करते देखा या सुना है? क्या यह बात सच नहीं है कि आर्यसमाज और हिंदूसभा के बहुत से समाचार पत्र उर्दू भाषा और फ़ारसी लिपि में प्रकाशित होते हैं? क्या यह अपनी मातृ भाषा का उचित व्यवहार है?

यह स्मरण रखने योग्य सिद्धांत है कि प्रत्येक जाति की यावत् शक्तियों का पूरा और सच्चा विकास उस जाति की मातृ-भाषा ही के द्वारा संभव है। यदि किसी जाति का आंशिक विकास किसी विदेशी भाषा के द्वारा हुआ हो या होना आरंभ हो गया हो तो समझिए कि, वह जाति यदि अपनी मातृ-भाषा को शीघ्र ही उचित व्यवहार में न लावेगी तो अंत को वह विदेशी भाषा ही उस जाति की मातृ-भाषा हो जावेगी।

यह भी स्मरणीय है कि विश्व प्रपंच के विविध विभागों में सच्चा और सजीव सौंदर्य तभी संपादित होता है जब योग्य को योग्य स्थान मिलता रहता है जो वस्तु जहाँ रहने योग्य हो उसे वहाँ रखना वा रहने देना ही सौंदर्य का संपादन है। यह परमात्मा की सृष्टि का एक नियम है। हमारी बड़ी कमाई से बनाई हुई हमारी पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माता की भाषा, आर्यभाषा या हिंदी भाषा हमको माता देती है, क्योंकि वह हमारी है और हम माता के हैं। हम में उसका स्थान है और उसमें हमारा स्थान है; और यह संबंध (जैसा कि एक बार निवेदित किया जा चुका है) सैकड़ों, सहस्रों वर्षों के सहज संयोग और सतत संदर्भ और संघर्ष से बना है। इस संबंध का दृढ़ीकरण प्रत्येक आर्य का परम धर्म है। इस के लिये प्रत्येक आर्य पुरुष और प्रत्येक आर्य-रमणी को दृढ़ प्रतिज्ञा कर लेनी चाहिए।

हमारी मातृ-भाषा की ओर हमारा इतना ही कर्तव्य नहीं है। देखिए, एक समय था कि हम औरों को शक्ति बाँटते थे अपनी अमूल्य विद्या-शक्ति को बिना मूल्य दूसरों को देने में आनन्द मानते थे। परंतु क्रमशः हम इतने दानी होगए कि अपना सब कुछ औरों को दे डाला, और आप कोरे रह गए। और अपनी सारी शक्ति खो बैठे। अब औरों की ओर ताकते हैं। वह हमारी बाँटी हुई शक्ति अन्यत्र पहुँच कर हजार गुनी हो गई। वह आज दशों दिशाओं में देदीप्यमान दीखती है। सिर्फ हमारे ही घर में उसकी कमी है। इस कमी को मातृ-भाषा की सेवा द्वारा हम दूर कर सकते हैं। सारे संसार के रत्नों से अपना भंडार भरिए और सारे संसार की शक्ति को अपने द्वारा आकर्षित कर अपनी शक्ति में मिलाइए।

भारतवर्ष में हिंदू (आर्य) मुसलमान, ईसाई आदि मत-भेद से भिन्न भिन्न जातियाँ बसती हैं। पर सबको एक साथ इस देश में रहना है। उन्हें कोई शक्ति, सिवा ईश्वरी शक्ति के, एक दूसरे से कुछ अलग नहीं कर सकती। उसका एक साथ रहना ज़रूरी है। धर्म और मत के संबंध वे पृथक् पृथक् हैं, परन्तु राष्ट्र-संबंध में वे एक माला के दाने हैं। इस संबंध में उनका साहित्य एक हुए बिना उनकी राष्ट्रीय उन्नति संभव नहीं। राष्ट्रीय साहित्य राष्ट्रीय भाषा में ही हो सकता है। अतः राष्ट्रीय मंगल के लिये इस राष्ट्रीय आर्य भाषा को बिना विलंब सब को अपनाना चाहिए और अपना कर उचित व्यवहार में लाना चाहिए।

यदि हम अपनी मातृ-भाषा की सेवा और आराधना जारी रखें तो क्या यह संभव नहीं कि वह समय शीघ्र ही आवेगा जब कि इस गुरुकुल की भांति भारतवर्ष भर में स्थान स्थान पर आर्य-भाषा के विश्वविद्यालय देखने में आवेंगे और असंख्य हिंदी पुस्तकालयों से देश भूषित हो जायगा। उस समय देश देशांतरों से विद्यार्थी हमारी भाषा द्वारा ज्ञान उपार्जन के हेतु हमारे द्वार पर पुनः पूर्ववत् आया करेंगे।

विज्ञान की कृपा से इस पृथ्वी पर पुराण-प्रसिद्ध आकाश-यान फिर बनने लग गए हैं, जिन के द्वारा अन्य देशों में अनेकों कार्य होते सुने जाते हैं। ये यान कुछ दिनों में अवश्य संसार-व्यापी हो जायँगे। तब क्या यह संभव न होगा कि हमारे आर्यभाषा के विद्यालयों और पुस्तकालयों से लाभ उठाने के लिये, पृथ्वी के देशांतरों ही के नहीं, किंतु सुदूर नक्षत्रों के निवासी भी विमानों में बैठ बैठ कर आया करेंगे! हमको आर्यभाषा की उन्नति के संबंध में ऐसा ही सपना देखना चाहिए और उसको प्रत्यक्ष कर दिखाने का प्रयत्न करना चाहिए। तभी हमारे आर्य नाम की सार्थकता संपन्न होगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रोफेसर भोंदू।

(लेखक बा० दुर्गाप्रसाद धवन संपादक उपन्यास लहरी)

(१)

प्रोफेसर साहब का पूरा नाम "जगद्विनोद बंधु" था। अंगरेजी में वे अपने को जे० बी० बोंधू लिखा करते थे और प्रायः प्रोफेसर बोंधू पुकारे जाते थे। उसी का अपभ्रंश प्रोफेसर भोंदू हो गया था और लोग प्रायः उनको मजाक से प्रोफेसर भोंदू पुकारा करते थे।

प्रोफेसर साहब की विद्वत्ता में किसी प्रकार का संदेह करने की जगह न थी। वे विलायत जा और वहां से जर्मनी पहुँच विद्या लाभ करके इस देश का अंधकार दूर करने को लौटे थे पर अभी तक उन्हें इस कार्य में सफलता नहीं हुई थी। उनका ज्यादा परिचय देने की अभी आवश्यकता नहीं है। आप को स्वयं ही आगे चल कर मालूम हो जायगा।

प्रोफेसर भोंदू मुझ पर बड़ा ही स्नेह रखते हैं। यों तो पृथ्वी के तमाम जीवधारी उनकी दया के पात्र हैं पर मुझ पर उनकी कुछ विशेष दया रहती है। इसका कारण कदाचित् यह हो कि मैं औरों की तरह उनकी बातों को हँसी में नहीं उड़ा दिया करता था बल्कि ध्यानपूर्वक उस पर विचार और बहस करता था। प्रोफेसर साहब भी और किसी बात से यहां तक कि उनका सब कथन मान लेने से भी किसी पर उतना प्रसन्न नहीं होते थे जितना इस बात से कि उनके कहे विषय पर विचार किया जाय और उनसे बहस की जाय। वे उस समय और भी प्रसन्न होते थे जब उनकी कोई भूल बहस करके उनको साबित कर दी जाती थी। अस्तु।

इस समय प्रोफेसर साहब एक बड़े ही गूढ़ प्रश्न के मंथन में पड़े हुए थे। वह प्रश्न क्या था? यह मेरी जबानी सुनने की बनिस्बत उन्हीं की जबानी सुनना पाठकों को कदाचित् ज्यादा रुचिकर होगा। अस्तु, मैं इसे ठीक उसी तरह बयान करता हूँ जैसा मैंने स्वयम् उनके मुंह से सुना था।

एक दिन दोपहर के समय भोजन करने के बाद और कोई काम न रहने से मन बहलाने के लिये मैं प्रोफेसर साहब के घर पर चला गया। प्रायः मैं इसी तरह उनके पास जा पहुँचता था और वे भी बड़े प्यार के साथ मुझ से मिलते और बात करते थे। अस्तु उस दिन जो मैं उनके घर गया तो मैंने देखा कि अपनी लेबोरेटरी (विज्ञानशाला) में बैठे एक मरे हुए चूहे के बच्चे को वे बड़े गौर से देख रहे थे। मेरे पहुँचने की आहट पाते ही वे घूम कर बोले "वाह! बड़े अच्छे मौके पर आए। इस समय मैं तुम्हारी ही खोज में था"

उनकी इस बात से मुझे कुछ ज्यादा ताज्जुब नहीं हुआ क्योंकि वे आज के पहले भी प्रायः इस प्रकार मेरी खोज में रहा करते थे पर एक मरे चूहे को इस प्रकार अपने सामने टेबुल पर रखे गौर से देखते हुए उन्हें देख मुझे कुछ आश्चर्य अवश्य हुआ। अस्तु मैंने कहा "कहिए कहिए क्या बात है?"

प्रोफेसर साहब ने जो टेबुल के सामने बैठे हुए थे अपने सामने अर्थात् टेबुल के दूसरी तरफ को एक कुर्सी पर मुझे बैठने को कहा। जब मैं बैठ गया तब वे बोले, "देखो! इस चूहे को देखते हो?"

मैं बोला—'बेशक देख रहा हूँ।"

प्रोफेसर—क्या देखते हो?

मैं—मरा हुआ चूहा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रोफेसर—हाँ हाँ, मरा हुआ चूहा तो है पर तुमने क्या बात पाते हो ?

मैं उनके प्रश्न का तात्पर्य समझ न सका। अस्तु, मैं चुप रहा। यह देख वे बोले, "अरे यार ! इस चूहे में जान है या नहीं ?

मैं—नहीं यह बेजान है ?

प्रोफेसर—यानी तुम एक बेजान का चूहा देख रहे हो ?

मैं—(कुछ संदेह के साथ) हाँ मालूम तो ऐसा ही होता है।

प्रो०—मालूम क्या वास्तव में यही बात है। अच्छा तो इस चूहे में जान नहीं है ?

मैं—हां जान नहीं है।

प्रो०—तुमने कैसे समझा कि इसमें जान नहीं है ?

मैं—यह हांथ पांव नहीं हिलाता सांस नहीं लेता ...

प्रो०—यानी इस में हरकत नहीं है।

मैं—बेशक इसमें किसी तरह की हरकत नहीं है।

प्रो०—ठीक है। यानी किसी तरह की हरकत का न होना ही जान का न होना है।

मैं—(रुकता हुआ) हां मालूम तो ऐसा ही होता है।

प्रो०—इसी बात को दूसरे ढंग पर क सकते हैं कि इसमें आत्मा नहीं है ?

मैं—बेशक यह कह सकते हैं कि इस चूहे की देह में आत्मा नहीं है ?

प्रो०—आत्मा क्या चीज है ?

मैं—आत्मा क्या चीज़ है यह तो मैं नहीं कह सकता पर इतना कह सकता हूँ कि यह कुछ ऐसी चीज है जिसके विषय में हम लोग कुछ नहीं जानते पर जो समस्त जीवधारियों में है और जिसके प्रभाव से सब देहधारी काम करते हैं।

प्रो०—ठीक ! ठीक ! आत्मा एक ऐसी कोई ताकत है जिसके प्रभाव से सब देहधारी काम करते हैं, ठीक है। यानी आत्मा एक ऐसी चीज है जो सब हरकतों का प्रधान कारण है ? मगर जिसके बारे में हम लोग कुछ नहीं-या बहुत कम जानते हैं ?

मैं—हाँ।

प्रो०—इसी आत्मा को कोई जान कहता है, कोई प्राण वायु कहता है, कोई.....

मैं—ठीक है, इसके कई नाम हैं पर बात एक ही है।

प्रो०—अच्छा यह तो एक बात हुई। देखो खूब ख्याल रक्खो इस बात का—आत्मा जान प्राणवायु आदि सब कुछ एक ऐसी ताकत है जिससे सब जीवधारी हरकत करते हैं। अच्छा अब दूसरी बात लो—

मैं—कहिये।

प्रो०—इस चूहे में आत्मा नहीं है यानी जान नहीं है ?

मैं०—हां जान नहीं है, मर गया है।

प्रो०—(बिगड़ कर) मर गया है क्यों कहते हो—कोई चीज़ इस दुनियां में नहीं मरती—यह कहो कि इसमें आत्मा नहीं है—चूहे की देह में आत्मा का अभाव है।

मैं—ठीक है।

प्रो०—ठीक ठीक ठीक ठीक ! अच्छा देखो, खूब गौर से सुनो—इसमें जान नहीं है—आत्मा नहीं है इससे यह चूहा मर गया—अच्छा जब आत्मा नहीं है तो जरूर वह इसकी देह से बाहर निकल कर कहीं और चली गई। तभी तो यह देह हरकत नहीं करती है ? अगर आत्मा रहती है तो किसी न किसी प्रकार की हरकत इस देह में जरूर होती।

मैं—बेशक अब इस चूहे की देह में आत्मा नहीं है, कहीं चली गई।

प्रो०—ठीक है कहीं चली गई-ठीक ठीक ठीक-अच्छा जब कोई चीज कहीं जाती है तो उस उस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जगह जानेके लिये कोई मिडियम—यानी राह, सड़क, जरिया चाहिए।

मैं—मैं इस बात को नहीं समझा।

प्रो०—नहीं समझे? अच्छा मैं पुनः समझाता हूँ—तुम जब इस मेरे मकान से अपने मकान पर जाया चाहते हो तो कैसे जाते हो?

मैं—सड़क से जाता हूँ, सड़क से गली में जाता हूँ और गली से अपने मकान में जाता हूँ।

प्रो०—यानी तुम्हारे जाने के लिये एक सड़क की जरूरत है। अच्छा दूसरी बात लो। इस शहर से जब तुम किसी दूसरे शहर में जाया चाहते हो तो कैसे जाते हो?

मैं—रेल पर चढ़ कर जाता हूँ।

प्रो०—ठीक है, यानी दूसरे शहर में जाने के लिये भी एक जरिये—रेल की जरूरत पड़ी। अच्छा अब पुनः समझो। बिजली की ताकत यदि यहां से तुम दूर पहुँचाया चाहते हो तो कैसे पहुँचाते हो?

मैं—तांबे अथवा लोहे की तार के जरिये बिजली की ताकत दूर दूर तक पहुँचाई जा सकती है।

प्रो०—ठीक, याने बिजली के लिये वह तांबे की तार एक सड़क की तरह हुई जिस पर चल कर वह बात की बात में सैकड़ों कोस पहुंच सकती है? जिस तरह तुम बगैर सड़क के अपने घर और बगैर रेल के दूसरे शहर में नहीं जा सकते उसी तरह बगैर लोहे आदि के तार के बिजली दूसरी जगह नहीं जा सकती।

मैं—मगर अब तो बेतार की तार हजारों कोस तक जाती है?

प्रो०—(खुश होकर) ठीक ठीक बेतार की तार बगैर तार के हजारों कोस जाती है—यह बात मेरी बात का खंडन न कर के मंडन ही करती है। क्या तुम समझते हो कि बेतार की तार बगैर किसी मिडियम के ही वहां पहुंच जाती है?

मैं—जाहिरा तो कोई मिडियम दिखाई नहीं पड़ता पर मैंने सुना है कि हवा और ईथर पर एक प्रकार की लहरें पैदा करती हुई वह बेतार की तार अपने गन्तव्य स्थान पर पहुँच जाती है।

प्रो०—बिजली एक ऐसी ताकत है जिसका बहुत कुछ उपयोग करने और जिस से बहुत कुछ काम लेने पर भी हम लोग अभी उसके विषय में यह जान नहीं सके हैं कि वह वास्तव में क्या वस्तु है। खैर जो कुछ भी हो। बिजली के लिये भी एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिये तार, हवा अथवा ईथर की आवश्यकता पड़ती है?

मैं—हां पड़ती है।

प्रो०—आवाज को एक जगह से दूसरी जगह जाने के लिये हवा की आवश्यकता पड़ती है?

मैं०—हां पड़ती है क्योंकि मैंने सुना है कि किसी पात्र में से यदि हवा सब निकाल दी जाय तो उस पात्र के भीतर होता हुआ कोई शब्द जैसे घंटी का बजना अथवा घड़ी का टिक टिक बाहर तक नहीं सुनाई पड़ता।

प्रो०—ठीक है ठीक है—यानी अब क्या तत्त्व निकला? किसी चीज या किसी ताकत को एक जगह से दूसरी जगह जाने के लिये एक मीडियम की जरूरत है? इस बात को तुम समझे?

मैं—हां अब मैं अच्छी तरह समझ गया। किसी एँजिन से यदि कोई यंत्र चलाना होता तो एक तस्मा बांध कर एंजिन का उस के साथ संयोग करना पड़ता है। यानी एँजिन से ताकत एक तस्मे के द्वारा उस यंत्र तक पहुंचाई जाती है—यानी ताकत को एँजिन से उस यंत्र तक चलने के लिये एक मिडियम—तस्मे—की आवश्यकता है?

प्रोफेसर साहब मेरी यह बात सुनते ही खुशी से उछल पड़े और बोले "ठीक ठीक ठीक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठीक, खूब समझे। अच्छा तो जब हर एक चीज वस्तु को जिसे हम जानते हैं, एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिये एक मिडियम की जरूरत है तो आत्मा भी तो एक शक्ति है—उसे भी एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिये किसी न किसी मिडियम की जरुरत होगी यानी इस चूहे की देह से आत्मा तब तक बाहर नहीं निकल सकती जब तक इसे अपनी इस बाहर के लिये कोई मिडियम यानी रास्ता—सड़क न मिल जाय।

अब मैं कुछ सकपकाया। मगर प्रोफेसर की बात युक्तिसंगत मालूम होती थी। हर एक चीज को एक जगह से दूसरी जगह जाने के लिये जब एक सड़क की जरूरत है तो क्यों न आत्मा को भी जरूरत पड़े? मगर मान लिया जाय कि पड़े भी. तो अब से क्या? इस बात से प्रोफेसर का क्या मतलब निकलेगा? क्या वह अदृश्य सड़क को हटा कर आत्मा को जबर्दस्ती किसी में रोक रक्खेगा? खैर जो कुछ होगा सामने ही आवेगा। आखिर मैंने कहा, 'जी हाँ मालूम तो होता है कि आत्मा को भी एक जगह से दूसरी जगह जाने के लिये एक सड़क की जरूरत पड़ेगी—मगर यह वस्तु आत्मा अथवा जान—एक ऐसी ताकत है जिसके बारे में हम अभी कुछ भी नहीं जानते। मुमकिन है कि इस ताकत—इस आत्मा को एक जगह से दूसरी जगह जाने के लिये किसी मीडियम की जरूरत न हो?

प्रो०—ठीक है ठीक बहुत मुमकिन है—मगर इस की ऐसी चीजें हैं जिनके बारे में हम विशेष कुछ नहीं जानते जैसे रेडियम। बिजली आदि से हम काम ले लेते हैं इसी प्रकार इस आत्मा के बारे में भी कुछ न जानते हुए भी हम उनसे काम ले सकते हैं?

मैं—तो क्या आप आत्मा से गाड़ी खिंचवाना चाहते हैं—माफ कीजियेगा—मेरी आत्मासे ऐसा काम कृपया न लीजियेगा।

प्रो०—नहीं नहीं, हँसी न करो। Seriously इस बात पर विचार करो।

मैं—खैर तो ठीक है, जिस अन्यान्य कई वस्तुओं के विषय में विशेष कुछ न जानने पर भी हम लोग उनसे अपना काम ले ही लेते हैं उसी प्रकार यदि कोई ऐसा इंजिन बन जाय जिसमें भाफ या बिजली या आग की जगह आत्मा काम करे तो इस धारणा के विषय में विशेष कुछ न जानने पर भी हम इससे काम ले सकते हैं।

प्रो०—ठीक ठीक ठीक, काम ले सकते हैं। अच्छा यह तीसरी बात हुई। याद रखना इन बातों को। अच्छा अब जानना यह है कि वह कौन सी सड़क है जिस पर से आत्मा आया जाया करती है।

मैं—हाँ जानने की बात तो अब यही रह गई।

प्रो०—अच्छा अब मेरी बात गौर से सुनो। हम लोगों के अनुसार पृथ्वी में पाँच तत्व हैं। आकाश, पृथ्वी, जल, आग, वायु। इसमें आखिरी चारों तो प्रत्यक्ष ही हैं और पहिले यानी आकाश तत्व को तुम वह तत्व मान सकते हो जिसे अंगरेजी में ईथर कहते हैं। जिसके जरिये सूर्य की रोशनी इस पृथ्वी पर आती है अथवा अन्य तारों की चमक हमें दिखाई पड़ती है।

मैं—इस बारे मैं विशेष बुद्धि नहीं रखता पर आकाश तत्व को ईथर मान लेने में मैं कोई आपत्ति नहीं देखता।

प्रो०—अच्छा तो इन पाँचों में से शरीर में आत्मा रखने के लिये किस तत्व की विशेष आवश्यकता है?

मैं—पाँचो ही तत्वों की आवश्यकता है क्यों कि इन्हीं पाँचों से यह पंचभौतिक शरीर बना है।

प्रो०—(कुछ बिगड़ कर) तुम तो बेवकूफ हो। (शांत हो कर) अच्छा इस बात को इस तरह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर देखो। तुमको अगर आग में डाल दें तो क्या होगा ?

मैं—कहीं सचमुच ऐसा इरादा आपका तो नहीं है ?

प्रो०—हँसी मत करो, हँसी मत करो। बताओ, अगर तुम्हें आग में छोड़ दूँ तो क्या हो ?

मैं—मर जाऊँ।

प्रो०—पानी में छोड़ दूँ तो ?

मैं—मरजाऊँ।

प्रो०—जमीन में गाड़ दूँ ?

मैं—मरजाऊँ।

प्रो०—ईथर यानी ऐसी जगह डाल दूँ जहाँ हवा नहीं है तो क्या हो ?

मैं०—मरजाऊँ।

प्रो०—अच्छा और अगर हवा में रख छोड़ूँ ?

मैं०—हवा में रहूँ खाने पीने को मिलता रहे तो जिन्दगी भर जीता रहूँ।

प्रा०—यानी वायु—यह एक ऐसा तत्व है जो आत्मा को सब से अधिक देर तक कायदे से रख सकता है ?

मैं—बेशक।

प्रो०—तो यदि मैं यह कहूँ कि आत्मा सब काम करता है पर हवा में अधिक स्थाई है इस कारण हवा ही का इसके आने जाने के लिये मिडियम होना सब से अधिक संभव है न ?

मैं प्रोफेसर की बात सुन चिंता में पड़ गया। प्रोफेसर की यह बात ऐसी न थी कि हँसी में उड़ा दी जा सके। बेशक उसकी बातों में कुछ गूढ़ तत्व था—आखिर मैंने कहा।

मैं०—मैं आपकी इस बात को नहीं मानता।

प्रो०—(खुश हो कर) क्यों ? क्यों नहीं मानते ? इस कथन में तुम क्या गलती पाते हो ?

मैं०—सुनिए। यह तो आप अवश्य ही मानेंगे कि आत्मा अथवा जान भी एक प्रकार की शक्ति है ?

प्रा०—बेशक—

मैं०—और यह भी आप मानेंगे कि हर एक शक्ति में यह प्रभाव है कि वह Diffuse होने की निरंतर चेष्टा किया करती है ?

प्रो०—मैं तुम्हारा अर्थ समझ तो गया पर तौभी इस बात को बढ़ा कर explain करो।

मैं०—सुनिये। एक बिजली की बैटरी में ताकत भरी हुई है ? जिस समय मैं एक तार द्वारा उस बैटरी का संबंध किसी और यंत्र से कर देता हूं उसी समय वह ताकत भाग कर उस यंत्र की तरफ दौड़ती है और उससे मुनासिब काम कराती है। यानी वह ताकत बैटरी के बाहर निकलने की बराबर कोशिश कर रही थी, तार मिलते ही निकल भागी।

प्रो०—ठीक है।

मैं०—तार की जगह अगर मैं एक लकड़ी के टुकड़े से यह संयोग करता तो ताकत न जाती।

प्रो०—नहीं।

मैं०—यानी मतलब यह कि हर एक शक्ति Diffuse होने की कोशिश कर रही है और मुनासिब Medium मिलते ही फैल जाती है।

प्रो०—ठीक है।

मैं०—जब तक योग्य मिडियम उसे नहीं मिलता तब तक वह ताकत नहीं जाती।

प्रो० ठीक है।

मैं०—अस्तु इससे यह जाहिर होता है कि हवा आत्मा के योग्य मिडियम न थी। इसलिये यह शक्ति तब तक शरीर के बाहर न निकल सकी जब तक उसको हवा घेरे हुए रही। हवा के बदले जैसे ही उसे अन्य कोई मिडियम जैसे अब जल वायु आदि उसे मिला वैसे ही वह निकल भागी।

मेरी बात सुनते ही प्रोफेसर साहब उछल पड़े और तब एक गंभीर चिन्ता में डूब गए।

* फैलना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत देर के बाद प्रोफेसर भोंधू ने सिर उठाया। मैंने पूछा—आप क्या सोचने लग गए ?"

प्रो०—तुमने मेरे सामने एक ऐसी विकट समस्या उपस्थित कर दी है जिसने मेरा सब सोचा विचारा नष्ट कर दिया। अब मुझे पुनः नए सिरे से इस मामले पर विचार करना पड़ेगा। अब मैं इस विषय को कुछ देर के लिये अपने दिमाग से हटा देता हूं। पुनः कभी सोच विचार कर जो कुछ निश्चय करूंगा तुम्हें कहूंगा।

इतना कह प्रोफेसर साहब ने उस मरे चूहे को उठा कर बाहर फेंक दिया और तब निश्चिन्तता के साथ कुर्सी पर बैठ गए। मैंने पूछा—आखिर कुछ भी तो कुछ मालूम हो कि आप सोचते क्या हैं और इन बातों से आप का तात्पर्य क्या है ?"

प्रो०—हां अब तुम सुन सकते हो। देखो आत्मा (अथवा जान) और शरीर के संबंध में पुराने जमाने से बराबर विचार होता चला आया है। हमारे पहिले के दार्शनिक, विद्वान, और ऋषि बराबर से इस खोज में पड़े हुए थे। मगर उनके निकाले हुए सिद्धान्तों में बड़ी गड़ बड़ है। किसी का सिद्धान्त दूसरे से नहीं मिलता और प्रायः सभी के सिद्धान्त में कुछ ऐसी कसर रह गई है जो वर्तमान समय के आदमी नहीं समझ सकते। यह अवश्य है कि कुछ ऋषियों और योगियों ने इस भेद का पता लगाया है, पर वह क्या है इसे हम लोगों के सामने आम तौर पर उन्होंने न तो कभी प्रगट किया और न करते हैं, और इसी कारण हम लोगों के लिये वह भेद केवल एक भेद ही अभी तक बना हुआ है।

अब मैं यह समझता हूँ कि पुराने जमाने के लोगों के सिद्धान्तों को तो ताक पर रक्खो, अब आज के समय में जो ज्ञान हमें है और जिन बातों को हम जानते हैं उन्हीं को लेकर इस विषय पर विचार करना चाहिए कि आत्मा क्या वस्तु है और इस शरीर के साथ इसका क्या संबंध है। क्यों तुम इस बारे में क्या ख्याल करते हो ?

मैं०—बेशक यह प्रश्न है तो विचारणीय, पर यह मैं समझता हूं कि इस विचार का न तो कोई तत्व अभी तक निकला है और न निकलेगा। क्योंकि कम से कम मेरी समझ में इस विषय पर मनुष्यों का विचार करना उतना ही निरर्थक और हास्यस्पद है जितना दिवाली अथवा जन्माष्टमी के मौके पर सजावट के लिये सजाए हुए खिलौनों का आपुस में मिल और कमेटी कर तथा प्रेसीडेन्ट चुन कर यह विचार करने बैठना कि "हम लोग क्या हैं ? हमको किसने बनाया ? किस चीज़ से बनाया ? और हमको बना कर वह बनाने वाला अब क्या किया चाहता है ?"

प्रोफेसर०—(हँस कर) तुम्हारे ख्यालात भी अजीब हैं। माना मैंने कि हम लोगों का अपने अथवा अपने बनाने वाले (अर्थात ईश्वर) के विषय में आलोचना करना उतना ही व्यर्थ है जितना कुम्हार के सामने उसके हाथ से बने खिलौनों का, पर क्या इससे यह अर्थ निकलता है कि हम लोगों को इस विषय पर विचार करने का अधिकार ही नहीं है अथवा उन खिलौनों को यह सोचाने का कि हमारा बनाने वाला कौन है और हमको किस प्रकार बनाया ?

मैं०—आप को और मिट्टी के खिलौनों को समान अधिकार है पर इन अधिकारों का उपयोग तो उसी समय न करना चाहिए जब इस उपयोग का कुछ फल निकले। नहीं तो व्यर्थ के परिश्रम से फायदा ?

प्रो०—बस यही बात तो भारत का नाश किए हुए है। यही सब सोच सोच तो यहां के आदमी निरुद्यमी, आलसी, निकम्मे हो गए हैं। खैर इस पचड़े से क्या मतलब जो मैं कहता हूं उसे सुनो। यह बताओ कि इस विषय पर विचार करने में तो कोई हर्ज नहीं है न ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं०—नहीं नहीं, कोई नहीं।

प्रो०—तो बस ठीक है अस्तु सुनो, मैंने माना कि आत्मा निराकार है, अतुलित बलशाली है, यह है, वह है, यहां तक कि एक मिष्ट्री* है। पर यह तो अभी निश्चय नहीं हुआ है कि आत्मा सचमुच ऐसी ही है। इस बात को तो तुम दृढ़तापूर्वक अभी नहीं कह सकते कि आत्मा सचमुच ही निराकार है, सचमुच ही अनंत है। यह तो नहीं कह सकते कि आत्मा को सचमुच ही हम नहीं देख सकते, नहीं पकड़ सकते, नहीं मालूम कर सकते—कहो? क्यों तुम दृढ़तापूर्वक यह कह सकते हो कि आत्मा क्या है इसका कभी पता ही नहीं लगेगा क्यों?

मैं०—नहीं यह तो मैं नहीं कह सकता।

प्रो०—इन सब बातों को सोच कर मैंने यह तत्व निकाला है, सुनो गौर के साथ—आत्मा के जानने की चेष्टा करने के पहिले यह जानना आवश्यक है कि आत्मा कोई इन्द्रियगम्य वस्तु है या नहीं। केवल एक इसी प्रश्न की मीमांसा हो जाने से बहुत कुछ पता लग जायगा, क्यों है या नहीं।

मैं—बेशक यदि सिर्फ इसी बात का पता लग जाय कि आत्मा इन्द्रियों द्वारा जानने योग्य पदार्थ है या नहीं तो यह प्रश्न बहुत कुछ सरल हो सकता है।

प्रो०—बस तो इस समय मैं इसी बात को जानने की कोशिश में लगा हुआ हूं।

मैं०—(ताज्जुब से) इस बात को आप कैसे जानेंगे?

प्रो०—(हंस कर) वाह, खूब आए। बरसों की छान बीन और सिर खपौअल के बाद तो मैं यहां तक पहुँचा हूं और इस बात को तुम्हारे सिर्फ तीन मात्रा और दो अक्षर वाले शब्द पर न्योछावर होकर बता दूं।

मैं०—अब हंसी न करो बताओ।

प्रो०—मैं सब तो बताने का नहीं पर इतना बताए देता हूं कि जिस प्रकार सब प्रकार के पदार्थों जैसे, तेजाब ग्यास, दवा, पानी, बिजली, आदि को रोक रखनेवाले बर्तन बने हैं उसी प्रकार यदि आत्मा को भी रोक रखने वाला कोई बर्तन बन सका तो मानना पड़ेगा कि आत्मा भी इन्हीं सांसारिक वस्तुओं से बनी हुई चीजों में से है। बस इस से ज्यादा मैं अभी कुछ न कहूंगा।

(२)

इस के दूसरे दिन पिता का एक पत्र पाया। आवश्यक कार्य के लिये मुझे फरीदकोट चले जाना पड़ा। वहां मुझे महीने से उपर समय लग गया और इस बीच में मैं प्रोफेसर से हुई भी बातों को एक तरह पर बिल्कुलही भूल गया। एकाएक एक दिन मैंने एक अंगरेजी मासिक पत्र में निम्नलिखित आशय का एक छोटासा लेख देखा जिसके पढ़ते ही ये सब बातें मुझे पुनः स्मरण हो आईं। इस लेख का तात्पर्य इस प्रकार था—

"प्रोफेसर जगत बिनोद बंधू हमारे पाठकों के सुपरिचित मर्मज्ञ रासायनिक और वैज्ञानिक विद्वान हैं। इन का परिचय देने कि कुछ भी आवश्यकता नहीं है पर तौ भी प्रसंगवश कह देते हैं कि ये वेही महाशय हैं जिन्होंने कुछ समय पहिले पानी से आग निकालने का एक अद्भुत् यंत्र निकाला था और जिस यंत्र से वैज्ञानिक संसार में उथल पुथल होगई थी। यह भी पाठकों को स्मरण होगा कि वह यंत्र अपने पानी द्वारा निकली हुई आग ही से भस्म होगया था जिस से निरुत्साह हो प्राफेसर साहब ने पुनः उस के बनाने की चेष्टा छोड़ दी थी।

"अब वे प्राफ़ेसर महाशय एक नवीन यंत्र बना कर वैज्ञानिक जगत के सामने आए हैं। यह यंत्र एक विचित्र बक्स है। प्रोफेसर साहब का अनुमान है कि इस यंत्र के भीतर जिस शरीर को रखकर बंद कर दिया जायगा वह कभी नहीं

* रहस्य।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...। शीघ्रही प्रोफेसर साहब इस यंत्र की परीक्षा लेने वाले हैं।

"हम बड़ी उत्सुकता के साथ उस परीक्षा का फल देखने को प्रस्तुत रहेंगे।"

इस के बाद इस यंत्र की बनावट के विषय में कुछ कुछ बातें लिखी हुई थीं पर वह केवल वैज्ञानिकों या बड़े दिमाग वालों की समझ में आने लायक थीं। इस कारण मैं उन्हें बिल्कुल समझ न सका।

इस लेख को पढ़ते ही प्रोफेसर साहब से मिलने की इच्छा बड़ी बलवती हुई। मैंने जलदी से अपना काम निपटाया और तीसरे या चौथे दिन ही जल्दी के मारे मैं अपने घर न जा बिस्तर वगैरह लिये प्रोफेसर ही के घर चला गया। प्रोफेसर साहब ने बड़ी खातिर की मगर मैंने इस के लिये ज्यादे समय उन्हें न दे अपने मतलब की बात छेड़ दी। उनका वह लेख जो मैंने अखबार में देखा था उन्हें दिखाया और वे उसे आद्योपांत गौर से पढ़ गए।

लेख को पढ़ उन्होंने टेबुल पर रख दिया और कहा "हां करीब करीब ठीक ही लिखा है।"

मैं०—तो क्या आपने वास्तव में ऐसा कोई यंत्र बनाया है जिस के प्रभाव से आदमी नहीं मर सकेगा।

प्रो०—अब यह तो मैं कैसे कह सकता हूं कि आदमी नहीं मरेगा पर यह कह सकता हूं कि जान या प्राण अथवा आत्मा यदि कोई रोक रखी जाने लायक चीज है तो जरुर रखी रहेगी।

मैं०—तो मुझे वह यंत्र दिखाइए।

प्रो०—खुशी से बल्कि सच तो यह है कि तुम्हारे न रहने के कारण ही मैंने अभी तक उस यंत्र का इमतिहान नहीं लिया है। मगर तुम भी थके मांदे आ रहे हो?

मैं०—इस बात का आप ख्याल न करें, मैं रास्ते ही में रेल पर निपट चुका हूं और भोजन भी रास्ते से भी छुट्टी पा चुका हूं।

प्रो०—तो बस ठीक है अच्छा आओ। *

प्रोफेसर अपने साथ मुझे उस Laboratory में ले गये जिस में मैं पहिले बहुत दफे जा चुका था। इस बड़े कमरे के बीचो बीच में जिसके चारो तरफ तरह तरह के यंत्र कल पुरजे और दवाओं की शीशियाँ रखी हुई थीं—एक बड़ा सा चौखूटा बक्स रक्खा हुआ था जो देखने में लकड़ी का मालूम पड़ता था पर लकड़ी बहुत ही काली और चमकदार थी। प्रोफेसर इसी बक्स के पास गए और जिस तरह घोड़ा बेचने वाला सौदागर अपने किसी उम्दे घोड़े की पीठ पर हाथ रखता है उसी तरह उस पर हाथ रख कर बोले—यही मेरा वह यंत्र है?

मैंने उसे गौर से देखा पर किसी तरह की विचित्रता मुझे देखने में न आई। लग भग ढ़ाई या तीन हाथ के वह चौखूटा संदूक ऐसा था जिस में एक तरफ के हिस्से पर कुछ ऐसे निशान पड़े हुए थे जिस पर गौर करने से मालूम होता था कि यहां से इस के खुलने की जगह है।

मैंने कहा "मेरी समझ में तो कुछ भी नहीं आता कि यह क्या है?"

प्रो०—(मुस्कुरा कर) यह सहज ही में समझ आने वाली चीज़ नहीं है। अच्छा यह बताओ कुछ दिन हुए आत्मा के विषय में मुझ से तुम से जो कुछ बात चीत हुई थी वह याद है?

मैं०—हां कुछ कुछ याद है।

प्रो०—उस समय यह स्थिर हुआ था कि आत्मा क्या है, इसके जानने के पहले यदि यह जान लिया जाय कि वह मनुष्य द्वारा जानी गई हुई चीजों में से है या नहीं, तो इस खोज में बहुत कुछ सहायता मिल सकती है। क्योंकि यदि यह मालूम हो जाय कि आत्मा उन पदार्थों में से अथवा उन पदार्थों के संयोग से बनी चीजों में

* रसायन शाला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से नहीं है जिन्हें आदमी अभी तक इस पृथ्वी पर जान सका है तो अभी उसको यानी आत्मा को जानने का प्रयत्न करना व्यर्थ है। क्यों यही बात है न ?

मैं०—बेशक।

प्रो०—अच्छा इस बात को तुम अवश्य मानोगे कि अभी तक जो वस्तुएँ इस संसार में मनुष्य जान सका है वे अथवा उनके गुण या प्रभाव सीमाबद्ध हैं ?

मैं०—इस सीमाबद्ध का मतलब मैं नहीं समझा।

प्रो०—मुझे शब्द नहीं मिलते जिसके द्वारा इस सीमाबद्ध का मतलब तुझे समझाऊँ। अच्छा सुनो पानी एक तरल पदार्थ है—इसे तुम एक शीशे के गिलास अथवा किसी और पात्र में रख सकते हो ?

मैं०—हाँ।

प्रो०—इसी पानी को जब जमाकर बर्फ कर दिया तब भी वह एक पात्र में रक्खा जा सकता है।

मैं०—हाँ।

प्रो०—और जब इसी पानी को गर्म करके तुमने भाफ बना दिया तब भी एक बड़े पात्र में वह भाफ बंद की अथवा रोक रक्खी जा सकती है ?

मैं०—बेशक।

प्रो०—इसी प्रकार यह कहा जा सकता है कि दुनिया की सब चीजों को रोक रख सकने के लिये कोई न कोई पात्र बनाया जा सकता है—जैसे तरल पदार्थों को रखने के लिये शीशी, ठोस पदार्थों को रखने के लिये पात्र ग्यास इत्यादि रखने के लिये मजबूत लोहे का पात्र, रेडियम रखने के लिये पात्र, बिजली रखने के लिये पात्र (यानी Storage battery) *

मैं०—बुद्धि रखने के लिये बड़ी खोपड़ी ?

प्रो०—(मेरी बात पर कुछ ध्यान न देकर) यानी यह कहा जा सकता है कि हर एक पदार्थ के लिये कोई न कोई ऐसा पात्र बन सकता है कि जिसके बाहर वह पदार्थ बगैर मनुष्य की इच्छा के नहीं जा सकता।

मैं०—ठीक है।

प्रो०—अस्तु मेरा यह यंत्र (काले बक्स पर हाथ फेरते हुए) भी एक ऐसा ही पात्र है जिसके भीतर मनुष्य द्वारा अभी तक जानी गई हुई कोई वस्तु रख दीजिए। बिना मेरी इच्छा के वह बाहर नहीं आ सकती ?

मैं०—कोई भी चीज ?

प्रो०—हाँ कोई भी चीज।

मैं०—हवा, पानी, भाफ।

प्रो०—मैं कहता हूँ कि सब चीज।

मैं०—तब तो आप की यह बोतल अवश्य एक अद्भुत चीज है ?

प्रो०—ठीक है इसे एक बोतल ही कहना चाहिये। अच्छा अब इधर आओ तो मैं तुम्हें बताऊँ कि यह बोतल किस प्रकार बनाई गई जो सब चीजों को रख सकती है।

विज्ञानशाला की एक तरफ की दीवार के साथ एक बड़ा नकशा टंगा हुआ था। उस नकशे में उसी बोतल का खंड खंड करके दिखाया गया था। प्रोफेसर इसी नकशे के पास मुझे ले गए और उस बोतल के हर एक हिस्सों पर उंगली रख रख मुझे समझाने लगे कि इस चीज में क्या प्रभाव है और इसके रखने का यह कारण है। जो कुछ उन्होंने मुझे बताया और बोतल की कारीगरी की जो कुछ व्याख्या उन्होंने की उसे यदि मैं पूरी तरह पर सुनाया चाहूँ तब तो घंटों लग जायंगे और फिर भी मेरी तरह पाठकों की समझ में भी कुछ नहीं आवेगा। अस्तु मुनासिब यही मालूम होता है कि संक्षेप में मैं आप को सुना दूं कि वह अद्भुत बोतल किस प्रकार की थी।

प्रोफेसर भोंदू की इस बड़ी बोतल में

* बिजली इकट्ठा करने का पात्र विशेष।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के भीतर एक इस प्रकार छः बोतलें थीं। अवश्य ही सब से भीतर वाली बोतल सबसे छोटी और सब से बाहर वाली सब से बड़ी थी। उत्तम होगा यदि इन बोतलों को नंबर के क्रम से रक्खा जाय यानी सबसे भीतर वाली बोतल का नंबर एक कहिए और सबसे बाहर वाली को नंबर छः कहिये। अब मैं बताता हूँ कि इन छओं बोतलों में क्या था।

नंबर एक की बोतल जिसमें शीशे का खूब कस कर बैठने वाला काग लगा हुआ था खाली थी और इसी में वह जानवर या जीव रखा जाने वाला था जिसकी आत्मा के विषय में परीक्षा होने वाली थी। यह बोतल लगभग हाथ भर ऊँची और इससे कुछ कम के पेटे में थी।

यह नंबर एक की बोतल नंबर दो की बोतल में रख दी गई थी जो चारो तरफ से इस बोतल नंबर १ से चार चार अंगुल बड़ी थी। इस नंबर दो की बोतल में नंबर एक की बोतल डाल कर इसमें पानी भर दिया जायगा और शीशे का काग लगा दिया जायगा यानी इस बोतल में बंद वह नंबर एक की बोतल चारो तरफ से पानी से घिर जायगी।

अब यह नंबर दो की बोतल तीसरी बोतल नंबर तीन के अंदर थी। इस नंबर तीन की बोतल जो नंबर दो से कुछ बड़ी थी वह नंबर दो की बोतल रख उसके चारो तरफ एक खास प्रकार की रासायनिक वस्तु मिली हुई गीली मिट्टी भर दी जाने को थी जो चारो तरफ से नंबर दो की बोतल को घेर लेगी और सूख जाने पर एक पत्थर की तरह हो जायगी जिसके भीतर से कोई भी वस्तु पानी, हवा, आदि बाहर नहीं आ सकेगी। इस नंबर तीन की बोतल में मजबूत लगा वह नंबर चार की बोतल में रक्खी जाएगी जो नंबर तीन से कुछ बड़ी थी।

यह नंबर चार की बोतल गटापार्चा लाख आदि कई वस्तु से बनी हुई थी। इस पदार्थ में से बिजुली आ जा नहीं सकती थी।

नंबर पांच की बोतल जिसमें यह नंबर चार की बोतल थी कुछ विचित्र थी। यह शीशे की तो थी पर इसमें नीचे की तरफ एक और छेद था जिसमें शीशे ही का एक नल था। इस नल में एक यंत्र लगा कर प्रोफेसर साहब इस बोतल की सब हवा खींच लेंगे। और तब इस नली को मजबूती से बंद कर देंगे। ऊपर का यानी मामूली मुंह तो शीशे के काग द्वारा कस कर बंद रहे होगा।

अब यह पांचवी बोतल छठी बोतल में थी। छठी बोतल ही सब से अद्भुत थी। यह कई प्रकार की चीजों के संयोग से बनाई हुई एक विचित्र लकड़ी की थी। गंधक, शोरा, लकड़ी का चूरा, लोहे का चूरा, तांबे का चूरा, पोटाश का चूरा, आदि अनेक पदार्थों के संयोग से विज्ञान की सहायता से यह बोतल बनाई गई थी और इसमें जरा सा आग लगते ही यह चारो तरफ से जल कर भक भक जलने लगती और घंटो तक जलती रहती। यह बोतल नंबर छ बोतलों से बड़ी मोटी, भारी और विचित्र थी।

इस प्रकार की वह विचित्र बोतल बनी हुई थी जिसमें आत्मा को रोक रखने को प्रोफेसर साहब प्रस्तुत थे।

इन छओ बोतलों की कारीगरी और बनावट को भली प्रकार समझा कर प्रोफेसर ने कहा— देखा तुमने मैंने वायु, जल, पृथ्वी आकाश और अग्नि इन पांचों तत्वों का प्रबंध कर रखा है और इसके अलावे बिजली को रोक रखने के लिये शीशे और इस चौथी बोतल का भी प्रबंध किया है। यदि अब इस में से भी किसी जीव की जान या आत्मा निकल गई तो बेशक मानना पड़ेगा कि वह सांसारिक वस्तुओं में से नहीं है।

मैंने कहा— बेशक इस बात को मैं मानता हूँ। आपकी बोतल के पांचों पर्दों को फाड़ यदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्मा निकल भागी तो बेशक वह कोई ऐसी चीज है जिसका रोका जाना संभव नहीं। अच्छा अब आप का वह इमतिहान कब होगा?

"बस कल सबेरे मैं किसी जानवर को इसमें बंद करूंगा। सबेरे सब कामों से निपट यहाँ पहुँच जाना।" कह कर प्रोफेसर साहब अपनी विज्ञान शाला के बाहर निकल आए।

(३)

दूसरे दिन सुबह को बहुत ही जल्दी सब कामों से निपट मैं प्रोफेसर के घर पहुँचा। वे भी उसी समय नहा धो कर निपटे थे। मुझे देख बोले—आ गए? बड़ी फुर्ती की!

मैं०—मुझे रात को नींद नहीं आई, आप कहते हैं जल्दी आए! अच्छा यह कहिये कि आप ने उसके अंदर बंद करने के लिये कौन सा जानवर चुना है!

प्रो०—भाग्य से आज सुबह जानवर भी एक बड़े मतलब का मिल गया। मेरे पालतू खरगोशों में से कल से एक बहुत ही बीमार है, मैं समझता हूँ घंटे दो घंटे में वह मर जायगा। उसी को बोतल में बंद करूँगा। अच्छा चलो लेबोरेटरी में चलें।

मैं०—वह खरगोश कहाँ है?

प्रो०—वह भी वहीं है।

हम दोनों लैबोरेटरी मे पहुंचे। वह संदूक इत्यादि जो पहिले देखा था अब भी वही था और प्राफेसर के चार नौकर भी मौजूद थे। प्रोफेसर ने उन नौकरों को उन छओं बोतलों को निकाल अलग अलग करने को कहा।

बड़ी सावधानी के साथ नौकरों ने एक एक कर के पांचों बोतलें निकाल कर अलग की। बोतल नंबर एक को ले प्राफेसर ने कहा वह खरगोस कहां है लाओ इस में बंद करो।

एक नौकर उस खरगोश को ले आया। खरगोश देखने में तो बहुत मोटा ताजा था पर बड़ाही सुस्त होरहा था यहां तक कि आंखें बंद थीं और जल्दी जल्दी स्वांस ले रहा था। नौकरों ने लाकर उसे टेबुल पर रखा तो वह एक दम गिर पड़ा मानों हाथ पांव में उसके कोई जोर ही नहीं रह गया है। प्राफेसर ने अपने हाथ से उसे बोतल नंबर एक में रक्खा और खूब कस कर काग लगा दिया कि हवा बिल्कुल न निकल सके।

अब नंबर दो की बोतल में उबलता हुआ गर्म पानी जो भभके के द्वारा खूब साफ किया हुआ था भरा गया। प्राफेसर से मैंने पूछा, "गर्म पानी क्यों भरते हैं?" जिस के जवाब में उन्होंने कहा "पानी में हवा भी मिली हुई होती है, गर्म करने से बहुत कम हो जाती है।

जब वह पानी कुछ ठंढा होगया तो बोतल नंबर एक उस नंबर दो की बोतल में उलट कर डाल दी गई। फजू पानी बह गया और उस नंबर एक की बोतल के चारो तरफ पानी होगया। इस नंबर दो बोतल का शीशे का काग भी मजबूत बंद कर दिया गया।

अब यह बोतल पुनः उलट कर बोतल नंबर तीन के अंदर डाली गई। दो आदमियों ने जल्दी जल्दी वह मिट्टी सानी जो इस बोतल में भरी जाने वाली थी। यह मट्टी देखने में तो बिलकुल यती सीमेन्ट मिट्टी की ही तरह थी पर उस से मजबूत और बहुत जल्द मिनटों ही में सूख जाने वाली थी और ज्यादा तारीफ यह थी कि सूखने पर कड़कती नहीं थी। यह मिट्टी पतली सी उस तीसरी बोतल में ढाल दी गई और इसने दूसरी बोतल को चारो तरफ से ढंक लिया। अब तक तो वह खरगोस राम दिख रहे थे पर अब उनकी आशा मैंने छोड़ दी।

चौथी बोतल में यह तीसरी बोतल रखी गई और इसके साथ कोई विशेष कार्रवाई नहीं की गई क्यों कि यह सिर्फ बिजली की ताकत को रोकने का गुण रखने वाली थी—ऐसा डाक्टर ने कहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतना जरूर किया कि इसमें भी एक प्रकार का तरल पदार्थ डाल कर तब उसका मुँह बंद किया गया और अब यह चौथी बोतल पाँचवीं बोतल में डाली गई जो बहुत मोटे शीशे की थी और जिसमें हवा खींचने के लिये नीचे की तरफ एक नल लगा हुआ था।

इस बोतल का काग भी खूब मजबूती से बंद किया गया और तब उसका नीचे वाला नल उस यंत्र के साथ लगा दिया गया जो हवा खींचता था। दो नौकर उस यंत्र को चलाने लगे और लगभग आध घंटे में उस पाँचवीं बोतल की हवा निकाल दी गई। प्रोफेसर साहब ने एक नली की तरफ जो हवा निकालने के यंत्र से लगी थी देख कर कहा—"बस इससे ज्यादा हवा अब नहीं निकलेगी। इसका मुँह बंद कर दो।" एक नौकर ने गैस का एक चूल्हा बाल बोतल वाले नल का मुँह गला कर एक दम बंद कर दिया और हवा निकालने वाला यंत्र अलग कर दिया गया।

अब उस आखिरी काठ वाले संदूक या बोतल के भीतर यह पाँचवीं बोतल रखी गई और तब कई आदमियों ने मिल उसे उठा मकान के बाहर मैदान में ला कर रख दिया।

प्रोफेसर ने मेरी तरफ देख कर पूछा "क्यों अब इसमें आग लगा दी जाय ?

मैं—आग लगाने से उस पाँचवी बोतल को कुछ नुकसान नहीं पहुँचेगा जिसमें से आपने हवा निकाली है।

प्रो०—नहीं कुछ नहीं, उसका शीशा Fire proof * है।

मैं—तो बस ठीक है। आग लगाइये।

एक जलती हुई मोमबत्ती संदूक के साथ लगाते ही वह भक कर के जल उठी। न मालूम कौनी चीजें उसके बनाने में लगाई गई थीं कि इतनी जल्दी आग पकड़ ली। देखते देखते आग चारो तरफ फैल गई और संदूक धू धू कर के जलने लगा। प्रोफेसर ने दो नौकरों से कहा—एक लकड़ी से उसे बराबर उलटते पुलटते रहो, जिसमें आग चारो तरफ से बराबर लगती रहे। मगर वह इतनी कड़ी आँच के साथ और भयंकरता से बल रही था कि किसी की हिम्मत पास जाने की नहीं हुई बल्कि हम दोनों को भी जो दूर खड़े थे बहुत दूर हट जाना पड़ा।

मैंने पूछा—यह कब तक इस प्रकार जलता रहेगा ?

प्रो०—लगभग छः घंटे तक। अब चलो शाम को आ कर इसे देखेंगे।

मैंने मन ही मन कहा—"गई बिचारे खरगोसवा की जान।"

(४)

वह छः घंटे का समय हम दोनों ने बड़ी कठिनता से काटा और संध्या को लगभग चार बजे के पुनः उस जगह पहुँचे जहाँ वह बोतल रखी गई थी। उस समय भी वह बिलकुल बुझी न थी और यद्यपि उसमें से पहले की तरह ज्वाला नहीं निकलती थी तो भी वह एकदम लाल हो रहा था और एक बड़ा भारी आग का अंगारा मालूम होता था। प्रोफेसर के हुक्म से नौकरों ने उसे लोहे के छड़ों से धीरे धीरे पीटना शुरू किया जिससे टुकड़े झर झर कर अलग होने लगे। थोड़ी ही देर में नंबर पाँच की बोतल बाहर आ गई मगर आग की गर्मी के कारण यह भी एक दम लाल हो गई थी।

कुछ समय उस बोतल को ठंढा होने के लिये देना जरूरी था। अस्तु दो कुर्सियो पर हम दोनों बैठ गए। मैंने पूछा, "अब यह कैसे मालूम हो कि खरगोश मर गया या जीता है ?

प्रो०—उसके मरने में तो कोई शक ही नहीं है, जिस हालत में वह था उसको देखते तो यह कहना ही पड़ेगा कि घंटे भर के अंदर वह मर जायगा।

* अग्निरोधक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं—हाँ हालत उसकी तो खराब जरूर थी। मगर अब तो आपकी यह बोतल जिन्दगी का बीमा ही करने को तैयार है।

इसी किस्म की मामूली बातें होती रहीं जब वह बोतल ठंढी हो गई तो नौकरों को काग खोलने को कहा मगर बहुत जोर करने पर भी काग किसी तरह न खुला?

मैंने ताज्जुब से कहा—क्या मामला है काग क्यों नहीं खुलता?

प्रो०—जाओ तुम तो जा कर देखो।

मैंने भी काग खोलने की बड़ी कोशिश की मगर वह टस से मस न हुआ। आखिर मैंने कहा "यह तो बड़ा कस कर बैठ गया है कहिए तो बोतल तोड़ दूँ।"

प्रो०—नहीं नहीं ऐसा न कर जरा जोर लगाओ।

मैंने पुनः जोर लगाया पर क्या होना था; प्रोफेसर भी पहुंचे और बहुत कुछ ठोंका पीटा मगर काग न टसका। मैंने कहा कि कहीं उस खरगोश की आत्मा ने तो यह खराबी नहीं की है।

मैंने यह कहा ही था कि एकाएक उस बोतल के भीतर से किसी चीज के जोर से टूटने की आवाज आई और इसके बाद ही एक प्रकार का काला तरल पदार्थ बह बह कर इस बोतल के पेंदे में आ इकट्ठा होने लगा। यह काला पदार्थ क्या था और कहाँ से आया। उस बोतल के भीतर तो हवा तक नहीं थी। मैंने बड़े ताज्जुब में आ कर पूछा, "यह काली चीज़ क्या है?"

प्रो०—मेरी खुद समझ में नहीं आता कि क्या मामला है।

इसी समय उस बोतल के भीतर से एक विचित्र प्रकार की आवाज आने लगी। ऐसा मालूम हुआ मानों कोई इसके भीतर दौड़ धूप कर रहा है। पहिले तो मैंने सोचा कि वह खरगोशही शायद सब कर रहा हो पर फिर सोचा कि वह तो कभी का मर गया, वह आवाज कहाँ से कर सकता है। सच तो यह है कि मैं उस समय बिल्कुल घबड़ा गया और मनही मन सोचने लगा—कहीं यह उस खरगोश की आत्मा ही तो यह सब उपद्रव नहीं कर रही है। प्रोफेसर भी किसी तरद्दुद में पड़ा हुआ गौर से उस आवाज को सुन रहा था और उसके नौकर भी ऐसा डर गए थे कि पास आने से हिचकते थे।

इसी समय पुनः कुछ आवाज हुई और इस बार एक और भी अद्भुत बात हुई। इस बोतल के भीतर वह गटापार्चा की जो दूसरी बोतल थी और जो बाहर से साफ साफ दिखा रही थी धीरे धीरे बड़ी होने लगी। मैंने घबड़ा कर प्रोफेसर से कहा—"देखिए देखिए यह क्या हो रहा है। यह भीतर वाली बोतल कैसे बड़ी हो रही है।"

धीरे धीरे वह बोतल यहां तक फूली और बढ़ी कि अब बाहर वाली बोतल के सग पर दम चिपक गई और ऐसा अब मालूम होने लगा कि जैसे कि वह पहिले ही से इतनी बड़ी हो। प्रोफेसर की भी अक्ल कुछ चकराई हुई मालूम होती थी और उस के नौकर तो इतना घबड़ा गए थे कि मेरी कुर्सी के पीछे दबक गए थे। मैंने प्रोफेसर से पूछा "यह क्या मामला है प्रोफेसर क्या उस खरगोश की आत्माही तो यह सब उपद्रव नहीं कर रही है?"

प्रोफेसर सिर खुजलाते हुए बोले—"क्या बताऊ कुछ समझ में नहीं आता।"

इसी समय एका एक मेरे पैर की ठोकर जोर से उस बोतल में लगी और उस के एक हिस्से में से थोड़ा शीशा टूट कर गिर पड़ा। उस समय जोर जोर से "सों सों" ऐसी आवाज आने लगी मानों कोई भारी जानवर जोर से साँस ले रहा हो। मेरी अक्ल हवा खाने चली गई और खड़ा कर यह देख तो मैं और भी घबराया कि वह भीतर वाली काली बोतल जो पहिले बड़ी होकर बाहर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाली बोतल के किनारों से सट गई थी अब पुनः छोटी होने लगी और देखते देखते पुनः अपने असली कद को पहुंच गई। सों सों की आवाज भी बंद होगई मगर भीतर से किसी या कई जानवरों के इधर उधर दौड़ते धूपने का शब्द और भी जोर से आने लगा।

इसी समय प्रोफेसर जोर से हंसा। मैंने उस की तरफ देख पूछा 'क्यों हंसते क्या हैं?"

प्रो०—मैं इस भीतरी बोतल के फूलने और सिकुड़ने का कारण समझ गया।

मैं०—सो क्या?

प्रो०—वह भीतरी बोतल थी तो खूब मजबूत और मोटी पर गरमी का असर उस पर भी पहुंचा और वह गल कर मुलायम होगई। इस बोतल के भीतर जो यह काला पदार्थ आकर जमा हो गया है यह उसी का अंश है।

मैं०—इतनी देर से बोतल न गर्म हुई अब जब आग वगैरह सब बुझ गई तो इसे गर्मी सूझी? खैर मान लिया कि वह गर्म भी हो गई तो इससे क्या? सों सों आवाज और बोतल का फूलना पचकना क्यों कर हुआ?

प्रो०—(हंसते हुए) अरे भाई यह तो जानते ही न कि इस बोतल में हवा नहीं है पर उस भीतर वाली बोतल के अंदर तो है। बाहर हवा न होने के कारण भीतर की हवा बाहर फैलने की कोशिश कर रही थी पर काली बोतल मजबूत होने के कारण निकल न सकी। अब जो वह काली बोतल आग पा मुलायम हो गई और कुछ गल कर बढ़ भी गई तो भीतर वाली हवा ने जोर किया और बोतल समेत गुब्बारे की तरह फूल कर इस बोतल में भी फैल गई। इसके बाद जब तुम्हारे पैर की ठोकर से वह नाल टूट गया जिस रास्ते हवा निकाली गई थी तो उस छेद के रास्ते बाहर की हवा उस बोतल में घुसी और भीतर वाली बोतल पुनः ठीक हो गई। अब समझे!

मैं०—बेशक यही बात है और इस बोतल का कार्क न खुलने का भी कारण यही है कि भीतर हवा न थी और बाहर की हवा काग को दबाए हुई थी।

प्रो०—हां यही बात थी। ऐसी मामूली बात इस समय तुम्हें न सूझी!

मैं०—तो आप ही को कौन सूझ गई थी। बैठे भकुआ की तरह ताक तो रहे थे क्यों नहीं कह दिया कि बोतल में हवा नहीं है इससे काग नहीं खुलता।

प्रो०—खैर अब तो काग खोलो और भीतर की बोतल निकालो।

इस बार काग सहजही में खुल गया। भीतर वाली काली बोतल निकाली गई और उसे भी खोल कर उसके अंदर से वह नंबर तीन की बोतल निकाली गई जिसके अंदर मिट्टी डाली गई थी। इस बोतल का खुलना या इसके अंदर से इस बोतल नंबर दो का निकलना कठिन था क्योंकि मिट्टी ने चारो तरफ से उसे जकड़ लिया था। कुछ देर खोलने की कोशिश करने के बाद प्रोफेसर ने कहा खैर इसे तोड़ डालो—क्या किया जाय लाचारी है।

दो नौकरों ने लाठी से बोतल पर मारना शुरू किया। शीशे का हिस्सा तो सहज ही में टूट गया पर जब मिट्टी की नौबत आई तो मुश्किल पड़ी क्योंकि वह जम कर पत्थर की तरह हो गई थी और लाठी का उस पर कोई असर नहीं था। आखिर मैंने कहा इसे मकान की छत पर से ले जा कर नीचे फेंक दो आप ही टूट जायगी व्यर्थ देर करने से क्या फायदा?

प्रोफेसर की रजामंदी पा नौकरों ने उसे मिल कर उठाया और मकान की छत पर ले गए। हम लोग दूर हट गए और इशारा करते ही नौकरों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने उस बोतल को नीचे पत्थर के फर्श पर फेंक दिया।

कई मंजिल ऊपर से गिरते ही वह बोतल एक दम चकना चूर हो गई केवल वही बोतल जो उसके अंदर और जो दो और बोतलें थीं वह भी फूट कर फूट की तरह चारो तरफ छितरा गईं। मैं और प्रोफेसर भोंदू दौड़ कर उसके पास पहुंचे।

हैं, यह क्या? उस बोतल के अंदर से एक के बदले चार खरगोश निकल रहे हैं! यह क्या मामला है।

(५)

मारे हंसी के मेरे तो पेट में बल परने लगे। प्रोफेसर ने उस बोतल में एक मादा खरगोशनी रख दी थी जिसे शीघ्र ही बच्चे होने वाले थे और इसी तकलीफ से वह सुस्त हो रही थी। बोतल के भीतर ही उसे तीन बच्चे और पैदा हो गए और अब बाहर निकल निकल इधर उधर दौड़ धूप मचाने लगे—मैंने प्रोफेसर से हँसते हँसते कहा-प्रोफेसर इस अपनी बोतल के गुण बताती समय तुमने यह नहीं कहा था कि इसमें एक के चार चार कर देने का सामर्थ्य भी है। देखो एक खरगोश तुमने इसमें डाला और चार निकले। वल्लाह, खूब बोतल ईजाद हुई है। मगर यार अबकी दफे की बोतल जरा बड़ी बनाना जिसमें मैं बैठ सकूं। फिर तो एक उमाधर की जगह चार उमाधर आप की सेवा करने को निकल आवेंगे।

प्रोफेसर ने मेरी तरफ एक बार तो कड़ी निगाह से देखा पर फिर तुरत ही हंस पड़े और मेरा हाथ पकड़ बोले—भाई चाहे जो हो मगर दिल्लगी तो खूब हुई! अच्छा नौकरों से शीशे के टुकड़े हटाने को तो कहदो। *

* आजकल के शिक्षित जन जिस भाषा में बात चीत करते हैं उसका नमूना दिखाने के लिए इस लेख की भाषा ज्यों की त्यों रक्खी गई है।

पृथ्वी की आयु।

(पूर्व्व प्रकाशितांतर)

अब विचारना चाहिए कि इस प्रकार की सजावट से क्या तात्पर्य्य है। इससे स्पष्ट प्रगट हो रहा है कि कोयले की प्रत्येक थाक उद्भिद और विटप श्रेणीयों के जमघट का अवशेष मात्र है क्योंकि उनके नीचे की मिट्टी इस बात की साक्षी है कि इसी भूमि पर वह पेड़ सब खड़े थे और भूमि की मिट्टी के भीतर पेड़ों के जड़ के जुथ्थे और शाखाओं की जटाएँ चिपटी हुई पाई गई हैं जो इन दिनों भी सूखी लकड़ी के गट्ठे के रूप में निकलती हैं और यही प्राचीन युग में नाना प्रकार के उत्ताप और ताप के सहयोग से उस कोयले के रुप में परिणत हो गईं। इन उद्भिज अवशेषों को जब अणुवीक्षण यंत्र द्वारा देखा गया तो पता लगा कि बड़े बड़े लंबे कासे, झाड़ और देवदारु इत्यादि वृक्षों के ठोस जमघट का यह परिणाम है। पर अधिकतर कोयला इन वृक्षों के छिटके हुए बीज इत्यादि से बना है जो पक पक कर प्रतिवर्ष छिटक छिटक क्रमशः जमते जमते एक औद्भिजी ढोका सा बनता रहा, जैसे कि आज दिन भी वृक्षों के पत्ते, शाखाएँ इत्यादि गिर जमा होती हुई हमारे जंगली भूमि की विशेष बनावट का कारण होती हैं।

अब विचारने की बात यह है कि बीज और छिलके इत्यादि के उड़ उड़ कर गिरने और जम जम कर इस अवस्था तक आने में एक फुट ऐसी मोटी थाक के कोयले बनने में भी कुछ दो चार दिन थोड़े ही लगे होंगे। वास्तव में इन औद्भिज पदार्थों के जम कर प्रचंड ताप से एक फुट कोयले की थाक भी बनने में बहुत अधिक समय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...है। एक विद्वान, (जिन्होंने कोयले की खानों ...गुत कुछ परीक्षा की है) कहते हैं कि कोयले ...प्रत्येक एक फुट मोटी थोक कम से कम कई ...दि तक के निर्विघ्न जंगलों के उपजने और ...होने की कहानी है। पर कोयले की ...से समय मापने का यह पहला अंक तो ...श्रीगणेश ही है, क्योंकि कोयले के प्रत्येक ...जल द्वारा लाए हुए बलुवी मिट्टी या रेत से ...ढकी हुई है। ऐसा क्यों है? इसका केवल ...ही उत्तर हो सकता है और वह यह है कि ...भूमि पर उक्त बन जंगल उगा था वह ...क्षय होती गई और पहले दलदल के रूप ...और फिर जलाशय के रूप में परिणत हो गई, ...पर कीचड़ और बालू के थाक जमते रहे ...फिर जब ऊंची हुई तो सूख कर पुनः वृक्षों ...धारण किया, इन वृक्षों के अवशेष से कोयले ...दूसरे थाक की सामग्री इकट्ठी हुई और इसी ...से वह भूमि भी जल में ढक गई और उस ...पर भी मिट्टी जम गई और उस पर पुनः वृक्ष उगे ...कोयले की तीसरी थाक के बनने का कारण ...। योंही पुनः पुनः होता रहा और उद्भिज ...थों के थाक पर थाक जमते रहे (जो बहुत ...धिक और गरमी के कारण कोयले के रूप में आ ...)यहां तक कि किसी समय भूमि की यह ...गातार डूबने और उतराने की क्रिया को पृथवी ...आभ्यंतरिक उत्ताप की खलबली ने एका एकी ...पहुंचाई और भूमि कंप और इसी प्रकार ...अन्य धक्कों द्वारा भूमि की काया पलट कर उसे ...नवीन ही रूप दे दिया। इस समय भी ...रीका देश की मिसीसीपी नदी के मुहाने के ...मुजाकार भूमि खंड (डेलटा) में यह क्रिया हो ...है। इस प्रदेश के न्यू आरलीनस नामक नगर ...एक कूँवा खोदा गया तो लगातार नीचे ...उद्भिज अवशेषों के थाक मिलते गए, ठीक जिस ...के पेड़ इस समय भूमितल पर मिलते हैं। इन उद्भिज अवशेषों पर बालु के थाक जमे हैं और पुनः उस पर मिट्टी जम कर दूसरी थाक के पेड़ों के अवशेष पाए जाते हैं, जिससे प्रमाणित हो रहा है कि वृक्षों के उगने के बहुत समय बाद तक उस भूमिखंड पर जल का प्रवाह नहीं आया और जब वह गिर गिर कर पट गए तो उन पर जल का प्रवाह आया और उन्हें बालू और मिट्टी से तोप दिया।

अब यदि यह मान लिया जाय जैसा कि कई कोयले के विशेषज्ञों की धारणा है कि एक फुट मोटे कोयले की थाक के बनने में पचास पुश्त पेड़ों की काम आ गई है और यदि पेड़ों की प्रत्येक पुश्त की आयु दश वर्ष मान ली जाय (जो अधिक नहीं है) और कई स्थानों पर कोयले की स्तरों की मोटाई जो वास्तव में बारह हज़ार फुट मोटी मानी गई है यदि इसी को प्रमाणिक माना जाय तो अकेले इस कोयले के स्तर के बनने में कम से कम छः करोड़ वर्ष लगे होंगे। यह एक औसत मोटा हिसाब बतलाया गया है जिस से विदित हो जाय कि पृथ्वी की आयु की गिनती जब हम करने बैठेंगे तो इकाई दहाई से काम नहीं चलेगा वहां तो लाख दस लाख वर्षों की एकाई माननी पड़ेगी तब कहीं हिसाब बैठ सकेगा। इस माप के प्रमाण में अन्य स्तरों का भी वर्णन किया जा सकता है। अच्छा अब खड़िए रूपी स्तर को लीजिए।

यह खड़िया क्या चीज है? हम समझते हैं कि यह एक प्रकार की मिट्टी है पर वास्तव में यह ऐसी नहीं है। वास्तव में यह असंख्य अणुस्वरूप छोटे छोटे जीवों के शरीर पिंडों का अवशेष है (ठीक जिस प्रकार के जीव घोंघे सीपीं इत्यादि इस समय हमारे समुद्र की ऊपरी स्तर में पाए जाते हैं) जो खूब महीन धूलिकण की आकार में आकर जमते जमते इस अवस्था को पहुंच गए। आज दिन भी आटलांटिक और प्रशांत महासागर के तल में यह जमाव जारी है और जल मापने के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय मापने की जंजीर के संग लग कर ऊपर आया और परीक्षित हुआ है। इससे प्रमाणित होता है कि वर्त्तमान समुद्र तला में खड़िया की एक थाक जम रही है ठीक जिस प्रकार से किसी युग में खड़िये की वह पुरानी थाक जमी थी जिन्हें हम इस समय पहाड़ी या ऊंची समतल भूमि के रूप में पाते हैं। इसमें कोई भी संदेह नहीं हो सकता कि खड़िए की इस पुरानी थाक के जमने में बहुत सा समय लगा होगा। अर्थात् वह बहुत धीरे धीरे बड़ी ही धीमी गति से जमती गई हैं क्योंकि इस समय नील नद के नीचे जो परत जम रही है उसकी गति शताब्दि पीछे एक इंच है अर्थात् सौ वर्ष में नील नद की यह परत केवल एक इंच ऊंची होती है पर ऊपर के खड़िए वाले परत की गति इससे भी धीमी चाल से जमी है, पर यदि हम इस एक इंच एक शताब्दि वाले हिसाब ही को मान लें तो उस 'अणुस्वरूप जंतु की खोली के धूलि की समष्टि' (खड़िए) के परत को यूरोप इतने बड़े महादेश को दो या तीन मील की मोटी थाक से ढकने में भला कितना दिन लगा होगा? त्रैराशिक का हिसाब फैलाइए। यदि एक इंच मोटी थाक के जमने में सौ वर्ष लगें तो एक फुट थाक के जमने में बारह सौ वर्ष लगेंगे और एक हजार फुट थाक के जमने में (१२०००००) बारह लाख वर्ष लगेंगे। अब देखते यह हैं कि इस खड़िए की थाकों की मोटाई कहीं २ पांच हजार फुट से भी अधिक है, जिससे पता लगता है कि प्रायः कोयले की थाक के इतना इस स्तर के जमने में भी समय लगा है। अब मोटा मोटी हिसाब से यह पता लगता है कि एक लाख तीस हजार फुट मोटी जो स्तर है उसके भिन्न भिन्न भागों से प्रत्येक भाग की आयु प्रायः साठ लाख वर्ष की है। अब एक बात इस संबंध में और सोचने की है। स्तर का यह जमाव सदा सर्वदा तो होता ही नहीं रहा। बीच बीच में विराम भी होता रहा अर्थात् कई कारणों से भूमि के ऊंचे नीचे होने या एका एकी जल के बाहर निकलने या डूब जाने के कारण (जैसा कि भूमिकंप के कारण होता है) जमाव की इस चाल में बीच बीच में रुकावट और परिवर्त्तन में नए युग के आरंभ के साथ २ नए नए प्राणी और उद्भिद के भी दर्शन होते रहे। पृथ्वी पर के सारे स्तरों की खुदाई तो अभी तक हुई ही नहीं है और न शीघ्र होने की आशा है, होते होते इसमें भी जाने कितना समय लग जायगा। इस अवस्था में स्तरों की मोटाई का यथार्थ हिसाब क्यों कर बतलाया जा सकता है? हां, जहां तक यह काम हो सका है उसी बुनियाद पर अनुमान की इमारत बनाई जाती है। इस लिए उस न मिलने वाले हिसाब का भी एक मोटा मोटी या अनुमानिक हिसाब हम दस करोड़ वर्ष मान लेते हैं। यह भी कम से कम अनुमान समझिए और साथ ही इसके जिन स्तरों का अधूरा ज्ञान है उन्हें हम उतना ही समय देंगे।

परिणाम यह निकला कि इस विषय के सभी से अधिक प्रमाणिक पाश्चात्य विद्वान सर चार्ल्स लायल साहब भूगर्भ की जांच से पृथ्वी के स्तरों के बनने का अनुमानिक समय बीस करोड़ वर्ष का बतलाते हैं। उनके इस अनुमान को प्राय सब ही विद्वानों ने ठीक माना है।

पृथ्वी के स्तरों की इतनी बड़ी आयु का प्रमाण भी है। भूमिकंप के कारण पृथ्वी की सतह में उलट फेर होता रहा और जहां पर किसी युग में समुद्र था वहां अब ऊँचे पर्वत दृष्टिगोचर हो रहे हैं। उन पर्वतों पर समुद्री जीवों के अंगावशेषों के पाए जाने से यह बात सिद्ध है। यह पहले भी कहा जा चुका है। और भी एक बात है। यों तो देखने में हमें विदित होता है कि पृथ्वी स्थिर है और समुद्र ही चलायमान है, पर बात वास्तव में उलटी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समुद्र ही की सतह स्थिर है और धरती ही नीची होती रही है, यह ऊपर के प्रमाण से सिद्ध ही है।

खड़िए की थाक के विषय में कहा जा सकता कि कहीं कहीं धरती और समुद्र दोनों की सतह साथ साथ बदलती रही हैं। ऐसा प्रमाण इंग्लैंड कई जगह मिला है कि समुद्र तल की खड़ीया इस समय के खड़ीए के टीले की नाप के अनुसार पानी की सतह के साथ साथ दो मील ऊंची हो गई है। और भी कई जगह इसका प्रमाण मिला है। एक प्रकार का सफेद चूने का पत्थर जिसकी बनावट भी खड़िए की तरह एक प्रकार के अतिक्षुद्र प्राणी के कंकाल विशेष का परिणाम है आधुनिक भूचारी युग के समुद्र तल में बहता हुआ पाया गया है। इसी श्वेत चूने के पत्थर का ढोके का ढोका अर्थात् यों कहिए कि दस हजार फुट मोटा ऊँचा पर्व्वत का पिंड हिमालय और आल्पस पर्व्वत पर पाया जाता है।

इन दिनों भी समुद्र के किनारे किनारे कई देशों में जो पहाड़ियां या ऊंचे कगरे दिखाई देते हैं उन में सीपी, घोंघे इत्यादि समुद्रीय जीवों के अवशेष पाए जाते हैं।

अब हमें जांचना यह है कि इस परिवर्तन का मुख्य कारण क्या है? यह परिवर्तन समुद्र के बढ़ने से हुआ है या धरती के ऊंचे हो जाने से हुआ है? वास्तव में यह परिवर्तन धरती ही के ऊंचे होने से हुआ है क्योंकि यदि समुद्र किसी देश में वर्तमान उपकूल से ऊंचे पर खड़ा होता, तो सर्व्वत्र ही ऐसा खड़ा होता और नहीं तो एक भूखंड या आक्षांश में तो अवश्य ऐसा होता और बहुत सी धरती ऐसी पाई गई है जो आदि युग से लेकर आज तक कभी पानी के अंदर डूबी ही नहीं और वर्तमान समय में भी ऐसे प्रमाण मिले हैं, जिन से साबित होता है कि जहां की धरती और समुद्र के सतह में साथ साथ जो कुछ परिवर्तन हुआ भी है वह कहीं कहीं थोड़ा सा हुआ है, सर्व्वत्र समभाव से नहीं। इस विषय का यहां एक दृष्टांत देना अधिक उपयोगी होगा।

यूरोप के इटाली देश का नाम तो आपलोगों ने सुनाही होगा। वहां नेपल्स नामक नगर के निकट समुद्र की एक खाड़ी है। किसी जमाने में वहां किसी देवता का एक मंदिर बना था। इस मंदिर का नीचे का बहुत सा भाग टूटी फूटी अवस्था में अबतक विद्यमान है। इस मंदिर को बने प्रायः दो सहस्र वर्ष व्यतीत हो गए हैं। अब इस में कोई संदेह नहीं हो सकता कि जब से उक्त मंदिर बना है या तो समुद्र ऊंचा होकर पुनः गिर गया है अथवा धरती नीचे धंस कर पुनः ऊंची होगई है। क्योंकि उस मंदिर के संगमर्मर के खंभों पर समुद्रीय सीपी के रगड़ के चिन्ह अब तक वर्तमान हैं और कहीं कहीं तो इन प्राणियों ने खोद खोद कर जो गढ़हे किए थे, उनमें उनके शरीर की अस्थियाँ तक पाई जाती हैं। अब यदि भूमध्य सागर (मेडीटरेनीयन सी) की सतह बीस फुट ऊंची उठ गई होती तो मिश्र देश का बहुत सा भाग और उसके निकट के उपकूल की बहुत सी नीची भूमि भी जल में डूब गई होती पर यह स्पष्ट है कि बहुत दिनों से अथवा भूगर्भविद्या के कई युगों के पूर्व्व भी यहां की धरती कभी भी खारे पानी में डूबी नहीं थी।

इससे यह परिणाम निकलता है कि इस जगह की धरती अवश्य ही बीस फुट नीचे धँस गई और फिर उतनी ही ऊँची उठ भी आई जिसमें उक्त मंदिर की सतह वर्तमान स्थिती में आ गई। ठीक जैसा कि सौ वर्ष पहले समुद्र की सतह के प्रायः बराबर थी वैसे ही अब भी वर्तमान है और भूमि का यह पैठना और निकलना इतने धीरे धीरे हुआ है कि इस मंदिर के तीन खंभे जो अब तक खड़े हैं, उन्हें कोई हानि नहीं पहुँची। बाद को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ दिनों से फिर यहाँ की धरती नीचे धँसने लगी है जिस कारण से आज कल इस मंदिर का सहन या आँगन समुद्र की सतह से प्रायः दो या तीन फुट नीचा हो गया है।

इस प्रकार के और भी बहुतेरे प्रमाण दिए जा सकते हैं। विलायती टापुओं के किनारे किनारे कहीं कहीं पानी के भीतर से निकले हुए जंगल पुनः नीचे को धँस रहे हैं और कहीं किनारे के करारे और भी ऊँचे हुए जा रहे हैं पर इनकी यह क्रिया सर्वत्र समान नहीं है।

और लीजिए स्काटलैंड के बाएँ किनारे पर वर्तमान धरती की सतह से ठीक चौबीस फुट ऊँचा एक निराला ही उपकूल उठा हुआ दिखाई देता है और इस ऊँचे उपकूल में जगह जगह करारे, समुद्र के थपेड़ों से टूटी फूटी गुफाएँ और उनके नीचे नीचे सब्ज खेत या बालू के पहाड़ भी दृष्टिगोचर होते हैं। अब जब हम उत्तर की ओर बढ़ते हैं तो भीतरी करारे धीरे धीरे नीचे होते होते धरती के साथ मिल जाते हैं और जब बिलकुल उत्तर की ओर जाते हैं अर्थात् जब ओर्कनी और शेटलैंड टापुओं के बीच जा पहुँचते हैं तो ऊँचे उठे हुए किनारों का कोई चिन्ह भी नहीं दिखाई देता। वर्तमान युग के सारे चिन्ह भूमि का धसना बतला रहे हैं। और प्रमाण लीजिए।

स्कन्दनाभदेश (स्वीडन) में इस बात की परीक्षा के लिए लोगों ने समुद्र के किनारे की चट्टानों पर तराश कर निशान कर दिए थे। यह चिन्ह प्रायः सौ वर्ष पहले किए गए थे। अब जब देखा गया तो इस स्थान के उत्तर ओर की चट्टानें प्रायः सात फुट ऊँची हो गई हैं और बीचों बीच की चट्टानें ऊंची नीची कुछ भी नहीं हुई ज्यों की त्यों रही तथा स्कनीया प्रदेश के दक्षिण ओर की भूमि उल्टे और नीची हो गई है।

अब यदि धरती चलायमान न हो कर अचल होती और समुद्र ही चलायमान होता तो कदापि ऐसा नहीं हो सकता था। यदि पृथ्वी ऊँची नीची नहीं होती तो चट्टानों पर तराशे हुए निशान सौ वर्ष बाद सात फूट ऊंचे क्यों हो गए?

तात्पर्य्य यह निकला कि पृथ्वी की अवस्था सदा अदल बदल होती रही और होती रहेगी। सूर्य्यदेव समुद्र से भाप बना कर पानी को खींचते हैं वही भाफ पुनः पानी या तुषार के रूप में भूमि पर गिरता और अपने स्रोत की प्रबलता से भूमि को क्षय करता हुआ, ऊँचे से नीचा बनाता हुआ, उनकी मिट्टी और कंकड़ को अमुद्र तल में ला बैठाता है। यह क्रिया बराबर चलती रहती है और यदि धरती के इस हानि की पूर्ती दूसरे प्रकार से न होती तो कब की सब की सब धरती पानी के अंदर डूब गई होती और पृथ्वी गोलक पर केवल विशाल समुद्र की जल राशि का उछाल ही दृष्टिगोचर होता और कवि की 'तमाल तालीवनराज नीला, आभाति वेला लवणाम्बुराशी' की छटा चहुं ओर दिखाई देती। पर पृथ्वी के भीतर जो कुछ सब बचाया प्रचंड उत्ताप भरा हुआ है वह ठेल ठाल कर नवीन धरती को उपर फेंक देता है और क्षय हुई भई धरती के हानि की पूर्ति सहसा ऊँचे ऊंचे पर्व्वतों के ऊपर उठ आने से हो जाती है।

आप कहेंगे की पृथ्वी के भीतर प्रचंड उत्ताप भरा हुआ है यह केवल आप के घर की कल्पना ही है या इसका कुछ प्रमाण भी है। बैठे इन बातों का प्रमाण मिलना सहज नहीं है आइए जरा कोयले की खान या और किसी खान में हाथ में थर्मामीटर लेकर उत्तर चलिए तो स्पष्ट देखने में आवेगा कि प्रत्येक साठ फुट नीचे एक एक डिगरी पारा ऊपर चढ़ता जायगा। इसी गति से नीचे दस हजार फीट पहुँचने पर पारा खौलने लगेगा और एक लाख फुट नीचे पहुँचने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहले ही सब प्रकार की धातुएँ गल कर बहने लगतीं। इससे भी नीचे कितना उत्ताप है, यह तो ठीक नहीं कहा जा सकता, क्योंकि इतना प्रचंड उत्ताप इतने भारी महाकाय बोझे से दब कर क्या क्या किया करता होगा यह जानना कुछ हंसी खेलवाड़ तो है नहीं। पर हां, ज्वालामुखी पर्वत और भूमिकंपों द्वारा बहते हुए गलित धातु के टोके के ढोके और भीतर बंद रहे हुए वाष्प अंगारों के प्रगट होने से यह पता तो अवश्य लगता है कि हमारी यह शस्य श्यामला, सुजला पृथ्वी माता अपने गर्भ में बड़ी प्रचंड अग्नि की देदीप्यमान ज्वाला को छिपाए हुए है। गहरी से गहरी खान में भी जो गर्म्मी पाई जाती है उसका मुकाबला भला उस उत्ताप से क्यों कर किया जा सकता है जो पृथ्वी के उदर में चार हजार मील भीतर होगी? इसका सोचना भी भयानक है। नौ दस लाख डिगरी की गर्म्मी का अनुमान क्या कभी यह ९८ डिगरी वाला मनुष्य कर सकता है? अब इसमें संदेह नहीं रह जाता कि हमारी धरती का ऊपरी भाग किसी ऐसी चीज पर रखा हुआ है जो उत्ताप की कमी बेशी से अवश्य सिकुड़ता और फैलता है और जब अधिक तनाव पड़ता है तो ऊपरी भाग को प्रचंड धक्के लगने लगते हैं, जिससे भूकंप आता है और ज्वालामुखी पर्व्वत अग्निपूर्ण वाष्प और गलित धातु उगलने लगते हैं। क्योंकि ये ही ज्वालामुखी पृथ्वी की चिमनी या छिद्र स्वरूप हैं। यह हलचल सर्व्वत्र समान नहीं होती क्योंकि इससे धरती का एक भाग ऊंचा होता तो दूसरा नीचे को धसता जाता है। धरती की एक छोर नीचे को धसती और दूसरी ऊपर को उठती है। इसकी तुलना ठीक वैसी धरती से दी जा सकती है, जहां हाल ही में पानी हो कर उतर गया हो और वह धरती बालू और मिट्टी से मिल कर ऐसी गीली भी नहीं हो कि पैर धस जाय अथवा ऐसी पोढ़ी भी नहीं हुई हो कि पैर के चाप से दबे नहीं। ऐसी भूमि पर जो प्रायः गंगा की बाढ़ के बाद किनारे पर पाई जाती है, पैर दबा दबा कर चलने से तलुवे के चारा ओर की मिट्टी फट फट जाती है और उसके बीच से पानी के बुलबुले छूटने लगते हैं।

जैसे नदी की तुलना में यह मिट्टी मुलायम है, वैसे ही पृथ्वी के भीतरी प्रचंड उत्ताप के मुकाबले में इन पथरीले चट्टानों को भी लचीला समझिए और देखने में जो पर्व्वत एकाएकी बहुत ऊंचा आकाश से बातें करता दिखाई देता है, वास्तव में उसकी चढ़ाई उतनी ऊंची नहीं है। यह चढ़ाई सहसा दृष्टिगोचर नहीं हो सकती और वास्तव में इसका तनाव इतना यथेष्ट नहीं हो सकता जिससे चट्टानें फट कर स्तरों में हेरफेर हो जाय।

इस प्रकार की गति बहुत ही धीमी होती है। ज्वालमुखी पर्व्वतों के आस पास की भूमि पर प्रायः नीचे से धक्के लगते रहते हैं, जिन एक एक धक्कों से बड़ी बड़ी भूमि का चप्पा या अंश कई फीट ऊपर को उठ आता है और कहीं कहीं की ऊँची भूमि जिनसे वाष्प और गलित धातुमय अंगारे निकला करते थे सहसा एक ही धक्के में बड़ी भारी खंदक में गायब हो जाते हैं। इटाली देश की नेपलस नगर के जुआभा नाम की आठ सौ फुट ऊँची पहाड़ी इसका नमूना है और अमरीका की मेक्सिको नगरी की उसी नाम की पहाड़ी भी इसी प्रकार की है। यह दोनों पहाड़ियां एक ही धक्के में धरती से बाहर निकल आई थीं और दूसरे ही दिन सांडा नाम की पयप्रणाली (strait of Sunda) में भूकंप के एक ही झोंके दो हजार फुट का ऊंचा एक पर्व्वत भूमि के भीतर धस कर गायब हो गया। और सुनिए। सन १८३५ इस्वी में दक्षिणी अमरीका में एक बड़ा भारी भूकंप आया। वहां यह कैफियत हुई कि कोपियापो से लेकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चीलोई तक की पांच सौ मील लंबी समुद्र के किनारे की भूमि एक ही धक्के में सदा के लिए पांच या छः फूट ऊंची हो गई। समुद्रीय शंख और सीपी इत्यादि के अवशेष किनारे से दस दस फुट ऊँचे पर पाए जाने लगे। यह भी संभव है कि जो बड़े बड़े दो दो तीन तीन मील ऊंचे पर्व्वत दिखाई देते हैं वे भी इसी प्रकार के कई लगातार धक्कों का परिणाम हों।

पर अधिकतर तो यह देखा गया है कि इस प्रकार के परिवर्तन, चाहे ऊपर उठावें या नीचे धसावें, इतने धीरे धीरे होते हैं कि प्रायः उन पर लक्ष ही नहीं जाता। इन दिनों स्कंधनाभ देश ऊपर को उठा आराहा है और ग्रीनलैण्ड नीचे को धसा जा रहा है। पर बहुत से देश ज्यों के त्यों अपनी पुरानी स्थिती पर डटे हुए हैं विलायत में कर्नवाल नाम का एक प्रदेश है। यहां टीन की खाने हैं। यहां सेंटमाइकल नाम का एक छोटासा पर्व्वत है। इस पर्व्वत का संयोग एक लंबे से धरती के टुकड़े के द्वारा मुख्य प्रदेश से है। इसी टुकड़ी के ऊपर से गाड़ियों में टीन भर भर कर प्राचीन ब्रिटन लोग ले आया करते थे। यह दो हजार वर्ष पहले की बात है। आज भी जब समुद्र में भाटा आता है तो भूमि की यह लंबी टुकड़ी बाहर निकल आती है और ज्वार के समय डूब जाती है। आज सात हजार वर्ष से मिश्र देश की भूमि ज्यों की त्यों स्थिर है और यदि कुछ धसी भी होगी तो इतनी कम कि नील नद की मिट्टी ने उसे उतनाही ऊंचा भी कर दिया होगा जिससे उसकी सतह ज्यों की त्यों कायम है।

इधर आंग्ल और स्काच देश के तीर की भूमि प्राचीन युग से इस समय तक प्रायः बीस फुट ऊंची होगई, जब कि एक ऐसा ज़माना था कि इस समय के धन जन पूर्ण ग्लासगो नगरी के बाजारों के निकट डोंगिया डूबा करती थीं। इस बात के भी बहुत से प्रमाण मिलते हैं कि यह क्रिया धीरे धीरे—बहुत ही धीरे—होती रही है और बीच बीच में प्रबल धक्का भी पहुंचता रहा है और बहुत दिनों का विश्राम का जमाना भी रहा जब समुद्र और धरती दोनों की सतह जैसी की तैसी स्थिर रही। इसलिए इन पार्थिव परिवर्तनों के बहुत धीरे धीरे होने का प्रमाण प्रत्यक्ष है, और इस से वही परिणाम निकलता है जो हम पहले कोयले या खड़िए की स्तरों की बनावट से निकाल चुके हैं अर्थात् भूगर्भ के इन परिवर्तनों की माप की गिनती लाख दस लाख वर्षों ही से की जा सकती है।

इस लंबी मियाद का और भी प्रमाण लीजिए प्रत्येक युग के प्राणियों में भी धीरे धीरे वैसा परिवर्तन लक्षित होता है और यह परिवर्तन स्तरों की बनावट के साथही साथ उसी प्रकार से धीरे ही धीरे हुआ है। यों तो ऐतिहासिक युग में इनमें कुछ ऐसा परिवर्तन हुआ नहीं दिखाई पर तौभी थोड़े से भूचारी पशुओं में इन दो सहस्र वर्षों में भी परिवर्तन स्पष्ट लक्षित होता है, अधिकतर पशुओं में इन ऐतिहासिक समय विशेष परिवर्तन लक्षित नहीं होता। थोड़े भूचारी जंतुओं में इस समय के बीच बहुत हेर फेर हुआ है, पर जब जलज प्राणी सीपी घोंघा इत्यादि की अगणित श्रेणी की ओर झुकते हैं पुरानी लोप होने वाली और नवीन प्रगट हो जाने वाली जातियों में पांच फी सैकड़े से अधिक अन्तर नहीं दिखाई देता। जब कि इस समय के वर्ष ऋतु इत्यादि में और समुद्र की सतह की स्थिति में बहुत कुछ परिवर्तन होता रहा है तो प्राणियों के इतने कम परिवर्तन को देख कर अवश्य मनुष्य कुछ, विचार में पड़ जाता है। तुषार युग (जबकि बर्फ ही बर्फ था) आया और गया और विलायत (ब्रिटन) ऐसा देश कभी द्वीप पुंज के रूप में रहा और कभी आजकल जहाँ शामिल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महासमुद्र (जर्मन ओशन) है, वहां के स्थान में उसकी भूमि फैली रही।

इन सब बातों को लक्ष्य कर के और प्राणियों के रूप परिवर्तन की पूर्व गति को मानते हुए तथा नाना प्रकार के स्तरों में प्राणियों के अवशिष्ट चिह्नों की तुलना करते हुए इस तत्व के बड़े बड़े विद्वान इसी मन्तव्य पर पहुँचे हैं कि इन परिवर्तनों में बीस करोड़ वर्ष से कम कदापि नहीं लगा है।

चाहे हमें पृथ्वी की आयु की लंबी मियाद बहुत अधिक मालूम पड़ती हो पर वास्तव में यह उसकी पूरी उमर का लेखा होना तो दूर रहा उसका केवल एक अंश मात्र है क्योंकि स्तरों की बनावट (जिन से यह परिणाम निकाला गया है) तो तभी आरंभ हुई होगी जब पृथ्वी इस अवस्था की शीतलता को प्राप्त हो चुकी होगी कि उस पर आंधी का चलना, पानी का बरसना, नद नदियों का और मिट्टी इत्यादि का बहना संभव होगया होगा, तथा वह इस अवस्था को प्राप्त होगई होगी कि उस पर प्राणियों का निवास संभव हो जिन के अवशेष स्तरों में पाए जाते हैं।

अब विचारने की बात है कि जब पृथ्वी इस अवस्था को पहुंची (जिसे हम उसकी युवा अवस्था कह सकते हैं) उस के पहले शीतल * होकर इस अवस्था तक पहुंचने में कितने दिन लगे होंगे। यह हिसाब और भी फैलाया जा सकता है। अब यदि हमारी पृथ्वी को शीतल होने में लाखों करोड़ों वर्ष लगे तो हमारे सौर-मंडल का जो सब से बड़ा ग्रह गुरु या वृहस्पति है, उसे शीतल होने में न जाने कितना समय लगेगा और वह अपनी इस अवस्था को कब तक त्यागेगा जिसे छोड़े हुए हमारी पृथ्वी को करोड़ों वर्ष व्यतीत हो गए हैं। अच्छा जरा विचारिए तो सही सब के दादा गुरु सूर्य्य भगवान को इस अवस्था तक पहुंचने में कितना समय लगेगा? सूर्य्य की कौन चलावे इस विश्व ब्रह्मांड के अन्य सुदूरवर्ती नक्षत्र कब तक शीतल होंगे जो हमारे इस सूर्य्य से भी कहीं सहस्रों लक्षों गुण बड़े और विशाल हैं और अपनी महाअग्नि की वाष्पाकार अवस्था को छोड़ कर अब तक सूर्य्य की अग्निमय अवस्था को भी नहीं पहुंचे हैं। समय के विशाल गणित का आभास देने के लिए यह सब दृष्टान्त दिए गए हैं तथा और भी संख्या और अक्षरों में भी इसका आभास बतलाया जा सकता है।

अच्छा अब गणित की एक कैफियत सुनिए, यह यह कहती है कि ठीक जैसे गाड़ी के पहिए में ब्रेक लगे रहते हैं वैसे ही समुद्र के तरंगों को पीछे खींचने वाली आकर्षण शक्ति के कारण पृथ्वी के घूमने की चाल दिन पर दिन कम होती जाती है अर्थात् दिन का परिमाण अर्थात् लंबाई अधिक होती जाती है। चंद्रमा की ह्रासवृद्धि से समुद्र के तरंगों में ह्रासवृद्धि होती है और इसी कारण पृथ्वी की गति में हेरफेर होता है। अब चंद्रमा का पृथ्वी पर जो यह प्रभाव पड़ता है, पृथ्वी चंद्रमा पर अपना ठीक उल्टा प्रभाव यह डालती है कि ज्यों ज्यों पृथ्वी के घूमने की चाल धीमी होती जाती है, त्यों त्यों चंद्रमा उससे दूर दूर हटता जाता है। जब पृथ्वी बहुत तेजी से घूमती थी तो चंद्रमा इसके बहुत निकट—खूब

* सारे आकाश पिंडों की तरह हमारी यह पृथ्वी भी पहले सूर्य्य की तरह अग्निमय वाष्प का गोलक मात्र थी जिन में इस समय सूर्य्य प्रधान है तथा वृहस्पति, शुक्र इत्यादि बड़े बड़े ग्रह भी हैं जो अभी तक शीतल नहीं हुए, जब शीतल होंगे तो इन पर भी मिट्टी जमेगी, स्तर बनेंगे और तदाकार प्राणी निवास करेंगे। भारतीय ऋषियों का भी सृष्टि-क्रम इसी प्रकार से कहा गया है।

यथा "अग्नेआपः अद्भ्याम् पृथ्वी·····इत्यादि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही निकट था—यहाँ तक कि जब पृथ्वी खूब तेजी से—खूब ही तेजी से अपने आरंभ काल में घूमती थी और दिन का परिमाण केवल तीन घंटे का था अर्थात् चौबीस घंटे के बदले जिस समय केवल तीन ही घंटे में पृथ्वी एक बार घूम जाती थी उस समय चंद्रदेव हमारी पृथ्वी के संग लगे लगे डोलते थे।

जब इतने सटे हुए थे तो एकाएकी इतने दूर क्योंकर हो गए। या तो एक ही झटके में पृथ्वी ने उन्हें दूर ढकेल दिया होगा या धीरे धीरे चक्राकार पतली अंगूठी की तरह उसके एक एक अंश अलग हो हो कर * दूर होते गए होंगे और अंत को पूर्णचंद्र के रुप में प्रकाशित होने लगे होंगे? जब समुद्र के तरंगों के उठने गिरने का कारण चंद्रमा ही है तो भला जब चंद्रदेव इतने निकट रहे होंगे तो समुद्र कितना ऊँचा उठता होगा? एक हजार पाँच सौ फुट ऊँचे तरंगों का दिन में दो तीन घंटे के अनन्तर ऊँचे उठ कर आसपास के नद नदी और ऊँची भूमि को स्नान करा देना तो नित्य का व्यवहार रहा होगा।

यह सब अनुमान संदेहयुक्त भी हो सकता है पर इसमें तो कोई संदेह नहीं है कि जब पृथ्वी पर स्तर बनने आरंभ हुए थे उस समय इस प्रकार की कोई क्रिया यहाँ नहीं हुई थी, पर यहाँ दिखाना यह है कि यह सब अनुमान निरी कोरी कल्पना नहीं है। गणितशास्त्र और ज्योतिषशास्त्र से इसकी माप जोख कर के प्रमाण भी दिए जा सकते हैं, जिसका थोड़ा सा नमूना नीचे दिया जाता है:—

ज्योतिषशास्त्र के एक विद्वान ने पता लगाया कि प्राचीन समय में जो सूर्य्य-ग्रहण होता था और इस समय जो सूर्य्य ग्रहण होता है दोनों की तुलना करने से चंद्रमा की चाल में कुछ अन्तर पाया जाता है अर्थात् इस समय से उस समय चंद्रमा की चाल कुछ धीमी थी। दूसरे विद्वान ने इस अन्तर का निराकरण यों किया कि ऐसा होना इस लिए स्वाभाविक है कि गुरुत्व आकर्षण के नियमानुसार ज्यों ज्यों पृथ्वी के घूमने के मार्ग में भिन्नता पड़ती जायगी, यह अन्तर भी उसी के अनुसार पड़ता जायगा और गणित करने पर इस अन्तर का हिसाब पृथ्वी के उस भिन्नता पड़ते जाने वाले अन्तर से ठीक मिल गया अर्थात् पृथ्वी के गुरुत्व आकर्षण के नियमानुसार उसके मार्ग में जो परिवर्तन होना आवश्यक है उतना ही अंतर चंद्रमा की गति में पाया गया। अब एक दूसरे विद्वान ने इसमें कुछ गलती निकाली और छानबीन कर के यह निश्चय किया कि चंद्रमा की गति ठीक पृथ्वी की गति से ज्यों की त्यों नहीं मिलती वरन् ठीक उससे आधोआध है। अब पृथ्वी की यह चाल जो धीमी होती जाती है उसका हिसाब यह लगाया गया कि दो हजार वर्ष में केवल सवा घंटे का अंतर आता है अर्थात् दो हजार वर्ष पहले दिन जितने लंबे होते थे उससे अब केवल एक सेकेंड के $\frac{८४}{१}$ हिस्सा मात्र लंबे हुए हैं (अर्थात् एक सेकेंड का चौरासीवाँ भाग)। अब त्रैराशिक फैलाइए। इस हिसाब से एक सेकेंड का अंतर पड़ने में १६८००० एक लाख अड़सठ हजार वर्ष चाहिए और एक मिनट के अंतर के लिए १००८०००० एक करोड़ अस्सी हजार वर्षों की आवश्यकता है।

पूर्व्व काल में यह हिसाब ज्यों का त्यों न रहा होगा क्योंकि चंद्रमा जितना निकट होता जायगा तरंगें और भी ऊंची होती जायँगी और पृथ्वी की गति बढ़ती जायगी। पर तौभी जिस समय पृथ्वी

---

* हमारे नवग्रह के शनी माहाराज के संग एक दो की तो कौन कहे आठ चंद्रमा हैं और उनके चारो तरफ छल्लेनुमा चक्राकार उज्ज्वल ज्योति घिरी हुई है। ठीक उसी प्रकार से चक्राकार ज्योति का पृथ्वी पर घिरे रहने का अनुमान किया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन घंटे में एक बार घूमती थी और चंद्रमा को अपने में से निकाल फेंका था उस समय तक का काल-निर्णय दिमाग मे आना भी कठिन है क्यों कि ब्रह्मांड की महा अग्नि के गोलक सब आकाश में कितने समय में अपने उत्ताप को घटाकर सूर्य्य और नक्षत्रों के आकार में आते हैं और फिर कितने दिनों मे ठंढे होकर निवास के उपयोगी ठोस पृथ्वी का रूप पाते हैं इसके समय का जो लेखा लगाया गया है वह निरा अनुमान ही अनुमान है।

क्योंकि यदि मूल काल-निर्णय ठीक हुआ तो उसके आधार पर जो कुछ हिसाब लगाया गया है ठीक उतरेगा, पर यदि मूल ही में गलती हुई तो उस बुनियाद पर खड़ी गई सब इमारतें अवश्य ही पोली होंगी। यह तो हम निश्चयपूर्वक कभी भी नहीं कहते कि इस विषय में हमारा अनुमान सब निरा सत्य और सही है।

अच्छा अब जड़ विज्ञान की एक सब से कठिन समस्या-सूर्य्य के उत्ताप वाला मामला-लीजिए और बतलाइए कि सूर्य्य भगवान अपने भीतर इतना प्रचंड उत्ताप किस प्रकार धारण किए हुए हैं जो अनवरत आकाश में कम होने पर भी कम नहीं होता, आकाश-मंडल में चारों ओर सूर्य्य का यह उत्ताप लगातार कम हो रहा है। हमारी पृथ्वी माता को तो उसका एक कण मात्र मिलता है। हमारी पृथ्वी की तो कौन कहे, सारे नक्षत्र मिला कर भी सूर्य्य देव से जितना उत्ताप निकला करता है उसका तेइस करोड़वाँ हिस्सा भी नहीं पाते अर्थात् उससे कुछ कम पाते हैं। अब यदि हमें यह पता लग जाय कि सूर्य्य की किरणों द्वारा इतने समय में पृथ्वी को इतना उत्ताप मिलता है, तो उतने समय में सूर्य्य से कितना उत्ताप निकला इसका हिसाब लगाया जा सकता है। वह हिसाब यह है कि प्रत्येक सेकंड में सूर्य्य में से इतना उत्ताप निकलता है जितना १६४३६००००००००००००० सोलह शंख, तेतालीस पदम, और साठ नील टन सर्वोत्कृष्ट पत्थर के कोयले के जलाने से उत्ताप निकला सकता है। और इतना उत्ताप केवल एकही सेकंड में निकल जाता है और न जाने यह उत्ताप कब से निकल रहा है। कितने करोड़ों अरबों वर्षों से निकल रहा है कुछ ठिकाना है। मनुष्य के क्षुद्र दिमाग की कल्पना तो उस महा महा प्रचंड उत्ताप के परिमाण को धारण करने या वर्णन करने में भी नितान्त असमर्थ है। बड़े बड़े विद्वान भी प्रकृति देवी की इस 'फजूल खर्ची' पर हैरान हैं।

पर इसमें तो कोई भी सन्देह नहीं कि चाहे गिनती के ये अंक कितने ही बड़े क्यों न मालूम पड़ें, यह सब ठीक ठीक प्रकृति के नियमानुसार ही हो रहे हैं ठीक जैसे मध्याकर्षण का नियम सारे व्योममंडल में परिव्याप्त है और जिसकी व्याख्या करने में इसी प्रकार के अति वृहत् अंकों का लेखा लगाना पड़ता है। इतने भारी उत्ताप का खजाना कहां है और यह इतना अधिक उत्ताप कहां से इकट्ठा हुआ? इसका जो एक मात्र उत्तर हमें मालूम है वह यह है कि "प्रारंभ में एक माहाज्वालामय महान अग्नि-पुंज था।" उससे छटक कर एक बड़ा भारी अग्नि का गोला आकाश-मंडल में घूमता हुआ सिकुड़ने लगा और उसके सिकुड़ने से उसमें महा शक्ति का भंडार एकत्र होकर प्रचंड उत्ताप के प्रगट होने का कारण हुआ। यही गोला हमारे वर्तमान सूर्य्य भगवान हैं। इस प्रचंड शक्ति या वेग सहसा सिकुड़ कर सूर्य्य के छोटे रूप में (उस आदि अग्निपुंज के मुकाबले में छोटे) आने के कारण इनमें इतने अधिक उत्ताप का भंडार इकट्ठा हो गया। जहां तक पता लगा है यह अनुमान सत्य प्रतीत होता है। यह भी ठीक है कि ज्यों ज्यों यह ज्वाला पिंड सिकुड़ता जायगा इसका उत्ताप निचुड़ कर बाहर निकलता जायगा। ठीक जैसे एक भींगे कपड़े को दबाने से उसका पानी निचुड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता है, पर एक यह भी संदेह का स्थल है कि केवल यही इसका एक मात्र कारण है या नहीं। क्योंकि गणितज्ञों ने हिसाब लगाया है कि यदि वह आदि अग्निपुंज अनन्त प्रसार वाला हो तौ भी उसका वर्तमान सूर्य्य के आकार में सिकुड़ कर आने में इतना उत्ताप एकत्र हो जायगा कि वह उत्ताप बराबर डेढ़ करोड़ वर्ष तक कायम रहेगा। सूर्य्य से छिटक कर पृथ्वी जब एक अलग ग्रह के रूप में आई उसके पहले भी सूर्य्य का बहुत सा उत्ताप अवश्य ही क्षय हो चुका होगा और फिर पृथ्वी ठंढ़ी हो कर जब वासोपयोगी हुई उसमें भी बहुत सा समय लगा होगा। चाहे जो हो इस बात में सभी भूगर्भवेत्ता सहमत हुए हैं कि पृथ्वी के प्राचीन चट्टानों के प्राणियों के जो चिन्ह पाए गए हैं और उसकी सतह पर जो सब परिवर्तन हुए हैं उनमें कम से कम दस करोड़ वर्ष तो अवश्य ही लगे हैं।

इसमें जो कुछ कमी बेशी रह गई है उसकी पूर्ति के लिए भी अनेक चेष्टाएं की गई हैं। उदाहरण रूप से जैसे कि यह कहा गया कि—"जब बराबर सूर्य्य मंडल में उल्का और धूमकेतु के पिंड गिरते जा रहे हैं तो उससे भी सूर्य्य की बहुत सी शक्ति अवश्य ही क्षय होती जाती है जो उत्ताप में परिणत हुई होती। किसी अवस्था में यह सत्य माना जा सकता है पर यह भी समझ में नहीं आता कि आज असंख्य वर्षों से सूर्य्य भगवान् इन आकाशस्थ गोलियों का निशाना बना हुआ भी अपनी प्रचंड उत्ताप को धारण क्यों कर किए हुआ है। साफ साफ पूछिए तो बात यह है कि सूर्य्य की भीतरी बनावट का यथार्थ ज्ञान हमें नहीं है और संभव है कि ज्वाला और बाष्प पुंज से बना हुआ सूर्य्य हमें जिस आकार गोलक सा दिखता है उसका भीतरी ठोस भाग और भी प्रचंड चाप से दबा और सिकुड़ा हुआ हो। यह कारण सत्य भी हो सकता है क्योंकि सब ओर की निकासी को मान कर भी हमें अंत को यही बात पुनः कहनी पड़ती है कि इतने अगणित वर्षों से इतने अधिक प्रचंड उत्ताप का क्षय होते जाना (जैसा कि सूर्य्य का हो रहा है) यद्यपि है प्रकृति के नियम के भीतर वाली बात है पर अब तक इसका न तो ठीक ठीक पता ही लग सका है और न कोई इसका खुलासा ही कर सका है। सूर्य्य की बात को जाने दीजिए। सब से निकट हमारी यह जो पृथ्वी है उसके भीतर की अवस्था और उसके क्रमशः ठंढे होते जाने का ठीक ठीक हिसाब भी हम अभी तक नहीं लगा सके हैं। बहुत सावधानी से कई बार खानों के और गंभीर खंदकों के भीतरी परीक्षा करने पर प्रमाणित हुआ कि पृथ्वी का जो छिछला ऊपरी भाग जिस पर सूर्य्य की जल शोषण शक्ति का प्रभाव पड़ता है उसपर प्रत्येक साठ फूट पर एक डिगरी गर्मी की वृद्धि होती है।

इसी प्रकार से हिसाब लगाते हुए हम सहज ही में उस गहराई का अनुमान लगा सकते हैं जहां पहुंचने पर उत्ताप से सारे पदार्थ गल जायंगे। अयनांश भाग द्वारा जो गणना की गई है, उससे यह साबित होता है कि यह पृथ्वी ठोस पिंड है, तरल नहीं, और कम से कम इसका खोल नब्बे मील मोटा ठोस है, क्योंकि यदि यह इतना मोटा न होता और केवल नीचे खौलते हुए तरल पदार्थ पर झिल्ली सी धरे रहता तो कब की यह धरती टूट कर भस्म हो गई होती। ठीक जैसे पानी के ऊपर यदि पतली झिल्ली बरफ की जमी होती है और वह गल कर नीचे पानी में ध्वंस हो जाया करती है।

इस विषय में हम केवल इतना ही कह सकते हैं कि पृथ्वी-गर्भ के भीतर उत्ताप, चाप, विद्युत् और रासायनिक क्रिया का द्रव्यों पर जो प्रभाव पड़ता है वह ऊपरी प्रभाव से अवश्य ही भिन्न है और इसी प्रकार से सूर्य्य के भीतर वाली बात भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत थोड़ी ही मालूम है। इसलिए सब से सहज उपाय यही है कि भूगर्भविद्या से हमें जो कुछ निश्चित हो सकता है उसी पर विश्वास करके विचार किए रहें। उदाहरण स्वरूप जैसे कि हमारी पवित्र जान्हवी या ब्रह्मपुत्र वर्षभर में कितनी मिट्टी लेकर जमा करती हैं इसका एक मोटा हिसाब हम लगा सकते हैं, और यह भी हम निश्चयपूर्वक बतला सकते हैं कि कितनी थाक या स्तर मिट्टी के जमने से सौ वर्ग मील इतना बड़ा क्षेत्रफल बन जायगा कि जिससे गंगाजी से सींचे हुए भारतवर्ष के भूभाग का क्षेत्रफल उतना हो जाय कि बंगोपसागर मिट्टी से बिल्कुल पट जाय इसी प्रकार से किसी प्राचीन उपसागर या समुद्र को पटा हुआ देख कर हम उसके मिट्टी की मोटाई को नाप कर समय का अनुमान लगा सकते हैं।

इस प्रकार के हिसाब निरे अनुमान ही अनुमान नहीं हैं, वरन् कुछ भ्रम रहने पर भी इस में सत्य की बहुत कुछ संभावना है। तात्पर्य्य यह कि भूगर्भविद्या के सिद्धान्त सब (वर्तमान अवस्थाओं की परीक्षा कर के जहां तक स्थिर किए गए हैं) निरे मनगढ़न्त सिद्धांत नहीं हैं, वरन सत्य पर प्रतिष्ठित हैं। ज्योतिष सिद्धांतों की तरह इन की अवस्था नहीं है जो एक ओर तो सौर मंडल के बनने का समय केवल डेढ़ करोड़ वर्ष बतलाती और दूसरी ओर यह कहती है कि चंद्रमा जब पृथ्वी से छिटक कर अलग हुआ तो उस समय पृथ्वी केवल तीन घंटे में एक बार घूमती थी। यदि हिसाब लगाते हैं तो केवल तेईस घंटे के बदले चौबीस घंटे की गति तक आने में साठ करोड़ वर्ष चाहिए।

जो लोग इन दोनों विद्याओं के पारदर्शी नहीं और केवल निष्पक्ष जिज्ञासु हैं उन्हें इन सब झगड़ों में न पड़ कर सीधी राह पकड़नी चाहिए, वह यह है कि भूगर्भ विद्या द्वारा पृथ्वी की आयु लगभग प्रायः दस करोड़ वर्ष की साबित होती है और ज्योतिष विद्या तो एक महा काल का युग बतलाती है, जिन में से असंख्यो वर्ष इस सौर मंडल के उत्पन्न होने, बढ़ने और पूर्ण अवस्था के आने में बीत गए और भविष्य में असंख्यों वर्षों में ह्रास होते होते इसका नाश होगा, और उसी सौर मंडल का हमारी पृथ्वी एक छोटी सा ग्रह है जो इस समय मनुष्य वासोपयोगी अवस्था के बीच से गुजर रहा है।

इसलेख में केवल मुख्य मुख्य बातों को दिखा कर पृथ्वी की आयु का निर्णय किया गया है सो विशेष कर भूगर्भविद्या के आधार ही पर किया गया है, ज्योतिष पर नहीं, और दिखाया गया है कि ज्योतिष और भूगर्भ विज्ञान दोनों इस विषय में सहमत नहीं हैं क्योंकि दोनों की परीक्षा का ढंग भिन्न भिन्न है। सौभाग्य से हम ऐसे समय में उत्पन्न हुए हैं कि हमें प्रायः सब ही विज्ञान की पुस्तकें प्राप्य हैं (यद्यपि हिन्दी में अभी नहीं हुईं) अस्तु जिन्हें अधिक रुचि हो उन्हें इस विषय के मुख्य २ विद्वानों की पुस्तकें आलोचनापूर्वक पढ़ना चाहिए और इसी रुचि को जाग्रत करने के लिए यह लेख लिखा गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राचीन भारत की लेख (लिपि) सामग्री*।

यह एक निर्विवाद विषय है कि कागज, कलम, पेंसिल, स्याही आदि लिखने की सामग्रियाँ, जिनके बिना इन दिनों हमारे लिखने पढ़ने के सारे काम अधूरे ही रह जायँगे—७।८ सौ वर्ष के पहले की नहीं है। यहाँ पर प्रश्न यह है ७।८ सौ वर्ष पहले क्या भारतवासी लिखना पढ़ना जानते ही न थे? यदि जानते थे तो उनके लिखने पढ़ने का कोई साधन था या नहीं? वे लिखना पढ़ना अवश्य जानते थे और नहीं तो महाकवि कालिदास, बाण, सुबन्धु आदि तथा इनसे भी पहले के व्यास और बाल्मीकि की प्रसिद्धि इन दिनों भी किस तरह बनी रहती और महाभारत रामायण, वेदान्त, उपनिषद् और गीता आदि ग्रन्थ हमें देखने को कहाँ से मिलते? यह तो भारत के सब शिक्षित भली भाँति जानते हैं कि प्राचीन समय में लिखने की परिपाटी नहीं थी, लोग वंशानुक्रम से वेद उपनिषद् आदि के ज्ञान कंठ कर लिया करते थे। जब धीरे २ लोगों की स्मरणशक्ति क्षीण होने लगी तब इस बात की आवश्यकता पड़ी कि वे अपने सीखे हुए विषयों और पाठों को किसी तरह लिपिबद्ध कर सकते। इसी समय लेखन कला का प्रथम आविर्भाव हुआ होगा। इतिहास बतलाता है कि आवश्यकता आ पड़ने पर कंठगत "ज्ञान" को लोग पत्थरों पर, वृक्षके छाल, पत्तों और कपड़ों पर किसी तरह लिपिबद्ध करने लगे और उसी समय से लेखन कला का अभ्यास बढ़ने लगा और लोग लेखन-कला की नई नई युक्तियाँ ढूँढ़ २ कर निकालने लगे, यहाँ तक कि यह कला इस समय यहाँ तक उन्नत कर गयी कि पाठशालाओं और विद्यालयों के विद्यार्थी भी अवश्यकीय काम करने योग्य छोटी २ बातों अथवा सुमनोहर पद्यों को भी आलस्यवश लिपिबद्ध कर लिया करते हैं और अब आप को ऐसा कोई भी शिक्षित-लिखा पढ़ा-मनुष्य न मिलेगा कि जिसके साथ सदा एक 'नोटबुक' और पेंसिल' अथवा 'स्टाइल' न हो। अब तो हम कभी इतना भी नहीं सोचते कि ये कागज, पेंसिल, स्याही कब, कैसे और क्यों बनीं? अस्तु।

मैं आज इस छोटे से लेख में पाठकों के सम्मुख इन्हीं लेख सामग्रियों का प्राचीन इतिहास उपस्थित करता हूँ।

कागज, जिसके कुछ मंहगे हो जाने से अब हम हाय हाय करते और हा हा खाते हैं, प्रथम विक्रम सम्वत् १८-११०० में धाराधिपति भोज के समय व्यवहृत होता देख पड़ता है, पुरात्तत्व विभाग के अनुसंधान से जाना गया है। इसके पहले के जितने लेखादि मिलते हैं वे पत्थरों पर, कपड़ों पर अथवा ताम्र और ताल पत्रों पर खुदे अथवा लिखे हुए देख पड़ते हैं जिनका संक्षिप्त इतिहास इस प्रकार है:—

(क) भोज-पत्र।

क्यु. कर्टियस नाम के एक पश्चिमीय पुरात्तत्ववेत्ता विद्वान का कथन है कि बादशाह सिकंदर की चढ़ाई के समय भारतवर्ष में लिखने लोग लिखने के काम में भोजपत्र का ही व्यवहार किया करते थे। पुरात्तत्व की खोज से भी यह बात पायी जाती है कि उत्तरीय बौद्ध और हिन्दू धर्म के संस्कृत ग्रंथ प्रायः भोजपत्र पर ही लिखे गए हैं। इन प्राचीन ग्रंथों से विदित होता है कि उस समय लोग लिखने की सामग्री—"भोजपत्र" को "लेखन" और लिखी हुई प्रतियों को "भूर्ज

* एक अंग्रेजी ग्रंथ के आधार पर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते थे। ये भोजपत्र जो विशेष कर लिखने काम में व्यवहृत होते थे साधारणतः ढाई हाथ और आठ अंगुल चौड़े तैयार किए जाते थे और लिखने के पूर्व ही लोग इन ढ़ाई हाथ लंबे और आठ अंगुल चौड़े टुकड़ों को तेल अथवा और किसी पदार्थ से चिकने और लिखने के योग्य बना लेते थे। भोजपत्र को इस तरह लेखन सामग्री बनाने की यह प्रथा मुगल बादशाहों के शासन के पूर्व काश्मीर में वर्त्तमान थी। पर अकबरादि मुगल बादशाहों के राज्यकाल में जिस समय कागज का व्यवहार अच्छी तरह होने लग गया था, यह प्रथा काश्मीर से भी धीरे २ नष्ट हो गयी। तथापि काश्मीरी पंडितों के प्राचीन पुस्तकालयों में इस समय भी ये "भूर्ज" अधिकता से पाए जाते हैं। भाऊ दाजी के कथनानुसार भोजपत्र की हस्तलिखित प्रतियाँ अभी तक बंगाल में भी पाई जाती हैं और यह तो सभी जानते हैं कि यंत्रादि इस समय भी भारत के सभी प्रांतों में भोजपत्र पर ही लिखे जाते हैं। पुरातत्ववेत्ताओं का कथन है कि इन भोजपत्रों का व्यवहार सब से पहिले उत्तर पश्चिमीय प्रांतों में हुआ होगा पर इसका प्रचार शीघ्र ही अन्यान्य प्रांतों में भी हो गया था, क्योंकि ताम्रपत्र, जो मध्य पूर्वीय और पश्चिमीय भारत में देख पड़ते हैं, ठीक उन्हीं भोजपत्रों के आकार के बने हुए हैं और ये काश्मीरी भोजपत्र प्रायः अंग्रेजी क्वार्टों के आकार के बने हुए हैं। कई हस्तलिखित संस्कृत पुस्तकों की प्रतियों से और बेरूनी (Beruni) के कथनानुसार उस समय पत्रादि भी विशेष कर उत्तरीय, मध्य, पूर्वीय और पश्चिमीय भारत में भोजपत्र पर ही लिखे जाते थे। सबसे प्राचीन बुद्ध की हस्तलिखित प्रति जो प्राप्त हो सकी है तिब्बत की खरोष्ठी धम्मपद की है जो बेलन के आकार में तागों से बंधी हुई है। इस प्रति के निकालने का सौभाग्य मि० मैसन (Masson) को हुआ था, जिन्होंने इसे अफगानिस्थान के स्तूपों में पाया था। और २ भी कई ऐसी प्रतियाँ मिली हैं जो आकार में तालपत्र की तरह हैं और जिनके बीच में एक छिद्र, उन्हें बांध रखने के लिये बना हुआ है। पूना, लंदन, आक्सफोर्ड, वायना, बर्लिन आदि के पुस्तकालयों में ऐसी बहुत सी भोजपत्र की हस्तलिखित प्रतियाँ संग्रहित हैं जो अधिकांश में पंद्रहवीं शताब्दी अथवा इसके बाद की ही हैं।

(ख) वस्त्रादि।

नियरकस (Nearchos) के कथनानुसार ईसा के पूर्व की चौथी शताब्दी में हिंदू जाति अधिकांश में पिटे हुए कपड़ों को लिखने के काम में लाया करती थी। स्मृतियों की तथा आंध्र-राजाओं के समय की कई हस्तलिखित प्रतियों से पता चलता है कि राजकीय तथा सर्व साधारण के लेखादि भी पट, पटिका, अथवा कर्पासिका पट पर ही हुआ करते थे। बर्नेल और राइस (Burnele and Rice) के कथनानुसार कनारी व्यापारी और व्यवसायी वर्त्तमान समय में भी अपने हिसाबादि के बही खाते कडनम नाम के एक कपड़े के बनाते हैं, जिन कपड़ों पर इमली के बीज पीस कर लगा दिए जाते हैं और ऊपर से पत्थर के कोयले का रंग चढ़ा दिया जाता है। इन्हीं कपड़ों पर लोग खल्ली अथवा पत्थर आदि के टुकड़ों से लिखा करते हैं, अक्षर साधारणतः उज्ज्वल अथवा श्याम वर्ण के होते हैं। जैसलमीर के बृहद ज्ञानकोष में रेशमी कपड़ों पर जैन मतावलम्बियों के कुछ सूत्र स्याही से लिखे हुए पाए गए हैं। कुछ ही दिन हुए हैं कि मि० पीटसर्न (Peterson) को अणहिलवाड पटण में एक ऐसी हस्तलिखित प्रति विक्रमीय संवत १४१८ (ई० १३६१-६२) की मिली है जो कपड़े ही पर लिखी गयी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ग) लकड़ी अथवा काठ के तख्ते।

विनय पिटक का वह अंश जिसमें धार्मिक आत्महत्या संबंधी आदेशों का 'खोदना' वर्जित है, इस बात का एक प्रत्यक्ष प्रमाण है कि प्राचीन समय में लोग भारतवर्ष में लकड़ी अथवा काठ के तख्ते और बाँस की चटाइयाँ *और फलक भी लिखने के काम में व्यवहृत किया करते थे।

जातक तथा अन्यान्य ग्रंथों में भी ऐसा वर्णन पाया जाता है कि प्राचीन समय में विद्यार्थी गण पाठशालाओं में काठ के तख्तों पर लिखा करते थे। बौद्धकाल में बौद्ध भिक्षुकों को जो प्रमाण-पत्र दिये जाते थे वे बाँस की शलाकाओं पर ही लिखे जाते थे जिन पर उन भिक्षुकों के नाम लिखे रहते थे। पश्चिमीय क्षत्रप नहपान के समय के खुदे हुए एक लेख से विदित होता है कि उस समय लोग राजकीय तथा सर्व साधारण की संस्थाओं में ऋण संबंधी संधिपत्र अथवा स्वीकार-पत्र (तमस्सुक) आदि काठ के तख्तों (फलक) पर लिखते थे। कात्यायन ने भी कहा है कि वादियों और प्रतिवादियों के प्रार्थना पत्र (Plaints) तख्तों पर पाण्डु लेख में अर्थात् खल्ली से लिखे जाने चाहिये। दण्डी ने भी दशकुमारचरित्र में (उच्छ्वास २) लिखा है कि अपहर वर्मन ने सोयी हुई राज कुमारी के लिये अपना प्रतिज्ञापत्र एक रंग चढ़ाये हुए तख्ते पर लिखा था। रंग चढ़ाये हुए तख्तों की हस्तलिखित प्रतियाँ जो वर्मा देश में अधिकता से पायी जाती हैं, अभी तक भारत वर्ष में नहीं देखी गयी हैं। जो हो, इससे इतना निष्कर्ष अवश्य निकाला जा सकता है कि भारत-वासी भी अपने साहित्यिक लेख तख्तों पर ही लिखते होंगे। विण्टरनिज़ (Winternitz) के कथनानुसार बोडलीयन के पुस्तकालय में भी एक तख्ते की हस्तलिखित प्रति संग्रहीत है जो वहाँ आसाम से गयी थी। इसी तरह श्रीयुत बा० राजेन्द्र लाल मित्र ने भी लिखा है कि उत्तर पश्चिमीय प्रांतों में धनहीन मनुष्य अपने धार्मिक ग्रंथ तख्तों (कृष्णपटों) पर खल्ली से लिखा करते थे।

(घ) वृक्ष के पत्ते।

दक्षिणी बौद्ध सूत्रों के अनुसार प्राचीन भारत के लोग साधारणतः पत्तों (पन्नों अथवा पर्णों) पर लेखादि लिखा करते थे। यद्यपि इस बात का उल्लेख कहीं भी नहीं है कि ये पत्ते (पर्ण) किस वृक्ष के हुआ करते थे। तथापि यह एक निर्विवाद विषय है,—जैसा कि कुछ दिनों के उपरान्त हम देखते हैं कि, ये पत्ते विशेष कर ताड़ (ताल) के ही हुआ करते थे जो प्राचीन समय में विशेष कर दाक्षिणात्य प्रदेशों में ही अधिकता से पाये जाते थे और अब तो पंजाब में भी पाये हैं। तालपत्रों के व्यवहार के लिये ह्युएन संग का जीवनचरित्र ही एक प्रत्यक्ष प्रमाण थोड़े ही दिनों का (सातवीं शताब्दी—का) है। इस में तनिक भी सन्देह नहीं कि कुछ ही पहले उत्तर पश्चिम भारत में भी ये ही साधारणतया व्यवहृत होते थे। (Horiuti) होरइयूटी की तालपत्र हस्तलिखित प्रति छठीं शताब्दी की है और काशगर की कई प्रतियाँ (Hoernle) होर्नेल के कथनानुसार चौथी शताब्दी की लिखी हुई हैं जो बोवर (Bower) की प्रतियों से भी कुछ पुरानी हैं। बोवर की भोजपत्र की प्रतियाँ और तक्षशिला ताम्रपत्र भी तालपत्र के ही आकार के बने हुए हैं। यह तक्षशिला का ताम्रपत्र ईसा के पूर्व की पहली शताब्दी के पूर्व का नहीं हो सकता। इस

बौद्धों का यह विश्वास था कि धार्मिक रीति से आत्महत्या करने पर मनुष्य दूसरे जन्म में स्वर्ग, धन और यश (अर्थ, धर्म और काम) की प्राप्ति कर सकता था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिद्ध है कि उस समय ताम्रकार इन ताम्र-
को तालपत्र के ही आकार का बनाया करते
और उस समय पञ्जाब में भी इन तालपत्रों
का प्रचार अवश्य रहा होगा। ह्युएन संग के
यात्रावृत्त में संग्रहीत, एक वंशपरम्परा की
किंवदन्ति से इस बात का पता लगता है कि
भगवान बुद्ध के शरीर त्याग करने के बाद ही
बौद्धों की जिस प्रथम महासभा "बौद्धसंघ" का
अधिवेशन हुआ था उस में बौद्ध धर्म के सूत्र ताल-
पत्र ही पर लिखे गये थे। संघभद्र की जो विनय
की हस्तलिखित प्रति मिली है उसके विषय में
यह कहावत प्रसिद्ध है कि वह इसके २०० वर्ष
पहले की है। जिससे यह प्रमाणित है कि
ईसवी सन की ४ थी शताब्दी में बौद्धों का
यह विश्वास था कि तालपत्र आदिकाल से ही
लिखने के काम में व्यवहृत होता आ रहा है।
राजेन्द्रलाल मित्र के कथनानुसार तालपत्र जो
लिखने के काम में लाये जाते थे, वे पहले सुखा
दिये जाते हैं, तदुपरान्त लोग इन्हें पानी में उबाल
देते अथवा भिगो देते हैं, उपरान्त फिर भी सुखा
देते और सूख जाने पर इन्हें पत्थर अथवा शङ्ख के
टुकड़े से रगड़ कर चिकना देते हैं और तब इनके
उपयुक्त आकार के टुकड़े बना लेते हैं। नेपाल
और पश्चिमीय भारत की जो तालपत्र की हस्त-
लिखित प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं उनके देखने से इस
बात का पता चलता है कि वे बनायी हुई हैं,
न कि स्वाभाविक अथवा प्राकृतिक रूप में नहीं
बनी। इनकी लम्बाई एक से तीन फीट तक और
चौड़ाई सवा इञ्च से ४ इंच तक की है। पर
विद्वानों का कथन यह है कि दक्षिण भारत के मनुष्य
तालपत्रों के बनाने में कुछ भी परिश्रम नहीं
करते, यहाँ तक कि इन्हें सजा कर रखते भी नहीं।
Hosiwhi होसीह्वी की हस्तलिखित प्रतियाँ
और अन्यान्य नवीं शताब्दी और बाद की तालपत्र
की हस्त० लि० प्रतियाँ जो नेपाल, बंगाल, राजपूताना,
गुजरात और उत्तरीय दाक्षिणात्य प्रदेशों से प्राप्त
हुई हैं इस बात की साक्षी हैं कि प्राचीन समय से
ही इन तालपत्रों की ह० लि० प्रतियाँ उत्तरीय,
पूर्वीय, मध्य और पश्चिमीय भारत में स्याही से
लिखी जाती थीं कागज के आविर्भाव काल से
ताल पत्रों का प्रचार इन प्रदेशों से जाता रहा, पर
बंगाल में अभी तक लोग "चण्डीपाठ" की कथा
तालपत्रों ही पर लिखते हैं।

द्राविड़ और उड़िया प्रान्तों में लोग लेखादि
कलम से लिखकर काजल अथवा पत्थर के कोयले
की स्याही चढ़ा देते थे। दक्षिण प्रान्तों में सबसे
पुरानी हस्तलिखित प्रति जो प्राप्त हो सकी है
वह बर्नेल के कथनानुसार ई० सन् १४२८ के
समय की है।

* प्रायः सभी तालपत्र की प्रतियों के बीच
में एक छिद्र † (तागा बांधने के लिये) बना
हुआ रहता था, पर काशगढ़ की कई प्रतियों में
यह छिद्र बाँयी ओर हैं और कई प्रतियों में दाहिनी
और बाँयी ओर भी एक एक छिद्र (अर्थात् दो)

---

* हिन्दी की चरणदासानुज कवि बालकृष्ण की
दो पुस्तकों की हस्तलिखित प्रतियाँ (१) स्नेह प्रका-
शिका (२) ध्यानमंजरी ऐसेही तालपत्रों पर लिखी हुई
मिली हैं।

† 'वासवदत्ता' में सुबन्धु ने बिन्दु (शून्य) का
ताराओं की उपमा (शून्य) बिंदुओं से दी है जहाँ
ग्रंथकर्ता ने लिखा है कि जिस समय परमात्मा ने
संसार की असारता पर विचार करते हुए ब्रह्माण्ड
का मूल्य कूता है अर्थात् इसके मूल्य (महत्व) का
अंदाजा लगाया है उस समय वह चंद्र की कलाओं
(किरणों) पर समस्त गगनमंडल में खल्ली से चिन्ह
करता गया है, जो अंधेरे के कारण उस चमड़े की तरह
हो गया है जिस पर स्याही से कुछ लिख दिया गया हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बने हुए हैं, जिनके बीच तागे डालकर बांध दिये जाते हैं।

दक्षिण भारत में चिट्ठियाँ राजकीय और सर्वसाधारण के बहुमूल्य पत्रादि तथा स्थानीय पाठशालाओं के पत्रादि भी हरे तालपत्रों पर लिखे जाते थे और अब भी लिखे जाते हैं। बंगाल की पाठशालाओं में भी अब तक इनका प्रचार है। आदमस् के कथनानुसार टोल के विद्यार्थी बड़े २ वट के पत्तों तथा तालपत्रों पर काजल से लिखा करते हैं।

(ङ) चमड़े आदि।

D' Alwis के कथनानुसार बौद्ध ग्रन्थों में यह वर्णन आया है कि चमड़े भी लिखने के काम में लाये जाते थे पर इसके प्रमाण में कोई उदाहरण नहीं मिलता। "वासवदत्ता" * के कथनानुसार इस बात का पता अवश्य चलता है कि सुबन्धु के समय में चमड़े का व्यवहार प्रचलित रहा होगा। पर यह देखते हुए कि धार्मिक रीति से चमड़ा अपवित्र अथवा "अशुद्ध" होता है, यह बात बड़ी ही आश्चर्यमयी जान पड़ती है। और इस समय तक भारतवर्ष में चमड़े की हस्तलिखित प्रति मिली भी नहीं है। हाँ, चमड़ों के कुछ छोटे २ टुकड़े जिन पर कोई भारतीय लिपि खुदी हुई है पिटर्सबर्ग में संग्रहीत हैं; ऐसा कहा जाता है। लिखने योग्य चमड़े का एक सादा (बिना लिखा हुआ) टुकड़ा जेसलमीर के बृहद् ज्ञानकोष में भी संग्रहीत है। हाथीदाँत के पतले पत्तरों (पत्रों) पर की भी कई हस्त लिखित प्रतियाँ बर्मा में देखी गयी हैं। बृटिश म्युज़ियम में इस की भी दो प्रतियाँ संग्रहीत हैं।

(च) धातु।

जातक के कथनानुसार धनी और धनाढ्य व्यापारियों और महाजनों के पारिवारिक (घरेलू) बहुमूल्य पत्रादि, पद, श्लोक और नीति की कहावतें उस समय में सुवर्णपटों पर अंकित किये जाते थे। बर्नेल का कहना है कि ये स्वर्णपट राजकीय पत्रादि और भूमिदान संबंधी दानपत्रों के लिए व्यवहृत होते थे। तक्षशिला के ध्वंसावशेषों में गांगू नामक स्थान के एक स्तूप में एक स्वर्णपट मिला है, जिसमें शपथ युक्त कोई संधि पत्र खुदा हुआ मालूम होता है। राजकीय पत्रादि की हस्तलिखित प्रतियाँ चाँदी की भी पायी गयी हैं जिनमें एक उल्लेख योग्य भट्टी प्रोलु की है। बृटिश म्यूज़ियम में ऐसे तालपत्रों की हस्तलिखित प्रतियाँ भी संग्रहित हैं जिन पर सोने और चाँदी का पानी चढ़ा हुआ है।

इसमें संदेह नहीं कि ये बहुमूल्य धातु (स्वर्णादि) विशेष अवसरों पर व्यवहृत होते होंगे पर ताम्रपत्रों की अधिकता से पता चलता है, बहुमूल्य पत्रादि के लेखों के लिए जिन्हें अधिक दिनों तक रहना आवश्यक समझा जाता था, ताम्रपत्र, ताम्रशासन अथवा ताम्र अत्यंत अधिकता से व्यवहृत होते थे। ये विशेष भूमिदान संबंधी दानपत्र के ही लेख देख पड़ते हैं। जिनके लेनेवाले इन्हें बड़े ही यत्नपूर्वक रखते हैं; क्योंकि भूमि का दानपत्र उनके लिए एक तरह का उपाधिदान का ही दानपत्र है।

फाहियान ई० स० की चौथी शताब्दी के कथनानुसार बौद्ध संघ के दानपत्र भी ताम्रपत्र ही पर लिखे जाते थे, जिनमें सबसे पुराना बुद्ध के ही समय का है। यद्यपि इसका पूरा प्रमाण नहीं दिया जा सकता तथापि सोहगौरा की प्लेटों से इस बात का पूरा २ प्रमाण मिल जाता है कि मौर्य काल में राजकीय घोषणा तथा स्वीकार पत्रादि ताम्रपत्रों पर ही खोदे जाते थे। हुएन्त्सांग के कथनानुसार महाराज कनिष्क ने अपने धार्मिक ग्रंथों के लेख ताम्रपत्र पर ही खुदवाये थे। कहा जाता है कि सायनाचार्य्य ने भी वेदों का भाष्य ताम्रपत्रों ही पर खुदवाया था,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वस्त नहीं जान पड़ता। इसमें सन्देह कि साहित्यिक ग्रंथ भी ताम्रपत्रों पर लिखे थे क्योंकि ऐसे ताम्रपत्र भी त्रिपट्टी में बहुत मिले हैं और इस समय बृटिश म्यूज़ियम में कई ऐसे संग्रहीत हैं जिनमें कई सोने के भी। सेण्टपिटर्सबर्ग में भी कई ऐसे ताम्रपत्र गढ़ से गये हैं जिनमें नागरी और गुरुमुखी में वस्तुओं की सूची लिखी हुई है।

ताम्रशासनों को सुरक्षित करने के लिये लोग जैसा कि लोहगौरा शासनों के देखने से प्रतीत होता है) इन ताम्रपत्रों को मिट्टी के ढाँचे में रख देते थे इन ढाँचों में कुछ दिन पड़े रहने से, ताम्रपत्रों के लेख, जो लकड़ी की अथवा किसी नोकिली कलम से ढाँचों में रखने के पहले ही लिख दिए जाते थे, एक विशेष रंग का चिन्ह धारण कर लेते थे और मिटते भी न थे। अक्षर भी स्पष्ट पढ़ने योग्य निकल आते थे। और अन्यान्य ताम्रपत्र काटे और हथौड़ों से बनाए जाते होंगे, ऐसा प्रतीत होता है। क्योंकि कई ताम्रपत्रों पर हथौड़ों की चोट के चिन्ह अब तक स्पष्ट रूप से दीख पड़ते हैं। ताम्रपत्र एक आकार के नहीं कुछ मोटे और कुछ पतले भी हैं। कई तो इतने पतले हैं कि बिना किसी परिश्रम के ही मोड़ कर झुका दिये जा सकते हैं और उनका तौल भी थोड़ा ही—कई आउन्स मात्र—होगा। और कई ऐसे भी हैं जो बहुत ही मोटे और तौल में ८, ९ पाउण्ड से भी अधिक के होंगे। उनकी लम्बाई चौड़ाई का निर्णय उस समय के स्थानीय लेखन सामग्रियों के अनुसार ही किया जा सकता है अथवा उस समय की लेखन प्रणाली की लम्बाई चौड़ाई के अनुसार किया जा सकता है, अर्थात् उस समय के लेखक गण अपने लेखों की पंक्तियों को किस रूप में रखते थे। ताम्रकार ताम्रपत्रों को उसी लम्बाई चौड़ाई के अनुरूप बनाते होंगे, जो उस समय की लेखन सामग्री तालपत्र आदि की होती होंगी। यदि उस समय लेख तालपत्र पर लिखे जाते होंगे तो यह निश्चय है कि उस समय के ताम्रपत्र भी लम्बाई में अधिक और चौड़ाई में बहुत न्यून (अर्थात् अधिक लम्बे और कम चौड़े तालपत्र की तरह) बनते होंगे। यदि लेख उस समय भोजपत्र पर लिखे जाते हों तो ये ताम्रपत्र बहुत चौड़े और वर्गाकार के होते होंगे। दक्षिणी भारत के सभी ताम्रपत्र पहले ढंग के हैं। पर विजयनगर के यादवों के ताम्रपत्र पत्थर की हस्तलिखित प्रतियों के आकार के हैं। उत्तरीय भारत के ताम्रपत्र दूसरे ढंग के हैं, पर तक्षशिला के ताम्रपत्र के आकार के बने हुए हैं। वल्लभी राजाओं के समय की ताम्रपत्र की ह० लि० प्रतियां प्रशस्तिओं की लम्बाई चौड़ाई के अनुसार क्रम से घटती बढ़ती गयी हैं। यदि किसी लेख के ताम्रपत्रों की संख्या अधिक होती थी तो वे सब ताम्बे के पतले तारों (ताम्रसूत्र से ही एक छिद्र के सहारे बांध दिये जाते थे। यह छिद्र उन्हीं ताम्रपत्रों में तालपत्रों की तरह बीच में अथवा दाहिनी वा बायीं ओर बना लिया जाता था। दक्षिणी भारत के ताम्रशासन प्रायः एक तार में बँधे हुए पाए जाते हैं। और वह छिद्र प्रायः बायीं ओर ही देख पड़ता है। शासन दो तारों से बंधे हुए हैं। उनमें ये छिद्र पहले पत्र के नीचे की ओर और दूसरे के ऊपर की ओर क्रमानुसार बने हुए हैं।

ये तार ठीक उसी तरह के हैं कि जिस तरह तालपत्रों के तागे तालपत्रों की पत्तियों में लगे रहते हैं। विजयनगर के ताम्र शासनों के अतिरिक्त और सभी ताम्रपत्रों में लेखों की पंक्तियाँ प्रायः लम्बी रेखा में ही समानान्तर रूप से चली गई हैं। लेख प्रायः छेनी से ही खुदे हैं। लेखों को सुरक्षित करने के अभिप्राय से पत्रों के किनारे (छोर) कुछ मोटे और निकलते हुए (चढ़े हुए से) बनाए गए हैं साथ ही साथ पहले पत्र का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊपरी भाग और अंतिम पत्र का निम्न भाग खाली छोड़ दिए गए हैं अर्थात् उन पर लेख नहीं खुदे हैं। ताम्रमुद्रा (मुहरें) जो इन शासनों के साथ लगी हुई हैं संभवतः ऊपर से लगाई गई हैं जिनके संकेत और अक्षरादि रुखानी आदि यंत्रों से खोदे गए हैं। महाकवि बाण के लेखानुसार महाराज हर्ष की राज्यमुद्रा सुवर्ण की थी। कई ताम्र मूर्त्तियों के निम्न भागस्थ आधार पट पर कई शपथ संबंधी लेख पाए गए हैं। दिल्ली के निकट मेहरौली के लोहस्तम्भ पर एक लेख ऐसा ही मिला है।

बृटिश कौतुकालय में एक बौद्ध कालीन हस्तलिखित प्रति (टिन) की संग्रहीत है।

(छ) पत्थर और ईंट आदि।

कई तरह के पत्थर, चट्टान जो काँट छाँट कर चिकने कर लिये जाते थे और स्फटिक आदि के टुकड़े भी प्राचीन समय में बहुत दिनों तक लिखने के काम में व्यवहृत होते थे विशेष कर राजकीय पत्रादि तथा बहुमूल्य संधि पत्रादि ही के लेख इन पर खोदे जाते थे। क्योंकि ये बहुत दिनों तक ठहरनेवाले होते थे और सड़ने गलने से बचे रहते थे। अशोक ने भी "चिरठिनिक" शब्द का प्रयोग किया है। चाहमान, राजा विग्रह (चतुर्थ) और उसके राज्यकवि सोमदेव के नाटक तथा कई साहित्यिक ग्रंथ अजमेर में पत्थरों ही पर खुदे हुए मिले हैं। जैनमतावलंबियों का स्थल पुराण भी कई लगों में मि० फुहरर (Fuhrer) और जी० एच० ओडा द्वारा बिझोली (राजपूताना) में प्राप्त हुआ है। मि० कनिङ्क हम आदि ने कई ईंट भी प्राप्त की हैं जिन पर कुछ अक्षर खुदे हुए हैं। ये ईंटें बर्मा और भारत के कई प्रांतों में मिली हैं। कुछ ही दिन हुए हैं कि उत्तर पश्चिम भारत में मि० हे (Hoey) को ईंटों की हस्तलिखित प्रतियों का एक छोटा संग्रह मिला है जिन पर बौद्धों के कई सूत्र खुदे हुए हैं। उनको ध्यानपूर्वक देखने से प्रतीत होता है कि पहले कच्ची—गीली मट्टी की ईंटों पर लेख लिख दिए गए होंगे और पीछे से ईंटें आग (आवे) में पका दी गई हैं।

(ज) कागज।

मि० बूलर (Buhler) का कहना है कि कागज पहले भारतवर्ष में व्यवहृत नहीं होता था। कागज का व्यवहार पहले पहल भारतवर्ष में मुसलमानों ने ही किया पर श्री राजेन्द्रलाल मित्र के कथनानुसार ग्यारहवीं शताब्दी में धाराधिपति भोज के एक लेखक ने कागज का व्यवहार मालवा में किया है। सब से पुरानी कागज की हस्तलिखित प्रतियाँ जो गुजरात से प्राप्त हुई हैं वे सन् १२२३-२४ की हैं। *

वि० स० १३८४-९४ (ई० स० १३२७-३८) से १३३७ ३८ तक की। कागज की हस्तलिखित प्रतियाँ मि० पीटर्सन को अणहिलवाद पटण में प्राप्त हुई हैं, जो प्रायः तालपत्र के आकार की हैं। एक विचित्र कागज की कुछ हस्तलिखित प्रतियाँ काशगढ़ से भी प्राप्त हुई हैं, जिन पर (Gypsum) एक तरह का रासायनिक पदार्थ लगाया हुआ है। सम्भवतः भारतवर्ष की नहीं हैं, हौर्नल (Hournel) के कथनानुसार ये सब प्रतियाँ सम्भवतः मध्य एशिया की लिखी हुई हैं।

(झ) स्याही।

स्याही—जिसे प्राचीन भारत में लोग मषि अथवा मषी कहा करते थे और जिसे लोग अब मसि अथवा मसी भी लिखते हैं—की व्युत्पत्ति "मष" धातु से है। जिसका अर्थ सम्भवतः "चूर्ण

* हिन्दी की कुछ कागज की प्राचीन हस्तलिखित प्रतियाँ अयोध्या में १२३० और १२५६ की मिली हैं। पर इनकी लंबाई चौड़ाई तालपत्रों के आकार की नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता है। इसका प्रयोग कई प्रकार के कोयले के चूर्ण के लिये भी हुआ करता है। इन्हीं चूर्णों का गोंद और शक्कर (चीनी) अथवा गुड़ के साथ मिला कर लोग स्याही बना लेते थे। मि० बर्नेल के कथनानुसार मषि (स्याही) शब्द का प्रयोग संस्कृत साहित्य में बहुत दिनों के बाद होने लगा होगा। इसका प्रयोग प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों में नहीं है। पर बूलर साहब मि० बर्नेल की भूल बताते हुए कहते हैं कि इसका प्रयोग महाकवि भास (ई० स० ६२०) और सुबन्धु ने भी अपने २ ग्रन्थों में किया है। Benfey (बेनफी), Hinkx (हिंक्स) और Weber (वेबर) आदि पश्चिमीय विद्वानों का कहना है कि इस स्याही शब्द की व्युत्पत्ति ग्रीक भाषा के एक शब्द से हुई है। वे लोग इसकी यह व्युत्पत्ति 'मेला' शब्द के आधार पर ही करते हैं। मि० बूलर का कहना है कि यह 'मेला' शब्द प्राकृत (हिन्दी) के "मैला" (विशेषण) के स्त्रीलिङ्ग का रूप है। अतएव यह शब्द ग्रीक से कभी नहीं लिया गया होगा। 'मेला' शब्द का प्रयोग सुबन्धु ने भी किया है यथा—"मेलन्दायते" (Becomes an inkstand) अर्थात् (दावात का रूप धारण करता है)। कोषों में दावात के लिये मेलाभाण्ड, मेलान्धु, मेलान्धुका, ऋषिमणि और पुराणों में भी मषिपात्र, मषिभाण्डम्, मषिकूपिका आदि शब्द आए हैं। मि० नियरकस और क्यु० कर्टियसने कहा है कि भारतवर्ष में हिन्दू लोग प्राचीन समय में कपड़ों और भोजपत्रों पर लिखा करते थे। इससे यह बात भी प्रमाणित होती है, कम से कम यह निष्कर्ष अवश्य निकलता है कि लोग उस समय (चौथी शताब्दी) स्याही का भी प्रयोग अवश्य करते होंगे। अशोक के कई शिलालेखों में भी छिद्रों के लिये बिन्दुओं का प्रयोग किया गया है। स्याही की हस्तलिखित प्रतियां जो इस समय तक प्राप्त हो सकी हैं उनमें सबसे प्राचीन अन्ध्रराजत्वकाल की हैं जो ईसा के पूर्व की दूसरी शताब्दी के पहले की नहीं हो सकतीं। खोटान से प्राप्त खरोष्ठी धम्मपद की प्रतियाँ तथा कई भोजपत्र और कई प्रस्तर की खरोष्ठी की प्रतियाँ (जो आफगानिस्थान से प्राप्त हुई हैं) स्याही की ही हैं, उनका लिपिकाल ईसा के पूर्व की पहली शताब्दी का है। ब्राह्माक्षरों में लिखी हुई भोजपत्र और तालपत्र की ह० लि० प्रतियाँ कुछ बाद की हैं। अजन्त की गुफाओं में चित्रित और रंग चढ़ाये हुए लेख वर्त्तमान समय में भी देखे जाते हैं। रंगीन स्याही का प्रयोग विशेषकर जैनियों ने ही अत्यन्त अधिकता से किया है। यद्यपि प्राचीन हिन्दू धर्म्म-ग्रन्थों में भी इसका प्रयोग हुआ है। खुल्ली लाल रंग के सीसे तथा हिङ्गुल आदि पदार्थों का प्रयोग स्याही के रूप में बहुत पहले से होता आ रहा है।

(अ) कलम पेन्सिल आदि।

लेखन यंत्र का मुख्य भारतीय नाम 'लेखनी' ही है। जिसमें स्टाइलस, पेंसिल, ब्रश, रीड (सरकंडा, किल्ली आदि) और लकड़ी की कलमों का भी समावेश हो जाता है। ललितविस्तार में एक शब्द "वर्णक" भी आया है। वर्णक सम्भवतः उस को कलम कहते हैं, जिससे छोटे २ विद्यार्थी तख्तों पर लिखने का अभ्यास करते हैं। 'लेखनी' के लिये कोषों में "वर्णिका" शब्द भी आया है। 'वर्णवर्तिका' (दशकुमारचरित) सम्भवतः रंगीन पेंसिल अथवा ब्रश को कहते हैं। 'तूलिका' का प्रयोग ड्राइंग पेंसिल के लिये अथवा चित्रांकन के काम में होता है, 'तूलि' अथवा 'तूलिका' ब्रश (कुची) को कहते हैं और अब इसका प्रयोग सलाई और 'स्टाइलस' (Stilus) के अर्थ में भी होता है।

लकड़ी अथवा किल्ली और सरकंडे की कलम को विशेष कर 'कलम' ही कहते हैं। जिसे पश्चिमीय (Calamus) "कैलामस" कहते हैं। इसका संस्कृत नाम ईषिका अथवा इषीका है। किल्ली,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरकंडा बाँस और लकड़ी की कलम वर्तमान समय में भारत के सभी प्रांतों में व्यवहृत होती है और सम्भवतः जितनी तालपत्र अथवा भोजपत्र की हस्तलिखित प्रतियाँ देखी जाती हैं वे सब इन्हीं कलमों से लिखी गयी हैं। स्टाइलस का संस्कृत रूपान्तर "शलाका" भी है। इस शब्द का प्रयोग विशेष कर दक्षिण भारत में किया जाता है, महाराष्ट्र में इसे सलई तथा अन्यान्य प्रान्तों में सलाई कहते हैं।

बर्लिन के कौतुकालय (Museum) में ऐसी भी दो हस्तलिखित प्रतियाँ हैं, जिन्हें वर्तमान समय में (Ruler) रूलर अथवा कार्डबोर्ड (लकड़ी अथवा काठ का एक टुकड़ा जिसकी दोनों ओर समान दूरी पर तागे बंधे रहते हैं) कहते हैं। ये दो प्रतियाँ कलकत्ता और मद्रास से गयी हैं। कलकत्ते की प्रति पर "निवेदन पत्र" और मद्रास की प्रति पर "किडुगु" शब्द लिखे हुए हैं।

श्री देवनारायण महता।
लखनऊ।

आचार्य्य जगदीशचंद्र वसु का व्याख्यान।

गत नवंबर मास में प्रसिद्ध आचार्य्य जगदीशचंद्र वसु ने अपने जीवन का कुल उपार्जित द्रव्य साढ़े चार लाख रुपए लगा कर कलकत्ते में जो विज्ञान कलाभवन निर्म्माण करवाया है उसका गृह-प्रवेशोत्सव था। इस विज्ञानशाला को अपने देशवासियों के प्रति अर्पण करते हुए, इन्होंने जो सार पूर्ण व्याख्यान दिया था, वह हिंदी-संसार में संपूर्ण परिचित होने योग्य है। इसलिए नीचे उसका सारांश दिया जाता है।

"आज मैं यह एक विज्ञानशाला-नहीं-पर मंदिर आप लोगों की सेवा में अर्पण करता हूँ। बहिरंग साधनों की शक्ति केवल उसी सत्य का निर्णय कर सकती है जो इंद्रिय द्वारा अथवा कला कौशल से बनाए गए यंत्रों द्वारा जानने योग्य हैं। जिस मूक शक्ति की ध्वनि नहीं सुनी गई थी, वह भी कंपित स्वर से अब अपनी वेदना जनाने लगी है।

मानवी दृष्टि जब जवाब दे देती है तब भी इस अदृश्य का पीछा नहीं छोड़ते। जो कुछ कि हम जान सके हैं अज्ञात महानता के सामने वह कुछ भी नहीं है। इन्हीं अपूर्ण इंद्रियों की सहायता से मनुष्य ने एक बेड़ा बनाया है जिस पर चढ़ कर वह उस समुद्ररूपी अज्ञात तत्व की खोज में दुस्साहसिक यात्राएं किया करता है, पर तो भी चाहे जड़ विज्ञान कैसा ही सूक्ष्म बोधक यंत्र क्यों न बना डाले, बहुत से तत्व ऐसे हैं जो सदा हमारी समझ के परे ही रहेंगे। इसके लिए हमें अविचलित विश्वास की आवश्यकता है और इस विश्वास की परीक्षा कुछ दस पांच वर्षों में नहीं होगी, सारा जीवन इसके लिये अर्पण कर देना पड़ेगा। इसी सत्य की प्रतिष्ठा के स्मारक में यह मंदिर निर्म्माण किया गया है, जिसके लिए विश्वास की आवश्यकता बतलाई गई है। विशेष होते हुए भी जिस सर्व्वतंत्र सत्य और विश्वास की प्रतिष्ठा के अर्थ इस विद्यालय की स्थापना है, उस सत्य का उद्देश्य यह है कि जब कोई किसी महान उद्देश्य के लिए अपने को सर्व्वतोभावेन अर्पण कर देता है तो रुद्ध द्वार उद्घटित हो जाते हैं और जो असंभव बोध होता था वह उसके लिए संभव हो जाता है।

तत्वान्वेषण की क्रिया में लगा हुआ मैं यों ही अनजाने जड़ और प्राणि-विज्ञान की सीमा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो जा पड़ा और इन दोनों के बीच वाले भेद की सीमा रेखा को लोप होते तथा जड़ और चैतन्य के सादृश्य के लक्षणों को सहसा प्रगट होते देख कर मेरे आश्चर्य्य का ठिकाना न रहा। जड़ पदार्थ भी क्रियाशील पाए गए। अगणित बिजलियों की क्रिया के प्रभाव से इनमें भी गति पाई गई। एक विश्वव्यापी पुनर्गति ने धातु, उद्भिद् और प्राणी सबों को एक ही नियमालन पर ला बिठाया।

मेरी खोज के परिणाम से पुराने विचार के कुछ विज्ञानियों का 'मिज़ाज बिगड़ गया' और प्रबल विरोध उठ खड़ा हुआ। गत बारह वर्षों में मुझे जिस अवस्था के बीच रह कर काम करना पड़ा है उससे बढ़ कर महा नैराश्यजनक अवस्था हो ही नहीं सकती, पर बहुत दिनों की निराश्य की यह काली घटा सहसा दूर होगई।

गवर्नमेंट आफ इंडिया की ओर से सन् १९१४ में मेरा जो वैज्ञानिक डेपूटेशन निकला उसके कारण संसार की प्रसिद्ध विज्ञान संस्थाओं के सामने मुझे अपने आविष्कार के परिणाम को प्रकट करने का अवसर हाथ आया और इसके कारण मेरे सिद्धान्त परिणाम सहित स्वीकृत हुए और आधुनिक विज्ञान कला के मंदिर में भारत की यह पूजा स्वीकृत हुई। यहाँ के व्याख्यान निरे इधर उधर से लिए हुए ज्ञान की पुनरावृत्ति मात्र न होंगे। वरन पंद्रह सौ जन मंडली के सामने बिलकुल नए उद्भावित विचार पहले पहल सर्व साधारण के सामने प्रकट और प्रकाशित किए जायँगे।

इस प्रकार से ज्ञान के प्रचार में औद्योगिक कला लेकर हम एक विशाल विद्यापीठ की किर्ती महान उद्देश्य को सिद्ध कर सकेंगे।

इस विज्ञान मंदिर के आविष्कार नियमित रूप से मुद्रित हो कर संसार के सामने अपनी भारतीय पुष्पांजली की भेट रखेंगे।

यहां के आविष्कार सर्व साधारण की संपत्ति होगी। उसके लिए "सर्वाधिकार संरक्षित" का पट्टा नहीं लिया जायगा। हमारी जातीय सभ्यता का बड़प्पन इसी में है कि किसी ज्ञान के गौरव को किसी विशेष मनुष्य के स्वार्थ लाभ की सेवा में लगा कर उसकी महिमा नीची न की जाय।

नियमित शिक्षक मंडल के सिवा यहां कुछ ऐसे चुने हुए विद्यार्थी भी होंगे, जिन्होंने अपने कार्य्य से इस विषय की ओर विशेष रुचि प्रगट की होगी और जो आविष्कार के कार्य्य के लिए अपना जीवन अर्पण कर सकेंगे। इन्हें विशेष रूप से अलग अलग शिक्षित करना पड़ेगा और अवश्य ही इनकी संख्या भी परिमित होगी क्योंकि अभिप्राय गुण की उत्कर्षता से है, संख्या की उत्कर्षता से नहीं।

इस प्रकार दृष्टि के क्षेत्र को बढ़ाते हुए हम केवल प्राचीन समय की कीर्ती ही को स्थिर रख कर संतुष्ट नहीं होंगे वरन् और भी श्रेष्ठतर उपायों से संसार की सेवा कर सकेंगे। जीवन के सार्वजनिक तरंगों की 'अनुभूति में' श्रेष्ठता की सार्वजनिक प्रीति में सत्यम् शिवम् सुंदरम् के ज्ञान में, शिक्षा और जीवन कला के उद्यान में शिल्प कला को भी बिसारा नहीं गया है। क्योंकि नीव से लेकर गुंबज तक और भूमि से छत तक शिल्पियों ने हमारा साथ दिया है। मंडप के सामने विज्ञान शाला का उद्यान है और वही प्राणि विज्ञान के अध्ययन की वास्तविक शाला है। यहां नक्षत्र पुंज शोभित गगनमंडल के स्वाभाविक वितान के नीचे अपने प्राकृतिक घिराव—सूर्य्य तथा चंद्रालोक की शीतल रात्रि के मलय मारुत के बीच वृक्ष, गुल्म लता शोभायमान हैं। इनके और अन्य घिराव भी हैं जहां वर्ण (रंग) संबंधी क्रियाओं के बीच पड़ कर इन्हें भिन्न भिन्न प्रकार के आलोक, अदृश्य ज्योतिरश्मि तथा विद्युत् तरंग, के प्रभाव इन पर डाले जांयगे और ये विटप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रेणियां अपने अनुभव की कहानी अपने हाथ लिखेंगी।

इस श्रेष्ठ वेधशाला में उद्यान वृक्षों के बीच बैठ कर विद्यार्थी इस प्राणि विज्ञान की क्रिया का निरीक्षण करेंगे। सब ओर से तटस्थ हो कर वे प्रकृति के साथ एकतान होना सीखेंगे। गुप्त तत्व प्रगट होंगे और धीरे धीरे उन्हें ज्ञान हो जायगा कि किस प्रकार से विश्वव्यापी जीवन समुद्र की दिखने वाली भिन्नता के भीतर वास्तविक एकयता छिपी हुई है।

अनैक्यता की जगह उन्हें एकता का अनुभव होगा। बहुत अधिक जड़वाद की ओर झुक जाने के कारण पाश्चात्य विज्ञान इस मुख्य सिद्धान्त की ओर से ध्यान हटा लेने के संकट के बीच जा पड़ा है कि सत्य केवल एक ही हो सकता है और सारे ज्ञान विज्ञान इसीकी शाखा प्रशाखा हैं। प्रकृति की घटनावली कैसी अस्तव्यस्त दिखाई देती है। क्या यह प्रकृति एक ऐसा विश्व है जिस में मनुष्य का मन किसी दिन नियम और समता का अनुभव करने लगेगा? जो हो भारतीय मन का तो स्वाभाविक गठन ही एकत्व के अनुभव करने और भिन्न भिन्न प्रकार की क्रियाशील सृष्टि में एक नियमबद्ध ब्रह्मांड की लीला दृष्टिगोचर करने के उपयुक्त ही है।

इसी विचार प्रणाली के कारण अज्ञात रूप से मैं भिन्न भिन्न विज्ञानों की सीमा के बीच जा पड़ा और इसी के कारण इसके साथ साथ मेरे कार्य्य का ढंग सिद्धान्त और क्रिया के बीच सदा बदलता हुआ अज्ञात रूप से मुझे जड़ जगत की खोज से प्राणि जगत और उसकी अगणित क्रिया वृत्ती, गति और अनुभूति की ओर ले आया। आज पचीस वर्षों से डेढ़ सौ भिन्न भिन्न प्रकार की खोज की क्रिया को करते करते अब मुझे सब में एक ही स्वाभाविक समता दिखने लगी है जड़ और चैतन्य विज्ञान की रेखा परस्पर निकट होते होते मिल जाती है। यहां ऐसे ही लोगों का जमघट भी होगा जो भिन्नता के बीच एकता की खोज करेंगे। यही एक ऐसा स्थान होगा जहाँ भारतवर्ष की प्रतिभा कलिका प्रस्फुटित होगी। जड़ अणुओं का कंपन, प्राण का स्पंदन, किसी पदार्थ का वृद्धि सूचक कंप, ज्ञान तंतुओं की गति, जिसके द्वारा इन्द्रियों का उपभोग होता है यह सब पृथक पृथक् होते हुए भी इनमें अद्भुत रूप से ऐक्यता सजीव रूप से मूर्तिमान है। यह भी एक विचित्र घटना है कि ज्ञानतंतु संपन्न द्रव्य केवल गति ही करके शान्त नहीं हो जाते वरन् भिन्न प्रकार के प्राण स्पंदन, इन्द्रिय बोध और प्रणयाकर्षण द्वारा एक से दूसरे रूप को धारण करते हुए भी दर्पण में प्रतिबिंब की तरह स्पष्ट रीति से अपने विचार और मनोविकार की क्रिया को दिखाते हैं। इनमें अधिक वास्तविक द्रव्य कौन है जड़, पिंड या उसका प्रतिबिंब जो इससे पृथक् रहता है इनमें से कौन अजर और कौन अमर है सब प्रश्न अभी अभिमांसित ही हैं।

लोकान्तर यात्रा।

मृत्यु के बाद प्राणी कहां जाता है इसके बाद क्या है? सो किसी ने भी लौट कर नहीं कहा। शायद यह असंभव है। पर आज के पाश्चात्य वैज्ञानिकों के दिमाग में कभी कभी यह भी धुन समा जाती है कि "अच्छा मर कर फिर नहीं आ सकते तो क्या यह संभव हो सकता कि इस शरीर से ही हम लोकान्तर की यात्रा कर सकें?" यह समस्या भी असंभव ही मालूम पड़ती है, क्योंकि अपने इस भूलोक के बंधन ने हमें बांधा हुआ है। यह वैराग्य वैरागियों का बंधन नहीं है। अदृश्य होने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह बंधन है स्थूल, क्योंकि यह बंधन का खूँटा हमारी यह पृथ्वी प्रत्यक्ष है। चाहे बंधन की लंबाई की कुछ नाप जोख न हो पर इस खूँटे का वजन सुन लीजिए। वह है ७००००००००००००० ००००००० टन। कहिए इस संख्या का क्या अर्थ है। "दस हजार शंख।" मानवी दिमाग की दौड़ कितनी है, देख लीजिए।

अब पृथ्वी रूपी इस खूँटे की करतूत सुन लीजिए। इसी ने हमें अपनी विद्युत् शक्ति के आकर्षण से बांध रक्खा है मानो आप स्वयम् एक विद्युत् वाहिनी देवी बनी हुई अपनी आकर्षणी शक्ति से हमें बांधे हुए है, जिस बंधन को हम परिचित भाषा में कहते हैं "हमारी तौल या हमारा बोझ" और "हम और हमारे बोझ" के कारण हम पृथ्वी के इस अदृश्य बंधन से जकड़े हुए विवश पड़े हैं। हमने अपने भरसक इस बंधन की जंजीर को तोड़ने की बहुतेरी चेष्टाएं कीं और नाना प्रकार के गुब्बारे, आकाशयान, हवाई जहाज बना बना मीलों ऊपर इस विद्युत् वाहिनी देवी के बंधन से छूटने के लिए उड़ा किए। जहां तक बस चला हमने कसर नहीं रक्खी, जहां तक सांस लेने का अवकाश मिला उड़ते ही गए पर जब दम घुटने की पारी आई तो विवश हो उसी जंजीर से खिंचे हुए फिर जहां के तहां आ पड़े। उस जंजीर ने हमारा साथ न छोड़ा बराबर खुलती चली गई और जब सीमा खुल चुकी तो फिर खींच कर हमें जहां तहां ला पटका। ठीक जैसे एक पतंग गुड्डी की तरह जब परेते का सारा सूत समाप्त हो गया तो फिर खींच कर लपेट लपाट जहां का तहां ला धरा। यह जंजीर या सूत वही पृथ्वी की आकर्षणी शक्ति है जो हमारा पीछा छोड़ती नहीं। यद्यपि इस बीसवीं शताब्दि के विज्ञान ने अपने भर सक हाथ पैर मारने में त्रुटि नहीं की पर तौ भी मनुष्यों का लौकिक बंधन जरा भी ढीला नहीं हो सका। चाहे आप अपने पृथ्वी के आंगन से भाग कर मीलों ऊपर उड़ जाइये, पर अंत को विवश हो आप को यहां लौट कर आना ही पड़ेगा और कभी कभी तो बड़ी शीघ्रता से हाथ पैर तुड़वा कर या हड्डीयां चूर चूर करवा कर लौट आना पड़ेगा।

पर क्या ऐसा कोई उपाय नहीं कि हम स-शरीर जब चाहें इस भूलोक को छोड़ कर चले जांय। शायद ऐसा भी कोई समय आवे कि इस-का कोई उपाय निकल आवे। एक पाश्चात्य विद्वान ने इसे इस प्रकार से संभव होना बतलाया है। वे कहते हैं कि इस काम के लिए सबसे अधिक आवश्यक 'तीव्र गति' है। गति भी कैसी तीव्र—ऐसी वैसी नहीं—वह भी ऐसी तीव्र होनी चाहिए कि हमारे आधुनिक युद्ध शेल भी उसके आगे हार मान जांय।

आधुनिक शेलों की गति है एक सेकेंड में दो या तीन हजार फीट—पर थोड़ी दूर जाकर भूलोक की वही अदृश्य आकर्षण शक्ति उन्हें फिर जहां का तहां ला पटकती है। अब केवल एक यही उपाय है और वह यह है कि यदि यह युद्ध बाण सेकेंड पीछे छब्बीस हजार फीट की तेजी से छोड़े जा सकें तो फिर वे इस पृथ्वी पर लौट कर कभी नहीं आवेंगे और इस भूमंडलरूपी ग्रह का सदा चक्कर लगाते रहेंगे। जैसा चंद्रमा चक्कर लगा रहा है, जो किसी समय में शायद इतनी ही तेजी से छटक कर पृथ्वी से अलग हो गया था। अस्तु इस प्रकार की तीव्र गति वाले शेल या बाण को यदि और किसी प्रकार की बाधा प्राप्त न हुई तो फिर वह लौट कर कभी यहां न आवेगा। इस पृथ्वी की आकर्षणी शक्ति उस तीव्र गति के समान होने के कारण उसे खींच कर अपने पर फिर गिरा नहीं सकेगी। अब यदि किसी उपाय से कोई मनुष्य इस शेल के भीतर बैठ जाय तो वह मजे में सशरीर इस भूलोक से भाग जा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकेगा। अच्छा, शेल के भीतर बैठना एक प्रकार से असंभव है। यद्यपि हमारे भरत जी हनुमान जी को बाण पर चढ़ाकर तत्क्षण लंका पहुँचाने को तय्यार थे पर हवाई जहाज द्वारा तो मनुष्य जा सकता है केवल ऐसा हवाई जहाज बनना चाहिए जो सेंकेड में सैंतीस हजार फीट या लगभग सात मील की गति से उड़ सके। तो ऐसा आकाशयान इस भूमंडल को छोड़कर फिर यहां नहीं आने का और इसी हवाई जहाज पर बैठ कर हम मजे में सशरीर इस लोक से प्रयाण कर सकेंगे, केवल सेंकेड पीछे सात मील की तेजी से उड़ने वाले हवाई जहाज की आवश्यकता है, सो भी शायद कभी निकल आवे।

ऐसे हवाई जहाज पर बैठा हुआ मनुष्य फिर सहज ही पृथ्वी के उस बंधनरूपी जंजीर को तोड़ सकेगा, पर एक बड़ी भारी कठिनाई और है। वह यह है कि ऐसे यंत्र पर बैठ कर यहां से जाने के पीछे फिर यहां लौट कर आना असंभव होगा। एकबार इस पृथ्वी माता के गोद के प्रेमाकर्षण से पृथक् हुए पीछे फिर ठिकाना नहीं लगने का, या तो आकाश में घूमते रहो या खिंच कर महाशीतल चंद्रमा या महा प्रचंड अग्नि शर्म्मा सूर्य्य भगवान के पृष्ठ-तल पर जाकर प्राण गँवाओ। थोड़ी ही देर में परलोक विहार का चसका मिट जायगा और फिर उस पृथ्वी माता की गोद में अपने परिचित घिराव के बीच आने को जी छटपटाने लगेगा। पर जो कुछ हो, धन्य है मनुष्य के दिमाग की दौड़ को!

अदालतों में नागरी।

(लेखक—बा० गौरीशंकर प्रसाद बी० ए०, एल-एल बी०)

कुछ दिन हुए व्यवस्थापक सभा के माननीय लाला सुखवीर सिंह जी के प्रश्न हर वही बँधा बँधाया उत्तर सरकार की ओर से दिया गया था कि अदालतों से सम्बन्ध दोनों ही अक्षरों में लिखे जाते हैं। अनुभव तो यह है कि सम्मन तथा नोटिसों के फ़ार्म जो दोनों लिपियों में छपा कर काम में लाने के लिये सरकारी छापाखाने से भेजे जाते हैं उनमें उर्दू के फार्मों ही की खानापूरी की जाती है और नागरी का पन्ना चाहे छठवीं उँगली की तरह व्यर्थ को उसके साथ लटका करता है चाहे उसे फाड़ कर रद्दी काग़ज़ों की तरह उसे खर्च किया जाता है, अथवा उसको उर्दू में भर कर अलग काम में लाया जाता है। किंतु यदि उर्दू का एक पर्त सबूत में उपस्थित कीजिए तो निष्पक्ष सनेत्र कर्मचारी यही उत्तर देंगे कि हिन्दी का पन्ना तुमने फाड़ लिया है और झूठा दोष सत्यवादी कार्यकर्त्ताओं पर लगाते हो। किंतु उर्दू का भरा हुआ हिंदीवाला फ़ार्म यदि उनके सम्मुख उपस्थित होगा तो अवश्य ही उनको जिह्वा को रुकना पड़ेगा। इसी ध्यान से हमने थोड़े से ऐसे समन जो हिंदी के फार्म उर्दू में भरे थे बिना किसी विशेष प्रयत्न के जो मिल गये जिला जज काशी की सेवा में स्थानीय नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा भेजे गए। पत्र नागरी में और ऊपर का लिफाफा नागरी में होने से उनको बड़े न्यायशील मुंसरिम ने उसे लेने से इनकार किया। तब रजिस्टरी डाक द्वारा भेजा गया और उन्हें विवश होकर लेना पड़ा। उस पर जज महोदय का नीचे लिखा उत्तर उर्दू में आया है:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूबकार बहजलाल डबलू० एफ० कर्टन साहब
गाज़ीपुर जिला बनारस तारीख़ २६ जनवरी सन्
१९१८ ई०।

चिट्ठियात फार्म छः दफ़तर नागरी प्रचारिणी
सभा बनारस से ई जानिब को वाज़ः हुआ कि
अदालत हाय मातहत से जो समन और नोटिस
उर्दू फार्म पर जारी होते हैं उनकी खानापूरी
उर्दू में की जाती है यह बिल्कुल बे फायदा है।
हिंदी के फ़ार्म की खानापूरी हिंदी में होना
चाहिए और उर्दू के फ़ार्म की खानापूरी उर्दू में
होनी चाहिए। हुक्म हुआ कि—

एक एक नक़ल इस रूबकार की जुम्ला
अदालत हाय मातहत में भेजकर लिखा जावे
अगर इसमें फरोगुज़श्त की जावेगी तो अहलकार
सरकार से लख्त वाज़पुर्स की जावेगी—

एक नकल इस रूबकार की इत्तिलाअन वो
बावन् दफ़तर नागरी प्रचारिणी सभा में भेजी
जावे और असल किताब हिदायती में रखी जावे
अहलकारान अदालत हाज़ा भी मुताबिक इस
हुक्म के कारबन्द रहें। फ़क़त

दस्तखत
शाहबुद्दीन अहमद खां
मुन्सरिम

Sd. W. F. Kerton
District Judge.

ऐसी कुव्यवस्था के कारणों में से नीचे लिखे
कुछ कारण हैं जिनके सुधार की बड़ी आव-
श्यकता है। माननीय बर्न महोदय ने अभी गत
माननीय श्रीयुत चिन्तामणि वाले प्रस्ताव पर
मुंसिफों तथा सब-जजों को नागरी का जानना
अनिवार्य किया जाय विरोध करते हुए अंत
कहा था कि समन और अन्य सूचनाएँ अवश्य
नागरी तथा उर्दू दोनों लिपियों में निकला
करें और उनके इस प्रकार से निकलने में जनता
को सुविधा होगी और इसी अभिप्राय से यह
नियम भी बनाया। किन्तु उस नियम का पालन
होना तो दूर रहा उसकी अवहेलना की जाती है।

ऊपर लिखे कारण ये हैं :—

(क) अदालतों के लेखक नागरी और हिंदी नहीं जानते न उसमें लिखने का पूरा उन्हें अभ्यास होता है।

(ख) सन् १९०१ ईस्वी की आज्ञा के अनुसार लेखकों की नियुक्ति के समय अच्छी तरह जाँचने का भार जिन अधिकारियों पर यह देखने का है कि प्रार्थी दोनों ही लिपियों में पूर्ण रीति से अभ्यस्त हैं वे अधिकारी प्रायः नागरी के विरोधी अथवा उदासीन भाववाले होते हैं, जिसका परिणाम यह होता है कि यदि वह अधिकारी जाँचता भी है तो उर्दू के सम्बन्ध में तो भली परीक्षा करता है और नागरी के लिए केवल वर्णमाला को उलटा पुलटा लिखने की योग्यता अलम् होती है।

(ग) मुंसरिम लोग जो कार्य्यालय के मुख्य निरीक्षक होते हैं प्रायः हिंदी नागरी के विरोधी और कहीं कहीं उदासीन भाववाले होते हैं, जिस से उनके नीचे के लेखकों में भी वैसे ही भाव उत्पन्न होते हैं।

(घ) कचहरियों के लेखक काम में चूर रहते हैं इस लिये दोनों फार्म न भर कर केवल एक ही भरते और चलता करते हैं इस इकहरे कार्य्य के लिये उर्दू ही को काम में लाते हैं जिसमें वे अभ्यस्त होते हैं या अधिक अभ्यस्त होते हैं।

(ङ) यदि हाकिम लोग अपने कार्य्यालय का निरीक्षण करते भी हैं तो इस बात की जाँच वे नहीं करते कि सन् १९०१ ई० वाली आज्ञा का प्रतिपालन कहां तक होता है। हाकिम भी प्रायः नागरी के विरोधी अथवा उसकी ओर से उदासीन भाव रखनेवाले होते हैं। इनके अलावे और भी कारण हैं जो जांचने पर मालूम हो सकते हैं। इस समय कागज, रोशनाई की महंगी के अवसर पर यदि फार्म दो पन्नों के न छपकर एक ही पन्ने पर एक ही ओर दोनों छपें तो लिखने वालों की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाँगर चोरी न हो सकेगी और फाड़ कर फेंकने का अवसर न रहेगा। उसके एक भाग को बिना भरा छोड़ने का भी साहस न कर सकेंगे और जो फार्म हाकिमों के दफतर जाँचने तथा उस संबंध में रिपोर्ट लिखने के जो फार्म हाईकोर्ट ने बनाए हैं उनमें इस बात की जांच की और रिपोर्ट का खाना रक्खा जाय कि उनके दफतर वाले हिंदी कहां तक जानते हैं और समन तथा सूचनाएँ नागरी में भरी हुई मिसिलों में पाई गई या नहीं और नागरी के फार्म क्या होते हैं।

द्वितीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन पीटर मेरीत्सबर्ग।*

स्वागत समिति के सभापति श्रीयुत डी० के० सोनी का व्याख्यान।

मेरे परम प्रिय देशबांधवो तथा मातृभाषा के सेवक प्रतिनिधियो! आज आपलोग जो अपना काम-धंधा छोड़ और कष्ट उठा कर सुदूर नगरों से इस द्वितीय हिंदी साहित्य सम्मेलन में सम्मिलित हो कर इसकी रौनक को बढ़ाने और देवनागरी लिपि के प्रचार के उपायों पर विचार करने के लिये एकत्र हुए हैं एतदर्थ मैं आपलोगों का अत्यंत ही कृतज्ञ हुआ हूँ और खासकर मेरीत्सबर्ग वेद-धर्म सभा के मंत्री श्रीयुत प्रभु मकनजी तथा उसके समस्त सदस्यों एवं अन्य भाइयों को भी अनेकानेक धन्यवाद हैं जिन्होंने इस सम्मेलन की सफलता में एक दूसरे का हांथ बँटाया है। मैं अपने आपको भी बड़ा सौभाग्यवान इस लिये समझता हूँ कि मेरीत्सबर्ग में हिंदी भाषा के जानने वालों की संख्या अधिक होने पर भी मेरे समान तुच्छ व्यक्ति को—जिसकी मातृभाषा भी गुजराती है—इस सम्मेलन की स्वागत समिति का अध्यक्ष चुना है जिसका मुझे तनिक भी ख्याल न था। इस महान कार्य्य के संपादन के लिये मुझे जो भार दिया गया है वह बिलकुल मेरी योग्यता तथा बुद्धि से बाहर है। यह मेरीत्सबर्ग नगर नेटाल प्रांत की राजधानी है और यहाँ पर हिंदी के जाननेवाले कतिपय महानुभाव विद्यमान हैं, ऐसी स्थिति में यह सर्वथा उचित था कि इनमें से कोई आपका स्वागत करने के लिये खड़ा होता। मैं आप लोगों को निश्चय दिलाता हूँ कि जो शब्द मेरे मुख से इस समय निकल रहे हैं, वे अक्षरशः सत्य हैं। मुझ में यह शक्ति नहीं है कि मैं अपने आंतरिक भावों को स्पष्ट शब्दों में प्रकट कर सकूँ। बहुधा देखने में आता है कि ऐसे समय पर बड़े २ विद्वानों के मुँह में ताला लग जाता है फिर मेरी क्या विशात है। ऐसी हालत में यदि मुझसे आप लोगों की शान में कोई अनुचित शब्द निकल जाय तो आप लोग मेरी अयोग्यता पर ध्यान देकर त्रुटियों को क्षमा करें।

प्रिय बंधुओ! जिस मेरीत्सबर्ग नगर में आप महानुभावों ने पदार्पण किया है वह ऐतिहासिक घटनाओं से घनिष्ट संबंध रखता है। इस नगर का इतिहास बड़ा कौतूहलजनक है। पहिले समय में यहां पर काफर लोग बसते थे और यह स्थान बुशमेन रेंडके नाम से पुकारा जाता था। वह स्थान डिंगाना नामक काफर सरदारके अधिकार में था किंतु सन १८३८ में पीटर रटीफ व गट मेरीत्स नाम के दो डच सरदार ७० जवान तथा ३७ नौकरों के साथ डिंगाना के पास पहुंचे और उससे अनुरोध किया गया कि यह प्रदेश डचोंके अधीन कर दिया जाय। डिंगान बड़ा चतुर था और डचों के अत्याचार तथा चालाकी से भी परिचित था अतएव उस समय तो उसने डचों के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया और साथ ही इकरारनामे पर हस्ताक्षर भी बना दिए, किंतु उसमें अपना मतलब गांठने के लिये डचों को आदर के साथ

* सुदूर अफ्रिका का यह एक स्थान है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तनिक भी
संपादन के
वह विलकुल
है। यह मेरी
धानी है और
य महानुभाव
र्वथा उचित
गत करने के
ों को निश्चय
से इस समय
हैं। मुझ
रक भावों को
ुधा देखने
२ विद्वानों
क्या विशेष
लोगों की शान
तो आप लोग
को क्षमा करें
नगर में आ
ऐतिहासि
है। इस नगर
पहिले सब
र यह स्थान
। वह स्थान
धिकार में
ब गट मेरीत्स
था ३७ नौकर
और उसके
र्चों के अधीन
था और वहां
भी परिचित
ों के प्रस्ताव
इकरारनामे
उसमें अपने
ादर के साथ

लोग करने के लिये निमंत्रित किया। डच लोग
सहर्ष पूर्वक निमंत्रण स्वीकार कर भोजन के लिये
बैठे तथा मदिरा के प्याले ढलने लगे। इसी समय
डिंगाना ने अच्छा अवसर हाथ आया हुआ देख
कर अपने सिपाहियों को इशारा किया कि तमाम
डचों को कतल कर डालो। आज्ञा पाते ही काफिर
सिपाही दौड़े और उन्होंने समस्त डचों को
परलोक पहुंचा दिया। इस घटना से डचों में बड़ी
खलबली मच गई, और वे लोग दलबल सहित
डिंगाना को दण्ड देने के लिये चढ़ आए। बहुत
लड़ाई के पश्चात् डचोंने डिंगाना को अपने
आधीन कर लिया। सन १८३९ में पीटर रटीफ
ने गट मेरीत्सके यादगार में यह नगर पीटर
मेरीत्सबर्ग के नाम से आबाद किया गया और
डच चर्चकी बुनियाद डाली गयी जो कि आजतक
मौजूद है। अंततः यह नगर अंगरेजों के हाथ
आया तथा नेटालकी राजधानी बना। कतिपय
लोग इसे 'स्लीपी होलो' के नाम से भी स्मरण
करते हैं।

महाशयों, अब मैं आप लोगों का अमूल्य
समय नष्ट न करके हिंदी भाषा की ओर ध्यान
लाना चाहता हूं। सन १८६० से मजदूरी पेशा
भारतीय स्वदेश शर्तबंधी का पट्टा लिखा कर नेटाल
आने लगे। शर्तबंधी की अवधि समाप्त होने पर
उन लोगों में से अधिकांश भारतीयों ने मातृभूमि
से नाता तोड़ कर इस देश को अपना उपनिवेश
बना लिया और सरकार ने भी शर्तबंधी के
नियमानुसार उनकी संतानों को अंगरेजी शिक्षा
देना आरम्भ किया। फल यह हुआ कि वे अपनी
मातृभाषा से नितांत अनभिज्ञ रहे और केवल
अंगरेजी को अपने बोलचाल की भाषा बना लिये।
बड़े विद्वानों का कथन है कि जिस जाति की
भाषा मर जाती है वह जाती भी नष्ट भ्रष्ट हो कर
दूसरे स्वरूप में बदल जाती है।

सज्जनो, सन् १९०५ का साल हमेशा के लिये
याद किया जायगा। इसी साल प्रोफेसर परमा-
नंद जी का इस देश में आगमन हुआ। आपने
वैदिक धर्म के महत्व पर हिंदी और अंगरेजी में
कतिपय व्याख्यान दिये और साथ ही यह भी
बतलाया कि हिंदुओं के पूर्वजों की विद्वत्ता का
डंका भूमंडल में बजता था और उनकी विजय-
पताका देशदेशांतरों में फहरा रही थी। प्रोफेसर
परमानंद के व्याख्यानों का प्रभाव यूरोपियन तथा
भारतीय जनता पर विशेष रूप से पड़ा और
उन्होंने दरबन में हिंद सुधार सभा, 'हिंदू यांगमैन
एसोसियशन' आदि सभाओं की स्थापना की
जोकि आजतक मौजूद हैं. आप थोड़े ही दिन के
बाद विलायत चले गये, उनके चले जानेके पश्चात्
सन् १९०८ में स्वामी श्रीशंकरानंद जी संन्यासी
इंगलैंड से इस देश में पधारे और उन्होंने अपनी
अनथक मेहनत से तमाम दक्षिण अफ्रिका में
भ्रमण करके वेद धर्म सभाएँ कायम कीं और
हिंदू लोगों को हिंदी पाठशालाएँ खोलने के लिये
उत्तेजित किया, तथा खास कर इस नगर में
वैदिक आश्रम की नींव डाली, साथ ही बच्चों को
भी हिंदी भाषा में शिक्षा देना आरंभ किया। यह
वही पवित्र स्थान है जहाँ आज हमलोग हिंदी
भाषा का प्रचार और साहित्य को सर्वांग सुंदर
बनाने के लिये एकत्र हुए हैं। स्वामी जी सन् १०११
में भारतवर्ष को चले गये और दोबारा आपका
आगमन सन् १९१२ में हुआ। इसी साल आपने
तमाम हिंदुओं को जोकि इधर उधर आपस के
झगड़ों में बिखरे पड़े थे और अपनी अपनी अलग
अलग समिति बनाए हुए थे सबको इकट्ठा
करके एक सूत्र में बांधने के लिये दूरदर्शिता पूर्वक
विचार किया; जिसका फल यह हुआ कि दक्षिणीय
अफ्रिका हिंदु सम्मेलन का पहिला अधिवेशन
३१ मई सन् १९१२ को दरबन नगर में हुआ और
स्वामीजी ही उसके सभापति निर्वाचित हुए थे।
इस सम्मेलन में दक्षिण अफ्रिका के भिन्न २

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्थाओं के २५० प्रतिनिधि शामिल हुए थे। बहुत से प्रस्ताव पास होने के बाद हिंदी और अंगरेजी का एक साप्ताहिक समाचारपत्र निकालने का प्रस्ताव भी पास किया गया जिसका भार श्रीयुत आर० जी० भल्लाने ग्रहण किया था। इन सब सुधारों का सेहरा श्रीस्वामी शंकरानंद जी के शिर पर बँधता है।

सन् १९१२ के अंत में श्रीयुत भवानी दयाल जी इस देश में पधारे। आपने बड़े परिश्रम से ट्रांसवाल, लेडीस्मिथ, वीनेन गलंको जंकशन, बर्नसैड, हाटींगस्पुरुट, न्यूकासल, डेनहौसर आदि स्थानों पर हिंदी प्रचारिणी सभाएँ कायम कीं और फ्रेर स्टेट में १७ अक्तूबर सन् १९१५ को हिंदी आर्य्य आश्रम की स्थापना की जिसके द्वारा हिंदी भाषा का प्रचार होता रहा। अतएव आप धन्यवाद के पात्र हैं।

२६ फरवरी सन् १९१६ का दिन दक्षिण अफ्रिका के इतिहास में स्वर्णाक्षरोंमें अंकित रहेगा कि जब श्रीयुत आर० जी० भल्लाने सन् १९१२ के उद्देश्य को पूर्ण करने के लिये 'धर्मवीर' नामक साप्ताहिक पत्र हिन्दी और अंगरेजी में निकाला और आपने आर्थिक हानि सहकर तथा एक वर्ष तक स्वतः पत्र का सम्पादन करके हिंदुओं के स्वत्वों की रक्षा करने तथा देवनागरी लिपी के प्रचार करने में कोई कसर बाकी नहीं रक्खी; इन्होंने इस पत्र द्वारा हिंदू जाति की जो सेवा की है उसके लिए मेरे पास कोई ऐसे शब्द नहीं हैं कि जिससे मैं इनकी प्रशंसा कर सकूँ; अंततः मैं समस्त सभाओं से अनुरोध करता हूँ कि हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि के प्रचार के लिये पूर्ण प्रयत्न होना चाहिए।

प्रिय भ्राताओ! स्वागत कारिणी सभा की ओर से मैं आप सज्जनों का हृदय से स्वागत करता हूँ और आतिथ्य सत्कार की त्रुटियों के लिये विनीत भावसे क्षमाप्रार्थी हूँ, यदि मेरे मुख से कोई अनुचित शब्द निकले हों तो आप लोग क्षमा करें अब मैं श्रीमान् बाबू हरदेव सिंह को प्रधान का आसन ग्रहण करने के लिये विनय करता हूँ। आशा है कि अब आप लोग श्रीयुत बाबू हरदेव सिंह की प्रधानता में हिंदी साहित्य के हित साधन के लिये अग्रसर होंगे। अन्त में आपलोगों के अनुग्रह के लिये मैं कृतज्ञता प्रकाश कर बैठ जाता हूँ।

सम्मेलन का कार्यव्यौरा।

जिस हिंदी साहित्य सम्मेलन की महीनों से चर्चा हो रही थी वह गत २५ दिसम्बर को मेरीत्सबर्ग में निर्विघ्न पूरा हुआ। स्वागत कारिणी सभा ने सम्मेलन के लिये बड़ा ही उत्तम प्रबंध किया था। २४ दिसंबर को ही भिन्न भिन्न नगरों से लगभग १०० प्रतिनिधि आ गए थे, उनके रहने के लिये वैदिक आश्रम में प्रबंध किया गया था। २५ दिसंबर के प्रातः ८ बजे की गाड़ी से सम्मेलन के प्रधान श्रीयुत हरदेव सिंह जी सदरलैंड से मेरीत्सबर्ग आए। उनका स्वागत करने के लिये स्वागत समिति के सभापति तथा ४० स्वयं-सेवक स्टेशन पर मौजूद थे, वन्देमातरम् के जयघोष से प्रधान महाशय की अभ्यर्थना की गई, स्टेशन पर एक गोरे पत्र का सम्वाददाता तथा एक भारतीय चित्रकार ने वालंटियरों के साथ प्रधान का चित्र लिया। वहां से मोटरकार पर सवार होकर प्रधान जी नेटाल इंडियन ट्रेडर्स पर आए। यहां से प्रधान महाशय का जुलूस निकाला गया। एक बग्गी पर प्रधान श्रीयुत हरदेव सिंह, स्वागत समिति के सभापति श्रीयुत डी० के० सोनी और सम्मेलन के मंत्री श्रीयुत भवानी दयाल जी सवार हुए। इसके आगे हिन्दी राष्ट्रीय पाठशाला की कन्याएँ पंक्तिबद्ध होकर बंदेमातरम की धुन गाती जाती थीं और उनके आगे स्वयं-सेवकों का दल बसंती पगड़ी बांधे और हाथ में पताका लिये सैनिक चाल से जाता था। पताका पर 'हिंदी हिंदी साहित्य सम्मेलन' शब्द अंकित था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत से लोग खड़े होकर जलूस का अवलोकन कर रहे थे. ६ बजे के लगभग प्रधान महाशय सभा-मण्डप में पहुँचे। सब लोगों ने उठकर उनका स्वागत किया।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन के मण्डप के फाटक पर सुनहले अक्षरों में 'द्वितीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' लिखा था और उसके दोनों तरफ स्वागत और शुभागमन के मनोहर शब्द शोभा दे रहे थे। मंडप तो बहुत ही उत्तम रीति से सजाया गया था। चारों तरफ गायत्री तथा वेद मंत्रों की अपूर्व छटा दृष्टिगोचर होती थी। महर्षि दयानन्द, महाराणा प्रताप सिंह, स्वामी शंकरानन्द आदि महानुभावों के चित्र सभी के सामने लटकाए गए थे। सारांश यह कि मंडप को सजाने में कोई कसर नहीं रक्खी गई थी। समस्त दर्शक मंडप की शोभा देख कर आश्चर्य्य-चकित होते थे।

हिंदी साहित्य सम्मेलन में लग भग एक हजार मनुष्य उपस्थित थे जिनमें १०० के लगभग प्रतिनिधि थे। जिन सभा समितियों तथा संस्थाओं की ओर से प्रतिनिधि सम्मेलन में शामिल हुए थे उनमें से कुछ के नाम ये हैं—

श्रीयुत आर० जी० भल्ला, एम० महावीर (वेद धर्म सभा क्लेरस्टेट), भवानी दयाल, मेहरचन्द, भगवानदीन, गरीब खुशियाल, डी० लक्ष्मन, ए० राम सिंह (हिंदी आर्य्य आश्रम क्लेरस्टेट), सुखराज सिंह (नागरी प्रचारिणी सभा वीनेन), रघुनाथ सिंह, बुद्धू, भोला, लल्लू, विट्ठल, राम अवतार आदि (नागरीप्रचारिणी सभा लेडीस्मीथ), रामधन सिंह, रामदीन, शिवराज (देवनागरी प्रचारिणी सभा हाविक); चन्द्रिका (इण्डियन कमेटी गलंको जंकशन), परमेश्वर; जगन्नाथ, कल्याण; उमराव, बी० बाबूलाल (वेद धर्म सभा लदरलैण्ड), बद्री, उदित (रामायण सभा स्प्रीङ्कफिल्ड), एम० गंगाशरण, देवनारायण (रामायण सभा क्लेरस्टेट), हीरा वर्मा, (हिन्दी प्रचारिणी सभा दरबन), एस० डी० घीराऊ, नैनाराय, लाल बहादुर, नान्हू, रामस्वरूप, बहादुर सिंह (आर्य्य युवक सभा दरबन), प्राणजी, लाल जी, प्रभु मकनजी, पदम सिंह, चार्ली नलैया, भागा, सोमचन्द पानाचन्द, नेमचन्द केशवजी (वेद धर्म सभा मेरीत्सबर्ग), एफ० रामलगन, लक्ष्मण दुखित, के० शिवपाल, एफ० गरीब (विद्या प्रचारिणी सभा रायकोपिल), गया सिंह, नामदार सिंह, आर० बी० त्रिपाठी, पी० आर० सिंह, एस० हनुमान, लक्ष्मण सिंह, सुक्खू, जगवन्त (हिंदी राष्ट्रीय पाठशाला मेरीत्सबर्ग), जी० एच० सिंह, गंगाविष्णु, मक्का भुला, शिवप्रसाद, पी० भारत सिंह (युवक वेद धर्म सभा लदरलैण्ड), अनतोनी डी० पिल्ले (नेटाल इण्डियन पेट्रियाटिक यूनियन रायकोपिल), के० नायना, एम० पी० पिल्ले (टामिल प्रोटेक्टीव एसोसियशन केम्पडीफ्ट), एस० एस० पतर, पी० आर पिल्ले, एस० आर० नायडू, एम० एम० नायडू, आर० एन० मुडली (हिंदू यँगमैन एसोसियशन मेरीत्सबर्ग), रामचरण, हीरालाल सुखराम (नागरी प्रचारिणी सभा स्प्रीङ्कफील्ड), मंगल, बुद्ध शाह, रामप्रसाद, रामनाथ महाराज, सुवर्ण महाराज (वेद धर्म सभा इडनडेल), रामछबि चौबे, देवीदीन, शालिगराम, भोलईराम, शिवनारायण पांडे (नागरी पाठशाला अमसण्डूसी), एल० एस० पिल्ले, एम० एस० पिल्ले, आर० माणिकम (आर्य्यन यूथ्स प्रोग्रेसिव एसोसियशन मेरीत्सबर्ग), मदरे के० रेडी (शिवनायकम भजने मेरीत्सबर्ग), रामगरीब, अक्षयबर सिंह, रामनन्दन सिंह (नागरी प्रचारिणी सभा जकोब्स), बरहना स्वामी मुडलियार, शिवसिथण्डा शिवभजने पदम मेरीत्सबर्ग आदि।

ईश्वरोपासना—अग्निहोत्रादि के बाद हिन्दी राष्ट्रीय पाठशाला की कन्याओं ने बन्देमातरम का गीत गाया। तत्पश्चात क्लेरस्टेट वेद धर्म सभा के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रमुख श्रीयुत आर० जी० भल्ला ने स्वागत समिति के अध्यक्ष श्रीयुत डी० के० सोनी के गले में पुष्प-हार पहिनाया। इसके बाद म० मेहरचन्द ने स्वागत सभा के अध्यक्ष का व्याख्यान पढ़ा जो कि अन्यत्र प्रकाशित किया गया है। स्वागत समिति के सभापति के व्याख्यान के अन्त में बाबू हरदेव सिंह को प्रधान का आसन ग्रहण करने के लिये प्रस्ताव किया गया जिसका अनुमोदन म० मेहरचन्द और समर्थन म० भगवानदीन ने किया। इसके बाद बाबू हरदेव सिंह ने धन्यवाद पूर्वक प्रधान आसन ग्रहण किया। म० हीरा वर्मा ने स्वरचित भजन गाकर प्रधान महाशय की अभ्यर्थना की; तदुपरांत म० भवानी दयाल ने उन सभा-समितियों तथा महाशयों के तार और पत्र पढ़े जो कई कारणवश प्रतिनिधि नहीं भेज सके थे अथवा स्वयं उपस्थित नहीं हो सके थे, किन्तु जिन्होंने सम्मेलन की सफलता के लिये सद्विचार प्रकट किये थे, उनमें से कुछ के नाम ये हैं—बम्बई प्रेसिडेंसी हिंदू ऐसोसियशन—दरबन, काठियावाड़ आर्य्यमण्डल—दरबन, पाटिदार सोसायटी—जोहांसबर्ग, वैदिक लीग-प्रिटोरिया, होली सभा—ओवरपोर्ट, आर्य्यन बेनवलेण्ट सोसायटी-मेरीत्सबर्ग, हिंदू त्रिकुटम लेडीस्मीथ, भारतीय जनता टोंगाट, हिंदी प्रचारिणी सभा हाटिङ्गस्पुरुट, हिंदू समरसा बोधई एसोसियशन-टोंगाट, मेसर्स ए० एच० वेस्ट सम्पादक इंडियन ओपिनियन-फीनीक्स; जी० डी० लाला—लिडनम, बी० ए० मेघराज-दरबन, जी० बी० रघुबीर वर्मा-दरबन, बी० सिंह-दरबन, ग्वाला-केपटौन, नायक, फकीर कलन-केपटौन, रामलाल सिंह-जर्मिसटन, देवी दयाल-जर्मिसटन आदि।

इसके बाद हिंदी राष्ट्रीय पाठशाला की कन्याओं ने सम्मेलन-सम्बन्धी म० प्रभु मकन जी विरचित एक मनोहर भजन गाया; फिर श्रीयुत भवानी दयाल जी ने प्रधान का व्याख्यान पढ़ा इसके बाद महाशय रामस्वरूप और बहादुर सिंह का गायन हुआ जिसे श्रोताओं ने बड़ा पसन्द किया। पहिला और दूसरा प्रस्ताव पास होने के पश्चात् भोजनार्थ सभा उठ गई। डेढ़ बजे के बाद फिर पूर्ववत सम्मेलन का कार्य्य प्रारंभ हुआ। तीसरा और चौथा प्रस्ताव पास होने के पश्चात् म० रामस्वरूप का गायन हुआ। इसके बाद हिंदी राष्ट्रीय पाठशाला की कुमारी वृजदेवी (बाबू पर्वत सिंह की पुत्री) और कुमारी कुन्ती देवी (बाबू सुक्खू की पुत्री) ने सम्मेलन के विषय में परस्पर सम्वाद किया जिसे सुनकर श्रोतागण मुग्ध हो गए। विद्यार्थी अमर सिंह ने भी इस सम्वाद में भाग लिया, सम्वाद के अन्त में वृजदेवी, कुन्ती, रमणी, राजवन्ती, कौशिल्या, लाली आदि कन्याओं ने मधुर स्वर से मातृभाषा के महत्व पर भजन गाए। विद्यार्थी बनवारी ने भी अच्छा कार्य किया और बाबू रघुनाथ सिंह के पुत्र चिरंजीव उदयराज की कविता भी पसन्द की गई।

पचवां और छठां प्रस्ताव पास होने के पश्चात् श्रीयुत भवानी दयाल का व्याख्यान हुआ, बहादुर सिंह, मक्खन सिंह, रामस्वरूप और हीरा वर्मा के भजन के बाद विद्यार्थी कुंजबिहारी और विद्यार्थी रामरूप ने स्वस्तिवाचनम् का पाठ किया। इसके बाद जलपान के लिये सभा उठ गई तथा स्वागतसमिति सम्मेलन के अधिकारी स्वयं सेवकदल और प्रतिनिधियों का चित्र लिया गया। पांच बजे सम्मेलन का काम आरम्भ होने पर सतवां, अठवाँ, नवां और दसवां प्रस्ताव क्रमशः पास हुआ और इसके बाद श्रीयुत आर० जी० भल्ला का अत्यंत प्रभावशाली व्याख्यान हुआ, बेरलम के बाबू रविकृष्ण तथा बसन्त सिंह और रीचमोण्ड के बाबू अमीचन्द मजलिस सिंह तथा क्लेरउड के म० लखू [illegible] महाराज भी सम्मेलन में तशरीफ लाए थे। [illegible] लाल बहादुर नान्हू ने एक अत्यंत रोचक भजन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...र समस्त जनता को मुग्ध कर दिया था। ...के बाद हिंदी सहित्य सम्मेलन के वर्तमान् वर्ष ...लिये निम्न अधिकारी चुने गए—सभापति ...दुरदेव सिंहजी। अवैतनिक आजीवन उप-...पति श्रीयुत आर० जी० भल्ला। उपसभापति ...मन्दराज सिंह, श्रीयुत मेहरचन्दजी और ...रघुनाथ सिंह। मंत्री—श्रीयुत भवानी दयाल ...। संयुक्त सहकारी मंत्री-श्रीयुत एस० डी० ...राऊ और श्रीयुत प्रभु मकनजी। कोषाध्यक्ष ...युत रणछोड़ जीवन। अन्त में आरती का गायन ...के सम्मेलन का कार्य्य समाप्त हुआ।

सर्वानुमति से स्वीकृत प्रस्ताव।

(१) मेरीत्सबर्ग में होनेवाला यह द्वितीय ...दी साहित्य सम्मेलन समस्त भारतीयों तथा ...तीय संस्थाओं से प्रार्थना करता है कि वे देश ...याण के उद्देश्य से हिंदी को समस्त भारत ...राष्ट्र भाषा बनाने के लिये पूर्णरूपेण यत्न करें। ...तभूमि की अखिल सन्तानों की एक राष्ट्र ...षा की महत्वाकांक्षा को सफल करने के निमित ...व्यवहारादि हिंदी में करें। प्रस्तावक आर० ...० भल्ला, अनुमोदक आर० एन० मुडली; सम-...ग्राह्यजी लालजी।

(२) यह सम्मेलन यूनियन सरकार से ...विनय निवेदन करता है कि सरकारी तथा ...कार की सहायता से चलनेवाली पाठशालाओं ...भारतीय भाषाओं का पढ़ाया जाना अनिवार्य ...दिया जाय। प्र० मेहरचन्द; अ० बद्री उदित; ...बुद्ध भोला।

(३) यह सम्मेलन भारत से भारतीय ...ध्यापकों के यहां आने की आवश्यकता अनु-...करता है और सरकार से नम्र निवेदन करता ...कि दक्षिण अफ्रिका में ऐसे अध्यापकों के प्रवेश ...ने की आज्ञा दी जाय। प्र० पद्मसिंह; अ० ...नारायण पांडे, स० एस० हनुमान।

(४) यह सम्मेलन एक हिंदी पुस्तकालय की आवश्यकता अनुभव करता है और अधिकारियों को स्वत्व देता है कि वे हिंदी पुस्तकालय स्थापित करने की यथासाध्य चेष्टा करें। प्र० भवानी दयाल, अ० एस० डी० घीराऊ, स० गया सिंह।

(५) यह सम्मेलन समस्त भारतीयों को आदेश करता है कि जहां जहां सम्भव हो, वहां हिंदी पाठशाला खोलने का भरपूर प्रयास करें। प्र० प्रभु मकन जी, अ० एस० आर० नायडू, स० मक्खन सिंह।

(६) सरकारी विज्ञापन का जो कि भारतीयों से किसी प्रकार का सम्बन्ध रखता हो, भारतीय जनता के परिज्ञान के लिये भारतीय भाषाओं में भी प्रकाशित होना आवश्यक है। प्र० चार्ली नलैया, अ० जी० रामसिंह, स० एफ० रामलगन।

(७) यह सम्मेलन प्रधान तथा अन्य सब अधिकारियों और अन्य व्यक्तियों का साधुवाद करता है जिन लोगों ने सम्मेलन की सफलता में योग दिया है। प्र० रघुनाथ सिंह, अ० मन्दराज सिंह; स० हीरा वर्मा।

(८) यह सम्मेलन निश्चित करता है कि सम्मेलन का आगामी वार्षिकाधिवेशन दरबन में किया जाय। प्र० आर० एन० मुडली, अ० आर० जी भल्ला, स० डी० घीराऊ।

(९) यह सम्मेलन वर्तमान महायुद्ध में बृटिश सरकार के विजय की कामना रखता है। प्र० आर० एन० मुडली, अ० चार्ली नलैया, स० डी० के० सोनी।

(१०) यह सम्मेलन प्रधान महाशय को अधिकार देता है कि वे इन प्रस्तावों को यथा-स्थान प्रेषित कर दें। प्र० आर० बी० त्रिपाठी, अ० भगवानदीन, स० हीरालाल।

एक मतलब की बात।

गत १ मार्च को कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपाधि-वितरण के उत्सव में श्रीमान् गवर्नर महोदय ने व्याख्यान देते हुए अन्य बातों के बीच नव-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपाधिधारियों के प्रति यह भी कहा कि "अब मैं आप लोगों को इस बात की बधाई देता हूँ कि अनेक कठिनाइयों को झेल कर आपने एक ऐसी भाषा के द्वारा जो आपकी अपनी नहीं है उच्च शिक्षा को प्राप्त किया है और इस महाकठिन कार्य्य को जिस परिश्रम और दृढ़ता के साथ आपने संपादन किया उसके लिये आपकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है".....

इस बात को कलकत्ता विश्वविद्यालय के रेक्टर के रूप में श्रीमान् गवर्नर महोदय ने स्पष्ट रूप से स्वीकार कर लिया कि एक विदेशी भाषा द्वारा उच्च शिक्षा का प्राप्त करना "महाकठिन कार्य्य है" फिर क्या प्रत्येक साधारण विद्यार्थी इस "महाकठिन कार्य्य" के करने योग्य है या विशेष विशेष शक्तिवाले ही ऐसा कर सकते हैं। ऐसी अवस्था में देशी भाषा को शिक्षा का माध्यम न बनाना क्या उचित कार्य्य है? इस चाल से उच्च शिक्षा का प्रचार भारतवर्ष में हजारों वर्षों में भी न हो सकेगा और इसका फल क्या होगा यह कर्तागण स्वयम् ही विचार देखें।

काशी नागरीप्रचारिणी सभा के नियम।

नाम और उद्देश्य।

(१) इस सभा का नाम "नागरीप्रचारिणी सभा" है और इसका साधारण अधिवेशन प्रति अंग्रेज़ी महीने के अन्तिम शनिवार को हुआ करता है।

(२) इस सभा के मुख्य कर्तव्य ये हैं—

१—हिन्दी भाषा की त्रुटियों को दूर करना।

२—हिन्दी भाषा को उत्तम और आवश्यक विषयों के ग्रंथों से अलंकृत करना।

३—हिन्दी भाषा और नागरी लिपि के प्रचार तथा उचित अधिकार पाने के लिये सर्कार तथा एतद्देशीय और विदेशीय सज्जनों में उद्योग करना।

४—समय समय पर पारितोषिक देकर लोगों का उत्साह बढ़ाना और ग्रन्थ लिखवाना तथा यथासम्भव संस्कृत की उन्नति के लिये उद्योग करना।

५—यथासाध्य भारतवासियों में विद्या के उचित प्रचार और शिक्षित लोगों के समादर के लिये उद्योग करना।

६—हिंदी को शिक्षा का माध्यम तथा राष्ट्रभाषा बनाने का उद्योग करना।

७—अन्य ऐसे कार्य करना जिन्हें साधारण सभा समय समय पर इस सभा के उद्देश्यों की सफलता और आवश्यकता के लिये उपयुक्त और आवश्यक समझे।

(३) इस सभा में किसी राजनैतिक (हिंदी भाषा तथा नागरी लिपि संबंधी प्रश्नों के अतिरिक्त) वा मतमतांतर संबंधी वाद विवाद पर विचार न किया जायगा।

(४) इस सभा की आय और सम्पत्ति चाहे वह कहीं से प्राप्त हुई हो, केवल इसी सभा के उद्देश्यों की उन्नति में लगाई जायगी। उसका कोई भाग उन लोगों को जो सभा के सभासद हैं वा रहे हों या उनमें से किसी की वा उनके द्वारा किसी अन्य को किसी प्रकार से लाभ, अंश, हिस्सा या और किसी रूप में नहीं दिया जायगा परन्तु सभा के किसी नौकर अथवा किसी सभासद या किसी दूसरे मनुष्य को यदि वह सभा का कोई काम करे तो पुरस्कार या वेतन देने में यह नियम बाधा न डालेगा।

(५) यदि सभा के धन या सम्पति के प्रबन्ध या प्रयोग में कोई हानि हो तो उसके लिये कोई सभासद उत्तरदाता न होगा जब तक कि वह हानि उसने जान बूझ कर न की हो।

(६) यदि कभी इस सभा के उठ जाने पर सब लहना देना साफ करके कुछ सम्पत्ति या धन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बच जायगा तो वह सभा के सब सभासदों या उनमें से किसी एक को न दिया जायगा वरन् वह किसी दूसरी सभा या समाज को दे दिया जायगा जिसके उद्देश्य इस सभा के उद्देश्यों के समान होंगे। इसका निर्णय उन सभासदों में से कम से कम ⅔ के सहमत होने पर होगा जो उस समय स्वयम् या प्रतिनिधि द्वारा उपस्थित होंगे। यदि ऐसा न हो सका तो इसका निर्णय किसी ऐसे सभा या न्यायालय द्वारा होगा जिसको इसके संबंध में फैसला करने का अधिकार होगा।

(७) सभा के सब काम या मुक़द्दमों का संबंध या रुपए आदि का लेन देन उसके किसी नियत अधिकारी द्वारा होगा।

सभासदगण।

(८) इस सभा के सभासद हिंदी और संस्कृत भाषा के प्रेमी मात्र हो सकते हैं।

(९) इस सभा के सभासद तीन प्रकार के होंगे—

१—साधारण सभासद—इनकी संख्या अपरिमित रहेगी। काशी के रहनेवाले स्थानिक और बाहर के रहनेवाले बाहरी कहलावेंगे।

२—आनरेरी सभासद—इनकी संख्या २० से अधिक न होगी। वे ही सज्जन आनरेरी सभासद हो सकेंगे जिनसे सभा हिंदी भाषा वा अपने विचार की कुछ विशेष आशा रखती हो और जो विद्या और बुद्धि के लिये प्रसिद्ध हों।

३—स्थायी सभासद—इनकी संख्या अपरिमित होगी और इनमें वे ही महाशय परिगणित हो सकेंगे जो सभा की सहायता १००) रु० वा उससे अधिक धन से करें या सभा के स्थायी कोश की वृद्धि में २००) वा उससे अधिक धन से सहायता करें। ये यावज्जीवन बिना कुछ चंदा दिए सभासद हो सकेंगे।

संरक्षक।

(१०) ऐसे नृपतिगण जो नागरी अक्षर, हिंदी भाषा अथवा इस सभा की विशेष सहायता करेंगे इस सभा के संरक्षक चुने जायँगे और यह चुनाव प्रबन्धकारिणी समिति के प्रस्ताव और साधारण सभा के अनुमोदन पर सभा के वार्षिक अधिवेशन में होगा। प्रबंधकारिणी समिति अपने प्रस्ताव में इस बात को स्पष्ट करके लिख देगी कि जिनके संरक्षक चुने जाने के लिये वह प्रस्ताव करती है उन्होंने नागरी अक्षर, हिंदी भाषा अथवा सभा की क्या क्या विशेष सहायता की है।

प्रबंध और प्रबंधकर्तागण।

(११) इस सभा के कार्यकर्ता एक सभापति, दो उपसभापति, एक मंत्री और एक उपमंत्री होंगे और उसका संपूर्ण प्रबंध एक प्रबंधकारिणी समिति के अधीन रहेगा जिसके सभासद २३ होंगे और वे इस प्रकार चुने जायंगे—

१—मंत्री	१
२—उपमंत्री	१
३—काशीस्थ सभासद	१२
४—संयुक्त प्रांतवाली बाहरी सभासद	२
५—बंगाल से	१
६—बिहार से	१
७—मध्यप्रदेश और बरार से	१
८—मध्यभारत से ,,	१
९—राजपुताना से ,,	१
१०—पंजाब से ,,	१
११—बंबई से ,,	१

ऊपर लिखे प्रांतों में से यदि किसी समय किसी प्रांत में सभा के सभासदों की संख्या १५ से कम हो जायगी तो उस प्रांत के किसी सभासद का प्रबंधकारिणी समिति में चुनाव न होगा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और उसके स्थान पर ऐसे प्रांत का सभासद चुना जायगा जहाँ के सभासदों की संख्या सब से अधिक होगी।

(१२) (क) सभा के सभापति और उपसभापतियों में से कम से कम एक का तथा मंत्री और उपमंत्री का काशीस्थ होना आवश्यक है। (ख) सभा के मंत्री और उपमंत्री प्रबंधकारिणी समिति के भी मंत्री और उपमंत्री होंगे। इनके अतिरिक्त प्रबंधकारिणी समिति को अधिकार होगा कि वह अपने सभासदों में से प्रति वर्ष अपनी समिति का एक प्रधान और एक उपप्रधान चुने जो काशीस्थ होंगे। (ग) सभा के सभापति तथा उपसभापति जब कभी प्रबंधकारिणी समिति में उपस्थित होंगे तो उन्हें उस समिति में सम्मति और वोट देने का वैसा ही अधिकार होगा जैसा कि उस समिति के अन्य सभासदों को होगा और वे ही यथाक्रम उस अधिवेशन के सभापति होंगे।

(१३) अवधि के बीच में यदि साधारण सभा के किसी पदाधिकारी का पद खाली होगा तो उस सभा को अधिकार होगा कि उसके स्थान पर दूसरा अधिकारी चुने। इसी प्रकार प्रबंधकारिणी समिति में यदि कोई स्थान खाली होगा तो साधारण सभा दूसरे किसी को उस स्थान पर चुनेगी। ऐसे अधिकारी या सभासद की अवधि उतने ही दिनों की होगी जितनी उसके पूर्वस्थ अधिकारी या सभासद की बाकी रही हो। प्रबन्धकारिणी समिति के जो नगरस्थ सभासद वर्ष भर में कम से कम चार अधिवेशनों में उपस्थित न होगें अथवा जो बाहरी सभासद कम से कम चार अधिवेशनों के कार्य पर अपनी सम्मति न भेजेंगे अथवा उसके बदले में कम से कम दो अधिवेशनों में उपस्थित न होंगे तो उनका स्थान खाली समझा जायगा।

सदासदों का चुनाव।

(१४) जिन महाशयों को सभासद होने की इच्छा हो उन्हें निम्नलिखित आशय के निवेदन पत्र पर हस्ताक्षर कर मंत्री के पास भेजना चाहिए।

श्रीयुत मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी।

महाशय,

मैं नागरीप्रचारिणी सभा काशी का सभासद होना चाहता हूँ। कृपा कर मेरा नाम सभासदों की नामावली में लिख लीजिए। मैं रु० वार्षिक चन्दा दूंगा और यथासाध्य हिंदी भाषा और नागरी लिपि के प्रचारार्थ उद्योग करता रहूँगा।

भवदीय

ताः { नाम ... ...
पता ... ...

*हमारी सम्मति में ये सभासद होने योग्य हैं

... ... प्रस्तावक

सभासद, ना० प्र० स०

यह पत्र साधारण सभा में स्वीकारार्थ उपस्थित किया जायगा और एक सभासद के प्रस्ताव तथा दूसरे के अनुमोदन करने पर वह सभा में पढ़ा जायगा और अधिक सम्मति से स्वीकृत होने पर उन्हें सूचना दी जायगी कि अमुक तिथि के अधिवेशन में सभा ने आपको सभासद बनाना स्वीकार किया है और वार्षिक चन्दे के आने पर सभासदों की नामावली में आपका नाम लिखा जायगा।

(१५) आनरेरी सभासद प्रबन्धकारिणी

* सभासद ऐसे व्यक्तियों के लिये सभासद बनने का प्रस्ताव न करें जिनकी वृत्ति निंदनीय हो और जिनके आचरण बुरे सिद्ध हो चुके हों तथा जो समाज में न बैठ सकते हों।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समिति के द्वारा साधारण सभा में प्रस्ताव करने पर चुने जायँगे।

(१६) कोई सभासद जो किसी कारण से सभा से अलग किया गया हो चौदहवें नियमानुसार पुनः प्रार्थना करने पर और जिस कारण से वह अलग किया गया हो उसके दूर करने पर सभासद चुना जा सकता है।

सभासदों का चंदा।

(१७) जो महाशय इस सभा के साधारण सभासद होंगे उन्हें कम से कम १॥) रु० वार्षिक चंदा देना होगा, परंतु प्रबंधकारिणी समिति को अधिकार होगा कि किसी को बिना चंदे के भी साधारण सभासद चुने अथवा किसी साधारण सभासद का चंदा क्षमा कर दे। ऐसे सभासदों की संख्या प्रति सैकड़ा दस से अधिक न होगी और इन्हें डेढ़ रुपया वार्षिक चन्दा देनेवाले सभासदों के समान अधिकार होंगे परंतु ऐसे सभासदों के चुनाव के विषय में प्रबंधकारिणी समिति प्रति तीसरे वर्ष फिर से विचार किया करेगी। सभासदों को अपना चंदा प्रति वर्ष अगस्त मास में दे देना चाहिए। जिनका चंदा इस मास में नहीं आ जायगा उन्हें वार्षिक विवरण को छोड़ कर अन्य पुस्तक पत्रिका आदि तब तक नहीं भेजी जायगी जब तक उनका चंदा नहीं आ जायगा। *

(१८) जो महाशय वर्ष के बीच में सभासद होंगे उनसे केवल उनके सभासद नियत होने के मास से जून मास तक का चंदा लिया जायगा।

(१९) आनरेरी सभासदों को कुछ वार्षिक चंदा न देना होगा।

* सब सभासदों को चन्दा भेजने की सूचना, प्रति जुलाई मास में दी जायगी और उसके एक मास के भीतर उसका वी० पी० भेजा जायगा।

सभासदों के अधिकार।

(२०) जो सभासद ५) रु० वा इससे अधिक वार्षिक चंदा देंगे उन्हें उस मास से जिसमें वे सभासद हुए हैं नागरीप्रचारिणी पत्रिका, नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला और नागरीप्रचारिणी लेखमाला बिना मूल्य दी जायंगी; जो सभासद ३) रु० वार्षिक देंगे उन्हें पत्रिका और उनके इच्छानुसार ग्रंथमाला अथवा लेखमाला तथा जो १॥) रु० वार्षिक देंगे उन्हें केवल पत्रिका बिना मूल्य दी जायगी।

(२१) पत्रिका, ग्रंथमाला और लेखमाला के अतिरिक्त अन्य पुस्तकें जो सभा द्वारा प्रकाशित होंगी उनके विषय में प्रबन्धकारिणी समिति समय समय पर निश्चय करेगी कि उनमें से कौन कौन पुस्तकें किस श्रेणी के सभासदों में बिना मूल्य, आधे मूल्य या पूरे मूल्य पर बांटी जांय।

(२२) आनरेरी और अस्थायी सभासदों को भी सभा द्वारा प्रकाशित सब पुस्तकें उन्हीं नियमों के अनुसार दी जांयगी जिनके अनुसार वे सभा के प्रथम श्रेणी के सभासदों में बांटी जांयगी।

(२३) प्रत्येक सभासद के निम्नलिखित कर्तव्य और अधिकार होंगे—

१—हिन्दी तथा नागरी लिपि के प्रचारार्थ यथासाध्य यत्न करना तथा सभा के सहायक बढ़ाने का उद्योग करना।

२—हिन्दी भाषा के नवीन और प्राचीन कवियों और ग्रन्थकारों की समालोचना द्वारा उनके गुणों को स्वच्छ करके दिखाना, गद्य, पद्य नाटक, उपन्यास, इतिहास, विज्ञान आदि आवश्यक विषयों पर लेख लिख कर सभा में उपस्थित करना और सुन्दर सुन्दर ग्रन्थों से हिन्दी भाषा के भाण्डार को भरना।

३—सभा के अधिवेशनों में उपस्थित होना।

४—किसी प्रस्ताव को उपस्थित अथवा उसका अनुमोदन करना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५—किसी दर्शक को साधारण अधिवेशन में उपस्थित करना और सभा को उसका परिचय देना।

६—सभा सम्बन्धी किसी विषय को सभा के मंत्री से पत्र लिखकर या सभा के किसी अधिवेशन में पूछना। जो प्रश्न किसी अधिवेशन में किए जांयगे उनकी सूचना कम से कम ४ दिन पहले देनी होगी। उत्तर को स्पष्ट करने के लिये तत्काल और प्रश्न करने का भी सभासदों को अधिकार है।

७—सभा के कार्य्य का भार नियमानुसार लेना।

(२४) आनरेरी और स्थायी सभासदों को भी वे सब अधिकार हैं जो साधारण सभासदों को हैं।

सभासदों का अलग किया जाना।

(२५) कोई सभासद पत्र द्वारा इच्छा प्रगट करने पर सभा से अलग हो सकता है।

(२६) जो सभासद पूरे दो वर्ष तक अपना चन्दा न देंगे उन्हें सभासदों के अधिकार प्राप्त न रहेंगे और उनका नाम उन्हें सूचना देकर काट दिया जायगा।

(२७) यदि कोई अधिकारी वा सभासद कोई ऐसा निन्दनीय कार्य्य करेगा जिससे सभा की हानि हो वा उसका किसी प्रकार से उपहास हो तो वह विचारपूर्वक अपने पद से च्युत किया जायगा। जिस पर दोष लगाया जायगा उसे सूचना और अपनी सफाई का अवसर देकर इस संबंध का प्रस्ताव प्रबंधकारिणी समिति साधारण सभा में करेगी और उसका निर्णय $\frac{२}{३}$ सम्मति द्वारा होगा।

प्रबंधकारिणी समिति और पदाधिकारीगण।

(२८) (क) सभा के कार्यकर्ताओं का चुनाव प्रति वर्ष वार्षिक अधिवेशन में होगा जो अगस्त मास के पहिले शनिवार को हुआ करेगा, (ख) प्रबंधकारिणी समिति के प्रत्येक सभासद की अवधि तीन वर्ष की होगी और प्रति वर्ष सात सभासदों का चुनाव वार्षिक अधिवेशन में होगा जिनमें से चार स्थानीय होंगे और तीन बाहरी तथा प्रबंधकारिणी समिति के प्रधान और उप-प्रधान का चुनाव नई प्रबंधकारिणी समिति में उस अधिवेशन में प्रति वर्ष होगा जो वार्षिक अधिवेशन के उपरान्त होगा।

(२९) प्रबंधकारिणी समिति प्रति वर्ष एक सूची उन सभासदों की बनावेगी जिन्हें सभा पदाधिकारी, प्रबंधकारिणी और नियत उप-समितियों का सभासद बनाना उचित समझे, परंतु ऐसी सूची बनाने के पहिले उसका यह कर्त्तव्य होगा कि (१) वह प्रत्येक सभासद को सूची बनाने के दिन से कम से कम एक मास पहले इस बात की सूचना दे दे कि यदि उन्हें किसी के लिये प्रस्ताव करना हो तो वे उसकी सूचना उस समिति को नियत दिन तक दे दें (२) तब वह इन प्रस्तावों पर विचार करके सूची बनावे पर इस सूची में ऐसे नामों को रखना आवश्यक होगा जिनके लिये कम से कम सात सभासदों ने प्रस्ताव किया हो और (३) उस सूची पर बिना पूछे और अनुमति लिए किसी सभासद का नाम न चढ़ावे। इस सूची में जिन सभासदों के नाम लिखे रहेंगे उनके अतिरिक्त और किसी महाशय को वार्षिक अधिवेशन में सभा पदाधिकारी, प्रबंधकारिणी समिति वा उपसमिति का सभासद न चुन सकेगी।

(३०) यह सूची तथा और जो कुछ कार्य वार्षिक अधिवेशनन में होने को हो उनकी सूचना प्रत्येक सभासद के पास वार्षिक अधिवेशन से कम से कम दो सप्ताह पहिले भेज दी जायगी और चुनाव के समय सभासदों की सम्मति लिखकर ली जायगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३१) वे सभासद जिनकी अवस्था १८ वर्ष से कम होगी पदाधिकारी, प्रबन्धकारिणी समिति या किसी उपसमिति के सभासद न हो सकेंगे।

(३२) कोई व्यक्ति जो कम से कम दो वर्ष तक सभा का सभासद न रहा हो अथवा जिसके ऊपर एक वर्ष से अधिक सभा का चंदा बाकी हो पदाधिकारी या प्रबंधकारिणी समिति का सभासद न हो सकेगा।

(३३) कोई सभासद एक ही समय एक ही सभा समिति तथा उपसमिति में दो पद पर नियुक्त न हो सकेगा।

(३४) यदि अगस्त मास के प्रथम शनिवार को किसी विशेष कारण से वार्षिक अधिवेशन न हो सका वा सभासद उपस्थित न हो सके तो जब तक वार्षिक अधिवेशन न हो और नये पदाधिकारी न चुने जायँ यथास्थित प्रबंधकारिणी समिति को नियमानुसार कार्य्य करने का पूर्ण अधिकार होगा और वही इस अवस्था में वार्षिक अधिवेशन के लिये दूसरी तिथि नियत करेगी।

(३५) प्रबंधकारिणी समिति का अधिवेशन कब हुआ करेगा यह वह समिति स्वयं निश्चय कर लिया करेगी।

(३६) प्र० का० स० के प्रधान, उपप्रधान, मंत्री अथवा कोई तीन सभासद मंत्री द्वारा अथवा ऐसा न करने पर स्वयं अपने हस्ताक्षर से प्र० का० स० का विशेष अधिवेशन करा सकते हैं, जिसमें केवल उसी विषय पर विचार होगा जिसके लिये वह अधिवेशन किया गया हो।

(३७) पांच सभासदों के उपस्थित रहने पर प्रबंधकारिणी समिति का कार्य्य होगा।

(३८) प्रबंधकारिणी समिति के सभासदों के अतिरिक्त और किसी को उस समिति में सम्मति देने का अधिकार उस समय तक न होगा जब तक वह उससे आज्ञा न प्राप्त कर ले। परंतु प्रत्येक सभासद को अधिकार होगा कि वह अपनी सम्मति पत्र द्वारा समिति में विचारार्थ भेज दे और समिति की आज्ञा लेकर उसके किसी अधिवेशन में उपस्थित रहे।

(३९) प्रबंधकारिणी समिति को अधिकार होगा कि वह किसी सभासद को अपने किसी अधिवेशन में उपस्थित होने तथा विचाराधीन विषयों पर सम्मति देने के लिये निमंत्रित करे।

(४०) प्रबंधकारिणी समिति के सभासदों के अतिरिक्त अन्य किसी को उसके विचाराधीन किसी विषय पर वोट देने का अधिकार नहीं होगा।

(४१) प्रबंधकारिणी समिति के अधिकार और कर्तव्य—

१—सभा की चल तथा अचल संपत्ति को सुरक्षित रखना।

२—सभा के कार्य्यों का प्रबंध करना।

३—सभा की पुस्तकों और लेखादि के छपने बिकने तथा उनके बदले में (यदि आवश्यक हो) दूसरी पुस्तकों के लेने का प्रबंध करना।

४—प्रत्येक वर्ष का वार्षिक विवरण प्रस्तुत करना।

५—प्रति वर्ष मंत्रियों के कार्य्यों को बांट देना।

६—प्रत्येक प्रस्ताव पर विचार करना और जिन्हें उचित समझे उन्हें साधारण सभा में विचारार्थ भेजना।

(४२) सभापति के कर्तव्य और अधिकार—

१—सभा के अधिवेशनों में उपस्थित हो कर सभापति का आसन ग्रहण करना और उसके कार्यों पर ध्यान रखना।

२—अनुचित वा नियम के विरुद्ध किसी कार्य्य को न होने देना।

३—उपस्थित प्रबंधकारिणी समिति के सभासदों की सम्मति द्वारा किसी दूसरे सज्जन को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो किसी साधारण अधिवेशन में उपस्थित हो उस अधिवेशन का सभापति चुनना।

४—जब किसी विषय में सम्मति का सम विभाग होगा तो सभापति को एक और वोट देकर उस विषय के निर्णय करने का अधिकार होगा।

५—सभापति को अधिकार होगा कि सभा का कोई अधिवेशन किसी समय किसी विषय के विचारार्थ कर सके।

६—सभापति की अनुपस्थिति में उपसभापति उनका सब कार्य्य करेंगे।

७—प्रधान और उपप्रधान को प्रबंधकारिणी समिति के संबंध में वे ही अधिकार और कर्तव्य होंगे जो सभापति और उपसभापति को साधारण सभा के संबंध में हैं।

(४३) मंत्री के अधिकार और कर्तव्य—

१—सभा सम्बंधी पत्रव्यवहारादि करना।

२—सभा के अधिवेशनों में उपस्थित होना, उसका कार्य्यविवरण लिखना और उसे स्वीकारार्थ उपस्थित करना।

२—पूर्व अधिवेशन के अनंतर जो आवश्यक पत्रादि आए हों और जो उत्तर गए हों उन्हें अधिवेशन के आरंभ मे उपस्थित करना।

४—प्रत्येक पत्र और सभा संबंधी लेखादि को रक्षापूर्वक रखना।

५—सभा के प्रत्येक कार्य्य पर ध्यान रखना और उसकी सब प्रकार की संपत्ति की रक्षा करना तथा उसके लिये उत्तरदायी होना।

६—आयव्यय का ब्योरेवार हिसाब रखना तथा हिसाब जांचनेवालों से जचवा कर प्रबंधकारिणी सम्मति में उपस्थित करना।

७—सभा का रुपया प्रबंधकारिणी समिति द्वारा निश्चित बंक या बंकों में रखना और उसे अपने हस्ताक्षर से लेना।

८—मंत्री का कर्तव्य होगा कि प्रत्येक बिल या पुरजे की स्वीकृति पहले उस विभाग के अधिकारी से करा ले जिससे उस बिल या पुरजे का संबंध हो और तब उसका रुपया चुकावे।

(४४) उपमंत्री और सहायक मंत्री के कार्य्य और कर्तव्य—मंत्री की सहायता करना और उसकी अनुपस्थिति में उसके सब कार्य्यों को करना।

(४५) हिसाब जांचनेवालों को मंत्री का हिसाब जांचना होगा और उस पर अपनी सम्मति लिखनी होगी। हिसाब जांचनेवाले सभासदों के अतिरिक्त दूसरे सज्जन भी हो सकेंगे परंतु कोई पदाधिकारी अथवा प्रबंधकारिणी समिति का सभासद इस काम के लिये नहीं चुना जा सकता।

सभा के अधिवेशन।

(४६) साधारण सभा के अधिवेशन तीन प्रकार के होंगे।

१—नियत अधिवेशन।

२—विशेष अधिवेशन।

२—वार्षिक अधिवेशन।

(४७) नियत अधिवेशन के नियम—

१—कम से कम सात सभासदों के उपस्थित रहने पर सभा का कार्य्य किया जायगा।

२—सभापति की अनुपस्थिति में उपसभापति और उपसभापति की अनुपस्थिति में उपस्थित सभासदों में से कोई सभ्य सभापति चुन लिया जायगा।

३—प्रबंधकारिणी समिति को छोड़ कर प्रत्येक प्रस्ताव अथवा उसके सुधार पर जो साधारण अधिवेशन में विचारार्थ उपस्थित किया जाय जब तक वह अनुमोदित न हो विचार न किया जायगा।

४—जिस सभासद को किसी विषय का प्रस्ताव करना हो उसे चाहिए कि अपने प्रस्ताव को लिख कर ऐसे समय पर मंत्री के पास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि वह उसके पास सभा होने के कम से कम १० दिन पहले पहुँच जाय। मन्त्री उसकी सूचना सब स्थानिक सभासदों के पास भेज दिया करेंगा। आवश्यकीय प्रस्ताव जिनके दूसरे अधिवेशन तक टालने में हानि जान पड़ती है, उपस्थित सभासदों की अधिकांश सम्मति से तत्काल भी उपस्थित किए जा सकते हैं और उन पर विचार हो सकता है।

५—प्रत्येक सभासद को प्रत्येक प्रस्ताव पर एक ही बार बोलने का अधिकार होगा परन्तु सभापति चाहें तो फिर बोलने की आज्ञा दे सकते हैं।

६—प्रत्येक विषय पर सम्मति हाथ उठा कर, बोली द्वारा अथवा कागज पर लिख कर ली जायगी और निश्चय अधिक सम्मति से होगा।

७—जिस प्रस्ताव पर एक बेर विचार हो चुका हो वह सात सभासदों के अनुरोध करने पर पुनः दो अधिवेशनों के अनन्तर किसी अधिवेशन में विचारार्थ उपस्थित किया जा सकता है पर इसकी सूचना का पहले से देना आवश्यक होगा। किसी प्रस्ताव पर तीन बार विचार हो जाने के अनंतर वह फिर छ मास के पीछे प्रबंधकारिणी समिति के अनुरोध से विचारार्थ उपस्थित किया जा सकता है।

८—यदि ऐसे समय में जब कि न साधारण सभा और न प्रबंधकारिणी समिति हो सकती हो कोई कार्य्य अत्यन्त आवश्यक आ जाय तो मंत्री को अधिकार होगा कि सभापति द्वारा अथवा दोनों उपसभापतियों की सम्मति द्वारा उस कार्य्य का निर्वाह करें।

९—साधारण सभा में कार्य्य इस प्रकार होंगे।

क—कार्य्यविवरण का पढ़ा जाना और स्वीकृत होना।

ख—प्रबंधकारिणी समिति के कार्य्यविवरण का सूचनार्थ तथा उसके प्रस्तावों का विचारार्थ उपस्थित किया जाना।

ग—नए सभासदों के निवेदनपत्र या सभासदों के इस्तीफे आदि पर विचार होना।

घ—लेखों का सारांश पढ़ा जाना और आवश्यकतानुसार उन पर तर्क वा विवाद होना।

ङ—पत्रों तथा प्राप्त पुस्तकादि की सूची का उपस्थित किया जाना।

च—वक्तृता का होना।

१०—यदि कोई सभासद प्रबंधकारिणी समिति के किसी कार्य से असन्तुष्ट हो और अपना असन्तोष-प्रकाशक पत्र कम से कम पांच सभासदों से हस्ताक्षर करा के मंत्री के निकट भेजे तो उस पर साधारण सभा को विचार करना होगा और उसी की निश्चित वार्ता को प्रधानता दी जायगी। यह कार्य तभी होगा जब साधारण सभा में १५ वा उससे अधिक सभासद उपस्थित होंगे। इसकी सूचना प्रबन्धकारिणी सभा के सभासदों को विशेष रूप से देनी होगी।

(४८) सभापति, मंत्री, अथवा कोई पांच सभासद मंत्री के पास पत्र लिख कर किसी विशेष कार्य के लिये सभा का विशेष अधिवेशन नियत करा सकते हैं जिसमें उसी विशेष कार्य के अतिरिक्त और कोई कार्य न होगा। यदि मंत्री ऐसा न करे तो सभापति, दोनों उपसभापति या कोई सात सभासद अपने हस्ताक्षर से ऐसा अधिवेशन कर सकते हैं।

(४९) वार्षिक अधिवेशन के (जो अगस्त मास के पहिले शनिवार को हुआ करेगा) नियम—

१—२९ वें नियम के अनुसार पदाधिकारी तथा प्रबन्धकारिणी समिति के सभासदों का चुनाव, वार्षिक विवरण और वार्षिक आयव्यय का स्वीकृत होना, तथा इसके अतिरिक्त जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई और आवश्यक कार्य आ जाय उस पर विचार होना।

२—निर्वाचन का परिणाम देखने के लिये सभापति द्वारा दो सभासद उसी स्थान पर चुन लिये जांयगे।

३—१५ सभासदों के उपस्थित रहने पर वार्षिक अधिवेशन का कार्य किया जायगा।

४—यदि कार्य्यों की अधिकता वा कोरम न होने से सभा का अधिवेशन दूसरे दिन पर टल जायगा तो उपस्थित सभासदों की संख्या का विचार न करके नियत कोरम अर्थात् ७ सभासदों के उपस्थित रहने पर कार्य किया जायगा।

(५०) प्रबन्धकारिणी समिति वा साधारण सभा किसी विशेष कार्य के लिये सभासदों में से उपसमिति तथा उसका नियोजक नियत कर सकती है और उस उपसमिति के कर्तव्य भी वही निश्चय कर देगी। यह उपसमिति अपना निश्चय लिख कर उस सभा या उपसमिति में विचारार्थ उपस्थित करेगी जिसने उसे नियत किया होगा। ऐसी उपसमिति का अधिवेशन उसका नियोजक या कोई तीन सभासद कर सकते हैं।

(५१) प्रबन्धकारिणी समिति का अधिवेशन सभापति या मंत्री अथवा उस सभा के तीन सभासद आवश्यकतानुसार मंत्री द्वारा नियत करा सकते है।

बाहरी सभासदों की सम्मति।

(५२) बाहरी सभासदों की सम्मति निम्न लिखित अवस्थाओं में पत्र द्वारा ली जायगी—

१—जब प्रबन्धकारिणी समिति किसी विषय पर उनकी सम्मति लेना आवश्यक समझे।

२—जब कम से कम ७ सभासद ऐसा करने के लिये सभा से प्रार्थना करें और सभा उसे स्वीकार कर ले।

३—नियत समय तक जिन सभासदों की सम्मति आ जायगी उन्हीं पर निश्चय किया जायगा।

४—बाहरी अथवा अनुपस्थित सभासद सभा में उपस्थित तथा विचाराधीन विषयों पर अपनी सम्मति दे सकते हैं, यदि वे स्वयं उपस्थित हों अथवा एक आने का रसीदी टिकट लगा कर "प्रतिनिधिपत्र" द्वारा किसी सभासद को अपनी सम्मति देने के लिये नियत करें। परन्तु कोई एक सभासद पांच से अधिक सभासदों का प्रतिनिधि एक ही समय में न हो सकेगा। ये प्रतिनिधि पत्र सभा के मंत्री के पास अधिवेशन के २४ घंटा पूर्व आ जाने चाहिएँ।

स्थायी कोष।

(५३) काशी नागरीप्रचारिणी सभा के स्थायी कोष तथा उसकी स्थावर सम्पत्ति पर पूर्ण अधिकार बोर्ड आफ़ ट्रष्टीज़ को होगा। उनका यह कर्तव्य होगा कि इस कोष तथा सम्पत्ति से जो आय हो उसे नागरीप्रचारिणी सभा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये ही उस सभा की प्रबन्धकारिणी समिति द्वारा व्यय करे।

(५४) स्थायी कोष के मूल धन में से कोई अंश न व्यय किया जायगा जब तक प्रबंधकारिणी समिति के प्रस्ताव पर बोर्ड के सभासदों का ⅔ भाग वैसा करने की स्पष्ट आज्ञा और सम्मति न दे। इस सम्बन्ध में सम्मति पत्र द्वारा भी मान्य होगी।

(५५) बोर्ड आफ़ ट्रष्टीज़ के सभासद कम से कम ७ और अधिक से अधिक २५ होंगे। यावज्जीवन सभासद रहेंगे अथवा जब तक कि वे स्वयं उसे न छोड़ दें। नागरीप्रचारिणी सभा का मन्त्री बोर्ड का एक सभ्य और मंत्री होगा।

(५६) जब बोर्ड के या सभा के विचार से नए ट्रष्टियों का चुना जाना आवश्यक हो तो पहले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओं से बोर्ड और सभा की ओर से ट्रष्टी चुने जांयगे जिनकी संख्या अधिक से अधिक एक बेर तीन होगी।

(५७) यदि बोर्ड का कोई अधिकारी या सभासद कोई ऐसा कार्य करेगा जिससे सभा की हानि हो या उसका किसी प्रकार से उपहास हो तो वह विचारपूर्वक अपने पद से च्युत किया जायगा। जिस पर दोष लगाया जायगा उसे सुनना और अपनी सफाई करने का अवसर देकर इस सम्बन्ध का प्रस्ताव बोर्ड सभा के वार्षिक अधिवेशन में करेगी और निर्णय $\frac{2}{3}$ सम्मति से होगा।

(५८) बोर्ड अपना सभापति, दो उपसभापति और एक सहायक मन्त्री चुनेगी जो ३ वर्ष तक अपने पद का कार्य करेंगे तथा पुनः उस पद पर चुने जा सकेंगे।

(५९) सभापति और उनकी अनुपस्थिति में उपसभापति, सभापति का सब कार्य्य करेंगे और किसी विषय पर सम्मति का समविभाग होने पर उन्हें एक वोट और देकर उस विषय का निर्णय करने का अधिकार होगा।

(६०) सभापति और उपसभापति दोनों की अनुपस्थिति में उपस्थित सभासदों में से कोई महाशय सभापति चुने जांयगे और इन्हें भी सम विभाग होने पर एक वोट और देकर उस विषय का निर्णय करने का अधिकार होगा।

(६१) बोर्ड के साधारण अधिवेशन वर्ष में दो बेर अर्थात् आश्विन और चैत्र में होंगे परन्तु विशेष अधिवेशन सभापति अथवा मन्त्री कभी भी कर सकते हैं। किंतु तीन सभासदों के लिखने से ऐसा अधिवेशन अवश्य किया जायगा।

(६२) बोर्ड के साधारण अधिवेशनों की सूचना नियत तिथि के कम से कम १५ दिन पहले दी जायगी और उस अधिवेशन में कौन कौन कार्य होंगे इसकी सूचना भी दे दी जायगी। साधारण अधिवेशन में ३ और विशेष अधिवेशन में ५ सभासदों के उपस्थित रहने पर कार्य हो सकेगा परंतु यदि कोई अधिवेशन कोरम पूरा न होने के कारण न हुआ तो वह दूसरे दिन के लिये टाल दिया जायगा और उसमें दो सभासदों के उपस्थित रहने पर कार्य का निर्वाह किया जायगा। ऐसे अधिवेशन की सूचना केवल स्थानीय सभासदों को दी जायगी।

(६३) ट्रष्टीज़ को सभा सम्बन्ध में वे ही अधिकार रहेंगे जो नागरीप्रचारिणी सभा के प्रथम श्रेणी के सभासदों को उसके नियमानुसार प्राप्त हैं।

(६४) बोर्ड की साधारण सभाओं में अन्य आवश्यक कार्य्यों के अतिरिक्त निम्न लिखित कार्य्यों का निर्वाह करना होगा।

१—आडिटरों का चुना जाना—इनका अवधिकाल १ जुलाई से ३० जून पर्यंत होगा (चैत्र)

२—नागरीप्रचारिणी सभा की प्रबंधकारिणी समिति के स्थायी कोष संबंधी बजेट पर विचार (चैत्र)

३—स्थायी कोष की आय से जो जो कार्य हुए हैं, उनकी रिपोर्ट पर, जो प्रबंधकारिणी समिति प्रति वर्ष देगी, विचार (आश्विन)

४—सभासदों और कार्यकर्ताओं का चुनाव जब आवश्यक हो (चैत्र और आश्विन)

(६५) बोर्ड के अधिवेशनों का कार्य विवरण सभा की पत्रिका में छाप दिया जाया करेगा।

(६६) स्थायी कोष सम्बन्धी रुपए का लेन देन बोर्ड की आज्ञा के अनुसार होगा और उस संबंध के चिट्ठी पत्री या चेक आदि पर बोर्ड के सभापति तथा मंत्री दोनों के हस्ताक्षर होंगे।

(६७) इन नियमों में जब कभी कुछ परिवर्तन करने की आवश्यकता होगी तो बोर्ड के विशेष अधिवेशन में उस पर विचार होगा और परिवर्तन वार्षिक सभा की स्वीकृति से किया जायगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय।

(६८) सभा के पुस्तकालय का नाम आर्य भाषा पुस्तकालय है और इसके प्रबंध के लिये प्रबंधकारिणी समिति प्रति वर्ष अपने में से एक सभासद नियत कर दिया करेगी जो पुस्तकालय का निरीक्षक कहलावेगा।

(६९) पुस्तकालय की पुस्तकों और समाचार पत्रों को सर्वसाधारण पुस्तकालय में आ कर देख सकते हैं।

(७०) जो लोग आर्यभाषा पुस्तकालय के सहायक हुआ चाहें उन्हें निम्नलिखित आशय के आवेदनपत्र पर हस्ताक्षर करके निरीक्षक के पास भेजना चाहिए।

श्रीयुत निरीक्षक आर्यभाषा पुस्तकालय,
नागरीप्रचारिणी सभा,
काशी।

महाशय,

मैं आर्यभाषा पुस्तकालय का सहायक हुआ चाहता हूं। कृपा कर मेरा नाम सहायकों की नामावली में लिख लीजिए। मैं नागरीप्रचारिणी सभा का सभासद $\frac{\text{भी}}{\text{नहीं}}$ हूँ।

आपके नियमानुकूल ——— वार्षिक / मासिक चन्दा दूँगा और एक $\frac{\text{वर्ष}}{\text{मास}}$ का चन्दा भेजता हूँ।

भवदीय

ता० ——— } नाम ———
पता ———

जो लोग बाहर के चाहे वे सभासद हों या नहीं, पुस्तकालय के सहायक हुआ चाहें उन्हें ५) रुपया सभा के पास पेशगी जमा करना चाहिए। जब वे पुस्तकालय से संबंध छोड़ेंगे तो उन्हें यह रुपया लौटा दिया जायगा।

(७१) जो लोग नागरीप्रचारिणी सभा के सभासद नहीं हैं उन्हें आवेदन पत्र काशी नागरीप्रचारिणी सभा के एक सभासद से हस्ताक्षर कराके भेजना चाहिए। यदि ऐसे व्यक्ति का परिचय किसी सभासद से न होगा तो उसे ५) रु० जमानत की भाँति जमा करना होगा जो पुस्तकालय से संबंध छोड़ने पर उसे लौटा दिया जायगा।

(७२) जो महाशय इस पुस्तकालय के सहायक होंगे उन्हें कम से कम ।) मासिक या ३) वार्षिक देना होगा।

(७३) जो लोग ।) मासिक या ३) वार्षिक देंगे उन्हें केवल एक पुस्तक और एक समाचारपत्र पढ़ने के लिये मिल सकेगा। जो लोग ।) मासिक अथवा ६) वार्षिक देंगे उन्हें दो पुस्तकें और दो समाचारपत्र एक साथ मिल सकेंगे और जो लोग १) मासिक या १२) वार्षिक देंगे उन्हें ३ पुस्तकें और ३ समाचारपत्र दिए जा सकेंगे।

(७४) जिन सहायकों के यहाँ पुस्तकालय का तीन मास का चंदा बाकी पड़ जायगा अथवा जो वर्ष प्रारंभ होने के तीन मास के अंदर अपना वार्षिक चंदा न दे देंगे उनका नाम सहायकों की नामावली से काट दिया जायगा।

(७५) प्रत्येक पुस्तक अधिक से अधिक ७ दिन के लिये दी जा सकेगी परंतु यदि और कोई सहायक उस पुस्तक को न चाहेगा तो वह पुस्तक उसी सहायक को मिल सकेगी।

(७६) दैनिक पत्र तीन दिन तक, साप्ताहिक एक सप्ताह तक, पाक्षिक एक पक्ष तक और मासिक एक मास तक पुस्तकालय में रहने को दिए जा सकेंगे। विदित रहे कि दैनिक एक दिन, साप्ताहिक दो दिन, पाक्षिक तीन दिन और मासिकपत्र एक सप्ताह के पीछे लौटा देने चाहिएँ।

(७७) जो महाशय कोई पुस्तक लो देंगे और दूसरी पुस्तक मंगा देनी होगी अथवा डाकखर्च

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका मूल्य देना होगा और जो बिगाड़ उन्हें उसे ठीक करवा या बदलवा देना होगा।

(७८) हाथ की लिखी, अंग्रेजी विभाग की अप्राप्य पुस्तकें पुस्तकालय के बाहर किसी न दी जाँयगी जब तक कि प्रबंधकारिणी समिति की विशेष आज्ञा किसी महाशय के लिये हो। ऐसी पुस्तकों पर सूची में चिह्न रहेगा।

(७९) सहायकों के अतिरिक्त और किसी को पुस्तक या पत्र घर ले जाने को नहीं दिया जायगा परंतु प्रबंधकारिणी समिति को अधिकार होगा कि किसी ऐसे पुरुष को जो सहायक न हो पुस्तक ले जाने की आज्ञा दे। जो ग्रंथ वा लेख लिखने के लिये पुस्तकों की आवश्यकता चाहेंगे उन्हें प्रबंधकारिणी समिति नियत संख्या से अधिक पुस्तकें भी एक साथ ले जाने की आज्ञा दे सकेगी।

(८०) यह पुस्तकालय सर्वसाधारण के लिये पहली अप्रैल से ३० सितम्बर तक प्रातः ६ बजे से ९ बजे तक और सायंकाल ३॥ बजे से ७ बजे तक और १ अक्तूबर से ३१ मार्च तक प्रातःकाल ७ बजे से १०॥ बजे तक और सायंकाल २॥ बजे से ७ बजे तक खुला रहेगा।

(८१) पुस्तकालय के नियमों में यथासमय घटाने बढ़ाने का अधिकार प्रबंधकारिणी समिति को होगा।

संबद्ध सभाएँ।

(८२) इस सभा के समान उद्देश्य रखनेवाली सभाओं का संबंध इस सभा से हो सकेगा।

(८३) जो सभाएँ इस सभा से संबंध स्थापित करना चाहें उन्हें इस विषय का आवेदन अपनी नियमावली तथा पदाधिकारियों के नाम सहित इस सभा के पास भेजना चाहिए। यह पत्र प्रबंधकारिणी समिति में उपस्थित किया जायगा और उसके स्वीकार करने पर संबंध स्थापित किया जायगा।

(८४) संबद्ध सभाओं को सभा की पत्रिका बिना मूल्य दी जायगी तथा अन्य पुस्तकें आदि वे उसी मूल्य पर पा सकेंगी जिस पर वे सभा के सभासदों को प्राप्य होंगी।

(८५) संबद्ध सभाओं को कोई ऐसा कार्य न करना चाहिए जो काशी नागरीप्रचारिणी सभा के उद्देशों के विरुद्ध हो वा जिससे इस सभा को हानि पहुँचे। यदि वे ऐसा करेंगी तो यह सभा उनसे अपना संबंध तोड़ लेगी।

(८६) संबद्ध सभाओं को उचित है कि यदि वे कोई ऐसा कार्य करें जिससे उनके नगर के अतिरिक्त और स्थानों से भी संबंध हो तो इस सभा को उसकी सूचना देदें।

हिंदी-हस्तलिपि-परीक्षा।

(८७) पारितोषिक और प्रशंसापत्र वितरित करने के लिये हिंदी-हस्तलिपि की परीक्षा संयुक्त प्रदेश के समस्त वर्नाक्यूलर स्कूलों में काशी नागरी प्रचारिणी सभा की ओर से शिक्षा-विभाग द्वारा हुआ करेगी। लड़कियाँ भी इस परीक्षा में सम्मिलित हो सकती हैं।

(८८) (क) मिडल विभाग के लड़कों को अपनी हस्तलिपियाँ छोटे अक्षरों में लिखनी होंगी अर्थात् उनके अक्षर इञ्च के $\frac{1}{8}$ भाग से बड़े न हों [नमूने के लिए (अ) देखो]। (ख) अपर प्रायमरी विभाग के लड़कों को अपनी हस्तलिपियां मध्यम आकार के अक्षरों में लिखनी होंगी अर्थात् अक्षर इञ्च के $\frac{1}{4}$ और $\frac{1}{8}$ भाग के बीच में हों [नमूने के लिये (इ) देखो] (ग) लोअर प्रायमरी और प्रिपरेटरी विभाग के लड़कों को अपनी हस्तलिपियां बड़े अक्षरों में लिखनी चाहिएँ, अक्षर इञ्च के $\frac{1}{4}$ भाग से छोटे न हों [नमूने के लिये (उ) देखो]।

(८९) निम्नलिखित पारितोषिक और प्रशंसापत्र प्रति वर्ष तीनों विभाग के बालकों में वितरित होंगे—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क—मिडिल विभाग—५), ४) और ३) रु० के तीन पारितोषिक और ६ प्रशंसापत्र तथा एक एक रुपए की पुस्तकें।

ख—अपर प्रायमरी विभाग—५), ३) और २) रु० के तीन पारितोषिक और ५ प्रशंसापत्र तथा एक एक रुपए की पुस्तकें।

ग—लोअर प्रायमरी और प्रिप्यरेटरी विभाग—४) रु० का एक और दो दो रुपए के दो पारितोषिक और ४ प्रशंसापत्र तथा एक एक रुपए की पुस्तकें।

(९०) हस्तलिपि सफेद फुलसकेप कागज़ के आधे ताव पर लिखी हो और नामादि को छोड़ कर जो उसी आधे ताव के ऊपरी भाग में हों, बड़े अक्षरों में ६ पंक्ति, मध्यम अक्षरों में १० पंक्ति और छोटे अक्षरों में १५ पंक्ति से अधिक न लिखी होनी चाहिए।

(९१) हस्तलिपि कागज़ के एक ही ओर लिखी हो और उसमें न किसी प्रकार के बेल बूटे बने हों और न काले अथवा ब्लूब्लाक रंग की स्याही को छोड़ कर और किसी रंग की स्याही से लिपि लिखी हो।

(९२) प्रत्येक बालक को (१) अपना पूरा पूरा नाम (२) क्लास (३) स्कूल का नाम (४) तहसील और (५) ज़िला लिखना चाहिए।

(९३) कोई हस्तलिपि पर जो ठीक इन नियमों के अनुसार न लिखी होगी, विचार न किया जायगा।

(९४) इस बात पर पूरा ध्यान रखना चाहिए कि हस्तलिपियां स्वयं बालकों ही द्वारा लिखी गई हों।

(९५) प्रत्येक विभाग के असिस्टेण्ट इंसपेक्टरों को लोअर प्रायमरी, अपर प्रायमरी और मिडिल विभाग के बालकों की लिखी हस्तलिपियों में से प्रत्येक विभाग की ५ सब से अच्छी लिपियां चुन कर और उन्हें अलग अलग योग्यतानुक्रम से लगा कर प्रति वर्ष फरवरी मास की समाप्ति के पूर्व बनारस विभाग के असिस्टेण्ट इंस्पेक्टर के पास भेजनी चाहिएँ।

(९६) बनारस विभाग के असिस्टेण्ट इंसपेक्टर इन सब लिपियों को पारितोषिक और प्रशंसापत्र वितरण करने के लिये काशी नागरी प्रचारिणी सभा के मन्त्री के पास भेज देंगे।

(९७) सभा एक कमेटी नियत करेगी जिसके सभासद तीन से कम और पांच से अधिक न होंगे। इनमें से बनारस विभाग के असिस्टेण्ट इंसपेक्टर और सभा के मंत्री अवश्य सभासद होंगे।

(९८) इस कमेटी का यह कर्तव्य होगा कि सब हस्तलिपियों पर ध्यानपूर्वक विचार करे और एक संक्षिप्त विवरण के साथ सभा को मिडिल विभाग से नौ, अपर प्रायमरी विभाग से ८ और लोअर प्रायमरी विभाग से ७ सब से श्रेष्ठ लेखकों के नाम की सूचना दे।

हिन्दी लेखों पर चांदी का पदक।

(९९) हिंदी लेखकों के उत्साहवर्द्धनार्थ सभा की ओर से दो चांदी के पदक प्रति वर्ष दिए जांयगे—एक विज्ञान विषयक लेख के लिये "रेवाँ पदक" और दूसरा अन्य साधारण (विज्ञान विषय के लिये "राधाकृष्णदास पदक"।

(१००) विषय प्रति वर्ष जनवरी मास में नियत किए जांयगे। अनुवाद अथवा छपे हुए लेख स्वीकार न किए जांयगे।

(१०१) सब लेख प्रति वर्ष ३१ दिसम्बर को नागरीप्रचारिणी सभा के मंत्री के नाम से आ चाहिएँ और उनमें जहां से कुछ उद्धृत किया गया हो उसका पूरा ब्योरा दिया रहना चाहिए।

(१०२) लेख का विस्तार ५०० श्लोकों की संख्या से कम न होना चाहिए। प्रति श्लोक ३२ अक्षरों का माना जायगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१०३) प्रति लेख पर ये बातें लिखी रहनी चाहिएँ—

(१) लेखक का पूरा नाम (२) वयस (३) अन्तिम परीक्षा जो पास की हो (४) अन्तिम परीक्षा के पास करने का सन् (५) आधुनिक पता और (६) पूरा पता।

(१०४) कोई पुरुष लेख लिख कर सभा के पास भेज सकता है।

(१०५) प्रति लेख पर इस बात के सार्टिफ़िकेट सहित कि वह लेख वास्तव में उस लेखक का लिखा हुआ है (१) उस कालेज के प्रिंसपल से जहाँ से उसने परीक्षा पास की हो (२) उस दफ़्तर के अधिकारी का जहां लेखक काम करता हो (३) अथवा उस नगर के, जहां वह रहता हो, किसी प्रतिष्ठित पुरुष का हस्ताक्षर होने के तब उसे भेजना चाहिए।

(१०६) उन लेखकों को, जो पदक न पावेंगे प्रशंसापत्र दिए जांयगे, यदि उनके लेख इस योग्य समझे जांयगे।

(१०७) वे सब लेख जो सभा द्वारा स्वीकृत हों सभा की पत्रिका में अथवा अन्य किसी पत्र में जिसमें सभा उन्हें छपवाना उचित समझेगी, छपे जांयगे।

(१०८) यदि किसी वर्ष कोई लेख पदक के योग्य प्रशंसापत्र के योग्य न समझा जायगा तो पदक और प्रशंसापत्र दूसरे वर्ष दिए जांयगे।

(१०९) एक कमेटी प्रति वर्ष ५ पुरुषों की बनाई जायगी जो सब लेखों पर विचार कर सभा को उन लेखकों के नाम की सूचना देगी, जो पदक अथवा प्रशंसापत्र पाने के योग्य होंगे।

स्फुट।

(११०) सभा का कम से कम एक मुखपत्र होगा जो नियत समय पर प्रकाशित होगा।

(१११) सभा की ओर से जब कभी उपदेशक, डेपुटेशन या एजेण्ट बाहर भेजे जांयगे तो उन्हें सभापति और मंत्री दोनों के हस्ताक्षर से अधिकारसूचक पत्र दिया जायगा जिसके बिना उन्हें सभा की ओर से कुछ कार्य करने वा धन एकत्रित करने का अधिकार न होगा।

(११२) दर्शकों को बिना सभापति की आज्ञा के विषय चुनने वा नियमादि बनाने में सम्मति देने का अधिकार न होगा।

(११३) जो सभासद सभा के किसी कार्य पर कुछ मासिक वेतन देकर नियत किए जांयगे उन्हें निज सम्बन्धी विषय पर सम्मति देने या प्रबन्धकारिणी समिति के सदस्य होने का अधिकार न होगा।

(११४) जो पुस्तक या लेख आदि सभा निज व्यय से प्रकाशित करेगी उसके संबंध में लेखक से शर्तें निश्चित करने का प्रबन्धकारिणी समिति को पूर्ण अधिकार होगा।

(११५) प्रत्येक सभासद और पदाधिकारी को चाहिए कि इन नियमों के अनुसार बर्ताव करे। किसी के ऐसा न करने पर प्रबन्धकारिणी समिति उस पर बिचार करेगी।

(११६) जब कभी किसी नियम का परिवर्तन होगा तो प्रत्येक सभासद को सभा की पत्रिका द्वारा उसकी सूचना दी जायगी।

(११७) सभा का एक सहायक मंत्री वेतनभुक्त होगा जिसका कार्य्य सभा के कार्य्यालय की देख भाल रखना और सभा के सब कामों को मंत्री या उपमंत्री के आदेशानुसार करना होगा।

(११८) सभा के आयव्यय का हिसाब प्रतिमास नागरी प्रचारिणी पत्रिका में छपा करेगा।

(११९) सभा के सब सभासदों को, चाहे वे प्रबंधकारिणी समिति के सभ्य हों वा नहीं, सभा के सब लिखित पत्रों को देखने तथा लिपि लेने और सभा के सब छपे हुए पत्रों को देखने तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खरीदने का अधिकार है परन्तु उन्हें इनके छापने छपवाने वा सभासदों के अतिरिक्त अन्य किसी को दिखलाने का अधिकार उस समय तक न होगा जब तक कि वे प्रबन्धकारिणी समिति से इस संबंध में आज्ञा न प्राप्त कर लें।

(१२०) सभासदों को जिन पत्रों के देखने की आवश्यकता हो उनके लिये मंत्री को सूचना देने पर वे उन्हें पंद्रह दिन के भीतर दिखला दिए जांयगे पर जो पत्र आगामी सभा के कार्यविवरण से सम्बन्ध रखता हो वह अधिक से अधिक दो दिन में दिखला दिया जायगा।

(१२१) सभा को आवश्यकतानुसार इन नियमों के घटाने बढ़ाने का अधिकार होगा।

विशेष।

ये संशोधित नियम तारीख १ सितंबर सन् १९१७ से प्रचलित हो गए हैं।

सम्पादक का निवेदन।

इधर संपादक के परिवर्तन, छापेखाने के बदले जाने, कागज की महँगी इन कई कारणों से पत्रिका के प्रकाशित होने में बहुत विलंब हो गया और एक साथ चार संख्याएँ प्रकाशित करने पर भी अभी तक पत्रिका ५ मास पिछड़ी हुई है तथा कई सूचनाएँ जो फर्वरी मास में प्रकाशित होनी चाहिएँ थीं अब प्रकाशित हो सकीं जैसे कि "अष्टम हिन्दी साहित्य सम्मेलन" का पत्र सम्मेलन होने के पूर्वही प्रकाशित होना उचित था पर वह छप जाने पर भी अब प्रकाशित हो सका जिस से इसकी उपयोगिता जाती रही। आशा है कि इन अनिवार्य्य कारणों से पत्रिका के प्रकाशित होने में जो विलंब हुआ है उसे सभासद गण क्षमा करेंगे। ऐसा उद्योग किया जा रहा है कि इसके अनन्तर छः संख्या एक साथ प्रकाशित कर पत्रिका जुलाई मास के पूर्वही सभासदों की सेवा में भेजी जाय और फिर अगले वर्ष से (यदि अन्य कोई अनिवार्य्य बाधा उपस्थित न हो तो) ठीक समय पर पत्रिका प्रकाशित हो सकेगी पर इसमें सभा के सभासदों की सहायता की भी अपेक्षा है। इनमें से बहुत से सज्जन हिंदी के विद्वान और सुलेखक हैं! वे यदि चाहें तो सभा ही में पत्रिका को अच्छे लेखों से सुशोभित और अलंकृत कर सकते हैं। वे सज्जन यदि कृपा कर केवल एक एक फार्म के लेखों से भी सहायता करेंगे तो फिर पत्रिका के विलंब से प्रकाशित होने की शिकायत नहीं रह जायगी। आप लोगों को विदित है कि सभा ने कई उपयोगी कार्य्य उठाए हुए हैं और इनमें जितने द्रव्य की आवश्यकता है वह प्राप्त नहीं हो रहा है तो भी ज्यों त्यों सभा के कार्य्यकर्ता दृढ़ परिश्रम और अध्यवसाय से दिनों दिन सभा की उन्नति करते जाते हैं। इस अवस्था में पत्रिका के लिए सुयोग्य वैतनिक संपादक रखने में जितना व्यय पड़े उतना सभा उठा नहीं सकती, इसीलिए अवैतनिक संपादकों से काम चलाना पड़ता है और वे अपने कर्तव्य को तभी पूरा कर सकते हैं जब अन्य हिंदी प्रेमी सुलेखक लेखों द्वारा उनकी सहायता करके उनका हाथ बँटावें। जो हिंदी लेखक अपने विचार किसी प्रसिद्ध पत्रिका द्वारा हिंदी जगत में प्रगट करना चाहते हैं उनके लिए पत्रिका एक अच्छा और सुगम मार्ग है। इतिहास, विज्ञान तथा प्राचीन और वर्तमान साहित्य सम्बन्धीय लेखों द्वारा यदि हिंदी प्रेमी पत्रिका की सहायता करेंगे तो इसके अभावों की पूर्ति होने में विलंब न लगेगा।

पत्रिका को शीघ्र प्रकाशित करने की चेष्टा में प्रूफ इत्यादि की कई भूलें भी रह गई हैं, जिसकी आशा है कि पाठकगण क्षमा करेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभा का कार्य्य-विवरण ।

प्रबंध कारिणी समिति ।

ता० ३० अक्तूबर १९१७-सन्ध्या के ५ बजे

स्थान—सभा भवन ।

(१) गत अधिवेशन (ता० ७ सितंबर १९१७) का कार्य विवरण पढ़ा गया ।

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय ।

(२) बाबू ब्रजराज दास का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि मनोरंजन पुस्तकमाला के परिवर्तन में उन्होंने जो लीडर देना स्वीकार किया है उस संबंध में वे अब तक की प्रकाशित पुस्तकें नहीं खरीद सकते ।

निश्चय हुआ कि सभा इस संबंध में अपने पहले निश्चय पर स्थिर है ।

(३) बम्बई के मारवाड़ी विद्यालय का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें बिना मूल्य माँगी थीं ।

निश्चय हुआ कि मनोरंजन पुस्तकमाला और हिंदी शब्द सागर को छोड़ कर अन्यान्य पुस्तकें उन्हें अर्द्ध मूल्य पर दी जायँ ।

(४) बाबू हरनारायण जी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने वृंद कवि की यमक सतसई, पवन पचीसी, हितोपदेशाष्टक, बचनिकासव्य यमक' तथा अंत्याक्षर दोहे नामक पुस्तकों को सभा द्वारा प्रकाशित कराने के लिये लिखा था ।

निश्चय हुआ कि इन पुस्तकों के मँगवाने का प्रयोग किया जाय और वे मनोरंजन पुस्तक माला के सम्पादक के पास भेज दी जांय ।

(५) हिंदी शब्द-सागर मनोरंजन पुस्तकमाला तथा अन्य पुस्तकों की छपाई आदि के मद्धे सभा को जो देना है उसका ब्योरा उपस्थित किया ।

निश्चय हुआ कि जिस विशेष अधिवेशन में बाबू श्याम सुंदर दास जी उपस्थित हों उसी में यह उपस्थित किया जाय ।

(६) बाबू शिव प्रसाद गुप्त का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि उन्हें अधिकतर काशी के बाहर रहना पड़ता है अतः उनके स्थान पर बाबू बाँके बिहारी यदि पुस्तकालय के निरीक्षक चुन लिए जाँय तो अच्छा हो।

निश्चय हुआ कि बाबू शिव प्रसाद गुप्त का त्याग-पत्र स्वीकार किया जाय और पं० गोविंद राव जोगलेकर जी उनके स्थान पर निरीक्षक चुने जाँय ।

(७) बाबू राधाकृष्णदास रचित पद्मावती नाटक को प्रकाशित करने के संबंध में लहरी प्रेस के अध्यक्ष का ११ सितंबर का पत्र बाबू राधाकृष्णदास जी के दानपत्र के सहित उपस्थित किया गया ।

निश्चय हुआ कि वसीयतनामे की एक प्रतिलिपि लहरी प्रेस के अध्यक्ष को भेज दी जाय ।

(८) पंडित रामनारायण मिश्र का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने पूछा था कि सुबोध व्याख्यान के लिये बाहर के कुछ सज्जन मार्ग व्यय दे कर बुलाए जाँय अथवा नहीं ।

निश्चय किया गया कि बाहर के सज्जनों को बुलानेके लिये २५) का व्यय स्वीकार किया जाय और इसके लिये विशेष चन्दा एकत्रित किया जाय ।

(९) संयुक्त प्रदेश की हिन्दी हस्तलिपि परीक्षा के पर्चे उपस्थित किए गए ।

निश्चय हुआ कि इसके लिये बाबू अमीर सिंह, बाबू जगन्नाथदास बी० ए० और बाबू बाँके बिहारी बी० एस०सी की एक सब कमेटी बना दी जाय और बाबू जगन्नाथदास जी इसके संयोजक रहें ।

(१०) बाबू बेणीप्रसाद का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि पुस्तकालय के अंग्रेजी विभाग की अलमारियों की ताली निरीक्षक महोदय के पास रहने से पुस्तक देखने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वालों को बड़ी असुविधा होती है साथ ही इस संबंध में बाबू शिवप्रसाद गुप्त का १० जून का पत्र और पंडित रामचंद्र शुक्ल आदि सज्जनों के दो पत्र उपस्थित किए गए ।

निश्चय हुआ कि बाबू बेणी प्रसाद जी का पत्र नवीन निरीक्षक महोदय की सेवा में भेजा जाय । अंग्रेज़ी पुस्तकों का प्रबन्ध भी निरीक्षक महाशय के ही अधीन रहे और वे शीघ्र इसकी एक सूची बनवा कर आवश्यकतानुसार पुस्तकें दिए जाने का नियमानुसार प्रबन्ध कर दें ।

पंडित रामचन्द्र शुक्लादि के १२ अक्टूबर १९१७ के पत्र के सम्बन्ध में समिति को हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं है ।

(११) बाबू पुरुषोत्तम दास टंडन का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि प्रयाग की नागरीप्रवर्द्धिनी सभा को नागरी-प्रचारिणी पत्रिका बिना मूल्य नहीं दी जानी चाहिए ।

निश्चय हुआ कि पत्रिका बिना मूल्य न दी जाय।

(१२) बाबू गौरी शंकर प्रसाद जी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि बाबू हरिहरनाथ, लाला भगवान दीन और बाबू गोपाल दास ने सभा को जिन पुस्तकों के देने के लिये लिखा है उनमें से विनय पत्रिका तथा तुलसी शिक्षावली ले ली जाय पर इस सम्बन्ध में जो शर्तें लगाई हैं उन्हें सुधारने की आवश्यकता है ।

बाबू हरिहर नाथ जी ने सूचना दी कि वे बाबू गौरीशंकर प्रसाद जी की शर्तों पर पुस्तकें देना स्वीकार नहीं कर सकते ।

अतएव इस संबंध में विचार करने की आवश्यकता नहीं रही ।

(१३) बाबू जीवराखन लाल का पत्र उपस्थित किया गया जिस में उन्होंने पूछा था कि क्या सभा उनकी संततिरत्ननामक पुस्तक की प्रतियां लागत के दाम पर खरीद सकती है ।

निश्चय हुआ कि पुस्तक की एक प्रति मँगवा कर पंडित रामनारायण मिश्र के पास सम्मति के लिये भेजी जाय ।

(१४) बांदा की व्यापारी सभा का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि सभा इस बात का उद्योग करे कि म्यूनिसिपेलिटी के सब फ़ार्मों में अंगरेजी और उर्दू के साथ ही साथ हिन्दी भी छपा करे ।

निश्चय हुआ कि यह पत्र गोसाँई रामपुरी जी के पास सम्मति के लिये भेजा जाय ।

(१५) जूलाई १९१७ से सितम्बर १९११ तक का सिहाब नीचे लिखे अनुसार पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ ।

जमा ।

१७२९ ।॥)७	बचत
१७२८॥=)।	अमानत
५।॥≡)॥	नागरी प्रचार
४०)	पारितोषिक
१९३)	पुस्तकालय
१०००)	हिन्दी पुस्तकों की खोज
२२३॥≡)॥	पुस्तकों की बिक्री
१९।≡)	पुस्तकों के लिये पुरस्कार
१११॥।)	पृथ्वीराज रासो की बिक्री
३२॥)	फुटकर आय
८९॥=)।	भारतेंदु ग्रंथावली की बिक्री
२०८६।-)॥	मनोरंजन पुस्तक माला
११४॥≡)	सभासदों का चंदा
१०६०।)	हिन्दी कोश
२०॥≡)॥	डाक-व्यय का फिरता
८४५६।≡)१	

खर्च ।

१०५०-)॥	अमानत
३९८-)॥।	कार्यकर्ताओं का वेतन,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१०।८=) छपाई
(२४॥।) नागरी प्रचार
(१०) पारितोषिक
(६॥।=)।।। पुस्तकालय
(११६) हिन्दी पुस्तकों की खोज
(२) पुस्तकों की विक्री में व्यय
(३॥।-)।।। फुटकर व्यय
(४।-)।।। भारतेंदु ग्रंथावली
(८) विशेष व्यय
(११।।-)।।। मनोरंजन पुस्तकमाला
(१२७॥।)। हिन्दी कोश

६९९९॥।)।
१४५६।।=)१० बचत

८४५६।≡)१

बचत का ब्योरा

(४३≡)।। रोकड़ सभा
(१६१।।≡) बनारस बंक (चलता खाता)
(१०००) बनारस बैंक (फ़िक्स डिपाजिट)
(२५२)१ पोस्ट आफ़िस सेविंग बैंक

१४५६।।।=)१०

(१६) बाबू लाल जी महरोत्रा का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने विद्यार्थियों के लिये मनोरंजन पुस्तकमाला के मूल्य में कमी करने के लिये लिखा था।

निश्चय हुआ कि मूल्य में कमी नहीं की जा सकती।

(१७) संयुक्त प्रदेश के शिक्षा विभाग के डाइरेक्टर का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि हिन्दी पुस्तकों की खोज के विषय में सन् १९१२-१९१४ की रिपोर्ट की छपाई पुस्तक की समाप्ति के पूर्व हाथ नहीं लगाया जायगा। इस बीच में सभा रिपोर्ट की अंग्रेजी तथा क्रम आदि को ठीक करवा दे और इसके हो जाने पर उन्हें इसकी सूचना दे।

निश्चय हुआ कि पंडित रामनारायण मिश्र जी से प्रार्थना की जाय कि वे कृपापूर्वक इस रिपोर्ट को ठीक कर दें।

(१८) बनारस म्युनिसिपल बोर्ड के एक्जिक्युटिव आफिसर का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने सूचना दी थी कि म्युनिसिपेलिटी की नियमावली हिन्दी में भी तैयार कराई जा रही है।

(१९) बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि सभा भवन की मरम्मत और सफ़ाई के लिये ५०) स्वीकार किया जाय।

निश्चय हुआ कि इसके लिये २५) रु० स्वीकार किया जाय।

(२०) पण्डित सांवल जी नागर और पं० केदारनाथ पाठक का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रस्ताव किया था कि नागरी प्रचारिणी पत्रिका मासिक के स्थान पर त्रैमासिक कर दी जाय और उसमें खोज विषयक वैज्ञानिक तथा ऐतिहासिक लेख प्रकाशित किए जांय।

निश्चय हुआ कि जिस विशेष अधिवेशन में बाबू श्याम सुन्दर दास जी उपस्थित हों उसी में यह उपस्थित किया जाय।

(२१) पं० सांवल जी नागर का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रस्ताव किया था कि बनारस म्युनिसिपेलिटी से जो रसीदें तथा सूचना आदि निकलती हैं वे प्रायः हिन्दी में नहीं होतीं अतः इस विषय की ओर बोर्ड का का ध्यान दिलाने के लिये सभा का एक डेप्युटेशन म्युनिसिपल बोर्ड के चेयरमेन की सेवा में भेजा जाय।

निश्चय हुआ कि यह पत्र राय बहादुर बाबू रविनन्दन प्रसाद जी के पास उचित कार्यवाई के लिये भेजा जाय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२२) संयुक्त प्रदेश के पोस्ट मास्टर जनरल का २० सितम्बर १९१७ का पत्र नंबर एन० आर० ३९५ उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि समाचार पत्रों के प्रबंधकर्त्ताओं से कहा जाय कि वे ग्राहकों के पते पर नगरों के नाम सदैव अंग्रेजी में छपवाया करें।

निश्चय हुआ कि सभा से जो पेकट भेजे जाते हैं उन पर पते पूर्ववत नागरी ही में रहा करें।

(२३) पं० नाथूलाल शर्म्मा का पत्र उपस्थित किया गया जिस में उन्होंने महाविद्यालय ज्वालापुर के लिये मनोरंजन पुस्तकमाला रियायती मूल्य में दिए जाने के लिये लिखा था।

निश्चय हुआ कि नियमानुसार स्थायी ग्राहक होजाने पर माला की पुस्तकें उन्हें ¾ मूल्य पर मिल सकेंगी।

(२४) श्रीकर्मवीर गांधी पुस्कालय केसरिया जि० चम्पारन का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने नागरीप्रचारिणी पत्रिका बिना मूल्य तथा अन्य पुस्तकें अर्द्ध मूल्य पर माँगी थीं। निश्चय हुआ कि पत्रिका और पुस्तकें उन्हें अर्द्ध मूल्य पर दी जांय।

(२५) पुस्तकालय के अंग्रेजी विभाग से पं० देवीप्रसाद उपाध्यायजी ने नेपाल के इतिहास समबन्धी एक पुस्तक मांगी।

निश्चय हुआ कि यह उन्हें दी जाय।

(२६) बाबू शिवप्रसाद गुप्त का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया गया कि मंत्री या उपमंत्री की स्वीकृति के बिना कोई बिल चुकतो न किया जाय और बोर्ड आफ़ ट्रस्टीज़ की विशेष आज्ञा के बिना कोई ऋण न लिया जाय अथवा उधार कोई कार्य न कराया जाय।

निश्चय हुआ कि बाबू श्यामसुंदर दास जी से प्रार्थना की जाय की वे ८ तारीख से पूर्व अथवा १६ ता० के अनंतर किसी दिन काशी आवें तो प्रबन्धकारिणी समिति का एक विशेष अधिवेशन इस प्रश्न पर विचार करने के लिये कर लिया जाय। वे अपने आगमन की सूचना कृपापूर्वक पहले से दे दें।

(२७) इण्डियन प्रेस का १३ अक्टूबर का पत्र पत्रिका शब्दसागर आदि की छपाई के सम्बन्ध में उपस्थित किया गया।

निश्चय हुआ कि बाबू श्याम सुंदर दास जी के सम्मुख ही यह प्रबंधकारिणी समिति में उपस्थित किया जाय।

(२८) ता० ७ सितम्बर सन् १९१७ के निश्चय नं० ४ के अनुसार उन पुस्तकों का विवरण उपस्थित किया गया जिनकी प्रतियां अब सभा में नहीं रह गई हैं।

निश्चय किया गया कि यह भी बाबू श्यामसुंदरदास जी के सम्मुख उपस्थित हो।

(२९) पण्डित राधा कुमार व्यास का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि गद्यकाव्यमीमांसा को उन्होंने छपवाया है और सभा उसे न छपवावे।

निश्चय हुआ कि यह बाबू गौरी शंकर प्रसाद जी के पास सम्मति के लिये भेजा जाय।

(३०) बाबू देवनन्दन सिंह का प्रार्थना-पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रार्थना की थी कि जुलाई १९१७ में ५ दिन की अनुपस्थिति तथा सितंबर १९१७ में उनकी बीमारी का जो वेतन काट लिया गया था वह उन्हें दिया जाय।

मंत्री जी के विशेष अनुरोध पर निश्चय हुआ कि बीमारी का १२ दिन का वेतन दिया जाय।

(३१) निश्चय हुआ कि कार्य्यालय में पुस्तकों के सुरक्षित और नियमपूर्वक रखने के लिये २५) रु० तक का व्यय स्वीकार किया जाय।

(३२) निश्चय हुआ कि किसी कार्यकर्त्ता को मास की समाप्ति के पूर्व वेतन का कोई अंश न दिया जाय। (बाबू हरिहर नाथ जी ने इस निश्चय का विरोध किया था)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३३) ऊपर लिखे हुए कार्यों में से नं० १, २, ३, ५, ६, ७, ८, ९, १०, ११, १२, १३, १९, २४ और २६ को करने के उपरांत निश्चय हुआ कि शेष कार्यों के लिये समिति का अधिवेशन अगले ता० ३१ अक्तूबर को सन्ध्या के ५½ बजे पुनः किया जाय।

प्रबन्धकारिणी समिति।

बुधवार ता० ३१ अक्तूबर १९१७ सन्ध्या के ५½ बजे

स्थान—सभा-भवन।

तारीख ३० अक्तूबर १९१७ में लिखे हुए विषयों में से नं० ४, १४, १५, १६, १७, १८, २०, २१, २२, २३, २७, २८ २९, ३०, ३१ और ३२ के सम्बन्ध में आज विचार किया गया और उनपर जो निश्चय हुआ वह तारीख ३० अक्तूबर के विवरण में ही लिख दिया गया है।

प्रबन्धकारिणी समिति।

मंगलवार ता० ४ दिसंबर १९१७ सन्ध्या के ५ बजे

स्थान—सभा भवन।

(१) गत अधिवेशनों (८ तारीख ३० और ३१ अक्तूबर १९१७) के कार्य विवरण पढ़े गए।

(२) हिंदी शब्दसागर, मनोरंजन पुस्तकमाला तथा अन्य पुस्तकों की छपाई आदि के मद्धे सभा को जो देना है उसका ब्योरा उपस्थित किया गया।

(३) पं० सांवल जी नागर तथा पंडित केदारनाथ पाठक का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रस्ताव किया था कि नागरीप्रचारिणी पत्रिका त्रैमासिक कर दी जाय और उसमें खोज उपयोगी, वैज्ञानिक तथा ऐतिहासिक लेख प्रकाशित किए जाय।

निश्चय हुआ कि सभा इस समय नागरी प्रचारिणी पत्रिका को त्रैमासिक करना उचित नहीं समझती।

(४) बाबू शिवप्रसाद गुप्त का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि मंत्री या उपमंत्री की स्वीकृति के बिना किसी बिल का रुपया न दिया जाय और बोर्ड आफ ट्रस्टीज की विशेष आज्ञा के बिना कोई ऋण न लिया जाय वा उधार कार्य न कराया जाय।

निश्चय हुआ कि प्रत्येक विभाग के खाते में जो बचत रहे उससे अधिक व्यय उस विभाग में न किया जाय जब तक कि उसके लिये प्रबन्धकारिणी समिति की विशेष स्वीकृति न ले ली जाय। किस विभाग में कितना रुपया व्यय हो सकता है इसकी सूचना प्रति मास के आरंभ में उस विभाग के निरीक्षक को दे दी जाया करे।

प्रत्येक विभाग के वेतनभोगी कर्मचारियों का वेतन पहले देकर तब और किसी प्रकार का व्यय किया जाय। इस प्रणाली से कार्य करके मंत्री मार्च में प्रबंधकारिणी समिति को रिपोर्ट दें और उसी समय इस प्रस्ताव का अंतिम अंश विचारार्थ उपस्थित किया जाय।

(५) पत्रिका, शब्दसागर, आदि की छपाई के सम्बन्ध में इण्डियन प्रेस का १३ अक्तूबर १९१७ का पत्र उपस्थित किया गया।

निश्चय हुआ कि नागरीप्रचारिणी पत्रिका काशी में छपवाई जाय।

(६) बाबू शिवप्रसाद गुप्त का मार्गशीर्ष का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि अपने २५ भाद्रपद वाले पत्र में उन्होंने अपने स्थान पर बाबू बांके बिहारी लाल को पुस्तकालय का निरीक्षक चुनने को लिखा था, उस पत्र को सभा ने उनका पद त्याग पत्र समझा है सो नियम विरुद्ध है और वे अपना पद त्याग नहीं करना चाहते। साथ ही पंडित गोविंद राव जागलेकर का २८ नवंबर का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि ऐसी अवस्था में वे निरीक्षक के पद पर नहीं रहना चाहते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चय हुआ कि बाबू शिवप्रसाद गुप्त के २५ भाद्रपद के पत्र पर जो निश्चय हुआ था वह नियमानुकूल था परन्तु अब पंडित गोविंदराव जी ने निरीक्षक के पद से इस्तीफ़ा दे दिया है और बाबू शिवप्रसाद जी उस कार्य को स्वीकार करते हैं अतएव वे ही निरीक्षक चुने जांय और पंडित गोविंदराव जी ने इतने अल्प समय में अंग्रेजी पुस्तकों की जो सूची तैयार कर दी है उसके लिए उन्हें धन्यवाद दिया जाय।

(७) समय अधिक हो जाने के कारण निश्चय हुआ कि सभा विसर्जित की जाय और शेष कार्यों के लिए इसका अधिवेशन कल ता० ५ दिसंबर १९१७ को वार्षिकोत्सव के उपरान्त किया जाय।

प्रबन्धकारिणी समिति।

बुधवार ता० ५ दिसंबर १९१७ रात्रि के ७ बजे

स्थान—सभा भवन।

(१) बाबू श्यामसुंदरदास जी के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ कि हिंदी शब्दसागर को छोड़ कर अब तक की छपी हुई अन्य सब पुस्तकों पर पुस्तक विक्रेताओं को १००) रु० (नगद) तक कि खरीद पर २५) रु० सैकड़े कमिशन दिया जाय और इससे अधिक पुस्तकें एक साथ खरीदने पर ३०) रु० सैकड़े दिया जाय।

(२) बाबू शिवप्रसाद गुप्त का १८ नवंबर १९१७ का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रस्ताव किया था कि कोश विभाग के लिए एक निरीक्षक नियत किया जाय जो इसका निरीक्षण किया करे कि कार्य ठीक रूप से चलता है या नहीं।

निश्चय हुआ कि इस प्रश्न पर विचार कर सम्मति देने के लिये निम्नलिखित सदस्यों की एक उपसमिति बनाई जाय।

बाबू श्यामसुंदरदास बी० ए०
पंडित रामनारायण मिश्र बी० ए०
बाबू गौरीशंकर प्रसाद बी० ए०, एल एल० बी०
बाबू शिवप्रसाद गुप्त
पंडित रामचंद्र शुक्ल
सभा के मंत्री (संयोजक)

(३) सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकों में से जिनकी प्रतियाँ अब नहीं रह गई हैं उनका विवरण उपस्थित किया गया। साथ ही गद्यकाव्य-मीमांसा को प्रकाशित कर लेने के संबंध में पंडित राधाकुमार व्यास का ३० अक्तूबर १९१७ का पत्र और "महाराणी पद्मावती" नामक पुस्तक को सभा के अधिकार में न देने के सम्बन्ध में लहरी प्रेस के अध्यक्ष का २४ नवम्बर का पत्र उपस्थित किया गया।

निश्चय हुआ कि गद्यकाव्यमीमांसा और महाराणी पद्मावती संबंधी सब पत्र बाबू गौरीशंकर प्रसाद जी की सेवा में सम्मति के लिए भेजे जांय।

साधारण अधिवेशन।

शनिवार ता० २९ सितंबर १९१७-सन्ध्या के ४½ बजे

स्थान-सभा भवन।

(१) पंडित रामनारायण मिश्र के प्रस्ताव पर राय बहादुर मुंशी रविनन्दन प्रसाद सभापति चुने गए।

(२) गत अधिवेशन (तारीख २५ अगस्त सन् १९१७) का कार्य्यविवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।

(३) प्रबन्धकारिणी समिति का तारीख १५ अगस्त १९१७ का कार्य्य विवरण सूचनार्थ उपस्थित किया।

(४) सभासद होने के लिए निम्नलिखित सज्जनों के फार्म उपस्थित किए गए:—

१—पंडित गंगादत्त पांडेय, हिन्दूकालेज छात्रालय नं० ७, काशी १॥)

२—बाबू मदन गोपाल डोगारिया, १९३९ हेरिसन रोड, कलकत्ता ३)

३—बाबू आनंदीलाल गुप्त, झुरहरा, भरतपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४—पंडित जगतनारायण मिश्र, मंत्री, श्री सौंपयोगी पुस्तकालय पो० रामनगर बनारस १॥)

५—पंडित हरिनाथ तिवारी, महल्ला भुतई बनारस १॥)

६—बाबू कृष्णदास, ११ राजा दरवाजा, काशी १॥)

७—पंडित शिवकुमार त्रिपाठी, सहायक अध्यापक, ककुआ, पो० कप्तानगंज जिला बस्ती १॥)

८—पंडित रामबोध त्रिपाठी, द्वितीयाध्यापक, ककुआ पो० कप्तानगंज जिला बस्ती १॥)

९—पंडित पृथ्वीपाल शुक्ल, सहकारी अध्यापक, ककुआ, पो० कप्तानगंज जिला बस्ती १॥)

१०—बाबू बब्बन सिंह, पलिवारपुर पो० कप्तानगंज जिला बस्ती १॥)

११—बाबू विश्वेश्वर प्रसाद, मास्टर, कायस्थ पाठशाला, इलाहाबाद १॥)

निश्चय हुआ कि ये सज्जन सभासद चुने जांय।

(५) मंत्री ने सूचना दी कि बाबू हरिहर दास का स्थान उनके मंत्री चुने जाने के कारण प्रबंधकारिणी समिति में खाली हो गया है और उस नियम १३ के अनुसार बाबू केशवदास के स्थान पर भी उस समिति में किसी सज्जन का निर्वाचन साधारण सभा द्वारा ही होना चाहिए।

निश्चय हुआ कि इनके स्थान पर क्रमात् बाबू बलदेव दास और बाबू जगन्नाथ दास बी० ए० प्रबंधकारिणी समिति के सदस्य चुने जांय।

(६) निम्नलिखित पुस्तकें उपस्थित की गईं और धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईं।

नाट्य ग्रंथ प्रसारक मंडल; ए० बी० रोड, इन्दौर—महाराणा राजसिंह।

ओंकार बुक डिपो, इलाहाबाद—दादा भाई नौरोजी, श्रीमती एनी बेसेण्ट।

पंडित शिवप्रसाद त्रिपाठी, रजिस्ट्रार कानूनगो, ब्यावर—मंगरा—मेरवारा का इतिहास।

रायबहादुर हीरालाल बी० ए०, एम० आर० ए० एस० दमोह—भौगोलिक नामार्थ परिचय।

लाला हरद्वारी मल चोखानी, नं ४०२ अपर-चितपुर रोड, कलकत्ता—पितृ यज्ञ की संहृति।

संयुक्त प्रदेश की गवर्न्मेण्ट—हिंदोस्तान का फैसला (उर्दू)

एसियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल, कलकत्ता

Memoirs of the Asiatic Society of Bengal Vol VI Page 75 to 155.

Journal and Proceedings of the Asiatic Society, New Series Vol XIII 1917 No 3.

(७) प्रबंधकारिणी समिति का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि महात्मा मोहन दास कर्मचंद गांधी इस सभा के आनरेरी सभासद चुने जांय।

सर्व संमति से यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

(८) पंडित श्याम सुन्दर पति तिवारी के निम्नलिखित प्रश्न उपस्थित किए गए—

१—क्या सभा के प्रत्येक विभाग का अब तक का व्यय उसकी आय से कम है। यदि नहीं तो उसका मोटा मोटा ब्योरा दीजिए। लेखमाला और ग्रंथमाला की जो पुस्तकें बनती हैं उनको एक अलग विभाग समझिएगा।

२—पत्रिका क्यों नहीं समय पर प्रकाशित होती? अप्रैल से इधर उसके और भी पिछड़ने का क्या कारण है और इसके लिए क्या उद्योग किया जा रहा है।

३—लेखमाला क्यों और कब से पिछड़ी है? उसके अब तक कौन कौन संपादक रह चुके हैं और उसमें से प्रत्येक ने सुधार के क्या क्या प्रयत्न किए?

४—सभा के आनरेरी मंत्री और उपमंत्री नित्य अपना कितना समय सभा को देते हैं? कागज़ उनके घर जाते हैं अथवा वे लोग स्वयं उपस्थित होते हैं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५ मंत्री और उपमंत्री के कार्य्यक्रम का ब्योरा सभा में रहता है या नहीं ।

६—सभा का पत्र व्यवहार कौन करता है ? पत्रोत्तर में देर क्यों होती है ? कभी कभी उत्तर जाते ही नहीं, इसका क्या कारण है ?

७— क्या पत्रिका की तरह आफिस का भी काम पिछड़ा रहता है ? यदि है तो क्या कारण है और उसके निवारण के लिये क्या क्या उपाय किए गए हैं ?

८—गत वर्ष की रिपोर्ट और पुस्तकों की सूची छपने में क्या देर है और उस देरी का क्या कारण है?

९—सुना जाता है कि इधर मनोरंजन के काम में सुस्ती की गई है या उसका काम कुछ समय के लिये रोकना निश्चित किया गया है। यदि है तो क्यों ?

१०—प्रबंधकारिणी समिति अथवा साधारण सभा में सभा का माहवारी आयव्यय क्यों नहीं उपस्थित किया जाता। क्या प्र० का० स० ने व्यय के समबंध में मंत्री को संपूर्ण अधिकार दे रक्खा है ?

११—किसी मद में व्यय करते समय आय आदि पर ध्यान रखने का भार किस पर है ?

१२—साधारण अधिवेशन की सूचना स्थानिक सभासदों को दी जाती या नहीं ? यदि दी जाती हैं तो मेरे यहां अब तक कोई सूचना क्यों नहीं आई ?

इनमें से निम्नलिखित प्रश्नो के उत्तर मंत्री ने इस प्रकार दिए और शेष प्रश्नो का उत्तर आगामी अधिवेशन में उपस्थित करने की सूचना दी।

२—इसके कारण के विषय में सभा में कोई लिखा पढ़ी नहीं है। प्रायः यही समझा गया है कि प्रेस से ढिलाई हुई है। अप्रैल के उपरान्त इसके पिछड़ने का कारण भूतपूर्व संपादक का पदत्याग, प्रेस की ढिलाई इत्यादि है। पत्रिका को समय पर निकालने के लिये भूतपूर्व सम्पादक को पुरस्कार देना निश्चित हुआ था और उन्होंने इसे ठीक भी किया था। उनके पदत्याग पर प्रबन्धकारिणी समिति ने इसे समय पर निकालनेही के लिये तीन सज्जनों की सम्पादक समिति बनाई थी परंतु दो सभासदों के अस्वीकार करने पर उसका संपादन-भार तुलसीराम महाशय को सौंपा गया। प्रबंधकारिणी समिति को पूर्ण आशा है के वे पत्रिका की त्रुटियों को दूर करेंगे।

३—प्रत्येक संपादक ने क्या क्या प्रयत्न किए इसका उल्लेख कार्य्यालय में नहीं है। भूत पूर्व संपादक ने प्रेस बदला था पर तो भी संतोषजनक कार्य्य नहीं हुआ और इसका एक ही अंक निकल सका।

४—मंत्री सभा के कार्य्यालय में ही उपस्थित हो कर प्रायः १ से २ घंटे का समय नित्य देते हैं। कागज़ उनके घर पर नहीं भेजे जाते। उपमंत्री इस वर्ष ४ वा ५ दिन से अधिक नहीं आये।

५—यदि दैनिक कार्य्य के ब्यौरे से अभिप्राय है तो ब्योरा रक्खे जाने का कोई नियम निश्चय नहीं है केवल कार्य्य का बंटवारा प्रबंधकारिणी समिति के तारीख १८ अगस्त १९१७ के निश्चय ३ द्वारा हुआ था। (यह निश्चय पढ़ा गया।)

६—इसके विषय में कोई उदाहरण दीजिए तो कहा जा सकता है। अब से जितने पत्र आते हैं उनको एक रजिस्टर में लिखे जाने का प्रबंध किया गया है। प्रत्येक दिन के आए हुए पत्र उसमें नथी करके रक्खे जाते हैं और रजिस्टर में पत्र के आने और उत्तर जाने की तारीख रहती है जिसमें अब उत्तर न जाने की त्रुटि न रह सकती।

७—हां, कारण काम का अधिक होना और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्लर्कों का कम होना था। एक और क्लार्क रक्खा गया है जिससे अब काम ठीक हो गया है। भविष्य के लिये और और उद्योगों पर विचार हो रहा है।

८—रिपोर्ट का परिशिष्ट गतवर्ष ही तयार नहीं हुआ था इस वर्ष पिछड़े काम को बराबर करने की वजह रिपोर्ट का वह अंश अभी समाप्त नहीं हुआ। वह लिखा जा रहा है और आशा है कि अकतूबर के अंत तक रिपोर्ट तयार हो जायगी।

९—जिस समय मनोरंजन पुस्तकमाला की २२ वीं पुस्तक आई उस समय आफ़िस का काम बहुत पिछड़ा था। उसे बराबर करने का कठिन परिश्रम किया जा रहा था। ऐसे समय में यह सोचा गया कि यदि अधिक से अधिक एक सप्ताह तक मनोरंजन पुस्तकमाला का भेजना रोका जाय तो काम बराबर हो जायगा (इस कारण २२ वीं पुस्तक का भेजना ५ वा ७ दिन तक रोका गया था।) यदि ऐसा न किया जाता तो काम के अब तक बराबर होने की आशा न थी। कई कारणों से मनोरंजन पुस्तकमाला के लिये प्रेस को कागज़ देना संभव न था। अतएव प्रेस को भी कोई १२ दिन तक रुकना पड़ा था। इसके अतिरिक्त और कोई सुस्ती वा रोक आफ़िस से नहीं हुई।

१०—इस लिये कि पहिले ऐसा कोई नियम नहीं था अब नियम ३९ धारा ६ के अनुसार प्रबंधकारिणी समिति के सामने उपस्थित किया जायगा।

व्यय करने के सम्बन्ध में केवल नियम ३९ धारा ७ के अतिरिक्त और कोई प्रतिबंध नहीं है।

११—नियमों में इसका कुछ उल्लेख नहीं है, कार्य्य प्रायः मंत्री ही को करना पड़ता है। कभी कारण कभी ३९ धारा ८ के अनुसार अधिकारियों द्वारा स्वीकृत होने पर भी बाउचरों को रुपया देना रोकना पड़ता है।

१२—प्रायः नहीं। इसका कारण यह है कि यह अधिवेशन तो नियमित रूप से मास के अन्तिम शनिवार को होता है। अनुरोध पर समीपस्थ सभासदों को सूचना भेजी जाती है।

९—सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

हिंदी के सामयिकपत्रों का इतिहास।

वर्त्तमान समय में सभी इतिहासों के संग्रहों की आवश्यकता है, पर कुछ इतिहासों की तरफ लोगों का ध्यान ही नहीं है या बहुत कम है।

जब से हिंदी के पत्र निकलने आरंभ हुए तब से अब तक का पूरा इतिहास नहीं मिलता। बाबू राधाकृष्णदास का लिखा हुआ एक इतिहास है, पर वह सन् १८९४ ई० तक का ही है। उसके बाद इन २३ वर्षों में पहिले की अपेक्षा बहुत अधिक पत्र निकले। पर पूरा इतिहास आजतक प्रकाशित नहीं हुआ। इस कारण इतिहास के इस अंश की बड़ी कमी है।

मेरा विचार ऐसे इतिहास के पूर्ण संग्रह करने का है। कुछ संग्रह मैं कर भी चुका हूँ, अतएव पत्र सम्पादकों और हिंदीहितैषियों से मेरा सविनय निवेदन है कि उन्हें जिन जिन पत्रों के निकलने का समय, प्रकाशकों व सम्पादकों के नाम, कितने दिन वह पत्र चला, क्यों बन्द हुआ इत्यादि बातें मालूम हों वे कृपया मुझे सूचित करें। ये बातें विशेष कर १८९४ ई० के बाद ही की होनी चाहिएँ।

जिनके पास उन पत्रों में से किसी की प्रति मौजूद हो वे कृपया उसे मेरे पास भेज दें। मैं उससे आवश्यक बातें देख कर लौटा दूंगा। या किसी के पास से ऐसे पत्रों की कोई प्रति मूल्य से मिल सके तो उसका भी पता दें। मैं यथासंभव मूल्य से उसे मंगाने को तैयार हूँ।

निवेदक—रामनाथ गुप्त, नवाबगंज, कानपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आत्म-धर्म-सम्मेलन।"

यह समिति सर्व साधारण की वास्तविक उन्नति के हेतु स्थापित हुई है। निवेदन है कि नीचे लिखे मंतव्यों को ध्यान से पढ़ें। यदि पसंद हों तो शीघ्र ही सभासद बनें और अन्य महाशयों को भी सभासद बनाने का उद्योग करें।

१. हर एक जीव सुख शांति चाहता है--यह सर्वथा सत्य है।

२. सुख व शांति अपनी आत्मा में है।

३. आत्मा के सत्स्वरूप पर विश्वास लाने और उसका ध्यान करने से वे स्वयं प्राप्त होने लगती हैं।

४. आत्मा का लक्षण चेतना (देखना, जानना) है। यह चेतनारहित अजीव पदार्थों से भिन्न है। इसका सत्स्वरूप असल में शुद्ध, आनंदमयी, अविनाशी, क्रोधादिक विकारों से रहित है। यह देह प्रमाण आकार रखता है। प्रत्येक आत्मा की सत्ता सदा भिन्न २ बनी रहती है, इससे यह नित्य है। आत्मा में परिणाम सदा नए २ हुआ करते हैं इससे यह परिणामी या अनित्य भी है।

५. यद्यपि हम वर्त्तमान में अशुद्ध हैं, पर हमें आत्मा का शुद्ध स्वरूप निश्चय करके एकांत में बैठ कर उसका भजन, मनन, पूजन ध्यान सबेरे शाम कम से कम १०-१५ मिनिट अवश्य करना चाहिए। अपनी ही देह में देह प्रमाण स्फटिक की मूर्तिवत् उसे विचारना चाहिये।

६. हर एक प्राणी में भिन्न २ आत्मा हैं। सब चाहते हैं कि हमें कोई भी अपने मन, वचन, काय से किसी किस्म का दुःख न दे।

७ इसी से आप का धर्म है कि अन्य प्राणियों का बुरा न विचारें, उनके प्रति अहितकर वचन न कहें, उनकी बुराई न करें, अर्थात् सब के साथ प्रेम भाव रख कर हित सोचे व करें।

८. इसी से मनुष्यों की रक्षा करो, उन्हें शिक्षित स्वास्थ्ययुक्त, न्यायमार्गी और आत्म-ज्ञानी बनाओ। पशुओं की हत्या, भोजनपान, औषध, पूजा भक्ति और खेल तमाशे आदि के लिये न करो। गाय, भैंस, घोड़ा, बैल आदि पशुओं से काम लो, पर कष्ट न दो। वृक्षों पर भी दया करो, उन्हें वृथा न सताओ।

९. भोजन ताजा, शुद्ध अन्न, शाक, फल दुग्ध घृत का करो, व ताजा पानी छान कर पीओ। भूख लगने पर भोजन करो। दिन में एक दफे भोजन बस है।

१०. गृह में स्त्री पुत्रादि का हित करो। मोह में अंध होकर धर्म को न त्यागो।

११. इंद्रियविजयी होने पर गृह त्याग आत्म ध्यान करते हुए परोपकार में जीवन बिताओ।

ऊपर की बातें पसंद हों तो सभासद होने के पत्र भेजो। फीस प्रेम। संपर्क से विशेष लाभ होगा।

व्यवस्थापक,

चंदवाड़ी-सूरत। तारीख १२-१२-१७. } शीतलप्रसाद ब्रह्मचारी आत्मधर्म-सम्मेलन।

नोट—इस अंक में भूल से पृष्ठसंख्या १२० के बाद ११३ छप गई है जो १२१ छपनी चाहिए। पाठक गण कृपापूर्वक उसे क्रम से सुधार कर पढ़ें। अंत तक कुल पृष्ठसंख्या १४८ की जगह १४७ होनी चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काशी नागरीप्रचारिणी सभा की पुस्तकें।

बाल व्यायाम—इसमें बालिकाओं के व्यायाम करने के लिए ५१ चित्रों द्वारा तरह तरह के ड्रिल करना दिखलाया गया है। मूल्य ।=) डाकव्यय -)

सौरीसुधार—प्रसूतिका गृह में किन किन बातों का ध्यान रखना चाहिए इसका इसमें वर्णन है।

संक्षेप लेखप्रणाली—अर्थात् हिन्दी के शार्टहेण्ड की पुस्तक, मूल्य ॥) डाकव्यय)॥

हम्मीर रासो—जोधराज कविकृत। इस काव्य में भारतवर्ष के इतिहास-प्रसिद्ध वीर हाड़ा हम्मीर और दिल्ली के बादशाह अलाउद्दीन का युद्ध वर्णन है। इसकी काव्यप्रणाली बड़ी ही रोचक और हृदयग्राहिणी है। मूल्य १)। डाकव्यय -)॥

हरिश्चन्द्र—अयोध्या के प्रातःस्मरणीय महाराज हरिश्चन्द्र का चरित्र इस ग्रन्थ में अत्यन्त मनोहर छन्दों में दिया गया है। इसके रचयिता बाबू जगन्नाथदास बी० ए० (रत्नाकर) हैं। मूल्य =) डाकव्यय)॥

हिन्दी शब्दसागर—हिन्दी भाषा का सुप्रसिद्ध बृहत्शब्द कोष जिसकी प्रशंसा बड़े बड़े दिग्गज विद्वानों ने की है। १५ अंक छप चुके हैं। प्रत्येक अङ्क का मूल्य १)

सिंधदेश का इतिहास—मूल्य ।) डाकव्यय)॥

प्राचीन भारतवर्ष के इतिहास की सामग्री—श्रीयुत रायबहादुर पंडित गौरीशङ्कर हीराचन्द ओझा लिखित मूल्य ॥)

छत्रप्रकाश—लाल कवि कृत मूल्य ।॥)

कपड़ दर्जिन—इसमें सब तरह के कपड़ों की सिलाई और कटाई आदि का वर्णन उत्तमता से किया गया है। इसके अतिरिक्त ६०-७० चित्र भी दिये गए हैं। मूल्य ॥) है।

सत्यहरिश्चन्द्र—(भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र कृत) मूल्य =)

भारतदुर्दशा ,, ,, -)

देवदेव का जीवनचरित्र और समय =)

मोहम्मद बाबा का जीवनचरित्र -)

लेखक और नागरी लेखक =)

आयुर्वेद निदान समीक्षा =)

भाषा—संसार भर की भाषाओं का संक्षिप्त विवरण ≡)॥

हरियस और मनुष्य की सात अवस्थाएँ =)

हरि निर्वेद नाटक ।)

बालिका शिक्षावली—छोटी छोटी कहानियों में शिक्षाएँ।

मिलने का पता—

मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा।

बनारस सिटी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनोरंजन पुस्तकमाला

अर्थात्

हिंदी के सौ उत्तम उत्तम ग्रंथों की पुस्तकावली ।

अब तक निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

१ आदर्श-जीवन—लेखक रामचंद्र शुक्ल ।
२ आत्मोद्धार—लेखक रामचंद्र वर्म्मा ।
३ गुरु गोविंदसिंह—लेखक वेणीप्रसाद ।
४ आदर्श हिंदू १ भाग—लेखक मेहता लज्जाराम शर्म्मा ।
५ ,, २ ,, ,,
६ ,, ३ ,, ,,
७ राणा जंगबहादुर—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा ।
८ भीष्म पितामह—लेखक चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्म्मा ।
९ जीवन के आनंद—लेखक गणपत जानकीराम दूबे बी. ए. ।
१० भौतिक-विज्ञान—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी ।
११ लालचीन—लेखक वृजनंदन सहाय ।
१२ कबीरवचनावली—संग्रहकर्त्ता अयोध्यासिंह उपाध्याय ।
१३ महादेव गोविंद रानडे—लेखक रामनारायण मिश्र बी. ए. ।
१४ बुद्धदेव--लेखक जगन्मोहन वर्म्मा ।
१५ मितव्यय--लेखक रामचंद्र वर्म्मा ।
१६ सिक्खों का उत्थान और पतन—लेखक नंदकुमार देव शर्म्मा ।
१७ वीरमणि--लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम. ए. और शुकदेवबिहारी मिश्र बी. ए.।
१८ नेपोलियन बोनापार्ट--लेखक राधामोहन गोकुलजी ।
१९ शासनपद्धति--लेखक प्राणनाथ विद्यालंकार ।
२० हिंदुस्तान, पहला खंड—लेखक दयाचंद्र गोयलीय बी. ए. ।
२१ ,, ,, दूसरा खंड— ,, ,, ,,
२२ महर्षि सुकरात – लेखक वेणीप्रसाद ।
२३ ज्योतिर्विनोद—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी. ।
२४ आत्मशिक्षण—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम० ए० और शुकदेव बिहारी मिश्र बी० ए०

प्रत्येक पुस्तक का मूल्य १) है. समस्त ग्रंथमाला के स्थायी ग्राहकों से ।।।) लिया जाता है। डा० अलग

मिलने का पता—

मंत्री—नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Registered No. A 414 [संख्या ७—१२

नागरीप्रचारिणी पत्रिका।

जनवरी—जून १९१८

सम्पादक—वेणीप्रसाद।

भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल। बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल॥
विलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल। निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सबको मूल॥
कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार। सब देशन सों लै करहु, भाषा माँहि प्रचार॥
करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न। राजकाज दरबार में, फैलावहु यह रत्न॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र।

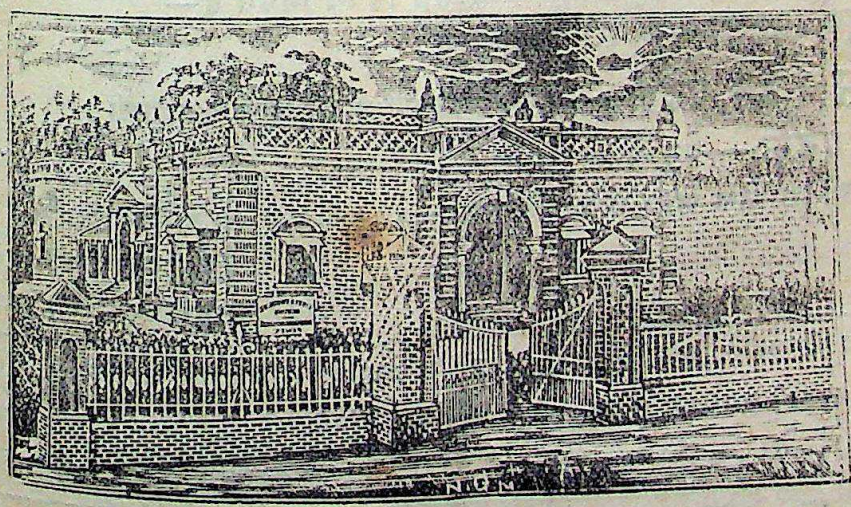

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित।

गणपति कृष्ण गुर्जर द्वारा श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस, काशी में मुद्रित।

मूल्य १॥)

प्रति संख्या =।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय सूची ।

१—श्रीयुत ई० ग्रीव्स की बिदाई ...	१४९	१२—पंजाब व्ययस्थापिका सभा में उर्दू	
२—भारतवर्ष की राष्ट्र भाषा ...	१५३	१३—शर्मिष्ठा नाटक ...	...
३—मनुष्य-परीक्षा	१५६	१४—भारत में डचों का आगमन	...
४—भारतवर्ष में लोहे का कारखाना ...	१६०	१५—सांख्य आख्यायिका ...	...
५—आकाश में शब्द की पहुँच ...	१७०	१६—क्यूबा ...	...
६—गांधी जी का पत्र	१७०	१७—लेखशैली समीक्षा ...	...
७—हिंदी का प्रचार	१७१	१८—खना ...	...
८—हिन्दी प्रचार का काम	१७२	१९—राष्ट्र भाषा का विरोध	...
९—हिन्दी शिक्षण-प्रचारक मंडल ...	१७३	२०—अष्टम हिंदी साहित्य सम्मेलन इंदौर	
१०—प्रांतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन ...	१७५	२१—सभा का कार्य-विवरण ...	...
११—भारतवर्ष में फिरंगी	१८४		

मुफ्त ! मुफ्त !! मुफ्त !!!

धन्वन्तरी ।

यह आर्युवेदीय मासिक पत्र योग्य वैद्य, डाक्टर और हकीमों को बिना मूल्य भेजा जाता सर्व साधारण को नहीं ।

मैनेजर धन्वन्तरी विजयगढ, अलीगढ़

पदक ।

सभा द्वारा उत्तमोत्तम विषयों पर लेख लिखने के लिये प्रति वर्ष स्वर्ण और रजत पदक दिए जाते हैं । सन् १९१८ में इनके लिये निम्नलिखित विषय नियत हैं—

छन्नूलाल स्वर्ण पदक—नगरों का निर्माण ।

राधाकृष्णदास रजत पदक—प्राचीन भारतवर्ष की शासन प्रणाली ।

रेडिचे रजत पदक—मनुष्य का भोजन ।

इन विषयों पर लेख सभा में ३१ दिसम्बर १९१८ के पूर्व आजाने चाहिएँ ।

हरिहरनाथ बी० ए०

मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा काशी ।

काश्मीरी शुद्ध शिलाजीत, कमजोरी, प्रमेह, स्वप्नदोष, इत्यादि की सर्वोत्तम औषधि ॥), पवित्र केशर १), असली कस्तूरी ३५), असली सुर्मा ममीरां ३), अंगूरी हींग ५), सुगंधित स्याह जीरा ३), फूल बनफशा ३॥) धूप २), स्वच्छ शहद १।) सेर ।

काश्मीर स्टोर्स, श्रीनगर नं० १७०

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकों की सूची ।

अखरावट—मालिक मुहम्मद जायसी रचित, इसमें कवि ने हिन्दी वर्णमाला के क्रम से एक एक अक्षर आदि में देकर विश्वात्मक ब्रह्मज्ञान विषय का काव्य किया है । मू० ≈) डा०

इन्द्रावती—कवि नूरमहम्मद कृत । इस ग्रन्थ में कवि ने एक कथा का वर्णन किया है । सम्पूर्ण पुस्तक की रचना चौपाई और दोहा छन्दों में है । मूल्य ॥।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

विदित हो कि सभा का वार्षिक अधिवेशन ३ अगस्त १९१८ ई० को न होकर ३१ अगस्त १९१८ को होगा ।

हरिहरनाथ—मन्त्री
काशी नागरीप्रचारिणी सभा ।

श्री लक्ष्मीनारायण प्रेस, बनारस में मुद्रित ।

के गण्यमान्य बहुत से सभासद उपस्थित थे । इस दिवस के सभापति मान्यवर श्रीयुत बाबू भगवान दास जी, एम० ए० ने सभा का कार्य्य आरंभ करते हुए कहा कि "आज जिन श्रीयुत ग्रीव्स साहब का सम्मान करने के लिये हम लोग इकट्ठे हुए हैं उनसे सन १८९१ ई० से मेरा परि

प्रशस्त है । बाबू श्यामसुंदर दास आप को सभा की ओर से अभिनंदन पत्र भेंट करेंगे ।"

तदनन्तर श्रीयुत बाबू श्यामसुंदर दासजी ने निम्न लिखित अभिनंदन पत्र पढ़ा—

श्रीमान् रेवरेंड ई० ग्रीव्स की सेवा में—

प्रिय महोदय,

इस अवसर पर जब कि लगभग ३७ वर्ष तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय सूची ।

१—श्रीयुत ई० ग्रीव्स की बिदाई	...	१४९
२—भारतवर्ष की राष्ट्र भाषा	...	१५३
३—मनुष्य-परीक्षा	... ...	१५६
४—भारतवर्ष में लोहे का कारखाना	...	१६०
५—आकाश में शब्द की पहुँच	...	१७०
६—गांधी जी का पत्र	... ...	१७०
७—हिंदी का प्रचार	... ...	१७१
८—हिन्दी प्रचार का काम	... ...	१७२
९—हिन्दी शिक्षण-प्रचारक मंडल	...	१७३
१०—प्रांतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन	...	१७५
११—भारतवर्ष में फिरंगी	... ...	१८४
१२—पंजाब व्यवस्थापिका सभा में उर्दू		
१३—शर्मिष्ठा नाटक	... ...	
१४—भारत में डचों का आगमन	...	
१५—सांख्य आख्यायिका	... ...	
१६—क्यूबा	... ...	
१७—लेखशैली समीक्षा	... ...	
१८—खना	... ...	
१९—राष्ट्र भाषा का विरोध	...	
२०—अष्टम हिंदी साहित्य सम्मेलन इंदौर		
२१—सभा का कार्य-विवरण	... ...	

मुफ्त ! मुफ्त !! मुफ्त !!!

धन्वन्तरी ।

यह आर्युवेदीय मासिक पत्र [illegible]

सर्व साधार[illegible]

[illegible]

दिए जाते हैं

छन्नूलाल

राधाकृष्ण

रेडिचे र

इन

काश्म

असली कस्तूरी २)), असली सुमा ममीरा ३), अगूरी हाग ५), सुगंधित स्याह जीरा ३), फूल बनफशा ३)) [illegible] धूप २), स्वच्छ शहद १।) सेर ।

काश्मीर स्टोर्स, श्रीनगर नं० १७[illegible]

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकों की सूची ।

अखरावट—मालिक मुहम्मद जायसी रचित, इसमें कवि ने हिन्दी वर्णमाला के क्रम से एक [illegible] अक्षर आदि में देकर विश्वात्मक ब्रह्मज्ञान विषय का काव्य किया है । मू० ≋)।

इन्द्रावती—कवि नूरमहम्मद कृत । इस ग्रन्थ में कवि ने एक कथा का वर्णन किया है । [illegible] पुस्तक की रचना चौपाई और दोहा छन्दों में है । मूल्य ।।।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

भाग २२ } जनवरी-जून १९१८ । { संख्या ७—१२

श्रीयुत एडविन ग्रीव्स साहब की बिदाई ।

श्री

युत एडविन ग्रीव्स साहब की बिदाई के उपलक्ष में गत ता० ६ अप्रैल शनिवार संध्या के छः बजे नागरी प्रचारिणी-सभा भवन में एक विशेष अधिवेशन हुआ जिसमें सभा के गण्यमान्य बहुत से सभासद उपस्थित थे। इस दिवस के सभापति मान्यवर श्रीयुत बाबू भगवान दास जी, एम० ए० ने सभा का कार्य्य आरंभ करते हुए कहा कि "आज जिन श्रीयुत ग्रीव्स साहब का सम्मान करने के लिये हम लोग इकट्ठे हुए हैं उनसे सन १८९१ ई० से मेरा परिचय है, इसलिये कल जब मुझे उनके वियोग का पत्र मिला तो मुझे बड़ा दुःख हुआ, क्योंकि मैं उन पर बड़ी श्रद्धा रखता हुआ उन्हें पक्का ब्राह्मण जानता हूं क्योंकि तुलसीकृत रामायण की जैसी आलोचना वे कर सकते हैं और जैसी अच्छी हिन्दी वे बोल सकते हैं, वैसी शायद मैं नहीं बोल सकता। यद्यपि वे इसाई मत के प्रवर्त्तक और प्रचारक हैं पर उनसे बातचीत करने पर मुझे विदित हुआ कि उनके विचार बहुत उदार और प्रशस्त हैं। बाबू श्यामसुंदर दास आप को सभा की ओर से अभिनंदन पत्र भेंट करेंगे।"

तदनन्तर श्रीयुत बाबू श्यामसुंदर दासजी ने निम्न लिखित अभिनंदन पत्र पढ़ा—

श्रीमान् रेवरेंड ई० ग्रीव्स की सेवा में—

प्रिय महोदय,

इस अवसर पर जब कि लगभग ३७ वर्ष तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतवर्ष में रह कर ६३ वर्ष से अधिक की अवस्था में आप स्वदेश गमन करना चाहते हैं, हम काशी नागरीप्रचारिणी सभा के सभासद अपना परम कर्त्तव्य समझते हैं कि आपके प्रति अपने हार्दिक भाव प्रगट करें और स्वदेश में आप के सुख शांति पूर्वक रहने के लिये जगदीश्वर से प्रार्थना करें।

आपने अपने जीवन का उपयोगी और विशेष अंश भारतवर्ष में ही बिताया है। इससे जो सहानुभूति आपके हृदय में भारतवासियों के लिये उत्पन्न हुई है वह अवश्य श्लाघनीय है। आप सन् १८९७ से इस नागरी प्रचारिणी सभा के सभासद हैं और इस २१ वर्ष के अवसर में आप ने अनेक बेर इसके अधिकारियों के आसनों को सुशोभित किया है तथा इसकी प्रबंधकारिणी समिति के अनेक वर्षों तक आप सभासद रहे हैं। हमें भली भाँति स्मरण है कि अनेक अवसरों पर आपने इस सभा की अमूल्य सहायता की है जिस से इसका बहुत कुछ हितसाधन हुआ है। जिस भूमि पर सभाभवन बना है उसे दिलवाने, रामायण के संस्करण के लिये चित्र प्राप्त करने, कोश तथा व्याकरण की व्यवस्था ठीक करने तथा खोज के काम में सहायता पहुंचाने में आपने सभा का बहुत कुछ उपकार किया है जिसके लिये हम आप के बहुत कृतज्ञ हैं। आप के अब स्वदेश चले जाने से हम उस सहायता से वंचित हो जायंगे जिसे, प्रत्येक समय और विशेष कर संकट के समय, पाने का हमें पूरा भरोसा रहता था। किंतु अपनी मातृभूमि को लौटने और वहाँ बहुकाल तक सुख शांति पूर्वक निवास करने की जो आशा आप के हृदय में इस समय उठ रही होगी उसके साथ अपनी हार्दिक सहानुभूति प्रगट किए बिना हम नहीं रह सकते। आप का हिंदीप्रेम और हिंदी की योग्यता सराहनीय है।

अंत में हम ईश्वर से यह प्रार्थना करते हैं कि वह आप को इस वृद्धावस्था में परम शांति, संतोष और सुख दे और आप बहुकाल तक सपरिवार आदर्श जीवन निर्वाह करने में समर्थ हों। आप है, आप इस सभा का स्मरण बनाए रहेंगे और आप का दृष्टांत अन्य यूरोपीय महाशयों के लिये आदर्श उपस्थित करने में समर्थ होगा।"

इस प्रकार अभिनंदन-पत्र दिए जाने के बाद श्रीयुत लाला भगवानदीन जी ने एक समयोचित कविता जो ग्रीव्स साहब की प्रशंसा में रची गई थी पढ़ कर उन्हें अर्पण की जिसे उन्होंने कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार किया।

अब काशी के प्रसिद्ध हिंदी-हितैषी श्रीयुत बाबू गौरीशंकर प्रसाद जी वकील उठे और उन्होंने अपना भाषण आरंभ करते हुए कहा—"जब से सभा से मेरा संबंध हुआ, मुझ से ग्रीव्स साहब से परिचय हुआ है। मुझे अच्छी तरह विदित है कि वे सभा के बड़े हितैषी हैं और बड़ी दृढ़ता और उत्साहपूर्वक सभा की सहायता किया करते हैं। प्रबंधकारिणी समिति में भी मेरा उनका प्रायः साथ रहा है, जिससे उनका सभा के प्रति हित बराबर प्रगट होता रहा। मुझे उनके वियोग का दुःख है और आशा है कि दूर देश में चले जाने पर भी वे हम लोगों को और सभा को भूलेंगे नहीं।"

इनके बैठने पर श्रीयुत पंडित रामनारायण जी मिश्र ने कहा कि ग्रीव्स साहब के जाने से हम बड़े दुःखी हैं, यद्यपि वे स्वदेश जा रहे हैं और इस कारण वे सुख मानते होंगे पर हम तो अवश्य ही दुःखी हो रहे हैं, क्योंकि उनके अनुभव और पक्की सलाह से हम लोगों को सभा के कार्य्य में बड़ी भारी सहायता मिलती रही है। यद्यपि साधारण अंगरेज लोग समय के बड़े पाबंद होते हैं पर ग्रीव्स साहब को सभा से इतना प्रेम है कि प्रबन्धकारिणी समिति में कई बार गणपूर्ति (कोरम) न होने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर भी वे अपना हर्ज कर बहुत देर तक बैठे रहे और हम लोगों से मतभेद होने पर कभी भी असंतुष्ट नहीं हुए हैं। उनकी सज्जनता और कार्य्य-तत्परता का कई बार हम लोगों को परिचय मिल चुका है। जैसे अपने किसी नेता के चले जाने से शोक होता है, वैसे ही आज ग्रीव्स साहब का वियोग हमें दुःखदायी हो रहा है और अपने इस स्नेह के नाते हमें दृढ़ विश्वास है कि सुदूर चले जाने पर भी वे हम से वैसी ही प्रीति बनाए रखेंगे।"

इसके बाद ग्रीव्स साहब उत्तर देने के लिये खड़े हुए जिनका करतलध्वनि द्वारा समागत जनों ने सत्कार किया। आपने अपना भाषण आरंभ करते हुए कहा—"मित्रो, आपने मेरे लिये जो शब्द कहे हैं उनके लिये मैं परमेश्वर का शुक्रगुजार हूँ और इस संबंध से मुझे बड़ा आनंद हुआ है। आपने अनुग्रह कर मेरे लिये जो कुछ कहा है उसके लिये मैं क्या कहूँ? केवल यही कह सकता हूँ कि मैं जान बूझ कर कपटी बना हुआ बहुत दिनों से आप लोगों को धोखा दे रहा हूँ, क्योंकि मैं हिन्दी प्रेमी अवश्य हूँ, पर यदि आप यह समझते हैं कि मैं हिन्दी जानता हूँ, तो आपकी यह समझ सही नहीं है, क्योंकि हिंदी पढ़ने लिखने की योग्यता मुझे अभी तक नहीं हुई है। मैं हिन्दी का प्रेमी हूँ, हितैषी हूँ, पर जैसी चाहिए वैसी योग्यता इस भाषा की मैं नहीं रखता। लोग कहते हैं कि हिंदी सहज है और दो चार दिन में आ सकती है, पर मेरा अनुभव है कि यह दस बीस वर्षों में भी नहीं आती। बिहारीलाल के दोहे, लालकवि के कवित्त और तुलसीकृत रामायण को पढ़कर मेरी यह धारणा हुई है पर मेरी इस अयोग्यता पर यह जान कर मुझे शांति हुई कि जब इस देश के बड़े बड़े हिंदी के पंडित बिहारी के दोहों को देख कर घबड़ा जाते हैं तो मैं विदेशी होकर यदि बीस वर्षों में भी हिंदी न सीख सका तो कोई आश्चर्य नहीं और यदि आप का विश्वास ठीक है तो शायद दूसरे जन्म में मैं हिंदी का ज्ञाता हो सकूँगा (हास्य ध्वनि)। हिंदी के नाते मेरे मित्रों में आज यहाँ सभापति जी, बाबू श्यामसुंदर दास और पं० रामनारायण जी मौजूद हैं और बाबू राधाकृष्णदास तथा पं० सुधाकर जी तो अब नहीं है, पर सबों से मेरा स्नेह ज्यों का त्यों है। हिंदी भाषा के कारण इन सबों से स्नेह हुआ और मैं परमेश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि इस सभा से इस देश को नाना प्रकार के लाभ पहुँचें।

यद्यपि भाषा के द्वारा सब नहीं, तो भी बहुत कुछ हो सकता है क्योंकि भाषा द्वारा ही भाव प्रगट किए जाते हैं, इस कारण सभा द्वारा हिंदी की उन्नति होवेगी मैं ऐसी आशा रखता हूँ।

मैं संस्कृत को तुच्छ नहीं समझता, पर ऐसी भाषा का पक्षपाती अवश्य हूँ जिसे सब लोग सहज ही में समझ सकें। परलोकवासी सुधाकर जी भी यह समझने लगे थे और यह बात सच है कि उनकी मृत्यु से मैं दुःखी हुआ हूँ, क्योंकि इस विषय में उनसे बहुत आशा थी। उर्दू या संस्कृत की ओर न झुक कर साधारण बोलचाल की भाषा में लिखना चाहिए, जिससे उन्नति हो। यद्यपि अब मैं यहाँ नहीं रहूंगा तो भी दूर रहता हुआ भी वैसा ही प्रेम रखूँगा और सहायता देने की चेष्टा करता रहूँगा।

भारत की उन्नति किस बात से होगी इस विषय में हम अंगरेज आप से सहमत नहीं हैं और आप भी आपस में सहमत नहीं हैं, पर चेष्टा अवश्य करनी चाहिए। जब स्वतंत्रता भारत के लिए आवश्यक हो, आप उसकी चेष्टा करें। मैं जब तक हूँ तब तक इसकी चेष्टा करूँगा। मैं भारत की उन्नति का पक्षपाती हूँ और भारत के लिए स्वतंत्रता चाहता हूँ। मैं एक ईश्वर को मानता हुआ यह विश्वास रखता हूँ कि किसी जाति को दूसरी जाति पर प्रभुत्व करने का अधिकार नहीं है। यद्यपि मैं काशी छोड़ रहा हूँ पर युक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की समाप्ति तक यहीं अलमोड़े में रहूँगा, विलायत नहीं जाऊँगा क्योंकि रास्ता साफ नहीं है, पर जब जहाँ रहूँगा आपकी भलाई की चेष्टा सर्वदा करता रहूँगा।"

इनका भाषण समाप्त होने पर, इन्हें समागत जनों के हर्षध्वनि के बाद माला पहिनाई गई और सभापतिजी के आज्ञानुसार बा० श्यामसुंदरदासजी ने उनकी ओर से भाषण करते हुए कहा "मुझे बड़ा कठिन कार्य्य सौंपा गया है, क्योंकि जो कुछ कहने की बात थी मित्रवर्गों ने पहले से कह दी है। पचीस वर्ष के समय में हमारे शासक अंगरेजों में तीन महाशय मुझे ऐसे मिले जिन्होंने सभा की विशेष सहायता की है। इन में से ग्रीव्स साहब प्रथम हैं। आप सदा हमारी सहायता करते रहे। जब जब सभा पर कोई आपत्ति आई या कोई आवश्यकता आ पड़ी जिसमें उनकी सहायता की आवश्यकता हुई तो पहले तो उन्होंने इसके विरुद्ध जितनी बातें हो सकती थीं, सब कहीं और संतोष हो जाने पर फिर यथासाध्य सहायता देने में कोई कसर उठा नहीं रखी। अभी थोड़ेही दिन हुए एक ऐसी कठिनता आई जिसमें ग्रीव्स साहब की सहायता से वह कठिनाई दूर होगई और आशा से अधिक लाभ भी हुआ। दूसरे महाशय हमारे भूतपूर्व कलेक्टर मि० रेडिची थे और तीसरे महाशय डा० ग्रियर्सन हैं जो विलायत में बैठे हुए भी हमारी बड़ी अमूल्य सहायता किया करते हैं। अदालतों में नागरी प्रचलित कराने के समय में भी उन्होंने सभा की बड़ी सहायता की थी।

इन सहायकों में से ग्रीव्स साहब हमलोगों के पास से जा रहे हैं। इसका हमें बड़ा दुःख है, पर ईश्वर का भरोसा है जो हमें और भी ऐसे सहायक भेजेगा। मेरा ग्रीव्स साहब का बहुत घनिष्ट संबंध रहा है और समय समय पर उनके प्रश्न प्रायः मुझे घबड़ा दिया करते थे। प्रायः बिहारी के दोहों के विषय में ऐसा हुआ करता था। अभी गत वर्ष ही जब्बलपुर सम्मेलन में जाते समय उनके दिए हुए बिहारी के एक दोहे का अर्थ मैं कठिनता से लगा सका, पर मैंने ज्यों त्यों कर ग्रीव्स साहब को समझा दिया पर मुझे ठीक भास गया कि उससे ग्रीव्स साहब का संतोष नहीं हुआ और मेरा संतोष तो हुआ ही नहीं। केवल इसी अवसर पर नहीं और भी कई अवसरों पर बिहारी के दोहों के कारण मुझे कठिनाई पड़ी है। अभी हालही में लखनऊ में रत्नाकर जी से इस विषय में बात चीत हुई थी और उन्होंने इसकी टीका लिखने का वचन दिया था और कुछ अंश की टीका कर के मुझे सुनाया भी था। यदि वे इसकी संपूर्ण टीका कर सकें और वह ग्रंथ प्रकाशित हो सका तो संभव है कि ग्रीव्स साहब या और किसी विदेशी विद्वान को उलाहना देने का अवसर न मिलेगा। हमें ग्रीव्स साहब की इस चितौनी से चैतन्य होजाना चाहिए, और हमें लज्जा आनी चाहिए जिससे हमें मातृभाषा के अभावों के दूर करने की प्रबल आकांक्षा हो और हम पूरे उत्साह से इस कार्य में लग जायं। ऐसे हितैषी मित्र के बिछोह का हमें बड़ा दुःख है पर जब वे वृद्ध होकर शांति के निमित्त स्वदेश को जा रहे हैं तो हम भी परमात्मा से चाहते हैं कि वह उन्हें शांति प्रदान करे।"

तदनंतर सभापति महाशय को धन्यवाद प्रदान कर सभा विसर्जित हुई।

अनन्तर सभा के अधिकारियों का ग्रीव्स साहब के साथ 'फोटो' लिया गया और सभा के विस्तृत छत पर सायंकाल के मंद समीरन का आनंद लेते हुए समागत जनों को मिष्टान्न फलाहार आदि से सम्मान किया गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतवर्ष की राष्ट्र भाषा।

हिंदुस्तानी और उसकी सहचारी भाषाएँ।

डाक्टर ग्रियर्सन साहब से हिंदी संसार अवश्य ही परिचित होगा। आपने "भारतवर्ष के भाषा विज्ञान की जाँच" (Linguistic Survey of India) के नाम से एक अमूल्य पुस्तक लिखी है। विलायत का टाइम्स पत्र बड़ा प्रभावशाली है। इस पुस्तक की समालोचना करते हुए उस पत्र में एक महाशय ने [illegible]रोक शीर्षक पर एक लेख छपवाया है, जो [illegible]दी संसार में परिचित होने योग्य है। अतः [illegible]का अनुवाद नीचे दिया जाता है।

'भाषा की जाँच के संबंध में जो तेरह बड़ी [illegible]ड़ी जिल्दें प्रकाशित हुई हैं उनमें यह विभाग [illegible]से अधिक आवश्यक है। पश्चिमी हिंदी तीन [illegible]रोड़ अड़तीस लाख मनुष्यों की मातृभाषा है [illegible]र पंजाबी एक करोड़ तीस लाख लोगों की, [illegible]से पता लगता है कि इस ग्रंथ की भौगोलिक [illegible]मा की जितनी आबादी है उसका यह एक [illegible]चमांश हुआ। पश्चिमी हिंदी का एक प्रधान [illegible] 'हिंदुस्तानी' सैकड़ों वर्ष से इस महादेश के [illegible]निवासियों की बोल चाल की मूल भाषा रही है। [illegible]यपि कुछ मास पूर्व श्रीमान् बड़े लाट साहब ने [illegible]कहा है कि अंगरेज़ी यहाँ की सार्वजनिक भाषा [illegible]ने लगी है (पर अभी हो नहीं गई)। किंतु [illegible]की गिनती बहुत कम है और हिंदुस्तानी [illegible]ही अपने नाना प्रकार के अंग प्रत्यगों के [illegible]ए खैबर घाटी से ले कर कलकत्ते बंबई और [illegible]कुमारी तक यात्रियों का काम निकालती है। [illegible] भिन्न प्रांतनिवासियों से बात चीत करने के [illegible]ये यह भाषा परम आवश्यक है, यहाँतक कि द्राविड़ी दक्षिण भारत में भी मदरास गवर्नमेंट ने इसे देशी भाषाओं की अनिवार्य्य परीक्षा में स्थान दिया है।

अंगरेजी से संबंध।

केवल यही क्यों आंत्रिक भाव से हिन्दुस्तानी भाषा सारे संसार में सुनाई दे जाती हैं, अंगरेजी से इसका घनिष्ट संबंध है. केवल इसकी आर्य्य उत्पत्ति के कारण नहीं बरन आज डेढ़ शताब्दी के परस्पर के आदान प्रदान ने भी इस संबंध को घनिष्टतर कर दिया है। हमारे (अंगरेजों) के शासन ने जो दोरंगी सभ्यता का विकास किया है उसके कारण भी यह आदान प्रदान नितांत आवश्यक हो पड़ा है। ग्रियर्सन साहब ने इन दोनों भाषाओं के व्याकरण तथा मुहावरे के घोल मेल के कई चिताकर्षक दृष्टांत दिए हैं। ये दृष्टांत 'मेम साहब' ऐसे शब्दों के मुकाबले में अपनी विचित्रता में कम नहीं है और विशेष कर भारत में आनेवाले अंगरेजी सिपाहियों द्वारा भी ऐसे बहुतेरे मुहावरे गढ़े गए हैं। पर केवल यही नहीं, इसके सिवाय इस आदान प्रदान का एक बहुत बड़ा नियमित और सर्वस्वीकृत क्षेत्र अलग भी है और यदि ग्रियर्सन साहब ने जितना बड़ा परिश्रम किया है इससे और भी अधिक परिश्रम वे कर सकते तो वे अच्छी तरह दिखा सकते थे कि अंगरेजी शब्दकोष की वृद्धि पर हिंदुस्तानी भाषा का कितना अधिक प्रभाव पड़ा है। कुछ आज नहीं, जब से माहाराणी एलिजबेथ ने मुगलों के दर्बार में अपना दूत भेजा था तब से भारतीय भाषा के शब्द हमारी (अंगरेजी) बोल चाल में बेमालूम तौर से घुलते रहे हैं। यहां तक कि यूल और बरनल साहब की डिकशनरी, जानसन जवसन के बहुत से पृष्ठों में अंगरेजी भाषा के सिंहासन पर इन्हें समान आसन का अधिकार प्राप्त हो गया है। केवल यहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तक नहीं अधिक प्रतिष्ठित अक्सफोर्ड डिक्सनरी में भी इसके बहुत से प्रमाण मिलते हैं।

यद्यपि इच्छा रहते हुए भी दुःख के साथ ग्रियर्सन साहब इस विषय की अधिक आलोचना करने से विरत रहे. पर इधर तीन सौ वर्षों में अंगरेजी के बीच हिन्दुस्तानी भाषा का जैसा प्रसार और प्रचार हुआ उसका बहुत विस्तृत ब्योरा उन्होंने दिया है। टाम कोरीपाटी नामक का कोई सनकी यात्री था। टेरी साहब के कथनानुसार (हबसन-जबसन कोश में) उसने पहले पहल सन १६१६ ईस्वी में हिंदोस्तानी तथा कई गँवारूभाषाओं में अभिज्ञता प्राप्त की थी। इस बात का भी यथेष्ट प्रमाण मौजूद है कि सत्रहवीं शताब्दी के आरंभ से ही विलायत के लोग जानते थे कि यही भारतवर्ष की 'राष्ट्रभाषा' है। सन १८७३ ईस्वी में फ्राइर ने लिखा है— "दर्बारी भाषा फारसी है और सर्व साधारण के बोल चाल की भाषा हिंदुस्तानी है (जिसके लिखने की लिपि को वनयन* कहते हैं)। यूरोपीय यात्री और विद्वान लोग बराबर इस खोज को बढ़ाते रहे। ग्रियर्सन साहब हमारे ज्ञान की क्रमशः वृद्धि की रोचक कथा का दिग्दर्शन कराते हुए आठहरवीं शताब्दी के अंत तक चले आए हैं। अब अंत को यह ज्ञान वैज्ञानिक भित्ति पर स्थापित किया गया है। अट्ठाइस पृष्ठों में इन सिद्धान्तों की भित्ति का ब्योरा बड़ी खूबी के साथ समझाया गया है।

हिंदुस्तानी, उर्दू और हिंदी।

जिस स्वतंत्रता के साथ लोग हिंदुस्तानी, उर्दू और हिन्दी को एक ही में घोलमेल कर डालते हैं उसके ग्रियर्सन साहब प्रबल विरोधी हैं। जान बीम्स साहब की तरह इनमें से हिंदुस्तानी को वह 'गंगा के ऊपरी दुआबे की भाषा' बतलाते हैं जो नागरी या फारसी दोनों लिपियों में लिखी जा सकती है और साहित्य में भी कविता संस्कृत या फारसी शब्दों को परिहार करती हुई भी काम में लाई जाती है। उर्दू को वे हिंदुस्तानी भाषा का वह रूप बतलाते हैं जिसमें फारसी शब्द बहुतायत से आते हैं और जो केवल फारसी लिपि ही में लिखी जा सकती है*। इस प्रकार से वे हिंदी को वह भाषा बतलाते हैं जिसमें संस्कृत शब्द बहुतायत से आए हैं और जो केवल देवनागरी अक्षरों में लिखी जा सकती है। स्मरण रहे कि यह शब्द 'हिंदुस्तानी' जान बर्थीवक गिलक्रिष्ट नामक एक अंगरेज का सन १८८७ का गढ़ा हुआ अंगरेजी शब्द है, जो उन्होंने फारसी शब्द 'हिंदोस्तान' से गढ़ा है पर वास्तव में इस शब्द का प्रसार उससे सूचित होनेवाले अर्थ से कहीं बढ़ चढ़ कर है क्योंकि हिंदुस्तानी के अलावा तीन और भाषाएँ यथा, बिहारी, पूर्वी हिंदी और राजस्थानी, हिंदुस्तान में बोली जाती हैं जिसे कम से कम प्रायः नौ करोड़ मनुष्य बोलते हैं†, जो इतने बड़े प्रदेश में बसते हैं जो जर्मनी फ्रांस और स्पेन तीनों के मिलाकर बराबर होना।

ग्रियर्सन साहब इस प्रचलित सिद्धांत से सहमत नहीं कि उर्दू भाषा वह खिचड़ी भाषा है जो मुगल दर्बार में भिन्न भिन्न देशों के लोगों के आने से दिल्ली के बाज़ारों में बोली जाने लगी थी। वे सर चार्लस लायल साहब की तरह बेखटके कहते हैं कि यह ऊपरी दुआबे पश्चिमी

* यह 'वनयन' शायद बनियों के लिखने की लिपि मुंडा या बेमात्रा की नागरी ही है। सं०

* नागरी प्रेमियों को तो इस बात का गर्व है कि कुछ विशेष चिन्हों के प्रचलित कर देने से नागरी लिपि में संसार की बहुत सी भाषाएँ शुद्ध लिखी जा सकती हैं।

† ये तीनों भाषाएं हिंदी ही का रूप हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...बे और पश्चिमी रुहेलखंड की सार्व-...लिक भाषा हिंदुस्तानी से बनी है और ...दिल्ली राजधानी के बहुरंगी बाजार से लेकर ...राज्य के कर्म्मचारियों ने इसे भारत के ...प्रदेशों में फैला दिया। मिस्टर विनसेंट ...साहब ने अकबर की जो जीवनी लिखी ...उसमें भी वे कहते हैं कि उस शाहंशाह की ...पोषकता के कारण फारसी और हिंदी दोनों ...ओं की अच्छी उन्नति हुई थी। हिंदुस्तानी ...के साहित्य में उर्दू का नंबर पहला है। यह ...विशेष कर पश्चिमी हिंदुस्तान में उन्हीं हिंदू ...मुसलमान निवासियों द्वारा बोली जाती है ...पर 'फारसी इख़लाक' का प्रभाव पड़ चुका ...। हिंदुस्तानी भाषा के प्रत्येक रूप में फारसी ...की योजना की जाती है, यहां तक कि गँवारी ...ओं में भी इसे समान आसन दिया जाता है। ...सन साहब का कहना है कि इसके बहिष्कार ...यत्न करना बिलकुल दुराग्रह होगा, जैसे कि ...कहे कि लाटिन मूल के सारे शब्द अंग-...से निकाल डालो। साथ ही वे यह भी ...ते हैं कि फारसी के कठिन कठिन शब्द ठूसकर ...को 'तोहफ़ा उर्दू' बनाना भी घोर अन्याय है। ...प्रकार की लिखावट में तो जहां देखो वहाँ ...करण देवताहां की तूती बोलती सुनाई ...ती है। *

लिखित भाषा।

हिंदुस्तानी भाषा के लिपि प्रयोग के बारे में ...र्म का विशेष प्रभाव पड़ा है। मुसलमान प्रायः ...रसी अक्षरों से और हिंदू देवनागरी अथवा ...ी अक्षरों से काम लेते हैं। सरल हिंदुस्तानी जिसमें न तो संस्कृत और न फारसी ही के कठिन शब्द मिलें हों दोनों ही लिपियों में लिखी जा सकती है और लिखी जाती भी है। ग्रियर्सन साहब उन कट्टर पक्षपातियों से कुछ सहानुभूति नहीं रखते जो लिपि के प्रश्न में धर्म्म का अड़ंगा लगाया चाहते हैं। * इसी बात पर अठारह वर्ष पहले जब युक्त प्रांत के छोटे लाट सर एण्टोनी मेकडोनल (अब लार्ड मेकडोनल होगए हैं) ने अदालतों में नागरी लिपि के प्रवेश की आज्ञा दी थी तो उत्तरी भारत में घोर आन्दोलन मच गया था। बहुत से मुसलमानों ने यह शोर मचाना शुरु किया कि हिंदी ही अदालती भाषा बनाई जा रही है।

ग्रियर्सन साहब कहते हैं कि ऐसे मामले में गवर्नमेंट भी खूब जानती है कि संस्कृत से भरी हिंदी और फारसी से भरी उर्दू सर्व साधारण के लिए दोनों ही समस्यारूप हैं और इस लिए गवर्नमेंट ने दोनों में से किसी को भी सहारा नहीं दिया था। उसका इरादा तो यह था कि अदालती कागज उन अक्षरों में लिखे जांय (बिना भाषा बदले) जिसे सर्वसाधारण सुगमता से पढ़ सकें। * पर इन विषयों पर प्रायः आन्दोलन और तर्क वितर्क हुआ ही करते हैं।

इस पुस्तक में पंजाबी भाषा और उसकी

---

* इसके बहिष्कार का यत्न कौन करता है यह तो ...स नहीं, पर हां अदालती भाषा में फारसी और ...सी के कठिन से कठिन शब्द अवश्यही ठूंसे गए हैं ...तो प्रत्यक्ष ही है। सं.

* हिंदी के पक्षपाती तो सुगमता के बल पर नागरीलिपि का प्रचार और प्रसार चाहते हैं। लिपि प्रश्न पर धर्म्म का अड़ँगा लगानेवाले कौन हैं, वह वेही जाने अथवा उर्दू के प्रेमी जानते होंगे।

* कौन अक्षर सुगमता से पढ़े जा सकते हैं यह तो आंख कान वालों से छिपा नहीं है कि वे 'नागरी' हैं। पर सरकार जब क्लिष्ट फारसी की पक्षपातिनी नहीं तो फिर अदालतों में क्लिष्टतर फारसी शब्दों की भरमार को क्यों नहीं रोकती?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकटवर्ती भाषाओं से उसके संबंध का भी ज़िकर है और ग्रियर्सन साहब का कहना है कि यद्यपि अब तक इस ओर लोगों का ध्यान नहीं गया है पर है यह भाषा भी अध्ययन करने योग्य है। ग्रियर्सन साहब कठिन भाषा के कट्टर शत्रु हैं, इस लिए परलोकवासी जान बीम्स की तरह उन्होंने भी इस बात पर आनंद प्रगट किया है कि पंजाबी और सिंधी भाषा में गेंहू की रोटी और झोपड़ी के धुंए की गंध आती है जो उनकी समझ में पूर्वी भारत की पांडित्यपूर्ण क्लिष्ट भाषाओं से कहीं अधिक स्वाभाविक और मोहनी है। यह कुछ ऐसी गूढ़ भी नहीं जैसा कि कोई कोई समझते हैं और गद्य तथा पद्य दोनों में हर एक प्रकार के भाव प्रगट करने के लिये इस में शब्द मिल जाते हैं। इस में साहित्य की कमी का कारण उसकी निकटवर्तिनी हिंदुस्तानी भाषा है जिसकी आड़ में उसकी सूरत छिप जाती है, यद्यपि पंजाबी, हिंदुस्तानी भाषा का केवल एक रूपांतर मात्र नहीं है। ग्रियर्सन साहब ने सिक्ख ग्रन्थों के भिन्न संस्करणों का हवाला देकर इस ग्रंथ को और भी काम की चीज़ बना दिया है।"

मनुष्य-परीक्षा।

हमारे यहां हाथ की रेखा इत्यादि देख कर मनुष्य के भाग्य की कथा बतलाने की चाल पुरानी है; पर यूरोपीय लोगों ने हमारी तरह केवल इसी पर संतोष नहीं किया वरन् वे इस बात की खोज में लगे रहे कि मनुष्य की आकृति देख कर उसके चरित्र का पता लगाया जा सकता है या नहीं। बहुत कुछ जांच के बाद रशिया के एक प्राणीतत्व विज्ञानी पनलो साहब ने कुछ तत्व प्रगट किए हैं जिससे मनुष्यों की आकृति देख कर उसके स्वभाव का सटीक परिचय मिल सकता है। यूरोपियनों के लिए यह बात बड़े मतलब की निकली क्योंकि उनमें प्रायः ब्याह हो कर पीछे से मन मोटाव हो जाया करता है, इस लिए यदि पहले ही से स्त्री पुरुष दोनों के स्वभाव को इस विज्ञान द्वारा ठीक ठीक जांच सकें तो यह दुर्घटना दूर हो जायगी।

हर एक मनुष्य का चेहरा तीन में से किसी न किसी ढंग का अवश्य होता है—मध्योन्नत, ऊपर उठा हुआ, भीतर को धसा हुआ या सीधा प्लेन। चेहरे की उक्त प्रकार की आकृति का पता तभी लगता है जब चेहरे को एक रुख से देखा जाता है। प्रत्येक आकृति के भिन्न भिन्न चिन्ह हैं और वे चिन्ह बहुत स्पष्ट हैं। अमुक चेहरे वाले मनुष्य का अमुक स्वभाव है इस विषय पर तरह तरह के मनमाने सिद्धांत गढ़े गए और तोड़े गए, पर जब तक मानस शास्त्र (मनोविज्ञान) की पूर्ण उन्नति नहीं हुई थी तब तक मनुष्य की आकृति देख कर ठीक ठीक नहीं बतलाया जा सकता था कि वह किस तरह का आदमी है।

आकृति से पुरखाओं का पता लगता है

जैसे कि दृष्टांत के तौर पर किसी मनुष्य का चेहरा देख कर हम कह सकते हैं कि उसके पुरखा कहां जन्मे थे, उनके रहन सहन में विशेष बातें क्या थीं, जीवन धारण करने के लिये उन्हें किन किन कठिनाइयों को झेलना पड़ा था, उनकी नीति और बुद्धि में क्या विशेषता थी और वंशपरम्परा से उनकी इन बातों में क्या क्या हेर फेर होता रहा है? एक सिद्धांत की जांच करने के लिये यदि थोड़ी देर के लिये यह मान लिया जाय कि हमारे पुरखाओं में से किसी को अपने बाल बच्चों के पोषणार्थ हिंसक जंतुओं के भोजन को चुरा कर काम चलाना पड़ा था इस लिये कि उस समय भोजन संग्रह करने में वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वंश उनसे अधिक बलशाली था। अब यदि यह अवस्था उस समय सौ दो सौ अथवा ऐतिहासिक काल के पूर्व एक हजार वर्षों तक चलती रही, तब उस जिले के निवासी उस वंश के लोग अवश्य वैसे चोर हो जाँयगे।

ये हजरत साधारण चोर सरीखे न होंगे, क्योंकि अपनी इस चौर्य्य वृत्ति को वे अधर्म्म कदापि नहीं समझेंगे। दूसरे लोगों की चीजें चुरा लेने की यह बान उनमें ऐसी जन्मगत हो जायगी और यह उनका एक ऐसा साधारण सा अभ्यास हो जायगा कि थोड़ा सा कायिक परिश्रम कर इस प्रकार से अपना खाद्य पदार्थ संग्रह कर लेना उन्हें कुछ भी अनुचित न जँचेगा।

इस प्रकार के धर्म्म अधर्म का विवेक रखने वाली चोर मंडली अवश्य ही बहुत ही भयानक होगी।* साधारण चोरों की अपेक्षा जो केवल सुस्ती या लालचवश चोरी कर लेते हैं उन चोरों की भयानकता का क्या कहना, क्योंकि अपनी जन्मगत वृत्ति के कारण ये लोग साधारण चोरों की अपेक्षा अधिक चतुर और निडर होंगे, क्योंकि पकड़े जाने के भय का कोई कारण उनके दिमाग में समा ही नहीं सकेगा।

अब प्राचीन समय में जो पुरखा अपने भोजन संग्रह के अर्थ परिश्रम करते थे उनकी संतान उस चौर्य्य वृत्तिवाले पुरखाओं की संतान से सर्वथा पृथक् स्वभाववाली होगी। चाहे उन पर सभ्यता का कैसा ही मुलम्मा क्यों न चढ़ जाय, अन्तर से उनका चोरी का स्वभाव नहीं जायगा। यह हम नहीं कहते कि ऐसे वंश में ईमानदार सज्जन लोग होहींगे नहीं। सैकड़ों वर्ष की गढ़न पीटन से होंगे अवश्य पर यह चोरी के स्वभाव का बीज उनके अंतर में छिपा रहेगा और पदार्थों की चोरी नहीं तो क्या और कई प्रकार की सामाजिक और धार्म्मिक (नैतिक) चोरी की ओर वे लोग सदा ढुलकते रहेंगे और जिनके पुरखा मेहनत की कमाई खाते थे उनके वंशधर अवश्य ही दृढ़ स्वभाव वाले और अपनी बात पर पक्के रहने वाले तथा किसी भी प्रकार की चोरी से आंतरिक घृणा करनेवाले होंगे।

उभरे हुए चेहरे वाले आदमी—छोटी गठीली नाक वाले, जिनका मुंह निकला हुआ, दांत का जबड़ा खूब प्रत्यक्ष, ठोडी कुछ भीतर को धँसी हुई और मस्तक भी ऐसा हो, ऐसे लोग असल में कोमल ऋतु के देश से आए हुए हैं। प्रोफेसर मोनी साहब ने इस विषय की अच्छी आलोचना की है और ऋतु भेद से किस प्रकार से उभरे हुए चेहरे के मनुष्यों की इस प्रकार की आकृति हो गई इसका खुलासा वर्णन किया है। इससे यह पता लगता है कि मानसिक परीक्षा से किसी मनुष्य के असली स्वभाव का पता लगाना कुछ कठिन नहीं है। जैसे दृष्टांत के तौर पर कहा जा सकता है कि जिन मनुष्यों के दांत बहुत आगे को निकले हुए हैं, उनके पुरखा फलों पर अधिक निर्वाह करते थे—ऐसे कोमल फलों को खाते थे, जो एक बार ही मुंह में डाल कर दांतों से काट काट कर खाए जाते थे। ठोडी कुछ भीतर को इस लिए धँस गई कि उस पदार्थ के होंठो तक पहुँचने पर सहज ही दांत उनको काट सके और काट कर खाने के कारण दांत कुछ आगे को बढ़ आए।

चिपटे नाक का कारण।

जिस ऋतु में फल बहुतायत से पैदा होता था वह ऋतु कुछ गर्म्म और नम थी, इस लिए उसमें आक्सीजन की कमी थी। नाक इसलिए

* जैसे कि यहां आगे ठग हुआ करते थे जो लोगों को गला घोंट कर मार डालते थे और इसे देवी के प्रताप का फल बतलाते हुए अपनी जीविका का साधारण उपाय समझते थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिपटी हो गई कि जिसमें नथुनों के छेद बड़े हो जांय और उसमें हर एक सांस के साथ जहां तक संभव हो सके अधिक वायु आ सके। क्योंकि उस प्रदेश में अक्सीजन कम होने के कारण सांस के साथ अधिक अक्सीजन खींचने की मनुष्य को आवश्यकता हुई और मस्तक के भीतर को धसने का कारण यह हुआ कि जहां फल वृक्षों में लगते थे वहां खाद्य पदार्थों के संग्रह के लिए मनुष्यों को अधिक दिमागी ताकत की आवश्यकता नहीं पड़ी, इस लिए दिमाग के लिए अधिक स्थान की आवश्यकता नहीं हुई।

इसी युक्ति से मानसिक नाप जोख करने वालों ने भीतर धसे हुए, समान या चिपटे चेहरे की विशेषता का ब्योरा लिखा है।

मनुष्य के चेहरे को देख कर उसके स्वाभाविक पूर्व वृत्तान्त का पता लगाते हुए तथा उसके जन्मगत स्वभाव और मानसिक विशेषताओं के संकेत को जानते हुए किसी मनुष्य के मन की परीक्षा करना सहज है और इस बात का भी लेखा लगाया जा सकता है कि उसका अमुक विशेष स्वभाव किस दर्जे तक है और अमुक अवस्था में पड़ने पर उसका मिजाज कैसा रहेगा अथवा अमुक अवस्था के न रहने पर वह किस प्रकार का बर्ताव करेगा।

मानसिक परीक्षा में केशों के रंग का भी बहुत कुछ प्रभाव है। यह प्रभाव स्त्री जाति पर विशेष है, क्योंकि उनके चेहरे की शोभा से इसका बहुत घनिष्ठ संबंध है और हरदम वे अपने चेहरे की बनावट का ध्यान रखती हैं जिससे प्रकृति ने भी विवश हो उनके विशेष विशेष विचार के अनुसार भिन्न भिन्न देशों में और भिन्न भिन्न प्रचलित फैशन के अनुसार स्त्री जाति के चेहरे की बनावट में फर्क डाल दिया है।

पर प्रकृति माता—स्त्रियों के केश का रंग नहीं बदल सकती। एक भूरे बालों वाली रमणी को काले बालोंवाली कन्या हो सकती है, जिस का कारण यह है कि या तो उसके पिता के बाल काले हैं और यदि पिता माता दोनों के बाल भूरे हैं तो किसी काले बाल वाले पूर्व पुरखे के संचित बीज इन पिता माता में आकर उस कन्या के बाल काले करने का कारण हुए हैं। इससे साबित होता है कि घूम फिर कर उस कन्या के केश उसके वंश की विशेषता का परिचय अवश्य देते हैं।

प्रोफेसर मोनी साहब का कहना है कि काले बालवाली स्त्रियों की अपेक्षा भूरे बालवाली स्त्रियां अधिक चंचल होती हैं, इस कारण काले बाल वाली रमणी अवश्य ही अधिक गंभीर आगमसोची और आज्ञाकारिणी होगी। इन लक्षणों से पुरुष को अपनी संगिनी के चुनने में अधिक सुभीता हो सकता है। यदि वह चंचल नारी के पाले पड़ना चाहे तो भूरे बाल वाली से विवाह करे, यदि सीधी साधी आज्ञाकारिणी रमणी चाहे तो काले बालवाली से परिणय करे।

भूरे और काले केशों वाली रमणी।

भूरे केशों वाली रमणी उस वंश में है, जिसके पुरखे दैवात या किसी कारण वश उत्तर के शीत प्रधान देश में जा बसने के लिए विवश हुए थे। शीत प्रधान, बर्फीली और उजाड़ उत्तरी भूमि में निवास करने के कारण खाद्य पदार्थों के संग्रह के लिए उन्हें नाना प्रकार के उपाय उद्भावन करने पड़ते थे और कभी कभी बहुत कुछ कष्ट और तरद्दुद तथा परिश्रम के बाद खाद्य पदार्थ प्राप्त होते थे, जिस कारण ये लोग खूब परिश्रमी उपाय उद्भावन करने में चतुर और कष्टसहिष्णु हो गए। भोजन के लिये उन्हें नित्य विपक्षी युद्ध करना पड़ता था। पशुओं से बचा कर, परस्पर एक दूसरे की छीना झपटी का अवसर बचा कर तब कहीं वे भोजन-संग्रह कर पाते थे।

इन दिनों चंचलता एक गुण समझा जाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन जातियों की स्त्रियाँ केवल पान फूल की सी थीं। इन जातियों की स्त्रियाँ केवल पान फूल की सी थीं। जीवन-संग्राम में उन्हें भी पूरा भाग लेना पड़ता था। खाद्य-पदार्थ संग्रह के लिये लड़ कर उनका छुटकारा न था, उसे रक्षित रखने के लिये भी उनके सिर का पसीना पैर तले आता था। भूखा आदमी 'प्रेम के प्याले' का प्यासा नहीं होता। सृष्टि के आदि मनुष्य इस सिद्धांत की परवा नहीं करते थे कि पहले बाल बच्चों को खिला कर तब आप खाँय, उनका सिद्धांत तो यह था कि पहले अपना पेट भरना, औरत और बाल बच्चे मरें चाहे जीएँ।

इसीलिए आज कल की भूरे बाल वाली स्त्रियाँ बड़ी चतुर चालाक और रणचंडी रूपा हैं। अपने अधिकार के लिए ये अवश्य ही लड़ाई लड़ाई करेंगी और उस लड़ाई को ढंग से करने की बुद्धि भी उनमें होगी। उधर काले बालों वाली स्त्रियाँ कोमल ऋतु की जन्मी हुई हैं। उनके पुरखा वहां जा टिके थे जहाँ साग पात और फलों की बहुतायत थी। खाद्य पदार्थ संग्रह उनके लिये सहज था, इसीलिए वहाँ औरतों के नखरों को भी बरदाश्त करने का उन्हें अवसर मिल गया था।

इन कृष्ण केश वालियों ने सहज ही में ताड़ लिया कि ज़रा हाव भाव दिखाने ही से वे अपने भोजन संग्रह के कष्ट से बच जायँगी और पुरुष छाती पर हाथ रखे उनका भोजन सामने ला रखेंगे। थोड़े ही दिनों में उन्हें यह भी पता लग गया कि उनमें युवा पुरुषों को परस्पर लड़वा देने की भी सामर्थ्य है।

औरतें भला ऐसा मौका चूकती थोड़े ही हैं। अब उन्होंने नाना प्रकार के चोंचले, नखरे और बनावटी लज्जा के हाव भाव दिखा कर पुरुषों को नाच नचा कर तमाशे का आनंद लेना आरंभ किया।

काले बालों वाली अधिक प्रेम करती हैं। यह इस सावधान भी हो गईं और कुछ वहमी भी हो गईं क्योंकि धीरे धीरे उन्हें यह भी पता लग गया कि प्रेम की खींचा तानी में पुरुष अनुचित लाभ भी उठा लिया करते हैं जैसे कि अर्थ सिद्ध करने के लिए पहले नाना प्रकार के प्रलोभन देते हैं और फिर जहां दूसरी रमणी पर मन गया तो उधर ही को ढुलक गए। इसलिए उन रमणियों ने ऐसी स्त्रियों का अनुकरण करना आरंभ किया जो प्रेमियों को अधिक आकर्षण करनेवाली होती थीं और अपने सच्चे प्रेमी की भक्ति करना और उस पर भरोसा करना भी वह सीख गईं। इससे साबित हुआ कि काले बालों वाली स्त्री सीधी अनुकरणप्रिय, शांत, धीर, आज्ञाकारिणी, बुद्धिमती और अधिक मोहनी होती हैं और जब एक बार उन्हें निश्चय हो जाता है कि अमुक व्यक्ति मेरा सच्चा प्रणयी है तो फिर जी जान उस पर न्योछावर कर देती हैं। अपने पुरखाओं से उन्होंने हाव भाव के ये खेल सीखे हैं। भूरे बाल वालों की अपेक्षा वे अधिक चोंचले दिखाती हैं।

प्रोफेसर मोनी साहब का कहना है कि भूरे बालों वाली औरतें प्रायः खिलवाड़ की चीज हैं और असली प्रणय का आनंद काले बाल वालियों ही से आ सकता है।

इस प्रकार से हर एक आदमी को इन मानसिक क्रियायों की यथासाध्य जांच करने की योग्यता अवश्य प्राप्त कर लेनी चाहिए। इससे उसे परिणय कार्य्य में समाज-शास्त्र के अध्ययन से भी अधिक सहायता मिलेगी।*

---

* मनु महाराज ने भी पिंगलवर्णा कन्या से व्याह निषेध किया है। भूरे आंखवाली कन्या भी निषिद्ध है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतवर्ष में लोहे का कारखाना ।

कई युरोपीय विद्वानों का कहना है कि भारतवासियों ने पहले पहल लोहे की गलाई इत्यादि की विद्या चीनियों से सीखी, पर यदि हमारे इतिहास महाभारत रामायण आदि प्रामाणिक माने जाँय तो मानना पड़ेगा कि लोहे को गला कर नाना प्रकार के अस्त्र शस्त्र आदिकाल से यहाँ बनते हैं। जब सोना चाँदी गला कर आभूषण बनाना भारतवासी सहस्रों वर्ष पूर्व से जानते थे और लोहा गला कर फौलादी शस्त्र बनाने में निपुण थे जिसका जिक्र ऋग्वेद तक में है, तो युरोपियनों का यह कहना कि लोहा गलाना और पीटना भारतवासियों ने चीनियों से सीखा, जी में बैठता नहीं। हाल में रायल सोसाइटी आफ आर्ट्स के भारतीय विभाग में "ताता के लोहे के कारखाने" पर एक निबंध पढ़ते हुए मिस्टर एच० एम० सूरटीस टकवेल एम० आइ० एम० बी० साहब ने यही मत प्रगट किया है पर शायद उन्होंने भारत के उन प्राचीन ग्रंथों को नहीं टटोला जिनमें भारतवासियों के इस कला में निपुण होने का वर्णन है।

यहाँ उन प्राचीन ग्रंथों से वचन उद्धृत करने में हम कोई विशेष लाभ नहीं समझते। हमें केवल यही दिखाना है कि बिलायती ढंग पर "लोहे के कारखाने" का काम यहाँ कब से आरंभ हुआ। यह तो कई युरोपियन महाशयों को भी मुक्तकंठ से स्वीकार करना पड़ा है कि यह विद्या भारतवर्ष में बहुत पुराने समय से ज्ञात है, क्यों कि पुराने ढंग के अस्त्र शस्त्र बहुत से ऐसे पाए गए हैं जिनकी कारीगरी देख कर बुद्धि चकित रह जाती है, इनमें तीन सहस्र वर्ष पुराना दिल्ली का लोहस्तम्भ आज दिन भी देशी लोहारों की विजय दुन्दुभी बजा रहा है। इस स्तम्भ की कारीगरी को देख कर आज कल के बड़े बड़े युरोपियन लुहारों की भी बुद्धि चकरा जाती है।

पहले पहल युरोपियन ढंग पर लोहे का कारखाना जारी करनेवाला यहाँ का एक मंदराजी सीवीलियन था जिसका नाम जोजफ मार्शल हीथ था। यह विख्यात युरोपियन ग्रंथकर्ता चार्लस डिकंस साहब का मित्र था और सन १८३० में तात्कालीन शासक इस्ट इंडिया कंपनी से आज्ञापत्र प्राप्त कर मंदराज के किनारे पोर्टनोवो नामक स्थान में उसने लोहे का कारखाना स्थापित किया था। पर पूँजी कम होने और अनाड़ी कारीगरों से पाला पड़ने के कारण गवर्नमेंट द्वारा साढ़े पाँच लाख रुपये की सहायता मिलने पर भी वह उसे चला न सका और १८३ में उसने पुनः सर्कार से सहायता चाही, पर इस बार सर्कार ने सहायता नहीं दी और हीथ साहब का शरीरांत हो गया तथा १८७४ तक यह कारखाना बंद होहवा कर अपने ठिकाने लगा।

दूसरा उद्योग सन १८७५ ईस्वी में कलकत्ते से १४३ मील दूर झरिया की कोयले की खानों के पास बराकर आइरन वर्कस कंपनी के नाम से हुआ पर उसमें भी सफलता नहीं हुई और उस साल वह कारखाना बंद हो गया। पर गवर्नमेंट इसके पीछे पड़ी रही और पहले १८८१ में और फिर १८८९ में कारखाना जारी किया गया और यह कारखाना सर्कार ने बंगाल आइरन एण्ड स्टील कंपनी के सपुर्द कर दिया, जिसने सफलता पूर्वक लोहे की ढलाई का काम शुरू कर दिया। सन १९०५ में इस कंपनी ने कारखाने में एक फौलादी महकमा भी खोला पर इस्पात के छोटे छोटे चीजों की उतनी माँग नहीं थी जिस से उसका खर्च निकल सकता। गवर्नमेंट ने अपने कामों के लिये छः महीने तक के लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक सौ अस्सी आर्डर दिए जिनमें सब मिला कर एक हजार टन माल था और वह माल कारखाने के भिन्न भिन्न सत्तर विभागों में बनवाना पड़ा था। इस प्रकार से माल बनाने में बहुत कुछ हानि हुई और साल भर बाद फौलादी विभाग बंद कर देना पड़ा। तौ भी यह कंपनी लोहे के सीपर, लोहे के ढलुवाँ नल, मिलों के लिये लोहे की बड़ी बड़ी खूँटियाँ, सब ही कुछ बनवाती रही और ढलुवे लोहे की चीजों को उसने अपना विशेष कृत्य रखा। यद्यपि इस कंपनी ने समय समय सहायता के लिये गवर्नमेंट से भी प्रार्थना की थी पर उतनी यथेष्ट सहायता नहीं मिल सकी जिससे उसका काम बखूबी चल सकता।

तीसरा और सब से बड़ा उद्योग ताता आइरन एण्ड स्टील कंपनी का सन् १९०७ में आरंभ हुआ। मिस्टर ताता का नाम तो इस समय सुविख्यात हो रहा है। उनके ऐसा बड़ा व्यापारी भारतवर्ष में दूसरा नहीं था और एक मुश्त तीस लक्ष मुद्रा कलाकौशल के विद्यालय के स्थापनार्थ दान कर उन्होंने भारत की गिरी हुई कारीगरी के पुनरुत्थान की जो चेष्टा की है, उससे साफ प्रगट हो रहा है कि उन्हें इस ओर कैसी लगन थी। इस लोहे का कारखाना स्थापन करने से पहले से भी बंबई और नागपुर में उनकी कई कपड़े की मिलें सफलतापूर्वक चल रही हैं जिनका माल अन्य स्वदेशी मिलों की अपेक्षा अधिक उम्दः और सस्ता होता है। लोहे का कारखाना स्थापन करने के लिए उन्होंने कई बार अमेरिका और जर्मनी की यात्रा की थी और उन स्थानों पर जा जा कर स्वयं वहां के कारखानों को देखा और जांचा था और उन विषयों के विशेष ज्ञाताओं से सलाह इत्यादि ली थी। कई बार की यात्रा और जांच पड़ताल के बाद यह कारखाना स्थापित किया गया। यद्यपि स्थापनकर्ता अपने जीवन काल में इसको चलता न देख सके, पर मरण समय अपने वारिसों को इस कार्य को सिद्ध कर देने की वे ताकीद कर गए थे। वर्षों से समाचार पत्रों में इस महान् उद्योग की प्रशंसा सुनने के कारण इसे जाकर स्वयं देखने की मुझे प्रबल इच्छा थी। संयोग से ऐसा अवसर भी आ बना। गत दिसंबर मास में जातीय महासभा में सम्मिलित होने के लिए कलकत्ते जाना पड़ा और यह कारखाना कलकत्ते से बहुत दूर नहीं है इस लिए इसे भी देखने का अवसर हाथ आ गया। बंगाल नागपुर रेलवे की जो लाइन कलकत्ते से बंबई गई है उसी लाइन पर कालीमाटी एक स्टेशन है जिसका किराया कलकत्ते से दो रुपए के लगभग है। * दिन के एक बजे बंबई मेल में सवार होकर संध्या के समय कालीमाटी पहुँच गए, पर उस समय वहां न उतर आगे चक्रधरपुर में अपने एक आत्मीय के यहाँ जा ठहरे और दूसरे दिन प्रातःकाल लौटती मेल से कालीमाटी लौट आए। यहां से करीब पांच या छः मील की दूरी पर कारखाना है जो साकची नामक †ग्राम में स्थित है। कालीमाटी स्टेशन पर मोटर, बग्घी, इक्का सब कुछ मिलता है। आठ आना देकर मोटर पर बैठे और एक प्रबल झटका देकर मोटर रवाना हुई। इसे यदि आप यहां के उम्दः गद्देदार बिना शब्द के चलने वाली हवागाड़ी समझे हों तो यह आपका निरा भ्रम है। यह मोटर क्या थी मानों छकड़ा थी और एक विचित्र गों गों शब्द करती और धूल का गुब्बार उड़ाती तथा आरोहियों को धूल के फाग खेलने का आनन्द देती हुई, सूर्योदय के पूर्व ही साकची पहुँच गई। सर्दी खूब कड़ी थी। यहां के बाजार में पं० महादेव प्रसाद गजाधर

* कलकत्ते से १४० मील है।

† अब तो वह ग्राम अच्छे शहर की सूरत में आ गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसाद ने आटा पीसने की एक कल खोली हुई है। पूर्व परिचय के कारण उन्हीं के यहां डेरा डाला। पता लगा कि काशी से आए हुए कई गुजराती भी कल संध्या से उनके यहां टिके हुए हैं। जब सबेरे उन लोगों से भेंट हुई तो वे लोग प्रायः सब ही अपने परिचित निकले और मुक्त कंठ से पं० गजाधर प्रसाद जी की प्रशंसा करने लगे जिन्होंने अपरिचित होते हुए भी इन विदेशियों को अपने यहां स्थान दिया था। ये लोग कहने लगे कि साकची भर में हैरान होने पर भी जब रात्रि यापन के लिए कोई आश्रय न मिला तो इन महाशय ने अत्यंत कृपापूर्वक हम लोगों को आश्रय दिया। यद्यपि युरोपियन ढंग के होटल डाक बंगले इत्यादि साकची में हैं पर काशी के कट्टर गुर्जर ब्राह्मणों का वहां गुजारा नहीं हो सकता था, और यद्यपि इनमें से कई सज्जन ताता कारखाने के हिस्सेदार भी थे, पर विवश हो उन्हें बहुत ही भटकना पड़ा था। यद्यपि साकची इस समय बिजली की रोशनी तथा नवीन साफ सड़क से सुशोभित हो लक दक हो रही है पर पुराने विचार वालों के ठहरने के लिए कोई प्रबन्ध नहीं है। कंपनी को बहुत शीघ्रही धर्मशाला की तौर पर कट्टर हिन्दुओं के लिए एक पांथशाला निर्माण करवा देनी चाहिए। यदि पं० गजाधर प्रसाद से परिचय न होता तो हम लोगों की भी बुरी दशा होती। एक तो कट्टर हिन्दु के लिए कोई पांथशाला नहीं है, दूसरे कालीमाटी से साकची तक की सड़क की धूल का तो क्या कहना। उसी दिन कारखाने के डाइरेक्टर लोग स्वच्छ फैशनएबल पार्सी लेडियों के साथ कारखाना निरीक्षण करने पधारे थे सो वे लोग भी रास्ते भर मोटर पर धूल फांकते आए। हम नहीं कह सकते कि डाइरेक्टरों का ध्यान सड़क की अवस्था पर गया या नहीं? जब साकची में आज कल नित्य नवीन सड़कें और इमारतें बन रही हैं तो फिर इस सड़क की ओर ऐसी अवहेलना का कारण समझ में नहीं आता। अवश्य ही कंपनी के डाइरेक्टरों को इसका शीघ्र प्रबंध करना चाहिए क्योंकि चारों ओर से सब्ज पहाड़ियों के बीच, स्वच्छ सुंदर सड़क और बिजली की रोशनी के मध्य, नए फैशनएबल उद्यान गृहों के साथ ऐसी धूलियुक्त सड़क एक कलंक है और वर्षा में इस सड़क की क्या अवस्था होती होगी यह तो बिना अनुभव किए वर्णन नहीं किया जा सकता। अस्तु जो हो साकची पहुंच कर सारा कष्ट भूल गया। यहां की स्थिति वास्तव ही मनोरंजक है। चारों ओर से सब्ज पहाड़ियों ने इसे चक्राकार घेरा है, जिनकी ऊंचाई ५०० सौ से लेकर ३५०० फुट तक है और कंपनी यहां एक स्वास्थ निवास बनवाने का भी विचार कर रही है। यहां की आबोहवा बहुत अच्छी है, क्योंकि चारों ओर कोसों तक खुला हुआ मैदान है, दूसरे यह छोटा सा शहर भी बहुत साफ और सुथरा है। मकान जो सब बने हैं सब एक मंजिले हैं और सबों के सामने उद्यान है जो लता तोरणों से सुशोभित है। बिजली की रोशनी बिजली के पंखे और कल के पानी का बड़ा अच्छा प्रबंध है। साफ सुथरी साकची उस कुल की नवोढ़ा रमणी की तरह हँस रही है। सौभाग्य से हमारे पं० गजाधर प्रसाद जी भी सज्जन मिल गए। इन्होंने खातिरदारी में कोई कसर न रखी और यद्यपि डाइरेक्टरों के आने के कारण सर्व साधारण को आज कारखाना देखने की मनाही थी पर तौ भी अपने साथ ले जाकर इन्होंने आज्ञापत्र प्राप्त कर ही लिया और घंटों घूम घूम कर दो दो बार हम लोगों को कारखाना दिखलाया तथा स्वयम् सब बाते बड़े उत्साह के साथ समझाईं।

साकची समुद्र तल से ५३२ फुट की ऊँचाई पर बसी हुई है और यद्यपि गर्मी के दिनों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डिगरी तक पारा चढ़ जाता है पर ऋतु ही नहीं होती जो बरदाश्त न की जा सके। के उत्तर की ओर सुवरन रेखा और पश्चिम की ओर खोरकाई नदी बहती है तथा दक्षिण की ओर बंगाल नागपुर रेलवे का स्थान है जिसके द्वारा सुगमता से कच्चे माल की आमद और पक्के माल की रफ्तनी हुआ करती है। कंपनी ने परीक्षा द्वारा खूब समझ बूझ कर यह अमूल्य स्थान बहुत थोड़े मूल्य पर प्राप्त कर लिया है, क्योंकि यहां के जमींदार पहाड़ी राजा थे, उन्हें इस धरती का कुछ भी ज्ञान न था जहाँ पग पग पर अबरख, लोहे, चांदी और सोने की खानें छिपी पड़ी हैं।

फर्वरी १९६८ से जंगल की सफाई का काम शुरू किया गया। यहां इस समय घनघोर पहाड़ी जंगल में हाथी शेर और चीते स्वच्छंदतापूर्वक विचरते थे, उन्होंने अब घोरतर बन और कंदराओं में प्रवेश किया तथा फौरन ही लोहा लंगड़, काठ कबाड़, ईंटा सुरखी चुना, माल मसाले के ढेर के ढेर कालीमाटी स्टेशन द्वारा आ पहुंचे और इमारतें बनने लगीं। कालीमाटी स्टेशन के भी भाग जग गए। जो अब तक एक साधारण मटिया स्टेशन था वह लंबे चौड़े प्लेटफार्म तथा नए क्वार्टरों द्वारा सुशोभित हो बिजली से दीप्यमान हो उठा तथा सुवर्णरेखा नदी से नल लेकर पानी की कल की भी स्थापना हो गई। जिसमें नौहजार फुट की दूरी से आठ्ठाइस इंच मोटी पाइप बैठा कर दस लाख गैलन पानी चौबीस घंटे में लाकर इकट्ठा किया जा सके ऐसा एक महाकाय कुंड भी बनाया गया। देखते देखते अलादीन के चिराग की तरह आधुनिक जड़ विज्ञान की बदौलत यह माया नगरी सालही भर में नंदनबन सी शोभायमान हो गई, यहां तक कि बिजलीघर और बर्फ के लिये भी एक कारखाना स्थापित हो गया। यहां हर तरह का सुबीता है। थियेटर, लाइब्रेरी, स्कूल और बायस्कोप का भी अभाव नहीं है। आप सुन कर आश्चर्य्य करेंगे कि छोटी सी नगरी में बिजली की रोशनी और पंखे संयुक्त दो दो नाट्यशालाएं हैं एक देशी और एक विलायती और वैसे ही दो क्लबघर भी हैं। जहाँ देखो वहाँ बिजली की बदौलत सब ही कार्य्य सुगम हो रहे हैं। डाइरेक्टरों का इरादा इस नगरी को और भी बढ़ाने का है और कोई भी भद्र पुरुष जो वहाँ का निवासी होना चाहे उससे खर्च लेकर कंपनी अपनी ओर से सुंदर उद्यानयुक्त गृह बनवादेगी तथा विशेष अवस्थाओं में कंपनी अपने खर्च से भी बनवा देगी जिसमें उद्यान गृह और बिजली की रोशनी और पंखे के लिये उचित भाड़ा देकर आनंद से निवास कीजिये। बिजली की शक्ति किराये पर मिलने के कारण छोटे छोटे कारखाने जैसे कि पं० गजाधर प्रसाद जी ने आटे की छोटी सी कल जारी कर रखी है, सुगमता से यहाँ चल सकते हैं। थोड़ी पूँजी वाले अध्यवसायी युवकों को इनसे अवश्य लाभ उठाना चाहिए। मारवाड़ी भाइयों ने यहाँ डेरा डालना आरंभ कर दिया है और वे अपना एक स्वतंत्र ही नगर बसा रहे हैं। यह अध्यवसायी जाति ऐसा मौका भला क्यों चूकने लगी। थोड़े से खर्चे से यहाँ कई प्रकार की शिल्प कला की कलें चल सकती हैं और जब कि यह नगरी दिन पर दिन बढ़ती जा रही है तो लोगों के नित्य के व्यवहार की कलें जैसे कि आटा पीसने, चावल छटाँने, कपड़ा धोने, तेल निकालने, साबुन बनाने, कपड़े बुनने इत्यादि के छोटे छोटे कारखाने भी थोड़ी पूँजी से सुगमतापूर्वक यहाँ चल सकते हैं। नित्य के आवश्यकद्रव्यों की साफ सुथरी दुकानों की भी यहाँ अभी गुंजाइश है, यद्यपि बहुत सी ऐसी दुकानें हो भी गई हैं। केवल पचास रुपया मासिक देकर पं० गजाधर प्रसाद जी बिजली की शक्ति किराए पर लेकर आटे की कल भी चलाते हैं, बिजली की रोशनी और पंखा भी है और कल का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पानी भी इसी में मिलता है और मजे में वे पाँच सात रुपए रोज उपार्जन करते हैं।

अस्तु १९१० में बड़ी बड़ी मशीनें यहाँ बैठाई गईं तथा ता० १२ अक्तूबर १९११ तक सब तैयार हो हवा कर पहला भट्टा सुलगाया गया तथा १९१२ में लोहे की ढलाई का काम जारी हो गया और लोहे की पटरियाँ छड़ इत्यादि सब ही प्रकार की चीजें बनने लगीं। प्रायः चार हजार मजदूर इस कारखाने की इमारतों के बनाने में लगे थे। यहीं पहले पहल इस्पात ढालने का काम युरोपियन ढंग से किया गया। यद्यपि नए नए विभाग स्थापित करने के लिये नित्य नयी नयी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा पर सब ही धीरे धीरे दूर होती गईं और दिनों दिन कारखाने की उन्नति होती गई। पहले पहल तो इस कारखाने में युरोपियन और अमेरिकन कारीगरों ही की भरमार थी, पर धीरे धीरे जब भारतीय कारीगर निपुण होते गए तो उनके स्थान पर उन्हें नियुक्त किया गया और अब थोड़े से युरोपियन निरीक्षकों के अधीन कारखाने का यावत् काम देशी आदमी सफलतापूर्वक कर रहे हैं। कारखाना देखते समय कारीगरों के मेट एक बंगाली मुसलमान ने हम लोगों से बड़ी सज्जनता पूर्वक आलाप किया और स्वयं ले जाकर अपना विभाग अच्छी तरह दिखाया और समझाया तथा चलते समय आपने आधी दर्जन सोडावाटर की बोतलें भेंट की। पर हमारे काशी निवासी गुर्जर ब्राह्मण संगी उन्हें विशेष उपयोग में न ला सके और उन्होंने उन्हें धन्यवादपूर्वक वापस किया।

रसायन विभाग में अभी युरोपियन लोग हैं पर अन्य विभागों में देशी ही कारीगर दीखते हैं और इस विलायती ढंग के काम में उनकी निपुणता किसी से भी कम नहीं पाई गई। मेशिनरी के काम में बंगाली मुसलमान और सांचे तथा खराद के काम पर हमारे खालसा भाइयों की बहुतायत है। वास्तव में भारतीय मजदूरों में इन दो जातियों के ऐसी परिश्रमी और अंग्रेजी ढंग के कलकब्जों के काम को शीघ्र ही समझ कर उपयोग में लानी वाली दूसरी जाति कम होगी। यहांतक कि यहां का वृहत् काष विद्युत शक्ति गृह (Electric Power House) भी एक भारतीय ग्रेजूएट युवक की निरीक्षकता में चल रहा है जिनके अधीन वही बंगाली मुसलमान और सिख मजदूरे बड़ी खूबी से बिजली के यावत् काम को सँभाले हुए हैं। कलकत्ते से मेलट्रेन में आते समय दूर ही से कारखाने के लाल लाल आग के लपटों से कोसों आकाश लाल हो रहा था और उस लालिमा के बीच अगणित बिजली की रोशनी के प्रकाश, दूर से एक अलौकिक महाकाय रंगमंच का बोध कराते थे।

कारखाने में प्रवेश करते ही पहले पहल दृष्टि जिस वस्तु पर पड़ती है वह परलोक वासी महात्मा ताता की चबूतरे पर बैठी हुई एक वृहत्काय लोहे की ढली हुई मूर्ति है जो ठीक कारखाने के सामने इस ढंग से बैठी हुई है मानों अपनी कृति को शांति और संतोष के साथ निरीक्षण कर रही है। इन्हें मनोमन प्रणाम कर आगे बढ़े तो एक रेलवे लाइन के ऊपर होकर जाना पड़ा। कारखाने में प्रत्येक विभाग के पास पास लाइनें बनी हुई हैं जिन पर रेल गाड़ियाँ कच्चा माल लाती और पक्का माल तुरंत ढोकर ले जाती हैं। उधर माल बना और क्रेन द्वारा उठा कर गाड़ी पर लादा गया और तत्क्षण गाड़ी दौड़ती हुई गुदाम की ओर रवाना हुई और वहाँ माल पटक कर फिर अपने ठिकाने आ खड़ी हुई अथवा एक कारखाने से दूसरे कारखाने तक चली गई। इन छोटी छोटी गाड़ियों में इंजन नहीं होते, नीचे लाइनों में बिजली का संयोग है जिससे गाड़ियां सब एक निर्दिष्ट वजन का बोझा पाते ही आपसे आप चल पड़ती हैं। देखने से आश्चर्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ता है कि किसी जादू से यह सब कृपा हो रही है। कौन जाने हमारे यहां के जादू और मंत्र-तंत्र की सारी क्रियाएँ भी अदृश्य बिजली ही की शक्ति के सहारे होती होंगी।

अस्तु, लाइन पार हो कर एक बड़े भारी सरोवर पर दृष्टि पड़ी। यही सरोवर सुवर्ण-रेखा नदि से परिपूरित कर के कारखाने के साथ सटा हुआ बनाया गया है, क्यों कि कारखाने को पानी की आवश्यकता बहुत अधिक है। जिधर देखो पानी की नालियाँ बह रही हैं, क्यों कि जिन भट्ठों में लोहा गलता है, उनके उपर से चारों ओर से निरंतर जल की धारा बहती रहती है नहीं तो उसके पास खड़े होना असंभव होता और शायद वह भट्ठा अग्नि रूप हो कर फट पड़ता। इतना प्रचंड उत्ताप उस महाकाय भट्ठे में लोहा गलाने से होता है।

इस कारखाने के बड़े इंजीनियर का नाम मिस्टर पेरिन है। ये जब कारखाने में पधारते हैं १०००) रोज़ मेहनताना लेते हैं, और यों घर बैठे ५००) मासिक पाते रहते हैं। ये एक अमेरिकन महाशय हैं और सुनने में आया कि अमेरिका और जर्मनी के सभी बड़े बड़े लोहे के कारखानों के Consulting Engineer * हैं और सब से उनका निर्दिष्ट वेतन बँधा हुआ है। इन्होंने अपने नाम और अपने खर्च से साकची में एक स्कूल-भवन भी निर्म्माण करवा दिया है जिसमें इस समय मिडिल तक शिक्षा होती है। इन इंजीनियर महाशय की कृपा से रामदास नाम का एक ठेके-दार मालोमाल हो गया। पहले यह ।।।) रोज़ का पढ़ई था, पर अपने परिश्रम और अध्यवसाय तथा पेरिन साहब की कृपा से इस समय साकची में यह सबसे बड़ा धनी ठेकेदार गिना जाता है।

यद्यपि पहले यहां घना जंगल था और उसे काट कर यह बस्ती बसाई गई है, पर कंपनी ने एक काम बहुत अच्छा किया है, बड़े बड़े सघन पेड़ों को ज्यों का त्यों रहने दिया है। जिससे इस नगरी की सुन्दरता और भी बढ़ गई है, यहां तक कि इन वृक्षों के कारण रास्ते और चौराहे कई जगह टेढ़े मेढ़े हो गए हैं, पर इन प्रकृति के स्वाभाविक उपकारकों को जीवनदान देकर कंपनी ने स्वार्थ परमार्थ दोनों ही का साधन किया है। जिधर देखो सघन छाया दृष्टिगोचर होती है, पर वह ऐसी नहीं कि जिससे सूरज की रोशनी को बाधा पहुँच सके। साफ स्वच्छ वायु और रोशनी की कमी नहीं है।

पहले हम लोग उस विभाग में गए जहाँ सांचा बन रहा था। सांचे पहले मिट्टी के बनाए जाते हैं। फिर उन्हीं में लोहा ढालकर लोहे का पक्का सांचा तय्यार होता है। इस विभाग के मज़दूर प्रायः सब पंजाबी सिक्ख हैं, जिन्हें १) रोज़ मजूरी मिलती है। इस कारखाने में कई सांचे नीचे कुछ गढ़हा खोद कर बनाए जा रहे थे, गढ़हे में अंधेरा था पर वहां लालटैन का बड़ा सुन्दर प्रबंध था। मजदूरा पाकेट में एक कांच की छोटी सी मोटी चिमनी रखता है। भूमि पर सर्वत्र बिजली के तार बिछे हैं। उस चिमनी के सिरे पर भी एक तार है। बस उस तार से संयोग करते ही रोशनी बल उठती है और नीचे गड़हे में बिजली का प्रकाश हो जाता है। काम हो जाने पर तार को विछिन्न कर कांच के ग्लोब को मजूरा फिर पाकेट के हवाले करता है। वास्तव में जड़ प्रकृति को बस में करके क्या क्या करामातें मनुष्य कर सकता है इसका दृष्टान्त यहाँ पग पग पर दिखाई देता है। हरेक विभाग की छत के संग सटी हुई क्रेन इधर से उधर दौड़ती हुई, बड़ी बड़ी भारी चीजों को इधर से उधर रखती और उठाती रहती है। कारखाने के दर्शकों को खूब सावधान रहना

* अर्थात् इन्हीं की सलाह से सब काम होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिए, क्योंकि सिर के ऊपर सैकड़ों मन वजन की मोटी जंजीर लटकाए धड़ाधड़ क्रेनें दौड़ा करती हैं, जरा चूके नहीं कि खट से उस जंजीर से खोपड़ी टकरा जाने का खतरा है। हमारी निगाह तो हरदम उधर ही थी। यदि एक टुकड़े लोहे को भी इधर से उधर करना पड़ता है तो वह क्रेनों द्वारा ही होता है, मजदूर द्वारा नहीं। क्योंकि कोई भी टुकड़ा दो चार टन से कम का नहीं होता।

इस कारखाने में एक विशेषता और भी हो रही है। जब कभी किसी साधारण मेशीन (कल पुर्जे) की आवश्यकता होती है तो तुरत ही निपुण कारीगर उसका सांचा बना कर तय्यार कर लेते हैं और उसीमें ढाल कर नए पुर्जे तैयार कर लिए जाते हैं। धीरे धीरे यथा संभव सब ही प्रकार की मशीनें बना डालने का यहां प्रयत्न हो रहा है और संभव है कि कुछ दिनों में इस सांचे बनाने के विभाग द्वारा इस अभाव की बहुत कुछ पूर्त्ति हो सकेगी।

पहले पहल जो मशीन अमेरिका से मँगवाई गई थी उससे रेल की लाइनें ढाली जाती थीं। अब उसी के आधार पर ढाल ढाल कर कई मशीनें इस कारखाने में तय्यार हो गईं और उनसे काम लिया जा रहा है। एक विभाग में मशीनें जो सांचे में ढाल कर तय्यार की गई थीं उन पर खराद कर पालिश हो रहा था। एक एक मेशीन पर केवल एक एक कारीगर बैठा हुआ हैन्डल घुमाता जाता था और बड़ी से बड़ी लोहे के चीजें आप से आप खरादी जाती थीं और साथ ही पालिश भी होता जाता था। इस विभाग में भी अधिकतर कारीगर पंजाबी सिख ही हैं। प्रत्येक विभाग एक लंबे चौड़े दालान में है और उसका एक अलग निरीक्षक है, जिसका वेतन १००) २००) तक मासिक है। और दोनों ही से सटा हुआ उसका दफ्तर होता है जिसमें अपने दफ्तर में बैठा हुआ वह विभाग भर पर दृष्टि रख सकता है। यहां के कारखानों की चिमनियां उँचाई में एक एक खासा कुतुब मीनार हैं। ऐसी चिमनियों की बीसों श्रेणियां चली गई हैं जिनमें से सबसे ऊंची चिमनी उंचाई में १७० फुट है।

सब से विचित्र वस्तु जो देखने योग्य है वह यहां की विद्युत् शक्ति भंडार का विभाग है, जहां पर विद्युत संगृहीत हो कर सारे कारखाने को चलाती और लाकची भर को रोशनी और पंखा तथा बिजली की शक्ति देती है। इसके पास जाते ही मेशीनों की गड़गड़ाहट के मारे कान के पर्दे उड़ने लगे, पर साहस कर हम लोग चले ही गए। इसमें दो खंड हैं। एक ऊपर और एक नीचे। यद्यपि नीचे जाने की आज्ञा सर्वसाधारण को नहीं है पर पं० गजाधर प्रसाद जी की बदौलत हम लोग वहां भी जा पहुँचे। चारों ओर बिजली की रोशनी से उस तहखाने में दिन के समान प्रकाश हो रहा था और हर एक मेशीन के ऊपर मोटी जलधारा बह रही थी जिसमें उत्ताप से कोई मेशीन तड़क न जाय। इस स्थान पर मोटी मशीनें चल रही हैं जिनमें विद्युत् उत्पन्न किया जाता है। कोई मोटर एक सौ अश्व शक्ति से कम शक्तिवाली नहीं है। विद्युत् शक्ति संगृहीत करने के लिए प्रकांड लोहे के टांके बने हुए हैं जिनमें बिजली इकट्ठी होती है और उन टांकों में से मोटे मोटे नल लगे हैं जिनसे हो कर विद्युत्-शक्ति सब जगह भेजी जाती है। ऐसे ऐसे बहुतसे टांके हैं और यह एक बड़ा भारी प्रकांड विद्युत्-भंडार है। यहां की किसी चीज पर हाथ लगाना मना है। नीचे धरती पर भी निग्रह रख कर चलना पड़ता है क्योंकि प्रायः सर्वत्र ही बिजली के तार के जाल बिछे हैं, जिनसे छू जाना विपत्ति को मोल लेना है। यहां तो आगे पीछे ऊपर नीचे सर्वत्र ही सावधानतापूर्वक ध्यान रखते हुए विचरना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिए नहीं तो पग पग पर विपत्ति की संभावना है। भूमि पर बिजली के तार बिछे हैं, सामने से पीछे से बिजली की गाड़ी लाल लाल अंगारे से लोहे का ढोका लिए दौड़ी आ रही है, सिर के ऊपर सैकड़ों मन लोहे की जंजीर से सैकड़ों टन लोहे का ढोका या रेल लटकता हुआ गड़ा गड़ाहट रहा है। कारखानों में जाना एक आफ़त है। सारी इंद्रियों को सतेज रख कर तब यहां अजनबी आदमी पदार्पण कर सकता है। दूर दूर से अवश्य सुगमता से सब देखा जा सकता है पर इस देखने का पूरा मजा नहीं आता।

जहां लोहा गलता है वह विभाग भी देखने योग्य है। एक ओर बड़ी दूर तक कच्चा लोहा जो आग पक्की ईंटों के अनुरूप होता है, उसके पहाड़ के पहाड़ लगे हैं। उसी पहाड़ के नीचे एक मोटा लोहे का तख्ता लगा है उस तख्ते के नीचे एक खुली हुई गाड़ी है, जो बिजली से चलती है। गाड़ी के निकट आते ही एक तख्ता उठा और एक टन का लोहा खन खन करता गाड़ी में आ गिरा। वह तख्ता बंद हो गया और गाड़ी दौडती हुई अपने सिरे पर पहुँच गई। जहां नीचे गढ़हे में वाले दूसरी एक गाड़ी में माल डाल दिया, वह गाड़ी बिचती हुई ऊपर भट्ठे की चिमनी तक चली गई जो कई सौ फूट ऊँची है। वहां जा कर उसने माल भट्टे के मुंह में ढाल दिया और फिर लौट आई। तब तक उसके बगलवाली दूसरी गाड़ी ऊपर पहुँच गई क्योंकि अगल बगल दो गाड़ियां आती जाती रहती हैं। जहां माल ढाला जाता है उस भट्ठे का मुँह कई सौ फुट ऊँचा है वहां जाने के लिये अलग सिढ़ियाँ भी बनी हुई हैं। हमारी मंडली ऊपर भी चली पर बहुत से साथी घबरा कर बीच ही में से लौट आए, कुछ लोग सिरे तक भी हो आए। वहां से सारे साकची शहर का दृश्य बहुत अच्छा प्रतीत होता है। पर उस स्थान पर हवा बड़े जोर से चल रही थी और चारों ओर की चिमनियों के धुएँ और गैस के मारे जी घबड़ाया जाता था इसलिये बड़ी सावधानी से नीचे उतरना पड़ा। यद्यपि दिसंबर का महीना था पर सबके चेहरे पर पसीने की बूँदे आ गई थीं। नीचे आ कर एक दिल्लगी और हुई। पसीना पोंछने के लिये जो कईयों ने मुँह पर हाथ फेरा तो सारा मुँह काला हो गया। हंसते हंसते पेट में बल पड़ गए। बात यह थी कि जिस रेलिंग पर हाथ रख रख कर चढ़े थे उसकी कालिख हाथ में लग गई थी। सो नीचे आ कर घबड़ाहट में किसीने लक्ष्य नहीं किया था।

अब हम लोग भट्ठे के नीचे उतरे जिस पर चारो ओर से प्रबल जलधारा पड़ रही थी। एक चौंगे के बीच में से जिसमें शीशा लगा हुआ था गलते हुए लोहे की भीतरी अवस्था भी देखी। कुछ प्याजी कासनी रंग के अग्नि के बड़े बड़े अंगारे दिखाई दे रहे थे। बतलाया गया कि यही लोहा है। जब समय हो जायगा तब भट्ठा खोला जायगा। उस समय की बाट जोहने में हमें एक घंटे से अधिक ठहरना पड़ा। भट्ठे के सामने बालू की बहुत सी धरती थी। जिन पर खेत की क्यारियों के आकार की क्यारियां बनाई गई थीं। जब समय हुआ सीटी बजाते ही भट्ठे का एक चोर द्वार खुल गया और लाल अग्नि की प्रबल धारा का स्रोत (जो गला हुआ लोहा था) उन्हीं क्यारियों में फैल गया। यह भी एक भयानक दृश्य था। पचासों गज की दूरी में लाल लाल अग्निवत् तरल पदार्थ दृष्टिगोचर होता था। ठंढ़े होने पर तब इसकी दूसरी प्रक्रिया होती है।

एक भट्ठे में देखा कि उसका चोर द्वार खुला है और नीचे एक प्रकांड कटोरेनुमा गाड़ी खड़ी है जिसमें लाल अग्निवत् गलित धातु हाथी की सुंडवत् प्रबल धारा बह कर गिर रही है। वह गाड़ी भरते ही आप से आप चल पड़ती है।

अब दूसरे विभाग में गए जहां लोहे की रेल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और पटरियां बन रही थीं। सैकड़ों भट्ठे एक के पास एक बने हुए हैं। उनमें निर्दिष्ट परिमाण के लोहे के ढोके गर्म हो रहे हैं। सिरे के ऊपर छत के सहारे क्रेन दौड़ रही है। सीटी बजी और एक भट्ठे का मुँह खुला तथा क्रेन ने एक बड़ी सी प्रबल काय सँड़सी भट्ठे में डाल कर लाल लोहे का पिंड निकाल कर ऊपर एक छोटी सी गाड़ी पर रखा। रखते ही वह गाड़ी आपसे आप चल पड़ी और उसने एक मेशीन के नीचे उस पिंड को ला रखा। वह मेशीन उस पर फिर गई जिससे चिपटी होकर वह चौगुनी लंबी चौड़ी हो गई। दुबारा उससे दुगुनी और तीसरी बार में कई गज लंबी लोहे की लाल लाल पटरी दृष्टिगोचर होने लगी। दो एक बार की और पीट पाट में खासी पूरे प्रमाण की रेल की लाइन बन बना कर तय्यार हो गई और ढकेल कर दूसरी ओर फेंक दी गई। जहां से इसका नमूना काट कर जांच के लिए भेजा गया और फिर प्रबल जलधारा से ठंढी होकर क्रेन द्वारा गाड़ियों में लदकर गुदाम को रवाने की गई। लोहे के लाल पिंड से लाईन बन कर गुदाम तक जाते हुए पंद्रह मिनट से अधिक समय नहीं लगा। वास्तव में हाथ और कल की कारीगरी का पार्थक्य यहां आकर इस कारखाने को देखे बिना समझ में नहीं आ सकता। प्रत्येक कार्य्य जिस फुर्ती और सफाई से होता है वह हमारे भारतीय चक्षुओं के लिए एक अभिनव दृश्य ही नहीं वरन् एक निराली शिक्षा भी है।

इस कारखाने में पत्थर का कोयला पहले एक बार जला कर ठंढा करने के बाद तब लोहा गलाने के काम में आता है। यह कोयले जलाने का भट्ठा भी देखनेही योग्य है। कोयला पकाने के सब १८० भट्ठे हैं जिन में से आज कल कोयले की कमी के कारण केवल आधे भट्ठे जल रहे थे और बाकी के बंद थे। हमारे सामने ही एक भट्ठे का द्वार खोला गया और उसमें से आप ही आप लाल लाल कोयले की जलती हुई बड़ी भारी चट्टान (पांच टन की) बाहर निकल आई। और लाल पत्थर की जलती हुई पांच फुट ऊंची चट्टान प्रतीत होती थी। अब उस पर पांच चार मनुष्यों द्वारा तीनइंच मोटी जल की धारा पड़ने लगी और घनघोर धुआँ फैलाती हुई वह चट्टान ठंढी होकर टूट टूट कर गिरने लगी। मिनटों ही में वह प्रबल धधकती हुई चट्टान की सूरत काले काले बिखरे हुए कोयले के ढेले के रूप में दिखने लगी। हमने सोचा था कि इस विभाग में बस यही पर आगे बढ़ने पर मालूम हुआ कि यह जो हजार टन कोयला पकाया जाता है और उसमें से इतना उत्ताप और गैस निकलता है 'वह भी वृथा नहीं जाने दिया जाता *। उस कोयले के गैस से अलकतरा बनाने का कारखाना निकट ही है। यहां अलकतरा, अमोनिया इत्यादि बनता है। रसायन विभाग में एक से एक संयुक्त इतनी कलें हैं कि हम गिन नहीं सके। एक जगह गंधकी तेजाब बनाया जा रहा था। इस तेजाब के कारखाने में हम पथप्रदर्शक पंडित जी ऊपर नहीं गए। पहले तो हमने समझा कि शायद थकावट के कारण वह बैठ गए हैं, पर जब कारखाना देख कर वापस आए तो बहुत कुछ सावधानी रखने पर भी न जाने क्योंकर हमारे रेशमी कोट पर तेजाब के कुछ छींटे पड़ गए और वह नवीन कोट जल गया। यहां नित्य दस पंद्रह टन तेजाब तय्यार हो सकता है और उस विभाग के कर्ता ने हम से कहा कि अलकतरा सामान्य वस्तु नहीं है। इसी काले काले चिटचिटे पदार्थ से जिसे हम तुच्छ दृष्टि से देखते हैं १०१ चीजें बन सकती हैं जो सभी एक से एक उपयोगी हैं और परमात्मा की इच्छा हुई तो काल पाकर इसी कारखाने में वे सब चीजें तय्यार की जांयगी।

* एक एक भट्ठे में एक हज़ार टन कोयला रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक जगह देखा कि कोयले के चूर को पानी से धो कर साफ करके अलग रक्खा जा रहा था। पूछने पर विदित हुआ यह कोयले का चूरा भी उपयोग में लाया जाता है। तात्पर्य्य यह कि जिधर देखो तुच्छ से तुच्छ पदार्थ से भी यहाँ सोना निकाला जा रहा है और धन्य हैं मिस्टर ताता जिन्होंने भारतवर्ष को पहले पहल यह रसायन इन दिनों प्रत्यक्ष कर दिखाया।

एक जगह लोहे के बड़े भारी भारी फजूल सांचे एक अभिनव युक्ति से तोड़े जा रहे थे। भूमि पर कई सौ टन वजन का फूटबाल जैसा एक लोहे का गोला पड़ा देखा। सिर के ऊपर की क्रेन ने एक कुंडा लटकाया। बिना किसी आधार वह प्रकांड गोला उस कुंडे से आप ही आप जा चिपका। ऊपर जा कर आप ही आप धम्म गोला उस लोहे के प्रकांड सांचे पर गिरा और वह सांचा टूट कर टुकड़े टुकड़े हो गया। पूछने पर मालूम हुआ कि यहाँ चुंबकीय शक्ति से काम लिया जाता है और इसी के कारण वह गोला क्रेन की कड़ी में चिपक जाता है। वास्तव में पुरुषार्थी और आलसी का भेद तो यहीं आ कर प्रत्यक्ष हुआ। इस एक कारखाने को देख कर जिसे चकरा जाती है, भला उस यूरोप का मुकाबला यह दीन भारतवर्ष कला-कौशल में क्यों कर कर सकेगा जहाँ ऐसे ऐसे हजारों कारखाने हैं और जिनकी बदौलत भारत की लक्ष्मी सात समुद्र पार भाग कर जा बैठी है। भारत इतने बड़े महादेश के लिए तो ऐसे दो चार सौ कारखानों की आवश्यकता है, फिर देखिए क्यों कर यहाँ की धूल और मिट्टी से रसायन बनता है। यूरोपियन फार्मों के पेट में चूहे कूदने लगे और वर्तमान समय उनके लिए उपयोगी न होते हुए भी दो चार साहबों ने इसी जिले में सोने और चांदी की खानें खोज निकाली हैं और छिपाए अकेले ही उनमें से माल निकलवाते हैं। कारखाने के अंदर अजनबी आदमी को घुसने तक नहीं देते। पर हमारे ताता साहब के कारखाने में घूमने और देखने की सब को स्वतंत्रता है।

प्रत्येक विभाग के निरीक्षक बड़े भद्र हैं और हर एक प्रश्न का उत्तर देते और बड़े उत्साह से सब ब्यौरा समझा देते हैं। हम तो वहीं नोट भी करते रहे किसीने टोका तक नहीं। अभी इस कारखाने में बहुत सी बातों की कमी है जो आगे चल कर दूर हो जायगी, नौ मील के घेरे का यह कारखाना तन्न तन्न करके देख डालना दो एक दिन का काम नहीं है। जब कि हम एक ही दिन यहाँ ठहरे थे, इसलिए केवल मुख्य मुख्य दो चार विभाग देख पाए। पूरा वर्णन करने के लिए तो एक पोथा चाहिए। यह थोड़ा सा हाल इसलिए लिखा गया कि लोगों को वहाँ जा कर देखने की रुचि उत्पन्न हो, क्योंकि इस कारखाने को जा कर देखना भी वर्तमान सभ्यता की दौड़ में एक डग आगे बढ़ना ही है।

एक कमी हमें बहुत खटकी। वह यह थी कि इस बृहत् कारखाने का असली भेद अर्थात् रासायनिक प्रक्रिया (कितनी डिगरी के उत्ताप की किस काम में आवश्यकता है इत्यादि) देशी कारीगरों को बहुत कम मालूम हैं और इस विज्ञान के नए नए आविष्कार का भेद अमेरिकन इंजीनियर मिस्टर पेरिन को मालूम रहता है और जिसके लिए वह घर बैठे पांच सौ मासिक पाते हैं तथा जब यहाँ आते हैं एक हजार रुपए रोज लेते हैं। जो हो जिस मुस्तैदी से ताता कंपनी इस काम को कर रही है आश्चर्य नहीं कि यह भेद भी उसे शीघ्र ही मालूम हो जाय क्योंकि धीरे धीरे गोरे लोगों को हटा कर काले कारीगर और निरीक्षक भर्ती होते जा रहे हैं।

इसी कंपनी के निरीक्षण में मैसूर में भी ऐसा ही एक कारखाना खुलनेवाला है। वहाँ की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रियासत ने अपने व्यय से यह कारखाना खोलना विचारा है और उन्हीं मिस्टर पेरिन की सलाह से अमेरिका में आवश्यकीय मेशीनों के लिए आर्डर भेजा गया है। मैसूर देश के कादुर और शीमोगा प्रांत में बड़े विस्तृत जंगल फैले पड़े हैं। वहीं के पेड़ों को जला कर कोयला बनाया जायगा और यहाँ से लोहा निकाल कर अभी केवल पक्का लोहा बनाया जायगा। अवश्य ही कोयला जलाने से जो गैस निकलेगी उससे भी अलकतरा तथा अन्य रासायनिक द्रव्य तयार किए जांयगे।

मैसूर की तरह अन्य देशी रियासतों में भी न जाने कितनी उपयोगी चीजें भरी पड़ी हैं और उपयोग में लाई जा सकती हैं पर यह तो पुरुषार्थ की बात है। तुलसीदासजी की कहावत "सकल पदारथ एहि जगमाही। कर्महीन* नर पावत नाही।"

आकाश में शब्द की पहुँच।

आकाश में पृथ्वी का शब्द कितनी दूर तक सुनाई देता है इसकी जांच करने के लिए फ्रांस के एक ज्योतिषी ने जिनका नाम केमिली फ्लेमारीयन है गुब्बारे पर चढ़ कर कई बार इस बात की जांच की है जिससे निम्नलिखित परिणाम निकाला गया है:—सोलह सौ फुट ऊंचे से मनुष्य का शब्द स्पष्ट सुनाई देता है। पचीस सौ और तीन हजार फुट ऊपर तक मेढ़कों का शब्द सुनाई देता है। बत्तीस सौ पचपन फुट की ऊँचाई से भी मनुष्य कंठ के और गाड़ी के पहिए के शब्द का भेद पहचान लिया जाता है। ४५५० फुट की ऊँचाई से ढोल तथा पांच हजार फुट की ऊँचाई से बाजों की आवाज सुनाई देती है। मुर्गे का कूकना, गिर्जे के घंटे का शब्द कभी कभी स्त्री पुरुषों के चिल्लाने के शब्द भी इसी ऊँचाई तक पहुँच जाते हैं। इससे भी नौ सौ फुट ऊपर तक बंदूक की आवाज या कुत्ते के भौंकने का शब्द सुनाई देता है।

रेलगाड़ी की आवाज आठ हजार दो सौ फुट ऊँचे तक सुनाई देती है और इंजिन की सीटी दस हजार फुट ऊँचे तक पहुँचती है, पर आज कलके हवाई जहाज के इंजिन के शब्द ने इस फिहरिस्त में बाधा डाल दी है।

गांधी जी का पत्र।

हिन्दी प्रेमी ध्यान दें।

हिंदी साहित्य सम्मेलन के अधिवेशन में एक विशेष समिति इस कार्य के लिये बनाई गई कि वह हिंदी प्रचार का काम अच्छी तरह चलावे। इस समिति के सदस्य माननीय राय बहादुर विष्णुराम शुक्ल, रायबहादुर डाक्टर सम्पूर्णानन्द प्रसाद, श्रीयुत पुरुषोत्तम दास टंडन, श्रीयुत गौरीशंकर प्रसाद, श्रीयुक्त वेंकटेश नारायण तिवारी और मैं ये छः आदमी नियुक्त किए गए हैं। इस समिति को यह विशिष्ट कार्य सौंपा गया है कि वह कमसे कम छः चरित्रवान हिंदीभाषी नवयुवकों को तामिल और तेलगू सिखाने का प्रबंध करे ताकि वे मद्रास प्रदेश में जाकर वहां हिंदी का प्रचार करें। उनको प्रायः एक वर्षतक तामिल या तेलगू सीखने में लगाना होगा। इसमें तथा उनके भोजनादि में जो खर्च पड़ेगा वह सम्मेलन की ओर से दिया जायगा। जब वे मद्रास की भाषा सीख लेंगे तब उनको तीन वर्षतक उचित वेतन पर मद्रास में आ

---

* पुरुषार्थहीन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ना पड़ेगा और हिंदी पढ़ाना होगा। उन्हें
लिये अपने को बाध्य करना होगा और
म्मेलन भी उन्हें तीन वर्ष तक अपने काम में
खने को बाध्य होगा। समिति को आशा है कि
त युवकों का कार्य-काल बढ़ता ही जायगा और
देश की सेवा करने में समर्थ होंगे। समिति
च्छी तनखाह देने को तैयार है और इसके बदले
सका यह आशा करना अनुचित नहीं होगा कि
अच्छी तरह दृढ़तापूर्वक और खूब जी लगा कर
काम करेंगे। मुझे पूरा विश्वास है कि मद्रासी
भाई देश उन्नति के लिये हिंदी सीखने को तैयार
हो जायंगे। पर मद्रास प्रांत में हिंदी प्रचार का
कार्य तब तक अच्छी तरह से नहीं चल सकता
जब तक हिंदीभाषी सज्जन जो अपनी भाषा को
राष्ट्रभाषा के गौरवान्वित पदपर बिठाने की अभि-
लाषा रखते हैं, तनमन धन से इस कार्य में सम्मे-
लन का हाथ बटाने को पूर्ण रूप से तैयार न हो
जायं। हिंदी साहित्य सम्मेलन ने प्रचार के लिये
जो प्रबंध करने का निश्चय किया है वह कार्य की
गुरुता देखते हुए कुछ भी नहीं है पर हम ऐसी आशा
करते हैं कि देश में इतने जोरका आन्दोलन उठ
खड़ा होगा कि हमारी सरकारी पाठशालों के
अधिकारियों को लाचार होकर हिंदी की शिक्षा
के लिये का बंदोबस्त करना पड़ेगा। परंतु इसके
लिये हम क्षणभर भी प्रचार का काम रोक नहीं
सकते। इसी लिये मद्रास के इलाके में हिंदी
प्रचार का काम शुरू करने का यह छोटासा प्रयत्न
करना सम्मेलन ने निश्चय कर लिया है। मैं
विश्वास करता हूँ कि इस काम में आपकी भी
सम्मति और पूरी सहानुभूति होगी और आप
देशप्रेमी युवकों को यह काम उठाने को अपने
भाषणों द्वारा उत्तेजित करेंगे। इस काम को स्वीकार
करने से वे अपनी तथा साथ ही देश की भी सेवा
कर सकेंगे। जो युवक यह काम हाथ में लेना
चाहते हों वे मेरे नाम से प्रयाग के हिंदी साहित्य
सम्मेलन कार्यालय के पते पर ३० अप्रैल तक पत्र
लिख भेजें।

मोहनदास करमचंद गांधी।
सत्याग्रह आश्रम,
साबरमती, अहमदाबाद।

हिंदी का प्रचार।

अब दिनोंदिन हिंदी के प्रचार की ओर सब लोगों का ध्यान आकर्षित होने लगा है। इस संख्या में हम इसी संबंध में माननीय पं० विष्णुदत्त शुक्ल महोदय की एक सूचना अन्यत्र प्रकाशित करते हैं। हमें यह जानकर बड़ा हर्ष हुआ है कि श्रीमती एनी बेसेंट के सुप्रसिद्ध "न्यू इंडिया" पत्र में प्रति सप्ताह हिंदी का एक विशेष स्तंभ रहा करेगा। "न्यू इंडिया" की सुयोग्य संपादिका महोदया इस कार्य्य को आरंभ करती हुई लिखती हैं कि कुछ समय हुआ पूने के 'मराठा' और 'केसरी' में हिंदी देखकर हमने प्रशंसा की। हमें भी उपदेश दिया गया कि यह काम करो। फिर महात्मा गांधी ने तामील और तेलगू भाषी जवानों को हिंदी सीखने के लिये कहा। इतना कह कर "न्यू इंडिया" कहता है कि "अब मद्रास में हिन्दी प्रचार का समय आ गया है, इसलिये हम अपना हिन्दी स्तंभ आरंभ करते हैं। पहले हिन्दी, फिर अंगरेजी (रोमन) अक्षरों में उसकी प्रतिलिपि और फिर अंगरेजी अनुवाद दिया जाया करेगा। "न्यूइंडिया" में दिया हुआ हिन्दी का अंश हम यहां उद्धृत करते हैं:-

देश की भाषा।

"आज "न्यू इंडिया" में पहली बार हिन्दुस्तानी जबान में लेख निकल रहा है। अगर कोई पूछे कि यह नई बात क्यों तो हम यह जवाब देंगे कि, होमरूल या स्वराज्य के लिये देश की एक भाषा होना बहुत जरूरी है। जैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसे होमरूल की धूम बढ़ती जाती है वैसे वैसे लोग इस जरूरत को भी ज्यादा समझते जाते हैं। कुछ लोग यह समझते हैं कि, नहीं अगर यही हाल रहा तो थोड़े दिनों बाद इस देशकी भाषा अङ्गरेजी हो जायगी। यह एक बड़ी भूल की बात है। देश की भाषा अंगरेजी कभी नहीं हो सकती और जिस दिन हो गई उस दिन यह समझ लेना चाहिए कि, हमारे देशकी बरबादी का प्याला ऊपर तक भर गया। एक देशके लोगों का दूसरे देशके लोगों पर हुकूमत करना ही एक पूरी मुसीबत है, उसके ऊपर देशकी भाषा को छीन लेना और भी बुरा है।

क्या हो?

देश की एक भाषा देश की तरक्की के लिये बहुत जरूरी है। अब सवाल यह उठता है कि इस देश में बारह या चौदह खास खास जबानें बोली जाती हैं। इनमें कौन सी जबान ऐसी है कि जिसे सबसे जियादा लोग बोलते, समझते और जानते हैं। यह बात मानी हुई है कि हिंदुस्तान की जबानों में हिंदी जबान एक ऐसी है जिसको करीब करीब हर सूबे के लोग बोल नहीं तो समझ जरूर लेते हैं। मद्रास प्रांत में जरूर हिंदुस्तानी जबान के बोलनेवाले कम मिलते हैं। तब भी जहां जहां मुसलमान फैले हुए हैं वहां हिंदुस्तानी समझनेवालों का काल नहीं है। और हिंदुस्तान में कौन सा ऐसा हिस्सा है जहां थोड़े बहुत मुसलमान नहीं है। इस लिए आज से फी हफ्ते न्यू इन्डिया" में एक लेख हिंदुस्तानी जबान में निकला करेगा और हम आशा करते हैं कि "न्यू "इन्डिया" के पढ़नेवाले इसको पसंद करेंगे और इस बात की कोशिश करेंगे कि इसे समझें और औरों को समझावें। हमें विश्वास है कि 'न्यू इंडिया' जिस खूबी के साथ हिंदी के प्रचार में उद्यत हुआ है वह सदा उसी प्रशस्त मार्ग पर चलेगा।"

हिंदी प्रचार का काम।

विदित हो कि हिंदी साहित्य सम्मेलन के गत अधिवेशन के समय श्रीयुत महात्मा गांधीजी के सभापतित्व में हिंदी साहित्य के प्रचारार्थ इस उद्देश्य से कि हिन्दी भाषा राष्ट्रीय भाषा का काम पूरी रीति से दे सके एक उपसमिति स्थापित की गई, जिसके उद्देश्य की सफलता के निमित्त आप सदृश महानुभावों की सहानुभूति और सहायता अपेक्षित है।

यह निश्चय किया गया है कि इस वर्ष मद्रास प्रांत से ६ नवयुवक तामिल व तेलगू जाननेवाले उत्तरीय प्रांतों में हिंदी भाषा सीखने के लिए बुलाए जाँय। ये एक वर्ष में इस प्रकार तैयार किए जाँय कि वे अपने प्रांत में लौट कर हिंदी के शिक्षक का कार्य कर सकें और यह विचार किया जाता है कि कम से कम ४ हिंदी के ज्ञाता दक्षिण भेजे जावें जिनमें से एक गुजरात, एक महाराष्ट्र और दो तामिल और तेलगू प्रदेशों में हिंदी की शिक्षा के निमित्त काम करेंगे। इन्हें योग्यतानुसार वेतन दिया जायगा और तामिल व तेलगू प्रदेश से आनेवाले नवयुवकों की छात्रावस्था के समय के लिए छात्रवृत्ति का प्रबंध भी करना जरूरी है।

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि इस कार्य के लिये द्रव्य की अधिक आवश्यकता है और ऐसे नवयुवक दरकार होंगे जो इस कार्य को देश सेवा का एक मुख्य अंग समझ कर अपने हाथ में लें। श्रीयुत महात्मा गाँधीजी का इस आशय का पत्र समाचारपत्रों में प्रगट हो चुका है। परंतु अभी तक हिंदी के प्रेमियों की ओर से ऐसा उत्साह प्रगट नहीं हुआ जैसी आशा की गई थी।

उपर्युक्त उद्देश्य की सिद्धि के लिये निम्नलिखित बातों की आवश्यकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप शीघ्र ही सहायता देकर इस कार्य को प्रारंभ करा देंगे।

१—तामिल व तेलगू प्रदेश से आनेवालों के लिये स्थान या कोई ऐसे सज्जन कि जो उन के साल भर के लिए रहने का भार उठा सकें, मिलना बहुत जरूरी है। क्या आप अपने नगर में एक या अधिक, इन नवयुवकों की शिक्षा का प्रबंध करा सकेंगे?

(२) गुजरात व महाराष्ट्र देश में जाने के लिये दो हिंदी जाननेवाले नवयुवक चाहिएँ व तामिल व तेलगू प्रदेश में ऐसे दो व्यक्तियों की दरकार होगी जो अङ्गरेजी भी जानते हों। क्योंकि वहां केवल हिंदी जाननेवाले से पहले पहल काम नहीं चलेगा। क्या आप इस कार्य के लिये कुछ उपयोगी नवयुवक दे सकेंगे? कृपया उत्तर शीघ्र दीजिए।

मुकाम सिहोरा
ता० १६-४-१९१८

भवदीय—
विष्णुदत्त शुक्ल,
मंत्री
हिंदी प्रचारक उपसमिति,
साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।

हिन्दी-शिक्षण-प्रचारक मंडल।

गत चैत्र शुक्ला १ सं० १९७५ को "हिंदी शिक्षण-प्रसारक-मंडल" की स्थापना के लिये और उस मंडल के निरीक्षण में हिंदी की श्रेणी प्रारंभ करने के लिये न्यू-पूना कालेज के भव्य भवन में बड़ी भारी सभा हुई। उस सभा में सरदार ओंकार साहब, प्रो० वैजनाथ काशीनाथ राजवाड़े एम० ए०, प्रो० शङ्कर राव भागवत एल० सी० ई०, प्रो० हरि रामचंद्र दिवेकर एम० ए०, श्रीयुक्त लक्ष्मण बलवंत भोपटकर एम० ए०, एल एल० बी०, पं० लक्ष्मीधर बाजपेयी इत्यादि उपस्थित थे। प्रो० भागवत के प्रस्ताव और श्री० लिमये के अनुमोदन पर माननीय कामत साहब ने अध्यक्ष का स्थान सुशोभित किया। आपने हिंदी भाषा में भाषण करके हिंदी के प्रचार की आवश्यकता बतलाते हुए महात्मा गांधी का विद्युत् संदेश सभा को पढ़ कर सुनाया, जिसका आशय इस प्रकार था—"मैं हृदय से आपके प्रयत्नों की सफलता चाहता हूं और मुझे पक्का विश्वास है कि, अन्य अनेक हलचलों की तरह, हिंदी को राष्ट्र भाषा बनाने में भी दक्षिण प्रांत के लोग अग्रसर होंगे और अङ्गरेजी भाषा के सीखने में जो व्यर्थ के लिये शक्ति और समय की हानि हो रही है उससे भारतवर्ष की रक्षा करेंगे।"

इसके बाद सभापति की सूचना पर प्रो० दिवेकर ने हिंदी में भाषण करते हुए कहा कि "इस समय अङ्गरेजी को जो अनुचित महत्व दिया जाता है, वह न देकर एक राष्ट्रीयता की दृष्टि से हिंदी भाषा का ही सार्वत्रिक प्रचार अभीष्ट है और इस समय लगभग १४ करोड़ लोग इस भाषा का व्यवहार करते हैं, इसलिये इसीका प्रचार संपूर्ण देशमें सुलभ रीति से हो भी सकता है। इसके बाद श्रीयुक्त भोपटकर महाशय ने मराठी में एक राष्ट्र-भाषा की आवश्यकता बतलाते हुए कहा कि, "आज हम जो स्वराज्य-प्राप्ति के लिये प्रयत्न करते हैं वह स्वराज्य जब हमको मिल जायगा तब राष्ट्र में एक भाषा के बिना संपूर्ण राष्ट्र का कार्य किस प्रकार किया जा सकेगा? अतएव एक राष्ट्र-भाषा की अत्यंत आवश्यकता है, और वह एक भाषा हमारी सम्मति में हिंदी ही हो सकती है। इसके बाद श्रीयुत दत्तो वामन पोद्दार बी० ए० ने हिंदी में प्रभावशाली व्याख्यान दिया। आपने कहा कि छः हजार लोगों में सिर्फ एक मनुष्य अंगरेजी जाननेवाला पाया जाता है, तब उस परकीय भाषा का प्रचार करना चाहिए, अथवा जो भाषा संपूर्ण देश में साधारण तौर पर समझी जाती है, उस अपनी भाषा का प्रचार करना विशेष अभीष्ट होगा? इसके बाद पं० लक्ष्मी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धरजी वाजपेयीने हिंदी भाषा और महाराष्ट्र देश का ऐतिहासिक संबंध बतलाते हुए कहा कि हिंदी का महाराष्ट्र से संबंध छत्रपति शिवजी के काल से चला आता है और छत्रपति के दरबार में राज-कवि हिंदीभाषी ही थे, और रामदास तथा तुकाराम इत्यादि संतोंने हिंदी में कविताएँ भी लिखी हैं। इस प्रकार महाराष्ट्रीय भाइयों के लिये यह भाषा सहज है, इसलिये महाराष्ट्र भाइयों को स्वयं यह भाषा सीखकर धार्मिक तथा राजनैतिक कार्य के लिये सारे भारत में इसका प्रचार करना चाहिए।

इसके बाद सभापति की सूचना के अनुसार डा० रामचंद भीमराव नाइक एम० सी० पी० एस० (नेशनल) एल० एम० एण्ड एस० (आनर्स) ने "हिन्दी शिक्षण प्रसारकमंडल" के उद्देश्य और उसका संगठन सभाके सम्मुख उपस्थित किया।

उद्देश्य—(१) हिन्दी भाषा का ज्ञान, राष्ट्रीयता की दृष्टि से आवश्यक और अखिल भारतीय बांधवों के हृद्गत् भाव सुलभ रीति से समझने का मुख्य साधन है इसी लिये हिंदी भाषा का सार्वत्रिक प्रचार करना।

(२) उपर्युक्त उद्देश्य सफल करने के लिये एक अथवा अनेक मार्गों का अवलंबन करना।

(अ) हिंदी भाषा की श्रेणियां खोलना।

(आ) हिंदी वाचनालय और ग्रंथ संग्रहालय स्थापित करना।

(इ) हिंदी भाषा के ज्ञान का प्रचार करने के लिये समय समय पर भाषण और लेखन द्वारा प्रयत्न करना।

(ई) हिंदी भाषा का प्रचार बहुजन समाज में सुलभता से होने के लिये निःशुल्क अथवा अल्पशुल्क पर रात्रि पाठशालाएं खोलना।

(उ) निजी और नीम-सरकारी स्कूलों में हिंदी भाषा का प्रवेश करने कराने के लिये आवश्यक प्रयत्न करना।

(ऊ) मंडल के उद्देश्यों का प्रचार करने के लिये मंडल की ओर से समाचारपत्र, मासिक-पत्र और छोटी बड़ी उपयुक्त पुस्तकें इत्यादि साहित्य प्रकाशित करना और कराना और इस प्रकार पुस्तकों आदिका प्रचार समयानुसार बिना मूल्य अथवा अल्प मूल्य पर करना।

(३) इनके अतिरिक्त आवश्यकतानुसार यथायोग्य उपायों की योजना करना।

संगठन।

सभापति—माननीय बालकृष्ण सीताराम कामत बी० ए०।

उपसभापति—श्रीयुत लक्ष्मण वलवन्त भोपटकर एम० ए० एलएल० बी०।

मंत्री (१) डा० रामचन्द्र भीमराव नाइक एम० सी० पी० एस (नेशनल) एल० एम० ऐण्ड एस० (आनर्स) (२) श्रीयुक्त धोंडो विट्ठल कुलकर्णी बी० ए० (आनर्स)। कार्यकारिणी समिति के सदस्य—प्रो० वैजनाथ काशीनाथ राजवाड़े, प्रो० त्रिंबक भिकाजी हर्डीकर एम० ए०, श्री नारायण गणेश वीरकर बी. ए., एल एल. बी श्री. दत्तो वामन पोतदार बी० ए०, श्री रामकृष्ण सदाशिव पिंपुटकर ग्रेजुएट (नेशनल) और पं० लक्ष्मीधरजी वाजपेयी "चित्रमय जगत" सम्पादक, पं० अम्बिका प्रसाद जी त्रिपाठी, डा० गोपालराव पंडसुले एल० एम० ऐंड० एस (नेशनल) और श्री० लक्ष्मण रामचंद्र फडनीस (मंत्री राम मुफ्त वाचनालय)।

मंडल के उपर्युक्त उद्देश्य और उसका संगठन सभापति ने प्रस्ताव रूप से सभा के समक्ष उपस्थित किया और वह सर्वसम्मति से पास हुआ। तदनंतर सभापति महाशय ने 'हिंदी-शिक्षा-प्रसारक मंडल' स्थापित होने और उसके निरीक्षण में हिंदी की श्रेणी प्रारंभ होने की घोषणा की।

इसके बाद सभापति माननीय कामत ने अपने अंतिम भाषण में राष्ट्रीय भाषा की दृष्टि से हिंदी का महत्व दर्शाते हुए कहा कि, हिंदी भाषा न सिर्फ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य की दृष्टि से ही सीखनी चाहिए, किंतु इसका सीखना स्वराज्य की पहली सीढ़ी है और इसलिये हम सब को संपूर्ण भारत में इस एक भाषा के प्रचार का पूरा पूरा प्रयत्न करना चाहिए। अंत में श्रीयुक्त धोंडो विट्ठल कुलकर्णी बी० ए० ने न्यू-पूना कालेज के संचालकों को हिंदी श्रेणी को एक वर्ष के लिये जगह देने पर धन्यवाद दिया। अंत में सभापतिको धन्यवाद देने के बाद सभा विसर्जित हुई।

प्रांतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन ।

३० और ३१ मार्च को रायपुर में प्रांतीय हिंदी साहित्य परिषद् का प्रथम अधिवेशन बड़े समारोह और सफलता के साथ समाप्त हो गया। परिषद् के मनोनीत सभापति माननीय पंडित प्यारेलाल मिश्र बैरिस्टर-एट-ला ता० २९ की रात की गाड़ी से रायपुर पहुँचे। स्टेशन पर स्वयं-सेवकों, स्वागतकारिणी समिति के सदस्यों और अन्य दर्शकों की बड़ी भीड़ थी। सभापति महाशय का उच्च जयघोष के साथ स्वागत किया गया। वहां से जलूस के साथ वे निर्दिष्ट स्थान में पहुँचाए गए।

७ बजे प्रातःकाल परिषद् का कार्यारंभ हुआ। सभाभवन के लिये स्थानीय टाउनहाल लिया गया था। ६॥ बजे से ही लोगों की भीड़ होने लगी। रायपुर निवासियों का उत्साह दर्शनीय था। सभापति महोदय ठीक समय पर पहुँचे। गगनभेदी करतलध्वनि और जयघोष के साथ उनका स्वागत किया गया। सब से पहले स्थानीय श्री जानकीदेवी महिला पाठशाला की कन्याओं ने स्वागत प्रतिनिधियों तथा अन्य सज्जनों का संगीत द्वारा स्वागत किया। अनंतर स्वागतकारिणी समिति के सभापति श्रीयुत पंडित गणपतिलाल चौबे का संक्षिप्त भाषण हुआ। ईश्वर प्रार्थना, सम्राट् पञ्चम जार्ज और मित्रदल की विजयकामना और प्रतिनिधियों का हार्दिक स्वागत करते हुए आपने हिंदीभाषा का महत्व बतलाया। मध्यप्रदेश में हिंदी-साहित्य की गतिका उल्लेख करते हुए चौबे जी ने कहा कि, इस प्रांत में लोकमत प्रकाशित करने के लिये पत्रप्रकाशन की अत्यंत आवश्यकता है।

अनंतर श्रीयुत पंडित माधव राव सप्रे ने सभापति के लिये प्रस्ताव किया। आपने कहा कि "सभापति का आसन ग्रहण करने के लिये माननीय पंडित प्यारेलाल मिश्र से अधिक योग्य सज्जन इस स्थान में कोई नहीं हैं। मैं उन्हें सभापति चुनने का प्रस्ताव दो कारणों से कर रहा हूं। पहला कारण व्यक्तिगत है। वे मेरे परम मित्र हैं। मेरी हिंदी-सेवा का श्रेय उन्हीं को है। उन्हीं की प्रेरणा से मैं हिंदी-संसार की थोड़ी बहुत सेवा कर सका हूं। दूसरा कारण मिश्रजी की सार्वजनिक योग्यता है। उन्होंने हिंदी की उत्तम सेवा की है। वे "भारतमित्र" के कई वर्षों तक गुप्त और प्रकट सम्पादक रहे हैं। अनेक स्वदेशी तथा विदेशी सभाओं में देशहित पर व्याख्यान देकर तथा हिंदी परीक्षाओं में परीक्षक होकर भी आपने देश की सेवा की है। उन्होंने हिंदी को Stupid न कहकर उसमें लेख और पुस्तकें लिखी हैं। उनमें एक योग्यता अथवा अयोग्यता बैरिस्टर होने की भी है पर इस नाते से कोई व्यक्ति हिंदी—परिषद् में सम्मान नहीं पा सकता; सम्मान तो उसकी हिंदी-सेवा और सार्वजनिक योग्यता का होना चाहिए। द्रुग के वकील श्रीयुत घनश्याम सिंह गुप्त ने इस प्रस्ताव का अनुमोदन किया। पंडित लोचनप्रसाद पांडेय के समर्थन करने पर माननीय मिश्रजी ने सभापति का स्थान ग्रहण किया। उच्च करतलध्वनि के साथ उन्हें पुष्पमाला पहनाई गई।

सभापति महोदय ने अपना भाषण पढ़ सुनाया जो नीचे प्रकाशित किया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषण समाप्त होने पर पंडित रामदास नायक ने माननीय राय बहादुर श्रीयुत पंडित विष्णुदत्त शुक्ल, श्रीयुत चंपालाल जौहरी आदि सज्जनों के आए हुए सहानुभूति सूचक तार और पत्रों का सारांश पढ़ सुनाया। इसके बाद पंडित माधवराव सप्रे ने विषय-निर्वाचिनी समिति के संगठन के लिये प्रस्ताव किया। मध्यप्रदेश के भिन्न भिन्न स्थानों के प्रायः ४३ सज्जन इस समिति के लिये प्रतिनिधि चुने गए। आवश्यक प्रस्तावों का विचार करने के लिये विषय-निर्वाचिनी सभा बैठी। पहले दिनका कार्य ११ बजे समाप्त हुआ।

दूसरे दिन (ताः ३१-३-१८ को) ७॥ बजे से कार्यारंभ हुआ और प्रस्तावों पर विचार किया गया। ६ उपयोगी प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए। प्रस्ताव वे ही थे जो इंदौर सम्मेलन में स्वीकृत हुए थे। दो नए प्रस्ताव ये थे—

यह देख कर कि मध्यप्रदेश की सरकार की ओर से सर्वसाधारण के लाभ के लिये जो सर्क्यूलर, गजट और दूसरे कागजपत्र हिंदी में प्रकाशित होते हैं उनकी भाषा भद्दी और अशुद्ध रहती है अथवा अन्य भाषा के दुर्बोध शब्दों से भरी रहती है, यह सम्मेलन मध्य प्रदेशकी सरकार से सानुरोध निवेदन करता है कि वह शुद्ध और सरल हिंदी में उन्हें लिखवाने का प्रबंध करे और अपने अनुवाद-विभाग में योग्य हिंदी ज्ञाता अनुवादक रखे।

मध्य प्रदेश में हिंदी की हीनावस्था का विचार करके यह सम्मेलन इस प्रांत के हिंदीप्रेमियों से सानुरोध निवेदन करता है कि वे यहाँ के किसी मुख्य नगर से एक हिंदी का योग्य पत्र निकालें।

अनंतर सभापति महाशय ने एक छोटा सा परंतु सारगर्भित भाषण किया और बतलाया कि तन, मन, धनसे काम करने पर मध्यप्रदेश में सब कुछ हो सकता है और "सरस्वती को भी मात करने वाला" मासिक पत्र इस प्रांत से निकाला जा सकता है। पं० माधवराव सप्रे की प्रशंसा करते हुए सभापति महोदयने कहा कि "गुण ना हिरानो गुणग्राहक हिरानो है।" पंडित गणपतिलाल चौबे ने त्रुटियों के लिये क्षमा प्रार्थना की। शिक्षकों को इस परिषद् में सम्मिलित होने की उदार आज्ञा देने के लिये छत्तीसगढ़ विभाग के सर्किल इंसपेक्टर श्रीयुत पंडित कन्हैयालाल गुरु एम० ए० को धन्यवाद दिया गया। पंडित रामदयाल तिवारी ने सभापति महोदय का गुण गान करते हुए परिषद् की सफलता के लिये उन्हें सब प्रतिनिधियों को स्वागतकारिणी समितिकी ओर से धन्यवाद दिया। इस परिषद् के मूल कारण माननीय राय बहादुर पंडित विष्णुदत्त शुक्लको भी धन्यवाद दिया गया।

फिर सहानुभूतिसूचक नए आए हुए तीन तार पढ़कर सुनाए गए। अंत में पंडित सप्रेजी का भावपूर्ण भाषण हुआ। यह भाषण स्वसेवकों के लिये "प्रेम-संदेश" था। इसमें स्वसेवकों की प्रशंसा की गई थी और उनके परिश्रम तथा महत्वपूर्ण सेवा कार्यका महत्व बतलाया गया था। ११ बजे सभा विसर्जित हुई।

सभापति पं० प्यारेलाल मिश्र का भाषण—

प्रारंभ में अपने सभापति वरण किए जाने पर कार्यकर्त्ताओं को धन्यवाद दिया, अनंतर खांडवा की हिंदी ग्रंथ प्रसारक मंडली के प्रधान बाबू माणिकचन्द जैन, और बुरहानपुर के वकील पं० कृष्णप्रसाद मिश्र की असामयिक मृत्यु पर शोक प्रकट किया।

"राष्ट्र भाषाकी ध्वनि"

हिंदी का उद्धार अब बहुत शीघ्र होनेवाला है। महात्मा गांधी ने हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने का बीड़ा उठाया है (करतल ध्वनि) एक उर्दू कवि ने कहा है—

लोग कहते हैं बदलता है ज़माना अकसर।
मर्द वे हैं जो ज़माने को बदल देते हैं॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महात्मा गांधीजी पूरे मर्द हैं। उन्होंने वस्तुतः समय को पलट दिया। जिस हिंदी की उन्नति के लिये काशीकी नागरीप्रचारिणी सभा वर्षों तन, मन, धन लगाने पर बहुत ही अल्प सफलता प्राप्त की थी, उसकी उन्नति एक सच्चे हितैषी द्वारा शीघ्र ही होनेवाली है। गांधीजी ने वर्षों का काम महीनों में कर डाला। आज राजनैतिक सभाओं में हिंदी को श्रेष्ठ स्थान मिलने लगा। स्वयं गांधीजी हिंदी को बर्त्ताव में ला रहे हैं। वे अब अच्छी हिंदी लिख, पढ़, तथा बोल सकते हैं। इस सेवा के बदले हिंदी भाषा भाषियों ने उन्हें अष्टम हिंदी साहित्य सम्मेलन का सभापति बनाया है। इस समय वे इंदौर में सभापति का आसन सुशोभित कर रहे होंगे। (करतलध्वनि) महात्मा गांधी जी का कहना है कि यदि भारतवर्ष की कोई भाषा राष्ट्रभाषा बनने योग्य है तो वह केवल हिंदी है। भारत के नेता लोकमान्य तिलक ने भी इसको स्वीकार किया है। स्वीकार ही नहीं किया, बल्कि उसे सीखना भी आरंभ कर दिया है। कानपुर, कलकत्ता इत्यादि नगरों में आपने हिंदी ही में वक्तृताएँ दी थीं। आपने हिंदी का पूरा सत्कार किया है। "मराठा" नामक अंगरेजी साप्ताहिक पत्र में आपने हिंदी को यथोचित स्थान दिया है। इससे अंगरेजी पाठकों को हिंदी में रुचि उत्पन्न होगी। वीर गांधी और लोकमान्य तिलक भारत के दो प्रधान स्तंभ हैं। उनका संपूर्ण जीवन देशसेवा में बीता है। जब हिंदी को ऐसे महात्माओं का आश्रय मिला है तब उसका राष्ट्र भाषा बनना बहुत सरल बात है। उधर गुजरात में भी हिंदी की चर्चा होने लगी है। कुछ दिन हुए अहमदाबाद में श्रीयुक्त देसाई बैरिस्टर के सभापतित्व में एक हिंदी प्रचारिणी सभा खोली गई थी। धन्य है देसाईजी के हिंदी प्रेम को। यहां हमें दुःख के साथ कहना पड़ता है कि हमारे कोई कोई विलायत से लौटे हुए भाई जिनकी मातृभाषा हिंदी है, हिंदी को घृणा की दृष्टि से देखते हैं। इतना ही नहीं बल्कि वे यह भी कहते हैं कि हिंदी हमारी मातृभाषा भी नहीं है। कहिए ऐसे कृतघ्न पेटभरे लोगों से इस देशकी क्या भलाई हो सकती है? मीर कवि ने ठीक कहा है—

जिनको न निज हिंदी तथा
निज हिंद का अभिमान है।
उन कुल-कपूतों के लिये
इस विश्व में नहिं मान है।
जिसका न राष्ट्रीय, हिंद,
हिंदी प्रेम पारावार है।
सच जानिए उस नर अधम का
जन्म ही बेकार है॥
जिसको न अपनी राष्ट्रभाषा,
देश का कुछ ज्ञान है।
वह नर नहीं नर-पशु निरा है,
और मृतक समान है॥

न जाने हमारे शिक्षित भाई क्यों कुल व्यवहार अंगरेजी में करते हैं। अंगरेजी में पत्र लिखना तथा वार्तालाप करना बहुत प्रिय है चाहे वे उसमें भी कई अशुद्धियाँ करते हों। हिंदी बोलेंगे तो १०० में से ७५ शब्द बल्कि अधिक अंगरेजी के उपयोग में लावेंगे। जब उनसे पूछो कि शुद्ध हिंदी क्यों नहीं बोलते तब उत्तर देते हैं कि हमें हिंदी बोलने का अभ्यास नहीं है। धिक्कार है ऐसे देश और मातृभाषा के शत्रुओं को! क्या कभी दो अंगरेजों को हिंदी, मराठी या अन्य भाषा में वार्तालाप करते सुना है? क्या वे पत्रादि हिंदी उर्दू में लिखते हैं? क्या मातृ-स्तन के दुग्ध की समता किसी दूसरे दुग्ध से हो सकती है? कदापि नहीं। और तो और निरे अपढ़ लोग भी जो हिंदी तक नहीं जानते परंतु अंगरेजी के दो चार टूटे फूटे शब्दों के बोलने और लिखने में बहादुरी समझते हैं। एक आदमी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का छः कौड़ी नाम था। हिंदी का वह अक्षर तक नहीं जानता था, पर अंगरेजी में हस्ताक्षर करने का शौक रखता था। हस्ताक्षर विचित्र थे। आधे नाम का अंगरेजी अनुवाद कर डाला था। अर्थात् छः को सिक्स लिखता था। वह भी अंक में न कि अक्षर में और शेष आधा अर्थात् कौड़ी को अक्षरों में लिखता था। पूरा नाम यों लिखता था 6 Kori (हंसी)। आधा तीतर और आधा बटेरवाली कहावत यहीं चरितार्थ होती है। न जाने इस मूर्ख ने ये अक्षर कहाँ सीखे थे। तात्पर्य कहने का यह है कि हम इस अधोगति को पहुँच रहे हैं कि अपनी मातृभाषा भी न जानते हुए दूसरों की नकल करने में बुद्धिमानी समझते हैं। ये लक्षण देश की अवनति के हैं, उन्नति के नहीं। अंगरेजी पढ़ना कोई मना नहीं करता। अंगरेजी ही क्यों संसार की संपूर्ण भाषाएँ पढ़ो और उनसे लाभ उठाओ परंतु अपनी मातृभाषा को सदैव श्रेष्ठ स्थान दो। अपनी माता के रहते उस से द्रोह कर दूसरे घर की गृहिणी को माता कहना घोर पाप है।

जापान निवासियों का उदाहरण इस विषय में अनुकरणीय है। आजकल जापान भूमंडल में सब से सभ्य देश समझा जाता है। जापानी प्रत्येक देश में जा कर अच्छी अच्छी बातें सीख कर अपने देश में प्रचलित करते हैं। इतना होने पर भी वे हर एक प्रकार की शिक्षा अपनी ही भाषा में देते हैं? कैंब्रिज में कुछ विद्यार्थी शिक्षा पा रहे हैं। परंतु उनके मातृभाषा प्रेम को देखिए। वे अंगरेज छात्रों के बीच रहते हुए भी आपस में अपनी ही भाषा में बातचीत तथा पत्र व्यवहार करते हैं। यह बात मुझे एक अंगरेज छात्र से ज्ञात हुई थी। सच्ची देश और मातृभाषा भक्ति इसे कहते हैं। तभी तो जापान इस उन्नति के शिखर पर चढ़ा है।

क्या हिंदी राष्ट्र भाषा हो सकती है? अवश्य मेव, क्योंकि राष्ट्रभाषा के जो लक्षण होने चाहिए वे हिंदी में मौजूद हैं अर्थात् इसे बहुत से लोग बोल सकते हैं। यह लोगों के धार्मिक, राजनैतिक और सामाजिक व्यवहार की भाषा है। वह सर्व के लिये राष्ट्रभाषा हो सकती है। बंगला, मराठी, बिहारी, उड़िया, पंजाबी, गुजराती, राजस्थानी और सिंधी, हिंदी की बहिनें हैं, अतएव इन प्रान्तों के लोग उसे सरलता से सीख सकते हैं। आज कल हिंदी भाषाभाषियों की संख्या अनुमानतः सात करोड़ है, और मराठी इत्यादी भाषियों की १५-१६ करोड़। दोनों मिला कर प्रायः २२-२३ करोड़ होते हैं जो सब से बड़ी संख्या है। एक समय लार्ड कर्जन ने कहा था कि अंग्रेजी पढ़े लिखों का संसार ही न्यारा है। वे जन साधारण के प्रतिनिधि नहीं कहे जा सकते। लार्ड कर्जन का यह विचार किसी अंश में ठीक है। क्योंकि प्रायः बहुत से अँगरेज पढ़े लिखे जनसाधारण के साथ उस प्रेम का बर्ताव नहीं करते जो अपने देश भाई समझ कर करना चाहिए। यह सच है कि अँगरेजी बोलनेवालों की संख्या एक लाख से अधिक नहीं है और इतनी अल्प संख्या के न रहने से हिंदी की विशेष हानि नहीं हो सकती। तथापि यह प्रशंसनीय बात नहीं है कि हम शिक्षित कहला कर फूट का दोष अपने माथे मढ़ें। सम्मेलन का उद्देश्य सार्वजनिक है। संपूर्ण भारतवर्ष को एक भाषा के प्रेम सूत्र में बांध, लोगों में जातीयता का भाव उत्पन्न कर कल्याण का मार्ग प्रशस्त करना इसका मुख्य लक्ष्य है। किसी विद्वान् का कथन है कि साहित्य राष्ट्र की उन्नति का कारण है। साहित्य ज्यों ज्यों उज्ज्वल और उन्नत होता जाता है त्यों त्यों राष्ट्र की उन्नति और उज्ज्वलता का कारण होता जाता है। साहित्य के द्वारा हमारी विचारशक्ति बढ़ती है और मनोविकार जाग्रत होते हैं। इस लिये हमें दृढ़ संकल्प कर लेना चाहिए कि हिंदी को राष्ट्र-भाषा बना कर उसके साहित्य को उन्नत करें जिससे देश में ऐक्य और परस्पर प्रेम फैले।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिंदी साहित्य की दशा।

यद्यपि कुछ वर्षों से हिंदी साहित्य उन्नति कर रहा है तथापि बँगला, मराठी और गुजराती साहित्यों की बराबरी नहीं कर सका। हिंदी साहित्य तीनों साहित्यों से पुराना कहा जाता है, इसकी खोज काशी नागरीप्रचारिणी सभा ने की है। हिंदी का सब से प्राचीन कवि पुष्य कहा जाता है जो अनुमानतः संवत् ७७० में पैदा हुआ था। इसने संस्कृत अलंकारों का हिंदी दोहों में अनुवाद किया था। इससे सिद्ध होता है कि हिंदी की उत्पत्ति कहीं बहुत आगे हो चुकी थी क्योंकि जब तक कोई भाषा भली प्रकार स्थिर नहीं हो जाती तब तक उसमें कविता नहीं हो सकती। अब मराठी, बंगला तथा गुजराती की साहित्योत्पत्ति पर दृष्टिपात कीजिए। मराठी भाषा के प्रथम कवि नामदेव समझे जाते हैं। ये तेरहवीं शताब्दी में हुए थे और गुजराती के आदि कवि नरसी महता इनके कुछ बाद हुए थे। इन तारीखों से स्पष्ट पता लगता है कि हिंदी की उत्पत्ति बहुत आगे हुई थी। स्वर्गीय बाबू बालमुकुंदजी गुप्त हिंदी का जन्मकाल शाहजहां के समय मानते हैं। वे कहते हैं कि मुगल सम्राट् शाहजहां के बसाए शाहजहाँनाबाद के बाजार में इसका जन्म हुआ था। शाहजहां १७ वीं शताब्दी में हुआ था। तो क्या हिंदी की आयु केवल ढाई पौने तीन सौ वर्ष की है? गुप्तजी ने इसकी पुष्टि में कोई प्रमाण नहीं दिया। अस्तु यहाँ थोड़ासा विषयांतर हो गया है जिसके लिये क्षमाप्रार्थी हूं। अब यह विचारना चाहिए कि जेठी बहिन हिंदी इतने पीछे रह गई और लहुरी बहिनें बंगला, मराठी, तथा गुजराती क्यों आगे बढ़ गईं? आप इस बात से भलीभांति परिचित हैं कि हिंदी का जन्म-स्थान उत्तर भारत है और यदि इसका जन्म इससे आगे हो चुका था परंतु अधिक समय तक मुसलमानी राज्य रहने से वह पनप नहीं पाई। बंगाल, गुजरात और दक्षिण में भी यद्यपि मुसलमानी राज्य रहा तथापि इतना नहीं जितना उत्तर भारत में था। अतएव बंगला, मराठी और गुजराती पर कोई हानिकारक प्रभाव नहीं पड़ा और वे क्रमशः उन्नति करती चली गईं। उत्तर भारत में मुसलमानी प्रभावका मोटा उदाहरण परदे की कुप्रथा है जो अभी तक जारी है। कायस्थों पर जो असर पड़ा है वह सभी को ज्ञात है; उर्दू को तो वे अपनी मातृभाषा समझते ही हैं परंतु कोई कोई कायस्थ भाई तो गरारेदार पाजामे भी पहनते हैं। दाढ़ी रखना और मांस मदिरा इत्यादि का सेवन करना तो कोई बात ही नहीं है। कहिए इतने पर भी हिंदी की उन्नति हो सकती है?

परंतु हम ऊपर कह चुके हैं कि, हिंदी साहित्य की उन्नति संतोषजनक नहीं है। उसे अभी अनेक रत्नों से सुसज्जित करना है। विचार जाग्रति के ग्रंथों का उसमें अभाव है। वही दशा नाटक इतिहास की है। वैज्ञानिक तथा औद्योगिक ग्रंथों का जिनकी आज बहुत आवश्यकता है, पूरा अभाव है। अलबत्ता मनोरंजक पुस्तकों की भरमार अच्छी है। हम इस झुकाव को बुरा नहीं समझते क्योंकि मनुष्य स्वभाव से ही मनोरंजन प्रेमी है। दिनभर के श्रम से थके थकाए मनुष्य को उपन्यास कुछ विश्राम देते हैं। पश्चिमी देशों में तो साहित्य के इस अंग ने बहुत ही उन्नति की है। परंतु उत्तम उपन्यास लेखक प्रत्येक देश में थोड़े ही पाए जाते हैं। इसलिये उच्च श्रेणी के उपन्यासों की अधिक जरूरत है। मनोरंजन के साथ साथ उनमें सदाचरणों के उपदेश रहने चाहिए। हिंदी उपन्यास संसार में दक्षिण के हरि भाऊ आपटे और बंगाल के बङ्किमचंद्र पैदा होने चाहिएँ। दूसरी भाषाओं के उत्तमोत्तम ग्रंथों के अनुवाद होने चाहिए। शेक्सपियर के ग्रंथों का अभी तक अनुवाद नहीं हुआ। इसी प्रकार शिक्षाप्रद अंगरेजी कवियों की छोटी छोटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविताओं के अनुवाद आवश्यक हैं। इस विषय में पंडित श्रीधर पाठक ने उद्योग किया था। परंतु इसके अतिरिक्त अन्य लेखकों ने आज तक इस विषय पर लेखनी नहीं उठाई। तात्पर्य यह है कि जो जिस भाषा से सामग्री मिले उसे लेकर हिंदी साहित्य की पूर्त्ति करनी चाहिए। विविध शास्त्रों के पारिभाषिक शब्दों का कोश तैयार करना चाहिए। यह पूर्ति भारतवर्ष की संपूर्ण भाषाओं के विद्वानों द्वारा हो सकती है। सरकार से निवेदन करना चाहिए कि वह विश्वविद्यालयों में आवश्यक विषयों की शिक्षा में हिंदी को स्थान दे तथा कम से कम एंट्रेंस परीक्षा तक सारी शिक्षा हिंदी भाषा में कर दे। मुझे खेद के साथ कहना पड़ता है कि सरकार इस विषय में बिलकुल ध्यान नहीं दे रही है। यह बात स्वयंसिद्ध है कि संसार के किसी देश में परदेशी भाषा द्वारा पढ़ाई नहीं हो सकती। अंगरेजी विश्वविद्यालयों को ही लीजिए। उनमें अंगरेजी ही को मुख्य स्थान दिया गया है न कि ग्रीक या लैटिन को। इस विषय में मैसूर विश्वविद्यालय का उद्योग सराहनीय है। उसमें उच्च भाषा का माध्यम देशी ही भाषा रखा है। गुरुकुल हरिद्वार में भी यही प्रथा जारी है। परंतु बनारस के हिंदू विश्वविद्यालय का क्या हाल है? शोक है कि कितना ही आंदोलन करने पर भी इस विश्वविद्यालय में हिंदी को यथोचित स्थान नहीं मिला। मेरी राय में इस विश्वविद्यालय को व्यर्थ आर्थिक सहायता दी गई। हिंदू धर्म तथा संस्कृत के केंद्र काशी में हिंदी का ऐसा निरादर न होना चाहिए था। हम हिंदुओं को उचित है कि इस विषय में घोर आन्दोलन करें और जब तक हिंदी को उच्च स्थान प्राप्त न हो जाय तब तक पीछे न हटें। यह तो वही कहावत हुई कि घर ही के पीरों को तेल की सिठाई। हमें ऐसे विश्वविद्यालय की कोई आवश्यकता न थी। शोक है कि मालवीय जी जैसे हिंदी प्रेमियों के रहते हमारी भाषा की यह दशा हो। हम लोगों की अपेक्षा तो हमारे दक्षिणी मद्रासी और बंगाली भाई ही अच्छे हैं जिन्होंने आंदोलन करके मराठी, तेलंगी और बंगला को बी० ए० और एम० ए० परीक्षाओं में स्थान दिलाया। सौभाग्य की बात है कि अब अंगरेज लोग भी इस बात को समझने लगे हैं कि विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा देना अस्वाभाविक है। सन १९१६ में मद्रास विश्वविद्यालय के वार्षिक उत्सव पर सर एच० स्टुअर्ट ने साफ कह दिया था कि "विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा प्राप्त करना सचमुच ही बड़ी कठिन समस्या है।"

मद्रास प्रांत में कई करोड़ आदमी तामिल और तैलंगी भाषाएँ बोलते हैं। वे ही उनकी मातृभाषाएँ हैं। उन सब को थोड़ी सी प्रारंभिक शिक्षा छोड़ कर अन्य सारी शिक्षा अङ्गरेजी भाषा ही द्वारा मिलती है। यह बात आश्चर्य में डालनेवाली है। यदि किसी अपरिचित आदमी से यह कहा जाय तो वह कठिनता से इस बात पर विश्वास करेगा। कोई विश्वास करे या न करे, यह है अवश्य सच। करोड़ों आदमियों की मातृभाषा बदल देने का सामर्थ्य किसी में नहीं। इसमें संदेह नहीं कि ऊँचे दरजों में समस्त शिक्षा अङ्गरेजी में दी जाने से शिक्षा प्राप्ति में बहुत विलंब लगता है। अङ्गरेजी भाषा उन्नत भाषा है इससे उसके सीखने की जरूरत है। उसके द्वारा अनेक उदार विचार प्राप्त किए जा सकते हैं। तथापि इससे मातृभाषा में शिक्षा प्राप्त करने का महत्त्व कम नहीं हो सकता। इन विचारों से सभी समझदार भारतवासी सहमत होंगे। गत वर्ष शिमले में भी एक सभा हुई थी जिसमें प्रत्येक प्रांत के शिक्षित प्रतिनिधियों ने भाग लिया था। यद्यपि परिणाम संतोषजनक नहीं हुआ था तथापि इससे इतना तो ज्ञात हुआ कि सरकार को भी अब इस बात की चिंता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगी है। हम सबको उचित है कि इस
को न त्यागें। अंत में आंदोलन की सफलता
होती है।

खड़ी बोली और ब्रज भाषा की कविता।

आजकल खड़ी बोली की कविता का बहुत
चार हो रहा है। इस तूफान ने ब्रज भाषा को
कुल ही उड़ा दिया है। ब्रज भाषा की कविता के
पाती अपनी हीन दशा की गुसांई जी के इस
से तुलना करते हैं :—

तुलसी पावस के समय धरी कोकिला मौन।
अब तो दादुर बोलिहैं, हमें पूछिहै कौन॥

वस्तुतः ब्रजभाषा की कविता की यही दशा
रही है। प्रथम हमें इस बात का विचार
ना चाहिए कि कविता खड़ी बोली की हो
या ब्रजभाषा की। उसमें निम्नलिखित बातें
आती हैं या नहीं अर्थात्—

(१) उसमें साधारण लोगों की अवस्था,
चार और मनोविकारों का वर्णन रहता है
नहीं।

(२) उसमें धीरज, साहस, प्रेम, दया
दि के उदाहरण रहते हैं या नहीं।

(३) उसमें कल्पनाएं सूक्ष्म और उपमादिक
कार साधारण रहते हैं या नहीं।

(४) उसकी भाषा सहज, स्वाभाविक और
हर रहती है या नहीं।

(५) उसका छंद, सीधा, सुहावना और
न के अनुकूल रहता है या नहीं।

खेद के साथ कहना पड़ता है कि खड़ी बोली
कविता में इन बातों का अभाव सिवा दस पांच
यों की कविता के और सबों में पाया जाता
ब्रजभाषा में इन बातों की कमी नहीं थी। खड़ी
ली की कविता क्या है तुकबन्दी हो रही है। उनकी
नी पर लगाम नहीं। पत्र भी उनको उत्तेजना देते
हैं। शोक है इन कवियों की कविता जांचने के
कोई सभा समाज नहीं। विलायत में इन बातों
की जांच के लिये संस्थाएं हैं। उनकी तीव्र आलोचनाओं ने कई कवि खद्योतों की लेखनी बंद कर दी। आशा है कि इस देश में भी ऐसा कुछ प्रबंध होगा। नहीं तो कविता का गौरव लोप होने में कोई संदेह नहीं। आश्चर्य तो इस बात का है कि अच्छे विद्वान् भी संस्कृत के लंबे चौड़े शब्द घुसेड़ने में आनंद मानते हैं। नमूने के लिये हम खड़ी बोली की कविता को यहां उद्धृत करते हैं—

नव प्रभा परमोज्ज्वल-लीकसी।
गति-मति चुटिला-फणिनी-समा॥
दमकती दुरती घन-अङ्क थी।
विपुल केलि कला खनि-दामिनी॥

यहाँ एक ही उदाहरण दिया गया है। ऐसी कविता से पुस्तक भरी हुई है। पर स्थानाभाव से अधिक उदाहरण नहीं दिए जा सकते। कहिए इस क्लिष्ट भाषा को कौन समझेगा? इसके तो पढ़ने में भी क्लेश होता है। कवि ने जनसाधारण की योग्यता को ताक पर रख कर अपनी ही योग्यता का परिचय दिया है। क्या ऐसी कविता स्वाभाविक कही जा सकती है? एक महाशय का कहना है कि जब तक खड़ी बोली की कविता में संस्कृत के ललित वृत्तों की योजना न होगी तब तक भारत के अन्य प्रांतों के विद्वान् उससे सच्चा आनंद कैसे उठा सकेंगे? ठीक है, पर ये महाशय इस बात को भूल गए हैं कि प्रत्येक मनुष्य को अपनी मातृभाषा की कविता से जो अगाध प्रेम होता है अन्य भाषा की कविता से नहीं। अब हम साधारण खड़ी बोली की कविता का उदाहरण देते हैं—

सलोने श्याम प्यारे क्यों न आवो।
दरस प्यासी मरें तिनको जिआवो॥
कहां हो जू कहां हो जू कहां हो।
लगे ये प्राण तुमसों हैं जहां हो॥

यह आनंदघन की कविता का नमूना है जो १७ वीं शताब्दी में हुए थे। कहिए इसमें और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊपर की कविता में कितना अंतर है। यह कितनी सरस और लालित्य-पूर्ण है, ऐसी कविता को किसी भी प्रांत का मनुष्य समझ सकता है। इसी प्रकार की कविता अमीर खुसरो की भी होती थी। कबीर, सूदन, दयाराम, दादू दयाल की कविताओं में भी यही रस टपकता है। इससे आप समझ गए होंगे कि मैं खड़ी बोली का विपक्षी नहीं हूँ परंतु केवल सीधी साधी कविता का भक्त हूँ और जनसाधारण भी इसी शैली से प्रसन्न होते हैं। ऐसी कविता से साहित्य की शोभा बढ़ती है और वह चिरस्थायी हो सकती है। तुलसीकृत रामायण इस बात की साक्षी है। जिस मनुष्य को कुछ भी हिंदी अक्षरों का परिचय है वह रामायण को भली भांति पढ़ और समझ सकता है। भारतवर्ष का संपूर्ण साहित्य भले ही रसातल को चला जाय, वह जल कर भस्म भी हो जाय पर यदि असली रामायण मौजूद है तो यह हमारे साहित्य को सदैव हरा भरा रख सकती है।

हिन्दीभाषा किस प्रकार की होनी चाहिये।

इस विषय पर भी बहुत वादविवाद हो रहा है। एक दल कहता है कि शुद्ध हिंदी में अन्य भाषाओं के शब्द न आने चाहिए। उसमें संस्कृत के ही शब्द रहने चाहिए। दूसरा दल कहता है कि बातचीत की भाषा ही हिंदी भाषा होनी चाहिए उसमें अन्य भाषाओं के शब्दों का समावेश होना बुरी बात नहीं है। आप लोग खूब जानते हैं कि समय के हेर फेर से भाषा में भी हेरफेर हुआ करता है। विलायत की असली भाषा और थी पर पीछे और हो गई। उसमें लेटिन, फ्रेंच, तथा स्थानीय भाषाओं का प्रवेश होने लगा, और अब वह एक प्रौढ़ भाषा समझी जाती है। इसी प्रकार संसार की सब भाषाओं में हेरफेर होता आया है। कवि भिखारीदास जी कहते हैं—

तुलसी गंग दुवौ भए, सुकविन के सरदार।
इनके काव्यन में मिली, भाषा विविध प्रकार।

जब तुलसी और गंग जैसे धुरंधर कवियों की भाषा मिश्रित है तो आधुनिक लेखकों की मिश्रित भाषा होने में क्या दोष है? कविवर बिहारीलाल के इस दोहे से भी मिश्रित भाषा का पता लग सकता है—

जुरे दुहुंन के दृग झमकि, रुके न झीने चीर।
हलकी फौज हरौल ज्यों परति गोल पर भीर।

इस दोहेमें "जुरे" "झीने" और "हलकी" शब्द बुंदेलखंडी भाषा के हैं और "फौज" और "गोल" फारसी शब्द हैं। इतने पर भी दोहे के लालित्य में कोई बाधा नहीं आई और आदर आज बिहारी सतसई का है वह दूसरे काव्य का नहीं है।

यह तो बात पद्य की हुई। अब गद्य की कुछ सुन लीजिए। गद्य लेखकों के भी दो विभाग हैं। एक वह जो निरा संस्कृत के शब्द कूट कूट कर हिंदी को चमकीली दमकीली बनाना चाहता है और दूसरा वह जो इसके विपरीत है अर्थात् उस विभाग का कहना है हिंदी बोल चाल की भाषा में लिखी जाय, वह स्वाभाविक हो और सब की समझ में आ सके उसमें चाहे साधारण उर्दू के भी शब्द आ जाएं तो कुछ हानि नहीं। मेरी समझ में भाषा ऐसी होनी चाहिए जिसमें न तो संस्कृत के शब्दों की भरमार हो न उर्दू या फारसी के शब्दों की। दोनों के मिश्रण से भाषा भद्दी और शुष्क हो जाती और फिर ऐसी भाषा के पढ़ने को किसी का जी नहीं चाहता। खेद की बात है कि अभी तक हमारे हिंदी प्रेमियों का इस ओर ध्यान नहीं खिंचा है। कई सज्जन तो विदेशी शब्दों के बैरी हैं। गत वर्ष जब्बलपुर हिंदी साहित्य सम्मेलन के समय मुझे टिकट बेचने का काम दिया गया था। मेरे डेरे के सामने एक तख्ती टँगी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिख पर हिंदी में "टिकट घर" लिखा था। थोड़ी देर में दो महाशय मेरी ओर आए। इनमें एक संस्कृत के शास्त्री थे और दूसरे हिंदी के परम भक्त थे। दोनों ने तख्ती की ओर इशारा कर के कहा कि मिश्र जी सम्मेलन भूमि में यह क्या अनर्थ? मैंने कहा क्या अपराध हुआ? वे कहने लगे कि इस तख्ती पर के टिकट शब्द को निकाल कर हिन्दी शब्द लिखिए। मैंने उत्तर दिया कि, मेरी तो योग्यता नहीं जो इसकी बराबरी का शब्द पा सकूँ। कृपया आप ही बताइए, मैं अभी टिकट को निकाल बाहर करता हूं। दोनों महानुभावों ने बहुत प्रयत्न किया पर कोई सन्तोषदायक शब्द न मिला। अन्त को टिकट को नहीं निकाल सके। मैं समझता हूं कि हममें इतनी संकीर्णता नहीं होनी चाहिए। अनुवाद से कभी कभी साधारण शब्द कठिन हो जाते हैं। विलायती विश्वविद्यालय आक्सफर्ड और केम्ब्रिज के नामों से शिक्षित संसार भली प्रकार परिचित है परंतु एक विशुद्ध हिंदी लेखक ने इन नामों का भी अनुवाद कर डाला। अर्थात् आक्सफर्ड का अनुवाद "उत्तरतर" और केम्ब्रिज का "कामसेतु" कर डाला। बतलाइए इन गढ़ंत नामों को कौन समझेगा? इसी को अनर्थ कहते हैं और इसी को हंसी। इसी भांति लंडन को आपने "नंदन" बना दिया। कहिए इन बातों से साहित्य की कभी उन्नति हो सकती है? मेरी राय में ऐसे शब्दों का एक निराला ही कोष तैयार करना पड़ेगा। अन्य भाषा का साहित्य पर अवश्य प्रभाव पड़ता है। संस्कृत से शब्द इस प्रकार मिल जाते हैं कि उनको निकालना असम्भव सा दिखता है। स्टेशन, नोट, कोट, बटन पेंसिल, बूट, अपील, डिक्री, इत्यादि अंगरेजी शब्द इतने प्रचलित हो गए हैं कि उन्हें छोटों से बड़ों तक, तथा शिक्षित अशिक्षित सभी आसानी से समझ सकते हैं। इसी प्रकार कचहरी, रास्ता, खर्च, फायदा, नुकसान, मुशकिल, आसान इत्यादि उर्दू शब्द उपयोग में लाने से हिंदी भाषा भ्रष्ट नहीं हो सकती। हां पानी के स्थान में "आब" कहना केवल मौत की निशानी है क्योंकि पानी सब कोई समझता है परंतु "आब" कोई नहीं समझ सकता। ऐसे कठिन शब्दों की तारीफ में किसी कवि ने ठीक कहा है—

पढ़ै फारसी बहुत विधि,
तौहू भए खराब।
पानी खटिया तर रहो,
"पूत मरे बकि आब"॥
(हंसी)

इस विषय में एक बात और कहनी रह गई। वह यह कि यदि हमारे संस्कृतज्ञ भाई संस्कृत के बड़े बड़े शब्द और मुसलमान भाई फारसी या अरबी के कठिन शब्दों को उपयोग में लाना छोड़ दें तो हिंदी उर्दू का झगड़ा ही तय हो जाय। संस्कृत फारसी जाननेवालों ने व्यर्थ का कलह पैदा कर रक्खा है। यदि इन्हें अपनी विद्वत्ता दिखाने का हौसला है तो उन भाषाओं में पृथक् लेख लिखें, कोई मना नहीं करता। बिचारी हिंदी को इन लड़ाइयों से दूर रहने दें।

उपसंहार।

महाशयो मैंने, आपका बहुतसा समय नष्ट किया। मेरा हृदय इस विषय पर इतना भरा है कि जो कुछ मैंने कहा है वह बहुत ही थोड़ा है। यदि स्वास्थ्य न बिगड़ता तो थोड़ा बहुत और कहता। मैंने यदि कोई अनुचित बात कही हो तो उसके लिये क्षमा प्रार्थी हूँ। आप सूर, तुलसी भूषण, बिहारी और पद्माकर की संतान हैं। इन महात्माओं की सुकीर्ति की विमल पताका हिमालय के उच्च शिखर पर फहरा रही है। वे अपना कर्तव्य कर गए। अब हमारा धर्म है कि उनकी भाँति हम भी हिंदी साहित्य का मुख उज्वल करें। भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र ने साहित्य की जो सेवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की है वह जग-जाहिर है। वे अपना सर्वस्व हिंदी के हेतु अर्पण कर गए। किसी कवि ने (!) सच कहा है—

जो गुन नृप हरिचंद में,
जगहित सुनियत कान;
सो सब कवि हरिचंद में,
लखहु प्रतच्छ सुजान॥

अतएव हमको बाबू हरिश्चंद्र के उदाहरण का अनुकरण करना चाहिए।

मातृभाषा की सेवा से बढ़कर अन्य सेवा नहीं। इस विषय में यूरोपीय देश बहुत बढ़े चढ़े हैं। वे अपने साहित्य सेवियों का पूरा सत्कार करते हैं। अपनी मातृभाषा के भांडार को जिस प्रकार होता है, बढ़ाते ही जा रहे हैं। यह बात सच है कि, हमारे देश में "नोबल प्राइज" दाता नहीं हैं परंतु सत्सेवा के बदले में पारितोषिक की भी आकांक्षा नहीं करनी चाहिए। हमारा धर्म भी यही उपदेश देता है कि कर्तव्य करते जाओ, फल की आशा मत करो। कर्तव्य पूरा होने पर फल आप ही प्राप्त होगा। (अपूर्ण)

भारतवर्ष में फिरंगी।*

नए नए देशों की खोज में जान को हथेली पर रख कर निकल जानेवाली जाति अवश्य ही समय पाकर सुख सौभाग्य-संपन्न होती है। यह बात पहले भारत में थी और यहां के लोग जहाजों पर चढ़ चढ़ कर दूर देशों की यात्रा किया करते थे, और व्यापारियों के जहाजों का चीन और श्याम देश तक जाने का वर्णन मिलता है पर इधर सैकड़ों वर्ष से समुद्र यात्रा बंद हो गई और इस ओर से हम लोग घृणा करने लग गए, जिसका फल भी हाथों हाथ पा लिया। जिन दिनों हम हाथ पर हाथ दिए बैठे थे यूरोप खंड के एक छोटे से देश के† निवासी जिसकी लंबाई चौड़ाई ३३००० वर्ग मील से अधिक न थी, कमर कस कर बाहर निकल पड़े और नई भूमि की खोज करते हुए उनमें के एक पुरुषार्थी महापुरुष वास्को डी गामा ने पंद्रहवीं शताब्दी के प्रारंभ में भारत के दक्षिण प्रांत के समुद्र किनारों पर लंगर डाला। यह वह जमाना था जब वह यूरोपीयन महाशय कर जोड़ और घुटने टेक कर उस प्रांत के शासक जमोरिन के सामने भेंट लेकर आए थे। पर जो अवसर पड़ने पर झुकने से नहीं हिचकता वही समय पाकर बढ़ता भी है। अस्तु, इनके दृष्टांत से लाभ उठा कर पुर्तगाल निवासियों का और भी उत्साह बढ़ा और सन १५१७ इसी में डी जोआउ डी सलिभीरा नाम के एक पोर्चूगीज महाशय ने बंगाल में पदार्पण किया। इनका जहाज अराकान के किनारे लगा था और प्रायः वर्ष भर वे वहां ही रहे। इसके पहले भी फिरंगी लोग दक्षिण प्रांत में आकर व्यापारी अड्डे जमा चुके थे और गोवा इत्यादि भारतीय बंदरों पर उनका दबदबा जम चुका था तथा वहां के शासक की गिद्ध दृष्टि भारत पर पड़ चुकी थी और व्यापार के बहाने भारत के दक्षिण प्रांत पर वे लोग दबदबा जमाने लगे थे। साथ ही जब बंग देश की बहुमूल्य और लाभदायक व्यापार की सामग्री पर उनकी निगाह पड़ी तब उधर भी उन लोगों का विचार बढ़ा और उसके परिणाम स्वरूप सलिभीरा महाशय राजदूत के रूप में बंगाल में आ धमके। इस समय पुर्तगालियों की वासना सिद्ध हो चली थी

---

* फिरंगियों से तात्पर्य्य यहां यूरोप खंड के पुर्तगाल निवासियों से है।

† पुर्तगाल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थात् दक्षिण भारत में उनके पैर जमने लगे थे
पर अब तक वंगदेश से इन फिरंगियों का कोई
प्रकार व्यापार का संबंध न था। गोवा के फिरंगी
शासक अलबुकर्क की दृष्टि बंगाल पर भी
लगी हुई थी, पर उन दिनों दक्षिण प्रांत की
ओर की भूमि ग्रास करने की चेष्टा में लगे रहने
के कारण उसे इधर हाथ बढ़ाने का अवकाश
नहीं मिला था। इसी के अनुरोध से सन १५१७ में
बंगाल के बादशाह मैन्यूएलने फेरना पेरिस-
टोही के अधीन चार जहाज करके भारत और
चीन से व्यापार करने के लिये भेजे थे। ये
महाशय चीन के उपकूल में घूम फिर कर व्यापार
करते रहे और खूब धन उपार्जन कर बंगाल की
ओर बढ़े, पर किसी दुर्घटनावश वे वहां तक
पहुंच नहीं सके थे। अस्तु पहला अभियान जो
फिरंगियों का बंगाल में आया सलिमीरा महा-
शय ही का था। अलबुकर्क की मृत्यु के बाद
दक्षिण भारत के फिरंगी उपनिवेशों के शासक
लोपो सौरेज़ द्वारा यह महाशय वंगाल में फिरंगी
राजदूत बना कर भेजे गए। आराकान में जहाज
लगा कर बंगाल के तात्कालिक मुसलमान शासक
नसिर हुसैनशाह के दरबार में उसने अपने दूत
से और भेंट तोहफे इत्यादि द्वारा, पुर्तगाल के
बादशाह के नाम से वंगदेश में व्यापार इत्यादि
करने की स्वतंत्रता प्राप्त होने की प्रार्थना की थी,
पर उसके दूत वहां घुसने नहीं पाए। उसे जहाजी
डाकू समझ कर चटगांव के शासक ने उसके
जहाजों पर तोप दागना आरंभ कर दिया और
बड़ी कठिनाई से वह अपनी रक्षा कर सका।
सिफारिश इत्यादि से जब कुछ काम न चला तब
लाचार हो कर सलिमीरा वास्तव ही में डकैती पर
उतार हो गया और वंगीय उपकूल में व्यापारी
जहाजों का आना जाना रुक गया। मुसलमान
शासक के कुछ जहाज आनेवाले थे और उनके
आ जाने के भय से चटगांव के शासक ने उससे
संधि कर ली। पर जब उसके जहाज सही सलामत
चले आए तब उसने संधि तोड़ दी। सलिमीरा
महाशय जब इधर कुछ नहीं कर सके तब लंका
द्वीप की ओर चले गए और वहां पुर्तगाली उप-
निवेश के शासक लोपो शौरोज ने उन्हें लंका के
नए बनवाए हुए किले का रक्षक नियत कर दिया।

सलिमीरा के सपुर्द केवल व्यापार संबंधी खोज
ही का काम न था बल्कि भारत की तात्कालिन
अवस्था की परीक्षा का भार भी उनको दिया
गया था।

यहां की अवस्था कुछ अमेरिका के जंगलियों
की सी तो थी ही नहीं कि सहजही में मार काट
कर आदि निवासी पहाड़ों में भगा दिए जाते
और देश हाथ आ जाता। यह था पुरानी विद्या
और दर्शन शास्त्र तथा प्राचीन कला कौशल संपन्न
भारतवर्ष देश, जहां की सभ्यता युरोप से भी
पुरानी थी और जो प्राचीन यूनान और रोम का
भी शिक्षक रह चुका था। इस समय वंगदेश में
सरस्वती (गंगा की एक शाखा) किनारे सत-
गांव (पुराणों का सप्तग्राम) एक बड़ा प्रभावशाली
नगर था और गंगावक्ष पर से यहां नाना प्रकार
के पदार्थों का व्यापार होता था, जिनमें सुपारी,
मोती और ढाके की मलमल विशेष उल्लेख योग्य
चीजें थीं। एक समय वह भी था जब मिश्रदेश
द्वारा यही ढाके की मलमल यूनान और रोम की
रमणियां लेकर तथा धारण कर अपने को धन्य
मानती थीं और व्यापारी लोग इसके द्वारा
एक के सौ सौ करते थे। इन दिनों बंगाल में सत-
गांव ही सब से भारी बंदर था और सोलहवीं
शताब्दी के अंत तक इसका प्रभाव ज्यों का त्यों
बना हुआ था। यहां बड़े बड़े व्यापारियों के
जहाज आकर लंगर डालते थे और सम्राट् अक-
बर के राज्य में अकेले इसी बंदर से ३००००)
रुपए की आय होती थी। पर फिरंगियों के पदा-
र्पण के साथही इसकी शोभा नष्ट होने लगी और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बंगाल की राजधानी गौड़ नगरी का प्रधान बंदर चटगांव हो गया।

पुरुषार्थ के सामने दैव भी कुछ चीज है अवश्य, क्योंकि पहले पहल इस देश में फिरंगी (पोर्तुगीज़) आए, उलन्दाज (डच) और फरासीसियों ने पीछे पदार्पण किया और सबों ने अपना व्यापार भारत में खूब फैलाया, पर ये लोग भाग्यवान् अंगरेजों के लिये केवल मैदान साफ करने का काम करते रहे जिन्होंने थोड़े ही से प्रयास में देश पर अधिकार कर लिया और यह कई युरोपियन जातियां अपना सा मुँह लेकर रह गईं। वास्तव में सोलहवीं शताब्दी में पोर्तुगीजों का जैसा प्रभाव भारतवर्ष में था, उसे देख कर भला कौन कह सकता था कि इनके सिवा और कोई भारत का राजा होगा। केवल मार काट, समुद्री डकैती इत्यादि को छोड़ कर अब ये लोग अपना अड्डा भी जमाने लग गए थे। वही हुगली (कलकत्ते के निकट) जो इस समय बंगाल के चौबीस परगने का एक जिला हो रहा है उस समय थोड़ी सी झोपड़ियों का एक ग्राम मात्र था। यह हुगली यद्यपि एक सामान्य ग्राम था, पर भारत के इतिहास में इसकी गिनती असाधारण स्थानों में होने योग्य है क्योंकि एक समय इसी ग्राम के पास कम से कम सात *प्रबल युरोपियन जातियों में परस्पर संघर्ष हुआ था, और यह संघर्ष था दुर्बल भारत को डकार जाने के लिए। इन सप्त महारथियों की उछल कूद का स्थान हुगली कम महत्व का स्थान नहीं, पर इतिहासकारों ने इसका उल्लेख विशेष भाव से बहुत कम किया है। ये फिरंगी लोग यहां अस्त्र सहित पधारे थे और अधिकार जमाने के लिए बंग देश में इन्होंने कम उछल कूद नहीं की थी। इन्हीं महाशयों की बदौलत हुगली की विशेषता बढ़ने लगी। पहलेपहल इन्होंने सन १५३६-३८ में सतगांव में अपना अड्डा जमाया था पर पीछे से सन १५८० में शहंशाह अकबर से आज्ञा-पत्र प्राप्त करके ये लोग हुगली में आ जमे। आगरे के मुगल दरबार में इन्होंने नाना प्रकार के तोहफे भेंट किए थे। यह सब सामग्री इन्होंने भारतीय द्वीप पुंजों से प्राप्त की थी, जहां के सीधे सादे निवासियों से चोखे अदल बदल कर ये लोग खूब धन कमाते थे। इन बहुमूल्य सामग्रियों को भेंट में पाकर बादशाह बहुत प्रसन्न हुए और अपने सूबेदार ढाके के नव्वाब को लिख भेजा कि पोर्तुगीजों मे से दो महाशय चुन कर तुरंत आगरे रवाने किए जायं। उन दिनों बंगाल की राजधानी ढाका थी, और वहीं बंगाल के नव्वाब रहा करते थे। बादशाह की आज्ञा पा कर नव्वाब साहब ने फौरन सतगांव की ओर दूत रवाना किए पर राह में उन्हें बहुत दिन लग गए और अट्ठाइस दिन की यात्रा के बाद जब ये लोग सतगांव पहुँचे तब वहां एक भी फिरंगी की सूरत दिखाई न दी। क्योंकि सब लोग मलक्का या चीन की ओर व्यापारार्थ चले गए थे। नव्वाब साहब को पता लगा कि प्रायः दो हजार रुपए का माल फिरंगी लोग व्यापारियों के पास छोड़ गए हैं और इससे उसे आशा हुई कि वे लोग पुनः आवेंगे, पर फौरन ही बादशाही आज्ञा का पालन न होने के कारण वे बहुत अप्रसन्न हुए और नव्वाब साहब को बेतरह झिड़की मिली, जिससे दुःखी हो उन्होंने प्राण ही त्याग दिए। इसके दूसरे वर्ष पिडरो टेमेरे नामका एक फिरंगी सतगांव में आया। वह राज दरबार के कुचक्र और राजनीति के हेर फेर से विशेष परिचित था और बादशाही आज्ञा का पालन करने के लिए वह सहर्ष तय्यार भी हो गया। अस्तु अपने साथ अन्य और दो फिरंगी और बहुत से

* फिरंगी (पोर्तुगीज़) उलन्दाज (डच) अंगरेज, फ्रेन्च, फ्लेमिश, डेन (डेनमार्क निवासी) और जर्मन निवासी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेवकों को लेकर वह आगरे को रवाना हुआ। शाहंशाह अकबर इसके बर्ताव से ऐसा मुग्ध और प्रसन्न हुआ कि कई बार उसने इसे अपने निकट बुला कर बात की, कई अमूल्य सामग्रियां इसे भेंट की और हुगली में जहां चाहे नगर स्थापन करने के लिये उसे फरमान भी दे दिया। वहां के आस पास की भूमि भी शाहंशाह ने उसे प्रदान कर दी और गिर्जा बना कर अपने धर्म्म प्रचार करने और वहां के निवासियों को ईसाई बनाने की भी (यदि वे स्वीकार करें तो) आज्ञा दे दी। मुगल कर्म्मचारियों को आज्ञा दे दी गई कि नगर निर्म्माण के लिये आवश्यक सामग्रियों से फिरंगियों की सहायता करें। अस्तु टेमेरस साहब ने हुगली ही को इस कार्य्य के लिये उपयुक्त समझा और थोड़े ही दिनों में यह हुगली फिरंगियों का एक मुख्य उपनिवेश हो गया तथा सतगांव टूट कर हुगली श्रीसंपन्न हो गई।

फिरंगियों की उन्नति।

अकबरनामे से पता लगता है कि सन् १५८० ई० के करीब इन फिरंगियों का प्रभाव खूब बढ़ा चढ़ा था। इसी समय के करीब टेमेरस साहब को शाहंशाह अकबर से फरमान भी मिला था। ऐसा भी लिखा मिलता है कि जब सन् १५८० ई० में अकबर का अधीन सतगांव का फौजदार मिर्जानजात खां सलीमाबाद* के निकट उड़ीसा के राजा द्वारा परास्त हो गया तब भाग कर हुगली में रहने फिरंगियों की शरण ली थी, इससे साबित होता है कि हुगली में अपना अड्डा जमाते ही फिरंगी लोग अवश्य ही कुछ प्रभावशाली हो गए थे। पर एक बात समझ में नहीं आती कि इस प्रांत के विख्यात बंगाली कवि "कविकंकण" ने जिन्होंने सन १५७७ के लगभग अपना विख्यात काव्य 'चंडी' लिखा था, हुगली का कहीं उल्लेख नहीं किया और न * चिनसूरा, चंदननगर या श्रीरामपुर ही का कहीं वर्णन है। गंगा के दोनों किनारे के कई ग्रामों का उन्होंने वर्णन किया है, यथा सप्तग्राम, त्रिवेणी, गुआदलपुर, महेश, कलकत्ता हाली शहर और गौरीपुर तक बाद नहीं गया है जो ठीक हुगली के सामने है, पर शायद गंगा के और भी नीचे फिरंग देश के नाम से उन्होंने जिस जन पद का वर्णन किया है, वही हुगली श्रीरामपुर इत्यादि हो। जो हो इसमें कोई संदेह नहीं कि फिरंगियों के पैर धीरे धीरे खूब फैलने लग गए और सन १५८८ तक हुगली का सारा प्रांत इनके अधिकार में आ गया। इसके दस वर्ष बाद सतगांव तक का कुल प्रदेश भी उनके अधिकार में आ गया। इसके प्रमाण में आईन अकबरी † का वचन उद्धृत किया जा सकता है जिसमें लिखा है कि "सतगांव की सर्कार में दो प्रधान बंदर थे। एक हुगली और दूसरा सतगांव जो एक दूसरे से आधे कोस पर स्थित थे और दोनों फिरंगियों के अधिकार में थे। इनमें से हुगली मुख्य थी। यहां से आगे चल कर गंगा के किनारे इधर उधर दोनों ओर फिरंगियों ने बहुत सी भूमि मोल ले ली थी और इस प्रकार से कई ग्राम के वे लोग मालिक हो गए थे।

धीरे धीरे सोलहवीं शताब्दी के अंत तक बंगाल का सारा व्यापार फिरंगियों के हाथ में चला गया। हुगली, सतगांव और चटगांव में तो उनका प्रधान अड्डा था ही, इसके सिवा हिजली रनजा पिप्पली और ढ़ाका इत्यादि कई छोटे छोटे बंदर भी उन्हीं के हाथ में थे।

* वर्द्धवान के निकट एक ग्राम।

* यह तीनों नगर डच, फ्रेंच और डेन लोगों के अड्डे थे।

† इस पुस्तक के बनने का समय १५९६-९७ ई० बतलाया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन्हीं में के कुछ लोगों ने गंगा और ब्रह्मपुत्र की उपनदियों के किनारे किनारे बीसों बंदरों पर सुंदरबन तक अपना अधिकार जमा रखा था। हुगली में फिरंगियों की संख्या दिन पर दिन बढ़ती जाती थी और साथ ही ईसाइयों के भी पैर फैलते जाते थे। सन् १५९९ ई० में जिस साल अंगरेजों की ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना हुई थी, इन फिरंगियों ने बंडेल नामक स्थान में अपना एक बहुत बड़ा उमदा गिरजा भी बनवा लिया था। यह गिर्जा अब तक वर्तमान है, पर शायद इसके स्थान और इमारत के ढंग में कुछ परिवर्तन अवश्य हो गया है। इस साल इन्होंने एक किला भी निर्म्माण कर लिया था, पर अब वह टूट फूट गया है और उसकी केवल बर्बादी दिखाई देती है, किंतु एक साहब कहते हैं कि वहां कभी कोई किला था ही नहीं।

ईस्ट इंडिया कंपनी के कागजों से भी हुगली में फिरंगियों के व्यापार और प्रभाव का बहुत कुछ पता लगता है। केवल हुगली ही में नहीं, बंगाल की सारी नदियों पर उन दिनों इनके व्यापार का अखंड राज्य था। सन् १६१६ ईस्वी की तारीख १६ फर्वरी की चिट्ठी में सूरत के अंगरेजी कोठीदारों ने विलायत को लिखा था कि बंगाल देश तथा गंगा के किनारे के बंदरों में पोर्तुगीजों के व्यापार का अखंड प्रताप रहने से अब तक हम लोग उस ओर अपने व्यापार को नहीं फैला सके हैं"। १६१७ ई० में एक दूसरी चिट्ठी में उन्होंने यह भी लिखा कि "इस ओर कोई ऐसा छोटा सा भी बंदर नहीं है, जो फिरंगियों के अधिकार में न हो।" इसमें कोई संदेह नहीं कि वास्तव में उस समय चटगांव और सुंदरबन तक बराबर फिरंगियों का अधिकार था और यह बात थी भी सही, क्योंकि अब हुगली से हट कर अराकान उपकूल और भारतीय द्वीप पुंजों में फिरंगी लोग अपने प्रभाव का विस्तार करने लगे थे।

सतगांव की अवनति।

कुछ दिन पाकर फिरंगी लोग हुगली में बिल्कुल स्वतंत्र हो गए और मुगल गवर्नर के बार बार अनुरोध करने पर भी इन्होंने किसी प्रकार का कर इत्यादि देना बंद कर दिया। शाहजहां नामे में इस बात का उल्लेख है कि गंगा के दोनों किनारों पर फिरंगियों की जमीन है और वहां वे लोग खजाना वसूल करते हैं। यों तो जिस समय आईन अकबरी लिखी गई थी उसी समय से सतगांव घट कर हुगली बढ़ रही थी। कारणों से सतगांव की घटती होने लगी। इनमें से एक तो यह था कि हुगली को अपना मुख्य स्थान बना लेने के कारण फिरंगी लोग अपना सारा व्यापार अपने बंदर पर ले गए थे यहां तक कि मुगल कर्म्मचारी ने बादशाह तक को लिखा था कि फिरंगियों के कारण सतगांव की आमदनी घटती जा रही है। दूसरा कारण यह था कि गंगा की एक शाखा सरस्वती, जिस पर सतगांव था क्रमशः रेत भरने से सूखने लगी थी और अब केवल छोटे छोटे जहाज ही वहां जा सकते थे। इस बात को पहले ही से समझ करके फिरंगियों ने सतगांव छोड़ कर हुगली को अपना मुख्य स्थान नियत कर लिया था।

चटगांव।

जब फिरंगी लोग पहलेपहल बंगाल में आए उस समय यहां का प्रधान बंदर चटगांव ही था। यह बंदर मेघना नदी के मुहाने पर होने के कारण बड़े बड़े जहाजों के ठहरने के खूब उपयुक्त था क्योंकि मेघना के ही द्वारा बंगाल की प्राचीन राजधानी गौड़ नगरी का जल मार्ग था। गौड़पतन के साथ ही चटगांव भी हीन होने लगा और पहले सतगांव और फिर हुगली के भाग्य चमके। चटगांव के लिये बंगाल, अराकान (बरमा) और टिपरा के राजा बराबर आपस में लड़ा करते थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और मुगलों के समय तक बराबर ये युद्ध छिड़े रहते थे। जब कभी कोई फिरंगी अफसर आता तब उसे भी पहले चटगांव ही से प्रवेश करना पड़ता था, क्योंकि उस समय बंगाल की यही समझी जाती थी। पहलेपहल सन १५६३ ई० में फिरंगी वहां आए थे और वहां के एक मुहम्मदशाह से नानो फरनेनडेज़ फीथोरा नामक एक फिरंगी ने आज्ञा प्राप्त कर बहुत सी भूमि भी प्राप्त कर ली थी और उसे खजाना वसूल करने का अधिकार भी प्राप्त हो गया था। इस उपनिवेश बढ़ता ही गया और क्रमशः एक बड़े व्यापार का स्थान हो गया। सन् १५६३ में सेरीकी नामक एक यात्री ने वहां कम से कम बड़े बड़े अठारह फिरंगी जहाज देखे थे। इस का ठीक पता नहीं लगता कि वहां फिरंगियों ने कोई किला भी बनवाया था या नहीं। पर संदेह नहीं कि उनका बल इस समय खूब बढ़ा था, यहां तक कि चटगांव को अड्डा कायम करके गंगा के किनारे किनारे के सारे बंदरों पर भी अधिकार जमाने की उनकी पूरी मनसा थी।

जलदस्यु।

एक ओर तो फिरंगियों की एक पार्टी गोवा के गवर्नर के अधीन रह कर चटगांव में अपना अधिकार विस्तार कर रही थी और दूसरी ओर उनकी दूसरी पार्टी अपने देश के गवर्नर से कुछ सम्बन्ध न रख कर स्वतंत्र रुप से जहाजी डकैती द्वारा अपना बल बढ़ा रही थी। इन डकैतों का सरदार कोई शिवास्तीन गनजालेज़ रीवायू नाम का अजनबी फिरंगी था।

पहले पहल सन् १६०६ ई० में बंगाल में जाकर वह नमक का व्यापार करने लगा। फिर एक निज का जहाज खरीद कर नमक लेकर वह अराकान के राजा के एक प्रधान बंदर डियांगा को गया। उस समय पेगू में सिरीयम नामका एक भी सम्पन्न बड़ा बंदर था। इस बंदर पर भी एक फिरंगी का अधिकार था। आराकान के राजा से पेगू के राजा की लड़ाई हुई थी और उस लड़ाई में इस फिरंगी ने आराकान के राजा की सहायता की थी और इसी के पुरस्कार स्वरूप उसे सीरियम का बंदर मिला था। इन फिरंगी महाशय का नाम था निकोटी, जिनकी यह अभिलाषा थी कि समय पाकर सारे का सारा पेगू प्रांत हड़प जायँ। इस उद्देश्य को ध्यान में रख कर उसने अपने मित्र आराकान के राजा के पास डियांगो का बंदर पाने के लिये अपने पुत्र को दूत बनाकर भेजा। आराकानाधिपति को खटका हुआ कि शायद फिरंगी लोग मेरा सारा राज्य छीना चाहते हैं और इसलिये उस दूत को दर्बार में बुलाकर उसके सारे साथियों के सहित राजा ने उसे कत्ल करवा डाला। साथही डियांगा में उस समय जो छः सौ फिरंगी थे उन्हें भी उसने मरवा डाला और उनके जहाज छीन लिए। उस समय जलदस्यु गनजालेज़ महाशय वहीं से मौका बचाकर अपने आठ दस साथियों के साथ अपने जहाजों पर भाग गए। चारों ओर से निस्सहाय होकर गंगा के मुहाने पर इन्होंने अड्डा जमाया और डकैती से अपना गुजारा करने लगे। आराकान के राजा से बदला लेने के लिये वे उसके देश के उपकूलों को लूटने लगे और लूट लूट कर लूट का माल बोगला के राजा के पास ले जाने लगे। यह बोगला का राजा उस समय फिरंगियों का मित्र था।

सनद्वीप।

गंगा के मुहाने पर सनद्वीप का विख्यात टापू था जो जिला नोआखाली में समझा जाता है। वह सन् १६०२ इस्वी से फिरंगियों ही के अधिकार में था जब कि केदार राय से उस समय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्होंने उसे छीना था। यहां का फिरंगी शासक कुछ काल के लिये कार्य्यांतर के लिये कहीं गया और अपनी जगह अपने एक मुसलमान कर्म्मचारी फतेखां को वहां का शासक नियत कर गया। पर कुछ दिनों बाद जब खां साहब को पता लगा कि फिरंगी राम मर गए हैं तब उन्होंने सारा टापू अपने अधिकार में कर लिया और उसके जहाज भी हथिया लिए। उसने सारे फिरंगी और देशी ईसाइयों को भी मय उनके बाल बच्चों को कत्ल कर डाला और गनजालेज महाशय को मय उनके साथियों के टापू से निकाल बाहर किया। यहां तक कि चालीस जहाजों का एक बेड़ा बनाकर तथा उस पर छः सौ सिपाही सवार करा के उसने उन फिरंगियों का पीछा भी किया जो डियंगा के कत्लेआम से बचकर भाग गए थे। उसे अपनी जीत का यहां तक विश्वास था कि अपने झंडे पर उसने यह लिख रखा था कि खुदा के फज्ल से फतेहखां सनद्वीप का बादशाह, ईसाइयों के खून का प्यासा, फिरंगी जाति को नेस्त नाबूद करने वाला" इत्यादि इत्यादि।

अब फिरंगी बेचारों की बड़ी दुर्दशा हुई और सामान्य जहाजी डकैतों की अवस्था में वे आ रहे पर हिम्मत बांध कर फिर भी उन्होंने फतेहखां का सामना किया। उनके पास इस समय केवल दस जहाज और अस्सी आदमी थे। रात को दोनों बेड़ों का सामना हुआ और सबेरा होते होते घन घोर युद्ध छिड़ गया। फिरंगी लोग खूब जी तोड़ कर लड़े, जिसका परिणाम यह हुआ कि फिरंगी लोग विजयी हुए और सारे मुसलमान मारे गए जो बचे गिरफतार कर लिए गए। जीत की डींग मारनेवाले फतेहखां भी मारे गए अब फिरंगियों ने उसी डाकू सर्दार गोनजालेज को अपना नेता नियत किया और अब सनदीप के टापू पर दखल करने की उन्होंने ठानी। चारो ओर से उन्होंने चार सौ फिरंगियों को इकट्ठा किया और सन १६०९ के मार्च मास में चालीस जहाजों का बेड़ा लेकर रवाने हुए। बोगला के राजा को, टापू की आमदनी का आधा द्रव्यों देने की प्रतिज्ञा पर, गनजालेज ने उससे भी दो सौ सवारों की सहायता ली। फतेहखां के भाई ने नदी किनारे फिरंगियों का मुकाबला किया, पर विवश हो उसे किले में आश्रय लेना पड़ा। अब फिरंगियों ने टापू को जहाजों द्वारा चारों ओर से घेर लिया। मुसलमान टिक न सके और हिंदू प्रजा तो फिरंगियों के शासन से परिचित थी, इस लिये उन्होंने उनका स्वागत किया तथा गनजालेज महाशय ने उन्हें इस शर्त पर अभय बचन दिया कि जितने मुसलमान मिलें सब पकड़ कर उसके सामने लाए जायं।

इस प्रकार कम से कम एक हजार मुसलमान कत्ल किए गए। डियांगा के कत्ल का फिरंगियों की हत्या का यों बदला लिया गया।

अब गानजालेज़ महाशय सनद्वीप के स्वतंत्र स्वामी हो गए और हुगली या गोवा के पोर्तुगीज औपनिवेशियों से इन्होंने कुछ भी संबंध न रक्खा। उस समय उनके अधिकार में पांच सहस्र फिरंगी, दो सहस्र सशस्त्र सिपाही, सौ घोड़े और तोप संयुक्त अस्सी जहाज थे। तिनासरिम और कोरमंडल उपकूल के सौदागर व्यापारी जो सनदीप में अपने जहाज लाते थे उन्हें गनजालेज़ के चुँगीघर में चुँगी देनी पड़ती थी। उसके बनाए कानून वहां प्रचलित थे। आसपास के रजवाड़े उसकी मित्रता के इच्छुक रहते थे। तात्पर्य यह कि उस समय उसका प्रताप खूब बढ़ा चढ़ा था। पर प्रभुता के मद ने उसे अंधा कर दिया और वह दुराचार पर उतारू हो गया और अपने अधीनस्थ फिरंगियों को उन्होंने जो भूमि प्रदान की थी, उसे वह ज़ब्त करने लगा। बोगला के राजा से भी उसने विश्वासघात किया। प्रतिज्ञानुसार सनद्वीप का आधा अंश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने तो दूर रहा, उल्टे उसने उसके विरुद्ध युद्ध-
घोषणा कर दी और उसके दो टापू शहबाज़पुर
और पाटलीबंगा छीन लिए ।

सन १६०६ ईसवी में अराकान (बर्मा) के राजा
और उसके भाई अनापोरन के बीच एक हाथी के
लिये झगड़ा उठ खड़ा हुआ । राजा ने अपने
भाई पर चढ़ाई कर दी और वह परास्त होकर
गनजाले के पास भाग गया । गनजाले ने उसे
शरणता देने का वचन दिया और जमानत के तौर
पर उसकी बहिन को अपने यहां रोक रखा । वह
दोनों मिल कर अराकानाधिपति के विरुद्ध चढ़े
पर उधर से जब अस्सी हजार सेना और सातसौ
बड़े हाथियों की सेना आती देखी तो ये लोग
डर कर सनद्वीप को लौट आए, पर जल युद्ध
में गनजाले के भाई अंटोनी ने केवल पांच ज़हाज
पर शत्रु के एक सौ ज़हाज पकड़ लिए । अना-
पोरन अपनी स्त्री और धन रत्न भी सनद्वीप में ले
आया था । गनजाले ने अनापोरन की बहिन को
ईसाई बना कर उससे विवाह कर लिया । इसके
थोड़े ही दिन बाद अनापोरन मर गया और गन-
जाले ने उसका धन रत्न सब जब्त कर लिया,
जिससे संदेह होता है कि अनापोरन की मृत्यु में
गनजाले की साजिश थी । अपने पर से इस
संदेह को दूर करने के लिये गनजाले ने अपने
खर्च से अनापोरन की विधवा का विवाह करवाना
चाहा पर उस विधवा ने ईसाई होना अस्वीकार
किया ।

इधर सन् १५७७ ईसवी से दाऊद खां के अस्त
होने के बाद से बंगाल और उड़ीसा में मुगलों का
अधिकार हो गया था, पर अबतक उन्होंने अरा-
कान प्रदेश में प्रवेश नहीं किया था । अब उन्होंने
चटगांव * की राजधानी पर अधिकार करने की
इच्छा की । वह बलूवा अराकान और सनद्वीप
दोनों ही के निकट था, इसलिये मुग़लों के
आतंक से गनजाले और अराकानधिपति दोनों
एक हो गए । पर स्टूअर्ट साहब अपने बंगाल के
इतिहास में लिखते हैं कि "इन दोनों ने बंगाल पर
अधिकार करने की इच्छा से यह मैत्री स्थापित
की थी । अराकानाधिपति स्थल और गनजाले
जल मार्ग से बंगाल पर चढ़ाई करें ऐसा निश्चय
हुआ । अराकानराज ने अपना सारा ज़हाजी
बेड़ा गनजाले के हवाले कर दिया और उसके
भतीजे को जमानत के तौर पर अपने पास रख
लिया । इस आदान प्रदान में गनजाले ने अना-
पोरन की विधवा पत्नी को भी वापस कर दिया
जिसने चटगांव के गवर्नर से विवाह कर लिया ।
अराकानराज और गनजाले दोनों ने मिल कर
बलूवा पर चढ़ाई की और लख्खीपुर † अधिकार कर
लिया । पर मुग़लों की एक प्रबल सेना ने अरा-
कानियों को हरा कर चटगांव को भगा दिया ।
अराकानियों को यह हार गनजाले की विश्वास-
घातकता के कारण खानी पड़ी थी, क्योंकि उसने
न जाने किस कारण से बलूवा तक की नदी पर
पहरा नहीं रक्खा और मुग़लों को अछूता चला
जाने दिया । अराकानराज को परास्त होकर
भागते देख गनजाले ने अपने सपुर्द हुए,
सारे अराकानी बेड़े पर अधिकार कर लिया और
अराकानी कप्तानों की हत्या कर डाली । इतनी ही
दुष्टता से संतोष न कर वह अपना ज़हाजी बेड़ा
लेकर अराकानी उपकूल की ओर चढ़ गया और
उधर के बहुत से बंदरों पर लूट पाट और अत्या-
चार मचाता रहा । इनमें से बहुत से बंदर अन्य
जातियों के भी थे । इसने बहुत से ज़हाज भी
नष्ट कर दिए । इनमें से राजा का एक ज़हाज
सर्वोत्तम था । इसमें लकड़ी और हाथी दांत की
पच्चीकारी का बहुत सुंदर काम किया हुआ था

* यह इस समय नोवाखाली जिले का प्रधान नगर है ।

† बलूवा राजधानी का एक नगर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और राजमहलों की तरह इसमें बड़े बड़े सजे हुए कमरे थे। इस ज़हाज के नष्ट होने से अराकान-राज बहुत ही झुंझलाया और उसने गनजाले के भतीजे को जो उसके पास जमानत के तौर पर था, लकड़ी के तख़्तों की कांटेदार फांसी से झुला कर अराकान के बंदर पर बहुत ऊँचे लटकवा दिया, जिसमें उसका चचा अराकान से लौटते हुए भतीजे की गति देखता जाय, पर भला क्रूर हृदय गनजालों को भतीजे का दर्द क्यों होने लगा था।

बंगाल में फिरंगियों का व्यापार।

यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि सोलहवीं शताब्दी के आरंभ से ही फिरंगी लोग बंगाल में व्यापार करने लग गए थे, पर सन् १५८० ई० में पहले उन्होंने स्थायी अड्डा नहीं जमाया था। पर १५३५ ई० में ही सतगांव में उनका इतना प्रभाव बढ़ चुका था कि बिना उनकी आज्ञा के कोई विदेशी ज़हाज वहां के बंदर पर लंगर नहीं डाल सकता था। मूर * लोगों के व्यापार को नष्ट करने के लिये फिरंगियों ने भारत के दक्षिण प्रांत की तरह यहां भी वही नियम जारी किया। फिरंगियों का आज्ञा-पत्र लिए बिना जो कोई जहाज पाया जाता वह शत्रु का ज़हाज समझ कर पकड़ लिया जाता था। देशी जहाज फिरंगी जहाजों का मुकाबला नहीं कर सकते थे, पर कभी कभी टर्की या इजिप्टवालों के जहाज इनसे बराबरी की टक्कर ले लिया करते थे। सन् १५८० ई० तक फिरंगी लोग बंगाल में स्थायी रूप से नहीं बसे थे और वर्षा ऋतु में बंगीय उपकूल उनके जहाजों से खाली हो जाता था। पर इसके बाद से बंगाल की खाड़ी में उनका प्रताप बढ़ गया और यहां की जहाजी गति विधि के वे एक प्रकार से स्वामी हो गए।

फिरंगियों के बड़े बड़े जहाज कलकत्ते से कुछ दूर ही पर लगा करते थे। क्योंकि इधर गंगा में पानी कम था। इसलिये छोटी छोटी नावों में माल लाद कर इधर आता था। उनके छोटे छोटे जहाज सतगांव में जा कर लगते थे, जिनमें चावल, छींट के कपड़े, लोहा, चीनी, हर्रे, संदल, तेल और नाना प्रकार के माल होते थे। वर्तमान हवड़े के पास चिठौर एक स्थान था। यहीं फ़ुल के गोदामों में माल उतारा जाता था और वहीं बाजारों में बेचा जाता था अथवा अदल बदल किया जाता था अथवा और भी आगे छोटी छोटी नावों पर चढ़ा कर त्रिवेणी या सतगांव को भेज दिया जाता था। धीरे धीरे कलकत्ते और चीतपुर के बाजार इस व्यापार के कारण बढ़ चले, क्योंकि पहले दोनों स्थान बहुत ही साधारण थे। इन फूस की झोपड़ियों से फिरंगियों की उन्नति या अवनति हुआ करती थी और इन्हीं से चारनक साहब ने आगे चल कर कलकत्ता नगरी की स्थापना की थी। इन्हीं छोटे छोटे बाजार यथा चीतपुर, सुत्ता नदी और चीटोर के व्यापार से व्यापारी भावी कलकत्ता नगरी की नीव समझ चाहिए।

एक साहब कहते हैं कि फिरंगियों ही की बदौलत कलकत्ता नगरी की रौनक बढ़ी थी और हुगली तथा आस पास के बाज़ारों का सटीक ब्योरा हमें इन्हीं से मालुम हुआ था। वहां के छोटे नावों पर माल लाद कर ये लोग सतगांव को ले जाते थे जहाँ उत्तरी भारत के सारे व्यापारी इकट्ठे होते थे। पर सन् १५८० ई० के बाद जबसे इन्होंने हुगली में अपना प्रधान स्थान निर्धारित किया सारा व्यापार वहीं जम गया और वहीं से सारे बंगाल में फैलने लगा। बंगाल में फिरंगी लोग नाना प्रकार के माल लाया करते थे। सब माल विशेष कर यह लोग भारतीय द्वीपपुंजों ही से लाते थे और ला कर अच्छे मुनाफे

* ये लोग अरबी मुसलमान होते थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में बेचते थे। इनमें इलायची, लौंग और पर मुख्य था, यद्यपि नाना प्रकार के वस्त्र भी के द्वारा लाए जाते थे। सुपारी, दालचीनी ता से तथा मालाबार से लाल मिर्च आती थी। ीन से ये लोग रेशम, रेशमी कपड़े और नाना कार के काठ के सामान लाते थे। चीन में मजबूती होने के कारण यह काठ की सामग्रियाँ रोपियन ढंग की किफायत से बनती थीं। माल र से यह लोग जहाज भर भर कर कौड़ी जाया करते थे, जो उस समय भारत में सिक्के स्थान में चलती थी, तथा कोरमंडल उपकूल बड़े बड़े शंख भी ये लोग लाद लाते थे। लाल और श्वेत चंदन भी ये लाया करते थे और अच्छी कीमत पर बंगाल में बेचते थे। असल में हें इतना लाभ होता था कि एक ऐतिहासिक वरनियर साहब के कथनानुसार यदि थोड़े ही बाद यहां डच लोग पदार्पण न करते तो फिरंगियों के जहाज और कारखानों के सारे लोहे और लकड़ी के सामान सोने चांदी के हो जाते योंकि चीन, जापान, फीलीपाइन और मलाक्का दो ही तीन यात्रा करके इन्हें एक एक के दस मुनाफे होते थे। डचों के आ जाने पर भी फिरंगियों की दक्षिण भारतीय राजधानी गोवा आदि में अवश्य ही सोना चांदी का भंडार भर था और संपन्न फिरंगियों के घोड़े के जीन रेशम मखमल और लगाम की कड़ियाँ सोने ांदी की होती थीं तथा जीन से मोतियों के च्छे लटकते थे। उन के घोड़े का चारजामा मखमल और जरदोज़ी का होता था। तात्पर्य यह कि से बादशाही सामान से ये लोग चलते थे। ी ठाठ बाट और उमदः उमदः तोहफों को देख र शाहंशाह अकबर मुग्ध हो गया था और उसने फिरंगियों को अपने दरबार में आमंत्रित किया। यद्यपि फिरंगी लोग पहलेपहल दक्षिण रत में आ टिके थे और यहीं उन्होंने राजधानी भी बनाई थी, पर बंगाल की उपजाऊ धरती से संबंध करके इन विदेशियों के पैर भारत में जमने की संभावना थी इसलिये बंगाल ही में इनकी कृति का विशेष वर्णन किया गया है। वंगदेश जैसी उपजाऊ भूमि शायद भारतवर्ष में अन्यत्र नहीं है। यहाँ से नाना प्रकार के सामान लाद लाद कर फिरंगी लोग ले जाया करते थे। वंगभूमि तो उस समय मानों इनके लिये सोने की चिड़िया थी जो प्रतिदिन सोने का अंडा देती थी। सैकड़ों जहाज प्रतिवर्ष सामानों से लद लद कर फिरंगियों द्वारा रवाना किए जाते थे। चावल, घी, मक्खन, मछली साग सबजी फल सब ही खाद्य पदार्थों की बहुतायत थी। एक रुपए का चार मन उमदः चावल, एक कनिस्टर घी अथवा मक्खन केवल दो रुपए में और रुपए की बारह मुर्गी मिल जाती थी। चार आने मन चीनी बिकती थी। कोई सद्गृहस्थ तीन या चार रुपए में एक अच्छी दुधार गाय रख सकता था। यद्यपि यह सस्ते दाम आजकल के जमाने में कुछ अद्भुत मालुम पड़ते हैं सही पर उस जमाने का यह मामूली भाव था। यह कई इतिहासवेत्ताओं के लेखों से विदित होता है।

ढाके की मलमल।

उस समय ढाका व्यापार का एक प्रधान स्थल था। यहां की मलमल भुवन-विख्यात थी, यहां तक कि रोम देश की रमणियां इसे पहिनने में अपना गौरव समझती थीं। वहां वस्त्र ऐसा उम्दः बनता था कि एक बार फारस के शाहंशाह का सफीर मुहम्मदअलीबेग भारत में आया था और यहां से ले जाकर बादशाह को उसने एक शुतरमुर्ग के अंडे बराबर नारियल भेंट किया जिस पर जवाहिर जड़े थे। उस नारियल को तोड़ने पर उसमें से तीस गज लंबी एक पगड़ी निकली जो ऐसी महीन थी कि हाथ से छूने पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालूम ही नहीं पड़ती थी। ये पगड़ियां पचास या साठ गज लंबी बना करती थीं और उनके दोनों छोर पर कलाबत्तू का काम रहता था। चौड़ाई इन पगड़ियों की एक गज तक होती थी। केवल पान का महसूल ढाके के नवाब को चार हजार रुपया मिलता था। मेदिनीपुर में सुगंधि द्रव्य तैयार होता था। हिजली में चीनी, रेशम और घास के बने हुए एक प्रकार के कपड़े का भी अच्छा व्यापार था। फिरंगियों ने इन सस्ती चीज़ों से भरपूर लाभ उठाया और जहाजों में भर भर कर इधर उधर ले जाकर मनमाने दाम पर बेचते रहे, पर उनके भाग्य में भारत का राज्य नहीं बदा था इसलिये थोड़े दिनों बाद उनका सारा व्यापार नष्ट हो गया और अन्य युरोपियन जातियों का आविर्भाव हुआ।

"बदलता है सफदर कुछ ऐसा ज़माना।
कि है आज इसका कल उसका ज़माना॥"

पंजाब व्यवस्थापिका सभा में उर्दू।

उपर्युक्त सभा की २१ वीं दिसंबर १९१७ की बैठक में माननीय मख़दूम सैयद राजन शाह ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया।

"कि लाट साहब पंजाब की व्यवस्थापिका सभा की कार्य्य-प्रणाली के सातवें नियम में यह रद्दोबदल कर दिया जाय कि उसके पहले वाक्य में 'अंग्रेज़ी' की जगह 'उर्दू' और दूसरे वाक्य में 'उर्दू' की जगह 'अंग्रेज़ी' शब्द रख दिए जाँय।" ७ वाँ नियम इस प्रकार है "कोई मेंबर किसी दूसरे मेंबर की जो अंग्रेज़ी में अपना वक्तव्य प्रकाशित नहीं कर सकता हो, प्रार्थना पर और उसकी तरफ़ से (अंग्रेज़ी में) बोल सकता है। सभापति की आज्ञा से कोई मेंबर उर्दू में (भी) बोल सकता है।"

माननीय मेंबर चाहते थे, कि यह नियम इस प्रकार बदल दिया जाय।

"कोई मेंबर किसी दूसरे मेंबर की जो उर्दू में अपना वक्तव्य प्रकट न कर सकता हो, प्रार्थना पर और उनकी तरफ़ से (उर्दू में) बोल सकता है। सभापति की आज्ञा से कोई मेंबर अंग्रेज़ी में (भी) बोल सकता है।"

अपने प्रस्ताव की पुष्टि में निम्नलिखित कारण देकर आपने जो कुछ कहा उसका सार यह है।

पहला कारण यह है कि अपने लाखों भाइयों की तरफ़ से जो देश के मुखिया कायदे क़ानून बनाने के लिये नियुक्त हैं उन्हें ऐसी भाषा बरतनी चाहिए जो उनके निर्वाचक देशी भाई समझ सकें, न कि ऐसी भाषा जो उनमें से ९८ फ़ी सदी भी नहीं समझ सकते।

दूसरा कारण यह है कि जो क़ायदे क़ानून मुखिया बनाते हैं उनका प्रजा से संबंध होता है इसलिये इन मुखियों के चुनने में प्रजा को यथासंभव स्वतंत्रता मिलनी चाहिए। यह न होना चाहिए कि उन्हें वे ही आदमी बलात् चुनने पड़ें जो अंग्रेज़ी जानते हों।

आपने कहा, लोगों को बड़ा आश्चर्य है कि एक तरफ तो कोई कोई अधिकारी यह शिकायत करते हैं कि इने गिने अंगरेजी पढ़े लिखे ही भारतवासी जो अपने देशवासियों के वास्तविक मुखिया भी नहीं हैं लेजिस्लेटिव कौंसिलों में अपना प्रभाव जमा कर उन बेपढ़े लिखों का अधिकार छीनना चाहते हैं और दूसरी तरफ़ कौंसिल की कार्य्यप्रणाली के नियम ऐसे रचे गए हैं कि देश की पूर्वीय भाषाओं के बड़े बड़े विद्वान् और योग्यतम पुरुष भी केवल अंग्रेजी न जानने के कारण सभा के लिये कौंसिल से बहिष्कृत से रहते हैं। नियमों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारा अब भी उर्दू जाननेवाले चुने जा सकते हैं और लोग जानते हैं कि काम तो कौंसिल में अंग्रेजी होता है उनके मुखिया अंग्रेजी समझते नहीं हैं वे कौंसिल में उनका कौन सा हित साधन करेंगे। अंग्रेजी न जाननेवाला मेंबर यदि प्रश्न करना चाहे तो उसे उसकी अंग्रेजी करानी पड़ती है, जिसमें उसे संदेह ही बना रहता है कि मैंने जो कुछ कहा वह अंग्रेजी में स्पष्ट हुआ भी या नहीं। प्रश्न का उत्तर मिला सो अंग्रेजी में। उस पर किसी मेंबर ने दोबारा स्पीच दी सो अंग्रेजी में अंग्रेजी न जाननेवाला बेचारा बधिरवत् बैठा रहता है। जो कुछ अंग्रेजी में कहा गया हो उसके औचित्य अनौचित्य पर वह कुछ भी आक्षेप नहीं कर सकता। उसे बोलने का अधिकार है सही पर उस भाषण का वह एक शब्द नहीं समझ सकता उस पर बोलेगा क्या खाक।

अतएव अंग्रेजी न जाननेवाला इस नियम के अनुसार अपना कर्त्तव्य यथातथ्य पालन करने में असमर्थ ही रहता है। यह उस मेंबर और उसके निर्वाचन कर्त्ताओं पर एक प्रकार का दण्ड है। अपराध है सही, पर किस अपराध पर दण्ड मिलता है? क्या अंग्रेजी न जानने के अपराध पर? क्या अंग्रेजी न जानना पाप है? क्या अंग्रेजी भाषा विष प्रसविनी कोई ऐसा रसायन है कि उसके बिना पढ़े कोई पंजाबी क़ायदे क़ानून बनाने में श्रेष्ठ सहायता नहीं कर सकता या अपने देश की आवश्यकता जतला नहीं सकता? यदि सर्कार की दृष्टि इस ओर होती तो नवाब सर नवाज़िश अली खाँ, सर सैयद अहमद खाँ, सर बाबा खेम सिंह बेदी इत्यादि जैसे प्रतिष्ठित भारतवासियों को इम्पीरियल और प्रांतीय व्यवस्थापिका सभाओं में स्थान न देती? कौंसिल में बैठने का वही अधिकारी है जो देश की ज़रूरतें और प्रजा के हाल जानता हो। साथ ही उनके पूरा और दूर करने के उपाय सोचने की योग्यता रखता हो—और यह योग्यता कुछ अंग्रेजी के ज्ञान पर ही अवलंबित नहीं। आपने कहा मेरी समझ में प्रत्युत् देशी भाषा न जानना दोष है और यही कारण है कि सर्कार ने देशी भाषाओं का ज्ञान संपादन करना अपने अफ़सरों के लिये अवाध्य कर रखा है। महारानी विक्टोरिया उर्दू जानती थीं बड़े और छोटे लाट साहबों तथा अनेक उच्च कोटि के अफ़सरों ने उर्दू सीख कर उस में अच्छी योग्यता प्राप्त की है।

अब अंग्रेजी जाननेवाले भारतीय मेंबरों की बात लीजिए। अंग्रेजी में किसी की योग्यता कैसी ही (उत्तम, मध्यम, सामान्य दर्जे की) क्यों न हो, यह तो उन अंग्रेजीदाँओं में से कोई न कह सकेगा कि उर्दू में बोलने की अपेक्षा वह अंग्रेजी बड़े मज़े में बोल सकता है। संयुक्त प्रान्त के सर जेम्स मेष्टन सरीखे विद्वान् शासक ने भी अंग्रेजी न जान कर दूसरों से अंग्रेजी में स्पीच लिखाने व पढ़ाने की रीति को सदोष बतलाया है। बड़ी व्यवस्थापिका सभा में कुछ दिन हुए, माननीय सर ईदल जी वाचा के हिंदुस्तानी मेंबरों की लंबी चौड़ी और असंबद्ध स्पीचों पर कटाक्ष करने पर माननीय पंडित मदनमोहन मालवीय जी ने जो भारतवासियों में अंग्रेजी भाषा के सर्वश्रेष्ठ वक्ता समझे जाते हैं स्वयं स्वीकार किया है कि हिंदुस्तानी मेंबरों से एक विदेशी भाषा में प्रभावशाली भाषण की आशा रखना दुराशा मात्र है।

पंजाब ही नहीं भारत भर के अंग्रेजी पढ़े लिखे बुद्धिमानों की राय है कि भारतीय कौंसिलों में अंग्रेजी की जगह देश भाषा का व्यवहार होना चाहिए मद्रास के प्रसिद्ध नेता मि. वी. पी. माधव राव के भाषण का एक अंश आपने उद्धृत किया जिसमें उन्होंने कौंसिलों में देशी भाषाओं के व्यवहार पर बड़ा जोर दिया था। और कहा था कि यह प्रकृति-विरुद्ध बात हिंदुस्तान में ही सही जा रही है कि कौंसिलों में देशी भाषा की जगह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंग्रेजी का राज्य है। मि० राव की सम्मति बतला कर आपने कहा मैं पूछता हूँ यदि पारलिमेंट के मेंबरों से कहा जाय कि तुम उर्दू में बोलो तो उनको कैसी असुविधा होगी। फिर आपने मि० राव और मालवीय जी की पुष्टि में जो कुछ ट्रिब्युन में लिखा गया था वह और उनके प्रस्ताव के विरुद्ध ट्रिब्युन में जो निकला था वह पढ़ कर सुनाया और कहा इतनी जलदी इस अखबार की मति उपस्थित प्रस्ताव के बारे में कैसे और क्यों बदली यह नहीं कहा जा सकता। हो सकता है कि जिस बार उसने उसका समर्थन किया था उस वक्त वह पंडित (मालवीय जी) के मुख से निकली थी और अब एक सैयद के मुख से वही बात सुनकर उसका विरोध करना उसने अपना कर्त्तव्य समझा हो। आपने कहा "यदि यही बात है तो इस अङ्गरेजी शिक्षा को जिससे एक तरफ मीठी मीठी बातें सुनाकर हिंदू मुसलमानों के मेल की कोशिश की जाती है और दूसरी तरफ हृदय की यह संकीर्णता पैदा की जाती है दूर ही से नमस्कार है। इस प्रकार की अङ्गरेजी शिक्षा जितनी जल्दी यहां से अलग कर दी जाय उतना ही अच्छा। फिर आपने कहा कि "अङ्गरेजी बे पढ़े लिखे जिनकी संख्या अङ्गरेजीदांओं से इस प्रांत में कहीं अधिक है सब मेरे प्रस्ताव से सहमत हैं और मेरी ही नहीं अङ्गरेजी पढ़े लिखे सब भारतवासियों की यही राय है कि व्यवस्थापिका सभा में अङ्गरेजी भाषा का व्यवहार नहीं होना चाहिए। आपने आशा प्रकट की और कहा कि—

"उर्दू में "शार्ट-हैंड" या शीघ्र लेख प्रणाली के अभाव जैसा तुच्छ कारण बतला कर मेरा प्रस्ताव रद्द न कर दिया जायगा। अव्वल तो यह कुछ बड़ी बात नहीं और फिर उर्दू में शार्ट-हैंड प्रणाली भी चल पड़ी है, और अधिक अभ्यास से थोड़े दिनों में खूब चल निकलेगी। लाट साहब को सम्बोधन करके आपने कहा कि आपने इस प्रांत में अदालत की भाषा उर्दू रख कर अपनी दूरदर्शिता का अच्छा परिचय दिया है और जब अदालत की भाषा उर्दू रखी गई है तब जो विभाग इन अदालतों के लिये कानून रचता है उसकी भाषा उर्दू अवश्य होनी चाहिए। मेरा विश्वास है कि सभासद इसका समर्थन करेंगे। यदि यह स्वीकृत हो जाय तो आपके (लाट साहब) शासन समय की यह एक बड़ी ऐतिहासिक घटना समझी जायगी। अंत में आपने आशा प्रकट की कि इस प्रस्ताव पर जो वाद विवाद हो वह उर्दू भाषा ही में हो।

इस प्रस्ताव का समर्थन खांसाहिब इकराम उल्लाह खां ने उर्दू में किया—

फिर सर्कार की ओर से माननीय मिस्टर टामसन ने इस प्रस्ताव से सहानुभूति प्रकट करते हुए इसका विरोध किया। उनकी मुख्य दलीलें ये हैं।

(१) उर्दू सभा की भाषा हो जाने से वाद विवाद बढ़ जायगा, बड़ी बड़ी स्पीचें हुआ करेंगी जिस से सभा के उद्देश्य की यत्किंचित सिद्धि न होगी।

(२) स्पीचों का लिखना आवश्यक है। उर्दू में से बहुत सी मौखिक हुआ करेंगी। उर्दू शार्ट-हैंड प्रणाली न होने से इन मौखिक भाषणों का लिपिबद्ध करना अशक्य होगा और यह इस प्रस्ताव के विपक्ष में बड़ी प्रबल युक्ति है।

(३) हमारी सभा की कार्रवाई दूसरे प्रांत वासी भी जानने के इच्छुक होते हैं। इसलिए इन उर्दू की स्पीचों का अंग्रेज़ी भाषांतर करना जरूरी होगा। यह कौन करेगा? सरकार को भाषांतर का नया विभाग खोल ले यह कहा जा सकता है। पर ऐसे विद्वान् कहां मिलेंगे? और उनका वेतन कितना उच्च होगा?

(४) फिर आपने जूडिशल अफ़सर होने पर अदालत में वादविवाद उर्दू में हो, ऐसा नियम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ने पर वकीलों ने जो आपत्ति की थी ...का उल्लेख करते हुए कहा कि इन वकीलों को ...नूनी वादविवाद में उर्दू की अपेक्षा अंग्रेज़ी में ...ना बड़ा सुगम मालूम होता था कारण ...कानून उन्होंने क-ख-ग से लेकर इंग्लैंड ...बैरिस्ट्री तक अंग्रेज़ी ही में पढ़ा। अंग्रेज़ी ही ...सुना अंग्रेज़ी ही में विचार प्रकट किए। ...ही भाषा में तर्क वितर्क किए। इसलिये कानूनी ...ता में उर्दू की जगह अंग्रेज़ी उनकी मातृ-...भाषा सदृश हो गई। राजनीतिक विषयों के ...ययन में भी यही बात है। स्टुअर्ट मिल ...बर, डोब्ज़ इत्यादिकों के ग्रंथ उन्होंने अंग्रेज़ी ...में पढ़े हैं। गोखले और शास्त्री जैसे अपने ...ही नेताओं की बातें भी वह अंग्रेज़ी में ही ...ते हैं। उर्दू साहित्य में इस विषय के पुस्तकों ...संख्या माननीय मेंबर आधे दर्जन से अधिक ...शायद ही खोज सकें।

(५) राजनीतिक विषयों पर देश में जितने ...षण होते हैं वे प्रायः अंग्रेज़ी में होते हैं। इस ...सिल की गत पांच वर्ष की कार्रवाइयों में आप ...कहा मैंने उर्दू में भाषण करने की न तो किसी ...आज्ञा माँगते देखा और न सभापति द्वारा ...ही आज्ञा की अस्वीकृति होते देखी।

आपने सभापति की अनुमति से इतना और ...ा कि अब से आगे जो प्रश्नकर्त्ता मेंबर अंग-...जी से अनभिज्ञ अथवा अंगरेजी बोलने में अन-...स्त प्रश्न करेंगे उनके उत्तर यथा संभव उर्दू ...दिए जायेंगे।

सरकारी मेंबर के बाद माननीय राय बहादुर ...शिव नारायण जी ने सभापति की आज्ञा से ...में इस प्रस्ताव का विरोध किया। इनकी ...रोधी दलीलें मुख्य दो हैं।

१ उर्दू की पहले जैसी योग्यता का अभाव।

२ समयांतर में यह प्रस्ताव यदि स्वीकार हो ...तो गुरमुखी और हिंदी के जाननेवालों को उर्दू की जगह गुरमुखी और हिंदी को सभा में प्रवेश कराने की इच्छा।

इस प्रस्ताव का समर्थन माननीय खान बहादुर मियाँ फ़ज़ल हुसेन ने किया। आपने सरकारी मेंबर की उक्तियों का उत्तर संक्षेपतः इस प्रकार दिया।

(१) सरकारी मेंबर का काम किसी प्रस्ताव के विषय में सरकार की स्वीकृति अथवा अस्वीकृति प्रकाशित करना रहता है जिसके लिये उन्हें लंबे चौड़े भाषण की जरूरत नहीं पड़ती। अतएव उर्दू बोलने में उन पर बहुत ज़ोर नहीं पड़ेगा।

(२) उर्दू लिपि स्वयं ही एक प्रकार की शार्ट-हैंड लिपि है और उर्दू का शीघ्र लेखक उर्दू स्पीचों को उतनी ही जल्दी लिपिबद्ध कर सकता है जितनी जल्दी अंगरेजी का शार्ट-हैंड राइटर अंगरेजी की स्पीच को करता है।

अंगरेजी स्पीचों के अनुवाद देशी भाषाओं में देशी अख़बार आजकल छापने का जैसा प्रबंध रखते हैं वैसे ही अंगरेजी अख़बारवालों को भी अपने यहाँ अनुवादक रख कर उर्दू के भाषण अंगरेजी में छाप कर प्रकाशित करने में अड़चन न होनी चाहिए।

(३) माननीय सरकारी मेंबर की इस उक्ति में (कि दूसरे प्रांतवासी भी हमारी सभा की कार्रवाइयाँ समझ सकें इसलिये उर्दू की जगह अंग्रेजी में ही बोलना उचित है) आपने कहा कि पंजाबवासियों के हित साधन की मात्रा बहुत कम है अपने प्रांतवासी अपनी बातें भले प्रकार समझ लें। उस भाषा (उर्दू) में बोलना माननीय मेम्बर (सर्कारी मेम्बर) को अधिक सम्मत है अथवा दूसरे प्रांतवासी हमारी बात समझें एसी भाषा (अंग्रेजी) में बोलना।

(४) मैजिष्ट्रेट की आज्ञा होते हुए भी वकीलों का अपनी भाषा में बोलने की अरुचि प्रकट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने का विशेष कारण यह है कि वे समझते हैं कि मैजिस्ट्रेट उनकी अंग्रेजी की योग्यता को अपूर्ण समझता है। अदालत की ऐसी आज्ञा का यह भाव नहीं है। जहां कहीं ऐसा साफ़ कह दिया जाता है वहाँ वकील लोग भी बराबर उर्दू में बोलते हैं।

(५) पंजाबी, हिंदी और उर्दू भी कभी इसी प्रकार का दावा करेंगी इससे प्रस्तुत विषय का वास्तविक संबंध नहीं। कारण कि भाषा पंजाब भर की थोड़ा बहुत अंतर रखते हुए भी प्रायः एक ही है। भेद केवल लिपि का है। लिपि का झगड़ा आपस में कैसा ही क्यों न हो उत्तरी, मध्य, व दक्षिणी पंजाबवासी जिस भाषा में एक दूसरे से बोलते हैं वह एक ही प्रकार की है और उसे सब आसानी से समझ लेते हैं।

(६) यह कि एक्टों का उर्दू में अनुवाद करना होगा कुछ कठिन समस्या नहीं है इसलिये कि पंजाब गज़ट के उर्दू संस्करण में इन सब एक्टों का उल्था अब भी होता है—

फिर इस प्रस्ताव पर मत लिए गए। छः राय इसके पक्ष में और १६ विपक्ष में होने से यह 'पास' न हुआ। इन १६ में छः हिंदू और दो मुसलमान मेम्बर भी शामिल हैं।

इस प्रकार यह प्रस्ताव रद्द हो गया। प्रस्तावकर्ता महाशय ने अपने पक्ष का बड़ी खूबी से समर्थन किया। इसमें उन्हें विफलता हुई यह दूसरी बात है। अगर सोचा जाय तो एक प्रकार से इस विफलता का कारण हम ही हैं; कारण कि हम में चरित्र की दृढ़ता नहीं है और चाहिए यह कि जिस बात को हमने मान लिया कि यह ठीक है तन मन से उसे कार्य्य में परिणत कर के दिखला देना चाहिए फिर सिद्धि होते देर नहीं लगती।

एक पंजाबी

शर्मिष्ठा नाटक।

(ले० माईकेल मधूसूदन दत्त।)

अनुवादक श्रीयुत बालकृष्ण दास जी काशी।

प्रथम अंक।

प्रथम गर्भाङ्क।

(हिमालय पर्वत, दूर पर अमरावती इंद्रपुरी दिखलाई देती है)

(वीर वेष में एक दैत्य का प्रवेश)

दैत्य—मैं प्रतापशाली दैत्यराज के आज्ञानुसार इस पर्वत पर बहुत दिनों से वास करता हूं। दम भर के लिये भी स्वच्छंदता से नहीं रह सकता। ये दूर देशीय देवता लोग कब क्या करें अथवा उनमें से कोई कब लड़ने के लिये तैयार हो, उसका सारा समाचार उसी क्षण दैत्यराज के निकट ले जाना होता है। (घूमता, है) अहा! यह भूमि नितांत उजाड़ हो सो भी नहीं। जगह जगह वृक्षों की डालियों पर बैठे हुए नाना प्रकार के पक्षी गान कर रहे हैं, चारों ओर जंगली पुष्प खिले हुए हैं, इस दूरवर्ती नदी से होती हुई, पारिजात पुष्प के सुगंध की लपेटे वाली हवा चल रही है, और कितनी अप्सराएं तान लय युक्त संगीत से कानों को शीतल कर रही हैं। कहीं सिंहों का घोर नाद, कहीं हाथी इत्यादि पशुओं का भयंकर शब्द और कहीं पर्वत से बहती हुई नदियों की कलकलध्वनि हो रही है। क्या आश्चर्य है! मैं स्थान के गुणों से अपने भाई बंधु के वियोग को भी भूल ही गया। (टहलना) एँ! किसके पैर का शब्द मालूम होता है। (सोच कर) मैं यह भी नहीं कह सकता कि यह मनुष्य मित्र है अथवा वैरी। जो हो युद्ध के लिये प्रस्तुत होना चाहिए (ढाल तलवार का ग्रहण)। ज्ञात होता है कि यह कोई साधारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं है। ओः इसके पद भार से पृथ्वी डग-
रही है। कौन है? (बकासुर का प्रवेश)

बकासुर—दैत्यपति आप विजयी हों, मैं आप
का सेवक हूं।

दैत्य—(आश्चर्य से) अच्छा आप हैं। आइए,
क्या आज्ञा है? नमस्कार।

बकासुर—नमस्कार, दैत्यवर क्या समाचार
सो कहो।

दैत्य—यहां सब मंगल है, दैत्यपुरी का कुशल
समाचार कहिए।

बकासुर—भाई क्या कहूँ, आज दैत्य कुल का
किस प्रकार से पुनर्जन्म हुआ कहना चाहिए।

दैत्य—क्यों! क्यों?

बकासुर—महर्षि शुक्राचार्य क्रुद्ध हो कर
दैत्यदेश छोड़ने के लिये तैयार हुए थे।

दैत्य—यह कैसी बात! भला इसका कारण?

बकासुर—स्त्री मात्र ही सब जगह लड़ाई की
जड़ होती हैं, दैत्यराज की पुत्री शर्मिष्ठा ने गुरु
कन्या देवयानी से कलह कर उसे एक अंधेरे कुएं
में ढकेल दिया। इस समाचार को देवयानी ने
अपने पिता महर्षि से कहा। वे एक दम धधकती
हुई अग्नि के सदृश क्रोध से जल उठे। उस
क्रोधाग्नि से हमारा नगर भस्म नहीं हुआ, यह
केवल देव महादेव ही की कृपा और हम लोगों
का सौभाग्य था।

दैत्य—इसमें क्या संदेह! परंतु गुरु कन्या
देवयानी तो राजकुमारी शर्मिष्ठा की प्राण सदृश
हैं, इससे उन दोनों में झगड़ा होना तो
असंभव था।

बकासुर—हां, सो तो ठीक है पर दोनों ही
जवानी के मद में उन्मत्त हो रही हैं।

दैत्य—हां, तो फिर क्या हुआ?

बकासुर—फिर महर्षि क्रोध से लाल लाल
आंखें किए हुए राजसभा में जाकर क्रोध से
कहने लगे राजन्! आज से तुम श्रीभ्रष्ट हुए, मैंने
आज से इस स्थान को छोड़ा। अब इस पापनगरी
में मेरा रहना न होगा। यह सुन सब सभा-
सदों के मस्तक पर जैसे वज्र गिर पड़ा, सब भय
और आश्चर्य से चुप हो गए।

दैत्य—तब फिर क्या हुआ?

बकासुर—तब महाराज ने अनेक स्तुति कर
कहा गुरो मैंने कौनसा ऐसा अपराध किया है कि
आप मुझे सर्वथा निधन करने को प्रस्तुत हुए हैं?
मेरा कुल परिवार आपका क्रीतदास है और
आप ही के प्रसाद से मेरी कुल संपत्ति है। तब
महर्षि ने कहा, यह क्यों महाराज? तुम दैत्य-
राज मैं एक भिक्षुक ब्राह्मण, भला, क्या तुम्हें
यह कहना उचित है? राजा यह सुन और भी
कातर हो महर्षि के चरणों पर गिर पड़े, और
कहने लगे "गुरु जी आपके इस क्रोध का क्या
कारण है सो हमसे कहिए।"

दैत्य—इसके उत्तर में ऋषि ने क्या कहा?

बकासुर—महाराज की नम्रता देख मुनि ने
उन्हें पृथ्वी पर से उठा लिया और अपनी कन्या
और राजकुमारी के झगड़े का संपूर्ण वृत्तांत कह
बोले "राजन्, देवयानी मेरी एक मात्र कन्या है,
मुझे वह प्राण से भी अधिक प्यारी है, इससे
उसे जहां कष्ट हो, मुझे वह स्थान छोड़ देना ही
उचित है। राजा इस कथा से आश्चर्यित हो हाथ
जोड़ बोले, हे, प्रभो, मैं इस कथा को बिलकुल
ही नहीं जानता, आप उस पापिनी शर्मिष्ठा को
उचित दंड दे क्रोध शांत कीजिए, नगर छोड़ने
की क्या आवश्यकता है?

दैत्य—तब महर्षि शुक्राचार्य ने क्या कहा?

बकासुर—इसके अतिरिक्त इस पाप का कोई
प्रायश्चित नहीं है, कि तुम्हारी कन्या देवयानी की
दासी होकर रहे, और यही मेरी भी इच्छा है।

दैत्य—ओः कैसे दुःख की बात है।

बकासुर—महाराज इसे सुन मृत तुल्य हो
गए। महर्षि ने फिर क्रोध से कहा, "राजन्! यदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप मेरे मत से सम्मत न हों तो कहें मैं अभी यहाँ से जाऊं। मुनिवर को पुनः क्रुद्ध देख मंत्री ने हाथ जोड़ महाराज से कहा "क्या आप केवल एक कन्या के लिये अपने वंश को निर्वंश करेंगे। देखिए यदि कोई बणिक, सोने, चाँदी और अनेक प्रकार के अमूल्य रत्नों से भरा हुआ जहाज लेकर समुद्र यात्रा करता हो, मार्ग में आकाश बादलों से घिर जाय और वेग से आंधी चलने लगे तो क्या वह जहाज का बोझ हल्का करने के लिये उन अमूल्य रत्नों को समुद्र में न फेंक देगा।

दैत्य—तब फिर ?

बकासुर—दैत्यराज, मंत्रिवर के इस हितकर वाक्य को सुन महाराज ने लंबी सांस खींची और उसी समय सभा में राजकुमारी को लाने की आज्ञा दी। फिर जब कुमारी सभा में आई, महाराज ने सजल नयन और गद्गद स्वर से समस्त वृत्तान्त कह सुनाया और कहा, "वत्से ! आज दैत्यकुल की रक्षा तेरे ही हाथ में है। यदि तू महर्षि की इस निठुर आज्ञा को अस्वीकार करेगी तो हमारा यह राज्य श्रीभ्रष्ट हो जायगा और अपने चिरवैरी देवताओं से पराजित हो मैं भी दुःख भोगूँगा।

दैत्य—हाय ! हाय ! यह क्या सर्वनाश हुआ ! राजकुमारी ने पिता के ऐसे कठोर वाक्यों को सुन कर क्या उत्तर दिया ?

बकासुर—भाई राजकुमारी के उस समय के मुखचंद्र का ध्यान आने से यह पाषाणवत् हृदय फटा जाता है। राजकुमारी जब सभा में उपस्थित हुई थीं उस समय उनका मुख शरद चंद्र के समान प्रफुल्लित था, किंतु पिता के वाक्य को सुन, एकाएक बादलों से घिरे हुए चंद्रमा के सदृश हो गया (लंबी सांस लेकर) हा दैव ! क्या ऐसी सुंदरी के भाग्य में यही बदा था ? फिर राजकुमारी के पिता के वाक्य से सम्मत हो सभा से प्रस्थान करने पर महाराज ने कितना धिक्कार और विलाप करना आरंभ किया कि जिसके स्मरण से [illegible] जाता रहता है।

दैत्य—हा ! कैसे दुःख का विषय है। [illegible] ब्रह्मा के लेख को कौन मिटा सकता है ? [illegible] धनुर्धर, अब भी आचार्य महाशय की क्रोधा[illegible] शांत हुई अथवा नहीं ?

बकासुर—अब भी न होगी ?

दैत्य—आपने जो दैत्यकुल का पुनर्जन्म [illegible] सो बिलकुल ठीक हैं (सोच कर) है दैत्यवर यदि इन दुष्ट देवताओं को महर्षि और महाराज के मनमुटाव का संवाद मिला होगा तो वे [illegible] प्रसन्न हुए होंगे कि जिसका अनुमान भी न हो सकता।

बकासुर—यह यथार्थ है। और मैं भी इसी टोह लेने आया हूँ कि देखूँ देवताओं को इस कुछ संवाद विदित हुआ है अथवा नहीं। [illegible] क्या अनुमान करते हैं ? क्या देवताओं ने इस संवा[illegible] को न सुना होगा ?

दैत्य—महाशय ! देवताओं के गुप्तचर [illegible] मायावी हैं। स्वर्ग, पाताल, मृत्युलोक में [illegible] ऐसी जगह नहीं कि जहाँ उनकी पहुँच न हो।

बकासुर—यह सत्य है-किंतु देखिए इस [illegible] में सब शांति है। ज्ञात होता है कि इन देवता[illegible] को महर्षि भार्गव और महाराज के विवाद [illegible] समाचार विदित नहीं है। यदि उन लोगों को [illegible] समाचार ज्ञात होता तो वे उसी समय लड़ा[illegible] लिये प्रस्तुत हो नगर से निकल आते।

दैत्य—महाशय ! क्या आपको यह मा[illegible] नहीं कि तूफान के आरंभ में सारी प्रकृति [illegible] हो जाती है ? अस्तु, यह तो बतलाओ कि [illegible] समय राजकुमारी है कहाँ ?

बकासुर—(लंबी सांस लेकर) इस समय [illegible] देवयानी के साथ महर्षि के आश्रम में ही [illegible] हे भाई ! राजकुमारी के चले जाने से वह [illegible] पुरी एक बार बिलकुल अंधकारमय हो [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रानी का विलाप सुन छाती फटने लगती है और महाराज का दुःख स्मरण करने से तो यही चाहता है कि फिर उस दैत्यपुरी में पैर न रक्खूँ। (नेपथ्य में लड़ाई के बाजे बजते हैं और बड़ा शोर होता है)

दैत्य—महाशय, यह सुनिए, सहस्रों बज्र के शब्द के समान दुष्ट देवताओं का शंख शब्द सुनाई दे रहा है। ओह! कैसा भयानक शब्द है!

बकासुर—क्या ये दुष्ट दैत्य देश पर आक्रमण करने पर उद्यत हुए हैं? (नेपथ्य में—दैत्यों का संहार करो—दैत्यों का संहार करो)

बकासुर—हे वीरवर! अब यहाँ विलंब करना उचित नहीं, दुष्ट देवताओं की इच्छा भली भाँति मालूम हो गई। चलिए, जल्दी से यह समाचार महाराज को सुनावें। इन दुष्ट देवताओं की शंख-ध्वनि से तो मेरा खून उबलने लगा।

(दोनों का प्रस्थान)

द्वितीय गर्भांक।

(दैत्य देश, शुक्राचार्य का आश्रम)

(शर्मिष्ठा की सखी देविका का प्रवेश)

देविका—(आकाश की ओर देख कर) सूर्य प्रायः डूब गए हैं। इस आश्रम की सब चिड़ियाँ चारों तरफ से चुहचुहाती हुई अपने अपने घोंसलों की ओर चली आ रही हैं। कमल अपने प्यारे सूर्य को जाता हुआ देख बंद हो रहा है, चकवा चकई अपने विरह का समय निकट जान करुण भाव से एक दूसरे की ओर एक टक से देख रहे हैं, मुनि लोग अपनी अपनी सायंकाल की आहुती देने में व्यग्र हैं, दूध के भार से दबी हुई गौएं अपने बछड़ों को देखने के लिये वेग से गौशाला में चली आ रही हैं (पुनः आकाश की ओर देख कर) सायंकाल हो गया, किन्तु राजकुमारी अभी तक न आईं, क्या कारण? (लंबी सांस लेकर) हा! प्रिय सखी की कथा याद आने ही से हृदय फटने लगता है। हा विधाता! क्या राजकुल में भी जन्म लेकर शर्मिष्ठा को सचमुच दासी बन कर रहना होगा? हा, प्रिय सखी की वह सुंदरता कहाँ चली गई?

निर्मल जल में उत्पन्न हुआ कमल क्या कीचड़ में रखने से वैसी शोभा पा सकता है (नेपथ्य की ओर देख कर प्रसन्नतापूर्वक) यह हमारी प्रिय सखी आ रही है। (शर्मिष्ठा का प्रवेश।)

देवि०—राजकुमारी। आपको इतना विलंब क्यों हुआ?

शर्मिष्ठा—सखि! ईश्वर ने मुझे अब पराधीन कर दिया, अस्तु पराधीन मनुष्य कोई कार्य स्वतंत्रतापूर्वक कर सके यह कभी संभव है?

देवि—सखि! तुम्हारे दुःख की कथा स्मरण करने से ही हृदय फटने लगता है, हा, सुकुमारी! क्या तेरे ही लिये यह दुःख था? मुझे स्वप्न में भी ऐसा विचार न हुआ था।

शर्मिष्ठा—सखि! वृथा रोने से क्या लाभ?

देवि—सखि! तेरे दुःख से पत्थर भी पसीजता है।

शर्मिष्ठा—सखी! दुःख की कथा से जी बड़ा दुखी होता है, किन्तु मुझे कौन सा दुःख है?

देवि—प्रिय सखी इससे बढ़कर कौन सा दुख होगा? चंद्रमा आकाश से पृथ्वी पर गिर पड़ा। देख राजा की पुत्री हो दासी हुई। हा! देव! क्या यह तुम्हारे लिये सामान्य बात है?

शर्मिष्ठा—सखि! यद्यपि मैं दासत्वरूपी जंजीर से बंधी हूँ, तथापि राज्य भोग से मैं एक बारगी वंचित नहीं हूँ। देखो हमारे हृदय में वे सब सुख वर्तमान हैं। यही अशोक की वेदी मेरा उच्च सिंहासन है (वेदी पर चढ़ना) यह वृक्ष मेरा छत्र है, इस सामने के तालाब में खिली हुई कुमुदिनी प्रिय सखी है और सब मधुर स्वर से मेरा ही गुण गान कर रहे हैं, शीतल मंद सुगं-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धित पवनराज स्वयम् मुझे पंखा झल रहे हैं । चंद्रमा नक्षत्रों सहित मुझे प्रकाश दिखलाते हैं । सखि क्या यह सामान्य वैभव है ? मुझे इतना सुख भोगती हुई देख कर भी तू मुझे सुखी नहीं कहती ?

देविका—राजकुमारी क्या यह हंसी करने का समय है ?

शर्मिष्ठा—सखि मैं तुम से हँसी थोड़े ही करती हूँ । देखो सुख दुख मन का धर्म है । बाहरी सुखों की अपेक्षा आंतरिक सुख ही वास्तविक सुख है । मैं जैसी पहले थी अब भी वैसी ही हूँ, मुझे तो कुछ भी खेद नहीं है ।

देवि—सखि ! तुम चाहे जो कहो, किंतु दुष्ट विधाता की क्या यह सामान्य विडंबना है ? (रोना)

शर्मिष्ठ—सखि तुझे धिक्कार है । तू क्यों व्यर्थ विधाता की निन्दा करती है ? देख यदि मैं किसी मनुष्य को देवताओं के भोग योग्य मिठाई भोजन करने को दूं, और यदि वह उसमें विष मिला भोजन कर सदैव का रोगी हो जाय तो क्या मैं उसके रोग का कारण गिनी जाऊँगी ।

देवि—सखि ! क्या ऐसा कभी हो सकता है ?

शर्मिष्ठा—तब तुम विधाता को मेरे लिये क्यों दोष देती हो ? विधाता का इसमें क्या दोष है । गुरुकन्या देवयानी से मुझसे न यह झगड़ा होता न यह दुर्गति भोगनी पड़ती । देख हमारे पिता दैत्यों के राजा हैं । उनका प्रताप सूर्य सा, ऐश्वर्य कुबेर सा और उनके विक्रम से देवता लोग भी डरा करते हैं । देख मैं उनकी प्यारी लड़की हूँ । मैं अपने ही दोष से इस दुर्दशा को प्राप्त हुई हूँ । मैंने अपनी मिठाई में विष मिला कर भोजन किया है, तो इसमें दूसरे का क्या दोष है ?

देवि—प्यारी सखी ! तुम्हारी बातें सुनकर आत्मा ठंढी होती है । तुम्हारी इस वाक्पटुता से यह बोध होता है कि स्वयं वाग्देवी इस पृथ्वी पर उतर आई हैं । हा विधाता ! क्या तुम्हें निठुरता दिखलाने के लिये कोई और स्थान न था, क्या ऐसी सरल स्त्री को ऐसा दुख देना उचित था ।

शर्मिष्ठा—सखि अब व्यर्थ मत रोओ, अरण्य रोदन से क्या लाभ ?

देवि—अच्छा सखि मैं एक बात पूछती हूँ, क्या तुम दासी ही रह कर अपना जीवन व्यतीत करोगी ?

शर्मिष्ठा—सखि ! कैदी क्या अपने मन से छूट सकता है ? तब फिर उसके लिये व्यर्थ व्याकुल होने से क्या लाभ ? मैं जिस प्रकार दुखों से घिरी हुई हूँ उससे केवल उस करुणामय ईश्वर के अतिरिक्त मुझे कौन निकाल सकता है । सखी इससे मेरे लिये तेरा रोना वृथा है ।

देवि—राजकुमारी ! क्या तेरे हृदय में शांति देवी वास करती है, कि जिससे तेरे चित्त में लेश मात्र भी खिन्नता नहीं आती ? क्या आश्चर्य है, प्रिय सखी ! तेरी बातों से तो ऐसा मालूम होता है जैसे कोई वृद्ध तपस्विनी अपने जीवन को कुटी में शांत रूप से व्यतीत कर रही हो । हा ! क्या यह कोई सामान्य दुःख है । हा दुष्ट विधाते ! क्या अलभ्य पारिजात पुष्पों को मरुभूमि में फेंक देना उचित है ? क्या अमूल्य रत्नों को समुद्र में ही पड़े रहने के लिये बनाया है (लंबी सांस लेती है)

शर्मिष्ठा—प्रिय सखी ! चलो अब हम लोग कुटी की तरफ चलें । यह देखो चंद्रमा की नाईं कुमुदिनी के समान प्रफुल्लित देवयानी पूर्णिका के साथ इस ओर आ रही हैं । तू मुझे सदैव कमलिनी कहती है, तो क्या इस समय मेरा यहाँ से खिसकना उचित है । देख हमारे प्रिय को बहुत देर हुई, उसके विरह में मुझे दुखित होना होगा । चल हम लोग चलें ।

देवि—राजकुमारी, क्या इस अभिमानिनी ब्राह्मण कन्या को कुमुदिनी कहना उचित है ? मेरी समझ में तो तुम चंद्रमा और वह दुष्ट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होती है। यदि मैं सुदर्शन चक्र पाऊँ तो क्षण इस दुष्ट स्त्री के दो टुकड़े कर डालूँ।

शर्मिष्ठा—सखि क्या तुम पागल हो गई हो? ब्राह्मण कन्या के पिता की ही कृपा से उसी दर्शन से, मेरे पितृकुल की रक्षा होती है। तो अब हम लोग चलें। (दोनों जाती हैं)

(देवयानी और पूर्णिका का प्रवेश)

(देवयानी आकाश की ओर देखती है)

पूर्णिका—प्रिय सखी! देखो चंद्रमा की ऐसी आकर्षक ज्योति से क्या तुम्हारे चित्त रूपी को खिन्न होना उचित है? देखो, शर्मिष्ठा से तुम्हें कूएँ में ढकेला है तब से तुम्हारे को जरा भी शाँति नहीं है। तभी से तुम मनी सी मलीन मुख लिए अपना समय व्यतीत ती हो। इसका कारण तुम मुझ से साफ साफ में तो तुम्हारी कोई और नहीं हूं, विचार तुम्हें मालूम है कि सखी का देह मात्र होता है, मन कभी दो नहीं होते।

देव—प्रिय सखि! तेरा कहना ठीक है। मेरा बहुत ही व्याकुल रहता है। तो अब इस की व्याकुलता का कारण भी सुन ले।

पूर्णि—क्या कहूं, कि इसे सुनने की मुझे कैसी लसा है।

देव—शर्मिष्ठा के मुझे कूएँ में ढकेल देने पर बहुत देर बेसुध पड़ी रही, फिर जब कुछ सुध तब चारो ओर अंधकार ही अंधकार दिख- दिया। मैंने डर से खूब चिल्ला चिल्ला कर रोना किया। दैवयोग से एक महात्मा उधर से जा थे, कूएं में बिलख बिलख कर रोने की आवाज़ समीप आकर उन्होंने पूछा "तुम कौन हो किस लिये कूएं में रो रही हो?" हे सखी! समय उसकी ऐसी मधुर बात सुन कर ऐसा मालूम हुआ कि स्वयं विधाता मेरे उद्धार के लिये आए हैं। मैं कुछ भी निर्णय न सकी कि वे कौन थे, केवल रोती रोती यही बोली "महाशय आप देवता हों अथवा मनुष्य, मुझे इस विपत्ति जाल से शीघ्र छुड़ाइए।" इतना सुनते ही वे दयावान उसी समय कूएं में उतर कर मेरा हाथ पकड़ ऊपर को उठा लाए। मैं ऊपर आकर उनके अलौकिक रूप का दर्शन कर मोहित हो गई, चाहे तुझे विश्वास न हो पर मेरी समझ में तो पृथ्वी पर ऐसा रूपवान् कोई दूसरा न होगा।

पूर्णि—क्या आश्चर्य है! सखि फिर क्या हुआ?

देवयानी—तब उन्होंने मेरी ओर देखकर कहा, "हे स्त्री! तुम देवी हो कि मानवी? किस के शाप से तुम्हारी यह गति हुई सो कहो। उनकी इस बात को सुन कर मैं विनयपूर्वक बोली, "महाशय! मैं देवकन्या नहीं हूं। मेरा जन्म ऋषि कुल में हुआ है। मैं महर्षि भार्गव की कन्या हूं। मेरा नाम देवयानी है।" सखि! मेरे इस उत्तर को सुनते ही वह खड़े होकर बोले "भद्रे! क्या आप भगवान् भार्गव की पुत्री हैं? मैं ऋषिवर को अच्छी तरह जानता हूं। वे एक त्रिभुवन पूज्य और बड़े दयालु हैं। आप उनसे मेरा अनेकानेक प्रणाम कहिएगा। मेरा नाम ययाति हैं, मैं चंद्रवंशी हूं। हे ऋषि-पुत्री मुझे आज्ञा दीजिए, मैं जाऊं। इतना कहकर वे उसी दम चले गए। सखि जिस प्रकार कोई देवता अपने भक्त पर दयालु हो उस के इच्छानुसार वर दे अंतधान होते हैं, और भक्त लोग कुछ देर तक आनंद से पुलकित हो और आंख मूंदे आनंद सागर में डूबे रह जाते हैं उसी प्रकार मैं भी उन महोदय के जाने के उप- रांत कुछ देर तक सुख के समुद्र में गोते लगाती रही। अहा! सखि! वह मोहिनी मूर्ति अभी तक मेरे हृदय में विराज रही है। सखि! क्या मैं उस चंद्रानन का इस जन्म में फिर दर्शन कर सकूँगी? (लंबी सांस लेती है) सखि! क्या वे अमृत बरसानेवाले शब्द कान को फिर सुनाई देंगे?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्णि०—प्रिय सखि! क्या तुमने इस सब वृत्तांत को महर्षि से नहीं कहा।

देवया—(डरती हुई) सखी यह कैसे हो सकता है? यह बात पिता महर्षि से किस प्रकार कह सकती हूँ? कहाँ महाराज ययाति क्षत्री और कहां मैं ब्राह्मण कन्या।

पूर्णि—सखी! मेरी बुद्धि में तो यह आता है कि यह बात महर्षि से कह देना चाहिए।

देवया०—अरे राम! राम! सखि क्या तू पागल हुई है? महर्षि से यह कहने की अपेक्षा मर जाना अच्छा है।

पूर्णि—सखि! यह देखो नाम लेते ही भगवान् महर्षि इस ओर आ रहे हैं। यह भी एक सौभाग्य की बात है अथवा कार्य सिद्धि का लक्षण है।

देवया—सखि तुम इस बात को पिता से किसी प्रकार न कहना। देखो मेरी यह बात मान लो।

पूर्णि—जिस प्रकार अंधों को ठीक पथ पर चलना कठिन है, उसी प्रकार अज्ञानों के लिये हित की बात समझना कठिन है।

देवया—सखि! क्या तू मेरी जान ही लेने को कमर बांधे हैं? क्या तू जलती आग में मेरी आहुती देना चाहती है? पिता स्वभाव से ही क्रोधी हैं। जब वे ऐसा सुनेंगे तो उनके क्रोध से बचने का कोई उपाय नहीं रहेगा।

पूर्णि—प्रिय सखी! मैं तो बुराई चाहनेवाली नहीं हूँ। अभी तू यहां से जा, यह देख भगवान् महर्षि इसी ओर आ रहे हैं।

देवया—(डर से) सखी मेरा जीना मरना अब तेरे हाथ है किंतु मैं अपने जीवन से निराश हो तुझसे बिदा होती हूं।

पूर्णि—इसकी क्या चिंता है? कोई डर नहीं। मैं घुमा फिरा कर महर्षि से यह सब वृत्तान्त कह दूंगी।

देवया—सखि! जो तेरी इच्छा हो सो कर। (उदास चेहरे से देवयानी का प्रस्थान)

(महर्षि शुक्राचार्य का प्रवेश)

पूर्णि—तात! प्रिय सखी देवयानी के मन की बात आज मालूम हुई, आज्ञा हो तो कहूँ।

शुक्रा—(पास आ कर) वत्स पूर्णिके क्या बात है?

पूर्णि—सब अच्छा ही संबाद है। आपने जो अनुमान किया था वही बात है।

शुक्रा—(प्रसन्न मुख से) वत्से! समाधि के समय विचारे हुए विषय का मिथ्या होना क्या संभव है? पुत्री के बिचारे हुए मनुष्य का नाम क्या है?

पूर्णि—उसका नाम ययाति है।

शुक्रा—भगवान् ही के वक्षस्थल को अलंकृत करने के लिये कौस्तुभमणि का निर्माण हुआ है। पुत्री! यह राजर्षि ययाति चंद्रवंशीय है। यद्यपि वह क्षत्री है, तथापि वह अपने वेद विद्याबल से मेरी पुत्री के लिये उपयुक्त पात्र है। अतएव हे पुत्रि पूर्णिके तू अपनी प्रिय सखी देवयानी को दान दे। मैं अभी अपने प्रधान शिष्य कपिल को राजा के पास भेजता हूँ। चतुर कपिल एक बार राजर्षि चंद्रवंशी ययाति से भेंट कर आवे, फिर मैं तेरी प्रिय सखी की इच्छा पूर्ण करूंगा इसकी कोई चिंता नहीं है।

पूर्णि—जैसी आज्ञा। तो अब मैं बिदा होती हूँ।

शुक्रा—वत्से! तेरा कल्याण हो। (पूर्णिका प्रस्थान)

शुक्रा—मेरी बहुत दिनों से यह इच्छा थी कि किसी उपयुक्त वर को कन्या दूँ। आज ब्रह्मा ने मेरी इच्छा पूर्ण की। अब मैं कन्या से निश्चित हुआ। सुपात्र को दी हुई कन्या के लिये माता पिता को पीछे कोई चिंता नहीं करनी पड़ती। (प्रस्थान)

इति प्रथमांक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वितीय अंक।

प्रथम गर्भांक।

(प्रतिदानपुरी)

(दो नागरिकों का प्रवेश।)

प०—अच्छा महाशय, क्या आपको इस बात पर विश्वास होता है ?

दू०—विश्वास न करें तो क्या करें ? देखते ही हो कि महाराज उन्मत्त से हो गए हैं, इसमें अब कोई संदेह बाकी है।

प०—महाशय ! अजी आप क्या कह रहे हैं ! हाय ! हाय ! कैसे दुःख की बात है इतने दिनों तक निष्कलंक चंद्रवंश पर कलंक लग गया।

दू०—पर भाई साहब तुम्हारा सोच करना वृथा है। क्या ऐसे तेजस्वी वंश पर कभी कलंक लग सकता है ? देखो ! जैसे दुष्ट राहू, इस वंश के प्रथम सूर्य चंद्रमा को कुछ समय तक मलिन कर फिर छोड़ जाता है, उसी प्रकार यह विपत्ति भी शीघ्र ही हो जायगी, इसमें कोई संदेह नहीं।

प०—भगवान करे ऐसा ही हो, हम लोग बहुत दिनों से इस वंश के आश्रित हैं, इस कारण इस वंश के नाश से, हम लोग भी जड़ से उजड़ जायंगे। भला यदि कोई वृक्ष बिजली से भस्म हो जाय तो क्या उसके नीचे की लताएँ बच सकती हैं ?

दू०—हां, यह तो सच है, किंतु इस विषय में हमें विशेष व्याकुल न होना चाहिए।

प०—महाशय, इस विषय में धैर्य कैसे रह सकता है ? देखो, महाराज ने एक दम से राज-कार्य छोड़ दिया, राजकर्म से इस समय वे उदासीन हो गए हैं। महाशय आप स्वयं बड़े चतुर और विद्वान हैं, इसलिये आप ही विचारिए, यदि सूर्य मेघों से घिरे रहें तो क्या पृथ्वी में अन्न उत्पन्न होगा ? और भी देखिए, यदि किसी पतिव्रता स्त्री को उसका पति उसे मार डालने की चेष्टा करे तो क्या उस स्त्री का पूर्ववत् रूपलावण्य रहेगा ? राज्य का अनादर करने ही से राजलक्ष्मी भी प्रतिदिन नष्ट होती जाती है।

दू०—भाई, जो आप कहते हो सही है; किंतु आप इसमें विशेष दुखित न हों। विचारिए, जिस स्त्री पर महाराज मोहित हुए हैं, उस स्त्री का भी चित्त सदैव कैसा चंचल रहता होगा। जो हो, महाराज की यह चिंता कोई चिरस्थायी नहीं है, बहुत शीघ्र दूर हो जायगी। शराबी सदैव के लिये पागल नहीं रहता। उसी प्रकार हमारे महाराज भी प्रेमरूपी मद्य के नशे में कुछ उन्मत्त हो गए हैं किंतु निस्संदेह, वे थोड़ी देर में चैतन्य हो जायंगे।

प०—महाशय ! यह सब भाग्याधीन है। हा ! महाराज इस प्रकार से दिन नष्ट करेंगे, यह हम लोगोंने स्वप्न में भी नहीं विचारा था।

दू०—भाई, तुम तो निरे लड़कबुद्धि हो। देखो, यह विस्तृत पृथ्वी कामरूपी किरात का मृगया स्थान है। इस पृथ्वी पर कौन ऐसा जितेंद्रिय है, जो उसके बाणों की चोट से न बिंधे ? दैत्य देश की स्त्रियां बड़ी मायाविनी होती हैं, और वे मोहिनी इत्यादि बहुत से गुणों में प्रवीण होती हैं, सो जब महाराज शिकार खेलने उस ओर गए थे मालूम होता है उसी समय, कोई सुंदरी उनके सम्मुख आ अपने कटाक्ष बाणों से उन्हें घायल कर गई है।

दू०—भाई, औषधि अथवा मंत्रबल से लोगों को मोहित करने पर मुझे विश्वास नहीं होता। हां परंतु स्त्रियों के कटाक्ष रूपी औषधी और मधुरभाषण रूपी मंत्र बल से मनुष्य मोहित हो सकता है, इस पर अवश्य विश्वास होता है (आगे की ओर देखकर) यह कौन है ?

(कपिल का प्रवेश)

प०—मालूम होता है कि कोई तपस्वी, दुष्ट राक्षसों के उपद्रव से पीड़ित हो, महाराज की शरण आया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कपिल—(स्वागत) महर्षि गुरु शुक्राचार्य के आज्ञानुसार, मैं आज महाराज ययाति की राजधानी में आया हूँ। ओः ऐसी ऐसी भयंकर नदियां, नाले, और घने बन अवरोधक हुए जिसकी सीमा नहीं। महर्षि भी अब गोदावरी नदी के तट पर पर्वत मुनि के आश्रम में मेरी बाट जोहते होंगे। महाराज ययाति के वहां आने पर गुरुजी उन्हें अपनी कन्या दान देंगे। महाराज को लिवा चलने ही के लिये मैं यहां पर आया हूँ। अहा हा! महाराज का कैसा अतुल ऐश्वर्य है। जगह जगह सैकड़ों चौकीदार, हाथी घोड़े पर सवार, हाथ में बिकट खड्ग लिए रक्षा कर रहे हैं। कहीं घोड़े अस्तबलोंमें हिनहिना रहे हैं, कहीं मत्त हाथियों की चिघ्घाड़ सुनाई दे रही है, कहीं बहुत से लोग विचित्र विचित्र खेल तमाशे करने में लगे हुए हैं, कहीं बिक्री के लिये अनेकों प्रकार की सुखाद्य वस्तुएँ भरी पड़ी हैं। पांत के पांत इन सुँदर गृहों को देख ये नैन ऐसे संतुष्ट हुए कि कहा नहीं जा सकता। और हमारे ऐसे वनविहारियों की, ऐसे मनुष्यों से भरे देश में आकर, मनकी वृत्ति भी ऐसी बदल गई कि वर्णन नहीं कर सकता। सब मकान तो एक से एक बढ़कर हैं। कौनसा राजभवन है, इसका निर्णय करना बड़ा कठिन हो रहा है। जो हो। मैं आज पथश्रम से बहुत थक गया हूँ, कहीं एकांत में थकावट दूर कर, फिर महाराज से मिलूँगा (दोनों नागरिकों देख कर) ये दोनों तो किसी भले मानुष की संतान मालूम होते हैं, आशा करता हूँ कि इनसे पूछने पर विश्राम का स्थान पा जाऊँगा। (प्रकाश) नागरिको तुम्हारे इस नगर की अतिथिशाला कहाँ है?

प्र०—महाराज! आप कौन हैं और इस देश में किसे ढूँढ रहे हैं?

कपि०—मैं दैत्यगुरु शुक्राचार्य का शिष्य हूँ। मैं इस प्रतिष्ठानपुरी में महाराज ययाति से कुछ आवश्यक बातें करने आया हूँ।

प्र०—तब फिर आपको अतिथिशाला में जाने की क्या आवश्यकता? यही राजभवन है। आप का इसमें चरण पड़ने ही से आपकी यथा योग्य पूजा तथा आदर सत्कार होगा और महाराज से भी भेंट हो जायगी।

कपिल—तो मैं वहीं जाता हूँ (जाना)

प्र०—महाशय! यह क्या? दैत्य गुरु शुक्राचार्य ने क्यों महाराज के पास दूत भेजा है चलो राजभवन को चलें और देखें क्या बात है।

दू०—चलो क्या हानि है?

(दोनों का प्रस्थान)

द्वितीय गर्भांक।

(प्रतिष्ठानपुरी, राजगृह का एक निर्जन कमरा। महाराज ययाति बैठे हैं। निकट में विदूषक खड़ा है।)

विदू०—महाराज! आप क्या हिमालय की तरह अचल स्थिर हो गए?

राजा—(लंबी सांस लेकर) प्रिय माधव्य यदि इन्द्र ने बज्र से हिमालय के पंख काट डाले तो उसे गतिहीन होना ही पड़ेगा।

विदू०—महाराज! भला यह कौन सा रोग रूपी इन्द्र आपके पीछे लगा है जो आपकी इस दशा का कारण हुआ। भला मुझसे कुछ कहिए तो सही?

राजा—वाह भाई माधव्य! अच्छे धन्वंतरि आए? तुमसे अपने रोग का हाल कहूँ तो उससे लाभ?

विदू०—(हाथ जोड़ कर) महाराज! क्या आपने नहीं सुना कि मृगराज सिंह भी समय पड़ने पर एक तुच्छ चूहे द्वारा उपकृत हुआ करता है।

राजा—(मुस्कुरा कर) पर भाई! मैं ऐसी विपत्ति के जाल में फंसा हूँ कि तुम्हारे ऐसे चूहे के दांत उसे काटने में असमर्थ हैं।

विदू०—अच्छा महाराज! अब हँसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिए, अपने मन की बात खोल कर कहिए। आपके इस प्रकार उदास रहने से इस राज्य में लक्ष्मी कैसे रहेगी?

राजा—न रहे न सही।

विदू०—(कान पर हाथ रख कर) राम राम! महाराज, ऐसी बात क्या आपको मुँह से निकालनी चाहिए? राजर्षि विश्वामित्र की तरह, इंद्र के स्थान, संपत्ति को त्याग क्या आप भी तपस्या करना चाहते हैं?

राजा—सखे! राजर्षि विश्वामित्र ने तप के बल से ब्राह्मणत्व पाया। भला मेरे वैसे भाग्य कहाँ?

विदू०—महाराज! आप क्या सचमुच वैसे होना चाहते हैं?

राजा—मित्र! यदि मैं तीनों लोकों का स्वामी होता, और तीनों लोकों को धन दान दे कर एक ब्राह्मण भी हो सकता तो इससे बढ़ कर और क्या सौभाग्य की बात होती?

विदू०—ओ हो, आज तो आपमें बड़ी भक्ति बढ़ आई। लोग कहते हैं कि दैत्य देश में केवल पाप ही पाप है। देवता और ब्राह्मण पर कोई श्रद्धा नहीं करता। किंतु आप वहाँ के थोड़े ही दिन के भ्रमण में इतने ब्राह्मण-भक्त हो गए। क्या यह कोई सामान्य बात है? मित्र! क्या आपसे और महर्षि शुक्राचार्य से गौ के विषय में कोई विवाद तो नहीं हुआ? कहिए महर्षि शुक्राचार्य के आश्रम में नंदिनी नाम की कोई कामधेनु तो नहीं है? या आप उनकी देवयानी नाम की नंदिनी कटाक्ष बाण से विद्ध हुए हैं? मित्रवर! कहिए क्या आपने शुक्राचार्य की कन्या देवयानी को देखा है?

राजा—(स्वगत) हा ईश्वर! क्या इस जन्म फिर उस चंद्रमुख के दर्शन होंगे? अहा ऋषिकन्या कैसी सुंदर है? (लंबी सांस लेकर) हा! क्या तू फिर उस निर्जन बन और उस कूएँ के तट पर न चलेगा? हा! उस कुएँ का अंधकार क्या उस चंद्र मंडल की प्रभा से फिर दूर न होगा?

विदू०—(स्वगत) जै शंकर की! अब मालूम हुआ। वही ऋषि कन्या ही सब अनर्थ की मूल मालूम पड़ती है। जो हो, अब रोग का पता लग गया, किंतु इस रोग की मकरध्वज के अतिरिक्त और औषधि तो है ही नहीं (प्रकाश) अच्छा महाराज! तो अब आपकी क्या आज्ञा है?

राजा—अच्छा सखे माधव्य! तुम क्या कहते थे?

विदू०—कहता और क्या था, महाराज के प्रलाप वाक्य सुन रहा था।

राजा—क्यों भाई, प्रलाप क्यों? तुम्हीं बतलाओ? जो महा मूल्यवान् माणिक्य राजाओं के मुकुट में जड़े जाने के योग्य है उसका स्थान क्या पर्वत की अंधेरी कंदरा है?

(लंबी सांस लेकर)

सुलोचनी मृगी भ्रमायौ निर्जन कानन में सीपी की सहन गजमुक्ता सुहायो है। हीरा की जोति छटा दर्शायो गुफा अँधेरी में करिकै मलीन चंद्र घन से छिपायौ है॥ डुबायौ नाल नलिनी जल सरोवर में सौरभ युत फूल घोर बन में उपायौ है। किनने बनायो चाहे जिनने बनायो पै विध सों न बनायौ यदि विधना बनायौ है।

विदू०—वाह महाराज! आज तो बड़े बड़े भावों का उदय हो रहा है। कहीं देवी सरस्वती आपके सिर पर तो सवार नहीं हो गई।

(जोर से हँसता है)।

राजा—(प्रसन्न मुख से) क्यों जी मित्रवर, भगवती सरस्वती की कृपा-दृष्टि मुझपर हो तो इसमें हानि ही क्या है?

विदूषक—(हँसता हुआ) हानि तो कुछ ऐसी नहीं है, पर फिर आप राजलक्ष्मी से विदा हूजिए, राजदंड छोड़ कर वीणा हाथ में लीजिए और

पुस्तकालय गुरुकुल कांगड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजवृत्ति त्याग कर भिक्षावृत्ति का अवलंबन कीजिए।

राजा—क्यों ? ऐसा क्यों ?

विदू०—वाह मित्रवर वाह ! क्या आपको विदित नहीं कि लक्ष्मी, सरस्वती की सौत है। फिर क्या इस संसार में सौत सौत में कभी प्रीति हुई है।

राजा—सखे माधव्य ! नहीं, तुम कविगणों को छोटा मत समझो ये लोग विश्वव्यापिनी जगन्माता प्रकृति देवी के वर पुत्र हैं।

विदू०—(हँसता हुआ) यह तो वही कविगण ही न कहते हैं। मेरी समझ में तो उलटे उन्हें विश्वव्यापी उदरदेव का वर पुत्र कहना चाहिए।

राजा—(सहास्य) क्यों सखे ! तब तो तुम्हें एक महाकवि कहना चाहिए क्योंकि तुम उन्हीं उदरदेव से एक मुख्य वर पुत्र हो।

विदू०—मित्र ! आप चाहे जो कहें। अच्छा अब इसे छोड़िए और यह तो बतलाइए भला ऋषि कन्या देवयानी को आपने कब और कहां देखा ?

राजा—मित्र ! (दीर्घ निश्वास लेते हुए) संयोग से एक निर्जन वन में उससे मेरी भेंट हो गई।

विदू०—आश्चर्य है ! फिर महाराज आपने ऐसे अमूल्य रत्न को निर्जन वन में पाकर क्या किया ?

राजा—और क्या करूँगा। भाई ! उसका परिचय पा कर मैं अस्तव्यस्त हो वहां से चला आया।

विदू०—(प्रसन्न मुख से) एं ! यह आपने क्या किया ? भला क्या खिले हुए कमल को देख कर भौंरा कभी मुँह फेर लिया करता है ?

राजा—यह तो ठीक है, पर देवयानी ठहरी ब्राह्मण कन्या, इसलिये जिस प्रकार से कोई मनुष्य दूर से सर्प की मणि देख कर लेने के लिये दौड़ता है और समीप पहुँचने पर सांप के काटने के डर से भागता है, उसी प्रकार मैं भी इस नव यौवना रूपवती ऋषि-कन्या का परिचय पा कर भाग आया।

विदू०—महाराज। आपने एक प्रकार से अच्छा ही किया।

राजा—अरे भाई, अच्छा क्या किया ! देखो मैं जिस प्राण के भय से भाग आया, अब वे प्राण मेरी रक्षा करने में असमर्थ हो रहे हैं (खड़े हो कर) मित्र ! अब यह दुःख मुझसे नहीं सहा जाता। क्या ज्वालामुखी पर्वत अग्नि को सदैव अपने गर्भ में रख सकता है ?

विदू०—महाराज ! आप इस विषय में दम से निराश न हों।

राजा—मित्र माधव्य ! जिस प्रकार से प्यासा हरिणा मरु भूमि में दूर से बालू को जल जान अपने प्राण बचाने के लोभ से उसके समीप दौड़ कर जाता है, किंतु उसके वहाँ तक पहुँचने में उसके जीवन में संशय पड़ जाता है, इस विषय में आशा करने से ठीक वही दशा मेरी भी हो सकती है। ऋषि कन्या देवयानी मेरे लिये मरीचिका रूप है, क्योंकि उसका जन्म ब्राह्मण कुल में हुआ है इसलिये क्षत्री को वह दुर्लभ है। हे ईश्वर ! मैंने तुम्हारा क्या अपराध किया है जिससे तुमने ऐसी सुंदर वस्तु को मेरे लिये दुर्लभ किया क्या केवल मुझे पीड़ा देने ही के लिये कमल को तुमने सकंटक मृणाल पर रख दिया।

विदू०—महाराज ! आप इतने व्याकुल न हों मित्र, बुद्धि लड़ाने से सब काम भली प्रकार हो सकते हैं। देखिए मैं ऐसा अच्छा उपाय करता हूँ कि आपके चित्त की व्याकुलता अभी हो जायगी।

राजा—(हँसते हुए) अरे मित्र ! फिर देर क्यों, अपने उपाय का यह द्वार खोल नहीं देते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विदू०—जैसी आपकी आज्ञा मैं अभी जाता हूं।
(प्रस्थान)

राजा—हा! (दीर्घ निश्वास लेकर स्वगत) कैसी कुसाइत में उस दैत्य देश को गया। (सोच कर) हे रसना तुझे! क्या ऐसा करना उचित है? सो तुम्हारी यह बातें मेरी दोनों आँखों को पीड़ा दे रही हैं, क्योंकि वहाँ उन्होंने विधाता के शिल्प सौन्दर्य का सार पदार्थ देखा है। (घूमना) बड़वानल से उत्तप्त होने पर जैसा सागर उत्कंठित हो उठता है, मेरी भी क्या आज वही दशा हो चली है?

हे प्रभो कामदेव! तुम्हें लोग शिव जी की क्रोधाग्नि से दग्ध हुआ कहते हैं। तो क्या उसी का बदला लेने के लिये इस मानव जाति को कामाग्नि में जलाते हो? (लंबी सांस लेकर) क्या आश्चर्य यहाँ मैं गया था मृगया करने और उलटे स्वयं ही काम व्याध के बाणों का लक्ष्य बन आया। (खड़े हो कर) तो इतना घबराने से क्या? (चकित होकर) यह कौन आ रहा है?

(एक वेश्या के साथ विदूषक का प्रवेश)

विदू०—महाराज! देखिए यही कामरूपी सरोवर की उपयुक्त पद्मिनी है।

वेश्या—महाराज की जय हो। (प्रणाम)

राजा—कल्याणी, तुम सदैव सधवा रहो। (विदूषक से) मित्र! यह सुंदरी कौन है?

विदू०—महाराज! यह स्वयं उर्वशी हैं। इन्द्र की अमरावती नगरी को छोड़ आप की इसी महानगरी में निवास करती है।

राजा—वाह मित्र माधव्य! तुम तो एक दम रसिक चूड़ामणि हो गए।

विदू०—मित्र न क्यों होऊँ? देखिए मलयाचल के समीप के साधारण वृक्ष भी चंदन हो जाते हैं, वैसे ही यह दरिद्र ब्राह्मण भी तो आप का दास है न? इसके रसिक होने में क्या आश्चर्य?

राजा—अच्छा जो हो, यह सुंदरी यहाँ क्यों लाई गई सो तो कहो?

विदू०—मित्र आपने उस ऋषि कन्या को देख लभझा था कि उसके ऐसी रूपवती और होगी ही नहीं, सो अब आप एक बार इसकी ओर भी देखिए।

राजा—मित्र! अमृत चाहनेवाला पुरुष क्या शहद से कभी तृप्त हो सकता है?

विदू०—यह तो ठीक है, अमृत चंद्रमा में लभझ क्या कोई मधुपान करना छोड़ देता है? महाराज! आप इसका एक गाना सुनिए। (वेश्या से) ऐ! सुंदरी जरा अपने गाने से महाराज को प्रसन्न तो करो।

वेश्या—मैं तो महाराज की दासी हूँ। (खड़ी होती है)

गाना।

"उदित भए सनि सरसबसंत,
प्रमुदित दसो दिशा हसंत।
शीतल मंद सुगंधित बहे समीर,
गूँजत चहूँदिस भँवर नीर।
पिय बिन विरहिणी मन मलीन,
मनाथ सर तपित तन अति छीन॥

राजा—वाह वाह! कैसा मधुर स्वर है, हे सुंदरी तुमारा गाना सुन कर मैं जैसा प्रसन्न हुआ, तुम से क्या कहूँ। (नेपथ्य में क्रोध से) रे दुष्ट पाखंडी द्वारपाल क्या तू मुझ जैसे व्यक्ति को भी प्रवेश करने से निषेध करता है।

राजा—यह क्या? बाहर द्वार पर यह कौन दांभिक की तरह बकबक कर रहा है, यह है कौन?

विदू०—अजी कोई तपस्वी महाराज होंगे। भला ऐसा मधुर स्वर और किसका होने लगा?

(द्वारपाल का प्रवेश)

द्वार०—महाराज! महर्षि शुक्राचार्य ने किसी विशेष कार्यवश अपने शिष्य मुनिवर कपिल को आपके पास भेजा है। आज्ञा हो तो वह महाराज से साक्षात् करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा—(उठ कर संभ्रम से) मुनिवर कहाँ हैं, मुझे शीघ्र उनके पास ले चलो।

(राजा और द्वारपाल का चले जाना)

वेश्या—(विदूषक से) महाशय! महाराज ऐसे चंचल क्यों हो गए।

विदू०—हे प्रसन्नवदनी! तुम्हारे सदृश फूली मालती को देख कर, किस भौंरे का चित्त अधीर न होगा।

वेश्या—वाह! बलिहारी है आपकी इस तीव्र बुद्धी पर भला भौरा फूली हुई मालती को देखकर भाग जाता? चलो देखें महाराज किधर गए?

विदू०—हे सुंदरी, तुम तो चुंबक हो और मैं लोहा सो जहाँ तुम वहाँ मैं भी (हाथ पकड़ कर) अहा! तुम्हारे होंठों में इंद्रादि देवताओं ने अमृत का कलश छिपा रखा है। हे मनमोहनी तुम मुझे एक चूँवन देकर अमर कर दो।

वेश्या—(स्वगत) यह ब्राह्मण देवता भी बस महात्मा ही निकले। (प्रकाश) चल दूर हो कँगला कहीं का।

विदू०—ओहो! यह कुलटा तो राजा ही पर दांत गड़ाए है, केवल पैसे की दासी है। रसिकता की कदर नहीं, जायँ देखें तो चली कहाँ गई।

(दोनों का प्रस्थान)

तृतीय गर्भांक।

(प्रतिष्ठानपुरी)

(राजपथ—नागरिकों का प्रवेश)

प्रथम—अहा! देखो कैसी धूमधाम है।

द्वितीय—मुझे तो सब धुँधला ही धुँधला दिखाई देता है। अरे भय्या! इस कालदस्यु ने अवसर ताक कर मेरी दृष्टिशक्ति प्रायः हरण कर ली है।

प्रथम—देखो सैकड़ों महावत हाथी पर सवार आगे चले जा रहे हैं। बीच में नाना भूषणों से भूषित घोड़े कैसी सुंदर चाल से चल रहे हैं। महाशय! एक बार रथ के झुंड की ओर तो देखो, यह देखो सैकड़ों झंडियाँ आकाश में उड़ रही हैं। वाह! कैसी शोभा है? पदातिकों के वस्त्र धूप से चमक चमक कर मानों अग्नि उगल रहे हैं। और देखो पीछे पीछे वेश्या और भांड कितने साजों के साथ मधुर स्वर से गायन कर रहे हैं (नेपथ्य में मंगल वाद्यों का बजना) यह देखो महाराज रथ पर चढ़े हुए बड़े बड़े बीरों के बीच शोभित हो रहे हैं। अहा! महाराज का कैसा सुंदर रूप है। ऐसा मालूम होता है कि स्वयं वैकुंठ निवासियों के साथ मर्यादापुरुषोत्तम गरुड़ के रथ पर सवार हो लक्ष्मी के स्वयंवर को जा रहे हों।

द्वितीय—भाई। नहुष पुत्र ययाति का रूपगुण पुरुषोत्तम ही के सदृश है और सुनता हूं, ऋषि शुक्राचार्य की कन्या भी कमला के सदृश रूपवती है। जिस प्रकार लोग पुरुषोत्तम और कमला के पाणिग्रहण से संतुष्ट हुए थे, उसी प्रकार से भगवान् करे यह राजर्षि और देवयानी के समागम से सुखी हों।

तृतीय—महाशय! क्या महाराज का विवाह दैत्य देश ही में होगा?

द्वितीय—नहीं, दैत्य गुरु भार्गव कन्या सहित गोदावरी नदी के तट पर पर्वत मुनि के आश्रम पर आए हैं। वहीं पर महाराज का विवाह होगा।

तृतीय—भाई! यह तो बहुत ही अच्छी बात हुई, क्योंकि चंद्रवंशीय सदैव से देवताओं के मित्र होते आए हैं, इस कारण महाराज के वहाँ जाने पर विवाद की पूरी संभावना थी।

द्वितीय—मालूम होता है, ऋषिवर इस कारण अपने आश्रम को छोड़ पर्वत मुनि के आश्रम पर कन्या सहित आए हैं (नेपथ्य की ओर देखकर) वह कौन जा रहा है? राज-मंत्री तो नहीं हैं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तृती०—हां हां, राज-मंत्री ही तो हैं।

(मंत्री का प्रवेश)

मंत्री—(स्वगत) तो आज शेष भगवान् हमारे कंधे पर बोझा रख चल दिए।

प्रथ०—(मंत्री से) हे मंत्रिवर। महाराज कितने दिनों के लिये बाहर गए हैं।

मंत्री—महाशय! यह कहना तो कठिन है। कहता हूँ कि गोदावरी के किनारे के सभी देश बड़े मनोहर हैं। उन देशों में बहुत से जंगल, पर्वत, समुद्र और बड़े बड़े तीर्थ हैं। महाराज बड़े आखेटप्रिय हैं हीं, फिर नया विवाह हुआ है, इस लिये महारानी के साथ बिना कुछ दिन रहे और तीर्थ यात्रा किए हुए शायद स्वदेश को नहीं लौटेंगे।

द्वितीं—यह कुछ असंभव नहीं है और आप जैसे मंत्री के हाथ जब राज्य का भार दे गए हैं इस ओर से भी निश्चिंत ही हैं।

मंत्री—यह तो आप लोगों की कृपा है। मैं भरसक किसी प्रकार प्रजा-पालन में त्रुटि न करूँगा। किंतु बिना इन्द्र के क्या स्वर्ग की शोभा होती है? बिना चंद्रमा के उदित हुए क्या तारों से आकाश की शोभा होती है? स्वामी के बिना भला देवसेना की परिचालना कौन कर सकता है?

द्वितीं०—यह तो सच है, किंतु बुद्धि में आप तो दूसरे बृहस्पति हैं। इसलिये महाराज के आने तक आपसे राजकार्य भली प्रकार होगा इस में कोई संदेह नहीं (कान लगा सुनना) अब तो कोई शब्द नहीं सुनाई देता। मालूम होता है महाराज बहुत दूर निकल गए। अब हम भी बड़े बड़े क्या करें? चलिए घर चलें।

मंत्री—हां, चलना ही चाहिए।

(इति द्वितीय अंक)

तीसरा अंक।

प्रथम गर्भांक।

(राजप्रसाद के सम्मुख मंत्री का प्रवेश)

मंत्री०—(स्वगत) महाराज मुनि के आश्रम से स्वदेश को लौट आए, यह बड़े सौभाग्य और प्रसन्नता का विषय है। जिस प्रकार रात्रि के व्यतीत हो जाने पर सूर्य देव के प्रकाश से पृथ्वी प्रफुल्लित होती है, राज विरह से विह्वल राजधानी भी आज वैसी ही हुई। (नेपथ्य में मंगलवाद्यों का बजना) पुरवासी लोग आज सुख के समुद्र में गोते लगा रहे हैं, जैसे आज कोई देवोत्सव हो रहा हो! क्यों न हो? नहुष पुत्र ययाति इस चंद्र-वंश के चूणामणि हैं और ऋषि कन्या देवयानी भी अनुपम सुंदरी और गुणवती हैं। अतएव इन लोगों के आगमन से आनंद न करने का क्या कारण? अहा! राजमहिषी तो साक्षात् लक्ष्मी का स्वरूप हैं। ऐसी दयावान और परोपकारिणी दूसरी स्त्री इस पृथ्वी पर नहीं है और हमारे महाराज भी वेद विद्या बल में श्रेष्ठ। जोड़ी उपयुक्त मिली है और ऐसा ही होना भी उचित है। क्या चांडाल कभी अमृत पी सकता है? नयनाभिरामी चंद्रमा के बिना क्या रोहिणी भली मालूम होती है? राजहंसिनी विकसित कमल के उद्यान ही में प्रवेश किया करती है। महाराज प्रायः डेढ़ वर्ष तक महारानी के साथ देश देशांतरों में भ्रमण करते हुए अनेक तीर्थों की यात्रा कर इतने दिनों पर राजधानी को लौटे हैं। महाराज के यदु नाम का जो एक कुमार जन्मा है वह भी सर्व लक्षणों से युक्त है। अहा मानों सुंदर शमीवृक्ष के भीतर की ज्योति पृथ्वी को उज्वल करने के लिये बाहर आई है। मेरी ईश्वर से यही प्रार्थना है कि वह पिता समान पुत्र को भी चंद्रवंश का शिरोमणि बनावे। अहाः महाराज ने राजकार्य का भार ले लिया और मेरे सिर का बोझा हलका हुआ। पर छुट्टी तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलती ही नहीं। चलें, चल कर राजभवन में उत्सव की तैयारी करें। (प्रस्थान)

(मंत्री का प्रस्थान)

(विदूषक का प्रवेश, हाथ में मिठाई का दोना लिए हुए)

विदू०—दूसरे का धन चुराना पाप है, इसमें कोई संदेह नहीं। पर चोर का माल चोरी करना भी पाप हो, ऐसा तो कहीं नहीं लिखा है। इस बढ़िया मिठाई को भंडारी राम ने राजभोग में से चुरा कर छिपा रखा था। मैंने चोर पर भी डाका डाला। वाह मेरी बुद्धि भी कैसी तीक्ष्ण है। क्या मैंने पाप किया है? और यदि मने पाप ही किया तो क्या? इसका उचित प्रायश्चित्त करने से पाप का खंडन हो जायगा। किसी गरीब कुलीन ब्राह्मण को बुला, उसे थोड़ी सी मिठाई दे देने से मैं पाप से छूट जाऊँगा। आहा क्यों न हो ब्राह्मण-भोजन तो परम धर्म है। (अपनी ओर देख कर) हे द्विजवर! यहां आने के उपलक्ष में आपको यह मिठाई अर्पण है। लीजिए, आ गया लाइए, यजमान कौनसी मिठाई दोगे, देखें? आइए बैठिए। यह भोजन करो (स्वयं भोजन करना)

तुम बड़े भक्त वत्सल हो, तुमने आज हमें खूब ही तुष्ट किया (स्वयं खड़े होकर) अच्छा द्विजवर आप क्या वरदान चाहते हैं। वरदान! वर यह चाहता हूँ कि इस मिठाई के चुराने से कुछ पाप हुआ हो तो वह पाप कट जाय। तथास्तु! चलो पाप भी कट गया। वाह! ब्राह्मण कुल में जन्म लेना क्या कोई सहज बात है? (अट्टहास) प्रायः डेढ़ वर्ष तक मैंने महाराज के साथ देशाटन और और अनेक तीर्थों के दर्शन किए, पर वाहरे यमुना मैय्या! तेरे ऐसी दूसरी नदी नहीं है, तुम्हारी बड़ी बहिन जान्हवी के पदपद्म को सैकड़ों प्रणाम हैं, पर माता तुम्हारे चरण-कमल को सहस्रों बार प्रणाम है। तुम्हारे स्वच्छ जल में स्नान करने से कैसी प्रबल क्षुधा लगती है। अच्छा चलें, अब यहां विलंब करने की क्या आवश्यकता है। रानी ने कहा था कि तुम एक बार जाकर देख आओ कि हमारा यदु क्या कर रहा है? उसे देखने गया, जब आने लगा तो राह में कुछ मिठाई मिल गई। इसी को कहते हैं "घलुए का लाभ" एक पंथ दो काज हुआ, अपना पेट तो भर गया, अब चल कर रानी का मन भी तृप्त करूँ।

द्वितीय गर्भांक।

(प्रतिष्ठान पुरी—अंतःपुर—राजा ययाति और देवयानी दोनों बैठे हैं।)

रानी—हे नाथ आपके मुख से वे सब बातें कैसी मीठी लगती हैं सो इस मुंह से क्या कहूँ। कई बार तो आपके मुख से वह बातें सुन चुकी हूँ पर तो भी उन्हें फिर सुनने की वासना बनी ही रहती है। हे जीवितेश्वर! आप मुझे उस अंधे कूएँ से निकाल कर फिर कहां चले गए?

राजा—प्रिये! जिस प्रकार कोई मनुष्य अकस्मात् देवकन्या को देख कर भाग जाता है मैं भी उसी प्रकार तुमसे विदा हो उसी समय घोर जंगल में चला गया। किंतु मेरा चित्त चकोर तुम्हारे चंद्रानन के पुनः दर्शन के लिये बेचैन व्याकुल हुआ यह तो अंतर्यामी भगवान ही जानते हैं। फिर मैं धूप से थका हुआ, विश्राम के लिये पेड़ के नीचे बैठ गया और देखने लगा तो चारों ओर अंधकार और शून्य सा भासने लगा। कुछ देर बाद जब मैं वहां से चलने के लिये तैयार हुआ तो उसी समय एक हरणी दिखाई दी। स्वाभाविक आखेट-प्रियता के कारण हरिणी को देखते ही मैंने धनुष पर तीर चढ़ाया, संध्या का समय हो जाने के कारण जब मैंने हरिणी ने मेरी ओर देखा तब उसके नयन युगल देख मुझे तुमारे कमल-नयनों का स्मरण हो आया और मैं उस समय ऐसा निर्बल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधीन हो गया कि कब धनुष मेरे हाथ से छूट कर पृथ्वी पर गिर पड़ा मुझे मालूम ही नहीं।

रानी—(राजा का हाथ पकड़ कर प्रेम से) यह भी मेरा सौभाग्य ही है, फिर ?

राजा—प्यारी ! यदि तुम्हारे सौभाग्य थे तो मेरा और क्या था ? तुमने तो मेरा जन्म सुफल कर दिया, तब फिर, चलते चलते एक कोकिल की मधुर ध्वनि सुन मैंने समझा कि तुम्हीं मुझे पुकार रही हो।

रानी—प्राणेश्वर ! यदि उस समय उस कोकिल के शरीर में यह क्षुद्र प्राण प्रवेश कर सकता तो वह केवल यही पुकारती "हे राजन् ! आप उस वृक्ष के निकट फिर आइए, आपके लिये शुक्रकन्या रानी व्याकुलचित्त बाट जोह रही है।"

राजा—प्रिये ! मुझे इसका कभी स्वप्न में भी ध्यान न था कि मेरे भाग्य में इतना सुख बदा है। जानता तो क्या मैं कल इस नगरी में प्रवेश करता ? तुम्हें एक बार ही अपने हृदयरूपी पद्मासन पर बिठा कर ही लाता। मैंने अब समझा कि किसी अच्छी सायत में मैंने दैत्य देश की यात्रा की थी।

(विदूषक का प्रवेश) कहिए द्विजवर ! क्या समाचार है ?

विदू०—महाराज ! श्रीमान् नवकुमार को मैं एक बार देख आया। महारानी दीर्घजीविनी हों। अहा ! कुमार का कैसा सुंदर रूप है ? उन्हें मेरा कार्तिकेय कहें या बाल सूर्य्य कहें। क्यों जी ? "असितो पिता यस्य, पिता यस्य" ओहोहो पिता तो भूला ही जा रहा हूं।

राजा—(हँसते हुए) अजी, चुप भी हो, तुम्हारे ऐसे पेटू ब्राह्मणों को क्या भोज्य वस्तु के नाम के अतिरिक्त कुछ और कभी याद रह सकता है ?

रानी—(विदूषक से) क्यों महाशय ! क्या तुम्हारे यदु की नींद खुली है ? नाथ तो अब मुझे आज्ञा हो।

राजा—प्रिये ! जैसी तुम्हारी इच्छा।

(रानी का प्रस्थान)

विदू०—आप क्षत्रियों का स्वभाव भी विलक्षण ही है। जरा देखिए तो सही, कहां गए दैत्य देश को शिकार खेलने और क्षत्रियों को अप्राप्य ऋषि-कन्या का लाभ कर लाए। धन्य है आप को। वाह ! क्या ही अपूर्व रत्न आप दैत्य देश से लाए हैं। भला महाराज यह तो बतलाइए कि ऐसे रत्न वहां और भी हैं ?

राजा—(हँसते हुए) मालूम तो पड़ता है कि दैत्य देश में ऐसे और भी रत्न हैं।

विदू०—महाराज मुझे तो विश्वास नहीं होता।

राजा—तुमने क्या रानी जी की सब दासियों को देखा है ?

विदू०—कहां देखा है ?

राजा—उनकी दासियों में एक है, जिसके रूप लावण्य को मैं क्या कहूँ, मानों साक्षात लक्ष्मी पृथ्वी पर उतर आई हो ! वह रानी की केवल दासी या सखी भी नहीं मालूम पड़ती।

विदू०—तब वह कौन है, महाराज ?

राजा—यह तो मैं नहीं कह सकता, रानी से उसका परिचय पूछते हुए भी मुझे भय मालूम होता है, और मैंने भी उसे भली भांति नहीं देखा, जैसे रात्रि के समय मेघाच्छन्न आकाश में चंद्रमा क्षणभर के लिए दर्शन देकर पुनः छिप जाता है उसी प्रकार वह सुंदरी भी कई बार राह में दिखलाई दे गई है। मालूम पड़ता है कि रानी ने उसे मेरे सामने होने से बर्ज रखा है अहा ! अहा ! ! उसकी सुंदरता को क्या कहें। उसके कमल सरीखे नेत्रों को देखकर कमल विचारा तो कोई चीज़ ही नहीं जँचता।

(नेपथ्य में) दोहाई महाराज की, मैं बड़ा दरिद्र ब्राह्मण हूं। हाय ! मेरा सर्वनाश हो गया।

राजा—(चकित होकर) क्या है देखो तो ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौन आदमी राजद्वार पर इतने जोर से हाहाकार कर रहा है ?

विदू०—जैसी आज्ञा, मैं (नेपथ्य से फिर शब्द का आना) दुहाई है माहाराज की। हाय ! हाय ! हाय ! मेरा सर्वस्व गया !

राजा—जाते क्यों नहीं ? क्यों देर कर रहे हो ? बात क्या है ? वाह ! अच्छे मिट्टी के पुतले की तरह खड़े हो ?

विदू०—नहीं महाराज, मैं सोच रहा हूँ—आप ठहरे देवताओं के मन्त्री और ब्याह कर लिया आपने दैत्यगुरु की कन्या से। यदि इस पर क्रुद्ध हो कर कोई दैत्य आया हो तो—

राजा—धत्तेरे की ! बैठ तब, मैं स्वयं ही जाता हूँ।

विदू०—नहीं नहीं महाराज ! मेरे भाग्य में चाहे जो हो, आपका जाना उचित नहीं, मैं ही जाता हूँ। (प्रस्थान)

राजा—(स्वगत खड़े हो कर) ब्राह्मण जाति बुद्धि में बृहस्पति है सही, पर डरपोक, स्त्रियों से भी अधिक होती है (सोच कर) अस्तु, वह स्त्री कौन है, मैंने कितना ही विचार किया किंतु कुछ स्थिर न कर सका। जब मैं गोदावरी के तट पर, पर्वतमुनो के आश्रम पर विचर रहा था, उसी समय एक दिन घूमता घूमता एक पुष्प-उद्यान में चल गया। वहाँ पर मैंने उस नवयौवना परम सुंदरी स्त्री को एक अशोक वृक्ष के तले हाथों पर गाल रक्खे बैठे हुए देखा। मालूम होता था कि वह किसी चिंता में डूबी हुई है। उसके चारों ओर खिले हुए फूल ऐसे लगते थे जैसे देवताओं ने उसके अंग की सुंदरता पर प्रसन्न हो उस पर पुष्पवृष्टि की हो। अथवा ऋतुराज स्वयं रति के भ्रम से उसे पुष्पांजलि दे रहा हो। फिर उस स्त्री ने मेरे पैरों की आहट पा मेरी ओर देखा। जैसे किसी शिकारी को देख कर मृगी भागती है, उसी प्रकार मुझे देखते ही वह चल दी। मैं बहुत दिनों से सुनता हूँ कि वह दैत्यराज की कन्या शर्मिष्ठा है। किंतु इसके अतिरिक्त कोई और परिचय नहीं मिलता। पूरा पूरा हाल जानना आवश्यक है, किंतु (अर्धोक्ति)

(विदूषक का एक ब्राह्मण के साथ प्रवेश)

ब्राह्मण—दोहाई महाराज की, मैं बड़ा दरिद्र ब्राह्मण हूँ, मेरा सर्वनाश हो गया।

राजा—क्यों क्यों ? हाल तो कहो ?

ब्राह्मण—(हाथ जोड़ कर) महाराज ! कोई दुष्ट चोर मेरे घर में घुस कर सब उठा ले गए, हाय हाय ! मेरा सर्वनाश हो गया ! हे नृपतिवर मेरी रक्षा कीजिए।

राजा—(क्रोध में) इस राज्य में कौन ऐसा निडर दुष्ट है जो ब्राह्मण का धन चोरी करे ? महाशय ! आप न रोइए, मैं अभी इन चोरों को दंड देता हूँ। (विदूषक से) मित्र माधव्य ! तुम जल्दी से धनुष बाण और ढाल तलवार ले आओ।

विदू०—महाराज आपके जाने की क्या जरूरत है ?

राजा—(गुस्से से) क्या तू मेरी आज्ञा उल्लंघन करता है ?

विदू०—भला महाराज ! क्या मैं आपकी आज्ञा काट सकता हूँ (दौड़ता हुआ जाता है)

राजा—महाशय ! कितने चोर आपके घर घुसे होंगे ?

ब्राह्म०—हे नृपवर ! मैं निश्चय नहीं कह सकता, मेरा सर्वनाश हो गया।

राजा—महाराज ! आप धैर्य धरें, अब व्यर्थ न रोइए। (विदूषक का अस्त्र शस्त्र लिए पुनः प्रवेश)

(राजा और ब्राह्मण का प्रस्थान)

विदू०—जिस प्रकार अग्नि में आहुति दे से वह धधक उठती है, उसी प्रकार हमारे महाराज की शत्रु के नाम से ही क्रोधाग्नि जल उठती है। निस्संदेह चोर सालों की आज मृत्यु आगई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेउटों को मरना होता है तब उन्हें पंख जम आते हैं, अब यहां ठहर कर मैं क्या करूँगा? चलूँ कोतवाल से मिलकर यह सब संबाद कह डालूँ। (प्रस्थान)

तृतीय गर्भांक।

(प्रतिष्ठानपुरी—राज्यांतःपुर का एक बाग)

बकासुर और शर्मिष्ठा का प्रवेश।

बका०—भद्रे! मैं यह बात तुम्हारी माता महाराज महिषी से कैसे कहूँगा? वह तुम्हारे विरहानल में ऐसी जल रही हैं कि मैं नहीं कह सकता। हे कल्याणि! उनके शोक को हरण करने-वाला तुम्हारे अतिरिक्त कोई दूसरा उपाय नहीं है।

शर्मिष्ठा—महाशय! यदि मेरे अश्रुजल से सब शोक की निवृत्ति हो तो मैं अवश्य करूँगी, किंतु इस जन्म में तो मैं फिर उस दैत्यपुरी को जानेवाली नहीं। (रोती है)

बका०—भद्रे! तुम्हारे पिता ने महर्षि की बड़ी आराधना कर उन्हें प्रसन्न किया है, राजा चक्रवर्ती ययाति की पटरानी देवयानी, अपने पिता की आज्ञा का उल्लंघन तथा टालमटोल न करेगी। यदि तुम आज्ञा दो तो मैं राजसभा में उपस्थित हो महाराज से इन वृत्तान्तों को कहूँ। कल्याणि! तुम्हारे विरह में दैत्यपुरी अंधकार-मय हो गई है और नागरिक लोग भी महाराज और महारानी के दुःख से बड़े दुखी हैं।

शर्मिष्ठा—यदि आप यह बात राजा से कहेंगे तो मैं अभी यहीं पर अपने प्राण दे डालूँगी। (रोती है)

बका०—शुभे! कहो, फिर क्या करें?

शर्मिष्ठा—महाशय! आप दैत्य देश को लौट जाँय और माता पिता से मेरा सहस्रों प्रणाम कह कर कहिएगा कि तुम्हारी हतभागिनी पुत्री की यही प्रार्थना है कि उसे अब जन्म भर के लिए भूल जाओ।

बका०—राजकुमारी! मैं किस प्रकार तुम्हारे माता पिता से इस बात को कहूँगा? तुम एक मात्र उनकी कन्या हो, तुम उनके हृदय-आकाश की एक मात्र पूर्ण चंद्रमा हो।

शर्मिष्ठा—महाशय! देखिए, इस पृथ्वी पर कितने ही मनुष्यों की संतान बचपन ही में मर जाती है, तो क्या वे उसके दुःख से सदैव जला करते हैं? शोक कभी चिरस्थायी नहीं होता।

बका०—तो क्या तुम्हारी अब जन्मभूमि के दर्शन करने की इच्छा नहीं है? क्या तुम माता पिता को एकदम भूल गईं? तो क्या मुझे अंत में यही संवाद ले जाना पड़ेगा?

शर्मिष्ठा—महाशय! मैं माता पिता को सदैव अपने हृदयमंदिर में पूजती रहती हूँ। जिस प्रकार कोई मनुष्य किसी पवित्र तीर्थ के देवी देवताओं के दर्शन कर उनका ध्यान भक्ति-पूर्वक सदा हृदय में करते रहते हैं, मैं भी माता पिता को वैसी ही श्रद्धा एवं भक्ति से सदैव याद करती रहूंगी, परंतु अब मुझसे दैत्य देश को लौट चलने के लिए अनुरोध न कीजिए।

बका०—वत्से! तब मैं अब बिदा होऊँ?

शर्मिष्ठा—(रोती है)

बका०—(लंबी सांस लेकर) भद्रे! अब भी सोच विचार ले, राजसभा कुछ बहुत दूर नहीं है। चक्रवर्ती महाराज ययाति बड़े दयालु तथा हितैषी हैं, तुम्हारा आद्योपांत वृतान्त सुन कर वे तुम्हें स्वदेश जाने की आज्ञा देदेंगे, इसमें कोई संदेह नहीं।

शर्मिष्ठा—(स्वगत) हृदय तू जाल में फँसे पक्षी के समान, जितना छूटने की चेष्टा कर रहा है, उतना तू और भी उलझा जारहा है, (प्रकाश) महाशय! आप मुझ से इसका जिक्र फिर न कीजिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बका०—अब और विशेष क्या कहूं ? ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे। अब मेरे यहां ठहरने की कोई आवश्यकता नहीं, मैं जाता हूं। (प्रस्थान)

शर्मिष्ठा—(स्वगत) इस महा घोर शोक सागर से मुझे कौन निकालेगा ? हा ईश्वर। क्या तुम्हारे मन में यही था ? या इसमें तुम्हारा क्या दोष ? (रोती है) मैं अपने कर्मफल के दोष से इस दुःख को पा रही हूं। पहले तो गुरुकन्या से झगड़ा कर राज्यच्युत हुई, अब दासी होने पर भी चैन नहीं, गुरु आश्रम पर तो कोई कष्ट न था, पर अब यह बिधाता की विडंबना देखो, हा मूर्ख मन ! तू जो महाराज ययाति पर इतना मोहित हुआ है, इससे तुझे क्या लाभ होगा ? अथवा इसमें तेरा कौनसा दोष ? ऐसी सुंदर मूर्ति को देख कौन मोहित नहीं होता ? क्या सूर्य के उदय पर भी कमल की कलियां बँधी रह सकती हैं ? (लंबी सांस लेकर) इस रोग से बचने के लिये, मुझे, मृत्यु से बढ़कर दूसरी औषधि नहीं है। आहा ! देवयानी कैसी भाग्यवती है ? (मुंह नीचे कर, पेड़ के तले बैठ जाती है)

(राजा का प्रवेश)

राजा—(स्वगत) मैं इस उद्यान में बहुत दिनों पर आया। सुनता हूं, इसके चारों ओर महारानी की दासियां रहती हैं। आहा ! कैसा रमणीक स्थान है, ठंढी मंद वायु के चलने से यहां के लता-मंडप कैसे ठंढे हो रहे हैं। चारों ओर की कड़ी धूप देवताओं की कोपाग्नि के समान पृथ्वी को भस्म कर रही है, किंतु यहां कैसी शांति है। ऐसा बोध होता है कि वनविहारिणी देवी धूप से व्याकुल हो यहां पर विराज रही हो। आहा ! कैसा मनोहर स्थान है, जरा यहां पर विश्राम कर थकावट दूर करूं (शिला पर बैठ जाता है) दुष्ट चोरों ने बड़ी कड़ी लड़ाई की, किंतु मैंने अग्न्यास्त्र से उन सब को भस्म कर दिया (नेपथ्य में वीणा की ध्वनि) आहा ! कैसी मधुर ध्वनि है, मालूम पड़ता है कि महिषी की सहेलियां आपस में गा रही हैं। जरा पास चल कर सुनूं (पास जाता है)

राग काफी। (नेपथ्यगीत)

बेदरदी तोहि दरद न आवे, चितवन में।
चित बस कर मेरो अब काहे को आँख चुरावे।
कबसो पड़ी तेरे द्वार पै, बिन देखे जियरा घबरावे।
नारायण महबूब कंतजी, घायल कर फिर गैल बतावे।

राजा—आहा ! कैसा आकर्षक गान है, ऐसे सुगायिकाओं को रानी अपने संग स्वदेश से ले आई हैं इसका मुझे स्वप्न में भी ध्यान न था। (विचार कर) यह क्या ? हमारी दक्षिण भुजा क्यों फड़कने लगी ? यहां हमारे ऐसे मनुष्य को क्या लाभ होगा? कह नहीं सकता, भाग्य का द्वार सभी जगह खुला रहता है। देखूं बिधाता के मन में क्या है।

शर्मिष्ठा—(खड़ी होकर) रे मंदभागिनी ! क्या तू नहीं जानती कि पिंजरे में फँसे हुए पक्षी को व्याकुल होना व्यर्थ है ? हा माता पिता ! हा बंधु बांधव ! हा ! जन्मभूमि ! क्या इस जन्म में मैं अब आपलोगों के दर्शन नहीं पाऊंगी ? (रोती है)

राजा—(आगे बढ़कर शर्मिष्ठा को देखकर) यह कौन परम सुंदरी नवयौवना स्त्री है ? क्या यह कोई देवकन्या, पृथ्वी पर बनबिहार को इन्द्र से उतर आई है ? नहीं तो इस पृथ्वी पर ऐसे रूप लावण्य का होना क्यों कर संभव है। जरा देखूं तो सही, यह अकेली यहां क्या कर रही है ? (पेड़ के नीचे खड़ा होता है)

शर्मिष्ठा—(जोर से) ईश्वर ने पराधीन रहने के लिए ही स्त्रियों की सृष्टि की है। देखो, यह सुवर्ण रंग की लता, अशोक वृक्ष को प्रिय समझ उसे आलिंगन कर रही है, किसी ने इसे दूसरे बाग से लाकर रोपा है, तो भी क्या वह अपनी जन्मभूमि के दर्शन की लालच से अपने प्रीतम तरुवर को त्याग सकती है ? यदि इसे कोई बरजोरी यहां से उखाड़ कर ले जाय, तो क्या यह अपने प्रिय के बिरह में जी सकेगी ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजन्! मैंने भी उसी प्रकार, तुम्हारे निमित्त, अपने माता पिता, बंधु बांधव और जन्मभूमि को त्याग दिया है। जिस प्रकार कोई भक्त अपने इष्ट देव की प्रसन्नता की अभिलाषा से समस्त सुखों को त्याग, संन्यास धर्म का अवलंबन करता है उसी प्रकार मैंने भी ययाति को अपना इष्ट देव समझ, संसार के समस्त सुखों को तिलांजलि दे डाली है (रोती है)

राजा—(स्वगत) यह क्या आश्चर्य है? क्या यह वही दैत्यराज की पुत्री शर्मिष्ठा है? मुझे तो इसका कभी भी ध्यान न था, कि यह मुझ पर आसक्त है (सोचकर पुलकित होता हुआ) मालूम होता है! इसीलिये मेरी दहनी भुजा फड़क रही थी, अहा! आज मेरे लिये कैसा शुभ दिन है। ऐसा फल बड़े भाग्य से मिलता है, ऐसे आदर से हृदय में स्थान दूंगा कि बस क्या कहूँ। सुंदरि! शुक्रजी के शाप से कामदेव पुनः भस्म हुआ है कि तुम अकेली स्वर्ग छोड़, इस उपवन में विलाप करती हो।

शर्मिष्ठा—(राजा को देख, शर्माकर) (स्वगत) आश्चर्य है? महाराज तो उद्यान में ही आए हैं।

राजा—हे मृगनयनी! यदि मन्मथ की अर्धांगी नहीं हो तो बतलाओ कौन हो, जो इस वन को अपने अलौकिक रूप लावण्य से उज्वल कर रही हो?

शर्मिष्ठा—(स्वगत) आहा! प्राणनाथ कैसे भावी हैं, हृदय तू क्यों इतना घबड़ाता है?

राजा—भद्रे मैंने कौन सा अपराध किया है तुमने मधुर भाषण से मेरे कानों को सुखी करके एक दम मुंह मोड़ लिया है?

शर्मिष्ठा—(हाथ जोड़ कर) महाराज! मैं महिषी की एक दासी हूं इस से दासी को ऐसा संबोधन करना उचित नहीं है।

राजा—नहीं नहीं, सुंदरी तुम साक्षात् लक्ष्मी हो, यदि तुम रानी की दासी हो तब तो तुम पर मेरा पूर्ण अधिकार है। अतएव हे भद्रे! तुम मुझे अंगीकार करो।

शर्मिष्ठा—महाराज! आप दासी को ऐसी आज्ञा न दीजिए।

राजा—सुंदरी हम क्षत्रियों के यहां गंधर्व विवाह होता है, तुम गुण तथा रूप में मेरे योग्य हो अतएव, हे कल्याणि! तुम निशंक भाव से मुझे ग्रहण करो।

शर्मिष्ठा—हा हृदय! क्या आज इतने दिनों पर तेरी इच्छा पूर्ण होगी? (प्रकाश) हे नरेश्वर! आप इस दासी को क्षमा कीजिए, मेरे लिए ये वाक्य केवल आडंबर मात्र हैं।

राजा०—प्रिये! मैं सूर्य तथा दिग्मंडल को साक्षी दे, तुम्हारा पाणिग्रहण करता हूं। (हाथ पकड़ता है) तुमने आज से मेरी राजमहिषी का पद पाया।

शर्मिष्ठा—हे नरवर! आप यह क्या कर रहे हैं? क्या चंद्रमा कुमुदिनी के सिवा किसी दूसरे पुष्प की इच्छा करता है।

राजा—और कुमुदिनी को भी तो, चंद्रस्पर्श से अप्रसन्न होना उचित नहीं? आहा! प्रिए! आज मेरा कैसा शुभ दिन है। जिस दिन से मैंने तुम्हें गोदावरी तट पर पर्वत मुनी के आश्रम पर देखा है, उसी दिन से तुम्हारी यह मोहिनी मूर्ति मेरे हृदयमंदिर में विराज रही है। आज ईश्वर ने प्रसन्न हो मेरी अभिलाषा पूर्ण की।

(देविका का प्रवेश)

देवि०—(स्वगत) महाशय बकासुर के दुःख का स्मरण कर हृदय फटने लगता है (विचार कर) देवयानी के विवाह के समय ही से, प्रिय सखी के चित्त में जन्मभूमि की ओर से कैसा वैराग्य होगया है। कैसा आश्चर्य है? ऐसी सरला बाला के हृदय में क्या गुरुकन्या का सौभाग्य देख जलन पैदा होगई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(राजा को देखकर) (चकित हो) यह क्या? महाराज ययाति, प्रिय सखी से वार्तालाप कर रहे हैं। आहा! दोनों एक साथ कैसे सुंदर मालूम पड़ते हैं, मानों चंद्रदेव पृथ्वी पर उतर कर प्रियतमा कमलिनी को मधुर भाषण से संतुष्ट कर रहा हो।

शर्मिष्ठा—इसका मुझे कभी भी विश्वास न था कि मेरे भाग्य में इतना सुख है। हे नरनाथ! जिस प्रकार कोई मृगी झुंड का साथ छूट जाने पर भय से किसी विशाल पर्वत की शरण लेती है, यह दासी भी आज से उसी प्रकार आपकी शरणागत हुई, महाराज! मैं इतने दिनों से चिर दुःखिनी थी। (रोती है)

राजा—(शर्मिष्ठा के आंसू पोंछकर) रोती क्यों हो? बिधाता ने तुम्हारे दोनों नेत्र अश्रुपूर्ण होने के लिए नहीं बनाए हैं। (देविका को देखकर) प्रिये! प्रिये! देखो यह कौन स्त्री है?

शर्मिष्ठा—महाराज! यह मेरी प्रिय सखी है, इसका नाम देविका है।

देविका—महाराज की जय हो।

राजा—(देविका से) सुंदरी, तुम्हारा कल्याण हो, मैं सर्वत्र ही विजयी हूँ। यह देखो, मैंने बिना समुद्र मथे ही आज इस कमल वन में कमला ऐसी सुरूपा तुम्हारी सखी को प्राप्त किया है।

देविका—(हाथ जोड़ कर) महाराज! यह रत्न राज्यमुकुट ही के योग्य है, हमारे नेत्र भी आज सफल हुए।

शर्मिष्ठा—(देविका से) अच्छा, तो अब क्या समाचार लाई हो?

देविका—राजनंदिनी! आप ने बिदा होने पर भी महाशय बकासुर की आपसे भेंट करने की प्रबल इच्छा है। वह बाहरी उद्यान में आपकी राह देख रहे हैं, आपकी क्या आज्ञा है?

राजा—कौन बकासुर?

शर्मिष्ठा—महाशय बकासुर एक प्रधान दैत्य है, वह केवल मुझसे भेंट करने के लिये आपकी नगरी में आए हैं।

राजा—सो क्यों? मैं दैत्यश्रेष्ठ बकासुर का नाम कई बार सुन चुका हूँ, वह एक बड़े वीर पुरुष हैं। उनका भली भाँति आदर सत्कार न करने से मेरे राज्य को बड़ा भारी कलंक लगेगा। प्रिये! चलो हम लोग आगे बढ़ कर उनका स्वागत करें। (सबों का प्रस्थान)

(विदूषक का प्रवेश)

विदूषक—यही तो महारानी की दासियों का उद्यान है, सो क्या, महाराज कहाँ हैं, दुष्ट रक्षक ने झूठ ही कह दिया क्या? कैसी आफत है। मित्र किसी भी अस्त्रधारी का नाम सुनते ही नाचने लगते हैं, छिः क्षत्री जाति का कैसा बुरा स्वभाव है। कवि लोग जो इन्हें नरव्याघ्र कहते हैं, वह झूठ नहीं। देखो क्या मनुष्य ऐसे समय घर से बाहर निकलता है? मैं भिक्षुक ब्राह्मण हूँ मुझे कुछ भी शरीर का सुख नहीं है, तो भी इस घाम से कितना कष्ट हो रहा है, सो मैं कह सकता। यह देखो मानों मैं इस समय हिमालय की चोटी हो रहा हूँ। मेरे शरीर से सैकड़ों नदियाँ निकल कर पृथ्वी पर गिर रही हैं। (सिर पर हाथ रख कर) उः! मैं क्या गंगाधर हो गया, गंगाधर न होने पर भी जो मेरे सिर पर सर्प किनी विराज रही हैं, इसका क्या कारण? अरे महाराज गए कहाँ? वे अकेले डाकुओं से युद्ध करने गए हैं, यह सुन सब नागरिक घबड़ा गए हैं और सेनापति बहुत से पैदल सिपाहियों को लेकर उन्हें चारों ओर खोजने गए हैं। कैसी आफत है! अरे तीरे बैठे बैठे जो मछली काँटे में फँसाई जा सकती है उसके लिये क्या पानी में कूद पड़ना चाहिए? (चिंता कर के) हाँ यह असंभव नहीं है। देखो इस बाग के चारों ओर रानी की दासियों का गृह है। वे सब दैत्यों के हैं। सुनता हूँ कि वे सब पुरुष को भेड़ा बना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होती हैं। कौन जाने यदि उनमें से किसी ने महा के स्वरूप पर मुग्ध हो मायाबल से इन्हें देता ही कर रखा हो तब तो बड़ा उपद्रव ा। (विचार कर) और मेरा भी यहाँ रहना र नहीं है। यद्यपि मैं महाराज ऐसा कन्दर्प कर नहीं तथापि निरा बेडौल भी नहीं कहा सकता। कहीं मुझे भी देख कर यदि कोई ना मोहित हो जाय तब तो बस गया, मैं चाहे हो भेड़ा तो कभी भी न बनूँगा। मैं दरिद्र ण का लड़का ठहरा, मुझ से यह सब क्यों सहा जा सकता है। यह सब ढकोसले राजाओं से निभते हैं। यहाँ तो पेट भर खाना और ठा आशीश देना। बंदे तो यही जानते हैं। ह सात जन्म तक स्त्रियों का मुँह न दिखाई दे, भेड़ा तो बनने का नहीं—बाप रे बाप (नेपथ्य ओर देख कर) वह कौन है? हाँ हाँ। वही चंडालिन शायद मेरी ओर ताक रही है? रे, अब तो सब चौपट हुआ (कपड़े से मुँह ाता है) औरतिया कहीं मेरा मुँह न देख ले—हे राज कामदेव तुम्हारे पाँव पड़ता हूँ, तुम इस आफत से उबार लो। अब देखना सुनना अब तो यहाँ से टल जाने ही में कल्याण है।

(प्रस्थान)

इति तृतियांक।

चतुर्थांक।

(प्रथम गर्भांक)

(प्रतिष्ठानपुरी—राजगृह।)

(राजा और विदूषक का प्रवेश)

विदू०—मित्र! आज आप इतने उदास क्यों हैं?

राजा—(लंबी सांस ले कर) अरे भाई! लाश हो गया। हा भगवन्! इस विपद-र से कैसे पार पाऊँगा।

विदू०—महाराज! सो कौनसी बात है? भला कहिए तो सही।

राजा—अरे भाई! क्या कहूँ? जैसे कोई वणिक घोर अंधकारमय रात्रि के समय भयानक समुद्र के बीच अपने जहाज का मार्ग भूल कर अपना सहायक जान कर ध्रुव नक्षत्र की ओर घबड़ा घबड़ा कर वारंवार गौर से देखता है, उसी प्रकार मैं भी, इस महा विपद सागर में पड़ कर परम करुणामय परमेश्वर पर केवल भरोसा कर, अहर्निशि उसका ध्यान करता हूँ। हे जगत्पिता! इस विपद से मेरी रक्षा करो।

विदू०—(स्वगत) यह तो कोई सामान्य बात नहीं मालूम पड़ती। त्रिभुवन विख्यात चक्रवर्ती महाराज ययाति जो इतने भयभीत हो रहे हैं, इसका कारण क्या है? (प्रकाश) महाराज मामला क्या है जरा कहिए तो सही।

राजा—क्या कहूँ भाई! इस बार सर्वनाश उपस्थित हुआ है। इतने दिनों पश्चात रानी मेरा और प्यारी शर्मिष्ठा का संबंध जान गई।

विदू०—महाराज! अरे! आप कहते क्या हैं? हाँ, मामला तो निस्संदेह बेढब है। अच्छा राज-महिषी को इन सब बातों का पता लगा क्यों कर?

राजा—अरे भाई क्या पूछते हो? विधाता के विमुख हो जाने से फिर क्या दुःख की सीमा मिलती है? रानी ने कल सायंकाल को अपनी सखियों के उद्यान में मुझे सैर कराने के लिए बुलवा भेजा, मैं भी अस्वीकार न कर सका, अस्तु हम दोनों टहलते टहलते प्रिय शर्मिष्ठा के घर के समीप पहुँचे। भाई उस समय मेरा चित्त कैसा व्याकुल हो रहा था कि कह नहीं सकता।

विदू०—मित्र, तब फिर?

राजा—मुझे राजमहिषी के साथ देख, प्रिय शर्मिष्ठा के तीनों पुत्र खेलना छोड़ चुप चाप चित्र लिखे से खड़े हो गए।

विदू०—कैसी दुर्दैव की बात है! अच्छा फिर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा—रानी उन्हें चुप चाप खड़ा देख कर मीठे स्वर से बोली "बच्चो! डरो मत" इसे सुन सब से छोटा पुत्र, बड़े गुस्से से मेरी भुजा पकड़ कर बोला "हम किसी से नहीं डरते, तुम क्यों हमारे पिता का हाथ पकड़े हो? तुम तो हम लोगों की माता नहीं हो। वह इस समय होतीं तो हम लोगों को कितना प्यार करतीं।"

विदू०—राम! राम! फिर, फिर?

राजा—अरे भाई फिर क्या? मेरा सिर तो कुलालचक्र की तरह घूमने लगा और मैं मन में सोचने लगा कि यदि इस समय माता वसुंधरा फट जातीं तो मैं उनमें समा जाता (लंबी सांस लेता है)।

विदू०—मित्र! आप एक दम चुप क्यों हो गए?

राजा—भाई! अब क्या करूँ? बोलो। महिषी ने उसी समय हमें और शर्मिष्ठा को कितना ऊँचा नीचा कहा, जिसकी कुछ सीमा नहीं और विशेष क्या कहूँ यदि ऐसे कटु वाक्य स्वयं सरस्वती कहतीं तो भी मैं न सहन करता, पर क्या करूँ एक तो राजमहिषी ऋषिपुत्री ठहरीं दूसरे शर्मिष्ठा का उनका पुराना बैर है। (लंबी सांस लेता है)।

विदू०—यह तो ठीक है, किंतु मित्र इसमें विशेष चिंता न करो। राजमहिषी की क्रोधाग्नि शीघ्र ही शांत हो जायगी, देखो आकाश सदैव बादलों से नहीं घिरा रहता, सदैव आँधी नहीं चला करती।

राजा—तुम महिषी के स्वभाव से परिचित नहीं हो, वह बड़ी अभिमानिनी हैं।

विदू०—मित्र, जो स्त्री पति को प्राण तुल्य समझती है, वह क्या कभी पति को दुखी देख सकती है?

राजा—मित्र! तुम क्या समझते हो कि मैं रानी के लिए इतना भयभीत हुआ हूँ। अजी हरिनी से क्या सिंह डरा करता है? जो कोमल बाहुलता फूल के धनुष की प्रत्यंचा चढ़ाने मात्र से थकित हो जाती है, उस से क्या कोई भयभीत होता है?

विदू०—तब इतनी चिंता क्यों?

राजा—मित्र! यदि रानी ने इस समस्त वृत्तांत को महा तेजस्वी महर्षि शुक्राचार्य से कहा तो उनकी कोपाग्नि से मेरा कौन उद्धार करेगा जिस अग्नि के भय से ब्रह्मा पर्यंत काँपते हैं उस कोपाग्नि से मैं दुर्बल मनुष्य किस प्रकार छुटकारा पाऊँगा? (लंबी सांस ले कर) हाय शर्मिष्ठा का पाणिग्रहण कर मैंने कैसा बुरा काम किया? (विचार कर) रे पाखंडी अज्ञान हृदय जिसके साथ तू इस मृत्युलोक में भी स्वर्ग सुख का अनुभव करता है, तू उस निरुपम नारी की निंदा करता है? रे निठुर! तू इस पापों के उचित दंड पायगा इसमें कोई संदेह नहीं। प्रिये! जो मनुष्य तुम्हारे लिए प्राण तक देने तैयार है, क्या वही तुम्हारे दुःख का कारण हुआ हा! चारुहासिनी! क्या तुम्हारे भाग्य में यही था? हा! मेरे हृदय रूपी सरोवर की पद्मिनी!

विदू०—मित्र! क्यों वृथा विलाप कर रहे हो? चलो हम दोनों महिषी के मंदिर को चलें, वे बड़ी दयावती तथा पतिपरायणा हैं, वह आपको इस प्रकार दुखी देख अवश्य ही क्रोध छोड़ देंगी।

राजा—सखे! क्या तुम समझते हो कि महिषी अभी तक इसी नगर में हैं?

विदू०—(आश्चर्यित हो कर) सो क्या महाराज? तब राजमहिषी कहाँ हैं?

राजा—वह सखी पूर्णिका को ले कर कहीं चली गईं सो किसी को भी मालूम नहीं।

विदू०—अरे राम! राम!! यदि रानी क्रोध के वशीभूत हो दैत्य देश को पहुँच गईं तो बड़ा चौका लग जायगा। आपने इस विषय में क्या विचारा है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा—मैं क्या करूँ? मेरी तो बुद्धि लोप हो गई है। मूढ़वत् पड़ा हुआ हूँ।

विदूषक—अरे सर्वनाश हुआ! अब क्या विलंब करना उचित है? चलिए शीघ्रगामी सवारों को महिषी की खोज के लिये भेजिए। क्या सोचना है।

(दोनों का प्रस्थान)

द्वितीय गर्भांक।

(प्रतिष्ठानपुरी के समीप यमुना तट पर अतिथिशाला।)

(शुक्राचार्य और कपिल का प्रवेश)

शुक्रा०—अहा कैसा रमणीक स्थान है! हे कपिल! यह नगरी जो सामने दिखाई दे रही है; क्या तेजपुञ्ज, महात्मा, तपस्वी, चंद्रवंशीय राजाओं की राजधानी है?

कपिल—जी हां।

शुक्रा०—आहा! कैसी मनोहर नगरी है। मालूम होता है कि इन सब नाना प्रकार के सुंदर द्वार तोरन इत्यादि को कुबेरपुरी अलका तथा इन्द्र-पुरी अमरावती को लज्जा देने ही के लिए विश्व-कर्मा ने पृथ्वी पर निर्माण किया है।

कपिल—भगवन्! यह प्रतिष्ठानपुरी वीर चक्रवर्ती नहुषपुत्र ययाति के उपयुक्त राज्य-धानी है। क्योंकि उसके सदृश वेद वेदांग पारग परम धार्मिक, वीर इस पृथ्वी पर दूसरा राजा नहीं है। वह श्रेष्ठ मनुष्यों के मध्य इन्द्र के सदृश विराजमान हैं।

शुक्रा०—मेरी प्राण से भी प्यारी देवयानी का ऐसे सुपात्र को देना उचित ही कार्य हुआ है।

कपिल—हां भला इसमें क्या संदेह है?

शुक्रा०—वत्स! मैंने बहुत दिनों से, अपनी परम स्नेहपात्री के चंद्रानन का दर्शन नहीं किया तथा उसे जो दो संतान हुई हैं, उन्हें भी देखने की इच्छा होती है। इसीलिए मैं इस नगरी में आया हूँ। किंतु सूर्यदेव प्रायः अस्ताचल को चले गए हैं। संध्या का समय होगया; इस लिए इस समय राजधानी में प्रवेश करना किसी प्रकार उचित नहीं है। वत्स! आज तुम इसी निकट-वर्ती अतिथिशाला में ठहरने का प्रबंध करो।

कपिल—प्रभो! जैसी आपकी इच्छा।

शुक्रा०—वत्स! तुम इस देश से विशेष परिचित हो, क्योंकि, देवयानी के विवाह के समय तुम्ही राजा ययाति को बुलाने आए थे। अतएव तुम खाने पीने का प्रबंध करो। देखो इस समय सूर्य भगवान् अस्ताचल को चले गए हैं, मैं सायंकाल का संध्यावन्दन करलूँ।

कपिल—भगवन्! जैसी आपकी इच्छा।

(कपिल का प्रस्थान)

शुक्रा०—(स्वगत) जब तक कपिल नहीं आता, मैं वृक्ष के नीचे बैठ कर शिव का ध्यान करलूँ।

(वृक्ष के नीचे बैठता है। देवयानी और पूर्णिका का वेष बदले हुए आना)

पूर्णिका—(देवयानी से) आप तो एक दम से चुप्पी साध गईं।

देव०—सखी इस निर्जन स्थान को देखकर मुझे बड़ा डर मालूम पड़ रहा है। हमलोग किस प्रकार उस सुदूर दैत्य देश को पहुंच सकेंगी, और राह में हमलोगों की कौन रक्षा करेगा, यही सोच सोच कर कलेजा काँप उठता है।

पूर्णि०—महिषी! मैं भी यही कहा चाहती थी, परंतु आपके डर से नहीं कहती थी। मेरी समझ में तो आता है कि महल को लौट चल-ना ही उचित है।

देव०—यदि तुम्हारी यही इच्छा है तो चली क्यों नहीं जाती? तुझे रोकता कौन है?

पूर्णि०—देवि! क्षमा कीजिए, मुझसे अप-राध हुआ, आप जहाँ जहाँ चलेंगी मैं भी छाया सी आपके पीछे चलूँगी।

देव०—सखी! तू मुझे उस पापनगरी को लौट चलने की सम्मति देती है? ऐसे नराधम,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पापी, पाखंडी और कृतघ्न पुरुष का क्या मुझे फिर मुँह देखना उचित है ? वह दुराचारी अपनी प्रेयसी शर्मिष्ठा को लेकर सुख से राज्य करे, वह शर्मिष्ठा को राज्यमहिषी का पद दे, सुख से काल व्यतीत करे. मेरा उससे अब क्या संबंध है ? पर हां, मेरे दो बच्चे वहाँ हैं, वे दरिद्र ब्राह्मण के नाती हैं. उन्हें मैं शीघ्र ही पिता के यहाँ बुलवा लूँगी, उन्हें राज्यभोग से क्या प्रयोजन है ? शर्मिष्ठा के पुत्र राज्य भोगें, सुख से दिन काटें। मेरा उस व्यभिचारी, दुष्ट, दुःशील पुरुष से किस कुलाहल में सामना हुआ ! क्या मेरे सच्चे प्रेम का यही बदला है ? शीतल चंदन का वृक्ष जान जिसका आश्रय लिया वही भाग्यदोष से विष-वृक्ष हो गया। हाय ! हाय ! मेरी ऐसी कुमति क्यों हो गई थी ? मैंने अपने ही हाथ से अपने पैरों में कुल्हाड़ी मारी। हा ! जिसे रत्न समझ मैंने हृदय पर रक्खा, क्या वही समय के फेर से हृदय को जलाने लगा ? (रोती है) हाय विधि ! क्या तुझे यही उचित था ? इस दुराचारी पर प्रेम कर मैंने कैसा बुरा काम किया ? ऐसे पति का होना न होना दोनों बराबर है, जैसा किया वैसा भर पाया।

पूर्णि०—रानी ! आप महर्षिकन्या हैं और अब रानी हैं, जरा विचारिये तो सही कि सधवा स्त्रियों को क्या ऐसे कुवाक्य जीभ पर लाने उचित हैं ?

देव०—सखी ! तू मुझे सधवा कैसे कहती है ? क्या मेरे पति हैं ? मैं अपने स्वामी को शर्मिष्ठा रूपी काल भुजंगिनी की गोद में अर्पण कर आई हूँ। (मूर्छित होती है)

पूर्णि०—यह क्या ! यह क्या !! महारानी मूर्छित हो गईं। अरे यहाँ कोई है, जल्दी पानी लाओ, हाय हाय ! मैं क्या करूँ, यह अनजान जगह है, मालूम होता है यहाँ कोई नहीं है, मैं राजमहिषी को इस अवस्था में अकेली छोड़ कैसे यमुनातट पर जल लेने जाऊँ ? क्या हुआ ! क्या हुआ !! हा विधाता ! क्या तेरे मन में यही था ? जिसके इशारे पर सैकड़ों दास दासियाँ हाथ जोड़े खड़ी रहती थीं, वह इस समय धूल में लोट रही है और इस पर भी कोई आदमी नहीं। हा ! क्या ऐसा दुःख भी प्राणों को सह्य होगा ? (रोती है)

शुक्रा०—(खड़े होकर) यह किसीके रोने का शब्द जान पड़ता है ? (निकट आकर पूर्णिका से) कल्याणि तुम कौन हो ? किसके लिये इस निर्जन स्थान में विलाप कर रही हो और यह जो स्त्री भूमि पर पड़ी है, यह कौन है ?

पूर्णि०—महाशय ! यह परिचय का समय नहीं है, कृपा कर आप यहाँ थोड़ी देर ठहरिए मैं यमुना से जल ले आऊँ। (प्रस्थान)

शुक्रा०—(स्वगत) यह भी एक आश्चर्य है देख रहा हूँ, न जाने ये स्त्रियाँ राक्षसी हैं या मानवी कुछ समझाई नहीं देता।

देव०—(कुछ सचेत हो) हा दुराचारी पाखंडी ! हा नराधम, ! क्षत्री हो ब्राह्मणकन्या को पाया, तिस पर भी तुझे कुछ ज्ञान न हुआ !

शुक्रा०—(स्वगत) वाह ! मालूम पड़ता है कि यह स्त्री किसी पुरुष को धिक्कार रही है।

देव०—हटो, हटो, तुम निरे लंपट हो, तुम मुझे न छुओ, क्या मैं शर्मिष्ठा हूँ ? नीच को नीच ही मिलते हैं। मैं तुम्हारी कौन हूँ, मधुर स्वर वाली कोकिल और कर्कश स्वरवाले काग एक स्थान में रह सकते हैं ? सिंह क्या सियार से मित्रता करता है ? तुम्हारे चक्रवर्ती ही से क्या ? क्या तुम नहीं जानते हममें तुममें कितना भेद है ? मैं देवदानव-पूजित महर्षि शुक्राचार्य की कन्या हूँ। (फिर मूर्छित होती है)

शुक्रा०—यह क्या ! क्या मैं सोता हुआ स्वप्न देख रहा हूँ ? हरि ! हरि ! अपने को निद्राभिभूत भी कैसे कहूँ ? यह देखो यमुना जल के स्रोत की ध्वनि मुझे सुनाई दे रही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्तों का मन्द मन्द पवन से हिलना सुनाई दे रहा है। मैंने क्या सुना! अच्छा देखूँ तो यह कौन है? (मुख पर से कपड़ा हटाकर) यह तो प्राणाधिका पुत्री देवयानी है। जो अट्ठारह वर्ष पहले केवल शशिकला थी, सो इस समय पूर्ण चंद्र के सदृश शोभा को प्राप्त हुई है। यह यहाँ इस समय इस दशा में क्यों? कुछ भी तो समझ में नहीं आ रहा है, मैं तो हतबुद्धि—(अर्धोक्ति) (पूर्णिका का प्रवेश)

पूर्णि०—महाशय! हटिए हटिए, मैं जल लाई हूँ। (मुख में जल देती है)

देव०—(सचेत होकर) सखि पूर्णिके! क्या सवेरा हो गया? प्राणेश्वर उठ कर क्या बाहर गए? (चारों ओर देख कर) पूर्णिके यह कौन सा स्थान है?

पूर्णि०—सखी पहले उठो, फिर सब वृत्तांत कहूँगी।

देव०—(उठकर और शुक्राचार्य्य को देखकर) यह तेजस्वी महात्मा ऋषितुल्य कौन हैं?

शुक्रा०—वत्से! क्या तू मुझे भूल गई?

देव०—भगवन्! आप क्या आज्ञा करते हैं?

शुक्रा०—वत्से! कहता हूँ कि क्या तू मुझे भूल गई?

देव०—(फिर से देखकर) आर्य! आप हैं! हा पिता! हा पिता! (भूमि पर गिर पड़ती है और पैर पकड़कर) इस समय ईश्वर ही ने कृपा कर आपको यहाँ भेज दिया। (रोती है)

शुक्रा०—क्यों रोती हो? क्या हुआ है? मैं कुछ भी समझा नहीं। अपने यहाँ का कुशल समाचार तो कहो (उठाता और सिर चूमता है)

देव०—हे पिता! आप मुझे इस दुःखार्णव से उबारिए। (रोती है)

शुक्रा०—पुत्री! बात क्या है सो तो कहो। ऐसी व्याकुल क्यों हो रही हो? मैं इतनी दूर से परिश्रम कर तुम्हें देखने के लिये यहाँ आया, तुम्हें यहाँ देख कर मुझे हर्ष और विषाद दोनों ही हुआ। तुम राजा की गृहिणी हो, कुलवधू हो, तुम्हें अंतःपुर से बाहर निकलना क्या उचित है? यहाँ पर ऐसी दशा में क्यों आई?

देव०—हे पिता! क्या आपकी इस दुर्भागी पुत्री का अब कुछ मान रह गया है? (रोती है)

शुक्रा०—सो क्यों! क्या पागल हो गई है? (स्वगत) हा! यह दुर्दैव कैसा। (प्रकट) महाराज तो अच्छे हैं?

देव०—महाराज! आप देवदानव-पूजित महर्षि हैं, आप उस नराधम का नाम मुँह पर न लाइए।

शुक्रा०—रे दुष्ट पापिनी तू मेरे सामने पति की निंदा करती है?

देव०—(पैर पर गिरकर) हे पिता! आप मुझे अपनी अजेय कोपाग्नि से भस्म कर दीजिए, वह अच्छा है। हे माता वसुंधरा! तू मुझे कृपा कर अपने भीतर स्थान दे, मैं अब जीना नहीं चाहती।

शुक्रा०—(उदास होकर) यह क्या? कैसी विपत्ति है? बात क्या है, बोलती क्यों नहीं?

देव०—(बिना कुछ कहे रोती है)

शुक्रा०—अरे पूर्णिका बोल तो, हुआ क्या है।

पूर्णि०—भगवन्! किस तरह कहूँ?

देव०—(उठकर) पिता! मैं दुख की कथा क्या कहूँ? आपने जिस मनुष्य को नर-श्रेष्ठ समझ कर मुझे प्रदान किया था, वह मनुष्य चांडाल से भी अधम है।

शुक्रा०—अरे राम! राम! यह कैसी बात?

देव०—पिता जी! उसने उस दैत्यकन्या शर्मिष्ठा से गंधर्व विवाह कर मेरा बड़ा अपमान किया है।

शुक्रा०—आः केवल इतने ही के लिये इतना? तो इतनी देर से कहा क्यों नहीं? पुत्री! गंधर्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवाह करने की क्षत्रियों में चाल है, क्या तुम नहीं जानती ?

देव०—तो क्या आपकी कन्या सदा सौतिया डाह का दुःख भोगा करेगी ?

शुक्रा०—क्षत्रिय राजा से जिस समय तुम्हारा विवाह हुआ, उसी समय मुझे यह खटका हुआ था कि ऐसी घटना होगी, इसका पहले ही विचार कर लेना उचित था।

देव०—पिता! मैं आपके पैर पड़ती हूँ, आप उस नराधम को अभिशाप द्वारा उचित दंड दीजिए। (पैर पकड़कर रोती है)

शुक्रा०—(कान पर हाथ रखकर) नारायण! नारायण! पुत्री! मैं ऐसा कैसे कर सकता हूँ? राजा ययाति धर्मिष्ठ और दयालु पुरुष हैं।

देव०—तात! तो मुझे आज्ञा दीजिए कि मैं यमुना में डूब मरूँ।

शुक्रा०—(स्वगत) क्या विपत्ति है। (प्रकाश) तो तुम्हारी क्या इच्छा है, मैं तुम्हारे स्वामी को शाप से भस्म कर दूं ?

देव०—नहीं तात! यह नहीं! आप उस दुराचारी को जराग्रस्त कर दीजिए जिसमें वह फिर कामिनियों का मन न चुरा सके।

शुक्रा०—अच्छा तुम उठो और घर जाओ, तुम्हारी इच्छा पूर्ण होगी।

देव०—पिता! मैं अब उस दुराचारी के घर न जाऊँगी।

शुक्रा०—(जरा क्रोध से) तो तुम्हारी कामना भी सिद्ध न होगी।

देव०—तात! मुझे आपकी आज्ञा का पालन करना ही पड़ेगा, किंतु मेरी प्रार्थना भी शीघ्र सिद्ध हो। सखि पूर्णिके, तो चलो।

(देवयानी और पूर्णिका जाती हैं)

शुक्रा०—(स्वगत) संतान के मोह में भी कैसी शक्ति है! फिर एक बात यह भी तो है कि कर्म लिखे को कौन मेट सकता है? पूर्व जन्म में ययाति ने कुछ पाप किया था, नहीं तो क्या ऐसी अनिष्टकारक घटना होती, तो चलें किसी एकान्त स्थान में बैठकर विचार करें, अब क्या करना उचित है।

(प्रस्थान)

तृतीय गर्भांक।

(प्रतिष्ठानपुरी, शर्मिष्ठा के घर के सामने का बाग)

(शर्मिष्ठा और देविका का प्रवेश।)

देविका—अब व्यर्थ रोने से क्या होगा? मैं एक बड़ा आश्चर्य देखती हूँ कि काल पाकर सब कुछ बदल जाता है, पर देवयानी का स्वभाव नहीं बदला। ऐसी कुलटा स्त्री क्या दूसरी होगी।

शर्मिष्ठा—सखी! तू क्यों देवयानी की निन्दा करती है? उसका इसमें क्या दोष है? यदि मैं किसी अमूल्य रत्न को बड़ी रक्षा से रखूँ और उसे कोई चुरा ले, तो क्या मैं चुरानेवाले का तिरस्कार नहीं करूँगी?

देवि०—करेगी क्यों नहीं?

शर्मिष्ठा—तब सखी! देवयानी को क्या तुम धिक्कारना उचित है? पतिपरायणा स्त्री के लिए पति के सिवाय और कौन सा अमूल्य रत्न है? (लंबी सांस लेकर) सखी! देवयानी ने मेरा अपमान किया है, इसलिए मैं रो रही हूँ। तुम नाहक चिंता करती हो। देख सखी मैं कैसी मंदभाग्य हूं, क्या थी और क्या हो गई, और अब भाग्य में क्या है सो कौन कह सकता है? इसे सोच सोच कर मैं जीवनमृत सी हो रही हूँ। (लंबी सांस लेकर) प्राणनाथ के उस चंद्रानन के दर्शन न होने से मैं कैसे जीऊंगी? सखी! मृगी जिस प्रकार शीतल जल की तृष्णा से व्याकुल होती है, प्राणनाथ के विरह से मेरे भी प्राण वैसे ही हो रहे हैं।

(रोती है)

देवि०—हे राजनंदिनी! तुम इतनी व्याकुल न हो, महाराज शीघ्र ही तुम्हारे पास आवेंगे।

शर्मिष्ठा—सखी! तुम भी खूब हो, भला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थोड़ी धीरज बँधाने से क्या मन मानता है ?

देवि०—देखो तो सही दिन ढल जाने पर, दुखिनी अपने प्राणेश्वर के वियोग में तमाम रात काटती है, तो क्या क्षण भर के लिए तुम पति का वियोग सहा नहीं जाता ?

शर्मिष्ठा—प्रिय सखी ! क्या तू नहीं जानती मेरे हृदयाकाश का पूर्णचंद्र सदैव के लिए अस्त हो गया। हाय ! हाय ! क्या मेरी विरह-रजनी का फिर कभी प्रभात होगा ? (रोती है)

देवि०—सखी ! शांत हो, तुम्हारी यह दशा देख तुम्हारे छोटे छोटे बच्चे भी घबड़ाकर तुम्हारे पास उच्च स्वर से रुदन कर रहे हैं।

शर्मिष्ठा—(लंबी सांस लेकर) हा विधाता ! क्या मेरे भाग्य में यही था ? सखी ! तुम घर जाओ मेरे पुत्रों को फुसलाओ, मैं थोड़ी देर इस एकांत स्थान में और रहूँगी।

देवि०—प्रिय सखी ! इस निर्जन स्थान में अकेली घूमने का क्या कारण है ?

शर्मिष्ठा—सखी ! क्या तुम नहीं जानती; हरिणी जब बाण की चोट से व्याकुल होती है, क्या वह और हरिणियों के साथ खेलती कूदती है ? या वह निर्जन बन में अकेली जाकर, दुखित होकर से रोया करती है। सखी ! प्राणेश्वर के विरह बाण से मेरा हृदय भी व्यथित हो रहा है। क्या मेरा मन दूसरी ओर लग सकता है ? (पथ्य में) हे देविके ! राजमहिषी कहां गईं ? उत्पाती लड़के मुझ से तो सँभाले नहीं जाते।

शर्मिष्ठा—सखी ! सुनती हो, अब तुम शीघ्र जाओ।

देवि०—सखी ! मैं तुझे इस अवस्था में अकेली छोड़ कर कैसे जाऊं ? क्या करूं, न जाने मेरा जी तो नहीं बनता ? (प्रस्थान)

शर्मिष्ठा—(स्वगत) हे प्राणेश्वर ! तुम्हारे विरह से यह जला हुआ हृदय किस प्रकार चंचल हो रहा है, यह मैं किसके आगे कहूँ ? (लंबी सांस लेती है) हे प्राणनाथ ! क्या तुमने इस अनाथा को जन्म भर के लिए छोड़ दिया ? हे जीवितेश्वर ! तुम्हें सब दयासिंधु कहते हैं, किंतु इस मंदभागिनी के कारण क्या तुम्हारे नाम पर कलंक लगेगा ? हे राजन् ! तुमने दरिद्र को अमूल्य रत्न देकर फिर छीन लिया ? अँधेरी रात में पथिक को दीया दिखा उसे घोर बन में ले जा कर बुझा दिया ? (पेड़ के नीचे खड़ी होकर) हा भगवन् अशोक वृक्ष ! तुम हजारों थके हुए पक्षियों को आश्रय देते हो, हजारों जंतु गर्मी के दिनों में तुम्हारी छाया में विश्राम लेते हैं। तुम बड़े परोपकारी हो, तुम धन्य हो, हे तरुवर ! जिस प्रकार कन्या को पिता वर को प्रदान करता है, तुमने भी उसी प्रकार मुझे प्राणेश्वर के हाथ प्रदान किया था। तुम्हारी इसी शीतल छाया में उन्होंने मेरा पाणिग्रहण किया था। हे तात ! इस अनाथा मंदभागिनी को भी आश्रय दो। (रोती है) अहा ! इस वृक्ष के नीचे, मैंने प्राण-नाथ के साथ कितना सुख भोग किया है सो कह नहीं सकती। (आकाश की ओर देख कर) आज वे सब दिन कहां गए ? हे प्रभु निशानाथ ? हे नक्षत्रगण ! हे मंद मलय समीरन तुम लोगों के सम्मुख मैंने जो सुख पहले किया है, क्या वह सब इसी जीवन में समाप्त हो गया ? (चिंता कर) क्या आश्चर्य है, बीते हुए सुख की याद आने से दुःख दूना होता है।

गीत (कवित्त)

याही कुँज तर वह गूँजत भ्रमर भीर,
याही कुंज तर अब सिर धुनत हैं।
याही रसना ते कर रस की रसीली बातें,
याही रसना ते अवगुणन गनत हैं।
आलम बिहारी बिन हृदय अचेत भए,
एहो दई हित कहे कैसे कै बनत हैं।
जेहि कंत नयन के तारे हुते निशिदिन,
तेहि कंत कानन कहानी सी सुनत हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने इस स्थान पर गा बजाकर कितना सुख किया है, उसकी सीमा नहीं, किंतु वे सब सुख आज कहां गए? अहा! कैसे आश्चर्य की बात है, वही देश, वही काल, वही मैं, केवल प्राणेश्वर के न होने से मुझे दुःख ही दुःख है। वीणा की तार टूट जाने से उसकी जो दशा होती है, प्राणेश्वर विहीन मेरे हृदय की भी ठीक वही दशा हो रही है। क्यों न होगी? बादलों के रूठ जाने से क्या नदी वेग से बह सकती है? हे प्राणनाथ! क्या तुम इस अभागिन को बिलकुल भूल गए? अपने साथियों के बिछुड़ जाने पर बड़े पर्वत का आश्रय पा यह हरिणी कुछ सुखी हुई थी, किंतु कर्मदोष से उसने भी उसे आश्रय देने से मुँह मोड़ लिया?

(राजा का अकेले प्रवेश)

राजा—अहा चंद्रमा की निर्मल किरणों से इस उपवन की कैसी शोभा हो रही है! जैसे कोई अत्यंत सुंदरी, दर्पण में अपनी अपूर्व सुंदरता को देख प्रसन्न होती हो, वैसे ही प्रकृति भी इस सरोवर के स्वच्छ जल में अपनी शोभा का प्रतिबिंब देखकर प्रसन्न हो रही है। नाना प्रकार के शब्दों से पूर्ण यह पृथ्वी इस समय तपस्विनी के समान मौन धारण किए हुए है। सैकड़ों चमकते हुए जुगनू रत्न ऐसे इस पत्ते से उस पत्ते पर चमक कर शोभा दे रहे हैं। हे विधाता। तुम्हारी इस विशाल सृष्टि में मनुष्य के सिवाय सब सुखी हैं। (चिंता करता हुआ आगे बढ़ता है) महिषी को खोजने के लिए चारों तरफ रथी और सवार भेजे गए हैं। किंतु अभी तक उनका कोई समाचार नहीं मालूम हुआ। उसका सोच करना वृथा है ईश्वर के मन में जो होगा सो होगा, किंतु मैं प्राणेश्वरी शर्मिष्ठा को यह मुख कैसे दिखाऊँगा? अहा! मेरे कारण प्यारी ने कितना अनादर सहन किया, उसकी याद आने ही से कलेजा फटने लगता है। (घूमता है) अहा! इसी वृक्ष के नीचे प्राणेश्वरी का पाणिग्रहण किया था, वह भी कैसा शुभ दिन था?

शर्मिष्ठा—देवयानी के कोप से मैं लड़कपन में ही राज्यभोग से वंचित हुई, इस बार भी उसके कारण, अपने प्रिय तक को भी खो बैठी। विधाता! क्या तूने मेरे सुख के नाश ही के लिए देवयानी को पैदा किया है? (लंबी सांस लेती है)।

राजा—(शर्मिष्ठा को देख आश्चर्यित होकर) यह क्या; मेरी प्राण से भी प्यारी प्रियतमा शर्मिष्ठा यहीं है?

शर्मिष्ठा—(राजा को देख, उसके पास जा और उसका हाथ पकड़कर) प्राणनाथ! क्या सपना देख रही हूं? नहीं, किसी देवता की कृपा से मूढ़ हो रही हूँ। नाथ! मुझे इस जन्म में आपके चंद्रानन के दर्शन होने की कोई आशा न थी।

राजा—प्रिये! मुझे तुम्हारे सम्मुख आने में बड़ी लज्जा आती है।

शर्मिष्ठा—नाथ! यह आप क्या कहते हैं?

राजा—प्रिये! मेरे कारण तुमने क्या क्या नहीं सहा?

शर्मिष्ठा—जीवितेश्वर। दुःख के बिना सुख होता है? बिना कठोर तपस्या किये सुख नहीं मिलता।

राजा—और, देखो रानी क्रोधित होकर...

शर्मिष्ठा—(नखरे से राजा का हाथ छोड़कर) महाराज तो आप इस स्थान से शीघ्र जाइए। कौन जानता है, महिषी यहां भी आ जाँय?

राजा—(शर्मिष्ठा का हाथ पकड़कर) तुम भी मुझसे विपरीत होगई, क्यों न होगी? भाग्य के फेर से सभी अनादर करते हैं।

शर्मिष्ठा—प्राणनाथ! आप मुख से ऐसा न कहिए। विधाता आपसे क्यों रुष्ट होंगे? आपका सूर्य के समान प्रताप, कुबेर के समान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कामदेव सा रूप, और आप की पत्नी भी रती तुल्य हैं।

राजा—प्रिये! राजमहिषी की बात न कहो। कारण वह प्रतिष्ठानपुरी त्याग, न जाने कहां चली गईं। अभी तक कुछ पता ही नहीं लगा।

शर्मिष्ठा—एं! ऐसा क्यों, महाराज!

राजा—मालूम पड़ता है कि क्रोध में आकर वे अपने पिता के यहां चली गईं।

शर्मिष्ठा—यह क्या सर्वनाश हुआ! आप भी रथ पर चढ़कर दैत्य देश को जाइए। आप नहीं जानते कि गुरु शुक्राचार्य महा तेजस्वी ब्राह्मण हैं? उनकी इतनी बड़ी क्षमता है कि क्रोपाग्नि से इस भुवन को भस्म कर सकते हैं।

राजा—प्रिये! मैं सब जानता हूँ, किंतु तुम्हें यहां अकेले छोड़, मैं किसी भांति भी दैत्य देश को नहीं जा सकता, सर्प क्या मणि को कहीं रखकर बाहर को जाता है?

शर्मिष्ठा—प्राणनाथ! आप दासी के लिए अधिक चिंता न करें, मैं बालकों को लेकर गली गली भीख मांग कर पेट भर लूँगी। क्या आप गुरु के भयंकर क्रोध से इस चंद्र वंश का सर्वनाश करने पर उद्यत हुए हैं?

राजा—प्रिये! मुझे, चंद्रवंश क्या तुमसे अधिक प्यारा है? तुम मेरी...(गला भर आता है)

शर्मिष्ठा—यह क्या प्राणवल्लभ? आप एकाएक चुप क्यों हो गए। क्यों, क्यों, क्या हुआ?

राजा—प्रिये! शैलाघात के पश्चात जिस प्रकार रणभूमि में अँधेरा छा जाता है, मेरा भी वही हाल है (मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिरता है)

शर्मिष्ठा—(गोद में उठाकर) हा प्राणनाथ! प्राणेश्वर! हा महाराज! क्या तुमने इस अभागिन को सचमुच छोड़ दिया? (जोर से रोकर) हे ईश्वर! क्या तेरे मन में यही था। हा! कुलतिलक!

देवि०—प्रिय सखी! तुम किस लिए (राजा को देखकर) हा यह क्या सर्वनाश हुआ, पूर्ण चंद्र धूल में क्यों लोट रहा है? हाय! हाय! यह कैसा सर्वनाश है?

राजा—(कुछ होश में आकर धीरे धीरे) हे शर्मिष्ठा। मुझे सदा के लिए बिदा करो, मेरा शरीर सुस्त हो रहा है, अब मेरा जो कैसा कैसा कर रहा है, आज से मेरे जीवन की आशा समाप्त हो गई।

शर्मिष्ठा—(आंखों में आँसू भरकर) हा प्राणेश्वर। इस अनाथा को भी साथ लिए चलो, मैंने माता, पिता, बंधु, बांधव सबको छोड़ केवल आप ही के श्रीचरण का आश्रय लिया है। इस, आपही के भरोसे रहनेवाली आज्ञाकारिणी दासी को क्या त्यागना उचित है?

देवि०—प्रिय सखी! इस समय इतना घबड़ाने से काम नहीं चलेगा, चलो हमलोग यहां से महाराज को ले चलें।

शर्मिष्ठा—सखी! जिसमें भला हो वह कर, मैं इस समय जड़वत हो रही हूँ। (दोनों जाती हैं।

(विदूषक का प्रवेश)

विदूषक—(कान पर हाथ रखकर) यह क्या एकदम, रनिवास में रोना पीटना क्यों होने लगा? इसका क्या कारण? बहुत देर से प्रिय मित्र के भी दर्शन नहीं हुए, मामला क्या है? द्वारपाल से सुना था कि महिषी पूर्णिका के साथ आ गईं, सो अब उनके लिए भी कोई चिंता नहीं है? फिर?

(एक परिचारिका का प्रवेश)

परिचारिका—हाय! हाय! सर्वनाश हो गया। रे सत्यानाशी दैव! क्या तेरे मन में यही था?

विदूषक—(घबड़ाकर) कहो! कहो! क्या बात है?

परिचारिका—क्या तुमने नहीं सुना। हाय! हाय! हम लोग कहाँ जायँगे? हम लोगों का क्या होगा? (रोती रोती चली जाती है)

विदूषक—दूर मुँहझौंसी कहीं की, यह तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोआ राइट ही करती हुई चली गई। मैं क्या आक समझा (विचारकर) इसमें संदेह नहीं कि महल में कोई घोर विपद् उपस्थित हुई है। किंतु-(मंत्री का प्रवेश) महाशय बात क्या है?

मंत्री—और क्या कहूँ? इस कालसर्प—(अर्धोक्ति) (आँखों में आँसू भर लेता है)

विदूषक—सो क्या? महाराज को क्या सर्प ने काट लिया है?

मंत्री—सर्प ही है, महाराज को जिस काले सर्प ने काटा है, उसका विष स्वयं धन्वंतरि भी नहीं उतार सकते और धन्वंतरि ही क्या? स्वयं नीलकंठ भी उस विष को अपने कंठ में धारण करने से डरेंगे। (लंबी साँस ले कर)

विदूषक—महाशय! मैं तो यह सब कुछ नहीं समझा।

मंत्री—समझना क्या है? गुरु शुक्राचार्य ने महाराज को शाप दिया है।

विदूषक—गुरु भार्गव ने? इस वृत्तान्त को आपने इतना शीघ्र कैसे जाना?

मंत्री—(लंबी साँस लेकर) यह दैवी घटना है, वह इतने दिनों उपरांत आज सायंकाल को इसी नगरी में आए थे।

विदूषक—हां दैवी घटना ही कहनी चाहिए तो फिर अब आपने क्या निश्चय किया सो कहिए।

मंत्री—मेरी बुद्धि कुछ काम नहीं कर रही है देखूँ राज्यपुरोहित इसमें क्या सम्मति देते हैं।

विदूषक—चलिए, मैं भी आपके साथ चलूँगा। हाय! हाय! क्या सर्वनाश हुआ। अस्तु, इससे क्या लाभ? महाराज! आप जहां जहां चलेंगे मैं भी आपके साथ चलूँगा। आपके बिना मैं न जीऊँगा।

(दोनों जाते हैं, पूर्णिका और देवयानी का प्रवेश)

पूर्णिका—राममहिषी? क्यों वृथा निंदा करती हो? जो होना था सो हो गया, अब इसका उपाय क्या है।

देवयानी—हाय! हाय! सखी मुझ सरीखी चांडालिनी और कौन होगी? अपने हृदयनिधि को मैंने अपनी ही इच्छा से खो दिया। अपने जीवनसर्वस्व धन को नष्ट कर दिया। मेरा क्रोध क्या पतिभक्ति से भी अधिक ठहरा। हाय! मैंने अपनी ही इच्छा से अपने मन्मथ को भस्म कर दिया है। मा वसुंधरा? क्या तू अब भी मेरी सरीखी पापिन का बोझ सहन करती है? हे प्रभो निशानाथ! क्या तुम्हारी शीतल किरणें अब भी मुझे भस्म नहीं करतीं? सखी! यमराज भी मुझे भूल गए क्या? हा! मेरे मन्मथ, क्या मैंने सचमुच तुझे भस्म कर डाला? (रोती है)

पूर्णिका—राजमहिषी! कामदेव के भस्म हो जाने पर रति ने जो किया था, आप भी वही कीजिए। महर्षि की कोपाग्नि से आपका कामदेव भस्म हुआ है, आप भी उन्हीं के शरणागत हूजिए।

देवयानी—सखी! मैं कैसे इस काले मुँह से महर्षि पिता को दिखलाऊँ? हा! प्राणनाथ! हा! राजकुलतिलक! हा नरश्रेष्ठ! हाय हाय! मैंने यह क्या किया? (रोती है)

पूर्णिका—चलो हम लोग फिर महर्षि के पास चलें, इसके सिवाय कोई दूसरा उपाय नहीं है।

देवयानी—सखी! मेरा यह पापमय हृदय कैसा कठोर है कि अब भी नहीं फटता, हाय हाय! प्राणनाथ ने मुझसे कहा कि "प्रिये अब तू मुझे आज्ञा दे मैं जंगल में जा, तपस्या कर, इस शरीर के बोझ को परित्याग करूँ" अहा नाथ! ऐसी बातें सुन कर भी प्राण ठहरे हुए हैं। (रोती है)

पूर्णिका—महिषी! चलिए! हमलोग भगवान् महर्षि के पास चलें। वे ही इस रोग की ओषधि दे सकेंगे। यहाँ वृथा रोने से क्या लाभ?

(रानी का हाथ पकड़े हुए जाती है)

इति चतुर्थांक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंचमांक।

प्रथम गर्भांक।

(प्रतिष्ठानपुरी—राजदेवालय के सम्मुख)

(विदूषक और कुछ नागरिकों का प्रवेश।)

विदू०—धत्तेरी की! तुमने तो बड़ा तंग किया, तुम लोग क्या पागल हो गए हो? देखो तो यही भगवान् सूर्य्य का रथ सिर पर आ पहुंचा और इस मार्ग के सारे वृक्ष भी छायाहीन हो गए हैं। तुम लोग क्या इस राजधानी का सत्यानाश करने पर उतारू हुए हो?

प्रथम—क्यों महाशय?

विदू०—क्यों क्या, सो भी अभी पूछना बाकी है। दो पहर से अधिक होगया स्नान संध्या भोजन किसी का भी ठिकाना नहीं। बतलाओ तो यही अब यदि भूख प्यास से व्याकुल होकर मैं इस राजा को कुछ शाप दे दूं तब क्या हो?

प्रथम—(हँसता हुआ) ठीक ठीक, पर आप अभी से यह कैसे कहते हैं कि दोपहर हो गई है। अभी तो सूर्य्य देव उदयाचल से नीचे उतरे ही हैं। ओस की बूँदें अभी तक वृक्ष के पत्तों पर मोतियों की तरह शोभायमान हैं।

विदू०—वाह! जानों सभी जानते हैं। (पेट पर हाथ फेरकर) अजी, तुमने ब्राह्मणदेव का उदर ब्रह्मांड देखा है या नहीं? यह सारी घड़ी इसी का बना है। अरे मूर्खो, जरा यह भी पहचानो कि तुम किससे बातें कर रहे हो। जानते नहीं कि मैं सूर्य्यसिद्धांत के रचयिता भास्कराचार्य्यभट्ट का प्र-अपरा पितामह हूँ।

प्रथम—भला इसमें कोई संदेह हो सकता है? आपकी पंडिताई क्या हमसे छिपी है?

दूसरा—(स्वगत) कहां के पगले से वास्ता पड़ा। दिन भर बक बक करने से भी बातें खतम नहीं होंगी। (प्रगट) खैर, यह तो ठीक है पर यह आपने कुछ भी नहीं बतलाया कि महाराज का छुटकारा इस प्रबल शाप से क्यों कर हुआ?

विदू०—अजी, सुनते भी हो। हम लोग ठहरे उदरदेव के पुजारी, फिर बिना इनकी पूजा किए क्या कोई काम कर सकते हैं। क्या यह भी नहीं जानते कि सब कामों में पहले ब्राह्मण-भोजन करवाना पड़ता है।

दूसरा—(हँसता हुआ) सो तो ठीक ही है, गो ब्राह्मण की सेवा करनी ही चाहिए।

विदू०—अच्छा! यह तो ठीक कहा तुमने—पहले मैं भोजन करूँगा, फिर तुम दोनों जने प्रसाद पाना, चलो तुम्हारे लिए गो ब्राह्मण दोनों की सेवा हो गई।

प्रथम—अच्छा, वह देखिए, मंत्री जी इधर ही को आ रहे हैं।

विदू०—वह कौन है। वाह! तो क्या तुम लोग इस समय हमें छोड़े जाते हो। पें! यह क्या? ब्राह्मण-सेवा छोड़कर पहले गो सेवा में तत्पर हो गए। देखो, खूब समझ लो आसरा दिलाकर निराश करोगे तो तुम्हारा लोक परलोक दोनों ही नष्ट हो जायगा।

दूसरा—(हँसता हुआ) नहीं नहीं, इससे आप बेखटके रहिए।

(मंत्री और कुछ नागरिकों का प्रवेश)

प्रथम—आइए महाशय, आइए। महाराज क्यों कर आरोग्य हुए, यह सुनने के लिए हम सब लोग उत्सुक हो रहे हैं। क्या आप कृपापूर्वक बतलाएँगे?

मंत्री—अजी, यह सब दैवी घटना है, बिना आंखों से देखे भला कोई विश्वास कर सकता है। महाराज की दुर्दशा देख कर रानीजी एक बार ही पगल सरीखी हो गई थीं तब उनकी प्यारी सखी पुर्णिका उनकी यह दशा देख कर उन्हें उनके पिता महर्षि शुक्राचार्य्य के पास ले गईं। वहां रानी जी ने पिता के सामने जब बहुत कुछ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विलाप किया तो महर्षि का हृदय करुणा से आर्द्र हो गया और उन्होंने कहा "वत्से, मेरी बात अन्यथा तो होने की नहीं पर तेरे स्नेह से इतना मैं कह देता हूं कि यदि राजा का कोई पुत्र उनकी बुढ़ौती ले ले तो वे इस विपत्ति से छूट सकते हैं, और कोई उपाय नहीं है।" रानी जी यह सुन कर तुरत घर आईं और उन्होंने राजा से सब समाचार कहे। तब राजा ने अपने बड़े पुत्र यदु को बुला कर कहा हे पुत्र महर्षि शुक्राचार्य्य के शाप से मैं जराग्रस्त हो गया हूं और अत्यंत क्लेश पा रहा हूं, सो तुम यदि मेरी यह बुढ़ौती एक हजार वर्ष के लिए ले लो तो मेरा इस विपत्ति से छुटकारा हो जाय। मेरे आशीर्वाद से तुम्हारे ये हजार वर्ष देखते देखते बीत जायँगे।"

दूसरा—हाय! बड़े दुःख की बात है, अच्छा महाशय तो फिर राजकुमार ने क्या जवाब दिया?

मंत्री—राजकुमार यदु, पिता के इस बचन को सुन कर विरस बदन हो बोले "पिता जी, बुढ़ौती की तरह दूसरा दुःख संसार में नहीं है, इसमें शरीर दुर्बल और कुत्सित हो जाता है और क्षुधा तृष्णा जाती रहती है और सारे सुखों से हाथ धोना पड़ता है इसलिए मुझे तो आप क्षमा करें।"

प्रथम—हरि हरि! कैसी लज्जा की बात है; तो फिर महाराज ने क्या कहा?

मंत्री—महाराज ने यदु की बात सुनकर क्रोध में आ उसे यह शाप दिया कि तेरे वंश में राज लक्ष्मी कभी भी स्थिर नहीं रहेगी।

प्रथम—ठीक है, उचित दंड हुआ। फिर?

मंत्री—फिर माहाराज ने पारी पारी से अपने तीनों पुत्रों को बुला कर यह बात कही पर सबों के अस्वीकार करने पर सबको शाप दे दिया।

दूसरा—हाय! यह तो बड़ी बुरी बात हुई, फिर क्या हुआ?

विदू०—वाह! तुम लोग तो 'फिर' कहके निश्चित हो गए, मंत्री जी की जिह्वा को क्या परिश्रम नहीं होता? आज मालूम पड़ता है कि वे बिना पंचानन हुए तुम लोगों का संतोष नहीं कर सकेंगे।

मंत्री—महाराज लड़कों के इस व्यवहार से कैसे दुःखी हुए सो क्या कहें। बिल्कुल निराश होकर मुंह नीचा कर बैठ गए। तब सब से छोटे पुत्र ने पिता के चरणों में प्रणाम कर कहा "पिताजी मुझे क्या नितांत बालक समझ कर आपने विसार दिया। आपकी इस बुढ़ौती को मैं लेने के लिए तैयार हूं। आप मुझे अपना यह रोग देकर आनंद से राज्य भोगिए। आप मेरे जीवनदाता हैं, यदि मेरी इस सामान्य सेवा से आपकी तुष्टि हो तो इससे बढ़ कर मेरा क्या सौभाग्य होगा।" महाराज पुत्र के इन बचनों को सुन कर ऐसे प्रसन्न हुए मानों स्वर्ग हाथ आ गया और पुत्र को उन्होंने को गोद में बिठा लिया।

प्रथम—वाह! वहा! क्यों न हो, ऐसी संतान का जन्म लेना सुफल है।

मंत्री—महाराज ने संतुष्ट हो कर कुमार को आशीर्वाद दिया कि तुम पृथ्वीश्वर होगे और राज लक्ष्मी बंदिनी की तरह चिर काल तक तुम्हारे यहां निवास करेगी।

प्रथम—अच्छा तब—

मंत्री—तब और क्या-महाराज अब जरा रोग से मुक्त हो कर राजकार्य्य करने लगे हैं। आज हमारे महाराज मानों कामदेव की तरह भस्म होकर फिर से जी उठे हैं। यह क्या सामान्य प्रसन्नता की बात है?

प्रथम—आपके मुंह से सुन कर हम लोगों को इन बातों पर ठीक विश्वास हुआ। अब कुछ दिनों बाद आज राजदर्शन प्राप्त होंगे। चलो राजभवन को चलें।"

मंत्री—मैं भी देवदर्शन को जा रहा हूं। अब ठहरूंगा नहीं।

(मंत्री और नागरिकों का प्रस्थान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विदू०—कमला माता की कृपा से किसी बात की कमी तो अपने राम को है नहीं और इस दरिद्र ब्राह्मण पर सब दया भी रखते हैं। पर तो क्या इन नागरिकों को यों छोड़ दूं। सो तो होने का नहीं। दूसरे के सिर मौज उड़ाने का मजा निराला ही है। भाई! तभी तो देवादिदेव महादेव घर घर भीख मांगते फिरते हैं।

(नटी और मंत्रियों का प्रवेश)

(सचकित) वाह! वाह! क्या कहना है, प्यास के पहले ही जल आ पहुँचा। क्यों न हो भाग फट पड़ता है तो ऐसा ही होता है।

(नटी से) हुँ हुँ अजी सुंदरी, इधर, इधर कैसे हुआ? तुम क्या स्वर्ग की अप्सरा हो मेनका हो? इंद्र महाराज ने क्या मेरा ध्यान भंग करने के लिए तुम्हें भेजा है?

नटी—क्यों महाराज, आप क्या राजर्षि विश्वामित्र हैं क्या?

विदू०—हः! हः! हः! करीब करीब। अच्छा मैं जैसा विश्वामित्र वैसी ही तुम मेनका। तो जब आही गई तो इंद्र अब मेरे सामने क्या चीज है। आओ, आओ, मनमोहनी आ जाओ।

नटी—चलो हटो, रास्ता छोड़ो हम लोग दरबार को जा रही हैं।

विदू०—सुंदरी, जहां तुम वहीं राजसभा हो सकती है। राजसभा और दर्बार से क्या काम। तुम तो मेरे ही मनोराज्य की राजरानी हो।

नटी—(स्वगत) इस पगले ब्राह्मण से पिंड तो खैर हो। (प्रकाश) अरे तुम्हें कुछ होश है या नहीं।

विदू०—हां, हां है तो, है तो (नाचता है)।

नटी—क्या आफत है?

(जल्दी से प्रस्थान)

विदू०—पकड़ो, पकड़ो। उस चोट्टी औरत को पकड़ो। मेरे अमूल्य मनोरत्न को चुरा कर भागी जाती है। (वेग से प्रस्थान)

प्र० मंत्री—यह कौन है?

द्वि० मंत्री—अजी यह भांड है भांड। इसकी बात और क्या पूछते हो, चलो चलें।

(प्रस्थान)

द्वितीय गर्भांक।

(प्रतिष्ठानपुरी-राजसभा।)

(राजा ययाति, रानी देवयानी, विदूषक परिचारिका, सभासदगण इत्यादि)

राजा—आज कैसा शुभ दिन है। आज बहुत दिनों के बाद भगवान ऋषिवर के चरणों का दर्शन होगा। इसका मुझे बड़ा आनंद हो रहा है।

रानी—प्राणेश्वर! पिताजी को लिवा लाने के लिए क्या केवल मंत्री जी अकेले गए हैं?

राजा—नहीं और सभासदगण भी उनके साथ भेजे गए हैं।

गीत—जलद तिताला।

जय डमेश शंकर सर्व्व गुणाकर
त्रिताप शंकर महेश्वर
हल हलांकित कंठ सुशोभित
मौली विराजित सुधाकर
पिनाक वादक शून्य निनादक
त्रिशूल धारक भयंकर
विरंचि वांछित सुरेंद्र सेवित
पदांबु पूजित परात्पर।

राजा—(सचकित) वह देखो, महर्षि आ गए। (सब का खड़े हो जाना)

शुक्रा०—हे राजन्! आपको जगदीश्वर चिरविजयी और चिरजीवी करें। (देवयानी से) वत्से! तेरा कल्याण हो और तू चिर काल तक सुखी रहे।

राजा—(प्रणाम करके) भगवन्! आपके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पधारने से चंद्रवंशियों की यह राजधानी आज पवित्र हुई । आइए विराजिए । (कपिल से) मुनिवर प्रणाम, बैठिए । (सबका बैठना)

कपिल-महाराज का कल्याण हो। (देवयानी से) भगिनी तुम चिर सुखिनी हो ।

शुक्रा०—हे राजन् ! मेरी प्रियतमा दैत्यराज-नंदिनी शर्मिष्ठा कहाँ है ।

राजा—(मंत्री से) आप शर्मिष्ठा देवी को तुरंत यहां ले आइए ।

मंत्री—जो आज्ञा महाराज । (प्रस्थान)

शुक्रा०—आपके सबसे छोटे पुत्र पुरु को इस महान चंद्रवंश का सर्व्वप्रधान करने ही के लिए विधाता ने यह लीला रची थी। जो हुआ, अच्छा ही हुआ। आप कुछ सोच न करें। विधाता के लेख को कौन मेट सकता है। (देवयानी से) वत्से ! तुम्हारे दोनों पुत्रों की अपेक्षा सपत्नी पुत्र द्वारा कुल की कीर्ति बढ़ी इसका तुम कुछ सोच मत करना। भगवान की इच्छा पर असंतुष्ट होना महा पाप है । विशेष कर होनी को कौन मेट सकता है ।

(शर्मिष्ठा और देविका के सहित मंत्री का पुनः प्रवेश)

शर्मिष्ठा—मैं महर्षि भार्गव के चरणों में प्रणाम करती हूँ और सभा के सब ही गुरुजनों की वंदना करती हूँ ।

शुक्रा०—राजकुमारी ! आज बहुत दिनों के बाद तुम्हारा चंद्रमुख देख कर मैं बड़ा प्रसन्न हुआ। कल्याणि ! बड़े अच्छे मुहूर्त में तुम्हारा जन्म हुआ था । जैसे अदिति पुत्र अपनी किरणों से सारे भूमंडल को आलोकित करते हैं, वैसेही तुम्हारा पुत्र अपने प्रताप से सारी पृथ्वी का राज्य करेगा । जाओ, बेटी आज से तू दासत्व से मुक्त हुई । देखो दुःख से ही सुख होता है, इसी लिये विधाता ने आरंभ में तुम्हें थोड़ा सा दुःख दिया था । आज इसका सारा भेद प्रगट हुआ । (राजा से) राजन् ! जैसे पहले आपको एक कन्यारत्न संप्रदान किया था आज इसे भी आपको समर्पण करता हूं। आप इस रत्न का भी समुचित सम्मान कीजि-एगा। अब इसे भी अपनी बगल में आसन दीजिए।

राजा—भगवान महर्षि की आज्ञा सिरोधार्य है । (देवयानी से) क्यों प्यारी, तुम क्या कहती हो ?

रानी—(हँसती हुई) प्राणनाथ ! आप इतने दिनों बाद अब मुझसे पूछने की याद आई।

शुक्रा०—वत्से ! तुमभी अपनी सपत्नी वाल्य सहचरी प्रिय सखी शर्मिष्ठा का यथोचित सम्मान करना और अपनी सगी बहिन की तरह पहले की नाईं इससे स्नेह करना ।

रानी—(उठकर शर्मिष्ठा का हाथ पकड़ के) प्रिय सखी, मेरे सब अपराध क्षमा करो ।

शर्मिष्ठा—प्रिय सखी ! इसमें तुम्हारा तो कोई अपराध नहीं, यह सब विधाता की लीला है।

रानी—चाहे जो हो आज से हम लोगों की पुरानी प्रीति पुनः संजीवित हुई। अब हम दोनों मिलकर पति-सेवा में तत्पर हों। (राजा से) आज मालती और माधवी नामकी दो लता एक विशाल रसाल तरुवर की आश्रित हुई हैं।

राजा—(प्रसन्नता से दोनों को पार्श्व में लि-कर) आज एक शाखा में युगल पारिजात पु-खिले हैं। (आकाश में कोमल वाद्य ।)

शुक्रा०—(आकाश की ओर देखकर) लीजि-इन्द्र की अप्सराएं भी इस मंगल कार्य्य की ब-देने के लिए इधर ही को आरही हैं ।

(आकाश से पुष्पवृष्टि)

विदू०—महाराज ! अब तक तो स्वर्ग मनोरंजन हो रहा था अब कुछ मर्त्यलोक का भी होना चाहिए। नर्तकी आई हैं, यदि आज्ञा हो बुलाई जांय ।

राजा—(हँसते हुए) हर्ज क्या है ?

विदू०—महाराज वह देखिए नटियां आ-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप नाचती हुई सभा में आरही हैं (धीरे से) सखा ! देखो जैसे मलय पवन के स्पर्श से नदी के हिल्लोलित होने से कमलिनी नाचने लगती है उसी प्रकार सुंदर रूप धर कर यह नटियाँ आपही आप नाचती हुई आ रही हैं।

राजा—(हँसकर धीरे से) यह क्यों नहीं कहते कि जैसे मन्द प्रवाह में कमलिनी तैरती है वैसे ही ये भी पंचसर तरंग में बहती हुई, इधर को आ रही हैं। (चेटियों का प्रवेश)

चेटी—(प्रणाम करके) राजदंपति चिरजीवी हों। (नाचना)

राजा—आहा कैसा मनोहर नृत्य है। सखे शुक्र, इन्हें यथोचित पुरस्कार दो।

शुक०—लीजिए, आपकी मनोकामना पूर्ण हो। अब आशीर्वाद देता हूं, कि तुम सब लोग चिरंजीवी होकर परम सुख से रहो और शर्मिष्ठा की कीर्तिपताका पृथ्वी पर चिर काल तक फहराती रहे।

राजा—भगवन्, आपके सिद्ध वाक्य अमोघ हैं। आज मुझे लौकिक सुख की पराकाष्ठा प्राप्त हो गई। (यवनिका पतन।)

समाप्त।

भारत में डचों का आगमन।

पोर्चुगीजों के साथही साथ यूरोपखंड के हालैंड देशवासी डच लोग भी यहां आए थे और फिरंगियों की शक्ति के निस्तेज होते ही ये लोग बढ़ चले और जो अधिकार और लाभ फिरंगियों को प्राप्त थे वे ही इनको भी प्राप्त हो गए। भारत के अधिकार करने की चेष्टा में फिरंगियों में इनका नंबर दूसरा है, पर अंगरेजों की भाग्यलक्ष्मी के आगे इन्हें भी सिर नीचा करना पड़ा था। इनके भारत में पदार्पण करने की ठीक तारीख का पता तो नहीं लगता, पर इतिहासकार सबही इस बात में सहमत हैं कि सोलहवीं शताब्दी के बीचो बीच ये लोग भारत में आ चुके थे। परदेश में स्थायी अड्डा गाड़ने के लिए सन् १५९८ ईस्वी में इनके जहाज दक्षिण भारत में पहुंचे थे। नेदरलैंड (डचों का देश हौलैंड) की संयुक्त ईष्ट इंडिया कंपनी को जो सन् १६०२ ई० में कायम हुई थी दक्षिणी भारत में अच्छी सफलता हुई और अब उसने इधर उधर भी निगाह दौड़ानी शुरु की।

पोर्चुगीजों से युद्ध।

सिवाय फिरंगियों के बंगाल में अब तक और किसी यूरोपियनों के चरण नहीं पड़े थे और सन् १६१५ ईस्वी में पहले पहल डच लोगों के जहाजों ने बंगोपसागर में प्रवेश किया। इन दिनों फिरंगियों (पोर्चुगीजों) का प्रताप दिन दूना रात चौगुना चमक रहा था। सिवासीन गनजालो की धाक खूब जम रही थी क्योंकर उसने सनद्वीप में अपनी राजधानी बना ली थी और अब वह अराकान राज्य के अधिकार करने की चेष्टा में था। गोवा के हाकिम ने भी एक जहाजी बेड़ा गनजालो की सहायता के लिए भेज दिया था। अब तो अराकान राज बहुत घबड़ाया और विवश हो उसने डचों से सहायता की प्रार्थना की। इन डचों के जहाज संयोग से उसी समय उसके बंदर में आए थे। डच लोगों को फिरंगियों के प्रताप की डाह थी ही इसलिए वे तुरंत राजा की सहायता के लिए तय्यार हो गए और अराकानाधिपति ने भी तुरंतही फिरंगी बेड़े पर आक्रमण कर देना उचित समझा और एक डच जहाजी बेड़े को अगुवा करके वह आगे बढ़ा। दिन भर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लड़ाई होती रही और यद्यपि युद्ध का कुछ फैसला नहीं हुआ पर फिरंगी लोग इस अचानक की बाधा से कुछ घबड़ा गए और रात्रि के समय उन्होंने पीछे हट जाना ही उचित समझा। इसके एक साल बाद अराकानियों ने डचों की सहायता से फिरंगियों को पुनः हराया जिससे उनके जी टूट गए और गनजालो के बल को ऐसा धक्का लगा कि तब से दिनों दिन उसका अधिकार छीजने लगा। बंगाल में पदार्पण करते ही डचों को अच्छे सगुन हुए।

कई वर्षों तक डच लोग बंगाल में यों ही व्यापार करते रहे और उन्होंने अपना कोई स्थायी अड्डा कायम नहीं किया। यद्यपि ऐसा भी कहा जाता है कि सन् १६२५ में ही हुगली में उन्होंने एक कोठी बना ली थी पर अंगरेजों के कागजों से तो यही पता लगता है कि सन १६३४ ईस्वी तक ये लोग केवल घूम फिर कर व्यापार किया करते थे। ये लोग उन दिनों अधिकतर मसाले का व्यापार करते थे, अर्थात् लौंग लायची इत्यादि। इन दिनों इनका व्यापार अभी जमा नहीं था और केवल थोड़े से जहाजों को लेकर वे बंगाल की खाड़ी के बंदरों पर व्यापार किया करते थे और कभी कभी देशी लोगों को सैनिक सहायता भी देते थे, जिसके बदले में उन्हें द्रव्य मिलता था।

सत्रहवीं शताब्दी के बीचोबीच गंगा के किनारे डच लोगों ने अपना स्थायी मुकाम कायम किया। इन दिनों बालेश्वर और हुगली के अंग्रेजी कर्म्मचारियों को जो आज्ञापत्र भेजा गया था उसमें स्पष्ट उल्लेख था कि "कंपनी के नौकर डचों की तरह रेशम और चीनी का व्यापार आरंभ कर दें और इस प्रकार के फरमान पाने की चेष्टा करें जिसमें डच लोगों की स्वतंत्रता या उनके अधिकार बढ़ने न पावें और फिर उन्हें छाती फुलाकर चलने का अवसर न रहे।"

वह फरमान जिसकी बदौलत उन्हें यह सब चैन नसीब हुए थे, उन्हें बादशाह शाहजहां से प्राप्त हुआ था। उस फरमान में यह भी उल्लेख था कि "डच लोगों के शिकायत करने पर बंगाल के सूबा को यह हुक्म दिया जाता है कि पुरानी रिवाज के खिलाफ इनसे ज्यादः चुंगी किसी हालत में वसूल न की जाय और न इस बारे में उनपर किसी किस्म के नए कानून वगैरः जारी किए जांय।" डचों की पहली कोठी खास हुगली में अंग्रेजों की बगल में बनाई गई थी, पर बाढ़ से गिर जाने के कारण यह यहां से दक्षिण की ओर कुछ दूर चिनसूरा में पुनः बनाई गई। यह सन् १६५२ ईस्वी में बनी थी। एक अंगरेज महाशय इसके बारे में यों लिखते हैं कि "डचों की कोठी के मुकाबले में इधर कोई ऐसी शानदार इमारत नहीं है। गंगा से कुछ हटकर एक बड़े अहाते के बीच यह इसलिए बनाई गई थी कि जिसमें नदी के बढ़ने से इसके गिर जाने का डर न रहे। व्यापारी कोठी को देखनेवाला तो इसे खासा एक किला कह सकता है। इसकी दीवारें खूब चौड़ी और ऊंची संगीन पत्थर की बनी हुई हैं और अन्य घेरे इत्यादि भी सब संगीन पत्थर के बने हैं। इन पर तोपें चढ़ी हुई हैं और इनके चारों ओर पानी से भरी हुई बड़ी बड़ी गहरी खाइयां हैं। भीतर से भी यह इमारत खूब लंबी चौड़ी है। कंपनी के डाइरेक्टर और कौंसिल के अन्य मेम्बरों के लिए अलग बहुतेरे आलीशान कमरे बने हुए हैं। बड़ी बड़ी दूकानों की पंक्ति अलग बनी है जहां कंपनी की खरीद बिक्री के माल का टाल लगा रहता है। अंगरेजी एजेंट का यह भी कहना है कि यह इमारत विलायत के बड़े रईसों के किलों ऐसी बनी हुई है तथा एक फरासीसी महाशय ने तो इसकी यहां तक प्रशंसा की है कि इसे "एशिया खंड की सबसे बड़ी और शानदार कोठी" बतला दिया है। ईस्वी १६६३ की २० वीं फर्वरी को विख्यात यूरोपियन यात्री टेवर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नियर हुगली में आया था और ता० २ मार्च तक वहां ठहरा था। उसने लिखा है कि "हालैंड वासियों ने मेरा अच्छा स्वागत किया और इस देश की जो कुछ देखनेवाली चीजें थीं सभी मुझे दिखाई सुनाईं। कई बार ये लोग किश्ती पर सवार कराकर मुझे सैर के लिए ले गए और यूरोप देश की बनी हुई नाना प्रकार की सामग्रियों तथा दावत इत्यादि से मेरी खूब खातिर की।"

अन्य यूरोपियनों की तरह डचों को भी अपनी कोठी को सुरक्षित करने की आवश्यकता हुई। सन १६५६ में जिस गढ़ी का नाम ऊपर आया है उसे बढ़ा कर सन १६८२ में एक खासा अच्छा किला बनवाया गया। इसके दक्षिणी द्वार पर सन १६८२ और उत्तरी द्वार पर सन १६८७ लिखा मिलता है और ओ० वी० सी० अक्षर खुदे मिलते हैं जो डच भाषा में उस कंपनी के नाम का संक्षिप्त संकेत हैं।

यह संकेतवाला पत्थर अब भी चिनसुरा के कमिश्नर के दफ्तर में मौजूद है। यह इमारत इतनी मजबूत बनाई गई थी कि जब सन १८२५ ईस्वी में अंगरेजों के दखल होने पर यह इमारत गिराई गई तो शीशम की धरनें जो वे लोग जावा से यहां लाए थे, ज्यों की त्यों मजबूत बनी रह गईं। डेढ़ सौ वर्ष बाद भी इन काठ की धरनों का कुछ भी नहीं बिगड़ा था। अपनी हस्ती के जमाने में यह किला अवश्य ही बहुत मजबूत होगा और इस व्यापारी समिति की रक्षा करता होगा।

सत्रहवीं शताब्दी के अंत में, बंगाल में अपना जमाने के लिए इन कई यूरोपियन जातियों में खूब ही द्वंद युद्ध चल रहा था। आपस में व्यापार की खींचा तानी के कारण एक दूसरे के खून का प्यासा हो रहा था। उधर हुगली के मुगल शासक अलग आफत मचाए रहता था। वह जब मौका मिलता इनके व्यापार में टांग अड़ाता और इन्हें अनावश्यक कष्ट देने में कसर नहीं करता था।

सन १६६२ ईस्वी में डचों ने शाहंशाह औरंगजेब से एक नया फरमान प्राप्त किया जिसमें उन्हें यह अधिकार दिया गया कि चाहे जहां जी चाहे अपने जहाज लगावें और अपने व्यापार की सामग्री यथा कपड़े, शोरा चीनी, रेशम, मोम तथा अन्य पदार्थ सब वे चाहे जहां चाहे ले आवें या ले जांय उन्हें कोई रोक टोक न की जाय। अपना माल वे जहां चाहे ले जायँ, जिसे चाहें बेचें, जैसा और जो माल चाहें जिससे खरीदें और अपने व्यापार में जैसे दलालों को चाहें नियुक्त करें और इसके लिए हुगली, पिपली और बालेश्वर में उन्हें केवल अढ़ाई रुपया सैकड़ा चुँगी देनी पड़ेगी। कोई भी उनकी नौकरी में बिना उनकी मरजी के प्रविष्ट नहीं हो सकेगा।

व्यापार की उन्नति।

यह फरमान क्या था मानों उन्हें व्यापार का एक प्रकार से पूरा अधिकार था। पर कार्य्य में आने के समय इसका ठीक ठीक बर्ताव नहीं होने पाता था और स्थानीय कर्म्मचारी लोग बादशाही आज्ञा का उल्लंघन कर के इन्हें नाना प्रकार का कष्ट पहुंचाते थे। अब मुरशिदाबाद, ढाका या दिल्ली तक शिकायत पहुंचाना भी कुछ खिलवाड़ न था। इसमें इतना खर्च और इतनी परेशानी होती थी कि यूरोपियन व्यापारी लोग स्थानीय देवताओं की ही पूजा करके अपना काम निकालते थे, जिसमें उनका खर्च भी खूब ही पड़ता था। पर इतनी रुकावट पर भी उनका व्यापार बढ़ चला था। उस समय के मुख्य यूरोपीयन यात्री टेवरनियर और बरनियर साहब उनकी रफ्तनी के कपड़ों का परिमाण देख कर आश्चर्य प्रगट कर चुके हैं, साथ ही चावल, तेल, घी, पाट, रस्सी, टाट का कपड़ा, कच्चा रेशम, शोरा, अफीम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चीनी, लाल मिर्च और मोम का भी ये लोग व्यापार करते थे। इस समय कोई भी यूरोपियन जाति इस विषय में इनकी बराबरी नहीं कर सकती थी। थोड़े ही वर्षों में इनके व्यापार की ऐसी धाक जम गई कि यूरोप के अन्य सारे व्यापारी इनके आगे दब गए। चिनसूरा की कोठी के अलावा मुरशिदाबाद के निकट कासिमबाजार में भी इन्होंने एक कोठी बना ली और वे कलकत्ते में आने जाने लगे। जहाजों का एक बंदर भी इन्होंने बना लिया तथा चंदननगर के दक्षिण ओर एक बहुत उम्दः आलीशान बाग भी लगा लिया। वह बाग आगे चल कर फरासीसियों ने इनसे छीन लिया था।

डच लोग शुरू ही से बड़े दृढ़ अध्यवसायी; तीक्ष्ण व्यापारी बुद्धिवाले थे और यथासंभव राजनैतिक झगड़े से अपना पल्ला बचाए रहते थे। बंगाल की उस समय की राजनैतिक गड़बड़ी में उन्होंने जान बूझ कर कभी भी हाथ नहीं डाला जिसमें उनके व्यापार को धक्का न पहुँचे, पर उस समय यह एक प्रकार से असंभव था कि वे बेदाग बचे रह जाते। सन् १६८६ ई० के अगस्त में उनके व्यापार में कुछ बाधा पड़ी जिसके लिए बटेविया से चार युद्धपोत मँगवाए गए और इसके कारण फिर रोक टोक करने की किसी की हिम्मत न पड़ी और ये लोग बेखटके अपनी चीनी और शोरे से लदे हुए जहाज नदी पर से ले जाने और लाने लगे। पर उनके युद्धपोतों के जाते ही फिर नया बखेड़ा उठ खड़ा हुआ और कुछ दिनों के लिये सचमुच ही डचों को हुगली की अपनी कोठी छोड़ कर हट जाना पड़ा। पर थोड़े ही दिनों में वे फिर लौट आए और इस बीच में उनके व्यापार में जो बाधा पहुँची थी वह दूर हो गई अब नए सिरे से उनका व्यापार और भी चमक चला। डच कुछ साधारण आदमी न थे। वह वही जाति थी जिसने अपनी जन्मभूमि में अपने अधिकार के लिए बड़ी दृढ़ता से आस्ट्रिया और स्पेन ऐसे बड़े बड़े देशों का सामना किया था और फिर यहाँ ये लोग सहज ही में अपने अधिकार क्यों कर छोड़ देते। जब कि व्यापार करने के लिए ये घर से निकले ही थे तो चाहे जो हो व्यापार करने की इन्होंने पूरी ठानी थी।

हुगली का अवरोध और उद्धार।

सन् १६९६ ई० में सूबा सिंह के विद्रोही होने पर इन यूरोपियन व्यापारियों को अपनी कोठियों की किलेबंदी करने का अच्छा अवसर हाथ आया। अब तक मुगल शासक उनकी इस कार्रवाई पर कड़ी निगाह रखते थे, पर जब एक विद्रोही सेना स्वयम् हुगली पर चढ़ आई तो मुगल शासक इच्छा रहने पर भी अपने बचाव का उपयुक्त प्रबंध नहीं कर सकता था। अवसर और मुग इस मौके पर इन यूरोपियन व्यापारियों ने किलेबंदी करने की आज्ञा मांगी और बिना आज्ञा बाट जोहे काम शुरु कर दिया। इस समय ऐसी आवश्यकता भी थी। सुवा सिंह उड़ीसा के अफगानों की सहायता से वर्धमान के राजा को परास्त करके कत्ल कर चुका था और विजय दुन्दुभी बजाता हुआ हुगली पर चढ़ा आया था। इस आफत में मुगल शासक ने डचों से सहायता मांगी पर वे अपनी ही कोठी के बचाव की तैयारी में लग रहे थे इसलिए विशेष सैनिक सहायता न दे सके। विद्रोही सेना ने हुगली का अवरोध किया और इसका बल देख कर मुगल गवर्नर महाशय ऐसे डरे कि रातो रात नाव पर सवार हो कर गंगा से भाग निकले। सर्दार के भाग जाने से किले का फाटक खुल गया और शहर से धनी अपना माल मता लेकर चिनसुरा डचों की शरण जा रहे। डचों ने भी अपने बचाव का फौरन ही इंतजाम किया। दो जहाजों को सज्जित कर उन्होंने हुगली के किले पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने के लिए भेज दिया। विद्रोही लोग उस
य वहां लूट पाट मचा रहे थे, सो उनके सिर
र जब ये तोप के गोले दनदना कर गिरने लगे
उनके होश हवाश जाते रहे और जी छोड़ कर
र मील दूर सतगांव की ओर वे लोग भाग
र। इस प्रकार से सहज ही में हुगली डचों
हाथ आ गई जिसे उन्होंने अपनी राजधानी
ना लिया। अब तो मुगल सर्कार भी इनको सम्मान
दृष्टि से देखने लग गई और आस पास के
ग भी इनकी प्रतिष्ठा करने लगे और बहुत
प्रजा चिनसूरा में इनके अधीन जा बसी।
गा के किनारे इस चिनसुरा में उन दिनों जितने
ी व्यापारी एकत्रित हुए थे उतने कलकत्ते
छोड़ कर और कहीं नहीं हुए। अरमनी
गों ने अपना एक अलग ही विभाग बनाया
और मुगलों के अत्याचार से बचने की
नशा से अपना माल मता तथा सारा व्यापार
कर ये लोग डचों ही के अधीन आ बसे।
नसुरा का सब से पहला गिर्जा उन्हीं का बनाया
आ है जिस पर सन् १६९५ खुदा है। अरमनियों
ढ़े चढ़े जमाने का निदर्शन स्वरूप अब केवल
क मात्र यही गिर्जाघर रह गया है।

सन् १७१२ ईस्वी के मार्च मास में बादशाह
ह आलम मर गया और राज्य में गोलमाल
ने की संभावन हुई तो डचों ने कासिमबाजार
कुछ उत्पात होता देख कर अपनी औरतें बाल
ने और खजाने को हुगली में भेज दिया और
क युद्ध पोत रक्षा के लिये नियत कर दिया,
र कोई बखेड़ा नहीं उठा और उसी साल
ीन बादशाह से उन्हें नया फरमान भी मिल
गया जिसमें यह आज्ञा थी कि उनके कर्माचारी
राजों को कोई रोक टोक न करे। इसमें
ई सन्देह नहीं कि अट्ठारहवीं शताब्दी के आरंभ
मुगल दर्बार में सारे यूरोपियन व्यापारियों में
की प्रतिष्ठा सब से अधिक थी। मुरशिदाबाद
के दर्बार में अन्य कंपनियों के एजंटों में डच एजंट
का आसन सब से प्रथम था और चिनसुरा की
कोठी को गंगा में * बया डालने की उन्हें आज्ञा
भी प्राप्त हो गई थी जिससे वे समझे कि व्या-
पार के नाते इस नदी पर औरों के ऊपर हमारा
अधिकार हो गया है।

यद्यपि इस समय इनका व्यापार खूब चमक
चला था, पर इस समय अंगरेजों की कंपनी पर
भी उनकी डाह भरी निगाह पड़ने लगी जो अलग
ही आगे बढ़ रही थी और जिसकी तेजी देख कर
उन्हें अपने व्यापार और अधिकार दोनों के नाश
हो जाने की आशंका उठ खड़ी हुई।

व्यापार में अंगरेजों का बढ़ना भला यह दृढ़
प्रतिज्ञ और कठोर परिश्रमी जाति चुपचाप क्यों
कर सह लेती, इसलिए अपने अर्जित प्रताप
और व्यापार के अधिकार को सुरक्षित रखने के
लिए इन्होंने अपने भरसक कोई बात उठा नहीं
रखी। गंगा के किनारे किनारे जहां जहां इनके
व्यापार का सिक्का जम गया था ये लोग अटल भाव
से जम गए। पर जिस मुगल अधिकार को डच
लोग अब तक अपने से बलवान मानकर उससे डरते
हुए चलते थे उसे जब सहजही में अंगरेजों ने खर्व
कर दिया तब तो व्यापार और राजनैतिक अधि-
कार को नए सिरे से विस्तृत करने की सभी
को सूझने लगी। अवसर भी उपयुक्त ही था,
क्योंकि सिराजुद्दौला को हटा जिस मीरजाफर को
अंगरेजों ने सिंहासन पर बैठाया था वह अंगरेजों
के दबाव से भीतर ही भीतर बहुत ही असंतुष्ट
था और उनके विरुद्ध षड्यंत्र कर रहा था। सन
१७५८ ईस्वी के नवंबर मास में उसने डच लोगों
से मिलकर अंगरेजों पर आक्रमण करने की

* लंगर से बांध कर लोहे का खोखला गोला
नदी पर मार्ग चिन्हित करने के लिए छोड़ा जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तय्यारी शुरु कर दी और दोनों में यह तय हुआ कि डच लोग बटेविया से जितने जहाज मँगा सकें मँगवा लें और मीरजाफर अपनी सारी स्थल सेना से उनका साथ दे।

सन १७५९ ईस्वी के नवंबर मास में नव्वाब साहब स्वयम् कलकत्ते पधारे और अपनी मित्रता को प्रगट करते हुए खास क्लाइव को एक बड़ी जागीर भी उन्होंने भेंट की, पर असल में वे डचों से गुप्त मंत्रणा करने के लिए यहां आए थे और चिनसुरा के डच अधिकारियों से उनकी यह मंत्रणा चल रही थी कि अंगरेजी कंपनी का किस तरह सर्व्वनाश किया जाय। अगस्त मास में डचों का एक जहाज बहुत से मलयायी सिपाहियों को लेकर गंगा के मुहाने पर पहुंचा, पर क्लाइव पहले से सावधान था, इस लिए उसने उस जहाज को आगे चिनसुरा जाने अथवा किनारे पर सेना उतारने से रोक दिया। डचों ने कहा कि हम लोग वास्तव में कोरोमंडल उपकूल की ओर जा रहे हैं, पर विपरीत वायु के कारण यहां आ लगे हैं और वायु बदलने पर हमलोग अपने रसद पानी से दुरुस्त होकर उधर को रवाने हो जांयगे। पर उनकी असली नियत का पता यों लग गया कि डचों के एक उच्च कर्मचारी को अपने खास बजरे पर सवार होकर चिनसुरा जाने की आज्ञा दी गई, पर संदेह होजाने के कारण कलकत्ते के सामने आते आते उसे रोक दिया गया और जब सब बजरे की तलाशी ली गई तो उसमें से अट्ठारह मलयायी अस्त्रधारी सिपाही निकले जो छिपकर डचों की कोठी को पहुँचाए जा रहे थे। अब अंगरेजों ने डचों की कौंसिल से इस बारे में नियमपूर्व्वक शिकायत की और फिर कुछ थोड़ी सी लिखा पढ़ी के बाद डचों का जहाज गंगा के मुहाने से हटा लिया गया पर यह जहाज तो केवल उस प्रकांड डच बेड़े का अगुवा था, जो वे बटेविया में तय्यार कर रहे थे और उसी वर्ष के अक्तूबर मास में वह बेड़ा भी बंगोपसागर में आ पहुंचा। आजतक इतना बड़ा यूरोपियन जहाजी बेड़ा गंगा के मुहाने पर कभी नहीं आया था। इसमें सात जहाज अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित थे, जिनमें से तीन जहाजों पर छत्तीस छत्तीस तोपें चढ़ी हुई थीं, तीन पर छब्बीस और एक पर सोलह तोपें थीं और सात सौ यूरोपियन पैदल सेना और आठ सौ मलयायी सिपाही जहाजों पर सवार थे। नव्वाब साहब उस समय दुबारा कलकत्ते आए हुए थे और मिलने पर क्लाइव ने उनसे कहा कि "आप डच लोगों से इसका जवाब तलब करें कि शांति के समय इतना सज धज का क्या प्रयोजन है? ऊपर से यह दिखाने के लिए कि डचों को समझाने और गंगा के ऊपर बढ़ने से रोकने के लिए जा रहे हैं नव्वाब साहब फौरन हुगली की ओर रवाना हुए पर असली उद्देश्य यह था कि दोनों मिलकर किस ढंग से अंगरेजों पर आक्रमण करें, इस युक्ति सोची जाय। हुगली से उन्होंने अंगरेजों को लिख भेजा कि "हमने डचों को कुछ व्यापारिक अधिकार प्रदान कर उनसे सब मामला तय कर लिया है और वे लोग भी इस बात पर राजी होगए हैं कि ज्योंही ऋतु बदलेगी वे अपना बेड़ा हटा ले जायँगे, पर क्लाइव के गुप्तचरों ने संवाद दिया कि डच लोग बड़ी शीघ्रता से सेना भर्ती कर रहे हैं, और उन्हें कवायद सिखा रहे हैं और अन्य प्रकार की भी युद्ध की तैयारी कर रहे हैं जिससे उनकी नीयत साफ नहीं मालूम पड़ती। इस समय चिनसुरा में डेढ़ सौ सिपाही पहले ही से थे और दिन पर दिन उनकी गिनती भी बढ़ती जा रही थी।

अंगरेजों के लिए यह बड़े संकट का अवसर आ पड़ा। ऊपर से उनसे और डचों से मित्रता और बिना कोई उपयुक्त कारण दिखाए वे बेड़े को रोक ही क्यों कर सकते थे, पर गंगा पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही कर डचों की इतनी सेना और युद्धोपयोगी सामान को निर्विघ्न चिनसुरा जाने देना भी मानों अपने को डचों के चंगुल में फँसाना था। यद्यपि उस समय नव्वाब से भी उनसे कोई खटपट न थी पर जब एक प्रबल यूरोपियन बेड़े की सहायता और उपयुक्त यूरोपियन सैन्यबल उसके पीछे खड़े हो जायँगे तो उसे संधी तोड़ते क्या देर लगेगी, यह भी क्लाइव समझ गया। इसलिए चाहे जो हो उसने तुरंत ही अपनी कार्रवाई करना ठान लिया। यद्यपि अंगरेजों के लिए यह एक बड़े जोखिम का काम था, क्योंकि डचों के साथ बंगाल में तो कोई वैर था ही नहीं, उधर यूरोप में भी उनसे और अंगरेजों से एक प्रकार की समझौती की मित्रता थी। सो इस अवसर पर प्रगट रूप से कोई छेड़ छाड़ करने से दोनों में युद्ध की आग तो अवश्य भड़क उठने की संभावना थी। दूसरे विलायत में कोर्ट आफ डायरेक्टरों द्वारा उसे महा विपत्ति का सामना था। पर क्लाइव में यही एक गुण था कि जब कोई अवसर तुरत ही काम करने का आ पड़ता था तो फिर वह हिचकता नहीं था और यह तो वह सदा कहा ही करता था कि "इंडियन गवर्नर को हमेशा गले में फांसी पहने हुए काम करना पड़ता है" और इस समय भी ऐसा ही अवसर आ उपस्थित हुआ था। इस समय की सबही अवस्था उसके प्रतिकूल थी। कलकत्ते में इस समय उसके पास केवल ३३० यूरोपियन सिपाही और बारह सौ देशी तिलंगे थे। कर्नल रसवेल साहब के अधीन केवल तीन सौ स्वेच्छा सैनिक थे जिनमें से आधे सवार थे। उसे केवल नदी ही की प्रभुता का भरोसा था। गंगा के दहिने किनारे पर थाना दुर्ग था, ठीक जहाँ इस समय बोटानिकल गार्डन है और उसके ठीक सामने चरनक का किला था। इन दोनों किलों को क्लाइव ने आक्रमण और रक्षा दोनों प्रकार के सामान से सुसज्जित करना प्रारंभ कर दिया। कप्तान नोक्स को इसका प्रबंध सौंपा गया। संयोग से यह अफसर मछलीपट्टन से यहाँ आ गया था और भाग्यवश बंगाल के ऊपरी देशों से करनल फोर्ड भी इस समय यहाँ आ पहुँचे। क्लाइव ने अपनी सारी सेना का अधिपति करनल फोर्ड को बना दिया। तीन देशी जहाज और एक अंगरेजी जहाज कलकत्ते में बुलाए गए और उन्हें नदी की रखवाली सुपुर्द की गई तथा गंगा नदी के मुहाने के पास तीन अंगरेजी जहाज इसलिए छोड़ दिए गए कि वे वहाँ बँधे हुए डचों के जहाजों पर तीक्ष्ण दृष्टि रखें।

अब डच लोग अंगरेजों से छेड़ छाड़ करने में हिचकते हुए ठहरे रहे और अक्तूबर मास में उन्होंने कलकत्ते की अंगरेजी कौंसिल के पास यह नियमित शिकायत भेजी कि हमारे जहाज गंगा में आगे क्यों नहीं बढ़ने दिए जाते और आपको हमारे जहाजों की तलाशी लेने का क्या अधिकार है? क्लाइव ने अपने इस बचाव का प्रबंध करने के पहले ही बड़ी चतुराई से नव्वाब से आज्ञा ले ली थी और उसने डचों को यह कुटिल नीतिपूर्ण उत्तर लिख भेजा कि हम लोग नहीं, स्वयम् नव्वाब आपके जहाजों को आगे नहीं बढ़ने देते हैं और यदि आप चाहें तो आपकी ओर से मैं नव्वाब से सिफारिश करूँ। क्लाइव की यह चतुराई काम कर गई और डचों को विवस हो अपना नकाब उतारना पड़ा। नव्वाव ने भीतर ही भीतर डचों को सहायता देने का वचन दिया था, पर खुल्लमखुल्ला वह उनकी तरफदारी नहीं कर सकता था, जब तक वह यह न देख लेता कि ऊँट किस करवट बैठता है। नव्वाब साहब का तो यही मूलमंत्र था कि जो जीतेगा उसीके साथी बन जायंगे। अस्तु विवस हो डचों ही को पहले तलवार नंगी करनी पड़ी और उन्होंने अपने जहाजों को आज्ञा दे दी कि नदी पर चढ़े चले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आओ और जो अंगरेजी जहाज मिलें उन्हें मार भगाओ। इसका परिणाम यह हुआ कि तुरंत ही अंगरेजों के सात छोटे जहाज पकड़ लिए गए और उनकी कलकत्ता और रायपुर की कोठियाँ लूट ली गईं।

क्लाइव यह समाचार सुन कर ऊपर से बहुत बिगड़ा पर भीतर ही भीतर खूब खुश भी हुआ कि चलो अच्छा हुआ जो सारी बदनामी का टीका डचों ही के माथे लगा। पहले तो उसने नव्वाब को डचों की इस शत्रुता का संवाद भेज दिया और फिर करनल फोर्ड को आज्ञा दी कि वारानगर में डचों की जो कोठी है उसे अधिकार करते हुए अपनी प्रधान सेना के साथ नदी पार होकर चिनसुरा और डचों की नवागत सेना के बीच जाकर डटे रहे जिसमें डचों की कोई सेना स्थल पर उतरने न पावे। ता० ४ नवंबर को डचों के जहाज संकरेल तक आकर लंगर डालकर खड़े हो गए क्योंकि आगे जाने से अंगरेजों के थाना और चारनक दुर्ग के गोलों की मार का भय था। दूसरे दिन सबेरे उन्होंने गंगा के दहिने किनारे अपनी सेना उतारी और अधिक बचाव के लिये मनीखाली नामक स्थान की ओर वे लौट गए। जो तीन अंगरेजी जहाज उनकी निगरानी कर रहे थे उनमें से एक का नाम था 'कलकत्ता' (बजन १६१ टन)। यह कप्तान बिल्सन के अधीन था। दूसरा हार्डविक (बजन ५१३ टन) कप्तान सेमसन के अधीन और तीसरा ड्यूक आफ डोरसेट था (बजन ५४४ टन) जो कप्तान कारेस्टर के अधीन था। डचों के वेही पूर्व कथित सात प्रबल जहाज थे जिन पर छत्तीस, छब्बीस और सोलह तोपें चढ़ी थीं। कप्तान बिल्सन की हिम्मत न पड़ी कि अपने तीनों जहाजों से इतने प्रबल बेड़े पर आक्रमण कर देवें। इस लिए बड़ी सावधानी से डचों की निगाह के सामने ही वे अपने जहाजों को कुछ हटा ले गए पर हरदम डचों की ओर से उन्हें पहले आक्रमण का खटका लगा हुआ था। डच कमांडर ने कहला भेजा कि अब अपने स्थान से जरा भी हटो बढ़ोगे तो तोप की बाढ़ दाग जायगी। अंगरेजी कप्तान को सिवाय पहरा देने के युद्ध करने की आज्ञा तो थी ही नहीं इसलिए कप्तान ने सब समाचार क्लाइव के पास भेज कर अपने कर्तव्य की आज्ञा मांगी। क्लाइव ने तुरंत ही स्पष्ट शब्दों में यह आज्ञा भेज दी। "डच कमांडर से फौरन कहो कि जो अंगरेजी जहाज, अंगरेजों के आदमी या माल जो गिरफ्तार किए गए हैं वे सब फौरन छोड़ दिए जांय, इस कारण के लिये क्षमा प्रार्थना की जाय और नदी छोड़ कर तत्काल ही डचों के जहाज चले जाएँ और यदि डच लोग यह अंगीकार न करें तो तुरतही उन पर आक्रमण कर दिया जाय। यद्यपि यह काम बड़ी जोखिम का था और उसके दो जहाजों के मुकाबले में अंगरेजों का केवल एकही जहाज था, पर क्लाइव को अंगरेजी नाविक बल पर दृढ़ विश्वास था और इसी विश्वास की बदौलत उसने अंगरेजी कंपनी की इतनी उन्नति की थी। सो यहां भी उसका यह विश्वास विफल नहीं गया। डच कमांडर ने अंगरेजी कप्तान के संदेशे का बड़ा रूखा जवाब दिया जिसपर अंगरेजों ने फौरन आक्रमण कर दिया। इस दिन नवंबर महीने की चौबीस तारीख थी और दोपहर ही कुहासा कुछ साफ हुआ अंगरेजों के जहाज युद्ध के लिए आगे बढ़े। सबसे आगे 'ड्यूक आफ डोरसेट" नाम का जहाज था, जो चलने में सबसे तेज था। इसने सीधे डचों के प्रधान जहाज पर आक्रमण किया। इसके पीछे और दोनों जहाज चले और दो घंटे तक बड़ी सरगर्मी से युद्ध होता रहा, जिसका परिणाम यह हुआ कि सदा की तरह इस बार भी बृटिश नाविक बल की विजय पताका फहराई। डचों के छः जहाजों ने तो आत्मसमर्पण किया और यद्यपि सातवाँ जहाज भाग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर थोड़ी देर में वह भी पकड़ लिया गया। आज से डेढ़सौ वर्ष पहले का नाविक युद्ध भी एक निराला ही जल संग्राम था, जब हाथों हाथ के युद्ध में यद्यपि अंगरेजों की ओर के बहुत से लोग घायल अवश्य हो गए थे, पर मरा कोई भी न था। डचों के सब जहाज अवश्य जाते रहे पर उनके आदमी भी सौ से अधिक घायल नहीं हुए थे। ठीक तीन वर्ष बाद इसी प्रकार से फरासीसियों के मुकाबले में भी चंदन नगर में क्लाइव की विजय हुई थी।

फोर्ड साहब की कार्रवाई।

स्थलयुद्ध में भी अंगरेजों ही की विजय हुई। उसी समय चार तोपें, चार सौ देशी तिलंगे और सौ अंगरेजी सिपाही लेकर फोर्ड साहब कलकत्ते से आगे बढ़े। गंगा के बाएं किनारे से बढ़ते हुए आकर उन्होंने बारानगर की डचों की कोठी अनायास ही दखल कर ली और श्रीरामपुर में नदी पार होकर वे चंदननगर की ओर चढ़े चले गए। यह चंदननगर अब तक भी अंगरेजों ही के अधिकार में था। अस्तु २३ तारीख की रात को फोर्ड की सेना ने फरासीसियों के एक बाग में डेरा डाला। चिनसूरा में डचों ने मंत्रणा कर एकाएक इस सेना पर आक्रमण कर देना ही निश्चित किया और दो दिन पहले गंगा के दहिने किनारे पर उनकी जो सेना उतारी गई थी उसके आने का आसरा न देखा। डचों के पास चार तोपें तीन सौ तिलंगे और एक सौ बीस डच सिपाही थे। अस्तु चिनसुरा से चलकर उसी रात को उन्होंने भी फोर्ड की सेना से दो मील दूरी पर डेरा डाल दिया। दूसरे दिन प्रातःकाल ही अंगरेजी सेना ने डचों पर आक्रमण कर दिया और उनकी तोपों को छीन कर उन्होंने तितिर बितर कर चिनसुरा की ओर भगा दिया। अपने पास सैन्यबल की कमी देखकर फोर्ड साहब सीधे चिनसुरा न गए और ताजी सेना की सहायता के आसरे वहीं रुके रहे, जिसकी उन्हें खबर मिल चुकी थी। यह सेना भी कप्तान नोक्स साहब की अधीनता में उस दिवस संध्या को पहुंच गई जिसमें चार सौ तिलंगे २२० अंगरेजी सिपाही और नव्वाब साहब के भेजे हुए एक सौ सवार भी थे। नवाब साहब खासी दो रंगी चाल चल रहे थे। फोर्ड साहब का अनुमान था कि डचों की और सेना भी कल सवेरे तक आ जायगी। इस लिए कलकत्ते से उन्होंने आज्ञा मंगवाई। नियमपूर्वक अभी तक युद्ध घोषणा नहीं हुई थी, इसलिए युद्ध आरंभ करने के पहले उन्होंने कलकत्ते से ठीक ठीक समाचार मंगवा लेना उचित समझा। उनका यह पत्र रात्रि के समय क्लाइव को पहुंचा जिस समय वह ताश खेल रहा था। अपना खेल बिना छोड़े ही एक कागज का टुकड़ा उठा कर उसने लिख भेजा "मेरे प्यारे फोर्ड, देर करने की क्या जरूरत है, फौरन चढ़ाई कर दो। कल कौंसिल की नियमित आज्ञा भेजी जायगी।"

विदेरा की लड़ाई।

प्रातःकाल फोर्ड ने अपनी सेना को उपयुक्त रूप से युद्ध के लिए तैयार कर लिया और वह डचों का आसरा देखने लगा। पर फोर्ड की स्थिति बड़ा जोखिम की थी, क्योंकि उसे डचों की दोनों ओर की तोपों के गोलों का भय था, जिनमें एक दल तो संध्या ही को हार कर चिनसुरा को भाग गया था और दूसरी दक्षिण ओर से नई फौज आने वाली थी, पर उसने अपनी सेना के लिए जो स्थान चुना था वह बहुत उत्तम था। उसके सामने गंगा का सूखा हुआ एक वह था, जिसके उत्तरी कूल पर उसकी तोपें लगी थीं और शत्रु को इधर ही से आना आवश्यक था। अभी अपनी सेना को फोर्ड ने दुरुस्त किया ही था कि इसी बीच में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डचों की सेना दक्षिण की ओर से बढ़ती हुई दिखाई दी। इसका अफसर करनल रौशल नाम का एक फरासीसी योद्धा था और करीब दस बजे दिन को ये लोग अंगरेजी सेना के सामने आए। ये लोग तीन दिन से बराबर थके हुए चले आ रहे थे, पर अपनी अधिक संख्या के भरोसे इन्होंने आतेही आक्रमण कर दिया। यह युद्ध यद्यपि थोड़ी ही देर तक हुआ पर अपनी भयंकरता में कम न था और फैसला भी हाथो हाथ हो गया। आध ही घंटे में यह युद्ध जिस पर सब कुछ निर्भर था तय हो गया और विजय लक्ष्मी फिर भी भाग्यवान अंगरेजों की अंकशायिनी हुई। युद्ध की भयंकरता इसी से समझ लीजिए कि डचों की ओर से एक सौ बीस यूरोपियन और २०० देशी सिपाही मारे गए थे और ३५० युरोपियन तथा २०० देशी सिपाही बंदी हुए थे। अंगरेजों के सवारों ने भी इस तेजी से शत्रु का पीछा किया कि तीन दिवस पहले संकरेल में डचों की जो सेना उतरी थी, उसमें से केवल चौदह आदमी भाग कर चिनसुरा पहुंच पाए। यह हार डचों की अंतिम हार कही जा सकती है, क्योंकि इसी हार ने उनके भारत अधिकार के स्वप्न पर पानी फेर दिया।

संधि की शर्तें।

विजय प्राप्त कर अब फोर्ड फौरन ही चिनसुरा पर अधिकार करने चले। डच लोग इस समय बाधा देने के लिए तैयार न थे और उन्होंने सुलह का पैगाम भेजा क्योंकि विजेता से किसी प्रकार की दया की आशा व्यर्थ थी क्योंकि उन्होंने अंगरेजों का सर्वनाश करने में कोई बात उठा नहीं रखी थी और अब उनकी सब पोल खुल गई और उन्हें बड़ी अप्रतिष्ठा के साथ हार खानी पड़ी। इस लिए उन्हें यह पूरा खटका था कि अब विजेता उन्हीं शर्तों पर संधि करेगा जिससे आगे के लिए उनसे फिर कोई बट न रह जाय। इस समय इनका हिमायती भी कोई न था। नव्वाब साहब ने भी डचों के साथ मेल किसी प्रकार का संबंध न था, यह जतलाने के लिए और सर्वदा विजयी पक्ष की ओर रहने की प्रबल आकांक्षा रहने के कारण अपने पुत्र मीरन को अधीन छः हजार सवार देकर उसे अंगरेजों के पास भेज दिया जिससे उन्हें डचों को एक बार निकाल बाहर करने में सहायता मिले अथवा जिस प्रकार से चाहे अंगरेज लोग इस सेना से काम लें। अब तो डच लोग क्लाइव की मुट्ठी में थे। उसने भी उन्हें अब बिलकुल परकटा करके छोड़ देना उचित समझा जिसमें आगे से फिर कभी बंगाल के राजनैतिक आकाश में वे लोग सर उठाने का साहस न कर सकें। वह स्वयम् चिनसुरा पहुंचा और डच कंपनी तथा नव्वाब दोनों के साथ तय ऐसा प्रबंध कर लेना निश्चय किया जिसमें अंगरेजों के प्रभुत्व में कोई मीन मेख न रह जाय। डचों के सब बंदियों को उसने इस शर्त पर छोड़ देना स्वीकार किया कि ये सब लोग यूरोप को रवाने कर दिए जांय और आगे से डच तो कोई नई सेना भरती करें और न किसी प्रकार का किला इत्यादि बनवावें। बिना अंगरेजी आज्ञा के उनका एक आदमी से अधिक कभी भी आने नहीं पावे। उनके सब सिपाहियों के शस्त्र रखवा लिए जांय और अपनी साधारण रक्षा के लिए केवल यूरोपीय सिपाही ये लोग रख सकेंगे। इसके अलावा उन्हें यह भी स्वीकार करना पड़ा कि युद्ध हमारी ही नियत बिगड़ी थी और हमीने छेड़ खानी की थी तथा हर्जाना के तौर पर उन्होंने अंगरेजों को तीन लाख रुपया भी देना स्वीकार किया। यद्यपि ये शर्तें डचों के लिए बड़ी अपमानजनक थीं पर विवश हो डचों को इन्हें स्वीकार करना ही पड़ा और यूरोप में दोनों पक्ष के कमिश्नर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह संधि स्वीकृत हो गई। क्लाइव का अपने यों जोखिम लेना आज सफल हुआ।

अब तो नव्वाब भी जो डचों का भीतरी मित्र उनका शत्रु हो गया और उन्हें तंग करने। डच बिचारों ने अंगरेजों से सहायता ही। अभी तक युद्ध के हरजाने के बाबत उन्हें ६२८) रु० अंगरेजों के देने थे, सो अंगरेजों ने रूखा जवाब दिया कि उक्त पावना अदा जाने पर हम लोग तुम्हारी ओर से नव्वाब से सिफारिश करेंगे। डचों ने फौरन वह उधार दा दिया और अंगरेजों ने भी अपनी प्रतिज्ञा की और नव्वाब से साफ साफ डचों पर व्यापार करने की मनाही कर दी।

डचों की परवर्ती अवस्था।

यद्यपि इसके बाद भी डचों की कोठी चिनसुरा में थी और वे अंगरेजों से मेल जोल रखते ए व्यापार करते थे पर उनकी भीतरी अभिलाषा पर बिलकुल पानी फिर गया और मन सोस कर उन्हें रह जाना पड़ा। जब तक क्लाइव बंगाल में रहा, उनके इस संबंध में कोई फर्क नहीं होने पाया था, पर क्लाइव के जाते ही जो नवीन गवर्नर साहब आए उनसे कौंसिलवालों से नहीं ही और डचों से भी पुरानी प्रीति स्थिर न रह की और इसी कारण एक अवसर पर डचों के किले के नीचे से जब अंगरेजी गवर्नर का जहाज गुजरा तो उन्होंने मामूली सलामी की तोप नहीं दागी क्योंकि क्लाइव के समय डच चौर अंगरेजों में यह बंदोबस्त हुआ था कि बंगाल में व्यापार के जितने अड्डे हैं सब गिन लिए जायँ और तब हर एक जाति को सम-विभाग करके बाट दिए जायँ जिसमें जिसको जितने माल बिनवाने की आवश्यकता है वह अनायास बिनवा सके, पर क्लाइव के जाते ही यह प्रबंध मिट दिया गया और फ्रेंचों की ओर अधिक झुकाव हो जाने के कारण डचों को हानि उठानी पड़ी। इस कारण डच लोग और भी असंतुष्ट हुए पर अंगरेजों को भी डचों का यह व्यवहार पसंद न आया। इस समय जापान के तांबे की मांग बहुत थी, डचों के पास तांबा बहुत था और यद्यपि अंगरेज लोग इसका अच्छा दाम दे रहे थे, पर उन्हें चिढ़ाने के लिए डचों ने वह माल फरासीसियों के हाथ बेच डाला। चाहे जो हो डचों का भाग्य फिर न चमका और यद्यपि उनकी कुछ व्यापारी कोठियां इधर उधर रह गईं पर बंगाल में और फिर धीरे धीरे सारे भारत में इन भाग्यवान अंगरेज व्यापारियों ही का सिक्का जम गया।

सांख्य आख्यायिका।

आर्षग्रन्थों में सृष्टि उत्पति के विषय में हमारे प्राचीन ऋषियों ने कई प्रकार के मत प्रकट किए हैं, पर सबों का लक्ष्य वही एक आध्यात्मिक ही रहा है अर्थात् किसी न किसी प्रकार से नित्य के दुःख से छूटकर सुखी होजाना अर्थात मोक्ष प्राप्त करना। नाना प्रकार के उपायों के बीच भगवान कपिल ने अपने जो सिद्धांत प्रगट किए हैं वे सांख्य दर्शन में लिपिबद्ध हैं। मोक्ष का उपाय बतलाने के पहले स्वभावतः ही पहले सृष्टि की उत्पत्ति का प्रकरण आया है क्योंकि पहले यह दुःख सुख का सिलसिला आरंभ क्योंकर हुआ यह बतला कर तभी उससे छूटने का उपाय भी बतलाया जा सकता है। अस्तु सांख्यकार सृष्टि उत्पति का जो कारण बतलाते हैं वह सबसे सहज, सरल और बोधगम्य है, न तो वेदान्तियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की तरह वे अनिर्वचनीय ब्रह्म और माया के फेर में पड़ते हैं और न न्याय के तर्क जाल में अपने को फँसाते हैं। सृष्टि तत्व का उनका सीधा साधा उत्तर यही है कि यह सारा ब्रह्मांड प्रकृति का विकाश है। सत्, रज तम तीनों गुणों की जब साम्यावस्था होती है तब सृष्टि अपनी प्रकृति अथवा मूल अवस्था में रहती है और जब इन तीनों गुणों में कमी बेशी होने लगती है तब ही नाना प्रकार की सृष्टि प्रत्यक्ष गोचर होती है, पुनः जब इस त्रिगुण का नाच समाप्त होकर ये तीनों गुण अपनी कारण प्रकृति में लय हो जाते हैं तब प्रलय हो जाता है। इसी त्रिगुण के नाच से मोहित होकर प्राणी दुखी होता है, यद्यपि वास्तव में उसका रूप शुद्ध पुरुष है। इसलिए इस त्रिगुण के मोह को काट कर अपने शुद्ध रूप में अधिष्ठित हो जाना ही मोक्ष हो जाना है। प्रकृति यद्यपि सब क्रिया कर रही है पर स्वयं उसमें क्रिया करने की शक्ति नहीं है, पुरुष के आधार पर वह क्रिया करती है जैसे लोहा चुंबक के आकर्षण से क्रिया करता है वैसे ही पुरुष अपने बल से प्रकृति को नाना प्रकार के नाच नचाकर आप अलग तटस्थ रहता है। थोड़े में जो वेदान्त का ब्रह्म और माया है वही सांख्य की पुरुष प्रकृति है। इस विषय में वेदान्त और सांख्य में भेद नहीं, यद्यपि तर्कजाल के शौकीन पंडित नाना प्रकार के भेद निकाल सकते हैं। मैं अलग हूँ, और सब प्रकृति का नाच है ऐसा दृढ़ निश्चय होनाही सांख्य के अनुसार मोक्ष पाना है। इस विषय का सांख्य दर्शन में खुलासा वर्णन किया गया है जिसका खुलासा करने का यहां स्थान नहीं है। इस विषय की ओर जिन्हें रुचि हो वे वहीं देख सकते हैं, यहां केवल सांख्य के चौथे अध्याय की उन कथाओं का वर्णन किया गया है जिनके दृष्टान्त को देकर क्योंकर पुरुष अपने स्वरूप को पहचान सकता है इसका वर्णन है।

राजपुत्रवत् तत्वोपदेशात्॥

सूत्र॥१॥

अर्थ—विवेक तत्वोपदेश से ही जाग्रत होता है, जैसा राजपुत्र को विवेक हुआ था।

राजपुत्र की कथा—गंड नक्षत्र में जन्म ग्रहण करने से या तो वह बालक मरे या पिता माता दोनों मरें ऐसा उल्लेख है, सो एक राजकुमार का उसी अशुभ नक्षत्र में जन्म हुआ, इसलिये राजा ने उसे त्याग दिया और चंडालों के यहां उसका पालन पोषण होने लगा और वह उन्हीं चांडालों की वृत्ति सीख कर उसी काम में निपुण हो गया। इधर कुछ काल बाद जब राजा की मृत्यु हो गई तो मंत्री लोग राजकुमार के पास पहुँचे और उसे पूर्व वृतांत कह कर चैतन्य कराया कि आप राजपुत्र हैं चल कर राज्य कीजिए और इस चांडाल वृत्ति का त्याग कीजिए। राजकुमार को चैतन्य हुआ और उसने चांडाल वृत्ति छोड़ कर राजवृत्तिका अवलंबन किया।

यहां इस कथा से यह उपदेश दिया गया है जैसे मंत्रियों के बिना बतलाए राजपुत्र अपने को चांडाल समझता था उसी प्रकार हम लोग बिना गुरु उपदेश के अपने स्वरूप को भूल कर अपने को तुच्छ जीव माने हुए हैं, जब तत्वज्ञान होगा तो अपने को शुद्ध पुरुष, प्रकृति से अलग जान कर दुःख से छूट जायंगे।

इस सिद्धांत को गरुड़ पुराण में भी यों वर्णन किया गया है।

यथैकहेममणिना सर्वं हेममयं जगत्
तथैव ज्ञातमीशेन ज्ञातमाप्यखिलं भवेत्

जैसे सुवर्ण आभा युक्त मणि के बीच से देखने में सारा जगत सुवर्ण मय दीखता है, इसी प्रकार से ईश्वर को जान लेने से सब जाना जाता है।

ग्रहाविष्टो द्विजः कश्चिच्छूद्रोऽहमितिमन्यते
ग्रहनाशात्पुनः स्वीयं ब्राह्मण्यं मन्यते यथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

REFERENCE BOOK

माया विष्टो तथा जीवो देहोऽहमिति मन्यते
तदपनाशात् पुनः स्वीयं रूपं ब्राह्मस्मिमन्यते।

जैसे कोई द्विज, ग्रहदशा से अपने को शूद्र समझने लगता और उस ग्रह दशा के टल जाने पर पुनः अपने को ब्राह्मण जान लेता है उसी प्रकार से माया अथवा प्रकृति से भूला हुआ पुरुष अपने को प्रकृति का जीव मानकर छोटा रहा है पर जब अज्ञान रूपी ग्रह दशा उसके ऊपर से उतर गई तो फिर अपने को ब्राह्मण मान कर सुखी हो जाता है।

अब यह विवेक का उपदेश सीधे अपने को मिले तो दूसरे को उपदेश मिलते हुए सुनकर ज्ञान हो सकता है। इसे सिद्ध करने के लिये आगे एक पिशाच की कथा कही है।

पिशाचवदन्यार्थोपदेशेऽपि ॥ २ ॥

इसकी कथा इस प्रकार है। एक गुरु उपदेश देने के लिये अपने शिष्य को निर्जन स्थान में ले गए और वहां उन्होंने शिष्य को उपदेश दिया। गुरु के पीछे एक पिशाच छिपा हुआ था। वह उपदेश सुन कर मोक्ष को प्राप्त हो गया।

तात्पर्य यह कि आत्मज्ञान यदि किसी मध्यस्थ से भी मिल जाय तौ भी उससे मोक्ष होने में कोई संदेह नहीं है।

अतः स्त्री शूद्र इत्यादि भी एक दूसरे के मुख से श्रवण कर मुक्त हो सकते हैं इसे सिद्ध करने के लिये अलग सूत्र है।

आवृत्तिरसकृदुपदेशात् ॥ ३ ॥

तात्पर्य यह कि मूर्खों को बार बार उपदेश देने से तब ज्ञान होता है।

छान्दोग्योपनिषद में श्वेतकेतु को अरुणी ऋषि ने इसी प्रकार से बार बार उपदेश दिया जिससे उसे ज्ञान हुआ था।

अब सूत्रकार यह कहते हैं कि यदि गुरु न हो दूसरे हितू के द्वारा बतलाने से भी ज्ञान हो सकता है और किस प्रकार से होता है।

पिता पुत्रवदुभयोर्दृष्टत्वात् ॥ ४ ॥

यह कथा इस प्रकार है। एक ब्राह्मण बड़ा दरिद्र था। वह घर में अपनी आसन्नप्रसवा भार्य्या को छोड़ कर भिक्षार्थ दूर देश को चला गया। बहुत दिनों के बाद जब वह लौटा तब तक उसका पुत्र युवा हो चुका था। उसने पहले पुत्र को नहीं पहचाना, पर फिर स्त्री के बतलाने से दोनों ने दोनों को पहचाना।

इसी प्रकार से अपने जीवन मृत्यु के संबंध को पहचान कर मनुष्य को वैराग्य होता है और वैराग्य होने ही से ज्ञान होता है। राग दुःख का घर है, यह दिखाने के लिए अगला सूत्र है।

श्येनवत सुखदुःखी त्याग वियोगाभ्याम् ॥ ५ ॥

त्याग से सुख दुःख दोनों ही प्राप्त हो सकता है इसलिये श्येन की कथा यों कही गई है:—

एक मनुष्य ने एक बच्चे के बाज़ को पकड कर पालना शुरू किया और उसे वह नाना प्रकार के फल मिष्टान्न खिलाता रहा। कुछ समय पाकर वह बाज़ बड़ा हो गया। अब उस मनुष्य ने उसे बंदी रखना अनुचित जान बन में छोड़ दिया। वह पक्षी कैद से छूट कर सुखी हुआ पर उस मनुष्य के वियोग का उसे दुःख भी हुआ। इससे तात्पर्य यह निकला कि सुख भी दुःख से मिला हुआ है इस लिए सुख से भी राग करना उचित नहीं, इसके विषय में एक कथा और भी है। एक चील को कहीं से एक मांस खंड मिल गया, वह उसे लेकर उड़ी जाती थी, उसे देख कर अन्य बलवान चीलों ने उसका पीछा किया और उसे चोंचों से मारना और उसका अंग बिदारना आरंभ किया। अंत को उसी मांसखंड को अपनी आपत्ति का मूल जान कर उस चील ने उसे फेंक दिया और सारी चीलों ने भी उसका पीछा छोड़ दिया तथा वह सुखी होकर अपने स्थान को चली गई।

यह पुस्तक वितरित न की जाय
NOT TO BE ISSUED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्याज्य विषयों को त्यागना ही उचित है, इसे दिखाने के लिए अगला सूत्र कहते हैं—

अहिनिर्लयनीवत् ॥ ६ ॥

जैसे सर्प अपनी केंचुली पुरानी होने पर त्याग देता है। एक सर्प अपनी केंचुली त्याग कर उस केंचुली को धूर मिट्टी से सनी देख कर मोह वश वहीं बैठ रहा और 'यह मेरी है' इस मोह से उससे दूर नहीं गया। थोड़ी देर में एक मदारी ने आकर उसे पकड़ लिया। इसी प्रकार से प्रकृति के आनन्द को सांप के केंचुली की तरह त्याग कर पुनः उसके मोह में पड़ना उचित नहीं। नहीं तो फिर बंधन में पड़ोगे। त्याग भी ऐसा होना चाहिए कि फिर न युक्त हो सके। इसे दिखाने के लिए अगला सूत्र—

छिन्नहस्तवद्वा ॥ ७ ॥

एक मुनि ने अपने संगी की कुटी में जाकर कुछ फल इत्यादि चुरा लिये। जब चोर कह कर पकड़े गए तो उन्होंने अपराध स्वीकार कर प्रायश्चित्त पूछा। संगी ने कहा कि सिवाय दोनों हाथों के काट डालने के दूसरा प्रायश्चित्त नहीं है और तदनुसार उसने राजा को सूचित कर अपने हाथ काट डाले। तात्पर्य्य यह कि निषिद्ध कार्य्य अर्थात् प्रकृति में फँसना उचित नहीं और यदि मोहवश फंस भी गए तो छिन्नहस्त की तरह उसे त्याग देना चाहिए जैसा कि गीता में कहा है—

"असंग शस्त्रेण दृढ़ेन छित्वा" इत्यादि।

मोक्ष की बाधा स्वरूप मोह की चिन्ता को मन में स्थान देना अनुचित है, इसे दिखाने के लिये अगला सूत्र—

असाधनानुचिन्तनं बन्धाय भरतवत् ॥

भरत नाम के प्रसिद्ध राजा (जिनके नाम से भारतवर्ष प्रसिद्ध है) सब त्याग कर बन में तप कर रहे थे और मोक्ष होने में उन्हें देर न थी, एक हरिणी को बच्चा प्रसव के बाद ही मरते देख कर उन्हें मोह हुआ और बच्चे को उठाकर वे पालन करने लगे और उसमें ऐसे मोहाविष्ट हुए कि सब छोड़कर रात दिन उसी में लगे रहे। एक दिन वह बच्चा बड़ा होकर कहीं चला गया और शोकातुर हो भरत ने उसी के वियोग में प्राण त्याग दिए। इस कारण उनके मोक्ष में बाधा पहुँच गई और उन्हें मृग का शरीर मिला। इस लिये संग का त्याग करना उचित है, जिससे मोह न हो। इसे दिखाने के लिए अगला सूत्र—

बहुभिर्योगे विरोधो रागादिभिः कुमारी शङ्खवत् ॥ ९ ॥

कुमारी की चूड़ियों की तरह; बहुतों के संग से झगड़ा होता है इसकी कथा इस प्रकार है—

एक कुमारी के घर अतिथि आए। उस समय अन्न तय्यार न रहने के कारण वह धान कूट कर चावल बनाने लगी, पर हाथ की चूड़ियां बजने लगीं, उसने सब चूड़ियाँ उतार कर केवल एक ही एक चूड़ी रहने दी तब शब्द भी नहीं हुआ और अतिथि को भी पता न लगा कि इसके घर में अन्न न था। तात्पर्य यह कि अकेले ही रहने से एक से दो होने ही से ध्यान में विघ्न होने की संभावना है, जिसे दिखाने के लिए अगला सूत्र भी है—

द्वाभ्यामपि तथैव।

एक से दो होना भी विघ्नकारक है क्योंकि वादाविवाद से झगड़ा चल पड़ता है। अतः उसके त्याग से सुखी हो जाता है। इसे दिखाने के लिए आगे पिंगला की कथा है।

निराशः सुखी पिंगलावत्।

राज्यनर्तकी पिंगला नाम की वेश्या अपने प्रेमी की बाट जोहते जोहते अर्धरात्रि तक जागती रही और शय्या पर लेटने पर भी उसे निद्रा नहीं आती थी। एक दिन उसने कामोपभोग से दुःख उत्पन्न होता जान कर यह आशा त्याग दी और उस दिन से वह आनन्दपूर्वक सोने लगी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तात्पर्य्य यह कि आशा के पाश से बँधे हुए कभी शांति प्राप्त नहीं हो सकती और ज्ञान का प्रतिबिंब उसके मैले अंतःकरण में नहीं पड़ता। अस्तु आशा के साथ क्रिया का आरंभ करना ही दुःख है इसलिए जो सहज ही प्राप्त हो उसी में संतुष्ट रहना। इसके स्पष्ट करने के लिए अगला सूत्र—

अनारंभेऽपि परगृहे सुखी सर्पवत ॥१२॥

जैसे सर्प अपने लिए घर नहीं बनाता दूसरे के घर में आनंदपूर्वक निवास करता है। तात्पर्य्य यह कि सुख की सामग्री बटोरने की चेष्टा करने से चित्त स्थिर नहीं रहेगा, इसलिये यथालाभ में संतुष्ट रहना। गीता में भी कहा है।

"अनारंभो शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः।" इत्यादि पर ज्ञानार्जन के लिये निश्चेष्ट नहीं होना और नाना प्रकार के शास्त्रों को श्रवण मनन कर उसका सार ग्रहण करना चाहिए। व्यर्थ के तर्कों में पड़ कर समय नष्ट करने से कार्य की सिद्धि न होगी। इसे दिखाने के लिये अगला सूत्र—

बहुशास्त्र गुरुपासनेऽपि सारादानं षट्पदवत ॥१३॥

जैसे भौंरा नाना प्रकार के पुष्पों पर बैठ कर उनमें से उनका सार केवल मधु ही ग्रहण करता है, उसी प्रकार नाना शास्त्रों के अध्ययन से केवल उनका सार ग्रहण करना चाहिए। उनके तर्क वितर्कों में पड़ जाने से चित्त की एकाग्रता नष्ट हो जायगी और यही एकाग्रता समाधि के लिये आवश्यक है। इसे दिखाने के लिये अगला सूत्र—

बहुकारवन्नैकाचित्तस्य समाधि हानिः ॥ १४ ॥

तीर बनाने वाले की तरह एकाग्र चित्त होना चाहिए, क्योंकि तीर बनानेवाले को तीर के नोक के अग्र भाग को जो बड़ा सूक्ष्म होता है, बनाने के समय बहुत ही एकाग्र चित्त होना आवश्यक होता है। नहीं तो जरासी असावधानता से वह नष्ट हो जाय। इसकी एक कथा इस प्रकार है—एक तीर बनानेवाला अपने कार्य में मग्न था, इसी समय उसके सामने से राजा की सवारी निकली पर उसने सवारी नहीं देखी। राजा का एक सेवक पीछे छूट गया था, उसने आकर तीर बनानेवाले से पूछा "तुमने इधर से राजा की सवारी जाती देखी है" उसने कहा नहीं। पास ही एक अन्य मनुष्य खड़ा था। वह बोला "अभी तो सवारी तुम्हारे सामने से गई है, तुमने नहीं देखी?" तीर बनानेवाले ने उत्तर दिया "मैं अपने कार्य में ऐसा मग्न था कि मुझे इसकी कुछ भी खबर नहीं हुई।" तात्पर्य यह कि जैसे तीर बनानेवाला एकाग्र चित्त होकर अपने कार्य में लगा था और सामने से राजा की बड़ी सेना चली गई और उसने नहीं देखा, उसी प्रकार से साधकों और तत्व जिज्ञासुवों को शास्त्रों के अन्य आडंबरों को त्याग कर केवल सार ग्रहण करते हुए एकाग्र चित्त होकर ध्यान करना चाहिए, जिसमें समाधि की हानि न हो। पर इसका यह तात्पर्य नहीं है कि शास्त्रों के बतलाए हुए नियमों की भी कुछ परवाह न की जाय। ऐसा करने से कार्य सिद्धि न होगी, इसे दिखाने के लिये अगला सूत्र कहते हैं—

कृतनियमलङ्घनादानर्थक्यं लोकवत् ॥ १५ ॥

जैसे लोक व्यवहार में भी जो अपनी की हुई प्रतिज्ञा अथवा सामाजिक नियम का पालन नहीं करता उसे सब लोग त्याग देते हैं, इसी प्रकार से साधन के लिये शास्त्रों के नियम को उल्लंघन करने से भी चित्त की एकाग्रता नहीं होगी, इस लिये इन नियमों के पालन करने में भूल करने से भी हानि उठानी पड़ेगी। इसे दिखाने के लिये अगला सूत्र—

तद्विस्मरणेऽपि भेकीवत् ॥ १६ ॥

अर्थात् नियमों को भूल जाने से कष्ट उठाना पड़ता है। इसे स्पष्ट करने के लिये आगे की कथा है।

एक राजा मृगया करता हुआ बन में विचर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा था। वहां उसे एक सुंदरी युवती दिखाई दी। पूछने पर विदित हुआ कि वह राजकन्या है। जब राजा ने उसका पाणिग्रहण करना चाहा तो उसने इस प्रतिज्ञा पर राजा के साथ जाना स्वीकार किया "कि मुझे पानी मत दिखाना, जब पानी दिखाओगे मैं चली जाऊंगी।" अस्तु वह राजा के साथ रहने लगी। एक दिन खेल खिलवाड़ में थकित होकर उस रमणी ने राजा से पूँछा "पानी कहाँ मिलेगा।" राजा ने उस प्रतिज्ञा को भूल कर उसे सरोवर दिखा दिया और वह रमणी जो वास्तव भेकराज की कन्या थी, पानी देखते ही भेकी होकर जल में कूद पड़ी। राजा ने बहुतेरा प्रयत्न किया पर पुनः वह न मिली। तात्पर्य यह कि भूल से नियम का उल्लंघन करने से भी पीछे से पछताना पड़ता ही है। मनन न करते रहने से उपदेश भूल जायगा और उसका कोई फल न होगा। इसे दिखाने लिये अगला सूत्र—

नोपदेश श्रवणेऽपि कृत कृत्यता परमर्शादृते विरोचनवत् ॥ १७ ॥

इसकी कथा इस प्रकार है—"एक समय इन्द्र और विरोचन दोनों ब्रह्मा से उपदेश लेने गए। ब्रह्मा ने दोनों को एक ही सा उपदेश किया। घर आकर इन्द्र उस पर मनन करता रहा, इस लिये मोक्ष को प्राप्त हुआ और विरोचन ने उस पर मनन नहीं किया इस लिये उसे ज्ञान नहीं हुआ। तत्पर्य्य यह कि उपदेश श्रवण कर उस पर निरंतर मनन करते रहना आवश्यक है। इसके फल प्रत्यक्ष हैं। इसे दिखाने के लिये अगला सूत्र—

दृष्टस्तयोरिन्द्रस्य ॥ १८ ॥

तात्पर्य्य यह कि मनन इत्यादि से इन्द्र को ज्ञान का अनुभव हुआ। यह प्रत्यक्ष ही है। यह सिद्धि शीघ्र न भी हो तो घबड़ाना उचित नहीं क्योंकि समय पा कर सब ही कार्य्य की सिद्धि होती है। इसे दिखाने के लिये अगला सूत्र—

प्रणति ब्रह्मचर्योपसर्पणानि
कृत्वा सिद्धिर्बहुकालात्तद्वत् ॥ १९ ॥

ब्रह्मचर्य्यपूर्व्वक गुरु की भक्ति इत्यादि बहु दिनों तक करने से सिद्धि प्राप्त होती है जैसी कि इन्द्र को प्राप्त हुई। तात्पर्य यह कि निरंतर गुरु सेवा अर्थात् उनके पास रह कर ध्यान से उपदेश सुन कर मनन करते हुए सिद्धि होती है जैसे कि गीता में भी कहा है—

"तद्विद्धी प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया
उपदेश्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः।"

तात्पर्य यह कि "बड़ी श्रद्धापूर्व्वक प्रणाम करके और सेवा से प्रसन्न करते हुए ज्ञानियों से प्रश्न करने पर तब ज्ञानी तत्व का साक्षात कराते हैं।" और भी श्वेताश्वेतरोपनिषद में कहा है—

यस्य देवे पराभक्ति यथा देवे तथा गुरौ
तस्यैते कथिताह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः।

जिसे देव में भक्ति है और उसी प्रकार गुरु में भी भक्ति है उसको तत्व साक्षातकार होता है पर इससे यह तात्पर्य्य न समझना चाहिए कि मोक्ष मिलने के लिये कोई नियमित बहुत अधिक काल लगेगा। इसे दिखाने लिये अगला सूत्र—

न कालनियमो वामदेववत् ॥ २० ॥

वामदेव की तरह इसमें कोई काल का नियम नहीं है अर्थात् "मोक्ष कोई काल और स्थान से नियमित नहीं है क्योंकि तत्काल भी ज्ञान और मुक्ति हो सकती है। पूर्व्व जन्मार्जित साधन बल से जैसे कि 'वामदेव को तत्काल ही ज्ञान हो गया था।" वृहदारण्यक उपनिषद में इसकी कथा है कि ज्ञान होने पर वामदेव को स्मरण हो आया कि "पूर्व्व काल में मैं ही सूर्य्य और मनु भी था" इत्यादि। तात्पर्य्य यह कि "मैं ही एक हूँ" नाना प्रकार के शरीरों को धारण करता रहा। जैसा कि गीता कहती है—

"सर्वं समाप्नोषिततोऽसि सर्वः
तू सब में पूर्ण है, तू ही सब है" पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण से अन्य प्रकार की सगुण उपासना को भी व्यर्थ नहीं समझना चाहिए इसे दिखाने के लिये अगला सूत्र—

अध्यस्त रूपोपासनात पारम्पर्येण यज्ञोपासकानामिव ॥ २१ ॥

तात्पर्य्य यह कि सगुणोपासना से भी सिद्धि प्राप्त होती है। पर इससे मोक्ष नहीं प्राप्त हो सकती, इसे दिखाने के लिये अगला सूत्र—

इतर लाभोऽप्यावृत्तिः पंचाग्नियोगतो जन्मश्रुतेः ॥ २२ ॥

अर्थात् अग्निहोत्र इत्यादि कर्म्मों से बार बार का जन्म मरण नहीं छूट सकता। इस लिये क्या ग्रहण और क्या त्याग करना उचित है ? इसे दिखाने के लिये अगला सूत्र—

विरक्तस्य हेयहानमुपादेयोपादानं हंसक्षीरवत्

विरक्त पुरुष को ग्रहणीय और त्याज्य वस्तु का विवेक होता है, जैसे हंस जल को त्याग कर दूध ग्रहण कर लेता है। तात्पर्य यह कि यह पुरुष प्रकृति रूपी संसार में प्रकृतिरूपी जल अर्थात् संसार त्यागने और दुग्ध, ग्रहण करने योग्य है और यह कार्य्य केवल विवेकी हंस जन ही कर सकते हैं, अविवेकी कौवे नहीं कर सकते। पर क्षीर-नीर-विवेक तभी होता है जब नीर क्षीर के साथ मिला होता है। सत्संग का प्रभाव दिखाने के लिये अगला सूत्र—

लब्धातिशययोगाद्वा तद्वत् ॥ २४ ॥

अर्थात् जो लोग सिद्धि प्राप्त कर चुके हैं उन को सत्संग से विवेक प्राप्त होता है। तात्पर्य्य यह कि जैसे केवल हंस ही में यह शक्ति है कि वह क्षीर नीर का विवेक कर सकता है वैसे ही जिसे विवेक प्राप्त हो गया है वही संसार वासना त्याग कर मोक्ष का प्रयत्न करता है। राजा अलर्क को दत्तात्रेय के सत्संग से लाभ हुआ था। इस लिये विषयियों का संग करना उचित नहीं। इसे दिखाने के लिये अगला सूत्र—

न कामचारित्वं रागोपहते शुकवत् ॥ २५ ॥

कोई यह न समझे कि वासना को रखते हुए भी कभी मोक्ष हो सकता है। इस लिये वासना के बस जो लोग हैं उनका संग करना नहीं चाहिए। क्योंकि जिसे वासना ही बाँधे हुए हैं उसे फिर छुटकारा कहाँ, जैसे शुक, तोता, अपनी सुंदरता के कारण यथेच्छ विहार नहीं कर सकता जिसमें सुंदर पदार्थों के चाहनेवाले उसे पकड़ न लेवें। और जैसे वासना में बंधे रहने के कारण व्यास जी को मुक्ति प्राप्त नहीं हुई और उनके पुत्र शुकदेव वासना रहित होने से मुक्त हो गए। इस लिये वासना निमज्जित लोगों का संग नहीं करना। शुक की उपमा अगले सूत्र में भी चली है यथा—

गुणयोगाद्बद्ध शुकवत् ॥ २६ ॥

गुण के योग से मनुष्य बँधता है, अर्थात् त्रिगुण के मोह से मनुष्य बंधा है, जैसे गुण अर्थात् रस्सी से शुक बांधा जाता है, जैसे बहेलिया रस्सी द्वारा शुक का बंधन करता है उसी प्रकार से त्रिगुण रूपी रस्सी से जीव बंधा है। यदि कोई यह कहे कि एक बार भोग कर लेने से फिर उसपर से मन हट जायगा और शांति हो जायगी यह भी भ्रम है। इसे दिखाने के लिए अगला सूत्र—

न भोगाद्रागशांतिर्मुनिवत्।

विषयों के भोग से राग की शांति नहीं होती, मुनि की तरह अर्थात् सौवरी नाम के एक मुनि थे, उन्होंने भोग से राग की शांति समझी थी, पर उन्हें शांति नहीं हुई और विष्णुपुराण में उनकी उक्ति इस प्रकार है—

आमृत्युतो नैव मनोरथाना-
मन्तोऽस्ति विज्ञातमिदं मयाऽद्य।
मनोरथा शक्ति परस्य चित्तम्
न जायते वै परमार्थ संगे॥

आज मुझे विदित हुआ कि मृत्यु तक वासना का अंत नहीं होता। वासनाबद्ध मन कभी भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परमार्थ की सिद्धि नहीं कर सकता। इसमें प्रकृति के अवगुणों पर लक्ष्य करना आवश्यक है, इसे दिखाने के लिए अगला सूत्र—

दोष दर्शनादुभयोः ॥ २८ ॥

अर्थात् प्रकृति और उसके परिणाम दोनों में दोष देखने से शांति मिल सकती है। अर्थात् प्रकृति के गुण बार बार जन्म मरण त्रिताप इत्यादि दोषों को देख कर उससे चित्त हटा लेना। पर मलिन चित्तवाले को ज्ञान नहीं होता इसे दिखाने के लिए अगला सूत्र—

न मलिन चेतस्युपदेशबीजप्ररोहोऽवत् ॥ २९ ॥

मलिन चित्त पुरुष के हृदय में उपदेश का अंकुर जमता ही नहीं, राजा अज की तरह। इसकी कथा इस प्रकार है कि "राजा अज के यहाँ स्वर्ग की एक अप्सरा श्राप वश उनकी स्त्री होकर रही थी पर उसे यह बरदान भी था कि जब स्वर्ग की कोई वस्तु उसके अंग से स्पर्श करेगी तो पुनः वह स्वर्ग में आ जायगी। एक दिवस राजा और रानी दोनों वनविहार कर रहे थे, उसी समय आकाश मार्ग से नारदमुनि बीणा बादन करते हुए जा रहे थे। उनकी बीणा पर स्वर्ग के पारिजात कुसुम की एक माला थी जो रानी पर गिर पड़ी और रानी उसके स्पर्श से तुरत मनुष्य देह त्याग स्वर्ग लोक को प्राप्त हुई। राजा अज बड़े शोकातुर हुए और वसिष्ठ ऐसे गुरु के समझाने से भी उन्हें ज्ञान नहीं हुआ और इसी शोक में उन्होंने प्राण त्याग दिए। तात्पर्य्य यह कि माया मोह से आच्छन्न प्राणी के मन में ज्ञान का अंकुर उदय होना कठिन है।

फुलही फलही न बेत, यद्यपि सुधा बरषहि जलद।
मूरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलहिं विरंचि सम॥
(तुलसीदास)

इसे और भी स्पष्ट करने के लिए अगला सूत्र—

नाभासमात्रमपि मलिनदर्पणवत् ॥ ३० ॥

मलिन दर्पण में अभास मात्र भी नहीं पड़ सकता अर्थात् ज्ञान का अंकुर जमना तो दूर रहा जैसे मलिन दर्पण पर प्रतिबिंब तक भी नहीं पड़ता वैसेही वासना से मलिन चित्त पर ज्ञान की परछांही तक भी नहीं पड़ पाती। मलिन चित्त कोई ज्ञान की बातें करता दिखाई भी दे तो वह ज्ञानी नहीं हो सकता। इसे दिखाने के लिए अगला सूत्र—

न तज्जस्यापि तद्रूपता पंकजवत् ॥ ३१ ॥

यद्यपि कमल कीचड़ ही से उत्पन्न होता है पर कीचड़ और कमल एक नहीं हो सकते अर्थात् यह कोई आवश्यक नहीं कि कारण के गुण कार्य्य में अवश्य ही हों, क्यों शायद यदि कोई यह कहे कि जब संसार और मोक्ष दोनों प्रकृति ही जन्य हैं तो मोक्ष हो ही नहीं सकता पर ऐसा नहीं है, दोनों प्रकृतिजन्य होने पर भी दोनों समान गुणवाले नहीं हैं।

कीचड़ और कमल की तरह, क्योंकि प्रकृति जन्य संसार दुःख सहित है और मोक्ष दुःख रहित है। तात्पर्य्य यह कि मलिन चित्तवाले ज्ञान की बातें यथार्थ ज्ञान नहीं हैं और उसको उसे मोक्ष नहीं मिलता। अब आगे यह बतलाने के लिये कि नाना प्रकार की सिद्धि से मोक्ष नहीं होता, अगला सूत्र है—

न भूतयोगेऽपि कृत कृत्यतोपास्य
सिद्धिवदुपास्य सिद्धिवत् ॥ ३२ ॥

जैसे उपास्य देव की उपासना से ज्ञान सिद्धि होती है वैसे ही किसी को नाना प्रकार की सिद्धियों की उपासना से मोक्ष नहीं हो सकता अर्थात् जो लोग अणिमा लघिमा इत्यादि नाना प्रकार की योगसिद्धि में फंसे हैं वे मोक्ष प्राप्त नहीं हो सकता। तात्पर्य्य यह यह सूत्र जिज्ञासुओं के लिए विशेष उपदेश है क्योंकि अज्ञ जिज्ञासु जन प्रायः किसी [illegible] इत्यादि को सिद्धि इत्यादि की करामातें दि[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर देख कर उसे बड़ा महात्मा समझ कर उसके जाल में जा फंसते हैं, इसलिये तत्व जिज्ञासु और मुमुक्षु जनों को ऐसी करामातें दिखाने वालों से दूर रहना चाहिए क्योंकि वे जब स्वयं ही जन्म मरण के बंधन से छूटनेवाले नहीं तो फिर दूसरों का उद्धार क्या करेंगे। यहाँ तक आख्यायिका का चतुर्थ अध्याय समाप्त हुआ।

क्यूबा।

क्यूबा उत्तरीय अमेरिका के दक्षिणस्थ वेस्ट-इंडीज नाम के टापुओं में सब से बड़ा १५०० वर्गमील का एक टापू है। इसके उत्तर व पश्चिम में मेक्सिको की खाड़ी हवाना व फ्लोरिडा हैं, पूर्व में हायटी टापू और दक्षिण में जमाइका टापू है। ग्रेटर एंटीलीज जमाइका व क्यूबा को पृथक् करता है। क्यूबा के दक्षिण व पश्चिम में यूकेटन प्रांत है जिसके नाम से प्रसिद्ध यूकेटन चेनेल क्यूबा को यूकेटन से अलग करती है। इसका स्थान २२ अक्षांश उत्तर व ८० अक्षांश पश्चिम है। इसकी चौड़ाई उत्तर से दक्षिण की ओर अधिक से अधिक २०० मील होगी पर कहीं कहीं १०० से भी कम है, यह पूर्व से पश्चिम की ओर अनुमान ७०० मील लंबा फैला हुआ है। आगे चल कर पाठकों को मालूम होगा कि पहले क्यूबा स्पेनवालों का एक उपनिवेश था। ईसा की २० वीं शताब्दी के प्रारंभ में इसकी जातीय सभा (काँग्रेस) का प्रथम अधिवेशन हुआ था। संवत् १८६३ में यहाँ एक राजनैतिक उपद्रव हुआ, किंतु अमेरीका के संयुक्त राज्यों की प्रजासत्तात्मक सरकार के हस्तक्षेप से शांत हो गया। आज कल यह एक प्रजातंत्रात्मक स्वतंत्र जाति है। स्वतंत्र होने के पश्चात् इसने शासन प्रबंध व अन्य राजकाज तथा शिक्षा इत्यादि सभी प्रकार के कामों में बड़ी उन्नति की है।

यद्यपि स्वाधीन जातियों में यह आयु के लेखे से कनिष्ठ है। परंतु राजकीय प्रबंध में किसी भी ज्येष्ठ जाति से पीछे नहीं है। सच है स्वाधीनता व पराधीनता में बड़ा अंतर है। जब यह स्पेन के एकमुखी यथेच्छाचारी शासन के अधीन था तब वह मुँह भी खोलता तो उसकी सुनता कौन। स्वार्थ बुरी बला है। मनुष्य का स्वभाव है कि जब वह किसी को अपने वशवर्ती देखता है तो उसके सुख का विचार अपने सुखसाधन के अधीन रखता है; कोई ऐसा काम नहीं करता जिससे निज की हानि हो, चाहे अधीनस्थ को सुख मिले या दुख। किंतु आज वही क्यूबा प्रजासत्तात्मक शासन के सुखों, मनुष्य के नैसर्गिक अधिकारों और ईश्वरप्रदत्त मात्र भूमि के बाधा विहीन फलों का उपभोग कर रहा है। कहा जाता है कि यह बाल प्रौढ़ है अर्थात् बालकपन में ही इसने प्रौढ़ता प्राप्त की है फिर भी उसका शासन किसी प्रकार से भी ऐसा नहीं है कि जिसकी पुरानी से पुरानी भी स्वतंत्र जाति प्रशंसा करने से हिचके।

सच तो यह है कि जैसा महात्मा मत्सीनी ने कहा है "कोई भी यथेच्छाचारी शासन में रह कर प्रजासत्तात्मक राज शासन के सिद्धांतों को नहीं सीख सकता" डाकुओं के स्कूल का छात्र सर्वस्व उत्सर्ग करके दीनों की रक्षा करनेवाला उदारवेत्ता नहीं हो सकता। जिस काम के लिए शुद्ध हृदय से, ईमानदारी व सचाई के साथ, निश्छल हो कर हम किसी जाति या व्यक्ति को तय्यार करना चाहते है, उसे उस काम में डाल कर ही तय्यार कर सकते हैं न कि तद्विरुद्ध काम में लगा कर।

निस्संदेह क्यूबा अमेरिका के संयुक्त राज्यों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का बड़ा ही कृतज्ञ है, क्योंकि इसने निस्वार्थ भाव से किसी प्रकार के बदले की आशा व आकांक्षा बिना क्यूबा को धन जन से सहायता दी, केवल इसलिए कि एक देशस्थ ईश्वरीय प्रजा अकारण अपने ईश्वरप्रदत्त अधिकारों से वंचित पराधीनता में पड़ी गुलामी का दुःख भोग रही है उसे सहायता देकर नैसर्गिक मानवी सुखों को बाधा विहीन भोगने की स्वाधीनता प्राप्त करा देना मनुष्य का कर्त्तव्य है, पड़ोसियों का धर्म्म है। देखते हैं तो संसार के इतिहास में अमेरिका का यह काम अनुपम है क्योंकि इसकी समता करने वाला दूसरा उदाहरण नहीं मिलता।

यहाँ पर हम क्यूबा निवासियों की भी जितनी प्रशंसा करें थोड़ी है। क्योंकि जो अत्याचारी शासन पद्धति के अधीन रह कर स्वभाव से पापिष्ट राज्यचक्र का दुःख भोग कर आत्म-विश्वास व जात्याभिमान खो चुके हों, संगठन शील शासन का ज्ञान न रखते हों, सब प्रकार से मुंह बंद किए कानों में उँगली दे कर रहते रहे हों वे इतने भारी बोझ को एका एक उठा कर चलने में समर्थ हो जायँ, नहीं नहीं इस सुँदरता से अग्रसर हों कि संसार देख कर आश्चर्य से स्तंभित रह जाय, छोटी बात नहीं है।

लेकिन याद रहे कि स्वाधीनता प्राणीमात्र के स्वभाव में है। मनुष्य तो क्या पशु वृत्ति भी पराधीनता से घबड़ाते रहते हैं। हाँ इसमें संदेह नहीं कि गुलामी करते करते स्वभाव में परिवर्तन हो जाता है और जाति में ऐसे नीचों, कुलांगारों की संख्या बढ़ जाती है जो अपने व अपने बालबच्चों के अच्छे खाने पहरने व सुख से रहने के आगे ग्राम, प्रांत, देश या जाति के स्वार्थों को लात मारते हैं; परंतु ऐसों की संख्या बहुमत्ता की सीमा को नहीं पहुँचती। यही कारण है कि गिरी से गिरी जाति भी अवसर पाते ही तुरंत सम्हल जाती है और स्वार्थियों को स्वयं प्रकृति देवी उनके अपराध के अनुसार उचित दंड देती है।

इस छोटी सी भूमिका के साथ मैं क्यूबा की स्वतंत्रता का सूक्ष्मतम इतिहास पाठकों की भेंट करता हूँ।

कौन नहीं जानता कि यूरोपीय जातियां भारत में आने के लिये बेचैन हो रही थीं, मुगलों का ऐश्वर्य, भारत की उर्वरा भूमि का हाल और भारतीय धनिकों का विभव सुन सुन कर सब के मुंह में पानी भर रहा था परंतु मार्ग बहुत लंबा व बड़ा दुर्गम था। ये चाहते थे कि कोई सीधा जल मार्ग भारत का मिले। इसलिये कितने ही जहाजी अपने प्राणों को हथेली में लिये फिरा करते थे। इनमें से एक कोलंबस भी था जिसका नाम यूरोप के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगा।

यूरोपीय जहाजी भारत आने का जल मार्ग खोजने निकलते तो अतलांतक महासागर से ही यात्रा आरंभ करते क्योंकि दूसरा जलमार्ग इनके दृष्टि में आने को था ही नहीं। वास्कोडिगामा भी जो १४९८ में पुर्तगाल से मद्रास पहुँचा अतलांतक से अफरीका की परिक्रमा करता हुआ 'केप आफ् गुडहपो' होकर भारत महासागर में प्रविष्ट हुआ था। १४९२ ई० की प्रथम यात्रा में कोलंबस का जहाज अटतलांतक पार करके अमेरिका में स्वतः जा लगा। और जिस स्थान पर इसने भारत समझ कर पैर धरा वह कयूबा था। इसी लिये क्यूबा जमाका आदि स्थान आज तक वेस्ट इंडीज अर्थात् पश्चिमी भारत कहलाते हैं। कोलम्बस स्पेन निवासी था, इसके लिये इसके श्रम का फल स्पेन को मिलना स्वभाविक था।

अस्तु इसके पीछे जितने स्पेन के अन्वेषी

❀ वास्कोडिगामा पोर्चूगीज (पुर्तगालवाला) और कोलंबस स्पेन का रहनेवाला था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गामी वहां से होकर स्पेन गये सब ने इस टापू द्वारा भावी लाभ की बड़ी २ आशाओं का दिखलाकर स्पेनवालों को मोहित किया। धीरे धीरे स्पेन निवासी क्यूबा में जा जाकर गये और शीघ्र ही असली निवासियों का उच्छेद कर डाला। जो थोड़े बहुत बच रहे की सहायता से स्पेनी लोग क्यूबा भूमि का भोगने लगे और स्पेन क्यूबा का स्वामी ना।

क्यूबा पर स्पेन का आधिपत्य अनुमानतः ४०० र्ष तक रहा। सन् १८९८ ई० में अमेरिका के युक्त राज्य प्रजातंत्र ने अपने बाहु बल से क्यूबा को स्वतंत्र कर के स्पेन की गुलामी से छुटकारा लाया।

अमेरिका के प्रायः सभी उपनिवेश आरम्भ में रोप के किसी न किसी एकमुखी शासन के धीन थे, यही हाल क्यूबा का भी था। स्पेन से वर्नर आकर हुकूमत करता था। यह सैनिक व ागरिक दोनों प्रकार के कामों का स्वतंत्र हर्त्ता, कर्ता र विधाता होता था। इसके किए कामों में उँगली ाने का अधिकार किसी को न था। आज से ५० र्ष पहले गवर्नर जिसे चाहता, देश निकाले ी सजा दे देता, केवल यह कह देना काफी था रसके द्वारा देश में अशांति फैलने का भय । प्रजा का धन, जन, प्राण सम्पति आदि सब छ स्पेनिश गवर्नर के अँगूठे तले था।

दशवार्षिक युद्ध समाप्त होने पर सं० १८३५ कमी में प्रजा को स्वराज्य का कुछ अधिकार म मात्र को मिला, लेकिन बच्चों के बहलाने ले काँच के दानों के सिवा और वह कुछ न था। मा में राजकीय पक्ष की अधिकता के अतिरिक्त र्वर्नर को अधिकार था कि चाहे जिस प्रस्ताव ी बहुमत से स्वीकृत होने पर भी अस्वीकृत र के रद्दी के टोकरे में डाल दे। सार यह कि ूठमूठी घोषणाओं, आज्ञाओं व शिष्टाचारों के सिवा वास्तविक स्वराज्याधिकार सर्वथा असंभव हो रहा था।

आर्थिक दशा यह थी कि १८९१—९६ ई० तक (क्योंकि इन्हीं दिनों के अंक मिलते हैं) सरकारी आमदनी ६ करोड़ रुपयों की थी और खर्च साढ़े सात करोड़ रुपयों का इस साढ़े सात करोड़ में से ६० लाख तो हरसाल सीधे स्पेन को नौकरों के वेतन मधे चले जाते क्योंकि यह भारी बोझ स्पेन ने क्यूबा के सिर पर स्थायी रूप से रखा था जिसमें अधिकता तो होनी संभव थी पर कमी नहीं हो सकती थी। क्योंकि बिना स्वर्ग से देवदूतों के आये पराधीन जातियों का काम नहीं चल सकता। इसी प्रकार ३० लाख इस नाम से व ५० लाख उस नाम से लिख लिखाकर सदा क्यूबा को निर्धन बनाये रखते और यह कहते कि हम तुम्हारे भले के लिए कष्ट उठाकर शासन करते हैं। हमें लाभ कुछ भी नहीं है; उलटी इतने करोड़ों की कमी रहती है। क्यूबा को दाबे रहना व लगातार रुपया चूसना स्पेन का काम था। हर एक क्यूबा निवासी को प्रत्येक स्पेन निवासी की अपेक्षा दूना कर देना पड़ता था। शिक्षा, सफाई चिकित्सा सड़कों व पुलों पर बहुत ही कम रुपया व्यय करने पर भी बड़ा एहसान जतलाया जाता था। स्पेन दूसरे स्थानों में (जैसे मैकसिको आदि) जाकर ऐसे युद्ध ठानता या अपने लाभ की आशा से कार्रवाइयाँ करता जिनसे क्यूबा का दमड़ी भर संबंध न होता, तो भी उस उचित व अनुचित सब प्रकार के कामों के खर्च का भार क्यूबा की गरदन पर लादा जाता। सच है "सर्वं परवशं दुःखम्।"

तीव्र भेद भाव जो देशीय क्यूबियों व योरोपियनों में प्रत्यक्ष रूप से काम कर रहा था दोनों जातियों के चित्त को फाड़ने का प्रधान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण हुआ। क्योंकि मनुष्य का स्वभाव है कि जब वह किसी राजा या शासक को या माता पिता को ही पक्षपात करते देखता है तो अपने मन में पक्षपात से घृणा करने लगता है।

स्पेनवालोंके साथ कर में फौजदारी व दीवानी मुकद्दमो में (जब क्यूबा वालो व स्पेन वालों में झगड़ा होता) नौकरी देने में, वर्ताव, व्यवहार में पक्षपात किया जाता था, सार यह कि स्पेन सरकार सब तरह से स्पेनवालों का पक्ष लेती व क्यूबावालों के हित को स्पेनवालों के मुकाबले कुछ न समझते फिर स्पेन सरकार ने क्यूबा के हित के लिये जो कानून बना सकती थी उन्हें बनाने व चलाने में अवहेलना की और ऐसे अनेक कानून चलाए जो चलने योग्य न थे तथा जिनसे प्रजा को घोर कष्ट व दुःख हुआ। अनेकों झूठे वादे भी स्पेन सरकार ने क्यूबा के साथ किये जिससे प्रजा का विश्वास स्पेन सरकार पर बाकी न रहा। इस प्रकार के स्पेन-राज के हठ और स्पेन के गवर्नर के मनमानी कार्य से प्रजा में असंतोष अनुदिन बढ़ने लगा। स्वार्थान्ध राजकर्मचारी इस असंतोष रूपी भीतर ही भीतर सुलगती हुई आँच को न देख सके, देखते तो भी अपनी आंखों को ही झुँठलाते और स्पेन सरकार को कुछ का कुछ बतलाते। इस तरह क्यूबा में स्पेनीय शासन की जड़ जल कर निर्जीव होगई।

उन्नीसवीं शताब्दि मसीही के आरंभ से तृतीय पाद के मध्य तक में असंतोष ने बड़ा ही भयानक रूप धारण कर लिया। इसका कारण क्यूबा में चीन व अफरीका के मजूरों का लाना था। अभिमान के अधिकार से उन्मत्त शासक जाति वालों ने अपने अन्याय, अत्याचार व स्वार्थपरायणता से अपने व अपने देश के शासनाधिकारों के पैरों पर और भी कुल्हाड़ी मारा।

क्यूबा के मजदूर लाने वाले अद्दतिए लोग जो कुली भरती करने के लिये चीन जाते वे कुलियों को नाम का ही मंजूरी पट्टा उनको देते। बहुधा ऐसा होता कि कुलियों को चुरा लाते थे। उन्हें जहाज में ठूँस ठूँस कर भर देते और ऐसी बुरी दशा में लाते कि अनेक तो मर जाते, जो जीते बचते उन्हें क्यूबा के बाजारों में नीलाम करते जो ज्यादा दाम लगाता वही खरीद ले जाता। इस अमानुषिक कार्य्य की इतनी बदनामी फैली कि बृटिश सरकार के गवर्नर ने हांग कांग में (सन् १८५४ ई० में) अपनी नौकाओं व प्रजा को इन कुलियों की रफ्तनी में योग दान करने से रोक दिया।

नीतिशास्त्र के प्रेमियों को विचार करने का यह सुन्दर विषय है कि उसे घोर दुःख भोगने पड़ते हैं जो अपने आदमियों को इस तरह गुलामी के लिये जाने देती है और उस जाति को भी जो इस तरह से आदमियों को लेजाकर उनके साथ पशुवत् वर्ताव करती हैं अपने अत्याचार का कुफल बुरी तरह से भोगना पड़ता है। जिस भयानक अंतर्राष्ट्रीय उपद्रव ने सन् १८६१-६५ तक में अमेरीका के संयुक्त राज्यों की जनता के अष्टमांश विनष्ट कर डाला, उसे हबशी गुलामों को लाने का ही बुरा परिणाम समझना चाहिये। कौन कह सकता है कि पीछे से चीन व क्यूबा पर जो विपत्तियां आई उनका कारण यही पाप न था। ईश्वरी नियम है कि जो दूसरों को दुःख देता है उसे उतनाही बल्कि उससे अधिक दुःख भोगना पड़ता है। प्रकृति किसी का भी अन्याय, जाति हो या व्यक्तिगत मन से नहीं देख सकती न कभी दंड देने चूकती है।

स्पेन सरकार क्यूबा के दुःखों को सुनने उनके दूर करने में आना कानी करती और दिन दिन कर का बोझा प्रजा पर लादती जाती थी, जिससे प्रजा का असन्तोष बढ़ता ही चला गया। भीतरी असंतोष के समय (१८६६-७७) में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिनिधियों की जांच करनेवाली सभा स्पेन बैठी। इसकी निन्दनीय अकृतकार्य्यता ने आग दूतका काम किया। क्यूबा की प्रजा चाहती कि उसके व स्पेनियों के अधिकार समान हों, पदों के देने में दोनों को एक दृष्टि से देखा तथा दोनों के साथ एक समान नागरिक समझ बराबर का बर्ताव हो। परंतु राजा ने किसी का साफ उत्तर न देकर टालमटोल किया और बहानेबाजी के उत्तर दिए। प्रजा पहले ही झूठे वादों से तंग आ चुकी थी, स्पेन की का विश्वास उसके हृदय से उठ चुका था, राम् प्रजा की देशभक्ति और उच्च मानवीभावों जोर मारा और परिणाम यह हुआ कि राजा प्रजा में दश वर्ष पर्य्यन्त घोर संग्राम होता रहा, जिससे प्रजा का आंतरिक घोर असंतोष पूर्ण रूप व्यक्त होगया। यह संग्राम १८७८ ई० में समाप्त हुआ।

दशवर्षीय संग्राम की परिसमाप्ति इस शर्त पर कि स्पेन गुलामी की प्रथा उठा दे और क्यूबा औपनिवेशिक स्वराज्य प्रदान करे। किंतु स्पेन ने फिर प्रतिज्ञाएँ तोड़ीं, तथा स्पेन की राजकीय महासभा 'कार्टीस' (पार्लियामेंट) क्यूबा को जितने प्रतिनिधि भेजने का अधिकार मिला था उनमें से असली क्यूबा के एक चौथाई ही लिए गये। इस तरह फिर अन्याय व अत्याचार से असंतोषाग्नि भभक उठी। १८९५ में क्यूबा के नेतागण अपने देशी भाइयों दुःखों को दूर करने के लिये दोबारा समर-भूमि में जा डटे।

१८९७ में पुनर्वार स्पेन ने अपने प्रधान शासक (गवर्नर) द्वारा क्यूबा को स्वराज्य देने की घोषणा की, परंतु झूँठ बार २ नहीं चलता क्यूबा की प्रजा ने विश्वास न किया, क्यूबा के नेता इस स्पेन के छल में न फँसे और विप्लव को बड़े उत्साह, बहादुरी व आत्मोत्सर्ग के साथ जारी रक्खा। एक ओर प्रजा प्राणपण से अपने सत्वों, अपनी मातृभूमि की मर्य्यादा, अपने आत्मगौरव, अपने ईश्वरप्रदत्त मानवी अधिकारों और अपनी प्राकृतिक संपत्ति की रक्षा के लिये लड़ती थी दूसरी ओर स्पेन की ओर से भाड़े के सिपाही भयानक अत्याचार करते थे। यद्यपि सुशिक्षित अस्त्र शस्त्र से सुसज्जित स्पेनी सेना बहुत बलवान थी परंतु प्राण उत्सर्ग करनेवाले देशभक्तों के सामने ठहरना दुस्तर हो गया, साथही क्यूबा को स्वतंत्र प्रजासत्ता के रूप अभिनव जीवन प्रदान करनेवाली एक महाशक्ति सहायता देने को आ खड़ी हुई। यह महाशक्ति मनुष्यभक्ति से प्रेरित निस्स्वार्थ भाव से यही चाहती थी कि क्यूबा की जिस प्रजा को दुःख भोगते बहुत दिन हो चुके हैं उसे अब स्पेन के दुःखप्रद पंजों से छुटकारा मिले, अत्याचारपूर्ण शासन से रिहाई हो; यदि इस काम में मुझे धन जनकी हानि भी उठानी पड़े तो परवाह नहीं।

इस प्रशस्त मनुष्यभक्त, पूजार्ह साम्राज्य का नाम अमेरिका संयुक्त राज्य प्रजातंत्र है। इसने बहुत कालतक छाती कड़ी करके क्यूबा के घोर-तर दुःखों को देखा, अंत में इसने यही निश्चय किया कि परमात्मा ने मनुष्यों को समान व स्वतंत्र सिरजा है, इनके जीवन को भी स्वातंत्र्य और संसारिक सुखों की प्राप्ति का अच्युत अधिकार है। जब किसी प्रकार का शासन इन मानवी प्राकृतिक अटल अधिकारों को विनष्ट करता हो तो जनपद को अधिकार है कि अपने हाथ पैर को हिलाए, अनुचित शासन को उठा दे और ऐसा नया शासन स्थापित करे जिससे प्रकृति व ईश्वर के भौतिक सिद्धान्तों की रक्षा हो। इस प्रजातंत्र ने अच्छी तरह से समझ लिया कि क्यूबा का पक्ष धर्म्म व न्यायसंगत है। इसी सिद्धान्त पर अब (१९१७-१८) में भी उसने योरो-पीय महासमर में मित्र राष्ट्रों का पक्ष ग्रहण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, मित्रराष्ट्रों का भी धर्म्म है कि वे अपनी अधिकृतियों में मौखिक ही नहीं वरन् व्यवहारिक उदाहरणों से यह प्रत्यक्ष कर दिखावें कि वे उपर्युक्त धर्म्म व न्याय संगत पक्षके संरक्षक हैं और इनका समर वस्तुतः इन्हीं सिद्धांतों की रक्षा के लिये है। यतो धर्मस्ततो जयः।

इसके अतिरिक्त पददलितों के कष्टों व दुःखों ने अमेरिका वालियों का दिल दुखाया। दीन की पुकार पर सहायता के लिये तत्काल उठ खड़ी होने वाली अमरीकन जाति के पर्य्यटक, पत्र, संवाददाता, धर्म्म अभिनिर्याण वाले क्या और कोई जो भी क्यूबा की दशा देखने गए सब ने एक स्वरसे यही कहा कि सहस्रों निर्दोष पुरुष, स्त्री व बालक भूमि में भूख की ज्वाला से प्राण त्याग रहे हैं, जिसका यदि उचित प्रबंध किया जाय तो अन्न वस्त्र की कदाचित् कमी न रहे। इस समय क्यूबा के दीन दुखियों के जर्जर शरीरों, जीवित नर पिंजरों के जो चित्र अमेरिका के संवाद पत्रों में प्रकाशित हुए थे उन्हें देखकर अमेरिकन जाति के हृदय में अनुकंपा का स्रोत उमड़ पड़ा। साथही धीरे २ स्पेन के अत्याचारों के प्रति क्रोधाग्नि भी प्रचंड हो उठी क्यों कि स्पेन की ही फजूलखर्ची सीमातीत अर्थलोलुपता, मूढ़ता, निर्दयता, स्वार्थपरायणता, अनुचित पक्षपात, दगाबाजी और अयोग्यता आदि अपराधों, दोषों व भूलों के ही कारण क्यूबा सदृश उर्वरा भूमि की यह दशा हुई थी।

सन् १८७५ तक यही समझा जाता रहा कि अमेरिका का हस्तक्षेप अवश्य होगा, लेकिन न हुआ। पर सन् १८९५ में जो शांतिप्रिय प्रजा के के साथ योरोपवालों का घृणित अत्याचार हुआ वह अमेरिका से न सहा गया और उसने दुखी क्यूबा की रक्षा के लिए कमर कसी। पहले तो भूखों को बाँटने के लिए अन्न भेजा गया। लेकिन स्पेन के अत्याचारों से पीड़ित क्यूबा वासियों के हृदयविदारक दृश्य, स्पेन के चिरंत अत्याचारों की कथा, क्यूबावालों की धीरता, वीरता, क्षमाशीलता, स्वातन्त्र्य व छुटकारे के लिए रणरङ्ग का हाल सुनकर अमेरिका वालियों के होठ फड़के व भुजाएँ फड़कने लगीं। सच है—

जो पर दुःख न होहिं दुखारी।
तिनहिं विलोकत पातक भारी॥

अमेरिकन प्रजा के दबाने पर वहाँ के सा[illegible]विक भूपाल (सभापति) मिस्टर मेकिनले [illegible] स्पेन राज्य को एक पत्र लिखा कि यदि घर बै[illegible] शांत प्रजा के साथ ऐसाही अत्याचार होता र[illegible] और कुछ अधिक मनुष्यता से काम न लिया [illegible] गया तो अमेरिका को स्यात हस्तक्षेप क[illegible] पड़ेगा। इस पत्र के पढ़ते ही एक मुखी स्पेन शा[illegible] आग बबूला होगया और हवाना के बन्दर [illegible] एक अमेरिकन रणतरी को जिस का नाम 'मे[illegible] था उसने विनष्ट कर डाला। यह घटना सन् १८[illegible] ई० के फरवरी मास की है। यद्यपि स्पेन ने [illegible] अपराध से इनकार किया किन्तु अमेरीका [illegible] अपराध प्रमाणित होगया। फिर क्या था स्पेन [illegible] अमानुषिक करतूतों से अमेरिका का कलेजा फ[illegible] की तरह पक तो रहा ही था तुरंत आज्ञा नि[illegible] दी गई कि स्पेनिश सेना एकदम क्यूबा छोड़[illegible] निकल जाय। इतनी जल्दी स्पेनी सेना कब [illegible] वाली थी, उसने आज्ञा पालन से इनकार कर दि[illegible] इधर अमेरीका ने 'रणघोषणा' कर दी। इसी[illegible] नाम 'अमेरीका स्पेनवार आफ १८९८' है।

अधर्म्म का पक्ष निर्बल होता है। पांच [illegible] दिनकी ही लड़ाई ने फैसला कर दिया, स्पेन को [illegible] थल छोड़ कर अपने घरकी राह लेनी पड़ी। वि[illegible] लक्ष्मी ने, धर्म्मपालक अमेरीका के गले में जय[illegible] डाली। फ्रांस की राजधानी पैरिस में १० दि[illegible] म्बर १८९८ को स्पेन व अमेरीका की स[illegible] संधि पर दोनों पक्षों के हस्ताक्षर हुए। [illegible] से सदा सर्वदा के लिए स्पेन ने विदाई [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संसार के नवीन राज्यों के धार्म्मिक इतिहासों में अमेरीका की यह बात चिरस्मरणीय होगी। यों झूठे राज्यनीति, धर्म्म, मनुष्य भक्ति, देशभक्ति व स्वतन्त्रता के ढकोसला दिखलाने वालों की कमी नहीं है। परंतु सच्ची मनुष्यभक्ति धर्म्मवता ईसाईपन का नमूना अमेरिका ने ही दिखाया था। युद्ध के पहले ही कह दिया था कि विजय हुई तो मैं अपने लिए कुछ भी न रक्खूँगा। बैठा बैठा मन वाणी व कर्म से शांति स्थापन करने को तय्यार रहूंगा और ऐसा दृढ़ शासन प्रबंध स्थापित होगा कि जिसमें प्रजा को पूर्ण स्वराज्य का भरोसा और विश्वास होगा और इसमें कभी बाधा न पड़ेगी। धन्य है! धन्य! यदि अमेरिका के आदिम निवासियों के साथ भी तेरा ऐसा ही बर्त्ताव हो तो तू और भी मनुष्य जाति धन्यवाद की भागिनी है।

अमेरिका ने अपने वायदे पूरे किए। अन्य राज्यों की तरह झूठे वादों से किसी जाति को धोखा ठगा नहीं। इसने क्यूबा की सहायता की इतने मूर्ख, चातुर्य्य के अभिमान से अन्धे, बहुदर्शिता व दूरदर्शिता के अजीर्ण से पीड़ित, यह कहने लगे कि क्यूबा में शिक्षा का अभाव है। साढ़े पाँच प्रति सौ पढ़े लिखे हैं सो भी साधारण, इनसे स्वराज्य का काम चलना असम्भव है। फिर सब जाति एक जाति की नहीं है ३० प्रति सैकड़े हबशी हैं, इस लिये आपस के झगड़े भी स्वराज्य न चलने देंगे, साथ ही हबशी शिक्षा में तो पीछे हैं पर सामाजिक स्थिति भी उनकी बहुत पीछे है। लेकिन सच्चे दूरदर्शी मनुष्य भक्त अमेरिकन अपने सद्विचार से न हिले। इनका अपने राजनैतिक धर्म्म और सचाई पर अपनी नैतिक व आर्थिक सचाई पर अटल विश्वास था। सब मनुष्यों को परमात्मा ने स्वतंत्र व एक समान पैदा किया है। सब को स्वतंत्रता का हक़ है।

सच है परमात्मा सबको अपना न्याय और रहने की धरती देकर ही पैदा करता है। हम उस धरती विशेष के रहनेवाले उसके न्याय धाराओं का अर्थ करें, तदनुसार सुख से रहे, न औरों के सुख में बाधक हों न औरों को अपने सुख में बाधक होने दें, बने तो दूसरों का भला करें, यही समस्त नीतियों का सार है।

अमेरिका ने क्यूबा पर अहसान किया था। क्यूबा बालक था, उसने उस अभय प्रदायिनि को अपनी स्वतंत्रता की संरक्षिका नियत करके कहा, "जब निर्व्वलता या अप्रौढ़ता के कारण हमारी स्वतंत्रता, सुख शांति में विघ्न दीखे, देवि! आपहमारी रक्षा करें आपकी छाया में हमारे जीवन, धन, जन, सम्पत्ति और स्वातंत्र्य सुरक्षित रहें।" अमेरिका ने भी 'एवमस्तु' कह कर इस पवित्र पद को स्वीकार किया।

अमेरिका ने यहाँ की शासन पद्धति बदली, ... शासन पद्धति को निकाल कर स्वराज्योचित शासन नियम बनाए। अधिकांश क्यूबन लोगों को राजकीय पद प्रदान किये गए। कुछ चतुर अनुभवी अमेरिकन पदाधिकारी कुछ समय तक रह कर क्यूबनों को राजकाज के कामों की व्यवहारिक शिक्षा देते रहे। जब क्यूबन काम सम्हालने लायक हुए यह उनका काम सौंप कर चले गए। अपना अर्थ सिद्ध करने के लिये यह चाहते तो बहुत काल तक उनको मूर्ख ही कहते जाते व सारा अधिकार हड़प किए बैठे रहते परंतु ईमानदार अमेरिकनों ने ऐसा नहीं किया।

ज्योंही अमेरिका ने क्यूबा के अभिमान कक्षा को स्वीकार किया क्यूबा के अमेरिकन अफ़सरों ने क्यूबा का सुधार इमानदारी के साथ तत्काल शुरू कर दिया। सेवा (सिविल सर्विस) सफाई स्वास्थ्य रक्षा, राज्य रक्षा आदि के विभाग स्थापित किए, व अनिवार्य्य शिक्षा प्रचलित की। पीतज्वर जो मुद्दत से प्रजा का खून पी रहा था उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस देश से निकाल दिया गया—क्यूबा के होनहार पुत्रों को नहीं, पीतज्वर को।

सार यह कि ४ ही वर्ष में अमेरिका के ईमानदार पुत्रों ने अपने शिष्य क्यूबनों को इतना योग्य बना दिया कि उन्होंने अपने देश का काम बड़ी योग्यता के साथ सम्हाल लिया और गुरुओं की आवश्यता न रही।

सन् १९०२ में प्रजासत्तात्मक संगठन के अनुसार अपने देश का सारा शासन भार अपने हाथ में लेने के लिये तय्यार होकर क्यूबा कांग्रेस पहले पहल बैठी। इसमें अमेरिका के प्रधान प्रधान राजनितज्ञ इस अभिप्राय से सम्मिलित हुए थे कि इस नए प्रजातंत्र के संगठन में सलाह देवें। अपने देश के अनुभावों से शासन पद्धति की तय्यारी में लाभ पहुँचाएँ। सुतराम् इनके पवित्र परामर्श और विशाल अनुभव की सहायता से उन स्थानीय परिस्थितियों व आवश्यकताओं के अनुकूल जो केवल मात्र क्यूबा में पाई जाती थी सारा संगठन किया गया और क्यूबा बाहरी हस्तक्षेप से सब तरह बरी हो कर अपने घर का आप स्वामी हुआ।

इस संगठन के खास खास नियम हम अपने पाठकों की जानकारी के लिये सूक्ष्म रूप से नीचे उद्धृत करते हैं।

प्रत्येक २१ वर्ष की आयुवाला क्यूबा निवासी पुरुष को जो मस्तिष्क से अस्वस्थ न हो, न पहले से अपराधी ठहर चुका हो और न राज्य की साधारण सेना अथवा नौसैन्य विभाग में नौकरी करता हो, स्वतंत्र नागरिक का अधिकार दिया जाता है, (यह राजकीय महासभा के प्रतिनिधियों के निर्वाचन में मत देने का अधिकारी होता है)। राज्य और धर्म्म बिल्कुल पृथक् किए जाते हैं किंतु धार्म्मिक स्वतंत्रता सब को प्राप्त रहेगी।

इस महा परिषद (कांग्रेस) के दो अंग होंगे (१) कनिष्ठा अर्थात् प्रतिनिधि भवन उन सदस्यों की होगी जिन्हें स्वयं नागरिकों ने ४ वर्ष के लिये निर्वाचित किया हो, (२) ज्येष्ठ अर्थात् वृद्ध भवन यह किसी काम को सहसा पूर्ण विचार के जल्दबाजी के साथ होने से रोकेगा जैसा अमेरिका के वृद्ध-भवन में (Senate) करता है यह प्रधान के साथ बैठ कर (राजनैतिक नियुक्तियों संधियों आदि कार्य्यों को सम्पादन करेगी।)

महापरिषद को साधारण व्यवस्थापकी मामलों, आर्थिक विषयों और समर विघोषित करने आदि का पूरा अधिकार होगा। रेल सड़क नहरें और सड़कों की अध्यक्षता स्व रूप से संयुक्त सरकार की है। न्याय अनेक श्रेणी की अदालतों द्वारा होता है। जिन सबों का अ एक प्रधान न्याय मन्दिर है जो समस्त नियमों अनुशासनों, धाराओं, और पद्धतियों की संगत शीलता पर व्यवस्था देती रहती है। जि पाठकों को क्यूबा के शासन पद्धतियों का पू हाल जानना हो वे राजनीति-दर्शन के अ अङ्गरेजी में पढ़ सकते हैं। दुःख है कि ऐसा राजनीति दर्शन का एक भी ग्रन्थ देशी भाषाओं नहीं है जिसका नाम हम केवल हिन्दी जा वालों के लिये यहां उद्धृत करते। पर अंगरेजी बहुत से ग्रंथ हैं, पाठक अपनी रुचि के अनु लेकर देख सकते हैं।

क्यूबा ने अपने अभिनवप्राप्त स्वत्वों व दा को बड़ी खूबी से निबाहना आरम्भ कि सौदागरी, कारीगरी, शिल्प आदि सभी वि में बड़ी ही उन्नति हुई। इस प्रकार ४ वर्ष बीतने पर कुछ राजनैतिक कठिनाइयाँ आईं यह तो मानी हुई बात थी। संगठन स्थिक व परीक्षाधीन होगा, भावी अनुभव अनुसार फेर फार जो आवश्यक होंगे क पड़ेगें। प्रजा स्वतंत्र शासन से अनभिज्ञ व भ्रस्त होने के कारण समयानुसार अपनी नयी भई स्वततंत्रता में उचित रोक टोक से काम करे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परन्तु सन् १९०६ में उदार व नर्मदल में झगड़ा होगया, नर्मदल ने समर की घोषणा कर डाली। इसका फल यह हुआ कि अमेरिका ने हस्तक्षेप करके उपपादिका सरकार स्थापित की और स्वयम् उसका कार्य्य भार अपने ऊपर लिया। इस प्रकार सब को विश्वास हुआ कि सारी शिकायतों को सुनकर न्याय होगा और थोड़े दिनों में फिर सुख शांति स्थापित हो गयी। धीरे धीरे संगठन में जो दोष व निर्बलताएँ थीं सब दूर किया गया। अमेरीका ने बड़े कौशल व चातुर्य्य से काम को सम्भाला, राज्य क्यूबा के झगड़े तले रहा संगठन प्रणालियों पर अरूढ़ रही और राज संबंध व परराष्ट्रस्थ राजदूतों का कार्य्य भी रहा। इस प्रकार तीन वर्ष के परिश्रम से अमेरीका ने नई प्रजा सत्तात्मक सरकार को सिखला पढ़ाकर पुष्ट किया और अप्रेल १९०९ को अमेरीका सहयोगी शासक क्यूबा से सब काम ठीक करके हट गया।

अब वही क्यूबा सब भांति समुन्नत हो रहा है। सामाजिक राजनैतिक, व्यवसायिक और शिक्षा संबंधी सभी बातों में अनुदिन उन्नति करता जाता है। शिक्षा में जो उन्नति हुई है वह विशेष दर्शनीय है। प्रारम्भिक शिक्षा जो अशुल्क व अनिवार्य्य हो चुकी थी, इसका व्यय भार प्रधान या केन्द्रिक सरकार व म्युनिसपेलटियां मिल कर देने लगीं और द्वितीया व उच्च शिक्षा का व्यय भार भी राज्य उठाता है।

अब देखना यह है कि पराधीनता के समय शिक्षा क्या था व स्वधीनता में कैसा है। इस विषय में शिक्षा को लीजिए, तो १८९८ में १० वर्ष से नीचे के बच्चे ४२ प्रति सौ पढ़ सकते थे, जो १९०७ में ५७ प्रति सौ होगए। स्पेन के शासन काल में १९०४ राजकीय और ७०४ प्राइवेट स्कूल थे और ९००० छात्र दर्ज रजिष्टर थे। क्यूबा के प्रबंध में ३५५० सरकारी स्कूलों में ११२००० छात्र होगए। स्पेनिश शासन में छात्रों की उपस्थिति की औसत १६ थी, क्यूबा शासन में ३२ हो गई। यह औसत क्यूबा भर के स्कूल जाने लायक बच्चों का प्रति सौ निकाला गया है। अब नाना प्रकार की कला कौशल सिखलाने वाली संस्थाएँ भी हैं जो पहले न थीं। यह स्वराज्य का प्रत्यक्ष फल है।

अब क्यूबा में राज काज करने के लिए सुयोग्यों की संख्या बहुत ज्यादः है। सर्वत्र धर्म्मराज विराजता है, अन्याय स्वप्न हो गया है। आत्मगौरव, देशाभिमान, जाति मर्य्यादा प्रत्येक व्यक्ति में पाई जाती है जो पहले न थी। नवीन ज्ञान विज्ञान का आदर व उनका व्यवहार दिनों दिन बढ़ कर क्यूबा को कुछ का कुछ बना रहा रहा है। जो धन शासक स्पेन उठा ले जाते थे अब प्रजा में फैल कर उन्हें धनी व सुखी बनाता जाता है। अमेरिका व बृटानिया ने करोड़ों पौंड वहां व्यवसाय में लगा रखे हैं। यही क्यूबा की नैतिक व आर्थिक उन्नति का प्रमाण है।

ईश्वर न करे कि फिर कभी क्यूबा में फसाद खड़ा हो, जो होगा तो क्षणिक ही होगा। क्योंकि फिर अमेरिका आकर हस्तक्षेप करेगा व न्याय पूर्व्वक सब प्रबंध करके संगठन व कानून में उचित हेर फेर करने के अनंतर फिर हट जायगा; जैसा कि ईमानदार व धार्म्मिक हितैषी का काम होता है।

राधामोहन गोकुलजी,
कलकत्ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शैली समीक्षा ।

(ले० धृष्ट विद्यार्थी)

मेरा संकल्प है कि इस समीक्षा द्वारा हिन्दी के प्रधान पंडितों की लेखन-शैली की विशेषताओं का दिग्दर्शन कराया जाय, चाहे वे विशेषताएँ गुण रूप में हों वा दोषरूप में।

इस समीक्षा का यह अभिप्राय कदापि नहीं है कि इसके द्वारा उन पंडितों की अथवा उनके ग्रंथों तथा लेखों की किसी भाँति अवहेलना वा अप्रतिष्ठा की जाय। यह समीक्षा किसी प्रकार के द्वेष भाव से प्रेरित हो कर न की जायगी और न यही जताने के लिये लिखी जायगी कि इसका लेखक उन पंडितों से अधिक योग्यता रखता है। पाठक लोग ऐसा कदापि न समझें।

यह सत्य है कि इतना बड़ा काम हिंदी के जानसन (Johnson) और आरनल्ड (Arnold) द्वारा किया जाना चाहिये था, न कि मेरे सदृश एक विद्यार्थी का परंतु किया क्या जाय, हिंदी संसार में लेख-समीक्षा का इतना अभाव है कि इस साहित्य पर असत्त अनिष्ट प्रभाव पड़ रहा है और कितने ऐसे लेख निकलते हैं जिनसे इस भाषा का केवल स्वाँग सा बनने लगा है। इतना ही नहीं इसी कारण उच्छृङ्खलता की घटा इतनी छा गई है कि नवीन पाठकों को हिंदी के शुद्ध रूप का दर्शन होना भी कठिन हो गया है। अतएव इस लेख माला का केवल इतना ही उद्देश्य होगा कि शैली तथा समीक्षात्मक भावों की उत्पत्ति हो और लेखकों का ध्यान इस विषय की ओर भी आकर्षित हो।

थोड़े ही दिन पहले संस्कृतज्ञ महोदय हिंदी को 'भाखा' कह कर घर की मुर्गी समझते थे और मुर्गियों से जितनी दूर रहना चाहिये उतनी ही दूर हिंदी से भी रहते थे। अँगरेजी भाषा के पंडित भी हिंदी का उतना ही तिरस्कार करते थे जितना हिंदुस्तानी कपड़ों और जूतों का। लोग भूल कर भी इधर दृष्टिपात नहीं करते थे। अब भी हिंदी के साथ वह उचित व्यवहार नहीं किया जाता जो अन्य भाषाओं के साथ होता है। आजकल के बहुतेरे हिंदी लेखक न तो हिंदी साहित्य ही को जानते और न किसी दूसरी ही भाषा के पूर्ण पंडित होते हैं, जिस से हिंदी कम जानने पर भी अधिक हानि न हो। कुछ लेखकों में से कितने ही ऐसे भी हैं, जो हिंदी के प्रधान लेखकों के ग्रंथों को पढ़ना वा समझना तो दूर रहा, इतना तक नहीं जानते कि उनके लिखे हुए उत्तमोत्तम ग्रंथ वा लेख कौन कौन हैं। ऐसी विलक्षणता हिंदी ही में देखी जाती है। क्या कोई बता सकता है कि अँगरेजी वा संस्कृत का कोई ऐसा भी लेखक है जो उस भाषा के साहित्य को न जानता हो?

हिंदी के कुछ लेखक ऐसे भी हैं जिन्हें अन्य भाषाएँ तथा हिंदी-साहित्य को भी पढ़ा परंतु दुर्भाग्यवश उनकी मातृभाषा हिंदी नहीं। उदाहरणवत् हम एक ऐसे लेखक को भी जानते हैं जिनकी मातृभाषा तो है गुजराती, परंतु बोलते हैं मराठी, पढ़ाते हैं अँगरेजी और लिखते हैं हिंदी।

यद्यपि यह कहा जा सकता है कि हिंदी का स्वरूप निर्विवाद रूप से निर्दिष्ट नहीं है और लेखकों पर दोषारोपण न होना चाहिए। कुछ अंशों में यह कथन सत्य भी है। परंतु जिन दोषों वा गुणों का हम इस लेख माला में वर्णन करेंगे उनको दोष वा गुण मानने में प्रायः किसी को विरोध न होगा।

गंभीर समीक्षा की दृष्टि डालने से जाना जा सकता है कि ऐसे लेखकों के लेखों में भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेख पाए जाते हैं जिनको हिंदी संसार में ऊँचे दर्जे पर मिले हैं। सब से बड़ी विचित्रता तो यह है कि न तो हिंदी के लेखकों ही में वे गुण हैं जो लेखक में होने चाहिएँ और न हिंदी साहित्य ही में वह सामग्री है जो उनके लिये आवश्यक है। सबसे पहले, लेखक बनने के लिये जो परिश्रम अनिवार्य है उसकी कुछ भी परवाह नहीं की जाती। लेखनी उठाने के पहले कई वर्षों तक हिंदी के प्रामाणिक ग्रंथों का संग्रह करके उनका अध्ययन करना चाहिए, तदनंतर और लिखने के पहले कुछ ऐसे ग्रंथों का भी अवलोकन करना चाहिए जो लेखन-शैली के विषय में कुछ उत्तम शिक्षा दे सकें। गद्य और पद्य संबंधी शब्दशक्ति और अलंकारों का भली प्रकार ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। साथ ही साथ कुछ समालोचनात्मक लेखों तथा ग्रंथों को भी देखना चाहिए। जिससे लेख के गुणों वा दोषों का कुछ कुछ अनुभव हो जाय। परंतु खेद का विषय है कि ऐसे ग्रंथ और लेख हिंदी में नहीं के बराबर ही हैं।

दूसरी विचित्र बात यह है कि हिंदी संसार में लेखकों की न तो परीक्षा ही है न उनको किसी रुकावट का सामना करना पड़ता है। सच तो यह है कि जिस किसी ने दो चार उपन्यास पढ़े, किसी जातीय पत्रिका में दो चार छोटे मोटे लेख लिखे, एकाध लेख किसी बड़ी मासिक पत्रिका में छपा और यदि वह छप गया, बस फिर क्या, लेखक महाशय 'विशारद' बन बैठे। इसके अनंतर नई पुस्तक लिखने की ओर उनका ध्यान दौड़ जाता है। प्रकाशक लोग भी धन्य हैं। कुछ न कुछ पुरस्कार प्रदान करते ही हैं और विशारद को 'तीर्थ' वा 'आचार्य' के पद पर अति शीघ्र पहुँचा देते हैं। फिर क्या, अब तो यही लक्ष्य रहता है कि कोई काष्ठ-कौशिक फँसे तो किसी पुस्तकालय के सम्पादक बन कर दो एक वर्ष में साहित्य महा परिषत् के सभापति के आसन के दावेदार बन जांय। मुझे इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि वर्तमान समय के लेखकों में से कितने लेखक इसी प्रकार के हैं।

पत्र पत्रिकाओं के सम्पादक महाशय लेखाभाव तथा स्वयं लिखने के आलस से यही सुगम समझते हैं कि आये हुए लेखों को शुद्ध करके प्रकाशित कर दें। इसी को लेखक महाशय अपनी सफलता का प्रमाण समझने लगते हैं। प्रकाशक बेचारे प्रायः पैसा के लोभी होते हैं और उनमें स्वयं इतनी योग्यता नहीं देखी जाती कि वे जाँचें कि यह पुस्तक छापने योग्य है वा नहीं। किसी को दिखलावें तो खर्च करना पड़े, अतः उसे छापना ही सीधा समझते हैं।

अत्यन्त आश्चर्य है कि ऐसे लेखकों के लेख पत्रिकाओं में और उनकी लिखी हुई पुस्तकें पुस्तक मालाओं में निकल रही हैं, जिन्हें अच्छी शैली के ज्ञान की तो बात क्या शुद्ध लिखना तक नहीं आता। खेद का विषय है कि हमारे हिन्दी संसार में ऐसी अंधा धुंध है।

यह सत्य है कि किसी भाषा की बाल्यावस्था में उपरोक्त दोष होते ही हैं, परंतु मेरे विचार से अब हिन्दी का बचपन नहीं है। अब भी यदि हिन्दी के हितैषियों का यह भ्रम दूर न हुआ तो एक होनहार भाषा को नष्ट करने का पाप उन्हीं के सिर पड़ेगा। अब वह समय आ गया है जब बुरी शैली के लेखों और ग्रंथों का छपना रोका जाना चाहिये। मेरी समझ में इसके साधन समालोचना और समीक्षा ही हैं।

लेखों की समीक्षा करने से पहले हमें यह उचित जान पड़ता है कि हम उस प्रणाली का ढांचा बतला दें जिस से हम आलोचना करेंगे। वह यह है:—

(१) शब्द—हिन्दी के वा अन्य भाषाओं के, कठिन वा सरल, साधारण वा अप्रयुक्त, देहाती,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वा नागरिक, गँवारू, बाजारू वा साधु भाषाओं के, कटु वा मधुर।

(२) वाक्य—निरस वा सरस, छोटे वा बड़े सुडौल वा बेढंगे, परस्पर सुसम्बद्ध वा कुसम्बद्ध (विचारों तथा शब्दों के विचार से)

(३) अलंकार—समुचित वा अनुचित, प्रयोग साधारण वा कठिन, पाठक पर कैसा प्रभाव डालेगा।

(४) पैराग्राफ—ऊपर वाले से सुसम्बद्ध है वा अन्यथा।

(५) जहां यति होनी चाहिये वहीं है वा अन्यथा है।

(६) व्याकरण संबंधी बातें।

---

(१) शैली—कठिन, सरल, साधारण, साधु वा ग्रामीण है वा कैसी है।

(२) भाव—स्पष्ट है वा गूढ़।

(३) गुण—ओज, गांभीर्य, प्रसाद इत्यादि।

(४) प्रवाह—पढ़े जाने पर कैसा है, स्निग्ध वा ऊबड़ खाभड़।

(५) भाव, शब्द और शैली का परस्पर मेल है वा नहीं।

(६) निर्वाह—भाव वा शैली का निर्वाह आद्योपान्त हो सका है वा नहीं। किसी वस्तु का अनुचित, कम, वा अतिशय प्रयोग तो नहीं हुआ।

(७) स्फुट—और अन्य बातें जो प्रसंगानुसार सूझ पड़ेंगी।

इस ढांचे के अनुसार पहले हम जीवित गद्य लेखकों के लेखों को जाँचेंगे। उसके अनन्तर यदि हो सका तो पद्य में हाथ लगावेंगे।

फिर भी सविनय निवेदन है कि हमने हिन्दी साहित्य को लाभ पहुँचाने के विचार से ही यह काम करना विचारा है। किसी लेखक से हमें किसी प्रकार का रागद्वेष नहीं है। अतः हम आशा करते हैं कि वर्तमान लेखक महाशय हम पर रुष्ट न होंगे। हम निश्चय जानते हैं कि अनेक महाशय हमारी अपेक्षा बहुत अधिक योग्यता रखते हैं। वे महाशय यदि इस काम को करते तो कई गुना अच्छा होता। परंतु कई वर्षों से बाट जोहते जोहते थक जाना पड़ा और उन महाशयों ने इस काम के लिये लेखनी न उठाई। अन्ततः हमको ही इस भांति की धृष्टता करनी पड़ी। अब भी यदि हम देखेंगे कि हमारी ढिठाई देख कर उन महाशयों ने अपना कर्तव्य करने के लिये कमर कसी, तो हम चुप हो कर बैठ जाँयगे और उनके लिये मैदान साफ़ कर देंगे।

खना।

कहते हैं कि महाराज विक्रमादित्य की सभा के नवरत्नों में वराह नाम के एक बड़े ज्योतिषी थे। वृद्ध अवस्था में जब उन्हें एक पुत्र हुआ तो गणना करने पर विदित हुआ कि इसकी आयु केवल दस वर्ष की है, पर वास्तव में उसकी आयु १०० वर्ष की थी और गणित में उन्होंने एक शून्य की गलती कर दी थी, जिसके कारण सौ के स्थान में दस का अंक आया। अब उन्होंने सोचा कि ऐसे अल्पायु पुत्र के लालन पालन करने से क्या लाभ, क्योंकि यह थोड़ेही दिनों में मर कर पुत्र शोक से मेरे हृदय को दग्ध करेगा अतः इसे अभीही से त्याग कर देना चाहिए जिससे मोह न बढ़े। अस्तु एक पात्र में बंद कर उन्होंने पुत्र को समुद्र में बहा दिया। बहता बहता पात्र राक्षस * देश को चला गया। वहाँ सब

राक्षस देश शायद लंका या भारतीय द्वीपपुंजों में से कोई द्वीप विदित होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के तीर कई राक्षसियां क्रीड़ा कर रही थीं। उन्होंने उस अद्भुत पात्र को उठा लिया और उसमें एक नवजात शिशु को देखकर उन्हें बड़ा विस्मय हुआ और उसे वे लोग राक्षसराज के पास ले गईं। राक्षस राजज्योतिष विद्या का बड़ा पंडित था और उसके यहां मनुष्यों के यहां की खना नामकी एक कन्या भी थी। अब मिहिर नामक बालक और खना दोनों ज्यों ज्यों बड़े होने लगे त्यों त्यों ज्योतिष विद्या में भी निपुण होने लगे। कुछ दिनों के बाद बड़े होने पर राक्षसराज ने दोनों का विवाह कर दिया। विवाह होने के बाद दोनों ने विचारा कि "यद्यपि यह राक्षस लोग हमें कष्ट नहीं देते, पर आखिर को हैं तो यह मनुष्य भक्षी प्राणी, न जाने कब इनकी नरमांस भक्षण की प्रवृत्ति जाग जाय और हमारे प्राण चले जांय। इस लिए यह स्थान त्याग कर लोकालय में चले जानाही श्रेयस्कर है। एतदर्थ दोनों मंत्रणा कर निकल भागने के लिए तय्यार हुए, पर राक्षसों की चौकसी के करण अवसर नहीं मिलता था और न कोई अच्छा मुहूर्त ही मिलता था। अस्तु आसरा देखते देखते एक दिवस सर्वोत्तम मुहुर्त मिल गया और दोनों ने मंत्रणा कर यात्रा कर दी। राक्षसों ने जब देखा कि उन्होंने बड़े अच्छे योग में यात्रा की है तो उन्हें रोकना व्यर्थ समझा और राक्षसराज ने अपने कुछ अनुचरों के साथ कुछ पुस्तकें देकर उनके साथ भेज दिया और कह दिया कि समुद्र पार जाकर इन दोनों से ज्योतिष विद्या के कई प्रश्न पूछना, यदि ये लोग उत्तर दे सकें तबतो ये पुस्तकें इन्हें दे देना नहीं तो लौटा लाना। अस्तु यह लोग जब समुद्र पार पहुंचे तो वहां एक आसन्न प्रसवा गाय को देखकर एक राक्षस ने मिहिर से पूछा "बतलाओ इसे कौन रंग का बछड़ा होगा"? मिहिर ने गणना कर कहा कि "श्वेत वर्ण का बच्छड़ा होगा" पर प्रसव होने पर जब देखा गया तो वह बछड़ा धूम्र वर्ण का पाया गया। यह देख कर राक्षस ने कहा कि "अभी तुमारी शिक्षा पूर्ण नहीं हुई है अस्तु लो ये तीनों पुस्तक ले जाओ, इन्हें पाठकर ज्ञान संचय करना"। यह कह कर तीन पुस्तकें प्रदान कर राक्षस लोग चले गए। अब तो मिहिर को बड़ी लज्जा हुई और उन तीन पुस्तकों में से जो खगोल भूगोल और पाताल संबंधी गणितकी पुस्तकें थी, उन्होंने पाताल गणित वाली पुस्तक फाड़ कर समुद्र में फेंक दी, पर थोड़ी देर बाद जब गाय बछड़ को चाटने लगी, तो बछड़े का रंग श्वेत हो गया। इसे देख कर खना ने कहा कि तुमने नाहक अधीर हो कर अपनी विद्या को हेय मान क्रोध के आवेश में एक अमूल्य पुस्तक फाड़ कर फेंक दी। देखो गणना सही हुई या नहीं! अस्तु क्या किया जाय, उपयांतर न देख कर अब केवल उन्हीं दोनों पुस्तकों को लेकर उन्होंने यात्रा की। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि राक्षसपुरी से भागती समय, ये लोग चुरा कर ये गणित के पुस्तक यहां ले आए थे। चाहे जो हो इसमें संदेह नहीं कि ये दोनों स्त्री पुरुष खगोल और भूगोल की पुस्तक भारतवर्ष में लाए और इन्ही पुस्तकों से यहां खगोल व भूगोल विद्या का प्रचार हुआ। शायद इसी आधार पर कुछ लोग अनुमान करते हैं कि ज्योतिष विद्या यहां यवन देश से आई है। चाहे जो हो खना और मिहिर दोनों स्त्री पुरुष चलते, एक बन में पहुंचे। वहां माहाराजा विक्रमादित्य मृगयार्थ आए हुए थे। राजा से सामना होने पर उन्होंने अपने को ज्योतिष शास्त्र व्यवसायी बतलाया। राजा उनसे बात चीत कर तथा ज्योतिष शास्त्र में उनकी विद्वत्ता देख कर बड़ा विस्मित और संतुष्ट हुआ और सभा के ज्योतिषी वराह को बुला कर उनके अतिथ्य का भार उसे अर्पण किया। वराह ताड़ गया कि यह युवा मुझसे अधिक विद्वान है, इसलिए उसने उसे एक ऐसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घरमें स्थान दिया जो बहुत ही टूटा फूटा हो रहा था और जिसके गिरजाने की सतत आशंका थी पर संयोग से मिहिर निर्विघ्न उसमें रहा। अब तो बराह को लज्जित हो उसे दूसरा अच्छा स्थान देना पड़ा और राज-दर्बार में दिनोदिन मिहिर का सम्मान होने लगा। एक दिन बातों में मिहिर ने बराह से पूछा कि आपके संतानादि कितने हैं।" बराह ने उदास हो अपने दुर्भाग्य और पुत्र को समुद्र में फेंक देनी की कथा कह सुनाई। मिहिर ने गणित कर देखा कि उस पुत्र की आयु पूरी सौ वर्ष की थी और तदनुसार बराह से कहा कि आपने भ्रम से एक शून्य की गलती कर १०० का दस ठहराया और नाहक अपने पुत्र को समुद्रमें डाल दिया। यह आप की गणना का भ्रम है और गणित कर उसका भ्रम प्रमाणित कर दिया। बातों ही बातों में बराह को पता लग गया कि यही उसका त्यागा हुआ पुत्र है। अस्तु अब उसकी प्रसन्नता का पारावार न रहा और बड़े आनंद से उसने बधू सहित पुत्र को घर में स्थान दिया। बराह की पुत्रबधू खना ज्योतिष विद्या में बड़ी विचक्षण और बुद्धिमती थी यहां तक कि जब कभी गणित की कोई समस्या आन उपस्थित होती तो वह सहज ही में उसे सुलझा देती थी। बराह के गृह पर कोई प्रश्नकर्त्ता आता तो बराह के बतलाने के पूर्व्व ही भीतर से खना उसका संतोषजनक उत्तर दे देती थी। एक दिवस महाराज विक्रमादित्य ने समस्त ज्योतिषियों से पूछा कि "आकाश में नक्षत्रों की संख्या कितनी है कोई भी उत्तर न दे सका और बराह भी लज्जित और दुःखित हो घर में आ पड़े। खना ने श्वसुर को चिन्तित देख इसका कारण पूछा और कारण विदित होते ही फौरन ही गणित करके नक्षत्रों की संख्या बतला दी। अब तो बराह अत्यन्त विस्मित हुआ और जब राजसभा में जा कर अपनी पुत्रवधू की गणना के अनुसार उन्होंने नक्षत्रों की संख्या बतलाई तो राजा भी ततोधिक विस्मित हुए और खना को राजसभा में लाने की आज्ञा दी। अब तो बराह ने देखा कि अच्छी आपत्ति आई। कुलकामिनी को राजसभा में कहीं कर ले जायँ, और उसके विद्या बल से पिता पुत्र दोनों की ख्याति भी म्लान हो चली थी इसलिये दोनों ने मंत्रणा कर विदुषी खना का जिह्वाच्छेदन कर दिया। वह भी गणित से जान गई थी कि उसकी मृत्यु सन्निकट है, इस लिए उन्हें उसने रोका नहीं और जिह्वाच्छेदन के अनन्तर परलोक को प्रयाण कर गई। इस प्रकार से स्वार्थी मनुष्य ने एक विदुषी रमणी का अपघात किया। खना के बनाए हुए गणित ज्योतिष के वचन वंगभाषा में अबतक प्रचलित हैं। यथा—

जन्मपत्री का फल।

सूर्य्य कूजे राहु मिले, गाछेर दड़ि बन्धन गले।
यदि राखे ताके त्रिदशनाथ।
तबू से खाय नीचेर भात॥

अर्थात् यदि जन्म पत्री में एक घर में सूर्य्य मंगल और राहु हों तो अपमृत्यु होगी अथवा वह प्राणी नीचगामी होगा।

मृत्यु-गणना।

आशिया दूत दाडाय कोने,
कथा कहे उर्दू नयने, शीरे पृष्ठ बूके हाथ,
सेइ दूत पूछे बात, कूटे छीड़े जवे खाई।
खना बले फुरालो आइ।

अर्थ।

किसी की पीड़ा का संवाद लेकर आया हुआ दूत, यदि घर के कोने में खड़ा हो अथवा आंखें ऊपर उठा कर बातें करे अथवा सिर पर छाती पर या पीठ पर हाथ रखे रहे अथवा दांत से नाखून काटे या दांत से चर्व्वण करे तो रोगी नहीं बचेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृत्यु-परीक्षा।

सभार मध्ये जे जन भने।
तार मूखे जय जन सूने॥
तिथि बार करीया एक।
साते हरिया आयु देख॥
दूइ चार किंवा छय,
ए रोगी जीवार नए
एक तीन किंवा बाण,
यमेर हईते टानीया आन
अंक शून्य पाय जबे,
निश्चय रोगी मरीवे तबे।

अर्थ।

कोई व्यक्ति किसी की पीड़ा का संवाद लेकर सभा में आया, यह संवाद सभा में जितने लोगों सुना, उन सबों की संख्या जोड़ कर उसमें उस की तिथि और वार के अंक को जोड़ कर सात से भाग देने से यदि दो चार अथवा छः बचे मृत्यु की संभावना है। यदि एक तीन अथवा पाँच बचे तो आरोग्य हो जायगा और यदि शून्य बचे तो निश्चय मृत्यु जानना।

स्त्री आगे मरे या पुरुष इसकी गणना।

अक्षर द्विगुण चौगुण मात्रा।
नामे नामे करी समता॥
एके शून्ये मरे पति।
दूए मरे घर युवती॥

स्त्री और पुरुष दोनों के नाम के अक्षरों को जोड़ कर पहले उसका दूना करो, फिर चौगुना करके उस दो गुणे और चौगुणे दोनों अंकों को जोड़ लो। जोड़ कर जो अंक हो उसे तीन से भाग देने से यदि एक या शून्य बचें तो पति का मरण पहले यदि दो बचे तो स्त्री पहले मरे।

दृष्टांत।

पति का नाम रामचंद्र=४ अक्षर
स्त्री का नाम मोहिनी=३ ,,
दोनों का योग हुआ ७
७×२=१४×४=५६+१४=७०
७०÷३=६९ फल हुआ और एक बचा इस लिए पति आगे मरा है या मरेगा। पर यह नाम शुद्ध जन्म कुंडली का नाम होना चाहिए।

यात्रा के दिन की गणना।

तिथि वार नक्षत्र मासेर यत दिन।
एकत्र करिया सब साते कर हीन॥
एके शूभ, दूये लाभ तीने शत्रू-क्षय।
चतुर्थे ते कार्य्य सिद्धी पंचमें संशय॥
षष्ठेते मरण हय शून्य हय सूख।
ए दिने करिले यात्रा कभू नहे दूख॥

अर्थ।

तिथि, वार और नक्षत्र का अंक और महीने की तारीख इन सबों को जोड़ कर सात से भाग देना; यदि १। २। ६। ४ बचे तो शुभ है ५ बचे तो संशय, ६ बचे तो मृत्यु और शून्य बचे तो सुख।

तिथि	दशमी	१०
पुश्य नक्षत्र	आठवाँ	८
रविवार	पहला	१
फाल्गुन महीने की	तारीख	१६

३५÷७=०

शून्य बचा अतएव सुख होगा।

गर्भ के संतान की परीक्षा।

बानेर पृष्ठे दिया बान, पेटेर छेले गने आन।
नामे मासे करे एक, साते हरे संतान देख॥
एक तीन थाके बाण, तवे नारी पुत्र जान।
दूइ चारि थाके छय, अवश्य तार कन्याहय॥
यदि थाके शून्य सात, तवे नारी गर्भपात।

इसका अर्थ यों है कि पहले ५५ रख कर गर्भवती के नाम के जितने अक्षर हों वह और जितने दिन का गर्भ हुआ हो उतने महिने का अंक इन दोनों को जोड़ कर सात से भाग देने से यदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१ । ३ । ५ बचे तो पुत्र और यदि २ । ४ । ६ बचे तो कन्या और यदि सात या शून्य बचे तो गर्भपात होगा ।

दृष्टांत ।

संकेत का अंक	५५
स्त्री का नाम विलासवती	५
गर्भ चार महिने का	४

योग ६४ ÷ ७ फल हुआ ६३

बचा एक, तो पुत्र होगा ।

इसकी एक और परिक्षा भी है:—

ग्राम गर्भनि कले युता, तीन दिया हर पूता ।
एक सूत, दूये सूता, तीन हईले गर्भ मिथ्या ॥
र कथा यदि मिथ्या हय ।
से छेले तार बापेर नय ॥

गर्भवती का नाम और जिस नगर में रहती है उसका नाम इन दोनों के नाम का एक अंक और कोई फल का नाम लेकर उसका अंक तीनों को जोड़ कर तीन से भाग दो यदि एक बचे तो पुत्र और दो बचे तो कन्या यदि यह बात सच न हो तो वह संतान अपने पिता से नहीं है ।

इलाहाबाद	५	नगर का नाम
कमलावती	५	स्त्री ,, ,,
संतरा	३	फल ,, ,

१३ ÷ ३ फल हुआ १२

बचा एक अतएव पुत्र होगा ।

आयुगणना ।

किशोर तिथि किशोर वार, जन्म नक्षत्र कर सार
कि कर श्वसूर मतिहीन पल के जीवन वार दिन

अर्थ ।

जिसकी आयु निकालना हो उसके जन्म से लेकर उस नक्षत्र की स्थिति जब तक हो उसका पल बना कर प्रत्येक पल को बारह से गुणा कर से जितने दिन होंगे वही उसकी परमायु समझना

चित्रा नक्षत्र जन्म से स्थिति काल तक का दंड ७ × ६० = ४२० पल ४२० × १२ = ५०४० दि इसके ५०४० ÷ ३६० = १४ वर्ष ।

यात्रा का दिन-निर्णय ।

द्वादश अंगुलि काठी सूर्य्य मंडल दिया दि
रवी, कूड़ी, सोमे शोलो. पंचदश मंगले
बुध बृहस्पति एगारो वारो, शुक्र शनि चौदो
हांचि जेठी. पड़े जवे असगुण लाभ हवे ।

अर्थ ।

अपनी अंगुली से बारह अंगुल नाप कर लकड़ी धूप में खड़ी करनी और उस की छाया यदि रविवार को २० अंगुल, सोम १६ मंगल को पन्द्रह बुध को ११ बृहस्पति को शुक्र को १४ और शनि को १३ अंगुल पड़े यात्रा करना, इसमें छींक इत्यादि भी यदि पड़े कोई हानि नहीं हो सकती ।

गृह के शुभाशुभ की गणना ।

दीर्घ प्रस्थे यतो पाई,
एक मिशाइया ताते चाई
वेदे हरे थाके शशि भांगा घर उठे
वेदेहरे थाके दुई,
आगे भालो पाछे रुइ
वेदेहरे थाके तीन,
से गृहे नालागे ऋण
वेदे हरे थाके शून्य,
नाहीं पाप नाहीं पुण्य ।

अर्थ ।

जब घर बनाना हो तो उस भूमि की चौड़ाई नाप कर उसमें एक जोड़ कर भाग देना यदि एक बचे तो मंगल, दो बचे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो शुभ पीछे अशुभ, तीन बचे तो ऋणी नहीं
शून्य बचे तो भला बुरा कुछ भी नहीं।

दीर्घ २० हाथ
चौड़ा १४ हाथ

३४ + १ ३५ ÷ ४ फल हुआ
३२ बाकी बचा ३ अऋणी।

बना के रचे हुए ऐसे बहुत से उदाहरण हैं
इनमें से जो कई एक उदाहरण ऊपर दिए
हैं, उनके सत्या सत्य को परीक्षा द्वारा जांच
र तभी कुछ निश्चय कहा जा सकता है, क्योंकि
उका रचित कोई प्रमाणिक ग्रन्थ नहीं मिलता
केवल जनश्रुति पर ये सब बातें लिखी गई हैं।

राष्ट्रभाषा का विरोध।

जरिप वान विंकल ने अपनी २० वर्ष की नींद से जाग्रत होकर अमेरिका को स्वतंत्र देखा था तब उसकी आंखों में चकाचौंध हो गया था और वह भौंचक्का सा रह गया था। वह दिल में सोचता था कि, 'हे भगवान् यह मामला क्या है? मैं जब सोया था तब तो अमेरिका में तृतीय जार्ज का राज्य था, अब क्या हो गया? रिप वान विंकल का किस्सा हुए हमें कई वर्ष हो गए थे और हम इस किस्से को भूल गए थे। पर इन्दौर से निकलने वाले 'मल्लारि मार्त्तण्ड विजय' नामक पत्र के हम ऋणी हैं जिसके एक लेखको पढ़ कर हमें रिप वान विंकल का स्मरण हो आया। यह पत्र महादेव होलकर की सहायता से मराठी तथा हिंदी में निकलता है। इसके प्रधान संपादक श्रीयुत गो० आपटे नामक एक महाराष्ट्र महाशय ने आपने सातवीं फरवरी के अंक में मराठी में "हिन्दुस्तान ची राष्ट्रभाषा—दूसरी बाजू" नामक एक लेख लिखा है। इस लेखको पढ़ कर हमें हंसी भी आई और खेद भी हुआ; हंसी यह जान कर आई कि, अब भी ऐसे ऐसे महानुभाव विद्यमान हैं, जो समझते हैं कि राष्ट्रभाषा के आंदोलन से राष्ट्रीयता के मार्ग में बड़ी भारी बाधा पड़ेगी, और खेद हमें यह विचार कर हुआ कि हिंदी का विरोध ऐसे समय पर और ऐसे स्थान से प्रारंभ हुआ है जहां डेढ़ महीने * बाद ही महात्मा गांधीजी के सभापतित्व में हिंदी साहित्य सम्मेलन का अष्टम अधिवेशन होनेवाला है। इस लेख से जो सद्भाव टपकते हैं; उनपर ध्यान देते हुए हमारे लिये सब से अच्छी बात तो यह होती कि, हम इस लेखको उपेक्षा की दृष्टि से देखते और सचमुच यह लेख है भी उपेक्षणीय। तथापि इस लेख के विषय में लिखने का कारण केवल यही है कि, इन्दौर में थोड़े दिनों बादही हिंदी साहित्य सम्मेलन होनेवाला है और हमें इस बात की आशंका है कि, कहीं 'मल्लारि-मार्त्तण्ड के' इस लेखको पढ़कर कुछ भोलेभाले महाराष्ट्र लोगों की सहानुभूति हमारे सम्मेलन से जाती न रहे। इसके सिवा इस लेख से लोगों में यह भ्रम भी उत्पन्न हो सकता है कि सम्भवतः इंदौर की महाराष्ट्र जनताके भी येही विचार होंगे। जहां तक हमें ज्ञात हुआ है इंदौर के बहुत से महाराष्ट्र सज्जन हिंदी से प्रेम रखते हैं। यही नहीं वे सम्मेलन को सफल बनाने के लिये प्रयत्न भी कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि यह पत्र इंदौर सरकार की नीति और सम्मति को प्रकट नहीं करता है। हमारे प्रजाप्रिय महाराज हिंदी के बड़े प्रेमी हैं और वे हिंदी और मराठी में कुछ भेदभाव नहीं रखते।

---

* सम्मेलन होने के पहले यह लेख लिखा गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब सुनिए, इस मराठी लेख के लेखक क्या फर्माते हैं आप लिखते हैं 'सम्पूर्ण राष्ट्र की एक भाषा होनी उस राष्ट्र के लोगों के बीच में ऐक्य स्थापित करने का एक जोरदार साधन है, इस बात में संदेह नहीं। इसी दृष्टि से महात्मा गांधी और लोकमान्य तिलक सरीखे नेता स्वयं अपनी मातृभाषाओं की थोड़ी सी उपेक्षा करते हुए हिंदी भाषा का घोड़ा आगे बढ़ाने के लिये प्रयत्न कर रहे हैं। यूरोप खंड में भी हमारे देश की तरह छप्पन भाषाएँ हैं। वहाँ भी आज २५-३० वर्ष से सब के लिये एक भाषा करने का आंदोलन हो रहा है। वहाँ सब के बोलने की सर्व सामान्य भाषा फ्रेंच ही है। लेकिन शायद इससे फ्रेंच लोगों का औरों की अपेक्षा अधिक लाभ होगा इस वजह से अथवा किसी और कारण से विश्वामित्र की सृष्टि की तरह एक नवीन भाषा बनाने की बात एक रशियन डाक्टर के मन में आई और उसने एस्पेरांटो नाम की भाषा निकाली। आजकल 'केसरी' सरीखे पत्र जिस तरह से हिंदी की बाजू को आगे धर कर चलते हुए दिखते हैं, उसी तरह "रिव्यू आव रिव्यूज के" प्रत्येक अङ्क में एस्पेरांटो का आंदोलन करने के लिये इस पत्र के स्वर्गीय सम्पादक मि० विलियम स्टेड साहब लेख दिया करते थे। इतना जोरदार प्रयत्न भी बिलकुल निष्फल हुआ। एस्पेरांटो भाषा के सीखने वाले लाख में दो एक ही निकले। बाद अब यूरोप में एस्पेरांटो भाषा की अपेक्षा सरल एक ईटो नामक भाषा निकाली गई है, और उसका प्रचार करने के लिये एक अंतरीष्ट्रीय कमिटी नियुक्त की गई और उसके द्वारा ४० भिन्न भिन्न देशों में २०० सोसाइटियाँ उस भाषा के प्रचारार्थ स्थापित की गई हैं। इस प्रयत्न को कितना यश मिलेगा, यह आज निश्चय के साथ नहीं कहा जा सकता।"

प्रथम तो इस विषय में यूरोप और भारतवर्ष की तुलना ही नहीं की जा सकती। यूरोप भिन्न भिन्न देशों का समूह और भारतवर्ष एक देश है इसके सिवा हिंदी की तुलना एस्पेरांटो भा से करने का विचार लेखक के हृद्गत भावों एक उत्कृष्ट नमूना है। जिस भाषा के बो वाले इस समय १३ करोड़ और समझने वाले करोड़ हैं और जो भारत की सभी देशी भाषा में प्राचीनतम है, उसे नवजात एस्पेरांटो भा की उपमा देना प्रकट करता है कि भारत भावी राष्ट्र भाषा के लिये लेखक के हृदय कितना सम्मान है। आप के उपर्युक्त कथन अभिप्राय यह है कि, एस्पेरांटो भाषा के आन लन की तरह हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने आन्दोलन व्यर्थ ही होगा। आगे चलकर ने अपना अर्थ बिल्कुल स्पष्ट ही कर दिया आप लिखते हैं, "यूरोप खण्ड में एक भाषा के लिये जो जङ्गी प्रयत्न चल रहा है, वह इस लिये बड़ा शिक्षाप्रद होगा। एस्पेरांटो ईटो इन दोनों भाषाओं की लिपि ही है। जिस तरह से विवाह की करने वाले सन्यासी पहले चोटी से प्रारम्भ करते हैं इसी तरह ईटो और एस्पे रांटो भाषाओंके सीखने के लिये इनकी मालाओं से प्रारम्भ करने की आवश्यकता पड़ती। दोनो ही भाषाओं के व्याकरण के लैटिन और ग्रीक भाषाओं से मिलते जुलते और उनकी भी अपेक्षा सरल हैं। लेकिन तब इस नवीन भाषा का प्रचार वहां चोटी की गति चल रहा है। इसके भीतरी कारण को बिना सब हिन्दुस्थान की एक भाषा बनाने का करना आकाश पर कपड़ा चढ़ाने के समान होगा। इस प्रयत्न में किया हुआ श्रम किया हुआ पैसा और उत्साह और खर्च हुआ समय किसी दूसरे प्रयत्न में लगाया तो इससे अधिक श्रेयस्कर फल होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पछताना न पड़े इसलिये पहले से ही विचार करने में चतुराई है।"

वास्तव में लेखक महोदय को बड़ी दूर की सूझी है। हिंदी को राष्ट्रभाषा बनानेके लिये महात्मा गांधी और लोकमान्य तिलक प्रभृति विद्वान् जो प्रयत्न कर रहे हैं, उसका कैसा उज्ज्वल भविष्य होगा, इसका अनुमान शायद पहले कभी किसी लेखक ने इतनी बुद्धिमानी के साथ नहीं किया था!

इसके आगे चल कर लेखक ने बड़ी गंभीरतापूर्वक राष्ट्रभाषा का आन्दोलन करनेवालों को एक अद्भुत और अश्रुतपूर्व उपदेश झाड़ दिया है। आप के कथन का अभिप्राय यह है कि जो मनुष्य हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं उन्होंने इस बात पर विचार नहीं किया कि यह आंदोलन करना युक्त है या नहीं। आप लिखते हैं, "भावना भाफ के समान है और जिस तरह भाप से भरे हुए एंजिन के लिये ब्रेक की आवश्यकता होती है, उसी तरह भावना के लिए युक्त विचार की आवश्यकता है। भावना में युक्तायुक्त विचार सम्मिलित न हो तो इससे इष्टप्राप्ति की अपेक्षा अनर्थ होने की अधिक संभावना है। जिन लोगों ने फ्रांस देश में चौदहवें लुई के जमाने में राज्यक्रांति की थी उनकी भावना गैरवाजिब थी? लुई सरीखे राजा के जुल्म को नष्ट करके लोगों में समता और बंधुभाव स्थापित करने का जो लोगोंका उद्देश्य था, उसे बुरा कौन कहेगा? लेकिन उनकी भावना को युक्तायुक्त विचार का आधार नहीं मिला, इस लिये उनका जो बुरा परिणाम होनेवाला था सो हुआ। इसी प्रकार हिंदुस्थान में एक राष्ट्रभाषा प्रचार करने का जो प्रयत्न है कहीं उसका भी वैसाही परिणाम न हो। संपूर्ण राष्ट्र की एक भाषा करने का यत्न यही है कि देश में एकता की वृद्धि हो। लेकिन इस आंदोलन का यदि विपरीत ही परिणाम हो तो इस यत्न से हमारी हानि होगी और संसार में हमारी हंसी होगी।"

बहुत ठीक! बस राष्ट्रभाषा का आंदोलन करनेवालों को चाहिए कि अब भावना रूपी एंजिन में फौरन ही ब्रेक लगावें नहीं तो अब राष्ट्ररूपी रेलगाड़ी चकनाचूर होने ही वाली है! राष्ट्रभाषा के आंदोलन का परिणाम फ्रांस की राज्यक्रांति के समान भयंकर होगा! हमने कहीं पढ़ा था कि एक बार एक सिगनल दिखलानेवाले ने अपनी जान देकर एक रेलगाड़ी को जो टूटे हुए पुलकी ओर बढ़ती चली जा रही थी नदी में गिरकर नष्ट होनेसे बचाया था। निस्संदेह उसका आत्मत्याग तो प्रशंसनीय था ही, लेकिन यहां उससे भी बढ़कर आत्मत्याग का दृष्टांत हमें देख पड़ता है। भारत की राष्ट्रीय नौकाके कर्णधार महात्मा गांधी और लो० तिलक प्रभृति नेता इसकी भावना की भाफ से बेतहाशा दौड़ा रहे हैं, इसका परिणाम यह होगा कि राष्ट्रभाषा की चट्टान से टकराकर यह नौका नष्ट हो जायगी। इस संकट के समय हमारे मराठी लेखके लेखक ने लाइटहाउस की तरह उपर्युक्त चितावनी देकर बड़े देशहित का काम किया है। केवल इतना ही नहीं, बल्कि आपने और भी आत्मत्याग किया है। आप लिखते हैं, "हमने इस विषय पर बड़ी बारीकी, निष्पक्षपात तथा शांतरीति से विचार किया है"। तभी तो आप इस परिणाम पर पहुंचे हैं। बारीकी की हद हो गई! निष्पक्षपात अब इससे अधिक और क्या हो सकता है? शांतिपूर्ण विचार की बस यही पराकाष्ठा है। इसपर भी तुर्रा यह कि "भारतवर्ष के लिये एक राष्ट्रभाषा बनाने की जैसी और लोगोंकी इच्छा है वैसी ही हमारी भी जोरदार इच्छा है। निस्संदेह आपने अपनी 'कलकलींची इच्छा' का अच्छा प्रमाण दिया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"जिस प्रकार राष्ट्रीयता के लिये एक धर्म्म, एक पोशाक और आचार की आवश्यकता नहीं है, उसी प्रकार राष्ट्रीयता के लिये एक राष्ट्रभाषा की भी आवश्यकता नहीं है। राष्ट्रीयता और एक भाषा ये दो बातें हैं। इन दोनों बातों की भिन्नता पर ध्यान देते हुए ही आजतक राष्ट्रीयनेता सब हिंदुस्थान के लिये एक भाषा करने के प्रयत्न से उदासीन रहे थे। उनकी इस उदासीनता से राष्ट्र की कोई विशेष हानि हुई है ऐसा नहीं कहा जा सकता, क्योंकि सामान्य लोगों में राष्ट्रीय भावना जाग्रत करने का कार्य प्रत्येक प्रांत में प्रांतीय भाषा द्वारा आजतक बिना किसी अड़चन के चलता रहा है। इसीसे हिन्दी भाषा सारे हिंदुस्थान की राष्ट्र भाषा आजतक स्वीकार नहीं की गई है। यही नहीं, बल्कि उत्तरी हिंदुस्थान और दक्षिण हिंदुस्थान के भारतीयों में तथा हिंदुओं और मुसलमानों में जो अब तक मेल बना रहा है उसका कारण यह है कि लोगों की इच्छा के विरुद्ध "हिंदी भाषा का जुआ" उनकी गर्दन पर नहीं रखा गया। हिन्दी को राष्ट्रभाषा स्वीकृत करने का प्रस्ताव जब "एक लिपि विस्तार परिषद् ने" पास किया था कि, उसी समय मुस्लिम लीग ने भी इसका विरोध करते हुए प्रस्ताव किया था कि, 'उर्दू, को उसके राष्ट्र भाषारूपी न्यायपूर्ण स्थान से गिराने के लिये जो प्रयत्न किया जा रहा है उसे मुस्लिम लीग भयंकर समझती है। उर्दू ही हिंदुस्थान की राष्ट्रभाषा हो सकती है। हिंदी को राष्ट्र भाषा बनाने के प्रयत्न का यह पहला फल विचारणीय है। राष्ट्रभाषा के प्रश्न को उपस्थित करने से राष्ट्रीयता का बंधन टूट रहा है और इस दुर्घटना का 'सूत उवाच' (श्रीगणेशाय नमः) हो रहा है, यह बात ध्यान देने योग्य है। इसके सिवा द्रविड़ देशों में राष्ट्रभाषा का आंदोलन अभी गया ही नहीं। वहां इस प्रश्न के पहुंचने पर फूट फैल जाना संभव है। वहां राष्ट्रीयता के कार्य में अभी ब्राह्मणों और अब्राह्मणों के झगड़े की वजह से दुर्बलता आ गयी है, अब यदि राष्ट्रभाषा का प्रश्न वहां छिड़ जायगा तो यह दुर्बलता और भी बढ़ जायगी। इन सब बातों को मिलाकर विचार करते हुए यह कहना पड़ता है कि राष्ट्रभाषा के आंदोलन से इष्ट की अपेक्षा अनिष्ट होने की ही अधिक संभावना है। जो लोग हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाना चाहते हैं उन्हें यह बात नहीं सूझती।"

उपर्युक्त कथन का स्पष्ट अभिप्राय यह है कि राष्ट्रभाषा की आवश्यकता बिल्कुल नहीं है। यदि इसके लिये आंदोलन किया जायगा तो राष्ट्रीयता का बंधन और भी ज्यादा ढीला हो जायगा। देश के नेता लोग इस बात को नोट करलें कि अबतक हिंदुओं और मुसलमानों में जो मेल रहा उसका कारण यही है कि, हिंदी का जुआ उनकी गर्दन पर नहीं रक्खा गया। यदि राष्ट्रभाषा का प्रश्न उठाया गया तो उत्तरी और दक्षिणी भारत में वैसा ही घोर युद्ध ठन जायगा जैसा उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका में गुलामी प्रश्न पर ठन गया था। मुस्लिम लीग को बधाई देते हैं कि, उसे एक उससे भी बढ़ कर अपने हिमायती मिल गये। मुस्लिम लीग इस राष्ट्रभाषा के आंदोलन को केवल "view with alarm" भयंकर ही समझती है, लेकिन इस पक्षपाती महाशय को इसके परिणाम में फ्रांस की राज्यक्रांति सी दुर्घटना भी दृष्टिगोचर हो रही है। कहीं राष्ट्रभाषा का आंदोलन भारतवर्ष में Reign of Terror न कर दे। राष्ट्रभाषा आंदोलन से राष्ट्रीय कार्यों में वैसी ही दुर्घटना आ जायगी जैसी ब्राह्मणों और अब्राह्मणों के झगड़ों से आ रही है। हाय! यह सीधी सी बात भी किसीको नहीं सूझती।"

कहिए पाठक कैसे अमूल्य विचार हैं? इस मराठी लेखक ने अपने लेख में आग्रह किया है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नके इस लेख की चर्चा अभी न की जावे, वे अभी कई लेख इस विषय पर और लिखने वाले हैं। जब सब लेख समाप्त हो जावें तब उनकी चर्चा की जावे। मतलब यह कि इंदौर की महाराष्ट्र जनता में सम्मेलन तक राष्ट्रभाषा संबंधी जो लाभदायक विचार लेखक फैलाना चाहते हैं, उन के लिये पूर्ण अवसर दिया जाय! हमें खेद है कि हम अपने मराठी लेखक की इस आज्ञा का पालन नहीं कर सके। यदि यह लेख केवल अज्ञानता के ही कारण लिखा गया होता, तो हमें इस अज्ञानता पर तरस आता, लेकिन लेखक का प्रत्येक शब्द डंके की चोट उनके सद्भाव को प्रकट कर रहा है। यदि सचमुच अभी तक इस मराठी लेख के लेखक को "राष्ट्रभाषा" का महत्व ज्ञात न हो तो हम उनसे दृढ़ता पूर्वक कहते हैं कि राष्ट्रभाषा का आंदोलन वह आन्दोलन जो अब दिन दूना रात चौगुना बढ़ेगा, चाहे राष्ट्रभाषा के विरोधी भले ही इसे "इल्लीचा फेस" समझते रहें, परन्तु वे थोड़े दिनों में ही अपनी दुराशाएँ निष्फल होती देखेंगे। हम लोग तन मन धन से सम्पूर्ण भारतवर्ष में राष्ट्रभाषा का प्रचार करेंगे चाहे उससे द्वेष रखनेवाले इसे दूसरों की गर्दन पर "अनिश्चित बोझ" ही क्यों न समझें। चाहे लाल भुभकड़ भले ही चिल्लाते रहें कि इस आंदोलन के परिणाम में वैसी ही भयंकर दुर्घटनाएँ होंगी जैसी फ्रांस की राज्यक्रांति के परिणाम में हुई थीं। जिन लोगों को बुद्धि का अजीर्ण हो गया हो वे भले ही कहते रहें कि हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने से राष्ट्रीयता का सूत्र टूट जायगा और इसका नतीजा वही होगा जो दक्षिण में ब्राह्मणों और अब्राह्मणों के झगड़े से हो रहा है, परंतु उनका यह करुण-क्रन्दन अरण्यरोदन ही सिद्ध होगा। संपूर्ण ब्रिटिश भारत में ही नहीं, बल्कि देशी रियासतों में भी हिंदी की विजयपताका फहराएगी चाहे वे लोग, जो अपने २७ हजार बंधुओं के लिये किसी स्टेट के ८ लाख हिंदी भाषाभाषियों की भलाई का खून कर सकते हैं, भले ही जलभुन कर खाक होते रहें। जिनकी पक्षपात पूर्ण आँखों में राष्ट्रभाषा की यह उन्नति लालमिर्च के समान लगती हो वे अपनी आँखें बंद कर लें, जिनके कानों को हिंदी की जयध्वनि वज्र के समान प्रतीत होती हो वे अपने कानों में उँगली डाल लें, जिनके हृदय में सकल गुण आगरी नागरी की महिमा सूई की तरह चुभती हो, वे अपने हृदय को पत्थर का बना लें, कुछ भी क्यों न हो हम तो महात्मा गांधी जी के साथ बराबर यही कहते रहेंगे।

'राष्ट्रभाषा भवेदेवः सर्वश्रेष्ठाहि नागरी"

(भारतमित्र) "एक भारतीय।"

अष्टम हिंदी साहित्य सम्मेलन इंदौर।

इस बार का साहित्य-सम्मेलन अभूतपूर्व सफलता के साथ हुआ, जिससे प्रगट है कि हिंदी का विजयपताका वृटिश भारत से लेकर देशी राज्यों तक में भी फहराने लगा है। और क्यों न हो, हमारे देशी नृपति वृंद जो सदा से मातृभाषा के पृष्ठ पोषक होते चले आए हैं और जिनके आश्रय से हिंदी की रत्नमयी कविता का भंडार आज दिन हमारे गौरव का कारण है, उनके राज्य में यदि हिंदी सम्मेलन को अभूतपूर्व सफलता न होती तो अवश्य आश्चर्य की बात थी। अस्तु इंदौर नरेश ने सम्मेलन से जैसी सहानुभूति दिखाई और स्वयं बालक रालकुमार ने जिस उत्साह से सम्मेलन को बोला उसे देख सभी हिंदी प्रेमी फूले न समाए और भविष्य में दूने उत्साह के साथ कर्मक्षेत्र में बढ़ने की लालसा सबों के हृदय में जाग्रत हो रही है। क्यों न हो,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब कर्म्मवीर गांधी महाराज ने इसकी बांह पकड़ी है, फिर हिंदी के विजय होने में अब कोई संशय नहीं रह गया और यदि कर्म्मवीर गांधी जी के प्रस्ताव के अनुसार कार्य्य होता रहा तो वह दिन दूर नहीं जब मैसूर, मंद्राज मछलीपत्तन और कोलंबो में भी हिंदी-साहित्य सम्मेलन सफलतापूर्वक होगा और वहाँ के तेलुगु, कनारी और मलयालम भाषा भाषी सज्जन सम्मेलन के मंच पर खड़े हो कर हिंदी में व्याख्यान देंगे और फिर कोई यह कहने का साहस न कर सकेगा कि 'हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा नहीं'। इस सम्मेलन के प्रतिनिधियों की संख्या पिछले सब सम्मेलनों से अधिक थी और जिस दिन तारीख २९ मार्च को कर्म्मवीर गांधी जी दोपहर को अहमदाबाद से और उनकी सहधर्म्मिणी मोतीहारी से पधारीं तो उनके स्वागत के लिए जैसा उत्साह समागत जनों में देखा गया वह अवश्य इस बात को सूचित करता था कि यह स्वागत हृदय का स्वागत है।

श्रीमती को मऊ स्टेशन पर मालाएँ पहनाई गईं थीं। गांधी जी का स्वागत करने के लिये स्टेशन पर लोगों की बड़ी भीड़ थी। स्वागत कारिणी समिति के अध्यक्ष राय बहादुर सेठ हुक्मचंद, राय बहादुर डाक्टर सरयू प्रसाद, सेठ कल्याण मल हीराचंद्र कोठारी, श्रीयुत सिरेमल बापना बी० ए० एलएल० बी०, राय बहादुर सरदार माधवराव किबे तथा अन्य सज्जन और राज्य के उच्च पदाधिकारी बहुत से स्वेच्छा सेवकों सहित उपस्थित थे। महाराज कुमार प्रधान मंत्री के साथ, जो एक बरात में गये थे, वहाँ उपस्थित थे। स्वागत समारोह अपूर्व था।

जुलूस।

गांधी जी के बहुत मना करने पर भी स्वेच्छा-सेवक उनकी गाड़ी को कुछ दूर खींच ले गए। जुलूस में सैनिक, सजे हुए हाथी घोड़े और राज्य की गाड़ी थी। जुलूस बड़ी बड़ी सड़कों से होता हुआ सभापति के वासस्थान को पहुँचा।

सम्मेलन का अधिवेशन।

मंडप खूब बड़ा बनाया गया था, जिसमें दस हजार से अधिक मनुष्यों के बैठने की व्यवस्था थी। वह झंडियों आदि से भली भाँति सजाया गया था। मंडप कई भागों में विभक्त था। प्रत्येक प्रदेश के प्रतिनिधियों के आसन की स्वतंत्र व्यवस्था थी। निश्चित समय से बहुत पहले से ही प्रतिनिधियों और दर्शकों का जमाव होने लगा था।

कोई १॥ बजे महात्मा गांधी सपत्नीक मंडप में पधारे। लोगों ने खड़े हो कर 'महात्मा गान्धी जी की जय' 'देशभक्त की जय' आदि नारों से मण्डप गुंजा दिया। जो राह में खड़े थे उन्हों ने भक्ति से गद्गद हो कर उनके चरण छूए। करवीर मठ के जगद्गुरु श्रीशङ्कराचार्य भी इसी समय पधारे। लोगों ने करतलध्वनि पूर्वक उनका भी स्वागत किया। प्रिंस यशवन्त राव जी होलकर अपने अनुचरों सहित पधारे जिनका उपस्थित जनमंडली ने हर्षध्वनि के साथ स्वागत किया। आप को सादी पोशाक में देख लोग बड़े प्रसन्न हुए। पहले संस्कृत में इस भाँति मंगलाचरण हुआ।

श्लोक

दयासिन्धो विष्णो प्रणतजनबन्धो सविनयं,
भजामस्त्वां दीनाः सरलहृदया भारतजनाः।
श्रियं विद्यां वीर्यं प्रमुदमभयं शान्तिमुदयं,
यशस्तेजः श्रेयः सकलमपि सौख्यञ्च दिश नः॥

पं० गिरिधर शर्मा

अनन्तर ऋषिकुल के ब्रह्मचारियों द्वारा वैदिक मंत्र पाठ हुआ। उसके अनन्तर बालक बालिकाओं ने निम्नलिखित गान गा कर हिन्दी की महिमा घोषित की और समागत प्रतिनिधियों का स्वागत किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग–वसंत ।

वनवतु हरिरिह पुनरापं मुरलीम् ।
चुम्बितचारुचलन्मणिकुण्डललम्बितमाश्रुतिपालीम् ॥ ध्रुव ॥
अविवशतानिलपूरितविवरां देशरतिस्वनजननीम् ।
भक्तजनविविधगोपकुलहृदयविमोहनजननीम् २
कीर्तिसम्पति गोपिकाकोमलहृदयविजयिनीम्
कलिगलिधवङ्गादिसकललेकहृज्जयिनीम् ॥ ३ ॥

श्रीयुत भीकाजी बिलोरे,
गायक–किर्लोस्कर नाटक मंडली ।

कविप्रशस्ति ।

धनि धनि ध्रुव हिन्द सुअन, हिन्दी-हितकारी ।
विद्या-गुन-ज्ञान सुमन, कविता-मधु-पान-प्रवन
गुनिवन-सनमान भवन, सुमिरत सुख भारी ॥
प्रथमहिं वरदायि चन्द, भाषा कोविद कविन्द
कविता आकाश-चन्द, कलित-कला धारी ।
दूजे द्विज धूरि धन्य, कबिकुल-रबि सूर धन्य
भक्तन-मनि-मूर धन्य, रसिकन मन हारी ॥
तदुपरि श्री तुलसीदास, रघुपति पद प्रेम आस ।
अनुपम प्रतिमा प्रकास, राम-चरित-कारी ॥
श्रीयुत पुनि भारतेन्दु, कवि-मनि धनि हरिश्चन्द्र
अवतरि हरि-जिमि-गयन्द, भाषा उद्धारी ॥
पूरण मतिराम शेष, केशव कविवर विशेष ।
जिनकी सरसुति सुवेश, सरसति जग-प्यारी ।
यों पुनि मानिहु अनेक, जिनकी जग विदित टेक
विनवत तिन एक एक, श्रीधर बलिहारी ॥

पं० श्रीधर पाठक ।
श्रीगौड़ गायन समाज, जुना इन्दौर ।

गीत

(१) स्वागत करती हैं हम आज,
सविनय हे हिन्दी हितकारी ।
तज कर काम काज को सारे,
हिन्दी प्रेम हृदय में धारे,
दूर दूर से आप पधारे,
सह कर कष्ट राह के भारी ॥ स्वागत० ॥
हिंदी है हम सब की माता,
है कैसा सुखदायी नाता,
यश इसका है भारत गाता,
सिंधी, कच्छी, वंग, बिहारी ॥ स्वागत० ॥
भारत के सिर की यह बिंदी,
भारत के घर की यह हिंदी,
है प्यारी भाषा यह हिंदी,
इसकी हम जावें बलिहारी ॥ स्वागत० ॥
मिले हमें अब हिंदी शिक्षा,
गृह कारज की सुन्दर दीक्षा,
यही हमारी सब से भिक्षा,
दे दो कीरति बढ़े तुम्हारी ॥ स्वागत० ॥

पं० जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी
(चंद्रावती महिला विद्यालय)

आवें ईश ऐसे योग ।
हिलमिल तुम्हारी ओर होवें अग्रसर हम लोग ।
गिन भव्य भावों का करें अनुभव तथा उपयोग ।
उनको स्वभाषा में भरें हम सब करें उपभोग ।
विज्ञान के हित ज्ञान के हित सब करें उद्योग ।
स्वच्छन्द परमानंद पावें मेट कर भव रोग ।

श्रीयुत मथिलीशरण गुप्त
(किर्लोस्कर नाटक मंडली)

राग–[साधे सुर साधे] चौताला ।

आइये पग धरिते गुणि जन आप आज ॥ध्रु०॥
यह अष्टम सम्मेलन । उत्सव मन भावन ।
साधे यह सुयोग सगरे मिल, परम पावन—
शारदा पूजन ॥ १ ॥ आइये ॥

पं० सदाशिव गोपाल बर्वे,
(जूनी इन्दौर गायन समाज)

भारत सुत मुदा । बैठो सुजन वृंद यहां ॥ भा० ॥
जैसे कमल सोहैं सुजल तैसे तुम यहां ॥ भा० ॥
आओ सकल हिंदू-कोविद,
सदय हृदय मधुर वचन बोल सुस्वर,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाओ सत्वर स्वर्ग सुख यहां ॥ भा० ॥

श्रीयुत भीकाजी बिलोरे

गायक-गंगाधर लोंढे (विद्यार्थी)

तदनंतर युवराज प्रिंस यशवंत राव खड़े हुए। इस समय खूब करतलध्वनि हुई। आपने राज्य की ओर से प्रतिनिधियों का स्वागत करते हुए कहा "प्रतिनिधिवृन्द, आपको यहां देख कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है और मैं सानंद इस सम्मेलन को खोलता हूं। बहुत अच्छा होता यदि श्रीमान् महाराज इसे खोलते, क्योंकि सार्वजनिक हित के कार्यों में उनका बड़ा अनुराग है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि मैं आप के, कार्य की सफलता चाहता हूं। अब मैं आप से अनुरोध करता हूं कि आप अपना कार्य प्रारंभ करें।"

युवराज की अवस्था बारह वर्ष की है और वे हिंदी में बहुत अच्छी तरह बोले। उनके आसन ग्रहण करने पर लोगों ने फिर करतलध्वनिपूर्वक उन का अभिवादन किया।

अंनतर करवीर मठ के श्रीशङ्कराचार्य जी का हिंदी में भाषण हुआ। आपने सम्मेलन की सफलता की शुभ कामना की और कहा कि हिंदी भारत की राष्ट्र भाषा है। तदंतर स्वागत कारिणी समिति के सभापति राय बहादुर सेठ हुक्मचंद जी ने अपना स्वागत अभिभाषण इस प्रकार पढ़ सुनाया।

अहो अहो मम प्राणप्रिय, आर्य भ्रातगण आज।
धन्य दिवस जो यह जुर्यो, हिंदी हेतु समाज॥
भारत में यह देश धन, कहां मिलत सब भ्रात।
निज भाषाहित कटि कसे, हम कहं आज लखात॥

माननीन प्रतिनिधिगण, सज्जनो तथा महिलाओ, महानुभावो,

हमारी बहुत समय से हार्दिक अभिलाषा थी कि हमको अपनी प्यारी मातृभाषा हिंदी के प्रति श्रद्धा दिखाने का अवसर प्राप्त हो। जब हमको रायबहादुर डाक्टर सरयूप्रसाद जी त्रिपाठी द्वारा यह सूचना मिली कि आप जैसे परोपकारी सज्जनों ने हमारे विनीत निमंत्रण को स्वीकार कर लिया है तब हमारे आनंद की सीमा न रही, किंतु थोड़ेही समय के पश्चात् हमको अनेक चिंताओं ने घेर लिया, हमारी प्रथम चिंता का कारण इंदौर नगर में प्लेग का प्रकोप हुआ जिस से अक्टूबर अथवा नवंबर मास में सम्मेलन का होना असंभव प्रतीत होने लगा, परंतु हमारे विनीत निवेदन पर ध्यान देकर स्थायी समिति ने ईस्टर की छुट्टियों में सम्मेलन करना स्वीकार करके हमारी इस चिंता को मिटा दिया जिसके लिये हम स्थायी समिति के अत्यंत अनुग्रहीत हैं।

आप जैसे सरस्वती भक्तों को, हिंदी के प्रेमियों को, भारत माता के सुपुत्रों को इतनी अधिक संख्या में जमे हुए देख कर हम मध्य भारत निवासियों को जो अलौकिक और अपूर्व आनंद हो रहा है, मुझमें शक्ति नहीं है कि मैं उसका वर्णन ठीक ठीक शब्दों में कर सकूँ। हमारे हृदय आज आनंद और हर्ष से उछल रहे हैं। आप सज्जनों के आगमन से हम अपने को धन्य धन्य और कृतकृत्य समझ रहे हैं, इतना आनंददायक अवसर, इतना गौरवशाली समय आज हम लोगों को प्राप्त हुआ यह हमारे लिए अवश्य ही परम सौभाग्य का विषय है। जिसके हृदय में जरा भी जीवनशक्ति है, जिसमें जरा भी सहृदयता है वह इतने विद्वत्समूह को देख कर आनंद की लहरें हिलोरे लेने लगेगा।

हम लोगों की चिरअभिलाषा को सफल करने के लिये आप जैसे मातृभाषा हिंदी के प्रेमी सज्जन—साहित्य धुरंधर महारथी—दूर दूर देशों से अपने आवश्यकीय कार्यों को छोड़, राष्ट्रभाषा हिंदी के रथ को आगे बढ़ाने के लिये यहां पधारे हैं इसके लिये मैं आपको स्वागतकारिणी समिति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओर से हार्दिक धन्यवाद देता हुआ आपका
हर स्वागत करता हूँ।

आप लोगों ने हमारे विनीत निमंत्रण को
कार कर लिया, इसके लिए हम सब आपके
यंत कृतज्ञ हैं। आप लोग अनेक प्रकार के
रीरिक कष्ट सह कर और आर्थिक हानि उठा
र दूर दूर से यहाँ पधारे हैं और हम मध्यभारत
निवासियों को राष्ट्रभाषा हिंदी की कुछ सेवा
ने का सुअवसर दिया है, इसके लिए भी हम
आपके अत्यंत ऋणी हैं।

हमको बहुत चिंता थी कि महायुद्ध की प्रचं-
ता कि जिसके कारण हमारी न्यायशीला ब्रिटिश
रकार ही नहीं वरन समस्त संसार चिंतित हो
या है, आप में से कई महानुभावों को दूसरे राज-
निक विचारों के लिये खींचकर यहां उपस्थित
ने से रोक दे, लेकिन आज जब हम आप सर्व
हानुभावों को यहां एकत्रित देखते हैं, हमारी
र्व चिंताएं दूर होकर हम अत्यंत हर्ष में
न होजाते हैं।

इंदौरनगर, जिसमें आज यह सम्मेलन-कार्य्य
रहा है, मध्यभारत का केंद्रस्थान और हमारे
मदयालु प्रजावत्सल शिक्षा-प्रेमी श्रीमान महा-
जाधिराज राजराजेश्वर सवाई श्री तुकोजीराव
लकर की राजधानी है, जिनके सुशासन में हम-
ग अपना अत्यंत सुखमय जीवन व्यतीत करते
उनका जयजयकार करते हैं। इंदौर राज्य
रतवर्ष के आदर्श राज्यों में है और इंदौरनगर
ध्यभारत में प्रथम श्रेणी का व्यापारिक केंद्र है,
सका अनुभव आपको यहां के कल कारखाने
रादि देखने से होगा। हमारे प्रजापालक
मान महाराजाधिराज को अपनी प्रिय प्रजा के
की कितनी चिंता रहती है इसका अनुभव
महाशयों को एक दो ही उल्लेखों से हो जायगा।
के प्रकोप से बचाने के लिये नगर-रचना के
सार के निमित विचार हो रहा है और नगर-
रचना-कलाप्रवीण प्रख्यात प्रोफेसर गेडीज इस काम को कर रहे हैं। प्रारंभिक शिक्षा अनिवार्य्य तथा निःशुल्क कर दी गई है। पाठशालाओं की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ती जाती है। कृषकों की दशा सुधारने के वास्ते सहकारी बैंक तथा सभाएं खोली गई हैं। वैज्ञानिक नियमों के अनुसार कृषि सुधार का पूर्ण उद्योग किया जा रहा है। श्रीमान महाराजाधिराज का साहित्य-प्रेम सराहनीय है। इसकी उन्नति के लिये श्रीमान पांच सहस्र मुद्रा वार्षिक प्रदान करते हैं, जिन में से ढाई हजार रुपये केवल हिंदी साहित्योन्नति के लिये व्यय होते हैं। इस धन की सहायता से होलकर-हिंदी-साहित्य समिति ने कई हिंदी के उपयोगी ग्रंथ प्रकाशित किए हैं और मुद्रित हो रहे हैं। कई हिंदी लेखकों को पुरस्कार भी दिया गया है। गत वर्ष मराठी-साहित्य-सम्मेलन को, जो इंदौर में हुआ था, श्रीमान ने दशसहस्र मुद्रा प्रदान किया था। राज्य का समस्त कार्य्य हिंदी भाषा तथा देवनागरी लिपि में होता है। महाशयो, यह सम्मेलन हमारे इन्हीं परमदयालु महाराजाधिराज के आश्रय में हो रहा है और जो कुछ आप यहां देख रहे हैं वह श्रीमान्‌ही की असीम कृपा का फल स्वरूप है। मैं स्वागतकारिणी समिति तथा सर्व उपस्थि महानुभावों की ओर से श्रीमान् को कोटिशः हार्दिक धन्यवाद देता हूं। राज्य की ओर से सम्मेलन को धन जन बल सामान स्थानादि की पूर्ण सहायता मिली है। इसलिये मैं समस्त मंत्रिमंडल को हार्दिक धन्यवाद देता हूं।

इंदौर नगर मध्यभारत का केंद्रस्थान है। मध्यभारत का क्षेत्रफल ७६३६७ वर्गमील तथा जनसंख्या प्रायः एक कोटि है। जो भाषा यहाँ बोली जाती है वह या तो शुद्ध हिंदी या उसका रूपांतर मात्र है। इस देश में केवल ६५७३८ मराठी तथा ६१२५३ गुजराती भाषा बोलनेवाले हैं। जो प्रायः सब के सब हिंदी बोलते और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समझते हैं। इस देशकी मातृभाषा हिंदी ही है और इसी कारण प्रायः समस्त राज्योंमें राजकार्य हिंदी भाषा तथा देवनागरी लिपि ही में होता है। मुसलमानी राज्यों में भी हिंदी का आदर है। इस देश में उज्जैन, धार (धारा नगरी) मांडव, भेलसा, मंदोसर आदि प्राचीन नगर, महांकालेश्वर ओंकारेश्वर, चित्रकूट, अमरकंटक आदि पुनीत तीर्थस्थान और नर्मदा, क्षिप्रा आदि पवित्र नदियां हैं, इस पवित्र भूमि ने संस्कृत, प्राकृत तथा हिंदी साहित्य की जो अतुलनीय सेवा की है वह अकथनीय है। कौन नहीं जानता कि संस्कृत साहित्य के अद्वितीय प्रेमी स्वनामधन्य महाराजा विक्रमादित्य ने इसी प्रदेश को सुशोभित किया था? कौन नहीं जानता कि भर्तृहरि जी ने इस पुण्यभूमि को सुशोभित किया था? कौन नहीं जानता कि परमविद्याप्रेमी महाराजा भोज ने इसी मालवभूमि का गौरव बढ़ाया था? इसके अतिरिक्त यहाँ बड़े बड़े कवि और साहित्यसेवी हो गए हैं। संस्कृत के आदि कवि वाल्मीकिजी का निवासस्थान चित्रकूट के आसपास ही था। उज्जैन के महाराजा विक्रमादित्य के दरबार में जो कविकुल कमलाकर कालिदासादि नवरत्न थे, उनमें से बहुत से इसी पुण्यभूमि के निवासी थे। प्राकृत भाषा के प्रभावशाली कवि कुंदाचार्य्य ने इसी पवित्र भूमि में जन्म लिया था। कवि सम्राट् तुलसीदास जी का चित्रकूट के साथ जो संबंध था वह आप लोगों पर प्रकट ही है। जिसकी कविता को पढ़ कर वीररस का विद्युत् प्रवाह संपूर्ण हृदय में फैल जाता है उन भूषण कवि ने चित्रकूट के राजा के यहाँ आश्रय पाया था। महाकवि आचार्य्य केशवदास का जन्म इसी रत्नगर्भा भूमि में हुआ। पांडव चंद्रिका के रचयिता बाबा स्वरूपदास जी इस देश में हुए। रसिक शिरोमणि कवि बिहारीलाल जी का जन्म गवालियर के पास किसी ग्राम में हुआ। इस देश के देशी नृपतिगणों ने साहित्य-सेवियों को आश्रय देने तथा उनका मान सम्मान करने के अतिरिक्त स्वयं प्रशंसनीय साहित्य सेवा की है। रीवां नरेश महाराजा रघुराज सिंहजू देव, बिजावर नरेश राजा लक्ष्मण सिंह, चरखारी नरेश राजा रतन सिंह आदि का नाम कवि समाज में आदर के साथ लिया जायगा। महाराजा छत्रसाल जी ने भूषण कवि की पालकी का बांस स्वयं अपने कंधे पर रख लिया था। भला, कहिए इससे ज्यादा अधिक और क्या सम्मान हो सकता है? इस प्रदेश में कई महिलाओं ने भी साहित्य-सेवा की है। रानी बख़त कुँवरि, रानी रतन कुँवरि, रानी पजन कुँवरि और राय प्रवीण के नामों से काव्यप्रेमी अनभिज्ञ नहीं हैं।

इस समय भी मध्यभारत के कई शासकगण हिंदी को अच्छा आश्रय दे रहे हैं। श्रीयुत महाराजा साहब होलकर के हिंदी प्रेम का दिग्दर्शन हम करही चुके हैं, श्रीमान् महाराजा साहब गवालियर ने जमींदार हितकारी नामक एक उपयोगी पुस्तक लिखी है। श्रीमान् रीवा-नरेश ने युद्ध संबंधी कई अच्छी अच्छी पुस्तकें प्रकाशित की हैं। श्रीमती नवाब बेगमसाहबा भोपाल ने हिंदी की कई पुस्तकें लिखवाई हैं।

अर्वाचीन समय में भी यहां कई अच्छे अच्छे लेखक और कवि हुए हैं। विचारदर्शन, सूर्य चक्रवेध, केशरविलास, फाटका जंजाल आदि कई सुप्रसिद्ध और महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों के लेखक और हिन्दी भाषा के कवि श्रीयुत शिवचंद्र जी भरतिया इसी इन्दौर नगर में रहते थे। श्यामा स्वप्न, श्यामा सरोजिनी आदि पुस्तकों के लेखक और मेघदूत, ऋतुसंहार आदि के अनुवादक ठाकुर जगमोहन सिंह इसी देश के निवासी थे। खेदके साथ कहना पड़ता है कि समाचारपत्रों और पत्रिकाओं के विषय में यह प्रदेश पिछड़ा हुआ है। हिंदी सर्वस्व और मालवा समाचार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कई पत्र यहाँ से निकले, लेकिन अधिक तक चल नहीं सके, संतोष की बात है कि समय मध्यभारत से जयाजी प्रताप' 'मल्लारि विजय' और 'शुभचिन्तक' नाम के साप्ताहिक पत्र निकल रहे हैं। इन्दौर राज्य की प्रजा नागरिकत्व का ज्ञान कराने और उसमें जागृति उत्पन्न करने के लिये कोई दो वर्षों से श्रीमंत महाराजा साहब की आज्ञा से "मल्लारि मार्तंड" निकलने लगा है। धर्मसेवक और चन्द्रप्रभा नाम दो मासिक पत्र भी निकलते हैं। ये दोनों अभी कुछ मास से निकलने लगे हैं। धर्मसेवक गवालियर से निकलता है और थियोसोफिकल सोसाइटी का यह पत्र है। इन्दौर राज्य के सनावद नाम के एक कस्बे से 'चन्द्रप्रभा' निकलती है। यह विशेष संतोष की बात है कि इन्दौर राज्य के कस्बों तक से पत्र निकलने लगे हैं।

इन्दौर राज्य से पाँच ग्रन्थमालाएँ भी निकलती हैं। १ होलकर हिन्दी ग्रन्थमाला २ भारत गौरव ग्रन्थमाला, ३ हिन्दी नवयुवक ग्रन्थमाला, ४ विविध ग्रन्थमाला ५ नवजीवन ग्रंथमाला। इनमें होलकर ग्रंथमाला से ४ ग्रंथ, भारत गौरव ग्रंथमाला से २ ग्रंथ, हिंदी नवयुवक ग्रंथमाला से ३ ग्रंथ, प्रकाशित हो चुके हैं। विविध ग्रंथमाला सनावद से निकलेगी और उसका पहला ग्रंथ अब ही प्रकाशित होनेवाला है। हमारी हार्दिक इच्छा है कि ये ग्रंथमालाएँ दिन दूनी और रात चौगुनी उन्नति करती हुई हिन्दी में अच्छे अच्छे महत्वपूर्ण ग्रंथों को प्रकाशित करें।

सज्जनो! मध्यभारत हिंदी साहित्य की उन्नति में जिस प्रकार सहायता पहुँचाता आ रहा है उसका अब भी पहुँचा रहा है, उसका दिग्दर्शन मैं अपनी अल्प बुद्धि के अनुसार कर चुका हूँ। अब मैं आप सज्जनों के सामने अपनी यह हार्दिक अभिलाषा प्रकट करना चाहता हूँ कि राष्ट्रभाषा हिंदी की विजयपताका देश में चहुँ ओर उड़ाने की चेष्टा कीजिये।

देश के बत्तीस करोड़ हृदयों को मिलाने के लिये देश की न्यायोचित आकांक्षाओं और उदार भावों को गरीबों के झोंपड़ों से लगा कर अमीरों के महलों तक फैलाने के लिये एक राष्ट्रभाषा की आवश्यकता है। जैसा कि कवि शिरोमणि भारतेंदु जी के निम्नलिखित दोहों से प्रगट है—

लखहु न अंगरेज़न करी, उन्नति भाषा माहिं।
सब विद्या के ग्रंथ, अंगरेज़िन माँहि लखाहिं॥
शब्द बहुत परदेश के, उच्चारणहुँ न ठीक।
लिखत कछू पढ़ि जात कछु सबबिधि परम अलीक॥
पै निज भाषा जानि तेहि, तजत नहीं अंगरेज।
दिन दिन याही की करत, उन्नति पै अति तेज॥
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार।
सब देशन से लै करहु, भाषा माँहि प्रचार॥
जहाँ जहाँ जो गुण लह्यो, लियो तहाँ सो तौन।
ताहो सों अंग्रेज अब, सब विद्या के भौन॥
पढ़ि विदेशभाषा लहत, सकलबुद्धि को स्वाद।
पै कृतकृत्य न होत ये, बिन कछु करि अनुवाद॥
तुलसीकृत रामायणहुँ, पढ़त अबै चितलाय।
तब ताको आशय लिखत, भाषा माँहि बनाय॥
तासों सब ही भाँति है, इनकी उन्नति आज।
एकहि भाषा महँ अहै, जिनकी सकल समाज॥
धर्म्म युद्ध विद्या कला, गीत काव्य अरु ज्ञान।
सबके समझन योग्य है, भाषा माँहि समान॥
भारत में सब भिन्न अति, ताहीं सों उत्पात।
विविध देश मतहूँ विविध, भाषा विविध लखात॥
पै सब विद्या को कहूँ, होइ जु पै अनुवाद।
निज भाषा महँ तो सबै, याको लहै सवाद॥
जानि सकै सब कछु सबहि, विविध कला के भेद।
बनै वस्तु कल की इतै, मिटै दीनता खेद॥
राजनीति समझैं सकल, पावहिं तत्व विचार।
पहिचानें निज धर्म को, जानै शिष्टाचार॥
दूजे के नहिं बस रहैं, सीखैं विविध विवेक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होइ मुक्त दोउ जगत के, भोगें भोग अनेक ॥
यासों सब मिलि छाँड़ि के, दूजे और उपाय।
उन्नति भाषा की करहु, अहो भ्रातृगण आय ॥
बच्यो तिनकहु समय नहीं, तासों करहूँ न देर।
अवसर चूक्यो व्यर्थ को, सोच करहुगे फेर ॥
प्रचलित करहु जहान में, निज भाषा करियत्न।
राज काज दरबार में, फैलावहु यह रत्न ॥
भाषा शोधहु आपनी, होइ सबै एकत्र।
पढ़हु पढ़ावहु लिखहु मिलि, छपवावहु बहु पत्र ॥
बैर विरोधहि छोड़िकै, एक जीव सब होय।
करहु यतन उद्धार को, मिलि भाई सब कोय ॥

यह भाषा ऐसी होनी चाहिए जो देश के इस कोने से उस कोने तक न्यूनाधिक रूप से समझी जा सके, सुप्रख्यात बंगाली इतिहासवेत्ता डॉ० राजेन्द्रलाल के मतानुसार हिंदी ही में केवल यह पात्रता है। हर्ष की बात है कि हमारे देश के लोकमान्य नेताओं का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ है। महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक जैसे प्रतिष्ठित नेता इस पवित्र काम में अग्रसर हुए हैं। हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने के काम में हमें बहुत सी अनुकूलताएँ प्राप्त हो गई हैं और अब हम दृढ़ निश्चय से कार्य करते रहेंगे तो हमारी सफलता में कोई संदेह नहीं है। इसमें संदेह नहीं कि हमारे मार्ग में बड़ी बड़ी बाधाएँ उपस्थित होंगी—हमारे पथ पर काँटे बिछाए जायँगे पर अगर हम अपनी आत्मशक्तियों पर विश्वास करते हुए दृढ़ निश्चय से आगे बढ़ते हुए चले जायँगे तो मैं जोर दे कर कह सकता हूँ कि हमारा पथ साफ होता चला जायगा और हमें शीघ्र ही अपनी प्यारी मातृभाषा हिंदी को राष्ट्रभाषा के गौरवशाली पद पर प्रतिष्ठित हुई देख सकेंगे। हम आशावादी हैं और हमें पूरा विश्वास है कि हमें इस महान् और पवित्र कार्य में अवश्य सफलता प्राप्त होगी और राष्ट्रभाषा हिंदी की विजयध्वनि से सारा देश ध्वनित हो उठेगा।

जब से श्रीमान् महात्मा गांधी जी ने राष्ट्र भाषा के प्रश्न को अपने हाथ में लिया है तब से इस आन्दोलन में मानो जान आ गई है। यह आप ही की कृपा का फल है कि आज राष्ट्रभाषा का प्रश्न इतना महत्वपूर्ण बन गया है। कलकत्ते के राष्ट्रभाभाषा-सम्मेलन में, जो लोकमान्य महात्मा बालगंगाधर तिलक के सभापतित्व में हुआ था, महात्मा गांधी जी ने बड़ी योग्यतापूर्वक हिंदी का पक्ष समर्थन किया था। उसी का यह परिणाम हुआ है कि राष्ट्रभाषा के आंदोलन की चर्चा देश भर में खूब होने लगी है। महाराष्ट्र के प्रधान पत्र 'केसरी' और 'मराठा' में एक एक कालम हिन्दी के छपने लगे हैं। अंग्रेजी तथा मराठी और भी अनेक पत्रों का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ है। मराठी साहित्य सम्मेलन, गुजराती साहित्य परिषद और आंध्र कांफ्रेंस ने तो पहिले ही हिंदी को राष्ट्रभाषा स्वीकार कर लिया है। जब हम इन बातों पर ध्यान देते हैं तो हमें आनंद का वारापार नहीं रहता। लेकिन इस आनन्द के जोश में हमें अपने कर्तव्य को भूलना चाहिए।

हमारे मार्ग में अनेक कठिनाइयाँ उपस्थित होंगी किंतु वे समस्त कठिनाइयाँ दूर हो कर इस महान् कार्य्य में अवश्य सफलता प्राप्त होगी। प्रथम तथा सर्वोत्तम हमारी भावना हिंदी राष्ट्रभाषा का प्रचार करना है। हमें आशा है कि प्रचार के लिए जो विचार आपने किए हैं वे सब के सामने प्रगट करके उनको कार्य्यरूप में परिणत करने का पूर्ण उद्योग करेंगे और जिन महानुभावों के हृदयों में यह वृथा भ्रम हो गया है कि राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रचार से उनकी लघु भाषाओं अर्थात् अन्य प्रांतीय भाषाओं को क्षति पहुँचेगी उसके दूर करने का पूर्ण प्रयत्न करेंगे, क्योंकि इस कार्य्य का उद्देश्य अन्य प्रांतिक भाषाओं को क्षति पहुँचाना कदापि नहीं है। अपने अपने साहित्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में हम सब की समान उन्नति चाहते हैं, हिंदी अपनी सर्वव्यापकता तथा सरलता ही के राष्ट्रभाषा के पद पर स्वयं ही आरूढ़ हुई और इसके प्रचार का मुख्य उद्देश्य समस्त में केवल प्रेमभाव उत्पन्न करना है।

हमारी अन्य आकांक्षाएँ ये हैं कि शिक्षा का देशी भाषाओं में हो, भारतवर्ष के समस्त विद्यालयों में हिंदी को उचित स्थान दिया हिंदी के विश्वविद्यालय खोले जायँ, हिंदी भाषी प्रांतों में राजदरबार का कार्य्य हिंदी किया जाय एवं सरकारी सिक्कों तथा नोटों हिंदी भाषा को स्थान दिया जाय। हमारी अच्छा है कि सम्मेलन की परीक्षाओं के लिए शालाएँ खोली जायँ और हिंदी पुस्तकों का मूल्य पर प्रचार किया जाय। जिन प्रांतों हिंदी का प्रचार नहीं है वहाँ प्रचारक भेजे ऐसी ही हमारी अन्य अनेक अभिलाषाएँ जिन सबका वर्णन करके मैं आप सज्जनों का मूल्य समय खोना नहीं चाहता, परंतु इतना वर्णन करना आवश्यक समझता हूँ कि सरकार राय की जो बातें हैं उनको छोड़ कर शेष में सफलता प्राप्त करने के लिए हमें अपने बल भरोसे पर कार्य्य करना पड़ेगा और मातृभाषा हिंदी के साहित्य की यथार्थ उन्नति करके बता देना पड़ेगा कि वह सर्वांगपूर्ण और हिंदी भाषा में प्रत्येक कार्य्य पूर्णतया हो सकता है। इन सब कार्यों में सफलता प्राप्त करने के लिए धन की अधिक आवश्यकता होगी, धन के एकत्र करने के साधनों पर आप महाशय अवश्य ही विचार करेंगे। समय स्पष्ट बता रहा है कि अब कार्य में प्रवृत्त होना चाहिए। मौखिक आलाप से सफलता प्राप्त नहीं होगी। जो कुछ कहते हैं उसको कार्य्यरूप में परिणत करना हमारा मुख्य कर्तव्य है। तोपें गोले बरसा रही हैं। सेना-नायक बराबर आगे बढ़ने की आज्ञा दे रहा है। ऐसी दशा में सच्चे शूर सिपाही का यही कर्तव्य है कि वह साहस के साथ अपने सेनापति की आज्ञा मान कर आगे बढ़े। आप महानुभावों को ज्ञात होगा कि हमारे निवेदन करने पर कर्मवीर महात्मा मोहनदास कर्मचंद गांधी ने अपने महान् महत्वपूर्ण कार्यों को छोड़ कर अत्यंत कृपापूर्वक इस सम्मेलन के सभापति का आसन सुशोभित करना स्वीकार किया है और यात्रादि के महान् कष्ट भोग कर वे इंदौर पधारे हैं। आज हमारे इस साहित्यरूपी रणक्षेत्र के वेही सत्याग्रही, सच्चे कर्मवीर सेनानायक हैं। वे आपको बतावेंगे कि इस रणक्षेत्र में विजय प्राप्त करने के क्या क्या साधन हैं। आप महानुभावों को उनके कथनानुसार सच्चे शूर सिपाही की भाँति आगे बढ़ कर अपना कर्तव्य पालन करना होगा। मेरी भाँति आप महानुभाव भी महात्मा गांधी जी की अमृत वाणी सुनने को अत्यंत उत्सुक हो रहे हैं। इसलिए मैं अपने भाषण को समाप्त करता हुआ आप समस्त विराजमान सज्जनों को जिन्होंने यहाँ पधार कर सम्मेलन की शोभा बढ़ाई है, हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। प्रिय सज्जनो मैं अधिक कह कर आपके अमूल्य समय को नष्ट नहीं करना चाहता परंतु अपना आसन ग्रहण करने के पहले मुझे एक गौरवजनक कर्तव्य पालन करना है कि जिन महात्मा मोहन दास कर्मचंद गांधी ने दक्षिण ऑफ्रिका के सत्याग्रह संग्राम में विजय करके देश विदेश में भारत माता का मुख उज्ज्वल कर दिया है, जिन्होंने निःस्वार्थ भाव से देश-सेवा करते हुए कर्म योग का सच्चा उदाहरण हमारे सामने उपस्थित किया है, जिन्होंने चम्पारन की उन्नीस लाख प्रजा का कष्ट दूर करके अपूर्व कीर्ति प्राप्त की है, जिसकी दिगंतव्यापिनी यशध्वनि संपूर्ण भारतवर्ष में गूँज रही है, जिन महानुभाव ने स्वार्थ को तुच्छ समझ कर अपना तन मन धन परमार्थ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में अर्पण कर दिया है, जिन महापुरुष ने अपने स्वार्थ को भस्म करके उसकी खाद से परोपकार रूपी वाटिका को हरा भरा किया है, जिन कर्मवीर ने स्वयं दुःख भोग कर दूसरों को सुखी बनाने का ही उद्योग किया है और यही जिनके जीवन का महान् उद्देश्य है ऐसे महापुरुष का परिचय देने का साहस करना मानो सूर्य को दीपक सा दिखाना है।

कविवर मैथिलीशरण जी गुप्त के कथनानुसार-
सत्याग्रह संग्राम विजेता नेता अपना आज है।
जिसके सिक्के ने हिंदी की रक्खी अब भी लाज है॥

प्रिय महानुभाव, आपको यह बतलाने की आवश्यकता नहीं है कि भारत की सभी उपयोगी संस्थाओं का इस समय उद्देश्य यही है कि संसार के राजनैतिक, सामाजिक, व्यापारिक और ज्ञान-संबंधी क्षेत्र में भारतवर्ष उचित स्थान प्राप्त करे। यदि हमारा हिंदी साहित्य-सम्मेलन इस उद्देश्य को सफल बनाने में कुछ भी सहायता दे तो उसका होना सफल होगा। महात्मा गांधी जी का सभापतित्व उस राष्ट्रीय रूप का प्रमाण है जो सम्मेलन अब धारण कर रहा है।

इसलिए मैं अपना आसन ग्रहण करने के पूर्व महात्मा गांधी जी से अत्यंत विनीत भाव से प्रार्थना करता हूँ कि अब आप सभापति के आसन को अलंकृत करें।

अनन्तर आपने नियमानुसार महात्मा मोहन दास कर्म्मचन्द गान्धीजी के सभापति का आसन ग्रहण करने का प्रस्ताव किया; प्रस्ताव करते हुए कर्मवीर के दक्षिण अफ्रिका तथा बिहार में दृढ़ हो कर मातृ भूमि का कार्य्य करने की चर्चा की और निःस्वार्थ भाव से नाना उपायों से भारत की सेवा की बात भी कही। राव बहादुर किबे ने उक्त प्रस्ताव का अनुमोदन तथा श्रीमती हेमन्त कुमारी चौधरानी, महाराज बलभद्रसिंह जी, पं० जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी (कलकत्ता), आनरेबल रायबहादुर पं० विष्णुदत्त शुक्ल (जबलपुर), बा[illegible] गौरीशङ्कर प्रसाद (बनारस) तथा उदयपुर [illegible] जुडीशल सेक्रेटरी पं० रामाकान्त मालवीय [illegible] समर्थन किया।

कर्मवीर गांधी के आसन ग्रहण करने प[illegible] कई मिनट तक करतलध्वनि होती रही। स्वागत कारिणी सभा के सभापति ने उन्हें माला पहना[illegible] तत्पश्चात् स्वागत समिति के मंत्री डा० [illegible] प्रसाद ने कितने ही सज्जनों के भेजे हु[illegible] सहानुभूति सूचक तार और पत्र पढ़ कर सुना[illegible] जिनमें निम्नलिखित नाम विशेष उल्लेख योग्य [illegible] इन्दौर नरेश, झालरापाटन के महाराज, धार [illegible] महाराज, माननीय मालवीय जी और दक्षि[illegible] अफ्रिका प्रवासी भारतवासी।

महाराज का तार।

श्रीमान् महाराज होलकर ने यह त[illegible] दिया था—

"मैं हिंदी साहित्य सम्मेलन के सभाप[illegible] तथा प्रतिनिधियों का अपनी राजधानी में हार्दि[illegible] स्वागत करता हूं और इंदौर में अपनी अनिव[illegible] अनुपस्थिति के लिये दुःख प्रकाशित करता हू[illegible] सम्मेलन के उद्देश्यों से मेरी पूरी सहानुभूति [illegible] उसकी सफलता मैं हृदय से चाहता हूं।"

मा० मालवीय जी का पत्र।

कर्म्मवीर गांधी ने अपना अभिभाषण आ[illegible] करने के पहले मालवीय जी एक लम्बा चौड़ा [illegible] पढ़ सुनाया जिसमें उन्होंने लिखा था कि मु[illegible] पूरा विश्वास है कि हिन्दी राष्ट्रभाषा है ही [illegible] हिन्दी तथा उर्दू कार्य्यतः एक ही हैं। उन्[illegible] अपनी अनुपस्थिति के लिये दुःख और सम्मे[illegible] के उद्देश्यों से सहानुभूति प्रकट की। तत्पश्च[illegible] महात्मा गान्धी ने तीव्र शब्दों में इन्दौर के [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंगरेजी में 'एट होम' पार्टी का निमंत्रण पत्र देखने पर दुःख प्रकट किया।

आपने दुःख के साथ दर्शकों को बताया कि इंदौर में भी प्रार्थी हिन्दी भाषा में अपने प्रार्थना पत्र भेज सकते हैं पर, राजकीय कार्यालयों में न्यायाधीश अपने हुक्मनामे में और वकील अपनी बहस में अंगरेजी का व्यवहार किया करते हैं। जबतक लोग मातृभाषा का महत्व तथा उसकी आवश्यकता नहीं समझेंगे तबतक सफलता की सम्भावना नहीं है। तत्पश्चात् आपने अपना अभिभाषण इस प्रकार पढ़ सुनाया—

आपने मुझको इस सम्मेलन का सभापतित्व देकर कृतार्थ किया है। हिन्दी साहित्य की दृष्टि से मेरी योग्यता इस स्थान के लिये कुछ भी नहीं है यह मैं खूब जानता हूं। मेरा हिन्दी भाषा का असीम प्रेम ही मुझे यह स्थान दिलाने का कारण हो सकता है। मैं उम्मीद करता हूं कि प्रेम की परीक्षा में मैं हमेशा उत्तीर्ण होऊंगा।

साहित्य का प्रदेश भाषा की भूमि जानने पर ही निश्चित हो सकता है। यदि हिन्दी भाषा की भूमि सिर्फ उत्तर प्रान्त होगी तो साहित्य का प्रदेश संकुचित रहेगा। यदि हिन्दी भाषा राष्ट्रीय भाषा होगी तो साहित्य का विस्तार भी राष्ट्रीय होगा। जैसे भाषक वैसी भाषा। भाषासागर में स्नान करने के लिये पूर्व-पश्चिम, दक्षिण-उत्तर से पुनीत महात्मा आवेंगे तो सागर का महत्व स्नान करनेवालों के अनुरूप होना चाहिये। इसलिये साहित्य दृष्टि से भी हिन्दी भाषा का स्थान विचारणीय है।

हिन्दी भाषा की व्याख्या का थोड़ासा ख्याल करना आवश्यक है। मैं कईबार व्याख्या कर चुका हूं कि हिन्दी भाषा वह भाषा है जिसको उत्तर में हिन्दू व मुसलमान बोलते हैं और जो नागरी अथवा फारसी लिपि में लिखी जाती है। यह किसी एकदम संस्कृतमयी नहीं है न वह एकदम फारसी शब्दों से लदी हुई है। देहाती-बोली में जो माधुर्य मैं देखता हूं वह न लखनऊ के मुसलमीन भाइयों की बोली में, न प्रयाग के पंडितों की बोली में पाया जाता है। भाषा वही श्रेष्ठ है जिसको जन-समूह सहज में समझ ले। देहाती बोली सब समझते हैं। भाषा का मूल करोड़ों मनुष्यरूपी हिमालय से मिलेगा, और उसमें ही रहेगा। हिमालय में से निकलती हुई गंगाजी अनन्त काल तक बहती रहेंगी ऐसे ही देहाती हिन्दी का गौरव रहेगा और जैसे छोटीसी पहाड़ी से निकलता हुआ झरना सूख जाता है वैसे ही संस्कृतमयी तथा फारसीमयी हिन्दी की दशा होगी।

हिन्दू मुसलमानों के बीच में जो भेद किया जाता है वह कृत्रिम है। ऐसी ही कृत्रिमता हिन्दी व उर्दू भाषा के भेद में है। हिन्दुओं की बोली से फारसी शब्दों का सर्वथा त्याग और मुसलमानों की बोली से संस्कृत का सर्वथा त्याग अनावश्यक है। दोनों का स्वाभाविक संगम गंगा यमुना के संगम सा शोभित अचल रहेगा। मुझे उम्मीद है कि हम हिन्दी उर्दू के झगड़े में पडकर अपना बल क्षीण नहीं करेंगे। लिपि की कुछ तकलीफ जरूर है। मुसलमीन भाई अरबी लिपि में ही लिखेंगे, हिन्दू बहुत कर नागरी लिपि में लिखेंगे। राष्ट्र में दोनों को स्थान मिलना चाहिए। अमलदारों को दोनों लिपिका ज्ञान आवश्यक होना चाहिए। इसमें कुछ कठिनाई नहीं है। अन्त में जिस लिपि में ज्यादः सरलता होगी उसी की विजय होगी। भारतवर्ष में परस्पर व्यवहार के लिये एक भाषा होनी चाहिए इसमें कुछ संदेह नहीं है। यदि हम हिंदी उर्दू का झगड़ा भूल जांय तो हम जानते हैं कि मुसलमीन भाइयों की तो उर्दू ही राष्ट्रीय भाषा है। इस बात से यह सहज में सिद्ध होता है कि हिन्दी या उर्दू मुगलों के जमाने में राष्ट्रीय भाषा बनती जाती थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज भी हिन्दी से स्पर्धा करनेवाली दूसरी कोई भाषा नहीं है। हिन्दी उर्दू का झगड़ा छोड़ने से राष्ट्रीय भाषा का सवाल सरल हो जाता है। हिंदुओं को फारसी शब्द थोड़ा बहुत जानना पड़ेगा इसलामी भाइओं को संस्कृत शब्द का ज्ञान संपादन करना पड़ेगा। ऐसे लेन देन से हिंदी भाषा का बल बढ़ जायगा, और हिंदू मुसलमानों की एकता का बड़ा साधन हमारे हाथ में आ जायगा। अंगरेजी भाषा का मोह दूर करने के लिये इतना अधिक परिश्रम करना पड़ेगा कि हमें लाजिम है कि हम हिंदी उर्दू का झगड़ा न उठावें। लिपि की तकरार भी हमको न उठानी चाहिए।

अंगरेजी भाषा राष्ट्रीय भाषा क्यों नहीं हो सकती है, अंगरेजी भाषा का बोझा प्रजा के ऊपर रखने से क्या हानि होती है, हमारी शिक्षा का माध्यम आज तक अंगरेजी होने से प्रजा जैसी कुचल दी गई है, हमारी जातीय भाषा क्यों कंगाल हो रही है, इन सब बातों पर मैं अपनी राय भागलपुर और भरूच के व्याख्यानों में दे चुका हूँ इसलिये मैं यहां फिर नहीं देना चाहता। इन दोनों व्याख्यानों में से भाषा संबंध का भाग मैं इस व्याख्यान के परिशिष्टरूप में रख दूँगा। इस बात में संदेह नहीं हो सकता है। हमारे कविवर सर रवीन्द्रनाथ ठाकुर, विदुषी बेसंट, लोकमान्य तिलक और अन्यान्य प्रतिष्ठित और आप्त व्यक्तियों का मंतव्य इस विषय में ऐसा ही है। कार्य की सिद्धि में कठिनाइयां तो होंगी ही किंतु उपाय करना इस सभा पर निर्भर है। लोकमान्य तिलक महाराज ने अपना अभिप्राय कार्य करके बता दिया है। उन्होंने "केसरी" में और "मराठा" में हिंदी विभाग शुरू कर दिया है। भारतरत्न पंडित मदनमोहन मालवीय जी का अभिप्राय भी हिंदुस्थान में अज्ञात नहीं है। तो भी मुझे मालूम है कि हमारे कई विद्वान नेताओं का अभिप्राय है कि कुछ वर्षों तक तो सिर्फ अंगरेजी ही राष्ट्रीय भाषा रहेगी। इन नेताओं से हम विनयपूर्वक कहेंगे कि अंगरेजी के इस मोह से प्रजा पीड़ित हो रही है। अंगरेजी शिक्षा पानेवालों के ज्ञान का लाभ प्रजा को बहुत ही कम मिलता है और अंगरेजी शिक्षितवर्ग और आम लोगों के बीच बड़ा दर्याव आपडा है।

कहना आवश्यक नहीं है कि मैं अंगरेजी भाषा से द्वेष नहीं करता हूं। अंगरेजी साहित्य-भण्डार से मैंने भी बहुत रत्नों का उपयोग किया है अंगरेजी भाषा के मार्फत हमको विज्ञान इत्यादि का खूब ज्ञान लेना है। अंगरेजी का ज्ञान कितनेक भारतवासियों के लिये आवश्यक है। लेकिन इस भाषा को उसका उचित स्थान देना एक बात है, उसकी जड पूजा करना दूसरी बात है।

हिंदी उर्दू राष्ट्रीय भाषा होनी चाहिए इस बात को सिर्फ स्वीकार करने से हमारा मनोरथ सिद्ध नहीं हो सकता है, तो किस प्रकार हम सिद्धि पा सकेंगे? जिन विद्वद्गणों ने इस मंडप को विभूषित किया है वे भी अपनी वक्तृता में हमको इस विषय में जरूर कुछ सुनायेंगे। मैं सिर्फ भाषाप्रचार के बारे में कुछ कहूंगा। भाषाप्रचार के लिये हिंदी शिक्षक होना चाहिए। हिंदी बंगाली सीखनेवालों के लिये एक छोटीसी पुस्तक मैंने देखी है। वैसीही मराठी में भी है। अन्य भाषा भाषियों के लिये ऐसी किताबें देखने में नहीं आई हैं। यह काम करना जैसा सहल है वैसा ही आवश्यक है। मुझे उम्मीद है कि यह सम्मेलन इस कार्य को शीघ्रता से अपने हाथ में लेगा। ऐसी पुस्तकें विद्वान और अनुभवी लेखकों के द्वारा बनवानी चाहिए।

सब से कष्टदायी मामला द्रविड भाषाओं के लिए है। वहां तो कुछ प्रयत्नही नहीं हुआ है। हिंदी भाषा सिखानेवाले शिक्षकों को तैयार करना चाहिए। ऐसे शिक्षकों की बहुतही कमी है। ऐसे एक शिक्षक प्रयागजी से आप के लोकप्रिय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...भाई पुरुषोत्तमदास जी टण्डन द्वारा मुझे ...हैं।

हिन्दी भाषा का एक भी संपूर्ण व्याकरण मेरे ...में नहीं आया है। जो हैं सो अंग्रेजी में बिला... पादरियों के बनाये हुए हैं। ऐसा एक व्याक... डाक्टर केलाग का रचा हुआ है। हिन्दुस्थान ...अन्यान्य भाषाओं का मुकाबला करनेवाला ...करण हमारी भाषा में होना चाहिए। हिन्दी प्रेमी ...द्वानों से मेरी नम्र बिनती है कि वे इस त्रुटि को ...पूर्ण करें। *हमारी राष्ट्रीय सभाओं में हिन्दी भाषा ...का ही इस्तेमाल होना आवश्यक है। कांग्रेस के ...कार्यकर्ताओं और प्रतिनिधियों द्वारा यह प्रयत्न ...होना चाहिए। मेरा अभिप्राय है कि यह सभा ...ऐसी प्रार्थना आगामी कांग्रेस के कर्मचारियों के ...समुख उपस्थित करे।

हमारी कानूनी सभाओं में भी राष्ट्रीय भाषा ...द्वारा कार्य चलना चाहिए। जब तक ऐसा नहीं होता तब तक प्रजा को राजनैतिक कार्यों में ठीक ...तालीम नहीं मिलती है। हमारे हिन्दी अखबार ...इस कार्य को थोड़ा सा करते तो हैं लेकिन प्रजा ...को तालीम अनुवाद से नहीं मिल सकती है। ...हमारी अदालतों में जरूर राष्ट्रीय भाषा और ...प्रांतीय भाषा का प्रचार होना चाहिए। न्याया... ...लोगों की मार्फत जो तालीम हमको सहज ही ...मिल सकती है उस तालीम से आज प्रजा वंचित ...रहती है।

भाषा की सेवा जैसी हमारे राजा महाराजा ...कर सकते हैं वैसी अंग्रेज सरकार नहीं कर ...सकती। महाराजा होलकर की कौंसिल में ...कचहरी में और हर एक काम में हिन्दी का और ...प्रांतीय बोली का ही प्रयोग होना चाहिए। उनके उत्तेजन से भाषा बहुत ही बढ़ सकती है। इस राज्य की पाठशालाओं में शुरू से आखीर तक सब तालीम मादरी जबान में देने का प्रयोग होना चाहिए। हमारे राजा महाराजाओं से भाषा की बड़ी भारी सेवा हो सकती है। मैं उम्मीद रखता हूं कि होलकर महाराज और उनके अधिकारी वर्ग इस महान कार्य को उत्साह से उठा लेंगे।

ऐसे सम्मेलन से ही हमारा सब कार्य सफल होगा, ऐसी समझ भ्रम ही है। जब हम प्रति दिन इसी कार्य की धुन में लगे रहेंगे तब ही इस कार्य की सिद्धि हो सकेगी। सैंकड़ों स्वार्थत्यागी विद्वान जब इस कार्य को अपनावेंगे तब ही सिद्धि संभव है।

मुझे खेद तो यह है कि जिन प्रान्तों की मातृ-भाषा हिंदी है वहां भी उस भाषा की उन्नति करने का उत्साह नहीं दिखाई देता है। उन प्रान्तों में हमारे शिक्षितवर्ग आपस में पत्र व्यवहार और बातचीत अंग्रेजी में करते हैं। एक भाई लिखते हैं कि हमारे अखबार चलानेवाले अपना व्यवहार अंग्रेजी के मारफत करते हैं, अपने हिसाब किताब वे अंग्रेजी में ही रखते हैं। बात छोटी है, लेकिन उसमें रहस्य बहुत है। फ्राँस में रहनेवाले अंग्रेज अपना सब व्यवहार अंग्रेजी ही में रखते हैं। हम अपने देश में अपने महत् कार्य विदेशी भाषा में करते हैं। मेरा नम्र लेकिन दृढ़ अभिप्राय है कि जब तक हम भाषा को राष्ट्रीय और अपनी अपनी प्रांतीय भाषाओं को उनका योग्य स्थान नहीं देंगे तब तक स्वराज्य की सब बातें निरर्थक हैं। इस सम्मेलन द्वारा भारतवर्ष के इस बड़े प्रश्न का निराकरण हो जाय ऐसी मेरी आशा और प्रभुपति से प्रार्थना है।

अपना लिखित अभिभाषण समाप्त करने के बाद आपने हिंदी प्रचार के और भी कई एक उपयोगी उपाय बतलाए, तथा उसके बाद माहा-

* सभा द्वारा ऐसा व्याकरण शीघ्र ही प्रकाशित होनेवाला है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा साहब इंदौर की ओर से सम्मेलन को दस हजार रुपए के दान की सूचना मिली, जिस पर समागत जनों की हर्ष ध्वनि के बीच सभापति जी ने महाराजा साहब को धन्यवाद दिया।

इसी दिन तीसरे पहर इंदौर राज्य के प्रधान मंत्री जी की ओर से प्रतिनिधि गणों को प्रीतिभोज दिया गया तथा रात्रि को निर्व्वाचक समिति ने अपना कार्य्य किया तथा ता: ३० को प्रातः काल प्रतिनिधियों ने एकत्र हो भारत के भिन्न भिन्न प्रांतों में हिंदी प्रचार के उपाय निर्धारित किए। मध्यान्ह समय पुनः सम्मेलन की बैठक हुई।

पहले सरस गीतों द्वारा कार्य्य आरंभ किया गया, फिर मोतिहारी में नजरबंद श्रीयुत् सत्यदेव का सम्मेलन की सफलता के विषय में सहानुभूति सूचक पत्र सभापति जी ने पढ़ सुनाया, तदनन्तर तेरह उपयोगी प्रस्ताव पास हुए और काशी के श्रीयुत् शिवप्रसाद जी के अपील करने पर प्रायः तीस सहस्र रुपए के चंदे के बचन मिले जिसमें दस सहस्र महाराजा साहब का भी शामिल है। तथा दस सहस्र सेठ हुकुम चंदजी और पांच सहस्र काशी के एक सज्जन, पांच सौ जगद्गुरु शंकराचार्य्य तथा बाकी के रुपए अन्य सज्जनों ने देने की प्रतिज्ञा की। दूसरे दिवस ता० ३१ मार्च को मध्यान्ह समय कार्य्य आरंभ हुआ तथा कई विद्वत्ता पूर्ण लेख और कविताएं पढ़ी गईं जिन में तीन विदुषी महिलायों ने भी भाग लिया। इसके बाद सम्मेलन के उत्साही मंत्री ने गत वर्ष की रिपोर्ट सुनाई। तदनंतर मद्रास प्रांत में हिंदी प्रचार के विषय में राय बहादुर पं० विष्णुदत्त जी का प्रस्ताव उपस्थित हुआ, जिनका एक पत्र इस विषय का अन्यत्र भी छपा है। तदनन्तर इस प्रस्ताव को कार्य्य में परिणत करने के लिए एक कमेटी बनाई गई और फिर राजपुताने की रियासतों में हिंदी प्रचार के प्रस्ताव के पास होने के बाद सम्मेलन परीक्षा में उत्तीर्ण विद्यार्थियों को पदक तथा प्रमाण पत्र दिए गए। तदनंतर आगामी अधिवेशन का बम्बई में होना निश्चय हुआ। सभापति कार्य्यकर्ता इत्यादि सज्जनों को धन्यवाद देने का कार्य्य समाप्त होने के बाद कर्मवीर गांधी जी ने अपना अंतिम व्याख्यान दिया जिस का सारांश यह था कि "नियमबद्ध कार्रवाई के अधीन सैनिक प्रबंध की तरह हमलोगों को रहना चाहिए, क्योंकि जनता की सच्ची सेवा और स्वार्थ त्याग की शिक्षा इसी से होती है। यहां स्वयं सेवकों ने जो सेवा की है वह वास्तव में इस बात का अच्छा निदर्शन है।

अंगरेजी भाषा में बच्चों के सात वर्ष नष्ट करने की अपेक्षा यदि हमारे राजे महाराजे, धनी निर्धन सब लोग कमर कस कर मातृ भाषा द्वारा शिक्षा प्रचार के काम में लग जाँय तो हमारा बहुत सा समय बच जायगा। धन, शरीर बुद्धि और आत्मा के सहयोग से भारी से भारी काम भी सहज साध्य हो जाते हैं। जो महाशय चौबीस घंटों में कुछ भी समय देश सेवा के अर्थ नहीं दे सकते वे हिंदुस्तान में पैदा होने लायक नहीं हैं।"

अनंतर ३॥ बजे सम्मेलन का कार्य्य सानंद समाप्त हुआ।

———

नोट—पृष्ठ २०९ में जो गाना छपा है उसका शुद्ध रूप इस प्रकार है।

उदित भए लखि सरस बसंत,
प्रमुदित दसौ दिशा हसंत।
शीतल मंद सुगंधित बहे समीर,
गूँजत चहुंदिसि भंवर भीर,
पिय बिन बिरहिणी मन मलीन,
मन्मथ सर तापित तन अति छीन॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभा का कार्य-विवरण।

तारीख २७ अक्तूबर १९१७ तथा तारीख २४ दिसम्बर सन् १९१७ को सन्ध्या के ५ बजे सभा के अधिवेशन किए गए थे पर कोरम पूरा न होने के कारण दोनों ही दिन अधिवेशन न हो सके।

साधारण सभा।

सोमवार तारीख १७ दिसम्बर सन् १९१७
सन्ध्या के ५ बजे—स्थान-सभा भवन

(१) गत अधिवेशन (ता० २९ सितम्बर १९१७) का कार्य्य विवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।

(२) प्रबन्धकारिणी समिति का ता० ७ दिसम्बर सन् १९१७ का कार्य्यविवरण सूचनार्थ पढ़ा गया।

(३) बाबू रामचन्द्रवर्मा ने प्रश्न किया कि ७ दिसम्बर १९१७ के निश्चय नं० ३ के अनुसार उनका जो पत्र बाबू श्यामसुन्दर दास जी की सेवा सम्मति के लिये भेजा गया था उसका उत्तर अब तक उन्हें क्यों नहीं मिला। इस पर मंत्री ने सूचना दी कि इस सम्बन्ध में बाबू श्याम सुन्दर दास जी की सम्मति अभी प्राप्त नहीं हुई।

निश्चय हुआ कि बाबू श्याम सुन्दर दास जी से प्रार्थना की जाय कि वे कृपापूर्वक इस सम्बन्ध में अपनी सम्मति शीघ्र ही भेज कर सभा को अनुगृहीत करें।

(४) पण्डित श्याम सुन्दर पति तिवारी के प्रथम प्रश्न का उत्तर जो गत अधिवेशन में नहीं दिया गया था, मंत्री ने नीचे लिखे अनुसार दिया—

"अब तक" से यदि सभा के स्थापन से आज तक का अभिप्राय है तो इस प्रश्न के पहिले भाग का उत्तर के लिए कई महीने के समय की आवश्यकता होगी। हिन्दी शब्दसागर और मनोरंजन पुस्तकमाला का व्योरा अनुमान से इस प्रकार है—

	आय	व्यय
हिन्दी शब्द सागर	१४१२)	१५५०)
मनोरंजन पुस्तकमाला	६३६)	८५०)

शेष विभागों का कोई व्योरा नहीं दिया जा सकता।

(५) बाबू जगन्मोहन वर्मा का पत्र जिस पर तीन सभासदों के हस्ताक्षर थे उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि प्रबंधकारिणी समिति ने पंडित गिरिजा दत्त बाजपेयी के स्थान पर बाबू शिवप्रसाद गुप्त को जो अपना सदस्य चुना है उससे वे असन्तुष्ट हैं और नियम ४३ (१०) के अनुसार इसका विचार साधारण सभा में होना चाहिए।

निश्चय हुआ कि नियम ४३ (१०) के अनुसार इस पत्र पर ५ सभासदों के हस्ताक्षर होने चाहिएँ।

(६) बाबू राम चन्द्र वर्मा ने इसी सम्बन्ध में ५ सज्जनों से हस्ताक्षर करा कर एक नया प्रस्ताव दिया और कहा कि नियम ४३ (४) के अनुसार इसे आवश्यकीय प्रस्ताव समझ कर इस पर तत्काल विचार किया जाय।

सभापति महोदय ने कहा कि उनकी सम्मति में इस पर तत्काल विचार करना अनुचित होगा। इस पर बाबू रामचन्द्र वर्मा ने अपना प्रस्ताव लौटा लिया।

(७) पण्डित केदार नाथ पाठक तथा अन्य पांच सभासदों का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि प्रबन्धकारिणी समिति ने पं० गोविन्दराव जोगलेकर के पत्र पर बाबू शिवप्रसाद गुप्त को जो पुस्तकालय का निरीक्षक चुना है उससे वे असन्तुष्ट हैं।

निश्चय हुआ कि प्रबन्धकारिणी समिति के जिस अधिवेशन में बाबू शिवप्रसाद गुप्त पुस्तका-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लय के निरीक्षक चुने गए हैं उसका कार्यविवरण न तो अभी उस समिति द्वारा स्वीकृत हुआ है और न अभी वह साधारण सभा में उपस्थित हुआ है । अतः उस पत्र पर इस अधिवेशन में विचार नहीं हो सकता ।

(८) सभासद होने के लिए निम्नलिखित सज्जनों के आवेदनपत्र उपस्थित किये गए और स्वीकृत हुए ।

(१) बाबू बागेश्वर प्रसाद गुप्त, पुरानी बस्ती, रायपुर १॥)

(२) पण्डित शिव दुलारे त्रिपाठी, मंत्री, ना०, प्र० सभा, मौरावां, उन्नाव १॥)

(३) पण्डित राम पाण्डेय, मुख्तार, आजमगढ़ ३)

(४) पण्डित गणेशदत्त शर्मा गौड़, सम्पादक चन्द्रप्रभा, आगर, मालवा १॥)

(५) बाबू विश्वंभर सिंह, ४।१२२ चेतगंज, काशी १॥)

(६) बाबू सुरेन्द्र नाथ भट्टाचार्य, मित्रकुटी, हरिश्चन्द्र घाट, काशी १॥)

(७) पं० बूढ़ा सिंह ओ० एल० ए० नगर तुंग, गुरदासपुर १॥)

(८) पं० राम कृष्ण सारस्वत, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, काशी १॥)

(९) बाबू राधा चरण, कबीरचौरा काशी १॥)

(१०) राय ज्वाला प्रसाद बा० ए०, सी० ई, सुपरेण्टेण्डेण्ट, हिंदू यूनिवर्सिटी बिलडिंग नगवा, काशी ५)

(११) बाबू नौनिहाल सिंह भार्गव, गायघाट, काशी १॥)

(१२) बाबू गोपीनाथ वर्म्मा बी० ए०, बी० टी० कमंगर गली, पटना सिटी १॥)

(१३) राव वृजराज कृष्ण बी०ए०, बी०एल० पटना सिटी ५)

(१४) श्रीयुत पी० शेषाद्रि एम० ए० वाइस प्रिंसिपल, सी० एच० सी, काशी । १॥)

(१५) बाबू बाल चंद मेहारा, ठि० भैरोदत्त पन्ना लाल नहारा, सरदार शहर

(१६) बाबू गदाधर प्रसाद, कालिका गली काशी ।

(१७) बाबू गुरुप्रसाद धवन बी० ए० सेक्रेटरी हिंदूकालेज कमेटी, काशी ।

(१८) बाबू काशी नाथ, औरंगाबाद गया

(१९) बाबू श्यामनारायण सिंह ठि० मुंशी शीतला सहाय, औलंद गंज, जौनपुर

(९) निम्न लिखित पुस्तकें धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईं :—

राय बहादुर बाबू हीरा लाल बी० ए० दमोह

दमोह दीपक

बाबू रामचंद्र वर्म्मा, काशी

मानव जीवन

पं० अखिलानंद शर्मा, बदायूँ

अथर्ववेदालोचना

स्वागत कारिणी समिति, सप्तम हिंदी साहित्य सम्मेलन, जबलपुर, सप्तम हिंदी साहित्य सम्मेलन का कार्यविवरण भाग एक और दो ।

स्मिथसोनियन इंस्टीट्यूट, अमेरिका A contribution to the comparative histology of the Femere.

31st Annual Report of bureau American Ethonology.

सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई ।

साधारण सभा ।

शनिवार तारीख २६ जनवरी १९१८, संध्या के बजे स्थान—सभाभवन ।

(१) बाबू रामचंद्र वर्मा के प्रस्ताव तथा पं० ब्रजभूषण ओझा के अनुमोदन पर प्रोफेसर प्रकाश जी सभापति चुने गए ।

(२) गत अधिवेशन (ता० १७ दिसम्बर १९१७) का कार्यविवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) सभासद होने के लिए निम्नलिखित सज्जनों के पत्र उपस्थित किए गए :—

१ श्रीयुत रतनलाल आत्माराम शाह, अमृत गली, गिरगांव, बम्बई, १॥)

२ बाबू महाराज किशोर खन्ना, बनारस बंक, काशी। ५)

३ पं० मनोहर लाल जुतशी, काशी। १॥)

४ बा० दुलारे लाल भार्गव, गंगा पुस्तकमाला पुस्तकालय लखनऊ ५)

५ बा० ओंकार प्रसाद भार्गव, मास्टर मिशन स्कूल, कटनी १॥)

६ बाबू सत्य नारायण प्रसाद, सुँड़िया, काशी। १॥)

७ ठाकुर गणपत सिंह वर्म्मा बैश, हेडमास्टर, गोविंदपुर, जिला रायपुर १॥)

८ श्रीयुत जेकब मोजेस, मंत्री, सदर बजार पुस्तकालय, सागर ३)

९ बाबू पन्नालाल दास, सूतटोला, काशी १॥)

१० बाबू कैलाश चंद्र, लक्ष्मी नारायण यंत्रालय मुरादाबाद।

निश्चय हुआ कि ये सज्जन सभासद चुने जांय।

(४) इटावे की संस्कृत पुस्तकोन्नति सभा के मंत्री का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने सूचना दी थी कि पं० जयगोपाल शर्म्मा अब इस सभा के मंत्री नहीं हैं और वे सभा की ही ओर से इस सभा के सभासद थे अतः उनका नाम सभासदों की नामावली से काट दिया जाय।

(५) मंत्री ने निम्नलिखित सभासदों की मृत्यु की सूचना दी जिस पर सभा ने शोक प्रकट किया।

१ लाला खैराती लाल, मुख्तार, मुजफ्फरनगर।

२ बाबू रघुवीर सिंह, महुआपार, आजमगढ़

३ बाबू विश्वेश्वर नाथ बैंकर, शाहजहांपुर।

४ बाबू वासुदेव नारायण सिंह, सूरजपुर, आजमगढ़।

५ पं० कालीचरन त्रिपाठी, तहसीलदार, किराकत, जि०, जौनपुर।

६ पं० काशीचरन शर्म्मा, एकसाइज अहलमद, कचहरी सिटी मेजिस्ट्रेट, लखनऊ।

७ बाबू मोतीराम, सब-ओवरसियर, डिस्टिक्ट बोर्ड, फैज़ाबाद।

८ ठाकुर गंधर्व सिंह, रोहली, सराय पिराग, फरूखाबाद।

९ राय बहादुर मिस्टर एम० रंगाचार्य एम० ए०, प्रोफेसर, प्रेसिडेंसी कालेज, मदरास।

१० पं० राधा कृष्ण शर्म्मा, एकाउंटेंट, नहर शेखपुरा, लाहोर।

११ बाबू नारायन दास, खोरा का कुआं, काशी।

१२ बाबू लक्ष्मी नारायण, लक्ष्मी नारायण यंत्रालय, मुरादाबाद।

१३ सेठ दामोदर दास राठी, ब्यावर।

(६) मंत्री ने सूचना दी कि निम्नलिखित महानुभावों का देहान्त गत वर्ष ही हो गया था पर भूल से इनके नाम सभासदों की सूची में अब तक बने हैं (१) महामहोपाध्याय पं० शिव कुमार शास्त्री (२) गोस्वामी महाराज बालकृष्ण लाल और (३) पं० रामशंकर व्यास।

निश्चय हुआ कि इन महानुभावों के नाम सूची से काट दिए जायं।

(७) निम्नलिखित पुस्तकें धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईं—

हिन्दी पुस्तक एजेन्सी, गोरखपुर,

स्वराज्य गुटका।

संयुक्त प्रदेश की गवर्न्मेंण्ट

District gazetteer of Benares Division.

बाबू शिवप्रसाद गुप्त काशी—

होमरूल, तरुणभारत, राष्ट्रीय जागृति की मीमांसा, हिन्दुओं की उन्नति के मार्ग में रुकावट,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बृटिश भारत में शिक्षा की उन्नति, विद्यार्थी और राजनीति, राष्ट्र की सम्पति, भारत में पूर्व और पश्चिम, स्त्रियां और स्वराज्य, स्वराज्य के समालोचक, भारत का प्राचीन गौरव, होमरूल-कांग्रेस और लीग के प्रस्ताव, हमारी आकांक्षाएँ, भारत की मांग, अवनत जातियों की उन्नति, स्वराज्य और साहित्य, स्वदेशी आन्दोलन, होमरूल हम क्यों चाहते हैं, स्वराज्य साम्राज्य, स्वराज्य और मुसलमान, होमरूल और अधिकारी वर्ग, युद्ध के बाद सुधार, कांग्रेस का कर्त्तव्य ।

लाला भगवानदीन, काशी—प्रकाशिका

बाबू बैजनाथ प्रसाद साहब काशी ।

खूबसूरतबला

पं० बटुक प्रसाद मिश्र, भास्कर, काशी

वाट धानादि ब्राह्मणोत्पत्ति भास्कर

पं० जीवनराम गौड़, शक्करकंद की गली, काशी

शिवपुराण

वृत्त मिलास,

अब्राहम लिंकन,

Indian Antiquary for March, May and June 1917

(८) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई ।

साधारण सभा ।

शनिवार तारीख २३ फरवरी १९१८

(१) बाबू हरिहर नाथ बी० ए० के प्रस्ताव तथा बाबू रामचंद्रवर्म्मा के अनुमोदन पर लाला भगवान दीन सभापति चुने गए ।

(२) गत अधिवेशन (तारीख २६ जनवरी १९१८) का कार्यविवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ ।

(३) प्रबन्धकारिणीसमिति के ३० अक्तूबर १९१७ तथा ४ और ५ दिसम्बर १९१७ के कार्यविवरण सूचनार्थ पढ़े गए ।

(४) सभासद होने के लिए निम्नलिखित सज्जनों के पत्र उपस्थित किए गए ।

१—बाबू गुलशन राम वैश्य जैन, हुसैनपुर, मुज़फ्फरनगर १॥)

२—बाबू ठाकुर दास, १५ राजा दरवाजा, काशी । ३)

३—बाबू रत्नेश्वरी नंदन सिंह, ठि० बाबू कबीन्द्रनारायण सिंह, जगतगंज, काशी ३)

४—बाबू विन्ध्यबासिनी प्रसाद अग्रवाल ठि० बाबू सरजूप्रसाद अग्रवाल, वासलीगंज मिर्जापुर १॥)

५—पं० सीता राम स्वामी शास्त्री, हेडक्लार्क विजयनग्रम राज्य, भेलूपुर काशी १॥)

६—पं० आर० अत्रैया शास्त्री, १६ हनुमानघाट काशी १॥)

निश्चय हुआ कि ये सज्जन सभासद चुने जाँय ।

(५) निश्चय हुआ कि इस प्रांत में विद्याप्रचार के प्रधान नेता डाक्टर सर सुंदर लाल जी के आकस्मिक परलोकवास से सभा को अत्यंत शोक हुआ है । आपसे सभा को समय समय पर बराबर सहायता मिलती रही है और अब भी आप से बहुत कुछ आशा थी ।

(६) निश्चय हुआ कि बाबू लक्ष्मीचंद एम० ए० की मृत्यु से भी हिंदी को हानि पहुँची है क्योंकि आप हिंदी द्वारा जनसाधारण में वैज्ञानिक बातों का अच्छा प्रचार कर रहे थे ।

(७) पंडित मन्नन द्विवेदी गजपुरी बी० ए० का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने सभा से इस्तीफा दिया था ।

निश्चय हुआ कि पण्डित मन्नन द्विवेदी जी से प्रार्थना की जाय कि वे इस संबंध में पुनः विचार कर अपना इस्तीफा कृपापूर्वक लौटा लें ।

(८) निश्चय हुआ कि अष्टम हिंदी साहित्य सम्मेलन के लिए निम्नलिखित सज्जन सभा की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओर से प्रतिनिधि चुने जांय और मंत्री को अधिकार दिया जाय कि वे सभापति की स्वीकृति से उन जिन सज्जनों को चाहें प्रतिनिधि चुन लें।

बाबू श्यामसुंदर दास बी० ए० लखनऊ।
बाबू शिवकुमार सिंह बी, प्रयाग।
पंडित श्रीधर पाठक, प्रयाग।
बाबू पुरुषोत्तम दास टंडन, प्रयाग।
पंडित जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल, प्रयाग।
बाबू संपूर्णानंद बी० एस-सी०, इंदौर।
सेठ गंगा सहाय खजानची, इंदौर।
पंडित माता प्रसाद पांडे, इंदौर।
पंडित माधव राव विनायक किबे, इंदौर।
राय साहब डाक्टर सरयू प्रसाद त्रिपाठी, इंदौर।
बाबू रामचंद्र वर्म्मा।
पंडित रामचंद्र शुक्ल।
बाबू कालीदास माणिक।
बाबू गौरीशंकर प्रसाद बी० ए० एल एल० बी०
बाबू जयराम दास।
पंडित जानकीशरण त्रिपाठी।
बाबू बालमुकुंद वर्म्मा।
बाबू वेणीप्रसाद।
पंडित व्रजभूषण ओझा।
पंडित रामनारायण मिश्र।
बाबू शिवप्रसाद गुप्त।
प्रोफेसर श्रीप्रकाश।
बाबू हरिदास माणिक।
बाबू हरिहर नाथ।

(९) निम्नलिखित पुस्तकें धन्यवाद पूर्वक स्वीकृत हुईं:—

संयुक्त प्रदेश की गवर्नमेंट।
1. Some American opinions on the Indian Empire.
Indian Antiquary for April and August 1917.

खरीदी गईं—

मिलन मंदिर, सीताराम, ऋषि दयानंद का पत्र व्यवहार, जासूस की बुद्धि, हिंदी बंगला कोष, प्रबंध प्रकाश, प्रवास कुसुमावली भाग २, राजयोग, सफल गृहस्थ, किशोरावस्था, हृदय तरंग, मेरे जेल के अनुभव, भारतीय आत्मत्याग, जीवन विजय, कनकरेखा, जननी जीवन, आर्थिक सफलता, वीरों की कहानियां, दुर्गादास, महाराणा प्रताप, संतान कल्पद्रुम, ताराबाई, गृहिणी कर्तव्य, जापान रहस्य, जीवन के महत्व पूर्ण प्रश्नों पर प्रकाश, सुभद्रा, पशुधन पालन, बाल धर्म शिक्षक, स्वराज्य पर २० व्याख्यान, मदीय आचार्य देव, पत्रावली, कोलंबस सप्तसरोज, सती लक्ष्मी, हमारा भीषण ह्रास, राष्ट्रीय शिक्षा, मदनमोहन मालवीय, भाग्य फेरने की कुंजी, विमाता, कांग्रेस के पिता (मिस्टर ह्यूम), ध्रुव चरित्र, शिक्षा सुधार, नकद धर्म, मनुष्य का धर्म, पाण्डव प्रताप, सदाचारी बालक, संयोगिता हरण, गुरु शिष्य संवाद, श्वास विज्ञान, स्वामी विवेकानंद, उन्नति का मूल मंत्र, बच्चों के सुधारने के उपाय, स्वराज्य पर मालवीय जी, सामान्य नीति काव्य, वीर चूड़ामणि, आर्य समाज बुरा क्यों है, शारदा, नर शार्दूल अभिमन्यु, माता के उपदेश, भारत का भविष्य, स्वामी नित्यानंद, उस पार, देवी जोन, स्वराज्य की पात्रता और इंगलैण्ड के स्वराज्य का इतिहास, क्षत्रिय और कृत्रिम क्षत्रिय, समय, गृह लक्ष्मी, उपमा, प्रायश्चित, युवाओं को उपदेश।

१०—सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

साधारण सभा।

शनिवार ता० ३० मार्च १९१८ संध्या के ५ बजे

(१) बाबू वेणीप्रसाद जी सभापति चुने गए।

(२) गत अधिवेशन (ता० २३ फरवरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९१८) का कार्यविवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ ।

(३) प्रबन्धकारिणी समिति का तारीख १० फरवरी १९१८ का विवरण सूचनार्थ पढ़ा गया ।

(४) सभासद होने के लिए निम्न लिखित सज्जनों के पत्र उपस्थित किए गए और स्वीकृत हुए ।

१—प्रोफेसर तुकाराम कृष्ण लड्डू, क्वीन्स कालेज, काशी ३)

२—बाबू शरत् चन्द्र गोस्वामी, गोहाटी, आसाम १॥)

३—बाबू इन्द्र दमन प्रसाद, वकील, मुज़फ्फर पुर, ५)

४—बाबू राम प्रसाद बहादुर गुप्त-कादरा बाद, दरभंगा ५)

५—बाबू दुलीचंद सेठिया, सरदार शहर ५)

६—बाबू जयचन्द्र लाल सेठिया, सरदार शहर ३)

(५) निम्नलिखित सभासदों के इस्तीफे उपस्थित किए गए और स्वीकृत हुए ।

१—संत बोला सिंह, काशी

२—बाबू गोकुल चंद जगन्नाथ वकील; मथुरा ।

(६) पण्डित केदारनाथ पाठक का ३० मार्च का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्हों ने बाबू शिवप्रसाद गुप्त के चुनाव के सम्बन्ध में अपना १० दिसम्बर १९१७ का प्रस्ताव लौटा लिया था और लिखा था कि इस चुनाव के सम्बन्ध में उन्हें अब कोई आपत्ति नहीं है ।

(७) प्रबन्धकारिणी समिति के २५ मार्च १९१८ के निश्चय नं० १० के सहित बाबू शिवप्रसाद गुप्त का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि यदि साधारण सभा का उन पर विश्वास हो तो वे प्रबंधकारिणी समिति के सदस्य बने रह सकते हैं ।

निश्चय हुआ कि साधारण सभा का उन पर पूर्ण विश्वास है ।

(८) निम्नलिखित पुस्तकें धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईं:—

पण्डित रामदत्त शर्मा कलकत्ता—
ऊषाहरण

मुंशी मथुरा प्रसाद काशी—
वैष्णव मत प्रदीप
फाटक में नाटक
गद्य काव्य समीक्षा
भक्ति

राय पूरन चन्द्र; धर्मशालाघाट, पटना
सहज विज्ञान २ व ३री पुस्तक

बाबू बनवारी लाल गुप्त, काशगंज
शिशुलोरी

मंत्री, सप्तम हिंदीसाहित्य सम्मेलन, जबलपुर
प्रदर्शित पुस्तकों का सूचीपत्र

एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल कलकत्ता
Journal & Proceedings Vol XIII, 1917, Nos 4 & 5.
Memoirs of the Society Vol V, No 5 pp 195–205.
Vol V No 6 pp 207–235.
Vol VI pp 157–182.
Index to Indian antiquary. 1916.

९ सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई ।

साधारण सभा का एक अधिवेशन शनिवार ता० २७ अप्रैल १९१८ को सन्ध्या के ६ बजे सभा भवन में किया गया था पर कोरम पूरा न होने के कारण उस दिन यह अधिवेशन न हो सका ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधारण सभा।

शनिवार ता० २५ मई १९१८ संध्या के ६ बजे।

(१) तारीख ३० मार्च और २७ अप्रैल १९१८ के कार्य विवरण पढ़े गये और स्वीकृत हुए।

(२) प्रबंधकारिणी समिति के २५ मार्च और १७ मई १९१८ के कार्य विवरण सूचनार्थ पढ़े गए।

(३) सभासद होने के लिए निम्नलिखित सज्जनों के पत्र उपस्थित किए गए:—

१ आनरेबुल जस्टिस सर आशुतोष मुकुर्जी के० सी० एस० आई०, एम० ए०, डी० एल०, एफ० आर० ए० एस०, एफ० आर० सी० ई० (कलकत्ता ५)

२ पंडित मदनमोहन शास्त्री, काशी १॥)

३ नायक भैयालाल मालगुजार, बिलहरी, तहसील मुड़वारा, जि० जबलपुर १॥)

४ भट श्री बैद्यनाथ नारायण सिंह एम० ए०, एम० एल० अनंत यंत्रालय प्रयाग ५)

५ पंडित महाबीर प्रसाद मिश्र, कचौड़ीगली, काशी १॥)

६ बाबू दौलतचन्द, रामापुरा, काशी १॥)

७ बाबू गयाप्रसाद गुप्त, सेवाय होटल, मथुरा ५)

८ बाबू नारायण दास, साव का महल्ला, काशी १॥)

९ बाबू बलभद्र दास गुप्त, गुरुटोला, जमगढ़ १॥)

१०-पंडित बंसीलाल बालमुकुंद जी, हथरुण, अकोला, बरार १॥)

११-पंडित प्यारेलाल गोस्वामी, ज्ञानवापी, काशी १॥)

१२-बाबू राधाकृष्ण सेठ, कचौड़ी गली, काशी १॥)

१३-बाबू गौरीशंकर एम० ए० मीरघाट, काशी ५)

१४-श्रीमान् आर्य मुनि जी, वेदभाष्य कार्यालय, शिवाला, काशी १॥)

(४) निम्नलिखित सभासदों के इस्तीफ़े उपस्थित किए गए और स्वीकृत हुए—

१ बाबू राम निरंजन लोहिया, काशी।

२ पंडा पुरुषोत्तम भाई राम, काशी।

३ बाबू जंगबहादुर सिंह तहसीलदार, गरौठ, ज़ि० झाँसी।

(५) मंत्री ने निम्नलिखित सभासदों की मृत्यु की सूचना दी:—

१ मुंशी प्रयाग नारायण साहब, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ।

२ पंडित शिवबिहारी लाल वकील, गोला गंज-लखनऊ।

३—बाबू शारदा चरण मित्र, कलकत्ता।

सभा ने इस पर शोक प्रकट किया।

(६) निम्नलिखित पुस्तकें उपस्थित की गईं और धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईं:—

संयुक्त प्रदेश की गवर्नमेंट।

General Report on Public Instruction for the quinquinium ending 31st March 1917.

बाबू गंगाराम प्रताप जी प्रताप सागर पुस्तकालय, जालवा।

श्री विदेह माला।

ज्यो० श्रीनिवास महादेव जी पाठक, श्री भुवनेश्वरी यंत्रालय, रतलाम।

जातक तत्व।

हर्शल अथवा प्रजापति।

मंत्री जुबिली नागरीभंडार, बीकानेर।

वासंतिक उपहार।

श्रीमती रानी साहिबा, खैरागढ़।

श्री धर्मकल्पद्रुम, खंड १ और २।

कल्किपुराण।

तत्वबोध।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पण्डित गुलजारी लाल चतुर्वेदी ।

सावित्री ।

सिराजुद्दौला ।

विषवृक्ष ।

सम्राट अकबर ।

भारतवर्ष ।

कृष्णकान्त की बिल ।

रजनी ।

सोने की राख ।

स्मिथ सोनियन इन्स्टीटयूशन ।

Annual Report for 1916

Analytical and critical Bibliography of the tribes of Tierra Del Fuego and adjacent territory.

Water Vapor transparency to low temperature radiation.

Cambrian Geology and paleontology No. 3. Fauna of the Monet Whyte.

New East African Plants.

New Rodents from British East Africa.

Preliminary Survey of the Remains of the Chippewa Settlements on La Pointe Island.

लाला राधा मोहन गोकुलजी ।

श्रीयुक्त तिलक देव का वर्तमान स्थिति पर गौरी विलास । (मद्रास) में भाषण ।

श्रीयुत आर० एस० नारायण स्वामी ।

श्रीमद्भगवद्गीता ।

मद्रास की गवर्नमेण्ट ।

A descriptive catalogue of the Sanskrit Manuscripts in the Government Oriental Mss library, Madras.

South Indian Inscriptions Vol II Part V.

बाबू चन्द्रिका प्रसाद, दारानगर काशी ।

देवी भजन मुक्तावली ।

पण्डित जगन्नाथ शास्त्री, गणेशदीक्षित की गली, काशी ।

दारोगा दफ्तर भाग ७ सं० १ से १२

Indian Antiquary for September, October and November 1917.

बाबू रामचन्द्र वर्म्मा, काशी ।

हम स्वराज्य क्यों चाहते हैं ।

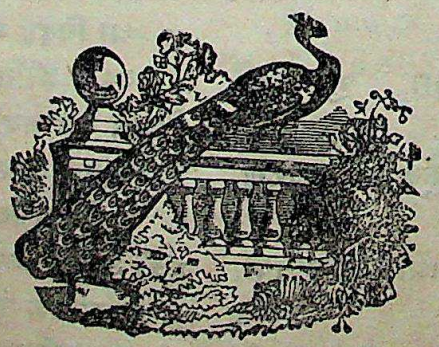

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविवर बिहारीलाल—बाबू राधाकृष्णदास लिखित। इस छोटे से लेख में बिहारी सतसई के रचयिता कविकुलचूड़ामणि बिहारीलाल जी का संक्षेप जीवनचरित्र वर्णन किया गया है। मूल्य =) डा०)॥

कालबोध—इसमें भिन्न भिन्न प्रकारों और मतों से समय के विभाग आदि दिए गए हैं। मू० ≡)

निःसहाय हिंदू—हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक स्वर्गीय बाबू राधाकृष्णदास लिखित एक वियोगान्त उपन्यास। मूल्य ।) डाकव्यय)॥

परिचर्याप्रणाली—इसमें रोगी मनुष्य का घर में शुश्रूषा करने का विषय सरल रीति से लिखा गया है। मूल्य ।) डा०)॥

प्राचीनलेखमणिमाला—इस पुस्तक में शताब्दि अवरोहण क्रम से भारतवर्ष के शिलालेखों तथा दानपत्रों का सूचीस्वरूप में वर्णन है। मू० १)

पृथ्वीराजरासो—महाकवि चन्द बर्दाई कृत। यह ग्रन्थ हिन्दी साहित्य का आदि काव्य है। जिस प्रकार हिन्दी ग्रन्थरचना में यह सब पुस्तकों से पुराना है उसी प्रकार इसकी काव्यशैली भी अद्वितीय है। इस ग्रन्थ में कवि ने भारतवर्ष के अन्तिम क्षत्री सम्राट् राजा पृथ्वीराज का जीवनवृत्तान्त विस्तारपूर्वक लिखा है जो आदि से अन्त तक विचित्र घटनाओं से भरा हुआ है। इस ग्रन्थ की भाषा कुछ कठिन है। इसलिए सभा ने समस्त ग्रन्थ का सारांश सरल हिन्दी भाषा में मूल ग्रन्थ के साथ ही साथ छपवाया है, जिससे पाठकों को मूल ग्रन्थ के पठन-पाठन में बड़ी सहायता और आनन्द मिलता है। इसके ६९ समय २२ खण्डों में छपे हैं। मू २०) डा० १॥)

बिरहलीला—कवि आनन्दघन कृत। मूल्य =) डाकव्यय)॥

वीरविरुदावली—प्रसिद्ध पद्माकर कवि रचित। वीररसात्मक सर्वांगपूर्ण काव्य है। मूल्य ।=) डा० –)

भारतेन्दु चरित—हिन्दी के एकमात्र जन्मदाता भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रजी की जीवनी। मूल्य ॥ डा० –)

रंगनामा—कवि श्रीधर रचित। इस ऐतिहासिक काव्य में दिल्ली के बादशाह बहादुरशाह के पुत्रों जहांदारशाह और फ़र्रुखसियर की लड़ाई का वर्णन है। काव्य रचना सरल सुन्दर प्रभावोत्पादक और मनोरंजक है। मूल्य ॥।)

भूषण ग्रंथावली—कविवर भूषण के समस्त काव्य ग्रंथों का संग्रह। वीररस की ऐसी अनूठी कविताओं का संग्रह और कहीं देखने को न मिलेगा। मूल्य ॥।)

महिला मृदुवाणी—जोधपुर निवासी मुंशी देवीप्रसाद द्वारा लिखित। इसमें भारतवर्ष की विदुषी स्त्रियों की संक्षिप्त जीवनी और साथ ही उनके काव्य तथा सा[illegible] सम्बन्धी अन्य कार्यों का उल्लेख है। मूल्य ॥)

मंत्री नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी।

नोट—कलकत्ता निवासियों को सभा की सब पुस्तकें हिंदी पुस्तक एजेंसी १२६, हेरि[illegible] कलकत्ता से मिल सकती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनोरंजन पुस्तकमाला ।

अर्थात्

हिंदी के सौ उत्तम उत्तम ग्रंथों की पुस्तकावली ।

अब तक निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

१ आदर्श-जीवन—लेखक रामचंद्र शुक्ल ।
२ आत्मोद्धार—लेखक रामचंद्र वर्म्मा ।
३ गुरु गोविंदसिंह—लेखक वेणीप्रसाद ।
४ आदर्श हिंदू १ भाग—लेखक मेहता लज्जाराम शर्म्मा ।
५ ,, २ ,, ,,
६ ,, ३ ,, ,,
७ राणा जंगबहादुर—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा ।
८ भीष्म पितामह—लेखक चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्म्मा ।
९ जीवन के आनंद—लेखक गणपत जानकीराम दूबे बी. ए. ।
१० भौतिक-विज्ञान—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी ।
११ लालचीन—लेखक वृजनंदन सहाय ।
१२ कबीरवचनावली—संग्रहकर्त्ता अयोध्यासिंह उपाध्याय ।
१३ महादेव गोविंद रानडे—लेखक रामनारायण मिश्र बी. ए. ।
१४ बुद्धदेव—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा ।
१५ मितव्यय—लेखक रामचंद्र वर्म्मा ।
१६ सिक्खों का उत्थान और पतन—लेखक नंदकुमार देव शर्म्मा ।
१७ वीरमणि—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम. ए. और शुकदेवबिहारी मिश्र बी. ए. ।
१८ नेपोलियन बोनापार्ट—लेखक राधामोहन गोकुलजी ।
१९ शासनपद्धति—लेखक प्राणनाथ विद्यालंकार ।
२० हिंदुस्तान, पहला खंड—लेखक दयाचंद्र गोयलीय बी. ए. ।
२१ ,, ,, दूसरा खंड— ,, ,, ,,
२२ महर्षि सुकरात—लेखक वेणीप्रसाद ।
२३ ज्योतिर्विनोद—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी. ।
२४ आत्मशिक्षण—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम० ए० और शुकदेव बिहारी मिश्र बी० ए० ।

क पुस्तक का मूल्य १) है. समस्त ग्रंथमाला के स्थायी ग्राहकों से ।।।) लिया जाता है। डा० अलग है।

मिलने का पता—

मंत्री—नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Registered No. A 414 [संख्या १

नागरीप्रचारिणी पत्रिका।

जुलाई १९१८

सम्पादक—वेणीप्रसाद।

भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल। बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल॥
बिलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल। निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सबको मूल॥
कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार। सब देशन सो लै करहु, भाषा माँहि प्रचार॥
करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न। राजकाज दरबार में, फैलावहु यह रत्न॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र।

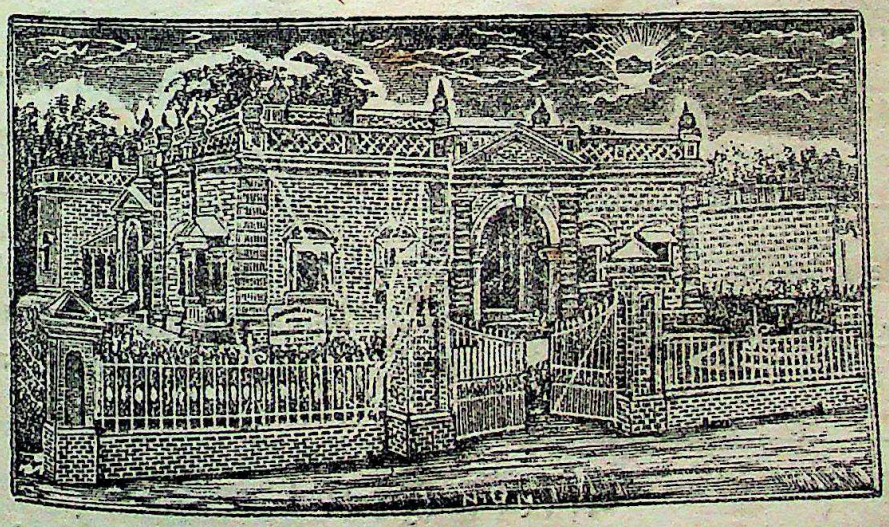

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित।

गणपति कृष्ण गुर्जर द्वारा श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस, काशी में मुद्रित।

मूल्य (॥)। प्रति संख्या ≈)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय सूची ।

१—मानव समाज और प्रलय १
२—ताज के कारीगर ६
३—शिक्षा क्यों आवश्यक है ७
४—सभा का कार्यविवरण १

मुफ्त ! मुफ्त !! मुफ्त !!!

धन्वन्तरी ।

यह आयुर्वेदीय मासिक पत्र योग्य वैद्य, डाक्टर और हकीमों को बिना मूल्य भेजा जाता है सर्व साधारण को नहीं ।

मैनेजर, धन्वन्तरी विजयगढ़, अलीगढ़

पदक ।

सभा द्वारा उत्तमोत्तम विषयों पर लेख लिखने के लिये प्रति वर्ष स्वर्ण और रजत पदक दिए जाते हैं । सन् १९१८ में इनके लिये निम्नलिखित विषय नियत हैं—

छन्नूलाल स्वर्ण पदक—नगरों का निर्माण ।

राधाकृष्णदास रजत पदक—प्राचीन भारतवर्ष की शासन प्रणाली ।

रेडिचे रजत पदक—मनुष्य का भोजन ।

इन विषयों पर लेख सभा में ३१ दिसम्बर १९१८ के पूर्व आजाने चाहिएँ ।

हरिहरनाथ बी० ए०

मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा काशी ।

काश्मीरी शुद्ध शिलाजीत, कमजोरी, प्रमेह, स्वप्नदोष, इत्यादि की सर्वोत्तम औषधि ॥), पवित्र केसर १॥) असली कस्तूरी ३५), असली सुर्मा ममीरा ३), अंगूरी हींग ५), सुगंधित स्याह जीरा ३), फूल बनफशा १॥) धूप २), स्वच्छ शहद १॥) सेर ।

काश्मीर स्टोर्स, श्रीनगर नं० १७०

आवश्यक सूचना ।

विदित हो कि काशी नागरीप्रचारिणी सभा का एक असाधारण अधिवेशन तारीख अगस्त १९१८ को संध्या के ६ बजे सभाभवन में होगा जिसमें सन् १९१८-१९ का बजट, गत का वार्षिक विवरण और वार्षिक अधिवेशन में उपस्थित होनेवाले पत्रादि विचारार्थ उपस्थित किए जाँयगे ।

हरिहर नाथ, बी० ए०
मंत्री ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

भाग २३ } जूलाई १९१८ । { संख्या १

मानव समाज और प्रलय ।

(लेखक लहरी व्यास ।)

इस संसार के सभी वस्तुओं की तीन अवस्थाएँ देखने में आती हैं। आदि, मध्य और अंत इन तीन अवस्थाओं से रहित हम कोई ऐसा पदार्थ ही नहीं देखते हैं जो यहाँ हो। वस्तु और पार्थिव पदार्थों की बात तो जाने दीजिए, आपका यह संसार, यह भूमंडल भी इन्हीं तीन अवस्थाओं के अंतर्गत है और फिर जब इस पृथ्वी का यह हाल है तब इसके अंदर के पदार्थों की अनित्यता के विषय में तो कुछ कहना ही व्यर्थ है।

किसी समय में (पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार) आपकी यह पृथ्वी आग का एक जलता हुआ गोला थी, उस समय इस गोलक (पृथ्वी) और उस अग्नि गोलक (सूर्य) के बीच में बहुत अंतर नहीं था पर धीरे धीरे कुछ समय के उपरांत इन दोनों गोलकों के बीच की यह दूरी बढ़ने लगी। अवश्य ही इस कुछ समय से आपको हजार दो हजार या लाख वर्ष समझने की भारी भूल नहीं करनी चाहिए। नहीं नहीं, सूरज से पृथ्वी के अलग होने और मानव समाज अथवा सृष्टि के उस पर उत्पन्न होने के बीच में करोड़ों ही वर्षों का अंतर पड़ गया। पर इस अनादि और अनंत काल के सामने वे कुछ करोड़ वर्ष " कुछ समय " से भी तुच्छ हैं। खैर मतलब यह कि सूर्य गोलक से आपकी यह पृथ्वी अलग हुई और धीरे-धीरे हटती हुई उतने फासले या करीब उतने फासले पर आ पहुँची जितने पर अब है—६९००००००० मील।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस बीच में केवल इसकी दूरी ही नहीं बढ़ती गई वरन् पृथ्वी पर और भी कुछ ऐसे परिवर्तन होते गए जो यद्यपि उस महा परिवर्तन के आगे कुछ भी नहीं हैं तथापि हमारे ऐसे तुच्छ जीवों के लिये येही महा परिवर्तन कहे जा सकते हैं। किसी समय की आग के समान या—आग ही—की यह पृथ्वी सूर्य के सामीप्य के कारण धीरे धीरे ठंढ़ी पड़ने लगी। वे गैस या बाष्पें भी जिनसे यह परिपूरित थी—ठंढ़ी पड़ गईं और जल अथवा अन्य तरल पदार्थों के स्वरूप में आ गईं। पृथ्वी की तह ठोस पड़ गई और यद्यपि भीतर की तरफ अतुलनीय गर्मी तब भी थी तथापि ऊपर की तह ठंडी हो कर इस योग्य हुई कि घास फूस और पौधों को अपनी छाती पर स्थान दे सके। नीचे के अंशों में भी ठंढ़क बढ़ी, नीचे गर्मी ऊपर ठंढ़ होने के प्रभाव से वह सतह जो ऊपर की थी तन कर फटने लग गई, ठीक उसी तरह जिस तरह बरसात के महीने में मजबूत बनाई गई हुई मकान की नई छत गर्मियों में फट जाती है और उसमें दरार पड़ जाते हैं। पृथ्वी के ऊपरी भाग में भी ऐसी ही दरारें (अवश्यही बहुत बड़ी और चौड़ी दरारें) पड़ गईं जिनमें नदियों ने आसन ग्रहण कर लिया। घास फूस और जल से वृद्धि पानेवाले जीव प्रकृति अर्थात् उस महान् शक्ति की सहायता पाकर उत्पन्न हो गए। हमारी सृष्टि अर्थात् इस भूमंडल का आदि का काल तो समाप्त हो गया—अब मध्य और अंत रह गए।

साधारण रूप से आदि और अंत के मध्य के सभी काल को मध्य काल कह सकते हैं। इस प्रकार आपकी यह पृथ्वी, अथवा हमी लोग अब सृष्टि के मध्य काल में हैं। इस मध्य काल का आरंभ कब से हुआ या अंत कब होगा और अंत का काल कब से आरंभ होगा इसे ठीक जानना हम लोगों की बुद्धि के बाहर है, पर तौ भी "आदि" की अवस्था को हम लोग बहुत पीछे छोड़ आए हैं इसमें कोई संदेह नहीं।

इस गोलक पर मनुष्य पहले पहल कब उत्पन्न हुआ इसका ठीक ठीक पता नहीं लगता। यूरोप के और हमारे यहाँ के भी विद्वानों (और ऋषियों) की इस विषय में एक सम्मति नहीं है पर इसमें कोई संदेह नहीं कि मनुष्य की यह वर्तमान अवस्था असल अवस्था नहीं है वरन् कुछ विशेष जीवों का क्रम विकाश मात्र है। डार्विन साहब के मत से तो हम लोग बंदरों की औलाद हैं। अन्य कई विद्वान्, विशेष कर वर्तमान युग के विद्वान् इसके विपरीत यह कहते हैं कि हम बंदरों की औलाद नहीं वरन् बंदर हमारी औलाद हैं और बहुत समय से हमारा साथ छोड़ केवल प्रकृति ही के भरोसे पर रहने के कारण उनकी यह दशा हो गई। हमें तो दोनों ही मतों से भय मालूम होता है। जिस प्रकार हम यह स्वीकार नहीं किया चाहते कि हमारे बड़े लोग और पुरखा बंदर थे उसी प्रकार हम यह भी मानने को प्रस्तुत नहीं कि हमारा और हमारे वंश की औलाद बंदर हो जायँगे। प्रमाण और युक्तियों के प्राबल्य को काटना एक टेढ़ी खीर है। खैर कुछ भी हो, पौधों, डाली व जीवों और जानवरों के उत्पन्न होने के बहुत समय के उपरांत मनुष्यों ने पृथ्वीतल पर पदार्पण किया।

यह बात तो माननी ही होगी कि सब से पहले उत्पन्न होनेवाले मनुष्यों की यह उन्नत अवस्था कदापि न होगी जैसी वर्तमान काल के मनुष्यों की है। उन्नति (अथवा सभ्यता) को "मनुष्य की प्रकृति पर आंशिक विजय" मानते हैं क्योंकि इसके सिवाय और किसी चीज़ को उन्नति अथवा सभ्यता कहना उसके गले पर छुरी फेरना है। जानवरों से हम इसी बात में उन्नत अथवा सभ्य हैं कि वे प्रकृति पर विजय नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है और हम लोग विजय—अवश्य ही आंशिक कर पा सके हैं। पानी बरसने की हालत में पर केवल उसी वस्तु से अपनी रक्षा कर जो प्रकृति खास तौर पर उन्हें दे चुकी है। उनको बालों से ढंकी हुई खाल अथवा पेड़ों पर मनुष्य तंबू कनात, मकान और शहर ऐसे बना सकता है कि जिनमें बस कर से वह अपनी रक्षा कर सकता है और को डिगाने के लिये एक बार पृथ्वी तल को डोल जाना पड़ेगा (भूचाल)। यही मनुष्य की पर आंशिक विजय कहला सकती है और को हम उन्नति की अवस्था मानेंगे। जब तक प्रकार का मानव समाज प्रकृति पर विजय करता जायगा तभी तक उसका अस्तित्व है और जहां प्रकृति ने अपना भीषण रूप आरंभ किया उसी समय से मनुष्य का भी अवश्यंभावी है। खैर यह तो हम अपने से दूर जो पड़े।

मतलब यह कि अन्य सब कम उन्नत जीवों उत्पन्न हो जाने के बाद उन्नत (हम परम क्योंकर कहें, कदाचित् हमारे बाद हम से बढ़ कर उन्नत अवस्था में पहुंचे हुए जीव इस पर उत्पन्न हों और वे हम पर उसी प्रकार करें जैसा हम अन्यान्य जीवों अथवा वस्तु-पर कर रहे हैं।) "मनुष्य" उत्पन्न हुए। समय के मनुष्यों को पृथ्वी के अन्य जीवों बड़ी गहरी लड़ाई लड़नी पड़ी थी और तब का यह आधिपत्य स्थापित हुआ है। नंगे शरीर पहाड़ों की कंदराओं में रह कर नंगे पैर और हाथों अन्य जीवों का पीछा कर उनसे अपना पोषण करना पड़ता था। फिर धीरे धीरे शस्त्र बनने लगे जिनसे पेट भरने में सुभीता। उसके बाद हल और चक्की आदि शान्त के औजार बने जिन्होंने पेट भरने के निमित्त वाले हत्याकांड या पशुवध को बहुत कुछ कम कर दिया। जब गेंहू और चावल से मनुष्यों का पेट भरने लगा तब जीवों की हत्या से स्वाभाविक कुछ अरुचि सी उत्पन्न होने लगी। लोग शान्ति के साथ एक साथ मिल कर शान्त जीवन व्यतीत करने लगे, मार काट से कुछ निस्तार मिला, गांव और कसबे बसने लगे, सामाजिक और अन्य नियमों के बनने की भी इसी समय से आवश्यकता पड़ने लग गई। क्योंकि एक साथ जब बहुत से आदमियों का रहना हुआ तब एक नियम से बंधना भी आवश्यक था। जब तक ऐसा नहीं हुआ था तब तक बड़ी विशृंखलता रही और इसी ने उन नियमों को उत्पन्न किया जिन्हें मानकर मनुष्य समाज नियमपूर्वक चलने लगा।

धीरे धीरे शांति के साथ सुख और समृद्धि की भी वृद्धि होने लगी—व्यापार और देशाटन उत्पन्न हुआ, धन की आवश्कता पड़ी जो सिक्कों द्वारा पूरी की गई क्योंकि बिना इसके व्यापार होना कठिन था। पर इसके साथ ही सुख और शांति के दिन भी बीत गए क्योंकि समृद्धि के साथ रहनेवाली स्पर्धा का इस मानव समाज में आगमन हुआ। शक्तिशाली समाजों में एक दूसरे को अपने अधीन करने की इच्छा उत्पन्न हुई। एक बस्ती के लोग दूसरी बस्ती पर चढ़ाई और युद्ध करने लगे। अवश्य ही इसमें 'आवश्यकता' भी एक कारण थी पर हम इसे स्पर्धा ही कहेंगे क्योंकि इस पृथ्वी तल पर अभी इतनी जगह है कि जितने मनुष्य हैं उससे दूने भी भली प्रकार शांति और बिना मारकाट के जीवन व्यतीत कर सकते हैं। युद्ध के साथ साथ विशेष प्रकार के हमला करने और हमला रोकने के औजार बनने लगे और धीरे धीरे आपस की मार काट ने इतनी मजबूत जड़ पकड़ ली कि अब उसे मानव समाज से हटाना कठिन हो गया है। अस्तु।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मारकाट में जो समाज अथवा जाति दूसरे से बलवती हुई वह दूसरे पर आधिपत्य करने लगी। एक जाति दूसरी जाति पर राज्य करने लगी। जो जाति बिल्कुल ही कमजोर हुई वह संसार-पर से बिल्कुल (या करीब करीब) लोप ही कर दी गई और जो कुछ दमदार हुई वह दब-कर कुचल कर विनीत दासत्व पूर्ण जीवन व्यतीत करने लगी। इस प्रकार संसार में राज्य और राजाओं का प्रादुर्भाव हुआ, साथ साथ मारकाट भी बढ़ने लग गई यहां तक कि चरम सीमा पर पहुँच गई।

केवल मारकाट की ही उन्नति हुई यह कहना भूल है। मनुष्य के भीतर प्रकृति ने बुद्धि नामक जो पदार्थ दिया है वह सभी ओर बढ़ने की शक्ति रखता है। इस बुद्धि को काम में लाकर मनुष्य ने आविष्कारों की तरफ ध्यान दिया। कई नवीन बातें एक के बाद एक निकलने लगीं, चाहें वे समाज के हित का कारण हुईं या अहित का, पर कई नई बातें मालूम जरूर हुईं। केवल यही नहीं वरन् दर्शनशास्त्र और इस प्रकार के प्रश्नों का भी आविर्भाव हुआ—"हम कौन हैं, क्या हैं, किस लिये हैं" इस विषय को लेकर भी बहुत कुछ खोज और छानबीन की गई। और इस विषय में कुछ जातियाँ अन्य जातियों से बहुत आगे निकल गईं। एक तरह यह कहना चाहिए कि उन्नति और सभ्यता की चरम सीमा आ गई।

बस! सृष्टि (पृथ्वी की) के आदि और मध्य का इतनाही वर्णन कर हम रुक जांयगे क्योंकि इस समय हमारा इन पर मनन करने का विचार नहीं है। हम भारतवासी आदि और मध्य से अंतही को गुरुतर समझते हैं। यदि हमारा अंत सुधर गया तो सब सुधर गया। ऐसी हालत में हम आदि और मध्य के विषय को छोड़ "अंत" ही के विषय में कुछ जानना चाहेंगे।

(२)

पृथ्वी के "अंत"-के विषय में विचार करते समय दो बातों पर ध्यान देने की आवश्यकता पड़ेगी। एक तो यह देखना पड़ेगा कि हमारे अर्थात् मनुष्य मात्र के प्राचीन शास्त्र इस विषय में क्या कह गए हैं—दूसरे देखना होगा कि हमारे वर्त्तमान् युग के वैज्ञानिक अथवा भूतत्वविद् क्या कहते हैं। हमारे लिये दोनों ही बातें समान भाव से यदि विश्वासनीय नहीं तो आदरणीय अवश्य हैं। भूतत्वविदों की बात लेने के पहिले हम मानव समाज के प्राचीन शास्त्रों में कुछ खोज करना और यह देखना कि वे इस विषय में क्या कहते हैं, पसंद करेंगे।

सब से पहिले अपना शास्त्र लीजिए—हिन्दू शास्त्र इस विषय में एक ही बात कहते हैं—उन लोगों को तो जाने दीजिए जो यह माने हुए हैं कि पृथ्वी और समय अनादि और अनंत हैं। इन का कभी आरंभ नहीं हुआ और न कभी अंत होता है। इनकी तो बात अलग है और मत भी अलग है जिस पर विचार करने की हम आवश्यकता नहीं देखते। हम तो उनकी बात लेंगे जो अंत को संभव मानते हैं और समझते हैं कि जिस का आदि और मध्य है उसका अंत भी अवश्य होगा। इन लोगों के मतानुसार हमारे शास्त्र में पृथ्वी के अंत के विषय में प्रधानतः केवल एक बात मिलती है – प्रलय!

जहां कहीं पृथ्वी अथवा युग के अंत का जिक्र आता है वहां प्रलयही बताया जाता है। इस से यदि हम यह समझ लें कि हमारे महर्षि अथवा ग्रंथकार सृष्टि के अंत को ही प्रलय होना कहते हैं तो इसमें कोई आपत्ति न होगी। पर सब से पहले हमें इस प्रलय का स्वरूप देखना चाहिए कि यह प्रलय क्या है अथवा होगा कैसा। इस बात के लिये यह जानना आवश्यक है कि हमारे शास्त्रों में प्रलय का जिक्र कहां कहां अथवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस तरह पर आया है। इसके लिये हम पहले अवतारों से शुरू करते हैं।

हमारे यहां सृष्टि का क्रम युगों द्वारा विभाजित किया गया है। सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग। कहा जाता है कि हमारे ब्रह्माजी सुबह उठकर सृष्टि की रचना करते हैं और दिन भर में इस प्रकार के चारों युग हज़ार बार बीत जाते हैं। रात को जब वे सोते हैं तब सृष्टि का काम रुक जाता है और रात भर का प्रलय हो जाता है। प्रलय का पहला जिक्र है पर यह प्रलय कैसा होता है इसका सविशेष वर्णन मेरे देखने में नहीं आया। अस्तु, इसे छोड़ हमें अवतारों से ही चलना चाहिए जैसा कि ऊपर लिखा है।

चौबीस अवतारों में श्रेष्ठ दस अवतार—मत्स्य, कूर्म, वाराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बौद्ध और कल्कि माने गए हैं। इन में से शास्त्रानुसार पहले चार सत्ययुग में, उसके बाद तीन त्रेता में, बाद के दो द्वापर में और अंतिम कलियुग में हुआ और होगा। इन सभी अवतारों के नाम और वर्णन हमारे शास्त्रों में है अस्तु, हमें यह देखना चाहिए कि इन दसों अवतारों में से किसी को प्रलय से कुछ वास्ता पड़ा या नहीं।

अंतिम से आप आरंभ करिए—कल्कि का अभी अवतार नहीं हुआ पर कल्कि पुराण को कल्कि पुराण देखने पर भी सिवाय इसके और कुछ नहीं मालूम होता कि म्लेच्छता और अधर्म संसार में फैल जायगा। हाथ भर से भी कम के मनुष्य होंगे जिनकी वृत्तियां पशु से भी नीच होंगी, केवल बीस वर्ष की परमायु रह जायगी। पृथ्वी का भार बहुत बढ़ जायगा और उसे उतारने के लिये भगवान का कल्कि का अवतार होगा जो म्लेच्छों को मार पुनः सत्ययुग का स्थापन करेंगे। इसके सिवाय और किसी नवीन बात का कल्कि पुराण से नहीं लगता। परंतु एक बात ध्यान देने योग्य अवश्य है। कलियुग के अंत और सत्ययुग के आगमन के बीच में किसी प्रकार के प्रलय का कोई जिक्र नहीं है।

कल्कि को छोड़ ऊपर बढ़िए तो बौद्ध, कृष्ण, राम, परशुराम, वामन और नृसिंह ये छः अवतार मिलते हैं। इन छहों का जो वर्णन हमारे पुराणों में है उनमें से किसी में प्रलय का कोई जिक्र नहीं है अस्तु हम इनको भी छोड़ देते हैं। अब वाराह, कूर्म और मत्स्य ये तीन अवतार रहे। इन तीनों ही के विषय में हम अपने ग्रंथों से कुछ मार्के की बातें पाते हैं।

मत्स्य अवतार का कारण यह हुआ कि हिरणाक्ष (?) दैत्य ने बहुत तपस्या कर ब्रह्मा से अजेय, अतुलित बलशाली आदि होने का वरदान पाया और तब हमारे पवित्र ग्रंथ वेद को समुद्र में फेंक दिया। वेद के नष्ट होने से संसार और त्रैलोक्य नष्ट होने लगा जिसके कारण भगवान ने मत्स्यावतार लिया और राक्षस को मार समुद्र में से वेदों का उद्धार किया।

पृथ्वी अत्यंत गुरु होकर जब जलमें डूबने लगी तब कच्छावतार हुआ। इस अवतार ने पृथ्वी को अपनी पीठ पर स्थापन किया और उसे जलमें डूबने से बचाया।

हिरण्यकश्यप के भाई हिरण्याक्ष ने पृथ्वी को उठा कर जल और कीचड़ में फेंक ही दिया। बेचारी पृथ्वी एकदम डूब गई। जल और स्थल तथा आकाश में हाहाकार मच गया। लाचार वाराहवतार हुआ जिसने जल में डूबी पृथ्वी का उद्धार किया और हिरण्याक्ष को मार पृथ्वी को पुनः अपने स्थान पर स्थापित किया।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताज के कारीगर।

गत-विख्यात आगरे का ताज बनाने का संकल्प जब सम्राट् शाहजहां के मनमें उठा तब कहते हैं कि पहले स्वप्न में उन्होंने यह रौजा देखा था, पर जागने पर उन्हें उसका पूरा नकशा भूल गया, केवल कुछ कुछ आभास उनके मनमें था। अस्तु जैसे भागवत पुराण के अनुसार बाणासुर की कन्या ऊषा श्रीकृष्ण भगवान के पौत्र अनिरुद्ध को स्वप्न में देख कर प्रेम-विह्वल हुई थी और उसकी सखी चित्ररेखा ने उस समय के वर्तमान सभी सुंदर प्रसिद्ध युवाओं के चित्र लिख कर उसके प्रेमपात्र को ढूंढ़ निकाला था, उसी प्रकार से सम्राट् शाहजहां ने भी स्वप्नदृष्ट इस रौजे को प्रत्यक्ष करने के लिये उस समय के सभी प्रवीण चित्रकारों को बुलवाया। फारस, अरब, रूम (तुर्किस्तान) यूनान (ग्रीस) तक के दूर देशों के चित्रकार और सांचेकार बुलवाए और संसार भर के सभी प्रसिद्ध इमारतों के चित्र बना कर सम्राट् के सामने उपस्थित किए गए, पर जब स्वप्नदृष्ट रौजे से कोई भी नहीं मिला तब उन चित्रकारों को तथा उन सारी इमारतों के चित्रों को सामने रख कर सम्राट् ने एक कमेटी की और कई दिनों तक के वादानुविवाद के बाद पहले इमारत किस ढंग की हो यह सोचा गया और अंत को जब यह निश्चय हुआ कि इस इमारत में प्राचीन और नवीन (उस समय के नवीन) दोनों ही ढंग का समावेश हो तब उसके कई नकशे तय्यार किए गए। बहुत कुछ बहस के बाद सम्राट् ने एक नकशा मनोनीत किया और पहले उसी नकशे के अनुसार लकड़ी का एक छोटा नमूना बनाया गया। जब वह नमूना सम्राट् ने पास कर दिया तब उसी के अनुसार इमारत का कार्य्य आरंभ किया गया। इसके बनाने के लिये उस समय के संसार के सभी मुख्य मुख्य शिल्पियों को सम्राट् ने बुलाया था और आजकल के उपाधि-प्राप्त शिल्पियों (इंजीनीयरों) से इनमें से किसी का भी वेतन कम न था। सबसे प्रधान शिल्पियों का जो अध्यक्ष था उसका नाम था उस्ताद ईसा जो एक हज़ार रुपया मासिक वेतन पाता था। कोई उसे शीराज और कोई आगरे का निवासी बतलाते हैं। इसी के मुकाबले का एक कारीगर कन्दहार निवासी मुहम्मद हनीफ भी एक हज़ार रुपया मासिक पाता था तथा मुलतान का मुहम्मद सय्यद ५९०) मासिक पाता था। मुलतान ही का और एक कारीगर अब्बूतौरा ५००) मासिक पाता था।

गुम्बज बनाने के लिये ५००) मासिक पर टर्की से इसमाइल खां नाम का कारीगर आया था जिसके साथ दिल्ली का एक प्रसिद्ध कारीगर मीरा भी इस कामको करता था और ४००) मासिक पाता था। तथा दिल्ली के अन्य चार प्रसिद्ध राजगीर ३७५) से लेकर चार सौ तक वेतन पाते थे।

ये लोग इमारत बनाने के काम पर थे। अब ताज में जो बेल बूटे और पच्चीकारी के काम बने हुए हैं, उनके कारीगरों का वेतन सुनिए। इन सब का मुखिया था अमानत खां (तुग्र अक्षरों का ज्ञाता) और वह १०००) मासिक पाता था। दूसरा अरबी अक्षरों की पच्चीकारी करनेवाला मुहम्मद सय्यद ८००) मासिक पाता था। तीसरा बगदाद का मुहम्मद खां जो फारसी की पच्चीकारी करता था ७००) मासिक और चौथा सीरिया का रौशनखां ३००) मासिक पाता था।

पच्चीकारी के काम में कन्नौज का एक प्रसिद्ध कारीगर चिरंजीलाल भी था जो ८००) मासिक पाता था और उसके अधीन तीन और कारीगर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...लाल, मन्नूलाल और मनोहरसिंह २०० से ...मासिक तक पाते थे।

...ताज पर जो फूल पत्ती के सुंदर काम बने ...हैं उनमें का मुख्य कारीगर था बुखारा का अली ...मद खां जो ५००) मासिक पाता था और उसका ...ता साथी शकूरमुहम्मद ४००) मासिक पाता ...। दिल्ली के और भी तीन कारीगर थे जिनका ...था बनवारी, जोरावर और शाहमल्ल, पर ...के वेतन का पता नहीं। यह उन्हीं मुख्य ...गरों के नाम हैं जो अपने अपने विभागों के ...हेश थे और जिनके तत्वावधान और निर्देश ...अनुसार छोटे कारीगर सब काम बनाया करते ...। स्वयं तो ये लोग शायद ही कभी हाथ ...लाते होंगे। तौभी ताज ऐसी इमारत के लिये ...ने वेतनों के कर्मचारी महंगे नहीं मालूम पड़ते।

शिक्षा क्यों आवश्यक है।

(ले० प्राणनाथ विद्यालंकार।)

(१)

शिक्षा-संबंधी हेत्वाभास।

हमारे देश की आर्थिक अवस्था अति शोचनीय है, इस बात को हर कोई मानता है। इसके अनेक कारण कहे जाते हैं और अनेक इलाज बताए जाते हैं। इन इलाजों में से सब से बड़ा इलाज 'शिक्षा' समझा जाता ...। यह कहा जाता है कि शिक्षा भारत के सब ...ओं के लिये अमृतधारा का काम देगी—इस ...ही के सुंघाते ही भारतमाता के होश ठिकाने आ ...जायेंगे। कहते हैं कि भारत के ग्रामीण अशिक्षित ...होने से इतने गिर गए हैं कि न उन्हें अच्छे ...तों से कृषि करना आता है, न उन्हें स्वास्थ्य ...का कुछ इल्म है और न उनमें किसी प्रकार का सदाचार है। साथ ही यह बताया जाता है कि शिक्षा का घूँट पीते ही ये सब बीमारियाँ काफूर हो जायँगी—खेतियाँ लहलहाने लगेंगी, जमीन अपने पेट से कई गुना उपज देने लगेगी, व्यापार चमक उठेगा, हैजा और प्लेग उड़ जायँगे, आचरण उन्नत हो जायँगे। महाशय गोखले का कथन है कि "साधारण ज्ञान के विस्तार से श्रमियों की कार्यक्षमता बढ़ जायगी" * "उनका जीवन सुखमय हो जायगा और जीवन का रहन सहन उन्नत हो जायगा। यही नहीं श्रमियों का आचार तथा आर्थिक दशा भी सुधर जायगी" † "शिक्षा के बिना अज्ञानता में मस्त हमारे देशवासी स्वास्थ्य रक्षा तथा मितव्ययता के लाभों को कैसे जान सकते हैं? श्रमियों की व्यावसायिक कार्यक्षमता कैसे बढ़ाई जा सकती है? ‡ यदि ये सब बातें ठीक होतीं, यदि यह ठीक होता कि भारत के ग्रामीणों के आचरण गिरे हुए हैं और वे शिक्षा से सुधर जायँगे, यदि यह ठीक होता कि शिक्षा का अभाव ही भारत के ग्रामों की शोचनीय आर्थिक दशा का कारण है और शिक्षा

---

* The general spread of education in a country even when it did not proceed beyond the elementary stage, meant the increased efficiency of the worker.

Gokhale's Speeches.

† It (Elem. Edu) means for them a keener enjoyment of life, and a more refined standard of living. It means a greater moral and economic efficiency of the individual.

Gokhale's Speeches, 2nd edition P. 781.

‡ With 94 per cent of our countrymen sank in ignorance, how can the advantages of sanitation or thrift be perfectly appreciated and how can the industrial efficiency of the worker be improved?

Ibid. p. 782.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के फैलने से ही वह दशा बिल्कुल सुधर जायगी। यदि यह ठीक हो कि शिक्षा के न होने से ही आज हैज़ा प्लेग और दुर्भिक्ष हमको सता रहे हैं, और उसके आते ही ये हवा हो जायँगे, यदि यह ठीक हो कि भारतवासियों के आचरण, स्वास्थ्य और आर्थिक कार्यक्षमता शिक्षा से सब के सब बढ़ जायँगे तो हमारी प्रसन्नता की कोई सीमा न रहती। लेकिन दुर्भाग्य से ऐसा नहीं है।

सब से पहले यह कहना सर्वथा त्रुटिपूर्ण है कि भारतीय ग्रामीणों का आचरण पतित है, और वे एक पाश्चात्य ढंग से दी हुई शिक्षा से सुधर जायँगे। इस कथन के दोनों ही भाग त्रुटिपूर्ण हैं। लेकिन शिक्षा के पक्षपाती बार बार इसी युक्ति को उपस्थित करते आए हैं। १७९७ में जब चार्लस ग्रान्ट ने पहले पहल ईस्ट इन्डिया कम्पनी को भारत में शिक्षा की जरूरत बताई थी तब यही युक्ति दी थी। आश्चर्य है कि यही युक्ति महाशय गोखले भी पेश करते हैं। ग्रान्ट के शब्दों का भाव इस प्रकार था कि "यह स्पष्ट है कि भारतीयों जैसे विषयी, हठी, पतित, भ्रष्टाचारी लोगों की उन्नति के लिये शिक्षा की कितनी आवश्यकता है।" * हमारे देश के भीरु जोशीले सुधारक और वक्ता जब कभी भारत की अवनति के कारणों पर विचार करने लगते हैं तब वे मौलिक कारणों का तो नाम तक नहीं लेते और ऐसे नए नए कारणों का धड़ाधड़ आविष्कार किया करते हैं। कोई कहता है कि वेदान्त का प्रचार होने से भारत गरीबी के गढ़े में डूब गया; दूसरा कहता है कि भारतवासी बड़े आलसी हैं वे कृषि के सिद्धांतों को नहीं जानते हैं, इसी लिये उनकी यह दशा हुई है। तीसरा यह भूल जाता है कि मुसल्मानी काल में भारत सब से समृद्ध देश था और बड़ी गंभीरता से अपनी राय देता है कि मुसल्मानों की लूट से भारतवर्ष ग़रीब हो गया। असली कारणों के कहने का किसी को साहस नहीं होता और ऐसे ही ऐसे कारणों का आविष्कार कर के इन्हीं के आधार पर शिक्षा की जरूरत सिद्ध की जाती है। इन सब भले मानसों के प्रति हमारा यही उत्तर है कि अज्ञता और निरक्षरता भिन्न चीजें हैं। आचार का नाश आर्थिक कार्यक्षमता का घटना और स्वास्थ की हानि सब अज्ञता से हो सकती हैं लेकिन निरक्षरता से नहीं। भारत के ग्रामीण यद्यपि निरक्षर हैं, तथापि वे अज्ञान नहीं हैं, सुजान हैं। सर टी डबलू होल्डरनस का कथन है कि "भारतवासी कृषक यद्यपि निरक्षर हैं परन्तु अज्ञ नहीं हैं। उनको धार्मिक बातों का अपने पितृ पितामहों से ज्ञान प्राप्त रहता है। उनको फसल, भूमि, पशु पक्षी का पूर्ण तौर पर ज्ञान होता है।" * भारतीय ग्रामीण को तुलसीकृत रामायण और महाभारत

* "Upon the whole, we cannot avoid recognizing in the people of Hindustan a race of men lamentably degenerate and base, retaining but a feeble sense of moral obligation, yet obstinate in their disregard of what they know to be right, governed by malevalent and licentious passions, strong by exemplifying the effects produced on society by great and general corruption of manners, and sunk in misery by their vices, in a country peculiarly calculated by its natural advantages to promote the happiness of its inhabitants." Quoted in James, (Education and Statemenship in Bri.) India.

* 'The Indian peasant, though illiterate, not without knowledge. He has been carefully trained from boyhood in the ritual and the religious observances of his fore-fathers. He hears the ancient epics read in their vernacular form. He is full of love and crops and soils and birds and beasts.' Peoples and Problems of India. p.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ा सुनकर जो धार्मिक शिक्षा मिलती है, शता-
...यों से परम्परा से आई हुई कहावतों और
...ाओं में जो आत्मिक ज्ञान उसे प्राप्त होता है
...के मुकाबिले में, नए ढंग की शिक्षा से मिला
...ा ज्ञान न केवल तुच्छ है, प्रत्युत हानिकर भी
...। क्योंकि शिक्षा पा कर बालक की रुचि इन
...ारमिक बातों में नहीं रहती।

भारत के ग्रामीणों पर अधार्मिकता का दोष
...ाना सरासर झूठ है और सरकार की अध्य-
...ा में दी हुई नवीन ढंग की शिक्षा को उसका
...ण बताना वैसी ही मूर्खता है। मैं इस विषय
...ढ़ाना नहीं चाहता हूँ। भारतीयों के आच-
...के विषय में मुझको एक दो प्रमाण देने हैं।
...स्थनीज़ और ह्यूत्सांग को जाने दीजिए। वर्त-
...समय के विचारक क्या कहते हैं यही सुनिए।
...समूलर कहता है कि "मुझको बहुत से आंग्ल
...पारियों से पता लगा है कि भारतीय, संसार
...सब देशों की अपेक्षा व्यापारी बुद्धि में ऊँचे
...झूठी हुंडी हिंदुस्तान में बहुत कम सुनी गई
...।" § जज चामर्स ने चिर काल तक इंग्लैण्ड,
...त और जिबराल्टर में जजी की थी। उनकी
...मति है कि *"उत्तरपश्चिमीय देशों की अपेक्षा इंग्लैंड में असत्य अधिक बोला जाता है। भारत की अपेक्षा बर्मिंगघम में जालसाजी बहुत ही अधिक है।" इससे अधिक प्रामाणिक और किस महाशय की सम्मति हो सकती है?

वर्त्तमान कालीन आंग्लशिक्षा का भारतीय जनता के आचार बिगाड़ने में बड़ा भारी भाग है। आंग्ल राज्य का शिक्षा देने में चाहे कितना ही उच्च उद्देश्य क्यों न हो परन्तु उस शिक्षा के जो परिणाम हैं वे अतिशय भयंकर हैं। पार्वतीय प्रदेशों के भारतीय सर्वथा अशिक्षित हैं परन्तु उनमें चोरी का नामो निशान नहीं है। जहां इस शिक्षा का प्रवेश नहीं वहां राह में पड़े सोने को भी कोई नहीं छूता परन्तु जहां यह शिक्षा की मशाल अधिक देदीप्यमान है वहीं सब प्रकार की मक्कारी और धूर्तता आ जाती है। इससे बढ़ कर इस विषय में क्या प्रमाण हो सकता है कि भारतवर्ष के जो प्रान्त शिक्षा में सब से आगे हैं वही अपराधों में भी सब से बढ़े हुए हैं। बर्मा में सैकड़ा पीछे ३८ पुरुष पढ़े हुए हैं। और वहां प्रति १० हजार व्यक्तियों के पीछे ५६ अपराध होते हैं। उसके बाद शिक्षा में मद्रास, बंगाल और बंबई हैं। अपराधों में दूसरे दर्जे पर येही आते हैं, इनमें क्रमशः ४४, ४२, ३९ अपराध होते हैं। किन्तु पञ्जाब और युक्तप्रान्त शिक्षा में सब से पीछे हैं और इनमें औरों की अपेक्षा अपराधों की संख्या भी कम है। इनमें ३२ और २१ अपराध होते हैं। इससे परिणाम क्या निकला? परिणाम इसका यही है कि पाश्चात्य शिक्षा से सदाचार की वृद्धि की आशा करना दुराशा मात्र है। इस प्रकार की शिक्षा की वृद्धि से देश को घाटे के सिवाय लाभ नहीं हो सकता है। पिछले प्रकरणों में दिखाया जा चुका है कि इस शिक्षा ने भी भारतीय शिल्प तथा चित्रण कला पर कुल्हाड़ी चलाई है और मैं आगे चल कर यह सिद्ध करूँगा कि शिक्षा के सरकारी एकाधिकार ने ही भारतीय संपूर्ण व्यव-

---

§ "I have been repeatedly told by English merchants that commercial integrity stands higher in India than in any other country, and that a dishonest bill is hardly known here."

India (What it can teach us.)
Lecture II.

* "Truth is more often perverted in an English county court than in a North West county." "The perjury committed by witnesses in the Birmingham county court exceeds anything I ever experienced in India." Coalmess' article on "Petty Perjury" in "Law Quarterly Review" (1895).

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथियों को भयंकर धक्का पहुँचाया है। जो कुछ हो उपरिलिखित संपूर्ण बातों के देखते हुए यह कहना दुःसाहस मात्र होगा कि भारतीय ग्रामीणों के आचरण पतित हैं और साक्षरता उन्हें सुधार देगी।

अब दूसरी बात हमारे सामने यह आती है कि बिना शिक्षा के आर्थिक अवस्था नहीं सुधर सकती और न बिना शिक्षा के आर्थिक अतिक्षमता बढ़ सकती है। इसका भी मैं यही उत्तर दूँगा कि अज्ञता और निरक्षरता में भेद है। भारतीय किसान यद्यपि निरक्षर हैं परन्तु कृषि के विषय में उनको पर्य्याप्त से अधिक ज्ञान है। लार्ड वैलिंगटन ने लोगों से अपने एक व्याख्यान में कहा था कि "जब मैं इंग्लैंड से चला तो मैंने यह सोचा कि मैं अपने प्रान्त में आकर कृषि सम्बन्धी शिक्षा का प्रचार करूँगा, लेकिन यहां आकर मैंने देखा कि कृषक लोग पहिले से ही ये बातें जानते हैं।" सर हैनरी काटन कहते हैं कि भारतीय रैयत को इतनी बातों का ज्ञान है जो कि एक वैज्ञानिक नहीं प्राप्त कर सकता है*। कुछ वर्ष पूर्व भारत सरकार ने डाक्टर वील्का नामी एक भारी कृषिवेत्ता को अनुसन्धान के लिये नियत किया था। उन्होंने अपनी रिपोर्ट में जो शब्द लिखे हैं उनको पढ़ कर आंखें खुल जाती हैं। उनके शब्दों का भाव यह है † कि भारतीयों के कृषि के तरीके बहुत उत्तम हैं और उनको उन से ज्यादा पता है जो कि उनको पढ़ाने आते हैं। भारतीय कृषकों को शिक्षित करने के सब प्रयत्न इसलिये निष्फल हुए हैं कि वे अपने शिक्षकों से पहिले ही से अधिक जानते हैं। जिन्हें ग्रामों की आन्तरिक अवस्था का परिज्ञान है, वे जानते हैं कि कृषि शास्त्र के सब सिद्धान्त कहावतों और भक्तुक्तियों के रूप में कृषकों को याद होते हैं।

इस पर हमारे मित्र अधीर हो उठेंगे और कहेंगे कि भारतीय किसान को क्या आता है? वह खादों के उपयोग कहां जानता है? यदि जानता हो तो गोबर को क्यों सूखने देता है? वह कलों से खेती करना कहां जानता है? वह पशुओं की रक्षा करना कहां जानता है? उसे कृषि का कौनसा नियम आता है? यदि आता है तो वह ऐसा गरीब क्यों रहे?

इन सब प्रश्नों का यह उत्तर है कि भारतीय किसान की गरीबी का कारण शिक्षा का अभाव नहीं, रुपए का अभाव है। वह खादों के लाभ खूब जानता है, लेकिन लकड़ी इतनी मँहगी हो गई है और जंगल के नियम इतने कठोर हैं कि बेचारे को गोबर जलाने के काम में लाना पड़ता है। वह पशुओं को भोजन देने के लाभ भी जानता है और जब तक उसके वश में था, उन्हें भोजन देता भी था। लेकिन आज जंगलों का प्रबंध कड़ा हो गया है, चरागाहों पर खेती करनी पड़ी है, बेचारे कृषक को आप ही भोजन नहीं मिलता, वह पशुओं को क्या दे?

पशुचिकित्सा का जितना ज्ञान अब तक हमारे कृषकों को है, उतना शिक्षित डाक्टरों को नहीं है। बंगाल में जैसोर और खुलना जिले

* The Royats of India possess an amount of knowledge and practical skill within their own humble sphere which no expert scientist can ever hope to acquire"—New India, p. 85.

† "I unhesitatingly dispose of the ideas which have been erroneously entertained that the Ryots' cultivation is primitive and backward, and say that nearly all attempts made in the past to teach him have failed because he understands far better than his would-be teacher, the particular circumstances under which he has to pursue his calling.

—Report on the Improvement of Indian Agriculture.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अहीर इस काम में बड़े प्रसिद्ध हैं। जो लोग
के आश्चर्यजनक कर्म देख चुके हैं, वे जान
कते हैं कि शिक्षा का अभाव हमारे देश में नहीं,
भाव है पूँजी का। जब तक देश की सब प्रकार की
ओं को नहीं सुधारा जाता, लगान की कड़ाई,
वसायों का नाश, तटकर का न होना, टक-
लों का बंद होना और मुद्रा का सुष्टीकरण
आदि बातें देश से नही जातीं, तब तक हजार
शाओं से कुछ सुधार न होवेगा। आज इन
नों को हटा दीजिए और आपकी शिक्षा के
ता ही सब कुछ सुधर जायगा।

इन बातों के रहते हुए शिक्षा के अभाव को
रत की अवनति का कारण कहना और भार-
य कृषक को शिक्षा देना ऐसा ही होगा जैसे
ई संसार के सब से बड़े दौड़नेवाले हुसैन
रखिंडी (?) के पैरों में बेड़ियाँ बाँध कर उसे
जरे में बंद कर दे और फिर बड़ी गम्भीरता,
रुणा और उदारता के साथ उसके पिंजरे की
ओर से आँखे हटा कर उसे उपदेश देने लगे
देखो तुम्हें चलना नहीं आता, इसी लिये तुम
ले निर्बल हो गए हो। जब चलने की इच्छा हो
तो क्रूरल मसल्स (Crural muscles) और
टिबियल मसल्स (Tibial muscles) को गति
नी चाहिए, अब्डक्टर (Abductor) मसल को
सारटेरियल (Sartarial) मसल के साथ साथ
चलाना चाहिए और राक्स्ट्रैसर, क्रूसिस, पार्टि-
स तथा एक्स्ट्रेसर, डिजिटोरिपस कम्यूनिस
नेमस की गति पर भी ध्यान चाहिए। इस
कार की बातों से सिवाय इसके कि बेचारे के
माग में बोझ पड़े और क्या हो सकता है?
र सचमुच भारतीय कृषक के शिक्षा देने में भी
ही बात होगी। न केवल उसका वास्तविक ज्ञान
अक्षरों का ज्ञान नहीं लेकिन पदार्थों का ज्ञान—
गा ही नहीं, लेकिन उल्टा घटेगा। फ्रांस के
प्रसिद्ध विद्वान् जोसफ चेले ने २० वर्ष के निरी-
क्षण के बाद भारत के प्रश्नों पर "Administrative Problems of British India" नामी पुस्तक लिखी है। उसमें शिक्षा पर लिखते हुए उन्होंने एक बहुत उत्तम उदाहरण दिया है। वे लिखते हैं कि "एक स्कूल इंस्पेक्टर ने एक बार कहा कि भारतीय बालक स्कूल से बाहर अधिक बुद्धिमान् होते हैं। स्कूल में जा कर उनमें वह बात नहीं रहती है। यह क्यों? इसका कारण यह है कि स्कूल में जा कर उनको प्रत्येक बात नई ही नई दिखाई देती है। एक ग्रामीण बालक प्रति दिन अपने घर में तथा अपने चारों ओर बीसों प्रकार के पशु पक्षी तथा पौधे देखता है। उसको पारिवारिक शिक्षा से ही यह पता होता है कि वर्षा कब होती है? रथ के पहिए में तेल क्यों समय समय पर देना चाहिए। परंतु स्कूल में ये सब शिक्षाएँ नहीं हैं। वहाँ उसको वह पढ़ाया जाता है जिसका आजीवन उसको कभी काम ही नहीं पड़ता *।"

---

* A School Inspector not long ago made the following remarks; The children seem far more intelligent out of school than in it. Why? Because at school everything is strange to them, and they meet nothing that they knew before. A young villager knows more of the plants that he sees. He knows the uses to which domestic utensils are put. He can gather from the sky when it is going to rain. He knows, too, that for a wheel to roll properly it must be greased from time to time. Now those many aspects of practical life, the causes and relations of which he might learn, are entirely ignored at school as if with the deliberate intention of withdrawing him from surroundings in which he has lived. The school teaching endeavours to fill his mind with entirely new and strange ideas which for the most part he will never have occasion to apply." (p. 489.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारांश यह है शिक्षा बच्चों को परिस्थिति का ज्ञान देने के बदले उल्टे उनका पहला ज्ञान भी छीन लेती है। शिक्षा से कृषक अच्छा कृषक नहीं बनता और शिल्पी अच्छा शिल्पी नहीं बनता। यदि शिक्षा कृषक को अच्छा कृषक नहीं बनाती तो उससे क्या लाभ हुआ? कदाचित हमारे मित्र कहेंगे कि हम ग्रामीणों को उनके पेशे की ही शिक्षा देंगे। किसान को ऐसी पुस्तकें देंगे जिनमें कृषि के ही पाठ हों। मुहम्मद हुसैन, राज को ऐसी पुस्तकें देंगे जिनमें मकान बनाना ही बतलाया गया हो और नेतराम महाराज को पाक विषयक पुस्तकें ही दिया करेंगे। इनके प्रति मेरा उत्तर यह है कि आपकी पुस्तकों में जो बातें ऐसी हैं कि कृषक उनका वर्त्तमान अवस्था में उपयोग कर सकते हैं, उन्हें तो कृषक पहले ही जानते हैं; और जो बातें आप ऊँचे दर्जे की बताते हैं, वे इतनी मँहगी हैं कि कृषक अपनी वर्त्तमान आर्थिक और राजनैतिक अवस्थाओं के होते हुए उनका प्रयोग ही नहीं कर सकते और उन बातों को बताना कृषकों के दिमाग पर व्यर्थ बोझ डालना है। आप अगर अपनी पुस्तक में गोबर की खाद का वा हल फेरते ही सुहागा फेरने का लाभ बताते हैं तो कृषक इन्हें पहले ही जानते हैं, लेकिन आप उन्हें ड्राई फार्मिंग (Dry farming) और मोटर हल (Motor-ploughs) का उपयोग बताते हैं तो इन बातों को जानने पर भी कृषक के पास इतने पैसे नहीं हैं कि वे इनको उपयोग में ला सकें। इसी लिये आपके इस विज्ञान की कोई माँग नहीं है। इस माँग के अभाव का इससे बढ़ कर के प्रमाण क्या है कि १९२३ में यू० पी० के कृषि-कालेज में केवल ५० विद्यार्थी और सेबोर में केवल २७ थे।

जिस प्रकार कृषि शिक्षा की कोई माँग नहीं है, उसी प्रकार शिल्प शिक्षा की भी ग्रामीणों की ओर से कोई माँग नहीं है। इसका कारण यह है कि यह संपूर्ण पेशे लाभ रहित हो गए हैं। ग्रामों की साधारण आवश्यकताओं को पुराने यद्यपि अधिकतर पूर्ण कर रहे हैं जो नए ढंग की उपजाऊ शिक्षा को प्रयोग में लाने की अवस्था के उपयुक्त नहीं हैं। सरकार की १९१४-१५ की शिक्षा सम्बन्धी रिपोर्ट भी इस विषय में हमारा पक्ष पुष्ट करती है। उसके शब्द हैं कि "शिल्प व्यवसाय तथा इंजीनियरिंग के विद्यालयों में विद्यार्थियों की संख्या घट रही है। जहाँ पहिले १३७६७ विद्यार्थी थे वहाँ अब केवल मात्र १२१४५ विद्यार्थी ही रह गए हैं *।" अर्थात् शिल्पसंबंधी शिक्षणालयों में विद्यार्थियों की संख्या घट रही है।

इस प्रकार स्पष्ट हो गया होगा कि प्रारम्भिक शिक्षा से वर्त्तमान भारतीय पेशों की किसी प्रकार की उन्नति नहीं हो सकती। इस समय शिक्षा का पेशों के लिये कोई उपयोग नहीं है। ५ श्रेणियों तक पढ़ने का उपयोग केवल यही है कि ६ठीं में दाखिल हो जायँ। बड़ोदे के अनुभव से हमको यही ज्ञात होता है। वहाँ प्रारम्भिक शिक्षा के फैलने पर पेशों की उन्नति हुई है इसका कोई प्रमाण नहीं है। हाँ, अंग्रेजी शिक्षा की माँग जरूर बढ़ गई है, जैसा कि हमको नई रिपोर्ट (१९१४-१५ से ज्ञात होता है।

अब तक जो कुछ लिखा गया है उसका यही तात्पर्य्य था कि शिक्षा भारतीय कृषि तथा व्यवसाय के समुत्थान में सर्वथा असमर्थ है। क्योंकि शिक्षा वहीं फलवती होती है जहाँ पर कि

* "The numbers both in engineering and surveying schools and in technical and industrial schools show a decline and they are now 12145, as against 13767 of the preceeding year, an utterly inadequate total when it is considered that there are over 50,000 students in arts and professional colleges, and over a million pupils in secondary schools. (p. li.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा व्यवसाय के समुत्थान के मौलिकतत्व से ही विद्यमान हों। कृषि उन्नति का तत्व जहाँ भूस्थापित्व है वहाँ व्यावसा- उन्नति का मौलिक तत्व लाभ है।

तुल्य दुर्जनन्यायेन हम कुछ समय के लिये लेते हैं कि शिक्षा के जादू का मंत्र फूँकते ही की दूनी उन्नति हो जायगी। अच्छी बात है। की उन्नति का अर्थ क्या है? कृषि की उन्नति अर्थ यह है कि इसके बदले मोटर-हल या और मशीन चलने लगेगी और जहाँ आज ना कम से कम दो कृषक काम करते हैं, वहाँ ही काम करने लगेगा अर्थात् थोड़े मनुष्यों द्वारा अधिक उत्पत्ति होने को कृषि की उन्नति ते हैं। अब मान लीजिए कि ऐसी ही ति शिक्षा ने कर दी। आज ७० प्रति शतक मी भारत में कृषि कर रहे हैं, दूनी उन्नति पर इस सारे काम को ३५% आदमी करने ो। अब बताइये बाकी के ३५% आदमी कौन से ड़े में डूबेंगे? आप कहेंगे कि वे व्यवसाय शिल्प में जायँगे, लेकिन अगर व्यवसाय शिल्प में स्थान होता तो पहले वे उधर लौट कर कृषि में क्यों आते? कृषि तथा साय दोनों ही घाटे के व्यवसाय हैं। परि- तियों तथा विदेशी व्यवसाय का मुका- ना इतना सहज है कि एक शताब्दी के र उसने भारत के व्यवसायों को नष्ट कर ा और जनता के बड़े भाग को कृषि में ढकेल ा। कृषि में भी सरकार का लगान इतना रक है कि लोगों को उधार रुपया ले करके ान चुकाना पड़ता है और भारतवर्ष दिन पर दुर्भिक्ष का पात्र हो रहा है। जब तक इन ों को न रोका जाय तब तक भारत में शिक्षा कैसे समृद्धि कर सकती हैं।

व्यवसायों से बेकार हो करके लोग कृषि में ने गए। कृषि में कलाओं का प्रयोग करके आप उन्हें कृषि से बेकार करेंगे तो वे कौनसे गड्ढ़े में डूबेंगे? वे बेकार हो कर फिरेंगे और दुर्भिक्ष से मरेंगे। यदि उनमें कुछ जान होगी तो वे अनेक अनुचित कृत्य करेंगे। इस-लिये पहिले उन ३५ आदमियों के लिये स्थान निकालिए। तब उस शिक्षा से लाभ है। पहले राजनैतिक सुधार पहले तटकर और लगान की कमी, फिर कृषि-शिक्षा, यह हमारा सिद्धांत है। हाँ, राजनैतिक सुधार से पहले उस शिक्षा की अत्यन्त आवश्यकता है जो राजनैतिक जाग्रति में सहायक हो, जो जातीय हो; किंतु वह शिक्षा सर्वथा हानिकर है जिसके द्वारा आजकल जनता को "सभ्य" बनाने का बहाना किया जा रहा है।

देश की गरीबी का जो कारण भारतीय समाज सुधारक समझते हैं वह कारण नहीं है। असली कारण जो कुछ है उसका स्थान स्थान पर उल्लेख किया जा चुका है। यदि किसीको देश से प्रेम है और देशवासियों से वास्तविक सहानुभूति है तो उसको असली कारण दूर करना चाहिए और सरकार से प्रार्थना करनी चाहिये कि वह शीघ्र ही शासन सुधार कर देवे।

शिक्षा का एक लाभ यह भी प्रगट किया जाता है कि शिक्षा के बिना ग्रामीण लोग स्वास्थ-रक्षा के सिद्धांत को नहीं जान सकते। उनको इस विषय का परिज्ञान देने के लिए शिक्षा देनी जरूरी है। इसका भी मैं वही उत्तर दूँगा जो पहले लाभों पर दिया जा चुका है। यद्यपि हमारे देश के कृषक निरक्षर हैं, फिर भी वे स्वा-स्थ्यरक्षा के ज्ञान में साक्षरों से बहुत उन्नत हैं। उन्हें पुस्तकों से ज्ञान नहीं मिलता, उनका ज्ञान परंपरागत है। ऋतु चर्य्या, दिनचर्य्या, भोजन पान और रहन सहन के विषय में आज जो नये से नये आविष्कार पश्चिम में हो रहे हैं उनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुकूल लोगों की आदतें परंपरा से बनती आती हैं। यदि भारतीय कृषकों के पास धन होता तो वे घर की सफाई रसोई और भोजन पात्रों की सफाई में और व्यक्तिगत सफाई में युरोपियनों से बहुत अच्छे रहते!

प्रसिद्ध ऐतिहासिक एलफिंस्टन का कथन है कि "The cleanliness of the Hindus is proverbial" अर्थात् हिंदुओं की स्वच्छता तो मुहावरा बन गई है। इसी प्रकार मद्रास के भूतपूर्व सैनिटरी कमिश्नर कर्नल किंग ने लंडन में कहा था कि "भारतीय स्वास्थ्य संबंधी नियमों का पूर्ण तौर से ज्ञान रखते हैं।" लेकिन यहाँ बड़े जोर से प्रश्न होगा कि गँवैये लोग यदि स्वास्थ्य-रक्षा के नियमों को जानते हैं तो गांव इतने गंदे मैले गलीज क्यों रहते हैं? इस प्रश्न का उत्तर देना बड़ा आवश्यक है।

(१) गांवों के गंदा रहने का पहला कारण उनकी निर्धनता है। स्वास्थ्यरक्षा के नियमों के अनुकूल वर्तने के लिये स्वादिष्ट भोजन की, निद्रा की, विश्राम की जरूरत है। लेकिन गँवैये लोगों को इनमें से कुछ भी इष्ट मात्रा में नहीं मिलता है। वे नियमों को जानते हैं फिर भी उसके अनुसार चल नहीं सकते हैं।

(२) गांवों के उजड़ने बिगड़ने का दूसरा कारण पहले से भी बड़ा है। एक दो पीढ़ी पहले उच्च श्रेणियों के जमींदार लोग ग्रामों में रहते थे। इसका कारण यह था कि मुसल्मानी तथा पौराणिक काल की सरकार उपज में लगान लेती थी। परंतु आज कल की आंग्लसरकार रुपयों में लगान लेती है। जब उपज में लगान ली जाती हो तब जमींदारों को भी किसान से उपज का ⅙ प्राप्त करने के लिये गांव में ही रहना पड़ता था। यदि वह आलस्यवशात् न रहता तो किसान के पास से उसे कूड़ी कौड़ी न मिलती थी। क्योंकि किसान पीछे से कह देते कि हमारे खेत का सारा अनाज नुक्सान हो गया। कुछ बचा ही नहीं है। देवें कहाँ से। परंतु अब वह बात नहीं रही। अब जमींदार लोग लगान रुपयों में लेते हैं। वर्ष में एक बार गांव में आ करके और अपने रुपये वसूल करके नगर में रंडियों को अर्पण करते हैं और शराब पी कर दरिद्र कृषकों के धन को स्वाहा करते हैं। इतना ही नहीं। पहले जमींदारों को विदेशी शिक्षा की गंध न आई थी। अब अंग्रेजी शिक्षा पा कर खुले गांवों में रहना पसंद नहीं करते हैं और गँवैये लोगों को घृणा की दृष्टि से देखते हैं। आंग्ल राज्य से पूर्व जमींदार लोग ग्रामों के नेता समझे जाते थे। इन्हीं के प्रभाव से ग्रामों का सामाजिक जीवन स्वरक्षित तथा उन्नत होता रहता था। इन्हीं के नेतृत्व में ग्राम की सफाई आदि के लिये संमिलित उद्योग होता था। लेकिन आज कल न वह सामाजिक जीवन और न वह संमिलित उद्योग जो पहले बीमारियों को रोकता था। इस सब दुरवस्था का मुख्य कारण आंग्ल राज्य का उपज में लगान लेना ही कहा जा सकता है।

(३) तृतीय और सब से बड़ा कारण सरकार का पुरानी पंचायतों को नष्ट कर देना है। ये पंचायतें भारतवर्ष में अत्यंत प्राचीन काल से चली आई थीं। इन्हीं के कारण ग्रामों में शांति तथा ग्रामीणों का आचार अत्यंत उन्नत रहता था। परंतु अब यह बात नहीं रही है। इससे ग्रामों की दशा बिगड़ी जाती है।

ये तीन कारण ग्रामों के बिगड़ने के संक्षेप में जो कि संपूर्ण राजनैतिक हैं। सारांश यह है कि जिन बुराइयों का हम कारण अशिक्षा को समझते हैं वास्तव में उनका संबंध शासन से है। शासन सुधार होने पर और बुद्धिमत्ता से राज्य नियम बनाने पर सब बुराइयाँ शीघ्र ही दूर हो जावेंगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षाजन्य भयंकर घात ।

प्रत्येक देश में जहां जहां जनता को शिक्षित करने का काम राज्य ने अपने हाथ में लिया है, वहां वह किसी व्यक्ति को बाधित नहीं कर सकता कि तुम हमारी ही पाठ विधि के अनुसार पढ़ो। यदि कोई पिता अपने बच्चों को और तरीके से पढ़ाना चाहता है तो घर पर पढ़ा सकता है, वा प्राइवेट स्कूलों में पढ़ा सकता है, जिनकी पाठविधि राजकीय पाठविधि से भिन्न हो। महाशय मिल का कथन है कि एक बात पर मैं अवश्य बल दूंगा और वह यह कि किसी भी राज्य को यह अधिकार नहीं है कि वह उच्च तथा नीच शिक्षा का एकाधिकार कर लेवे और न वह अपने विद्यालयों तथा महा विद्यालयों के अध्यापकों तथा विद्यार्थियों के साथ किसी विशेष प्रकार का पक्षपात कर सकती है। भारतीय सरकार अपने यहां के बी० ए तथा एम० ए को ही क्यों नौकरी देती है? अन्य योग्य व्यक्तियों को वह यहां नौकरियाँ क्यों नहीं देती? यह भारतीय सरकार का काम भारत के लिये भयंकर हानिकारक है। यह कभी भी किसी को सह्य नहीं हो सकता है कि राज्य शिक्षा पर अपना पूर्ण अधिकार कर लेवे। इस प्रकार के कार्य को करना राज्य का अपने आप को स्वेच्छाचारी बनाना है। जिस राज्य का बालकों की शिक्षा पर अधिकार हो वह जनता से जो चाहे करवा सकता है। सरकार अपने स्कूल तथा कालिज करे परन्तु ऐसा कोई काम न करे जिससे सर्वसाधारण उसी के कालिजों तथा स्कूलों में पढ़ने का यत्न करें।"* योरुपीय देशों में आज कल शिक्षा में जनता को स्वातन्त्र्य उपलब्ध है। फ्रांस में १९०३-४ में राजकीय विधि से पढ़ने वाले विद्यार्थी ४९३५००० थे जब कि प्राइवेट विधियों से पढ़ने वाले १५९८५९१ थे। परन्तु भारत शिक्षा के मामले में भी स्वतन्त्र नहीं है। सरकार ने शिक्षा पर एकाधिकार कर लिया है। गवर्नमेण्ट कालिजों के विद्यार्थियों को तो सरकार नौकरी देती है पर गुरु कुल कांगड़ी जैसी संस्थाओं के योग्य से योग्य विद्यार्थियों के लिये सरकार के पास स्थान नहीं है। यही नहीं। सरकार के विद्या-

---

* One thing must be strenuously insisted on: that the Government must claim no monopoly for its education, either in the lower or in the higher branches; must exert neither authority nor influence to induce the people to resort to its teachers in preference to others, and must confer no peculiar advantages on those who have been instructed by them. Though the Government teachers will probably be superior to the average private instructors, yet they will not embody all the knowledge and sagacity to be found in all instructors taken together, and it is desirable to leave open as many roads as possible to the desired end. It is not endurable that a Government should either in show or in fact, have a complete control over the education of the people. To possess such a control, and actually exert it, is to be despotic. A Government which can mould the opinions and sentiments of the people from their youth upwards, can do with them whatever it pleases. Though a Government, therefore, may, and in many cases ought to, establish schools and colleges, it must neither compel nor bribe any person to come to them, nor ought the power of individuals to set up rival establishments, to depend in any degree upon its authorization.

Principles of Political Economy by John Stuart Mill, Book V. Chapt. XI. 9-8.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लयों तथा महा विद्यालयों का संगठन विचित्र ढंग का है। मेडिकल कालिज में एक बी० ए० पास को दाखिल किया जा सकता है परंतु गुरुकुल कांगड़ी के एक ग्रेज्यूएट को नहीं। शिक्षा में सरकार का इस प्रकार का एकाधिकार जातीय उन्नति के लिये अत्यंत भयंकर है। राज्य का क्या अधिकार है कि वह पढ़ाई का एकाधिकार करे? ऐसा करना व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर हस्तक्षेप करना है। मान लीजिये कि देश के अंदर एक बड़ा भारी शिक्षक विज्ञानवेत्ता है जो सरकारी पाठ-विधि से घृणा करता है। वह अपने बच्चे को बी० ए० तक की पढ़ाई अपने घर पर या अन्य किसी जातीय विद्यालय में पढ़ाता है। उस बालक के संपूर्ण भावी जीवन पर पानी फेर देना सरकार के लिये कहाँ तक न्याययुक्त कहा जा सकता है? क्यों न उसको भी मेडिकल तथा इंजीनियरिंग कालेज़ में दाखिल कर लिया जाय? इन कालिजों में बिना पढ़े ही यदि कोई योग्यता प्राप्त कर लेवे तो सरकार क्यों न उसको भी वैसे ही नौकरी देवे जैसा कि एक अपने कालिज के पढ़े हुए विद्यार्थी को देती है। फ्रांस में आंदात्रि के काल में अध्यापन की स्वतंत्रता स्वीकृत की गई थी। नेपोलियन ने उस स्वतंत्रता का हरण किया था। किंतु १८५० में एक राज्य नियम द्वारा पुनः शिक्षा की स्वतंत्रता जनता को दी गई। आज १३ लाख विद्यार्थी इस स्वतंत्रता से लाभ उठा रहे हैं। इंसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका में इस विषय पर लिखा है कि 'राज्य का शिक्षा पर एकाधिकार व्यक्तिगत स्वतंत्रता का घातक है और प्रजा सत्तात्मक राज्य के भावों के विरुद्ध है। (vol. 9. p. 960.) राज्य शिक्षा का एकाधिकार नहीं कर सकता। राज्य रेल चला सकता है लेकिन वह लोगों को बाधित नहीं कर सकता है कि वह सरकारी रेल से ही जाया करें और मोटरकारों से नहीं। राज्य न्यायालय खोल सकता है, लेकिन वह अपने न्यायालय में न्याय करानेवालों को इनाम नहीं बांट सकता है और दूसरों को घर में फैसला करने से रोक नहीं सकता है। राज्य नहरें बना सकता है परंतु रैअत को पानी लेने पर बाधित नहीं कर सकता है। राज्य का अपने विद्यालयों तथा महाविद्यालयों में पढ़े हुए विद्यार्थियों को ही नौकरी देना सर्वथा न्यायपराङ्मुख बात है।

इस एक पक्षपात ने ही भारतीय शिल्प तथा चित्रण कला को जड़ से उन्मूलन कर दिया है। सरकारी विद्यालयों के पठित विद्यार्थियों को जो सरकार की ओर से २०० रुपए तक तनख्वाह मिलती है और स्वतंत्र अन्यत्र अभ्यस्त योग्य योग्य विद्वान् शिल्पी को सरकार कानी कौड़ी तक देने को तैयार नहीं होती है। इसका परिणाम क्या होता है। आजीविका के उद्देश्य से लोग योग्यता के स्थान पर सरकारी डिग्रियों पर अधिक टूटते हैं। इस एक बात ने ही हमारे सामाजिक जीवन तथा पुरानी संपूर्ण विद्या को भयंकर धक्का पहुँचा दिया है। संस्कृत साहित्य ने मुसलमानी काल तक बराबर उन्नति की, उसमें नई नई पुस्तकें बनती रहीं परंतु अब उसमें भी अधःपतन प्रारंभ हो गया है। (क्रमशः)

सभा का कार्य्य-विवरण।

प्रबन्धकारिणी समिति।

(रविवार तारीख १० फरवरी १९१८)

(१) तारीख ३० और ३१ अक्तूबर तथा और ५ दिसम्बर १९१७ के अधिवेशनों के विवरण पढ़े गए।

(२) मंत्री से सूचना दी कि गत वर्ष डा० छन्नूलाल मेमोरियल मेडल के लिए "ग्रामों की सफाई तन्दुरुस्ती" का विषय नियत था पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर कोई लेख नहीं आया था। इस वर्ष बाबू नाथ बसाक का एक लेख इसी विषय पर है पर "नगरों के निर्माण" पर कोई लेख आया।

निश्चय हुआ कि बाबू प्रियोनाथ बसाक का डाक्टर शोभाराम और डाक्टर कालीचरण के पास सम्मति के लिए भेजा जाय और सन् ८ के लिए भी इस मेडल का विषय "नगरों निर्माण" रक्खा जाय।

(३) राधाकृष्ण दास पदक के लिए बाबू श्यामसुन्दर दास का एक लेख "भारतवर्ष की शासन प्रणाली" पर उपस्थित किया गया।

निश्चय हुआ कि बाबू गौरीशंकर प्रसाद जी बाबू श्यामसुन्दरदास जी के पास सम्मति लिए भेजा जाय और सन् १९१८ के लिए इस का विषय 'प्राचीन भारतवर्ष की शासन प्रणाली" रक्खा जाय।

(४) रेडिचे पदक के लिए बाबू मदनमोहन का "फलाहार और माँसभक्षण" पर एक छपा लेख उपस्थित किया गया।

निश्चय हुआ कि इस पदक का विषय था मनुष्य का भोजन।" पर इस विषय पर कोई नहीं आया। अतः सन् १९१८ के लिए भी विषय रक्खा जाय।

(५) पण्डित गोविंदराव जोगलेकर जी का उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा कि पुस्तकालय के लिए अलमारियों की बड़ी आवश्यकता है।

निश्चय हुआ कि दो आलमारियां बनवा ली और उसके लिए १००) रु० तक का व्यय स्वीकार किया जाय।

(६) बाबू गौरीशंकर प्रसाद जी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रस्ताव किया कि सभाभवन के पूरब ओर जो कल चलती है से सभा की बहुत हानि होती है। अतः म्युनिसिपल बोर्ड को लिख कर वह बन्द करा दी जाय।

निश्चय हुआ कि इसके लिए बनारस के म्युनिसिपल बोर्ड, डिस्ट्रक्ट मेजिस्ट्रेट तथा कोर्ट आफ़ वार्डस के मेनेजर को पत्र भेजे जांय।

(७) पण्डित उपेन्द्र शरण शर्म्मा का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि सभा की ओर से बुन्देलखंड में एक उपदेशक भेजा जाय जो देशी राज्यों में नागरी का प्रचार करे।

निश्चय हुआ कि यह पत्र हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थायी समिति के पास भेजा जाय।

(८) बनारस हिन्दू यूनीवर्सिटी के रजिस्ट्रार का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें बिना मूल्य मांगी थीं।

निश्चय हुआ कि सभा को दुःख है कि वह पुस्तकें बिना मूल्य नहीं दे सकती।

(९) पण्डित सांवलजी नागर का पत्र उपस्थित किया गया कि सभा की संशोधित नियमावली जब तक प्रकाशित न हो जाय तब तक नवीन नियम कार्य में न लाए जांय।

निश्चय हुआ कि वार्षिक अधिवेशन के निश्चय के अनुसार नवीन नियमों का पालन १ सितम्बर १९१७ से ही होना चाहिए। नियमावली ना० प्र० पत्रिका में प्रकाशित की जाय और उसकी कुछ प्रतियां अलग भी छपवा ली जांय।

(१०) अक्तूबर १९१७ से ३१ जनवरी १९१८ तक के आय व्यय का निम्नलिखित हिसाब उपस्थित किया गया।

आय।

१४५६॥।=)१० बचत
१०६२≡)॥ अमानत
८।≡)॥। नागरी प्रचार
२२४॥।) पुस्तकालय
३२४) पुस्तकों की बिक्री
२१॥।) पुस्तकों के लिए पुरस्कार।
२०१॥≡) पृथ्वीराजरासो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७॥≡) फुटकर
७७) विशेष सहायता
१३१≡)॥। भारतेन्दु ग्रन्थावली
१६६५॥-) मनोरंजन पुस्तकमाला
११३३) सभासदों का चन्दा
१६५२-)॥ हिन्दी कोश

जोड़ ८००६॥=)४

व्यय।

८१५=) अमानत
४४२॥-,॥। कार्यकर्ताओं का वेतन
६१७॥।-)। छपाई
२७५॥)॥ डाकव्यय
५६।-) नागरी प्रचार
३८) पारितोषिक
१७६॥≡)॥। पुस्तकालय
१४३) हिन्दी पुस्तकों की खोज
७३।)। फुटकर व्यय
२१०॥) भारतेन्दु ग्रन्थावली
१३३६=) मनोरंजन पुस्तकमाला
१२६४।)। हिन्दी कोश

५४४६।)॥।
२५५७।-)७ बचत

८००६॥=)४

बचत का ब्योरा

१८३॥)॥ रोकड़ सभा
११२१॥।-) बनारस बंक (चलता खाता)
१०००) बनारस बैंक फिक्स्ड डिपाजिट
२५२)१ पोस्ट आफिस (सेविंग बंक)

२५५७।-)७

(११) बाबू शम्भूप्रसाद एजेण्ट का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रार्थना की थी कि एजेण्टों के लिए जो ५) मासिक नियत किया गया है, वह बढ़ा दिया जाय और उन्हें एक कुली भी दिया जाय।

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार नहीं किया जा सकता।

(१२) बाबू गौरीशंकर प्रसाद जी बी० ए० एल० एल० बी०, पण्डित रामनारायण मिश्र बी० ए० और बाबू शिवप्रसाद गुप्त जी के पत्र उपस्थित किए गए जिनमें उन्होंने प्रबन्धकारिणी समिति से इस्तीफ़े दिये थे।

बाबू श्यामसुंदरदास जी ने सूचना दी कि बाबू गौरीशंकर प्रसाद जी और पं० रामनारायण मिश्र जी ने अपने इस्तीफ़े लौटा लिए हैं।

निश्चय हुआ कि बाबू शिवप्रसाद गुप्त जी से प्रार्थना की जाय कि वे कृपापूर्वक अपना इस्तीफ़ा लौटा लें।

(१३) बाबू शिवप्रसाद गुप्त के ६ और ७ पौष के पत्र उपस्थित किए गए जिनमें उन्होंने निम्नलिखित प्रस्ताव किये थे:—(क) ऐसे सज्जनों को जिनका सभा से किसी प्रकार का आर्थिक सम्बन्ध हो प्रबन्ध कारिणी समिति या साधारण सभा में सम्मति देने का अधिकार न रहे। (ख) प्रतिनिधि पत्र द्वारा सम्मति न ली जाया करे और उसके स्थान में लिखित सम्मति माँगी जाय। (ग) मंत्री से यह उत्तर मांगा जाय कि उन्होंने नियम (२७) के विरुद्ध साधारण सभा में यह प्रस्ताव कैसे उपस्थित किया कि वे प्रबन्ध कारिणी समिति से पृथक् किए जांय विशेष करस्थगित अधिवेशन में। (घ) नियम (४३) में कई परिवर्तन किए जांय।

निश्चय हुआ कि (क, ख, घ) इन पर विचार कर सम्मति देने के लिए बाबू श्याम सुंदर दास बी० ए०, बाबू गौरी शंकर प्रसाद बी० ए० एल० एल० बी० और बाबू हरिहर नाथ बी० ए० की एक उपसमिति बनाई जाय जिसके संयोजक बाबू हरिहर नाथ जी रहें, (ग) मंत्री ने इसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपस्थित किया और निश्चय हुआ कि वह शिवप्रसाद के पास भेज दिया जाय।

(१४) हिन्दी साहित्य सम्मेलन के परीक्षा का पत्र उपस्थि किया गया जिसमें उन्होंने प्रचारिणी पत्रिका में अपना विज्ञापन मूल्य छापे जाने के लिए लिखा था।

निश्चय हुआ कि इनका विज्ञापन पत्रिका में मूल्य प्रकाशित किया जाय।

(१५) बाबू रामचन्द्र वर्म्मा तथा अन्य सज्जनों पत्र के सम्बन्ध में बाबू श्याम सुंदरदास जी यह पत्र उपस्थित किया गया कि वार्षिक अधिवेशन में नियमानुसार नियमों पर विचार था और उसमें उन्होंने नियमों के प्रतिकूल कार्य नहीं होने दिया था। यदि इन महाशयों कोई नियम अनुचित जान पड़ता हो तो उसके सुधार का प्रस्ताव करना चाहिए।

निश्चय हुआ कि यह समिति बाबू श्याम सुंदर दास जी की सम्मति से सहमत है।

(१६) संयुक्त प्रदेश की हिंदी हस्तलिपि परीक्षा के पत्रों के सम्बन्ध में उपसमिति की रिपोर्ट उपस्थित की गई जिसने उसमें निम्नलिखित बालकों को पारितोषिक और प्रशंसापत्र दिये जाने की सम्मति दी थी।

मिडिल विभाग।

१ लक्ष्मण सिंह राजपूत, कक्षा ६, टाउन स्कूल अल्मोड़ा। ५)

२ हर्षसिंह रजपूत, कक्षा ६, टाउनस्कूल, अल्मोड़ा ४)

३ देवीदत्त उपरेती, कक्षा ६, टाउनस्कूल, अल्मोड़ा ३)

४ यमुनाप्रसाद, टाउनस्कूल, बरहज, तहसील देवरिया (जि० गोरखपुर)। } प्रशंसापत्र

५ बुद्धसिंह, कक्षा ६, तहसीली स्कूल, भोगनीपुर, जि० कानपुर } प्रशंसापत्र

६ सूर्यराम, कक्षा ५, बैरियास्कूल, जि० बलिया। } प्रशंसापत्र

७ फूलसिंह, कक्षा ५, टाउनस्कूल, एतमादपुर, जि० आगरा। } प्रशंसापत्र

८ नंदराम, कक्षा ६, मिडिल पाली स्कूल, जि० अल्मोड़ा। } प्रशंसापत्र

९ रामदास तिवारी, कक्षा ६, टाउनस्कूल हरैया, जि० बस्ती। } प्रशंसापत्र

अपर प्राइमरी विभाग।

१ रामजतनराम, कक्षा ४, बैरिया स्कूल, जि० बलिया ५)

२ बाबू छकौड़ी राम, कक्षा ३, बैरिया स्कूल, जि० बलिया ३)

३ पद्मदेव मिश्र, कक्षा ४, बैरिया स्कूल, जि० बलिया २)

४ राम अनूप कुँअर, कक्षा ३, बैरिया स्कूल, जि० बलिया। } प्रशंसापत्र

५ देवनारायण सिंह, कक्षा ४, बैरिया स्कूल, जि० बलिया। } प्रशंसापत्र

६ जगन्नाथ, कक्षा ३, पाठशाला सीतापुर, कर्वी, जि० बांदा। } प्रशंसापत्र

७ रामनारायण, कक्षा ३, पाठशाला सखरेज, बिल्हौर, कानपुर। } प्रशंसापत्र

८ जयानंद, कक्षा ४, पाठशाला डाबरी, बदलपुर, जि० गढ़वाल। } प्रशंसापत्र

लोअर प्राइमरी विभाग।

१ मदीना मियां, कक्षा २, पाठशाला बैरिया, जि० बलिया ४)

२ हंसराम, कक्षा २, पाठशाला कुडीधार, जि० अल्मोड़ा २)

३ नथून सिंह, कक्षा २, पाठशाला बैरिया, जि० बलिया २)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४ रामबिलास सिंह, कक्षा २, पाठशाला बैरिया जि० बलिया।

५ कामताप्रसाद, कक्षा २, पाठशाला कर्वी सीतापुर, जि० बांदा।

६ मोहन सिंह, कक्षा २, सातसिलंग स्कूल, जि० अल्मोड़ा।

७ रामरूप, कक्षा २, प्राइमरीस्कूल, सदर-बाजार, कालपी, जि० जालौन।

} प्रशंसापत्र

निश्चय हुआ कि प्रशंसापत्र दिये जांय।

(१७) बाबू श्यामलाल का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि सभा हिंदी की उत्तमोत्तम पुस्तकों की एक सूची प्रकाशित करे और इन पुस्तकों की बिक्री के लिये एक दूकान खोले।

निश्चयहुआ कि यह प्रस्ताव बाबू श्यामसुंदर दास जी के पास सम्मति के लिए भेजा जाय।

(१८) हिन्दी साहित्य सम्मेलन के मंत्री का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि सभा अगले वर्ष साहित्य सम्मेलन का वार्षिक अधिवेशन जो काशी में किया चाहती है उसके लिए कुछ प्रतिनिधियों को इस वर्ष सम्मेलन के अधिवेशन में उपस्थित होकर निमंत्रण देना चाहिए।

निश्चय हुआ कि सभापति जी से प्रार्थना की जाय कि वे कृपापूर्वक सभा की ओर से यथा-समय निमंत्रण दे दें।

(१९) पण्डित केदारनाथ पाठक का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था उनके पास "समालोचनादर्श" की ९० प्रतियां हैं इन्हें सभा लेकर उन्हें बदले में इनके ¾ मूल्य की अन्य पुस्तकें दे दे।

निश्चय हुआ कि मनोरंजन पुस्तकमाला, हिन्दी शब्दसागर और भारतेन्दु ग्रंथावली को छोड़ कर सभा की अन्यान्य पुस्तकें बदले में दे दी जांय।

(२०) मंत्री ने सूचना दी कि सत्य हरिश्चन्द्र की बहुत थोड़ी प्रतियां अब सभा के स्टाक में रह गई हैं।

निश्चय हुआ कि इसकी दो हजार प्रतियों का दूसरा संस्करण निकाला जाय।

(२१) बाबू रामचन्द्र वर्म्मा का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने पूछा था कि सभा ने आगामी सम्मेलन की पूरी रिपोर्ट लिखने के लिए जो २००) का पुरस्कार नियत किया है उसके लिए लेखक को केवल मौखिक व्याख्यान आदि ही लिखने पड़ेंगे अथवा लिखित लेखों की प्रतियां भी प्राप्त करनी होंगी।

निश्चय हुआ कि लिखित लेखों को प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं है।

(२२) पं० श्रीलाल उपाध्याय का पत्र उपस्थित किया गया गया जिसमें उन्होंने "लिखने के रोग" की कुछ प्रतियां बिना मूल्य मांगी थीं। निश्चय हुआ कि उन्हें इसकी १२ प्रतियां दी जांय।

(२३) बाबू गौरी शंकर प्रसाद जी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रस्ताव किया था कि (क) श्रीमान् राजा साहब जौनपुर ने अपने यहां सब कार्य नागरी लिपि में किये जाने की जो आज्ञा दी है उसके लिये उन्हें धन्यवाद और बधाई दी जाय, (ख) लखनऊ के म्युनिसिपल बोर्ड ने अपनी पाठशालों के अध्यापकों को उर्दू में प्रार्थना पत्र देने के लिये बाध्य किया है इस पर सभा घोर असंतोष प्रकट करे।

सर्व सम्मति से ये प्रस्ताव स्वीकृत हुए।

(२४) निश्चय हुआ कि बनारस के म्युनिसिपल बोर्ड से प्रार्थना की जाय कि बोर्ड से जो सूचनाएं प्रकाशित होती हैं वे नागरी लिपि में भी अवश्य रहा करें।

(२५) बनारस के डिस्ट्रेक्ट जज का २९ जनवरी १९१८ का आज्ञापत्र उपस्थित किया गया जिस में उन्होंने अपने अधीनस्थ न्यायालयों को चेतौनी दी थी कि वे हिंदी के फ़ार्मों की पूर्ति हिंदी में ही किया करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चय हुआ कि जज साहब के आज्ञापत्र की प्रतिलिपि समाचार पत्रों में प्रकाशित कराई जाय और इसका अंग्रेज़ी अनुवाद "लीडर" में भी छपने के लिए भेजा जाय।

(२६) सुखनंदन चपरासी का प्रार्थना पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उसने प्रार्थना की थी कि सन् १९१८ में उसे ८ दिन की बीमारी का वेतन दिया जाय और सन् १९१७ में उसकी बीमारी के ११ दिन तक उसके भतीजे के कार्य करने से सभा में जो बचत हुई है वह भी उसे दी जाय।

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय।

(२७) पं० रामनारायण मिश्र का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने सूचना दी थी कि लाला लालजी की सम्मति में सभाभवन के ऊपर दूसरी मंजिल बनवाना उचित न होगा।

निश्चय हुआ कि इस संबंध में राय ज्वाला प्रसाद जी से भी सम्मति ली जाय।

(२८) सभापति ने सूचना दी कि उन्होंने कर्त्ताओं की प्रार्थना पर कुम्भ संक्रान्ति को सभा का कार्यालय और पुस्तकालय बंद करने की आज्ञा दे दी है।

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय।

(२९) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

प्रबंधकारिणी समिति।

सोमवार ता० २५।३।१८ संध्या के ५½ बजे।

(१) गत अधिवेशन (ताः १० फरवरी १९१८) का कार्यविवरण पढ़ा गया।

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय।

(२) फरवरी १९१८ के आय-व्यय का निम्नलिखित हिसाब उपस्थित किया गया और स्वीकृत हुआ।

आय।

१)॥	नागरी प्रचार
१२०।=)	पुस्तकालय
१७०=)	पुस्तकों की बिक्री
४१)॥	भारतेन्दु ग्रन्थावली
२॥)	पृथ्वीराज रासो की बिक्री
≡)	फुटकर आय
९०९॥।≡)	मनोरंजन पुस्तकमाला
१३३॥।)	सभासदों का चन्दा
५६।)	हिन्दी कोश
७१॥)॥	डाक व्यय का फिरता
४१४।॥।=)४	

व्यय।

१४६)॥	अमानत
११४॥।-)।	कार्यकर्त्ताओं का वेतन
७१२॥।)	छपाई
८।)	नागरी प्रचार
३८।≡)	पुस्तकालय
४७≡)॥	हिन्दी पुस्तकों की खोज
२०=)।	फुटकर
५०८॥।≡)॥।	मनोरंजन पुस्तकमाला
२३।=)	मरम्मत
२५८॥≡)॥	हिन्दी कोश
२६॥=)॥।	डाक व्यय
१९०५।≡)॥	
२२३६।=)१०	बचत
४१४१॥।=)४	

बचत का ब्योरा—

२८॥।)	रोकड़ सभा
९५५॥=)॥	बनारस बंक (चलता खाता)
१०००)	बनारस बंक (फ़िक्सड डिपाज़िट)
२५२)१	पोस्ट आफ़िस सेविङ्ग बंक
२२३६।=)१०	

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) बाबू महाबीर प्रसाद पोद्दार का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने हिन्दी पुस्तक एजेंसी को कलकत्ते के लिए सभा की सोल एजेंसी देने के लिए लिखा था।

निश्चय हुआ कि निम्न लिखित नियमों पर कलकत्ते की सोल एजेंसी दी जा सकती है। (क) वे जितनी पुस्तकें बिक्री के लिए मँगावें उनका अर्द्ध मूल्य जमा कर दें (ख) बिक्री का हिसाब प्रति मास साफ कर दें (ग) सभा के सभासदों तथा हिन्दी शब्द सागर और मनोरंजन पुस्तकमाला के अब तक के स्थायी ग्राहकों से उनसे कोई सम्बन्ध नहीं रहेगा (घ) नए ग्राहकों में उन्हें ५) सैकड़े कमीशन दिया जावेगा (ङ) पुस्तकों पर कमीशन उन्हें उसी हिसाब से दिया जावेगा जिस हिसाब से पुस्तक बिक्रेताओं को सभा देती है।

(४) निगमागम बुकडिपो के मैनेजर का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्हों ने अपना विज्ञापन नागरीप्रचारिणी पत्रिका में बिना मूल्य वा परिवर्त्तन में छापने के लिए लिखा था।

निश्चय हुआ कि यह परिवर्त्तन में छापा जाय।

(५) बाबू श्यामलाल के प्रस्ताव के सम्बन्ध में बाबू श्यामसुंदरदास जी की यह सम्मति उपस्थित की गई कि सभा के वार्षिक विवरण में प्रति वर्ष की प्रकाशित उत्तम पुस्तकों की जो सूची रहती है उसे दोहरा कर ठीक कर देने ही से उत्तम पुस्तकों की सूची बन जायगी। ऐसी पुस्तकों की बिक्री का प्रबंध पुस्तक बिक्रेताओं द्वारा होना चाहिए।

निश्चय हुआ कि बाबू श्यामसुंदरदास जी की सम्मति की सूचना बाबू श्यामलाल जी को दी जाय।

(६) पण्डित सांवल जी नागर का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रस्ताव किया था कि पुस्तकालय की पुस्तकों की जांच प्रति वर्ष हुआ करे और वर्ष के अंत में इस संबंध में निरीक्षक अपनी रिपोर्ट दिया करें।

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय और निरीक्षक महोदय से प्रार्थना की जाय कि वे कृपापूर्वक इसका प्रबंध करदें।

(७) पं० रामनारायण मिश्र का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि रेवरेण्ड ई० ग्रीव्स सदा के लिये इंगलैंड जा रहे हैं। अतः उनके सम्मानार्थ एक गार्डन पार्टी दी जाय।

निश्चय हुआ कि रेवरेण्ड ई० ग्रीव्स के सम्मानार्थ ता० ६ अप्रैल १९१८ को सभा का एक विशेष अधिवेशन किया जाय जिसमें उन्हें एक अभिनंदन पत्र दिया जाय, फोटो ली जाय और कुछ जलपान का प्रबंध किया जाय। इसके लिए १५) रु० का व्यय स्वीकार किया जाय।

(८) पं० कामताप्रसाद गुरु के हिन्दी भाषा व्याकरण के प्रथम दो भाग उपस्थित किए गए।

निश्चय हुआ कि ये नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला में प्रकाशित किए जाँय।

(९) बाबू श्यामसुंदरदास जी का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि संयुक्त प्रदेश के श्रीमान् लेफिनेंटगवर्नर को जो अप्रैल के मध्य में काशी आवेंगे सभाभवन में निमंत्रित करके एक अभिनंदन पत्र दिया जाय।

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय और मंत्री जी इस संबंध में आवश्यक पत्रव्यवहार करें। श्रीमान् लेफिनेंट गवर्नर महोदय को सभा की चुनी हुई पुस्तकें भेंट की जायँ और अभिनंदन पत्र हिंदी में दिया जाय। बाबू श्यामसुंदरदास जी से प्रार्थना की जाय कि वे कृपापूर्वक अभिनंदन पत्र लिख दें। निमंत्रणपत्र भी हिंदी में छपवाए जाँए। इस संबंध में आवश्यक व्यय के लिए १००) रु० स्वीकार किया जाय।

(१०) बाबू शिवप्रसाद गुप्त का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि यदि सा[illegible]रण सभा का उनपर विश्वास हो तो वे प्रबन्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ी समिति के सदस्य बने रह सकते हैं।
...निश्चय हुआ कि इस समिति का उनपर पूर्ण ...वास है। उनका पत्र साधारणसभा में भी ...जाय।

(११) बाबू कृष्णानंद का पत्र उपस्थित किया ...जिसमें उन्होंने लिखा था कि उनकी आर्थिक ...स्था ठीक नहीं है। अतः वे सभा का चंदा ...देने में असमर्थ हैं। उनसे चंदे में पुस्तकें ...जाँय और आगे से उनका नाम सभासदों ...नामावली से काट दिया जाय।

...निश्चय हुआ कि बाबू कृष्णानंद का अब तक ...चंदा क्षमा किया जाय।

(१२) पं० विश्वेश्वरनाथ तिवारी और बाबू ...सदन सिंह का प्रार्थनापत्र उपस्थित किया ...जिसमें उन्होंने मंहगी के कारण अपने वेतन ...कुछ वृद्धि किए जाने की प्रार्थना की थी।

...निश्चय हुआ कि यह प्रार्थनापत्र मंत्री की ...सम्मति के सहित अगामी वर्ष के बजेट के समय ...स्थित किया जाय।

(१३) पं० श्रीकृष्ण शुक्ल तथा अन्य कई ...सभासदों का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें ...होंने लिखा था कि नागरीप्रचारिणी पत्रिका के ...अंक में अशुद्धियों की भरमार है। अतः इसका ...सम्पादन किसी सुयोग्य सज्जन को सौंपा जाय।

...बाबू वेणीप्रसाद जी ने सूचना दी कि आगे से ...पत्रिका का अन्तिम प्रूफ बाबू श्यामसुंदरदास जी ...देखा करेंगे।

(१४) निश्चय हुआ कि हिन्दी शब्दसागर ...की छपाई रुक जाने से सभा की बड़ी आर्थिक ...हानि हो रही है। अतः सभा के किसी विभाग में ...रुपया होने पर इण्डियन प्रेस को शब्दसागर ...की छपाई मद्धे ५००) रु० दे दिया जाय।

(१५) सभापति को धन्यवाद दे सभा ...विसर्जित हुई।

प्रबंधकारिणी समिति।

मंगलवार तारीख ७ मई १९१८ सन्ध्या के ६ बजे।

(१) रायबहादुर पंडित गौरीशंकर हीराचंद ओझा का २ मई १९१८ का निम्न लिखित पत्र उपस्थित किया गया।

"हिंदी साहित्य में ऐतिहासिक साहित्य की बड़ी भारी त्रुटि है। इस अभाव को दूर करने के विचार से मेरा एक इतिहास प्रेमी मित्र एक अच्छी रकम नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस को भेट करना चाहता है जिसके सूद में से प्रति वर्ष मनोरंजन ग्रंथमाला की साइज़ के (या कुछ बड़े) ३०० पृष्ठ का एक पुस्तक हर साल निकला करे। उस ग्रंथमाला का नाम"..... ऐतिहासिक ग्रंथमाला' रखना होगा और उसके टाइटिल पेज पर दाता का चित्र रखना होगा। ग्रंथमाला में स्वतंत्र पुस्तक एवं अनुवाद ग्रंथ तथा प्राचीन शोध संबंधी पुस्तक होंगी। पुस्तक प्रति वर्ष सुलेखकों द्वारा पारितोषिक देकर लिखाई जाँयगी। पुस्तकों की बिक्री से जो धन एकत्र होगा उसमें से पुस्तक की लिखाई व छपाई देने बाद जो कुछ बचेगा वह उसी फंड में जमा रहेगा। दाता की तरफ़ से तीन ट्रस्टी नियत होंगे वे उसका हिसाब आदि जांचते रहेंगे, ये मुख्य बातें हैं। दाता का नाम अभी प्रगट न किया जायगा किंतु यदि सभा इस दान को स्वीकार करे तो नाम भी प्रकाश कर दिया जायगा। अब कृपा कर नीचे लिखे हुए प्रश्नों का उत्तर शीघ्र दीजिएगा।

(१) ऐसी ग्रन्थमाला साल भर में एक बार निकाली जावे तो सभा इस काम को हाथ में लेना स्वीकार कर सकती है वा नहीं?

(२) यदि सभा स्वीकार कर सकती है तो ३०० पृष्ठ की १००० कापी छपवाने में क्या व्यय होगा? मूल्य क्या रखा जायगा? और बिक्री से कितनी आमदनी होने की संभावना है?

(३) इस ग्रंथमाला में स्वतंत्र खोज के एवं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुवाद रूप दोनों प्रकार के ऐतिहासिक हिंदी ग्रंथ प्रसिद्ध विद्वानों से लिखवा कर प्रकाशित करने होंगे।

(४) इतिहास का विषय (प्रत्येक जिल्द का) सभा की स्थापिता की हुई कमेटी नियत करेगी।

(५) लेखक को ३०० पृष्ठ की पुस्तक की लिखाई के लिये क्या देना होगा?

(६) मूल धन सभा की किसी भरोसेवाली बंक में जमा करना होगा उन रुपयों के सूद से ग्रंथमाला चलानी होगी।

(७) ग्रंथमाला का खर्चा निकालने के बाद पुस्तकों की बिक्री का जो धन बचेगा वह मूल-धन में शामिल रखना होगा। सभा को उसका हिसाब सालाना ट्रस्टियों को समझाना होगा। ट्रस्टी दाता की ओर से नियत होंगे जिनकी सम्मति से सभा को ग्रन्थमाला का काम करना होगा।

इन सब बातों का उत्तर शीघ्र मिलने की आवश्यकता है। यदि इस पत्र के पहुँचते ही सभा का कोई अधिवेशन होनेवाला न हो तो विशेष अधिवेशन कर जितना जल्द सभा उत्तर देगी उतना ही शीघ्र प्रबन्ध कर उसके विषय की लिखा पढ़ी तैय कर दान की रजिस्टरी कराई जावेगी। यदि देर हुई तो इस काम के निष्फल हो जाने की संभावना है। इसलिए मेरी प्रार्थना यह है कि सभा इसका शीघ्र विचार कर दान स्वीकार करने की मुझे सूचना दे तो मैं उस कार्य को शीघ्र कर रजिस्टरी करवाने का प्रबन्ध कर दूँ। मेरी राय में सभा को यह अवसर चूकना नहीं चाहिए परंतु यह काम त्वरा से होने का है। देर होने में शायद निराश होना पड़े इसीसे मैंने विशेष आग्रह किया है।"

निश्चय हुआ कि (१) इसे सभा स्वीकार करती है (२) ५५०) रु० व्यय होगा। मूल्य १) रु० होना चाहिए और बिक्री से ७००) रु० प्रति पुस्तक प्रति संस्करण आय होने की आशा है। (३) ऐसा ही होगा (४) ठीक है (५) २००) से ६००) रु० तक (६) ठीक है (७) यह सभा को सहर्ष स्वीकार है। दाता की ओर से जो ट्रस्टी नियुक्त हों वे इस कोष के आय व्यय का हिसाब अवश्य जांचें परंतु किन किन विषयों पर पुस्तकें लिखी जाँय इसका निश्चय करना प्रश्न ४ के अनुसार सभा के ही अधिकार में होना चाहिए।

यह भी निश्चय हुआ कि इन प्रश्नों के उत्तर के अतिरिक्त निम्नलिखित बातों का लिख देना भी आवश्यक है—

(१) एतिहासिक विषयों पर पुस्तक लिखने के लिए सामग्री एकत्र करने में बहुत व्यय होगा। जैसे अध्यापक यदुनाथ सरकार को अपनी पुस्तकें लिखने के लिए हज़ारों रुपये व्यय करके इंडिया आफिस तथा अन्य स्थानों से चित्र और प्राचीन लेख आदि संग्रह करने पड़े थे। इसका हिसाब बतलाना कठिन है।

(२) यदि किसी पुस्तक में कोई चित्र देने की आवश्यकता हुई तो उसके ब्लाक बनवाने में भी जुदा व्यय पड़ेगा।

(३) सभा की सम्मति में यदि प्रत्येक पुस्तक की कम से कम दो हज़ार प्रतियाँ छपतीं तो पुस्तकें सस्ती पड़तीं।

(४) यदि आप वर्ष में एक से अधिक पुस्तकें छापने का अधिकार भी सभा को दे दें तो उत्तम होगा। सभा इस बात पर ध्यान रक्खेगी कि ऐसा करने में मूल धन व्यय न किया जायगा और न ऋण लिया जायगा।

ऊपर दिए हुए ब्योरे के अनुसार प्रत्येक पुस्तक का कुल व्यय ७५०) से ११५०) रु० तक हुआ। इसके अतिरिक्त जैसा ऊपर लिखा है प्राचीन ऐतिहासिक लेख और चित्र, पुस्तकें, नक्शे आदि का तथा आय व्यय का हिसाब लिखने और प्रूफ आदि देखने में जो व्यय होगा वह निश्चित रूप से नहीं बताया जा सकता।

(२) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काशी-नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा

प्रकाशित पुस्तकों की सूची।

अखरावट–मालिक मुहम्मद जायसी रचित। इसमें कवि ने हिन्दी वर्णमाला के क्रम से एक एक आदि में देकर विश्वात्मक ब्रह्मज्ञान विषय का काव्य किया है। मूल्य ≡) डाकव्यय)॥

इन्द्रावती–कवि नूरमहम्मद कृत। इस ग्रन्थ में कवि ने एक कथा का वर्णन किया है। सम्पूर्ण पुस्तक की चौपाई और दोहा छन्दों में है। मूल्य ।॥)

कविवर बिहारीलाल–बाबू राधाकृष्णदास लिखि। इस छोटे से लेख में बिहारी सतसई के रचयिता कुलचूड़ामणि बिहारीलालजी का संक्षिप्त जीवनचरित वर्णन किया गया है। मूल्य =, डा०)॥

कालबोध–इसनें भिन्न भिन्न प्रकारों और मतों से समय के विभाग आदि दिए गए हैं। मू० ≡)

निःसहाय हिंदू–हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक स्वर्गीय बाबू राधाकृष्णदास लिखित एक वियोगान्त उपन्यास। मूल्य ।) डाकव्य)॥

परिचर्याप्रणाली–इसमें रोगी मनुष्य की घर में शुश्रूषा करने का विषय सरल रीति से लिखा गया है। मूल्य ।) डा०)॥

प्राचीनलेखमणिमाला–इस पुस्तक में शताब्दि अवरोहण क्रम से भारतवर्ष के शिला लेखों तथा दान-का सूची स्वरूप में वर्णन है। मू० १)

पृथ्वीराजरासो–महाकवि चन्दबर्दाई कृत। यह ग्रन्थ हिन्दी साहित्य का आदि काव्य है। जिस प्रकार की ग्रन्थरचना में यह सब पुस्तकों से पुराना है उसी प्रकार इसकी काव्यशैली भी अद्वितीय है। इस ग्रन्थ में ने भारतवर्ष के अन्तिम क्षत्री सम्राट् राजा पृथ्वीराज का जीवन वृत्तान्त विस्तार पूर्वक लिखा है जो आदि अन्त तक विचित्र घटनाओं से भरा हुआ है। इस ग्रन्थ की भाषा कुछ कठिन है इसलिए सभा ने समस्त ग्रन्थ का सारांश सरल हिन्दी भाषा में मूल ग्रन्थ के साथही साथ छपवाया है, जिससे पाठकों को मूल ग्रन्थ के पठन में बड़ी सहायता और आनन्द मिलता है। इसके ६९ समय २२ खण्डों में छपे हैं। मूल्य २०) डाकव्यय १।॥)

बिरहलीला–कवि आनन्दघन कृत। मूल्य =) डाकव्यय)॥

वीरविरुदावली–प्रसिद्ध पद्माकर कवि रचित। वीररसात्मक सर्वांग पूर्ण काव्य है। मूल्य ।=) डाकव्यय –)

भारतेन्दुचरित–हिन्दी के एक मात्र जन्मदाता भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रजी की जीवनी। मू० ॥) डा० –)

जंगनामा–कवि श्रीधर रचित। इस ऐतिहासिक काव्य में दिल्ली के बादशाह बहादुरशाह के पुत्रों जहां-शाह और फर्रुखसियर की लड़ाई का वर्णन है। काव्य-रचना सरल सुन्दर प्रभावोत्पादक और मनोरंजक है। मू० ।॥)

भूषण ग्रंथावली–कविवर भूषण के समस्त काव्य ग्रन्थों का संग्रह। वीररस की ऐसी अनूठी कविताओं का संग्रह और कहीं देखने को न मिलेगा। मूल्य ।॥)

महिला मृदुबाणी–जोधपुर निवासी मुंशी देवीप्रसाद द्वारा लिखित। इसमें भारतवर्ष की विदुषी स्त्रियों की संक्षिप्त जीवनी और साथ ही उनके काव्य तथा साहित्य सम्बन्धी अन्य कार्यों का उल्लेख है। मूल्य ॥)

मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनोरंजन पुस्तकमाला ।

अर्थात्

हिंदी के सौ उत्तम उत्तम ग्रंथों की पुस्तकावली ।

अब तक निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

१ आदर्श-जीवन—लेखक रामचंद्र शुक्ल ।
२ आत्मोद्धार—लेखक रामचंद्र वर्म्मा ।
३ गुरु गोविंदसिंह—लेखक वेणीप्रसाद ।
४ आदर्श हिंदू १ भाग—लेखक मेहता लज्जाराम शर्म्मा ।
५ ,, २ ,, ,,
६ ,, ३ ,, ,,
७ राणा जंगबहादुर—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा ।
८ भीष्म पितामह—लेखक चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्म्मा ।
९ जीवन के आनंद—लेखक गणपत जानकीराम दूबे बी. ए. ।
१० भौतिक-विज्ञान—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी ।
११ लालचीन—लेखक वृजनंदन सहाय ।
१२ कबीरवचनावली—संग्रहकर्त्ता अयोध्यासिंह उपाध्याय ।
१३ महादेव गोविंद रानडे—लेखक रामनारायण मिश्र बी. ए. ।
१४ बुद्धदेव—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा ।
१५ मितव्यय—लेखक रामचंद्र वर्म्मा ।
१६ सिक्खों का उत्थान और पतन—लेखक नंदकुमार देव शर्म्मा ।
१७ वीरमणि—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम. ए. और शुकदेवबिहारी मिश्र बी. ए. ।
१८ नेपोलियन बोनापार्ट—लेखक राधामोहन गोकुलजी ।
१९ शासनपद्धति—लेखक प्राणनाथ विद्यालंकार ।
२० हिंदुस्तान, पहला खंड—लेखक दयाचंद्र गोयलीय बी. ए. ।
२१ ,, ,, दूसरा खंड— ,, ,, ,,
२२ महर्षि सुकरात—लेखक वेणीप्रसाद ।
२३ ज्योतिर्विनोद—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी. ।
२४ आत्मशिक्षण—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम० ए० और शुकदेव बिहारी मिश्र बी० ए० ।
२५ सुंदरसार—संग्रहकर्ता पुरोहित हरिनारायण बी० ए० ।

प्रत्येक पुस्तक का मूल्य १) है, समस्त ग्रंथमाला के स्थायी ग्राहकों से ।।।) लिया जाता है। डा० अलग है।

मिलने का पता—

मंत्री—नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाग २३] [संख्या २

नागरीप्रचारिणी पत्रिका।

अगस्त १९१८

सम्पादक—वेणीप्रसाद।

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल। बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल॥
करहु विलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल। निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सबको मूल॥
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार। सब देशन सो लै करहु, भाषा माँहि प्रचार॥
प्रचलित करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न। राजकाज दरबार में, फैलावहु यह रत्न॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र।

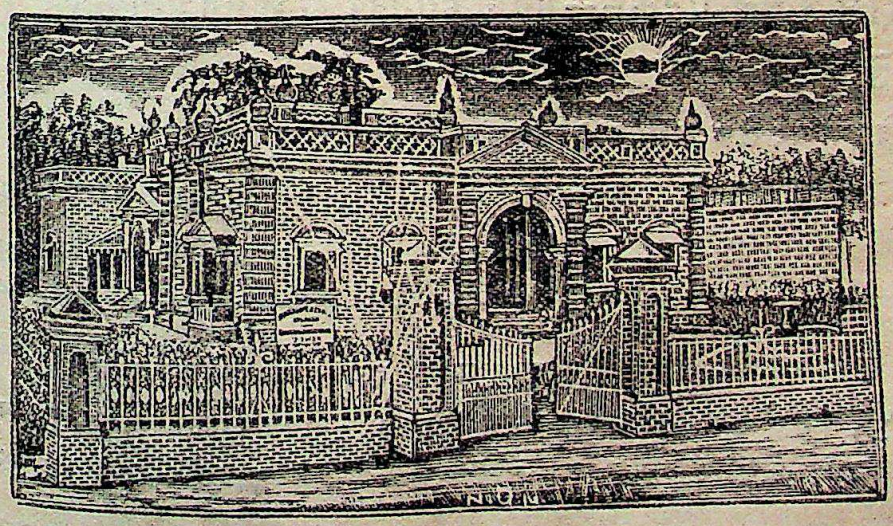

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित।

गणपति कृष्ण गुर्जर द्वारा श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस, काशी में मुद्रित।

वार्षिक मूल्य १।=) प्रति संख्या =)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय सूची ।

१—वर्षाकाल २५
२—मानव समाज और प्रलय २७
३—शैली-समीक्षा ३३
४—ऐतिहासिक नाटक पर एक प्रसिद्ध योरोपीय दर्शनज्ञ का सार-गर्भित कथन ३५
५—सभा का कार्यविवरण ४१

मुफ्त ! मुफ्त !! मुफ्त !!!

धन्वन्तरी ।

यह आयुर्वेदीय मासिक पत्र योग्य वैद्य, डाक्टर और हकीमों को बिना मूल्य भेजा जाता है, सर्व साधारण को नहीं । मैनेजर, धन्वन्तरी, विजयगढ़, अलीगढ़ ।

पदक ।

सभा द्वारा उत्तमोत्तम विषयों पर लेख लिखने के लिये प्रति वर्ष स्वर्ण और रजत पदक दिए जाते हैं । सन् १९१८ में इनके लिये निम्नलिखित विषय नियत हैं—

छन्नूलाल स्वर्ण पदक—नगरों का निर्माण ।

राधाकृष्णदास रजत पदक—प्राचीन भारतवर्ष की शासन प्रणाली ।

रेडिचे रजत पदक—मनुष्य का भोजन ।

इन विषयों पर लेख सभा में ३१ दिसम्बर १९१८ के पूर्व आजाने चाहिएँ ।

हरिहरनाथ बी० ए०
मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी ।

काश्मीरी शुद्ध शिलाजीत, कमजोरी, प्रमेह, स्वप्नदोष, इत्यादि की सर्वोत्तम औषधि ॥), पवित्र केसर १॥) असली कस्तूरी ३५), असली सुर्मा ममीरा ३), अंगूरी हींग ५), सुगंधित स्याह जीरा ३), फूल बनफशा ३॥) पवित्र धूप २), स्वच्छ शहद १।) सेर । काश्मीर स्टोर्स, श्रीनगर नं० १७० ।

हिन्दी शब्दसागर ।

हिन्दी भाषा का सर्वाङ्गपूर्ण सुप्रसिद्ध शब्दकोश जिसकी प्रशंसा बड़े बड़े दिग्गज विद्वानों ने की है । १५ अंक छप चुके हैं । प्रत्येक अंक का मूल्य १) रु० ।

मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा,
बनारस सिटी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

भाग २३ } जूलाई १९१८ । { संख्या २

वर्षाकाल ।

(गद्य काव्य)

अत्यन्त सुखदायक वर्षा समय आगया, तेरे आगमन से मेरा हृदय अतिशय आनन्दित होता है। मैं अन्तःकरण से तेरा स्वागत करता हूं। किसी दुष्ट पुरुष द्वारा सताई जा रही अबला का जब कोई त्राता मिलजाता है तो उसे जो अपूर्व हर्ष होता है; उसी प्रकार सूर्य के प्रचण्ड उत्ताप से तापित वसुन्धरा को तेरे जैसा पथिक मिलजाने से अपार अनन्द होता है।

* * * * *

सचमुच, तू वर्षाकाल नहीं प्रत्युत्, सम्पूर्ण पृथ्वी को जीवन देने वाला 'जीवन काल' है। तेरी कृपा पर समस्त प्राणियों का जीवन अवलम्बित है। यदि तेरी अकृपा हो गई तो सारा संसार व्याकुल हो जायगा। सम्पूर्ण ऋतुओं में तू ही मुख्य है। इसी से हे मध्यम काल! तुझे सब ऋतुओं का राजा कहने में मुझे कुछ भी अनुचित नहीं मालूम होता।

* * * * *

तुझे 'उद्योग काल' कहना ठीक होगा। क्योंकि निठल्लो और आरामपसन्द धनी लोगों के लिये अन्न उत्पन्न करने वाला, बेचारा दरिद्र किसान इसी समय से अपने उद्योग का आरम्भ करता है।

* * * * *

हे उद्योग काल! तू सृष्टि सुन्दरी का पति है। तेरी रानी पृथ्वी को सम्पूर्ण जलधर सप्त-महासागर के उदक से मानो सम्राज्ञी-पद का अभिषेक करता दिखाई देता है।

* * * * *

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे जीवन काल! मैं बहुतों को तन्तु वस्त्र धारण किये देखता हूं, परन्तु इस नीलाकाश ने मानो अपने अङ्गके तारालङ्कार चोरी जाने के भय से पयोधर का अङ्गरखा धारण कर लिया है। मैंने पानी का अङ्गरखा पहनते कभी किसी को न देखा। तेरे राज्य में तो सब बातें अनोखी हैं!

* * * * *

तेरे आने की बाट देखते २ थे चातक पक्षी अपनी जल लालसा तृप्त होने पर कैसे आनन्दित दिखाई पड़ते हैं!

* * * * *

तेरे आगमन से मत्तमयूर मयूरिणी के चुम्बन के लिये कैसा उत्सुक दिखाई पड़ता है। उसे, रत्न जटित कमानीदार पंखे की तरह अपनी सुँदर पूँछ फैलाकर, कूजन करने के अतिरिक्त और कुछ नहीं सूझता।

* * * * *

सबसे अधिक 'हां हुजूर' करने वाला यह एक पवन ही है। अभी २ यह सूर्य्य की संगति कर कैसा प्रखर हो रहा था, पर अब वर्षाकाल को पा कैसा शीतल हो रहा है। सच है, संगति का प्रभाव ऐसा ही होता है।

* * * * *

जलधारने रत्नगर्भा धरणी को वर्षा से गीला कर दिया, जिससे उसे ढंढ लगने लगी। हे ऋतु-राज! ऐसे समय में यह ऊगे हुए नवशस्य मुझे ऐसे मालूम होते हैं मानो शीत के कारण शरीर पर उठे हुए रोमाञ्च!

* * * * *

तृषार्त बनश्री जल पाकर अतिशय प्रफुल्लित दिखाई देती है। उसी प्रकार हे ऋतुश्रेष्ठ! जिन्हें तूने पति से भेंट करा देने का आश्वासन दिया है ऐसी सर्व मानिनी सरितायें अपने पति की भेंट की अभिलाषा हृदय में धारण कर उस ओर वेग से दौड़ रही हैं। आनन्दातिरेक के कारण, मार्ग में जो कुछ मिलता है उसे तोड़ती, बहाती रत्नाकर की भेंट के लिये दौड़ी चली जा रही हैं। पर रत्नाकर को कहां उनकी चाह! उसके हृदय में कोई जाय, रहे या न रहे, दोनों समान हैं।

* * * * *

प्यारे जलदनाथ! एक दिन रात्रि के समय गगन मंडल की ओर अवलोकन करते समय मैंने जो कुछ देखा, सुना उसके कारण मेरे चित्त में उस समय भय, आनन्द आदि विकार उत्पन्न हुए। मुझे ऐसा ज्ञात हुआ मानो मेघरुपी सेना पृथ्वी पर धावा मारने को आ रही है। पर पृथ्वी तो ठहरी अबला; अबला पर चढ़ाई करने वाला मेघ समुदाय मूर्ख है या बुद्धिमान, यह मुझे न मालूम हुआ। पर उसे भी सहायक मिल गया। बेचारे पवन को पृथ्वी पर दया आ गई और उसने मेघ सैन्य-समूह से लड़ना प्रारम्भ कर दिया। मेघों ने जल बुन्दों की गोलाबारी आरम्भ कर दी। अपनी विजय नाद से उसने तोपों की आवाज को दबा दिया। मेघ रूपी योद्धाओं के हाथों में चपला रुपी तलवार चम चमा रही थी। यद्यपि मेघों की इतनी कठिन तय्यारी थी; तथापि अन्त में पवन की ही विजय हुई।

* * * * *

नभ मंडल निरभ्र हो गया। तारागण चमकने लगे। निशानाथ इन्दुभगवान भी क्षितिज की ओर से धीरे २ ऊपर आते दिखाई देने लगे। इसी समय एक तारा आड़ा टूट गया। मुझे ज्ञात हुआ मानो वह चन्द्रदेव के आगमन का समाचार दे कर इतनी शीघ्रता से पश्चिम सुन्दरी के महल की ओर दौड़ा चला गया। *

रमा शङ्कर शुक्ल "विशारद"
सरस्वती पुस्तकालय,
लश्कर।

*'मधुकर' में प्रकाशित एक मराठी लेख का भाव।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानव समाज और प्रलय।

(ले० लहरी व्यास)

पूर्व प्रकाशितान्तर।

यह मानना ही पड़ेगा कि सत्ययुगमें अर्थात् सबसे आदि कालमें कमसे कम तीन बार इस पृथ्वी पर आफत जरूर आई और ज्यादातर वह आफत जल प्लावन के रूपमें ही आई।

बस अवतारोंका विवरण तो समाप्त हुआ इनमेंसे किसी में हमें साक्षात प्रलय तो नहीं दिखाई पड़ा पर जल-प्लावन आ पहुँचा और पृथ्वी जलमें डूब गई। इस जल प्लावन पर वैज्ञानिक अथवा भूतत्वविदों की दृष्टिसे हम अंतमें विचार करेंगे। इस समय केवल इतना ही ध्यानमें रखने योग्य है कि हमारे शास्त्रानुसार तीन बार पृथ्वी (अवथा वेद) जलमें डूबी। मगर इसमें दो बातका जिक्र करना अभी रह गया है, एक तो मारकंडेय पुराणमें मारकंडेय मुनिको प्रलय का दर्शन हुआ। दूसरे अन्य ग्रंथोंमें यह बात पाई जाती है कि ब्रह्माके प्रत्येक दिनके अंतमें प्रलय और सौ वर्षकी उनकी आयुके अंतमें महाप्रलय होता है। इसमें अंतिम बातको तो हम छोड़ ही देते हैं क्योंकि इस प्रलय अथवा महाप्रलयका कोई ऋषि अथवा मुनिके द्वारा आंखों देखा वृतान्त ग्रंथोंमें नहीं पाया जाता और हमें प्रलयके जिक्रसे नहीं बल्कि उसके विवरणसे मतलब है। हां मारकंडेय जी की कथासे प्रलयका कुछ आभास मिलता है।

मारकंडेय जी की इच्छा भगवानका ध्यान करते हुए प्रलय देखनेकी हुई और ईश्वरेच्छासे उन्हें प्रलयका दृश्य दिखाई भी पड़ा। इस हालको जब हम पढ़ते हैं तो पृथ्वीके जलप्लावनका सच्चा दृश्य आंखोंके सामने आ जाता है पर उसे पूरी तरहसे लिखनेका यहां स्थान नहीं है। संक्षेप यही है कि लगातार और अन्धाधुन्ध बरसात पृथ्वीतल पर मच गई। बेहिसाब पानी बरसने लगा चारों ओर जल ही जल हो गया, सब जीव जंतुओं का नाश होगया, समुद्र और नदियां बढ़ आईं, पृथ्वी जलमें डूब गई जिसमें केवल मारकंडे मुनि और एक वट वृक्ष रह गए-वगैरह।

हमारे शास्त्रोंके अनुसार तो ये ही बातें पृथ्वी के अंत (अथवा पृथ्वीकी हालत जो कुछ कहिए) के विषयमें पाई जाती हैं। अब विचारणीय बात इसमें यही है कि क्या हरबार जलहीके कारण पृथ्वी पर आफत आई। कभी वेद डूबे और कभी पृथ्वी ही जलमें डूबी। यद्यपि कुछ लोग विरोध करें और का आधुनिक पठित समाज इन प्राचीन बातों-वेद और पृथ्वीके डूबने और उसके उद्धारका विश्वास न करते हुए और इन सब को "कथा, केवल कथा, कोरी गप" के नामसे पुकारेगा क्योंकि उन्हें तब तक किसी बात पर विश्वास न होगा जब तक कि वह विज्ञान द्वारा उन्हें समझा न दी जाँय अथवा त्रैराशिकके जोरसे उनके मस्तक में प्रविष्ट न करा दी जायँ पर उन्हें अभी कुछ सब्र करना चाहिए। हम वैज्ञानिक तरह से भी इस प्रश्नपर विचार करेंगे बल्कि यह कहना चाहिए कि वर्तमान युग के वैज्ञानिक और भूतत्व संबंधी ज्ञान से इन पुरानी बातों का मुकाबला करके देखेंगे कि इस परीक्षा में ये बातें ठीक उतरती हैं या नहीं; पर केवल अपने ही धर्म के पुराने ग्रन्थों को ले कर यह निर्णय करना ठीक नहीं। हमें पहिले अन्य जातियों के भी पुराने इतिहास को लेकर देख लेना चाहिए कि इनमें इस तरह की पृथ्वी और उसकी आफतों, प्रलय या अंत—जो कुछ कहिए-के विषय में कुछ लिखा गया है या नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमसे कम सभी मुख्य जातियों के ग्रन्थोंमें खोज कर लेने और खोज का निचोड़ निकाल लेने के बाद वैज्ञानिक रूप से इस प्रश्न पर विचार करने का अवसर आवेगा। *

हम अब अन्य धर्म के ग्रन्थों को लेते हैं और देखते हैं कि इनमें दस प्रकार की क्या क्या और कैसी कैसी बातें पाई जाती हैं।

मुसलमानों के ग्रन्थ (कुरान) में हमें जलप्लावन प्रलय अथवा ऐसी दूसरी मुसीबतों का कोई चिन्ह नहीं मिलता परन्तु अन्य ग्रन्थों में प्रलय और महाप्रलय शब्द और उनका कुछ आभास मिलता है। कई जगह ऐसा लिखा हुआ मिलता है कि किसी खास जाति पर ईश्वर "नाराज हुआ और उसके ऊपर उसने आफत बुलाई? तूत, कर आदि कई जातियाँ उसके कोप से बिल्कुल ही नष्ट हो गईं। एक जगह आग बरसी, एक जगह जमीन की तह ही उलट गई जिसके नीचे कौम की कौम सिवाय पैगंबर के नाश हो गई इत्यादि। इस प्रकार का हाल कई जगह हैं जिसका पूरा पूरा बयान करने का स्थान इस छोटे लेख में नहीं है मगर जिनके पढ़ने से कई विचार करने योग्य बातें मालूम हो सकती हैं परंतु इससे हमारा काम कुछ नहीं निकलता क्योंकि हमें तो प्रलय का ब्योरेवार हाल चाहिए जिससे यह पता लग सके कि जलप्लावन हुआ या नहीं। परंतु खैर, मुसलमानी ग्रन्थों के पढ़ने से इस बात में कोई शक रह नहीं जाता कि पृथ्वी पर प्रलय (आंशिक अथवा पूरी) अवश्य आई। सबूत में "प्रलय की किश्ती' का हाल प्रायः आप सभों ही ने पढ़ा होगा जिसमें लिखा है कि नूह को प्रलय आने का हाल पहिले ही से मालूम हो गया और उन्होंने बहुत से जानवरों के जोड़े और आदमी एक नाव में भर कुल नाव को बढ़ते हुए जलमें छोड़ दिया। सात दिन तक लगातार पानी बरसने से दुनिया के तल से जीव मात्र का नाश हो गया केवल नूह की किश्ती ही बच गई जो सातवें दिन तक पहाड़ की चोटी पर पहुँच कर रुकी।

यहूदी और मिसर देशों में भी लगभग इसी प्रकार के और इससे बहुत कुछ मिलते जुलते वर्णन पाए जाते हैं। ये दोनों ही जातियाँ बहुत पुरानी हैं और दोनों ही के पुरातन ग्रन्थों में प्रलय और जल प्लावन का वर्णन है। दोनों देशों के प्रलय के इन विवरणों और मुसलमानी (नूह) विवरण में इतना कम अंतर है कि अलग लिखने की आवश्यकता नहीं है। परंतु मिश्र की एक धर्म पुस्तक में एक ऐसा विवरण है जिससे मालूम होता है कि "ए" (सृष्टि कर्ता) मनुष्य समाज की दुष्टता से क्रुद्ध हो कर यह निश्चय कर लेते हैं कि एक भी मानव को जीता न छोड़ेंगे। इस विचार से वे भयानक नर हत्या में प्रवृत्त होते हैं और इतने मनुष्य

* श्री मद्भागवत के द्वादश स्कंध में होनेवाले प्रलय का जिक्र है। सातवें अध्याय में लिखा है कि सौ दिन तक सूर्य अत्यंत भीषण रूप से तपेंगे इसके बाद सौ दिन तक इतनी वर्षा होगी कि समग्र पृथ्वी जल में डूब जायगी। संसार भर में कोई जीव जंतु या वृक्ष नहीं रहेगा। इसके बाद सब तत्व एक दूसरे में लीन हो जायँगे पृथ्वी तत्व जाल तत्व में जलतत्व अग्नि तत्व में इत्यादि। भविष्य और गरुड आदि पुराणों में भी इसी प्रकार के वर्णन हैं पर जैसा कि हमने ऊपर कहा ये सब बातें किसी ऋषिमुनी द्वारा देखी और वर्णित नहीं हैं बल्कि भविष्यवाणी के रूप में हैं और पृथ्वी का अंत किस तरह होगा इस बात का वर्णन करती हैं। इस समय हमें इसका प्रयोजन नहीं है क्योंकि इस समय हम उन प्रलयों अथवा आफतों का वर्णन कर रहे हैं पर जो पृथ्वी तलपर बीत चुकी हैं। इस विषय के समाप्त होने तक पृथ्वी के महाप्रलय पर विचार करेंगे कि वह क्यों कर अथवा कैसा होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाते हैं कि उनका खून बहता हुआ हेलियो तक जा पहुंचता है। 'ए' को यह देख ताप होता है और वे आगे कभी ऐसा कर्म का प्रण करते हैं। इत्यादि अवश्य ही इस और हमारे प्रलय या जलप्लावन से कोई नहीं।

पुरानी ग्रन्थों में भी कई ऐसे जलप्लावनों का है जिनमें पड़कर मानव समाज (केवल कुछ मियों को छोड़कर) समूलही नष्ट हो गया। सिवाय और भी कई विचित्र बातें देखने ती हैं जैसे कि नई श्रृष्टि के मनुष्य का तों के संयोग से उत्पन्न होना इत्यादि। नूरके से की तरह इनके ग्रंथ में भी एक ऐसे प्रलय जिक्र आता है जिसमें एक बक्स के भीतर त मर्द, सूअर, घोड़े, शेर, सिंह मांस इत्यादि ड़ियाँ बंद कर के बहा दी गईं और इस आगे के लिये नई सृष्टि का बंदोबस्त किया है।

अमेरिका के पुराने निवासियों में भी ऐसे ही किस्से पाए जाते हैं मगर कोई ठीक सिल-वार बयान नहीं मिलता और न किसी सनीय बात का पता चलता है। ऐसा होता है मानों बहुत समय बीत जाने के से वहां के लोग कहानी का ठीक सिल भूल गए हों।

ईसाई ग्रंथोंमें प्रलय का अच्छा जिक्र पाया है और उसमें खुलासा तौर से जलप्लावन हाल लिखा गया है। संक्षेप में यह हाल इस पर है कि पृथ्वी तलका मानव समाज जब उद्दंड और पापिष्ठी हो गया तब उसे मिली कि आज के पांच महीने बाद तुम प्रलय गिराया जावेगा। पांच महीने के बाद ही हुआ, चालीस दिन और चालीस रात तार मूसलधार पानी बरसता रहा। सब और समुद्र बढ़ आये और साथही में पृथ्वी तल फटकर उसके अंदर से पानी का फुहारा छूटने लगा। पानी पहिले नीची जगहों फिर मैदानों और तब ऊंचे प्रान्तों में भी बढ़ने लगा, तब लोगोंने भाग कर ऊंचे टीलों और पहाड़ों पर आश्रय लिया पर वहां भी उनकी कुशल न थी क्योंकि पानी बराबर चढ़ता आया यहां तक कि पहाड़ की चोटी के भी बारह हाथ ऊपर तक आ पहुंचा। जितने जीव इस दुनिया में थे जीव जंतु मनुष्य पेड़ पल्लव सभी का नाश हो गया, अगर बचे तो महात्मा नूर जिन्होंने ईश्वर के आज्ञा-नुसार एक नाव में अपने कुछ संगी साथियों कई जोड़े जानवर तथा तरह तरह के बीज लेकर रख लिये थे और नाव को जल में छोड़ दिया था आखिर चालीस दिन के बाद धीरे धीरे पानी घटने लगा। आस्मान साफ हुआ, पहाड़ों की चोटियाँ पानी के बाहर निकलीं टीले खाली हुए और धीरे धीरे मैदानों को भी खाली करता और उत-रता हुआ पानी पूर्ववत अपने स्थान नदियों और समुद्र में बस गया। नूर ने भी अपनी नाव वहीं लगाई और उन्होंने अपने साथ जो कुछ ले लिया था उसी से क्रम पूर्वक यह वर्तमान सृष्टि पैदा हुई।

(२)

इस प्रकार के प्रलय के वृत्तान्त जब हम प्रायः सभी मत और सभी जातियों के पुराने ग्रंथों में पाते हैं तो यहस्वाभाविक बात दिल में उठती है कि क्या वास्तवमें यह सब बातें ठीक हैं? और क्या वास्तव ही में पृथ्वी तल पर कभी (एक बार या कई बार) जलप्लावन हुआ?

यदि हम आंखें बंद करके अपने धर्मग्रंथों की बातें मान लें तब तो यह बिश्वास करना ही पड़ेगा कि प्रलय हुआ और अवश्य हुआ पर यदि हम "नुकता चीनी" की निगाह से भी इस वर्णन को देखें तो कुछ बिचारणीय बातें मालूम होती हैं। एक तो सब धर्मों और जातियों के पुरातन ग्रंथों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में ऐसा और लगभग एक दूसरे से मिलता हुआ वर्णन पाया जाता है जिस से यह विश्वास करना कठिन होता है कि सभी ग्रन्थ झूठ कहते होंगे, दूसरे किसी जाति का पुराना बहुत पुराना इतिहास बतानेके लिये उस जातिके धर्मग्रंथ ही एक मात्र सहारा होते हैं। ऐसी हालत में उनमें लिखे एक वृतान्त को झूठ मानना और बाकी को ठीक समझना अनुचित होगा। यह संभव है कि पुराने ग्रंथ में इस समय की विद्या, बुद्धि, उन्नति और आदर्श के अनुसार किसी बात के वर्णन में फर्क पड़ा हो। मामूली और छोटी बात बहुत बढ़ा कर और आवश्यकता से अधिक गुरुत्व देकर लिखी गई हो या कोई गंभीर और ऐतिहासिक दृष्टि से अनूठा विषय थोड़ा ही वर्णन देकर रहने दिया गया हो पर एक दम मूलो नास्तिका होना कठिन है। यद्यपि पुराने ग्रंथों में कई ऐसी बातें और कथाएँ आई हैं जिन पर आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टि से विश्वास करना असंभव सा होता है परंतु तौभी उनमें कुछ न कुछ तत्व अवश्य होता हैं और होगा। यह मानना ही पड़ेगा। फिर ऐसा भी होता है कि कोई बात कुछ समय तक असंभव और अनहोनी मानी जाकर पीछे से वर्तमान काल के किसी नये आविष्कार या सिद्धान्त के अनुसार संभव और ठीक मानी जाने लगती है। कुछ समय तक पुराणों में आनेवाले विमानों का वर्णन जब हम पढ़ते थे तो हम असंभव और झूठ समझते थे पर अब जब समय के प्रभाव से हम ज़ेपलिनों और एअरप्लेनों को आकाश का चक्कर लगाते देखते हैं तो यह मानने की इच्छा होती है कि बेशक़ पुराणों में जो विमान आते हैं वे भी मान्य और संभव हैं इसी प्रकार अन्य विषयों को भी ले सकते हैं। मतलब यह कि किसी विषय को बिना अच्छी तरह जांचे या उसका अन्वेषण किये यह निश्चय कर लेना कि गलत या असंभव है ठीक नहीं है। अस्तु इस प्रलय के वृत्तान्त को बिना जांचे और समझे गलत कह देना भी अनुचित है। अस्तु प्रलय के विषय में कोई राय कायम करने के पहिले कम से कम यह निश्चय कर लेना आवश्यक है कि प्रलय होना अथवा जल प्लावन होना संभव है या नहीं फिर यह भी विचार किया जायगा कि प्रलय हुआ या नहीं। अतः हम पुनः अपने ग्रंथो ही से आरंभ करते हैं।

हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, यहूदी, यूनानी सभी जातियों के ग्रंथों में जब हम प्रलय का विवरण देखते हैं तो दो बातें उठती हैं। एक तो यह कि जब सभी मत के ग्रंथ इसका ज़िक्र करते हैं तो इसमें कुछ न कुछ तत्त्व जरूर होगा, दूसरे यह कि यदि यह प्रलय हुआ तो अवश्य ही उस समय से पहले हुआ होगा जब कि उसका हाल ग्रंथों में लिखा गया। ग्रंथों में लिखे जाने के पहिले संभव है कि उस घटना का वृत्तान्त केवल जबानी बहुत समय तक एक दूसरे से सुन कर चला आता हो और बहुत समय बाद के किसी विद्वान ने उसे लिपिबद्ध कर डाला हो। अपेक्षाकृत आधुनिक समय में भी प्रायः ऐसा देखने में आता है कि कई ऐसी घटनाएँ हो गई हैं जो बहुत गौरव रखने पर भी किसी इतिहास में अथवा लिखित रूप में पाई नहीं जातीं, उदाहरण दूर न जाकर काशी के कुछ ही समय में हुए "रामहल्ले" को लीजिये। एक भारी दंगा बल्कि कहना चाहिये कि बलवा यहां हो गया पर अभी तक किसी ऐतिहासिक स्वरूप में यह घटना पढ़ने में नहीं आई हालाँ कि ऐसे अब भी हजारों आदमी हैं जिन्हों ने यह दंगा देखा और उसमें भाग लिया। मतलब यह कि आज कल की अपेक्षा उस पुराने ज़माने में तो यह होना बहुत ही संभव है कि किसी घटना के होने के हजारों वर्ष बाद तक भी वह लिपिबद्ध न की गई हो जब कि आज कल के मुकाबले में उस समय लिखने पढ़ने की सामग्री का बहुत ही अभाव था। यह भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है कि हजारों वर्ष तक केवल "श्रुति" और
ति" के स्वरूप में आते आते वास्तविक
के स्वरूप में बहुत कुछ अंतर पड़ गया हो
में फर्क पड़ गया हो या घटना क्रम में ही
लट पुलट हो गया हो। पर जैसा कि हमने
—यह होना संभव है कि कोई घटना बहुत
घटा कर और विकृत रूप में पाई जाय
यह होना कठिन है कि कोई ऐसी बात
का कोई सिर पैर ही नहीं है और जो कभी
ही नहीं किसी बहुत पुराने ग्रंथ में सम्मिलित
दी जाय। यद्यपि आज कल के बहुत से
नों की यह सम्मति है कि हमारे और अन्य
के ग्रंथों में बहुत सी बातें "प्रक्षिप्त" के रूप
स बैठी हैं। पर इस सिद्धान्त को मानने में
से बड़ी कठिनाई यह है कि यदि हम किसी
की किसी एक बात को झूठ मानें तो उस
की बाकी बातों को भी झूठ मानने का अव-
मिलता है और इस तरह पर वह समूचा
ही संदेह युक्त हो जाता है। खैर इस
पर हमें इस झगड़े से कोई मतलब नहीं है।
तो हम अपने ग्रंथों की बातों को ठीक मान
ही अपना काम मजे में चला सकते हैं।
पर अब एक कठिनाई यह आती है कि प्रलय
वर्णन हमारे ग्रंथों में भी है और मुसलमानों
ग्रंथों में यूनान के ग्रंथों में भी और ईसाईयों
ग्रंथों में, भी परंतु ये सब मत न तो एक ही
में निकले और न इनके धर्मग्रंथ ही एक
में लिखे गए। यह मान लेने पर भी कि
ने बहुत समय जबानी चले आए—फिर भी
का बहुत कुछ अंतर पड़ता है क्योंकि हिन्दू
नी सभ्यता मुसलमानी और ईसाई सभ्यता
हजारों वर्ष पुरानी है अस्तु एक के समय में
प्रलय का वर्णन दूसरे के समय के ग्रंथ में
जाने से यह संदेह होता है कि या तो एक
कार ने दूसरे की चोरी की अथवा यह प्रलय
ही इस पृथ्वी पर कई बार और कई रूप तथा
कई स्थान पर हुआ। यूरोपीय कई विद्वान
"ल्यूग मिला" आदि तो यही समझते हैं कि यह
घटना एक ही स्थान पर हुई और वहीं का वर्णन
अन्य स्थान और धर्म वालों ने कर अपने ग्रंथों
में घुसेड़ दिया पर ऐसा समझना अनुचित है,
केवल एक विवरण के दूसरे विवरण से मिल
जाने से ही यह समझ बैठना कि एक दूसरे की
नकल है उचित नहीं, विवरण की समानता कई
कारणों से हो सकती है। एक तो यह संभव है
कि विविध प्रदेशों के प्रलय का रंग ढंग एक ही
प्रकार का हो, दूसरे यह कि जो मनुष्य इस
प्रलय से बचे (और कुछ अवश्य ही बचे क्योंकि
न बचे होते और एक दम श्रृष्टिका लोप ही हो
गया होता तो प्रलय का वर्णन ही कहां से आता
क्योंकि कहने सुनने वाला तो कोई बचा ही नहीं)
वे एक ही ढंग से बचे हों (जैसे नूह किश्ती पर
चढ़ कर बचे) और इस प्रकार भी प्रलय का
विवरण एक दूसरे से मिल गया हो। इसी
प्रकार के कई कारण हो सकते हैं जिनसे एक देश
और समय के प्रलय का हाल दूसरे देश और समय
के प्रलय से मिल गया हो। अस्तु सब से संभव
और सहज ही में विश्वसनीय बात यही मालूम
होती है कि प्रलय कई बार हुआ और कई स्थान
पर हुआ। इस बातपर हमें और भी विश्वास करना
पड़ता है जब कि हम यह देखते हैं कि वर्तमान
समय में भी आंशिक रूप से कई छोटे मोटे जल
प्लावन हो चुके हैं जिनमें हजारों आदमी भी मरे हैं
और कोसों तक की जमीन जंतु भी नाश हुए हैं।

यूरोप की एल्ब और आदडर नदियों के किनारे
की जमीन नदी की सतह से कई जगह नीची
पड़ती है और इस कारण बांध बांध कर इन नदियों
का पानी रोका गया है। मामूली तरह से ये
प्राण रक्षा बल्कि खेती और पैदावार के ख्याल
से बनाए हैं परंतु कभी कभी बांध टूट जाने से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ी ही भीषण घटना हो जाती है, लगभग एक हजार वर्ष तक इन बांधों के टूटने की कोई दुर्घटना न होने पर भी सन् १२१६ में ऐसी घटना हो ही गई जिससे दस हजार से ऊपर आदमी जल में डूब कर मर गए और सैकड़ों कोस वर्ग मील जमीन जल में डूब गई।

सन् १८६४ के अक्तूबर महीनेमें भी एक ऐसी ही दुर्घटना हुई। इसके बाद समुद्रके किनारे के कई टापू और बहुत दूरतक की जमीन नार्थ स्ट्रेन्डका टापू और जटलेन्डकी जमीन पर एक भयानक जलप्लावन हुआ जिसके कारण लगभग तेरह सौ मकान पचासों गिरजे पचास हजार मवेशी और छः हजारसे ऊपर मनुष्य नष्ट हो गए।

सन् १७४६ के अक्तूबरमें पेरूमें जो भयानक भूकंप हुआ उसका हाल सभी जानते हैं। इस भूकंपके कारण समुद्र दो दफे पीछे हटा और आगे बढ़ा जिससे सीमा बिल्कुल नाश हो गई, कलाओंका तट समुद्र की खाड़ी बन गई चार अच्छे अच्छे बंदर जिनमें कवाला और ग्वानेप नामक दो मशहूर बंदर भी थे बिल्कुल नष्ट हो गए। एक कलाओंमें जिसमें चार हजार की बस्ती थी तीन हजार आठ सौ मनुष्य डूब गए और केवल दो सौ बच पाए। कहा जाता है कि इसी पेरू में इस भूकंपके साठ बरस पहले सन् १६८७ में जो भूकंप आया था उसके कारण समुद्र का पानी इतना बड़ा था कि किनारे किनारे तीन सौ मील तक की जमीन बिल्कुल डूब गई और वहांके सब आदमी डूब मरे और पशु नष्ट हो गए।

सन् १७८७ में कोरोमण्डल तटके कोरिंगा हेड्राहेड़ इत्यादि स्थलोंमें भयानक जल प्लावन हुआ था। उत्तरी हवा ऐसी जोरसे बही कि समुद्रमें एक बड़ीही भयानक लहर पैदा हुई जो तट को लांघ कर खुशकी में बीसों मील तक घुस गई और जिसके कारण पचीसों गाँव, दस हजार से ऊपर आदमी और एक लाख से ऊपर पशु नष्ट होगए।

दूर क्यों जाइए अभी पिछले ही साल बंगाल में जो भयानक बाढ़ आई थी उसका हाल सभी जानते हैं। सैकड़ों गांव बह गए हजारों आदमी नाश हुए और लाखों गाय बैल नष्ट हुए जिसका जिक्र पढ़ने से रोमांच होता है।

मतलब यह कि आधुनिक जमाने में भी छोटे मोटे प्रलय बराबर हुआ ही करते हैं। अगर पुराने जमाने में अगर कोई भीषण प्रलय हुआ हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं, परंतु इस तरह के सबूत का कोई मूल्य नहीं है क्योंकि केवल इन बातों को सुन कर यह निश्चय कर लेना कि प्रलय हुआ असंभव है। प्रलय की सत्यता साबित करने के लिये किसी भारी सबूत की आवश्यकता है। हमारे और अन्य धर्मों के ग्रन्थ इस बिषय पर जो कुछ कहते हैं वह तो इस कह चुके अब इस समस्या को किसी दूसरे ढंग से पूरा करने का उद्योग करना आवश्यक है। प्रलय हुआ या नहीं प्रलय होना संभव है या नहीं, प्रलय क्योंकर हो सकता है, अथवा प्रलय अब होगा या नहीं इस समस्या का वर्तमान शिक्षा और नुक़ता चीनी के जमाने में उचित उतार केवल भूगर्भ विद्या यानी Geology दी हमें दे सकती है।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शैली-समीक्षा ।

(ले० धृष्ट विद्यार्थी)

पूर्व्व प्रकाशितांतर

"गुरोरपिगुणावाच्या दोषावाच्या गुरोरपि"

बाबू श्यामसुंदर दास जी बी० ए० ।

शब्द—बाबू साहब उर्दू, फारसी, अरबी आदि से भागते हैं। यहाँ तक कि उन्होंने "बाद" के लिए "पीछे" का प्रयोग किया है। इनके लेख में उर्दू शब्द बहुत ही कम मिलते हैं यद्यपि कदाचित बाबू साहब भी "क़ाग़ज़ात" को उर्दू और "कागजों" को हिन्दी मानने वालों में हैं। बाबू साहब हिंदी के सीधे साधे शब्द लिखते हैं जिनके स्थान पर लोग प्रायः कठिन संस्कृत वा फारसी के लिख दिया करते हैं। इनका झुकाव संस्कृत शब्दों की ओर अवश्य रहता है परंतु बहुत क्लिष्ट संस्कृत शब्द वा बड़े बड़े समस्त पद नहीं लिखते। साधारणतः बाबू साहब के शब्द बहुत अच्छे साधु और शुद्ध होते हैं कहीं कहीं "क्रियमाण" "प्राबल्य" "अवलंबित" "वैलक्षण्य" "शिकार" "हल करना" "ध्यान डालना" आदि प्रयोग भी मिलते हैं।

वाक्य—बाबू साहब के वाक्य (प्रत्येक) अलग अलग देखने में तो प्रायः सुडौल होते हैं, परंतु वे इस बात का बहुत ही कम ध्यान रखते हैं कि वाक्य ऊपर वा नीचे के वाक्यों के साथ ठीक बैठते हैं वा नहीं। रामायण की भूमिका में के वाक्य अधिकतर छोटे छोटे और प्रायः बहुत छोटे हैं। ऐसे वाक्यों में छोटा होना ही दुर्गुण होता है क्योंकि उनको एक छोटे से संयोजक द्वारा जोड़ देने ही से एक सुडौल वाक्य की रचना हो जाती है। बाबू साहब के और लेखों के वाक्य कुछ बड़े और सुडौल हैं। पढ़ने में भी मधुर लगते हैं। जान पड़ता है कि वे ध्यानपूर्वक लिखे गए हैं।

शब्द और वाक्य के विषय में एक विशेषता भी देख पड़ती है। वह यह है कि कदाचित बाबू साहब शब्दों के चुनने तथा वाक्यों के रचने पर विशेष ध्यान नहीं देते। ऐसा जान पड़ता है कि जब जो लेखनी से निकला वही ब्रह्मलेख हो जाता है, यहाँ तक कि कदाचित् बाबू साहब सुधारने की दृष्टि से फिर अपने लेखों को पढ़ने की भी परवाह नहीं करते। कहीं तो कई छोटे छोटे वाक्य एस साथ पड़ते हैं और कहीं वैसे वैसे छोटे वाक्यों को मिला कर एक ग्रांडील वाक्य बनाने का प्रयत्न देख पड़ता है। उदाहरण—एक स्थान पर "वर्तमान" और 'से' क्रमशः "जीवित" और "सरीखे" के अर्थ में लिखे गए हैं। एक ही वाक्य में "ज्यों ज्यों" "त्यों त्यों" "उन उन" "होता गया" का दो बार प्रयोग किया गया है और वह वाक्य तीन लाइन से अधिक भी नहीं है। "नीचे लिखा यह दोहा उधृत किया जाता है"। (उपरोक्त बातें रामायण की भूमिका में विशेष रूप से मिलती हैं) ".....प्रयोग होने लग जाय तो वास्तव में एक बड़ा भारी काम हो जाय। "इतना मैं अवश्य निवेदन करूंगा" "जो जो त्रुटियाँ इसकी अब तक रह गई हैं" "अध्ययन से लाभ की बातें उन्हें प्राप्त हों।"

अलंकार—बहुत विशेष तो नहीं पर बाबू साहब ने अलंकृत भाषा लिखने का कुछ उद्योग किया है। प्रायः ऐसा मिलता है कि जैसे अंगरेजी में शब्दों का वास्तविक अर्थ छोड़ कर सादृश्य विचार से (Metaphorical sense) प्रयोग करते हैं वैसा ही बाबू साहब भी करते हैं। जैसे "निर्माण" का प्रयोग "पुस्तक" के साथ "फलने फूलने" का हिन्दी के साथ इत्यादि। परतु ऐसे अलंकार दूर तक न चला कर दूसरे दूसरे

* विदित हो कि लेखकों का क्रम योग्यता वा किसी विचार से स्थिर नहीं किया है। जब जिसके को पढ़ा तब उसीका विवरण लिख डाला गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सादृश्य वाचक शब्दों को जुटा दिया है जैसे "जब तक संस्कृत स्वच्छंद रही और उसे हाथ पैर हिलाने का अवसर मिलता रहा, वह फलती फूलती रही"। यहाँ बंधन सूचक सादृश्य से तुरंत ही वृक्ष के सादृश्य पर कूदना स्पष्ट है। इनके अतिरिक्त विशेष रूप से अलंकारों का दर्शन नहीं होता। कहीं कहीं "भूमंडल में प्रबल लहर व्याप्त हुई" और "मार्ग को सफलीभूत करने में अग्रसर हों" आदि के सदृश खटकने योग्य प्रयोग भी मिलते हैं। बाबू साहब ने जड़को जीवित की भांति मानने वाले (Personification) अलंकारका बहुतायत से प्रयोग किया है:—"शताब्दि को सौभाग्य प्राप्त हुआ" 'पुनरभ्युत्थान ने वर्तमान काल का सूत्रपात किया।

पैराग्राफ़—छोटे छोटे लेखों में इसकी जाँच ही नहीं हो सकती, परंतु रामायण की भूमिका में तो कहीं कहीं पैराग्राफ की दुर्दशा की गई है। वहाँ एक एक वाक्य के भी पैराग्राफ देख पड़ते हैं।

साधारणतः पैराग्राफ तोड़ने का कोई स्पष्ट नियम नहीं जान पड़ता कदाचित् कोई अत्यन्त सूक्ष्म नियम हो।

विराम—बाबू साहब का विरामों का हिसाब बहुत अच्छा नहीं कहा जा सकता। कहीं कहीं कामा की भरमार और कहीं कहीं अभाव देख पड़ता है। साधारणतः पाई के अतिरिक्त अन्य विरामों का कम प्रयोग करते हैं। कहीं कहीं सेमीकोलन का भी प्रयोग किया गया है। कहीं "परंतु" "क्योंकि" वाले वाक्यों को विराम से अलग किया है और कहीं कहीं कामा से। अतएव उनके सिद्धांत का पता नहीं चलता यदि कोई है तो कदाचित् सूक्ष्म होगा।

शैली—यह जान पड़ता है कि बाबू साहब एक ही शैली नहीं लिखते। मुझे तीन प्रकार की शैलियों का पता चलता है। एक तो उनके छोटे छोटे लेखों की दूसरी बड़े बड़े लेखों की जैसे रामायण की भूमि का और तीसरी विशेष प्रकार के लेखों की जैसे षष्ठ साहित्य सम्मेलन की वक्तृता। ऐसा जान पड़ता है कि पहली ध्यानपूर्वक लिखी गई है, दूसरी बड़ी बेपरवाही से और तीसरी अत्यंत ध्यान से लिखी गई है—यह बात दोषों या गुणों की घटती बढ़ती से भी सिद्ध है। साधारणतः बाबू साहब बहुत बोल चाल की भाषा लिखते हैं (Colloquial) और सो भी रूढ़ि (Conventional) होती है अर्थात् एक ही प्रकार के शब्द, वाक्यों की बनावट आदि फिर फिर देख पड़ते हैं। यही कारण उनकी शैली के निरस होने का भी है और कदाचित् इसी कारण से उनकी भाषा में ओज की भी कमी रहती है। बाबू साहब की वक्तृता (१९१ साहित्यसम्मेलन) बहुत अच्छी लिखी गई है उसमें भाषा को अलंकृत करने तथा अच्छी शैली लिखने का भी श्लाघ्य प्रयत्न किया है। परंतु उसकी भाषा कहीं कहीं बहुत गिर गई है। इस वक्तृता के वाक्य बड़े घुमाव फिराव के और सुंदर हैं। उनमें विशेषण वाक्यों (Adjectival and Adverbial clauses) की अधिकता है।

साधारणतः बाबू साहब की शैली सरल कुछ असाधारण (अच्छाई की ओर) साधु और कहीं बहुत सुंदर है। इनके भाव स्पष्ट होते हैं और गांभीर्य की कमी और प्रसाद की अधिकता देख पड़ती है। प्रवाह साधारणतः अच्छा है परंतु कहीं कहीं परिमार्जन की आवश्यकता होती है, केवल शब्दों के हेर फेर से प्रवाह ठीक हो सकता है इसके लिए अधिकतर बनावट के बदलने की आवश्यकता नहीं है।

निम्नलिखित उदाहरणों से विराम पत्ति और प्रवाह (जो शब्दों के हेर फेर से बनता है) की गड़बड़ी का अनुमान किया जा सकता है:—

...रखा और भूमिदान दिया, परंतु इन्होंने ग्रहण नहीं किया। इनके शिष्य मारवाड़ी थे, उन्हीं लोगों के द्वारा इनको.....।" "पढ़ने की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...वन का अबतक सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ।" ...लशांति भी शास्त्र लेखानुसार होती है; कोई ...के अनाथ की तरह नहीं छोड़े जाते" "जिसमें ...तो रघुनाथ सिंह का यह स्मारक हो।" ...बहुत से लोग तारी को प्रधानता देते हैं परंतु ...।" "यद्यपि इस समय जो हस्तलिखित ...तियाँ इसकी मिलती हैं।" "अवसर ऐसा है कि ...भाव एक का है वही दूसरे का है, जो उद्देश्य ...का है वही दूसरे का है। "अपने साथ तीखन- ...अपनी राजधानी ले गए।" "डा० ग्नियर्सन ...एक कहानी और भी चोरों की लिखी है।"

बाबू साहब के लेखों में भाव शैली और शब्दों ...अच्छा मेल नहीं है, और मेल का निर्वाह भी ...हो सका है। जहाँ भाव ओजस्विनी भाषा ...रहता है वहाँ शब्द साधारण और भाषा निरी ...चाल की है और कहीं कहीं शब्द ...च्छे और भाव साधारण हैं। जैसे— ...नमाना क्षय करके विजय लक्ष्मी को मुग्ध ...ने की चेष्टा....." "प्रकांड क्रीडा क्षेत्र" "हिंदी साहित्य में गोसांई तुलसी दास के राम- ...रित मानस से बढ़ कर दूसरा प्रसिद्ध ग्रंथ ...ही है" (इसमें भाव और शैली बेमेल हैं) ...बू साहब की भाषा में कभी कभी थोड़ी सी ...रेजी की छाया आ जाती है।

व्याकरण संबंधी बातें—इनके लेख व्याकरण ...संबंधी त्रुटियों से बचे नहीं हैं। "आता है" ...और "आता था," "हुए" और "हुए हैं" ...ण "हुए" और "हुए थे" के अनुचित ...ता दिखाई देते हैं। कुछ त्रुटियाँ काल के प्रयोग ...में भी हुई हैं। कहीं कहीं मुहावरों का उलट फेर ...और भद्दे प्रयोग भी मिलते हैं।

उदाहरण:—

"१९ वीं शताब्दि के ही भाग्य में था कि ...ही ग्रंथ की उत्पत्ति और उसकी उन्नति हो।" ...काशी में ऐसा विद्वान न मिला जो प्रधाना- ...ध्यापक हो सके" 'कब उत्साह हो सकता था कि आँखों से दूर करें।" "उनमें फूटपड़ी" "लोगों के ध्यान खिंच चले" "मेरी सँभाल और रक्षा करते आए" "नीचे लिखा यह दोहा..... निम्नलिखित प्रयोग बहुत ही मिलते हैं "डूबते से बचाया" "डगमगाने चलने में....." "यदि हम ध्यान देते हैं तो विदित होता है कि .....उन्नति की है"। 'मानवीय'।

ऐतिहासिक नाटक पर एक सुप्रसिद्ध योरोपीय दर्शनज्ञ का सारगर्भित कथन।

(१)

जब किसी प्रचण्ड कलह और घोर विवाद पैदा करनेवाले नए विचार के विरोधी विवादके प्रधान कारण को बदल कर या प्रारम्भक सिद्धान्त को छोड़कर उसके फल और प्रयोग करने की रीति पर वादानुवाद करने जाते हैं तब हम बेधड़क कह सकते हैं कि अब इस नए बिचार के संबंध में जो मतभेद है उसके मिटाने का समय पास आगया है और नए विचार की विजय अवश्यंभावी है।

किसी युग में किसी देश में किसी ने ऐसा नहीं देखा कि उन लोगों ने नए बिचार का विरोध न किया हो जो बाल काल से पुराने भावों के हो चुके थे, लकीर के फकीर बन चुके थे या जिन्हें परमात्मा ने इतना बुद्धिबल व साहस ही नदिया था कि वे अपनी अंध परम्परा जनित भूलों को त्यागते। इसलिए जिस कारण को वे बालकाल से सुनते, जानते व मानते रहे हैं उसीके बल पर खड़े होकर पहले नए बिचार पर कुठारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात करते हैं। यह समय नए विचारके लिए बड़ी कठिन परीक्षा और प्रारंभिक कठिनाइयों का होता है। जब यह इन आंचोंमें तप परिशुद्ध हो मैदान में आता है तब इसके विरोधी मूल को छोड़ शाखाओं पर तर्क वितर्क करने लगते हैं और फिर वे छोटे छोटे अंगों तथा कार्य्य प्रणाली, प्रयोग विधि आदि पर आक्षेप आरंभ कर देते हैं।

उदाहरण—आज से ५० वर्ष पहिले भारतवासी अपने सुधारकों के जिस विचार पर एक ओर से आक्षेप करते थे, उसी के संबंध में अब केवल इस बात पर विवाद करते हैं कि इस विचार को काम में कैसे लाया जाय, इसको कार्य्य में परिणत करने में अमुक अमुक बाधाएं दीखती हैं।

प्रायः सभी लोगों ने ऐसी विधि का तिरस्कार व त्याग किया है जो स्वभाव से अपरिमित और जुदा जुदा बात को परिमित व समान सीमाबद्ध बना कर कार्य्य कारण संबंध को तोड़ती या विकृत करती हो, उपाय व परिणाम के संयोग व सम्मेलन को नष्ट करती हो अथवा ऐतिहासिक व अटल प्राकृत नियमों को झुठलाती हो।

सभी लोग स्वीकार करते हैं कि विषय और उसकी नैसर्गिक अवस्था के अनुसार देश और काल की सीमा को व्यवस्थित करना बहुत जरूरी है। एक ही सच्ची समता जो हो सकती है वही बड़ी जरूरी और घनिष्ट समता है। यह समता उन सम्बन्धों पर अवलंबित होती है जो दृश्य के या कथा के और वास्तविक पदार्थ के उन अनेक अंगों में होती है जो दार्शनिक अध्ययन के विषय हैं। चित्र का बल और प्रभाव बहुत बड़ी हद्द तक उस अनुराग में होता है जो उस चित्र से पैदा होता।

यह अब स्पष्ट होते हुएभी इन सिद्धांतों को ठीक ठीक काम में लाने की पद्धति पर अब तक भी विवाद बंद नहीं हैं। जैसे,—कवि का काम घटना को केवल ठीक ठीक दर्शा देना मात्र है या कुछ नई बात का भी पैदा करना? क्या यह काफी होगा कि नाटककार किसी ऐतिहासिक घटना को सागोपांग ज्यों का त्यों इस तरह पर दिखला दे कि हर कोई भी बात चाहे कैसी भी क्यों न हो जाय, या उसे यह उचित है कि केवल उन बातों को चुन ले जो असाधारण हों और फिर उसे बड़प्पन देने व उच्च बनाने के लिए सौंदर्य्य से भरे। सच तो यह है कि नाट्य कला का सच्चा केंद्र या असली धुरा केवल सच्ची व प्रकट ऐतिहासिक बात मात्र है या वह प्रभाव है जो उस अभिनय के देखनेवालों पर पड़ता है। यह प्रश्न सार्वभौम व बड़े भारी लाभकारी सिद्धांत का है।

इस बात को प्रमाणित करने की आवश्यकता नहीं कि पुराने जमाने में नाटक किसी प्रकार भी ऐतिहासिक नहीं होते थे, सिवा इसके कि पात्रों के नाम जो किसी ऐतिहासिक घटना से सम्बन्ध रखने वाले हों। उनके लेखकों को या अभिनेताओं को किसी ऐहिक वासना संबंधिनी बड़ी घटना को दरसाना मात्र अभीष्ठ होता था—जैसे प्रेम, शौर्य्य शान्ति आदि। इस काम के लिए वे ख्याली व्यक्तियों को जिनमें कुछ ऐतिहासिक पात्रता और समतापाते चुन लेते। ऐसे नाटकों में न कोई स्थानिक रंग होता, न घटना काल की रीति नीति चाल ढाल का ही पता चलता और न अच्छे बुरे गुणों का ही विवेक प्रकट होता। नाटकों का मुख्य उद्देश तो यह है कि उनसे देश, काल, पात्र, चाल, ढाल, रीति नीति, खान पान, पहरान उढ़ान प्रत्यक्ष होते हैं तथा सद्गुणों का मान दुर्गुणों का अपमान जाहिर होता। लेकिन हम जिन प्राचीन नाटकों का जिक्र करते हैं उनमें खयाली पुतलों व मानसिक विकारों को उत्कृष्ट हृदयग्राहिणी और संयम भाषा में दिखलाने की ही प्रधानता पाई जाती है बाकी सब तरह से थोड़े पर जहां तहां उच्च भावसंपन्न पाए जाते हैं।

प्राचीन काल के नाटककार या कवि अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को इतिहास से एकत्र नहीं करते थे, किन्तु बैठ कर जो भाता उसपर मनमानी रचना चलते और अपने उद्देश या विचार स्थिर करने जनता के हित को विचारने की आवश्यकता नहीं थे। ग्रंथ या खेल के तय्यार हो चुकने पर इस बात की खोज करनी चाहिए कि किस देश किस जाति के इतिहास में कोई ऐसी बात मिलती मेरे नाटक की बातों के साथ जोड़ खाती पर होता यह था जहां कवि को ऐसी घटना आभास मिला कि उसने तुरंत पात्रों का नाम दिया और नाटक पूरा हो गया। यही है कि प्राचीन नाटक प्रायः सब एक ही रंग मिलते हैं जिनमें नवीनता न दीखने के जी उकताने लगता है। यह सब उन गीतों के समान है जो एक ही राग में गाई हों, क्योंकि इनमें कुछ हेर फेर गान में होता वास्तव में राग एक ही होता है।

इस समय संसार की उन्नति तथा मानव जाति दिनों दिन बढ़ती हुई सभ्यता ने सिद्ध कर है कि अब इस तरह काम नहीं चल सकेगा ज्ञान की अग्नि कुछ काल से भीतर ही भीतर रही थी अब फिर प्रज्वलित हो उठी है। लिए और बातों के साथ साथ यह साहित्य भी उठना चाहती है। यह नहीं हो सकता और सब बातों का सुधार हो जाय और काव्य ही पीछे रह जाय।

नाटक सीधा, वास्तविक और प्रबल प्रभाव यों पर डालता है; यह सब की मानी हुई बात इसलिये इसे भी स्वतंत्रता, उदारता जनप्रियता राष्ट्रीयता के भावों व रंगों से रँगा होना चाहिए। सकते हैं कि वह कला शिष्टजन सत्तक राज्य हुई थी और इस चतुराई के साथ इसे गया था कि वह जबरदस्ती कुलाभिमानियों भी प्रसन्न करती रहे। लेकिन हमारी समझ में हमारे आंतरिक भावों व जीवन के चित्र होने चाहिए। हमारे विस्तरित, विविध, अनंत हार्दिक भेदों का दर्शक होना चाहिए, न कि थोड़ीसी भावात्मक बातों का ही व्यक्त करने वाला। मनुष्य का यदि सच्चा चित्र खींचना चाहते हों तो मनमाने विषय से काम न लें क्योंकि इससे हमारा चित्र दूषित और अधूरा रह जायगा और मनुष्य जाति के अनेक अंगों में से केवल एक ही अंग नजर आयेगा।

क्या हुआ जो किसी ने आगे बढ़ कर एक रूमी नाटककार * की तरह अपनी इच्छानुसार तोड मरोड कर दुःखांत नाटक को क्षण भर के लिये फिर से जिलाया? ऐसा काम तो बिजली की कौंध के समान होता है जो क्षणभर प्रकाश करके विलीन हो जाती है, न कि प्रचंड भारत की प्रभात कालीन लालिमा जो आने वाले दिन की सूचना देती हो। क्षणिक प्रकाश तो इसलिये है कि हमें हमारी पतित दशा को दिखला कर गुप्त हो जाय न कि हमें लगातार बड़प्पन प्राप्त करना सिखलावे। जो मनुष्य गुलामगिरी के फंद में फँसे हुए देश में पैदा हो कर २७ वर्ष तक पुराने ढंग की चटसाल में रहा हो, जिसने ऐसा पतित जीवन, व्यतीत किया हो कि जिससे उसकी बुद्धि मोटी पड़ गई हो और जिसकी व्याकरण व दर्शन रटते रटते स्वतंत्र मानसिक शक्ति मिट्टी में मिल चुकी हो, हमें कैसे इस युग के अभीष्ट सुधार दे सकता है। यह दुःखांत नाटककार जैसा अपनी इच्छाशक्ति की प्रबलता से बना वैसा आंतरिक भावों के स्वतः पैदा होने से नहीं। जो अपने को सुधारक बनाना चाहे अपने देश की सभ्यता को बनानेवाली शक्तियों, मानसिक उपायों और तत्वों का पक्का व पूरा ज्ञान प्राप्त करे।

अलफाइरी खास तौर के साहित्य व सभ्यता संबंधी लेखों व ग्रंथों का निरंतर पाठ करने

* Alfieri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाला था। इस काम से थकना तो वह जानता ही न था। इसने वर्तमान भेदों व अंतरों को जान लिया था सही, परंतु और भीतर बैठ कर देख न सका था। यह ऐसे समय में हुआ जब कि अनेक प्रतिकूल दशाओं के कारण देश की सभ्यता के तत्त्व भीतर ही भीतर मनुष्यों की नजर से छिपे हुए उत्तापित हो करके फेन दे रहे थे, निर्बल करने वाले दृश्यों से क्षुब्ध व डरपोक, मूढ, धन के बदले बिकने वाले साहित्यज्ञों के थोथेपन से उबल रहे थे। इस दशामें स्वाभाविक बात थी कि वह संतोषहीन, आत्मगौरव के कारण मनुष्यों से घृणा पूर्वक हट कर रहने वाला हो गया और देश में इधर उधर इस तरह फिरने लगा जैसे कोई श्मशान में फिरता हो। या तो इसकी समझ में ही न आता था कि चारों ओर जो सन्नाटा छाया हुआ है इसका कारण क्या है? अथवा इसे किसी ऐसी सभ्यता की मौजूदगी का संदेह होता था जो केवल प्रादुर्भूत (व्यक्त या जाहिर) होने का जरिया ही ढूँढती हो, पर ठीक ठीक अपने सहयोगी जनपद की नैतिक दशा के विशेष लक्षणों को न समझ सकता था।

इस संदिग्ध अवस्थामें भी जो कुछ इसने देखा, जाना, समझा इससे इस बात का काफी एतबार होगया कि मेरे देश की आशाएँ एकमात्र प्रेम के चारों ओर झूम रही हैं और इसीलिए नाट्य करना स्थिर किया। कवि का प्रधान काम है कि वह इस प्रेमको, और सबों को छोड़कर सिखलाने और जहां जहां उसे सोता पावे जागृत और पुनः परिज्वलित करने की चेष्टा करे। बल व बस भर हठ के साथ किसी विचार के पीछे पड़ जाने से या तो मनुष्य पागल बन जाता है या बड़प्पन पा जाता है। अब अलफाइरी कवि के भी मन में अदृश्य प्रेरणा थी और उसका दिल एक ही विचार से उद्बोधित हो रहा था, लेकिन विचार शिष्ट उदार और महत्व का था। यह विचार उसे कल्पना-शक्ति की दीक्षा देने को पर्याप्त होगया।

जब तक सूर्य्य इटली की भूमि को प्रकाशित करता रहेगा तब तक वह अलफाइरी की प्रतिष्ठा करेगी और दुःखान्त नाटक का प्रथम उद्धारक उसका प्रवित्र प्रयोग बतलानेवाला और उसके द्वारा जनता को सुशिक्षा देनेवाला मान कर पूजा करेगी।

यद्यपि अलफाइरी ने साहित्यिक सुधार के सिद्धांतों की मंजूरी दी पर स्वयम् उन्हें काम में न ला सका। वह इस बात को न पहचान सका कि देश वास्तव में कहां तक सभ्यता प्राप्त कर चुका है या समुन्नत हो चुका है और स्वभाव से वंचित अधिकार की भाँति उसने प्रेम की अपेक्षा कहीं अधिक भय से हमारे उद्धार का काम करने को खड़ा हुआ। उसके लेखों में अभिनयों में हमें मानवी स्वतंत्रता स्वर्ग नहीं किन्तु दासों का निवास नरक ही चित्रित देख में आता है; इसमें हम वाध्य होते हैं कि अत्याचारों को झेलते हुए स्वतंत्रता को गले लगावें।

उसका ढंग ऐसा है कि जिससे न तो हमारी आंखों के सामने वह ब्रह्माड का पवित्र दृश्य आता है जो हमारे मन व चित्त को उत्कर्षित करे न हममें मान की बड़प्पन और उच्चभावी आकांक्षा ही जाग्रत होती है। यह कवि हमें सारे ज्ञान से शून्य करके केवल एक ही भाव दुखित विचित्र मनोंमें गड़ा रहने देता है अर्थात् अत्याचार करने वाले के प्रति घृणा। अत्याचारी के प्रति घृणा होना स्वाभाविक है, उसीको और गाढ़ा हमारे में दिलों पर अंकित करनेवाला कवि अलफाइरी है।

अपने निज बड़प्पन के भावों के समूह को तुच्छ समझकर विचार की कमी से और सदा वत पुश्तैनी आदत से भी वह अपने नाटकों से जनता का बहिष्कार कर देता है और अपनी नजर और गरज उन थोड़े से बड़े आदमियों पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रखता है जो उसके विचारों और भावों के नमूने हों। शेष सारे रंग ढंग साज सामान सजावट जो फरासीसियों ने दुखांत नाटकों में प्रचलित की है इसके नाटकों में अंत-हो जाते हैं, और फिर इनकी जगह किसी बात को भी स्थान नहीं मिलता। यह उस आचार के ज्ञान का कारण है जो अलफाइरी नाटकों के पढ़ने से दिल को दाब बैठता है। पड़ता है कि कोई महापुरुष जेल में बैठा स्वतंत्रताका पवित्र पाठ पढ़ा रहा है। इस के पढ़ने या देखने से क्रोध उत्पन्न न होना असंभव है। क्रोध ही अंत में हृदयांकित रह जाता और क्रोध के लिए यदि कोई निश्चित उद्देश्य निश्चित उपाय न हो तो सिवा भयानक निष्फल बदले के उससे और फल कमही में आता है।

अलफाइरी ने उन सांकलों काठों कवारों में कष्टों का स्मारक निर्माण किया जो शताब्दियों मनुष्य जाति को सता रहे थे, और उस पर अग्न्याक्षरों में सिद्ध हस्त आचार्यों की 'स्वतंत्रता का' शब्द लिख दिया, जैसा जेनोआवालों ने अपने कारागारों के द्वार पर रक्खा था। यह शब्द साधारण और अपने असली अर्थ में एकता होते भी सदा से समयानु-जुदा जुदा अर्थों में लिया गया है, जैसे उपासकों की नैतिक दशा व उनके ज्ञान अवस्था होती है वैसा ही यह शब्द समझा व जाता रहा है। यह कवि हमें पिछले समय ओर ले जाना चाहता था। आप समझ हैं कि इसके रचित दृश्य सार्वजनिक खुली पर खचित या पहले के रोमी महा-ओं के महलों में अंकित मिलते। यदि समय तहाँ इस बात को प्रकट न करते होते। नई सभ्यता जो विस्तृत कर्मिष्ट, साहसिक मन की पक्की, अनुष्ठान विधि जुदा जुदा फिर भी अग्रसर होनेमें एक समान प्रभाव, विचारों और भेदभावों से पूर्ण होते भी भौतिक भाव और उद्देश में एक की एक है। अलफाइरी के दृश्यों में ऐसा जान पड़ता है कि यह उसने जान बूझ कर नहीं लिखा। दूसरे विषयों के साथ स्वतः इसका जहाँ तहाँ समावेश हो गया होगा। यही कारण है कि स्वाधीनता की वह उत्कंठा, रूप रंग देशकाल संबंधी गुणरहित थोथी स्वतंत्रता की वह पिपासा जो साधारण तौर पर मनुष्य में सदा से ही रहती है उसकी दृष्योंमें भ्रांतिमूलक श्रद्धालुता या असाध्य सिद्धांत का सा रूप धारण किए नजर आती है और काव्यों को केवल वाक पटुता मात्र जान पड़ती है यह कारण है कि कापुरुषों और विरोधियों में उस पर दोष लगाने का मार्ग खुला पाया।

अलफाइरी की वास्तविक चेष्टा निष्फल हुई। परन्तु असली बात उन लोगों ने समझा जो जानते थे कि और प्रकार के साहित्य के समान दुखांत नाटक में भी भाव और रूप दोनों को बहुत उपयुक्त समता को लिए हुए साथ ही साथ अग्रसर होने की जरूरत होती है जहां दोनों में से एक को तो विस्तार दिया जाता वहा ही मजा बिगड़ जाता है, यह प्रकट होने लगता है। इन बुद्धिमानोंने देखा कि भाव चाहे जितने उच्च क्यों न दर्शाए गए हों कभी अपना चुभने वाला प्रभाव नहीं डाल सकते सिवा इसके कि पुरानी बासनाओं को जो पहले से दिलों में घुस रही हों जगा दें। लेकिन ऐसी दृढ़ वासनाएं थोड़े ही लोगों में होती हैं, साधारण जनता तो घटनाओं की हृदय ग्राहकता और उनके स्पष्ट प्रत्यक्ष उदाहरणों के ही आगे विना प्रयास सिर झुकाती है। इसलिए चतुराई तो इसी में थी कि इति-हास की घटनाओं के साथ अधिक व्यविषता रखी जाती, फिर ऐसे जमाने में जब कि बिना ऐतिहासिक लगाव व झुकाव किसी विषय का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी अनुशीलन होता हो और साहित्य की जुदी जुदी शाखाओं के भेदभाव एवं विपर्ययों की उपमा दिखलाना उलटा सन्देह और विलम्ब का कारण हो।

इन सब बातों के सिवा सत्य का पक्ष परम प्रिय परम पुनीत और परम निर्विघ्न होता है, जरा भी जरूरत नहीं रहती कि सत्य के पक्षपाती सार्वजनिक पथ को छोड़ कर तिल भी इधर उधर पैर धरें। क्या सत्य से भी अधिक कोई पक्का सीधा पथ हो सकता है जिसके लिए हम विचारें कि साधारण जनता जिस पथ से चली है हम भी उसी का अवलम्बन करें।

यह काम (ऐतिहासिक नाटक) केवल भावों या विचारों से नहीं प्रत्युत सच्ची घटनाओं से रंजित और उदाहृत होना चाहिए। जनता की स्मरण शक्ति प्रत्येक व्यक्ति को सारे इतिहास का सबक स्वयं दे देगी। उसे तो इस बात के लिए केवल सिलसिले की जरूरत होती है जिसमें अपने याददाश्त को यथावत् काम में लावे। मज़ीनी के प्रादुर्भाव के साथ ही इटली में ऐतिहासिक नाटक का भी प्रादुर्भाव हुआ। इसमें संदेह नहीं इस प्रकार की रचना योरोप में गई न थी। इंलैंड में शेक्सपियर ने व जर्मनी में शिलर ने अभ्यस्त किया व अपनाया था, लेकिन आचार्य्यों को सिवा रचना शैली की आनुषंगिक या नैसर्गिक बाधाओं के और कोई कठिनाई न थी। परंतु मजोनी के विरुद्ध सारे ही साहित्यज्ञ, विद्वत्परिषदें और सम्वाद पत्र थे, इसके अलावा स्वभावजनित या सामयिक अवस्था अनुमोदित अनेक भय व दुराग्रह के साथ साथ मिथ्या अभिमान, डाह और षड़यंत्र सभी इस अभागे देश में मजोनी के विरोध के लिए खड्ग हस्त हो रहे थे। लज्जा व दुःख से कहना पड़ता है कि यह दोष इटली के सिवा और कहीं नहीं है, यहां हमें भ्रातृभाव और शुभचिंतकता की अधिक जरूरत है।

मानवी कामों में यह बात स्वाभाविक सी प्रतीत होती है कि जब विचारों को एक ओर सीमातीत बढ़ा दिया जाता है तो उसे हारकर बीच में आना पड़ता है। सिद्धांत के पक्षपातियों व विरोधियों दोनों में यह भूल देखने में आती है कि वे सिद्धांत को तान कर एक ओर हद के बाहर चले जाते हैं और फिर सिद्धांत का ही दम भरते रहते हैं। विपक्षी या विरोधी तो यह देखा करते हैं कि जो हम थोड़ी सी मानने योग्य बातों को भी स्वीकार करेंगे तो सारी ही बातें हमारे गले बँध जायगी और माननी पड़ेंगी इसलिए हठ से सर्वथा इनकार ही करते चले जाते हैं और सिद्धांत का विरोध पुष्ट और ठीक रखने के विचार से उसके अंतिम परिणाम तक चले जाते हैं और सिद्धांत व उसके परिणामों को एक ही बात मान बैठते हैं। इसी तरह पूर्वपक्षवाले सिद्धांत के प्रतिवाद को सिद्धांत की वास्तविक सचाई को धीरे धीरे लंबी पर्यालोचना द्वारा प्राप्त करने से उकता कर यह चाहा करते हैं कि विपक्ष उनके अंतिम उपसिद्धांत को मान लेगा तो बस हमारी विजय हो जायगी। इस तरह एक की उत्कंठा या अधीरता और दूसरे का संशय व संदेह विषय को अधिक उलझन में डाल देते हैं सुतराम् दोनों के सम्मत होने का मार्ग बंद हो जाता है। थोड़े से लोगों को छोड़ कर प्रायः सभी ऐतिहासिक नाटक के पक्षपाती व विरोधी इसी प्रकार के विवाद में फँस कर रह गए। इससे साहित्य की कितनी बड़ी हानि हुई है इसका साक्षी हमारा देश इटली है जो भ्रम व संदेह का शिकार बन कर किसी सिद्धांत को न पहुँच सका।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभा का कार्य्य-विवरण।

शनिवार तारीख १८ मई १९१८।

(१) तारीख २५ मार्च १९१८ और ६ मई १९१८ के अधिवेशनों के कार्य विवरण पढ़े गए और स्वीकृत हुए।

(२) मार्च और अप्रैल १९१८ के आयव्यय का निम्नलिखित हिसाब उपस्थित किया गया।

आय

१२३६।=)१० गत मास की बचत
४१=)॥। अमानत
॥)॥। नागरीप्रचार
१३०॥=) पुस्तकालय
१९॥)॥। पुस्तकों की बिक्री
१२=) भारतेंदु ग्रंथावली
१००) पृथ्वी राज रासो की बिक्री
८७३॥) मनोरंजन पुस्तकमाला
१२१॥) सभासदों का चंदा
१८४॥।=) हिंदी कोश
४४७१।=)१

व्यय

१९१॥।=)॥ अमानत
१०२=)। कार्यकर्त्ताओं का वेतन
६०॥।-)। डाक व्यय
११५॥।=) छपाई
१६॥) नागरी प्रचार
५६॥=)। पुस्तकालाय
११२।=) हिंदी पुस्तकों की खोज
८१)॥ फुटकर व्यय
१०३।-)॥ मनोरंजन पुस्तक माला
१०४॥।=)॥ हिंदी कोश
२६८५॥=)
१३८५।।।)१ बचत
४४७१।=)१

बचत का ब्योरा।

१२३=)। रोकड़ सभा
४१०॥-)।।। बनारस बंक (चलता खाता)
१०००) बनारस बंक (फिक्सड डिपाजिट)
२५२)१ पोस्ट आफिस सेविंग बैंक।
१७८५।।।)१ कुल

(३) पंडित जगन्नाथ पुच्छरत का पत्र उपस्थित किया गया जिस में उन्होंने अपने सभासद चुने जाने और चंदा क्षमा किए जाने की प्रार्थना की थी।

निश्चय हुआ कि सभा चंदा क्षमा नहीं कर सकेगी।

(४) बुलंदशहर की नागरी प्रचारिणी सभा का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उसने अपने पुस्तकालय के लिये सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें बिना मूल्य मांगी थीं।

निश्चय हुआ कि उसे अर्द्ध मूल्य में पुस्तकें दी जांय।

(५) बाबू बालमुकुंद वर्म्मा के ये प्रस्ताव उपस्थित किए गए कि (क) श्रीमान् महाराज इंदौर ने हिंदी के प्रति विशेष अनुराग दिखलाया है तथा समय पर सभा की सहायता की है अतः वे सभा के संरक्षक चुने जायँ (ख) सभा का जो २५ वर्ष का उत्सव होनेवाला है उसके लिये एक उपसमिति बना दी जाय।

निश्चय हुआ कि (क) यह प्रस्ताव साधरण सभा में स्वीकारार्थ उपस्थित किया जाय (ख) इसके लिये निम्नलिखित महाशयों की एक उप समिति बनाई जाय जो प्रबंध कारिणी समिति को इस बात की सम्मति दे कि ५ वें वार्षिकोत्सव का प्रबंध किस प्रकार किया जाय तथा उस प्रबंध को प्रबंध कारिणी समिति के आदेशानुसार करे। यह समिति अपने में अन्य लोगों को आवश्यतानुसार सम्मिलित कर सकती है परंतु इसके सभासदों की संख्या १७ से अधिक न होगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस समिति का पहला काम २५ वर्ष का सभा का इतिहास ठीक कराना और उसे छपवाना होगा। इसके सदस्य बाबू श्यामसुंदर दास, बाबू गौरीशंकर प्रसाद, बाबू रामदास गौड़ और सभा के मंत्री तथा उपमंत्री होंगे।

(६) कलकत्ते की हिंदी पुस्तक एजेंसी का १८ अप्रैल का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि सभा एजेंसी से २००) रुपए जमा करवा कर पांच सै वा चार सै रुपए तक उसके हिसाब में बाकी रक्खा करे। बिक्री का हिसाब वर्ष में एक बार किया जाय पेकिंग और पुस्तकों का रेल भाड़ा न लिया जाय और नागरी प्रचारिणी पत्रिका में सोल एजेंसी का उल्लेख कर दिया जाय।

निश्चय हुआ कि २००) रु० जमा करवा कर उन्हें ४००) रु० तक की पुस्तकें दी जायँ। बिक्री का हिसाब मई और नवंबर में प्रतिवर्ष दो बार हुआ करे, वर्ष में १०००) रु० तक की बिक्री होने पर पेकिंग और रेल भाड़ा सभा से दिया जायगा और ना० प्र० पत्रिका में कलकत्ते की सोल एजेन्सी उन्हें दिए जाने का उल्लेख कर दिया जाय।

(७) नागरीप्रचारिणी सभा, बुलंदशहर का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उसने अपनी "हिंदी डाइरेक्टरी" का एक विज्ञापन ना० प्र० पत्रिका में बिना मूल्य प्रकाशित किए जाने की प्रार्थना की थी।

निश्चय हुआ कि "हिंदी डाइरेक्टरी" की एक प्रति सभा के अवलोकनार्थ मंगवाई जाय।

(८) बाबू शिवप्रसाद गुप्त का १२ अप्रैल का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने सभा पुस्तकालय से एशियाटिक सोसायटी जर्नल की वे संख्याएं मांगी थीं जिनमें धोई कविकृत "वायू-दूत" प्रकाशित हुआ है।

निश्चय हुआ कि नियमानुसार उन्हें ये संख्याएं दी जांय और इनके लिए उनसे ५) रु० जमा करा लिया जाय।

(९) ग्वालियर तथा संयुक्तप्रदेश की हिंदी हस्तलिपी परीक्षाओं के पर्चे उपस्थित किए गए।

निश्चय हुआ कि इनकी परीक्षा के लिये निम्नलिखित सदस्यों की सब कमेटी बना दी जाय अर्थात् बाबू श्यामसुंदर दास बी० ए०, पंडित रामचंद्र शुक्ल, बाबू वेणीप्रसाद, बनारस के असिस्टेंट इंस्पेक्टर आफ स्कूल्स और सभा के मंत्री।

(१०) पंडित राधाकृष्ण झा का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि सभा ऐसी पुस्तकों के निकालने वा संग्रह वा संकलित करने का यत्न करे जो बिहार प्रांत में मेट्रिक्यूलेशन से बी० ए० तक की पाठ्य-पुस्तकों में सम्मिलित की जा सकें।

निश्चय हुआ कि यह आगामी अधिवेशन में उपस्थित किया जाय।

(११) बाबू शिवप्रसाद गुप्त का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रबंधकारिणी समिति से अपना त्यागपत्र लौटा लिया।

(१२) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

मंत्री

विशेष अधिवेशन।

शुक्रवार ता० २४ मई १९१८—सन्ध्या के ६ बजे

(१) रायबहादुर पंडित गौरीशंकर हीराचंद ओझा का तारीख २० मई १९१८ का निम्नलिखित पत्र उपस्थित किया गया:—

"आप का (मेरे पत्र के उत्तर में) कृपापत्र मिला वह मैंने असल ही अपने उक्त मित्र के पास भेज दिया है। उक्त मित्र का उत्तर यह आया है कि "वे बम्बई बैंक के ३५००) रुपए के असली शेयर जिनका आजकल बाज़ार भाव १०५००) के करीब है और जिनका सालाना सूद रु० ६००) आता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभा को देने को तैयार हैं। यदि सभा उसे स्वीकार करे तो शीघ्र मुझे सूचित कीजिए ताकि उसकी शर्तें तै कर शेयर सभा के नाम ट्रांसफर करा लिए जावें और रजिस्ट्री करा दी जाय।

"साल में एक से अधिक पुस्तक सभा निकाले तो कोई बात नहीं है। विशेष आनन्द की बात है। मूल धन ज्यों का त्यों बना रहे यही उद्देश्य है। बाकी सभा को अधिकार होगा। ट्रस्टियों की सम्मति लेना आवश्यक होगा। ट्रस्टी सभा के हितचिंतक और हिंदी के प्रेमी होंगे उनकी सम्मति सभा को सहायक ही होगी बाधक नहीं। इसलिए ट्रस्टियों की सम्मति स्वीकार करने में सभा की कोई हानि नहीं है यह मेरी राय है। ट्रस्टी बाबू श्याम सुंदरदास जी लारसवाले, पंडित चंद्रधर शर्म्मा गुलेरी अजमेर (मेयो कालेज) वाले और शायद तीसरा मेरा नाम होगा।

यह उद्योग सभा को सहायता देने के लिए ही है इसलिए आशा है कि सभा ३५००) के मूल शेयर लेना स्वीकार कर लेगी। उनकी सालाना आमद करीब ६००) रुपये के है। उतनी रकम से आरंभ में ३०० पृष्ठ की पुस्तक न छप सकेगी तो कुछ कम पत्रों की ही सही सभा १०००) प्रति छपवाने को बाध्य न होगी। सभा उचित समझे तो २००० या अधिक प्रतियां छपवा सकेगी। ऐसी बातों का अधिकार सभा को ही रहेगा।

अब आप कृपा कर मुझे शीघ्र यह सूचित कीजिए कि सभा ३५००) (साढ़े तीन हज़ार के) मूल शेयर-बम्बई बैंक के जिनका आज कल का भाव १०५००) के करीब है और सालाना सूद ६००) रु० आता है लेना स्वीकार कर ऐतिहासिक ग्रंथमाला निकालना स्वीकार करती है। आप की स्वीकृति आने पर मैं अपने मित्र को लिख कर उनका लिखती मसौदा स्वीकृति के लिये सभा के पास भेज दूंगा और सभा की तरफ से एक महाशय अजमेर आ जांयगे तो मेरा वह मित्र भी यहाँ आकर रजिस्टरी करा देगा। कृपया इस पत्र का जवाब शीघ्र दीजिएगा।

निश्चय हुआ कि सभा को ये शर्तें स्वीकार हैं।

(२) निश्चय हुआ कि पंडित गौरीशंकर हीराचंद ओझा रायबहादुर के पास ट्रस्ट डीड की निम्नलिखित पण्डुलिपि विचार और स्वीकृति के लिये भेज दी जाय और यदि इसकी रजिस्टरी के लिये सभा की ओर से किसी प्रतिनिधि के जाने की आवश्यकता हो तो बाबू श्यामसुंदर दास जी बी० ए० अथवा बाबू गौरीशंकर प्रसाद जी बी० ए० एल-एल० बी० जायँ और सभा की ओर से उनको हस्ताक्षर करने का अधिकार होगा।

"मैं.....पिता का नाम.....जाति.....रहने वाला.....का हूं।

आगे बहुत दिनों से मेरी इच्छा है कि हिंदी साहित्य में ऐतिहासिक पुस्तकें लिखी और छापी जाँय जिससे हिंदी साहित्य में इनके अभाव की पूर्ति हो। इस इच्छा से नीचे लिखे हुए महाशयों को ट्रस्टी बनाता हूं और उनको नीचे लिखे हुए अधिकार देता हूँ। इस कार्य के लिये मैं अपना ७वाँ हिस्सा नं०.....जो "बैंक आफ़ बाम्बे" में मेरे नाम से है जिनका असली दाम ३५००) रु० है और जिनका आज कल का मूल्य १०५००) रु० के लगभग तथा वार्षिक आय ६००) के लगभग है, काशी नागरी प्रचारिणी सभा को देता हूं।

(१) यह ट्रस्ट.....नाम से कहा जायगा और यह धन चाहे जिस रूप में रहे काशी नागरी प्रचारिणी सभा के अधिकार में रहेगा और उसका हिसाब किताब इत्यादि भी उक्त सभा के कार्यालय में अलग खाता डाल कर रक्खा जाय।

(२) इन हिस्सों का मूलधन व्यय नहीं किया जायगा किंतु उनसे जो आय होगी वह इस ट्रस्ट के नीचे लिखे हुए कार्य में लगाई जायगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) काशी नागरी प्रचारिणी सभा की प्रबंध कारिणी समिति को अधिकार होगा कि ट्रस्टियों की सम्मति से इस धन को इन्हीं हिस्सों में अथवा किसी दूसरे रूप में जो इंडियन ट्रस्ट एक्ट की धाराओं को विरुद्ध न हो रक्खे। किंतु इस बात पर ध्यान रखना आवश्यक होगा कि आय में कमी न हो और मूलधन में क्षति न हो।

(४) इस समय नीचे लिखे हुए तीन महाशयों को मैं ट्रस्टी नियत करता हूं और उक्त महानुभावों ने इस ट्रस्ट के कार्य को सम्पादन करने का भार लेना स्वीकार किया है।

(५) इन ट्रस्टी महाशयों में से यदि किसी का स्थान किसी कारण से खाली हो जाय अथवा इंडियन ट्रस्ट एक्ट की धाराओं के अनुसार खाली समझा जाय तो उस स्थान की पूर्ति जब तक मैं जीवित रहूंगा मैं स्वयं करूंगा और मेरे न जीवित रहने अथवा अयोग्य होने की अवस्था में यदि किसी ट्रस्टी का स्थान खाली हुआ तो उसकी पूर्ति काशी नागरी प्रचारिणी सभा अपने वार्षिक अधिनेशन में करेगी। पर यदि वार्षिक अधिवेशन को एक मास से अधिक विलम्ब हो तो उस अवस्था में उक्त सभा की प्रबंध कारिणी समिति को अधिकार होगा कि यदि वह आवश्यक समझे तो वार्षिक अधिवेशन द्वारा नियुक्ति होने तक उस स्थान की पूर्ति कर दे। परंतु हर अवस्था में इस बात का पूरा ध्यान रखना होगा कि एक बंश वा संबंध के एक से अधिक व्यक्ति एक साथ ट्रस्टी न रह सकेंगे।

(६) जो पुस्तकें इस ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित होंगी उनका नाम.....ऐतिहासिक ग्रंथमाला होगा जिसमें स्वतंत्र मौलिक ग्रंथ अथवा दूसरी भाषा के ग्रंथों के अनुवाद तथा प्राचीन शोध संबंधी ग्रंथ होंगे।

(७) हर पुस्तक में मेरा चित्र रहेगा।

(८) इस ग्रंथमाला की बिक्री से जो आय होगी वह भी इसी ग्रंथमाला के प्रकाशित करने में व्यय की जायगी।

(९) हर वर्ष यथासंभव कम से कम एक पुस्तक प्रकाशित की जायगी और उसका मूल्य जो कुछ उसके संबंध में व्यय पड़ा हो उससे दूने से अधिक न रखा जाय।

(१०) यदि किसी समय मूलधन के अतिरिक्त इस ग्रंथमाला के हिसाब में एक सहस्र रुपया वा इससे अधिक बचा रहेगा और वह एक वर्ष से अधिक समय तक इस कार्य में व्यय न हो सकेगा तो उसमें से एक सहस्र वा उससे अधिक जितना काशी नागरी प्रचारिणी सभा की प्रबंध कारिणी समिति उचित समझे, मूलधन में सम्मिलित कर दिया जायगा और इसी प्रकार से समय समय पर जब जब ऐसी अवस्था उपस्थित होती रहेगी तब तब ऐसा ही किया जायगा और सम्मिलित मूलधन की कुल आय इस कार्य में लगाई जायगी।

(११) काशी नागरी प्रचारिणी सभा की प्रबंध कारिणी समिति को पूर्ण अधिकार होगा कि इस ग्रंथमाला की पुस्तकों को लिखवाने, छपवाने तथा बेचने आदि का सब प्रबंध करे किंतु यह आवश्यक होगा कि पुस्तक के विषयके संबंध में ट्रस्टियों की सम्मति ले ले। यदि एक मास तक ट्रस्टी महाशयों अथवा उनमें किसी एक की सम्मति न प्राप्त हो तो उस अवस्था में सभा के निश्चय को ही प्रधानता रहेगी और यदि ट्रस्टी महाशय सम्मति में एकमत न हों तो जिस ओर अधिक सम्मति होगी वही मानी जायगी और उसी के अनुसार कार्य होगा।

(१२) इस ट्रस्ट का वार्षिक चिट्ठा ट्रस्टियों के पास सभा का वर्ष समाप्त होने के पश्चात एक मास के भीतर भेज दिया जायगा और उसका विवरण उनकी सम्मति के साथ सभा के वार्षिक विवरण में प्रकाशित हुआ करेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१३) यदि इंडियन ट्रस्ट एक्ट की धाराओं के अनुसार न्यायाधीश की सम्मति लेने की आवश्यकता होगी तो वह सम्मति काशी के जज महोदय से ली जायगी।

(१४) इस ट्रस्ट को इन ऊपर लिखे हुए नियमों के साथ प्रबंध करने का भार काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने अपनी प्रबंध कारिणी समिति की तारीख..... .....के अधिवेशन में स्वीकार किया है।"

(३) पंडित रामनारायण मिश्र का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि सर आसुतोष मुकर्जी ने यह सम्मति दी है कि सभा हिंदी भाषा का एक इतिहास तैयार करावे जिसमें ऐसे ग्रंथकारों के लेख के नमूने हों जिनके ग्रंथ अब तक नहीं छपे। बंग भाषा के इतिहास संबंधी इसी प्रकार का एक ग्रंथ कलकत्ता विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित हुआ है और यदि सभा का इतिहास उत्तम हुआ तो सर आसुतोष मुकर्जी उसे भी उक्त विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित कराने का प्रबंध करेंगे। निश्चय हुआ कि बाबू दिनेशचंद्र राय के बंग भाषा के इतिहास की अंगरेजी और बंगला प्रतियों की एक एक प्रति सभा के देखने के लिये मंगाई जाय और सर आसुतोष मुकर्जी से पूछा जाय कि हिंदी के इतिहास के छपवाने में सभा को कलकत्ता विश्वविद्यालय से किस किस प्रकार की सहायता मिलने की आशा हो सकती है।

(४) बाबू श्यामसुंदर दास बी० ए० का २२ का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि २५ वर्षों का इतिहास तैयार करने के लिये दो मास के लिये बाबू रामचंद्र वर्म्मा और पंडित ब्रजभूषण ओझा उन्हें दिए जायँ। निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय।

(५) पंडित कामता प्रसाद गुरु का ९ मई का पत्र उपस्थित किया गया जिसके साथ उन्होंने हिंदी व्याकरण के दूसरे भाग का तीसरा परिच्छेद (व्युत्पत्ति विषयक) भेजा था और लिखा था कि इसमें अरबी शब्दों के वर्णन को सभा किसी अरबी जानने वाले को दिखला ले।

निश्चय हुआ कि बाबू श्यामसुंदर दास जी से प्रार्थना की जाय कि वे इस अंश को अरबी के किसी विद्वान से ठीक करा दें और इस व्याकरण के शीघ्र प्रकाशित करने का प्रबंध किया जाय।

(६) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

मंत्री।

प्रबंधकारिणी समिति।

शनिवार तारीख १५ जून १९१८ सन्ध्या समय ५½ बजे स्थान सभा भवन।

(१) तारीख १८ मई १९१८ तथा ता० २४ मई १९१८ के कार्यविवरण पढ़े गए और स्वीकृत हुए।

(२) मई १९१८ के आयव्यय का निम्नलिखित हिसाब उपस्थित किया गया।

आय

१७८५॥।)	१ गत मास की बचत
२७८॥-)॥	अमानत
१॥।=)॥।	नागरी प्रचार
३१)	पुस्तकालय
५००)	हिन्दी पुस्तकों की खोज
१४५-)॥	पुस्तकों की बिक्री
३८।-)	भारतेन्दु ग्रन्थावली
४५)	पृथ्वीराज रासो
५)	विशेष चन्दा
३)	विज्ञापन की छपाई
२८०।)	मनोरंजन पुस्तकमाला
७४≡)	सभासदों का चंदा
७०॥≡)	हिन्दी कोश
३२५८॥।-)१	

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यय

१७३≡) अमानत
१०२।)॥ कार्यकर्ताओं का वेतन
४८।-)॥ डाकव्यय
१६५।-) छपाई
८।) नागरीप्रचार
४५॥=)॥ हिन्दी पुस्तकों की खोज
६॥।) पुस्तकों के लिए पुरस्कार
२७।=) पुस्तकालय
३०) पारितोषिक
२८॥।=)। फुटकर व्यय
३६४॥।=)॥। मनोरंजन पुस्तकमाला
१६२॥)॥ हिंदी कोश

११६६॥)
२०६२।-)१ बचत

३२५८॥।-)१

(३) बाबू गौरीशंकर प्रसाद जी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रस्ताव किया था कि सभा द्वारा जो प्रमाणपत्र दिए जाते हैं वे हिंदी में ही दिए जाया करें।

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय और प्रमाणपत्र, बिल तथा रसीदें हिंदी में छपवा ली जाँय जिनका व्यय बाबू शिव प्रसाद गुप्त जी ने कृपापूर्वक देना स्वीकार किया।

(४) मंत्री के निम्नलिखित प्रस्ताव उपस्थित किए गए (क) सभा कार्यालय के कार्यकर्त्ताओं की छुट्टी के दिन का वेतन तभी काटा जाय जब और छुट्टी से वे संपुटित हो जायँ और (ख) हिंदी पुस्तकों की खोज के लिये एक और व्यक्ति वर्तमान पुस्तकों की खोज के एजेंट को दिया जाय।

निश्चय हुआ कि (क) सभा द्वारा जो छुट्टियां नियत हैं वे यदि किसी कार्यकर्त्ताओं की छुट्टियों में आ जायँ तो उनकी गिनती न की जाय यदि वह कार्यकर्ता नियमानुसार छुट्टी लेकर गया हो (ख) वर्ष के अंत में हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों की खोज के काम में सरकार की वार्षिक सहायता में से जितना रुपया बचे वह दूसरे वर्ष में हस्तलिखित पुस्तकों के खरीदने, प्राप्त करने अथवा नकल करानेमें व्यय किया जाय। यह कार्य खोज के निरीक्षक को सौंपा जाय और पुस्तकें सभा के पुस्तकालय में रक्षित की जाँय।

(५) संयुक्त प्रदेश और ग्वालियरकी हिंदी हस्तलिपि परीक्षा के पर्चों के संबंधमें उप समिति की रिपोर्ट उपस्थित की गई जिसमें उसने निम्नलिखित बालकों को पारितोषिक और प्रशंसापत्र दिए जाने की सम्मति दी थीः—

संयुक्त प्रदेश।

मिडिल विभाग।

१. त्रिलोचन उप्रेती, कक्षा ६, टाउन स्कूल अल्मोड़ा

२. हर्ष सिंह राजपूत, कक्षा ७, टाउन स्कूल अल्मोड़ा

३. मोहनसिंह राजपूत, कक्षा ६, टाउन स्कूल अल्मोड़ा

४. ईश्वरीदत्त लोहनी, कक्षा ७, टाउन स्कूल, अल्मोड़ा

५ सूर्य्यराम, कक्षा ६, बैरिया स्कूल, बैरिया, जिला बलिया

६ देवनारायण सिंह, कक्षा ८, बैरिया स्कूल, बैरिया, जिला बलिया

७. पीताम्बर पाण्डे, कक्षा ७, मिडिल पिठौरागढ़ स्कूल, पिठौरागढ़ जि० अल्मोड़ा

८. कैलाशराम, कक्षा ६, बैरिया स्कूल, बैरिया, जिला बलिया

९. रामचन्द्र राम कक्षा ६, बैरिया स्कूल बैरिया, जिला बलिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपर प्राइमरी विभाग।

१. राम अनूप कुँअर, कक्षा ५, बैरिया स्कूल, जिला बलिया ५)

२. कन्हैयाराम कक्षा ४, बैरिया स्कूल, बैरिया, बलिया ३)

३. बाबू लालराम, कक्षा ४ बैरिया स्कूल, जि० बलिया। २)

४. मूखा सिंह, कक्षा ४. बैरिया बैरिया जि बलिया

५. राम विलास सिंह कक्षा ३, बैरिया बैरिया ज़ि० बलिया

६. पूर्ण सिंह, कक्षा ४, स्याल्दे स्कूल, अल्मोड़ा

७. पान सिंह बोरा, कक्षा ४ सोमेश्वर जि० अल्मोड़ा

८. कृष्ण सिंह, कक्षा ४, सतराली जि० अल्मोड़ा

} प्रशंसापत्र

लोअर प्राइमरी विभाग।

१. केशव, कक्षा २. वारा कोट स्कूल, जिला अल्मोड़ा ४)

२. प्रेम वल्लभ, कक्षा २, डि० बो० ट्रेनिंग अल्मोड़ा २)

३. कृष्णानंद, कक्षा २, डि० बो० ट्रेनिंग स्कूल अल्मोड़ा २)

४. श्रीकृष्ण, कक्षा १, बकोठी पाठशाला, तहसील बिल्हौर, जिला कानपुर

५. शिवपूजन राम, कक्षा २, बैरिया बैरिया, जिला बलिया

६. कुबेर लाल, कक्षा २, बैरिया स्कूल, बैरिया, जिला बलिया

७. रामसुंदर राम, कक्षा २, बैरिया बैरिया, जिला बलिया

} प्रशंसापत्र

ग्वालियर-मिडिल विभाग

१. लक्ष्मण, कक्षा १ हिंदी स्कूल, उज्जैन १)

२. राम जी राव, कक्षा १, सबलगढ़, स्कूल, सबलगढ़ जिला तवरघार

३. केशव सिंह, कक्षा १. सरदार स्कूल, ग्वालियर अपर प्राइमरी विभाग

} प्रशंसा पत्र

अपर प्राईमरी विभाग

१. भगवती राव, कक्षा ३, हिन्दी स्कूल उज्जैन ३)

२. कहैया लाल, कक्षा ४, ब्रांच स्कूल, नयापुरा, शहर उज्जैन

३. जमुना प्रसाद, कक्षा ३, बी० एम० स्कूल, सुजालपुर, रियासत ग्वालियर

} प्रशंसापत्र

लोअर प्राईमरी विभाग

१. अनंतराम, कक्षा ५, स्कूल लहार, जिला भिंड २)

२. निहाल सिंह, कक्षा ५, सरदार स्कूल, ग्वालियर

३. सज्जन सिंह, कक्षा ५, सरदत्ति स्कूल, ग्वालियर

} प्रशंसापत्र

निश्चय हुआ कि उपसामिति की सम्मति के अनुसार पारितोषिक और प्रशंसापत्र दिए जायँ।

(६) आगामी वर्ष के पदाधिकारियों और प्रबंधकारिणी समिति के सदस्यों के चुनाव के लिए निम्नलिखित सूची तयार की गई:—

एक सभापति और दो उपसभापति।

बाबू श्यामसुंदरदास बी० ए०।

ठाकुर राजेंद्रसिंह।

पं रामावतार शर्म्मा एम० ए०।

बाबू भगवानदास एम० ए०।

बाबू गौरीशंकरप्रसाद बी० ए० एलएल० बी०

पंडित रामनारायण मिश्र बी० ए०

रायबहादुर पं० गौरीशंकर हीराचंद ओझा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक मंत्री और एक उपमंत्री।

बाबू हरिहरनाथ बी० ए०।
पंडित गोविंदराव जोगलेकर।
पंडित जानकीशरण त्रिपाठी।
बाबू बालमुकुंद वर्म्मा।
बाबू वेणीप्रसाद।
बाबू बाँके बिहारीलाल बी० एस-सी०।
बाबू श्रीप्रकाश बी० ए० एल एल० बी०।
बाबू संपूर्णानंद बी० एस सी०।

प्रबंधकारिणी समिति के सदस्य।

काशी से:—

पंडित रामनारायन मिश्र बी० ए०।
बाबू गौरीशंकरप्रसाद बी० ए० एलएल० बी०
पंडित गोविंदराव जोगलेकर।
पंडित रामावतार शर्म्मा।
राव गोपालदास।
बाबू हरिहरनाथ बी० ए०।
पंडित विजयानंद त्रिपाठी।
बाबू कालीदास माणिक।
बाबू बालमुकुंद वर्म्मा।
बाबू संपूर्णानंद।
बाबू श्रीप्रकाश।

संयुक्त प्रदेश से:—

बाबू श्यामसुंदरदास बी० ए०।
ठाकुर राजेंद्रसिंह जी।

मध्यप्रदेश से:—

पंडित माधवराव सप्रे।
रायबहादुर पं० विष्णुदत्त शुक्ल।

बम्बई से:—

प्रोफेसर टी० के० गज्जर।
पंडित तनसुखराम मनसुखराम त्रिपाठी।

(७) जिन सभासदों के यहां दो वर्ष से अधिक का चंदा बाकी है उनकी नामावली उप[illegible] स्थित की गई।

निश्चय हुआ कि इन सज्जनों का चंदा य[illegible] २८ जून १९१८ तक न आ जाय तो इनके ना[illegible] सभासदों की नियमावली से काट दिए जायँ।

(८) भारतवर्ष की शासनप्रणाली पर [illegible] नरोत्तमदास के लेख के सम्बन्ध में बाबू श्या[illegible] सुंदरदास जी तथा बाबू गौरीशंकर प्रसाद [illegible] की यह सम्मति उपस्थित की गई कि यह ले[illegible] पदक देने योग्य नहीं है।

निश्चय हुआ कि यह उपसमिति की सम्म[illegible] स्वीकार की जाय।

(९) राय बहादुर पंडित गौरीशंकर ही[illegible] चंद ओझा का २९ मई १९१८ का पत्र उपस्थि[illegible] किया गया जिसमें उन्होंने सूचना दी थी [illegible] ऐतिहासिक ग्रंथों को प्रकाशित करने के लि[illegible] जिन सज्जन ने दान देना स्वीकार किया है [illegible] प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता जोधपुर निवासी मुं[illegible] देवीप्रसाद जी हैं। सभा ने ट्रस्ट डीड की [illegible] पाण्डुलिपि भेजी है उसे आशा है कि मुंशी [illegible] ज्यों की त्यों स्वीकार कर लेंगे। यदि उनकी इ[illegible] उसमें यत्किंचित परिवर्त्तन की होगी तो सभा [illegible] प्रतिनिधि के सम्मुख उसमें उचित फेरफार [illegible] लिया जायगा परंतु ऐसा करने में भी यही वि[illegible] मुख्य रहेगा कि मुंशी जी की इच्छा पूर्ण रू[illegible] सफल हो और सभा का हिंदी साहित्य के भं[illegible] की पूर्ति का उद्देश्य सफल हो। साथ ही सभा [illegible] स्वत्वमें किसी प्रकार की बाधा न होगी।

निश्चय हुआ कि तारीख २४ मई १९१[illegible] अधिवेशन में ट्रस्ट डीड की रजिस्टरी के लिए [illegible] प्रतिनिधि नियत किए गए हैं उन्हें अधि[illegible] दिया जाय कि ऊपर लिखी हुई बातों पर ध्य[illegible] रखते हुए वे ट्रस्ड डीड में दाता के इच्छानुसा[illegible] परिवर्तन कर लें।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें ।

मूल्य ≡)

मूल्य ≡)

मूल्य ॥।)

मूल्य =)

बोध-भिन्न भिन्न प्रकारों और मतों से समय के विभाग का वर्णन मू० ≡)

वली-एक कथात्मक काव्य । मूल्य २)

के रोग और उनसे बचने का उपाय-१)

र्यप्रणाली-रोगी की शुश्रूषा विधि । मू० ।)

लेखमणिमाला-भारतवर्ष के शिलालेखों तथा दानपत्रों का सूची स्वरूप में वर्णन १)

राजरासो-महाकवि चंद बर्दाई कृत। यह ग्रंथ हिन्दी साहित्य का आदि काव्य है। इसमें राजा पृथ्वीराज का जीवनवृत्तांत विस्तारपूर्वक लिखा है जो आदि से अंत तक विचित्र घटनाओं से भरा हुआ है। समस्त ग्रन्थ का सारांश सरल हिन्दी भाषा में मूल ग्रन्थ के साथ ही साथ छपा है। इसके ६९ समय २२ खंडों में छपे हैं जिनका मूल्य २०) रु० है। डाकव्यय १॥।) है।

चन्द्रिका- मूल्य ।=)

लीला-कवि आनंदघन कृत । मूल्य =)

चरित्र-भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रजी की सचित्र जीवनी । मूल्य ॥)

ग्रंथावली-भूषण कवि के काव्य ॥।)

भाषा के सामयिक पत्रों का इतिहास ।)

नामा-जहांदार शाह और फ़र्रुखसियर की लड़ाई का वर्णन । मूल्य ।॥)

लोचनादर्श- मूल्य ≡)

लोचना- मूल्य =)

प्रताप-स्वर्गीय बाबू राधाकृष्णदास जी लिखित हिन्दी का सर्वोत्तम नाटक । मूल्य ॥)

राधाकृष्णदास-जीवन चरित्र । ॥)

युवती योग्यता-प्राचीन भारत की अनेक योग्य और कलाकुशल स्त्रियों के मनोरंजक विवरण =)

यूरोपीयदर्शन-यूरप के दर्शनशास्त्र का इतिहास ॥)

राजविलास-महाराणा राजसिंह का इतिहास १)

राज्यप्रबंधशिक्षा-रियासत के प्रबंध में किन बातों का ध्यान रखना चाहिए इसका वर्णन ॥)

सौरीसुधार-प्रसूतिका गृह में किन किन बातों का ध्यान रखना चाहिए इसका वर्णन मूल्य ॥)

संक्षेप लेखप्रणाली-हिन्दी का शार्टहेण्ड ॥)

हम्मीर रासो-वीर हाड़ा हम्मीर और दिल्ली के बादशाह अलाउद्दीन का युद्ध वर्णन । १)

हरिश्चन्द्र-महाराज हरिश्चन्द्र का चरित्र । =)

सिंधदेश का इतिहास- मूल्य ।)

दादू दयाल की बानी- मूल्य ॥।)

दादूदयाल के शब्द ॥)

हिन्दी लेक्चर -)

यूनान का इतिहास ॥।)

स्त्रियों के रोग १)

भगवद्गीता (हिन्दी अनुवाद) ।-)

आर्ष प्राकृत व्याकरण ।)

छत्रप्रकाश-लाल कवि कृत ॥।)

सुघड़दर्जिन-सिलाई और कटाई का सचित्र वर्णन ॥)

सत्यहरिश्चन्द्र-(भारतेन्दु रचित) मूल्य =)॥

भारतदुर्दशा ,, -)।

बोपदेव का जीवनचरित्र और समय =)

शेख मोहम्मद बाबा का जीवनचरित्र -)

लेखक और नागरी लेखक =)

आयुर्वेद निदान समीक्षा =)

भाषा-समस्त भाषाओं का संक्षिप्त विवरण ≡)॥

होरेशियस और मनुष्य की सात अवस्थाएं =)

भर्तृहरि निर्वेद नाटक ।)

ललित शिक्षावली-छोटी छोटी कहानियाँ ।)

मिलने का पता—मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनोरंजन पुस्तकमाला ।

अर्थात्

हिंदी के सौ उत्तम उत्तम ग्रंथों की पुस्तकावली ।

अब तक निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

१ आदर्श-जीवन—लेखक रामचंद्र शुक्ल ।
२ आत्मोद्धार—लेखक रामचंद्र वर्म्मा ।
३ गुरु गोविंदसिंह—लेखक वेणीप्रसाद ।
४ आदर्श हिंदू १ भाग—लेखक मेहता लज्जाराम शर्म्मा ।
५ ,, २ ,, ,,
६ ,, ३ ,, ,,
७ राणा जंगबहादुर—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा ।
८ भीष्म पितामह—लेखक चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्म्मा ।
९ जीवन के आनंद—लेखक गणपत जानकीराम दूबे बी. ए. ।
१० भौतिक-विज्ञान—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी ।
११ लालचीन—लेखक वृजनंदन सहाय ।
१२ कबीरवचनावली—संग्रहकर्त्ता अयोध्यासिंह उपाध्याय ।
१३ महादेव गोविंद रानडे—लेखक रामनारायण मिश्र बी. ए. ।
१४ बुद्धदेव—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा ।
१५ मितव्यय—लेखक रामचंद्र वर्म्मा ।
१६ सिक्खों का उत्थान और पतन—लेखक नंदकुमार देव शर्म्मा ।
१७ वीरमणि—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम. ए. और शुकदेवबिहारी मिश्र बी. ए. ।
१८ नेपोलियन बोनापार्ट—लेखक राधामोहन गोकुलजी ।
१९ शासनपद्धति—लेखक प्राणनाथ विद्यालंकार ।
२० हिंदुस्तान, पहला खंड—लेखक दयाचंद्र गोयलीय बी. ए. ।
२१ ,, ,, दूसरा खंड— ,, ,, ,,
२२ महर्षि सुकरात—लेखक वेणीप्रसाद ।
२३ ज्योतिर्विनोद—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी. ।
२४ आत्मशिक्षण—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम० ए० और शुकदेव बिहारी मिश्र बी० ए०
२५ सुंदरसार—संग्रहकर्ता पुरोहित हरिनारायण बी० ए० ।

प्रत्येक पुस्तक का मूल्य १) है. समस्त ग्रंथमाला के स्थायी ग्राहकों से ।।।) लिया जाता है। डा० अलग

मिलने का पता—

मंत्री—नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाग २३] [संख्या ३

नागरीप्रचारिणी पत्रिका।

सितम्बर १९१८

सम्पादक—वेणीप्रसाद।

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल। बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल॥
करहु विलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल। निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सबको मूल॥
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार। सब देशन सो लै करहु, भाषा माँहि प्रचार॥
फैलित करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न। राजकाज दरबार में, फैलावहु यह रत्न॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र

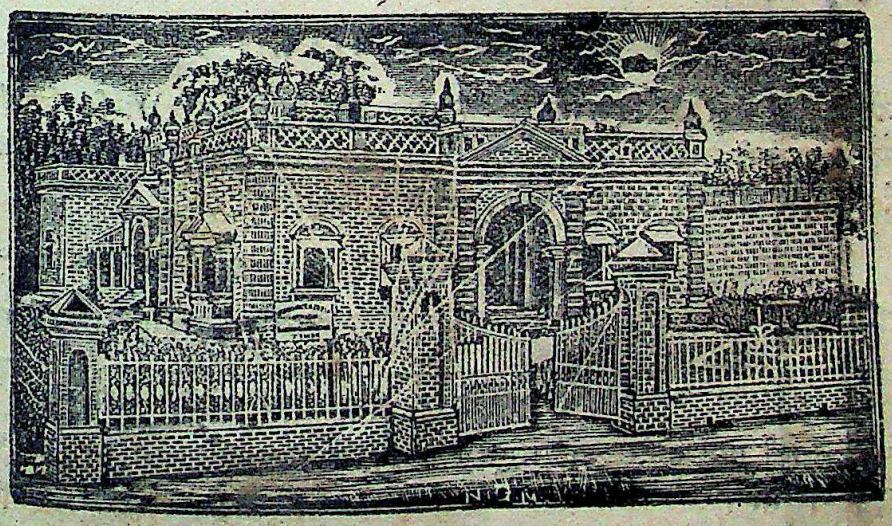

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित।

गणपति कृष्ण गुर्जर द्वारा श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस, काशी में मुद्रित।

वार्षिक मूल्य १॥) प्रति संख्या =)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय सूची ।

१—शिक्षा क्यों आवश्यक है ४९
२—महाराज प्रतापादित्य ५८
३—मुंशी देवी प्रसाद का दान ६७
४—मध्यप्रदेश से सभा की सहायता ... ६८
५—सभा का कार्य्य-विवरण ६९

मुफ्त ! मुफ्त !! मुफ्त !!!

धन्वन्तरी ।

यह आयुर्वेदीय मासिक पत्र योग्य वैद्य, डाक्टर और हकीमों को बिना मूल्य भेजा जाता है, सर्व साधारण को नहीं । मैनेजर, धन्वन्तरी, विजयगढ़, अलीगढ़ ।

पदक और पुरस्कार ।

सभा द्वारा उत्तमोत्तम विषयों पर लेख लिखने के लिये प्रति वर्ष स्वर्ण और रजत पदक दिए जाते हैं । सन् १९१८ में इनके लिये निम्नलिखित विषय नियत हैं—

छन्नूलाल स्वर्ण पदक—नगरों का निर्माण ।

राधाकृष्णदास रजत पदक—प्राचीन भारतवर्ष की शासन प्रणाली ।

रेडिचे रजत पदक—मनुष्य का भोजन ।

इन विषयों पर लेख सभा में ३१ दिसम्बर १९१८ के पूर्व आजाने चाहिएँ ।

मेहता जोधसिंह पुरस्कार ।

१ जनवरी १९१७ से ३१ दिसम्बर १९१९ तक प्रकाशित होने वाली हिन्दी की पुस्तकों में जो सर्वोत्तम समझी जायगी उसके रचयिता को २००) रु० का यह पुरस्कार दिया जायगा । इसके लिये जो पुस्तकें सभा में आवेंगी उन्हीं पर विचार किया जायगा ।

हरिहरनाथ बी० ए०
मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी ।

काश्मीरी शुद्ध शिलाजीत, कमजोरी, प्रमेह, स्वप्नदोष, इत्यादि की सर्वोत्तम औषधि ॥), पवित्र केसर १॥), असली कस्तूरी ३५), असली सुर्मा ममीरा ३), अंगूरी हींग ५), सुगंधित स्याह जीरा ३), फूल बनफशा ३॥) पवित्र धूप २), स्वच्छ शहद १।) सेर । काश्मीर स्टोर्स, श्रीनगर नं० १७० ।

हिन्दी शब्दसागर ।

हिन्दी भाषा का सर्वाङ्गपूर्ण सुप्रसिद्ध शब्दकोश जिसकी प्रशंसा बड़े बड़े दिग्गज विद्वानों ने की है । १५ अंक छप चुके हैं । प्रत्येक अंक का मूल्य १) रु० ।

मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा,
बनारस सिटी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

भाग २३ } सितंबर १९१८ । { संख्या ३

शिक्षा क्यों आवश्यक है ?

(ले० पं० प्राणनाथ विद्यालंकार ।)

[पूर्व प्रकाशितान्तर]

भारत के सरकारी स्कूलों में दिन पर दिन अधिक विद्यार्थी पढ़ने जाते हैं। इससे बहुत से विद्वान यह परिणाम निकालते हैं कि जनता को सरकारी शिक्षा की माँग है। परंतु हमारी सम्मति उन विद्वानों से कुछ भिन्न है। शिक्षा की माँग और डिग्री की माँग इन दोनों बातों में बड़ा अन्तर है। सरकारी शिक्षा में कोई ऐसा सौंदर्य नहीं है जिस पर भारतीय जनता कुछ भी टूटे। सरकार जो कुछ सिखाती है वह इतना थोड़ा और अपूर्ण है कि उसको शिक्षा ही नहीं कहा जा सकता। भारतीय जनता दिन पर दिन यदि सरकारी स्कूलों में टूट रही है तो वह उसकी डिग्री है और उस डिग्री के साथ जुड़ा हुआ सरकार का पक्षपात है। सरकार यदि न्याय पर चलती और अपने यहाँ योग्यता की दृष्टि से लोगों को नौकरी देती, न कि डिग्री की दृष्टि से, तो भारतियों का सामाजिक जीवन सर्वथा बदल जाता। उन पुराने शिल्पियों तथा चित्रण व्यवसायियों की संतानें आज सरकारी शिल्प शालाओं तथा चित्रशालाओं में प्रोफेसर के पद पर होतीं और सरकारी डिग्रीप्राप्त एम० ए० उनके नीचे काम करते होते। इस सार्वजनिक स्पर्धा से भारतीय शिल्प तथा चित्रणकला में जीवन आ जाता और जो जितनी योग्यता उपलब्ध करता वह उतना ही सरकार का कृपापात्र होता।

योग्यता की परीक्षा में भाषा के प्रश्न को सर-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार को सर्वथा ही उड़ा देना चाहिए। आंग्ल भाषा चाहे किसी को आती हो चाहे न आती हो यदि वह किसी कार्य में योग्यतम हो तो उसको अधिक से अधिक तनख्वाह मिलनी चाहिए। यदि कोई शिल्पी संगमर्मर के पत्थर को काटकर एक छोटा सा अत्यंत सुंदर तथा अद्भुत ताज महल बनाता है तो क्यों न उसको भी शिल्पशाला में एक प्रोफेसर का पद मिलना चाहिए और उसको भी वही ४०० वा ५०० की तनखाह मिलनी चाहिए। न्याय तथा देश का हित तो यही उचित ठहराता है। सरकार को योग्यता का मान करना चाहिए न कि डिग्री का। भारतीय शिल्प, चित्रणकला तथा कलाकौशल का समुत्थान तब तक असंभव है जबतक सरकार डिग्री का मान छोड़ कर योग्यता का मान न करेगी। सरकार के उपरिलिखित शिक्षा संबंधी एकाधिकार तथा पक्षपात ने भारत को नुकसान पहुँचाया है। आश्चर्य्य से कहना पड़ता है कि अभी तक देश-हितैषियों का इस ओर ध्यान ही नहीं गया है।

अभी तक वैद्यक में सरकारी डिग्री का प्रवेश नहीं हुआ है इसीसे बंगाल में वैद्यक अभी तक जीवित जाग्रत है। वैद्यक में सरजरी का काम अभी तक नहीं है। इसी खातिर कई स्थानों पर भारतीय वैद्यों को सरकारी डाक्टरों के सम्मुख नीचा देखना पड़ जाता है। दवाइयों की दृष्टि से डाक्टरी दवाइयाँ वैद्यक का मुकाबला नहीं कर सकती हैं। भारतीय वैद्यक में कुछ अपूर्व गुण है यह कलकत्ते के वैद्यों की आमदनी ही सूचित कर रही है। वैद्यक पर भी अब सरकारी शिक्षा का डिग्री रूपी भयंकर वज्र गिरनेवाला है। जिस दिन यह वज्र पड़ा उसी दिन से भारत में वैद्यक का अधःपतन प्रारंभ हो जायगा और वैद्यक के ग्रंथ आलमारियों में ही शोभा दिया करेंगे। लोग रसों का बनाना भूल जायँगे और समय आवेगा जब कि रसों का निर्णय भी एक अज्ञात तथा अद्भुत कार्य का रूप धारण कर लेगा।

सरकारी डिग्री में एक विचित्र गुण है। जिस ओर इसका झुकाव होगा उसी ओर तहस नहस प्रारंभ हो जायगा। हमको अपरिचित वैद्यों की दवाइयों से मरना पसंद है परंतु हम यह नहीं चाहते कि उधर भी सरकारी डिग्रीरूपी वज्रपात हो जाय। सरकार को योग्यता के अनुसार नौकरी देनी चाहिए। सरकार का अपने कालिजों की डिग्री के अनुसार नौकरी का देना कभी भी उचित नहीं कहा जा सकता है। शिक्षा के इस एकाधिकार तथा पक्षपात से हमारा जातीय जीवन तथा हमारा प्राचीन शिल्प और साहित्य नष्ट हो गया है। अब वैद्यक के नष्ट होने की भी बारी आ गई है। हिंदू यूनिवर्सिटी को चार्टर प्राप्त करने की आवश्यकता ही क्या थी यदि सरकार का शिक्षा में एकाधिकार तथा डिग्रीरूपी पक्षपात न होता। भारतीय शिल्पी तथा चित्रकार व्यवसायियों को सरकार को इंग्लैंड के रुपये नहीं देने नहीं हैं। जब हमारे रुपयों से ही उनको तनखाहें बाँटनी हैं तो हमारी सम्मति के अनुसार ही योग्य योग्य व्यक्तियों को तनखाहें देनी चाहिएं। हमको यह अभीष्ट नहीं है कि सरकार कभी भी किसी व्यक्ति को अपनी डिग्री देख कर के तनखाहें देवे तथा ऊँचे ऊँचे पदों पर नियत करे। जो योग्य होवे उसी का अधिक मान होना चाहिए चाहे वह आंग्ल भाषा जानता हो चाहे न जानता हो।

यह पहले लिखा जा चुका है कि सरकारी शिक्षा अपूर्ण तथा निरर्थक है। यहाँ पर हमारा जो कुछ लिखना है वह यह है कि सरकारी शिक्षा हमारे जातीय जीवन को बिगाड़नेवाली है। शिक्षा देने में सरकार का उद्देश्य चाहे कितना ही उच्च क्यों न हो हम जो कुछ लिख रहे हैं वह सरकारी शिक्षा के परिणाम पर लिख रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये ऐसे स्पष्ट हैं जैसे कि दो और दो चार। कारी शिक्षा की अत्यंत स्पष्ट निम्नलिखित यां हैं—

(१) पहली हानि यह है कि थोड़ी सी ता पाने पर भी ग्रामीणों में अपने प्राचीन कुल परागत पेशों से घृणा हो जाती है। वह किसी नौजी, अपपादक के अकल के पेशे से जीना हते हैं और उत्पादक काम छोड़ देते हैं। त के देशी व्यवसायों के नाश के कारणों में शिक्षा का प्रचार भी एक कारण हुआ है होगा।

(२) दूसरी तरफ शिक्षित जन चमक दमक टीपटाप से अधिक प्रेम दखाने लगते और स्वदेशीय पदार्थों के बदले विदेशीय र्थों का प्रयोग करने लगते हैं। इस प्रकार तरफ स्वदेशीय व्यवसाय द्वारा उत्पत्ति बन्द ती है, दूसरी तरफ स्वदेशीय पदार्थों की मांग ती है। बत्ती दोनों तरफ से जलती है फिर का नाश क्यों न हो ?

अब तक स्वदेशीय मोटे वस्त्रों के निर्माता ता क्रेता शिक्षितों की अपेक्षा अशिक्षित अधिक विशेषतः अशिक्षित स्त्रियाँ हैं, जिन्होंने व्यवसायों को अब तक नष्ट होने से याया है।

(३) तीसरी हानि यह है कि शिक्षित पुरुष नी आय के अनुपात से अधिक खर्च करता है, कि उसकी आय भी अनुत्पादक पेशों से होती। इसके दो परिणाम होते हैं, (क) एक तो जो कृषि और शिल्प में लगती वह व्यर्थ खर्च , और (ख) दूसरे, देश से धन का बहिर्गमन (Economic drain) बढ़ जाता है, क्योंकि ता हमारे अंदर ऐसी वस्तुओं की आवश्यकता ती है जो विदेश से आती हैं।

(४) चौथी और सब से बड़ी हानि यह है कि परागत पेशों के साथ साथ परंपरागत मानसिक संपत्ति को भी शिक्षित लोग छोड़ रहे हैं। अशिक्षित लोगों को क्रमागत कथाओं और कहावतों के रूप में जो आत्मिक आदर्श प्राप्त होते हैं, भद्रुक्तियों वा कारिकाओं के रूप में जो कृषि आदि का ज्ञान मिलता है और छोटे छोटे सूत्रों के द्वारा उन्हें जो नाना प्रकार की दवाइयों का ज्ञान होता है—यह सारी जातीय जायदाद शिक्षित लोग गँवाते जाते हैं। प्राचीन देवियां प्रायः सब रोगों के इलाज जाना करती थीं, लेकिन नवशिक्षित सब कुछ भूल गई हैं। इसी प्रकार और अनेक उदाहरण मिलेंगे।

३—शिक्षा की आवश्यकता।

पूर्व प्रकरणों में यह दिखाया जा चुका है कि भारतीय कृषकों को शिक्षा की मांग नहीं है, क्योंकि कृषि में लगान के अधिक होने से अधिक उपज तथा कृषि उन्नति की ओर उनकी प्रकृति नहीं है। शिल्प तथा व्यवसाय में लाभ के न होने से पहलेही कारीगरों ने उन कामों को छोड़ कर कृषि में प्रवेश किया है। सारांश यह है कि शिक्षा से आर्थिक उन्नति तथा समृद्धि की आशा करना वृथा है। इतना होने पर भी एक बात यहां पर भुलाई नहीं जा सकती है। पूर्व प्रकरण में लिखा जा चुका है कि शिल्प तथा चित्रण के व्यवसाय के अधःपतन का मुख्य कारण विद्यालयों तथा महाविद्यालयों की कुशिक्षा है और उस कुशिक्षा से प्रभावित हो करके ही जनता स्वदेशीय शिल्प तथा चित्रणकला से घृणा करने लगी है। यदि किसी प्रकार से विद्यालयों तथा महाविद्यालयों में ऐसी पुस्तकों का (जो कि जातीय वस्तुओं के प्रति घृणा उत्पन्न करती हों) पढ़ाना बंद कर दिया जाय तो बहुत ही उत्तम होवे। हिंदी तथा अंगरेजी के पत्र और देशहितकारी संस्थाएँ भी इस काम को अपने हाथ में ले लें तो बहुत ही अच्छा होवे जिसमें स्थान स्थान पर शिल्प तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्रणकला के विद्यालय खुल जावें जो कि उसी प्रकार की शिक्षा देवें। परंतु इस कार्य में कहां तक सफलता होगी इसका कहना कठिन है। इसका कारण यह है कि उच्च राज्याधिकारियों की सम्मतियों का भी जनता पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। यदि वे लोग स्वदेशीय कार्यों से घृणा करते रहेंगे तो जनता के धनाढ्य तथा छोटे छोटे राज्यकर्मचारी सदा उन्हीं के पीछे चलते हुए स्वदेशीय वस्तुओं की ओर कम प्रेम करेंगे। इन सब कठिनाइयों के होते हुए भी शिल्प तथा चित्रणकला के प्रचार को दिन रात करते रहना चाहिए। यदि इस शिक्षा का वर्तमान काल में प्रभाव कुछ कम भी पड़ा तब भी अनुकूल समय के मिलते ही वह अपना पूरा प्रभाव प्रगट करेगी और उस समय भारत को ऐसी शिक्षा के प्रचार की कुछ भी चिंता न करनी पड़ेगी। कृषक भूस्वामित्व विधि तथा स्थिर लगान विधि के भारत में प्रायः प्रचलित होने से कृषि उन्नति की ओर जनता का झुकाव नहीं है। अतः वर्तमान काल में जनता की ओर से कृषि शिक्षा की कुछ भी मांग नहीं है। परंतु यह कौन कह सकता है कि भविष्यत् में भी ऐसी शिक्षा की मांग न रहेगी। उस समय कृषि शिक्षा की हम को बहुत ही अधिक आवश्यकता होगी। अतः भविष्यत् को सोच कर उसका भी अभी से प्रबन्ध सोचना चाहिएँ तथा कृषि विद्यालय और महाविद्यालय खोलने चाहिएँ जिससे भविष्यत् में हमको कष्ट न हो सके और उन्नति करने में हमको देर न लग सके। यदि सरकार आज से ही कृषक भूस्वामित्व विधि या स्थिर लगान विधि प्रचलित कर देवे तो आज से ही कृषि शिक्षा की बड़ी भारी माँग जनता की ओर से हो सकती है।

सारांश यह है कि वर्त्तमान काल में कृषि तथा व्यवसाय की उन्नति के मौलिक तत्व भारत में लुप्त हैं। जब तक वे न विद्यमान हों तब तक कृषि तथा व्यवसाय में किसी प्रकार की भी उन्नति की आशा करना वृथा है। कृषि तथा व्यवसाय के मौलिक तत्वों को ले आना राज्य के हाथ में होता है। यही कारण है कि राज्य के अनुकूल होते ही साधारण से साधारण दरिद्र देशों ने बड़ी भारी समृद्धि को प्राप्त किया और वे व्यवसाय-प्रधान देश हो गए। भारत में अनुकूल शासनपद्धति के होते ही यह सहज हो जावेगा कि शासन कृषि तथा व्यवसाय की उन्नति के मौलिक तत्वों को उत्पन्न कर देवें। यह होते ही भारतीय जनता की ओर से कृषि शिक्षा तथा शिल्पशिक्षा आदि शिक्षाओं की बड़ी भारी माँग होगी। उस अवश्यंभाविनी घटना को सोच करके कि कृषि शिक्षा, शिल्प तथा कला कौशल आदि की शिक्षा के लिये विद्यालय तथा महाविद्यालयों को खोलने का यत्न करना चाहिए इतनी प्रस्तावना करके अब मैं "भारत के लिये भविष्यत् में किन किन शिक्षाओं की आवश्यकता होगी" इस पर कुछ लिखने का यत्न करूंगा। अगले प्रकरणों को पढ़ते हुए पाठकों को सदा यह ध्यान में रखना चाहिए कि भिन्न भिन्न शिक्षा संबंधी विद्यालयों को अभी से खोलना चाहिए तथा जहां तक हो सके सरकार पर दिन रात भारतीय सुधारक यह जोर देवें कि सरकार डिग्री के स्थान पर योग्यता को देख करके ही राजकीय उच्च उच्च पद दिया करे और योग्यता के देखने में किसी भाषा के संबंध का ध्यान कुछ भी न रखा जावे। यदि कोई शिल्पी निरक्षर होते हुए भी अपने काम में अति चतुर हो तो उसको अधिक पुरस्कार मिलना चाहिए और उसको राजकीय उच्च से उच्च (उसके कार्य से संबंध रखने वाले) स्थान प्राप्त करने का अवसर मिलना चाहिए। जिस देश में राजा योग्यता का मान करता है वहां जनता प्रत्येक प्रकार की विद्या में योग्यता प्राप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने का यत्न करती है और जिस देश में राजा ियां देखा करता है वहां जनता डिग्रियां अधिक का दिन पर दिन यत्न करती है—"यथा राजा ा प्रजा"।

आवश्यक शिक्षा।

कृषिशिक्षा।

वर्तमान कालीन भारतीय शिक्षा पद्धति का दोष यह है कि बालकों पर पुस्तक पढ़ने बहुत ही अधिक भार लाद दिया जाता है। लकों के पढ़ने में ही उनका हित समझा जाता । इसमें बहुत सी हानियां हैं। प्रथम तो प्रकार की पढ़ाई से विद्यार्थियों की बुद्धि नुरूप विकसित नहीं होने पाती है द्वितीय ार्थी गण प्राकृतिक सौन्दर्य को ग्रहण करने में था असमर्थ हो जाते हैं।

भारत की प्राचीन शिक्षण पद्धति इससे था विपरीत थी। उसमें पुस्तक पठन पर ना बल नहीं दिया जाता था जितना कि प्राकृ- सौन्दर्य तथा ईश्वरीय रहस्य को समझाने में। ी शिक्षण पद्धति का अन्तिम रूप हम प्राचीन ियों में देखते हैं जो कि प्रकृति तथा परमात्मा समझने में अपने जीवन का संपूर्ण समय ा देते थे।

परंतु आज कल सरकारी स्कूल आरंभ से तक पुस्तकों को ही पढ़ाते हैं। पुस्तकों स्मरण करने में ही सारा का सारा विद्यार्थी- न नष्ट कर दिया जाता है। जहां स्वास्थ्य ष हो जाता है वहां आचार की उन्नति भी होती है। ग्राम जीवन के प्रति द्वेष तथा घृणा हो जाना नवीन शिक्षापद्धति का ही है।

सब से अधिक शोक की बात तो यह है कि भारतीय विद्यार्थियों का पढ़ना लिखना उनके भावी जीवन की उन्नति में बहुत कम सहायता देता है। फ्राउड महाशय का कथन है कि "ज्ञान वही वास्तविक ज्ञान है जिसका कि मनुष्य प्रयोग कर सके। इसके बिना तो ज्ञान सर्वथा निरर्थक होता है। जिस प्रकार पत्थर पर पड़ा पानी किसी फल को उत्पन्न नहीं करता है उसी प्रकार उस मनुष्य के ज्ञान की दशा है जिसका कि मनुष्य के भावी जीवन में कोई प्रयोग न हो।" भारतियों के पढ़ने से ही क्या लाभ है यदि पढ़ाई से वे स्वावलंबी नहीं हो सकते ? सारांश यह है वर्तमान काल में हमको ऐसी शिक्षा की विशेष आवश्यकता है जिससे हम अपनी आर्थिक दशाओं को सुधार सकें।

भारतवर्ष में ३० करोड़ मनुष्य रहते हैं। इनमें से ७० प्रति शतक कृषि जीवन व्यतीत करते हैं। सब से अधिक आश्चर्य की बात है कि यहां कृषि शिक्षा का कोई समुचित प्रबन्ध नहीं है। संसार में एक भी देश ऐसा नहीं है जहां कि राज्य ने कृषि शिक्षा के लिये ऐसी उदासीनता प्रगट की हो जैसी कि भारतवर्ष ने। जर्मनी, फ्रांस, बेलजियम, इंग्लैंड आदि देशों में कृषि की अपेक्षा व्यवसाय में अधिक मनुष्य लगे हुए हैं परंतु वहां के राज्यों ने कृषि शिक्षा विस्तार के लिये जो यत्न किए हैं वे भारत की अपेक्षा कई गुणा अधिक हैं। दृष्टान्त के तौर पर एक मात्र उत्तरीय जर्मनी में ही १३ कृषि महाविद्यालय हैं। इनमें से बर्लिन राजकीय कृषिविद्यालय में प्रत्येक विद्यार्थी पर १०० पाउंड अर्थात् १५०० रुपयों का व्यय है। इसी प्रकार वर्टबर्ग जिले के भी इन कृषिविद्यालय को ५००० पाउंड की वार्षिक सहायता राज्य की ओर से दी जाती है। यही नहीं, प्रशिया में कृषि शिक्षा के अन्तर्मध्यवर्ती विद्यालयों (intermediate agricultural education) की संख्या १६ थी जिनमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगभग दो हजार विद्यार्थी पढ़ते थे तथा जिनका वार्षिक व्यय १८५७८ पाउंड था। प्राथमिक कृषि शिक्षा का प्रबंध भी जर्मनी में पर्य्याप्त है। एक मात्र प्रशिया में ही ३२ प्राथमिक कृषि विद्यालय थे। संपूर्ण जर्मन साम्राज्य में कृषि विद्यालयों को मुख्य राष्ट्र की ओर से ६६९८ पाउंड तथा प्रांतीय राष्ट्रों की ओर से १०३७६ पाउंड की सहायता मिलती है। प्रशिया में २७ ऐसे ऐसे स्थान हैं जिनमें ७० रसायणज्ञ तथा बहुत वनस्पति शास्त्रज्ञ कृषि उन्नति के लिये आविष्कारों के करने का यत्न करते हैं। इन स्थानों में राजा तथा प्रांतों की पर्य्याप्त सहायता है। बहुत सी ऐसी कृषि समितियां भी जर्मनी में है जिनको राजा की ओर से सहायता मिलती है। इन समितियों का काम योग्य योग्य व्यक्तियों द्वारा कृषिसम्बन्धी व्याख्यानों का दिलवाना है।

जर्मनी के सदृश ही फ्रांस में भी कृषि की ओर राष्ट्र का विशेष ध्यान है। १०७७८ पाउंड के लगभग फरासीसी राज्य कृषि संस्थाओं को सहायता के तौर पर देता है। विद्यार्थियों को फ्रांस में खेत दिए गए हैं जिनमें वे नवीन नवीन पदार्थ उत्पन्न करते हैं और जो कुछ उन्होंने पढ़ा है उसका पूर्ण तौर पर अभ्यास करते हैं।

डेनमार्क बहुत उन्नत देशों में तो गिना ही नहीं जाता है। परंतु आश्चर्य्य की बात है कि वहां पर भी राष्ट्र ११००० पाउंड की सहायता कृषि संस्थाओं को देता है। डेनमार्क का राजकीय कृषि विद्यालय अति प्रसिद्ध है। इसका संचालन भी एकमात्र राज्य के ही धन पर होता है।

हालैंड तथा बेल्जियम अत्यन्त छोटे छोटे राष्ट्र हैं। उनमें भी दो कृशि महाविद्यालय हैं। बेल्जियम में कृशि महाविद्यालय के प्रत्येक विद्यार्थी पर ६० पाउंड वार्षिक व्यय है और हालैण्ड में ५३८ पाउंड हैं।

परंतु भारत की अवस्था विचित्र है। तीस करोड़ आबादी और कृषिप्रधान देश होने पर भी यहां कृषि शिक्षा के लिये राज्य की ९००,००० रुपये की वार्षिक सहायता दी जाती है। इसके द्वारा कृषि संबंधी जो शिक्षा होती भी है वह भी नाम मात्र ही है। १९०२ में भारत में ४ कृषि विद्यालय थे जिनमें २११ विद्यार्थी पढ़ते थे परंतु १९१२ में संपूर्ण भारतमें १ कृषि विद्यालय रह गया और उसमें ११ ही पढ़नेवाले रह गए। यह संख्या सबको अच्छी तरह ध्यान में रख लेनी चाहिए। तीस करोड़ जन संख्यावाले देश में एक कृषि विद्यालय और ११ विद्यार्थी, क्या ही शोकजनक घटना है। कृषि महाविद्यालयों में अवश्यमेव विद्यार्थियों की कुछ संख्या बढ़ी है। १९०२ में जहां ३ कृषि महाविद्यालय में ७० विद्यार्थी थे वहां १९१२ में उसी ही महाविद्यालय में २६७ विद्यार्थी पढ़ने के लिये आ गए थे। परंतु यह दाल में नमक के बराबर भी नहीं है। कहां भारतवर्ष और कहां २६७ कृषि विद्यार्थी। †

जापान भारत की अपेक्षा बहुत ही छोटा देश है। कृषि शिक्षा में जापानी राज्य १ करोड़ ५० लाख रुपये प्रति वर्ष खर्च करता है। परंतु भारतीय राज्य एकमात्र ९ लाख रुपये। कहां जापान में १८० लाख रुपये कृषि शिक्षा पर व्यय होते हैं और कहां भारत में एकमात्र ९ लाख रुपयों का व्यय। शोक! जापान की दृष्टि से यदि भारत में भी कृषि शिक्षा पर व्यय किया जाय तो कम से कम दो हजार लाख रुपये आंग्ल राज्य को व्यय करने चाहिएँ। परंतु जो कुछ हो रहा है वह पाठकों ने देख लिया है। *

अब प्रश्न केवल यही है कृषि शिक्षा में कृषि

‡ Moral and Material progress and Condition of India for 1911-12 P. 349.

*Sketches of Indian Economics by R. P. P. 315-327.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो कुछ व्यय कर रहा है उससे क्या सिद्धि हो सकती है। नहीं, क्योंकि प्रजा हित मुख्यतः इसमें अधिक है कि उनको छीनी गई भूमियां लौटा दी जायँ और लगान के स्थान पर इनकमटैक्स आदि योरोपीय देशों के ही सदृश लिये जायँ। यह करके राज्य ने कृषि शिक्षा पर कुछ खर्च का क्यों यत्न किया है ? क्योंकि कृषि की का मुख्य आधार तो कृषकों का ही भूस्वा- होता है। इसके बिना प्रजा कभी भी नहीं हो सकती है। हमको जो कुछ र्य है वह यही है कि कृषि-उन्नति की आधा- मौलिक बातों को न करके गौण बातों के पर राज्य क्यों दौड़ता है ? यदि राज्य में उदारता न हो कि कृषकों को भूस्वामित्व दे तो कम से कम उसको अपना लगान के लिये स्थिर कर देना चाहिए। स्थिर न विधि से भी कृषि-उन्नति में कृषकों की कुछ प्रवृति हो जाती है। परंतु यह न करके को क्यों कृषि शिक्षा देने के लिये उद्योगी चाहिए। पहले ऊपर लिखी बातें करके तब देनी चाहिए।

ब्रिटिश राज्य ने बिचारी कृषक प्रजा पर भयं- सीमा तक लगान बढ़ा दिया है और बढ़ते लगान इस सीमा तक पहुंच गया है कि को उधार रुपया ले करके सरकार को न देना पड़ता है। इतने पर भी राज्य लगान बढ़ाने की तृष्णा अभी तक मिटी नहीं यदि यह तृष्णा मिट चुकी होती तो वह र लगान कभी का कर देता। परंतु ऐसा नहीं किया है इस से प्रतीत होता है लगान बढ़ाने की तृष्णा उसके हृदय में वैसी ही हुई है जैसी कि पहले थी।

ब्रिटिश राज्य अतिशय बुद्धिमान है। बुद्धि- तथा चतुरता में शायद् ही कोई राज्य इसका मुकाबला कर सकता हो। यदि कहीं दैवी घटना से इसका भारत के हित तथा स्वार्थों पर विशेष ध्यान होता तो भारत भी उन्नत देश बन गया होता। परंतु इसी बात के मुख्यतः न होने से भारत की अवस्था अच्छी नहीं है।

सरकार लगान बढ़ाना चाहती है परंतु कैसे बढ़ावे। भूमि की जितनी उपज है उतना लगान तो वह पहले से ही ले रही है। इस बिकट समस्या को हल करने की इच्छा से सर्कार का ध्यान कृषि शिक्षा की ओर गया है। अब वह चाहती है कि कृषि शिक्षा द्वारा भूमि की उपज बढ़ा करके किसी तरीके से लगान और भी अधिक बढ़ाया जावे। इसी स्थान पर भारतीय सुधारकों तथा सरकार के उद्देश्यों में अन्तर उपस्थित होता है। दोनों ही कृषि शिक्षा का भारत में प्रचार चाहते हैं परंतु दोनों ही का इस उच्च कार्य में उद्देश्य भिन्न भिन्न है।

भारतीय सुधारक कृषक प्रजा के कष्टों को देख करके उनके दूर करने में तत्पर हैं। उपज की न्यूनता को ही उनके दुःखों का कारण समझ कर वे कृषि शिक्षा के प्रचार पर अधिक बल दे रहे हैं। परन्तु सरकार उपज के कम होने से लगान बढ़ाने में असमर्थ है अतः वह चाहती है कि उपज बढ़ा कर किसी प्रकार से लगान बढ़ाने का यत्न करना चाहिए। इस अवस्था में क्या किया जाय ? यदि कृषि शिक्षा द्वारा भूमि की उपज बढ़ाई जाय तो भी कृषकों का कष्ट तथा दारिद्र दूर नहीं हो सकता है क्योंकि सरकार लगान बढ़ा देगी। जब तक लगान बढ़ाने की शक्ति सरकार के हाथ में होगी तब तक सब प्रकार के सुधार निष्फल होंगे। अतः लेखक की जो कुछ सम्मति है वह यह है कि भारतीय सुधारकों को लगान स्थिर कर देने पर कृषकों को भूस्वामित्व दिला देने का एक बड़ा भारी यत्न करना चाहिए और भारत के प्रत्येक निवासी को एकदम संगठित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो कर सरकार से प्रार्थना करनी चाहिए कि वह शीघ्र ही संपूर्ण भारत में कृषकों को भूस्वामित्व दे देवे, यदि ऐसा संभव न हो तो स्थिर लगान की विधि प्रचलित कर दे। इन सब राजनैतिक कार्यों के साथ साथ सामाजिक कार्यों को छोड़ना भी उचित नहीं है। जहां तक हो सके वहां तक प्रत्येक भारतवसी को कृषि शिक्षा के प्रचार के लिए यत्न करना चाहिए। जितनी शिक्षा देश में फैले उतना ही अच्छा है। कृषिशिक्षा द्वारा प्रत्येक कृषक भूमि की उपज बढ़ाने के साधनों को जान जायगा, जिस दिन स्थिर लगान विधि प्रचलित हुई या भूमि का स्वामित्व कृषकों को मिला, उसी दिन कृषक अपनी पूर्वगृहीत कृषि शिक्षा के बल पर एक एक खेत को बाग बना देवेंगे तथा अपनी अपनी भूमियों की उपज को दुगुनी तिगुनी करके समृद्ध हो आनन्द मंगल में दिन काटेंगे।

२-शिल्प तथा चित्रणकला की शिक्षा।

शिल्प तथा चित्रणकला की उन्नति का व्यावसायिक उन्नति के साथ अति घनिष्ट संबंध है। किसी जाति की सभ्यता की उन्नति का सूचक भी उसकी शिल्प तथा चित्रकला की उन्नति ही है। पिछले परिच्छेदों में अति विस्तार से दिखाया जा चुका है कि किस प्रकार भारतवर्ष अपनी स्वतंत्रता के दिनों में शिल्प तथा चित्रण कला में उन्नति की अन्तिम सीमा तक पहुंच गया था, और आंग्ल काल में उसकी इस विषय में अवनति कैसे हो गई।

शिल्प तथा चित्रणकला का प्रकृति के साथ अति घनिष्ट सम्बंध है। कविता के सदृश ही प्राकृतिक घटनाओं तथा सौन्दर्य्य को वह भी दिखाने का यत्न करती है। भाषा द्वारा प्राकृतिक दृश्यों का यथानुरूप वर्णन करना ही कविता है। उसी को पेंसिल तथा रंगों द्वारा किसी स्थान पर खींच देना चित्रकला—शिल्पकला, और अंग विक्षेप से प्रगट कर देने का नाम नर्तन कला है। इस प्रकार जिस बात को कविता प्रगट करती है उसी को चित्र शिल्प, नर्तन तथा संगीत आदि कलाएँ प्रत्यक्ष अरके दिखलाती हैं।

इन सभी कलाओं के लिये भारत चिर काल से प्रसिद्ध था। अभी तक उसमें बहुत कुछ अवशिष्ट है। इस विषय में आंग्ल हमसे सीख सकते हैं परन्तु हमको उनसे सीखने की कुछ आवश्यकता नहीं है। कला कौशल की बुद्धि जो भारतियों में है उसका सौवां भाग भी आंग्लों में नहीं है। आँग्ल सत्तात्मक शासनपद्धति के आविष्कर्ता हैं। राजनीति में उनका एक उच्च स्थान है, साम्राज्य का प्रबंध किस प्रकार किया जा सकता है इसके वे आचार्य हैं। इन बातों में हम उनसे बहुत कुछ सीख सकते हैं। प्राकृतिक सौन्दर्य को अनुभव करने तथा प्रगट करने में आंग्ल हम लोगों से बहुत ही पीछे हैं। लार्ड नेपियर ने एक बार बहुत ही उत्तम शब्दों में कहा था कि—"ऐ भारतियो, यदि किसी युरोपियन जाति के साथ तुम्हारा भाग्य जुड़ गया है जो कि राज्य प्रबंध, युद्ध चातुर्य तथा पदार्थ विज्ञान में तुमसे कुछ अधिक है तो यह न समझो कि सौन्दर्य तथा कल्पना के विषय में भी उसका एकाधिकार है।" (Fine Arts in India) इसी चित्रकला तथा शिल्पकला का जब भिन्न भिन्न व्यापारीय पदार्थों में प्रयोग किया गया तो उसने व्यावसायिक कौशल को जन्म दिया। भारत में काष्ठ चित्रण, भित्तिचित्रण, तथा हाथीदाँत का काम इसी के उदाहरण हैं। वस्त्रों पर प्रयुक्त हो कर के इसी ने कामदानी तथा कसीदे को जन्म दिया। लखनऊ, ढाका, बनारस, अमृतसर, लाहोर, अलवर, तथा रावलपिंडी आदि स्थानों में इसी चित्रकला तथा शिल्पकला के सैकड़ों रूपों को देखा जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे आभूषण, फूल तथा पीतल के बर्तन, ढाके मलमल तथा दुशाले आदि हमारे प्राचीन व्यावसायिक चातुर्य को प्रगट करते हैं। येही चीजें जिनके बल पर किन्हीं दिनों में हम सभ्य संसार के शिरोमणि थे। शिल्प तथा चित्रकला में हमारा अधःपतन अत्यंत शोकजनक है। इस अधःपतन से बच जाना किसी सीमा तक हमारे अपने हाथ में है। इसके लिये हमको विदेशीय भाषाओं की शिक्षा से अपने बालकों को बचाना चाहिए। पाश्चात्य सभ्यता के प्रति हम में जो अनुचित मान हो उसको हमें दूर करना चाहिए। इस पवित्र कार्य के लिये स्थान स्थान पर चित्रशालाओं तथा शिल्पशालाओं के खोलने की आवश्यकता है। इनका संचालन अत्यंत सावधानी से देशीय विधियों पर ही करना चाहिए। ऐसी शालाओं में सब से अधिक शिक्षा इस बात की होनी चाहिए कि विद्यार्थी इस बात को अच्छी तरह से समझ लेवें कि उनका प्राचीन कलाकौशल ही संसार में सब से उच्च है। यह बात भली समझाए कोई भी शिल्पकला तथा चित्रकला संबंधी महाविद्यालय अपने उद्देश्य के पूर्ण करने में सफल नहीं हो सकता। बौद्धकालीन चित्रों को आदर्श शिल्प का रूप दे कर शिल्पशालाओं में विद्यार्थियों को पढ़ाने का यत्न करना चाहिए। सारनाथ का सिंहस्तंभ, कुटली नदी तटवर्ती लोहस्तंभ, भिलसा स्तूप आदि शिल्पकला के नमूने हैं जिनको कि संपूर्ण विद्यार्थियों को एक बार देख लेना आवश्यक है।

चित्रणकला में मुसलमानी तथा बौद्ध चित्रों को आदर्श रख कर के विद्यार्थियों को पढ़ाने का यत्न करना चाहिए। इसी से भारतीय चित्रणकला का पूर्ण तौर पर उद्धार हो सकता है।

शिल्प तथा चित्रणकला के विद्यालयों तथा शिल्पशालयों के संचालन के लिये धन की आवश्यकता है। बिना धन के किसी प्रकार के भी शिक्षा संबंधी कार्य का करना अति कठिन है। आंग्ल राज्य का कर्त्तव्य है कि वह इस प्रकार के देशोपकारी कार्यों में धन द्वारा सहायता दे। भारत के सेठ साहूकार लोग भी जहां मन्दिरों के पुजारियों आदि को दान देते हैं वहां यदि वे इन विद्या मन्दिरों में भी दान देना प्रारंभ करें तो बहुत ही काम हो।

भारतियों में दान देने का अपूर्व गुण है। उनको देश की वास्तविक दशा का ज्ञान नहीं है। यदि उनको देश की ऊँची नीची सब बातें समझा दी जाँय तो करोड़ों रुपए ऐसे कार्यों के लिये प्राप्त हो सकते हैं।

इटली में चित्र तथा शिल्पकला के विशेष स्कूल हैं। वहां इनको एक विशेष विषय के रूप में पढ़ाने का यत्न किया जाता है। एक मात्र फ़्लारेंस में ही इटैलियन राज्य ऐसे विद्यालयों को ३००० फ्रैंक वार्षिक सहायता के तौर पर देता है। जापान ने भी इस ओर अब अपना सिर उठाया है। बहुत सा रुपया जापान राज्य का इसी कार्य में व्यय हो रहा है। शिल्प तथा चित्रणकला की उन्नति के लिये जापान में स्थान स्थान पर विद्यालय तथा महाविद्यालय खोले जा रहे हैं। यह सब क्यों? इसी लिये कि बिना शिल्प तथा चित्रकला के व्यावसायिक उन्नति नहीं हो सकती।

इस प्रकार स्पष्ट होगया कि हमको अब अपना ध्यान इस ओर करना चाहिए। यदि राज्य हमको सहायता न भी दे तब भी हमको इस ओर पग उठाने का यत्न करना चाहिए। यदि हम व्यावसायिक उन्नति करना चाहते हैं तो हमको सबसे पहले अपनी प्राचीन चित्र तथा शिल्पकला की रक्षा करने का यत्न करना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाराज प्रतापादित्य।

"प्रभुता पाय काहि मद नाहीं"

वा स्तव में महात्मा तुलसीदास जी का यह कथन अक्षरशः सत्य है। नाना प्रकार के पुराण इतिहास इसकी साक्षी हैं। आदि काल के हिरण्यकश्यपु आदि से लेकर आज के कैसर तक इसके उदाहरण विद्यमान हैं। यह भी शायद विश्वस्रष्टा का अटल नियम ही है कि एक वस्तु जब बढ़ते बढ़ते किसी सीमा तक पहुँच जाती है तो फिर उसका ह्रास होने लगता है अथवा उसका एक बार ही नाश या रूपांतर हो जाता है। वही अवस्था मनुष्यों की भी है। कोई मनुष्य जब ऐहिक उन्नति की सीमा तक पहुँच जाता है, तो फिर वह ऐसा अंधा हो जाता है कि अपने को ईश्वर का भी ईश्वर और ब्रह्मा का भी दादा समझने लगता है, और सब प्रकार के धार्म्मिक बंधनों को तोड़ कर स्वेच्छापूर्वक विचरण करने लगता है तथा यों अपने नाश का कारण होता है। इसके उदाहरणों की कमी नहीं? पर यहां उसी में का एक उदाहरण देकर इस सिद्धांत को और भी पुष्ट करने का अभिप्राय है।

यह प्रायः चारसौ वर्ष की पुरानी ऐतिहासिक घटना है। उस समय भारतवर्ष में मुग़लों के राज्य का आरंभ था। सम्राट् हुमायूँ मर चुका था और भारत के सिंहासन के लिए उसके पुत्रों में विवाद आरंभ हो गया था तथा कुछ दिनों तक दिल्ली का सिंहासन शून्य पड़ा रहा। प्रादेशिक शासकों की बन आई और जिसने जहां अवसर पाया वह स्वयं प्रभु बन बैठा। उस समय बंगदेश की राजधानी सुविख्यात गौड़ नगरी थी। वहां उन दिनों केवल एक किला और बंगाल बिहार के खजाना वसूल करने का एक कार्य्यालय मात्र था। इन सबका प्रबंध था नवाब सुलेमान गर्रानी नामक एक पठान के हाथ में था। यह पठान महाशय पहले तो एक सामान्य ही व्यक्ति थे, पर सम्राट् हुमायूं के पास किसी प्रकार से इनकी पहुँच हो गई और भाग्य-लक्ष्मी ने इन्हें बंगदेश का सूबेदार बना दिया। अब क्या था, अब तो इनकी पाँचों घी में हो गईं और नित्य इनका वैभव बढ़ने लगा। हुमायूं के मरने पर जब कुछ दिन अराजकता रही तो यह मौका उन्हें खूब ही अच्छा मिला और इस समय थोड़ी सी सेना इकट्ठी कर सुलेमान साहब ने उड़ीसा भी विजय कर लिया। अब तो वे बंगाल, बिहार और उड़ीसा तीनों प्रदेशों के स्वतंत्र शासन-कर्ता बन गए। दिल्ली में इस समय था ही कौन जिसे कर भेजते। अस्तु, कुछ दिनों तक इनकी खूब चली पर जब भाग्यवान अकबर अपने और भाइयों को परास्त कर स्वयं दिल्ली के सिंहासन पर आरूढ़ हुआ और बड़ी बुद्धिमत्ता से सारे राज्य का प्रबंध करने लगा तब तो सुलेमान गर्रानी साहब की भी अक्ल ठिकाने आ गई। नाना प्रकार की भेंट सामग्री लेकर वे दिल्ली में हाजिर हुए और बादशाह के प्रति अपनी अधीनता प्रगट करते हुए अत्यन्त विनयपूर्वक कहा कि "तावेदार इतने दिनों तक हुजूर ही के लिए बंगाल के काम का ठीक ठीक इंतजाम कर रहा था अब हुजूर की जो मर्जी।" अकबर ने संतुष्ट हो कर उसी को बंगाल का शासक कायम रक्खा। इस समय नवाब सुलेमान के अधीन रामचंद्र नामक एक बंगाली कायस्थ मुहर्रिर का काम करता था। इसके तीन पुत्र भवानंद, गुणानंद और शिवानंद थे। सब से कनिष्ठ शिवानंद बड़ा चतुर था और प्रायः नवाब साहब के यहां आया जाया करता तथा उनका बहुत सा कार्य्य यों ही कर दिया करता था। नवाब साहब भी इसे बहुत चाहते थे। अस्तु जब उनके दफ्तर के प्रधान कानूनगो की मृत्यु हो गई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने सम्मानसूचक खिलत प्रदान करके
नंद को इस कार्य्य पर नियुक्त कर दिया।
भी तन मन से इस कार्य्य को करने लगा,
से नवाब साहब बहुत संतुष्ट हुए और प्रायः
खिलत इत्यादि प्रदान कर इसकी सम्मान
करते रहे। अब तो दिनों दिन इस कायस्थ
वार का भाग्य चमकने लगा। इन दिनों
ब का छोटा लड़का दाऊद पाठशाला में फारशी
बी पढ़ने जाया करता था। चतुर शिवानंद
भी अपने दो भतीजों को जिनका नाम श्रीहरि
जानकीवल्लभ था उस पाठशाला में भेज दिया
समें नवाब के लड़के से इन बालकों की मित्रता
जाय और हुआ भी ऐसा ही। तीनों बालकों में
री मित्रता हो गई, यहां तक कि बातों बात में
द ने एक दिन इन दोनों से प्रतिज्ञा की कि
जिस राज कार्य्य में नियुक्त होउँगा उसका सह-
ी तुम्हें बनाउँगा और यदि संयोग से नवाब
तो अवश्य ही तुम दोनों को दीवान बना-
गा।" अस्तु हँसी दिल्लगी में इन लोगों में इस
ार की बातें प्रायः हुआ करती थीं। पर दैव
गति विचित्र है। कुछ दिन बाद नवाब सुले-
न परलोक सिधारे और उनका बड़ा लड़का
जिद सिंहासन पर बैठा पर नवाब के दामाद
न ने उसे मार कर स्वयं सिंहासन पर अधि-
र कर लिया। हुसैन शाह एक सप्ताह से
धिक राज्य नहीं कर पाए। नवाब सुलेमान
एक स्वामिभक्त सेनापति अमीर लोदी ने हुसैन
यमलोक भेज कर नबाब के कनिष्ठ पुत्र दाऊद
नवाब बना दिया और आप एक सच्चे नमक-
ाल सेवक की तरह उसकी आज्ञा के अधीन
ने लगा। दाऊद ने भी अपनी पहले की की हुई
ा को भुलाया नहीं और नवाब होते ही
ने बाल्य सखा श्रीहरि को "माहाराजा विक्र-
दित्य" की उपाधि से विभूषित कर प्रधान
मात्य बनाया और दूसरे जानकीवल्लभ को
"राजा वसंतराय" की पदवी प्रदान कर राज्य की सारी भूमि का मुख्य प्रबन्धकर्ता नियत किया। अब तो इन दोनों भाइयों का प्रताप बहुत बढ़ गया, क्योंकि नवाब साहब दाऊद खाँ इन्हीं की सलाह से सारा राज-कार्य्य करते थे। नवाब दाऊद खाँ का राज्य धर्म्म-राज्य था। शेर बकरी एक घाट पानी पीते थे। प्रजा बड़ी प्रसन्न थी और हाथ उठा उठा कर नवाब दाऊद खाँ को आशीर्वाद देती थी। दोनों भाइयों की सलाह से प्रति वर्ष नियमपूर्वक दिल्ली में राजकर भेजा जाता रहा और निर्विघ्न रूप से दाऊद खाँ वंग विहार और उड़ीसा का शासन करता रहा। सारी प्रजा वशीभूत और सैन्य सामंत सब सदा हाथ जोड़े खड़े रहते थे तथा दाऊद खाँ का प्रताप मध्याह्न सूर्य्य की तरह चमक रहा था। पर 'विनाश काले विपरीत बुद्धिः' अब प्रकृति के नियमानुसार उस सूर्य्य के ढ़लने के दिन आ गए और अपने ऐश्वर्य्य वैभव को देख कर नवाब के मन में अहंकार उत्पन्न हो गया और वह सोचने लगा कि "नाहक प्रति वर्ष दिल्ली में लाखों रुपए भेजने से क्या फायदा है, कुल इंतजाम तो मैं करता हूँ, बेफ़ायदा बादशाह को दंड भरने के बदले अगर इसी रुपए से मैं अपनी फ़ौजी ताकत बढ़ाता चलूँ तो कुछ दिनों में फिर बादशाही ताकत का कुछ भी खौफ बाकी नहीं रह जायगा और मैं खुद मुख़्तार बादशाह होकर अपने नाम की टकसाल जारी कर दूँगा।" अस्तु, इस मोह में पड़ कर कुमति दाऊद ने दिल्ली को कर भेजना एकदम बंद कर दिया और वह दिनों दिन नई नई सेना भरती करने और तोप गोले बारूद अस्त्र शस्त्र संग्रह करने लगा। युद्ध विग्रह में विशेष मग्न रहने के कारण शाहंशाह अकबर का ध्यान उधर नहीं गया और इधर आठ दस वर्षों में दाऊद ने प्रायः तीन लक्ष के सेना इकट्ठी कर ली और बहुत से अस्त्र शस्त्र भी जमा कर लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा गौड़ नगरी में एक बड़ा भारी राज्यसिंहासन बनवाने का भी आयोजन बड़ी धूम धाम से होने लगा। नवाब ने अपने नाम का सिक्का भी चला दिया तथा सब प्रकार से अपने को स्वतंत्र मान अपने राज्य के प्रांत में स्थान स्थान पर सेना-रख कर उन लोगों को सख्त ताकीद कर दी कि बड़ी सावधानी से सीमा की रक्षा पर तत्पर रहें और अपने कोषाध्यक्ष को स्पष्ट आज्ञा दे दी कि ये लोग जब जिस चीज की फरमाइश करें, फौरन पूरी की जाय।"

हमारे कायस्थ महाशय बड़े चतुर थे। कहावत है कि "कायस्थ से बढ़ कर चतुर और कोई नहीं"। महाराजा विक्रमादित्य उर्फ श्रीहरि के पिता भवानन्द ने देखा कि "अब नवाब की खैर नहीं। अब इसके दिन पूरे हो गए। अस्तु समय रहते ही अपना किनारा कर लेना चाहिए, नहीं तो नवाब के साथ हम लोग भी मारे जाँयगे" अस्तु पुत्र को एकान्त में बुला उन्होंने कहा "देखो बेटा, अब नवाब की खैर नहीं। भला शाहंशाह अकबर का सामना कौन कर सकता है, अस्तु समय रहते ही अपना ठौर ठिकाना कर रखना चाहिए। मेरी सलाह तो यह है कि अभी से कोई अच्छी जगह देख कर वहाँ एक नगर की स्थापना कर दी जाय और अपनी मूल्यवान सामग्री गुप्त रूप से वहाँ भेज कर तुम लोग निश्चित हो राजकार्य्य करते रहो, फिर मौका आने पर सब लोग वहीं चले चलेंगे।" अस्तु, अपने भाई भतीजों से सलाह कर एक दूरवर्ती उत्तम स्थान की खोज में उन्होंने अपने चर दौड़ा दिए और वंग देश के दक्षिण ओर वादावन नामक एक स्थान जो सुंदर वनके निकट था मनोनीत किया गया और थोड़े ही दिनों में चतुर शिरोमणि भवानंद ने वहाँ हाट बाट से युक्त राज्य-वासोपयोगी महल उद्यान बनवा सब तरह से नगर को सुशोभित कर दिया तथा नाव पर लादकर अपनी सारी मूल्यवान् सामग्री वे वहाँ ले गए और आप भी सपरिवार वहीं जा बसे। राजधानी में राज-कार्य्य के कारण केवल शिवानंद कानूनगो और महाराजा विक्रमादित्य (श्रीहरि) और राजा वसंत राय (जानकीवल्लभ) रह गए।

अंत को शहंशाह अकबर को भी खबर लग गई कि "दाऊद खां बंगाल में स्वतंत्र हो गया है और इधर दस वर्षों से एक कौड़ी खजाने में नहीं भेजता तथा इस बीच में जो लोग खजाना वसूल करने गए उनका कुछ पता ही नहीं लगा कि क्या हुए।" अस्तु अकबर ने अपने विख्यात सेनापति राजा टोडरमल्ल को दो लाख सेना के साथ दाऊद के दमनार्थ भेज दिया। दाऊद के दिल्ली के वकील ने पहले ही से उसे यह संबाद भेज दिया था। अस्तु वह सब तरह से तय्यार हो बैठा था। काशी तक आते आते ही राजा टोडरमल्ल की गति रुद्ध हो गई क्योंकि गंगा के उस पार दाऊद की सैकड़ों तोपें सज्जित थीं। जब जब मुगलों ने गंगा पार होने की चेष्टा की, बड़ी हानि के साथ उन्हें विफलमनोरथ होना पड़ा तथा सहस्र सैन्य से पूर्ण उनकी कई नौकाएँ दाऊद की तोपों द्वारा गंगागर्भ में विलीन कर दी गईं। यद्यपि राजा साहब ने गंगा पार होने की कई युक्तियाँ लड़ाई पर दाऊद की तीक्ष्ण दृष्टि से कोई युक्ति काम न आई। अस्तु विवश हो उन्होंने सारा समाचार दिल्ली लिख भेजा। बादशाह महा क्रोधित हुआ और कई सेनापतियों के साथ अपनी सारी सेना वंग देश की ओर भेज कर "दाऊद का कटा सिर लेकर तब आना" ऐसी आज्ञा देकर सब को रवाना किया और पीछे से स्वयं भी शिकार खेलता हुआ आगे बढ़ने लगा। दाऊद के वकील ने सारी खबर पहले ही भेज दी थी। अब तो नवाब साहब के हाथ पैर फूल गए। दोनों भाई विक्रमादित्य और वसंतराय को बुला कर उन्होंने कहा "अब तो बड़ी मुश्किल में जान पड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शाहंशह अपनी सारी फौज लेकर मुझ पर आ रहे हैं। खैर जो होगा देखा जायगा। इस समय मेरी अक्कल ठिकाने नहीं है। जैसा समझो तो। सारी सेना अकबर को रोकने के लिए भेज और तुम दोनों भाई मेरे पास ही रहो। हम पीछे रह कर फौज के रसद बारूद का तथा का प्रबंध करेंगे और राजधानी में मेरा जो धन रत्न है वह सब तुम अपने नए मकान भेज दो, फिर जब अवसर मिलेगा, मँगवा जायगा"

अस्तु नवाब ने अपनी सारी मूल्यवान दोनों-भाइयों के सपुर्द कर दी, यहां तक डर के मारे सारे नगरवासियों ने अपनी वान वस्तुएँ तक दोनों भाइयों के जिम्मे दीं। गौड़ राजधानी की सारी श्री लक्ष्मी द्वारा भावानंद निर्मित नवीन नगरी में जा और गौड़ राजधानी के श्री हरण कर लेने कारण इस नवीन नगर का नाम लोगों ने शोहर रख दिया जो अब तक प्रसिद्ध है।

शाहंशाह अपनी सेना सहित प्रयाग तक आया फिर अन्य लोगों के आगे बढ़ने की आज्ञा दान कर आप वहीं रह कर एक किला बनवाने जो गंगा जमुना के संगम पर अब तक वर्त- है। शाहंशाह की सेना एक वर्ष की चेष्टा भी गंगा पार न हो पाई और प्रायः निराश सी चली थी, पर दैववस एक दिन रात्रि को की सेना में किसी कारण से परस्पर झगड़ा खड़ा हुआ और मार काट होने लगी। का किसी को ख्याल ही नहीं रहा। अब तो शाही सेना को मुंह मांगी मुराद मिल गई और ही नदी पार हो उन्होंने दाऊद की सेना को भिन्न कर दिया। जब दाऊद ने यह समा- सुना तो उसके होश हवास जाते रहे। चीजें तो पहले ही से यशोहर भेजी जा चुकी थीं नवाबी महल सुनसान पड़े थे। अस्तु नव्वाब ने दोनों भाइयों से कहा कि "तुम लोग वेष बदल कर इस प्रदेश में रहो और मैं राजमहल की पहाड़ियों में जाकर छिपता हूं। तुम लोग मेरी खबर लेते रहना। जब तक सलाह नहीं होगी मैं नीचे नहीं उतरूंगा।" यह सलाह कर दाऊद तो कुछ द्रव्य और वर्ष भर की रसद लेकर राजमहल की पहाड़ीयों में जा छिपा और ये दोनों भाई वेष बदल कर अपनी नवीन नगरी की ओर चल पड़े।

बादशाही सेना जयोल्लास करती तथा मार्ग के ग्राम और नगरों को लूटती हुई आगे बढ़ने गली तथा गौड़ और राजमहल इत्यादि सब पर इन्होंने अधिकार कर लिया, पर राजधानी में एक चिड़िया का पूत भी दिखाई नहीं दिया। न तो दाऊद का पता न उसके कर्म्मचारी का कहीं नामोनि- शान, और न राज्य के सूबे का दफ्तर और न कोई कागज पत्तर। बड़े बड़े ऊंचे सून सान महल केवल भांय भांय कर रहे थे। इस समय की सेना के प्रधान सेनापति राजा टोडरमल्ल और राजा उमराव सिंह ने सोचा कि बिना सूबे के कागज पत्तर के खजाना वसूली वगैरः का प्रबंध क्योंकर होगा, अस्तु उन्होंने राजधानी में तथा सर्व्वत्र यह ढिंढोरा पिटवा दिया कि "यदि दाऊद के समय का कोई कर्म्मचारी आकर बकाया खजाना इत्यादि का सटीक विवरण सूचित करेगा तो उसका यथोचित समादर किया जायगा, उसे उपयुक्त पुरस्कार दिया जायगा तथा उसे सर्व प्रकार से अभय प्रदान किया जाता है।"

इस ढिंढोरे को सुनकर महाराजा विक्रमा- दित्य और राजा वसंतराय ने अपना दूत राजा टोडरमल्ल के पास भेजा जिससे वे बहुत प्रसन्न हुए और अभय देकर उन्होंने उन्हें अपने पास बुलाया। अस्तु जब यह भ्रातृद्वय बादशाही सेनापति के पास गए तो बड़े सम्मानित हुए और दाऊद का पता पूछने पर उन्होंने केवल यही कहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि "राजमहल में कहीं छिपे हैं यथार्थ पता हमें नहीं मालूम, पर तीनों सूबे का कागज पत्तर सब हमारे पास है। और भी जो बातें आवश्यक हैं आपको पीछे बतलावेंगे पहले आप अपनी प्रतिज्ञा पूरी कीजिए।" इस पर राजा टोडरमल्ल ने कहा कि "आप लोग नियमपूर्वक शहंशाह के पास दरखास्त भेजें, हम लोग सब मंजूर करवा देंगें। अस्तु तदानुसार इन्होंने यह दरखास्त की कि 'बंगदेश की गंगा नदी के पूर्व और ब्रह्मपुत्र के पश्चिम ओर यशोहर नाम की नवीन नगरी है उस पर हमलोगों का स्वतंत्र अधिकार ज्यों का त्यों कायम रहे और हमारे पितृव्य (चाचाजी) पूर्व्ववत तीनों सूबे के कानूनगो कायम रहें" राजा टोडरमल्ल के अनुमोदन से शहंशाह ने यह दरखास्त स्वीकार कर जमींदारी की सनद प्रदान कर दी और इन्हीं दोनों भाइयों को सब कामों का अध्यक्ष नियत कर शांति स्थापना कर के वे गौड़ राजधानी को लौट आए। पहले तो राजा वसंतराय को "महाराजा वसंतराय" बना कर यशोहर भेजा गया और फिर शिवानंद और महाराजा विक्रमादित्य (दोनों चचा भतीजा) खजाना वसूली इत्यादि का उपयुक्त प्रबंध करने लगे।

इधर पर्व्वतों में छिपा हुआ दाऊद अपने दुर्भाग्य के दिन बिता रहा था। कुछ दिनों में जब भोजन की सामग्री कम होगई तो अपने एक सेवक मासूम खां को दाऊद ने नीचे भेजा। नीचे आकर उसे सब समाचार विदित हुए। तदनुसार उसने दाऊद से जाकर कहा के "देखिए महाराजा विक्रमादित्य ने मुगल सेनापति से मेल कर के अपना सुभीता कर लिया और अब एक प्रकार से वह तीनों सूबों का मालिक बन बैठा है, आप यदि नीचे होते तो आपही से सुलहनामा होता और आप के नौकर इतने सिर न चढ़ जाते। अब भी यदि आप नीचे जाकर मुग़ल सेनापतियों से मेल की बात चलावें तो फिर आप का प्रताप ज्यों का त्यों होजायगा।"

दाऊद ने कहा "ऐसा क्योंकर हो सकता है, वे दोनों हिन्दू कर्म्मचारी मेरे बहुत विश्वास पात्र हैं, यदि ऐसा होना होता तो वे लोग जरूर मुझे खबर देते।" इस पर मासूम खां ने कहा कि "हुजूर इन काफिरों का विश्वास कर के धोखा खा रहे हैं। आप यौंही जंगल में छिपे पड़े रहेंगे और ये दोनों भाइ बंगाल की नव्वाबी करते रहेंगे। आपको खबर देने में उनको क्या लाभ है।" अस्तु दिन के फेर से दाऊद को मतिभ्रम हुआ और उसने मासूम खां को पुनः नीचे भेजा कि जाकर सब ठीक समाचार ले आवे। मासूम ने राजा उमराव सिंह के सेवकों द्वारा उनके कानों तक अपने स्वामी का समाचार पहुंचाया, जिसे सुन कर मुगल सेनापति मनोमन बड़े प्रसन्न हुए और दाऊद के सेवक को पुरस्कार देकर उन्होंने कहला भेजा कि "नव्वाब दाऊद खां फौरन मेरे पास चले आवें कोई खटका नहीं है।" मासूम खां ने खुशी खुशी जाकर दाऊद को यह समाचार दिया।

"जैसी होत होतव्यता तैसी उपजे बुद्धि" अस्तु दाऊद की भी नीचे जाना की प्रबल इच्छा हुई। यद्यपि उसकी बेगम ने रोका भी और कहा भी कि यदि नीचे उतरना आपके लिए उपयोगी होता तो अवश्य ही विक्रमादित्य खबर भेजता। आप एक सामान्य सेवक की बात पर भरोसा कर के अपने प्राण को जोखिम में न डालें, पर दाऊद ने किसी की एक न सुनी और वह मासूम खां के साथ नीचे चला आया। फिर क्या था मुगल सेनापति ने तत्क्षण पकड़ कर उसका सिर कटवा डाला और उसके सारे अनुचर और बेगमों को पिंजरे में बंद कर के दाऊद के सिर समेत बादशाह के निकट प्रयाग भेज दिया। महाराजा विक्रमादित्य उस समय अन्यत्र गए हुए थे। राजमहल में आकर जब उन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समाचार सुना तो बड़े दुःखी हुए, पर कर क्या सकते थे। केवल दाऊद का शरीर मुगल सेनापति से मांग कर उन्होंने यथा विहित सामाहित कर दिया और मुगल सेनापति की करतूत से बड़े खिन्न और शोकाकुल होकर सूबे के काम से इस्तीफा दे दिया। केवल उनके चाचा कानूनगो का काम करते रहे और यह गौड़ राजधानी से अपनी समस्त सामग्री लेकर अपनी राजधानी यशोहर में चले आए। अपनी नगरी में इन्होने बड़े समारोह से प्रवेश किया और लक्खों रुपए दीन दरिद्रों को बांटे। इन्होने अपने बड़ों की सलाह से दिल्ली दरबार में अपना एक वकील भी नियत कर दिया और उनके भाई राजा बसंतराय ने वंगदेश के अपने स्थान से ज्ञाति और स्वगोत्री कायस्थ परिवारों को उपयुक्त मासिक वृत्ति देकर अपनी नगरी में ला बसाया और उन्हें अपने पसंद मुताबिक भूमि प्रदान की जहां सुरम्य अट्टालिका बना कर वे लोग बड़े आनंद से निवास करने लगे। केवल यही नहीं अपनी राजधानी में कई देवालय और अतिथिशाला तथा पाठशाला भी महाराजा विक्रमादित्य ने स्थापित कर दीं जहां अतिथियों को सब तरह का आराम मिलता था और बालकों को शिक्षा मिलती थी। तात्पर्य्य यह कि सब प्रकार से यहां 'रामराज्य' व्याप रहा था। पर एक दुःख महाराज को निरंतर सता रहा था। उनके कोई पुत्र न था। बड़ी धूम धाम से पुत्रेष्टि यज्ञ करने के उपरांत उन्हे पुत्र हुआ, जिससे सब लोग परमानंदित हुए। पुत्र का नाम "राजा प्रतापादित्य" रखा गया।

प्रतापादित्य भी किशोर अवस्था तक सब विद्याओं में पारंगत होगया तथा उसका विवाह कर दिया गया। प्रतापादित्य बड़ा पराक्रमी था। हरदम अस्त्र शस्त्र और सैर शिकार ही में लगा था। एक क्षण भी इस युवा कुमार को चैन नहीं था। इसके मारे यशोहर के निकटस्थ बनों में पशु पक्षियों का रहना कठिन हो गया। यहां तक कि एक दिवस महाराज विक्रमादित्य स्नान संध्या कर रहे थे, वहीं उनके सम्मुख एक कुमार द्वारा हत होकर एक चील गिर पड़ी। महाराज, कुमार के इन उपद्रवों से तंग आ गए और भाई वसंतराय को निराले में बुला कर बोले "मुझे विदित होता है कि यह किसी दैत्य ने हमारे कुल में जन्म ग्रहण किया है और इसकी ऐसी निर्दयी वृत्ति देख कर मुझे यह भी भय है कि किसी दिन यह हम दोनों की हत्या कर स्वयं राज सिंहासन पर बैठ जायगा। इसलिये कंटक को अभी ही से दूर करना अच्छा है। कुछ उपाय हो तो बतलाओ। मेरी समझ में तो इसे मार डालना ही अच्छा है।' राजा बसंत राय भाई की इस भयंकर बात को सुन कर सहम गए और कहने लगे-"आप यह क्या कहते हैं! ऐसे शूरवीर कुमार की हत्या की जाय। असंभव है। यह कभी नहीं हो सकता।" महाराज चुप रहे। इधर ज्यों ज्यों प्रतापादित्य बड़ा होने लगा वह राज कार्य्य में मन माना हस्तक्षेप करने और अपने चाचा राजा बसंत राय से तर्क वितर्क करने लगा। अब तो महाराज बहुत डरे और अपने भाई से सलाह कर उन्होंने पुत्र को अपना प्रतिनिधि (वकील) बना कर दिल्ली के शाही दर्बार में भेज दिया। प्रतापादित्य ने समझा कि यह मुझे दूर करने के लिये सब चाचाजी की चतुराई है। मनो मन वह राजा बसंतराय के प्रति कुढ़ गया और उसने उनसे बदला लेने की ठान ली, इधर राजा वसंतराय कुमार को दिल्ली भेजने के कदापि पक्षपाती नहीं थे और महाराज के बहुत जिद करने पर उन्होंने इस कार्य्य में सम्मति दी थी तथा अपने पुत्र से भी अधिक कुमार पर स्नेह रखते थे। उधर प्रतापादित्य ने दिल्ली पहुंच कर शाहंशाह के आगे नजर भेंट की और वे नित्य दर्बार में आने जाने तथा बादशाह के पार्षदों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से मेल मिलाप बढ़ाने लगे। बादशाह अकबर को कविता का बहुत शौक़ था। एक दिन दर्बार में उनके दी हुई समस्या की पूर्ती राजा प्रतापादित्य ने इस खूबी से की कि शहंशाह बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने खिलत इत्यादि से उन्हें सम्मानित किया। उस दिन से राजा प्रतापादित्य का बादशाह से विशेष परिचय हुआ। अब तो प्रतापादित्य ने सोचा कि "यदि किसी प्रकार से पिता का राज्य अपने नाम लिखवा वहां पहुंच सकूँ तो बड़ा काम हो।" अस्तु मनोमन यह स्थिर करके उन्होंने पिता का जो पुराना वकील दिल्ली में था उसे वापस भेज दिया और वे आप ही उसकी जगह सब काम करने लगे तथा बादशाही खजाना बड़ी ताकीदी से मंगवा कर सब अपने पास रखने लगे। बादशाही खजाने में उन्होंने एक कौड़ी भी दाखिल नहीं की। तीन वर्ष तक यों ही चलता रहा। जब बादशाह को यह समाचार विदित हुआ तो उन्होंने प्रतापादित्य को बुला कर इसका कारण पूछा। प्रतापादित्य ने यह शठतापूर्ण उत्तर दिया कि "जहांपनाह, मुफस्सिल के खजाने वसूली का भार राजा बसंतराय पर है, वही दुष्टतापूर्वक कुछ भी नहीं भेज रहे हैं, मैं क्या कर सकता हूं।" अस्तु बादशाही आज्ञा हुई कि "फौरन विक्रमादित्य को हटा कर दूसरा शासक नियत किया जाय।" यह सुन कर प्रतापादित्य ने बादशाह से निवेदन किया कि यदि "हजूर मुझे यह राज्य भार देने की कृपा करें तो मैं किसी से कर्ज लेकर तीनों वर्ष का बकाया दे दूं"। बादशाह ने प्रतापादित्य की दरखास्त मंजूर कर ली और उन्हें यशोहर नगर के राज्य की सनद और खिलत इत्यादि प्रदान कर दी। प्रतापादित्य के पास रुपया सब जमा था ही। उन्होंने तीनों वर्ष का इकट्ठा खजाना दाखिल कर दिया। बादशाह ने परम संतुष्ट हो उसमें से पांच लाख रुपया प्रतापादित्य को पुरस्कार स्वरूप दिया। अब तो प्रतापादित्य बीस हजार सेना के साथ जयनाद करता हुआ चार महीने में बंग देश में आ पहुंचा। यहां आ कर उसने सीधे नगर में न जाकर शत्रु की तरह नगर घेर कर बाहर खेमा गाड़ दिया, पिता चाचा, भाई किसी से भी भेंट मुलाकात नहीं की।

जब महाराज विक्रमादित्य ने सुना कि कुमार अपने नाम की सनद लेकर आया है तो वे स्वयं अपने भाई राजा वसंतराय और कई पार्षदों के साथ लेकर उससे मिलने बाहर खेमे में गए। बड़ों को आया देख कर अब तो प्रतापादित्य की आंखें नीची हो गईं और आंखों से आंसू बहने लगे। अस्तु थोड़ी ही देर में पिता पुत्र में मिलाप हो गया और प्रतापादित्य ने सनद पिता को अर्पण कर दी। अस्तु पूर्ववत् सब राज काज चलने लगा। प्रतापादित्य नाम मात्र के राजा रहे। इससे वह मनोमन असंतुष्ट रहने लगे। पिता ने भी पुत्र का भाव लक्ष्य करके एक दिन उन्हें निराले में बुला कर कहा "देखो बेटा मैं तो अब बुड्ढा हो चला, अपने भाई के परिवार का पालन पोषण करता हूं और मेरी इच्छा है कि मेरे बाद तुम भी वैसाही करते रहो। मुझे पूछना है कि तुम क्या उन्हें अपने वशीभूत रख सकोगे।" यह सुन कर प्रतापादित्य ने कहा "आप अपने रहते हुए इसका कुछ प्रबंध कर जाइए तो अच्छा हो, पीछे न जाने क्या बखेड़ा खड़ा हो।" अस्तु भाई वसंतराय से भी सलाह कर उन्होंने उनको अपनी जमीदारी का छः आना भाग लिख दिया। धीरे धीरे भाइयों की संतान संख्या की वृद्धि होने लगी और परिवार में सैकड़ों आदमी हो गए। अस्तु पिता की आज्ञा और चाचा से सलाह लेकर धूमघाट नाम का एक दूसरा नगर प्रतापादित्य ने बसाया। इसी बीच में महाराजा विक्रमादित्य का स्वर्गवास हो गया। पुत्र को नवीन नगरी में प्रवेश करते नहीं देख पाए। उनकी मृत्यु के बाद राजा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संतराय ने एक करोड़ रुपया खर्च कर के बड़े
मारोह से अपने भतीजे महाराज प्रतापा-
त्य का राज्यभिषेक कराया और धूमधाट राज-
नी में महीनों तक ऐसी चहल पहल रही जैसी
सी बादशाह के राज्याभिषेक में भी न हुई
गी। महाराज प्रतापादित्य धूमघाट और
जा बसंतराय यशोहर में रहे। पर इससे
वाभिलाषी प्रतापादित्य का संतोष न हुआ
र उस समय बंग, विहार और उड़ीसा के
रह छोटे छोटे भूमिपति राजा थे सबको अपने
ाप से महाराजा प्रतापादित्य ने वशीभूत कर
या। ऐसा भी कहते हैं कि एक देवी के वरदान
प्रतापादित्य का भाग्य दिनोंदिन चमक चला
और इस देवी ने इनसे यह भी कह रखा था
"देखो जिस दिन तुम किसी स्त्री का अपमान
रोगे, मैं तुम्हें त्याग दूँगी"। इस देवी का मंदिर
शोहर में अब तक विद्यमान है। लोग कहते हैं कि
ले इनका मुँह दक्षिण की ओर था। जब से यह
जा से असंतुष्ट हुईं, पश्चिमाभिमुखी हो गईं
र अब तक वैसी ही हैं।

अब तो प्रतापादित्य का मन और भी बढ़ गया
र उन्होंने दिल्ली में कर भेजना भी बंद कर
या तथा पचीस सहस्र प्रबल सेना लेकर बाद-
ही नगर राजमहल पर उन्होंने चढ़ाई कर दी।
जमहल का सूबा भाग कर ढाके चला गया और
हां से लूट कर प्रतापादित्य दस करोड़ रुपया ले
या। यहां तक कि बढ़ते बढ़ते पटने तक महाराज
तापादित्य ने अधिकार कर लिया और केदारनाथ
ाय इत्यादि जमींदारों को मार कर अपने आदमियों
ो उन स्थानों में नियुक्त कर नियमित खजाना वसूल
रने लगे। इन दिनों महाराज प्रतापादित्य पर
सरों की भूमि पर अधिकार करने का ऐसा भूत
वार था कि इष्ट मित्र सगे संबंधी सब ही
ल हो उठे, यहां तक कि उनके दामाद बाकला
ा को भी एक दिन मशालची के वेष में
श्वसुर गृह से भागना पड़ा। पर तिस पर भी उन का राज्य प्रतापादित्य ने हस्तगत कर ही लिया और दामाद की इस भगेड़ में चाचा बसंतराय की भी साजिश बतला कर प्रतापादित्य उनकी जमींदारी डकारने की भी चिंता करने लगे, क्योंकि उनके मनमें रह रह कर यह बात उठती थी कि जब तक चाचाजी की जमींदारी पर कबजा नहीं होगा मैं बंगदेश का चक्रवर्ती राजा नहीं हो सकता। अस्तु रात दिन वह कोई न कोई छिद्रान्वेषण में तत्पर रहने लगे। राजा बसंतराय भी 'गंगाजल' * नाम का अस्त्र सर्वदा पास रखने लगे तथा उनके पुत्र गोबिंदराय भी अपने अनुचरों को विशेष सावधान करके बड़ी होशीयारी से रहने लगे। इन दिनों प्रतापादित्य को इनकी हत्या करने का कोई अवसर नहीं मिल सका और कुछ दिन तक वह चुप रहे पर घात लगाए हुए थे। सो वैसा अवसर भी आ पहुंचा। राजा बसंतराय के पिता का श्राद्ध था। उस दिन राजमहल में जाने की किसी को भी मनाई न थी, अस्तु उसी दिन राजा प्रतापादित्य कपड़े के भीतर एक अस्त्र छिपा कर वहां जा पहुंचे। राजा बसंतराय उस समय स्नान कर रहे थे। अनुचरों ने आकर खबर दी कि "महाराजा प्रतापादित्य दौड़े हुए आप के पास आ रहे हैं" उन्होंने नौकरों से कहा 'फौरन गंगा जल (अस्त्र) लाओ।" भृत्यों ने अस्त्र के बदले साधारण गंगाजल समझा और एक घड़ा गंगाजल ले आए। अब तो बसंतराय बड़े झुंझलाए पर कर ही क्या सकते थे। छटपटा कर रह गए। तब तक प्रतापादित्य ने पहुंच कर एक ही वार में उनका सिर काट डाला और उनके पुत्र गोबिंदराय की ओर झपटे। यद्यपि उसने प्रतापादित्य पर दो तीर चलाए पर उसका

* यह शायद बंदूक या रिवालवर के ढंग का कोई अस्त्र था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार खाली गया और वह तथा उसकी गर्भवती स्त्री भी असुर प्रतापादित्य के हाथ से मारी गई, तथा वह बसंतराय का मुंड लेकर धूमघाट वापस आए।

राजा वसंतराय के राघवराय इत्यादि सात पुत्र और थे। प्रतापादित्य ने इन सब को कैद-खाने में डाल दिया और आप बेखटके राज्य करने लगा। इस बीच में एक घटना और हो गई। इन सात राजकुमारों के एक प्रभुभक्त कर्मचारी ने दक्षिण बंगाल के इच्छा खां मसंदी की सहायता से उन सातों राजकुमारों को एक युक्ति से प्रतापादित्य के यहां से छुटकारा दिलाया। ये कुछ दिनों तक इच्छा खां के यहां ही रहे, फिर उसकी सलाह मान कर सबसे बड़े भाई राघव राय ने दिल्ली को पयान किया और वहां जाकर बादशाह के वजीर के लड़के को जो मौलवी साहब पढ़ाते थे, उन्हीं से आप भी पढ़ने लगा।

इधर प्रतापादित्य को जब सब समाचार मिले तब इच्छा खां पर वह बहुत नाराज हुए और उस पर चढ़ाई कर दी। अठारह दिन के घोर संग्राम के बाद इच्छा खां मारा गया और उसका राज्य हिजली प्रांत प्रतापादित्य के हाथ आया। अब तो महाराज प्रतापादित्य बंग, बिहार उड़ीसा के एकछत्री राजा हो गए और इनका दिमाग भी बहुत बढ़ गया। इस प्रांत के सभी बड़े बड़े जमींदार और छोटे छोटे राजा इन्हें अपना प्रभु मान चुके थे, राज्यमद ने अब इन्हें पूरा अंधा बना दिया और दिल्ली में भी इन्होंने कर इत्यादि भेजना बंद कर दिया और पटने तक मुख्य मुख्य स्थानों में सेना-निवास स्थापना कर, उन्हें यह आज्ञा दे दी कि "जब कोई बादशाही अफसर या सेना हमारे राज्य में आवे तो उसे राजधानी तक बराबर आने दो और वहां बराबर उसके पीछे पीछे आकर, राजधानी के निकट पहुंचाने पर दोनों ओर से आक्रमण कर उनका विध्वंस कर दो। इधर राघवराय ने क्रमशः वजीर से मुलाकात बढ़ाई और उनके द्वारा बादशाह के पास जाकर अपना दुःख निवेदन किया।

बादशाह को यह भी पता लगा कि प्रतापादित्य ने कई वर्षों से खजाना भेजना भी बंद कर दिया है। अस्तु, उसे दंड देनेके लिये पाँच हजार सेना के साथ आराम खां सिपहसलार भेजा गया, पर महाराज प्रतापादित्य की चतुराई और पूर्व रचित प्रबन्ध के अनुसार राजधानी तक आते आते खां साहब अपनी सेना सहित विध्वंस हो गए। बादशाह ने दूसरी सेना भेजी; उसकी भी यही दशा हुई। क्रमशः बाईस सेनापति भेजे गए और प्रतापादित्यरूपी राहू ने सबको ग्रास कर लिया। अन्त को प्रबल प्रतापी महाराजा मानसिंह भेजे गए। मानसिंह बड़े विचक्षण सेनापति थे। जब उन्होंने देखा कि प्रतापादित्य की पटनेवाली सेना उनके पीछे पीछे आ रही है तो यशोहर जाना छोड़कर वर्धवान में जा टिके। महाराजा प्रतापादित्य ने मानसिंह को तोहफे और भेंट देकर तथा एक किशोरी को अपनी कन्या प्रसिद्ध कर राजा मानसिंह के पुत्र के विवाहार्थ प्रदान कर दिया और यों उनसे मित्रता स्थापित कर ली। अस्तु मानसिंह योंही लौट गए और राह में काशी में उनकी मृत्यु हो गई। अब तो स्वयं वजीर साहब बादशाह की एक तिहाई सेना ले कर प्रतापादित्य पर चढ़ाई की और सात दिनों तक अविश्रांत युद्ध होने पर प्रतापादित्य का प्रधान सेनापति मारा गया। प्रतापादित्य का दिल इससे टूट गया और उन्होंने स्वयं बादशाही सेनापति के हाथ आत्मसमर्पण कर दिया। ऐसा भी कहते हैं कि स्वयं यशोहरेश्वरी देवी, उनकी कन्या होकर प्रतापादित्य के यहां रहती थी और किसी स्त्री का निर्य्यातन करने की उन्हें देवी ने मनाई कर दी थी। एक दिन किसी अपराध पर राजा ने अपनी दासी का स्तन कटवा डाला, उसने शाप दिया कि "राजन् शीघ्र ही तेरा नाश होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिन से राजा का वैभव नष्ट होने लगा और कुष्ठ-व्याधि भी हो गई थी। जिस दिन सेनापति हारा, भरे दरबार में महाराजा युद्धार्थ प्रस्तुत हो रहे थे, इसी बीच में कन्या ने आकर कहा "राजन्, अब मैं हूं"।

राजा अपनी कन्या को खुले सिर भरे दर्बार आते देख बड़े नाराज हुए और कन्या को "दूर" करके दरबार से अंतःपुर को निकलवा और महल में आकर रानी को बहुत डांटा जब रानी की जबानी मालुम हुआ कि "राज-यहीं उपस्थित थीं कदापि दर्बार में नहीं" तब तो राजा के विस्मय का ठिकाना न और शायद देवी जी ने मुझे त्याग दिया आशंका उनके मन में हुई तथा मंदिर जाकर देखा तो देवी का मुंह जो पहले पूर्व ओर था पश्चिम की ओर पाया। अब राजा को अपने दुर्भाग्य में कोई संदेह न रह और बादशाही सेनापति के हाथ उन्होंने समर्पण कर दिया। चाहे जो हो इसमें संदेह नहीं कि राजमद से अन्धे हो प्रबल प्रतापी सम्राट् को उन्होंने अपना शत्रु बना लिया कारण उनका सत्यानाश हुआ। बादशाही सेनापति ने उन्हें और रानियों को पिंजरे में बंद और राजधानी में लूट की आज्ञा दे दी। कहते हैं कि यहां की लूट से बादशाह को एक रुपये नगद और अगणित रत्न मणिरत्न भी हुए थे। प्रधान महारानी के द्वार की स्वयम् राय ने रक्षा की थी; इसलिये उधर कोई गया, बाकी की अन्य रानियाँ सबही पिंजरे बन्द कर ली गई थीं। दिल्ली जाते हुए राह में आदित्य की मृत्यु हो गई या उन्होंने आत्मघात लिया। जो हो उनका केवल शव दिल्ली पहुँचा। राघव राय को यशोहर का स्मशानवत् राज्य था। उन्होंने अपने सातों भाइयों को राज्य बांट दिया और अपने लिये थोड़े से ग्राम रख लिए। इनके वंशवाले अब तक यशोहर में जमींदार हैं। राजमद में अंधे होने का यही परिणाम है।

मुंशी देवीप्रसाद का दान।

महाशय,

गत जून मास के मध्य में सभा की आज्ञा से मैं जोधपुर के प्रसिद्ध इतिहास-लेखक तथा पुरातत्ववेत्ता मुंशी देवीप्रसाद जी से उनके दान के विषय में सब बातें निश्चित करने के लिये अजमेर गया था। मुंशी देवीप्रसाद जी ने बंबई बंक के सात हिस्से जिनका असली मूल्य ५००) प्रति हिस्से के हिसाब से ३५००) होता है और जिनका इस समय बाजार भाव १०५००) है तथा जिनकी आय प्रतिवर्ष ६००) के लगभग होती है सभाको इस लिये अर्पित किए हैं कि वह इनकी आय से तथा छपी पुस्तकों की बिक्री से प्रतिवर्ष हिंदी में ऐतिहासिक पुस्तकें प्रकाशित करे। मुंशी जी ने इस संबंध में दो दानपत्र लिखा है तथा इस कार्य के लिये जो नियम बनाए हैं वे यथासमय सभा द्वारा प्रकाशित होंगे। परंतु इस स्थान पर मैं मुंशी जी की उदारता और हिंदीहितकामना की प्रशंसा किए बिना नहीं रह सकता। मुंशी जी का उदाहरण अनुकरणीय है। आशा है मुंशी जी अपने अमूल्य पुस्तकालय की भी शीघ्र सुव्यवस्था करेंगे जिसमें वह उनके पीछे सदा बना रहे और उसमें हिंदी का हित-साधन निरंतर होता रहे। इस दान के सुचारु रूप से निश्चित तथा व्यवस्थित होने में राय बहादुर पंडित गौरीशंकर हीराचंद ओझा तथा पं० चंद्रधर जी गुलेरी ने अमूल्य सहायता दी है अतएव मैं अपनी तथा सभा की ओर से इन्हें अनेक धन्यवाद देता हूँ।

मुझे आशा है कि कुछ हिंदी-प्रेमियों की कृपा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा उनके उद्योग से काशी नागरी प्रचारिणी सभा को एक और बड़ा दान शीघ्र ही प्राप्त होगा। ऐसे दानों के होने तथा हिंदी प्रेम के ऐसे अच्छे प्रमाणों के मिलने से हमारी मातृ-भाषा का भविष्य अत्यंत चित्ताकर्षक तथा आशावर्धक दृष्टिगोचर होता है। ईश्वर माता के सपूतों का ध्यान इस ओर दिनों दिन अधिक करता जाय।

लखनऊ } भवदीय
१६-८-१८ } श्यामसुंदरदास

मध्यप्रदेश से सभा की सहायता।

महाशय,

गत जून मास में शारदाभवन पुस्तकालय के वार्षिकोत्सव पर मुझे जबलपुर जाने का अवसर प्राप्त हुआ था। उत्सव समाप्त होने पर पं० माधवराव सप्रे, माननीय पं० गोविंदलाल पुरोहित राय साहब पं० रघुबर प्रसाद द्विवेदी, माननीय व्यवहार रघुबीर सिंह जी, माननीय पं० मनोहर कृष्ण गोलवलक, पं० कामता प्रसाद गुरु, पं० सुखराम चौबे आदि महानुभावों की कृपा और उद्योग से सभा के लिये कुछ आर्थिक सहायता का संग्रह किया गया था। उस समय (१२२) रुपया नकद प्राप्त हुआ था। पीछे से पं० रघुबर प्रसाद जी द्विवेदी ने उद्योग करके और २२१॥) एकत्र करके सभा के पास भेज दिया था। जिन महानुभावों ने उस समय सभा की सहायता करने में उत्साह दिखाया था तथा इसके लिये उद्योग किया था उन्हें मैं अपनी तथा सभा की ओर से हृदय से धन्यवाद देता हूँ। जिन जिन महाशयों से सहायता प्राप्त हुई है उनकी नामावली नीचे दी जाती है—

१—श्रीयुत दीवान बहादुर खजानची बिहारी लाल जबलपुर १००)

२—श्रीयुत दीवान बहादुर सेठ वल्लभदास हनुमान लाल जबलपुर १०१)

३—श्रीयुत सेठ गोविन्द दास, गोविन्द भवन जबलपुर २००)

४—श्रीयुत राय बहादुर बंसी लाल आवीरचन्द मार्फत माननीय राय बहादुर पण्डित गोविन्द लाल पुरोहित जबलपुर २००)

५ माननीय व्योहार रघुवीर सिंह जी, साढिया कुंभा जबलपुर १००)

६—राजा रघुनाथ राव आबा साहब दीक्षितपुरा जबलपुर ५०)

७—पण्डित हनुमान प्रसाद मिश्र इन्स्पेक्टर आफ स्कूल जबलपुर ५०)

८—बाबू विजय बहादुर रायजादा, एक्स्ट्रा असिस्टेण्ट कमिश्नर जबलपुर ५०)

९—रा० ब० बाबू हीरालाल बी० ए० ऐक्स्ट्रा असिस्टेण्ट कमिश्नर जबलपुर १००)

१०—भाई हरिजी गोविंद जी, मार्फत सेठ दयाल भाई रानीलाल जबलपुर ७५)

११—पण्डित राधाकृष्ण एकाउण्टेण्ट बंगालवर्क इलाहाबाद ५)

१२—सेठ चमन लाल ठि० सेठ गोविन्द दास जबलपुर १)

१३—माननीय पण्डित मनोहर कृष्ण गोलवलकर वकील जबलपुर १५)

१४—बाबू ताराचन्द रिटायर्ड जज, गोल बाजार जबलपुर १०)

१५—बाबू भगवान दास, एक्स्ट्रा असिस्टेण्ट कमिश्नर जबलपुर ५)

१६—माननीय रायबहादुर पंडित विष्णुदत्त शुक्ल बी० ए० सिहोरा रोड जबलपुर ५०)

१७—श्रीयुत पंडित लज्जा शंकर झा, अध्यापक ट्रेनिङ्ग कालेज, जबलपुर १०)

१८—श्रीयुत बाबू किशोर, एक्स्ट्रा असिस्टेण्ट डाइरेक्टर कृषि विभाग जबलपुर ५)

१९—श्रीयुत पंडित दुर्गाप्रसाद तिवारी मालगुजार मालदारपुरा जबलपुर ५)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

-श्रीयुत पंडित लक्ष्मी प्रसाद पाठक मालदार-पुर जबलपुर ५)
-श्रीयुत बाबू कनछेदी लाल, वकील, जबलपुर १०)
-श्रीयुत सेठ रामचन्द्र जुहारमल, भाटगंज, जबलपुर २१)
-श्रीयुत सेठ भूरामल राम दयाल, भाटगंज, जबलपुर १५)
-श्रीयुत सेठ मोहन लाल हरगोविंद भाटगंज जबलपुर ५)
-श्रीयुत सेठ जमुनादास जी प्रागजी भाटगंज, जबलपुर २)
-श्रीयुत त्रिभुवन दास लाटगंज, जबलपुर ३)
-श्रीयुत सेठ मूलजी जगमल, मार्फत त्रिभुवन दास, भाटगंज जबलपुर २)
-श्रीयुत बाबू नत्थूलाल जी, हेडमास्टर, नुनहाई मिशन ब्रैंच स्कूल, जबलपुर १)
-श्रीयुत बाबू शारदा प्रसाद, तहसीलदार, गाडरवारा ज़ि० नरसिंहपुर ५)
-श्रीयुत पण्डित रामनाथ दुबे, गाडरवारा, ज़िला नरसिंहपुर ५)
-श्रीयुत बाबू कमत्ता प्रसाद, नायब तहसीलदार गाडरवारा ज़िला नरसिंहपुर २)
-श्रीयुत पण्डित सदाशिव तिवारी, गाडरवारा ज़िला नरसिंहपुर २)
-सेठ माणिकचंद बलदेव जी, गाडरवारा ज़िला नरसिंहपुर ५)
-श्रीयुत सेठ हरिजी देवजी गाडरवारा ज़िला नरसिंहपुर ३)
-श्रीयुत सेठ मानक उकेठा, गाडरवारा ज़िला नरसिंहपुर २)
-श्रीयुत सेठ रामरतन सुखदेव, गाडरवारा ज़िला नरसिंहपुर १)
-श्रीयुत सेठ हरनारायण राठी, गाडरवारा ज़िला नरसिंहपुर ७)
३८-श्रीयुत सेठ पुरुषोतम दास रावत, गाडरवारा ज़िला नरसिंहपुर ५)
३९-श्रीयुत सेठ ओंकार दास गाडरवारा ज़िला नरसिंहपुर ११॥।)
४०-श्री गोपाल राधा कृष्ण, भाटगंज, जबलपुर ५)
४१-श्री लुभाराम नाथूराम, गिथौनीगंज, जबलपुर ५)
४२-श्री बिहारीलाल रमईलाल, सराफ, मिलौनी-गंज जबलपुर २)
४३-रा० सा० चौधरी देवी प्रसाद जी, सुनरहाई, जबलपुर २५)
४४-ला० लक्ष्मीचंद जी, पुरानी बजाजी, जबलपुर ११)
४५-श्री महेशीलाल, दूकान, काशी प्रसाद जी सराफ मालदारपुरा, जबलपुर २५)

१३८३॥)

लखनऊ
१६-८-१८

भवदीय,
श्यामसुंदरदास।

सभा का कार्यविवरण।

(पूर्व प्रकाशितांतर)

१०—बाबू श्यामसुंदर दास जी के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ कि गुजराती भाषा में लिखी हुई जो कानूनी पुस्तकें सभा में हैं वे पण्डित कामता प्रसाद गुरु के पास कानूनी शब्दों का संग्रह करने के लिये भेज दी जांय।

११—निश्चय हुआ कि सभा के पुस्तकालय के लिये जैसी दो आल्मारियां बनवाई गई हैं वैसी ही दो और बनवा ली जांय, बंगला विश्व कोश की एक प्रति मंगवा ली जाय और ४ बड़ी लालटैनें भी मंगवा ली जांय।

१२—बाबू श्यामसुंदरदास जी के प्रस्ताव पर सर्व सम्मति से निश्चित हुआ कि १ जुलाई १९१८ से पण्डित रामचन्द्र शुक्ल का मासिक वेतन ७५) रु० कर दिया जाय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३—पंडित श्यामबिहारी मिश्र का १ जून १९१८ का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि बाबू देवनारायण मेहता को बाहर रहने पर कुछ दैनिक व्यय दिया जाय अथवा वेतन ४५) रु० से ५०) कर दिया जाय।

निश्चय हुआ कि १ जूलाई १९१८ से बाबू देव नारायण महता का वेतन ५०) कर दिया जाय।

१४—सेठ दामोदर दास रामचन्द का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने मितव्यय का गुजराती अनुवाद प्रकाशित करने की आज्ञा मांगी थी।

निश्चय हुआ कि उन्हें इसकी आज्ञा दी जाय।

१५—कानपुर के पं० मुरलीधर शर्म्माका पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था था कि सभा के ३ वर्षों के चंदे का ४॥) रु० जो उनके यहां बाकी है उसे वे धनाभाव से इस समय नहीं दे सकते।

निश्चय हुआ कि इस सम्बन्ध में नियमानुसार कार्य किया जाय।

१६—बाबू वंशीधर का ४ जून १९१८ का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि सोशल कांफरेंस, इण्डस्ट्रियल कांफरेंस तथा मादक निवारिणी कांफरेंस के सभापतियों के व्याख्यान जो कांग्रेस के साथ प्रतिवर्ष होते हैं उनके हिन्दी अनुवाद भी छप कर वितीर्ण होने और बिकने चाहिए।

निश्चय हुआ कि बाबू वंशीधर जी को लिखा जाय कि वे कृपापूर्वक इस संबंध में इन कांफरेंसों से पत्रव्यवहार करें।

१७—बाबू शिवप्रसाद गुप्त के ये प्रस्ताव उपस्थित किए गए कि पुस्तकालय से जो सज्जन पुस्तकें पढ़ने के लिये ले जांय उनसे ५) रु० जमा करवा लिया जाय और सभा के जो सभासद पुस्तकालय के किसी सहायक के आवेदनपत्र पर हस्ताक्षर करें वह उस सहायक की ली हुई पुस्तकों का उत्तरदाता रहे।

निश्चय हुआ कि ये प्रस्ताव आगामी अधिवेशन में उपस्थित किए जांय।

१८—पंडित कन्हैयालाल पुस्तकाध्यक्ष का प्रार्थनापत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि (क) गत वर्ष के बजेट में पुस्तकालय के कार्यकर्त्ताओं के लिये कुछ पुरस्कार रखा गया था पर वह उन्हें नहीं मिला (ख) उन्हें सप्ताह में एक दिन की छुट्टी दी जाया करे।

निश्चय हुआ कि (क) पुस्तकालय के निरीक्षक यदि उचित समझें तो उन्हें पुरस्कार दे सकते हैं (ख) प्रति सोमवार को पुस्तकालय बंद रहे पर समाचारपत्रों के लिये वाचनालय खुला रहा करे।

१९—बाबू रामचन्द्र वर्म्मा का ८ जून का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि जिस समय वे नागरी प्रचारिणी पत्रिका के सम्पादक थे उस समय उसमें उन्होंने मराठी के "सुभाषित आणि विनोद" नामक ग्रन्थ के एक प्रकरण का अनुवाद छापा था। अब वे इस अनुवाद को पुस्तकाकार छपवाना चाहते हैं अतः समिति उन्हें इसकी आज्ञा दे।

निश्चय हुआ कि इस अनुवाद को प्रकाशित करने की उन्हें आज्ञा दी जाय।

२०—लखनऊ की म्युनिसिपलिटी का १ अप्रैल १९१८ का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि एजुकेशन कमेटी के सभापति हिंदी नहीं जानते अतः हिंदी के प्रार्थनापत्र को उर्दू अनुवाद के सहित उनके सम्मुख उपस्थित करना पड़ता है। इसी कारण अनुवाद करने में जो व्यर्थ समय जाता था उसकी बचत के उद्देश्य से उर्दूमें प्रार्थनापत्र देने की आज्ञा दी गई है। यह आज्ञा उन शिक्षकों के लिये नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो हिंदी के अतिरिक्त और किसी भाषा में भी लिख सकते।

निश्चय हुआ कि सभा को इस आज्ञा पर परम संतोष है और वह उसे दृढ़ता से कहती है कि सज्जन हिंदी और उर्दू दोनों ही न जानते उन्हें एजुकेशन कमेटी का सभापति कदापि न बना चाहिए।

(२१) पटने के पंडित राधाकृष्ण झा का उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि सभा ऐसी पुस्तकें निकाले जो मेट्रिक्युलेशन से बी० ए० तक की पाठ्यपुस्तकों में सम्मिलित की जा सकें।

निश्चय हुआ कि हिन्दू यूनिवर्सिटी की पाठ्य पुस्तकों की जो सूची सभा द्वारा बनाई गई थी वह पंडित राधाकृष्ण झा के पास भेज दी जाय।

(२२) राष्ट्रभाषा सम्मेलन के मंत्री का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि "भारतवर्ष में एक राष्ट्रभाषा" के प्रश्न पर पूर्ण रूप से विचार किया चाहते हैं। अतः सभा अपने प्रांत में उस संबंध में जनता की सम्मति-संग्रह का कार्य्य अपने ऊपर ले।

निश्चय हुआ कि सभा को इस कार्य्य से पूर्ण सहानुभूति है। सम्मति संग्रह करने के लिये यदि उन्होंने कोई फार्म छपवाया हो तो उसे वे कृपापूर्वक भेज दें और सभा यथासाध्य उसे छपवाने का प्रबंध करेगी।

(२३) मंत्री का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि आगामी बजेट बनाते समय वर्त्तमान कार्यकर्त्ताओं की वेतन वृद्धि तथा एक और क्लार्क की नियुक्ति पर विशेष रूप से विचार किया जाय और नौकर के वेतन तथा मरम्मत के लिये एक द्रव्य रक्खा जाय।

निश्चय हुआ कि यह प्रस्ताव बजेट के समय उपस्थित किया जाय।

(२४) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

हरिहरनाथ बी० ए०,
मंत्री।

प्रबन्धकारिणी समिति।

मंगलवार ता० २ जूलाई १९१८ सन्ध्या के ६ बजे—

(१) गत अधिवेशन (तारीख २५ जून १९१८) का कार्य विवरण पढ़ा गया।

(२) जून १९१८ के आयव्यय का निम्नलिखित हिसाब उपस्थित किया गया:—

आय

२०९२।-)१	गत मास की बचत
२११॥)॥	अमानत
।=)	नागरी प्रचार
४५॥।=)	पुस्तकालय
७।=)॥	पुस्तकों की बिक्री
२२)।	भारतेन्दु ग्रन्थावली
२५)	पृथ्वीराजरासो
१०)	विशेष चन्दा
१२८७)	मनोरंजन पुस्तकमाला
१७४॥।=)	सभासदों का चंदा
१९०॥-)।	हिंदीकोश
२३॥=)२	स्थायी कोश
१॥-)॥	फुटकर
४१६५≡)।	

व्यय

१६९)	पुस्तकालय
४८)	हिंदी पुस्तकों की खोज
१४४॥।)८	हिंदी कोश
१०८॥।-)॥।	कार्यकर्त्ताओं का वेतन
३०६॥।)	अमानत
८।)	नागरी-प्रचार
४०।=)॥।	फुटकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८८२॥-)॥।	मनोरंजन पुस्तकमाला
१३२।)।	भारतेंदु ग्रन्थावली
४१८)॥	छपाई
३६॥=)॥।	डाक-व्यय

२२९५॥≡)५१
१८६९।≡)१० बचत

४१६५≡)।

बचत का ब्योरा

३८॥।=)५	रोकड़ सभा
१०००)	बनारस बंक फिक्स्ड डिपाज़िट
५९१।≡)१	बनारस बंक, चलता खाता
२३९=)४	सेविंग बंक स्थायी कोश

१८६९।≡)१०

(३) बाबू शिवप्रसाद गुप्त का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि एक ही व्यक्ति लगातार दो वर्ष से अधिक किसी पदाधिकारी के आसन पर न रहे।

निश्चय हुआ कि एक ही व्यक्ति लगातार तीन वर्ष तक किसी पदाधिकारी के पद पर न चुना जाय।

(४) पंडित ब्रजनारायण का २२ जून का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि जापान में हिंदुस्तानी भाषा की शिक्षा उर्दू में दी जाती है अतः इस बात का उद्योग होना चाहिए कि वह शिक्षा नागरी अक्षरों द्वारा दी जाय।

निश्चय हुआ कि पं० ब्रजनारायण को लिखा जाय कि सभा यह उद्योग करने के लिये उद्यत है और उनसे पूछा जाय कि इसमें सफलता प्राप्त करने में कौन कौन से साधन हैं।

(५) वेतन-वृद्धि के संबंध में पं० विश्वेश्वर नाथ, बाबू देवनंदनसिंह तथा पं० विश्वनाथ मिश्र के प्रार्थना पत्र उपस्थित किए गए।

निश्चय हुआ कि ये आगामी अधिवेशन में उपस्थित किए जांय।

(६) निश्चय हुआ कि सन् १९१८-१९ का बजट आगामी अधिवेशन में उपस्थित किया जाय।

(७) बाबू श्यामसुंदरदास जी का २५ जून का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रस्ताव किया था कि पत्रिका के सम्पादन का भार मंत्री पर रहा करे और जिस व्यक्ति में इस कार्य के करने की योग्यता हो वही मंत्री चुना जाया करे। साथ ही ग्रंथमाला और लेखमाला के संपादन का भार सभापति, उपसभापति, प्रधान उपप्रधान, इनमें से किन्हीं दो महाशयों के अधीन रहे और इस बात को ध्यानमें रख कर इनका वार्षिक चुनाव हुआ करे।

बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने प्रस्ताव किया कि एक वैतनिक मंत्री रखा जाय जो पत्रिका ग्रंथमाला तथा लेखमाला का सम्पादन करे। जितने पुस्तकें सभा द्वारा प्रकाशित हों तथा मनोरंजन पुस्तकमाला के लिये जो पुस्तकें हों उनके सम्पादन और संशोधन का भार उसके ऊपर हो। इसमें कोश न परिगणित होगा।

अधिक सम्मति से बाबू शिवप्रसाद गुप्त का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। अधिक सम्मति से यह भी निश्चय हुआ कि उसका वेतन ५०-१०-१ रखा जाय।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें।

...ाट	मूल्य ≡)	राज्यप्रबंधशिक्षा	॥)
...ग्रंथावली	मूल्य ≡)	सौरीसुधार	॥)
...ती	मूल्य ॥।)	संक्षेप लेखप्रणाली-	॥)
...र विहारीलाल-	मूल्य =)	हम्मीर रासो	१)
...ोध	मूल्य ≡)	हरिश्चन्द्र-राजा हरिश्चन्द्र का चरित्र।	=)
...ावली--	मूल्य २)	सिंधदेश का इतिहास	।)
...ाल रोग और उनसे बचने का उपाय-१)		दादू दयाल की बानी	॥।)
...र्यप्रणाली-रोगी की शुश्रूषा विधि। मूल्य ।)		दादूदयाल के शब्द	॥)
...ीनलेखमणिमाला	१)	हिन्दी लेक्चर	-)
...ाराजरासो-२२ खंड मूल्य २०) रु०।		यूनान का इतिहास	॥।)
...चन्द्रिका	मूल्य ।=)	स्त्रियों के रोग	१)
...ीला-कवि आनंदघन कृत।	मूल्य =)	भगवद्गीता (हिन्दी अनुवाद)	।-)
...ेन्दुचरित्र-	मूल्य ॥)	आर्ष प्राकृत व्याकरण	।)
...ग्रंथावली-	मूल्य ॥।)	छत्रप्रकाश-लाल कवि कृत	॥।)
...ी भाषा के सामयिक पत्रों का इतिहास	।)	सुघड़दर्जिन-सिलाई और कटाई का सचित्र वर्णन	॥)
...ामा	मूल्य ॥।)	सत्यहरिश्चन्द्र-(भारतेन्दु रचित) मूल्य	=)॥
...ोचनादर्श	मूल्य ≡)	भारतदुर्दशा	-)।
...ोचना	मूल्य =)	गोपदेव का जीवनचरित्र	=)
...ाणाप्रताप-बाबू राधाकृष्ण दास जी कृत	॥)	शेख मोहम्मद बाबा का जीवनचरित्र	-)
...ाधाकृष्णदास (जीवनी)	॥)	लेखक और नागरी लेखक	=)
...ी योग्यता	=)	आयुर्वेद निदान समीक्षा	=)
...ीयदर्शन-	॥)	भाषा-समस्त भाषाओं का संक्षिप्त विवरण	≡)॥
...विलास-	१)	होरेशियस और मनुष्य की सात अवस्थाएं	=)
		भर्तृहरि निर्वेद नाटक	।)
		ललित शिक्षावली छोटी छोटी कहानियाँ	।)

मिलने का पता—मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनोरंजन पुस्तकमाला ।

अर्थात

हिंदी के सौ उत्तम उत्तम ग्रंथों की पुस्तकावली ।

अब तक निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

१ आदर्श-जीवन—लेखक रामचंद्र शुक्ल ।
२ आत्मोद्धार—लेखक रामचंद्र वर्म्मा ।
३ गुरु गोविंदसिंह—लेखक वेणीप्रसाद ।
४ आदर्श हिंदू १ भाग—लेखक मेहता लज्जाराम शर्म्मा ।
५ " २ " "
६ " ३ " "
७ राणा जंगबहादुर—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा ।
८ भीष्म पितामह—लेखक चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्म्मा ।
९ जीवन के आनंद—लेखक गणपत जानकीराम दूबे बी. ए. ।
१० भौतिक-विज्ञान—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी ।
११ लालचीन—लेखक बृजनंदन सहाय ।
१२ कबीरवचनावली—संग्रहकर्त्ता अयोध्यासिंह उपाध्याय ।
१३ महादेव गोविंद रानडे—लेखक रामनारायण मिश्र बी. ए. ।
१४ बुद्धदेव—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा ।
१५ मितव्यय—लेखक रामचंद्र वर्म्मा ।
१६ सिक्खों का उत्थान और पतन—लेखक नंदकुमार देव शर्म्मा ।
१७ वीरमणि—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम. ए. और शुकदेवबिहारी मिश्र बी. ए. ।
१८ नेपोलियन बोनापार्ट—लेखक राधामोहन गोकुलजी ।
१९ शासनपद्धति—लेखक प्राणनाथ विद्यालंकार ।
२० हिंदुस्तान, पहला खंड—लेखक दयाचंद्र गोयलीय बी. ए. ।
२१ " " दूसरा खंड— " " "
२२ महर्षि सुकरात—लेखक वेणीप्रसाद ।
२३ ज्योतिर्विनोद—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी. ।
२४ आत्मशिक्षण—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम० ए० और शुकदेव बिहारी मिश्र बी० ए०
२५ सुंदरसार—संग्रहकर्ता पुरोहित हरिनारायण बी० ए० ।

प्रत्येक पुस्तक का मूल्य १) है. समस्त ग्रंथमाला के स्थायी ग्राहकों से [illegible] लिया जाता है। डाकव्यय अलग

मिलने का पता—

मंत्री—नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाग २३] [संख्या ४

नागरीप्रचारिणी पत्रिका।

अक्तूबर १९१८

सम्पादक—वेणीप्रसाद।

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल। बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल॥
करहु विलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल। निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सबको मूल॥
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार। सब देशन सो लै करहु, भाषा माँहि प्रचार॥
प्रचलित करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न। राजकाज दरबार में, फैलावहु यह रत्न॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र।

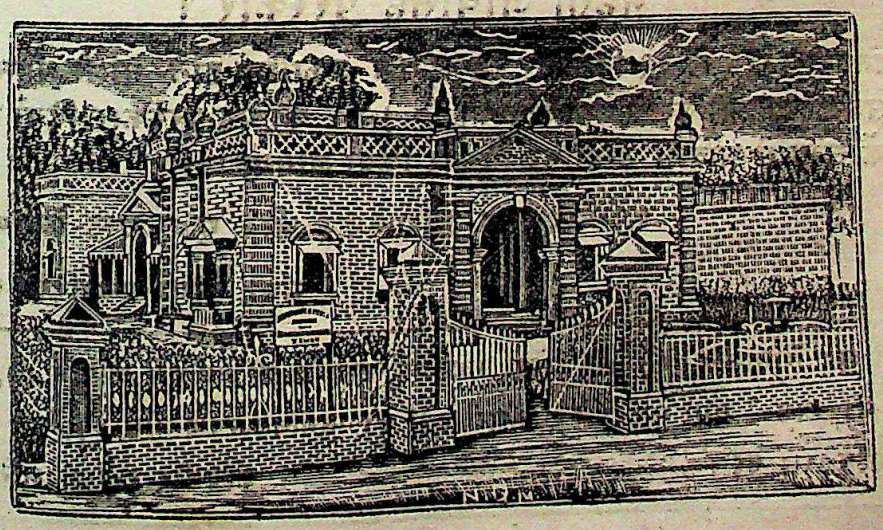

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित।

गणपति कृष्ण गुर्जर द्वारा श्रीलक्ष्मीनारायण-प्रेस, काशी में मुद्रित।

वार्षिक मूल्य १॥) प्रति संख्या =)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय सूची ।

१—शिल्पकला की शिक्षा ... ... ७३ ३—जीवनमूल ८६
२—हिंदी भाषा का हानिकर साहित्य ... ७९ ४—सभा का कार्य्य-विवरण ८८

मुफ्त ! मुफ्त !! मुफ्त !!!

धन्वन्तरी ।

यह आयुर्वेदीय मासिक पत्र योग्य वैद्य, डाक्टर और हकीमों को बिना मूल्य भेजा जाता है, सर्व साधारण को नहीं । मैनेजर, धन्वन्तरी, विजयगढ़, अलीगढ़ ।

पदक और पुरस्कार ।

सभा द्वारा उत्तमोत्तम विषयों पर लेख लिखने के लिये प्रति वर्ष स्वर्ण और रजत पदक दिए जाते हैं । सन् १९१८ में इनके लिये निम्नलिखित विषय नियत हैं—

छन्नूलाल स्वर्ण पदक—नगरों का निर्माण ।

राधाकृष्णदास रजत पदक—प्राचीन भारतवर्ष की शासन-प्रणाली ।

रेडिचे रजत पदक—मनुष्य का भोजन ।

इन विषयों पर लेख सभा में ३१ दिसम्बर १९१८ के पूर्व आ जाने चाहिएँ ।

मेहता जोधसिंह पुरस्कार ।

१ जनवरी १९१७ से ३१ दिसम्बर १९१९ तक प्रकाशित होने वाली हिन्दी की पुस्तकों में जो सर्वोत्तम समझी जायगी उसके रचयिता को २००) रु० का यह पुरस्कार दिया जायगा । इसके लिये जो पुस्तकें सभा में आवेंगी उन्हीं पर विचार किया जायगा ।

गोविन्दराव जोगलेकर बी० ए०, एल-एल० बी०

मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी ।

काश्मीरी शुद्ध शिलाजीत, कमजोरी, प्रमेह, स्वप्नदोष, इत्यादि की सर्वोत्तम औषधि ॥), पवित्र केसर १॥), असली कस्तूरी ३५), असली सुर्मा ममीरा ३), अंगूरी हींग ५), सुगंधित स्याह जीरा ३), फूल बनफशा ३॥) पवित्र धूप २), स्वच्छ शहद १।) सेर ।

काश्मीर स्टोर्स, श्रीनगर नं० १७० ।

हिन्दी शब्दसागर ।

हिन्दी भाषा का सर्वाङ्गपूर्ण सुप्रसिद्ध शब्दकोश जिसकी प्रशंसा बड़े बड़े दिग्गज विद्वानों ने की है । १५ अंक छप चुके हैं । प्रत्येक अंक का मूल्य १) रु० ।

मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा,
बनारस सिटी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

भाग २३ | अक्टूबर १९१८ । | संख्या ४

शिल्प कला की शिक्षा

(ले० प्राणनाथ विद्यालंकार)

शिल्प कला की शिक्षा (Technical Education) की विफलता:--

व्यावसायिक शिक्षा प्रत्येक व्यक्ति के लिये जहाँ तक आवश्यक है यह किसी से छिपा हुआ नहीं है। दिन पर दिन जीवन निर्वाह का व्यावसायिक शिक्षा के साथ घनिष्ट सम्बन्ध बढ़ता जाता है। यही कारण है कि अब इस विषय पर कुछ विचार किया जायगा। बालकों को वही उत्तम शिक्षा है जो कि उनको भावी जीवन में सहायता पहुंचा सके। परन्तु भारत में शिक्षण-पद्धति अति विचित्र है। बालक बीस बाईस वर्ष की आयु तक पढ़ते हैं परन्तु उस पठन से उनको भावी जीवन में बहुत कम लाभ प्राप्त होता है। इसका कारण यह है कि विद्या तो उनको पढ़ाई जाती है परन्तु उनको साथ ही यह नहीं पढ़ाया जाता कि इसका उपयोग कैसे किया जा सकता है। भारतीय विद्यार्थियों की दशा की उस नाव की दशा से उपमा दी जा सकती है जिसको समुद्र में तो डाल दिया गया है, परन्तु जिस पर उसके संचालन का कोई साधन नहीं रक्खा गया है। जिस प्रकार वह नाव इधर उधर बहती हुई किसी कार्य को भी पूर्ण नहीं कर सकती है उसी प्रकार भारतीय विद्यार्थियों की दशा है। विचारों के विभागों को भिन्न २ प्रकार के विचारों से ठूंस करके उनको संसार सागर में फेंक दिया जाता है। उनको वे साधन नहीं दिए जाते हैं जिनसे कि वे उस भयंकर सागर से पार हो सकें। किसी जाति में ऐसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षण पद्धति का होना उसके दुर्भाग्य का ही चिन्ह है।

संसार की बहुत सी सभ्य जातियों ने इस ओर विशेष ध्यान रक्खा है और अपने यहां की शिक्षण-पद्धति में इस प्रकार के सुधार किए हैं जिनसे विद्यार्थियों को बाल्य काल की शिक्षा से युवावस्था में पर्य्याप्त सहायता पहुंच सके। इसका प्रभाव यदि कहीं पर देखना हो तो फ्रांस में देखा जा सकता है। पहले पहल फ्रांस में भी शिक्षण-पद्धति भारत के ही सदृश थी। परिणाम इसका यह था कि वह व्यापार व्यवसाय में बहुत पीछे था। परन्तु कुछ समय से उसने इस विषय में पर्य्याप्त सुधार किया है। इस सुधार के करने से ही वह व्यापार व्यवसाय प्रधान एक समृद्ध देश हो गया है। फ्रान्स से जो कुछ शिक्षा मिलती है वह यही है कि शिल्प-कला की शिक्षा शिक्षण पद्धति का एक आवश्यक अंग है। जर्मनी ने भी इस विषय में उदासीनता नहीं प्रगट की है। इसी लिये वह भी संसार में एक प्रबल व्यावसायिक देश हो गया है।

शिल्प कला की शिक्षा से जातियों में कर्मण्यता तथा व्यावसायिक चातुर्य बढ़ जाता है। इसमें सन्देह नहीं है कि बहुत से व्यावसायिक कार्य अपठित भी कर लेते हैं, परन्तु उनको भी शिल्प कला की शिक्षा से अप्रत्यक्ष लाभ बहुत ही अधिक पहुंच सकता है। उनकी कार्य क्षमता शिल्पकला की शिक्षा से बहुत ही अधिक बढ़ सकती है। अपने जीवन को कैसे उन्नत करना चाहिए, भिन्न २ कार्यों में जो कठिनताएं हैं उनको कैसे दूर करना चाहिए, यह सब बातें शिक्षा द्वारा आ जाती हैं।

प्राचीन काल में भारत में व्यावसायिक तथा शिल्पकला विज्ञान का शिक्षण विचित्र विधि पर होता था। भिन्न २ पेशे के लोग अपने २ बालकों को वही काम सिखाते थे जो कि वह स्वयं करते थे। इसका कारण यह था कि प्रत्येक व्यवसायी को अपने २ पेशे में पर्य्याप्त लाभ था। सैकड़ों वर्षों तक इसी विधि पर शिक्षण तथा व्यावसायिक कार्यों के होने से भिन्न २ पेशों के लोग जातियों में परिवर्तित हो गए। कपड़े बुनने वालों की जहां जुलाहा जाति बन गई वहां तेली, चमार, लुहार, सुनार आदि २ जातियां भी इसी प्रकार के कार्यों के करने के कारण बन गईं।

जातियों के जहां लाभ हैं वहां हानि भी पर्य्याप्त है। मुसलमानी काल तक भारतवर्ष स्वतन्त्र था। जनता को प्रत्येक व्यवसाय में लाभ था। जो जिस व्यवसाय में लगा था वह उसी में लगा रहा। जुलाहों ने कपड़ा बुनना न छोड़ा और तेली ने तेल निकालना न छोड़ा। परतन्त्रता के साथ ही साथ भारत के संपूर्ण व्यवसाय घाटे पर चलने लगे। जुलाहों को जहां कपड़े बुनने में घाटा होने लगा वहां लोहार, चमार आदि को भी अपने २ व्यवसाय में कुछ भी लाभ न रहा। बस, यहीं से प्राचीन व्यावसायिक शिक्षण पद्धति का भंग होना प्रारम्भ हो गया। जुलाहों ने वस्त्रव्यवसाय से स्वयं हाथ खींच कर इधर उधर बेकार हो कर भटकना प्रारंभ किया। यही दशा अन्य व्यवसायवालों की भी हो गई। भिन्न २ जाति के व्यक्तियों ने अपने २ बालकों को व्यावसायिक शिक्षा देना छोड़ दिया और उनका ऐसा करना स्वाभाविक ही था क्योंकि जब किसी व्यवसाय में विशेष लाभ ही न हो तो वह अपने बालकों को शिक्षा दे कर क्या करते?

जिस प्रकार भूमि की उपज वृद्धि में कृषकों का भूस्वामित्व मौलिक तत्व है उसी प्रकार व्यावसायिक उन्नति में 'लाभ' का होना मौलिक तत्व है। जिस व्यवसाय में लाभ होता है लोग उसमें जाने का स्वयं ही यत्न करने लगते हैं। भारतीय सुधारकों की ओर से यह शिकायत प्रायः रहती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्यालय महाविद्यालय के पढ़े हुए विद्यार्थी सायिक कार्यों की ओर न जा कर सरकार नौकरी की ओर बहुत ही अधिक झुकते हैं। तु हमको तो यह कोई शिकायत की बात नहीं होती। इससे जो कुछ प्रतीत होता है यही है कि सरकार की नौकरी में अन्य सायों की अपेक्षा लाभ अधिक है और परि- कम है। इस कार्य में जनता की कुछ के प्रति घृणा भी कारण हो सकती है परन्तु घृणा उनपर कुछ भी प्रभाव नहीं डाल सकती कि चिरकाल से भिन्न २ जातियों में परि- त हो चुके हैं। जुलाहे का कार्य्य चाहे घृणित भा जाय चाहे उत्तम समझा जाय, जुलाहे को अपने पितृपितामहों का ही काम करना है उसमें उसको कुछ भी लाभ प्राप्त हो सके। कार की नौकरी की ओर दौड़ धूप सभी ति के लोगों की है। इससे जो कुछ पता लगता यही है कि भारतीयों को भिन्न २ व्यव- यों में कुछ भी लाभ नहीं है। भिन्न २ पेशों में का होना राज्य की सहायता तथा बाधित बाधित व्यापार की नीति पर निर्भर रहता है। विषय पर मैं आगे चलकर लिखूँगा अतः को यहीं पर छोड़ता हूं। यह अभी लिखा जा है कि भिन्न २ व्यावसायिक कार्यों की ओर ता की प्रवृत्ति नहीं है। और उसका एक लिक कारण यह है कि विदेशीय सस्ते पदार्थों आगमन के भिन्न २ प्रकार के पदार्थों के उत्पन्न ने में जनता को कुछ भी लाभ नहीं रहा है। मौलिक कारण के साथ साथ एक 'व्याव- यिक शिक्षा' सम्बन्धी गौण कारण भी है जिस पाठकों का ध्यान करा देना आवश्यक ीत होता है।

भारत में आंग्ल विद्यालयों तथा महाविद्यालयों शिक्षा ही ऐसी है जिससे पढ़े लिखे व्यक्तियों व्यावसायिक कार्य करने की ओर झुकाव ही नहीं रहता। जो भारतीय व्यावसायिक कार्य करते भी हैं उनके पास इतना धन नहीं है कि वे सरकार की शिक्षा से कुछ भी लाभ उठा सकें। इस प्रकार भारतवर्ष में दो विभिन्न दल हैं। जो शिक्षित हैं वे व्यावसायिक कार्य करने में असमर्थ हैं। और जो व्यावसायिक कार्य करते हैं वे अशिक्षित हैं।

किसी जाति का ऐसे दो विभिन्न दलों में विभक्त हो जाना कभी उत्तम नहीं कहा जा सकता। इसका मौलिक कारण जहां 'भिन्न २ पेशों में लाभ का न होना' कहा जा सकता है वहां गौण कारण दूषित शिक्षण पद्धति भी है। शिल्प-कला विज्ञान की शिक्षा देने के लिये नवपठित व्यक्तियों को ही सरकार नौकरी दे देती है; परि- णाम इसका यह होता है कि व्यावसायिक शिक्षा सर्वथा अधूरी ही रह जाती है।

व्यवसाय में बिना कारखानों या पुतली घरों के खुले व्यावसायिक शिक्षा देने का यत्न किया जाता है। युरोप में ऐसा कभी नहीं किया गया। वहां पुतली घर खुल चुके थे और उन पुतली घरों की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिये ही वहां पर शिल्पकला विज्ञान के विद्या- लय और महाविद्यालय खोले गए थे। सारांश यह है कि मौलिक तत्व जबतक विद्यमान् न हों तबतक किसी कार्य में सफलता नहीं प्राप्त हो सकती। कृषि उन्नति का जैसे मौलिक तत्व कृषकों का भूस्वामित्व है वैसे ही व्यावसायिक उन्नति का मौलिक तत्व 'लाभ' है जो कि भिन्न २ देशों में राज्य की सहायता तथा बाधित अबाधित व्यापार की नीति पर आश्रित है।

इसी कारण से हमको व्यावसायिक तथा शिल्पकला विज्ञान की शिक्षा का अतिशय प्रचार करने का यत्न करना चाहिए। इसी उद्देश्य से अब मैं इस विषय पर प्रकाश डालने का यत्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करूंगा कि "शिल्पकला विज्ञान की शिक्षा के लिये हमारी भावी नीति क्या होनी चाहिए।"

शिल्पकला शिक्षा की भावी नीति।

शिल्पकला की शिक्षा को तीन प्रकार के विद्यालयों में विभक्त कर देना ही उचित प्रतीत होता है।

(१) प्रारंभिक विद्यालय।
(२) मध्य विद्यालय।
(३) महाविद्यालय।

(१) प्रारम्भिक विद्यालय।

कला-विज्ञान की शिक्षा कुछ बालकों को सरकार की ओर से देने का यत्न करना चाहिए। जब बालक उस कार्य को सीख चुकें तब उन को राज्य की ओर से उत्तेजना मिलनी चाहिए कि वह अपनी २ जाति वालों को व्यावसायिक कार्यों में उन्नत शासनों के प्रयोग करने की शिक्षा दें। कला विज्ञान के शिक्षणालयों में साहित्यिक शिक्षा देने का यत्न न करना चाहिए। अधिक ध्यान इसी पर होना चाहिए कि विद्यार्थियों को कला का प्रयोग करना समुचित रीति पर आ जाय।

सेन्ट्रल जेलों में कैदियों को भी इसी प्रकार की शिक्षा देने का प्रबंध करना चाहिए। कैदी जिस समय कैद से छूट जायं उस समय सरकार के लिये यह उचित है कि वह उनको धन द्वारा उत्पत्ति के नवीन साधनों के क्रय करने में सहायता पहुंचावे।

(२) मध्य विद्यालय।

शिल्प कला के शिक्षण के मध्य विद्यालय शिवपुर, बम्बई तथा रुड़की में पूर्व से ही विद्यमान हैं। इन्होने अच्छी सफलता से अभी तक काम किया है। भारत में जितने मध्यम शिक्षितों की आवश्यकता थी उस आवश्यकता के अनुसार ही विद्यार्थियों को इसने निकाला है। बहुत बड़े २ इंजीनिअरों के लिये अभी हमारे देश में खाली स्थान नहीं है। बड़ोदा के कलाभवन ने भारत की कलाशिक्षा की कमी की जो पूर्त्ति की है उसके लिये हम सब लोगों के लिये बड़ोदा राज्य धन्यवाद का पात्र है।

(३) महाविद्यालय।

कला विज्ञान की उच्च शिक्षा इन महाविद्यालयों में होनी चाहिए। जाति के योग्य २ विद्यार्थियों को पढ़ने के लिये ऐसे महाविद्यालयों में भेजना चाहिए। कला विज्ञान की उच्च शिक्षा प्राप्त विद्यार्थी बड़े २ व्यवसायों के खोलने के योग्य हो सकेंगे यह समझना गलत है। व्यवसायों का सफलतापूर्वक संचालन अभ्यास का काम है। महाविद्यालयों की पढ़ाई से कोई विद्यार्थी इस योग्य नहीं हुआ है।

(४) व्यापारीय शिक्षा।

शिल्प कलाविज्ञान की भारत में क्या आवश्यकता है इस पर सविस्तर लिखा जा चुका है। अब इस विषय पर प्रकाश डालने का यत्न किया जायगा कि भारत को व्यापारीय शिक्षा की कितनी आवश्यकता है। व्यावसायिक तथा व्यापारिक शिक्षा में बड़ा अन्तर है। व्यावसायिक शिक्षा से पदार्थों का उत्पन्न करना आता है परन्तु व्यापारिक शिक्षा से उत्पन्न पदार्थों को बाँटना आता है। यदि पदार्थों की उत्पत्ति में सफलता की आवश्यकता है तो उसके विभाग में और भी अधिक सफलता की आवश्यकता होती है। सारांश यह है कि आर्थिक उन्नति के लिये व्यापारिक तथा व्यावसायिक दोनों ही प्रकार की शिक्षा की आवश्यकता होती हैं। भारत में व्यापारिक शिक्षा की प्रबल आवश्यकता है। इसका कारण यह है कि हमारे चारो ओर का संसार दिन पर दिन व्यापार विज्ञान व्यवसाय आदि विद्याओं में शिक्षित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता है। यदि हम भी इस ओर शीघ्रता पग न बढ़ावेंगे तो हम अपनी भयंकर दरिद्रता स्वराज्य प्राप्त होने पर भी छुटकारा न पा सकेंगे।

किसी जाति की आर्थिक उन्नति के दो पहिए हैं जिनको हम व्यावसायिक तथा व्यापारिक शिक्षा भी कह सकते हैं। पदार्थों के उत्पन्न करने से क्या लाभ है यदि उनको बेचना न आवे। बुद्धिमान् व्यापारी ही व्यवसायियों को यह ज्ञान दे सकते हैं कि कौन सा पदार्थ कहां पर बिक सकता है, इस समय कौनसा पदार्थ उत्पन्न करना चाहिए, उत्पन्न पदार्थ में किस प्रकार के परिवर्तन करने चाहिए इत्यादि २।

मद्रास को छोड़ कर भारत के किसी प्रांत में व्यापारीय शिक्षा का कोई समुचित प्रबन्ध नहीं है। १८८४ के २३ अक्टूबर वाले प्रस्ताव में भारतीय सरकार ने इस बात को प्रगट किया था कि भारतीय नवयुवकों को व्यापार तथा व्यवसाय सम्बन्धी प्रत्येक प्रकार की शिक्षा देने का प्रबन्ध किया जायगा। शिक्षा समिति ने भी व्यापारीय शिक्षा देने को बहुत ही आवश्यक बताया है। परन्तु शोक से कहना पड़ता है कि मद्रास को छोड़ कर भारत में कहीं ऐसी शिक्षा का प्रबन्ध नहीं है। योरुपीय देशों में प्रारंभिक शिक्षा बाधित है। प्रारंभिक शिक्षा के अनन्तर बालकों को महाविद्यालयों के प्रवेशार्थ शिक्षा दी जाती है। जो विद्यार्थी इस प्रकार की शिक्षा नहीं लेते उनके लिये व्यापारिक, व्यावसायिक तथा वैज्ञानिक शिक्षा का पृथक् तौर पर प्रबंध है। फ्रांस में उच्च प्रारंभिक शिल्पकला विद्यालयों में जो विषय पढ़ाए जाते हैं वे इस प्रकार हैं।

(१) वर्त्तमान कालीन भाषाएँ
(२) इतिहास
(३) भूगोल
(४) राजनियम
(५) संपत्ति शास्त्र
(६) बुक् कीपिङ् (Book keeping)
इत्यादि २

फ्रांस में ६० से ८० प्रति शतक तक व्यापारिक तथा व्यावसायिक शिक्षणालयों के विद्यार्थी उसी कार्य में जाते हैं जो कि उन्होंने पढ़ा होता है। किसी शिक्षा की सबसे अधिक सफलता का चिन्ह यही है। पैरिस में उसी शिक्षा के लिये रात्रि पाठशालाएँ भी हैं। उन में भी लगभग वही विषय पढ़ाए जाते हैं जिनका ऊपर उल्लेख किया जा चुका है। आस्ट्रिया हंगरी में भी ऐसी शिक्षा का उत्तम प्रबन्ध है। १९१० में वहां पर ५३८ व्यापारीय विद्यालय तथा ५९ वणिज् विद्यालय थे। वीना का हैन्डी महाविद्यालय ऐसी शिक्षा के लिये अति प्रसिद्ध है। इसमें विद्यार्थियों को बहुत उच्च शिक्षा दी जाती है। इटली में भी ऐसी शिक्षा का राजा को पर्याप्त ध्यान है। इटली के उदीनी तथा कोनों की शिक्षा तथा महाविद्यालय जनता में व्यापार तथा व्यवसाय की शिक्षा देने का काम बहुत उत्तम तौर पर संपादित कर रहे हैं। अंटवर्प का व्यापारीय महाविद्यालय बेलजियम में जो कुछ व्यापारीय शिक्षा का प्रचार कर रहा है वह संपूर्ण योरुपीय निवासियों को विदित ही है। स्विट्ज़र्लैण्ड भी इस प्रकार के शिक्षणालयों से शून्य नहीं है। योरप में व्यापारीय शिक्षा किस विधि पर होती है इसको संक्षेपतः इस प्रकार दिखा सकते हैं।

(१) योरप में व्यावसायिक उन्नति के लिये व्यापारिक तथा शिल्पकला विज्ञान की शिक्षा को अत्यन्त आवश्यक समझा जाता है। इस उद्देश्य से विद्यार्थियों को साधारण ज्ञान व्यापारादि विषयों में दिया जाता है और अधिक यत्न इस बात पर किया जाता है कि वह 'प्रतिभाशाली' बनें।

(२) प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करने के अनन्तर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही विद्यार्थियों को अवसर होता है कि वह व्यापार व्यवसाय आदि की शिक्षा प्राप्त कर सकें।

(३) प्रारंभिक विद्यालयों से निकल कर निर्धन माता पिताओं के लड़के प्रारंभिक शिल्प-कला या व्यापारिक विद्यालयों में प्रविष्ट हो जाते हैं। यहाँ से पढ़ कर बड़े २ व्यापारियों तथा व्यवसायियों के यहां लेखक एजंट आदि के तौर पर नौकरी कर लेते हैं।

(४) व्यापारिक शिक्षणालयों में निम्नलिखित विषयों पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

(१) वर्त्तमान कालीन भाषाएँ
(२) व्यापारीय चिट्ठी पत्री
(३) व्यापारीय इतिहास
(४) व्यापारीय नियम
(५) संपत्ति शास्त्र
(६) व्यापारीय भूगोल इत्यादि २

(५) योरुपीय देशों में नगरों की म्युनिसिपेलिटियों की ओर से ही प्रायः ऐसे विद्यालय खोले जाते हैं। आवश्यकतानुसार राष्ट्र भी इनको रुपए पैसे की सहायता देता ही रहता है।

(६) इन विद्यालयों में शिक्षक बहुत ही अधिक योग्य मनुष्य होने चाहिए। प्रत्येक विद्यालय के साथ पुस्तकालय, अद्भुतालय आदि का उत्तम प्रबंध होना चाहिए।

(७) शिक्षा का व्यय प्रायः प्रारंभिक विद्यालयों में विद्यार्थियों से कुछ भी नहीं लिया जाता। उच्च शिक्षा देनेवाले महाविद्यालयों में फीस अवश्यमेव अधिक ली जाती है परंतु वहां पर भी ऐसे उपाय हैं जिनसे निर्धनियों के पुत्र भी उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकें। इंलैण्ड में भी व्यापारीय शिक्षा का बहुत उत्तम प्रबंध है। वहां पर १० से १६ की आयु तक के विद्यार्थियों के लिये जहां प्रारम्भिक व्यापारीय विद्यालय खोले गए हैं वहां उच्चशिक्षा के लिये भी पृथक् पृथक् विद्यालय हैं। दो वर्ष तक उच्च शिक्षा दी जाती है और शिक्षा के अनंतर छात्रों को नियमपूर्वक प्रमाणपत्र मिलता है। भारत में भी ऐसे ही विद्यालयों तथा जहां विद्यालयों की बड़ी भारी आवश्यकता है शिक्षणालयों का काम यही होना चाहिए जिनका कि पिछले प्रकरण में वर्णन किया जा चुका है। भारत में ऐसी शिक्षा की कितनी कमी है यह निम्नलिखित ब्योरे से पाठकों पर स्पष्ट हो सकता है।

	सन् १९०२		सन् १९१२	
	विद्यालय	विद्यार्थी	विद्यालय	विद्यार्थी
व्यावसायिक विद्यालय	... ८४	४९७७ ...	२४६	१२२६२
व्यापारीय विद्यालय	... १०	५५२ ...	२८	१५४३

(Moral. Mat. Prog. rep. for 1911-12).

भारतवर्ष में व्यापार व्यवसाय की शिक्षा कितनी अल्प है यह पाठकों पर स्पष्ट ही हो गया होगा। तीस करोड़ जनता में ५५२ विद्यार्थी १९०२ में और १५४३ विद्यार्थी १९१२ में व्यापारीय शिक्षा प्राप्त करते थे। यह दाल में नमक के बराबर भी नहीं हैं। इस ओर भी राष्ट्र को विशेष ध्यान करना चाहिए। राष्ट्र के बिना ध्यान किए शिक्षा का उतना विस्तार भारत में नहीं हो सकता जितना कि अन्य देशों में है। सारांश यह है कि भारत में राष्ट्र को शिक्षा के विस्तार के लिये प्रारंभिक विद्यालयों तथा शिल्पव्यापार, व्यवसाय संबंधी विद्यालयों को खोलना चाहिए। फीस बहुत न लेकर अल्प ही लेनी चाहिए और दरिद्र तथा धनाढ्य का भेद शिक्षा के विषय में मिटा देना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी-भाषा का हानिकर साहित्य।

(पं० सत्यभक्त, भरतपुर।)

यह बात किसी से छिपी नहीं है, कि साहित्य जाति का प्राण है। किसी जाति की उन्नति बिना साहित्य के हो सकना एक प्रकार से असम्भव है। हो सकता है कि कोई जाति विशेष बर्बर होने के कारण दूसरे देशों को जीत ले, उसका धन माल अपने घर ले आवे, पर इसको सच्ची उन्नति नहीं कह सकते। ऐसी उन्नति की कमी तो पशुओं में भी नहीं है। उनमें भी एक दूसरे को हरा कर या मार कर उसका घर बार, मालमता आदि दबा बैठते हैं। इसलिये यह बात माननी पड़ती है कि चाहे वैसे कोई जाति कुछ समय के लिये बड़ी ही शक्तिशाली, धनसम्पन्न हो जाय, पर उसकी सच्ची उन्नति साहित्य की सहायता के बिना नहीं हो सकती। साहित्य से ही मनुष्य समाज वर्तमान सभ्यता प्राप्त हुई है। साहित्य का अनुशीलन करके ही मनुष्य अपनी पूर्व अवस्था जान सकता है तथा अपने पूर्वजों के महत्व मालूम कर सकता है। साहित्य के प्रभाव ही गिरी हुई जातियां क्रमशः उन्नति करती हुई बलशाली और सभ्य जातियों में अपनी गणना करती हैं। जब वे अपने पूर्व महत्व को स्मरण करती हैं तथा अपनी वर्तमान गिरी दशा से उसका मिलान करती हैं तब अपने आप ही उनके हृदय में उन्नति की अभिलाषा उत्पन्न हो जाती है और वे आगे बढ़ने का प्रयत्न करने लगती हैं। जापान इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। जो लगभग साठ वर्ष पहिले गिरी और एकदम निर्बल अवस्था में था आज उसकी गणना पृथ्वी की सर्व श्रेष्ठ महाशक्तियों में की जाती है। जापान के इतिहास के पढ़नेवाले भलीभांति जानते हैं कि अपने साहित्य की पूर्णोन्नति करके ही जापानियों ने इस गौरव को प्राप्त किया है। साहित्य-आराधना ही मानसिक शक्तियों का विकाश करा सकनेवाली प्रधान वस्तु है। इसके अध्ययन से ही मनुष्य की बुद्धि दिन पर दिन प्रौढ़ता को प्राप्त होती जाती है तथा वह बड़ी २ विद्याओं तथा कलाओं के प्राप्त कर सकने में समर्थ हो सकता है। सारांश यही है कि साहित्य ही जाति का जीवन है। वर्तमान समय में हम जिस किसी को उन्नतावस्था में देखते हैं, उसका कारण उसकी अपने साहित्य को सर्वाङ्ग पूर्ण करने की प्रवृति है। आज कल संसार में अंगरेजी, फरांसीसी, जर्मन आदि भाषाओं का साहित्य सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। उनमें से प्रत्येक में लाखों महत्वपूर्ण तथा उपयोगी पुस्तकें हैं। मनुष्योपयोगी सभी विषय उनमें लिखे गए हैं। और इसी का परिणाम है कि आज ये देश इतने शक्तिशाली तथा बुद्धिमान देखे जा रहे हैं और समस्त संसार पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर सकने में समर्थ हो सके हैं।

यह बात सर्वथा सत्य है कि साहित्य प्रत्येक जाति का एकमात्र सहारा तथा आधार है तथा उसके बलपर ही समस्त जातियां उन्नति कर रही हैं। पर साथ में इस को भी न भूल जाना चाहिए कि यह सब प्रशंसा और महिमा सत्-साहित्य की है। असत् साहित्य इसके प्रतिकूल-फल उत्पन्न करता है। जहां अच्छे साहित्य से जाति का संगठन और अभ्युदय होता है वहां बुरा साहित्य उसे नीचे ला पटकनेमें समर्थ है। बुरे साहित्य के प्रभाव से सर्वसाधारण की रुचि निन्दनीय तथा घृणित कार्यों की ओर हो जाती है। उन्हें वे पसन्द आने लगते हैं। असत् साहित्य जाति को बिलासता के कीचड़ में डुबा देता है, उसमें छल कपट विश्वासघातकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फैला देता है, उसकी महत्वपूर्ण तथा प्रशंसनीय प्रवृत्तियां और रीति नीति को नष्ट कर के उसे कुमार्गपर ले चलता है, अनीति और अन्याय का साम्राज्य स्थापित कर देता है और यदि वही दशा अधिक समय तक बनी रहे तो उस जाति का नाश कर के छोड़ता है। वास्तव में सत् और असत् साहित्य की तुलना अमृत और विष से की जा सकती है। एक यदि जीवन प्राप्त करानेवाला, स्वास्थ्य, आरोग्यता, चिरजीवन के प्रदान करनेवाला है, तो दूसरा प्राणों के हरने में पटु, शक्तियों के निःशेष कर देने में चतुर, और सर्वनाश करनेमें समर्थ है। सत् साहित्य को यदि परममित्र की पदवी दी जाय, तो असत् साहित्य निस्सन्देह सब से बड़ा शत्रु है। इसके कारण अनेक देशों ने बड़ी बड़ी हानियां उठाई हैं। जहां किसी देश के साहित्य की गति बिगड़ी, उसमें विलासिता, स्वार्थपरता, आत्मनिर्बलता, फूट, आदि अनेक अहित कर भाव भरने लगे यहां तक कि उस देश की अवनति आरम्भ हो जाती है। और धीरे धीरे वह मृत्यु मुख के समीप आ पहुंचता है। सचमुच असत् साहित्य के समान सर्वसाधारण का दूसरा शत्रु मिल सकना कठिन है।

कितने ही लोग इन बातों पर आश्चर्य करेंगे और अनेक इन्हें सुनकर अविश्वास करने लगेंगे। वे सोचेंगे कि इन सामान्य पुस्तकों अथवा कविता आदि में ऐसी शक्ति कहां से आ जाती है, जो चाहे जिस देश और जाति का नाश कर दे और चाहे जिसको उन्नति और अभ्युदय की सर्वोच्च सीढ़ी पर पहुंचा दे। पुस्तकों में इतनी सामर्थ्य कहां से आई इनको तो बालक, वृद्ध युवा आदि सभी पढ़ते हैं, पर किसी में ऐसी सामर्थ नहीं देखी जाती इत्यादि।

पर वास्तव में ऐसा सोचनेवाले सज्जन साहित्य के भेद से सर्वथा अनभिज्ञ हैं। साहित्य में वह शक्ति है जो बड़ी से बड़ी विकराल और पराक्रमी सेना की दुर्दमनीय शक्ति से भी सैकड़ों हज़ारों गुनी शक्ति रखनेवाली होती है। उक्त श्रेणी के पुरुषों को कोई प्रभावशाली पुस्तक अथवा कविता पढ़ कर देखना चाहिए कि चित्त पर क्या प्रभाव होता है। साहित्य तो मरे हुए में जान डाल देनेवाला कहा जाता है। तब जीवित मनुष्यों में यदि वह उत्साह के प्रबल स्रोत को बहा दे तो इसमें आश्चर्य्य ही क्या है। वीरों के ओजस्वी भाषणों को सुनकर कायर और नपुंसक भी एक बार मरने मारने को तय्यार होकर वीर मद से झूमने लगते हैं, तब वीर मनुष्य यदि उसे श्रवण कर के काल से भी लड़ने को सन्नद्ध हो जाय तो इसमें असंभव बात क्या हो सकती है। वास्तव में साहित्य का प्रभाव अपरिमित् और अतुलनीय है। पाठकों में से अनेकों ने सोलन नामक विद्वान् का वर्णन पढ़ा होगा। उसके देश एथन्स को शत्रुओं ने बार बार चढ़ाई करके नष्ट भ्रष्ट कर दिया। और वहां के सर्वसाधारण उनके मारे बहुत ही बुरी दशा को प्राप्त हो गए। पर जब सोलन ने एक दिन मेले में खड़े हो कर जनता को अपनी परम प्रभावशाली तथा हृदयों में उत्साह भर देने वाली कविता सुनाई तो समस्त श्रोताओं में नवजीवन का प्रवाह बहने लग गया। उनकी मुर्झाई आशालता पुनः लहलहाने लगी और वे एक साथ गर्जकर स्वदेश की रक्षा के लिये प्राण अर्पण करनेको प्रस्तुत हो गये तथा कुछ ही समय में शत्रुओं के हाथ से अपने देश का उद्धार कर लिया। राजपूत सेनाओं में गाए जानेवाले कड़खों की याद किसे न होगी जिन्हें सुन कर सैनिक वीरता के आवेश में इतने अधिक आ जाते थे कि काल को भी तुच्छ समझने लगते थे। फ्रांस की विकट राज्यक्रांति वहां के परम प्रभावशाली लेखकों के युगान्तर-उपस्थित कर देने

CC-0. In Public Domain: Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रन्थों का फल थी। बर्नहार्डी के ग्रंथों ने जर्मनी युद्धप्रिय बनाने में बड़ा काम किया है। इन सब से पाठक पुस्तकों की शक्ति समझ सकेंगे। तव में पुस्तकों में भले बुरे करने की अपरि- शक्ति है। वे मनुष्य के जीवन को बदल हैं। उनके अध्ययन से मनुष्य में आश्चर्य- परिवर्त्तन हो जाते हैं। एक विद्वान् ने बुरी कों के पढ़ने को महा हानिकारक बतलाया है। के कथन का सारांश यह है कि:—

"कभी भूल कर भी कोई बुरी पुस्तक मत । कभी किसी अवस्था में भी पढ़कर बुरी क मत पढ़ो, और न कभी अपने उपयोगी य के एक घन्टे को भी दूसरी श्रेणी की कों के पढ़ने में व्यतीत करो। असत् पुस्तकों पढ़ने की बुराइयां किसी शब्द द्वारा प्रकट नहीं जा सकतीं।"

"एक बुरी पुस्तक प्रायः जीवन भर के लिये य के चित्तमें अपना निवासस्थान बना लेती । उसका स्मरण बहुधा बना रहता है, जब कि ली पुस्तकों में के अधिकांश का तनिक भी न नहीं रहता। बड़े गम्भीर और पवित्र समय ह याद आ जाती है, तथा सद्विचारों और प्रवृत्तियों को नष्ट कर देती है। लाभ रहित तीय श्रेणी की पुस्तकों के पढ़ने में समय का य करना बड़ा दुःखदायी है। एक तो प्रथम श्रेणी पुस्तकों की संख्या इतनी अधिक है कि तुम उन सबके ज्ञाता नहीं हो सकते दूसरे तुम्हें म श्रेणी की पुस्तक न पढ़ कर उसके समय द्वितीय श्रेणी की पुस्तक के पढ़ने में लगाना त भी नहीं है।"

इससे पाठक बुरी पुस्तक के पढ़ने की खरा- बहुत कुछ समझ सकेंगे। बुरी पुस्तकें य के जीवन को बिगाड़ देती हैं, और अच्छी कों के पढ़ने से मनुष्य अनेक सदगुण धारण वाला बन जाता है। इसी कारण से सत्सा- हित्य की आराधना करना तथा असत् साहित्य का बहिष्कार करना प्रत्येक बुद्धिमान् का कर्तव्य है।

पर असत् साहित्य में इतनी बुराइयां तथा दोष उत्पन्न करने की शक्ति होने पर भी वह संसार की प्रत्येक भाषा में पाया जाता है, यह मनुष्य जाति के लिये परम दुर्भाग्य की बात है। चाहे जिस सभ्य देश को देखिए और चाहे जिस उन्नत भाषा को लीजिए असत् का कहीं अभाव नहीं मिलेगा। अंगरेजी को ही लीजिए जो वर्तमान समय में संसार की सर्वश्रेष्ठ भाषा मानी जाती है। उसमें हजारों लाखों अश्लील पुस्तकें मौजूद हैं। स्त्रीपुरुषों के परस्पर चूमने के उपायों की पुस्तकें, घर से बाहर फिरते हुए परस्पर प्रेम प्रगट करने के हावभाव आदि सिखानेवाली पुस्तकें, वाहियात कहावतों और हंसी मजाक की पुस्तकें, बेहूदा तथा निर्लज्जता पूर्ण फैशन बतलानेवाली पुस्तकें, एवम् अन्य कुटेवों को सिखानेवाली पुस्तकें अंगरेजी साहित्य में इतनी मिलती हैं कि उनका गिन सकना भी कठिन है। उसमें हजारों शृंगार रस के अश्लील उपन्यास पाए जाते हैं, जिनके पढ़ने से नवयुवकों तथा नवयुवतियों को बड़ी हानि पहुंचती है। यूरोप की फ्रांसीसी, जर्मन, इटैलियन आदि दूसरी भाषाएँ भी इस दोषसे नहीं बची हैं। वरन् फ्रांसीसी तो अंगरेजी से भी कहीं अधिक है। फारसी, अरबी, संस्कृत आदि प्राचीन भाषाओं में भी अनेक पुस्तकें ऐसी मिल जांयगी जो चरित्र को हानि पहुंचावें और मन में कामविकार उत्पन्न करके चित्तवृत्तियों को दूषित करें। रही भारतीय भाषाएं बंगाली, गुजराती, मराठी, हिंदी, तामिल आदि सो इनके लिये भी कोई यह कहने का साहस नहीं कर सकता कि ये निर्दोष हैं। बंगला में परम शृंगाररसमयी तथा अन्य प्रकार से दूषित, अश्लील बड़तला की पुस्तकें मिलती हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिनका पठन पाठन बहुत हानिकारक है। और साधारण साहित्य में भी अनेक अश्लील और व्यर्थ के उपन्यास देखे जाते हैं। गुजराती और मराठी में भी असत् साहित्य पाया जाता है। और ऐसी अवस्था में यह कहना कि दक्षिण की भाषाएं उससे बची होंगी किसी भांति उपयुक्त प्रतीत नहीं होता। जब संसार की समस्त भाषाओं की ऐसी ही दशा है, तो स्थाली पुलाक न्याय के अनुसार वे भी ऐसी ही होंगी, यह समझना असंगत नहीं कहा जा सकता। सारांश यह कि विश्व में प्रचलित सम्पूर्ण भाषाएँ इस दोष से दूषित हैं, और उनकी अनेक हानिकारक पुस्तकें सर्वसाधारण को हानि पहुंचाती रहती हैं।

इस प्रकार यद्यपि प्रत्येक भाषा में हानिकारक साहित्य पाया जाता है और हिन्दी भी उन भाषाओं में से एक है, अतएव उसमें भी उस का पाया जाना स्वाभाविक ही है तो भी अपना काम हिंदी से ही है, और उसी की भलाई बुराई का हमपर प्रभाव पड़ता है, तथा मातृभाषा के नाते से हम उसकी प्रशंसा और निन्दा में सम्मिलित हैं। इसलिये उसके हानिकारक साहित्य पर भली भांति विचार करना तथा उसके प्रतिकार के उपाय सोचना हमारा कर्तव्य है। यद्यपि यह बात हम भली भांति जानते हैं कि ऐसे लेखों के लिखने से वह साहित्य नष्ट नहीं हो सकता, न उसका प्रचार बंद हो जायगा, और न यही सम्भव है कि भविष्य में उसका बढ़ना बिल्कुल बंद हो जाय तो भी इतनी आशा अवश्य है कि कदाचित् इसके द्वारा कुछ सज्जनों का ध्यान इसके ऊपर जाय और उनके प्रयत्न से इसका कुछ ह्रास हो तथा प्रचार रुके। सत्साहित्य की ओर लोगों की रुचि उत्पन्न करने का प्रयत्न किया जाय। चाहे कुछ हो हम अपना कर्तव्य पालन करते हैं। फल होना अथवा न होना अन्य शक्ति के वश में है।

हानिकारक साहित्य आरम्भ ही से हिंदी में पाया जाता है। अब से कई सौ वर्ष पूर्व भी जब पुस्तकें छपकर इस तरह गली गली मारी नहीं फिरती थीं, इस प्रकार के साहित्य का अस्तित्व पाया जाता था। कितने ही कवि कहलानेवाले नाना प्रकार की अश्लील तथा घृणित कविताएँ प्रस्तुत करते थे। अब भी जब कभी हमें उनके पढ़ने तथा सुनने का अवसर मिलता है, तो कानों में उंगली देनी पड़ती है। उनमें बुरे तौर पर व्यभिचार का वर्णन किया गया है और पुरुष स्त्रियों के गुप्त चिह्नों के विषय में ऐसी ऐसी भ्रष्ट उपमाएँ ढूँढ़ कर निकाली गई हैं कि देखते ही चित्त में घृणा का उद्रेक होता है। कामोद्दीपन करनेवाले काव्य की भी हिंदी में कमी नहीं है। शृङ्गाररस के वर्णन, राधाकृष्ण की लीला, नायक नायिकाओं के भेद तथा लक्षण आदि के बहाने अनेक कवियों ने ऐसी गन्दी कविताएँ रची हैं कि जिन्हें सुनकर प्रत्येक सभ्य पुरुष को घृणा होगी।

जब से छापे का प्रचार हुआ है तब से हानिकारक साहित्य का प्रचार और भी बढ़ता जाता है। विद्या और शिक्षा से शून्य पुरुष छापेखाने और पुस्तकालय खोलकर तरह तरह की वाहियात पुस्तकें छापते हैं जो प्रायः दुकानदारों और ग्रामीणों द्वारा पढ़ी जाती हैं। उनमें अधिकांश पुस्तकें रद्दी, अश्लील गानों की झूठे और चरित्र नाशक किस्से कहानियों की अथवा ऐसे ही किसी अन्य हानिकारक विषय से संबंध रखने वाली होती हैं। ये अज्ञानी पुस्तक प्रकाशक कभी कभी बिना सोचे बिचारे एकाध उत्तम विषय की पुस्तक भी छाप देते हैं, पर उसकी भी पूरी दुर्दशा कर डालते हैं। वे पुस्तकें अशुद्धियों का तो खजाना होती हैं तथा उनमें अनेक बातें घटा बढ़ा दी जाती हैं। कारण यही है कि वे पढ़े लिखे और शिक्षित तो होते नहीं हैं उन्हें तो अपने पैसे कमाने से मतलब, सो सिद्ध हो ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ता है। ऐसी पुस्तकों के उदाहरण स्वरूप तुलसीदासजी की रामायण, सूरदासजी के पद, लक्ष्मीधर आदि वैद्यक पुस्तकों की गणना की जा सकती है, जिनका पुनरोद्धार अब बड़ी कठिनता से किया गया है। आजकल आगरे, मथुरा, इलाहाबाद, कानपुर, बनारस आदि में ऐसे कितने ही हानिकर साहित्य के प्रकाशित करनेवाले पाए जाते हैं।

सब से प्रथम नंबर तो गंदे उपन्यासों का है। क्योंकि इन्हें केवल दुकानदार और ग्रामीण ही नहीं पढ़ते वरन् अनेक शिक्षित मनुष्य भी उनसे प्रेम रखते हैं और थोड़ी शिक्षावालों के तो वे सर्वस्व हैं। हमने पुस्तकालयों में देखा है कि कई लोग बड़ी बड़ी उत्तम और उपदेशदायक पुस्तकों को कभी कभी लेते हैं, पर ऐसे उपन्यासों का यह हाल रहता है कि एक जगह से लौट कर आया और दस मांगनेवाले तय्यार। महीनों बीत जांय, पर जबतक वह फट फटा कर नष्ट नहीं हो जाता उसका पीछा नहीं छूटता। इन उपन्यासों में प्रायः नायक नायिका आदि के चरित्रों का वर्णन होता है। तथा शृङ्गार संबंधी, रति, केलि आदि विषयों की बातों का इस प्रकार वर्णन किया जाता है कि जिनका चित्त पर बहुत बुरा परिणाम पड़ता है। चाहे उपन्यास का अंतिम परिणाम अच्छा ही क्यों न हो, पढ़नेवाले उसपर ध्यान देकर बीच के रसमय वर्णन में ही मग्न हो जाते हैं। अनेक नवयुवकों को इनसे बड़ी भारी हानि पहुंच चुकी है और युवक तथा किशोरावस्था के लड़के ही प्रायः इनको पढ़ते हैं। और पढ़ते पढ़ते वे स्वयं उनमें वर्णित नायक-नायिका के हंसी मजाक, विषय भोग, गुप्त प्रेम, प्रेमपत्र आदि की मन में कल्पना करने लगते हैं तथा उन पर सहज ही में इन बातों का रंग चढ़ जाता है। और फिर उसका छूट सकना एक प्रकार असम्भव हो जाता है। क्योंकि बुरी बातों और शिक्षाओं का प्रभाव हट सकना सरल नहीं है। इसके अतिरिक्त उस समय उन की बुद्धि भी अपरिपक्व होती है। इसलिये उन पर इनका अत्यन्त घातक प्रभाव पड़ता है। इस के अतिरिक्त एक दोष इन में और है। फिर उन युवाओं का मन सद्ग्रन्थों के पठन पाठन में नहीं लगता। वे सदा चटपटे उपन्यास ही ढूँढते फिरते हैं और संसारोपयोगी अन्य विषयों के ध्यान से वंचित रह जाते हैं। वास्तव में यदि लड़कों को सुखी बनने की अभिलाषा हो तथा अपना जीवन व्यर्थ गँवाना नापसन्द हो तो उन्हें अपनी आरम्भिक आयु में ये महा हानिकारक उपन्यास कदापि नहीं पढ़ने चाहिए। उपन्यास पढ़ने का ही शौक हो तो सैकड़ों उत्तम उपन्यास मौजूद हैं उन्हें क्यों न पढ़ा जाय जिनसे कुछ लाभ भी हो।

इन उपन्यासों के अतिरिक्त प्राचीन किस्से भी प्रायः ऐसे ही होते हैं। सहस्र रजनी चरित्र, गुलबकावली, मोहिनी चरित्र, तोता मैना का किस्सा, साढ़े तीन यार का किस्सा, शुक बहत्तरी आदि इसी श्रेणी के हैं। ये सब प्रायः महा निकृष्ट बातों से भरे रहते हैं। इनमें कोरी गप्पों और निस्सार बातों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं होता। हाँ शृंङ्गार की बातों से लबालब भरे रहते हैं। इसके अतिरिक्त वैसे ही इनमें बिलकुल असंभव जादू टोने, देव, जिन, परी आदि का वर्णन होता है। सो उनसे भी कोई लाभ न होकर पाठक उलटे सन्देह में पड़ते हैं तथा असत्य विश्वास के शिकार बनते हैं। इनको पढ़ने से समय का सत्यानाश होता है। सारांश यह कि ऐसे किस्सों का पढ़ना सर्वथा महा हानिकारक और त्याज्य है।

इनके अतिरिक्त आजकल सर्वसाधारण में एक और प्रकार की पुस्तकों का प्रचार बहुत बढ़ गया है। बालक बुड्ढे जवान सभी उनके शौकीन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिखाई पड़ते हैं। जिन को थोड़ा भी पढ़ना आता है, वे भी उन्हें बड़े चाव से पढ़ते हैं और प्रत्येक दुकान तथा स्थानों पर वे देखी जाती हैं। वे हैं हाथरस से प्रकाशित होनेवाले संगीत। भाषा इनकी उर्दू हिंदी मिश्रित साधारण बोल चाल की है और एक चौबोला नामक नवीन छन्द में इनकी रचना की जाती है। यद्यपि पिंगल में चौबोला नामक एक छन्द अवश्य है पर वह इससे सर्वथा भिन्न है। पहिले तो इसमें आल्हा ऊदल सम्बन्धी पुस्तके, नौटंकी, पूरनमल आदि जैसे स्वांग छापे जाते थे। पर अब कुछ समय से रामायण महाभारत की कथाओं, कुछ ऐतिहासिक बातों को भी इसमें लाना आरम्भ हुआ है। पर वे सब भी महा अशुद्ध तथा भ्रष्ट कर दी जाती हैं। इनके लेखक नत्थेराम, चिरंजीलाल, इन्दुमन आदि नामोंवाले मनुष्य हैं। ये सब उपन्यासों से कहीं अधिक हानिकारक हैं। इनमें अश्लील बातों का समावेश अवश्य किया जाता है। मूल कथा चाहे जैसी अच्छी क्यों न हो पर ये कुरुचिपूर्ण लेखक उसको अश्लीलता में लिप्त कर ही देते हैं। आल्हा ऊदल की असली कथाएं बड़ी ही ओजस्विनी तथा वीर रस पूर्ण हैं पर इन लेखकों की कृपा से वे अब पूरी पूरी अश्लीलतामय हो गई हैं तथा उनका पठन पाठन चित्त में कुरुचि उत्पन्न करता है। इसी प्रकार पंजाब के पूरन भगत की मूल कथा अत्यन्त पवित्र तथा उपदेशजनक है। पर इन लेखकों ने उसे ऐसा भ्रष्ट कर दिया है कि कुछ कहने की बात नहीं। नौटंकी आदि तो इनकी कृति के प्रधान नमूने हैं। वास्तव में ये लेखक देश के लिये नितांत अपकारी हैं। इनकी जितनी निंदा तथा तिरस्कार किया जाय, कम है।

गाने की और भी सैकड़ों महा अश्लील पुस्तकें बाजार में प्रायः बिका करती हैं। उनमें भ्रष्ट भावों से भरी हुई गजल, ठुमरी, कव्वाली दादरा आदि होते हैं जो प्रायः वेश्याओं द्वारा गाए जानेवाले गानों में संग्रह किए जाते हैं। इसलिये ये सब के सब बहुत ही कामोत्तेजक होते हैं। इन्हीं पुस्तकों की बदौलत आजकल शहरों में सात सात आठ आठ वर्ष की अवस्था के लड़के वाहियात गानों को गाते हुए फिरते देखे जाते हैं। भगवान जाने ऐसे लड़कों का भविष्य क्या होगा जो इस तनिक सी उमर में ही "आया करो जान हमारी गली में कभी कभी" अथवा "मजा देते हैं क्या यार तेरे बाल घूँघरवाले" आदि जैसे चरित्रनाशक गानों का अभ्यास करते फिरते हैं उनसे आगे के लिये क्या आशा की जाय। बाजारू बुकसेलरों की दुकानों पर ऐसी अनेक पुस्तकें देखने को मिल सकती हैं। इनके प्रकाशक जो धन के लोभ में ऐसे जहरीला साहित्य सर्वसाधारण में फैलाते हैं महानीच तथा घृणित हैं। सरकार को उन्हें अवश्य कड़ा दण्ड देना चाहिए और ये सब पुस्तकें जला देनी चाहिए।

बाजार में बिकनेवाली अनेक लीलाएँ तथा बारहमासे आदि भी अनेक मनुष्यों और स्त्री बच्चों को बहुत हानिकारक सिद्ध होते हैं। उनमें स्त्री पुरुषों के अनुचित संबंधों का वर्णन होता है, परपुरुष तथा पराई स्त्री के सम्मिलन का वृत्तांत लिखा जाता है, विरही विरहिणियों के ऐजने लिखे जाते हैं, और इन सब बातों को पढ़कर तथा सुनकर स्त्रियों तथा बच्चों के हृदय में तरह तरह के कुभाव और असत् विचार उत्पन्न होते हैं और इनका प्रचार भी स्त्रियों और बच्चों में ही अधिक है। ये उनके चरित्रनाश में सहायक होती हैं। ये पुस्तकें कदापि पढ़ने योग्य नहीं कही जा सकतीं।

कितने ही मनुष्य गंदे उपन्यासों तथा हाथरस के संगीत आदि पुस्तकों की निन्दा के विरुद्ध यह सफाई पेश किया करते हैं कि उनका परिणाम प्रायः अच्छा होता है और उसी से मतलब है। बुरे का बुरा और भले का भला परिणाम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कला के उपन्यासों में भी दिखाया जाता है। इन्हीं का क्या दोष है? इनके पढ़ने का भी पाठकों पर अच्छा पड़ता है। क्योंकि और कुकर्मी मनुष्यों की दुर्गति भले मनुष्यों सज्जनों की वृद्धि, वीरों की वीरता आदि को सरल भाषा में पढ़ कर तथा पूर्ण रूप से कर साधारण मनुष्य लाभ उठाते हैं। पर दलील निस्सार है। प्रभाव का प्रधान कारण शैली तथा घटना के विकसित करने का है। यद्यपि मूल घटना तथा परिणाम का थोड़ा प्रभाव होता है, पर मुख्य प्रभाव उप- बातों का ही पड़ता है। अतएव हाथरस संगीतों तथा काशी आदि के गंदे उपन्यासों परिणाम चाहे जैसा उत्तम हो, उस पर पाठकों ध्यान नहीं जाता। वे बीच की शृंगार रस तथा भोग की बातों में ही फंस रहते हैं और का उन पर प्रभाव पड़ता है। परिणाम सारे का पता भी नहीं चलता। उदाहरण के पूरनमल का स्वांग देखा जा सकता है। में पूरनमल के साथ सौतेली माता की बातें ही बुरी भाषा और भावों में कराई गई हैं। परिणाम तक पहुंच भी नहीं पाते, उन्हीं में फंस कर लट्टू हो जाते हैं तथा उन रसका बड़ा कुभाव पड़ता है। अतएव परि- का अच्छा होना ही अश्लील पुस्तक की बुराई दूर कर सकने में समर्थ नहीं हो सकता। इस प्रकार असत् साहित्य हिंदी भाषा में पर दिन बढ़ता जाता है। यह बात सर्व- धारण के हित की दृष्टि से बहुत बुरी है। असत् हित्य के मनुष्यों पर पड़नेवाले कुप्रभाव का पीछे किया ही जा चुका है। उसी के प्रकार कुफल होना आजकल देख रहे हैं। इन लोगों का चरित्र बिगड़ता है। विषय भोग की उनकी रुचि उचित से अधिक बढ़ जाती है। प्रकार के दोष उनमें उत्पन्न हो जाते हैं। तरह तरह की व्यर्थ और हानिकारक वासनाएँ चित्त में पैदा होने लगती हैं और फिर उनके कारण समाज में नाना प्रकार के अनाचार होने लगते हैं। लोगों की रुचि कुकार्यों की ओर बढ़ जाती है और वे उचित अनुचित सत्यासत्य का विवेक त्याग देते हैं। सर्व साधारण में विलासिता की वृद्धि होती जाती है, और समाज निर्बल होता जाता है। इसी प्रकार असत् साहित्य से और भी अनेकों हानियां होती हैं जिन सब का यहां पर वर्णन किया जा सकना कठिन है। विद्वान् तथा नेता पुरुषों का यह आवश्यकीय कर्त्तव्य है कि वे ऐसे खराब साहित्य पर ध्यान दें और उसके प्रचार को रोकने के उपाय करें। एक प्रधान उपाय निर्भीक समालोचना है जिससे सर्व साधारण भली बुरी पुस्तकों के पहिचान सकने में समर्थ हो सकें। पर हिंदी भाषा में इसका बड़ा अभाव है। बहुत दिन से एक ऐसे पत्र की आवश्यकता बतलाई जाती है जिसका एक मात्र उद्देश्य यथार्थ समालोचना करना हो। पर किसी का ध्यान इस ओर नहीं जाता। हिन्दी प्रेमियों का कर्तव्य है कि वे शीघ्र ऐसा एक पत्र निकालें। दूसरा काम बहुत सरल भाषा में अनेक मनोरंजक उपयोगी तथा लाभकारी पुस्तकें प्रकाशित करने का है। क्योंकि सर्व साधारण उच्च और पांडित्यपूर्ण भाषा को समझ सकने में असमर्थ होते हैं, पर पढ़ने का शौक उन्हें विवश करता है, और जो कुछ भला बुरा मिलता है, उसी को वे पढ़ते हैं। यदि सीधी भाषा में मनो- रंजक तथा उपयोगी बहुत सी पुस्तकें सस्ते मूल्य पर प्रकाशित की जाँय तो वर्तमान हानिकारक पुस्तकों का प्रचार अनेक अंशों में अवश्य कम हो जाय। आशा है कि स्वदेशहितैषी पुरुष इस ओर ध्यान देने की कृपा करेंगे जिससे असत् साहित्य का प्रचार रुके और सर्व साधारण का उपकार हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवनमूल।

संसार में जो चैतन्य प्राणी दिखाई देते हैं उनकी चेतनता का, जीवन या प्राण का मूल क्या है इस विषय में नाना मुनियों के नाना मत हैं और वास्तव में यह है भी एक कठिन समस्या; पर मनुष्य का स्वभाव या उसकी प्रकृति की बनावट इस प्रकार की है कि वह इन बातों के पहले स्थिर किए हुए सिद्धांतों को मानकर ही चुप नहीं बैठता, क्योंकि हमारे ऋषियों ने जिन सिद्धांतों को स्थिर किया है और जो प्रमाण दिए हैं वे प्रायः इंद्रियातीत हैं। इसलिये इस विषय का इंद्रियलब्ध ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा मनुष्यों को होना स्वभाविक है, क्योंकि विषय संसार युद्ध में प्राणियों को रात दिन इंद्रियजन्य ज्ञान से ही पाला पड़ता है। शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, इन्हीं विकारों की तूती ब्रह्मांड में बोल रही है, चाहे भीतरी कोई गुह्य या इंद्रियातीत कारण भले ही हों पर सिवाय इने गिने साधन परायण महात्माओं के उसका अनुभव साधारण जन करने में नितांत असमर्थ हैं और साधारण जनों ही से संसार है। किसी कवि ने यह भी कहा है कि "यदि परमात्मा है तो वह अवश्य ही साधारण जनों को बहुत प्यार करता है, नहीं तो साधारण जनों की सृष्टी इतनी अधिकता से न करता!" और वास्तव में जो ज्ञान साधारण जनों को लाभ नहीं, साधारण जन जिससे लाभ नहीं उठा सकते, उस इंद्रियातीत महा कठिन तप साध्य ज्ञान से साधारण जनका क्या लाभ हो सकता है, इसी लिये साधारण जनों को प्रत्यक्षजन्य ज्ञान द्वारा जो प्राप्त हो वही उनकी थाथी है. उनके काम में आने योग्य वस्तु है, इसलिये जीवन का मूल क्या है इसका विचार इंद्रियातीत कारणों द्वारा न करके यहां हम इंद्रियगम्य साधनों द्वारा इसकी परीक्षा का विवरण आज लिपिबद्ध करेंगे और देखेंगे कि इसमें कहां कहां क्या क्या कमी है जिससे इंद्रियातीत कारणवादियों को अपने सिद्धांतों को गढ़ने की गुंजाइश मिल जाती है और वह गुंजाइश कहां तक सही है?

संसार में साधारणतया दो प्रकार की चीजें दिखाई देती हैं एक जड़ और दूसरी चैतन्य यद्यपि प्रोफेसर बोस साहब के आविष्कार से जड़ और चैतन्य का भेद भाव लोप सा हो गया है पर उन्होंने जड़ नामधारी व वस्तु की चेतनता का जो प्रतिपादन किया है वह चेतनता केवल सूक्ष्म यंत्रों द्वारा ही उपलब्ध है। इन्द्रियों द्वारा हम जड़ नामधारी पदार्थ निश्चेष्ट ही दिखाई देते हैं इसलिये जड़ पदार्थों की छिपी चेतनता का यहां उल्लेख न कर हम यहां उन्हें उसी पुराने नाम जड़ से ही संबोधन करेंगे। जब हम यहां जीवन मूल वर्णन करने बैठे हैं तब यहाँ उन्हीं पदार्थों के मूल बीज का जिक्र करेंगे जिन्हें हम प्रत्यक्ष रूप से क्रियाशील पाते हैं। अस्तु संसार में दो प्रकार के पदार्थ हैं क्रियाशील और क्रियाहीन। अब जीव या प्राण क्या वस्तु है। जो वस्तु प्राणधारी हैं उन्हें हम जीती कहते हैं; पर वास्तव में वही वस्तु जीती है जिनके अणु या सूक्ष्म भाग निरंतर क्रियाशील हैं और किसी विशेष चैतन्य पदार्थ का जीवन केवल उसके अणुओं के स्थिर भाव से पड़े रहने से नहीं होता,' वरं एक निर्दिष्ट सांचे या खोल के भीतर रह कर यह अणु निरंतर आते जाते और नये स्वरूपों को धारण करते रहते हैं। इसको एक दृष्टांत देकर समझाना अधिक सुगम होगा। आप में से बहुतोंने पर्व्वतों की चोटियां बादलों से ढँकी देखी होंगी। पहाड़ एक जड़ वस्तु है जिसके अणु ज्यों के त्यों पड़े रहते हैं अपना स्थान न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है और जो बादल की शकल उसे घेरे हुए है एक खोल या सांचा है जिसके भीतर से जल रूप रूपी कण एक ओर से भीतर जाते और ओर जिधर 'हवा का रुख' होता है उधर ओर उड़ते चले जाते हैं। अब यदि थोड़ी देर लिये हम यह मान लें कि वह वाष्प के कण एक से प्रविष्ट होकर दूसरी ओर निकल नहीं जाते, उसी बदली की खोल के भीतर समा जाते हैं उसके भीतर जाकर उसकी पुष्टि में सहायता देते ठीक जैसे अन्न हजम होकर हमारे देहकी पुष्टि सहायता देता है, तो शायद हम किसी दर्जे तक नियम का अनुमान कर सकेंगे जिसके अनु- आदि बीज (या वीर्य्य जो एक लसलसा र्थ है) क्रिया होती है और जो सारे प्राणी वनस्पतियों का मूल बीज है। इससे तात्पर्य्य निकला कि परिपाक या हजम होना प्राणी सृष्टि का पहला लक्षण है।

कोई पेड़ या प्राणी बाहर से अपनी पुष्टि के र्थ अपने भीतर ग्रहण करता है फिर उसे पाक या हज़म करके अपने को बढ़ाता या नए को धारण करता है और फिर उसकी सीठी चा हुआ भाग जड़ जगत् को वापस कर देता यहां तक कि मृत्यु के बाद सारी सीठी जड़ त को वापस हो जाती है। क्योंकि सारे यों का अंतिम परिणाम मृत्यु ही है यह ल है।

जड़ जगत् से प्राणियों का जो पहला स्वरूप ता है उसका आदि बीज वही लसलसा पदार्थ वीर्य्य का आदि रूप है, जिसमें कई प्रकार के यनिक द्रव्य स्वल्याधिक्यभाव से मिले हैं। यह आदि बीज प्रत्येक प्राणी ोल में वर्तमान है और इसी से वृद्धि पुष्टि, ता और गति की यावत् क्रिया होती है। आदि बीज को जब सूक्ष्मदर्शक यंत्र या ीक्षण यंत्र से देखा गया तो सिवाय उस लसलसे पदार्थ के खंड मात्र के और कुछ दिखाई नहीं दिया। इस खंड में किसी प्रकार की कोई बनावट दिखाई नहीं दी। सीधे सादे एक लस-लसे पदार्थ का गोल टुकड़ा था, पर आश्चर्य्य यह था कि इसमें भी चैतन्य शक्ति विद्यमान थी। इसकी कोई इन्द्रिय दिखाई नहीं देती थी; पर फिर भी प्राणी की यावत् क्रिया यह करता था। अस्तु प्रत्यक्ष रूप से देखने में तो यदि जड़ जगत् से प्राणी जगत् के बीच में कोई संबंध है तो उसकी पहली सीढ़ी यही आदि बीज या लसलसा पदार्थ है और यदि पौराणिक गाथा के अनुसार कभी कोई अमैथुनी सृष्टि हुई होगी तो वह इसी प्रकार की होगी जिसमें यह रासायनिक द्रव्य मिल कर इस लसलसे पदार्थ या आदि बीज के रूपमें आया। क्योंकि इस लसलसे पदार्थ या आदि बीज के प्रत्येक अणुओं की बनावट एक ही प्रकार के रासायनिक द्रव्यों के जमघट का परिणाम है। और भी एक आश्चर्य्य है, यह इंद्रियरहित आदि बीज के अण्डस्वरूप सूक्ष्म प्राणियों का समूह गहरे महासमुद्रों के तल में बहुतायत से पाया गया है जहां एक प्रकार की चैतन्य चिकनी मिट्टी के रूप में यह जमा हो रहे हैं। *

अब इसकी दूसरी सीढ़ी यह होती है कि वह आदि बीज के ऊपर एक खोल सा बनाना आरंभ करता है। यह खोल भी उसी लसलसे पदार्थ का बना है, पर उससे कुछ अधिक सुधरा हुआ है या कुछ रूपांतरित हुआ है। जैसे जब किसी फल को चीर कर रख दीजिए तो कुछ देर में उसके कटे हुए हिस्से का रूप बदलने लगता है और ऊपर का हिस्सा सूख कर अपने ही ताजे हिस्से का एक आवरण सा बन जाता है, वैसे ही उस लसलसे पदार्थ ने धीरे धीरे अपने ऊपर अपने

* विख्यात प्रोफेसर हक्सले साहब ने सन १८६८ में पहले पहल बाथीबियस के नाम से इनका वर्णन किया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही पदार्थ की एक खोली सी चढ़ा ली, जिसका स्वरूप कुछ भिन्न था। अब इस खोल के भीतर उस आदि बीज का जो घनिष्ट भाग था वह कुछ पुष्टि को प्राप्त हुआ। यही आदि क्रिया है जिससे सारे प्राणियों की सृष्टि हुई है। आदि बीज के ऊपर जो खोल बनता है उसमें का प्रत्येक खोल एक अलग अलग प्राणी सा बन जाता है और अब यह खोलयुक्त प्राणी टूट कर ऐसे ही नए नए चैतन्य खोल बनाने लगता है और बड़ी शीघ्रता से इनकी वृद्धि होने लगती है तथा अपनी पुष्टि के लिये जड़ जगत् की सामग्री को यह अपने भीतर हजम करते रहते और इस प्रकार से नवीन श्रेष्ठतर सृष्टि के उपादान या मसाले को बनाते या जमा करते जाते हैं।

इनसे जो पहला सेंद्रिय युवा प्राणी बनता है वह अति सूक्ष्म है और बिना शक्तिशाली अणुवीक्षण यंत्र के वह दिखाई नहीं देता।

यदि घास का एक गट्ठा दो दिन तक यों ही छोड़ दिया जाय तो उसमें इतने छोटे छोटे जीवों के झुंड पैदा हो जायंगे कि जिनका गिनना असंभव होगा, क्यों यह जीव एक इंच के चालीस हजार वें भाग $\frac{1}{40000}$ इंच से भी अधिक छोटे होंगे और आश्चर्य्य यह है कि इतने छोटे होने पर भी यह जीव सब चैतन्य होंगे। यह जीव इधर उधर दौड़ते हैं और जड़ जगत् की सामग्री को हजम भी कर जाते हैं। अब मजा यह है कि लसलसे पदार्थ का सूक्ष्म से सूक्ष्म भाग भी अपने में से शाखा प्रशाखा फैला कर भोज्य सामग्री से जा चिपकता है और यदि कोई ऐसे पदार्थ के संघर्ष में आता है जो इसके मतलब का नहीं होता तो उससे दूर हट जाता है। इनकी गिनती भी असंख्य है और सृष्टि को इनसे बहुत लाभ पहुंचता है। इन्हें भी आप पृथ्वी के मेहतर या झाड़ू देने वाले समझिए, क्योंकि जब प्राणी मर जाते हैं तब उसकी जड़ देह या सीठी को यही बुहार करके साफ कर देते हैं नहीं तो असंख्य प्राणियों के मुर्दों से पृथ्वी भर जाती। यह क्रिया मरे जीवों के सड़ने से होती है। मरे पिंडों का सड़ना और कुछ नहीं है केवल इन्हीं जीवों की वृद्धि है जिन्हें हम रोग के कीटाणु कहते हैं। इन्हीं के कारण जीव पिंड की मृत्यु होती है और पुनः मृत पिंड को सड़ा गला कर यह एक नया रूप दे देते हैं जिससे चैतन्य और जड़ जगत् को नई सामग्री प्राप्त होती है।

(क्रमशः।)

सभा का कार्यविवरण।

साधारण अधिवेशन

शनिवार तारीख २७ जुलाई १९१८ सन्ध्या के ६ बजे
स्थान सभाभवन।

(१) लाला भगवानदीन के प्रस्ताव तथा पं० सुरेन्द्रनारायण शर्मा के अनुमोदन पर पंडित रामचंद्र शुक्ल सभापति चुने गए।

(२) ता० २९-६-१८ तथा १९-७-१८ के अधिवेशनों के कार्यविवरण पढ़े गए और स्वीकृत किए गए।

(३) प्र० का० समिति का तारीख १५ जून सन् १९१८ का कार्यविवरण उपस्थित किया गया।

(४) निम्नलिखित सज्जनों के आवेदनपत्र सभासद होने के लिये उपस्थित किए गए।

(१) कन्हैयालाल जैन कस्तल, हमपुर जि० मेरठ

(२) पंडित रामचंद्र गौड़ सेक्रेटरी वी० के० विद्यालय बीकानेर

(३) बाबू पृथ्वीनारायण चट्टा, महल्ला कटरा समी प्रयाग

(४) पंडित मुचकुन्द शर्मा ३ सलेमपुर जि० मुजफ्फरपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५—बाबू जयदयाल मारवाड़ी।

निश्चय हुआ कि ये सज्जन सभासद चुने गये।

५—निम्नलिखित सभासदों के इस्तीफे उपस्थित किए गए और स्वीकृत हुए।

१ पण्डित मुरलीधर शर्म्मा, कछिवाना महाल, कानपुर।

२ पण्डित रामनारायण मालवीय, तेल की मंडी गया।

३ बाबू संकठाप्रसाद राय काशी।

६—पं० सुरेन्द्रनारायण शर्म्मा ने मंत्री से निम्नलिखित प्रश्न पूछे जिनके उत्तर मंत्री ने नीचे लिखे अनुसार दिए।

(क) क्या मंत्री इसका उत्तर देंगे कि आज का अधिवेशन कैसे नियमानुसार हुआ जब कि किसी सभासद को भी इसकी सूचना नहीं दी गई?

उत्तर—यह अधिवेशन नियमित रूपसे प्रति अन्तिम शनिवार को होता है अतएव इसकी सूचना प्रायः नहीं दी जाती और न आज के लिये दी गई थी।

प्रश्न—ऐसा किस नियम के अनुसार किया जाता है?

उत्तर—इस सम्बन्ध में कोई स्पष्ट नियम नहीं है, ऐसी प्रथा सर्वदा से रही है।

प्रश्न—क्या उस विशेष अधिवेशन के अनुसार प्रबन्धकारिणी-समिति ने वार्षिक अधिवेशन सम्बन्धी कार्य सम्पादित कर दिया?

उत्तर—बजेट तैयार हो गया है परन्तु वार्षिक रिपोर्ट अभी ठीक नहीं हुई।

प्रश्न—क्या बजेट का जैसा पहले स्वरूप रहता था उसमें अबकी कुछ परिवर्तन हुआ है?

उत्तर—हां प्रबन्धकारिणी समिति के ता० ... जुलाई सन् १९१८ के निश्चय नं० २ के अनुसार उसमें परिवर्तन हुआ है।

प्रश्न—वार्षिक रिपोर्ट क्यों नहीं तैयार हुई?

उत्तर—इसके सम्बन्ध में प्रबन्धकारिणी समिति का तारीख २६ जूलाई सन् १९१८ का निश्चय नं० १ देखिए।

प्रश्न—क्या यह बतलाया जा सकता है कि वार्षिक अधिवेशन के पूर्व प्रबन्धकारिणी समिति का कोई अधिवेशन होगा?

उत्तर—इस का उत्तर निश्चित रूप से नहीं दिया जा सकता।

७—लाला भगवानदीन के प्रस्ताव तथा पण्डित ब्रजभूषण ओझा के अनुमोदन पर निश्चय हुआ कि प्रबन्धकारिणी समिति ता० १० अगस्त १९१८ तक वार्षिक अधिवेशन में उपस्थित होनेवाले (वार्षिक रिपोर्ट बजेट आदि) कार्यों को समाप्त कर दे और मंगलवार तारीख १३ अगस्त १९१८ को सभा का एक विशेष अधिवेशन किया जाय जिसकी सूचना नियमानुसार स्थानीय तथा बाहरी सभासदों को दी जाय और उस अधिवेशन में प्रबन्धकारिणी समिति द्वारा सम्पादित वार्षिक अधिवेशन में उपस्थित होनेवाले सब कार्य विचारार्थ उपस्थित किए जायँ।

(मंत्री के अतिरिक्त सब सभासदों ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया)

८—निम्न लिखित पुस्तकें धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईं।

बाबू रामचन्द्र वर्म्मा काशी।
जीवन और श्रम
साहित्याचार्य पं० विश्वेश्वर नाथ शास्त्री।
हैहय वंश
मंत्री नागरीप्रचारणी सभा बुलन्द शहर
हिन्दी डाइरेक्टरी
ओंकार बुक डिपो प्रयाग
जे० एन० ताता
लाला लाजपत राय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीमान् राजा शशिशेखरेश्वर, काशी
रस रहस्य (हस्त लिखित प्रति)
पं० ज्ञानचन्द्र वैद्यभूषण, काँगड़ा
जड़ी बूटी गुण संग्रह
एशियाटिक सोसाइटी आफ़ बंगाल
Journal and Proceedings of the Society Vol. IX of 1918.
Proceedings of the Vol. XIV of 1918 Nos. 102, 3 and 4.
Proceedings for the year 1918 (Vol. IX of 1918).

९—सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

प्रबन्धकारिणी सभा।

ता० २-७-१८ का अधिवेशन

(पृष्ठ नं० ७२ से आगे)

८ बाबू शिवप्रसाद गुप्त के ये प्रस्ताव उपस्थित किए गए कि पुस्तकालय से जो सज्जन पुस्तकें पढ़ने के लिए ले जांय उनसे ५) रु० जमा करवा लिया जाय और सभा के जो सभासद पुस्तकालय के सहायक के आवेदनपत्र पर हस्ताक्षर करें वे उस सहायक की ली हुई पुस्तकों के उत्तरदाता हों।

अधिक सम्मति से निश्चय हुआ कि पुस्तकालय से पुस्तक लेनेवालों से रुपया जमा कराने की आवश्यकता नहीं है पर जो सभासद पुस्तकालय के किसी सहायक के फार्म पर हस्ताक्षर करे वह उस सहायक की ली हुई पुस्तकों का उत्तरदाता रहे।

९—बाबू श्यामसुंदर दास जी का २६ जून १९१८ का पत्र, मुँशी देवीप्रसाद जी के निम्न लिखित दानपत्र के सहित उपस्थित किया गया, जिसमें उन्होंने सूचना दी थी कि मुंशी जी ने इस दान को १ जूलाई १९१८ से किया है अर्थात् शेयरों पर ३० जून १९१८ तक जो डिविडेण्ड मिलेगा वह मुँशी जी के पास भेजा जायगा। साथ ही उन्होंने यह भी सूचना दी थी कि उनकी पण्डित गौरी शंकर हीराचंद ओझा तथा मुंशी देवीप्रसाद जी की सम्मति है कि पहले पहल फाहियान की यात्रा का अक्षरशः अनुवाद प्रकाशित कराया जाय और उसमें टिप्पणियां भी हों। इसी प्रकार अन्य चीनी यात्रियों की यात्राओं का अनुवाद तथा हुनत्सांग की जीवनी का अनुवाद कराया जाय और एक पुस्तक भारतीय सिक्के पर निकाली जाय।

मुंशी देवी प्रसाद के दानपत्र की प्रतिलिपि

"श्री हरि।

"मैं मुँशी देवीप्रसाद पिता का नाम मुंशी नत्थन् लाल जाति सकसेना कायस्थ रहनेवाला जोधपुर का हूँ।

आगे बहुत दिनों से मेरी इच्छा है कि हिन्दी साहित्य में ऐतिहासिक पुस्तकें लिखी और छापी जायं जिससे हिन्दी साहित्य में इनके अभाव की पूर्ति हो। इस इच्छा से नीचे लिखे हुए महाशयों को ट्रस्टी बनाता हूं और उनको नीचे लिखे हुए अधिकार देता हूं। इस कार्य के लिये मैं अपने सात हिस्से नंबर ५२८८, ७६६५, ९०१५, ९७८१, १२४०, १४९९७, १७४३४ जो बैंक आफ बम्बे में मेरे नाम से हैं जिनका असली दाम ३५००) रु० है और जिनका आजकल का मूल्य १०५००) के लगभग तथा वार्षिक आय ६००) के लगभग है का नागरीप्रचारिणी सभा को देता हूं।

१—यह ट्रस्ट 'देवी प्रसाद ऐतिहासिक पुस्तक माला ट्रस्ट" नाम से कहा जायगा और यह भी चाहे जिस रूप में रहे काशी नागरीप्रचारिणी सभा के कार्यालय में अलग खाता डाल कर रखा जायगा।

२—इन हिस्सों का मूल धन व्यय नहीं किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गा किन्तु उससे जो आय होगी वह इस ट्रस्ट
ीचे लिखे हुए कार्य में लगाई जायगी।

२—काशी नागरीप्रचारिणी सभा की प्रबन्ध-
रिणी समिति को अधिकार होगा कि ट्रस्टियों
सम्मति से इस धन को इन्हीं हिस्सों में अथवा
ी दूसरे रूप में जो इण्डियन ट्रस्ट एक्ट की
ाओं के विरुद्ध न हो रक्खे किंतु इस बात पर
न रखना आवश्यक होगा कि आय में कमी न
ौर मूल धन में क्षति न हो।

४—इस समय नीचे लिखे हुए तीन महाशयों
ें ट्रस्टी नियत करता हूं और उक्त महानुभावों
स ट्रस्ट के कार्य को संपादन करने का भार
स्वीकार किया है। बाबू श्यामसुंदर दास जी
ए० बनारस के, पण्डित चंद्रधर शर्म्मा बी०
अजमेर के, और रायबहादुर श्री गौरीशंकर
चंद ओझा अजमेर के।

५—न ट्रस्टी महाशयों में यदि किसी का
न किसी कारण से खाली हो जाय अथवा
यन ट्रस्ट ऐक्ट की धाराओं के अनुसार
ो समझा जाय तो उस स्थान की पूर्ति जब
ें जिवित रहूंगा स्वयं करूंगा और मेरे न
ित रहने अथवा अयोग्य होने की अवस्था में
किसी ट्रस्टी का स्थान खाली हुआ तो
की पूर्ति काशी नागरीप्रचारिणी सभा अपने
क अधिवेशन में बाकी ट्रस्टियों की सम्मति
करेगी। पर यदि वार्षिक अधिवेशन में एक
से अधिक विलंब हो तो उस अवस्था में
सभा की प्रबन्धकारिणी समिति को अधि-
होगा कि यदि वह आवश्यक समझे तो
क अधिवेशन द्वारा नियुक्ति होने तक उस
न की पूर्ति कर दे परंतु हर अवस्था में इस
का पूरा ध्यान रखना होगा कि एक वंश
संबंध के एक से अधिक व्यक्ति एक साथ
ी न रह सकेंगे।

६—जो पुस्तकें इस ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित होंगी उनका नाम देवीप्रसाद ऐतिहासिक "पुस्तकमाला" होगा जिसमें स्वतंत्र मौलिक ग्रंथ अथवा दूसरी भाषा के ग्रंथों के अनुवाद तथा प्राचीन ग्रंथ होंगे।

७—हर पुस्तक में मेरा चित्र रहेगा।

८—इस पुस्तकमाला की बिक्री से जो आय होगी वह भी इसी पुस्तकमाला के प्रकाशित करने में व्यय की जायगी।

९—हर वर्ष यथा संभव कम से कम एक पुस्तक प्रकाशित की जायगी और उसका मूल्य जो कुछ उसके संबंध में व्यय होगा उसके दुगने से अधिक न रखा जायगा।

१०-यदि किसी समय मूल धन के अतिरिक्त इस पुस्तकमाला के हिसाब में १०००) वा इससे अधिक बच रहेगा और वह एक वर्ष से अधिक समय तक इस कार्य में व्यय न हो सकेगा तो उसमें एक सहस्र वा उससे अधिक, जितना काशी नागरीप्रचारिणी सभा की प्रबन्धकारिणी समिति उचित समझे, मूल धन में सम्मिलित कर दिया जायगा और इसी प्रकार से समय समय पर जब जब ऐसी अवस्था उपस्थित होती रहेगी तब तब ऐसा ही किया जायगा और सम्मिलित धन की कुल आय इस कार्य में लगाई जायगी।

११—काशी—नागरीप्रचारिणी सभा की प्रबन्धकारिणी समिति को पूर्ण अधिकार होगा होगा कि इस पुस्तकमाला की पुस्तकों को लिखवाने छपवाने तथा बेचने आदि का सब प्रबंध करे किंतु यह आवश्यक होगा कि पुस्तक के विषय के संबंध में ट्रस्टियों की सम्मति ले ले। यदि एक मास तक ट्रस्टी महाशयों अथवा उनमें से किसी एक की सम्मति प्राप्त न हो तो उस अवस्था में सभा के निश्चय की ही प्रधानता रहेगी और यदि ट्रस्टी महाशय सम्मति में एक मत न हों तो जिस ओर अधिक सम्मति होगी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वही मानी जायगी और उसी के अनुसार कार्य होगा।

१२—इस ट्रस्ट का वार्षिक चिट्ठा ट्रस्टियों के पास सभा का वर्ष समाप्त होने के पश्चात् एक मास के भीतर भेज दिया जायगा और उसका विवरण उनकी सम्मति के साथ सभा के वार्षिक विवरण में प्रकाशित हुआ करेगा।

१३—यदि कभी इण्डियन ट्रस्ट ऐक्ट की धाराओं के अनुसार न्यायाधीश की सम्मति लेने की आवश्यकता होगी तो वह सम्मति काशी के जज महोदय से ली जायगी।

१४—यदि किसी समय काशी नागरीप्रचारिणी सभा टूट जाय तो ट्रस्टियों को अधिकार होगा कि वे इस ट्रस्ट की समस्त संपत्ति को किसी दूसरी उपयुक्त संस्था को इस ट्रस्ट के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए इन्हीं नियमों पर दे दें। यदि काशी नागरीप्रचारिणी सभा इस ट्रस्ट के नियमों के अनुसार कोई ग्रन्थ लगातार तीन वर्ष तक प्रकाशित न करे और इस का संतोषजनक कारण न बता सके तो मेरी जीवित अवस्था में मुझे और मेरे पीछे ट्रस्टियों को अधिकार होगा कि इस कार्य के लिए कोई दूसरा उपयुक्त प्रबन्ध करें जिसमें ट्रस्ट का उद्देश्य सफल हो।

१५—इस ट्रस्ट के इन ऊपर लिखे हुए नियमों के साथ प्रबंध करने का भार काशी नागरीप्रचारिणी सभा ने अपनी प्रबन्धकारिणी समिति को ता० २४ मई १९१८ के अधिवेशन में लेना स्वीकार किया है।

ता० २१ जून सन् १९१८ जेठ सुदी १५ संवत् १९७५।

देवी प्रसाद

मु० अजमेर। स्थान राजपुताना म्युज़ियम

साक्षी—महामहोपाध्याय पं० शिवनारायण शर्म्मा

Witness:—Har Bilas Sarda.

Judge Small Cause court, Ajmer.

मुझे ट्रस्टी होना स्वीकार है—श्याम सुन्दर दास २१-६-१८।

मैंने ट्रस्टी होना स्वीकार किया। गौरीशंकर हीराचंद ओझा।

निश्चय हुआ कि मुंशी देवीप्रसाद जी को इसके लिए सभा का हार्दिक धन्यवाद दिया जाय और पं० गौरीशंकर हीराचंद ओझा ने इस संबंध में जो उद्योग किया है उसके लिए उन्हें विशेष धन्यवाद दिया जाय। यह भी निश्चय हुआ कि बाबू श्यामसुंदरदास जी के लिखे अनुसार इस पुस्तकमाला में पहले फाइहान की यात्रा का अनुवाद प्रकाशित करने का प्रबंध किया जाय।

(१०) बाबू रामचंद्र वर्म्मा तथा अन्य ५ सभासदों का पत्र उपस्थित किया गया जिसके साथ उन्होंने नई नियमावली की एक प्रति परिवर्तन करके भेजी थी और प्रस्ताव किया था कि उनके लिखे अनुसार नियमावली में परिवर्तन किए जायँ। निश्चय हुआ कि नियमों के संशोधन पर विचार करने के लिए जो उपसमिति बनाई गई है उसके पास ये प्रस्ताव भी विचारार्थ भेजे जायँ।

सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

मंत्री

बुधवार ता० ३ जुलाई १९१८ संध्या के ६ बजे

स्थान-सभाभवन

(१) बाबू श्यामसुंदरदास जी का ३ जुलाई १९१८ का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि सभा ने एक ऐसे व्यक्ति को वेतन पर नियत करना निश्चय कर लिया है जो सभा द्वारा प्रकाशित होनेवाली सब पुस्तकों का संपादन संशोधन करे, अतः यह अनावश्यक है कि मनोरंजन पुस्तकमाला के संपादन प्रकाशन आदि का भार उन पर रहे। इस कारण वे पुस्तकें जो अभी छपी नहीं थी उन्होंने लौटाई और लिखा था कि पुस्तकों की लिखाई आदि में जो १७९५) रु० उनका निकलता है उसमें से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...) रु० बाबू शिवप्रसाद गुप्त को दिया जाय ...७९५) उन्हें दिया जाय।

पण्डित रामनारायण मिश्र ने प्रस्ताव किया ... बाबू श्यामसुंदरदास जी इस पुस्तकमाला ...संपादन का कार्य करते रहें। जो वैतनिक उप ...नियुक्त हो वह संपादक के आज्ञानुसार इस ...में उनकी उपयुक्त सहायता करे, लेखकों के ...स्कार आदि निश्चित करने का भार संपादक ही ...रहे। इस पत्र के अनुसार सभा १७९५) देने ...जितना शीघ्र हो सके प्रबंध करे और जब ...मनोरंजन पुस्तकमाला के संबंध का कुल ...साव न साफ़ हो जाय तब तक इस माला की ...पुस्तक नई न छापी जाय। लेखकों के ...स्कार आदि का सब हिसाब और इस संबंध ...लेन देन सभा द्वारा हो।

बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने प्रस्ताव किया कि ...रंजन पुस्तक माला के लिए तीन व्यक्तियों ...एक उपसमिति बनाई जाय जिनका अधिकार ...लेखकों को पसंद करना और उन्हें योग्य व्यक्तियों ...शुद्ध कराकर सभा में भेजना हो, इसमें जो ...य हो उसे सभा दे, कोई नया ग्रंथ उस समय ...न छापा जाय जब तक १७९५) चुका न दिया ...य और नवीन पुस्तक छापने का व्यय बंक में ...रख लिया जाय।

पं० रामनारायण मिश्र जी का प्रस्ताव अधिक ...मति से स्वीकृत हुआ। (यहाँ पर बाबू श्याम ...रदास जी चले गए और पं० रामनारायण मिश्र ...ने सभापति का आसन ग्रहण किया)

(२) अधिक सम्मति से निश्चय हुआ कि ...सभा का आयव्ययअनुमानपत्र दो भागों में ...जाय जाय एकमें सभा द्वारा प्रकाशित तथा ...चारित पुस्तकों के आयव्यय का हिसाब रखा ...में मनोरंजन-पुस्तक माला, हिन्दी-शब्दसागर ...सभा की अन्य पुस्तकें समझी जायँगी। ...विभाग में सभा के साधारण आयव्यय का हिसाब रक्खा जायगा जैसे सभासदों से निश्चित और अनिश्चित आय। पुस्तकालय और कार्यालय का व्यय, पत्रिका, ग्रंथमाला, लेखमाला इत्यादि के प्रकाशन आदि का आय व्यय।

(३) समय अधिक हो जाने के कारण निश्चय हुआ कि शेष कार्यों के लिए समिति का अधिवेशन किसी दूसरे दिन किया जाय।

मंत्री

सोमवार तारीख ८ जूलाई १९१८ संध्या के ६ बजे
स्थान-सभा-भवन

कोरम पूरा न होने के कारण अधिवेशन न हो सका।

मंत्री

समिति का एक अधिवेशन मंगलवार तारीख १० जूलाई १९१८ को संध्या के ६ बजे सभा भवन में किया गया था। पर इसमें केवल पंडित रामनारायण मिश्र बी० ए० उपस्थित थे। अतः अधिवेशन न हो सका। सहायक मंत्री

समिति का एक अधिवेशन रविवार तारीख १४ जूलाई १९१८ को संध्या के ६ बजे सभाभवन में किया गया था। इसमें बाबू शिवप्रसाद गुप्त राय बहादुर मुंशी रविनंदनप्रसाद तथा उपमंत्री उपस्थित थे। कोरम पूरा न होने के कारण आज भी अधिवेशन न हो सका। मंत्री

समिति का अधिवेशन पुनः तारीख १७ जूलाई १९१८ को सन्ध्या के ६ बजे सभा-भवन में किया गया। इसमें बाबू शिवप्रसाद गुप्त, बाबू बाँकेबिहारी लाल बाबू बालमकुन्द वर्म्मा और मंत्री उपस्थित थे। बाबू बाँकेविहारी लाल के चले जाने पर बाबू जगन्नाथ दास बी० ए० भी आ गए। पर कोरम पूरा न होने के कारण अधिवेशन न हो सका। मंत्री

बृहस्पतिवार ता० २५-७-१८ संध्या के ६ बजे
स्थान-सभा-भवन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१) बाबू दामोदर दास खंडेलवाल का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि समिति के अधिवेशनों में जो कार्य होते हैं उनका विवरण सभासदों के पास समय से पहुँच जाना चाहिए।

निश्चय हुआ कि विवरण नागरी प्रचारिणी पत्रिका में छपता है और पत्रिका को अब समय पर निकालने का प्रयत्न किया जायगा।

(२) ठाकुर शिवकुमारसिंह का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने इस वर्ष बजेट में नागरी प्रचार के लिए ५००) रक्खे जाने के लिए लिखा था।

निश्चय हुआ कि वर्तमान आर्थिक अवस्था में ५००) व्यय करना कठिन है।

(३) पण्डित विश्वेश्वरनाथ तिवारी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने वेतन-वृद्धि के लिए प्रार्थना की थी।

निश्चय हुआ कि उनके वेतन में इस वर्ष ३) की वृद्धि की जाय और अगले वर्ष २) की वृद्धि और करके २०) दिये जायँ।

(४) बाबू देवनंदनसिंह तथा पंडित विश्वनाथ मिश्र के प्रार्थनापत्र उपस्थित किए गए जिनमें उन्हों ने वेतन-वृद्धि के लिए प्रार्थना की थी।

निश्चय हुआ कि बाबू देवनंदन सिंह के वेतन में ३) की वृद्धि की जांय।

(५) बाबू वेणीप्रसाद तथा बाबू बाँकेविहारी लाल के पत्र उपस्थित किए गए जिनमें उन्होंने पदाधिकारियों के चुनाव की सूची से अपने नाम पृथक् किए जाने के लिए लिखा था।

निश्चय हुआ कि पदाधिकारियों की सूची में इन सज्जनों के नाम न रक्खे जांय।

(६) पं० ब्रजभूषण ओझा आदि का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने पूछा था कि नियमों का परिवर्तन वार्षिक अधिवेशन में ही हो सकता है अथवा साधारण सभा के किसी अधिवेशन में, और लिखा था कि आगामी वार्षिक चुनाव की सूची में जिन सज्जनों ने अपना नाम न रखने के लिए लिखा है वा अन्य किसी कारण से जिनका चुनाव नहीं हो सकता उनके स्थानों की पूर्ति के लिए मंत्री और उपमंत्री के चुनाव में पंडित सुरेन्द्र नारायण शर्म्मा का नाम और प्रबंधकारिणी समिति के सदस्यों में पं० कालीचरण दुबे, पं० रामचन्द्र नायक कालिया, पं० सुरेन्द्रनारायण शर्म्मा और बाबू हरिप्रसाद पालधि के नाम बढ़ाए जायँ।

निश्चय हुआ कि पं० ब्रजभूषण ओझा के पास नियमामली की एक प्रति भेज दी जाय। चुनाव की सूची में जितने सज्जनों के नाम होने चाहिए उन की कोई संख्या नियत नहीं है, इस कारण पूर्ति करने की आवश्यकता नहीं है।

(७) पं० ब्रजभूषण ओझा का पत्र उपस्थित किया गया जिस में उन्होंने प्रस्ताव किया था कि साहित्याचार्य पण्डित रामावतार पाण्डेय एम० ए० का चंदा क्षमा कर दिया जाय और वे सभा के आनरेरी सभासद चुने जायँ।

निश्चय हुआ कि यह प्रस्ताव पं० रामावतार पाण्डेय के काशी आने पर उपस्थित किया जाय।

(८) सन् १९१८-१९ के लिए निम्न लिखित बजेट तयार किया गया:—

६३०।-)।	बचत जिस में ३१८॥।-)॥ अमानत खाते का भी सम्मिलित है।
२२००)	सभासदों का चंदा
१०००)	हिंदी पुस्तकों की खोज
२०)	नागरी-प्रचार
४०)	फुटकर
४०)	पारितोषिक
८००)	पुस्तकालय
३६०)	बनारस की म्युनिसपैलिटी
४४०)	सहायकों का चंदा
४७३०।-)।	

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

	कार्यकर्ताओं का वेतन
	सहायक मंत्री
	लेखक १
	लेखक १
	लेखक ३
	चपरासी १
	चपरासी २
	मेहतर
	माली
	पुस्तकालय
	पुस्तकाध्यक्ष
	चपरासी
	जिल्दबंदी
	आलमारियां २
	पंखाकुली
	पुस्तकालय की सूची
	पुस्तकें, समाचार-पत्र
	छपाई
	ना० प्र० पत्रिका के १२ अंक
	ग्रंथमाला के ४ अंक
	लेखमाला के ४ ,,
	सभा की वार्षिक रिपोर्ट
	नियमावली
	लक्ष्मी नारायण प्रेस के पिछले बिल
	फुटकर
	डाकव्यय
	नागरी प्रचार
	पारितोषिक
	हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों की खोज।
	फुटकर व्यय
	मरम्मत
	अमानत खाते का देना

पुस्तक विभाग।

१६००)	पुस्तकों की बिक्री
५५०)	पृथ्वीराज रासो
७०००)	हिन्दी कोश
	४४००) चार नए अंकों की बिक्री
	१०००) बड़ोदा राज्य से
	१६००) पुराने अंकों की बिक्री
७५००)	मनोरंजन पुस्तक माला
	२५००) छ नए अंकों का मूल्य स्थायी ग्राहकों से
५०००)	फुटकर बिक्री
३००)	भारतेन्दु ग्रंथावली
५०)	पुस्तकों के लिए पुरस्कार
१७०००)	व्यय
५९९७)॥।	हिन्दी कोश
	३२००) चार नए अंकों की छपाई
	२०००) कोश कार्यालय का वेतन आदि
	७९७)॥।इण्डियन प्रेस का पिछला बिल
९७४०।-)	मनोरंजन पुस्तक माला
	२२५०) छ नई पुस्तों की दो दो हज़ार प्रतियों के लिए कागज़
	१०००) इनकी छपाई
	१४४०) जिल्द बँधाई
	६००) चित्र
	९००) ग्रंथकारों का पुरस्कार आदि
	५५५।-) लक्ष्मी नारायण प्रेस के पिछले बिल
	१२००) लीडर प्रेस के पिछले बिल
	१७९५) बा० श्यामसुंदर दास जी
५००)	भारतेन्दु ग्रंथावली
१०००)	विज्ञापन
११४०)	कार्यकर्त्ताओं का वेतन
	६००) संपादक
	३००) लेखक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०८) दफतरी
८४) चपरासी
४८) फुटकर

१८३७७।-)॥।

१०) पुस्तकों के लिए पुरस्कार

१८३८७।-)॥।

*मुंशी देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तक माला

३०००) व्याज
७००) पुस्तकों की बिक्री

१०००)

८५०) एक पुस्तक की २००० प्रतियों की छपाई (ग्रंथकर्ता के पुरस्कार के सहित)
१५०) फुटकर व्यय

१००)

* नोटः—यदि सम्भव होगा तो इस वर्ष इस पुस्तकमाला में एक पुस्तक प्रकाशित की जायगी।

(९) अधिक सम्मति से निश्चय हुआ कि नागरी प्रचारिणी ग्रन्थमाला तथा ना० प्र० लेखमाला की जो संख्याएं अब तक पिछड़ गई हैं वे अब अगले वर्ष न निकाली जायँ और सभासदों को इन संख्याओं के बदले में उतने ही मूल्य की सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें दी जायँ।

(बाबू वेणीप्रसाद ने इस प्रस्ताव का विरोध किया था)

(१०) बाबू शिव प्रसाद गुप्त के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ कि सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें प्रधान २ समाचार पत्रों को समालोचनार्थ भेजी जायँ और सभा की पुस्तकों का विज्ञापन निम्न लिखित समाचार पत्रों में प्रकाशित किया जाय।

१ भारतमित्र, २ विश्वमित्र, ३ वेंकटेश्वर समाचार, ४ लीडर, ५ हिन्दोस्तानी, ६ अभ्युदय, ७ प्रताप, ८ सरस्वती, ९ मर्यादा, १० पाटलीपुत्र, ११ सद्धर्मप्रचारक, १२ आर्यमित्र, १३ केशरी, १४ चित्रमय जगत् और १५ स्त्री दर्पण,

(११) बाबू गौरीशंकर जी के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ कि ऊपर लिखे हुए पत्रों में से जो पत्र दैनिक हैं उनमें प्रत्येक रविवार को विज्ञापन का छापना तुरन्त प्रारम्भ कर दिया जाय और शेष पत्रों में क्या व्यय होगा इसका विवरण समिति की स्वीकृति के लिए उपस्थित किया जाय।

(१२) निश्चय हुआ कि समाचार पत्रों में विज्ञापन की छपाई का सब आवश्यक प्रबंध पंडित रामनारायण मिश्र जी कृपा पूर्वक करें।

(१३) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

मंत्री।

प्रबन्धकारिणी समिति।

शुक्रवार तारीख २६ जुलाई १९१८-संध्या के ७ बजे

स्थान-सभाभवन।

(१) गत वर्ष के विवरण का जितना अंश तैयार था उतना उपस्थित किया गया। निश्चय हुआ कि मंत्री गत वर्ष की रिपोर्ट की भांति सम्पूर्ण विवरण आगामि अधिवेशन में उपस्थित करें।

(२) निश्चय हुआ कि पुस्तकालय के पुस्तकाध्यक्ष से उन त्रुटियों का उत्तर माँगा जाय जिनका उल्लेख पुस्तकालय के निरीक्षक की रिपोर्ट में है और जो पुस्तकें खोई हुई हैं उनको एक सप्ताह में वे उपस्थित करें।

(८) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

मंत्री।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनोरंजन पुस्तकमाला ।

अर्थात्

हिंदी के सौ उत्तम उत्तम ग्रंथों की पुस्तकावली ।

अब तक निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

१ आदर्श-जीवन—लेखक रामचंद्र शुक्ल ।
२ आत्मोद्धार—लेखक रामचंद्र वर्म्मा ।
३ गुरु गोविंदसिंह—लेखक वेणीप्रसाद ।
४ आदर्श हिंदू १ भाग—लेखक मेहता लज्जाराम शर्म्मा ।
५ ,, २ ,, ,,
६ ,, ३ ,, ,,
७ राणा जंगबहादुर—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा ।
८ भीष्म पितामह—लेखक चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्म्मा ।
९ जीवन के आनंद—लेखक गणपत जानकीराम दूबे बी. ए. ।
१० भौतिक-विज्ञान—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी ।
११ लालचीन—लेखक वृजनंदन सहाय ।
१२ कबीरवचनावली—संग्रहकर्त्ता अयोध्यासिंह उपाध्याय ।
१३ महादेव गोविंद रानडे—लेखक रामनारायण मिश्र बी. ए. ।
१४ बुद्धदेव—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा ।
१५ मितव्यय—लेखक रामचंद्र वर्म्मा ।
१६ सिक्खों का उत्थान और पतन—लेखक नंदकुमार देव शर्म्मा ।
१७ वीरमणि—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम. ए. और शुकदेवबिहारी मिश्र बी. ए. ।
१८ नेपोलियन बोनापार्ट—लेखक राधामोहन गोकुलजी ।
१९ शासनपद्धति—लेखक प्राणनाथ विद्यालंकार ।
२० हिंदुस्तान, पहला खंड—लेखक दयाचंद्र गोयलीय बी. ए. ।
२१ ,, ,, दूसरा खंड— ,, ,, ,,
२२ महर्षि सुकरात—लेखक वेणीप्रसाद ।
२३ ज्योतिर्विनोद—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी. ।
२४ आत्मशिक्षण—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम० ए० और शुकदेव बिहारी मिश्र बी० ए० ।
२५ सुंदरसार—संग्रहकर्ता पुरोहित हरिनारायण बी० ए० ।

पुस्तक का मूल्य १) है. समस्त ग्रंथमाला के स्थायी ग्राहकों से ।।।) लिया जाता है। डाकव्यय अलग है।

मिलने का पता—

मंत्री—नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा के सदस्यों को

सूचना

गत १० अक्तूबर १९१८ के विशेष अधिवेशन में सभा ने नियम-संशोधन के लिये एक उपसमिति बनाई है। यह समिति संशोधनों पर विचार करके मूल प्रस्तावों समेत अपने प्रस्ताव तीन महीने के भीतर सभा के सम्मुख उपस्थित करेगी। अतः समस्त सभासदों से प्रार्थना है कि नियमावली में, जो संशोधनार्थ नागरीप्रचारिणी पत्रिका के भाग २२ संख्या ३ से ६ में छप चुकी है, जो जो परिवर्त्तन वे आवश्यक समझें उन्हें प्रस्ताव के रूप में ५ दिसम्बर १९१८ के पहले ही सभा में भेजें। प्रस्ताव कागज़ के एक ओर लिखें और पत्रिका में छपे हुए नम्बरों का हवाला देते जायँ।

गोविन्दराव जोगलेकर बी० ए० एल० एल बी०
मंत्री, काशी-नागरीप्रचारिणी सभा।

हिन्दी की सेवा के लिए नवयुवक लोगों को एक अद्भुत अवसर

श्रीमान् गान्धीजी द्वारा मद्रास में हिंदी प्रचार का प्रबंध हो गया है। उनके पुत्र स्वयं वहां जाकर इस काम को कर रहे हैं। स्वामी सत्यदेवजी वहीं हैं। पढ़ाई एक पाठशाला में होती है। पढ़नेवालों में बड़े बड़े प्रतिष्ठित लोग शरीक हुए हैं। इन लोगों का उत्साह इस समय इतना बढ़ा हुआ है कि दो पढ़ानेवालों से सब काम नहीं चलता। ऐसे उत्साही नवयुवक लोगों की अब वहाँ आवश्यकता है जो हिंदी और अङ्गरेजी खूब जानते हों, जिन्हें देश की इतनी लगन हो कि थोड़े व्यय से अपना काम चला सकें। केवल छ महीने वहाँ रहने की प्रतिज्ञा करके यदि कालेजों में पढ़नेवाले विद्यार्थी बारी बारी से वहाँ जाना शुरू करें तो मद्रास प्रांत में हिंदी की ध्वनि गूँज उठे। रेल का किराया और वहाँ रहने का खर्च उनको दिया जायगा।

गोविन्दराव जोगलेकर
मंत्री, काशीनागरीप्रचारिणी सभा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[भाग २३] [संख्या ५

नागरीप्रचारिणी पत्रिका।

नवंबर १९१८

सम्पादक- रामचन्द्र शुक्ल।

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल। बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल॥
बिलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल। निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सबको मूल॥
विध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार। सब देशन सों लै करहु, भाषा माँहि प्रचार॥
लित करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न। राजकाज दरबार में, फैलावहु यह रत्न॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र।

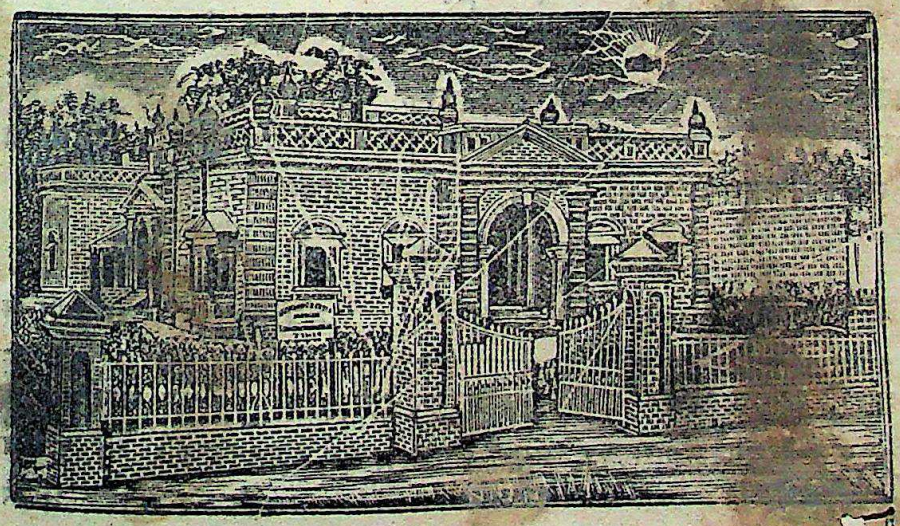

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित।

गणपति कृष्ण गुर्जर द्वारा श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस, काशी में मुद्रित।

वार्षिक मूल्य १॥) प्रति संख्या =)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची ।

१—अंधमुनि की कथा और शामजातक ... ९७
२—विश्व-विधान (ले० बा०जगन्मोहन वर्म्मा ९९
३—प्रांतीय साहित्य सम्मेलन के सभापति का भाषण १०३
४—सभा का कार्य्य-विवरण ११३

मुफ्त ! मुफ्त !! मुफ्त !!!

धन्वन्तरी ।

यह आयुर्वेदीय मासिक पत्र योग्य वैद्य, डाक्टर और हकीमों को बिना मूल्य भेजा जाता है, सर्व साधारण को नहीं । मैनेजर, धन्वन्तरी, विजयगढ़, अलीगढ़ ।

पदक और पुरस्कार ।

सभा द्वारा उत्तमोत्तम विषयों पर लेख लिखने के लिये प्रति वर्ष स्वर्ण और रजत पदक दिए जाते हैं । सन् १९१८ में इनके लिये निम्नलिखित विषय नियत हैं—

छन्नूलाल स्वर्ण पदक—नगरों का निर्माण ।

राधाकृष्णदास रजत पदक—प्राचीन भारतवर्ष की शासन-प्रणाली ।

रेडिचे रजत पदक—मनुष्य का भोजन ।

इन विषयों पर लेख सभा में ३१ दिसम्बर १९१८ के पूर्व आ जाने चाहिएँ ।

मेहता जोधसिंह पुरस्कार ।

१ जनवरी १९१७ से ३१ दिसम्बर १९१९ तक प्रकाशित होने वाली हिन्दी की पुस्तकों में जो सर्वोत्तम समझी जायगी उसके रचयिता को २००) रु० का यह पुरस्कार दिया जायगा । इसके लिये जो पुस्तकें सभा में आवेंगी उन्हीं पर विचार किया जायगा ।

गोविन्दराव जोगलेकर बी० ए०, एल-एल० बी०

मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी ।

काश्मीरी शुद्ध शिलाजीत, कमजोरी, प्रमेह, स्वप्नदोष, इत्यादि की सर्वोत्तम औषध ॥), पवित्र केसर १॥) असली कस्तूरी ३५), असली सुर्मा ममीरा ३), अंगूरी हींग ५), सुगंधित स्याह जीरा ३), फूल बनफशा ३॥) पवित्र धूप २), स्वच्छ शहद ।।) सेर ।

काश्मीर स्टोर्स, श्रीनगर नं० १७० ।

हिन्दी शब्दसागर ।

हिन्दी भाषा का सर्वाङ्गपूर्ण सुप्रसिद्ध शब्दकोश जिसकी प्रशंसा बड़े बड़े दिग्गज विद्वानों ने की है । १५ अंक छप चुके हैं । प्रत्येक अंक का मूल्य १) रु० ।

मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा,
बनारस सिटी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

भाग २३ } नवंबर १९१८ । { संख्या ५

अंध मुनि की कथा और शामजातक ।

वाल्मीकि रामायण में अंधे मुनि के पुत्र की जो कथा आई है वह इस प्रान्त में सर्वत्र प्रसिद्ध है। घर की स्त्रियाँ तक उसे अच्छी तरह जानती हैं। उसी कथा को कौशल्या से कह कर राजा दशरथ ने राम के वियोग में प्राण त्याग किया था। कथा इस प्रकार है—

महाराज दशरथ जब युवराज थे तब एक दिन सरयू के किनारे शिकार खेलने निकले। नदी के किनारे थोड़ी दूर पर कुछ शब्द सुन पड़ा जिसे उन्होंने हाथी का गर्जन समझा। उस शब्द को ओर लक्ष्य कर के बाण चलाया। बाण छूटते ही जान पड़ा कि वह किसी मनुष्य को लगा। राजा ने पास जा कर देखा कि एक तपस्वी जो नदी के किनारे जल भरने आया था बाण के आघात से छटपटा रहा है। तपस्वी से मालूम हुआ कि उसके अंधे और बूढ़े माता-पिता प्यासे अपने पुत्र की बाट जोह रहे हैं। शरीर से बाण निकाले जाने पर जब वह तापसकुमार परलोक सिधारा तब दशरथ ने डरते डरते आकर सब वृत्तान्त अंधे माता-पिता से कहा। बहुत विलाप करने के उपरान्त उन दोनों ने दशरथ को शाप दिया कि जिस प्रकार हमलोग इस समय पुत्रशोक में प्राण त्याग रहे हैं उसी प्रकार तुम भी पुत्रशोक में मरोगे। शाप दे कर दोनों अंधे तपस्वी चिता पर भस्म हो गए।

बौद्धों के शामजातक में जो कथा है वह ठीक इसी प्रकार है। देखिए—

एक स्थान पर दुकूल नामक बौद्ध मुनि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी पत्नी परिका और पुत्र शाम के सहित निवास करते थे। दैवयोग से शाम के माता-पिता अंधे हो गए। शाम उसी दिन से सब कुछ छोड़ एकाग्रचित्त से माता-पिता की सेवा करने लगे। इसी व्रत को उन्होंने धारण कर लिया। एक दिन किसी मृगयासक्त राजा ने धोखे में उन्हें बाण से मार गिराया। राजा ने आश्रम में जाकर जब यह दारुण संवाद कहा तब दोनो विलाप करते हुए मृतक पुत्र के पास आए। परिका ने बिलख कर कहा "यदि मेरे पुत्र ने ब्रह्मचर्य्य का यथार्थ पालन किया हो, यदि उस का सच्चा विश्वास बुद्ध और धर्म में रहा हो तो वह फिर जी जाय।" इस प्रकार की सत्य क्रिया से शाम जी उठे और एक देवी ने प्रकट हो कर अंधे माता-पिता को आँखें दीं।

इन दोनों कथाओं में कुछ विशेष अंतर नहीं है। अंतर केवल इतना ही है कि जातक की कथा में शाम और अंधे माता-पिता का अंत अच्छा दिखाया गया है और तीनों के नाम दिए हुए हैं और रामायण में यह सब कुछ नहीं है। दोनों कथाओं का मिलान करने से साधारण अनुमान यही हो सकता है कि जिस प्रकार दशरथ-जातक आदि में बहुत सी कथाएँ हमारे इतिहास-पुराण आदि से ली गई हैं उसी प्रकार बौद्धों के द्वारा यह भी ली गई होगी। पर एक बात इस संबंध में बहुत ध्यान देने की है।

आरंभ में कहा जा चुका है कि इस कथा को 'श्रवन या सरवन की कथा' के नाम से घर घर की स्त्रियाँ तक जानती हैं। बात यह है कि एक प्रकार के भिक्षुक होते हैं जो सादे करताल बजा कर और 'सरवन के गीत' गा गा कर भीख माँगते हैं। इन गीतों में माता-पिता के प्रति 'सरवन' की अनन्य भक्ति और सेवा का बहुत चित्ताकर्षक वर्णन होता है। ये भिक्षुक भी साधारणतः 'सरवन' ही कहे जाते हैं। इसमें तो कोई संदेह नहीं कि यह 'सरवन' या 'श्रवन' शब्द 'श्रमण' शब्द का ही अपभ्रंश है। बहुत से स्थानों में इन भिक्षुकों के लिए अभी थोड़े दिनों पहले तक यह नियम था कि ये सबेरे मुँह अँधेरे ही भिक्षा माँग लिया करें, उजाला होने पर न निकलें। इसका अभिप्राय यह है कि सबेरे सबेरे इनका मुँह देखना लोग अच्छा नहीं समझते थे। यह उस घृणा का स्मारक है जो हिंदू या ब्राह्मणधर्म के फिर से पूर्णतया स्थापित हो जाने पर बौद्ध भिक्खुओं के प्रति समाज में हो गई थी और जिसके कुछ प्रमाण संस्कृत नाटकों में मिलते हैं।

अस्तु, शंका होती है कि यह कथा बौद्धों ही की तो नहीं है। संभव है कि बौद्ध-भिक्खुओं का कोई सम्प्रदाय रहा हो जो माता-पिता की सेवा का उपदेश इसी कथा को गा कर जनसाधारण के बीच करता रहा हो और उसी के अवशिष्ट आभास ये 'सरवन' के गीत गानेवाले हों। रामायण की कथा की अपेक्षा जातकवाली कथा फलप्रदर्शन के कारण उपदेश के लिए अधिक उपयुक्त है। एक बात से उपर्युक्त अनुमान की और भी पुष्टि होती है। रामायण में लिखा है कि जब तापस-कुमार बाणविद्ध हो कर मरने लगा तब उसने दशरथ से कहा कि 'महाराज! आप ब्रह्महत्या का भय न करें। मैं ब्राह्मण नहीं हूँ। मैं वैश्यपिता और शूद्रामाता से उत्पन्न हूँ।' इतिहासज्ञों से यह बात छिपी नहीं है कि आरंभ में बौद्ध धर्म की ओर वैश्य और शूद्र ही टूटे थे। कारण यह था कि शासक वर्ग से अलग प्रजावर्ग में होने के कारण उन्हें महत्त्व-प्रदर्शन के अवसर प्राप्त नहीं थे। ब्राह्मण और क्षत्रिय मिल कर प्रजा का शासन करते थे। बड़े बड़े यज्ञ आदि ब्राह्मण-क्षत्रिय ही करते थे।

रामायण के वर्त्तमान विस्तार के भीतर कई स्थल ऐसे हैं जिनमें श्रमणों और बौद्धों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। ये स्थल चाहे प्रक्षिप्त हों, पर हैं काल के। उदाहरण के लिए दशरथ के यज्ञ वर्णन लीजिए। उसमें लिखा है कि ब्राह्मणों, तपस्वियों और श्रमणों (बौद्ध सन्यासियों) यों और बालकों को नित्य भोजन दिया था।

विश्व-विधान।

ताराग्रहोपग्रहकेतुजातैः
परस्पराकर्षणनिघ्नचारैः।
विचित्र वर्णाकृतिभिः समन्ता
द्व्याप्तं विशालंकिल विश्वमेतत्।

हम लोग इस पृथिवी पर रहते हैं और इसीपर अपना घर बनाते, कृषि व्यापार करते और देश देशांतरों की यात्रा करते हैं। देखने में यह चौड़ी और थाली के समान समतल दिखाई पड़ती है पर वास्तव में यह ऐसी नहीं है। यह नारंगी के समान गोल है। इसकी वृत्ति या पेटा लगभग २४००० मील और लगभग आठ हजार मील के है। यद्यपि प्राचीन काल में इसे स्थिर समझते और इसी से अचला कहते थे पर अब यह निश्चित से प्रमाणित हो चुका है कि यह एक दीर्घवृत्त में सूर्य्य की परिक्रमा करती हुई घूमती है। एक सूर्य और उसके अनेक ग्रह उपग्रह जो कक्षाओं में घूमते हुए उसकी परिक्रमा ते हैं मिल कर एक सौर जगत् होता है। इस में ऐसे अनेक सौर जगत् हैं। ये सौर जगत् ग्रहों उपग्रहों के साथ इस अनंत आकाश में करते हैं। हमारे सौर जगत् में, जिसका केंद्र सूर्य्य है, केवल पृथिवी ही नहीं है बुध, भौम, बृहस्पति शनि, उरण, वरुण तथा बालखिल्य और अनेक केतु भी हैं। इस सौर जगत् का व्यास लगभग ६ अरब मील का है। इसमें सूर्य्य ही अत्यंत प्रकाशवान् नक्षत्र है जिसका व्यास लगभग ८५२००० मील के है। इस सूर्य्य की परिक्रमा बुध, शुक्र, पृथिवी, भौम, बालखिल्य, बृहस्पति, शनि, उरण और वरुण तथा अनेक केतु अपनी अपनी कक्षाओं में भ्रमण करते हुए करते हैं।

हमारे इस सौर जगत् के समीप दूसरा सौर जगत् जिसका आज तक पता लगा है कम से कम दो नील मिल पर होगा। अन्य सौर जगतों के ग्रहों उपग्रहों और सूर्य्यों का हमें पता भी नहीं। हाँ, पास के सौर जगतों के सूर्यों को हम रात के समय देख सकते हैं और उन्हीं को हम स्थिर तारा कहते हैं। ये तारे हमसे इतनी दूर हैं कि इनके प्रकाश को, जिसकी गति दो लाख मील प्रति सेकंड है, हम तक पहुँचने में सैकड़ों और सहस्रों वर्ष लगते हैं। सब से पास के सौर जगत् का प्रकाश हमारे भूमडंल पर साढ़े तीन वर्ष में पहुँचता है। इसके अतिरिक्त सब सौर जगत् समान आकार के नहीं हैं। कितने सौर जगत् के सूर्य्य तो हमारे सूर्य्य से सहस्रों गुने बड़े हैं। सीरा नामक नक्षत्र, जिसका ज्ञान हमारे पूर्वज महर्षियों को वैदिक काल में कई सहस्र वर्ष पूर्व कृत्तिकादि नक्षत्रों के ज्ञान के पहले हुआ था और जिसे शुन नामक नक्षत्र के साथ शुनासीर कह कर वेदों में लिखा है, एक बहुत बड़े सौर जगत् का सूर्य्य है। यह तारा हमारे सूर्य्य से बारह सहस्र गुना बड़ा है और इसका प्रकाश हमारे पास पचास वर्ष में पहुँचता है। इसी प्रकार न जाने कितने सूर्य्य हमारे सूर्य्य से बड़े बराबर और उससे छोटे होंगे।

इतना ही नहीं, इस विश्व में अनेक स्थानों में सौर जगतों या ब्रह्मांडों का कहीं निर्माण और कहीं ध्वंस होता रहता है। उत्तरीय खगोलार्द्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में मृगशिरा नक्षत्र है। यह यद्यपि साधारण दृष्टि से देखने पर प्रकाशपुंज मात्र दिखाई पड़ता है पर वास्तव में यह तारा नहीं है। यह सौर जगत् की प्रकृति है। साधारण दूरबीन से देखने पर यह प्रकाश के धब्बे की भाँति दिखाई देता है। प्रकाश की परीक्षा करने से यह निश्चित किया गया है कि यह केवल वाष्पपुंज है और भावी सौर जगत् की मूल प्रकृति है। सौर जगत् की प्रकृतियों के अतिरिक्त छायापथ है जिसे लोग आकाशगंगा कहते हैं। यह धुँधले प्रकाश के पट की भाँति अँधेरी रात में खगोल के एक छोर से दूसरे छोर तक फैला दिखाई पड़ता है। नदी के समान इसका पाट विषम और टेढ़ामेढ़ा है। यह खगोल को मेखला की भाँति आवेष्ठित किए हुए है। इसके बीच में अनेक उज्वल और प्रकाशपूर्ण तारे भी चमकते दिखाई पड़ते हैं। यह छायापथ अत्यंत छोटे छोटे तारों से पूर्ण है जिनके प्रकाश को हम तक पहुँचने में सैकड़ों वर्ष लग जाते हैं। यह सब विश्व जिसे हमारे पूर्वज महर्षि ॐ ब्रह्म कहा करते थे इस बृहदाकाश में जिसे खंब्रह्म कहते हैं अवस्थित है। इस विश्व का एक अणु क्या अणु से भी लघु परमाणु और कृशाणु अथवा सर्वत्र ओत प्रोत वियत् (ईथर) भी ऐसा नहीं है जो गतिविशिष्ट नहो। वियत् से महत् तक सब गति विशिष्ट हैं और प्रति क्षण में बीसों योजन का चंक्रमण करते हैं। सब की गति सहेतुक और परिवर्तन नियमित हैं।

प्राचीन काल के विद्वानों ने, जिन्हें विश्व का इतना ज्ञान नहीं था और जो विश्व शब्द का वाच्य केवल इसी भूमंडल क्या इसके एक अंश मात्र को समझते थे, इस सृष्टि का कोई कर्त्ता माना था पर भारतवर्ष के अनेक महर्षियों ने बहुत पहले ही सृष्टि के सकर्तृक होने का निषेध कर उसे सहेतुक और परिणामजन्य कह कर भगवान् का विराट रूप बताया था। उन लोगों ने उपनिषदों में कहे हुए ऋषियों के वाक्यों का निचोड़ निकाल कर कई सहस्रवर्ष पूर्व 'जन्माद्यस्य यतः' कहकर उस परम तत्व को ब्रह्म कहा जिससे पशु कीट पतंग से लेकर सौर जगत् इत्यादि का जन्म होता है, जिसमें उनकी स्थिति रहती है और जिसमें वे परिणाम द्वारा लयप्राप्त होते हैं। यह सारा विश्व परिणाम-धारा में बद्ध है। सौर जगत बनते हैं, उनमें परिणाम द्वारा अनेक परिवर्तन होते हैं। अन्त में वे जीर्ण होते हैं और इस महदाकाश में भ्रमण करते हुए अन्य जगतों से टकरा कर भस्म होते तथा ज्वलंत वाष्परूप में परिणत हो जाते हैं। फिर काल पा कर उन्हीं की सामग्री से अन्य नये सौर जगतों का निर्माण होता है। मुकुट नामक खगोल प्रदेश के पास के एक तारे की दशा इसे प्रमाणित कर रही है। सन् १८६६ के पूर्व इस मंडल के समीप कोई तारा ऐसा नहीं था जो आंखों से दिखाई पड़ता रहा हो। उस वर्ष अचानक एक अत्यंत उज्वल नवीन तारा इस मंडल के दक्षिण पूर्वकोण में सटा हुआ दिखाई पड़ा। बड़े बड़े ज्योतिषियों ने यह निश्चित किया कि यह किसी ब्रह्मांड वा सौर जगत् का सूर्य्य है और दैवयोगवश किसी अन्य पिंड से टक्कर खा गया है। इस टक्कर का परिणाम यह हुआ है कि इसका प्रकाश दो सौ गुना बढ़ गया है। इसका ताप और तेज इतना परिवर्द्धित हो गया है कि यदि कहीं ऐसी दुर्घटना, दैव न करे, हमारे सूर्य्यदेव पर आ पड़े तो बरुणग्रह तक के प्राणियों का नाश हो जाय।

इस प्रकार यह विश्व अनेक विचित्र कौतूहल पूर्ण ताराओं से परिपूर्ण कार्य्य-कारण के अव्यवच्छिन्न सूत्र में ओतप्रोत बद्ध, अनादि काल से परिणाम प्राप्त होता हुआ चला आता है और इसी प्रकार चला जायगा।

शाश्वतीकिल जगद्विचित्रता
ऽवैतु हेतुमदसीयमत्रकः।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदिमन्तपि तत्र केवलं
व्यक्तयो दधति तद्वयोज्झिते ॥

हमारा सौरजगत्

हमारे इस सौर जगत् में, जिसमें हमारी पृथ्वी एक ग्रह है, सूर्य्य ही एक स्वयंप्रकाश तारा है। इसी केन्द्रीभूत सूर्य्य की परिक्रमा सब ग्रहों और केतु अपनी कक्षाओं में घूमते हुए करते हैं। यह सूर्य्य अपने ग्रहों उपग्रहों के साथ किस तारा की परिक्रमा कर रहा है अब तक निर्धारित नहीं हुआ है पर यह निश्चित है कि यह स्थिर नहीं है अपनी धुरी पर घूमता हुआ अवश्य किसी दूसरे नक्षत्र की परिक्रमा करता है। सूर्य्य का व्यास लगभग आठ लाख बावन हजार मील के है और उसका ऊपरीतल प्रकाशपुंज से आवेष्ठित है जिससे प्रकाश प्रस्फुटित होता है। यों तो सूर्य्य देखने में ठोस दिखाई पड़ता है पर वास्तव में ऐसा नहीं है। वह बिल्कुल वाष्पमय है। उसके ऊपर की तरह प्रकाशपुञ्ज के आवरण से आवेष्ठित है। वह इतना तापमय है कि उस पर कठिन से कठिन धातु पहुँच कर क्षण मात्र में गल कर वाष्परूप में परिणत हो सकती है। प्रकाशपुंज के आवरण के ऊपर एक लाल रंग का प्रकाश है जो आग की लपट की भाँति लहर मारता हुआ हजारों मील तक फैला करता है। इसे प्रभोर्मि कहते हैं। बड़े बड़े पूर्ण ग्रहणों में इस प्रभोर्मि की लहरें उठती हुई दिखाई पड़ती हैं। ये लहरें बीस हजार मील से लाख मील तक धधकती हुई ऊपर को उठती हैं और फिर विलीन हो जाती हैं। सूर्य्य के पिंड पर जितने ही गर्त दिखाई पड़ते हैं। इनमें कितने गर्त इतने बड़े हैं कि उनका व्यास लाख लाख मील का है। वे दस दस हजार मील तक गहरे हैं; जिनमें हमारी पृथिवी ऐसे आठ दस पिंड सुगमता से आ सकते हैं। इन्हीं गर्तों से यह निश्चय किया गया है कि सूर्य्य २६ दिन १० घंटे और ४८ मिनट में एक बार अपनी धुरी पर घूम जाता है।

सूर्य्य का अतिसमीपवर्ती और पहला ग्रह बुध है। इसका व्यास लगभग ३०६० मील है। यह सूर्य्य से ३५३९२००० मील पर अपनी कक्षा में घूमता हुआ ८७ दिन २३ घंटे ५९ मिनट में सूर्य्य की परिक्रमा करता है। यह अपनी लंबवृत्त कक्षा में कभी सूर्य्य से ४२६६९००० मील पर कभी २८११५००० मील पर घूमता है। इस पर बड़ी गर्मी है इस कारण यह माना नहीं जा सकता कि इस पर ऐसे प्राणी होंगे जैसे हमारे भूलोक में हैं। यह सूर्य्य के अति समीप है इस कारण बहुत कम दिखाई देता है। जब आकाश स्वच्छ होता है तब सूर्य्य के बिंब के आस पास थोड़ी दूर पर यह देख पड़ता है। इसके साथ कोई उपग्रह नहीं हैं।

शुक्र सौर जगत् का दूसरा ग्रह है। यह अत्युज्वल और प्रकाशवान् ग्रह है और प्रायः सायंकाल वा प्रातःकाल सूर्य्योदय के पीछे और सूर्य्योदय के पहले दिखाई पड़ता है। इसका प्रकाश द्वितीया के चाँद के बराबर होता है। इस ग्रह का व्यास ७५१० मील के लगभग है। यह सूर्य्य की परिक्रमा अपनी कक्षा में घूमता हुआ २२४ दिन और १७ घंटे में करता है। यह सूर्य्य से ६६५-६००० मील की दूरी पर घूमता है पर कभी कभी ६५६=८२००० मील की दूरी पर हो जाता है। इसकी दूरी सामान्यतः ६६१३४००० मील के लगभग है यह २३ घंटे २१ मिनट और १५ सेकंड में अपने अक्ष पर घूमता है। इसमें हमारी पृथिवी की नाईं वायुमंडल है तथा जल भी है। इसका कोई सहचारी उपग्रह नहीं है।

सौर जगत् का तीसरा ग्रह पृथिवी है। पृथिवी का व्यास ८००० मील के लगभग है। सूर्य्य से पृथिवी की कक्षा की दूरी ९२९६३००० से ९९८९९००० तक है। औसत दूरी ९१४३००० मील की कही जा सकती है। पृथ्वी अपने अक्ष पर २३ घं० ५६ मि० ४ सेकंड में घूमती है और ३६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिन ४ घंटे में सूर्य्य की परिक्रमा करती है। इसके साथ एक उपग्रह है जिसे चन्द्रमा कहते हैं।

चौथे ग्रह का नाम भौम या मंगल है जिसका व्यास लगभग ४४०० मील है। इसकी कक्षा की दूरी सूर्य्य से १५२३०४००० मील अधिक से अधिक और न्यून से न्यून १२६३१८००० मील है। यह सूर्य्य से १३९३-११००० मील की औसत दूरी पर अपनी धुरी पर घूमता हुआ ६८६ दिन २३½ घंटे में सूर्य्य की परिक्रमा करता है और २४ घं० ३७ मि० २३ सेकंड में अपनी धुरी पर घूमता है। इसके उपग्रह हैं और इस पर बड़े बड़े समुद्र, नद और द्वीप हैं। वर्तमान काल के विद्वानों ने बड़े बड़े दूरबीनों द्वारा देखकर यह निश्चय किया है कि इस पर प्राणियों का आवास है। यह आकाश में लाल रंग के प्रकाश से युक्त देख पड़ता है।

भौम के बाद का ग्रह बृहस्पति है पर भौम और बृहस्पति की कक्षाओं के बीच अनेक ऐसे छोटे छोटे ग्रहों की कक्षा है जो इतने छोटे हैं कि बिना दूरबीन की सहायता के निरी आँखों से नहीं दिखाई पड़ते। इनमें से अब तक कुछ का तो पता चला है शेष का पता नहीं चला है। इन्हें वालखिल्य कहते हैं। इनमें प्रत्येक की कक्षा और गति भिन्न भिन्न है। पर अनेक विद्वानों का अनुमान है कि पूर्व में सब की संयुक्त कक्षा में कोई बड़ा ग्रह था जो किसी दैवी आपत्तिवश नष्ट हो गया और टूटकर अनेक पिंडों में परिणत हो गया। इस वालखिल्य ग्रहसमूह की कक्षा १५००००००० मील है और इसकी सूर्य्य से न्यून से न्यून दूरी १६४००००००० और अधिक से अधिक २१५००००००० मील है।

बृहस्पति सौर जगत् का पांचवाँ ग्रह है। इसका व्यास ८५००० मील है और यह अपनी धुरी पर ९ घंटे ५५ मिनट और २६ सेकंड में घूमता है। इसकी कक्षा की दूरी सूर्य्य से अधिक से अधिक ४९८६३९००० और न्यून से न्यून ४५२७४५००० मील है। यह सूर्य्य से ४७५६९२००० मील की सामान्य दूरी पर घूमता हुआ ४३३२ दिन १४ घंटे में उसकी परिक्रमा करता है। आकाश में देखने पर यह सफेद रंग का अत्यंत प्रकाशवान् तारा दिखाई देता है। यह सौर जगत् में सब से बड़ा ग्रह है। इसमें उपग्रह हैं।

बृहस्पति के अनंतर छठाँ ग्रह शनि है। यह इस जगत् में एक विलक्षण ग्रह है। इसके ऊपर एक छल्ला है। इस ग्रह का व्यास ७०००० मील है। इसकी कक्षा की दूरी अधिक से अधिक ९२०९७३००० मील और न्यून से न्यून ८२३०१००० मील के लगभग है। यह सूर्य्य से ८७२१३७००० की सामान्य दूरी पर १० घं० २९ मि० १७ से० में अपनी धुरी पर घूमता हुआ १०७५९ दिन ५ घं० १६ मि० ३१ से० में सूर्य्य की परिक्रमा करता है। इसके आठ उपग्रह हैं।

शनि के अनंतर करण की कक्षा है जो इस जगत् का सातवाँ ग्रह है। इसकी कक्षा इतनी दूर है कि यह दूरबीन की सहायता के बिना दिखाई नहीं पड़ता। इसकी कक्षा की दूरी सूर्य्य से अधिक से अधिक १८३५५६१००० और न्यून से न्यून १६७२१७७००० मील है। यह सूर्य्य से १७५-३८६९००० मील की सामान्य दूरी पर ९ घं० ३१ मि० में अपनी धुरी पर घूमता हुआ ३०६८६ दिन १९ घं० ४१ मि० ५९ से० सूर्य्य की परिक्रमा करता है। इसमें उपग्रह हैं।

आठवाँ और अंतिम ग्रह जो इस जगत् का अब तक मालूम हुआ है वह वरुण ग्रह है। इसकी कक्षा की दूरी सूर्य्य से अधिक से अधिक २७७११९००० मील और न्यून से न्यून २७२०८०६००० मील है। यह सूर्य्य की परिक्रमा ६०१२६ दिन १७ घंटे १६ मि० ४८ से० में करता है। यह अपनी धुरी पर कितने दिनों में घूमता है इसका निश्चय अब तक नहीं हुआ है।

इन आठ ग्रहों और वालखिल्यों के अतिरिक्त कितने ही केतु हैं जो अति शीघ्र वृत्तिकक्षा में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुए भगवान् भुवनभास्कर की परिक्रमा हैं। उनकी आकृतियां भिन्न भिन्न हैं। उनकी ाएं भी भिन्न भिन्न और अनेक हैं।

जगन्मोहन वर्मा।

प्रांतीय हिंदी-सम्मेलन।

सभापति बाबू श्यामसुंदरदास जी का सम्भाषण।

चतुर्थ प्रांतीय-हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के सभा- ेवा० श्यामसुँदर दास जी बी० ए० ने जो मौखिक ाख्यान दिया वह ठीक ठीक और पूरा पूरा नीचे ा जाता है :—

स्वागतकारिणी सभा के सभापति,
पूज्यपाद मालवीय जी तथा सज्जनो,

स्वा मी सत्यदेवजी और पं० ज्योति स्वरूप जी ने जिन उदार शब्दों में मेरे सभापति चुने जाने का प्रस्ताव और अनुमोदन किया है उसके लिये मैं हृदय से उन्हें धन्यवाद देता हूँ। पर स्वागतकारिणी सभा ने सभापति चुनने में समय का ख्याल नहीं किया। ारीख की संध्या को लाचार हो कर मुझे यह ीकार करना पड़ा और ५ तारीख के सबेरे ों के लिये मुझे चलना पड़ा। ऐसी दशा में ना भाषण लिखना मेरे लिए असम्भव था। मौखिक रूप में ही मैं अपना वक्तव्य आप सेवा में निवेदन करता हूं। आशा है आप मेरी ियों पर ध्यान न देंगे।

सज्जनो! जिस विषय पर विचार करने के आज हम लोग यहाँ एकत्र हुए हैं वह मातृ- हिंदी तथा नागरी अक्षरों के साथ संबंध रखता है। इस समय भारतवर्ष में हिंदी भाषा तथा नागरी लिपि की जो दशा है और उसके संबंध में सारे भारत में लोगों के जो विचार हो रहे हैं उसका अनुमान आप लोग स्वयं कर सकते हैं। इस समय विचारों की एक नई लहर भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक उठ रही है। इस समय सारे देश में राष्ट्रीयता के भाव फैल रहे हैं। जिस ओर देखिए उस ओर राष्ट्रीयता की ही पुकार सुनाई दे रही है। संसार के सभी देशों के इतिहास में मातृभाषा और उसके इतिहास का स्थान बहुत ऊँचा रहा है। अपनी भाषा की सहायता से हम उन्नति के पथ पर अग्रसर हो सकते हैं और इसे छोड़ कर अपने उद्देश्यों में सफल मनोरथ नहीं हो सकते। युरोप के वर्त्तमान इतिहास में भी इसका प्रमाण मिलता है। अभी जिस समय आस्ट्रिया ने संधि का प्रस्ताव उपस्थित किया था उस समय बेलजियम की स्वतंत्रता का भी प्रश्न उठा था। जर्मनी ने उस प्रांत को तो छोड़ देना स्वीकार किया था परंतु उसने यह कहा था कि वहां का सब काम उस भाषा में होना चाहिए जो जर्मन नीति के अनुकूल हो। इससे उसका तात्पर्य यह था कि वहाँ जर्मन भाषा का प्रचार हो जिससे जर्मन जाति का बल बढ़े। सन् १८७० के युद्ध के उपरांत जर्मनी ने फ्रांस के अलसेस लोरेन प्रांत छीन लिए थे। वह इन प्रांतों का शासन अपनी नीति के अनुसार करता है। उसने वहाँ जर्मन भाषा का पूर्ण प्रचार कर रक्खा है। ऐसा कहा जाता है कि एक बार जर्मनी की महारानी एलसेस लोरेन के किसी नगर में एक कन्या पाठशाला देखने गईं। वहाँ एक फरासीसी कन्या के कार्य्य से वे बड़ी प्रसन्न हुईं। उन्होंने उससे कहा कि जो चाहो माँगो। कन्या ने कहा कि यदि आप ऐसा कर सकती हैं तो हमारे स्कूलों में फ्रेंच भाषा के प्रचार की आज्ञा दे दें। धन्य है उस कन्या को और कोटिशः साधुवाद है उसके देश-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेम और भाषा प्रेम पर। बूयर युद्ध के मूल कारणों में डच भाषा का प्रचार भी एक कारण था। हालैण्ड से आए हुए डच लोग, जो बूअर कहलाते हैं, यह चाहते थे कि हमारी भाषा का प्रचार हो और अंगरेज लोग यह चाहते थे कि हमारी अंगरेजी भाषा का प्रयोग हो। बूअर युद्ध के उपरांत जो संधि हुई उसमें इन डच लोगों को यह स्वतंत्रता दी गई कि वे अपने बालकों को डच भाषा द्वारा शिक्षा दे सकेंगे और उनके इस कार्य का कोई विरोध नहीं होगा। इन बातों के कहने से मेरा तात्पर्य यही है कि युरोप निवासी अपनी मातृभाषा के महत्त्व को भली भाँति समझते हैं और कोई अवसर भी ऐसा नहीं जाने देते जिसमें उनका भाषा-प्रेम स्पष्ट न हो। पर भाषा प्रेम या देश प्रेम की जड़ में अपने इतिहास का प्रेम है। जिस जाति ने अपने इतिहास को भुला दिया उसके नष्ट होने में देर नहीं लगती। अपने इतिहास का भूल जाना मानों अपने आपको भूल जाना है। जिसने अपने आप को भुला दिया है उसमें फिर रही क्या जायगा जिसके भरोसे वह उन्नति के शिखर पर क्रमशः चढ़ सकेगा और संसार में अपना अस्तित्व स्थिर रक्खेगा। एक महात्मा का तो यहाँ तक कहना है कि यदि कोई प्रसन्न हो कर कहे कि स्वतंत्रता और इतिहास में से जो इच्छा हो सो माँग लो तो मैं तो इतिहास ही माँगूंगा क्योंकि यदि हमारा इतिहास बना रहेगा तो उसकी सहायता से हम अपनी खोई हुई स्वतंत्रता भी फिर कभी प्राप्त कर सकेंगे। इतिहास नष्ट हो जायगा तो फिर स्वतंत्रता कहां तक बनी रह सकती है? इतिहास से मनुष्य उत्साहित होता है और उसमें महत्व की आकांक्षा होती है। एक इसी बात से आप इतिहास की उपयोगिता का अनुमान कर सकते हैं। इतिहास और मातृभाषा का बहुत ही घनिष्ट संबंध है।

भारतवर्ष का इतिहास लीजिए तो उसमें भी आप पाइएगा कि देश में जैसी राजनैतिक अवस्था रही उसके अनुसार भाषा की भी उन्नति हुई। राजनैतिक उलटफेर के साथ भाषा की अवस्था में भी उलटफेर होते हैं। जहाँ तक शक्ति में हो अपने बालकों को अपनी मातृभाषा में शिक्षा दो। दक्षिण अफ्रिका में जिस समय बोअर युद्ध हुआ था उस समय साथ ही भाषा के प्रचार का भी प्रश्न लगा हुआ था। वहाँ के डच लोग, जो बोअर कहलाते हैं, अपनी डच भाषा का प्रचार करना चाहते थे और अंगरेज लोग अंगरेजी भाषा का। और यह भी युद्ध के कारणों में से एक कारण था। आज कल के उन्नत और सभ्य देश हम लोगों की तरह अपनी मातृभाषा का निरादर नहीं करते। वे मातृभाषा के लिये अपना सर्वस्व तक दे देने में संकोच नहीं करते यहाँ तक कि वे उसके लिये अपने प्राण तक अर्पण कर देते हैं। जिस समय इस देश में अंगरेजों का राज्य हुआ और यहाँ के लोगों को शिक्षा देने की आवश्यकता हुई उस समय यहाँ भी अंगरेजों ने यही निश्चय किया कि अंगरेजी के द्वारा शिक्षा दी जाय। लेकिन आप लोग देख सकते हैं कि अंगरेजी में शिक्षा देने से कितना लाभ हुआ है, उससे हमारा कितना उपकार हुआ है। देश में ज्ञान का जो इतना कम प्रचार हुआ है उसका कारण यही है कि हम लोगों को अपनी मातृभाषा में नहीं बल्कि अंगरेजी भाषा में शिक्षा दी जाती है। अंगरेजी भाषा से हम लोगों का जो कुछ उपकार हुआ है और हम लोगों में जातीयता के जो भाव आए हैं, हम उनको भूल नहीं जाते हैं पर फिर भी इससे हमारी जातीय उन्नति में उतनी सफलता नहीं हुई है जितनी कि मातृभाषा में शिक्षा मिलने से होती। हमारी सब प्रकार की शिक्षाएं—राष्ट्रीय शिक्षा, धार्मिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ा, नैतिक शिक्षा, औद्योगिक शिक्षा—मातृ-
ा में होनी चाहिए इसी से हमारे
ार्थ में सफलता हो सकेगी। आप राष्ट्रीय
ाण में उससे बहुत बड़ी सहायता ले सकते हैं।
के लिये वह सब से कधिक उपयुक्त है और
से हमें पूरी सफलता हो सकती है। इन कान-
रेन्सों को ही देखिए। जब से इन कानफरेन्सों
मातृभाषा में कुछ काम होने लगा है तब से ये
ों को अपनी ओर कितना आकृष्ट करने लगी
और वे इन के कामों को कितना समझने
हैं! पहले जब इन कानफरेन्सों में अंगरेजी
काम होता था तब इनकी बातें देश के
त थोड़े लोग समझते थे, पर आज
े भारत में लोग उन बातों को समझते हैं।
यदि कोई आन्दोलन उठे तो वह थोड़े ही
य में सारे देश में फैल जाता है। यह मातृभाषा
काम होने का ही प्रभाव है।

राष्ट्रनिर्माण में मातृभाषा का स्थान बहुत ऊँचा है।
की सहायता से थोड़े ही समय में बहुत बड़ी
फलता हो सकती है। लेकिन प्रश्न हो सकता
कि इस राष्ट्रनिर्माण में हिंदी से ही सहायता
की क्या आवश्यकता है? इसमें बँगला, मराठी
गुजराती से क्यों न सहायता ली जाय?
ायता लेने के लिये आप को कोई मना नहीं
ता। जिसकी जो मातृभाषा हो वह उससे
ायता ले। परंतु उससे केवल प्रान्तिक कार्य्य
होंगे। राष्ट्रनिर्माण में उसी भाषा से सहायता
ेगी जो सारे देश में समझी और बोली जाती
। एक प्रान्त के लोग दूसरे प्रांतवालों से बात
ते समय जिस भाषा का व्यवहार करेंगे
ी भाषा राष्ट्रभाषा हो सकती है। जिस भाषा
सहायता से एक प्रदेश के लोगों के विचार
रे प्रदेश के लोगों तक पहुँच सकें और जो देश
भिन्न भिन्न भागों में समझी जा सके वही
ष्ट्रभाषा हो सकती है। हमारा किसी प्रान्तीय
भाषा से विरोध नहीं है, हम यह नहीं कहते कि कोई अपनी मातृभाषा का प्रचार न करे, बल्कि सब लोगों का कर्तव्य है कि वे अपनी अपनी मातृभाषा की उन्नति करें, उसी में अध्ययन करें और उसका साहित्य बढ़ावें। परंतु जातीय या राष्ट्रीय-जीवन के लिये एक राष्ट्रभाषा की आवश्यकता है और वह राष्ट्रभाषा हिन्दी ही है। इसके कई कारण हैं।

इसके राष्ट्रीय भाषा होने का सब से पहला कारण इसकी प्राचीनता है। जितनी प्राचीन हिन्दी भाषा है उतनी प्राचीन और कोई देशभाषा नहीं है। इस रूप में सारे भारत में इसका बहुत दिनों से प्रचार है। कविता में बारह तेरह सौ वर्षों से इसका व्यवहार हो रहा है। प्राकृत और संस्कृत के साथ इसका घनिष्ट सम्बन्ध है। इसी प्राचीनताके कारण इसकी दूसरी विशेषता यह है कि इसमें हमारा परम्परागत इतिहास भरा हुआ है जिसकी रक्षा करना हमारा परम धर्म है। इतिहास का स्मरण आवश्यक है। यदि हमें अपने पूर्वजों के गौरव का ज्ञान और अभिमान बना रहेगा तो हम बहुत शीघ्र अपनी और अपने देश की उन्नति करके स्वतंत्रता प्राप्त कर सकेंगे। जिनको जीवित रहना हो वे अपने इतिहास की रक्षा करें। यह इतिहास हमें प्राप्त है। हमारे इतिहास और साहित्य की बहुत लम्बी चौड़ी कहानी है। यदि मैं उसका वर्णन करने लगूं तो बहुत सा समय लग जायगा। एक तुलसीकृत रामायण को ही ले लीजिए। इस एक ग्रंथ ने कितना उपकार उत्तर-भारत का किया है। राजा के प्रासाद से ले कर एक दरिद्र के झोंपड़े तक सब जगह इसका समान आदर और प्रचार है। इस आदर्श ग्रंथ के उत्तम उपदेशों को, जो कि दोहों और चौपाइयों में भरे पड़े हैं, लोग आदर्श मान कर जीवन का धर्म स्थिर करते हैं। खोज करने से हमें और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी ऐसे अनेक ग्रंथ मिलेंगे। हिन्दी भाषा में एक दूसरा गुण यह भी है कि सारे भारत में सर्व-साधारण में अब भी इसका सब से अधिक प्रचार है। जब एक प्रान्त का मनुष्य दूसरे प्रान्त में जाता है तब वह अपने हृदय के भाव प्रकट करने के लिये जिस भाषा का आश्रय लेता है वह भाषा हिन्दी ही है। टूटी फूटी हिन्दी के द्वारा एक पंजाबी या बंगाली मद्रास में भी अपना काम निकाल सकेगा। इसी प्रकार मद्रासी भी यहाँ आकर हिन्दी में बड़ी सरलता से अपना काम निकाल लेते हैं। इस देश में जितना प्रचार हिन्दी भाषा का है उतना और किसी भाषा का नहीं है। इसकी यह सार्व-भौमता और सब भाषाओं से चढ़ी बढ़ी है। तीसरी बात यह है कि इसकी उत्पत्ति संस्कृत से प्राकृत के द्वारा हुई है। भारत में संकृत का जि-तना आदर है उतना आदर और किसी भाषा का नहीं है। इन्हीं कारणों से हिंदी राष्ट्रभाषा के पद पर सुशोभित हो राष्ट्रनिर्माण में अमूल्य सहायता दे सकती है—दे ही नहीं सकती, अब भी दे रही है। जब हिन्दी अब भी वही काम करती है जो राष्ट्रीयता के निर्माण में करना पड़ता है तब विवाद या कारण की आवश्यकता नहीं दिखाई देती।

शिक्षा के सम्बन्ध में हमने अब तक जो सब से बड़ी भूल की है यह यह हैं कि हमने ज्ञान की प्राप्ति और उसके उपाय में भेद नहीं किया। लिखना पढ़ना वह उपाय है जिससे हम ज्ञान की प्राप्ति करते हैं। आज कल हम लोग ज्ञान की प्राप्ति का तो कोई ध्यान नहीं रखते पर हां इस बात का प्रयत्न करते हैं कि सुन्दर अंग-रेजी लिख या बोल सकें। पर किसी भाषा के लिखने या बोलने से मस्तिष्क का विकाश नहीं होता और वास्तव में विद्या का लाभ ज्ञान-प्राप्ति और मस्तिष्क का विकाश ही है। भाषाओं का ज्ञान प्राप्त करना तो केवल उसका उपाय है। शिक्षा ऐसी भाषा में होनी चाहिए जो जटिल न हो और जिसके सीखने में कोई कठिनता न हो। आज कल जिस अंगरेजी भाषा में शिक्षा दी जाती है वह बहुत ही जटिल और कठिन है जिससे उसके सीखने में ही व्यर्थ कई वर्ष लग जाते हैं। यह ज्ञान देने का काम क्या हमारी मातृभाषा नहीं कर सकती? अवश्य कर सकती है और बड़ी सरलता से, बड़ी सुगमता से कर सकती है। जिन लोगों को शिक्षा के काम का कुछ अनुभव है वे यह बात स्वीकार करेंगे कि वर्नाक्यूलर मिडिल पास करनेवाले लड़के जितनी उन्नति करते हुए देखे जाते हैं उतनी दूसरे लड़के नहीं करते। गणित, इतिहास, भूगोल आदि सभी का ये लड़के बहुत अच्छा ज्ञान रखते हैं। कोई ऐसा हेडमास्टर न होगा जो ऐसे लड़कों की इच्छा न रखता हो। ये लड़के परिश्रमी और बुद्धिमान् होते हैं। इस भेद का कारण केवल इतना ही है कि इनको मातृभाषा के द्वारा शिक्षा दी जाती है और दूसरे बालकों को अपना बहुत सा समय ए बी सी डी का ज्ञान प्राप्त करने में ही नष्ट कर देना पड़ता है। इसका फल यह होता है कि उनके मस्तिष्क का विकाश नहीं होता। उनकी विचारशक्ति नहीं बढ़ती और उनमें किसी प्रकार का आविष्कार करने की शक्ति नहीं रह जाती। जब बालक एक विदेशी भाषा का ज्ञान प्राप्त करने में लग जाता है तब न तो वह विद्या ही प्राप्त कर सकता है और न उसमें विचार करने की शक्ति ही आ सकती है। उदाहरण के लिये दो एक दृष्टांत दे देना ही यथेष्ट होगा। अध्यापक जगदीश चंद्र बसु ने अनेक प्रकार के आविष्कार कर के सारे संसार के सामने भारत का सिर ऊँचा किया है। यदि हम लोगों को मातृभाषा में शिक्षा दी जाती तो न जाने हम अब तक कितने जगदीशचंद्र उत्पन्न कर देते। अ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात लोगों के विचार में आने लगी है और मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने विचार कर रहे हैं। कोई यह नहीं कहता मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने के ही अंगरेजी का अध्ययन उठा दिया जाय हम लोग अंगरेजी न पढ़ें। नहीं, हमारे और राष्ट्रीय जीवन के लिये अंगरेजी ज्ञान परम आवश्यक है। इसके अति- जो लोग अंगरेजी भाषा के पण्डितों अपना नाम गिनाना चाहें वे अंगरेजी का प्राप्त कर सकते हैं। परंतु समस्त जाति के अंगरेजी का ज्ञान प्राप्त करने की आवश्य- नहीं है। जो लोग अंगरेजी पढ़ना चाहें कोई रोक नही सकता। पर जनता की मातृभाषा के ही द्वारा होनी चाहिए। रेजी को इस देश में शिक्षा का माध्यम बने सवा सौ वर्ष हुए पर अब तक केवल बीस आदमी ऐसे हुए जो अंगरेजी पढ़ना जानते हैं। यह भी अनुमान किया है कि प्रति वर्ष ५०—६० हजार ऐसे लोग उपस्थित होते हैं जो अंगरेजी भाषा ज्ञान रखते हैं। पर देशीभाषा में प्रति वर्ष प्राप्त करने वाले बालकों की संख्या प्रायः लाख होती है। अब आप हिसाब लगाइए कितने सहस्र वर्षों में समस्त भारत अंगरेजी शिक्षा प्राप्त कर लेगा। समझने की बात है कि भाषा के द्वारा तीन लाख बालक शिक्षा प्राप्त हैं उसके द्वारा हम देश में शिक्षा का कर सकेंगे या उस भाषा के द्वारा सकेंगे जिसमें प्रतिवर्ष ५० हजार मनुष्य पाते हैं। यदि देशी भाषा में शिक्षा प्राप्त वाले विद्यार्थियों की संख्या प्रतिवर्ष न भी तो भी देशी भाषाओं के द्वारा $\frac{1}{4}$ वें समय में देश में शिक्षा का प्रचार हो जायगा। यदि रेजी के द्वारा एक सहस्र वर्ष में शिक्षा का प्रचार हो सकता है तो हिन्दी के द्वारा २०० वर्ष में ही हो सकता है। इस बात का विचार आप लोग स्वयं कर सकते हैं कि देश की उन्नति के लिये समय कितना मूल्यवान् है। यह उन्नति हजार दो हजार वर्षों में हो अथवा सौ दो सौ वर्षों में हो इसका निर्णय आप लोग स्वयं कर लें। मेरी समझ में तो यह बात इतनी स्पष्ट है कि इसके उत्तर की आवश्यकता ही नहीं है। सारांश यह कि हम लोगों को मातृभाषा को ही शिक्षा का माध्यम बनाना चाहिये नहीं तो हमें विद्या के जितने प्रचार की आवश्यकता है उतना प्रचार न हो सकेगा।

पूज्यवर मालवीय जी मुझे क्षमा करेंगे कि हमारा हिन्दू विश्वविद्यालय भी इस विषय में हमारी आवश्यकता की पूर्त्ति नहीं कर रहा है। आगे चलकर वह हमारी आवश्यकताओं को अंशतः अवश्य पूर्ण करेगा परन्तु अभी तक तो इसका कोई लक्षण देखने में नहीं आता। हिन्दू विश्वविद्यालय में संस्कृत की शिक्षा का प्रबन्ध तो हिन्दी के द्वारा हो गया पर अंगरेजी के सम्बन्ध में वह ज्यों का त्यों बना हुआ है और प्रयाग विश्वविद्यालय के समान ही है। अवश्य ही मालवीय जी इसके पक्षपाती, समर्थक वा पोषक नहीं हैं। अब भी विश्वविद्यालय बहुत कुछ उन्हीं के उद्योग से चल रहा है और यदि वे उससे अपना हाथ खींचलें तो उसकी उन्नति नहीं हो सकती। हमारी सारी आशाएँ पूज्य मालवीय जी पर निर्भर हैं। इससे हम आशा करते हैं कि आप इस बात का कोई प्रयत्न करेंगे कि हिन्दू विश्वविद्यालय में भी शिक्षा का माध्यम मातृभाषा हो। ऐसी शिक्षा गुरुकुल आदि में दी जा रही है और उसमें सफलता भी हो चुकी है। जो लोग यह कहते हों कि देशी भाषाएं शिक्षा के काम के उपयुक्त नहीं हैं वे यह उदाहरण देख लें। इस सम्बन्ध में दूसरा उद्योग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैदराबाद की ओसमानिया युनिवरसिटी है। तो क्या हिन्दू विश्वविद्यालय इस सम्बन्ध में हमारी आशाएं न पूर्ण करेगा ? हम तो समझते हैं कि अवश्य करेगा चाहे अभी इसमें दो चार या दस वर्ष का समय लग जाय पर फिर भी हिंदू विश्वविद्यालय में हिंदी भाषा के द्वारा अवश्य शिक्षा दी जायगी। मुझे उन बातों के प्रकट करने का कोई अधिकार नहीं है जो रास्ते में रेल में पूज्य मालवीय जी और मुझ में हुई हैं पर मैं इतना अवश्य कह सकता हूं कि यह अभाव उनको भी बहुत खटक रहा है। इस का उन्हें दुःख भी है और वे इस त्रुटि को दूर करने के उद्योग में भी हैं। वे चाहते हैं कि हम यह दिखला दें कि मातृभाषा में ही उच्च से उच्च शिक्षा दी जा सकती है। मैं आशा करता हूं कि जिस समय हम लोगों को आप का उपदेश सुनने को मिलेगा आप इसविषय में कुछ बातें बतला कर हम लोगों का संतोष करेंगे।

हिंदी के कुछ विरोधियों का कहना है कि हिंदी और उर्दू का कोई झगड़ा नहीं है, दोनों भाषाएं एक हैं केवल अक्षरों का अंतर है। एक और दूसरा दल है जो हिंदी भाषा का अस्तित्व ही स्वीकार नहीं करता। वह कहता है कि यह एक बनावटी भाषा है जिसे मालवीय जी ने उत्पन्न किया है। इस विषय में काउन्सिल तक में आपका नाम आया था और कहा गया था कि आपने वैर विरोध बढ़ाने के लिये यह भाषा खड़ी की है, उसमें तत्त्व कुछ नहीं है। ऐसे लोगों की बातों पर हमें हँस कर ही चुप हो जाना चाहिए। जिनको ज्ञान ही नहीं है और जो उस ज्ञान की प्राप्ति का कुछ उद्योग भी नहीं करते उनको हम क्या समझाएं ? जिस भाषा को सब लोग बोलते और लिखते हैं और जिसका पुराना इतिहास उपस्थित है वे उसका अस्तित्व ही नहीं मानते। लेकिन ऐसे लोगों से यदि हम कहें कि आप की भाषा में जो मुख्य अंग है वह हमारा है हमें लौटाइए - हमारी क्रियाएं हमें दे दीजिये और तब बोलिये तो कदाचित् उन लोगों के मुँह से एक वाक्य भी न निकले। इस प्रकार जब वे हमारा ऋण हमें लौटा दें तो फिर उनकी कोई भाषा ही न रह जायगी। क्रियाएं हमारी हैं, भाषा हमारी है, केवल अक्षरों का अंतर है। यदि हम लोग उर्दू भाषा के संगठन की जाँच करें तो ज्ञात होगा कि व्याकरण हिंदी का ही है केवल लिखावट उर्दू की है। भेद केवल लिपि का और संज्ञाओं या नामों का है। हिंदी में दो प्रकार के शब्द होते हैं। जो शब्द संस्कृत से अपने ठीक ठीक रूप में हिंदी में आए हैं वे तत्सम कहलाते हैं जैसे 'नगर' 'मनुष्य' आदि और जो प्राकृत द्वारा कुछ विकृत रूप में आए हैं वे तद्भव कहलाते हैं जैसे मूल संस्कृत शब्द "हस्त" का प्राकृत में 'हत्थ' हुआ और हिंदी में वह 'हाथ' हो गया। यह तद्भव शब्द है। यदि कोई हिंदी के विषय में कहे कि सरल भाषा लिखो तो वह तभी लिखी जा सकती है जब कि उसमें तद्भव शब्दों की अधिकता हो और तत्सम शब्द कम हों। पर उर्दू में इससे बिलकुल विपरीत अवस्था है। वहां तत्सम शब्दों की विशेष आवश्यकता पड़ती है। ऐसे शब्दों ही से सलीस उर्दू कहलाती है। देवनागरी की केवल प्राचीनता के कारण ही नहीं पर इस लिपि के लिये हम विशेष आग्रह इस लिये करते हैं कि इससे बढ़ कर पूर्ण और सुन्दर लिपि और कोई जाति उत्पन्न ही नहीं कर सकी है। पहले इसके क्रम को लीजिए। इसमें चार स्वर अ इ, उ, ऋ से सब काम चलता है। व्यंजनों का क्रम भी विज्ञान से खाली नहीं है। उनके एक एक अक्षर को देखिए। पहले क वर्ग है जिसका उच्चारण कंठ से होता है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रण के लिये पहला स्थान वही है। उस
न से जिनका उच्चारण होता है पहले वे
ले गए हैं फिर वे अक्षर हैं जिनका उच्चारण
न से होता है और फिर मूर्द्धा से बोले जाने
हैं। इनके अनंतर उनको रखा है जिनका
से उच्चारण करते हैं, जिनके बोलने में
एक दूसरे से लगाने पड़ते हैं। इसके पीछे
ष्ठ हैं जिनमें दोनों होठों को मिलाना पड़ता
जैसे प फ ब भ आदि। इस प्रकार सब
र क्रम से और विचार पूर्वक रखे गए हैं
ही नहीं। इसके विपरीत फारसी को लीजिए।
में स्वरों का तो कहीं नाम ही नहीं है। ज़ेर
र और पेश से ही स्वरों का काम निकाला
ता है। कहीं कहीं व्यञ्जनों से भी स्वरों
काम लिया जाता है। उनका क्रम भी बड़ा
लग है। जैसे पहले अलिफ तब बे तब पे-
क्रम का कोई कारण ही नहीं। अंग-
में भी यही दशा है। उसमें पहला अक्षर
(ए) एक स्वर है उसके तीन अक्षरों के
फिर E (ई) एक स्वर आता है, फिर तीन
रों के बाद I (आई) स्वर आता है, उसके
अक्षरों के बाद स्वर O 'ओ' है। इस प्रकार
में भी स्वरों और व्यंजनों का कोई क्रम नहीं
। पर हमारे यहां यह बात नहीं है। देव
री में स्वर भी क्रम से हैं और व्यंजन भी।
और सुन्दरता के अतिरिक्त हमारे यहाँ के
रों के उच्चारण और नाम में भी विशेषता
अ से सदा अ ही का काम लिया जायगा। यह
, कहेंगे तो 'ए' और काम कहीं 'अ' का लेंगे
कहीं 'ऐ' का और कहीं कुछ और। उच्चारण
गे वे और काम लेंगे ब का। इस सुगमता,
निकता, और स्पष्टता से बालकों को
लाभ होता है, उन्हें अक्षरों का सदा वही
रण सिखलाया जाता है जिससे उन्हें काम
पड़ता है। हमारे यहां का अ सदा अ ही
रहेगा बालक को यह सीखने की आवश्यकता
नहीं होगी कि अ का यहां क्या उच्चारण होगा
और वहां क्या उच्चारण होगा। इन सब बातों से
उनकी शिक्षा में बहुत सहायता मिलती है।
अब आप ही अनुमान करें कि जिन अक्षरों में
यह गुण, यह वैज्ञानिकता, यह सुन्दरता हो उनको
छोड़ कर हम उन अक्षरों को क्यों कर ग्रहण कर
सकते हैं जिनमें इन गुणों का नाम भी नहीं है,
जो अपूर्ण हैं, जिनमें एक उचारण के लिये तो कई
अक्षर और किसी उच्चारण के लिये एक भी अक्षर
नहीं है। यह कहाँ की बुद्धिमत्ता है कि हम लोग
ध्रुव का तो त्याग करें और अध्रुव को ग्रहण करते
चलें। किसी ने ठीक कहा है-यो ध्रुवाणि परित्यज्य
अध्रुवं परिषेवते। ध्रुवाणि तस्य नश्यन्ति अध्रुवं
नष्टमेव हि॥ इस प्रकार हमारा ध्रुव भी अवश्य
नष्ट हो जायगा जिससे हमारा बड़ा भारी अनिष्ट
होगा। इसलिये हमारी सम्मति है कि जिसके
कारण संसार में हमारा इतना गौरव है उसको
हम न त्यागें और जो जो कठिनायां उत्पन्न हों
उन सब को दूर करते रहें। हमारे एक नए मित्र
उत्पन्न हुए हैं जिनका नाम है रेवरेण्ड नोल्स।
आज के लीडर में भी उनका एक लेख प्रकाशित
हुआ है। वे रोमन लिपि को ही विद्या के प्रचार
का साधन समझते हैं। वे कहते हैं कि छपाई में
सुबीता होगा इस लिये हम नागरी को छोड़ दें
और रोमन ग्रहण करें। लेकिन जिससे हमारा
गौरव है, जिसका हमें अभिमान है और जिससे
हमें सबसे अधिक सहायता मिलती है हम उसका
कभी परित्याग नहीं कर सकते। उसके लिखने में
चाहें औरों की अपेक्षा हमारा अधिक समय क्यों
न लगता हो पर उससे हम स्पष्टता और शुद्धता
तो प्राप्त कर सकते हैं। उसके पढ़ने में जितना
कम समय लगेगा उससे लिखने के देर की पूर्त्ति
हो जायगी। अपने उत्तम पदार्थ को छोड़कर हम
दूसरों के साधारण पदार्थ नहीं ग्रहण करेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप लोग अपने मित्रों से सावधान रहें जो अनेक प्रकार की कठिनाइयां उत्पन्न करके हमें मार्ग से भ्रष्ट करना चाहते हैं। ये तो इतिहास और विज्ञान की सच्ची बातें हुईं। हमारे नागरी अक्षर-प्रेम के और भी कई कारण हैं। जिन अक्षरों के द्वारा हमें दीक्षा प्राप्त होती है, जिनके द्वारा हमारे जन्म से मृत्यु तक के सब संस्कार होते हैं, जिनमें हमारे वेद शास्त्र और पुराण आदि लिखे हुए हैं क्या उन अमूल्य रत्नों को हम किसी तुच्छ कारण से त्याग सकते हैं? उनको त्यागना अपना गौरव और अभिमान त्यागना है। इस प्रकार इन अक्षरों के त्यागने में हमारा कोई लाभ नहीं, हानि ही है। इतना कह लेने पर मैं आप लोगों से एक निवेदन और करना चाहता हूँ। समय अधिक होगया है और आप लोगों को अभी मालवीयजी का उपदेश सुनना है। आप लोगों से विशेष रूप से मेरा यही निवेदन है कि आप लोग अपनी मातृभाषा का प्रचार और उद्धार करने तथा देवाक्षर की सहायता और प्रचार करने को अपना मुख्य कर्त्तव्य समझें।

हमें उन पुराने लोगों के लिये आश्चर्य और दुःख नहीं होता जिनकी शिक्षा उर्दू और फारसी में हुई है। हमें विशेष आश्चर्य और दुःख उन लोगों के लिये होता है जिन्होंने मातृभाषा हिन्दी में शिक्षा पाई है और जो इस समय कर्मक्षेत्र में उतरे हुए हैं। बहुत दिनों से अदालतों में नागरी अक्षरों के प्रार्थना-पत्र आदि लेने की आज्ञा हो चुकी है इसलिये हम उन लोगों से पूछते हैं कि अब आप लोग अपनी मातृभाषा का ऋण क्यों नहीं चुकाते? अभी मुझसे एक वकील साहब ने कहा था कि क्या करें हमारे मुहर्रिर हिंदी नहीं जानते। अमले भी दिक करते हैं और हमीं को बुलाते हैं कि इसको पढ़ दीजिए। अब हम अपना मुकदमा देखें कि यह सब करें? इससे हमारी बड़ी हानि होती है। यह कारण घोर स्वार्थमय है। जब तक स्वार्थ का निर्मूल नाश न हो जाय तब तक देश कदापि उन्नति नहीं कर सकता। संसार की कोई उन्नत जाति ऐसी नहीं जिसे स्वार्थत्याग न करना पड़ा हो। मैं इन वकीलों से सानुनय प्रार्थना करता हूँ कि आप लोगों पर मातृभाषा का जो ऋण है उसके लिये आप स्वार्थत्याग करें। स्वार्थ त्याग से ही आप उस ऋण से मुक्त होंगे। आपका यह स्वार्थत्याग आपकी भविष्य संतान के लिये आदर्श का काम देगा और उनका मार्ग परिष्कृत हो जायगा। जिस काम को हम कर सकें उसे हम कर डालें और जहां तक हो सके भावी संतान के मार्ग की कठिनाइयां दूर कर दें। मुझे विश्वास है कि यह काम यहीं अलीगढ़ से विशेष रूप से आरंभ हो जायगा और ज़िलों के लोग भी इस बात पर विचार कर नागरी लिपि और हिन्दी भाषा के प्रचार में लग जायँ जैसा कि स्वागतकारिणी सभा के सभापति ने कहा था। अलीगढ़ किसी समय उर्दू का केन्द्र था पर इस समय वह हिंदी का केन्द्र हो रहा है। इस प्रान्त के वर्नाक्यूलर मिडिल स्कूलों से पास होने वाले विद्यार्थियों की जो संख्या इस वर्ष थी उसमें परीक्षार्थियों में से तिहाई हिंदी में पास हुए थे। जहाँ १०—१५ वर्ष पहले एक चौथाई भी हिंदी पढ़नेवाले नहीं होते थे वहीं अब दो तिहाई हिंदीवालोंका और एक तिहाई उर्दूवालों का होना भविष्य के शुभ चिन्ह और लक्षण हैं। इस प्रांत में सब से श्रेष्ठ अलीगढ़ का टाउन स्कूल है जहां के प्रायः सैकड़े प्रति सैकड़े विद्यार्थी पास होते हैं। इतने और कहीं से पास नहीं होते। इस वर्ष यहां के १० विद्यार्थियों ने स्कालरशिप पाई। केवल २ विद्यार्थी तीसरी श्रेणी में पास हुए और बाकी सब पहली या दूसरी श्रेणी में पास हुए। यदि आप जाँच करें तो आप को ज्ञात हो जायगा कि यहाँ अलीगढ़ ज़िले में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोलने और समझनेवालों की संख्या
क है और उर्दू बोलने या समझनेवालों की
या कम, इसलिये आप इसे हिंदी का दृढ़
कीजिए। आज कल यह बात आवश्यक है
अर्थकरी विद्या हो, ऐसी विद्या हो जिस से
भरे। लोग कहते हैं कि आप हमारे लिये
खोलिए। व्यवसाय तो वे लोग कर ही नहीं
ते, सेवावृत्ति में ही लगेंगे। तब उनके पेट भरने
भी तो कोई उपाय निकले। मैं कहता हूँ कि
उपाय हमारे वकील भाइयों के हाथ में है। वे
यदि चाहें तो बहुत से हिंदी पढ़े लिखे
ों को अपने यहाँ स्थान दे सकते हैं और उनकी
विका का प्रबंध कर सकते हैं। जितनी लज्जा
शोक की बात है कि आज कई वर्षों से इस
की आज्ञा हो चुकी है कि लोग अदालतों में
नागरी में प्रार्थनापत्र आदि दे सकते हैं पर
१७ वर्षों में भी हमें उन लोगों को उलाहना
की आवश्यकता रह गई जिन्होंने हिन्दी में
ता पाई है। उन्हें चाहिए कि वे मातृभाषा के
से मुक्त हों। उनका कैसा वज्र हृदय होगा
स प्रार्थना पर न पिघलता हो, जो थोड़े से
र्थ के कारण मातृ-ऋण की चिन्ता न करता
आप लोगों का कर्त्तव्य है कि आप उन सब
नित्य खोदते रहें। थोड़े ही दिनों में अवश्य
पालम्भ देने के बदले हमें इस नगर को आदर्श
प उपस्थित करने का अवसर प्राप्त होगा।

सज्जनो, मैंने आपका बहुत सा समय ले
अब मैं केवल एक दो बातें कह कर अपना
व्य समाप्त करूंगा। एक तो यह कि हम
ों को ऐसा प्रयत्न करना चाहिए जिससे
रा परम प्राचीन गौरव सुरक्षित रहे। उस
व की रक्षा करना हमारा परम धर्म है। यद्यपि
प सरकार की सहायता से बहुत कार्य्य हो
है पर फिर भी वह थोड़ा ही है। उसे
करना आप लोगों का कर्त्तव्य है। दूसरी बात यह है कि हिंदी के जो प्राचीन सुन्दर ग्रंथ छपें वे आपके घरों की अलमारियों में अंगरेजी आदि के उत्तमोत्तम ग्रन्थों के साथ स्थान पावें। जिन उत्तम ग्रंथों के छपने की सूचना आप लोगों को मिले उन्हें मँगा कर आप उनके छापनेवालों का उत्साह बढ़ावें। यदि हिंदू विश्वविद्यालय से आप लोगों की आशाएं पूरी न हों तो आप एक ऐसा विद्यालय स्थापित करें जिसमें सब प्रकार के साहित्य, कलाकौशल, विज्ञान आदि की उच्च से उच्च शिक्षा हिंदी भाषा में दी जाया करे। आप के नायकों में ये भाव उत्पन्न हो चुके हैं। वे इस विषय पर विचार कर रहे हैं। अतः आप लोग ऐसा प्रयत्न करें कि शीघ्र ही यह कार्य्य आरम्भ हो जाय। आप के लिये दोनों उपाय हैं। यदि हिंदू विश्वविद्यालय इस कार्य को अपने हाथ में ले तो आप लोग मुक्तहस्त उसकी सहायता करें और यदि वह न ले तो आप इस काम को अपने हाथ में लें और सिद्ध कर दें कि आप केवल मातृभाषा में शिक्षा देकर सब विषयों के वैसे ही बल्कि उनसे भी अच्छे विद्वान् उत्पन्न कर सकते हैं जैसे कि अँग्रेज़ी द्वारा शिक्षा पाए हुए आज कल होते हैं। अब विलम्ब अधिक हो गया है। बहुत से लोग सबेरे ११ बजे से ही आकर बैठे हैं। यह इनके हिंदीप्रेम का प्रमाण है और इनके द्वारा भविष्य में जो उपकार होनेवाला है उसके वे शुभ लक्षण हैं। महाशयो; आज से २५ वर्ष पहले जिन बातों की कहीं कोई कल्पना भी नहीं थी वे सब बातें इस समय हो रही हैं। जिसकी कभी स्वप्न में भी आशा नहीं थी उसके अब स्पष्ट दर्शन हुए हैं। यदि बराबर प्रयत्न होता रहा तो हमारी इस समय की कामनाएं भी बहुत शीघ्रसफल हो जायँगी।

आज कल सब कामों के लिये संघशक्ति की आवश्यकता होती है और आगे चल कर प्रत्येक विषय में इसकी आवश्यकता होगी। जिन कठि-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाइयों को हमें दूर करना है संघशक्ति से उन का नाम भी नहीं रहेगा। आपमें संघशक्ति किसी की सामर्थ्य नहीं जो आपके सामने आ सके हम सब लोगों को उचित है कि हम लोग इस मनोकामना की पूर्ति के लिये ईश्वर से प्रार्थना करें। इस बात की प्रार्थना करें कि हम लोगों में संघशक्ति हो। हम सब लोगों में मिलकर काम करने की शक्ति हो और ईर्षा द्वेष के बश होकर हम कोई काम न करें। यदि हम अपने सहायक को ढकेल देंगे तो उन्नति नहीं कर सकेंगे, जब हम उसके साथ मिल जायंगे तभी उन्नति करेंगे। आप पतला तागा बिना परिश्रम ही तोड़ सकते हैं परंतु जब सौ दो सौ तागे आपस में लिपट जाते हैं तब बलवान् से बलवान् जीवजन्तु भी उन्हें नहीं तोड़ सकते हैं। जब संघशक्ति की सहायता से निर्जीव पदार्थ भी ऐसी शक्ति प्राप्त कर सकते हैं तब क्या हम ज्ञानवान् लोग ऐसा नहीं कर सकते कि संसार की शक्ति हमारे सामने सिर झुकावें। निश्चय ऐसा ही होगा लेकिन हमारी मातृभाषा के उच्च स्थान पर सुशोभित होने में कुछ समय लगेगा। मातृभाषा के उपकारों का बदला चुकाना हमारा परम धर्म है। यदि हम लोग सहानुभूति और प्रेम से मिल कर काम करने का अभ्यास करेंगे तो इन गुणों के प्राप्त कर लेने पर हमारी मनोकामना अवश्य पूरी हो जायगी। उस समय आप को अपने बिरोधियों से प्रार्थना करने की आवश्यकता न रह जायगी, वे ही आप से प्रार्थना करेंगे, वे ही आप की सहायता मांगेंगे। जब तक जर्मनी की संघशक्ति थी तब तक उसका कोई सामना नहीं कर सका। जब अमेरिका, फ्रांस और इंगलैंड की संघशक्ति हुई तब जर्मनी उसके आगे न ठहर सका। आजकल जीवन के संग्राम में संघशक्ति का ही सब से अधिक महत्व है। जो लोग अकर्म्मण्य हैं वे ही अपने कर्त्तव्य से पराङ्मुख होते हैं। जिनके हाथ में बल हैं वे किसी की दया या कृपा की अपेक्षा नहीं करते हमें चाहिये कि हम अपने बल से सब काम करें किसी से भिक्षा न माँगे। भिक्षा माँगना अपाहिजों और आलसियों का काम है, रामासरे रहनेवालों का काम है। जो स्वयं कुछ कर सकते हैं उनके यह लिये नहीं है।

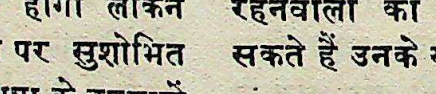

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभा का कार्य-विवरण।

निवार ता० १० अगस्त १९१८ संध्या के ५ बजे।

स्थान सभाभवन।

(१) सन् १९१७—१८ का वार्षिक विवरण गया और आवश्यक परिवर्त्तन के उपरांत कृत हुआ।

(२) निश्चय हुआ कि पंडित जयश्री पाँड़े, नन्दलाल दुबे, श्रीयुत सेम्युएल प्रभुचरण और पं. गोविन्दराव जोगलेकर को धन्य-दिया जाय कि ये सज्जन अपना न्यायालय संबंधी कार्य नागरी में करते हैं।

(३) पं० रामनारायण मिश्र ने सूचना दी कि पुस्तकों की त्रैवार्षिक रिपोर्ट जो उनके पास शोधन के लिये भेजी गई थी उसे उन्होंने पं० श्याम-दारी मिश्र के पास संशोधनार्थ भेज दिया है।

(४) मंत्री ने सूचना दी कि सन् १९१२ से १९१७ तक के हिसाब की जाँच होगई है।

निश्चय हुआ कि बोर्ड आफ ट्रस्टीज़ का एक धिवेशन २६ अगस्त १९१८ को उचित कार्यवाही के लिये किया जाय।

(५) पं० विश्वेश्वरनाथ तिवारी का प्रार्थना-वेतनवृद्धि के संबंध में उपस्थित किया गया।

निश्चय हुआ कि सभापति की सम्मति के सहित आगामी अधिवेशन में उपस्थित किया जाय।

(६) ता० २, ३, ८, १० १४, २५ और २६ लाई १९१८ के कार्यविवरण उपस्थित किए गए और स्वीकृत हुए।

विशेष अधिवेशन।

मंगलवार तारीख १३ अगस्त १९१८ संध्या के ६ बजे।

स्थान सभाभवन।

(१) सन् १९१७-१८ का वार्षिक विवरण उपस्थित किया गया।

(२) सन् १९१७-१८ का बजेट उपस्थित-किया गया।

पं० सुरेन्द्रनारायण शर्म्मा ने प्रस्ताव किया किया कि बजेट दो विभागों में न दिखला कर एक ही में सम्मिलित कर लिया जाय। पण्डित रामनारायण मिश्र ने प्रस्ताव किया कि प्रबंध-कारिणी समिति ने जिस रूप में बजेट तैयार किया है उसी रूप में वह रहे।

अधिक सम्मिति से पंडित रामनारायण मिश्र का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

(३) बाबू रामचन्द्र वर्म्मा ने प्रस्ताव किया कि सम्पादक के लिये इस वर्ष ६००) रु० न व्यय किया जाय। पंडित सुरेन्द्रनारायण शर्म्मा ने इसका अनुमोदन किया। पण्डित रामनारायणमिश्र ने प्रस्ताव किया कि सम्पादक का रखना आव-श्यक है और बजेट में ६००) रु० इसके लिये रक्खा जाय। अधिक सम्मति से बाबू रामचन्द्र-वर्म्मा का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

(४) बाबू रामचंद्र वर्म्मा ने प्रस्ताव किया कि मनोरंजन पुस्तकमालाकी ६ पुस्तकों की छपाई के संबंध में जो ९००) रु० रक्खा गया गया है वह घटाकर केवल १५०) रु० एक पुस्तक का पुर-स्कार रक्खा जाय क्योंकि सभा के पास इस समय पाँच पुस्तकें ऐसी तैयार हैं जिनका पुर-स्कार सम्पादक ने अपने पास से दे दिया है और जो कि उस १७९५) रु० में सम्मिलित है जो पुस्तकों के पुरस्कार के संबंध में सभा संपादक की देनदार है और जो बजेट में सम्मिलित है। बाबू बालमकुन्द वर्म्मा ने इसका अनुमोदन किया।

पण्डित रामनारायण मिश्र ने यह सुधार उप-स्थित किया कि इस संबंध में बाबू श्यामसुन्दर दासजी की सम्मति के अनुसार किया जाय। बाबू राधारमण गुप्त ने इसका समर्थन किया।

अधिक सम्मति से बाबू रामचंद्र वर्म्मा का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

(५) पण्डित सुरेन्द्रनारायण शर्म्मा ने प्रस्ताव किया कि इस वर्ष विज्ञापन के लिये केवल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२५०) रु० स्वीकार किया जाय। बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा ने इसका अनुमोदन किया।

बाबू राधारमण गुप्त ने प्रस्ताव किया कि इसके लिये ५००) रु० रक्खा जाय और पंडित बद्रीनाथ पांडे ने इसका अनुमोदन किया।

पंडित रामनारायण मिश्र ने प्रस्ताव किया १०००) विज्ञापन के लिये रक्खा जाय। इसका अनुमोदन किसी सज्जन ने नहीं किया।

अधिक सम्मति से ५००) रु० इसके लिये स्वीकृत हुआ।

(६) अधिक सम्मति से पुनः निश्चित हुआ कि विज्ञापन के लिये ५००) रु० ही रक्खा जाय।

(७) निश्चय हुआ कि शेष बजेट स्वीकार किया जाय।

(८) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

वार्षिक अधिवेशन।

शनिवार तारीख ३१ अगस्त १९१८ सन्ध्या के ५½ बजे स्थान-सभा भवन।

(१) पंडित रामनारायण मिश्र के प्रस्ताव तथा बाबू रामचंद्र वर्म्मा के अनुमोदन पर प्रोफेसर रामदास गौड़ सभापति चुने गए।

(२) प्रबन्धकारिणी समिति का सन् १९१७-१८ का वार्षिक विवरण पढ़ा गया। बाबू जयराम दास के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ कि बाबू महावीर प्रसाद पोद्दार द्वारा एक लाख की पूँजी से एक लिमिटेड कम्पनी के स्थापित किए जाने का कोई प्रमाण सभा के पास नहीं है। अतः इसका उल्लेख वार्षिक विवरण में से निकाल दिया जाय।

लाला भगवानदीन ने प्रस्ताव किया कि "हिंदी पुस्तकों की खोज" में भुआल कविकृत भगवद्गीता का निर्माण काल जो सम्वत् १००० बतलाया गया है वह ठीक नहीं जान पड़ता। अतः उसमें कुछ संशोधन वा परिवर्तन कर दिया जाय। इस पर सर्वसम्मति से निश्चित हुआ कि "खोज के निरीक्षक महाशय की यह सम्मति है" यह उस संबंध में और बढ़ा दिया जाय।

सभापति महाशय के प्रस्ताव पर निश्चित हुआ कि 'हिंदी की अवस्था" शीर्षक प्रकरण में जो यह लिखा गया है कि "आशा है कि हिंदी शीघ्र ही राष्ट्रभाषा के पद पर अभिषिक्त हो जायगी" वह हिंदी के लिये बहुत ही अपमान कारक है क्योंकि हिंदी भारतवर्ष में बहुत प्राचीन काल से राष्ट्रभाषा के पद पर अधिष्ठित है। अतः उसमें का यह अंश निकाल दिया जाय।

बाबू रामचंद्र वर्म्मा के प्रस्ताव और लाला भगवानदीन के अनुमोदन पर निश्चय हुआ कि उक्त सुधारों के सहित वार्षिक विवरण स्वीकार किया जाय।

(३) प्रबंधकारिणी समिति का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि श्रीमान् महाराज इंदौर हिंदी की बहुत कुछ सेवा कर रहे हैं और भविष्य में भी उनसे हिंदी के उपकार की बहुत आशा है अतः वे सभा के संरक्षक चुने जाँय।

पंडित रामनारायण मिश्र के प्रस्ताव तथा बाबू गौरीशंकर प्रसाद के अनुमोदन पर यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ।

(४) लाला भगवानदीन ने प्रस्ताव किया कि पदाधिकारियों और प्रबंधकारिणी समिति के सदस्यों के चुनाव के लिये प्रबंधकारिणी समिति ने जो सूची बनाई है वह अपूर्ण है। अतएव प्रबंधकारिणी समिति एक दूसरी ऐसी सूची बनावे जिसमें प्रत्येक पद के लिये कम से कम पाँच नाम रक्खे जाँय और एक ही नाम दो पदों के लिये न रक्खा जाय और तब उस सूची के अनुसार चुनाव हो। पंडित ब्रजभूषण ओझा ने इस प्रस्ताव का अनुमोदन किया।

बाबू गौरीशंकर प्रसाद जी ने प्रस्ताव किया कि लाला भगवानदीन जी का प्रस्ताव नियमों के परिवर्तन से संबंध रखता है। अतः वह प्रबंधकारिणी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिति के पास भेजा जाय। अधिक सम्मति से ला भगवानदीन जी का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

(५) मंत्री ने सन् १९१८-१९ निम्नलिखित बजेट स्थित किया और साथ ही सूचना दी कि पहले र्क के वेतन में वृद्धि होने की संभावना है अतः का वेतन २१६) के बदले २४०) रु० रक्खा जाय।

बाबू हरेकृष्ण ने प्रस्ताव किया कि इस बजेट गत वर्ष का जो हिसाब दिया गया है वह ंचा नहीं गया है। अतः जब तक यह जाँचा न य तब तक बजेट पर विचार न हो—इस पर डित रामनारायण मिश्र ने यह सुधार उपस्थित या कि भविष्य में आय व्यय का हिसाब बिना चे हुए वार्षिक अधिवेशन में उपस्थित न किया या करे परंतु पूर्व वर्षों की नाईं इस वर्ष भी ी रूप में बजेट पर विचार हो। बाबू हरिहर ाथ ने उस सुधार का अनुमोदन किया और अधिक सम्मति से स्वीकृत हुआ।

बाबू हरिहर नाथ के प्रस्ताव पर सर्वसम्मति बजेट स्वीकृत हुआ।

(६) बाबू हरे कृष्ण ने प्रस्ताव किया कि वर्ष अंत में पुस्तकालय की आय में से जो धन ा रहे वह सब पुस्तकालय के लिये पुस्तकें दि खरीदने में ही व्यय किया जाय। पंडित मनारायण मिश्र ने इसका अनुमोदन किया।

निश्चय हुआ कि यह प्रस्ताव नियमों से संबंध ता है अंतः यह नियमों पर विचार करनेवाली स समिति के पास भेजा जाय।

(७) बाबू रामचंद्र वर्म्मा के प्रस्ताव और पं० ब्रज-ूषण ओझा के अनुमोदन पर निश्चय हुआ कि ाधिकारियों के चुनाव के लिये जो विशेष अधि-शन होने वाला है उसकी सूचना के साथ सभा-ों के पास प्रतिनिधि-पत्र के फार्म भी भेजे जायँ।

(८) बाबू रामचंद्र वर्म्मा के प्रस्ताव और डित ब्रजभूषण ओझा के अनुमोदन पर निश्चय ा कि पदाधिकारियों के चुनाव के लिये सभा का जो विशेष अधिवेशन होने वाला है उसी में नियमावली पर भी फिर से विचार हो और नियमों के संशोधन के संबंध में सभा प्रबंधकारिणी समिति अथवा उपसमिति के पास जितने प्रस्ताव आवें वे सब उस विशेष अधिवेशन में उपस्थित किए जाँय और उसमें उन पर विचार हो।

(९) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

मंगलवार तारीख १० सितम्बर १९१८ सन्ध्या के ५½ बजे स्थान सभाभवन।

(१) तारीख १० अगस्त १९१८ के अधिवेशन का कार्यविवरण पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय।

(२) जुलाई और अगस्त १९१८ के आय व्यय का निम्नलिखित हिसाब उपस्थित किया गया—

आय का ब्योरा

	रु०	आ०	पा०
गत मास की बचत	१८६९	१५	१०
अमानत	२५४	१३	०
नागरी-प्रचार	६	०	३
पुस्तकालय	२०९	०	०
पुस्तकों की बिक्री	९७	१३	३
भारतेन्दु ग्रन्थावली	६१	५	६
पृथ्वीराजरासो	११९	११	०
पुरस्कार का स्थायीफण्ड	१०८	१०	६
मनोरंजन पुस्तकमाला	७६७	१५	०
सभासदों का चन्दा	२३३	१२	०
हिन्दी कोश	३११	०	०
पुस्तकों का पुरस्कार	१७	२	३
भवन-निर्माण	२५०	०	०
फुटकर	२५	०	०
विशेष सहायता	५६	०	०
	४३८८	२	७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यय का ब्योरा

	रु०	आ०	पा०
कार्यकर्ताओं का वेतन	२११	१०	०
छपाई	३७८	३	३
डाक-व्यय	१२१	०	३
नागरी प्रचार	१६	८	०
पुस्तकालय	२०५	१	०
हिन्दी पुस्तकों की खोज	१०२	१४	०
फुटकर व्यय	६६	५	०
मनोरंजन पुस्तकमाला	३७१	१०	३
अमानत	३२८	७	०
हिन्दी कोश	२३८	१०	६
मुंशी देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला	२२	०	०
भारतेन्दु ग्रन्थावली	११४	५	६
पुस्तकों की छपाई	३०	०	०
२५ वर्षों की रिपोर्ट	६४	९	०
मरम्मत	७२	१२	०
	२३४३	१५	९
बचत	२०४४	२	१०
	४३८८	२	७

बचत का ब्योरा।

४७॥।-)११	रोकड़ सभा
३९८॥)१	बनारस बंक (चलता खाता)
१०००)	बनारस बंक (फिक्स्ड डिपाजिट)
२३९=)४	सेविङ्ग बंक (स्थायी कोश)
२५०)	बनारस बंक लिमिटेड सेविङ्ग बंक (फिक्स्ड डिपाजिट)
१०८॥=)॥	,, ,, (भवन-निर्माण)
२०४४=)१०	

(३) गत वार्षिक अधिवेशन का यह निश्चय उपस्थित किया गया कि पदाधिकारियों और प्रबंधकारिणी समिति के सदस्यों के चुनाव के लिये जो सूची बनाई गई वह अपूर्ण है अतएव दूसरी सूची बनाई जाय जिसमें प्रत्येक पद के लिये कम से कम पांच नाम रक्खे जायँ और एक ही नाम दो पदों के लिये न रक्खा जाय।

बाबू श्यामसुंदर दास जी का पत्र भी इस संबंध में उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि वार्षिक अधिवेशन के इस निश्चय के विषय में सभा का एक विशेष अधिवेशन किया जाय।

निश्चय हुआ कि वार्षिक अधिवेशन के कार्य्य विवरण की प्रतिलिपि बाबू श्यामसुंदरदास जी के पास भेजी जाय। यह भी निश्चय हुआ कि प्रबंधकारिणी समिति जो सूची बना चुकी है वह पूर्णतया नियमानुकूल है और दूसरी सूची बनाने की आवश्यकता नहीं जान पड़ती।

(४) खड्गविलास प्रेस के वकीलों की नोटिस उपस्थित की गई जिसमें उन्होंने सत्यहरिश्चंद्र और भारतदुर्दशा प्रकाशित करने के कारण सभा से ३१२॥) मांगे हैं।

निश्चय हुआ कि पंडित गोविंदराव जोगलेकर तथा बाबू गौरीशंकरप्रसाद जी से प्रार्थना की जाय कि वे कृपापूर्वक इसका उचित उत्तर देदें।

(५) बाबू रामचंद्र वर्म्मा का प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि सभा बाबू श्यामसुंदरदास जी के इस प्रस्ताव पर पुनः विचार करे कि पत्रिका के संपादन का भार मंत्री पर रहा करे और ग्रंथ-माला तथा लेख-माला का भार सभापति, उपसभापति प्रधान और उपप्रधान में से किन्हीं दो महाशयों पर।

निश्चय हुआ प्रबंधकारिणी समिति इस प्रस्ताव से सहमत नहीं है।

(६) पंडित रामनारायण मिश्र का प्रस्ताव उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभा ने जिन प्रतिबंधों के साथ कलकत्ते प्रयाग में एजेंटों को पुस्तकें दी हैं उन्हीं बंधों के साथ इंदौर के पंडित हरिभाऊ उपाध्याय जी को पुस्तकें दी जायँ।

निश्चय हुआ कि कलकत्ते की हिंदी पुस्तक सभा को जिन प्रतिबंधों के साथ पुस्तकें दी गई उन्हीं प्रतिबंधों के साथ इन्हें एजेंसी दी जाय।

(७) बाबू हरिहरनाथ जी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने मंत्री के पद से इस्तीफा दिया था।

निश्चय हुआ कि यह त्याग पत्र नियमानुसार साधारण सभा में उपस्थित किया जाय।

पंडित विश्वेश्वर नाथ तिवारी का प्रार्थना पत्र उपस्थित किया गया जिस पर सभापति महोदय ने ३)रु० मासिक वेतन दिए जाने की सम्मति दी थी।

निश्चय हुआ कि इनका मासिक वेतन २०)रु० किया जाय और जुलाई १९१८ से इसी हिसाब से वेतन दिया जाय।

(९) श्रीयुत हरि रामचंद्र दिवेकर का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि अवकाश न रहने के कारण वे मुंशी देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तक माला के लिये फाहियान की यात्रा का हिंदी अनुवाद न कर सकेंगे।

(१०) बनारस के डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने पूछा था कि क्या सभा युद्ध संबंधी चित्रों को दिखलाने के लिये उन्हें समय समय पर अपना मेजिक लालटैन मँगनी दे सकेगी।

निश्चय हुआ कि मेजिक लालटैन दिया जाय।

(११) पंडित रामनारायण मिश्र का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रोफेसर यदुनाथ सरकार का पत्र श्रीयुत परमात्मा शरण जी को सभा के पुस्तकालय से हस्तलिखित तथा अन्य पुस्तकें देने के संबंध में भेजा था।

निश्चय हुआ कि हस्तलिखित पुस्तकें बाहर नहीं जा सकतीं। अतः वे कृपा कर पुस्तकों को देख कर लिखें कि कौन कौन सी पुस्तकें उन्हें चाहिए तब इस संबंध में विचार किया जायगा।

(१२) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

शनिवार तारीख २८ सितम्बर १९१८ संध्या के ५ बजे। स्थान सभाभवन।

(१) बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा के प्रस्ताव पर पण्डित जानकीशरण त्रिपाठी सभापति चुने गए।

(२) ता० २७ जुलाई १९१८, १३ अगस्त १९१८ तथा ३१ अगस्त १९१८ के अधिवेशनों के कार्यविवरण पढ़े गए और स्वीकृत हुए।

(३) प्रबन्धकारिणी समिति के २,३,८,१०,१४, २५ और २६ जुलाई १९१८ तथा १० अगस्त १९१८ के कार्यविवरण सूचनार्थ उपस्थित किए गए।

(४) सभासद होने के लिए निम्नलिखित सज्जनों के फार्म उपस्थित किए गए—

१-बाबू फतहनारायण सिंह, चौकाघाट, काशी १॥)

२-पं० लक्ष्मीनारायण शर्म्मा, कोतवाली के पीछे, भरतपुर १॥)

३-पं० भवदेव उपाध्याय, कालीमहल, काशी १॥)

४-बाबू हरनाम प्रसाद, मानमंदिर काशी १॥)

५-पंडित विश्वनाथ मिश्र, हड़हा काशी १॥)

६-पं० विश्वेश्वरनाथ तिवारी, बागबरियार सिंह, काशी १॥)

निश्चय हुआ कि ये सज्जन सभासद चुने जाँय।

(५) निम्नलिखित सभासदों के इस्तीफे उपस्थित हुए और स्वीकृत हुए:—

१-पं० देवीप्रसाद तिवारी, चुनार, जिला मिर्जापुर।

२-पं० शंकर नत्थो बाकथलकार, सिहावा, रायपुर।

३-बाबू घसीटू मल, अबूपुरा, मुजफ्फरपुर।

४-बाबू कामता प्रसाद, गवर्नमेण्ट सेक्रेटेरियट, प्रयाग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५-बाबू गदाधर प्रसाद, सीनियर आडिटर, लोकलफंड एकाउन्ट, इलाहाबाद।

६-कवि गोविंद गिल्लाभाई, सिहोर, भावनगर, कठियावाड़।

७-पं० कृष्ण बलवन्त पावगी, रामघाट काशी।

८-बाबू अयोध्यादास बैरिस्टर, गोरखपुर।

(६) बाबू हरिहरनाथ जी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उहोंने मंत्री के पद से इस्तीफा दिया था।

निश्चय हुआ कि बाबू हरिहरनाथ जी से प्रार्थना की जाय कि वे कृपापूर्वक नए चुनाव तक मंत्री के पद पर कार्य करें।

(७) निम्नलिखित पुस्तकें धन्यवाद सहित स्वीकृत हुईं:—

ठाकुर साहब हरिसिंह जी, बीदासर का डेरा, बीकानेर,

क्षत्रिय जाति की सूची।

श्रीयुत मूलचन्द किसनदास कापडिया, प्रकाशक जैनमित्र, सूरत

श्री समयसार टीका।

बाबू रामचन्द्र वर्म्मा, काशी,

आयर्लैंड का इतिहास।

बाबू राधाचरण शाह, दुर्गाकुंड, काशी

भूमंडल के प्राणी।

मेनेजर जैनसंसार सूरत,

निबंध संग्रह,

सुशीला बाई का व्याख्यान।

बाबू महाबीरप्रसाद पोद्दार, हिंदी पुस्तक एजेन्सी, कलकत्ता,

सचित्र ऐतिहासिक लेख।

बाबू मनोहरदास, शारदा बुक डिपो, काशी।

महानुभाव सुक्रात का जीवन वृत्तान्त,

अजबिला

पंडित गुलजारीलाल चतुर्वेदी, कायमगंज

विमला।

पंडित गंगाशंकर पचौली, हेडमास्टर, भरतपुर

सुवर्णकारी,

केला।

सनातनधर्मरत्नत्रयी,

करणलाघव,

कृषिविद्या भाग १, ४, ५, और ६

कागज।

बाबू शारदाप्रसाद गुप्त अहरौरा, जि० मिर्जापुर

श्री तुलसी जीवनी,

चन्द्रकला भानुकुमार नाटक।

(८) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

प्रबंधकारिणी समिति का विशेष अधिवेशन

शुक्रवार ता० ४ अक्तूबर १९१८ दिन में ३½ बजे।

स्थान सभाभवन।

(१) पं० रामनारायण मिश्र के प्रस्ताव पर प्रोफेसर रामदास गौड़ इस अधिवेशन में नियम ३९ के अनुसार निमंत्रित किए गए।

(२) निश्चय हुआ कि यद्यपि इस समिति की जो सूची वार्षिक अधिवेशन में चुनाव के लिये उपस्थित की थी वह पूर्णतया नियमानुकूल थी तथापि यदि अधिकांश सभासदों का यह आग्रह है कि इस सूची में कुछ नाम और बढ़ाए जाँय तो निम्नलिखित महाशयों की एक उपसमिति नियत की जाती है जो इस सूची को दोहरा कर ठीक करें और इसी दोहराकर ठीक की हुई सूची के अनुसार १ अक्तूबर १९१८ के विशेष अधिवेशन में चुनाव हो।

बाबू भगवान दास एम० ए०।

बाबू श्यामसुन्दरदास बी० ए०।

पंडित रामनारायण मिश्र बी० ए०।

बाबू रामदास गौड़ एम० ए०।

बाबू हरिहरनाथ बी० ए०।

लाला भगवान दीन।

बाबू वेणीप्रसाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) निश्चय हुआ कि इस उपसमिति की हुई सूची सर्वमान्य होगी और उसमें घटाने का किसी को अधिकार न होगा (यहाँ पर सा- सभा के विशेष अधिवेशन का समय हो जानेके शेष कार्य एक घंटे के लिये टाल दिया गया पुनः ६ बजे समिति का कार्य प्रारंभ हुआ)

(४) निश्चय हुआ कि बाबू श्यामसुन्दर जी से प्रार्थना की जाय कि वे कृपापूर्वक गढ़ के प्रान्तीय साहित्यसम्मेलन का सभा- होना स्वीकार करें।

(५) सभापति को धन्यवाद दे सभा विस- हुई।

विशेष अधिवेशन।

ार ता० ४ अक्तूबर १९१८ संध्या के ५ बजे।

स्थान सभाभवन।

(१) लाला भगवानदीन आदि का पत्र उपस्थित गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि सभा के ार्षिक अधिवेशन में चुनाव के लिये जो उपस्थित की गई थी उसे उक्त अधिवेशन र्ण निश्चित करके दूसरी सूची बनाने की दी थीं पर प्रबंधकारिणी समिति ने क अधिवेशन के उस निश्चय के विरुद्ध किया है जिस पर उन्हें असंतोष है। ही मंत्री ने प्रबंधकारिणी समिति के आज श्चय नं० २ और ३ की सूचना दी जिसके ार समिति ने चुनाव की सूची को ठीक के लिये एक उपसमिति बनाई थी और किया था कि उसी उपसमिति की बनाई ची सर्वमान्य होगी।

बाबू रामदास गौड़ के प्रस्ताव तथा बाबू द वर्म्मा के अनुमोदन पर निश्चय हुआ कि कारिणी समितिके आज के उपर्युक्त निश्चय र किए जाँय।

स पर लाला भगवान दीन ने अपना असं- कशक प्रस्ताव लौटा लिया।

(२) सभापति को धन्यवाद दे सभा विस- र्जित हुई।

विशेष अधिवेशन।

गुरुवार तारीख १० अक्तूबर १९१८ संध्या के ५ बजे।

स्थान सभा भवन।

सभापति ने सूचना दी कि जिन सज्जनों के यहां सभा का दो वर्ष का या इससे अधिक का चंदा बाकी है उन्हें नियमानुसार सभा के अधिवेशन में सम्मति देने का अधिकार नहीं है। अतः वे लोग कृपा कर किसी विषय पर सम्मति न दें। यदि ऐसे लोगों के नाम किसी सज्जन की कोई प्राक्सी होगी तो उसका भी कोई ध्यान न किया जायगा। तदनुसार आपने प्राक्सी देनेवाले तथा अन्य ऐसे उपस्थित सभासदों के नाम बतला दिए जिनके यहां सभा का दो वर्ष से अधिक का चंदा बाकी था और जिन्हें नियमानुसार सभासदों के अधिकार प्राप्त नहीं थे।

बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने प्रस्ताव किया कि जिन सज्जनों के यहां गत जुलाई मास के पहले भी दो वर्ष का चंदा बाकी हो केवल वे ही सज्जन किसी विषय पर सम्मति न दे सकें। पं० राम नारायण मिश्र ने इस प्रस्ताव का अनुमोदन किया।

बाबू रामचंद्र वर्म्मा ने प्रस्ताव किया कि ऐसे काम में जब कि नियमानुसार ऐसे सज्जनों को, जिनके यहां दो वर्ष का चंदा बाकी होता है, सभा ना० प्र० पत्रिका आदि पाने का भी अधिकारी नहीं समझती, तब ऐसे सज्जनों को आज के अधिवेशन में सम्मति देने का भी अधिकार प्राप्त नहीं। पं० रामचंद्र शुक्ल ने इसका अनुमोदन किया।

अधिक सम्मति से बाबू शिवप्रसाद गुप्त का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। सभापति ने कहा कि सात सज्जनों के हस्ताक्षर से आज जिस विशेष अधिवेशन के होने की सूचना दी गई है उनमें से दो सज्जनों को सभासदों के अधिकार प्राप्त नहीं हैं, अतः वह विशेष अधिवेशन आज नहीं हो सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज वही विशेष अधिवेशन होगा जिसकी सूचना सभापति ने नियम ४२ (५) के अनुसार दी है।

चुनाव की सूची ठीक करनेवाली उपसमिति की रिपोर्ट उपस्थित की गई।

पं० श्रीकृष्ण शुक्ल ने प्रस्ताव किया कि नियम ३० के अनुसार चुनाव की सूची सभा के सब सभासदों के पास नहीं भेजी गई है अतः आज चुनाव नहीं होना चाहिए।

अधिक सम्मति से निश्चित हुआ कि नवीन सूची के अनुसार आज ही चुनाव हो।

बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने प्रस्ताव किया कि वार्षिक अधिवेशन में चुनाव की सूची के संबंध में जो कार्रवाई हुई थी वह नियम विरुद्ध थी और ठीक नहीं थी और उस सूची में नाम बढ़ाने का कोई प्रस्ताव उस अधिवेशन में नियमानुकूल नहीं आया था। अतः प्रबंधकारिणी समिति ने पहिले जो सूची बनाई थी उसी के अनुसार आज चुनाव हो। बा० वेणीप्रसाद ने इसका अनुमोदन किया।

बहुत वादविवाद के उपरान्त बाबू शिवप्रसादजी गुप्त ने अपना प्रस्ताव लौटा लिया।

इसके उपरान्त सभासदों में चुनाव के परचे बाँटे गए और बहुमत से निम्नलिखित सज्जन इस वर्ष के लिए सभा के पदाधिकारी चुने गए—

सभापति—बाबू श्याम सुंदरदास बी० ए०।

उ०स०—बाबू गौरीशंकर प्रसाद बी०ए० एल-एल०बी०
रा० ब० पं० गौरीशंकर हीराचंद ओझा।

मंत्री—पं० गोविन्दराव जोगलेकर बी० ए० एल-एल० बी०

उपमंत्री—बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा।

प्रबंधकारिणी समिति। काशी से—

पं० रामनारायण मिश्र बी० ए०
बाबू श्रीप्रकाश बी० ए० बैरिस्टर एट-ला
पं० लक्ष्मणनारायण गर्दे
बाबू भगवानदास एम० ए०

संयुक्त प्रांत से—ठाकुर राजेन्द्र सिंह जी।

मध्यप्रदेश से—पं० कामताप्रसाद गुरु।

बम्बई से—प्रोफ़ेसर टी० के० गज्जर।

इसके अतिरिक्त कलकत्ते के बा० दामोदर दास खण्डेलवाल और पटने के राय पूरनचन्द्र के स्थान पर क्रमात् बाबू जयकृष्ण प्रसाद और बाबू राजेन्द्र नारायण एम०ए०एल-एल०बी० चुने गए।

बाबू शिवप्रसाद गुप्त के प्रस्ताव और बाबू रामचन्द्र वर्म्माके अनुमोदन पर नियम संशोधन के लिए निम्नलिखित सज्जनों की एक उपसमिति बनाई गई और निश्चित हुआ कि यह समिति तीन मास के अन्दर आवश्यक संशोधन संबन्धी प्रस्तावों के सहित अपनी रिपोर्ट सभा के पास भेज दे।

बा० श्यामसुंदरदास बी० ए०
बा० गौरीशंकर प्रसाद बी० ए० एल-एल० बी०
पं० रामनारायण मिश्र बी० ए०
बा० शिवप्रसाद गुप्त
प्रो० रादास गौड़ एम० ए० (संयोजक)
प्रो० श्रीप्रकाश बैरिस्टर
बा० वेणीप्रसाद
पं० गोविन्दराव जोगलेकर बी० ए० एल-एल० बी०
बा० हरिहर नाथ बी० ए० और
बाबू रामचन्द्र वर्म्मा

यह भी निश्चित हुआ कि इसका कोरम तीन सभासदों का रहे।

पं रामनारायण मिश्र बी० ए० के प्रस्ताव और बा० रामचन्द्र वर्म्मा के अनुमोदन पर निश्चित हुआ कि बा० हरिहरनाथ ने एक वर्ष तक सभा के मंत्री रह कर सभा की जो सेवा की उसके लिए उन्हें धन्यवाद दिया जाय।

बा० हरिहरनाथ तथा सभापति महाशय को धन्यवाद देने के उपरान्त सभा विसर्जित हुई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनोरंजन पुस्तकमाला ।

अर्थात्

हिंदी के सौ उत्तम उत्तम ग्रंथों की पुस्तकावली ।

अब तक निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

१ आदर्श-जीवन—लेखक रामचंद्र शुक्ल ।
२ आत्मोद्धार—लेखक रामचंद्र वर्म्मा ।
३ गुरु गोविंदसिंह—लेखक वेणीप्रसाद ।
४ आदर्श हिंदू १ भाग—लेखक मेहता लज्जाराम शर्म्मा ।
५ ,, २ ,, ,,
६ ,, ३ ,, ,,
७ राणा जंगबहादुर—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा ।
८ भीष्म पितामह—लेखक चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्म्मा ।
९ जीवन के आनंद—लेखक गणपत जानकीराम दूबे बी. ए. ।
१० भौतिक-विज्ञान—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी ।
११ लालचीन—लेखक व्रजनंदन सहाय ।
१२ कबीरवचनावली—संग्रहकर्त्ता अयोध्यासिंह उपाध्याय ।
१३ महादेव गोविंद रानडे—लेखक रामनारायण मिश्र बी. ए. ।
१४ बुद्धदेव—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा ।
१५ मितव्यय—लेखक रामचंद्र वर्म्मा ।
१६ सिक्खों का उत्थान और पतन—लेखक नंदकुमार देव शर्म्मा ।
१७ वीरमणि—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम. ए. और शुकदेवबिहारी मिश्र बी. ए. ।
१८ नेपोलियन बोनापार्ट—लेखक राधामोहन गोकुलजी ।
१९ शासनपद्धति—लेखक प्राणनाथ विद्यालंकार ।
२० हिंदुस्तान, पहला खंड—लेखक दयाचंद्र गोयलीय बी. ए. ।
२१ ,, ,, दूसरा खंड— ,, ,, ,,
२२ महर्षि सुकरात—लेखक वेणीप्रसाद ।
२३ ज्योतिर्विनोद—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी. ।
२४ आत्मशिक्षण—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम० ए० और शुकदेव बिहारी मिश्र बी० ए० ।
२५ सुंदरसार—संग्रहकर्ता पुरोहित हरिनारायण बी० ए० ।

प्रत्येक पुस्तक का मूल्य १) है, समस्त ग्रंथमाला के स्थायी ग्राहकों से ।।।) लिया जाता है। डाकव्यय अलग है।

मिलने का पता—

मंत्री—नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा के सदस्यों को

सूचना

गत १० अक्तूबर १९१८ के विशेष अधिवेशन में सभा ने नियम-संशोधन के लिये एक उपसमिति बनाई है। यह समिति संशोधनों पर विचार करके मूल प्रस्तावों समेत अपने प्रस्ताव तीन महीने के भीतर सभा के सम्मुख उपस्थित करेगी। अतः समस्त सभासदों से प्रार्थना है कि नियमावली में, जो संशोधनार्थ नागरीप्रचारिणी पत्रिका के भाग २२ संख्या ३ से ६ तक में छप चुकी है, जो जो परिवर्त्तन वे आवश्यक समझें उन्हें प्रस्ताव के रूप में ५ दिसम्बर १९१८ के पहले ही सभा में भेजें। प्रस्ताव कागज़ के एक ओर लिखें और पत्रिका में छपे हुए नम्बरों का हवाला देते जायँ।

गोविन्दराव जोगलेकर बी० ए० एल० एल बी०
मंत्री, काशी-नागरीप्रचारिणी सभा।

हिन्दी की सेवा के लिए नवयुवक लोगों को एक अद्भुत अवसर।

श्रीमान् गान्धीजी द्वारा मद्रास में हिंदी प्रचार का प्रबंध हो गया है। उनके पुत्र स्वयं वहां जाकर इस काम को कर रहे हैं। स्वामी सत्यदेवजी वहीं हैं। पढ़ाई एक पाठशाला में होती है। पढ़नेवालों में बड़े बड़े प्रतिष्ठित लोग शरीक हुए हैं। इन लोगों का उत्साह इस समय इतना बढ़ा हुआ है कि दो पढ़ानेवालों से सब काम नहीं चलता। [illegible] ऐसे उत्साही नवयुवक लोगों की आवश्यकता है जो हि[illegible] अंग्रेजी खूब जानते हों, जिन्हें देश की इतनी लगन हो [illegible] से अपना काम चला सकें। केवल छ महीने वहाँ रहने [illegible] करके यदि कालेजों में पढ़नेवाले विद्यार्थी बारी बारी से वहाँ जाना शुरू करें तो मद्रास प्रांत में हिंदी की ध्वनि गूँज उठे। रेल का किराया और वहाँ रहने का खर्च उनको दिया जायगा।

गोविन्दराव जोगलेकर
मंत्री, काशीनागरीप्रचारिणी सभा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका।

दिसंबर १९१८

सम्पादक– रामचन्द्र शुक्ल।

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल। बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल॥
बहु विलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल। निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सबको मूल॥
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार। सब देशन सों लै करहु, भाषा माँहि प्रचार॥
पूरित करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न। राजकाज दरबार में, फैलावहु यह रत्न॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र।

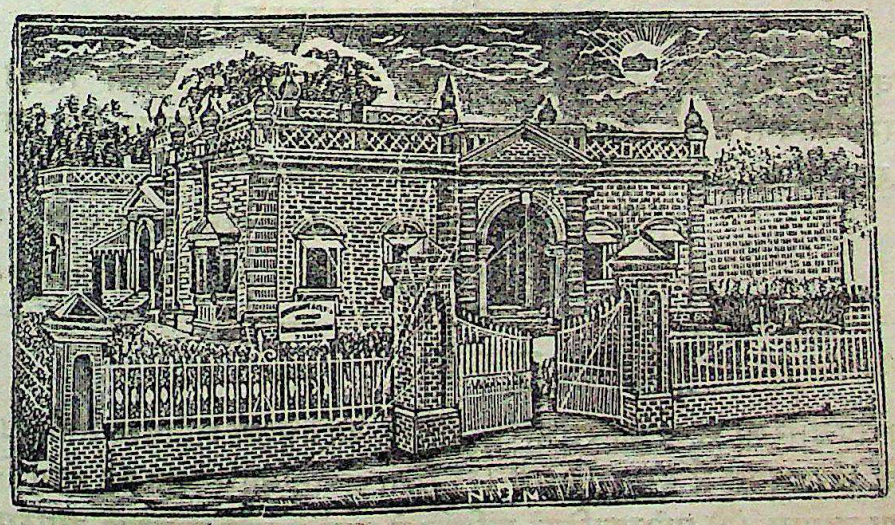

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित।

गणपति कृष्ण गुर्जर द्वारा श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस, काशी में मुद्रित।

वार्षिक मूल्य १॥)

प्रति संख्या =)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची ।

१—लज्जा और ग्लानि १२१
२—प्राचीन काल में भारतीय संस्कार का विस्तार १२८
३—शाहजहाँ के समय की कुछ बात (ले० पं० हरिश्चंद्र शुक्ल) ... १३१
४—सभा का कार्य-विवरण २३७

मुफ्त ! मुफ्त !! मुफ्त !!!

धन्वन्तरी ।

यह आयुर्वेदीय मासिक पत्र योग्य वैद्य, डाक्टर और हकीमों को बिना मूल्य भेजा जाता है, सर्व साधारण को नहीं । मैनेजर, धन्वन्तरी, विजयगढ़, अलीगढ़ ।

पदक और पुरस्कार ।

सभा द्वारा उत्तमोत्तम विषयों पर लेख लिखने के लिये प्रति वर्ष स्वर्ण और रजत पदक दिए जाते हैं । सन् १९१८ में इनके लिये निम्नलिखित विषय नियत हैं—

छन्नूलाल स्वर्ण पदक—नगरों का निर्माण ।

राधाकृष्णदास रजत पदक—प्राचीन भारतवर्ष की शासन-प्रणाली ।

रेडिचे रजत पदक—मनुष्य का भोजन ।

इन विषयों पर लेख सभा में ३१ दिसम्बर १९१८ तक आ जाने चाहिएँ ।

मेहता जोधसिंह पुरस्कार ।

१ जनवरी १९१७ से ३१ दिसम्बर १९१९ तक प्रकाशित होने वाली हिन्दी की पुस्तकों में जो सर्वोत्तम समझी जायगी उसके रचयिता को २००) रु० का यह पुरस्कार दिया जायगा । इसके लिये जो पुस्तकें सभा में आवेंगी उन्हीं पर विचार किया जायगा ।

गोविन्दराव जोगलेकर बी० ए०, एल-एल० बी०
मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी ।

सूचना ।

काशी नागरीप्रचारिणी सभा का साधारण मासिक अधिवेशन शनिवार ता० २५ जनवरी १९१९ को सन्ध्या के ५ बजे सभाभवन में होगा जिसमें (१) सभा के गत अधिवेशन का कार्य विवरण स्वीकारार्थ उपस्थित किया जायगा (२) प्रबंधकारिणी समिति के कार्यविवरण सूचनार्थ उपस्थित किए जायँगे (३) सभासद होने के लिये आए आए हुए फ़ार्म उपस्थित किए जायँगे (४) प्राप्त पुस्तकें उपस्थित की जायँगी और (५) बाबू हरिहरनाथ का यह प्रस्ताव उपस्थित किया जायगा कि जिस सभासद को किसी नियम के अनुसार प्रबंधकारिणी समिति में उसके सदस्य की हैसियत से उपस्थित होने का अधिकार हो वह प्रबंधकारिणी समिति का सदस्य न चुना जाय ।

गोविंद राव जोगलेकर,
मन्त्री, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

भाग २३ } दिसंबर १९१८ । { संख्या ६

लज्जा और ग्लानि ।

हम जिन लोगों के बीच रहते हैं अपने विषय में उनकी धारणा का जितना ही अधिक ध्यान रखते हैं उतना ही अधिक प्रतिबंध अपने आचरण पर रखते हैं। जो हमारी बुराई, मूर्खता या तुच्छता के प्रमाण पा चुके रहते उनके सामने हम उसी धड़ाके के साथ नहीं आते हैं जिस धड़ाके के साथ औरों के सामने आते हैं। यहीं तक नहीं, जिन्हें इस प्रकार का ऐसे प्रमाण नहीं भी मिला रहता है उनके आगे भी ऐसे काम करते हुए यह सोच कर कुछ आगा पीछा होता है कि कहीं इस प्रकार का प्रमाण उन्हें मिल न रहा हो। दूसरों के चित्त में अपने विषय में बुरी या तुच्छ धारणा होने के निश्चय या आशंका मात्र से वृत्तियों का जो संकोच होता है—उनकी स्वच्छन्दता के विघात का जो अनुभव होता है-उसे लज्जा कहते हैं। इस मनोवेग के मारे लोग सिर ऊँचा नहीं करते, मुहँ नहीं दिखाते, सामने नहीं आते, साफ़ साफ़ कहते नहीं और भी न जाने क्या क्या नहीं करते। 'हम बुरे न समझे जायँ' यह स्थायी भाव जिस में जितना ही अधिक होगा वह उतना ही लज्जाशील होगा। 'कोई बुरा कहे चाहे भला' इसकी परवा न कर के जो काम किया करते हैं वे ही निर्लज्ज कहलाते हैं।

जिस समाज में हम कोई बुराई करते हैं, जिस समाज में हम अपनी मूर्खता धृष्टता आदि का प्रमाण दे चुके रहते हैं उसके अंग होने का स्वत्व हम जता नहीं सकते अतः उसके सामने अपनी सजीवता के लक्षणों को उपस्थित करते या रखते नहीं बनता—यह प्रकट करते नहीं बनता कि हम भी इस संसार में हैं। जिसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ हमने कोई बुराई की होती है उसे देखते ही हमारी क्या दशा होती है? हमारी चेष्टाएं मंद पड़ जाती हैं, हमारे ऊपर घड़ों पानी पड़ जाता है, हम गड़ जाते हैं या चाहते हैं कि धरती फट जाती और हम उसमें समा जाते। सारांश यह कि यदि हम कुछ देर के लिए मर नहीं जाते तो कम से कम अपने जीने के प्रमाण अवश्य समेट लेते हैं।

ऊपर जो कुछ कहा गया उससे यह स्पष्ट हो गया होगा कि लज्जा का कारण अपनी बुराई, त्रुटि या दोष का हमारा अपना निश्चय नहीं दूसरे के निश्चय का निश्चय वा अनुमान है जो हम बिना किसी प्रकार का प्रमाण पाए केवल अपने आचरण वा अवस्था विशेष पर दृष्टि रख कर ही कभी कभी कर लिया करते हैं। हम अपने को दोषी समझें यह आवश्यक नहीं, दूसरा हमें दोषी या बुरा समझे यह भी आवश्यक नहीं, आवश्यक है हमारा यह समझना कि दूसरा हमें दोषी या बुरा समझता है या समझता होगा। जो आचरण लोगों को बुरा लगा करता है, जिस अवस्था का लोग उपहास किया करते हैं, जिस बात से लोग घृणा किया करते हैं यदि हम समझते हैं कि लोगों के देखने में वह आचरण हमसे हो गया, उस अवस्था में हम पड़ गए या वह बात हमसे बन पड़ी तो हम लज्जित होने के लिए इसका आसरा न देखेंगे कि जिन लोगों के सामने ऐसी बात हुई है वे निन्दा करें, उपहास करें या छिः छिः करें। वे निन्दा करें या न करें, उपहास करें या न करें, घृणा प्रकट करें या न करें पर हम समझते हैं कि सामग्री उनके पास है वे उसका उपयोग करें करें न करें। यह अवश्य है कि उपयोग होने पर हमारी लज्जा का वेग या भार बहुत बढ़ जाता है, पर कभी कभी कभी इसका उलटा भी होता है। जिसके साथ हमने कोई भारी बुराई की होती है यदि दस आदमियों के सामने मिलने पर वह मौन रहे, हमारा गुणानुवाद करने लगे, हमसे प्रेम जताने लगे या हमारा उपकार करने चले तो शायद हम अपने डूबने के लिए चुल्लू भर पानी ढूँढ़ने लगेंगे। बन से लौटने पर रामचन्द्र जी कैकेयी से मिले और "रामहिं मिलत केकई हृदय बहुत सकुचानि।" पर जब लक्ष्मण "कैकइ कहँ पुनि पुनि मिले" तब तो वह लज्जा से धँस गई होगी। चित्रकूट में जब राम पहले कैकेयी से ही मिले होंगे तब उसकी क्या दशा हुई होगी?

निन्दा का भय लज्जा नहीं है भय ही है, पर कई बातों का जिनमें लज्जा भी एक है। हमें निन्दा का भय है, इसका मतलब है कि हमें उसके परिणामों का भय है—अपने कुढ़ने, दुखी होने, लज्जित होने, हानि सहने इत्यादि का भय है।

विशुद्ध लज्जा अपने विषय में दूसरे की ही भावना पर दृष्टि रखने से होती है। अपनी बुराई, मूर्खता, तुच्छता इत्यादि का एकान्त अनुभव करने से वृत्तियों में जो शैथिल्य आता है उसे 'ग्लानि' कहते हैं। इसे अधिकतर उन लोगों को भोगना पड़ता है जिनका अन्तःकरण सत्त्वप्रधान होता है, जिनके संस्कार सात्त्विक होते हैं, जिनके भाव कोमल और उदार होते हैं। जिनका हृदय कठोर होता है, जिनकी वृत्ति क्रूर होती है, जो सिर से पैर तक स्वार्थ में निमग्न होते हैं उन्हें सहने के लिए संसार में इतनी बाधाएँ; इतनी कठिनाइयाँ, इतने कष्ट होते हैं कि ऊपर से और इसकी भी न उतनी ज़रूरत रहती है न जगह। मन में ग्लानि आने के लिए यह आवश्यक नहीं कि जो हमारी बुराई, मूर्खता तुच्छता आदि से परिचित हों, या परिचित समझे जाते हों उनका सामना हो। हम अपना मुँह न दिखा कर लज्जा से बच सकते हैं पर ग्लानि से नहीं। कोठरी में बंद, चारपाई पर पड़े पड़े, लिहाफ के नीचे भी लोग ग्लानि से गल सकते हैं। चित्रकूट में भरत-राम के मिलाप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थान पर जब जनक के आने का समाचार
ा तब "सुनत जनक-आगमन सब हरखेउ
ध समाज।" पर "गरइ गलानि कुटिल कैकेई।"
ग्लानि में अपनी बुराई, मूर्खता, तुच्छता
दि के अनुभव से जो सन्ताप होता है वह
कने में भी होता है और दस आदमियों के
मने प्रकट भी किया जाता है। ग्लानि अन्तः
रण की शुद्धि का एक विधान है इससे उसके
ार में अपने दोष, अपराध, तुच्छता, बुराई
ादि का लोग दुःख से या सुख से कथन भी
ते हैं—उसमें दुराव या छिपाव की प्रवृत्ति
ीं रहती। अपने दोष का अनुभव, अपने अप-
ध का स्वीकार आन्तरिक अस्वस्थता का उप-
र तथा सच्चे सुधार का द्वार है। 'हम बुरे हैं'
ब तक हम यह न समझेंगे तब तक अच्छे नहीं
सकते, 'हम बुरे हैं' दूसरों के कान में पड़ते
ासका अर्थ उलट जाता है। दूसरों को हम
च्छे नहीं लगते यह समझ कर हम लज्जित होते
अतः औरों को अच्छी न लगनेवाली बातों को
ल उन्हीं की दृष्टि से दूर रख कर ही बहुत से
ग न लज्जित होते हैं, न निर्लज्ज कहलाते हैं।
रों के हृदय में अज्ञान की प्रतिष्ठा करके वे
की शरण में जाते हैं। पर अज्ञान, चाहे अपना
चाहे पराया, सब दिन रक्षा नहीं कर सकता।
लि-पशु हो कर ही हम उसके आश्रय में पलते
। जीवन के किसी अंग की यदि वह रक्षा करता
तो सर्वांगभक्षण के लिए। अज्ञान अन्धकार-
रूप है। दीया बुझा कर भागनेवाला यदि
मझता है कि दूसरे उसे देख नहीं सकते तो उसे
भी समझ रखना चाहिए कि वह ठोकर खा
र गिर भी सकता है।

कोई बात ऐसी है जिससे हम दूसरों को
च्छे नहीं लगते हैं यह जान कर अपने को, और
च्छे न लगेंगे यह समझ कर उस बात को थोड़े
त यत्न से उनके दृष्टिपथ से दूर कर के भी जब
हम समय पर अपना बचाव कर सकते हैं, यही नहीं, अपने व्यवधान-कौशल पर विश्वास कर सदा बचते चले जाने की आशा तक—चाहे वह झूठी ही क्यों न हो—कर सकते हैं, तब हमारा केवल यह जानना या समझना सदा सुधार की इच्छा ही उत्पन्न करेगा, कैसे कहा जा सकता है। दूसरों का भय हमें भगा सकता है, हमारी बुराइयों को नहीं। दूसरों से हम भाग सकते हैं पर अपने से नहीं। जब अपने को हम अच्छे न लगने लगेंगे तब सिवा इसके कि हम अच्छे हों या अच्छे होने की आशा करें आत्मग्लानि से बचने का और कोई उपाय न रहेगा। पर जिनके अन्तःकरण में अच्छे संस्कारों का बीज रहता है ग्लानि उन्हीं को होती है।

संकल्प या प्रवृत्ति हो जाने पर बुराई से बचाने वाले तीन मनोवेग हैं—सात्त्विक वृत्तिवालों के लिए ग्लानि, राजसी वृत्तिवालों के लिए लज्जा और तामसी वृत्तिवालों के लिए भय। जिन्हें अपने किए पर ग्लानि नहीं हो सकती वे लोक-लज्जा से, जिनमें लोकलज्जा का लेश नहीं रहता वे भय से बहुत से कामों को करते हुए हिचकते हैं। बहुत से लोग इच्छा रखते हुए भी बुरे काम लज्जा के मारे नहीं करते। पर लज्जा का अनुभव एक प्रकार के दुःख का ही अनुभव है अतः यह नहीं कहा जा सकता कि कर्म न करने पर भी अपनी इच्छा मात्र पर उन्हें यह दुःख होता है क्योंकि यदि ऐसा होता तो वे इच्छा रखते ही क्यों? सच पूछिए तो उन्हें उस दुःख की आशंका मात्र रहती है जो लोगों के धिक्कार, बुरी धारणा आदि से उन्हें होगा। लज्जा का अनुभव तो तभी होगा जब वे कुकर्म की ओर इतने अग्रसर हो चुके रहेंगे कि यह समझ सकें कि लोगों के मन में बुरी धारणा हो गई होगी। उस समय उनका पैर आगे नहीं बढ़ेगा। आशंका अनिश्चयात्मक वृत्ति है इससे ग्लानि की आशंका नहीं हो सकती। ग्लानि का सम्बन्ध अपने से कहीं बाहर की बुरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारणा से तो होता नहीं, अपनी ही बुरी धारणा से होता है जिसमें अनिश्चय का भाव नहीं रह सकता। जिससे बुराई की जितनी ही अधिक सम्भावना होती है उसे रोकने का उतने ही पहले से उपाय किया जाता है। जिन्हें अपने किए पर ग्लानि हो सकती है उनके लिए उतने पहले से प्रतिबन्ध की आवश्यकता नहीं होती जितने पहले से उनके लिए होती है जो केवल यही समझ कर दुखी होते हैं कि 'लोग हमें बुरा समझते हैं' यह समझ कर नहीं कि 'हम बुरे हैं।' जो निपट निर्लज्ज होते हैं, जो दूसरों की बुरी धारणा की भी तब तक परवा नहीं करते जब तक उससे किसी उग्र फल की आशंका नहीं होती उनके कर्म प्रायः इतने बुरे, इतने असह्य हुआ करते हैं कि दूसरे उन्हें बुरा समझ कर ही चुप नहीं रह जाते, छिः छिः कर के ही सन्तोष नहीं कर लेते मरम्मत करने के लिए भी तैयार हो जाते हैं जिससे उन्हें कभी भयभीत होना पड़ता है, कभी सशंक।

मनुष्य समाज-बद्ध प्राणी है इससे वह अपने को उनके कर्मों के गुण दोष का भी भागी समझता है जिनसे उसका सम्बन्ध होता है, जिनके साथ में वह देखा जाता है। पुत्र की अयोग्यता और दुराचार, भाई के दुर्गुण और असभ्य व्यवहार आदि का ध्यान कर के भी दस आदमियों के सामने सिर नीचा होता है। यदि हमारा साथी हमारे सामने किसी तीसरे आदमी से बातचीत करने में भारी मूर्खता का प्रमाण देता है, भद्दी और ग्राम्य भाषा का प्रयोग करता है तो हमें भी लज्जा आती है। मैंने कुत्ते के कई शौक़ीनों को अपने कुत्ते की बदतमीज़ी पर शरमाते देखा है। जिसे लोग कुमार्गी जानते हैं उसके साथ यदि हम कभी देव-मंदिर के मार्ग पर भी देखे जाते हैं तो सिर झुका लेते हैं या बग़ल झाँकते हैं। बात यह है कि जिसके साथ हम देखे जाते हैं उसका हमारा कितनी बातों में कहां तक साथ है दूसरों को इसके अनुमान की पूरी स्वच्छंदता रहती है, उनकी कल्पना की कोई सीमा हम तत्काल बाँध नहीं सकते। किसी बुरे प्रसंग में यदि निमित्त रूप से भी हमारा नाम आ जाता है तो हमें लज्जा होती है-चाहे ऐसा हमारी जानकारी में हुआ हो, चाहे अनजान में। यदि बिना हमें जताए हमारे पक्ष में कोई कुचक्र रचा जाय तो उसका वृत्तांत फैलने पर हमें लज्जा क्या ग्लानि तक हो सकती है। लज्जा क्यों होती है यह पूछने की जरूरत है न बताने की। पर 'हम बुरे या तुच्छ हैं' यह धारणा कहाँ से आती है, यही देखना है। अपमान होने पर यदि क्रोध के लिए स्थान हुआ तो क्रोध का नहीं तो अपनी तुच्छता का अनुभव होता है। दूसरों के चित्त में हमारे प्रति जो प्रेम या प्रतिष्ठा का भाव रहता है उसका ह्रास, किसी कुचक्र के साथ अपने नाम मात्र का संबंध समझ कर भी, हम समझे बिना नहीं रह सकते। जब स्थिति ऐसी होती है कि इस ह्रास का हम समाधान द्वारा निराकरण कर सकते हैं न क्रोध द्वारा प्रतिकार तो सिवा इसके कि हम अपनी हीनता का अनुभव करें और कर ही क्या सकते हैं? भरत को इसी दशा में पा कर राम ने उन्हें समझाया था कि-

> तात जाय जनि करहु गलानी।
> ईस अधीन जीव-गति जानी॥
> तीनि काल त्रिभुवन मत मोरे।
> पुन्यसलोक तात तर तोरे॥
> उर आनत तुम पर कुटिलाई।
> जाइ लोक परलोक नसाई॥

जिसने इतनी बुराई की वह मेरी माता है इस भावना से जो लज्जा भरत को थी उसे दूर करने के लिए ही यह आगे का वचन है—

> दोष देहिं जननिहिं जड़ तेई।
> जिन गुरु-साधु-सभा नहिं सेई॥

इस प्रकार दोष देनेवालों में दोषोत्पादन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनधिकार का आरोप करके माता के दोष परिहार किया गया।

उत्तम कोटि के मनुष्यों को अपने दुष्कर्म्म ग्लानि होती है और मध्यम कोटि के मनुष्यों अपने दुष्कर्म्म के किसी कडुए फल पर। दुष्कर्म अनेक अप्रिय फलों में से एक अपमान है जिसे कर अपनी तुच्छता का अनुभव किए बिना प्रायः नहीं रहते। जिन्हें अपने किसी कर्म बुराई का ध्यान आप से आप नहीं होता उन्हें ध्यान कराने का श्रम उसकी बुराई का विशेष अनुभव करनेवाले अपनी बुराई का सब ध्यान, अपने हाथ का सब धंधा छोड़ कर उठाते हैं। श्रम से दूसरों के लिए उनकी बुराई का फल किया जाता है जिसकी चिरसता और कटुता कभी कभी अत्यन्त ग्लानिकारक होती है। पर आँख खुलने पर जो आँख खोलनेवालों को ही सकें उनकी आँख की दुरुस्ती में बहुत कसर करनी चाहिए। अपमान या हानि की जो ग्लानि उस अपमान या हानि ही तक ध्यान को जाय-उसके कारण तक न बढ़ावे-वह बुराई मार्ग पर चल चुकनेवालों का थोड़ी देर के लिए पैर थाम या बल तोड़ सकती है पर उनका मुंह दूसरी ओर मोड़ नहीं सकती। अपमान का दुःख केवल इन शब्दों में व्यक्त किया जाता है 'हा! हमारी यह गति हुई!' उससे अपमान करनेवालों का काम तो हो जाता है पर दुःख करनेवालों का कोई मतलब नहीं निकलता। जो ग्लानि हमसे यह कहलावे कि 'यदि हमने ऐसा किया होता तो हमारी यह गति क्यों होती?' वही पश्चात्ताप की ग्लानि है जिससे हमारा हृदय पिघल कर किसी नए साँचे में ढलने के योग्य हो सकता है। अस्तु, कोई ऐसी बुराई कर के जिससे दूसरे आदमियों को कष्ट पहुँचा हो हम यह समझ लें कि 'हम ने बुरा किया' जितनी ही जल्दी करते हैं उतने ही मजे में रहते हैं क्योंकि बहुधा ऐसा होता है कि जिन्हें कष्ट पहुँचा रहता है वे हमारी इस समझ का पता पा कर सन्तुष्ट हो जाते हैं। अपनी किसी बुराई को बंध्या मान कर मन का खटका छुड़ानेवाले धोखा खाते हैं।

अपमान से जो ग्लानि होती है वह दो भावों के आधार पर—'हम ऐसे तुच्छ हैं', 'हम ऐसे बुरे हैं'। इन दोनों भावों को कभी कभी लोग बड़ी फुरती और सफ़ाई से रोकते हैं। अपनी तुच्छता का भाव अधिकांश में अपनी असामर्थ्य और दूसरे की सामर्थ्य का भाव है हम इतने असमर्थ हैं कि दूसरे हमारा अपमान कर सकते हैं इस भाव से निवृत्ति तो लोग चट अपनी सामर्थ्य का परिचय देकर—अपमान करनेवाले का अपमान कर के—कर लेते हैं। रहा अपने दोष या बुराई का भाव-उससे छुटकारा लोग दोष देनेवालों में दोष ढूँढ़कर कर लेते हैं। इस प्रकार अपनी सामर्थ्य और दूसरे के दोष की भावना मन में भर कर वे अपनी तुच्छता और बुराई के अनुभव के लिए कोई कोना ख़ाली ही नहीं छोड़ते। ऐसे लोग चाहे लाख बुराई करें एक की दस सुनाने को सदा तैयार रहते हैं। अपने को ऐसा ही कल्पित कर के तुलसीदास जी कहते हैं--

जानत हू निज पाप जलधि जिय,
जल-सीकर सम सुनत लरौं।
रज सम पर-अवगुन सुमेरु करि,
गुन गिरि सम रज ते निदरौं॥

अकारण अपमान पर जो ग्लानि होती है वह अपनी तुच्छता, अपनी सामर्थ्य-हीनता पर ही होती है। लोक-मर्य्यादा की दृष्टि से हमको इतनी सामर्थ्य का सम्पादन करना चाहिए कि दूसरे अकारण हमारा अपमान करने का साहस न कर सकें। समाज में रह कर मान-मर्य्यादा का भाव हम छोड़ नहीं सकते। अतः इस सामर्थ्य का अभाव हमें खटक सकता है, उसकी हमें ग्लानि होसकती है। जो संसार-त्यागी वा आत्म-त्यागी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं उनका विगतमान होना तो बहुत ठीक है, पर लोक-व्यवहार की दृष्टि से अनिष्ट से बचने बचाने के लिए इष्ट यही है कि हम दुष्टों का हाथ थामें और धृष्टों का मुँह-उनकी वंदना करके हम पार नहीं पा सकते। इधर हम हाथ जोड़ेंगे उधर वे हाथ छोड़ेंगे। असामर्थ्य हमें सहनशीलता का श्रेय भी पूरा पूरा नहीं प्राप्त करने देगी।

मान लीजिए कि एक ओर से हमारे गुरू जी और दूसरी ओर से एक दंडधारी दुष्ट दोनो आते दिखाई पड़े। ऐसी अवस्था में पहले हमें उस दुष्ट का सत्कार करके तब गुरु जी को दंडवत् करना चाहिए। पहले उस दुष्ट द्वारा होनेवाले अनिष्ट का निवारण कर्त्तव्य है फिर उस आनन्द का अनुभव जो गुरु जी के चरणस्पर्श से होगा। यदि हम पहले गुरु जी को साष्टांग दंडवत् करने लगेंगे तो बहुत सम्भव है कि वह दुष्ट हमारे अंगों को फिर उठने लायक ही न रखे। यदि हम में सामर्थ्य नहीं हैं तो हमें बिना गुरूजी को प्रणाम दंडवत् किए ही भागना पड़ेगा। जिसकी शायद हमें बहुत दिनों तक ग्लानि रहे।

लज्जा का एक हलका रूप संकोच है जो किसी काम को करने के पहले ही होता है। कर्म पूरे होने के साथ ही उसका अवसर निकल जाता है, फिर तो लज्जा ही लज्जा हाथ रह जाती है। सामान्य से सामान्य व्यवहार में भी संकोच देखा जाता है। लोग अपना रुपया माँगने में संकोच करते हैं, साफ़ साफ़ बात कहने में संकोच करते हैं, उठने में संकोच करते हैं, बैठने में संकोच करते हैं—मुआफ़ कीजिएगा—लेटने में संकोच करते हैं, खाने पीने में संकोच करते हैं, यहाँ तक कि एक सभा के सहायक मंत्री हैं जो कार्य्यविवरण पढ़ने में संकोच करते हैं। सारांश यह कि एक बेवकूफ़ी करने में लोग संकोच नहीं करते और सब बातों में करते हैं। इससे उतना हर्ज भी नहीं क्योंकि बिना बेवकूफ़ हुए बेवकूफ़ी का बुरा लोग प्रायः नहीं मानते। इतनी क्रियाओं का प्रतिबन्धक होने के कारण संकोच शील का एक प्रधान अंग, सदाचार का एक सहज साधक और शिष्टाचार का एक मात्र आधार है। जिसमें शील-संकोच नहीं वह पूरा मनुष्य नहीं। बाहरी प्रतिबंधों से ही हमारा पूरा शासन नहीं हो सकता—उन सब बातों की रुकावट नहीं हो सकती जिन्हें हमें न करना चाहिए। प्रतिबंध हमारे अंतःकरण में होना चाहिए। यह आभ्यंतर प्रतिबंध दो प्रकार का हो सकता है—एक विवेचनात्मक जो प्रयत्नसाध्य होता है, दूसरा मनः प्रवृत्त्यात्मक जो स्वभावज होता है। बुद्धि द्वारा प्रवृत्ति ज़बरदस्ती रोकी जाती है, पर लज्जा, संकोच आदि की अवस्था को प्राप्त होकर प्रवर्त्तक मन आप से आप रुकता है, चेष्टाएँ आप से आप शिथिल पड़ती हैं। यही रुकावट सच्ची है। मन की जो स्थिति बड़ों की बात का उत्तर देने से रोकती है, बार बार किसी से कुछ माँगने से रोकती है, किसी पर किसी प्रकार का भार डालने से रोकती है उसके न रहने से भलमनसाहत भला कहाँ रहेगी? यदि मन की धड़क एकबारगी खुल जाय तो एक ओर छोटे मुहों से बड़ी बड़ी बातें निकलने लगें, चार दिन के मेहमान तरह तरह की फ़रमाइशें करने लगें, उँगली का सहारा पानेवाले बाँह पकड़ कर खींचने लगें; दूसरी ओर बड़ों का बहुत कुछ बड़प्पन निकल जाय, गहरे गहरे साथी बहरे हो जायँ या सूखा जवाब देने लगें, जो हाथ सहारा देने के लिए बढ़ते हैं वे ढकेलने के लिए बढ़ने लगें—फिर तो भलमनसाहत का भार उठानेवाले इतने कम रह जायँ कि वे उसे लेकर चल ही न सकें।

संकोच इस बात के ध्यान वा आशंका से होता है कि जो कुछ हम करने जा रहे हैं वह किसी को अप्रिय या बेढंगा तो न लगेगा, उससे हमारी दुःशीलता वा धृष्टता तो न प्रकट होगी। इस बात का जिन्हें कुछ भी ध्यान नहीं रहता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस आदमियों का साथ नहीं निभ सकता जिन्हें अत्यन्त अधिक ध्यान रहता है उनके कामों में बाधा पड़ती है। बिंबप्रतिबिंब रूप परस्पर मनोभावों की स्थिति होने से ही के व्यवहार चलते हैं। यदि एक इस बात ध्यान रखता है कि दूसरे को कोई बात खटके बुरी न लगे और दूसरा उसकी हानि कठिनाई का कुछ भी ध्यान नहीं रखता है तो यह ति व्यवहार-बाधक है। ऐसी स्थिति में भी च करनेवालों के काम देर से निकलते हैं निकलते ही नहीं। पर इससे यह न समझना ए कि जितने 'अपने संकोची स्वभाव' की यत के बहाने अपनी तारीफ़ किया करते हैं व अपनी भलमनसाहत से ही दुःख भोगा हैं। ऐसे लोगों में संकोच तो नाम मात्र को समझना चाहिए। जिन्हें यह कहने में संकोच कि 'हम बड़े संकोची हैं' उनमें संकोच कहाँ? यह कहते देर नहीं कि 'अमुक बड़ा निर्लज्ज ड़ा दुष्ट है'।

लज्जा या संकोच यदि बहुत अधिक होता है से छुड़ाने की फ़िक्र की जाती है क्योंकि से कभी कभी आवश्यकता से अधिक कष्ट ना पड़ता है तथा व्यवहार तो व्यवहार चार तक का निर्वाह कठिन हो जाता है। से रहने का सीधा रास्ता बतलानेवालों ने आहार और व्यवहार में' लज्जा का एक दम ही विधेय ठहराया है। पर मुझे तो यहाँ देखना है कि बात बात में लज्जा करनेवालों धारणा कैसी होती है, उनके चित्त में समाई रहती है। कोई क्रिया या व्यापार किसी बुरा, बेढंगा या अप्रिय न लगे यह ध्यान तो ष्ट और स्पष्ट होने के कारण कुछ विशिष्ट गों का ही अवरोध करता है क्योंकि जो जो लोगों को बुरे, बेढंगे या अप्रिय लगा करते उनकी एक छोटी या बड़ी सूची सबके अनुभव में रहती है। पर जो यही अनिश्चित भावना रख कर संकुचित होते हैं कि कोई बात 'लोगों को न जाने कैसी लगे' उन्हें न जाने कितनी बातों में संकोच या लज्जा हुआ करती है। उन्हें बात बात में खटका होता है—उनका बैठना न जाने कैसा मालूम होता हो, बोलना न जाने कैसा मालूम होता हो, हाथ पैर हिलाना न जाने कैसा मालूम होता हो, ताकना न जाने कैसा मालूम होता हो, उनके ऐसे आदमी का होना—वे कैसे हैं चाहे वे कुछ भी न जानते हों—न जाने कैसा मालूम होता हो। न जाने कैसे लगने का डर उन्हें लोगों के लगाव से दूर दूर रखता है। यह आशंका इतनी अव्यक्त होती है, लज्जा और इसके बीच का अंतर इतना क्षणिक होता है कि साधारणतः इसका अलग अनुभव नहीं होता।

कुछ लोगों के मुंह से लज्जा या संकोच के मारे आदर सत्कार के आवश्यक वचन मुँह से नहीं निकलते, बहुत से लड़कों को प्रणाम करने में लज्जा मालूम होती है। ऐसी लज्जा किसी काम की नहीं समझी जाती। बच्चों को अपनी तुच्छता बुराई या बेढंगेपन की भावना बहुत कम होती है, वे अपनी क्रियाओं में स्वभावतः स्वच्छंद होते हैं पर विशेष स्थिति में पड़ कर वे इतने भीरु और लज्जालु हो जाते हैं कि नए आदमियों के सामने नहीं आते, लाख पूछने पर कोई बात मुँह से नहीं निकालते। ऐसी दशा अधिकतर उन बच्चों की हो जाती है जो बात बात पर, उठते बैठते हिलते डोलते डाँटे, धिक्कारे या चिढ़ाए जाते हैं। लोग अकसर प्यार से बच्चों को किसी भद्दे, बेढंगे या बुरे आदमी का ध्यान कराकर उन्हें चिढ़ाते हैं कि 'तुम वही हो' इस प्रकार उन्हें सहमने, संकोच करने लज्जित होने आदि का अभ्यास कराया जाता है जो बढ़ते बढ़ते बहुत बढ़ जाता है।

अपनी त्रुटि, बेढंगेपन, धृष्टता इत्यादि का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिचय दूसरों को—विशेषतः पुरुषों को—न मिले इसका ध्यान स्त्रियों में बहुत अधिक और स्वाभाविक होता है, इसीसे उनमें लज्जा अधिक देखी जाती है। वे सदा से पुरुषों के आश्रय में रहती आई हैं इससे 'हम धृष्ट या अप्रिय न लगें' इसकी आशंका उनमें चिरस्थायिनी हो कर लज्जा के रूप में हो गई है। बहुत सी स्त्रियां ऐसी होती हैं—विशेषतः बड़े घरों की—जिनकी काम धंधे के रूप में भी लोगों के सामने हाथ पैर हिलाने की धड़क नहीं खुली रहती, अतः उनका अधिक लज्जाशील होना ठीक ही है। लोग लज्जा को स्त्रियों का भूषण कह कह कर उनमें धृष्टता के दूषण से बचने का ध्यान और भी पक्का करते रहे। धीरे धीरे उन के रूप रंग के समान उनकी लज्जा भी पुरुषों के आनंद और विलास की एक सामग्री हुई। रस कोविद लोग मुग्धा और मध्या की लज्जा का वर्णन कान में डाल कर रसिकों को आनंद से उन्मत्त करने लगे।

प्राचीन काल में भारतीय संस्कार का विस्तार।

प्राचीन भारत में एकछत्रराज्य।

शाक्यसिंह का निर्वाण ईसा से ४८३ वर्ष पूर्व हुआ। उसके पीछे डेढ़ सौ वर्ष तक प्रधानता प्राप्त करने के लिए राजाओं में परस्पर युद्ध होता रहा। ३२२ ई० पू० मगध राज्य का एकछत्र शासन चन्द्रगुप्त द्वारा स्थापित हुआ। ३२२–२४८ ई० पू० तक उसने और २७०–२३० ई० पू० तक उसके पोते अशोक ने राज्य किया।

इसी समय अत्यन्त विस्तृत एकछत्रशासन की स्थापना हुई और अफ़ग़ानिस्तान से ले कर बंगाल तक और हिमालय से लेकर मध्यप्रदेश तक का देश एक प्रतापी राजा के अधिकार में आया। अशोक ने इस भारतीय साम्राज्य को और भी बढ़ाया और दक्षिण के प्रदेशों को भी अपने अधीन किया।

सिंहासन पर बैठते ही उसने शाम के यवन राजा सिल्यूकस का मान ध्वस्त किया। इस म्लेच्छ पर विजय प्राप्त करना उसका पहला काम था। यहीं से भारतवर्ष के राजनैतिक इतिहास का पता मिलना आरंभ होता है।

बहुत दिनों से यूरोपियनों के बीच यह प्रवाद प्रचलित हो गया है कि आँधी की तरह पश्चिमी जातियों के जो आक्रमण होते थे उनके सामने पूर्वीय देश उदासीन हो कर झुक जाते थे और जब आँधी निकल जाती थी तब फिर अपने तात्त्विक विचारों में डूब जाते थे। और तो और मि० विंसेंट स्मिथ तक ने, जो ज़रा समझ बूझ कर कुछ कहते हैं, सिकंदर की चढ़ाई को अपने प्राचीन भारत के इतिहास में बहुत अधिक महत्व और विस्तार दिया है। उसकी चढ़ाई का इतना विस्तृत वर्णन यूनान के इतिहास में अधिक शोभा देता। यूनान का इतिहास पढ़नेवालों के लिए सिकंदर की चढ़ाई चाहे संसार की एक बड़ी भारी घटना हो पर भारतीय सभ्यता के इतिहास में वह क्षेपक के तुल्य है। मिस्टर स्मिथ भी इस बात को मानते हैं कि सिकंदर की चढ़ाई कोई ऐसी बात नहीं थी जिसे भारतवासी बहुत दिनों तक याद रखते।

सिकंदर के पीछे भारत फिर विचारों में डूब गया यह कहना बड़ी भारी भूल है। राइस डेविड्स कहते हैं—"सिल्यूकस निकेटर की शक्ति पश्चिम में जब बहुत बढ़ी तब उसने हिंदुस्तान पर चढ़ाई कर के सिकन्दर की बराबरी करना चाहा पर उसका एक बड़ी ही प्रबल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से पाला पड़ा। उसे मगध के विस्तृत और शक्तिशाली साम्राज्य का सामना करना जिसके सामने उसके सब प्रयत्ननिष्फल हुए। अपना प्राण लेकर भागना पड़ा और सिन्ध के प्रदेशों (अफ़ग़ानिस्तान, आजकल का) दे देना पड़ा। यहीं तक नहीं, उसने अपनी का विवाह भी भारत के विजयी सम्राट् साथ कर दिया। शाक्यसिंह ने निर्वाण जो उपदेश दिया था उससे भारतीय साम्राज्य स्थापना और विदेशी शत्रुओं के दमन में कुछ रुकावट न पड़ी। ईसा से तीन सौ वर्ष पूर्व तवर्ष का साम्राज्य आस पास के प्रदेशों में नहीं बल्कि संसार भर में सब से अधिक शाली था और पाटलिपुत्र देश विदेश के प्रतिनिधियों का समागम स्थान था। सौ तक हिंदुओं का वैभव और प्रताप इसी ार रहा। भारतवर्ष का समकक्ष और कोई नहीं था। इसके पीछे चीन साम्राज्य का य हुआ और संसार में वह भी एक प्रधान समझा जाने लगा। रोम साम्राज्य का भी कहीं पता न था। सिकन्दरिया, रोम दि कोई पाटलिपुत्र के जोड़ के नहीं थे। चीन भारत दोनों में एकछत्र शासन की भावना साथ ही साथ धर्म सम्बन्धी बातों में इस ार भाव का भी प्रचार हुआ कि अच्छी बातों सब मतों से ग्रहण करना चाहिए। एकछत्र सन की स्थापना करनेवाला किसी मत विशेष बातों से बद्ध नहीं हो सकता।

चन्द्रगुप्त अशोक ऐसे भारी सम्राटों को सी पंथ का दुराग्रह नहीं था। वे आप चाहे स मत के अनुयायी रहे हों पर वे इस बात जानते थे कि उनका काम किसी मत विशेष मंडन नहीं है. बल्कि एक ऐसे राजकीय धर्म मर्यादा बाँधना है जो सब मत मतान्तरों से तंत्र हो। उन्होंने कभी अपने राज्य को किसी मत के भीतर लाने का उद्योग नहीं किया। प्रजा के आचार व्यवहार के लिए केवल ऐसे ही नियमों की व्यवस्था की गई जिससे नीतिबल, धनबल और बाहुबल की वृद्धि हो। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में ऐसे ही नियमों की व्यवस्था है।

हिन्दू शास्त्र धर्म।

यह ठीक २ नहीं मालूम है कि चन्द्रगुप्त वास्तव में किस मत का अनुयायी था। जैन लोग उसे अपने मत का अनुयायी बतलाने की चेष्टा करते हैं, पर विद्वानों का मत है कि चन्द्रगुप्त न बौद्ध था न जैन. वह और उसका पुत्र बिन्दुसार दोनों वैदिक धर्म के अनुयायी थे। विदेशी ग्रंथकारों की पुस्तकें पढ़ कर जो यह समझते हैं कि भारतवर्ष सदा विचारों ही में डूबा रहता था उन्हें यह समझ रखना चाहिए कि जिस समय मेगास्थिनीज़ पाटलिपुत्र में आया था उसे सर्वसाधारण के बीच निर्वाण, निवृत्ति और विरक्ति आदि के कोई भाव नहीं दिखाई पड़े थे। उसने संसार को मिथ्या समझ हाथ पर हाथ रख बैठे रहनेवालों का कहीं उल्लेख नहीं किया है। उसके लेखों में बौद्धों का विशेष हाल नहीं है। ब्राह्मण और श्रमण दो वर्गों का उल्लेख उसने अवश्य किया है पर बौद्धों के आचार व्यवहार का कोई विशेष विवरण नहीं दिया है। बात यह थी कि न तो उसके समयमें अनेक प्रकार के भ्रान्त मत प्रकट किए गए थे और न उसे अपनी यवन जाति के श्रेष्ठ होने की धारणा बँधी हुई थी। वह यह जानता था कि वह संसार की सबसे बड़ी राजशक्ति के यहाँ अतिथि है। युद्ध द्वारा यह प्रमाणित हो गया था कि यवन (यूनानी) जाति हिन्दू जाति से निर्बल है। मेगास्थिनीज़ यह कैसे भूल सकता था कि वह एक पराजित राजा का दूत है?

पूर्व की राजधानी पाटलिपुत्र में पश्चिम देश के इस राजप्रतिनिधि को सर्वसाधारण के बीच संसार से विरक्ति के भावों का बाहुल्य नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिखाई पड़ा बल्कि एकछत्र सत्ता और साधारण धर्म की ही व्यवस्था की ओर उसका ध्यान गया। शुक्रनीति में राजनैतिक जीवन के लिए आवश्यक नियम दिए हुए हैं। उसी प्रकार के नियम कौटिल्य के समय में प्रचलित थे। नीचे कुछ नियम दिए जाते है जिनसे उस समय की जीवन-व्यवस्था का पता लग सकता है—

यदि स्त्रियों और ब्राह्मणों पर अत्याचार हो रहा हो तो ब्राह्मणों को भी शस्त्र ग्रहण करना चाहिए।

जो मनुष्य युद्ध में पीठ दिखा कर भागता है उसका नाश देवता करते हैं। आक्रमण होने पर जो ब्राह्मण युद्ध करता है उसे इस लोक में यश प्राप्त होता है क्योंकि क्षत्रिय का धर्म भी ब्रह्मा ही से निकला है।

क्षत्रिय के लिए शय्या पर प्राण त्यागना पाप है। जो अनाहत शरीर ले कर कफ पित्त से ग्रस्त कराहता हुआ मरता है वह क्षत्रिय नहीं है। बिना युद्ध के घर पर मृत्यु निंदनीय है। कायरता घोर पाप है।

जो क्षत्रिय रक्त बहता हुआ शरीर ले कर युद्ध से भाग आता है और अपने परिजनों से घिर जाता है वह वध के योग्य है।

जो राजा एक दूसरे से शूरता के साथ युद्ध करते हुए मरते हैं उनके लिए स्वर्ग रखा हुआ है। उसे भी उत्तम गति प्राप्त होती है जो अपने स्वामी के लिए सेना का नायक हो कर लड़ता है और भय से पीछे नहीं हटता।

जो वीर पुरुष युद्ध में मरे उसके लिए शोक न करना चाहिए। वह सब पापों से मुक्त हो कर स्वर्ग को जाता है।

स्वर्ग की अप्सराएँ उसे लेने के लिये दौड़ कर आगे बढ़ती हैं।

जो उत्तम गति ऋषियों को अनेक प्रकार के तप करने से प्राप्त होती है वह योद्धाओं को युद्ध में मरने से सहज में प्राप्त होती है।

यदि क्षत्रिय निर्वीर्य्य हो जायँ और प्रजा दुष्टों से सताई जाने लगे तो ब्राह्मणों का धर्म है कि वे शस्त्र ले कर उठें और उनका नाश कर दें।

इसी क्षात्रधर्म को योरप में Chivalry कहते थे और जापान में बुशिडो।

मनुस्मृति में युद्ध के जो नियम दिए हैं वे भी ध्यान देने योग्य हैं। यह ग्रंथ अपने मूल रूप में चंद्रगुप्त से बहुत पहले का है (यद्यपि इसका वर्त्तमान रूप ईसा की चौथी सदी के पहले का नहीं है)।

अच्छे योद्धा को अपना शस्त्र कभी छिपाए न रहना चाहिए जिसमें युद्ध के लिए अतत्पर लोगों पर वह प्रहार करे। उसे अपने भालों और बाणों के फलों को विषाक्त न करना चाहिए। यदि वह रथ पर हो और शत्रु नीचे खड़ा हो कर लड़ता हो तो उस पर प्रहार न करना चाहिए। जो हाथ जोड़ कर बिनती करता हो, जिसके केश छूट कर मुँह पर आ गए हों और दृष्टि को रोकते हों, जो थक कर मूर्च्छित हो गया हो, जो प्राणरक्षा के लिए प्रार्थना करता हो, जो यह कहता हो कि 'मैं तुम्हारा दास हूँ, उसे छोड़ देना चाहिए। इसी प्रकार जो निरस्त्र हो, किसी के लिए विलाप करता हो उस पर शूर वीर अपना हाथ न छोड़े। जो बहुत अधिक घायल हो गया हो, या भय से व्याकुल हो कर भागता हो उस पर वार न करना चाहिए।

युद्ध के इन नियमों को पढ़ते हुए वर्त्तमान समय की 'हेग महासभा' के मंतव्यों की ओर ध्यान जाता है।

यही व्यवस्था अशोक के समय में भी रही और चीन सम्राट् शि-ह्वांग टी का समकालीन था। अशोक ने अपने शिलालेखों द्वारा जिस धर्म की घोषणा की वह अक्षरशः शाक्यसिंह का उपदिष्ट धर्म नहीं था बल्कि साधारण धर्म था। अशोक हिंदू जाति की मर्य्यादा और एकछत्र सत्ता का स्थापक था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साम्राज्य की स्थापना करनेवालों में मतविशेष
ैसा आग्रह नहीं हो सकता जैसा कि औरंगजेब
ंगलैंड के बादशाह द्वितीय जेम्स में या फ्रांस
ादशाह चौदहवें लुईमें था। अशोक के आदेश
द्वारा प्रचारित दंड व्यवस्था या जज़िया जारी
नेवाले औरंगजेबी फरमान के समान नहीं थे।
में लोकसेवा और ऐसे साधारण धर्म की
वस्था थी जिसके विषय में कहीं कोई मतभेद
हो सकता था। अपने समकालीन चीन
ाट् की तरह अशोक भी वितंडावादियों अर्थात्
कांड का दुराग्रह प्रकट करनेवाले और हिंसा-
क यज्ञ करनेवाले ब्राह्मणों के प्रतिकूल रहता
पर साधारणतः ब्राह्मणों का वह आदर करता
मतों और सम्प्रदायों के संबंध में उसका भाव
त उदार था।

धर्म के संबंध में जो उदार भाव प्राचीन
ाया के अशोक ने प्रकट किया था वही भाव
मान एशिया के जापान सम्राट् मुत्सुहितो ने
नी घोषणा में प्रकट किया। इसी घोषणा से
ान में 'आलोक युग' का आरम्भ समझा जाता
भारत के एकछत्र सम्राट् अशोक ने आज से
०० वर्ष पूर्व जिस प्रकार पिता और शिक्षक के
ान अपने आदेश प्रचलित किए थे उसी प्रकार
ान सम्राट् ने भी किए। जिस प्रकार के
ाधारण धर्म का आदेश अशोक के अभिलेखों में
सी प्रकार के धर्म का आदेश जापान सम्राट्
स घोषणा में है—

हमारे पूर्वजों ने हमारे साम्राज्य और धर्म की
र और चिरस्थायी आधारों पर मज़बूत नींव
ी है और हमारी राजभक्त प्रजा समय पर
मक्ति का परिचय देती और साम्राज्य का
ब बढ़ाती चली आई है। इसी उदार धार्मिक
को लेकर हमारी शिक्षा का भी आरम्भ
ता है। हमारी प्रजा का अपने माता पिता, भाई
न, पति और पत्नी आदि के प्रति प्रेमभाव
बना रहे, वह सुशील, संयमी, दयावान्, विद्वान् और चरित्रवान् हों। वह सदा ऐसे कामों में तत्पर रहे जिनसे लोकहित की वृद्धि हो। वह सदा राष्ट्र की प्रतिष्ठा करनेवाली और राष्ट्रीय नियमों का पालन करनेवाली हो और साम्राज्य की रक्षा के लिये यदि ज़रूरत पड़े तो प्राण देकर अपने पूर्व पुरुषों की कीर्त्ति को बढ़ानेवाली हो। हमारे पूर्व पुरुषों का अपनी प्रजा और संतान दोनों के लिये अपने बतलाए हुए इस मार्ग पर चलने का आदेश है। हमारी यह आशा है कि हम लोग उनकी इस शिक्षा को सदा स्मरण रखें जिसमें हम लोग भी उन्हींके समान धर्मात्मा बन जायँ।

अशोक के बतलाए हुए मार्ग का तत्कालीन किसी धर्मविशेष से कुछ भी सम्बन्ध नहीं था। अकबर के समान वह भी एक नए मत का चलानेवाला कहा जा सकता है। वह स्वयं त्रिपिटक का नित्य पाठ करनेवाला और शाक्यमतावलम्बी हो सकता है किन्तु उसके धर्म में बतलाई हुई राजनीति का शाक्यमत से कोई संबंध नहीं है।*

(शेष फिर)

शाहजहाँ के समय की कुछ बातें।

(एक पुर्त्तगाली दरबारी द्वारा अंकित)

शाहजहाँ ने अपने भाई बुलाक़ को क़ैद करना चाहा। उसको पकड़ लेने की उसने बहुत चेष्टा की किन्तु इसमें उसको सफलता न हुई और उसका सारा प्रयत्न निष्फल हुआ। बुलाक़ी भागता हुआ फ़ारस जा पहुँचा और उसने वहाँ के बादशाह की शरण में अपनी आयु के शेष दिन पूरे किए। यही कारण है कि

* प्रो० विनयकुमार सरकार के लेख के आधार पर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोग़ल बादशाहों में उसकी गणना नहीं है। जब शाहजहाँ अपने भाई को गिरफ़्तार न कर सका तब उसने उसके दो लड़कों को पकड़ने के लिए एक दूसरी सेना लाहौर भेजी और खुले शब्दों में यह फ़रमान निकाला कि जहाँ कहीं वे लड़के पाए जाँय वहीं वे दीवार में चुनवा दिए जाँय। लड़के बादशाह जहाँगीर की बैठक में कुछ लिखते हुए पाए गए। शाहजहाँ के आदमियों को उनपर कुछ भी दया न आई और उन्हों ने उनको भीतर उसी दशा में छोड़ बाहर दीवार उठा कर दरवाजा बंद कर दिया। दीवार आज तक ज्यों की त्यों खड़ी है। इन बादशाहों और अमीरों में ऐसी प्रथा है कि जिस कमरे में उनका देहान्त होता है वह फिर कभी खोला नहीं जाता और उसके चारों तरफ दीवार उठा दी जाती है।

हुगली के पुर्त्तगाली मुमताज़ महल की दो लौंड़ियों को चुरा ले गए। इस पर शाहजहाँ को विवश हो उनसे लड़ाई ठाननी पड़ी। उसने उनके विरुद्ध कासिम खाँ को भेजा जिसने हुगली के निकट उनसे सन्धि कर ली। वह उनसे बहुत सा धन लेकर दिल्ली को रवाना हुआ पर थोड़ी दूर जाकर उसने हुगली की तरफ फिर अपना रुख फेरा। इस बार पुर्त्तगाली अधिक काल तक अपनी रक्षा न सके और उन्हों ने अन्त में मोग़ल सेनापति की अधीनता स्वीकार कर ली। पुर्तगालियों ने पहले अपने जहाज़ों में बैठ नदी पार कर भागना चाहा लेकिन गंगा के सूख जाने से उनके जहाज किनारे ही लगे रहे और कासिम खाँ ने पाँच हजार मनुष्यों को गिरफ्तार कर लिया। ऐसा बोध होता था कि पुर्तगालवालों को यह दंड परमात्मा की ओर से मिला था क्योंकि न तो इसके पहले ही ऐसी घटना कभी हुई थी (कि नदी सूख जाय) और न इसके बाद ही ऐसी बात कभी सुनने में आई। पुर्तगालवाले बड़े ही उपद्रवी और अत्याचारी थे। यहाँ उनके उपद्रवों और अत्याचारों का वर्णन करने की मेरी इच्छा नहीं है। उनके विषय में मैं कहीं अन्यत्र कुछ लिखूँगा।

क़ासिम खाँ क़ैदियों को बादशाह के दरबार में ले गया, किन्तु भाग्यवश उनके वहाँ पहुँचने के पहले ही बेगम ताजमहल इस संसार से चल बसी थीं। शाहजहाँ ने आगरे में शाही महल के सामने उसका एक बहुत बड़ी लागत का मक़बरा बनने की आज्ञा दी। यह एक दो मंज़िली इमारत है। इसके नीचे शाहजहाँ बादशाह की प्यारी बेगम मुमताज़ महल की क़ब्र है। इस क़ब्र तक कोई पहुँच नहीं सकता क्योंकि यह स्त्रियों और हिजड़ों के अधिकार में है। इसमें संदेह नहीं कि यदि पोर्चुगीज़ ताजमहल के जीते जी दरबार में लाए जाते तो वह उन सब को कभी जीता न छोड़ती क्योंकि उसने ऐसी ही प्रतिज्ञा की थी। तिस पर भी उनकी बड़ी दुर्गति हुई। उनमें से बहुतेरों ने या तो यन्त्रणा और मृत्यु के भय से अथवा अपनी स्त्रियों को जिन्हें शाहजहाँ ने अपने कर्मचारियों के सुपुर्द कर दिया था, वापस पाने की लालच से अपना धर्म्म त्याग कर इस्लाम धर्म्म स्वीकार कर लिया। उनकी अत्यन्त रूपवती स्त्रियाँ शाही महल में दाखिल कर ली गईं। इनमें से कई एक स्त्रियों के सम्बन्ध में आगे चलकर मैं कुछ कहूँगा। फ़ादर्स क्रिश्चियन धर्म्म के कट्टर अनुयायी थे। उनका यह दृढ़ विश्वास एवं निश्चय था कि उनका प्रभु जिसकी वे उपासना करते हैं हर हालत में उनकी रक्षा और सहायता कर सकता है। शाहजहाँ के प्रलोभन में फँस कर उन्होंने अपना धर्म्म नहीं छोड़ा। उनमें से कुछ ऐसे पादरी भी थे जो अपनी धुन और धर्म्म के पक्के थे। वे दरबार में लोगों की विशेषतः एक आरमेनियन की—प्रार्थना पर छोड़ दिए गए। यह आरमेनियन बादशाह का बहुत मुँहलगा था।

क़ैद से छूट कर वे शहर आगरे में बस गए और आज तक उनकी संतान वहीं रहती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी प्यारी बेगम की मृत्यु के पीछे शाहजहाँ ने स्थान में एक दूसरी नई राजधानी स्थापित ना चाहा और इस काम के लिए उसने दिल्ली को पसंद किया। इस नई दिल्ली के बनाने पुरानी दिल्ली और तोग़लक़ाबाद के खँडहर में लाए गए और इसका नाम शाहजहाँबाद गया। इस शहर के बनाने में शाहजहाँ का सा धन लग गया। यह शहर जमुना नदी किनारे एक बहुत बड़े मैदान में है। इसकी अर्द्धचन्द्राकार है। इसमें बारह फाटक हैं। वीन दिल्ली इस नगर के बाहर है। शहर की वारें आधी ईंट और आधी पत्थर की बनी हुई। ख़ास दरवाज़ों में एक आगरे की ओर और रा लाहौर की तरफ़ है। शहर के भीतर बहुत बड़े सुन्दर बाज़ार हैं जहाँ हर क़िस्म की ज़ें बिकती हैं। प्रधान बाज़ार उन गलियों में जो क़िले की तरफ़ जाकर उक्त दो दरवाज़ों से ल गई हैं। दिल्ली में रईसों के भी बहुत बड़े २ र अच्छे महल हैं जिनके भीतर कमरे हमेशा सजे हुए रहते हैं। और बाकी बहुतेरे घर ः फूस के हैं लेकिन वे भी लम्बे चौड़े और तर खूब सजे हुए रहते हैं। शहर के पूरब मुना नदी बहती है और उसके उत्तर शाही ला है जिसका मुँह पूरब की तरफ़ है।

किले के सामने और नदी के बीच मैदान छोड़ या गया है। बादशाह अपनी बेगमों को लेकर ले के ऊपर एक सुसज्जित खुले हुए कमरे में बैठता है और वहाँ से हाथियों की लड़ाई र बड़े बड़े उमरा, राजा और रईसों की फौज परेड देखता है। शाही महल के नीचे रात एक पागल हाथी बँधा रहता है। क़िला ल पत्थर की ऊँची दीवारों से घिरा हुआ है। के भीतर एक पुल है जिसमें बारह मेहराबें और जिससे होकर सलीमगढ़ के क़िले में, जमुना नदी से घिरा हुआ है, जाना पड़ता है। इस क़िले को पठान बादशाह सलीमशाह ने बनवाया था। शाही क़िले में दो फाटक हैं जिन से होकर शहर का रास्ता है और बीच में एक बहुत बड़ा खुला मैदान है। शाहजहाँ ने क़िले के उत्तर और दक्षिण दो बाग़ लगवाए और उनके सींचे जाने के लिए शहर सरहिंद के पास एक नदी से एक गहरी नहर निकलवाई क्योंकि जमुना से उन बागों के अच्छी तरह सींचे जाने के लिए हमेशा काफ़ी पानी नहीं मिलता था। यह नहर क़िले में होकर बहती है और इससे सैकड़ों नालियां निकालीं गई हैं। ये सदा जल से पूर्ण रहतीं हैं और इनमें रङ्ग बिरङ्ग की सुन्दर मछलियाँ तैरा करतीं हैं। इन मछलियों के सिरों पर सोने की अँगूठियाँ जड़ी रहतीं हैं और हर एक अँगूठी में हीरे, मानिक और मोती के नग जड़े रहते हैं। किले के सामने पश्चिम ओर शाही मसजिद है। इसमें बादशाह प्रति सप्ताह एक दिन नमाज़ पढ़ता है।

पुर्तगालवालों से हुगली छीन लेने पर शाहजहां का मन बढ़ गया और उसने अपने मन में उनके सब स्थानों को हस्तगत कर लेने की ठान ली। उसका पुत्र औरंगजेब, जो उस समय चौदह या पन्द्रह वर्ष की अवस्था का एक होनहार और साहसी बालक था, पुर्तगालवालों के हाथ से दमन नामी बन्दरगाह छीन लेने के लिए भेजा गया। किन्तु इस बार उन्होंने लड़ाई में ऐसी बहादुरी दिखलाई कि शाहज़ादा उन्हें हरा न सका और उनका मजबूत क़िला शत्रु के हाथ में जाने से बच गया। तीन महीने तक औरंगजेब क़िला घेर कर लड़ता रहा किन्तु अन्त में अपनी सेना के एक बहुत बड़े भाग के नष्ट होने के बाद उसे विवश होकर वापस जाना पड़ा। जब औरङ्गजेब लड़ कर पुर्तगालवालों का दमन न कर सका और जब वह उनके इस वीरता के साथ आत्म-रक्षा में प्रवृत्त होने के कारण उनको कुछ नुकसान न पहुँचा सका तब उसने अपनी एक चाल से उनको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीतना चाहा। उसने किले के गवर्नर (लुई डे मेलो) के पास यह कहला भेजा कि दीवार की आड़ में छिप कर शिकार करना सब के लिए एक आसान बात है।

आवेश में आकर लुई डिमेलो ने औरङ्गजेब के पत्र का यह जवाब कहला भेजा कि मैं आज ही दोपहर के करीब मैदान में आऊँगा और आते ही अपना हैट सिर के ऊपर उठाकर अपने आने की तुम को सूचना दूंगा। वह क़िले से बाहर निकला। उसको पहचानते हीं औरंगज़ेब के सिपाही उस पर टूट पड़े और वह मार डाला गया। लड़ाई में गवर्नर के मारे जाने के बाद पुर्तगालवाले क़िले की रक्षा करने के लिए फिर वहीं वापस चले गए।

बादशाह औरंगज़ेब को बहादुर और निडर समझता था। उसने पुर्तगालवालों से लड़ कर अपनी असाधारण वीरता और रणकुशलता को अच्छी तरह प्रमाणित भी कर दिखलाया। इस युद्ध के बाद उसने बल्ख़ पर चढ़ाई की। परन्तु इस बार शत्रु की जीत हुई और शाहजादा क़ैद होते २ बच गया। यदि मीर बाबा उसकी मदद के लिए शीघ्र न जा पहुँचता तो वह ज़रूर क़ैद कर लिया जाता। शाहज़ादा जैसा दिलेर और बहादुर था वैसा ही कपटी और छली भी था वह अपने को फ़क़ीर कहा करता था और युद्धभूमि में अपने हाथ की बुनी हुई चटाई पर सोता था। वह टोपियाँ सीकर और उन्हें बाज़ार में बेंच कर उनके मूल्य से मूली, जौ और शाक भाजी खरीदता और उन्हीं पर अपना निर्वाह करता था। वह दान देता और उपवास करता था और उसने ऐसा प्रबन्ध कर रक्खा था कि लोग उसे अकसर नमाज़ और कुरान पढ़ते हुए पाते थे। वह प्रायः हाथ में माला लिए बाहर निकलता और बात बात पर ईश्वर की दुहाई देता था। उसका बाहरी रंग ढंग देखने से मालूम होता था कि वह पूर्ण त्यागी और विरक्त है। उसके इस पाखण्ड और आडम्बर से जनता का उस पर पूरा विश्वास जम गया और वह इसकी आड़ में अपना दिन चैन से काटने लगा। उसने अपना संबंध कुछ ऐसे फ़कीरों से जोड़ रक्खा था जो यथार्थ में बड़े ही धूर्त और दग़ाबाज़ थे और जो उसे चिकनी चुपड़ी बातों से लोगों को धोखा देना और जादू सिखलाते थे।

अलीमर्दां खां नामक एक पारसी ने अपने बादशाह शाह अब्बास से विरोध कर कंदहार का क़िला शाहजहां के हवाले कर दिया। लेकिन फारस के शाह ने उसे फिर अपने अधीन कर लिया। इस काम में उसको एक गड़ेरिये से बहुत मदद मिली। गड़ेरिये का एक बकरा अपने झुंड से भाग निकला और उसने उसका पीछा किया। बकरा कूदता हुआ एक ऊँची पहाड़ी पर चढ़ गया और वहाँ से एक पथरीले रास्ते से हो कर किले के अंदर जा घुसा। गड़ेरिया भी उसी रास्ते से वहाँ जा पहुँचा और फिर बाहर निकल आया। किसी को उसके आने जाने की ख़बर न हुई। वापस आकर उसने शाह अब्बास को इस बात की इत्तला दी। कुछ सिपाही गड़ेरिये को अपना अगुवा बना कर रात को कंदहार रवाना हुए और रातोरात उस गुप्त मार्ग से क़िले में चुपचाप दाखिल हो गए। सोते हुए पहरेदारों को मार कर उन्होंने क़िले पर अपना क़ब्जा कर लिया। शाहजहाँ ने इस क़िले को फिर ले लेने की तीन बार कोशिश की लेकिन उसका कुछ फल न हुआ।

एक दिन शाहजहाँ कंदहार से कूच की तैयारी में लगा था कि इतने ही में उसके पास एक फ़क़ीर आया। बादशाह ने उसको कुछ देना चाहा लेकिन औरंगज़ेब ने उसको रोक कर कहा कि आप इसको कुछ न दें यह अपनी कमर में बहुत सी अशरफ़ियाँ बांधे हैं। बादशाह ने फ़क़ीर की तलाशी ली जाने की आज्ञा दी और उसके कमरबंद में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीस अशरफ़ियाँ पाई गईं। इस बात से औरंगज़ेब एक सच्चा नबी साबित हुआ। शाहजहाँ ने अपने लड़के से कहा कि अगर यह तुम्हारी चाल नहीं है तो तुम बेशक एक सच्चे फ़क़ीर हो।

जब औरंगज़ेब ने यह देखा कि उसका बाप उसकी इस चाल को ताड़ गया तब वह उसको धोखा देने और अपना रुतबः बढ़वाने की ग़रज़ से पूर्ण संयमी और त्यागी बन बैठा। सांसारिक सुखों के प्रति उसकी यह उदासीनता देखकर शाहजहाँ का उसकी बात पर विश्वास जम गया। बाद को मालूम हुआ कि औरंगजेब ने क़ुरान को सिखा पढ़ाकर बादशाह के पास भेजा था। भंडा फूट जाने पर भी भोले भाले लोग उसे फ़क़ीर ही समझते थे लेकिन बादशाह उसकी इस चाल को अच्छी तरह समझ गया; क्योंकि वह उसके स्वभाव से पूर्ण परिचित था। यही कारण है कि औरंगज़ेब बहुत काल तक अपनी उन्नति न कर सका। वह जिस पद पर पहले पहल नियुक्त हुआ था उसी पर बरसों बना रहा। उसकी तरक़्क़ी न हुई। उदार शाहजहाँ ने अपने और लड़कों में अपने ज्येष्ठ पुत्र दारा के प्रति अपने वात्सल्य-भाव और सत्य स्नेह का कई प्रकार से एक बार परिचय दिया। इस पक्षपात से जल उठा औरंगज़ेब अपने भाई दारा को, जिससे वह बैर रखता था, हानि पहुँचाने के अनेक उपाय सोचने लगा।

अब शाहजहाँ को इस बात की चिन्ता हुई कि उसके दरबार में उसके लड़के कोई उपद्रव न खड़ा करें। अतः उसने शाहज़ादों के नाम एक हुक्म जारी किया जिसका आशय यह था कि दारा को छोड़ दूसरे शाहज़ादे उससे रोज़ मुलाक़ात न करने पाएँगे। इस बात से औरंगज़ेब दारा से और अधिक जलने लगा और उसने अपने मन में दारा को अपमानित करने की ठान ली। एक रोज़ उसने दारा को क़िले में प्रवेश करते हुए देख पाया। वह चट हाथ में भाला ले घोड़े पर सवार हुआ और जब तक दारा क़िले से बाहर लौटकर नहीं आया तब तक वह छिप कर उसकी प्रतीक्षा करता रहा। ज्योंही दारा वापस आया त्योंही उसने अपने घोड़े को एक ऐसी एँड़ लगाई कि उसने अपनी पिछली टांगों से दारा की पालकी पर टाप मारी जिससे वह ज़मीन पर गिरते २ बच गई दारा ने बादशाह से औरंगज़ेब के इस असद्व्यवहार की शिकायत की। बादशाह दारा की क्षमाशीलता पर रीझ कर अपने दरबार में उसके गुणों की प्रशंसा करने लगा और औरंगज़ेब पर क्रोध और आन्तरिक घृणा प्रकट करता हुआ उसकी उद्दण्डता की निन्दा करने लगा।

पक्षपात और हार्दिक स्नेह से भरे हुए जिन सरल और खुले शब्दों में बादशाह ने दारा की प्रशंसा की उससे दरबारियों को उसके मन का भाव मालूम हो गया। शाहजहाँ को मालूम था कि औरंगजेब ने अपने भाई शाह शूजा से मेल कर लिया है यहाँ तक उसने अपने पुत्र सुलतान महमूद का शाह शूजा की रूपवती पुत्री के साथ निकाह कर देना स्वीकार कर लिया है अतएव उसने शाह शूजा को बङ्गाल का सूबेदार बना कर भेजा, औरंगजेब को सुल्तान के शासन का भार सौंपा और शाहज़ादा मुरादबख़्श को गुजरात प्रदेश का अधिकार दिया और अपने सब से अधिक प्रिय ज्येष्ठ पुत्र दारा को अपने ही पास रक्खा। जब औरंगज़ेब को मालूम हो गया कि उसके पिता का न तो उस पर विश्वास है और न तो प्रेम ही है, तब उसने अपना मतलब गाँठने के लिए सरल-स्वभाव दारा की खुशामद कर उसे अपने पक्ष में कर लिया। उसने दारा के साथ पत्र-व्यवहार शुरू कर दिया और उसके साथ अपने अशिष्ट व्यवहार का कारण अपनी अज्ञानता बतला कर अपनी धृष्टता के लिए उससे क्षमा माँगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकार अपने भाई को वश में कर उसने उसके द्वारा बहुत से विनय और शिष्टतापूर्ण पत्र शाहजहाँ के पास भी भेजे। धूर्त औरंगज़ेब के बार बार पत्र भेजने से दारा के मन में यह बात अच्छी तरह बैठ गई कि उसके साथ औरंगज़ेब का अब तक जो अशिष्ट व्यवहार था वह वास्तव में उसकी अज्ञानता ही के कारण था। औरंगज़ेब ने अपने एक पत्र में दारा को लिखा कि "आप मेरे पिता के तुल्य हैं। यदि आप मुझे इस कृपा के योग्य समझते हों तो मैं सपरिवार आप की सेवा में सदा प्रस्तुत रहूं।" अपनी इस अनोखी चाल से औरंगज़ेब ने दारा के हृदय पर अपना पूरा प्रभाव जमा लिया और वह उसके चकमे में आ गया। वह बड़ा ही उदार, सहृदय, और नम्र था। अपने भाई के इस पत्र को पढ़ कर उसे बड़ा संतोष हुआ। उसके हृदय में दया और करुणा की लहरें उठने लगीं और उसकी आँखों से आँसू की धारा बह चली। औरंगज़ेब के इस दीन भाव से वस्तुतः उसका हृदय पिघल गया और उसने उत्तर में उसके पास जो प्रेमपूर्ण पत्र भेजा उससे उसके सरल स्वभाव, उदारता, सहृदयता, और सच्चे भ्रातृ-स्नेह का पूरा परिचय मिलता है।

अब औरंगज़ेब ने सब बातों का ऐसा अच्छा प्रबन्ध कर दारा को लिखा कि मुलतान का जल वायु मेरी प्रकृति के अनुकूल नहीं है और मैं यहाँ हमेशा बीमार रहा करता हूं अतः आप बादशाह से सिफ़ारिश करें कि वे मुझे मुलतान से बदल कर दक्षिण भेज दें। इस विनय से उसका उद्देश्य यह था कि वह दक्षिण में बीजापुर और गोलकुंडा की दो बड़ी रियासतों से लड़ाई ठान अपने सिपाहियों को साहसी और युद्धप्रिय बनावे और वहाँ लूट मार से बहुत सा धन भी सञ्चय करे, क्योंकि दक्षिण की भूमि उपजाऊ होने से धन और धान्य से सदा पूरित रहती है और वहाँ सोने, चाँदी और हीरे आदि की बहुत सी खानें हैं। दारा के बार २ आग्रह करने पर औरंगज़ेब मुलतान से बुला लिया गया और उसे दक्षिण जाने का हुक्म हुआ। बादशाह औरंगज़ेब की प्रार्थना को कभी स्वीकार न करता यदि दारा उसे इसके लिए बाध्य न करता। वह औरंगज़ेब की सिफ़ारिश करने पर दारा से कहा करता कि तुम एक ऐसा विषैला साँप पाल रहे हो जो मौक़ा पाते ही तुम्हें काट खायगा। औरंगजेब दक्षिण पहुँचते ही अपने उद्देश्य साधन में लग गया और वहाँ उसकी शक्ति उत्तरोत्तर बढ़ती ही गई। दौलताबाद के समीप उसने अपने नाम का एक शहर बसाया और वहाँ बैठे बैठे उस षड्यन्त्र की रचना आरम्भ कर दी जिससे उसके पिता और भाइयों का एक साथ ही सर्वनाश हो गया।

शाहजहाँ की शक्ति का ह्रास करनेवाली लड़ाइयों के विषय में कुछ कहने के पूर्व उसके चरित्र का कुछ परिचय देना और उसके आचार व्यवहार, रहन सहन और राज्य-प्रबंध का थोड़ा बहुत उल्लेख करना यहाँ पर असंगत न होगा। यद्यपि शाहजहाँ ने अपने पिता के विरुद्ध विद्रोह खड़ा करने में, असीम साहस और रणचातुर्य का परिचय दिया था पर उसका स्वभाव जहाँगीर से बहुत कुछ मिलता जुलता था। अपने पिता की तरह उसे भी नाच रंग और कवियों से बहुत प्रेम था। शाही महल के द्वार-रक्षक बड़े धृष्ट होते हैं। वे बिना कुछ लिए किसी को बादशाह से मिलने नहीं देते। शाहजहाँ के दरबार में एक प्रसिद्ध गवैया और कवि था। जब वह बादशाह से मिलना चाहता था तब पहरेदार उसे तब तक बाहर रोक रखते जब तक वह उनको कुछ न देता या देने का वादा न करता। उनके इस अशिष्ट व्यवहार से तंग आकर उसने कुछ पद्य रचना की और उनको पढ़ने के लिए दरबार में बादशाह के सामने उपस्थित हुआ। ड्योढ़ीदार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त बार भी उसके साथ वैसा ही व्यवहार
ा और उसको तब तक भीतर न जाने दिया
तक कि उसने इस बात का पक्का वादा न
ा कि इस बार मुझको जो कुछ बादशाह से
ेगा वह सब तुम लोगों को दे दूंगा। उसने
ी सुन्दर रीति और इस ढंग से अपनी कविता
ई कि बादशाह उसको सुन कर बहुत प्रसन्न
ा और उसने गवैये को एक हज़ार रुपये
म दिए जाने का हुक्म दिया। इस पर वह
ने हाथों को ऊपर उठा कर रोने और छाती
ने लगा, और झुक कर बादशाह से विनय
ने लगा कि यदि मुझे हज़ार रुपयों के बदले
ार कोड़े लगने की आज्ञा हो तो बड़ी कृपा हो,
अपने को बड़ा धन्य मानूं। शाहजहाँ ने
कुरा कर उससे इसका कारण पूँछा, उसने
ाब दिया कि मैंने पहरेदारों से इस बात का
ा किया है कि आज मुझे जो कुछ जहाँपनाह
मिलेगा, वह सब तुम लोगों को दे दूँगा। मैं
ता हूँ कि उनको हज़ार या इससे अधिक
ड़े लगने का हुक्म हो, क्योंकि वे बिना कुछ
ये मुझको महल के अन्दर घुसने नहीं देते और
शा मेरे साथ ऐसा ही बुरा सलूक किया करते
बादशाह खूब हँसने लगा, और उसने उसको
न्न करने के लिए उस समय पहरा देनेवाले
ास द्वार-रक्षकों को हज़ार हज़ार कोड़े लगाने
हुक्म भेजवा दिया।

जब पहरेवालों ने कवि से इस बात की
कायत की तब उसने उनको जवाब दिया कि
को कोड़े लगवा कर मैंने केवल अपनी प्रतिज्ञा
की है। द्वाररक्षकों को हज़ार कोड़े लगे, और
ने को हज़ार रुपयों के अतिरिक्त एक घोड़ा भी
ा, लेकिन उसकी कमर कुछ कमज़ोर थी। कवि
घोड़े की गर्दन के चारो तरफ एक एक गट्ठर
ध दिया, और जब बादशाह आया तब वह उस
सवार हो कर उसके सामने घोड़े की चाल
दिखलाने लगा। बादशाह ने उससे गट्ठर बाँधने का कारण पूँछा, क्योंकि वे घोड़े की चाल में रुकावट डालते थे। उसने जवाब दिया कि मैंने वज़न बराबर करने के लिए ऐसा किया है। उसने इस तरह इस बात का इशारा किया कि घोड़े का पिछला अङ्ग कमज़ोर है। शाहजहाँ इस जवाब से बहुत खुश हुआ, और उसने उसको दूसरा घोड़ा दिये जाने का हुक्म दिया। उस दिन से पहरेवाले उसकी बड़ी इज़्ज़त करने लगे। (क्रमशः)

हरिश्चन्द्र शुक्ल।

सभा का कार्य-विवरण।

प्रबन्धकारिणी समिति।

शुक्रवार ता० ११ अक्तूबर १९१८ संध्या के ५ बजे।

स्थान-सभा भवन।

उपस्थित

बाबू श्यामसुंदर दास बी० ए० सभापति
ठाकुर शिवकुमार सिंह जी।
पंडित रामनारायण मिश्र बी० ए०
पंडित लक्ष्मण नारायण गर्दे।
बाबू जगन्नाथ दास बी० ए०
बाबू बालमुकुंद वर्म्मा
बाबू बेणी प्रसाद

(१) निश्चय हुआ कि इस वर्ष प्रबंधकारिणी समिति के प्रधान पं० रामनारायण मिश्र बी० ए० तथा उपप्रधान बाबू बेणीप्रसाद जी चुने जायँ।

(२) निश्चय हुआ कि इस वर्ष नागरीप्रचारिणी पत्रिका के सम्पादक पं० रामचन्द्र शुक्ल नियत किए जायँ, और सम्पादन के लिये उन्हें प्रति संख्या का पुरस्कार १५) रु० दिया जाय। पर यदि किसी मास की पत्रिका सम्पादक के कारण उसी मास के अंत तक प्रकाशित न हो सकेगी तो उस मास की संख्या का कोई पुरस्कार नहीं दिया जायगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) निश्चय हुआ कि नागरीप्रचारिणी ग्रन्थ माला के सम्पादक बा० श्यामसुंदर दास बी० ए० तथा ना० प्र० लेखमाला के सम्पादक बाबू रामचन्द्र वर्म्मा चुने जायँ। यह भी निश्चय हुआ कि Deussen's Metaphysics के अनुवाद का जो अंश सभा में नहीं है उसकी पूर्त्ति करने के लिये पं० लक्ष्मण नारायण गर्दे से प्रार्थना की जाय।

(४) निश्चय हुआ कि इस वर्ष नागरी प्रचार के निरीक्षक श्रीयुत एस० पी० सी० दास, सुबोध व्याख्यान के निरीक्षक बाबू शिवप्रसाद गुप्त और पुस्तकालय के निरीक्षक पं० रामनारायण मिश्र बी० ए० चुने जायँ।

(५) निश्चय हुआ कि मंत्रियों के कार्य का विभाग आगामी अधिवेशन में किया जाय।

(६) बा० बाँकेबिहारी लाल का पत्र उपस्थित किया गया, जिसमें उन्होंने प्रबंधकारिणी समिति के सदस्यों में अपना नाम न रक्खे जाने के लिये लिखा था।

निश्चय हुआ कि यह पत्र साधारण सभा में उपस्थित किया जाय।

(७) राय बहादुर ठाकुर राजसिंह बेदला का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रस्ताव किया था कि नागरी प्रचारिणी पत्रिका में विक्रमीय संवत् भी छपा करे और पूछा था कि नीति विषयक कवियाओं की जो पुस्तक उन्हों ने भेजी है वह सभा की सम्मति में छपने योग्य है अथवा नहीं।

निश्चय हुआ कि (क) नियम संशोधन के लिये जो उपसमिति बनाई गई है उसके पास विक्रमीय संवत् वाला प्रस्ताव भेजा जाय। (ख) नीति विषयक कविताओं की पुस्तक पं० रामचंद्र शुक्ल के पास सम्मति के लिये भेजी जाय।

(८) पुस्तकालय से खोई हुई पुस्तकों तथा निरीक्षक ने पुस्त्रकाध्यक्ष की जिन त्रुटियों का उल्लेख अपनी रिपोर्ट में किया था उनके संबंध में पं० कन्हैया लाल पुस्तकाध्यक्ष का उत्तर उपस्थित किया जाय।

निश्चय हुआ कि यह पुस्तकालय के नवीन निरीक्षक की सम्मति के सहित आगामी अधिवेशन में उपस्थित किया जाय।

(९) श्रीयुत सत्यभक्त जी का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि सभासदों का चंदा ।॥) ३) ५) से बढ़ा कर क्रमात् २) ४) ६) कर दिया जाय।

निश्चय हुआ कि नियम संशोधन के लिये जो उपसमिति बनाई गई है उसके पास यह प्रस्ताव विचारार्थ भेजा जाय।

(१०) पं० राजमणि त्रिपाठी के निम्नलिखित प्रस्ताव उपस्थित किए गए (क) काशी में नार्मल स्कूल और अध्यापकों का ट्रेनिंग क्लास खोला जाय। (ख) हिंदी मिडिल परीक्षा का केन्द्र जहाँ जहाँ है वहाँ प्राफिशेंसी परीक्षाओं का भी केंद्र बनाया जाय। (ग) संस्कृत तथा हिंदी पाठशालाओं को सहायता दिलाने तथा उनके पाठ्यक्रम में सुधार किए जाने आदि के संबंध में अनेक प्रस्ताव।

निश्चय हुआ कि ये प्रस्ताव ठाकुर शिवकुमार सिंह जी की सम्मति के सहित आगामी अधिवेशन में उपस्थित किए जायँ।

(११) काशी की कार्माईकल लाइब्रेरी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उसने सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें बिना मूल्य माँगी थीं।

निश्चय हुआ कि उससे पूछा जाय कि सभा की किन किन पुस्तकों की उसे आवश्यकता है।

(१२) निश्चय हुआ कि १ जुलाई १९१८ से बाबू गोपालदास का मासिक वेतन ६०) रु० सुखनंदन मिश्र का ८) रु० और काशी दफ्तरी का ८॥) रु० किया जाय।

(१३) निश्चय हुआ कि बाबू गोपालदास को १५ दिन की बीमारी की छुट्टी वेतन के सहित दी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और इतने दिनों तक बाबू रामचंद्र वर्म्मा सहायक मंत्री का कार्य करें।

(१४) निश्चय हुआ कि बाबू जगन्मोहन वर्म्मा से पूछा जाय कि मुंशी देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला के लिये सभा जो फाहियान की यात्रा का अनुवाद टिप्पणियों के सहित कराया चाहती है उसे वे किन नियमों पर कर सकेंगे।

(३५) निश्चय हुआ कि पं० मन्नन द्विवेदी बी०ए० लिखित इतिहास विषयक पुस्तक रायबहादुर पं० गौरीशंकर हीराचंद ओझा के पास भेजी जाय और उनसे पूछा जाय कि क्या उनकी सम्मति में यह पुस्तक देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला में छपने योग्य है।

(१६) देवनंदन सिंह क्लार्क का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने एक मास की प्रिविलेज छुट्टी तथा एक मास की बीमारी की छुट्टी का वेतन दिए जाने की प्रार्थना की थी।

निश्चय हुआ कि दोनों मास का अर्द्धवेतन उन्हें दिया जाय।

(१७) पं० जसवंत राव शास्त्री का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने 'गुरुगोविंद' सिंह का मराठी अनुवाद करने की आज्ञा माँगी थी।

निश्चय हुआ कि इसके लिये उन्हें आज्ञा दी जाय।

(१८) निश्चय हुआ कि रेवरेण्ड ई० ग्रीव्स की विदाई के समय जो फोटो चित्र लिया गया था उसकी १२ प्रतियों का मूल्य जो फोटोग्राफर को दिया गया है वह सभाके फुटकर व्यय में लिख लिया जाय।

(१९) निश्चय हुआ कि बाबू वेणी प्रसाद जी गत वर्ष ना० प्र० पत्रिका की पिछड़ी हुई संख्याओं को निकाल कर उसे प्रतिमास समय पर निकालने का प्रबन्ध किया था इसके लिये उन्हें समिति हृदय से धन्यवाद देती है।

सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

साधारण सभा।

शनिवार तारीख़ २६ अक्तूबर, १९१८-सध्या के ५ बजे स्थान-सभाभवन।

उपस्थित

बाबू गौरीशंकर प्रसाद बी० ए०, एल-एल बी० सभापति, पंडित रामनारायण मिश्र बी० ए०, बाबू बलराम प्रसाद, बाबू कृष्ण मोहन, पंडित नारायणाचार्य, पंडित हरिनाथ तिवारी, बाबू श्यामनारायण सिंह, लाला भगवान दीन, पंडित रामचन्द्र शुक्ल, पंडित गोविन्द राव जोगलेकर, पं० बद्रीनाथ पांडेय, पं० श्रीकृष्ण शुक्ल, बाबू हरेकृष्ण, बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा, बाबू रामचन्द्र वर्म्मा।

(१) तारीख ४ अक्तूबर और १० अक्तूबर १९१८ के अधिवेशनों के कार्यविवरण पढ़े गए और स्वीकृत हुए।

(२) सभासद होने के लिए निम्नलिखित सज्जनों के फार्म उपस्थित किए गए:—

१ बाबू वृन्दावन सिंह, मछोदरी पार्क स्कूल, काशी १॥)

२ बाबू कालिकाप्रसाद, पुराना खजाना, कमच्छा, काशी १॥)

३ बाबू गंगाप्रसाद महता एम० ए०, हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी १॥)

४ पंडित रामप्रसाद पांडेय, नन्दन साहु की गली, काशी १॥)

५ बाबू भवानीदयाल, पो० बक्स नं० ७९, डर्बन, नेटाल १॥)

निश्चय हुआ कि ये सज्जन सभासद चुने जांय।

(३) बाबू बाँकेविहारी लाल का पत्र उपस्थित किया जिसमें उन्होंने प्रबन्ध-कारिणी समिति से इस्तीफा दिया था।

पंडित श्रीकृष्ण शुक्ल ने प्रस्ताव किया कि इनके स्थान पर बाबू हरिहर नाथ बी० ए० प्रबंध कारिणी समिति के सदस्य चुने जांय और पंडित बद्रीनाथ पांडेय ने इसका अनुमोदन किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंडित रामनारायण मिश्र ने प्रस्ताव किया कि बाबू बाँकेबिहारी लाल के स्थान पर बाबू गौरीशंकर जी प्रबंधकारिणी समिति के सदस्य चुने जांय। पंडित रामचंद्र शुक्ल ने इसका अनुमोदन किया। इस पर पंडित श्रीकृष्ण शुक्ल ने अपना प्रस्ताव लौटा लिया और निश्चय हुआ कि बाबू बाँकेबिहारी लाल का इस्तीफा स्वीकार किया जाय और उनके स्थान पर बाबू गौरीशंकर प्रसाद जी चुने जाँय।

(४) पंडित श्रीकृष्ण शुक्ल आदि का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने ८ प्रश्न किए थे।

उपमंत्री ने सूचना दी कि ये प्रश्न सभापति जी से सम्बन्ध रखते हैं अतः वे उनके पास भेजे गए हैं और उनका उत्तर आने पर वे उपस्थित किए जांयगे।

(५) बाबू हरेकृष्ण ने प्रस्ताव किया कि आगामी साधारण अधिवेशन में "नगरों का निर्माण" विषय पर एक व्याख्यान हो। पंडित रामनारायण मिश्र ने इसका समर्थन किया।

निश्चय हुआ कि बाबू हरेकृष्ण जी आगामी अधिवेशन में इस विषय पर कृपा पूर्वक व्याख्यान दें।

(६) निम्नलिलिखित पुस्तकें धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईं:—

स्वामी प्रेमानन्द जी, काशी
ओमर्थ ब्रह्मात्म बोध की २ प्रतियां
बाबू जयराम दास गुप्त, काशी
बच्चोंका चरित्र-गठन
पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी, दारागंज, प्रयाग
प्रीस का इतिहास
बाबू मन्दराज सिंह, नेटाल
पं० भवानी दयाल जी की जीवनी।
मैनेजर, ज्ञानमंडल, काशी
भारतीय शासन-प्रबंध-संबंधी सुधारों का आवेदनपत्र भाग २।
भारत की गवर्न्मेंट।
Proceedings of the War-conference held at Delhi 27th-29th April 1918.
संयुक्त प्रदेश की गवर्नमेंट
The Sacred Books of the Hindus Vol VII.
,, ,, Vol XVII Parts I&II
,, ,, Vol XX.
,, ,, XVIII.
District Gazetteer of the United Provinces B. Vol, Allahabad Division.
एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल, कलकत्ता
Memoirs of the Asiatic Society of Bengal Vol. VI, pp 183-216.
Memoirs of the Asiatic Society of Bengal Vol, VII, No. 1, pp 1-101.
Indian Antiquary for January, February and March 1918.
बनारस म्युनिसिपैलिटी
The Sanitary survey of Benares Municipality.

(१) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

प्रबंधकारिणी समिति।

सोमवार ता० १८ नवंबर १९१८—संध्या के ५ बजे
स्थान-सभाभवन।
उपस्थित।
पंडित रामनारायण मिश्र बी० ए०
बाबू गौरीशंकर प्रसाद बी० ए० एल-एल० बी०
बाबू श्रीप्रकाश बी०ए० एल-एल०बी०, बैरिस्टर
बाबू शिवप्रसाद गुप्त
पंडित गोविंद राव जोगलेकर बी० ए०, एल० एल० बी०
बाबू बालमुकुंद वर्मा

(१) प्रबंधकारिणी समिति के तारीख १० सितंबर, ४ अक्तूबर और ११ अक्तूबर १९१८ के कार्य-विवरण पढ़े गए और स्वीकृत हुए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) सितंबर और अक्तूबर १९१८ के आय का हिसाब उपस्थित किया गया।

निश्चय हुआ कि जिस रूप में वर्तमान बजेट उसी रूप में यह हिसाब भी आगामी अधिवेशन उपस्थित किया जाय।

(३) बंक आफ बांबे का उनके शेयरों के संबंध ता० १८ अक्तूबर का पत्र उपस्थित किया गया।

निश्चय हुआ कि (क) नागरीप्रचारिणी सभा की प्रबंधकारिणी समिति सभा के मंत्री को अधिकार देती है कि बैंक आफ बांबे के जो सभा को मुंशी देवीप्रसाद जी से मिले हैं के स्वत्व-परिवर्तन-पत्र पर वह सभा की ओर हस्ताक्षर करें, उन हिस्सों की आय (डिविडेंड) हस्तांतर से प्राप्त किया करें और इस में अन्य आवश्यक पत्रों पर भी हस्ताक्षर करें (ख) उक्त हिस्सों को प्रबंधकारिणी समिति की आज्ञा विना वे बेची या रेहन नहीं कर सकेंगे।

(४) बाबू श्यामलाल का पत्र उपस्थित किया जिसमें उन्होंने प्रस्ताव किया था कि सभा की एक पूर्ण डाइरेक्टरी प्रकाशित करे।

निश्चय हुआ कि धनाभाव से इस समय सभा कार्य नहीं कर सकती। किंतु कार्य सराहनीय है।

(५) निश्चय हुआ कि मंत्रियों का कार्य भाग इस वर्ष भी गत वर्ष की नाईं ही रहे।

(६) पंडित रामनारायण मिश्र का १३ नवंबर पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने पुस्तकालय के निरीक्षक के पद से इस्तीफ़ा दिया था।

निश्चय हुआ कि पंडित रामनारायण मिश्र जी इस्तीफा स्वीकार किया जाय और बाबू बेणी प्रसाद जी उनके स्थान पर निरीक्षक चुने जाँय।

(७) बाबू देवनंदनसिंह का प्रार्थनापत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने बीमारी का मास का पूरा वेतन और १५ दिन की बीमारी वेतन की बचत दिए जाने की प्रार्थना की थी।

निश्चय हुआ कि उनकी प्रार्थना स्वीकार की जाय।

(८) निश्चय हुआ कि 'महाराणा प्रताप' की १००० प्रतियाँ छपवाई जाँय।

विशेष अधिवेशन।

मंगलवार ता० १७ दिसम्बर १९१८ संध्या के ४¾ बजे स्थान-सभाभवन।

(१) बाबू शिव प्रसाद गुप्त ने कहा कि आज के विशेष अधिवेशन की सूचना बाहरी सभासदों को नहीं दी गई है। अतः सब सभासदों को सूचना दिए बिना यह अधिवेशन नहीं होना चाहिए।

सभापति महाशय ने कहा कि नगरस्थ सभासदों को सूचना दे दी गई है और इतने सज्जन एकत्र हो गए हैं अतः आज का अधिवेशन किया जा सकता है।

(२) बाबू हरिहर नाथ का ११ दिसम्बर १८ का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने सभा कार्यालय के द्वार के समीप एक नोटिस बोर्ड के रक्खे जाने और उस पर सभा के कार्य विवरण, अधिवेशनों की सूचना कार्यकर्ताओं की नामावली, नियमावली रिपोर्ट आदि लगाए जाने के लिये प्रस्ताव किया था।

अधिक सम्मति से निश्चित हुआ कि यह प्रस्ताव प्रबंध से संबंध रखता है अतः यह प्रबंधकारिणी समिति में भेजा जाय।

(३) बाबू हरिहर नाथ जी का ११ दिसम्बर १८ का दूसरा पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने निम्नलिखित प्रश्न किए थे—(क) क्या कार्यालय में कोई ऐसा रजिस्टर है जिसमें उन प्रस्तावों का उल्लेख रहता हो जो उपनियम की भांति काम में आते हैं? (ख) बजट में नागरी प्रचारिणी पत्रिका के संपादन के लिये कितना व्यय स्वीकृत हुआ है? (ग) उक्त पत्रिका के सम्पादन में इस समय क्या व्यय होता है?

मंत्री ने इनके निम्नलिखित उत्तर दिए:—(क)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं (ख) सम्पादन के लिये जुदी रकम स्वीकृत नहीं है। प्रति संख्या के लिये १००) रु० स्वीकृत है जिसमें ८३॥) के लगभग छपाई में व्यय होता है और (ग) सम्पादन के लिये १५) रु० दिया जाता है।

(४) बाबू हरिहर नाथ का ६ दिसम्बर १९१८ का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि उन्होंने गत निर्वाचन संबंधी पत्रों का अवलोकन किया जिसमें उन्हें निम्नलिखित त्रुटियां मिलीं (क) रलया राम, आत्माराम हरि खाडीलकर, जगन्नाथ नामक व्यक्तियों ने वोट दिए थे पर उनकी उपस्थिति नहीं लिखी है (ख) पं० केदार नाथ पाठक के नाम केवल ३ प्राक्सियां थीं पर उन्होंने ४ प्राक्सियाँ अपने सम्मतिपत्र पर लिखी हैं। (ग) बाबू कृष्णदेव प्रसाद गौड़ का प्रतिनिधि पत्र उनके नाम था परंतु वह लिखा नहीं गया।

बाबू हरिहर नाथ जी ने कहा कि वे इन बातों का उत्तर नहीं चाहते वरन् सभा की सूचना के लिये ही उन्होंने यह पत्र भेजा है। इस पर बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने कहा कि वे इनका उत्तर जानना चाहते हैं। अतः मंत्री ने निम्नलिखित उत्तर दिए (क) उक्त सभासद सभा में उपस्थित थे। जान पड़ता है कि उनके नाम उस समय के कार्य कर्ताओं की भूल से छूट गए। (ख) पं० केदारनाथ पाठक के नाम ३ प्रतिनिधि-पत्र थे और अपना वोट मिला कर उन्होंने ४ वोट लिखे थे (ग) उस समय के कार्यकर्ताओं की भूल से यह छूट गया है।

बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने पूछा कि क्या बाबू हरिहर नाथ जी कृपा पूर्वक यह बतलावेंगे कि उन्होंने किस अभिप्राय से इन त्रुटियों की सूचना सभा को दी है। इस पर बाबू हरिहर नाथ ने कहा कि इस समय वे अपना अभिप्राय नहीं बतला सकते।

बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने पूछा कि जिस समय की ये त्रुटियां हैं उस समय मंत्री कौन था। मंत्री ने उत्तर दिया कि उस समय स्वयम् बाबू हरिहर नाथ जी मंत्री थे। निश्चय हुआ कि बाबू हरिहर नाथ जी को इन त्रुटियों के बतलाने के लिए धन्यवाद दिया जाय और उनसे प्रार्थना की जाय कि उनके समय में सभा के कार्यविवरणों में अन्य जो त्रुटियाँ रह गई हों उनकी सूचना भी वे कृपापूर्वक सभा को दें।

(५) बाबू हरिहर नाथ का ६ दिसम्बर १९१८ का दूसरा पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने निम्निलिखित प्रश्न किए थे (क) मनोरञ्जन पुस्तक माला के संबंध में जो द्रव्य बाबू श्यामसुंदरदास जी को देना था वह चुकाया गया या नहीं (ख) मनोरञ्जन और कोश का काम चलता है वा बंद है? (ग) मनोरंजन और कोश के संबंध में जो कार्य बाबू श्यामसुंदर दास को सुपुर्द है वह किन किन प्रस्तावों के अनुसार है? और वे प्रस्ताव साधारण सभा के हैं अथवा प्रबंधकारिणी समिति के?

मंत्री ने निम्नलिखित उत्तर दिए (क) बाबू श्यामसुंदर दास जी का रुपया अभी चुकाया नहीं गया (ख) पहले की दी हुई मनोरंजन पुस्तक माला की एक पुस्तक छप रही है। कोश का काम चल रहा है, १६ वीं संख्या छप चुकी है, १७ वीं के ११ फार्म छप चुके हैं और १८ वीं संख्या की कापी प्रेस में दे दी गई है। इसके संपादन का कार्य चल रहा है और "न" तक हो चुका है। (ग) मनोरंजन पुस्तकमाला और कोश का काम उन प्रस्तावों के अनुसार हो रहा है जो सभा में समय समय पर स्वीकृत हो चुके हैं।

प्रश्न "ग" के संबंध में बाबू हरिहर नाथ ने कहा कि केवल दो प्रस्तावों के ही अनुसार पुस्तकमाला और कोश का कार्य बाबू श्यामसुंदर दास जी को सौंपा गया है और वे उन प्रस्तावों को निकाल सकते हैं। निश्चय हुआ कि बाबू हरिहरनाथ जी से प्रार्थना की जाय कि वे कृपा पूर्वक उन प्रस्तावों को निकाल दें और वे साधारण अधिवेशन में उपस्थित कर दिए जांय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंडित रामप्रसाद पांडे ने प्रश्न किया कि को बाबू श्यामसुंदरदास जी का कैसा देना है और क्या उक्त बाबू साहब को कमाला के संपादन के लिये कुछ पुरस्कार जाता है? मंत्री ने उत्तर दिया कि बाबू सुंदर दास जी ने सभा से कभी कोई पुर- नहीं लिया। पुस्तकमाला के ग्रंथकारों को साहब के द्वारा पुरस्कार दिया जाता था। पुस्तक के लिये सभा १५० रु० देती थी में ग्रंथकर्ता का पुरस्कार डाक-व्यय, प्रेस के प्रति की साफ कराई आदि का सब व्यय मिलित रहता था। इसी हिसाब में सभा को साहब का देना है। इसी संबंध में मंत्री ने त किया कि अब ग्रंथकारों को पुरस्कार सीधे सभा द्वारा ही दिया जाना निश्चित है। डाक व्यय, प्रति की साफ़ कराई इत्यादि व्यय होगा वह अलग दिया जायगा।

बाबू हरिहर नाथ जी का बिना तिथि का पत्र स्थित किया गया जिसमें उन्होंने निम्नलिखित ताव उपस्थित किए थे:—

(१) नियम ११९ तथा १२० इस प्रकार बदले कि क़ागज पत्र देखने के लिये यदि किसी सद की प्रार्थना सभा में पहुंचे तो दो दिन भीतर जिन पत्रों को वह देखना चाहता हो वे को सभा कार्यालय खुला रहने पर किसी य दिखा दिए जायं और वह सभासद यदि की प्रतिलिपि लेना चाहे तो स्वयम् वा अपने क से उसी समय अथवा किसी और समय की कापी कराले और वह यदि चाहे तो सहा- मंत्री वा उसका स्थानापन्न उसको मिलाकर भी सही सही कर दे।

निश्चय हुआ कि नियम संशोधन के लिये उपसमिति बनाई गई है उसके पास यह ताव भेज दिया जाय।

(२) जिस कार्य को करने के लिये नियमों में अवधि दी है उसको उस अवधि के भीतर कर देने का विशेष प्रबन्ध करने और कर देने के लिये मंत्री बाध्य है। यदि कोई अन्य पदाधिकारी मंत्री को ऐसा करने में असमर्थ करे तो वही इस के लिये उत्तरदाता समझा जायगा।

निश्चय हुआ कि यह प्रस्ताव भी नियमों- वाली समिति में भेजा जाय।

(३) जिस सभासद को किसी नियम के अनुसार प्रबन्धकारिणी समिति में उसके सदस्य की हैसियत से उपस्थित होने का अधिकार हो उसको प्रबन्धकारिणी समिति का सदस्य न चुना जाय।

(४) जो सज्जन इस प्रकार चुन लिये गए हों उनसे प्रार्थना की जाय कि वे प्रबन्धकारिणी समिति की सदस्यता से त्याग पत्र दे दें।

इन दोनों प्रस्तावों में से (४) के सम्बन्ध में पंडित रामनारायण मिश्र ने कहा कि यह प्रस्ताव मर्यादा के विरुद्ध है। इस पर बाबू हरिहर नाथ ने उसे लौटा लिया।

प्रस्ताव (३) के सम्बन्ध में बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने प्रस्ताव किया कि इस प्रस्ताव पर आज ही विचार किया जाय। बाबू रामदास गौड़ ने इस का अनुमोदन किया। अधिक सम्मति से यह प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ। (९ सम्मतियां इसके पक्ष में थीं और १३ विपक्ष में)

बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा ने प्रस्ताव किया कि नियम-संशोधन करनेवाली समिति के पास यह प्रस्ताव भेजा जाय और अन्य सब नियमों के सम्बन्ध में उस समिति की रिपोर्ट के साथ यह भी सम्मिलित होकर सभा में उपस्थित किया जाय। पंडित गोविन्दराव जोगलेकर ने इसका अनुमोदन किया। अधिक सम्मति से यह प्रस्ताव भी अस्वीकृत हुआ (१० सम्मतियां इसके पक्ष में थीं और १२ विपक्ष में)

बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने प्रस्ताव किया कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नियम संशोधन करने के लिये जो समिति बनाई गई है उसकी रिपोर्ट सभा के पास आने की अवधि तीन मास के लिये और बढ़ा दी जाय और इस बीच में प्रत्येक सभासद के पास नियमावली की प्रतियां इस प्रकार छपवा कर भेजी जांय कि उनमें एक कालम में प्रचलित नियम रहें, दूसरे में समिति के प्रस्तावित सुधार रहें और तीसरे कालम में सभासदों की सम्मति के लिये स्थान छूटा रहे। बहुत विचार के अनन्तर बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने अपना यह प्रस्ताव लौटा लिया।

बाबू हरिहर नाथ के प्रस्ताव पर अधिक सम्मति से निश्चय हुआ कि इस प्रस्ताव की सूचना सब सभासदों को ना० प्र० पत्रिका की आगामी संख्या द्वारा दी जाय और तब यह प्रस्ताव जनवरी १९१९ के अन्तिम शनिवार को सभा के साधारण अधिवेशन में विचारार्थ उपस्थित किया जाय।

४—एक रजिस्टर किसी ऐसे स्थान पर रखवा दिया जाय जो सभा में आने जानेवालों के दृष्टिगोचर होता रहे जिसमें सभासद वा सर्वसाधारण पुस्तकालय, कोशविभाग अथवा कार्यालय की त्रुटियों को नोट किया करें और वह रजिस्टर प्रबन्ध कारिणी समिति के अधिवेशन में उन भूलों के संशोधनार्थ उपस्थित किया जाय और समिति द्वारा किए हुए संशोधनों की सूचना के साथ वह साधारण सभा में उपस्थित किया जाय।

बाबू रामचन्द्र वर्म्मा ने प्रस्ताव किया कि कोश के सम्पादक, सभा के मंत्री तथा पुस्तकालय के निरीक्षक की सम्मतियों के सहित यह प्रस्ताव विचारार्थ उपस्थित किया जाय। पंडित रामचन्द्र शुक्ल ने इसका अनुमोदन किया। इस पर बाबू रामदास गौड़ ने सभापति का ध्यान नियम ११३ पर दिलाया और सभापति महोदय ने कहा कि यह प्रस्ताव किसी व्यक्ति विशेष से संबंध नहीं रखता वरन् यह सिद्धान्त सम्बन्धी है अतः बाबू रामचन्द्र वर्म्मा और प० रामचन्द्र शुक्ल को इस पर सम्मति देने का अधिकार है।

पंडित रामनारायण मिश्र ने प्रस्ताव किया कि कोश विभाग और सभा कार्यालय के लिये ऐसा रजिस्टर रखने की आवश्यकता नहीं है। इस प्रस्ताव के पक्ष में निम्नलिखित सज्जनों ने सम्मति दी:—

बाबू गौरीशंकर प्रसाद जी, पं० गोविन्दराव जोगलेकर बाबू बालमुकुन्द वर्म्मा पं० रामनारायण मिश्र, पं० रामचन्द्र शुक्ल, बाबू रामचन्द्र वर्म्मा, पंडित मदनमोहन शास्त्री, पंडित बद्रीनाथ पांडे, पं० भाऊराव दामले, बाबू बनारसी दास, पं० आत्माराम हरी खांडिलकर, बाबू लक्ष्मीनारायण गुप्त और पं० मन्नूलाल औदीच्य। विपक्ष में निम्नलिखित सज्जनों ने सम्मति दी, बाबू शिवप्रसाद गुप्त, बाबू रामदास गौड़, बाबू हरिहर नाथ और पं० हरनाथ तिवारी। अतः अधिक सम्मति से पं० रामनारायण मिश्र का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

(७) बाबू हरिनाथ जी का २ दिसम्बर १९१८ का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि (क) ता० २५-७-१८ का० प्रस्ताव नं० ७ फिर से उपस्थित किया जाय ख) ता० १० अक्तूबर के विशेष अधिवेशन के कार्य विवरण में कुछ शब्द और बढ़ाए जायँ।

निश्चय हुआ कि (क) यह प्रबन्धकारिणी समिति में विचारार्थ उपस्थित किया जाय (ख) विशेष अधिवेशन का कार्य-विवरण स्वीकृत हो चुका है अतः अब इस सम्बन्ध में कुछ नहीं हो सकता।

(८) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें।

ावट	मूल्य ≡)
ग्रंथावली	मूल्य ≡)
वती	मूल्य ॥।)
वर बिहारीलाल-	मूल्य =)
बोध	मूल्य ≡)
ावली--	मूल्य २)
ाले रोग और उनसे बचने का उपाय-	१)
र्यापणाली-रोगी की शुश्रूषा विधि। मूल्य	।)
ीनलेखमणिमाला	१)
ीराजरासो-२२ खंड मूल्य २०) रु०।	
चन्द्रिका	मूल्य ।=)
ीलीला-कवि आनंदघन कृत।	मूल्य =)
ीन्दुचरित्र-	मूल्य ॥)
ग्रंथावली-	मूल्य ॥।)
ी भाषा के सामयिक पत्रों का इतिहास	।)
नामा	मूल्य ।॥)
लोचनादर्श	मूल्य ≡)
लोचना	मूल्य =)
ाणाप्रताप-बाबू राधाकृष्ण दास जी कृत	॥)
ाधाकृष्णदास (जीवनी)	॥)
ी योग्यता	=)
ीयदर्शन-	॥)
ीलास-	१)

राज्यप्रबंधशिक्षा	॥)
सौरीसुधार	॥)
संक्षेप लेखप्रणाली-	॥)
हम्मीर रासो	१)
हरिश्चन्द्र-राजा हरिश्चन्द्र का चरित्र।	=)
सिंधदेश का इतिहास	।)
दादू दयाल की बानी	॥।)
दादूदयाल के शब्द	॥)
हिन्दी लेक्चर	-)
यूनान का इतिहास	॥।)
स्त्रियों के रोग	१)
भगवद्गीता (हिन्दी अनुवाद)	-)
आर्ष प्राकृत व्याकरण	।)
छत्रप्रकाश-लाल कवि कृत	॥।)
सुघड़दर्जिन-सिलाई और कटाई का सचित्र वर्णन	॥)
सत्यहरिश्चन्द्र-(भारतेन्दु रचित) मूल्य	=)॥
भारतदुर्दशा	-)।
बोपदेव का जीवनचरित्र	=)
शेख मोहम्मद बाबा का जीवनचरित्र	-)
लेखक और नागरी लेखक	=)
आयुर्वेद निदान समीक्षा	=)
भाषा-समस्त भाषाओं का संक्षिप्त विवरण	≡)॥
होरेशियस और मनुष्य की सात अवस्थाएं	=)
भर्तृहरि निर्वेद नाटक	।)
ललित शिक्षावली छोटी छोटी कहानियाँ	-।)

मिलने का पता—मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनोरंजन पुस्तकमाला ।

अर्थात्

हिंदी के सौ उत्तम उत्तम ग्रंथों की पुस्तकावली ।

अब तक निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

१ आदर्श-जीवन—लेखक रामचंद्र शुक्ल ।
२ आत्मोद्धार—लेखक रामचंद्र वर्म्मा ।
३ गुरु गोविंदसिंह—लेखक वेणीप्रसाद ।
४ आदर्श हिंदू १ भाग—लेखक मेहता लज्जाराम शर्म्मा ।
५ ,, २ ,, ,,
६ ,, ३ ,, ,,
७ राणा जंगबहादुर—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा ।
८ भीष्म पितामह—लेखक चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्म्मा ।
९ जीवन के आनंद—लेखक गणपत जानकीराम दूबे बी. ए. ।
१० भौतिक-विज्ञान—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी ।
११ लालचीन—लेखक व्रजनंदन सहाय ।
१२ कबीरवचनावली—संग्रहकर्त्ता अयोध्यासिंह उपाध्याय ।
१३ महादेव गोविंद रानडे—लेखक रामनारायण मिश्र बी. ए. ।
१४ बुद्धदेव—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा ।
१५ मितव्यय—लेखक रामचंद्र वर्म्मा ।
१६ सिक्खों का उत्थान और पतन—लेखक नंदकुमार देव शर्म्मा ।
१७ वीरमणि—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम. ए. और शुकदेवबिहारी मिश्र बी. ए. ।
१८ नेपोलियन बोनापार्ट—लेखक राधामोहन गोकुलजी ।
१९ शासनपद्धति—लेखक प्राणनाथ विद्यालंकार ।
२० हिंदुस्तान, पहला खंड—लेखक दयाचंद्र गोयलीय बी. ए. ।
२१ ,, ,, दूसरा खंड— ,, ,, ,,
२२ महर्षि सुकरात—लेखक वेणीप्रसाद ।
२३ ज्योतिर्विनोद—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी. ।
२४ आत्मशिक्षण—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम० ए० और शुकदेव बिहारी मिश्र बी० ए० ।
२५ सुंदरसार—संग्रहकर्ता पुरोहित हरिनारायण बी० ए० ।

प्रत्येक पुस्तक का मूल्य १) है, समस्त ग्रंथमाला के स्थायी ग्राहकों से ।।।) लिया जाता है। डाकव्यय अलग है।

मिलने का पता—

मंत्री—नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाग २३] [संख्या ७

नागरीप्रचारिणी पत्रिका।

जनवरी १९१९

सम्पादक- रामचन्द्र शुक्ल।

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल। बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल॥
करहु विलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल। निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सबको मूल॥
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार। सब देशन सों लै करहु, भाषा माँहि प्रचार॥
प्रचलित करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न। राजकाज दरबार में, फैलावहु यह रत्न॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र।

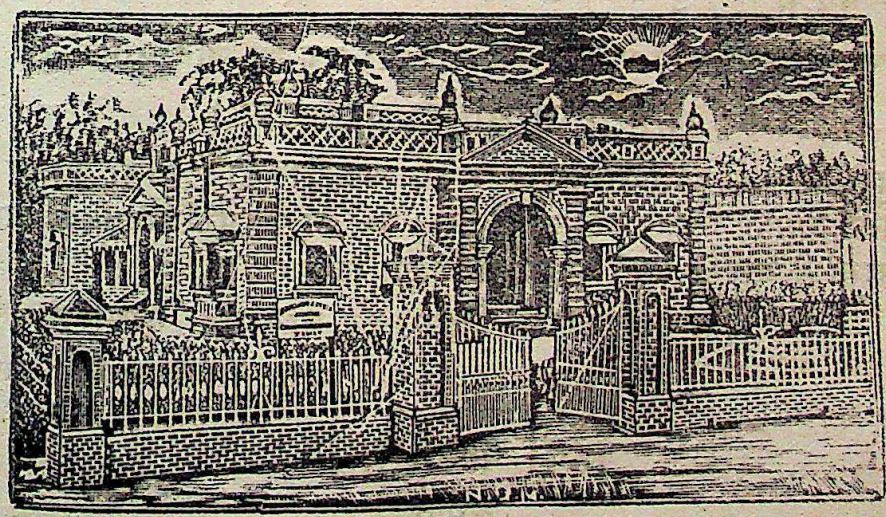

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित।

गणपति कृष्ण गुर्जर द्वारा श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस, काशी में मुद्रित।

वार्षिक मूल्य २॥) प्रति संख्या ≈)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची ।

१—नागरी प्रचार में अदालती अड़चन १४५
२—हिंदी की राष्ट्रीयता पर 'अर्चना' सम्पादक (ले० श्री सत्यभक्त १४६
३—विहारी विहार (ले० बाबू श्यामसुंदर-दास बी० ए०) १५१
४—मद्रास में हिंदीप्रचार (स्वामी सत्यदेव) १५४
५—शाहजहाँ के समय की कुछ बातें (ले० पं० हरिश्चंद्र शुक्ल) १५५
६—प्राचीन काल में भारतीय संस्कार का विस्तार १५८
७—सभा का कार्य विवरण १६६

मुफ्त ! मुफ्त !! मुफ्त !!!

धन्वन्तरी ।

यह आयुर्वेदीय मासिक पत्र योग्य वैद्य, डाक्टर और हकीमों को बिना मूल्य भेजा जाता है, सर्व साधारण को नहीं । मैनेजर, धन्वन्तरी, विजयगढ़, अलीगढ़ ।

पदक और पुरस्कार ।

सभा द्वारा उत्तमोत्तम विषयों पर लेख लिखने के लिये प्रति वर्ष स्वर्ण और रजत पदक दिए जाते हैं । सन् १९१९ में इनके लिये निम्नलिखित विषय नियत हैं—

छन्नूलाल स्वर्ण पदक—नगरों का निर्माण ।

राधाकृष्णदास रजत पदक—प्राचीन भारतवर्ष की शासन-प्रणाली ।

रेडिचे रजत पदक—मनुष्य का भोजन ।

इन विषयों पर लेख सभा में ३१ दिसम्बर १९१९ तक आ जाने चाहिएँ ।

मेहता जोधसिंह पुरस्कार ।

१ जनवरी १९१७ से ३१ दिसम्बर १९१९ तक प्रकाशित होने वाली हिन्दी की पुस्तकों में जो सर्वोत्तम समझी जायगी उसके रचयिता को २००) रु० का यह पुरस्कार दिया जायगा । इसके लिये जो पुस्तकें सभा में आवेंगी उन्हीं पर विचार किया जायगा ।

गोविन्दराव जोगलेकर बी० ए०, एल-एल० बी०
मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी ।

हिंदी शब्द-सागर

अर्थात्

हिंदी भाषा का एक बृहत्कोश ।

इस प्रकार का सर्वांगपूर्ण कोश अभी तक किसी देशी भाषा का नहीं निकला है । इसमें सब प्रकार के शब्दों का संग्रह है । दर्शन, ज्योतिष, आयुर्वेद, कलाकौशल इत्यादि के पारिभाषिक शब्द पूर्ण और स्पष्ट व्याख्या के सहित मिलेंगे । और कोशों के समान इसमें अर्थ के स्थान पर केवल पर्यायमाला नहीं दी गई है प्रत्येक शब्दका क्या भाव है यह अच्छी तरह समझा कर तब पर्यायों रखे गए हैं । जिन प्राचीन शब्दों के कारण पुराने कवियों के ग्रंथरत्न समझ में नहीं आते उनके अर्थ इसमें मिलेंगे । अब तक १६ संख्याएं निकल चुकी हैं, मूल्य प्रति संख्या का १)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

भाग २३ } जनवरी १९१४ । { संख्या ७

नागरी प्रचार में अदालती अड़चन ।

नागरी लिपि और हिन्दी भाषा के प्रचार में जो बाधाएँ पड़ती हैं उनमें कचहरी के अफ़सरों और अमलों द्वारा उत्पन्न की हुई अड़चनें सब से बढ़ कर हैं। प्रायः सुनने में आया करता है कि अमुक अदालत के हाकिम ने हिन्दी की अर्जी वापस कर दी, अमुक डिपटी कलक्टर ने हिन्दी में दिए हुए गवाहों के बयान को ज्यों का त्यों न दर्ज कर फ़ारसी शब्दों में लिखा। आज एक ही प्रकार का मामला नीचे दिया जाता है।

आली जनाब मुं० वज़ीर मुहम्मद खाँ साहब जो बुलंदशहर में (बुलंदशहर) असिस्टेंट कलक्टर हैं। आप नागरी के परम हितैषी और भक्त हैं यह बड़े हर्ष की बात है। हाल में आप के इजलास में बाबू मोहन लाल जी बी० ए०, एल-एल० बी० वकील ने नागरी लिपि में इजराय डिगरी की एक दरख़ास्त दी जिसमें आप स्वयं डिगरीदार थे। उस पर आली जनाब ने हुक्म फ़रमाया कि "डिगरीदार तारीख़ पर बमुराद अदख़ाल मुसन्ना दर्ख़ास्त उर्दू...के हाज़िर आवे"। मतलब यह कि आप को नागरी में दरख़ास्त लेना पसंद न आया।

उक्त बाबू साहब एक सुयोग्य और अनुभवी वकील हैं। उन्हें यह नियमविरुद्ध आज्ञा उचित न जान पड़ी अतः उनकी ओर से हुक्मनामे पर नागरी अक्षरों में यह तामील लिखवा दी गई—

"दरख़ास्त इजराय नागरी हरूफ़ में हस्ब क़ानून व ज़ाब्ता पेश की गई है, उसके मुसन्ना की उर्दू में दाख़िल करने की क़ानूनन जरूरत नहीं है। नागरी की दरख़ास्त इजराय पर बज़ाब्ता कार्रवाई फ़रमाई जावे।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरी में लिखी हुई यह तामील कुछ समझी ही न गई, उसका अस्तित्व ही नहीं स्वीकार किया गया और यह नया हुक्म लिखा गया—

"मिनजानिब डिगरीदार कोई हाज़िर नहीं आया और न कोई दरख़ास्त पेश की गई।... मुमकिन है डिगरीदार को पैरवी मंजूर न हो। लिहाज़ा...ख़ारिज होवे।"

नागरीप्रचारिणी सभा (बुलंदशहर) के मंत्री महोदय ने उक्त सत्याग्रही वकील महोदय की ओर से इस अनुचित और मनमानी आज्ञा के विरुद्ध मेरट की कमिश्नरी में अपील की। न्याय-निष्ठ और नीतिकुशल कमिश्नर साहब ने डिपटी साहब के इस ख़िलाफ़ कानून हुक्म को रद कर डिगरीदार की दरख़ास्त को डिपटी साहब के पास अपनी इस आज्ञा के सहित भेज दिया—

The application for execution of 4th May 1918 was in order. It was not required to be in the Urdu Script. The order of the Assistant Collector is set aside and the case remanded in order that the application of 4th May 1918 be dealt with according to law.

अर्थात्—दरख़ास्त इजराय ४ मई १९१८ नियमानुकूल थी। उर्दू लिपि में लिखे जाने की कोई आवश्यकता न थी। असिस्टेंट कलक्टर की आज्ञा रद की जाती है और मुक़दमा इसलिए लौटाया जाता है कि दरख़ास्त ४ मई १९१८ पर क़ानून के मुताबिक़ कार्रवाई की जाय।

इस प्रकार के मामले प्रायः हुआ करते हैं जिससे प्रत्यक्ष है कि कुछ अमले और अधिकारी हिन्दी का प्रवेश अकारण रोकना चाहते हैं और हम उन्हें उचित मार्ग पर लाने का जैसा चाहिए वैसा उद्योग कार्य्य-हानि के भय से बहुत कम करते हैं। यदि हम थोड़ी सी हानि या असुविधा सह कर ऐसे मामलों को उच्च अधिकारियों तक ले जाया करें तो यह अव्यवस्था थोड़े ही दिनों में दूर हो जाय। कचहरियों में हिन्दी का विरोध स्वार्थवश, आलस्यवश या पक्षपातवश किया जाता है। छोटे मोटे अमले स्वार्थ और आलस्यवश विरोध करते हैं, अफ़सर और हाकिम प्रायः पक्षपातवश ऐसा करते हैं। ऐसी दशा में हमारा कर्त्तव्य है कि हम दरख़ास्तें और कागजपत्र आदि सब हिन्दी में दाख़िल किया करें और इसमें यदि किसी प्रकार की रुकावट डाली जाय तो उसी प्रकार कार्रवाई करें जिस प्रकार ऊपर दिए हुए मामले में की गई। इससे यह होगा कि अमलों का भी नागरी का अभ्यास बढ़ता रहेगा और हाकिमों को भी उचित शिक्षा मिलती रहेगी।

हिन्दी की राष्ट्रीयता पर 'अर्चना' सम्पादक।

(ले० श्री सत्यभक्त-भरतपुर)

बँगला भाषा में 'अर्चना' नाम की एक उत्तम मासिक पत्रिका प्रकाशित होती है। उसके सम्पादक हैं परम प्रसिद्ध लेखक श्रीयुत केशवचंद्र गुप्त एम० ए० बी० एल० महोदय। आप बङ्गाल में एक ज़बर्दस्त लेखक माने जाते हैं। आपके गल्प बड़े चित्ताकर्षक और उपदेशपूर्ण हुआ करते हैं। हिंदी में भी उनमें से कुछ के अनुवाद हो चुके हैं। 'अर्चना' कार्तिक १३२५ वाली संख्या में आपने 'राष्ट्र भाषा' शीर्षक एक सात पृष्ठों का लेख लिखा है। उसमें आप ने बड़ी विचित्र विचित्र बातें लिख डाली हैं और आश्चर्यजनक सिद्धांतों की अवतारणा की है। एक विद्वान् द्वारा ऐसी बातों का लिखा जाना किसी दृष्टि से अच्छा नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कता। अतएव इस लेख में हम उनकी बातों कुछ विचार करना चाहते हैं।

यह तो सब को मालूम ही है कि कितने ही से देश में हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने का दोलन चल रहा है और कुछ समय से उसमें फलता भी अच्छी हो रही है। देश के सौभाग्य से यः सभी प्रसिद्ध विद्वान् हिंदी के पक्षपाती बन ए हैं और हिंदीभक्तों में भी बहुत कुछ जाग्रति उत्पन्न ो गई है। इसका फल यह हुआ है कि हिंदी ाहित्य दिन पर दिन अपूर्व उन्नति करता जाता और अधिक अधिक संख्या में अन्य प्रदेश सी सज्जनगण हिंदी को राष्ट्रभाषा स्वीकार करते ाते हैं। अब तो कलकत्ते जैसे महानगर में राष्ट्र भाषा-सम्मेलन स्थापित हो गया है जिसके मंत्री क बंगाली सज्जन हैं। 'केसरी' 'मराठा' न्यूइंडिया' ऐसे प्रधान पत्र कुछ हिंदी ख रखने लग गए हैं। कांग्रेस और दूसरी ष्ट्रीय सभाओं में भी हिंदी का आदर बढ़ा है द्रास में हिंदी शिक्षक जा कर लोगों को हिंदी खा रहे हैं। कहना नहीं होगा कि इस नवीन ति का बहुत कुछ श्रेय स्वनामधन्य कर्मवीर ंधीजी को है।

ऐसा मालूम होता है कि हिंदी की यह सफ-ता और प्रचार 'अर्चना' संपादक के चित्त में छ खटका है। उनको यह बात किसी प्रकार भीष्ट नहीं कि हिंदी को राष्ट्रभाषा का उच्चासन ाप्त हो और लोग अंगरेजी का मोह त्याग कर सका उपयोग करने लगें। अतएव आपने अपने ारों को इस लेख के रूप में प्रकट किया है।

लेख तो आपका बहुत बड़ा है पर उसका ारांश इतना ही है कि आज कल भारतवर्ष में ता और स्वदेशीपन की लहरें उठ रही हैं। के प्रभाव से गांधी, तिलक आदि ने एक राष्ट्र-षा का प्रचार करना सोचा है और इस काम लिये हिंदी को चुना है। पर ऐसा कभी नहीं हो सकता। बँगला गुजराती, मराठी, तामिल, तेलगू और तो क्या कनारीज तथा मलयालम तक में से कोई एक राष्ट्रभाषा बनाई जा सकती है पर हिंदी नहीं। क्यों? उसका कोई स्थिर रूप तो है ही नहीं। कोई उसे हिन्दी कहता है और कोई उर्दू के नाम से पुकारता है। दोनों रूपों में बड़ा अंतर है, एक का जाननेवाला दूसरे का समझ सकने में बिलकुल असमर्थ होता है। मुसलमान हिन्दी से घृणा रखते हैं तथा हिंदी उर्दू का विरोध है। फिर राष्ट्रभाषा का कौन सा रूप हो? ऐसी अस्थिर तथा अनिश्चित भाषा को राष्ट्रभाषा बनाना बुद्धिमत्ता से परे है। इसके अतिरिक्त हिंदी के राष्ट्रभाषा होने से दक्षिण निवासियों को भी बड़ी असुविधा होगी। यदि भारत के अन्य प्रांतवासी हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाएँगे तो उनको अपने धर्म, कर्म, आदर्श, जातीयता, अतीत इतिहास आदि सबका बलिदान कर देना पड़ेगा। अंगरेजी सीखना भी हमारा परम धर्म है। अतएव मातृभाषा और अंगरेजी के साथ ऊपर से एक राष्ट्रभाषा सीखने का बोझ और डाल देने से यों भी लोगों को बड़ी असुविधा होगी। इसलिये हिंदी किसी प्रकार राष्ट्रभाषा नहीं बनाई जा सकती।

देखा आपने सम्पादक-प्रवर का प्रस्ताव और तर्कशैली। आपकी समझ में हिंदी कोई भाषा ही नहीं है। जो भाषा पिछले हजार वर्षों से बराबर प्रचलित है, जिसमें चन्द, सूर, तुलसी, केशव, बिहारी, भूषण, भारतेंदु ऐसे सुकवियों ने समय समय पर भावपूर्ण, रसभरी कमनीय कांतिवाली कोमल काव्यधारा बहाई है, वह हिंदी कोई भाषा ही नहीं है! जिस हिंदी का प्राचीन साहित्य प्रायः सभी भारतीय भाषाओं से अधिक श्रेष्ठ और उत्तम है तथा आधुनिक साहित्य भी किसी की अपेक्षा कम नहीं वह सब भाषाओं से अयोग्य है! उसका कोई प्रत्यक्ष रूप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही नहीं है! ऐसी बे सिर पैर की बातें देश हितैषियों में केशव बाबू के सिवाय कौन कह सकता है?

हिंदी के राष्ट्रभाषा न हो सकने के विषय में आपकी सबसे बड़ी दलील यही है कि हिंदी का कोई स्थिर रूप नहीं। ऐसी दशा में किस रूप को राष्ट्रभाषा बनावें? यह दोष ऐसा भयङ्कर है कि इसके कारण वह भारत की सब भाषाओं की अपेक्षा दूषित है। आप के शब्द हैं "यदि कोई भाषा भारत की राष्ट्रभाषा हो सकती है तो बँगला, गुजराती, मराठी, तेलगू, तामिल यहाँ तक कि कनारीज और मलयालम में से कोई हो सकती है। कारण यह कि ये सब भाषाएँ पूर्ण हैं, सीमाबद्ध हैं, इनका एक एक निर्धारित रूप है। पर जिसको हम हिंदी भाषा कहते हैं, वह भाषा बिल्कुल ससीम नहीं है।" सौ बार साधुवाद है सम्पादक महोदय के राष्ट्रभाष ज्ञान को। सचमुच हम को केशव बाबू पर श्रद्धा है। पर यह कहने से हम नहीं रुक सकते कि इस लेख में उन्होंने बड़ी हास्यास्पद बातें लिखी हैं। पचासों प्रचंड और अनुभवी विद्वान् आज तक खूब सोच विचार कर सम्मति दे चुके हैं, कि यदि भारतवर्ष की कोई राष्ट्रभाषा हो सकती है तो वह हिंदी है। इनमें भारत के प्रायः सभी श्रेष्ठ विद्वान् आ जाते हैं—क्या बङ्किमचन्द्र, क्या राजेंद्रलालमित्र, क्या रमेशचन्द्र दत्त, क्या डाक्टर भंडारकर, क्या ऐनीबिसेंट, क्या गाँधी और क्या तिलक। पर इन सब की बातें हमारे विद्वान् केशव बाबू को कुछ नहीं जँचती। उनकी दृष्टि में हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा होने के लिए सब भाषाओं से नीचे है। इस पर भी यदि हम उनके राष्ट्रभाषाज्ञान तथा अपूर्व अभिज्ञता के लिये साधुवाद न दें तो क्या करें।

'अर्चना' संपादक भली भांति समझ लें कि जिस बात को वे हिंदी का दूषण समझ रहे हैं, वह वास्तव में भूषण है। यद्यपि हिंदी बहुत पुरानी भाषा है पर उसका शब्द-भंडार वर्तमान समय के पूर्ण अनुकूल नहीं। आधुनिक गद्य साहित्य क्षेत्र में पैर रखे भी उसे बहुत अधिक समय नहीं हुआ है। अतएव अभी उसका शब्द भंडार बढ़ाया जा रहा है। इस प्रकार बढ़ना ही जीवित भाषा का लक्षण है। जिस भाषा की बढ़ती या विकाश रुक गया उसे मृत्यु-पथ का पथिक समझना चाहिए। अंगरेजी में अब भी नये शब्द सम्मिलित किए जाते हैं। इसलिये यदि हिंदी असीम है तो क्या यह दोष है? असीमता तो भाग्यवान् को ही प्राप्त होगी। रहा उर्दू हिंदी का प्रश्न, वह अभी विचारणीय है। अभी तो ये दोनों भाषाएँ लिपि के कारण स्पष्टतः पृथक् हैं। भविष्य में जैसा होगा देखा जायगा। पर अब हिंदी के चिरकाल तक स्थिर रहने में कोई संदेह नहीं रह गया है। उर्दू के कारण हिंदी पर भिन्न भिन्न रूप रखने का आरोप करना अनुचित और अनभिज्ञता प्रकट करनेवाला है।

केशव बाबू डरते हैं कि यदि हिंदी राष्ट्रभाषा हो गई तो बँगला की कोई बात भी न पूछेगा। सब कोई उसके गुणों पर मुग्ध होकर उसी को अपना लेंगे। पर ऐसा डर व्यर्थ है। हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने का उद्देश्य यह नहीं है कि अन्य प्रांत अपनी अपनी भाषाओं से नाता तोड़ लें। वरन् इसका आशय इतना ही है कि आज कल पढ़ेलिखे लोग जो काम अंगरजी से ले रहे हैं वह हिंदी द्वारा होने लगे जिससे साधारण मनुष्य भी उनकी बातों को थोड़ा बहुत समझ सकें। क्योंकि हिंदी को सब प्रांतों के निवासी किसी न किसी परिमाण में अवश्य समझ लेते हैं। पर केशव बाबू का सिद्धांत ही निराला है। वे लिखते हैं कि "यदि संपूर्ण भारत निवासी यह प्रतिज्ञा करें कि वे केवल देशहितैषिता पर दृष्टि रख कर एक बड़ी जाति की सृष्टि करेंगे और उस आदर्श मंदिर में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने धर्म कर्म, अतीत इतिहास सब को बलि तब जा कर कहीं भारत की एक प्रादेशिक ा को तोड़ कर सब के आंतरिक भाव ाशित करने के लिये एक प्रचलित भाषा ाई जा सकती है।" कुछ ठिकाना है इस भय र अदूरदर्शिता का। भगवान ही जाने यह र्व गवेषणा हमारे विद्वान् संपादक महोदय किस प्रकार की है। सचमुच यह तो 'गोबर ेश गवेषणा' के भी कान काटने वाली है!! ष्ट्रभाषा के प्रचारक स्पष्ट कह चुके हैं कि हिंदी राष्ट्रभाषा बन जाने पर भी सब प्रदेशों के िवासी अपनी ही भाषा को बोलेंगे, पढ़ेंगे र लिखेंगे, केवल सार्वजनिक कार्यों में जैसे प्रेस, होमरूललीग, स्वराज्यसंघ आदि में ाँ अभी अंगरेजी भाषा का राज्य स्थापित है, ी का प्रयोग किया जाने लगा। इतने पर भी अर्चना संपादक को उपर्युक्त भय लगा रहे ासमें हिंदी अथवा उसके प्रचारकों का क्या य।

जान पड़ता है, कि हमारे संपादक जी रेजी के बड़े प्रेमी है। यद्यपि हम भी उसके ोधी नहीं, पर उनकी दृष्टि में अंगरेजी पढ़ना के लिये अनिवार्य है। तभी तो आपका ना है, "कि क्या मातृभाषा और अंगरेजी के य एक राष्ट्रभाषा का भार और पड़ने से तवासियों की स्वच्छंदता में वृद्धि होगी?" आप को भलीभांति समझ लेना चाहिए कि रेजी का महत्व राष्ट्रभाषा के सामने नितांत ुच्छ है। और अब तो मालूम पड़ता है कि उसकी श्यकता भी दिन पर दिन घटती जायगी। ी जैसी सरल और सहजश्रमसाध्य भाषा विषय में ऐसे अनुचित विचार प्रकट करना संबंधी अनजानपन का प्रत्यक्ष प्रमाण है। ष बाबू को ऐसी बात कहना शोभा नही देता। हिंदी को सब कोई अंगरेजी सीखने के समय का केवल दसवाँ भाग व्यय करके ही सीख सकते हैं तब उसके भार से ऐसा घबड़ाने की क्या जरूरत है।'

इन बातोंके अतिरिक्त बाबू केशवचंद्र जी ने मद्रासियों की कठिनाइयों की भी दुहाई दी है। वे मद्रासियों पर करुणा दिखा कर कहते हैं कि हिंदी के राष्ट्रभाषा बना दिए जाने पर उन विचारों को बड़ी असुविधा होगी। इस विषय में आप का मत है कि "दक्षिण भारत के अधिवासियों के लिये अंगरेजी सीखने की अपेक्षा बँगला, गुजराती, मराठी अथवा उक्त हिन्दी भाषा सीखना किसी प्रकार सुविधा-जनक नहीं हो सकता।" हमारा अनुमान है कि बाबू साहब ने यह लेख बिना किसी प्रकार की जाँच किए ही लिख डाला है नहीं तो वे ऐसी मनगढ़ंत बातें कदापि न लिखते। क्या मद्रासियों की उत्पत्ति अंगरेजों से हुई है जिससे उनके लिये अंगरेजी—जो कि सात सात समुद्र पार की भाषा है—सीखना सहज है और अपने देश की हिंदी सीखना कठिन? क्या उनके विवाह आदि संबंध अंगरेजों के साथ होते हैं जिससे उनको अंगरेजी पर कोई विशेष अधिकार प्राप्त हो गया है? आपको चाहे न मालूम हो पर मद्रासियों को हिंदी सीखने का शौक आपकी अपेक्षा कहीं अधिक है। वे लोग बार बार कहते हैं, कि हमको हिंदी सिखाने के लिये शिक्षक भेजे जांयँ। सुतराम् तीन चार आदमी वहां हिंदी शिक्षा का कार्य कर रहे हैं, और पांच मद्रासी हिंदी सीखनेके लिये प्रयाग में आए हैं जिनमें एक स्त्री भी है। ये सब हिंदी सीखकर मद्रास में उसका प्रचार करेंगे। ऐसी दशा में केवल अपने मन से मद्रासियों की असुविधा की बात उठाना कहाँ का न्याय है। यह तो अपनी बला दूसरे के सिर पर डालना है। केशव बाबू को ऐसा करना किसी प्रकार उचित नहीं।

ये सब बातें लिख कर अंत में आपने यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारांश निकाला है कि "इस विषय में महात्मा गांधी अथवा लोकमान्य तिलक का आदर्श चाहे जितना उच्च हो पर उसकी साधना उतनी सहज नहीं है। उनकी निर्वाचित हिंदीभाषा किसी प्रकार राष्ट्रभाषा नहीं हो सकती।" और भी "इसी से हमारा विश्वास है कि समस्त भारत में एक भाषा को हिमालय से लेकर कुमारी अंतरीप तक राष्ट्रभाषा रूप से प्रचलित कर सकना सहज साध्य नहीं होगा और उस उच्चासन को हिंदी वा उर्दू नहीं पा सकती।" (कदापि नहीं, उसे तो पावेगी आपकी प्यारी अंगरेजी, अथवा वह नहीं तो बँगला ही सही!) उपर्युक्त विवेचन को पढ़कर हमारे पाठक सहज ही में समझ जांयगे कि उसमें कितनी सचाई है, और उसका क्या महत्व है। पर आपके शब्दों को तो देखिए कि हिंदी किसी प्रकार राष्ट्रभाषा नहीं हो सकती, मानों ईश्वर ने आप के पास यह समाचार भेजा है कि हिंदी राष्ट्रभाषा न बन सकेगी। हम नहीं समझ सकते कि आपने किन प्रमाणों के बल पर एक नितांत अमूलक और महत्वहीन बात को इतने बलपूर्वक लिखा है। हमें इन सब बातों का कारण यही जान पड़ता है कि केशव बाबू को हिंदी की उन्नति नहीं सुहाती। उनको भय लग गया है कि कहीं यह उनकी पसंद की हुई अंग्रेजी को उच्चासन पर से ढकेल कर स्वयं उसपर अधिकार न कर ले। पर यह बात भी हिंदी के उन्नति करने का दृढ़ प्रमाण है।

आपके लेख का आशय और महत्व यही है। पर हिंदी की दशा को अच्छी तरह जानने-वाले सज्जन इसकी असत्यता को सहज ही में अनुभूत कर लेंगे। वास्तव में बाबू केशवचंद्र जी को हिंदी-संसार का हाल कुछ भी मालूम नहीं है और न वे उससे भलीभाँति परिचित हैं। क्या कोई जानकार पुरुष ऐसी ऊटपटाँग, आधारशून्य बातें लिखने का साहस करेगा? और तो क्या मैं बलपूर्वक कह सकता हूँ कि आपके लेख का मूल ही असत्यपूर्ण है। आप जो कहते हैं कि हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा न बनाई जाय, सो उसे कोई राष्ट्रभाषा बनावेगा क्या वह तो कई सौ वर्ष पहले राष्ट्रभाषा थी, अब भी है और रहेगी। यह जो आंदोलन हो रहा है वह केवल शिक्षित लोगों के लिए है जिससे देशके राजनैतिक, सामाजिक आंदोलनों तथा दूसरे जातीय कार्यों में वे इसका उपयोग करने लगें। साधारण पढ़ी लिखी और अपढ़ जनता जिसकी संख्या ९८. ९९ प्रतिशतक है अब भी राष्ट्रभाषा का कार्य हिंदी से ही लेती है। यह सच है कि वह हिंदी अशुद्ध बहुत होती है और उसमें उनके देश के भी कुछ शब्द मिले रहते हैं। 'अर्चना' संपादक किसी भी बड़े तीर्थ में जाकर इस बात की सचाई को जान सकते हैं। मैंने सैकड़ों बार ऐसे तीर्थों में भिन्न भिन्न प्रदेश-वासियों को हिंदी द्वारा अपने भाव प्रकट करते देखा है। किसी दूसरी भाषा में उनका परस्पर बात कर सकना असंभव है। स्वयं मद्रासी द्वारका हरिद्वार मथुरा, वृंदावन आदि में आकर हिंदी बोलते हैं। पर जब इस तरफ से साधू, यात्री आदि रामेश्वर को जाते हैं तब वे वहाँ तामिल तैलंग की जगह हिंदी में ही बात करते हैं। क्या इससे हिंदी की प्रधानता सिद्ध नहीं होती? प्रत्येक प्रसिद्ध तीर्थ के पंडे और दुकानदार हिंदी को थोड़ा बहुत समझ सकते हैं—वह तीर्थ चाहे जिस प्रांत में अवस्थित हो। इसके बिना उनका काम ही नहीं चल सकता। नए आए हुए अंगरेज यदि किसी अपढ़ भारतवासी से बात करेंगे तो हिंदी में ही, चाहे वह किसी भी प्रांत का क्यों न हो। इन बातों को जान कर कौन कह सकता है कि हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा नहीं है।

अंत में हमारा केशवचंद्र जी से यही कहना है कि उन्हें इस इस प्रकार का अनुचित तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्ण लेख लिखना कदापि उचित न था। की तो उन्नति होगी, वह थोड़े समय में त ही भारत की राष्ट्रभाषा बन जायगी, और के ग्राम ग्राम में भलीभाँति समझी जायगी। के वर्तमान लक्षणों तथा समय की आंतरिक का ज्ञान रखनेवालों को पूर्णरीति से मालूम कि उसका भविष्य अत्यंत उज्वल है। वह एक य संसार की प्रधान भाषाओं में समझी जाय कोई आश्चर्य नहीं। पर ऐसी अवस्था में एक तिसपर भी अपने को कुछ कुछ हिंदी प्रेमी ट करनेवाले को यह शोभा नहीं देता कि उस पर व्यर्थ ही झूठे सच्चे आक्षेप करे। कहाँ केशव बाबू को उसका पक्ष पुष्ट करना था ाँ उलटा वे लगे उसका खंडन करने। सज्जन, सहृदय ऐसी बात का अनुमोदन ी करेगा। हमारा श्रीयुत केशवचंद्र जी से विनय निवेदन है कि वे पुनः इस विषय पर चार करने का कष्ट उठाएँ और परम पूजनीया त्र प्रशंसनीय हिंदी भाषा के महत्व को समझ उसके हित-चिंतन में प्रवृत्त हों। थ में यदि कोई अनुचित बात इस लेख में वश लिख गई हो तो उदारतापूर्वक उसके र हमें क्षमा प्रदान करें क्योंकि यह सब च्छा होते हुए भी केवल कर्त्तव्य के अनुरोध लिखना पड़ा है। आशा है आप हमारे नम्र दन पर ध्यान देकर अवश्य अनुग्रहीत करेंगे।

बिहारी का आत्म-परिचय।

कुछ वर्षों की बात है कि शाहपुरा (राजपुताना) के एक कामदार इंदौर गए थे। वे अपने साथ एक प्रति विहारीसतसई की लेते गए थे। उसके साथ में एक "बिहारी बिहार" नाम का ग्रंथ लगा हुआ था। इसे पढ़ने के लिये पं० हरप्रसाद जी चतुर्वेदी जो उस समय इन्दौर में तहसीलदार थे बुलाए गए थे। चतुर्वेदी जी ने बिहारी-बिहार की नकल कर ली थी। उसकी एक प्रतिलिपि मुझे पं० बनारसी दास जी चतुर्वेदी की कृपा से थोड़े दिन हुए प्राप्त हुई। इसमें सतसई के रचयिता बिहारी लाल का जो कुछ वृत्तांत दिया है वह विचित्र है। पर घटनाएँ सब स्वाभाविक जान पड़ती हैं। मैं इस कविता को नीचे देता हूँ। मेरी प्रार्थना है कि हिंदी साहित्य के प्रेमी इसमें दी हुई बातों की जाँच करेंगे और देखेंगे कि वे कहां तक सच हैं। मैं भी उनके विषय में विशेष अनुसंधान कर रहा हूँ। मुझे जो कुछ पता लगेगा उसे मैं यथा समय प्रकाशित करूँगा।

यहां पर इतना और कह देना आवश्यक है कि पं० हरप्रसाद जी ने राज्य के कार्य से पेंशन ले ली है और वे इस समय इंदौर ही में रहते हैं। पं० बनारसीदास जी का पता "राजकुमार कालेज इंदौर" है। जो महाशय इन महानुभावों से इस संबंध में पत्र व्यवहार करना चाहें उनके सुभीते के लिये मैंने ये दोनों बातें लिखी हैं।

श्यामसुंदरदास।

बिहारी-बिहार।

[१]

राधा माधव रटत हैं प्रिय राधा के दास।
राधा भव बाधा हरौ राधा तिनके पास॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२]

काहू पुन्यनि पाइयतु पूत सपूत सुजान।
बिना भक्ति भगवान की, कूकर काग समान॥

[३]

पुत्र जु ताही कों कहत जो पितु आयसु पाल।
अनुचित उचित बिचार तजि बचन करै प्रतिपाल॥

[४]

नृप जजाति अरु परसुधर राम सत्य बागीस।
पितु आज्ञा सिर पर धरी लही परम आसीस॥

[५]

यहै जानि हमहूँ करी तात मात की सेव।
मम पितुमह वसुदेव जू पिता जु केशवदेव॥

[६]

बसत मधुपुरी मधुपुरी केशवदेव सुदेव।
नाम छः धरा गाइयतु चौबे माथुर देव॥

[७]

वेद जु पढ़ियतु सीखियतु ऋग पुनि परम पुनीत।
तीन मानियत प्रवर मम शख असुलायन प्रीत॥

[८]

नाम बिहारी जानियतु मम सुत कृष्ण जान।
रवितनया पूजिय सुभग लहियत शुभ बरदान॥

[९]

तीरथवासी वृत्ति है आकाशी कहि जाय।
मगन रहत सन्तोष सों यह धन परम कहाय॥

[१०]

सम्बत जुग शर रस सहित भूमि रीति गिन लीन्ह।
कातिक सुदि बुध अष्टमी जन्म हमहिं विधि दीन्ह॥

[११]

श्रवण नक्षत्रहि पाइयतु मीन लग्न परमान।
भैया बंधन सुख बढ़ो पितर अधिक हरखान॥

[१२]

एक समय मम पितु सहित गए वृन्दावन धाम।
रुद्र वर्ष की आयु में दर्शन लहे सुठाम॥

[१३]

टट्टी नाम बखानियतु जमुना मैया पास।
आश्रम दिखियो जाय के श्री स्वामी हरिदास॥

[१४]

नागरिदास जु राजियत कहियत जिनहिं महंत।
नाम सरिस महिमा लही पूजहिं संत अनंत॥

[१५]

हम कीन्हों परनाम उन दइ असीस हरखाय।
तब तातहिं पूछी कुशल यह सुत किहि कहि जाय॥

[१६]

दास दास है आपु को कहि दीन्हीं सब बात।
दिय परसाद प्रसन्न ह्वै आनँद उर न समात॥

[१७]

या गादी के दास हैं विप्र मथुरिया जान।
चौबे इहि गादी भए संत महंत सुजान॥

[१८]

उन पितु सों गाथा कही पठइय सुत मम पास।
संत गुनीजन रहत ह्याँ सब विधि परम सुपास॥

[१९]

आयसु उनकी सिर धरी रहे तहाँ हम जाय।
विद्या काव्य अनेक विधि पढ़ो परम सचु पाय॥

[२०]

स्वामी की आसीस सों भए सब पूरन काम।
गान ताल सब सीखियो जपत रहे हरि नाम॥

[२१]

निज भाषा अरु संस्कृत पढ़ि लीन्हीं बहु भाँति।
सुखी भये माता पिता सखा मित्र अरु जाति॥

[२२]

एक समय सरताज़ जू शाहजहाँ सुलतान।
आए इहि स्थान में कीन्हों बहु सन्मान॥

[२३]

राग रागिनी सुनि लिये पंच शब्द परकार।
तब कविता की कहि दई स्वामी गुन आगार॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२४]

उनकी कविता करी भए प्रसन्न बड़ भाव।
तन कही हमसों तबहि अर्गलपुर में आव॥

[२४]

य आगरे जमुन तट दुर्ग अगम आगार।
से तहाँ बहुकाल पुनि करि कविता विवहार॥

[२५]

ही पारसी शाह की गज़ल गीत अरु सेर।
त सुनत सो रात कों दिवस गए बहुतेर॥

[२७]

जो जन्मो शाह के बजी बधाई देस।
प दीप में बड़ हरख रावत राव नरेस॥

[२८]

हि समय बावन नृपति भारत के तहँ आव।
हंशाह हमें कही कविता सबहिं सुनाव॥

[२९]

रचि पचि कविता कही शाह सराही ताहि।
हे भूप दरबार में मन में सब हरखाहि॥

[३०]

हजहाँ की साहिबी लाल बिहारी मान।
न मणि भूषण को गनै पायौ बहु सन्मान॥

[३१]

रत के बावन नृपति रहे आगरे माँहिं।
नद दिवाई सबनु सों साहिब आपु सिहाहिं॥

[३२]

र्सन सबने करे यथाशक्ति शुभ काम।
य अमेर भुआल जू मिर्ज़ा राजा नाम॥

[३३]

र्सिंह जू जयशाह जू शाह दियौ उपनाम।
पुंज कहियत सुभट प्रथम लीक भट दोम॥

[३४]

र्सन के लेन कों साल साल हम जाहिं।
र समय आमेर में गए रहे नृप पाहिं॥

[३५]

मास दोय लग तहँ रहे काहु न पूछी बात।
राजा के चाकरन सों लगी न एकौ घात॥

[३६]

भूपति इक रानी बरी शुठि सुन्दर शुभ धाम।
रही नवोढ़ा आयु की भूपति पीड़ित काम॥

[३७]

फँसे तासु के फन्द में अलि गति ज्यों मड़रात।
राज काज सब बिसरि गो बात न कछु कहि जात॥

[३८]

तब हम इक रचना रची पासवान गुणवान।
दोहा लिखि धर्यौ सेज पर भूप कही इहि आन॥

[३९]

रंगमहल में लै गए राजत जहँ जयशाह।
अदब कायदा करि सकल बोले नृप यह काह॥

[४०]

कविता करौ कवीश जू हम प्रसन्न जिय जान।
रची सतसई विविध विधि ब्रजभाषहिं दै मान॥

[४१]

औरों रस यामें धरे सरिस अधिक शृंगार।
भूपति की जो भावना समय सोच व्यौहार॥

[४२]

दोहा एक हि एक पर मिली मुहर सुख पाय।
आशा तब ही बढ़ि गई तृष्णहु भई सहाय॥

[४३]

चारि पाख के माँझ में कविता को रचि दीन्ह।
हुकुम पाय जयशाह को नगर पयानो कीन्ह॥

[४४]

डोरी लागी प्रेम की वृन्दावन के माँहिं।
आए स्वामी थान में सुखयुत जन्म सिराहिं॥

[४५]

कविता अन्यहु नृपन की करी विविध विस्तार।
इहि विधि मान न पाइयो जो जयसिंह दरबार॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४५]

कविता सों मन हटि गयौ लगौ कान्ह सों ध्यान।
लाल बिहारी ह्वै गए दास बिहारी मान॥

[४६]

भजन समय को सुभग लखि कृष्ण भजे कल्यान।
बिहारी बिहारी (?) सेइयो स्वामी स्वामी जान॥

[४८]

संवत् छिति अम्बक जलँधि शशि मधु मास बखान।
शुक्ल पक्ष की सप्तमी सोमवार शुभ जान॥

[४९]

कविता मानव करि चुके विबुध काव्य सों काम।
बिहारी बिहारी (?) के भए जपौ बिहारी नाम॥

मद्रास में हिंदी-प्रचार।

मद्रास में हिंदी-प्रचार करने के लिये मुझे इस समय योग्य अध्यापकों की बड़ी जरूरत है। यदि देशहित के भावों से पूर्ण योग्य अध्यापक मेरी सहायता करने के लिये यहाँ पहुँच जायँ तो खास शहर मद्रास के प्रत्येक मुहल्ले में हिंदीवर्ग बड़ी आसानी से खुल सकते हैं। जो देशभक्त सज्जन इस पवित्र कार्य में मेरा हाथ बटाना चाहें उनके सूचनार्थ निम्नलिखित बातें लिखता हूँ।

(१) मद्रास में हिंदीशिक्षक को चालीस रुपया मासिक मिलेगा।

(२) कम से कम आठ महीने तक यहाँ काम करना होगा।

(३) रेल का तीसरे दरजे का किराया आने जाने का दिया जायगा।

(४) शिक्षक को आठ महीने से पहले घर जाने की आज्ञा न मिलेगी।

(५) शिक्षक शुद्ध हिंदी बोल, लिख और पढ़ सकता हो। उसको अंगरेजी बोलने का अच्छा अभ्यास होना चाहिए जिसमें वह विद्यार्थियों की शंकाओं का समाधान अंगरेजी में भले प्रकार कर सके। यदि अंगरेजी में व्याख्यान दे सकता हो तो और भी अच्छा है।

(६) शिक्षक मरा हुआ, सुस्त और जन्म-रोगी न हो। उसमें देशभक्ति कूट कूट कर भरी हो जिसमें वह अपने विद्यार्थियों पर हिंदी की राष्ट्रीय-शक्ति का प्रभाव डाल सके।

(७) शिक्षक को प्रत्येक प्रकारकी असुविधा सहन करनेके लिये तैयार रहना पड़ेगा। अपने स्थान से तीन चार मील दूर रातके समय पढ़ाने जाना पड़ेगा—पैदल नहीं बिजली की ट्राम-गाड़ी पर।

यहाँ जाड़ा बिलकुल नहीं पड़ता।

(८) इसका यत्न किया जायगा कि शिक्षक को रहने का स्थान मुफ्त मिले और अभी तक मैंने ऐसा ही किया है। पर शायद कभी कुछ दिन के लिये किराया देना पड़ जाय।

हिंदी-भाषा-भाषियो! मद्रास में आपके हिंदी प्रेम की परीक्षा है। कांग्रेस के अवसर पर राष्ट्र भाषा-सम्बन्धी प्रस्ताव पास कर लेने से हिंदी राष्ट्रभाषा नहीं हो सकती। हिंदी के लिये कुछ त्याग चाहिए। यदि आपके हृदय में माता का शुद्ध प्रेम है तो उसके सच्चे सपूत और सेवक बनने का दृढ़ संकल्प कीजिए। अपने सुखों पर लात मार कर अपने कर्तव्य पर आरूढ़ हो जाइए। अन्य भाषा-भाषी आपकी ओर देख रहे हैं। अगर इस समय आपने अपना कर्त्तव्य पालन न किया तो पीछे यह कार्य अत्यंत कठिन हो जायगा। इस समय समय हमारे अनुकूल है। महात्मा गांधी हमारे साथ हैं। ऐसा लीडर बार बार नहीं मिला करता।

सत्यदेव परिव्राजक,
हिंदीप्रचार आफ़िस, मद्रास।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शाहजहाँ के समयकी कुछ बातें।

(२)

शाहजहाँ ने अपने एक पहरेदार को किसी लड़ाई पर जानेका हुक्म दिया और उसके अधीन सेना भी कर दी। लड़ाई में उसकी जीत हुई और वह बड़े आदर और ठाट बाट के साथ दरबार में लाए जाने का हुक्म हुआ। शाही हकीम को छोड़ सब उमरा, दरबारी और मुसाहब उसकी अगवाई के लिए दरबारसे उठकर बाहर गए। हकीम के इस व्यवहार से उसे बड़ा दुःख हुआ और वह आप उससे उसके घर मिलने गया। हकीम ने उसके रुतबे का कुछ भी ख्याल न किया और अपने नौकर से उसे अन्दर बुलवा भेजा। सेनानायक ने उसको चुपचाप बैठ कर कुछ सोचते हुए पाया। शाही हकीमने उठ कर उसे अपने पास बैठाया तो ज़रूर लेकिन इससे ज्यादा कुछ और उसकी ख़ातिरदारी न की। सेनानायक को इस बात की प्रतीक्षा ही करता रह गया कि हकीम अपनी अशिष्टताके लिए उससे क्षमा माँगे और उसकी खुशामद करे। क्षमा माँगना और खुशामद करना तो दूर रहा वह उसकी तरफ़ मुखातिब भी न हुआ। जब तक वह बैठा रहा तब तक अपने काम में बराबर लगा रहा। सेनापति उससे विदा हो कर बादशाह से मिलने गया और अपने हकीम की उससे खूब शिकायत की। शाहजहाँ ने नाराज़ हो कर हकीम से अपने एक लब्ध प्रतिष्ठ उच्च पदाधिकारी के अपमान करने का कारण पूछा।

हकीम ने जबाब दिया कि 'जहाँपनाह! अपने गुलाम के पद तक जिसे चाहे उसे पहुँचा सकते हैं लेकिन ऐसे किसी एक को भी मेरे जोड़ का हकीम नहीं बना सकते क्योंकि मुझे विद्योपार्जन और योग्यता-सम्पादन में पूरे चालीस वर्ष लगे हैं।"

शाहजहाँ कुश्ती देखने का भी शौक़ीन था। देश २ के पहलवान उसके सामने कुश्ती लड़ कर अपना जौहर दिखलाते और इनाम पाते थे। शेर के शिकार में भी बादशाह का बहुत जी लगता था। इसके लिए उसने लंबी सींगवाले बहुत से भैंसे पाल रक्खे थे। ये जानवर बड़े मज़बूत और शिकार में बड़े काम के होते हैं। जब बादशाह शिकार खेलने बाहर जाना चाहता है तब शिकारियों को इस बात की सूचना पहले ही से दी जाती है। इन शिकारियों का काम जंगल में गदहे, गाय और भेड़ छोड़कर चीते के रहने की जगह का पता लगाना है। बादशाह अपने सब से बड़े हाथी पर सवार हो आखेट को जाता है और उसके साथ शाहज़ादे, उमरा और बहुत से राजा महाराजा भी हो लेते हैं।

ये जंगल को जाल से घेर देते हैं। बादशाह और शिकारियों के आने जाने के लिए इस जाल में एक छोटा सा छेद बना रहता है और बाहर इसके चारो तरफ़ सिपाहियों की एक क़तार खड़ी की जाती है। यह जाल इतना ऊँचा और मज़बूत होता है कि चीता इसे फाँद या तोड़ कर किसी प्रकार बाहर नहीं निकल सकता है। इस लिए जाल के चारो तरफ खड़े हुए सिपाही जाल के नज़दीक आने पर चीतेको जख्मी नहीं कर सकते हैं और चीता भी उनको नुक़सान नहीं पहुँचा सकता है। आखेट को बादशाह की सवारी जिस ढंग से निकलती है उसका पूरा बयान नीचे दिया जाता है:—

सब से आगे ब्यूह बना कर सौ या इससे अधिक भैंसे चलते हैं। हर एक भैंसे पर एक आदमी, जिसकी टाँगे चमड़े से ढकी रहती हैं, अपने एक हाथ में चौड़े धार की तलवार लेकर और दूसरे से भैंसे की नकेल पकड़ कर सवार होता है। भैंसे के पीछे हाथी पर सवार होकर बादशाह और उसके पीछे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शाहज़ादों और बड़े आदमियों का समूह चलता है। जब ये लोग जंगल में पहुँचते हैं तब भैंसों का अर्द्धचन्द्राकार एक व्यूह बना कर धीरे २ आगे बढ़ते चले जाते हैं और जब चीतों को देख पाते हैं या गंध से उनका पता लगा लेते हैं तब एक मंडल बाँध कर उन्हें चारो तरफ़ से घेर लेते हैं। इस प्रकार जाल से घिरा हुआ हर एक चीता छलांग मार कर बाहर निकलने की कोशिश करता है। ज्योंही वह झपटता है त्योंही भैंसे बड़ी ही होशियारी से उसे अपनी सींगों पर ले लेते हैं और अपने सिर को हिला २ कर मार डालते हैं।

लेकिन अगर कोई चीता उनकी सींगों से बच जाता या अपनी जगह से हिलना नहीं चाहता है तो बादशाह उस पर गोली चला कर या तो खुद उसे मार डालते हैं या किसी दूसरे को उसे मारने का हुक्म देते हैं।

कभी २ ये लोग आखेट में अपने साथ भैंसे नहीं रखते बल्कि हाथियों पर सवार हो कर शिकार खेलने जाते हैं। एक दफ़ा की बात है कि शाहजहाँ हाथी पर सवार हो शिकार खेलने गया। एक घायल चीता उसकी तरफ़ झपटा और उछल कर उसके हाथी के मस्तक पर जा पहुँचा। महावत भयभीत हो कर ज़मीन पर आ गिरा। बादशाह ने अपनी जान ऐसी आफ़त में फँसी हुई देख चीते के सिर पर अपनी बन्दूक के सिरे से प्रहार किया लेकिन चीते ने अपने अगले पंजों को हाथी के सिर में धँसा कर उसे विह्वल कर दिया और वह अपने पिछले पंजोंसे उसकी सूँड़ पकड़ कर लटक गया। इस अवसर पर हाथी ने अपनी बुद्धिमानी से अपने मालिक की और अपनी दोनों की जान बचाई। अपनी सूँड़ को बेकाम देख वह बड़े वेग से दौड़ कर एक वृक्ष के पास गया और उसमें धक्का देकर उस चीते को कुचल डाला। इस दुर्घटना के बाद शाहजहाँ शिकारी हाथियों के सिर और सूँड़ को मोटे चमड़े के एक पर्त से जिसमें तेज़ कीलें जड़ी रहती थीं ढकवा रखता था। शिकार में बादशाह के साथ शिकारियों के सिवा उसका एक प्रधान कर्म्मचारी भी रहता है जो मारे हुए शेर की मूँछें उखाड़ उन्हें अपने पास रख लेता है। ज्यों ही शेर मारा जाता है त्यों ही उसके सिर से गरदन तक चमड़े की एक थैली लटका दी जाती है। थैली को बाँध कर कर्म्मचारी उस पर अपनी मोहर लगाता है। इसके बाद शेर शाही तंबू के भीतर लाया जाता है और उसकी मूछें जो विष के काम में लाई जाती हैं उखाड़ ली जाती हैं।

संसार से यह बात छिपी नहीं है कि मुसलमान प्रायः इन्द्रियलोलुप होते हैं। ये सदा विषयों के पीछे दौड़ते फिरते हैं और इनके हृदय में दुर्वासना की वह भयानक आग लगी रहती है कि जिसे बुझाने के लिए ये अनेक प्रकार के दुष्कर्म्म और अत्याचार करते हुए पाये गये हैं। केवल सांसारिक सुखों को प्राप्त कर लेना ही इनका परम पुरुषार्थ है और इनकी दृष्टि में उसी मनुष्य का जीना सार्थक है जो सब झंझटों से दूर हो अपनी पाशव वृत्तियों को चरितार्थ करने में निरन्तर लगा रहता है।

मुसलमानों के इतिहास में ऐसे बादशाहों को खोज निकालना जो प्रजा-पालन में सदा तत्पर रहना, देश में सुशासन और शान्ति स्थापित रखना, और ऐसे कामों में योग देना जिनसे लोक-हित-साधन हो अपना कर्त्तव्य समझते थे एक आसान बात है। इनमें शूर, प्रतापी और बुद्धिमान् बादशाहों की भी कमी नहीं है किन्तु ऐसे चरित्रवान् और सदाचारी बादशाहों का प्रायः अभाव ही है जिनका आचरण सर्वथा निर्दोष और शुद्ध रहा हो। मुसलमान बादशाह और अमीर प्रायः ऐसे दुर्वृत्त और विषयासक्त होते हैं कि उनकी विषयतृष्णा बुझाने के लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चार स्त्रियां काफी नहीं होतीं। ये इन्द्रिय-सुख की प्राप्ति के लिए अनेक प्रकार के उपाय किया करते हैं।

शाहजहाँ बादशाह भी इस विषय में अपने समकालीन मुसलमानों से पीछे नहीं थे। महल में सारी बेगमों के रहते हुए भी उन्होंने अपने दरबार के उच्च कर्म्मचारियों की स्त्रियों के साथ भी दांपत्य संबंध जोड़ रक्खा था। इसी दुर्वृत्ति के कारण आगे चल कर बादशाह की बड़ी दुर्गति हुई।

बादशाह जाफर ख़ाँ नामक अपने एक उच्च कर्मचारी की स्त्री के प्रेम में बेतरह फँस गया था। उसके अनिवार्य प्रेमके कारण कर्मचारी की जान पर आ बनी। स्त्री शाहजहाँ के रंग ढंग से भांप गई कि वह उसके पति की जान का गाहक हो रहा है। इसलिए उसने बादशाह से विनय की कि यदि मेरा पति हाकिम बना कर पटने भेज दिया जाय तो भी आपका मनोरथ पूरा हो सकता है। कहना नहीं होगा कि शाहजहाँ ने बिना कुछ समझे बूझे उसकी बात मान ली। बादशाह का कुछ काल तक खलीलुल्ला ख़ाँ की स्त्री के साथ भी इसी प्रकार का संबंध था। इस स्त्री ने अपने इस अपमान का दारा से बदला चुकाया। आगे चल कर मैं इसका पूरा हाल बयान करूँगा।

यहाँ एक छोटी सी सच्ची घटना का उल्लेख करना अनुचित न होगा क्योंकि आशा है उससे शायद पाठकों का कुछ मनोरंजन हो।

किसी गुप्तचर ने शाहजहाँ से आकर यह बात कही कि खलीलुल्लाह ख़ाँ की स्त्री की जूती का दाम तीस लाख रुपया है और उसमें अनेक बहुमूल्य रत्न जड़े हुए हैं। जब ख़लीलुल्लाहख़ाँ दरबार में आया तब बादशाह उस पर बहुत नाराज़ हुआ और उसको धमकाने लगा। उसने कहा कि "तुमने प्रजा को लूट कर अपना घर भर लिया है क्योंकि मुझे एक विश्वस्त मार्ग से पता लगा है कि तुम्हारी स्त्री जो जूती पहनती है सो कई लाख के लागत की है। क्या यह इस बात का प्रमाण नहीं है कि तुम्हारे पास बहुत धन है? याद रक्खो तुमको अपनी लूट का हिसाब देना होगा।" ख़लीलुल्लाहख़ाँ बहुत देर तक चुपचाप खड़ा हो कर सुनता रहा और कुछ जवाब न दे सका। लेकिन उसके एक दोस्त ने उसकी तरफ़ से जवाब देने की बादशाह से इजाज़त माँगी। आज्ञा मिलने पर उसने कहा कि जहाँपनाह को ख़लीलुल्लाहख़ाँ से हिसाब लेने की तकलीफ़ उठाने की ज़रूरत नहीं है क्योंकि उसकी स्त्री उसके मुँह पर रोज जूतियाँ लगाती है और इस प्रकार उसकी सारी पूँजी उसे लौटा दिया करती है यह सुनकर शाहजहाँ ने अपना सिर नीचा कर लिया और मन ही मन हँसते हुए ख़लीलुल्लाह ख़ाँ से कहा "मैं समझता हूँ इस अपमान से तुम्हारी काफ़ी सज़ा हो चुकी"। ऐसी मित्रता निबाहने पर वहाँ जो लोग उस समय उपस्थित थे वे सब के सब हँस पड़े। खलीलुल्लाह ख़ाँ लज्जित हो कर दरबार से उठ गया और बाहर जाकर अपने मित्र से झगड़ने लगा। उसके मित्र ने उसके साथ अपनी हार्दिक सहानुभूति प्रकट की और वह समझा बुझा कर उसे शान्त करने की चेष्टा करने लगा। उसने कहा- "मुझको इसका बहुत खेद है कि मैंने आज बादशाह के सामने तुम्हारा इतना अपमान किया किन्तु साथ ही इस बात का हर्ष भी है कि किसी प्रकार तुम्हारी जान तो बच गई। बादशाह के सामने तुमको चुपचाप खड़ा देख कर मुझे बड़ी चिन्ता हुई और मैं तुम्हारे बचाने की तदबीर सोचने लगा लेकिन उस समय दूसरा कोई उपाय मुझे न सूझ पड़ा। मैंने देखा कि यदि तुमसे उसकी बातों का ठीक जवाब न देते बना तो वह तुमको जीता न छोड़ेगा, अतएव विवश हो कर तुम्हारे साथ इस तरह पेश आना पड़ा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने इस अपराध को मैं स्वीकार करता हूँ और इसके लिए हृदय से क्षमा चाहता हूँ।" खलीलुल्ला खाँ ने अपनी यह बदनामी उस समय तो चुपचाप झेल ली लेकिन उसके दिलमें वह बराबर काँटे सी खटकती रही और वह उस दिन से बादशाह के सर्वनाश पर जी जान से उतारू हो गया।

ऐतिहासिक ग्रंथों के लिखने में भी मुसलमान प्रायः अपनी कल्पनाशक्ति से मनमाना काम लेते हैं। ये न तो ऐतिहासिक विषयों के मनन और अनुशीलन का सच्चा प्रयास उठाते हैं और न किसी ऐतिहासिक घटना के मूल कारणों का अनुसंधान कर उसका शुद्ध ज्ञान प्राप्त करने की परवा करते हैं। लोगों से सुनी सुनाई बातों के आधार पर जो मन में आता है वही लिख मारते हैं। इनके ग्रन्थों में मनगढ़ंत बातों की इतनी भरमार है कि सर्वसाधारण का भ्रम में पड़ जाना संभव है। इसीसे कभी २ इनमें लिखी हुई सच्ची बातों पर भी आस्था नहीं होती। वास्तव में मुसलमानों के समय का सच्चा इतिहास जानने के लिए उनके लिखे हुए ऐतिहासिक ग्रन्थ हमारे किसी काम के नहीं। कोरे साहित्य की दृष्टि से देखा जाय तो वे अवश्य उपयोगी और बहुमूल्य प्रतीत होंगे किंतु यदि इतिहास की दृष्टि से उनकी आलोचना की जाय तो उनका कुछ भी मूल्य न ठहरेगा। उनकी शैली ही कुछ ऐसी निराली है कि वह ऐतिहासिक रचना के सर्वथा अनुपयुक्त और प्रतिकूल है। उक्त ग्रंथों में एक बड़ा भारी दोष यह भी है कि उनमें कहीं २ जातीय पक्षपात और व्यक्तिगत द्वेष के छींटे भी नज़र आते हैं। इन अनेक कारणों से वे कभी इतिहास की कोटि में स्थान पाने के योग्य नहीं ठहर सकते हैं और उनका नाम ऐतिहासिक ग्रंथों के साथ नहीं लिया जा सकता है।

हरिश्चंद्र शुक्ल।

प्राचीन काल में भारतीय संस्कार का विस्तार।

(२)

मतों और संप्रदायों की दृष्टि से किसी देश की स्थिति के संबंध में विचार स्थिर करना बड़ी भारी भूल है। ईसा मसीह की शिक्षा है कि "ईश्वर का राज्य तुम्हारे भीतर है।" इस शिक्षा के अनुसार योरप के ईसाइयों को चुपचाप संतोष किए पड़ा रहना चाहिए था पर राज्य के लिए वहाँ बराबर बड़े बड़े युद्ध होते चले आ रहे हैं। बिना बिस्मार्क की नीति पर ध्यान दिए केवल फ़िक्टे और शोपेनहावर आदि दार्शनिकों और गेटे ऐसे कवियों की भावनाओं पर दृष्टि डालने से जर्मन जाति की मति गति समझ में नहीं आ सकती। राजनैतिक व्यवस्था द्वारा ही जनता की सामान्य प्रवृत्ति का पता चलता है। इसी से तीन सौ वर्ष पहले चीन और भारत की जो स्थिति थी वह बिना हांग-टी की रणनीति, कौटिल्य की राजनीति और अशोक की धर्म व्यवस्था की ओर ध्यान दिए समझ में नहीं आ सकती। पर योरोपीय लेखकों ने भारतवर्ष की स्थिति का विचार केवल बड़े बड़े मतप्रवर्त्तकों और दार्शनिक आचार्य्यों की पारलौकिक दृष्टि से किया है, बड़े बड़े राज्यस्थापकों और नीतिज्ञों को जान बूझ कर अपनी दृष्टि से दूर रखा है। भारत और चीन की सभ्यता के इतिहास में चंद्रगुप्त, अशोक, शी-ह्वांगटी और वू-टी ऐसे ही प्रभावशाली नाम हैं जैसे शाक्यसिंह, महावीर, कनफूची और लाओज़।

पश्चिमी एशिया और भारतवर्ष में परराष्ट्र-संबंध भावना।

यूनान के छोटे छोटे नगर-राज्य सिकंदर के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ता की छत्र-सत्ता के सामने अपनी स्वाधीनता र न रख सके। अतः सिकंदर के हाथ में क विस्तृत राज्य आया। उसे ख़ास यूनान के चार विचार और भावनाओं से रुचि न थी। नानी संस्कार उसके चित्त में नहीं था। उसने ला काम तो यह किया कि पंचायती राज्य-वस्था तोड़ी और लोगों के बीच से जातीयता र स्वदेशभक्ति के संकुचित भावों को दूर या। इसके उपरांत वह दिग्विजय के लिए कला। यह दिग्विजय शस्त्र और शास्त्र दोनों संबंध रखता था। उसके साथ विद्वानों और ज्ञों की पूरी मंडली थी जो जिन जिन देशों से कर जाती थी उन उन देशों की प्राकृतिक स्था, रीति नीति, कला कौशल आदि की छान न करती जाती थी। सिकंदर ने अपने गुरु रस्तू की छोटे छोटे स्वतंत्र नागरिक राज्यों की स्था को तो नहीं माना पर उसकी तारतम्य तक तर्क प्रणाली आदि से पूरा काम लिया। हाँ जहाँ वह गया उसने पूर्व पश्चिम के बीच रिवारे और रोटी बेटी का संबंध स्थापित रने का उद्योग किया तथा भिन्न भिन्न देशों के ान विज्ञान के मिलान और एकता के लिए स्थान स्थान पर पुस्तकालय, अजायबघर और उद्यान नवाए। वह मार्ग भर में अपने नाम पर नगर स्कंदरिया) बसाता गया। ये नगर बहुत नों तक एशिया और योरप के मिलाप के केंद्र हे। इनमें योरप और एशिया के निवासी मिल र कर रहते थे, परस्पर विवाह-संबंध करते थे र एक दूसरे की सभ्यता और कला कौशल को हण करते थे।

सिकंदर संपूर्ण देशों की सभ्यता को मिला र एक सभ्यता स्थापित करना चाहता था। सका यह सार्वभौम भाव एक बिल्कुल नई बात थी। भिन्न भिन्न देशोंके बीच उसने जो संबंध-सूत्र स्थापित किया उसका पश्चिमी एशिया, मिस्र और यूनान पर बड़ा प्रभाव पड़ा।* यूनान, मिस्र, फ़ारस इत्यादि के बीच एक दूसरे की विद्या, कलाकौशल, सभ्यता आदि का खूब प्रचार हुआ। यूनानी हकीमों का ज़िक्र अरब और फ़ारसवालों ने अपनी किताबों में इस प्रकार किया है मानो वे उन्हींके बीच उत्पन्न हुए थे, योरप में नहीं।

ऐसा जान पड़ता है कि चन्द्रगुप्त जब पंजाब में अपने उद्देश्यसाधन के निमित्त इधर उधर टक्करें मारता फिरता था उस समय इस महाविजयी की भिन्न भिन्न देशों के बीच संबंध स्थापित करने की भावना का उस पर प्रभाव पड़ा होगा। इसी से उसने सिल्यूकस की कन्या के साथ विवाह किया। एक हिन्दू सम्राट् का एक यवन-राज कन्या के साथ विवाह करना भारत के इतिहास में वैसा ही विलक्षण है जैसा विदेशियों को निकालना;† पर उस समय से इस प्रकार के संबंध भारत में बराबर होने लगे। पाटलिपुत्र राजधानी भिन्न भिन्न देशों के लोगों का समागम स्थान थी। दूर दूर देशों के राजदूत वहाँ आकर इकट्ठे होते थे। सुदूर गंगातटस्थ इस नगर में न जाने कितने यूनानी शिल्पी और कारीगर राजसेवा में रहे होंगे, न जाने कितने यूनानी यवन-राजकन्या और राजदूत के साथ रहते होंगे।

---

* फारसवालों से सिकन्दर इतना हिलमिल गया कि वे उसे अपना ही समझने लगे। शाहनामे में फ़िरदौसी ने सिकंदर को दारा का भाई कल्पित किया है। सिकंदर ने पारसी रमणी रुखसाना से विवाह तो किया ही था वह चुस्त यूनानी पहनावा छोड़ ढीलाढाला पारसी पहनावा भी पहनने लगा था। संपादक।

† सिकंदर पंजाब में एक यवन शासक के अधिकार में बहुत से यूनानी छोड़ गया था। चंद्रगुप्त जब सिंहासन पर बैठ गया तब चाणक्य ने उससे पहला काम यह कराया कि पंजाब से यूनानियों को निकलवा दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मि० स्मिथ ने अपने इतिहास में लिखा है कि मौर्य्य साम्राज्य के साथ विदेशीय राज्यों का बराबर व्यवहार रहा, न जाने कितने विदेशी कार्य्यवश राजधानी में टिके रहते थे। सब विदेशियों पर देख रेख रखने के लिये राजकर्म्मचारी नियुक्त थे जो उनके ठहरने का, आराम पहुंचाने का और आवश्यकता पड़ने पर चिकित्सा आदि का प्रबंध करते थे। पारसियों के साथ तो यूनानियों से भी अधिक घनिष्ठ संबंध था।

यह परराष्ट्र-संबंध चंद्रगुप्त के पीछे उसके उत्तराधिकारियों के समय में भी बराबर बना रहा। लायड अपने The creed of half Japan नाम की पुस्तक में लिखते हैं कि जब चंद्रगुप्त का पुत्र बिंदुसार (२९७ ई० पू० से २७२ ई० पू० तक) राज-सिंहासन पर था तब मिस्र के बादशाह ने डायोनिसस को राजदूत बना कर पाटलिपुत्र भेजा था। उसने एक बार शाम के बादशाह अंटिओकस के पास एक पत्र भेजा था जिसमें उसने यूनानी (यवन) भाषा का एक पंडित माँगा था। यूनानी लेखकों ने लिखा है कि अंटिओकस ने 'अमित्रघाती' की संस्कृत उपाधि ग्रहण की थी।

अशोक बड़ा भारी परराष्ट्र-संबंध-स्थापक हुआ है। उसे सार्वभौम सम्राट् होने की अभिलाषा थी। उसके तेरहवें अभिलेख में इस बात का उल्लेख है कि उसने शाम, मिस्र, मकदूनिया, इपिरस और कायरिन के बादशाहों, दक्षिण भारतके चोल और पांड्य राजाओं तथा सिंहलद्वीप के राजा के पास अपने राजदूत भेजे थे। उसके दूत कोरे धर्मोपदेशक नहीं थे व्यवहारकुशल राजपुरुष थे। वे भारतके सेंट अगस्टाइन और सर टामस रो दोनों थे। जिस प्रकार अशोक में पोप और सीज़र दोनों के गुण थे उसी प्रकार उसके भेजे दूत भी महंत और शूरसामंत दोनों थे। मि० लायड अशोक के दूत भेजने के संबंध में लिखते हैं—"संसार के भिन्न भिन्न देशों के राजाओं और निवासियों को अशोक ने जो संदेसे भेजे थे उनमें दो उपदेश मुख्य थे—प्रजा की स्वास्थ्यरक्षा और सुख का ध्यान रखना और अपने ऊपर सच्ची विजय प्राप्त करना, अपनी वासनाओं का दमन करना। उसने उन यूनानी व्यापारियों का ज़िक्र किया है जो भारतवर्ष में भ्रमण और व्यवसाय करते थे और जिनके उत्सर्ग किए हुए लेख प्राचीन बौद्ध मंदिरों में पाए गए थे।"

अशोक ने शाम के बादशाह अंटिओकस से जड़ी बूटियों के संग्रह में सहायता चाही थी। अंटिओकस ने गाल और सेल्ट नामक यूरप की बर्बर जातियों के साथ जो लड़ाइयाँ की थी उनमें हाथियों से काम लिया था। ये हाथी उसे अशोक के पिता बिंदुसार से मिले थे। मकदूनिया में उस समय ऐसे न जाने कितने लोग थे जो मध्य एशिया और भारत वर्ष में हो आए थे। उस समय इन प्रदेशों में यूनानियों का आना जाना बहुत रहता था। पश्चिम के लोग उस समय भारतवर्ष की बातों को बड़े आदर की दृष्टि से देखते थे। प्रसिद्ध दार्शनिक आरिस्टिटयस ने अपने सिद्धांतों के स्पष्टीकरण के लिए जो संवाद दिए हैं उनमें पोरस का नाम भी आया है जो भारत के एक प्रसिद्ध राजवंश (पौरव) का नाम है।

इस्कंदरिया से हिंदुस्तान आने जाने के लिए तीन मार्ग थे। चीन से कुछ व्यापार की चीज़ें तो फ़िलस्तीन हो कर इस्कंदरिया पहुँचती थीं। इसके अतिरिक्त भारतवर्ष का बहुत सा माल फ़ारस की खाड़ी हो कर भी फ़िलस्तीन और इस्कंदरिया पहुँचता था। ये तो स्थल-मार्ग हुए। समुद्र के मार्ग से भी भारतवर्ष व्यापार के लिए खुला हुआ था। लाल समुद्र के किनारे जो मिस्र के बंदरगाह थे उनसे सिंधु के मुहाने पर के भारतीय बंदरगाहों से पूरा व्यापार होता था।

विदेशों से संबंध अशोक के पीछे भी बहुत दिनों तक जारी रहा। २०० ईसवी पूर्व से लेकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

० ईसवी तक भारतीय व्यापार की जो स्थिति
उसके संबंध में इंपीरियल गज़ेटियर (भाग २)
लिखा है—"स्थल और समुद्र दोनों मार्गों से
मी एशिया, यूनान, रोम और मिस्र तथा
न आदि पूरबी देशों के साथ व्यापार होता
। कुशनों के राजत्वकाल में भारतवर्ष के उत्तर
म प्रांत से बहुत सी व्यापार की चीज़ें रोम
र को जाती थीं।

मध्य एशिया और चीन।

चीन के प्राचीन इतिहास से इसका साफ़
फ़ पता नहीं चलता है कि चीन का किन किन
ों के साथ सम्बन्ध था। पर विद्वानों ने सिद्ध
या है कि गौतम बुद्ध और कनफूची के पूर्व से
नियों का हिन्दुओं के साथ सम्बन्ध चला आता
। ज्योतिष की बहुत सी क्रियाएँ, मंत्र तंत्र के
ोग और ताओ के आध्यात्मिक विचार अन्य
ों से ही चीन में गए प्रतीत होते हैं। यहाँ
क अनुमान किया गया है कि चीन के प्रथम
म्राट् शी-ह्वांग-टी का भारत के मौर्यराजवंश से
बंध था। चीनमें यह जनश्रुति चली आती
कि बौद्ध धर्म का संचार वहाँ ईसा से २१७ वर्ष
ले ही हो चुका था।

ईसा से १०० वर्ष पहले बादशाह वू-टी के समय
तो पश्चिम के देशों के साथ चीन का बहुत कुछ
सर्ग हो गया था। पर इसके पूर्व भी चीन में
हुत सी ऐसी बातें थीं जिनसे विदेशीय प्रभाव
चित होता है। चीन की सीमा पर तीन प्रदेश
से थे जहाँ से विदेशीय संस्कारों का प्रचार
न भर में होता था—पश्चिम में 'शीन', उत्तर
'चाउ' और दक्षिण में 'चू'। चीनी ग्रंथों में
खा है कि 'चू' नामक चीनी रियासत् का
तेवाला लाऊ-ज़ी दक्षिण के बर्बरों के बीच
रन्न हुआ था और शायद पला भी था। सिमा-
ीन ने जो चाउ' प्रदेश का इतिहास लिखा है
के पढ़ने से यह धारणा अवश्य होती है कि
उसके समय में ही उक्त प्रदेश में उन तातारी संस्कारों का सूत्रपात हो चुका था जिन्हें सिन-शी-ह्वांग-टी के समय इतनी प्रधानता प्राप्त हो गई थी। चीनियों की रहन सहन में यह परिवर्तन मध्य एशिया के निवासियों के संसर्ग द्वारा उपस्थित हुआ था।

ईसा से ढाई तीन सौ वर्ष पूर्व के भारतीय इतिहास से जिस प्रकार पश्चिम एशिया के फारस, शाम आदि देशों का संबंध है उसी प्रकार मध्य एशिया का भी। सच पूछिए तो मध्य एशिया ही चीन और भारत के बीच मध्यस्थ था। चीन के बादशाह वू-टी ने हूणों के विरुद्ध यू-ची अर्थात् भारतीय शकों के साथ संधि की थी। फिर तो बड़े बड़े सेनानायक चीन की विजयपताका लेकर पश्चिम एशिया के देशों तक बढ़ गए, जहाँ कश्यपसागर (कैस्पियन या बहरे ख़िज़िर) के किनारे उनकी रोमन सेना से भेंट हुई। इसका फल यह हुआ कि चीन के रेशम और लोहे के लिए योरप की मंडियों में जाने का मार्ग खुल गया।

पार्कर ने अपने चीन' नामक ग्रंथ में लिखा है—"ईस्वी सन से दो शताब्दी पूर्व चीनियों के आचार विचार में बड़ा भारी परिवर्तन उपस्थित हुआ। इसी समय पारदों (Parthians) के राज्य का विस्तार हो रहा था। जिन संस्कारों के द्वारा चीन में यह परिवर्तन उपस्थित हुआ बहुत संभव है कि उन्हीं संस्कारों का प्रभाव उस समय की रोमक (रोमन) और यवन (यूनानी) सभ्यता पर भी पड़ा हो। जो हो, उस समय आवागमन बहुत बढ़ गया और रोम से लेकर कोरिया तक सभ्य जगत् का विस्तार हुआ। फल यह हुआ कि चीन ने उसी समय भारत, बौद्ध धर्म और पारदों का पहले पहल नाम सुना।"

ईटल ने अपने 'बौद्ध धर्म' नामक ग्रंथ में इस संबंध में लिखा है—"चीन की सेनाएँ बहुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिनों तक मध्य एशिया में लड़ती रहीं। वहाँ उनका बौद्ध धर्म से परिचय हुआ। चीनी सेनापति लड़ाइयों के जो विवरणपत्र बादशाह के पास भेजते थे उनमें बौद्धधर्म का उल्लेख प्रायः रहता था।"

लारेंस बिनियन (Lawrens Binyon) ने भी अपनी 'सुदूर पूर्व में चित्रकला' नाम की पुस्तक में विदेशीय संसर्ग का इस प्रकार उल्लेख किया है—"ईसा से २०० वर्ष पूर्व चीनियों ने अपने रेशम की खपत के लिए पश्चिम एशिया के देशों से व्यापार खोला। सौ वर्ष पीछे बादशाह वू-टी ने उक्त प्रदेशों में दूत प्रेरित किए थे। चीन में जो बहुत प्राचीन दर्पण मिले हैं उनमें यूनानी चाल की नक्काशियाँ पाई गई हैं। चीनियों में 'पश्चिमी स्वर्ग' की जो कहानी प्रचलित है बहुत संभव है कि वह यूनानी दंतकथाओं से ली गई हो।"

सिकंदर के यवनराजसिंहासन पर बैठने के समय से लेकर तीन सौ वर्ष तक का जो काल था उसके बीच भिन्न भिन्न जातियों के भेदभाव दूर होते रहे, भिन्न भिन्न देशों के बीच एक दूसरे की सभ्यता, कलाकौशल आदि का ग्रहण होता रहा, लोगों के ज्ञान का विस्तार बढ़ता रहा और मनुष्य मात्र की एकता का भाव प्रतिष्ठित होता रहा। वह एक ऐसा समय था जब अरस्तू और अफ़लातून के अनुयायी दार्शनिक और सुख दुःख में अनुद्विग्नमना स्टोइक तत्त्ववेत्ता, जरतुश्त, कनफूची और ताओ के अनुयायी तथा भारत के निर्वाणाकांक्षी बौद्ध और योगी एक स्थान पर बैठकर शंका-समाधान करते रहे होंगे—जब इस्कंदरिया के वैयाकरण और नैयायिक पाणिनि और गौतम के अनुयायियों के सिद्धान्तों से अपने सिद्धान्तों का मिलान करते रहे होंगे—जब यूनान के हकीम चरक सुश्रुत के अनुगामियों के साथ आयुर्वेद के विषयों की मीमांसा करते रहे होंगे—जब कि आचार और सभ्यता की उन्नति एक एक जाति की अलग अलग और संकुचित दृष्टि से नहीं बल्कि सब की बातों को लेकर सार्वभौम दृष्टि से होती रही होगी। हननफू, तक्षशिला, पाटलिपुत्र, इस्कंदरिया और एथंस के बड़े बड़े विद्यापीठों में जो कलाएँ और विद्याएँ सिखाई जाती थीं वे एशिया और योरप दोनों की होती थीं—सभ्य जगत् भर की होती थीं।

पूर्व के विद्वान्, भिक्षु, सन्यासी और मगआचार्य्य पश्चिम के तत्ववादियों, परोक्षवादियों आदि से मार्ग की चट्टियों और बड़े बड़े विद्यापीठों में मिलते और तत्वचर्चा करते थे। एक देश के पंडितों से दूसरे देश के पंडितों का समागम होता था जिससे दोनों के ज्ञान की सीमा बढ़ती थी। प्रत्येक अनुष्य जिसका विद्याबुद्धि में कुछ नाम होता था—चाहे वह हिन्दू हो चाहे चीनी, पारसी, मिस्री वा यूनानी—वह देश विदेश की विद्याओं से जानकार होता था, कूपमंडूक नहीं होता था। सब देशों के मेलजोल से जो सार्वभौम सभ्यता प्रतिष्ठित हो चुकी थी उसका आचरण प्रत्येक प्रतिष्ठित पुरुष के लिए, चाहे वह किसी देश का हो, आवश्यक था। ज्ञान के इस सार्वभौम प्रचार का प्रभाव प्रत्येक सभ्य देश के सामाजिक जीवन पर पड़ा। एक देश के निवासियों का दूसरे देश के निवासियों के साथ विवाह संबंध भी होने लगा था और उनके आचार विचार में भी बहुत कुछ मेल हो चला था। समस्त सभ्य जगत् के बीच एक सामान्य ज्ञानपथ, विवेक और सभ्यता की स्थापना धड़ाके से हो रही थी।

लारेंस बिनियन ने भिन्न भिन्न देशों की कलाओं और विद्याओं के मेल का इस प्रकार चित्र खींचा है:—

"एशिया के मध्यभाग के इस छोटे और क्षुद्र राज्य में हम क्या देखते हैं? हमें पत्थर की कारीगरी और चित्र मिलते हैं, लकड़ी की पट्टियों पर अक्षरों के समूह मिलते हैं, बुने हुए कपड़ों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

र सजावट के सामानों के टुकड़े मिलते हैं। स की पतली चौड़ी फट्टियों पर पुलिस की पोर्टें मिलती हैं। ये पुलिस की रिपोर्टें चीनी षा में हैं। पट्टियों पर के अक्षर संस्कृत वर्ण-ला के हैं। पर उन धागों पर जिनसे काठ की ट्टियाँ बँधी हुई हैं मिट्टी की मुहरें लगी हुई हैं। नमें से बहुतेरी यूनानी मुहरें हैं जिनमें यूनानी ताओं के चित्र बने हुए हैं। यहाँ पर आकर तीन प्रधान सभ्यताओं का समागम दिखाई ड़ता है—हिन्दुस्तानी, यूनानी और चीनी। यदि कोई पूछे कि ये चित्र किससे मिलते लते हैं तो उससे भारत, पारस, चीन और पान की चित्रकारियों को देखने के लिए कहना ाहिए। पत्थर की कारीगरी देखिए, उसे लते ही दूसरे देश की कारीगरी का ध्यान आता। कोई मूर्त्ति एक बार देखने से यूनानी देवता पोलो का ध्यान दिलाती है, फिर और देखते हैं उसमें भारतीय हाव भाव की झलक दिखाई ती है यहाँ तक कि वह मूर्त्ति बुद्ध की मूर्ति रूप में हमारे सामने दिखाई देने लगती है।"

अस्तु, एशिया और योरप का गँठजोड़ा कुछ लोगों की समझ में कभी होने वाला नहीं—ाज से २२०० वर्ष पूर्व पूर्ण रीति से और सभ्यता प्रत्येक विभाग में हो चुका था।

एशियाई एकता के अगुआ।

चीन की अराजकता के समय बौद्ध धर्म का सा प्रचार हुआ इसका वर्णन हैकमैन ने इस कार किया है—

"सबसे अधिक विलक्षण बात जिस पर त ही कम ध्यान दिया गया है वह यह है कि सा की चौथी शताब्दी के पहले चीनियों को द्धधर्म की दीक्षा लेने की आज्ञा नहीं मिली थी। ः बौद्धधर्म के नेता दो ढाई सौ वर्ष तक तो देशी ही रहे। बहुत से विदेशियों के नाम मिलते जो भारतवर्ष, हिमालय प्रदेश तथा मध्य एशिया से बौद्धधर्म की रक्षा के लिए चीन में गए थे। बहुत दिनों तक तो इनका मुख्य कार्य्य बौद्ध ग्रंथों का चीनी भाषा में अनुवाद करना रहा। ३०० ईसवी तक तो सब अनुवादक विदेशी ही रहे—केवल एक चीनी का नाम मिलता है।"

नीचे गाइल्स (Giles) की पुस्तक से कुछ अवतरण दिया जाता है—

३३५ ईसवी में चीनियों को बौद्ध धर्म में दीक्षित होने की आज्ञा पहले पहल मिली। यह आज्ञा बुद्धसिंह नामक एक भारतीय आचार्य्य के प्रभाव से मिली जो सन् ३१० ईसवी में चीन की राजधानी में पहुँचा था। फिर तो बौद्धधर्म धीरे धीरे ज़ोर पकड़ता गया, यहाँ तक कि सन ३८१ में राजप्रासाद के भीतर बौद्ध भिक्खुओं के लिए एक ख़ास मन्दिर बनवाया गया। सन् ३८५ में कुमारजीव नामक एक प्रसिद्ध पंडित चीन पहुँचा जिससे बौद्ध धर्म को और भी अधिक उत्तेजना मिली - उसका प्रचार और भी अधिक बढ़ा। बहुत वर्षों तक उसने अत्यन्त श्रम पूर्वक अनुवाद का काम किया, अन्त में सन् ४१७ में निर्वाणप्राप्त हुआ उसका सब से प्रसिद्ध कार्य्य 'वज्र सूत्र' का अनुवाद है जिसमें यह प्रतिपादित किया गया है कि यावत् पदार्थ और यावत् दृश्य हैं सब भ्रम हैं, उनकी कोई वास्तव सत्ता नहीं और बौद्ध शास्त्रोंके अनुसार बुद्ध पर विश्वास करने से मनुष्य निर्वाण का अधिकारी हो सकता है। इधर कुमारजीव चीन में बौद्धधर्म का प्रचार कर रहा था और ८०० भिक्खुओं को बौद्ध शास्त्रों की विस्तृत व्याख्या लिखा रहा था उधर फाहियान अपनी भारत की विकट यात्रा में लगा हुआ था।"

जिस धर्मवीरता और जिस अध्यात्म-बल के प्रभाव से फ़ाहियान ने इतनी विकट और लंबी यात्रा (३९९ से ४१३ ईसवी तक) की वह उस समय के नवदीक्षित चीनियों में भर रहा था। फ़ाहियान अपनी यात्रा के सम्बन्ध में आप लिखता है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैं ने जो इतने बड़े बड़े संकटों का सामना किया, इतने विकट विकट स्थानों में पैर रखा और अपने शरीर का कुछ भी ध्यान नहीं रखा वह केवल इसी लिए कि मेरा एक विशिष्ट उद्देश्य था और मुझे सिवा इसके और किसी बात का ध्यान नहीं था कि मैं उसे जहाँ तक हो सके सीधे सादे निष्कपट भाव से पूरा करूँ। जिस आशा से मैं चला था उसके सहस्रांश के भी पूरे होने की जहाँ मुझे सम्भावना दिखाई दी वहाँ अपने प्राण की मैंने कुछ भी परवा न की।"

नीचे लिखी बातों से भी फ़ाहियान का अपूर्व महत्व प्रकट होता है—

"भारत से वह बहुत से ग्रन्थ और पवित्र चिह्न (बुद्ध या बोधिसत्त्वों की धातु आदि) लेकर चला जिनमें से प्रायः सब के सब बंगाल की खाड़ी में जाते रहे। बात यह हुई कि बड़े जोर का तूफ़ान आया और जहाज़ में छेद हो गया। उसने अपना घड़ा और बरतन तक समुद्र में फेंक दिया। पर फिर भी उसे यह डर बना रहा कि जहाज़ पर के व्यापारी कहीं उसकी पुस्तकों और मूर्त्तियों को न फेंक दें। अतः क्वन-सी-इन और क्वन-इन नामक देवताओं और अपने देश के महात्माओं का ध्यान कर के वह बार बार मनाने लगा कि वे अपनी शक्ति से जहाज़ का छेद बंद कर दें और उसे किसी किनारे पर लगावें।"

यही सच्चे भक्त की प्रार्थना है—चाहे वह शैव या वैष्णव हो चाहे जैन या बौद्ध। इस प्रकार चीन में फ़ाहियान ऐसे भावुकों के द्वारा भक्तिमार्ग प्रचलित हुआ।

कुमारजीव और फ़ाहिआन के समय से अर्थात् ईसा की पाँचवीं शताब्दी से भारत और चीन के बीच एक नए सम्बन्ध की स्थापना हुई। इसी काल से दोनों देशों के बीच धर्म और आचार की आध्यात्मिक एकता स्थापित हुई। राजनैतिक और व्यापारिक सम्बन्ध तो पहले ही से था। अतः इन कई प्रकार के सम्बन्धों के योग से भावनाओं के उस ऐक्य की स्थापना हुई जिसे एशियाई सभ्यता कहते हैं। शाक्यसिंह और कनफ़ूची के देश एक धर्म-सूत्र में बद्ध हुए। इसके पीछे हज़ार वर्ष तक (अर्थात् सन् १४५३ ईसवी तक जब कि तुर्कों ने कुस्तुन्तुनिया पर अधिकार किया) क्योटो (चीन) से लेकर क़ायरा (मिस्र) तक के मनुष्यों के बीच उसी एशियाई ज्ञान विज्ञान, कला कौशल और दर्शन-शास्त्र का प्रचार रहा। अरबवालों के द्वारा जब से यह एशियाई सभ्यता योरप में पहुँची तभी से वहां जाग्रति के नवीन युग का आरम्भ हुआ।

हिंदू सभ्यता और बौद्ध धर्म चीन में स्थायी हो गया। भारतीय बातें केवल कुतूहल की दृष्टि से नहीं देखी जाती थीं बल्कि उनका समावेश चीन की सभ्यता के भीतर स्थायी रूप से होता जाता था। हैकमैन लिखते हैं कि "उस समय चीनी बौद्ध धर्म की कितनी ख्याति हो चुकी थी इसका अंदाजा इसी बात से लग सकता है कि भारतीय बौद्धों के जगत्पूज्य आचार्य्य बोधिधर्म, जो बुद्ध से २८ वीं गद्दी पर थे, अपनी जन्मभूमि छोड़ कर सन् ५२६ में चीन में जा बसे।

हिंदुओं की सार्वभौम भावना और विदेशों में बस्ती।

ईसा की चौथी, पाँचवीं और छठीं शताब्दी के हिंदू सारे संसार से अलग एक कोने में नहीं रहते थे जैसा कि यूरोपियन लोग कहा करते हैं। पूर्व काल के हिंदुओं के विषय में जैसा कह आए हैं उसी प्रकार गुप्तकाल के हिंदू भी सार्वभौम भाव की वृद्धि में तत्पर रहते थे, दूर दूर के देशों में आते जाते थे और विदेशियों से संबंध रखते थे।

पहली बात तो यह समझ रखनी चाहिए कि हिंदुस्तान अकेले ही एक दुनिया है और रूस को छोड़ दें तो सारे योरप के बराबर है। फ्रांस, जर्मनी, आस्ट्रिया इटली ऐसे न जाने कितने छोटे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टे प्रदेश उसके भीतर आ अकते हैं। अतः उस मय जब रेलगाड़ी आदि कुछ भी न थी यदि दू लोग सारे भारतवर्ष ही में एक सभ्यता का वार किए होते तो भी उनकी परराष्ट्र-संबंधिनी वस्था बहुत उच्च कोटि की गिनी जाती। दि देशविस्तार और जनसंख्या का विचार करें रोम के बादशाहों की सार्वभौमता भारत के क्रवर्ती सम्राटों की सार्वभौमता से किसी प्रकार स्तृत नहीं कही जा सकती।

पर हिंदुओं का परराष्ट्र-संबंध हिंदुस्तान के हर के देशों तक फैला था। कालिदास के ग्रन्थों से हिंदुओं की पहुँच फारस आदि बाहर देशों तक बराबर पाई जाती है। पाँचवीं शताब्दी आरंभ से चीन और भारत के बीच का व्यापार त बढ़ गया। इस बात से भी उनके दृष्टि-स्तार का प्रमाण मिलता है कि किस प्रकार वे मग्र एशिया को एक सूत्र में नाथ कर एशियाई ता का भाव पुष्ट कर रहे थे। मोटे तौर पर यह हा जा सकता है कि मौर्यों ने पश्चिम-एशिया साथ संबंध खोला, कुशनों ने मध्य एशिया के थ और गुप्तों ने सुमात्रा, जावा, चीन आदि ीय देशों के साथ। इस प्रकार हिंदुओं की दृष्टि वल हिंदुस्तान ही तक नहीं रही, सारे एशिया क रही।

एशिया के बाहर की दुनिया की ख़बर भी दुओं को पूरी पूरी थी। जब से सिकंदर ने श्चिम एशिया का रास्ता खोला तब से हिंदू बरा- पश्चिमी 'बर्बरों' के साथ अपना सम्बन्ध बनाए है। ईसा की पहली शताब्दी में रोमन साम्रा- के साथ हिंदुओं का व्यापार बहुत कुछ था। रिप्लस (सन् ईसवी १००) नाम की पुस्तक से दुओं और रोमनों के संसर्ग का पूरा पता चलता उत्तर के शकवंशीय कुशन राजा और दक्षिण ध्र राजा दोनों रोम से संबंध रखते थे।

ईसा से दो ढाई सौ वर्ष पहले अंध्र राजाओं के समय में हिंदुओं का दूर दूर के देशों के साथ जो व्यापार था उसका वर्णन इंपीरियल गज़ेटियर (भाग २) में इस प्रकार है—

"अंध्रों का समय बहुत ही सुख समृद्धि का था। पश्चिम एशिया, यूनान, मिस्र रोम तथा चीन आदि पूर्वीय देशों के साथ व्यापार होता था। दक्षिण भारत से राजदूत रोम भेजे गए थे। शाम की लड़ाइयों में हिंदुस्तान के हाथियों से काम लिया गया था। रोम से बहुत सी व्यापार की चीजें हिंदुस्तान आती थीं। दक्षिण भारत में बहुत से रोमन सिक्के मिले हैं। सन् ६८ ईसवी में बहुत से यहूदी रोमनों के अत्याचार से पीडित हो कर दक्षिण भारत में भाग आए थे और मलाबार के किनारे बसा लिए गए थे।"

विन्सेंट स्मिथ ने भी कुछ विदेशियों के भारत में आ कर बसने की बात लिखी है। इस बात के पूरे प्रमाण हैं कि ईसा के पीछे दो सौ वर्षों के बीच बहुत से रोमन व्यापारी दक्षिण भारत में बसे। दक्षिण के राजाओं के यहाँ कुछ यूरोपियन (रोमन) सिपाही शरीर-रक्षक का काम करते थे जो सर्वांगकवचधारी बलिष्ठ यवन और मूक म्लेच्छ कहे गए हैं।"

स्मिथ साहब ने ही यह भी लिखा है कि गुप्त वंशीय चंद्रगुप्त विक्रमादित्य (सन् ३७४ से ४१३ ईसवी तक) योरप के साथ मिस्र से होकर जो व्यापार होता था उसकी बहुत देखरेख रखता था।

गुप्तों के समय में हिन्दू लोग स्याम आदि देशों में अपना पूरा प्रभाव फैला चुके थे और जावा आदि द्वीपों में अपनी पूरी बस्ती बसा चुके थे। चौथी शताब्दी में भारतवर्ष अपना पूरा प्रसार कर चुका था, उसकी सभ्यता और व्यापार का विस्तार पूर्व में जापान से लेकर पश्चिम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में मडागास्कर तक हो गया था। इस भारतीय प्रसार का पूरा वर्णन प्रो० राधाकुमुद मुकर्जी की 'प्राचीन भारतवासियों की नाविक कला और समुद्र यात्रा' में मिलेगा।

कहनेकी आवश्यकता नहीं कि जिस प्रकार की यात्रा हिन्दू उपदेशक कुमारजीव और चीनी तीर्थयात्री फ़ाहिआन ने की वह हिन्दुओंके लिये कोई नई बात नहीं। संसार की ज्ञानधारा का स्रोत भारतवर्ष से होकर बराबर बहता रहा, इससे चीनी यात्री यहाँ आकर संसार की सभ्यता से परिचित होते थे। समस्त संसार मिल कर सभ्यता के जिस पथ पर अग्रसर होता था भारत वर्ष उससे अलग नही रहता था बल्कि पथ निकालनेवालों में रहता था। अतः गुप्तों के समय में जो कोई भारतवर्ष में आता था वह दुनिया की हवा खाने आता था।

यहाँ पर यह बतला देना आवश्यक है कि महात्मा बोधिधर्म, जो पहले दक्षिण के एक राजकुमार थे, समुद्र के मार्ग से कैंटन पहुँचे थे और वहाँ से नानकिंग (राजधानी) निमंत्रित किए गए थे (ई० ५२०)। इससे समुद्रयात्रा के विस्तार का अंदाज़ हो सकता है।

यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि कूचा और खुतन (मध्य एशिया), जो भारत और चीन के बीच रास्ते में पड़ते है, बहुत दिनों तक बराबर हिन्दू सभ्यता तथा यूनानियों और बौद्धों के मिश्रित कलाकौशल के केन्द्र रहे। प्राचीन खुतन के आस पास मध्य एशिया में स्टीन आदि को अरबी और चीनी लिपि में लिखी हुई जो पुस्तकें मिली हैं उनसे प्रमाणित होता है कि मध्य एशिया में स्थापित हिन्दू सभ्यता ईसा की तीसरी शताब्दी से लेकर नवीं शताब्दी तक रही। मध्य एशिया के रास्ते होकर ही सन् ३९९ में फाहियान और ६२९ में हुएन्सांग दोनों भारतवर्ष आए थे और समुद्र के मार्ग से जहाज पर घर लौटे थे।*

सभा का कार्यविवरण।

प्रबंधकारिणी समिति।

मंगलवार तारीख १४ जनवरी १९१९ संध्या के ५ बजे

स्थान-सभाभवन

(१) गत अधिवेशन (ता० १८ नवम्बर १९१८) का कार्यविवरण पढ़ा गया।

(२) सितम्बर, अक्तूबर और नवम्बर १९१८ के आय व्यय का निम्नलिखित हिसाब उपस्थित किया गया।

आय का ब्योरा	साधारण विभाग	पुस्तक विभाग
गत मास की बचत	२०४४=)१०	०
सभासदों का चन्दा	२४०॥।≡)	०
पुस्तकों की बिक्री		१५२॥-)६
हिंदी पुस्तकों की खोज	५००)	०
पृथ्वीराज रासो		१५७॥)
नागरी प्रचार	६॥।=)	०
फुटकर आय	=)६	०
पुस्तकालय	८१॥।=)	०
हिंदी कोश		९५४।=)
अमानत	२४१२।≡)३	०
मनोरंजन पुस्तक माला		१३७८॥)९
भारतेन्दु ग्रंथावली		३०॥≡)९
	५२८६।≡)७ +	२६७३॥≡)९
	७९६०≡)४	

* Modern Review में प्रकाशित प्रो० विनयकुमार सरकार के एक लेख का अनुवाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यय का ब्योरा	साधारण विभाग	पुस्तक विभाग
र्यकर्त्ताओं का वेतन	४०७।)	४१।)६
ाई	४१-)	०
कव्यय	१९७≡)९	०
ागरीप्रचार	२४॥।)	०
तकालय	८६।=)६	०
टकर व्यय	८४॥-)३	०
ोरंजन पुस्तक माला	०	२९२४॥।≡)
ी कोश	०	१३७०॥।-)
मानत	५६१।≡)९	०
ी देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला	०	८३॥।)
ी पुस्तकों की खोज	३५॥।-)६	०
	१४३८॥-)९ + ४४२०॥।)६	
	५८५९।=)३	
	२१००॥।-)१	
	७९६०≡)४	

ाप्त का ब्योरा—

६३-)८ रोकड़ सभा
४४०=)७ बनारस बंक (चलता खाता)
१०००) " " (फिक्सड डिपाज़िट)
२३९=)४ सेविंग बंक (स्थायी कोष)
२५०) बनारस बंक सेविंग बंक (भवन निर्माण)
१०८।=)६ " " " "
१००॥।-)१

(३) लाला सीताराम बी० ए० का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने नागरीप्रचारिणी ग्रन्थमाला की पुस्तकों में से कुछ अंशों के उद्धृत करने की आज्ञा माँगी थी।

निश्चय हुआ कि इसके लिये उन्हें आज्ञा दी जाय।

(४) पण्डित शिवनारायण शुक्ल का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि बा० राधाकुमार मुकर्जी के History of ancient Shipping नामक ग्रंथ का हिन्दी अनुवाद उन्होंने किया है और पूछा था कि क्या सभा उसे प्रकाशित कर सकती है।

निश्चय हुआ कि पण्डित शिवनारायण शुक्ल से अनुवाद देखने के लिये मँगवाया जाय और पंडित रामचन्द्र शुक्ल की सम्मति के सहित वह समिति के सम्मुख उपस्थित किया जाय। साथ ही स्वत्व आदि के संबंध में मंत्री ने उन्हें जो पत्र लिखा है उसका उत्तर भी मँगवा कर उपस्थित किया जाय।

(५) पंडित रामनारायण मिश्र का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि स्वामी सत्यदेवजी को ना० प्र० पत्रिका बिना मूल्य दी जाय।

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय।

(६) पंडित देवीप्रसाद उपाध्याय का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि महाराज बलरामपुर के पुस्तकालय से त्रिविक्रम रचित "सालिहोत्र" नामक ग्रंथ की प्रतिलिपि मँगवा कर सभा उसे प्रकाशित करे। अथवा यदि सभा उसे प्रकाशित करना न चाहे तो प्रतिलिपि का व्यय वे सभा को देंगे।

निश्चय हुआ कि इसकी प्रतिलिपि सभा के व्यय से मँगवाई जाय।

(७) बाबू श्यामसुंदरदास जी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रस्ताव किया था कि पंडित कामताप्रसाद गुरु का व्याकरण जो अब छप रहा है उसे दोहरा कर ठीक करने के लिये एक उपसमिति बना दी जाय।

निश्चय हुआ कि इस कार्य के लिये बाबू श्यामसुंदर दास जी के प्रस्ताव के अनुसार निम्नलिखित सज्जनों की उपसमिति बना दी जाय (१) पंडित महावीरप्रसाद द्विवेदी, झुंही, कानपुर (२) पंडित गोविंदनारायण मिश्र, काशी (३) पंडित अंबिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसाद वाजपेयी, कलकत्ता (४) पंडित गंगाप्रसाद अग्निहोत्री, पाटन, जबलपुर (५) रायबहादुर बाबू हीरालाल, जबलपुर (६) पंडित रामचंद्र शुक्ल, काशी और (७) पंडित कामताप्रसाद गुरु, जबलपुर। इस समिति के संयोजक पंडित कामताप्रसाद गुरु नियत किए जायँ और वे पत्रव्यवहार द्वारा दोहराने का कार्य करें। यदि कोई ऐसे प्रश्न रह जायँ जो पत्रव्यवहार से न तै हो सकें तो उपसमिति का अधिवेशन करके वे तै किए जायँ। बाबू शिवप्रसाद गुप्त के प्रस्ताव पर यह भी निश्चय हुआ कि हिन्दी और उर्दू के प्रयोगों में जहाँ भेद हो वे भी इस व्याकरण में टिप्पणी द्वारा दिखा दिए जायँ और उक्त उपसमिति में बाबू रामदास गौड़ एम० ए० और मौलवी मोहम्मद हसन खाँ के नाम बढ़ा दिए जायँ।

(८) बाबू शिवप्रसाद गुप्त का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि सभा उनके स्थान पर पंडित रामनारायण मिश्र को सुबोध व्याख्यान का निरीक्षक नियत करे।

निश्चय हुआ कि बाबू शिवप्रसाद गुप्त का इस्तीफा स्वीकार किया जाय और पंडित रामनारायण मिश्र सुबोध व्याख्यान के निरीक्षक चुने जाँय।

(९) शाहपुरा के श्रीमान् महाराज कुमार उम्मेद सिंह जी का ३० दिसम्बर १९१८ का पत्र पढ़ा गया जिसके साथ में दानपत्र की पांडुलिपि थी और जिसमें पूछा गया था कि क्या सभा इसे स्वीकार कर सकती है?

निश्चय हुआ कि (क) यह सभा श्रीमान् महाराज कुमार उम्मेदसिंह जी को हार्दिक धन्यवाद देती है कि उन्होंने अत्यंत उदारता पूर्वक यह दान करने का विचार किया है और इसके लिये जो दानपत्र उन्होंने भेजा है उसे यह सभा सहर्ष और धन्यवाद पूर्वक स्वीकार करती है और उसके अनुसार कार्य करने के लिये उद्यत है।

(ख) यह सभा नम्रता पूर्वक निवेदन करती है कि श्रीमान् महाराज कुमार जी अपने दानपत्र में निम्न लिखित सुधारों पर विचार करने की कृपा करें:—

Art. ३ में "and nothing except the sum specified in Para 2 shall be given to Nagari Pracharini Sabha" के स्थान पर "and that additions in it will be made as provided for in Art 12" कर दिया जाय।

४ में "in furtherance of the objects of this grant" के स्थान पर "in furtherance of the object of this trust" कर दिया जाय।

५ (ई) में "shall appoint one of their members" के स्थान पर "shall appoint one of themselves" कर दिया जाय।

६ के अन्त में "and in the Devanagari character" ये शब्द बढ़ा दिए जायँ।

७ में "shall be" और "of uniform size" के बीच में "generally" शब्द बढ़ा दिया जाय।

८ में "Composition" के स्थान पर "Compiling, editing" कर दिया जाय।

१२ के अन्त में निम्नलिखित शब्द बढ़ाए जायँ "Until the Surya Kumari chair of Hindi Literature at the Hindu University, as detailed in Art. 3, has been endowed, when the interest on additional sums thereafter credited by the Sabha from time to time out of sale proceeds shall be paid to the Sabha along with the grant mentioned in Art 2 at the same rate of interest and in similar instalments and this additional income will also be utilized for the purpose of Suryakumari Hindi endowment.

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें ।

...रावट	मूल्य ≡)
...ग्रंथावली	मूल्य ≡)
...वती	मूल्य ।।।)
...वर विहारीलाल-	मूल्य =)
...बोध	मूल्य ≡)
...वली--	मूल्य २)
...ाले रोग और उनसे बचने का उपाय-	१)
...चर्याप्रणाली-रोगी की शुश्रूषा विधि ।	मूल्य ।)
...ीनलेखमणिमाला	१)
...ीराजरासो-२२ खंड मूल्य	२०) रु०
...चन्द्रिका	मूल्य ।=)
...लीला-कवि आनंदघन कृत ।	मूल्य =)
...तेन्दुचरित्र-	मूल्य ॥)
...ग ग्रंथावली-	मूल्य ।।।)
...री भाषा के सामयिक पत्रों का इतिहास	।)
...नामा	मूल्य ।।।)
...ालोचनादर्श	मूल्य ≡)
...ालोचना	मूल्य =)
...राणाप्रताप-बाबू राधाकृष्ण दास जी कृत	॥)
...राधाकृष्णदास (जीवनी)	॥)
...ती योग्यता	=)
...ीयदर्शन-	।।)
...विलास-	१)

राज्यप्रबंधशिक्षा	॥)
सौरीसुधार	॥)
संक्षेप लेखप्रणाली-	॥)
हम्मीर रासो	१)
हरिश्चन्द्र-राजा हरिश्चन्द्र का चरित्र।	=)
सिंधदेश का इतिहास	।)
दादू दयाल की बानी	।।।)
दादूदयाल के शब्द	।।।)
हिन्दी लेक्चर	-)
यूनान का इतिहास	।।।)
स्त्रियों के रोग	१)
भगवद्गीता (हिन्दी अनुवाद)	।-)
आर्ष प्राकृत व्याकरण	।)
छत्रप्रकाश-लाल कवि कृत	।।।)
सुघड़दर्जिन-सिलाई और कटाई का सचित्र वर्णन	॥)
सत्यहरिश्चन्द्र-(भारतेन्दु रचित) मूल्य	=)॥
भारतदुर्दशा	-)।
बोपदेव का जीवनचरित्र	=)
शेख मोहम्मद बाबा का जीवनचरित्र	-)
लेखक और नागरी लेखक	=)
आयुर्वेद निदान समीक्षा	=)
भाषा-समस्त भाषाओं का संक्षिप्त विवरण	≡)॥
होरेशियस और मनुष्य की सात अवस्थाएं	=)
भर्तृहरि निर्वेद नाटक	।)
ललित शिक्षावली छोटी छोटी कहानियाँ	।)

मिलने का पता—मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०० पुस्तकों की

मनोरंजन पुस्तकमाला

की नई पुस्तक

'जरमनी का विकाश'।

इस पुस्तकमाला में सब प्रकार के विषय रहेंगे—काव्य, नाटक, उपन्यास, दर्शन, विज्ञान, इतिहास, जीवनचरित, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, वनस्पतिशास्त्र, शासनशास्त्र इत्यादि इत्यादि। प्राचीन कवियोंके ग्रंथरत्नों से चुने हुए उत्तम संग्रह भी निकलते हैं। पुस्तकें इस चित्ताकर्षक रूप में लिखी जाती हैं कि पाठक अपने मनोरंजन के साथ ही साथ विना प्रयास अनेक बातों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। अब तक ये पुस्तकें निकल चुकी हैं।

१ आदर्श-जीवन—लेखक रामचंद्र शुक्ल।
२ आत्मोद्धार—लेखक रामचंद्र वर्म्मा।
३ गुरु गोविंदसिंह—लेखक वेणीप्रसाद।
४ आदर्श हिंदू १ भाग—लेखक मेहता लज्जाराम शर्म्मा।
५ ,, २ ,, ,,
६ ,, ३ ,, ,,
७ राणा जंगबहादुर—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा।
८ भीष्म पितामह—लेखक चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्म्मा।
९ जीवन के आनंद—लेखक गणपत जानकीराम दूबे बी. ए.।
१० भौतिक-विज्ञान—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी।
११ लालचीन—लेखक व्रजनंदन सहाय।
१२ कबीरवचनावली—संग्रहकर्त्ता अयोध्यासिंह उपाध्याय।
१३ महादेव गोविंद रानडे—लेखक रामनारायण मिश्र बी. ए.।
१४ बुद्धदेव—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा।
१५ मितव्यय—लेखक रामचंद्र वर्म्मा।
१६ सिक्खों का उत्थान और पतन—लेखक नंदकुमार देव शर्म्मा।
१७ वीरमणि—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम. ए. और शुकदेवबिहारी मिश्र बी. ए.।
१८ नेपोलियन बोनापार्ट—लेखक राधामोहन गोकुलजी।
१९ शासनपद्धति—लेखक प्राणनाथ विद्यालंकार।
२० हिंदुस्तान, पहला खंड—लेखक दयाचंद्र गोयलीय बी. ए.।
२१ ,, ,, दूसरा खंड— ,, ,, ,,
२२ महर्षि सुकरात - लेखक वेणीप्रसाद।
२३ ज्योतिर्विनोद—लेखक सं[illegible] बी. एस-सी., एल. टी.।
२४ आत्मशिक्षण—लेखक श्यामबि[illegible] एम० ए० और शुकदेव बिहारी मिश्र बी० ए०।
२५ सुंदरसार—संग्रहकर्ता पुरोहित हरिनारायण बी० ए०।
२६ जरमनी का विकाश—लेखक सूर्यकुमार वर्मा।

प्रत्येक पुस्तक का मूल्य १) है. समस्त ग्रंथमाला के स्थायी ग्राहकों से ।।।) लिया जाता है। डाकव्यय अलग है।

मिलने का पता—

मंत्री—नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाग २३] [संख्या ८

नागरीप्रचारिणी पत्रिका।

फरवरी १९१९

सम्पादक— रामचन्द्र शुक्ल।

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल। बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल॥
करहु विलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल। निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सबको मूल॥
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार। सब देशन सों लै करहु, भाषा माँहि प्रचार॥
प्रचलित करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न। राजकाज दरबार में, फैलावहु यह रत्न॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र।

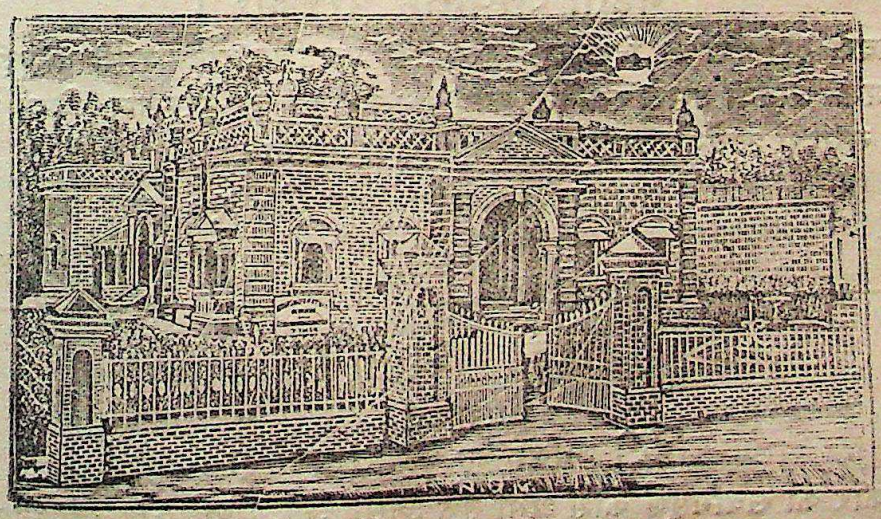

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित।

गणपति कृष्ण गुर्जर द्वारा श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस, काशी में मुद्रित।

वार्षिक मूल्य १॥) प्रति संख्या =)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस बात का भी दृढ़ निश्चय था कि अपने इस नवीन मत के प्रचार से मैं आगे चल कर मानव सृष्टि का बहुत कुछ उपकार कर सकूँगा और अपनी सारी प्रजा पर अनायास ही अपना पूरा प्रभाव जमा लूँगा। इसकी यह भी इच्छा थी कि राष्ट्र के प्रधान नगरों में ऐसी धार्मिक संस्थाएँ स्थापित हों जो जनसाधारण में धर्म्म-संबंधी उदार शिक्षा का प्रचार कर उनके दुराग्रह और पक्षपात आदि कुसंस्कारों को दूर करें और उनके चरित्र को उदार और महत्त्वपूर्ण बनाएँ। वास्तव में दारा एक सच्चा धर्मजिज्ञासु था। वह अपने अमूल्य समय को खान पान और नाच रंग में व्यर्थ नष्ट न होने देता। प्रति दिन दो घंटे तात्त्विक विषयों पर विद्वानों के वाद प्रतिवाद को खूब जी लगा कर सुनता और उनके मत, विचार और निश्चय की विवेचना कर सत्य के असली रूप को पहचानने की चेष्टा करता था।

धर्म-ग्रंथों की छानबीन और उनकी तुलनात्मक दृष्टि से विवेचना करने की उसे धुन सी लग गई थी। उसके दरबार में विद्वानों की भीड़ लगी रहती थी और धर्म्म संबंधी विवादास्पद विषयों पर अपने स्वतंत्र मत को खुले शब्दों में प्रकट करने की प्रत्येक धर्म और सम्प्रदाय के आचार्यों को पूरी स्वतंत्रता थी। संसार के प्रसिद्ध विद्वानों और धर्मोपदेशकों के विचार और उपदेश से लाभ उठाने और धर्म के मूल तत्वों को अवगत करने का जनता को भी यहाँ पूरा मौक़ा दिया जाता था। उसके दरबार में ख़लीलुल्लाह ख़ाँ भी अकसर आया जाया करता था। यह एक बड़ा ही मानी, वीर और चतुर सेनानायक था। युद्ध में शूरता और रणचातुरी का अनेक बार परिचय देने से शाही सेना में इसकी धाक बँध गई थी। मोग़ल तथा राजपूत वीर दोनों इसका समान आदर करते थे और दोनों पर इसका पूरा आतंक छा गया था। दरबार में भी अपनी असाधारण योग्यता और कार्य्य-पटुता के बल इसने बहुत जल्द अपना सिक्का जमा लिया। इसके लोकोत्तर गुणों पर रीझ कर इसके शत्रु भी इसकी मुक्तकंठ से प्रशंसा करते थे।

किंतु जहाँ अनेक गुण पाए जाते हैं वहीं दोष भी दिखाई पड़ते हैं। प्रकृति का यह नियम है कि वह अपने पलड़े को हमेशा बराबर रखती है। सृष्टि के सारे व्यापार इसी प्राकृतिक नियम के अन्तर्गत हैं। ख़लीलुल्लाह ख़ाँ में भी जैसे अनेक गुण थे वैसे ही दोष भी थे और जिस प्रकार इसके गुणों पर लट्टू होकर लोग इसकी बड़ाई करते वैसे ही इसके दोषों से चिढ़ कर इसका तिरस्कार भी करते थे। यह बड़ा दुराग्रही था। मज़हबी कट्टरपन इसकी नस २ में भरा हुआ था। अपनी बातों पर जमे रहने की इसकी आदत सी पड़ गई थी और अपनी सफ़ाई के लिए कुरान की दुहाई देने और बार २ झूठी क़समें खाने में भी इसे संकोच नहीं होता था। बहुत पढ़ा लिखा न होने पर भी यह अपने को पूरा पंडित लगाता और दरबार में जब कभी धर्म्म-संबंधी चर्चा छिड़ जाती तब इससे चुपचाप बैठे न रहा जाता था। कभी २ प्रस्तुत प्रसंग को बिना समझे बूझे यह बोल उठता और रोके जाने से भी बाज़ नहीं आता था। लोगों के लाख समझाने पर भी यह अपनी अनभिज्ञता स्वीकार नहीं करता था। यही वजह है कि दारा को इससे नफ़रत हो गई थी और इसकी अनधिकार चेष्टा से उसे कभी २ क्रोध आ जाता और वह इसे जली कटी भी सुना दिया करता था। उस समय तो यह चुप हो जाता लेकिन भीतर २ दारा से जला करता था। एक मुसल्मान ग्रंथकार कहता है कि एक दफ़ा मदाख़लत-बेजा की वजह से दारा के दरबार में इसकी जूते से ख़बर ली गई। उक्त ग्रंथकार के इस कथन की असत्यता के प्रमाण में इतना ही कह देना बस होगा कि वह ख़लीलुल्लाह ख़ाँ से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप रखता था। दारा के दरबार में पूरे २५ वर्ष तक रहने से मेरा उसके स्वभाव से पूरा परिचय हो गया था। मैंने उसे बहुत कम क्रोध करते हुए देखा था। उसका ऐसा हृदय था और वह स्वभाव का ऐसा विनीत, नम्र और क्षमाशील था कि बड़े से बड़े अपराधी को भी दण्ड देने में उसे हिचक होती थी। इसके सिवा ख़लीलुल्लाह ख़ाँ ऐसे उच्च कर्म्मचारी को इस प्रकार अपमानित करने का पहले तो उसे साहस न होता और यदि होता भी तो ख़लीलुल्लाह ख़ाँ को खुद अपने मान का इतना ध्यान था कि ऐसा होने पर मारे लज्जा के वह फिर कभी घर से बाहर न निकलता। ऐसी बे सिर पैर की बात या तो स्वयं ग्रंथकार की उपज है या उसने सर्वसाधारण से सुनी सुनाई बात को ज्यों का त्यों अपने ग्रन्थ में रख दिया है।

शाहजहाँ के साले शाइस्ताख़ाँ की स्त्री परम रूपवती थी। एक बार संयोगवश उसने उसे कहीं देख पाया। देखते ही वह उसके रूप पर ऐसा लट्टू होगया कि अपने आप को भूल गया और धीरज खो बैठा। उसके प्रेम में बावला होकर वह उसी क्षण से उसके मिलने की फ़िक्र में लग गया। पर लाख तदबीर करने पर भी वह उसके हाथ न लगी। शाहजहाँ की शोचनीय दशा पर उसकी प्यारी बेटी पादशाह बेगम को बड़ी दया आई। उसने बादशाह से उसकी चिन्ता का कारण पूछा। बादशाह ने अपने दुःख की सारी कहानी उसे कह सुनाई और अपने तापशान्ति के लिए उससे मदद भी माँगी। पहले तो शाहज़ादी ने अपने विषयासक्त पिता को बहुत कुछ ऊँचा नीचा समझाया और इसकी बहुत कोशिश की कि वह इस अनुचित काम से अपना हाथ खींच ले किंतु उसे निराश और चिंतित देख कर मारे प्रेम के उसका जी भर आया। अंत में उसने अपने मन में उसकी मानसिक व्यथा दूर करने की ठान ली। उसे इस काम में एक चाल चलनी पड़ी। उसने एक विनय-पूर्ण पत्र भेज कर उक्त स्त्री से एक भोज में सम्मिलित होने का आग्रह किया।

कहना नहीं होगा कि भोज समाप्त हो जाने के बाद शाहजहाँ की लालसा तो पूरी हुई; लेकिन उसके इस छलपूर्ण व्यवहार से शाइस्ता ख़ाँ की सती स्त्री को ऐसी ग्लानि हुई और उस पर इसका ऐसा बुरा प्रभाव पड़ा कि उसे अपना जीवन भार हो गया। उसने खाना-पीना और कपड़ा बदलना तक छोड़ दिया और इस प्रकार कष्ट झेल कर थोड़े ही दिनों में वह इस संसार से चल बसी।

शाइस्ता ख़ाँ ने आगे चलकर अनुकूल समय आने पर बादशाह से अपने इस अपमान का बदला चुकाने की आशा से उस समय इसका कुछ भी ख़्याल न किया।

अपनी कुत्सित वासनाओं की पूर्ण निवृत्ति के लिए शाहजहाँ ने अपने महलके भीतर चालीस हाथ लंबा और सोलह हाथ चौड़ा एक बहुत बड़ा कमरा बनवाया था। इस कमरे के चारों तरफ बड़े २ शीशे लगे हुए थे और जिनके चारों कोनों पर मोती की बड़ी २ लरें लटकती थीं। इसकी छत में शीशों के बीच सोना, और जवाहिरात जड़े हुए थे। इसकी दीवार में भी अनेक बहुमूल्य पत्थर जड़े थे। इस कमरे में सिर्फ़ सोना जड़वाने में बादशाह का डेढ़ करोड़ रुपया बैठा था और इसे अनेक प्रकार के रत्नों से सुसज्जित करने में क्या खर्च पड़ा था इसका कोई हिसाब नहीं। यह सब खर्च सिर्फ़ इसलिए किया गया था कि बादशाह अपने और अपनी प्यारी बेगमों के शरीर के गुह्य अङ्गों को अच्छी तरह देख सके।

इन्द्रियजन्य सुख के लिए शाहजहाँ दिन रात रूपवती स्त्रियों की फ़िराक़ में रहा करता था। इस उद्देश्य से वह हर साल अपने महल के भीतर आठ दिनों तक स्त्रियोंका एक मेला लगवाता था। इस मेले में प्रतिष्ठित घराने की बहू बेटियों को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छोड़ प्रायः सब श्रेणी की स्त्रियाँ शरीक होती थीं। ये यहाँ अपने साथ बिक्री के लिए तरह २ की चीज़ें लातीं और बादशाह को वश में करने के लिए कोई बात उठा न रखती थीं। ऐसी हर एक स्त्री बादशाह के आने के पहले अपनी दूकान सजा कर और खूब बन ठन कर बैठी हुई उसकी प्रतीक्षा करती थी। बादशाह आठ दिनों तक बराबर रोज दो बार एक छोटे रथ पर बैठ कर बाज़ार की सैर करने निकलता था। इस रथको तातारी स्त्रियाँ खींचती थीं। इसके साथ हाथ में हीरा, मानिक और सोने की जड़ाऊ छड़ियां लेकर अनेक देशों की बहुत सी कुटनियाँ चलती थीं और उनके पीछे दलालों, हिजड़ों और वेश्याओं का झुंड रहता था। शाहजहाँ हर एक स्त्री को ध्यान से देखता हुआ आगे बढ़ता था। यदि किसी का रूप उसे मनोहर जँचता तो वह उसके पास जाता, उससे दो चार मीठी बातें कर कुछ चीज़ों को पसन्द करता और उसे उनका मुँहमाँगा मूल्य दिए जाने की आज्ञा देता था। इसके बाद वह कुटनियों को इशारा करके खुद तो आगे बढ़ता और उन्हें वहीं छोड़ जाता था। वे रूपवती स्त्रियों को फुसला कर अपने काबू में कर लेतीं और उन्हें यथा समय बादशाह के सामने हाज़िर करती थीं। उनमें से बहुतेरी तो धन पाने से खुश हो कर वापस चली जातीं और बाक़ी हरम में रख ली जाती थीं। आठ दिनों तक महल में नाचने गाने और अनेक प्रकार के आमोद प्रमोद से बड़ी चहल पहल रहती था। क़िले का फाटक बंद रहता और उसके भीतर सिवा बादशाह के दूसरा कोई पुरुष नहीं रहता थी। एक बार इस मेले में सम्मिलित होनेवाली स्त्रियाँ महल से बाहर निकलने पर गिनी गईं और वे तीस हज़ार से कुछ ऊपर पाई गईं।

साधारण वेश्याएँ प्रायः प्रति दिन क़िले के मैदान में छः बजे शाम से लेकर नौ बजे रात तक मशाल जला कर नाचतीं और गाती थीं। इस फ़न में कंचनी जाति की स्त्रियाँ बहुत होशियार थीं। शाहजहाँ उनका बड़ा मान करता था। उसने उनको बड़ी २ जागीरें दे रक्खी थीं। उसकी इस ख़ास मेहरबानी के बदले में वे उसको प्रति वर्ष कर देतीं और हफ़्ते में दो दिन दरबार में हाज़िर हो कर अपना हुनर दिखलाती थीं। एक बार उक्त जाति की किसी स्त्री के सौन्दर्य्यादि गुणों पर रीझ कर बादशाह ने उसको अपने हरम में रख लिया। उसकी यह कार्रवाई उसके किसी अमीर को बहुत नागवार मालूम हुई। उसने बादशाह से कहा कि शाही महल में इस दर्जे की औरतें रखने से आप की शान में बट्टा लगेगा। इस पर उसने जवाब दिया कि "मिठाई नेक दर दूकान कि बाशद" मिठाई अच्छी होनी चाहिए चाहे किसी दूकान की हो।

एक मरतबा शाहजहाँ दरबार में बैठा हुआ नाच देख रहा था। उस समय ख़लीलुल्लाह ख़ाँ भी वहाँ मौजूद था। उसने शाही रुतबे का कुछ ख़्याल न कर किसी नर्त्तकी से हँसी की। उसकी इस ढिठाई से बादशाह आग बबूला हो गया और उसने उसके क़त्ल का परवाना निकालना चाहा। लेकिन जाफ़र ख़ाँ की स्त्री के बीच में पड़ने से उसका क्रोध शान्त हो गया और अपराधी क्षमा कर दिया गया।

शाही हरम में केवल वही रूपवती स्त्री दाख़िल होने पाती थी जो बुद्धिमती भी होती थी; क्योंकि शाहजहाँ रूपवती स्त्रियों में अच्छी समझ का होना भी आवश्यक समझता था। वह अकसर उनकी बुद्धि की परीक्षा किया करता था। उसकी प्रधान चार परिचारिकाएँ रूप में बेगमों को भी मात करती थीं। वे पृथ्वी की चारों दिशाओं के नाम से मशहूर थीं। बादशाह उनकी बुद्धि परखना चाहता था। इस उद्देश्य से उसने एक मरतबा आधी रात को उठ कर एक एक करके चारों बाँदियों से पूछा कि सबेरा हुआ चाहता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं ? पहली ने निवेदन किया कि मेरे मुँह में न का स्वाद अब तक ज्यों का त्यों बना हुआ है से मालूम होता है कि सुबह होने में अभी बहुत है। यह सुन कर वह दूसरी के पास गया र उससे भी वही सवाल किया। उसने र दिया कि मेरे कमरे के दीपक का प्रकाश अभी ला नहीं हुआ है इससे सूचित होता है कि ी आधी रात का समय है, क्योंकि इसके बाद की ज्योति धीरे २ क्षीण होने लगती है। सरी ने जवाब दिया कि अभी रात ज़्यादा बाक़ी क्योंकि जब पौ फटने को होता है तब मेरे हार मोती ठंढे मालूम पड़ने लगते हैं, इससे न पड़ता है कि अभी रात बहुत ज़्यादा नहीं ी है। चौथी ने उत्तर दिया कि अभी दिन कलने में देर है क्योंकि सुबह नज़दीक होने पर शौच आदि से निवृत्त होने की ज़रूरत लूम पड़ती है *। इस प्रकार चारों बाँदियों से ने सवाल का ठीक जवाब पाकर बादशाह त खुश हुआ और जब सुबह हुई तब उसने को अपने पास बुलवा भेजा। पहली बाँदी उसने अपने खाने के पान का ज़िम्मेदार ाया और दूसरी को महल के दीपकों की रक्षा भार सौंपा। तीसरी को उसने मोती और ाहिरात के ख़ज़ाने सुपुर्द किए और चौथी के ाय में अपने सोने के कमरे की सफ़ाई का इन्त-ाम दिया।

हरिश्चन्द्र शुक्ल।

* पाठक समझ सकते हैं कि इस पुर्तगाली लेखक बहुत से सुने सुनाए किस्से भी भर दिए हैं।

लोभ या प्रेम।

किसी प्रकार का सुख या आनन्द देने-वाली वस्तु के संबंधमें मन की ऐसी स्थिति को जिसमें उसके अभाव के ध्यान के साथ ही प्राप्ति, सान्निध्य वा रक्षा की प्रबल इच्छा जाग्रत हो लोभ कहते हैं। दूसरे की वस्तु का लोभ करके लोग उसे लेना चाहते हैं, अपनी वस्तु का लोभ कर के लोग उसे देना या नष्ट होने देना नहीं चाहते। प्राप्य वा प्राप्त सुख के अभाव वा अभाव-कल्पना के विना लोभ की अभिव्यक्ति नहीं होती। अतः यह सुख-दुःख मिश्रित मनोवेग है। जब लोभ अप्राप्त के लिए होता है तब तो दुःख स्पष्ट ही रहता है। प्राप्त के संबंध में दुःख का अंग निहित रहता है और अभाव के निश्चय वा आशंका मात्र पर व्यक्त हो जाता है। सुखद वस्तु का अभाव न हो भाव में भी इस इच्छा का बीज रहता है पर अभाव का जब तक ध्यान नहीं होता तब तक इस वासना का कहीं पता नहीं रहता। हम बैठे बैठे किसी वस्तु का आनन्द ले रहे हैं और उस आनंद के अभाव से जो दुःख होगा उसका कुछ भी ध्यान हमारे मन में नहीं है, इसी बीच में कोई आकर उस वस्तु को ले जाना चाहता है तब हम उससे कुछ व्यग्र होकर कहते हैं 'अभी रहने दो।" इसके पहले कोरे आनंद के अनुभव में इस इच्छा का कहीं पता न था कि वह वस्तु हटाई न जाय।

लोभ का प्रथम अर्थात् संवेदनात्मक अवयव है किसी वस्तु का बहुत अच्छा लगना, बहुत सुख या आनन्द का अनुभव उत्पन्न करना। अतः वह आनन्द स्वरूप है। इसी से किसी अच्छी वस्तु को देख कर लुभा जाना कहा जाता है। पर केवल इस अवस्था में लोभ की पूरी अभिव्यक्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं होती। कोई वस्तु हमें बहुत अच्छी लगी, किसी वस्तु से हमें बहुत सुख वा आनन्द मिला इतने ही पर यह नहीं कहा जाता कि हमने लोभ किया। जब संवेदनात्मक अवयव के साथ इच्छात्मक अवयव का संयोग होगा अर्थात् जब उस वस्तु को प्राप्त करने की, दूर न करने की, नष्ट न होने देने की इच्छा प्रकट होगी तभी हमारा लोभ लोगों पर खुलेगा। इच्छा लोभ का ऐसा आवश्यक अंग है कि यदि किसी को कोई वस्तु बहुत अच्छी या प्रिय लगती है तो लोग कहते हैं कि 'वह उसे चाहता है।'

तुष्टि को भी अच्छा लगना कहते हैं और अभिरुचि को भी। भूखे रहने पर सबको पेड़ा अच्छा लगता है पर चौबे जी पेट भर भोजन के ऊपर भी पेड़े पर हाथ फेरते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि चौबे जी को पेड़े से अधिक अभिरुचि है। यही अभिरुचि लोभ का अंग हो सकती है। इंद्रियों के विषयभेद से अभिरुचि के विषय भी भिन्न भिन्न हो सकते हैं। कमल का फूल और रमणी का सुन्दर मुख अच्छा लगता है, वीणा की तान और अपनी तारीफ अच्छी लगती है, जूही, केसर की गंध अच्छी लगती है, रबड़ी और मालपूवा अच्छा लगता है, मुलायम गद्दा अच्छा लगता है। ये सब वस्तुएँ तो आप आनन्द देती हैं इससे इनकी प्राप्ति की इच्छा तो बहुत सीधी सादी और स्वाभाविक कही जा सकती है। पर जिससे इन सब वस्तुओं की प्राप्ति सुलभ होती है उसमें चाहे आनन्द देनेवाली स्वतः कोई बात न हो पर उसकी प्राप्ति की इच्छा होती है, उसका लोभ होता है। रुपये के रूप, रस, गंध आदि में कोई आकर्षण नहीं होता पर जिस वेग से मनुष्य उस पर टूटते हैं उस वेग से भौंरे कमल पर और कौए मांस पर भी न टूटते होंगे। यहाँ तक कि 'लोभी' शब्द से साधारणतः रुपये पैसे का लोभी, धन का लोभी समझा जाता है। एक धातुखंड के गर्भ में कितने प्रकार के सुख और आनन्द मनुष्य समझता है! पर यह समझ इतनी पुरानी पड़ गई है कि इसकी ओर हमारा ध्यान अब प्रायः नहीं रहता। धनसंचय करने में बहुतों का लक्ष्य धन ही रहता है, उससे प्राप्य सुख नहीं। वे बड़े से बड़े सुख के बदले में या कठिन से कठिन कष्ट के निवारण के लिए थोड़ा सा धन भी अलग करना नहीं चाहते। उनके लिए साध्य ही साध्य हो जाता है।

स्थितिभेद से प्रिय वा अच्छी लगनेवाली वस्तु के संबंध में इच्छा दो प्रकार की होती है—(१) प्राप्ति वा सान्निध्य की इच्छा, (२) दूर न करने वा नष्ट न होने देने की इच्छा। प्राप्ति वा सान्निध्य की इच्छा भी दो प्रकार की हो सकती है १ इतने सम्पर्क की इच्छा जितना और किसी का न हो, २ इतने सम्पर्क की इच्छा जितना सब को कोई या बहुत से लोग एक साथ रख सकते हैं। इनमें से प्रथम प्रतिषेधात्मक होने के कारण प्रायः विरोधग्रस्त होती है इससे उस पर समाज का ध्यान अधिक रहता है। कोई वस्तु हमें बहुत अच्छी लगती है; लगा करे, दूसरों को इससे क्या? पर जब हम उस वस्तु की ओर हाथ बढ़ावेंगे और औरों को उसकी ओर हाथ बढ़ाने न देंगे तो बहुत से लोगों का ध्यान हमारे इस कृत्य पर जायगा जिनमें से कुछ हाथ थामनेवाले और मुँह लटकानेवाले भी निकल सकते हैं। हमारे लोभ की शिकायत ऐसे ही लोग अधिक करते पाये जायँगे। दूसरों के लोभ की निंदा जैसी अच्छी लोभी कर सकते हैं वैसी और नहीं। माँगने पाने न पानेवाले और न देनेवाले दोनों इसमें प्रवृत्त होते हैं। एक कहता है 'वह बड़ा लोभी है देता नहीं' दूसरा कहता है 'वह बड़ा लोभी है बराबर माँगा करता है।' रहीम दोनों को लोभी, दोनों को बुरा कहते हैं—रहिमन वे नर मरि चुके जे कहुँ माँगन जाहिं। उनतें पहिले वे मुए जिन मुख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत 'नाहिं' ॥ ऐसा उस समय होता है जब ही वस्तु के संबंध में प्राप्त करने और दूर न ने की इच्छा बिंब प्रतिबिंब रूप से दो व्यक्तियों होती है। इसके अतिरिक्त एक ही वस्तु को करने की इच्छा यदि संयोग से कई प्राणियों के में हुई तो भी विरोध का पूरा विधान होता सारांश यह कि दोनों अवस्थाओं में लोभ का एक होने पर लोभी एक दूसरे को बहुत कुल करते हैं।

प्राप्ति की प्रतिषेधात्मक इच्छा की सदोषता निर्दोषता लोभ के विषय पर भी निर्भर है। भ के विषय दो प्रकार के होते हैं—सामान्य विशेष अच्छा खाना, अच्छा कपड़ा, अच्छा तथा धन जिससे ये सब वस्तुएँ सुलभ होती सब को भाता है, सब उसकी प्राप्ति की आकांक्षा हैं। ये लोभ के सामान्य विषय हुए जिन प्रायः मनुष्य मात्र का लक्ष्य रहता है अतः के प्रति जो लोभ होता है उस पर बहुत लोगों ध्यान जाता है। पर यदि किसी को गुलाब- सुन या विशेष बूटी की छींट बहुत अच्छी लगे वह उसे प्राप्त करना या न देना चाहे तो उसके लोभ पर बहुत कम लोगों का ध्यान जायगा जिनका ध्यान जायगा भी उन्हें वह खटकेगा। ऐसे लोभ की निंदा कहीं नहीं सुनाई देती। को जिसकी हाय हाय होती है, सब जिसको ना या रखना चाहते हैं वह बहुत से लोगों को मैदान में लाकर खड़ा किया करता है जहाँ दूसरे की गति विधि का निरीक्षण और अव- बड़ी कड़ी नज़र और पूरी मुस्तैदी से ता है।

यदि मनुष्य समाज में सब के लोभ के लक्ष्य भिन्न होते तो लोभ को बुरा कहनेवाले न मिलते। यदि एक साथ रहने वाले दस मियों में से कोई गाय बहुत चाहता कोई घोड़ा, कपड़ा, कोई ईंट, कोई पत्थर, कोई सोना, कोई चाँदी, कोई ताँबा और इन वस्तुओं में से किसी को शेष सब वस्तुओं को प्राप्त कराने की कृत्रिम शक्ति न दी जाती तो एक के लोभ से दूसरे को कोई कष्ट न पहुँचता और दूसरी बात यह होती कि लोभ का एक बुरा लक्षण जो असंतोष है उस की भी एक सीमा हो जाती—कोई कितनी गायें रखता, कितने घोड़े बाँधता, कहाँ तक सोना चाँदी इकट्ठा करता। पर विनिमय की असुविधा दूर करने के लिए मनुष्यों ने कुछ धातुओं में सब आवश्यक वस्तुओं के बदले में दिए जाने का कृत्रिम गुण आरोपित किया जिससे मनुष्य मात्र की सांसारिक इच्छा और प्रयत्न का लक्ष्य एक हो गया, सब की टकटकी टके की ओर लग गई। लक्ष्य की इस एकता से समाज में एक दूसरे की आंखों में खटकनेवाले लोभ की वृद्धि हुई। जब एक ही को चाहनेवाले बहुत से हो गए तब एक की चाह को दूसरे कहाँ तक पसंद करते? लक्ष्मी की मूर्त्ति धातुमयी हो गई, उपासक सब पत्थर के हो गए। धीरे धीरे यह दशा आई कि जो बातें पारस्परिक प्रेम की दृष्टि से, न्याय की दृष्टि से, धर्म की दृष्टि से की जाती थीं वे भी रुपये पैसे की दृष्टि से होने लगीं। आजकल तो बहुत सी बातें धातु के ठीकरों पर ठहरा दी गई हैं। पैसे से राजसम्मान की प्राप्ति, विद्या की प्राप्ति और न्याय की प्राप्ति होती है। जिनके पास कुछ रुपया है वे बड़े बड़े विद्यालयों में अपने लड़कों को भेज सकते हैं, न्यायालयों में फ़ीस देकर अपने मुक़दमे दाख़िल कर सकते हैं और मँहगे वकील बैरिस्टर करके बढ़िया खासा निर्णय करा सकते हैं, अत्यंत भीरु और कायर हो कर बहादुर कहला सकते हैं। राजधर्म, आचार्य्यधर्म वीरधर्म सब पर सोने का पानी फिर गया, सब टकाधर्म हो गए। धन की पैठ मनुष्य के सब कार्य्यक्षेत्रों में करा देने से उसके प्रभाव को इतना विस्तृत कर देने से ब्राह्मणधर्म और क्षात्र-धर्म का लोप हो गया, केवल वणिग्धर्म रह गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यापारनीति राजनीति का प्रधान अंग हो गई। बड़े बड़े राज्य माल की बिक्री के लिए लड़नेवाले सौदागर हो गए। जिस समय क्षात्रधर्म की प्रतिष्ठा थी, एक राज्य दूसरे राज्य पर कभी कभी विजयकीर्त्ति की कामना से डंके की चोट चढ़ाई करता था। अब सदा एक देश दूसरे देशों का चुपचाप दबे पावँ धन हरण करने की ताक में रहता है। इसीसे भिन्न भिन्न राज्यों की परस्पर सम्बन्ध-समस्या इतनी जटिल हो गई है। कोई कोई देश लोभवश इतना अधिक माल तैयार करते हैं कि उसे किसी देश के गले मढ़ने की फ़िक्र में दिन रात मरते रहते हैं। जब तक यह व्यापारोन्माद दूर न होगा तबतक इस पृथ्वी पर सुख शान्ति न होगी। दूर यह अवश्य होगा। क्षात्र धर्म की संसार में फिर प्रतिष्ठा होगी, चोरी का बदला डकैती से लिया जायगा।

यह तो सामान्य विषयगत प्रतिषेधात्मक लोभ की बात हुई। लोभ दृष्टि जितनी ही संकुचित होती है, उसके भीतर जितनी ही कम वस्तुएँ आती हैं उतना ही उसका दोष कम होता है। अच्छे भोजन की सब को चाह होती है अतः उसे बहुत चाहनेवाला लोभी कहला सकता है। पर अच्छे भोजनों में से यदि किसी को मिठाई की चाह अधिक रहे तो उसका दोष कम और मिठाइयों में से यदि केवल गुलाबजामुन की अधिक चाह रहे तो और भी कम क्या कुछ भी न समझा जायगा। इसी प्रकार जहाँ एक ही वस्तु बहुत सी रखी हुई हैं उसमें से यदि कोई एक किसी को बहुत पसंद आ जाय और वह उसको लेना चाहे तो उसकी गिनती लोभियों में न होगी। विश्वामित्र को वसिष्ठ की गाय बहुत पसंद आई और वे उसके बदले में बहुत सी गायें देने के लिए तैयार हो गए पर वसिष्ठ ने अपनी गाय नहीं दी। इसके लिए लड़ भिड़ कर भी न वसिष्ठ लोभी कहलाए, न विश्वामित्र। इसी प्रकार एक नवाब साहब को बाबू हरिश्चंद्र का एक अलबम बहुत पसंद आया था। ये लोभ के विशेष विषय के उदाहरण हैं। इनके प्रति जो लोभ होता है उसके अवसर इतने कम होते हैं कि उनसे स्वभाव या अधिक अभ्यास का अनुमान नहीं किया जा सकता। पर किसी की अच्छी चीज़ देखते ही जिनके मुँह में पानी आ जाता है वे बराबर खरी खोटी सुना करते हैं। एक लोभ से दूसरे लोभ का निवारण भी होता है जिससे लोभी में अन्य के त्याग का साहस आता है। विशेष विषयगत लोभ यदि बहुत प्रबल और सच्चा हुआ तो लोभी के त्याग का विस्तार बहुत बड़ा होता है। लोभ तो उसे एक विशेष और निर्दिष्ट वस्तु से है अतः उसके अतिरिक्त और सब का त्याग वह उसके लिए कर सकता है। विश्वामित्र एक गाय के लिए अपना सारा राज-पाट देने को तैयार हो गए थे। अन्य का त्याग अनन्य और सच्चे लोभ की पहचान है।

यहाँ तक तो प्राप्ति की प्रतिषेधात्मक इच्छा-युक्त लोभ की बात हुई जिसका प्रायः विरोध होता है। अब प्राप्ति की उस इच्छा का विचार करता हूँ जिसे एक ही वस्तु के सम्बन्ध में बहुत से लोग बिना किसी विरोध के रख सकते हैं। जिस लोभ से दूसरे को कोई असुविधा या कष्ट होता है उसी को पहले एक—प्रायः जिसे असुविधा या कष्ट होता है—बुरा कहता है, फिर दूसरा, फिर तीसरा इसी प्रकार बहुत से बुरा कहनेवाले हो जाते हैं। सारांश यह कि जो लोभ दूसरे की सुखशांति वा स्वच्छंदता का बाधक होता है अधिकतर वही निंद्य समझा जाता है। उपवन की शोभा सबको लुभाती है। यदि कोई नित्य किसी के बगीचे में जा कर टहला करे तो उसका क्या जाता है? यदि हम किसी वस्तु पर लुभा कर उससे उतना ही सम्पर्क रखना चाहते हैं जितना सब लोग एक साथ रख सकते हैं तो हमारा लोभ किसी की आँखों में नहीं खटकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ता। बगीचे को आंख से एक साथ बहुत लोग सकते हैं पर उसमें के फल नहीं खा सकते। देखने का भी दाम लगता है या कुछ आद- का देखना बिना बंद किए देखा नहीं जा ता वहां दर्शन संपर्क की इच्छा भी मुश्किल ाल देती है। पर जहां एक की इच्छा दूसरे इच्छा की बाधक न हो कर साधक होती है एक ही वस्तु का लोभ रखनेवाले बहुत से बड़े सद्भाव के साथ रहते हैं। लुटेरे या डाकू प्रकार दलबद्ध हो कर काम करते हैं।

किसी को कोई स्थान बहुत प्रिय हो जाता और वह हानि और कष्ट उठा कर भी वहाँ से जाना चाहता। हम कह सकते हैं कि उसे स्थान का पूरा लोभ है। जन्मभूमि का प्रेम, श-प्रेम यदि वास्तव में अंतःकरण का कोई है तो स्थान के लोभ के अतिरिक्त और कुछ है। इस लोभ के लक्षणों से शून्य देश-प्रेम बकवाद या फ़ैशन के लिए गढ़ा हुआ शब्द यदि किसी को अपने देश से प्रेम है तो उसे देश के मनुष्य, पशु, पक्षी, लता, गुल्म, पत्ते, बन, पर्वत, नदी निर्झर सब से प्रेम ा, सब को वह चाहभरी दृष्टि से देखेगा, सबकी कर के वह विदेश में आंसू बहावेगा। जो भी नहीं जानते कि कोयल किस चिड़िया नाम है, जो यह भी नहीं सुनते कि चातक चिल्लाता है जो आँख भर यह भी नहीं देखते आम प्रणयसौरभ-पूर्ण मंजरियों से कैसे लदे हैं, जो यह भी नहीं झांकते कि किसानों के पड़े के भीतर क्या हो रहा है वे यदि इन बने मित्रों के बीच प्रत्येक भारतवासी की औसत मदर्नी का परता बता कर देश-प्रेम का दावा तो उनसे पूछना चाहिए कि, भाइयो! बिना चय का यह प्रेम कैसा? जिन के सुख-दुःख के कभी साथी न हुए उन्हें तुम सुखी देखा ते हो, यह समझते नहीं बनता। उनसे कोसों दूर बैठे बैठे, पड़े पड़े, या खड़े खड़े तुम विलायती बोली में अर्थशास्त्र की दुहाई दिया करो, पर प्रेम का नाम उसके साथ न घसीटो। प्रेम हिसाब की बात नहीं है। हिसाब किताब करनेवाले भाड़े पर भी मिल सकते हैं पर प्रेम करनेवाले नहीं। एक अमेरिकन फ़ारसवालों को उनके देश का सारा हिसाब किताब समझा कर चला गया। हिसाब किताब से देश की दशा का ज्ञान मात्र हो सकता है। हितचिंतन और हितसाधन की प्रवृत्ति इस ज्ञान से भिन्न है, वह मन के वेग पर निर्भर है, उसका संबंध लोभ या प्रेम से है जिसके बिना अन्य पक्ष में आवश्यक त्याग का उत्साह हो ही नहीं सकता। जिसे ब्रज की भूमि से प्रेम होगा वह इस प्रकार कहेगा—

नैनन सों रसखान जबै ब्रज के बनबाग तड़ाग निहारौं।
कैतिक ये कलधौत के धाम करील के कंजन ऊपर वारौं॥

रसखान न तो किसी "लकुटी अरु कामरिया" पर तीनों पुरों का राजसिंहासन तक त्यागने को तैयार थे पर देश-प्रेम की दुहाई देनेवालों में से कितने अपने किसी थके मांदे भाई के फटे पुराने कपड़ों पर रीझ कर या कम से कम न खीझ कर बिना मन मैला किए कुरसी का गद्दा भी मैला होने देंगे? मोटे आदमियो! तुम जरा सा दुबले हो जाते—अपने अँदेशे से ही सही—तो न जाने कितनी ठठरियों पर मांस चढ़ जाता।

अब पूछिए कि जिनमें यह देश-प्रेम नहीं है उनमें यह किसी प्रकार हो भी सकता है? हां, हो सकता है—परिचय से, सान्निध्य से। जिस प्रकार लोभ से सान्निध्य की इच्छा उत्पन्न होती है उसी प्रकार सान्निध्य से भी लोभ या प्रेम की प्राप्ति होती है। जिनके बीच हम रहते हैं, जिन्हें हम बराबर आँखों से देखते हैं, जिनकी बातें हम बराबर सुनते रहते हैं, जिनका हमारा हर घड़ी का साथ हो जाता है, सारांश यह कि जिनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सान्निध्य का हमें अभ्यास पड़ जाता है उनके प्रति लोभ या राग हो जाता है। जिस स्थान पर कोई बहुत दिनों तक रह आता है उसे छोड़ते हुए उसे दुःख होता है। पशु और बालक भी जिनके साथ अधिक रहते हैं उनसे परच जाते हैं। यह परचना परिचय से निकला है। परिचय प्रेम का प्रवर्त्तक है। बिना परिचय के प्रेम नहीं हो सकता। यदि देश-प्रेम के लिए हृदय में जगह करना है तो देश के स्वरूप से परिचित और अभ्यस्त हो जाओ, बाहर निकलो तो आंख खोल कर देखो कि खेत कैसे लहलहा रहे हैं, नाले झाड़ियों के बीच से कैसे बह रहे हैं, टेसू के फूलों से वनस्थली कैसी लाल हो रही है, चौपायों के झुंड चरते हैं, चरवाहे तान लड़ा रहे हैं, अमराइयों के बीच में गाँव झाँक रहे हैं, उनमें घुसो, देखो तो क्या हो रहा है। जो मिलें उनसे दो दो बातें करो, उनके साथ किसी पेड़ की छाया के नीचे घड़ी आध घड़ी बैठ जाओ और समझो कि ये सब हमारे देश के हैं। इस प्रकार जब देश का रूप तुम्हारी आँखों में समा जायगा, तुम उसके अंग प्रत्यंग से परिचित हो जाओगे, तब तुम्हारे अन्तःकरण में इस इच्छा का उदय होगा कि वह हम से कभी न छूटे, वह सदा हरा भरा रहे, उसके धन धान्य की वृद्धि हो, उसके सब प्राणी सुखी रहें। यह तो वर्त्तमान प्रेमसूत्र हुआ। अतीत की ओर भी दृष्टि फैलाओ, राम कृष्ण, भीष्म, अर्जुन, विक्रम, कालिदास, भवभूति इत्यादि का स्मरण करो जिसमें ये सब नाम तुम्हारे प्यारे हो जायँ। इनके नाते भी यह भूमि और इस भूमि के निवासी तुम्हें प्रिय होंगे।

पर आजकल इस प्रकार का परिचय बाबुओं को लज्जा का एक विषय हो रहा है। वे देश के स्वरूप से अनजान रहने या बनने में अपनी बड़ी शान समझते हैं। मैं अपने एक लखनवी दोस्त के साथ साँची का स्तूप देखने गया। यह स्तूप एक बहुत सुन्दर छोटी सी पहाड़ी के ऊपर है, नीचे एक छोटा सा जंगल है जिसमें महुए के पेड़ भी बहुत से हैं। संयोग से उन दिनों पुरातत्त्व विभाग का कैंप पड़ा हुआ था। रात हो जाने से हम लोग उस दिन स्तूप नहीं देख सके, सबेरे देखने का विचार कर के नीचे उतर रहे थे, बसन्त का समय था। महुए चारों ओर टपक रहे थे। मेरे मुंह से निकला—"महुओं की कैसी अच्छी सुगन्ध आ रही है" इस पर लखनवी महाशय ने मुझे रोक कर कहा "यहाँ महुए सहुए का नाम न लीजिए, लोग दिहाती समझेंगे।" मैं चुप हो गया; समझ गया कि महुए का नाम जानने से बाबूपन में बड़ा भारी बट्टा लगता है।

आरंभ में ही कहा जा चुका है कि स्थिति-भेद से प्रिय वस्तु के संबंध में इच्छा दो प्रकार की होती है—(१) प्राप्ति वा सान्निध्य की इच्छा (२) दूर न करने वा नष्ट न होने देने की इच्छा। प्राप्ति वा सान्निध्य की इच्छा का विचार तो हो चुका। अब रक्षा की इच्छा का अन्वेषण करना है। रक्षा की इच्छा भी दो प्रकार की होती है—(१) स्वायत्त रक्षा की इच्छा अर्थात् अपने अधिकार में रखने की इच्छा (२) स्व-निरपेक्ष रक्षा की इच्छा अर्थात् केवल बने रहने देने की इच्छा। स्वायत्त रखने की इच्छा प्रायः अनन्य उपयोग या उपभोग की वासना से संबद्ध रहती है इससे वह कभी कभी लोगों को खटकती है और लोग उसका विरोध करते हैं। कोई बहुत मीठे आम का पेड़ है जिसका फल सब लोग खाते हैं और जिसकी रखवाली सब लोग करते हैं यदि उनमें से कोई एक अकेले उसकी रखवाली करने चले और किसी को पास न आने दे तो सब लोग मिल कर विरोध करेंगे। पर कभी कभी स्वायत्त रखने की इच्छा अन्य द्वारा यथेष्ट रक्षा के उस अविश्वास के कारण होती है जो लोभ या प्रेम की अधिकता से उत्पन्न होता है। ऐसी दशा में यदि संरक्ष्य वस्तु के उपयोग या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोग आदि में औरों को कोई बाधा नहीं होती है तो किसी एक का उसे अपनी रक्षा रखना दूसरे को बुरा नहीं लगता।

यदि लोभ की वस्तु ऐसी है जिस से सब को लाभ और आनंद है तो उस पर जितना ही अधिक ध्यान रहेगा, रक्षा के भाव के कारण परस्पर मेल उतनी ही प्रवृत्ति होगी। यदि दस आदमियों में सब की यही इच्छा है कि कोई मंदिर बना रहे, लड़ने-पड़ने न पावे अथवा और अधिक उन्नत और सुसज्जित हो तो यह सम्मिलित इच्छा ऐक्य होगी। मिल कर कोई कार्य्य करने से उस का साधन अधिक या सुगम होता है, यह बतलाना और उपदेश कुशल नीतिज्ञों का काम है, मेरे विचार का विषय नहीं। मेरा उद्देश्य तो मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्तियों की छानबीन है जो अध्यात्मिका वृत्ति से भिन्न हैं। मुझे तो यह कहना है कि इन इन अवस्थाओं में मेल की प्रवृत्ति होती है। अब मेल से क्या क्या लाभ होते हैं वे तो न जाने कितने झगड़ालू बताते हैं और न जाने कितने लोग सुन कर झगड़ा करते हैं।

लोभ का सब से प्रशस्त रूप वह है जो रक्षा मात्र की इच्छा का प्रवर्त्तक होता है, जो मन में यही वासना उत्पन्न करता है कि कोई वस्तु बनी रहे चाहे वह हमारे किसी उपयोग में आवे या न आवे। इस लोभ में दोष का लेश उसी अवस्था में लग सकता है जब वह वस्तु ऐसी हो जिस से किसी को कोई बाधा या हानि पहुंचती हो। कोई सुन्दर कृष्णसार मृग नित्य आकर खेती की हानि किया करता है। उसके सौन्दर्य्य पर मुग्ध होकर उसकी रक्षा चाहनेवाला यदि बराबर उसकी रक्षा में प्रवृत्त रहेगा तो बहुतों से उसकी अनबन हो सकती है। वह लोभ धन्य है जिस से किसी के लाभ का विरोध नहीं और उस लोभ की वस्तु के अपने सब लोभियों तो एक दूसरे का लोभी बनाए रहती है तो वह भी परम पूज्य है। घर का प्रेम, पुर या ग्राम का प्रेम, देश का प्रेम ये इसी पवित्र लोभ के क्रमशः विस्तृत रूप हैं। मनुष्य के प्रयत्नों की पहुंच बहुत परिमित होती है। अतः जो प्रेम क्षेत्र जितना ही निकटस्थ होगा उस में उतने ही अधिक प्रयत्न की आवश्यकता होगी और जो जितना ही दूर होगा, प्रयत्नों का उतना ही कम अंश उसके लिए आवश्यक होगा। सब से अधिक घर की रक्षा का, फिर पुर या ग्राम की रक्षा का, और फिर देश की रक्षा का ध्यान जनसाधारण के लिए स्वाभाविक है। पर जिनकी दृष्टि बहुत व्यापक होती है; जिनके अन्तःकरण में परार्थ को छोड़ स्वार्थ के लिए अलग जगह नहीं होती वे इस क्रम का विपर्य्यय कर दिखाते हैं, वे देश की रक्षा के लिए अवसर पड़ने पर घर का लोभ क्या प्राण तक का लोभ छोड़ देते हैं। पर ऐसे लोग बिरले होते हैं। सब से ऐसी आशा नहीं की जा सकती।

अब घर का प्रेम, पुर का प्रेम, देश का प्रेम कहाँ तक विरोध शून्य होता है यह भी देखिए। इनका अविरोध परिमित होता है—घर के भीतर, पुर या ग्राम के भीतर, देश के भीतर ही उसके होने का निश्चय रहता है। घर के बाहर, पुर या ग्राम के बाहर, देश के बाहर विरोध करनेवाले मिल सकते हैं। एक घर की रक्षा दूसरे घरवालों से, एक पुर की रक्षा दूसरे पुरवालों से, और एक देश की रक्षा दूसरे देशवालों से करनी पड़ती है।

सभा का कार्य विवरण।

(गतांक से आगे)

अथवा यदि यह किसी कारण से श्रीमान् के मनोनीत न हो तो इनके स्थान पर निम्नलिखित शब्द बढ़ाए जायँ "until the Surya Kumari chair of Hindi Literature at the Hindu University, as detailed in

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Art. 3, has been endowed when the interest on additional sums thereafter credited by the donee from time to time out of sale proceeds shall be utilized in a manner that the existing trustees should from time to time decide provided always that in no case shall the trustees ever utilize the money for any purpose except the advancement and propagation of the Hindi language and literature in the Devanagari Character"

(ग) बाबू शिवप्रसाद गुप्त ने प्रस्ताव किया कि सभा माननीय पंडित मदनमोहन मालवीय जी तथा बाबू श्यामसुंदरदास जी को अपना प्रतिनिधि नियत करे कि वे अजमेर वा शाहपुरा में श्रीमान् महाराज कुमार उम्मेदसिंह जी की सेवा में उपस्थित हों और इस संबंध में श्रीमान् का जो अंतिम निर्णय हो उसी के अनुसार सभा की ओर से यह दानपत्र धन्यवाद पूर्वक स्वीकार करें।

बाबू गौरीशंकरप्रसाद जी ने कहा कि माननीय पंडित मदनमोहन मालवीय जी पर यदि बड़े बड़े महत्व के कार्यों का भार न होता तो अवश्य मालवीय जी महाराज को यह कष्ट देना उचित होता। अस्तु इस कार्य में विलंब न हो इस विचार से केवल बाबू श्यामसुंदरदास जी को ही प्रतिनिधि नियत करना ठीक होगा।

अधिक सम्मति से निश्चय हुआ कि बाबू श्यामसुंदरदास जी ही इस कार्य के लिए प्रतिनिधि नियत किए जाँय।

—(१०) बाबू श्यामसुन्दर दास जी के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ कि निम्नलिखित सज्जनों की एक उपसमिति बना दी जाय जो 'सूर्यकुमारी पुस्तकमाला' और 'देवी प्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला' के संबंध में सभा को सम्मति दे कि किस प्रकार इन दोनों पुस्तकमालाओं का कार्य चलाया जाय।

बाबू श्यामसुंदरदास बी० ए०
बाबू श्रीप्रकाश बी० ए०, एल० एल० बी०
बाबू शिवप्रसाद गुप्त
बाबू वेणीप्रसाद
बाबू रामदास गौड़ एम० ए०
पण्डित रामचन्द्र शुक्ल
पण्डित रामनारायण मिश्र बी० ए०
सभा के मंत्री (संयोजक)

(११) मंत्री ने सूचना दी कि इस वर्ष डाक्टर छन्नूलाल मेडल राधाकृष्णदास मेडल और रेडिचे मेडल के लिए कोई लेख नहीं आए हैं।

निश्चय हुआ कि इन मेडलों के लिए इस वर्ष भी वे ही विषय रक्खे जाँय जो गत वर्ष रक्खे गए थे।

(१२) बाबू जगन्मोहन वर्मा का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि उनसे गत दो वर्षों का चन्दा ३) के स्थान पर १॥) रु० वार्षिक के हिसाब से ले लिया जाय।

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय।

(१३) हिंदू यूनिवर्सिटी के रजिस्ट्रार का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने १७ जनवरी के लिये सभा से २० बेंचें मँगनी मांगी थीं।

निश्चय हुआ कि सभा की आवश्यकताओं को समझ कर मंत्री यदि १५ बेंचें दे सकें तो वे दे दी जाँय।

(१४) निश्चय हुआ कि गत वर्षों में ना० प्र० ग्रंथमाला की जो संख्याएँ प्रकाशित नहीं हो सकी हैं उनके बदले में सभासदों को हिंदी शब्दसागर तथा मनोरंजन पुस्तकमाला को छोड़ कर सभा की अन्य पुस्तकें दी जाँय।

(१५) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधारण सभा।

निवार तारीख २५ जनवरी १९१९ संध्या के ५ बजे
स्थान-सभाभवन।

(१) बा० बालमुकुंद के प्रस्ताव तथा बा० रामचंद्र के अनुमोदन पर पं० जानकीशरण त्रिपाठी सभापति चुने गए।

(२) तारीख २८ सितंबर १९१८, २६ अक्तूबर १९१८, ३० नवंबर १९१८, १७ दिसंबर १९१८ और २८ दिसंबर १९१८ के कार्यविवरण उपस्थित किए गए और स्वीकृत हुए।

(३) प्रबंधकारिणी समिति के १० सितंबर ९, ४ अक्तूबर १८ और १८ नवंबर १८ के कार्यविवरण सूचनार्थ उपस्थित किए गए।

(४) सभासद होने के लिए निम्नलिखित सज्जनों के आवेदनपत्र उपस्थित किये गए:—

१—बाबू लालजी सिंह गहरवार, संपादक प्रियमित्र भोजूबीर, काशी ३)

२—पं० रामचंद्र गोविंदराव पाठक कबीरचौरा, काशी १॥)

३—बाबू मोतीलाल साव कबीरचौरा, काशी १॥)

४—कुँअर सोनी चंद्रभानु वर्मा गढ़ी कमंदरी, पो० फर्रुखनगर जि० मेरठ १॥)

५—बाबू विष्णुदत्त भार्गव ११ त्रिपौलिया प्रयाग ५)

६—बाबू हरदेव प्रसाद श्रीवास्तव नं० ३८ गोवर्धन सराय, काशी १॥)

७—पंडित वैजनाथ भारद्वाजी गायघाट, काशी १॥)

८—बाबू कृष्णचंद्र सिंह अस्सीघाट, काशी १॥)

९—बाबू प्यारेलाल भार्गव कार्यकर्त्ता ज्ञानमंडल, काशी। ५)

१०—पंडित ठाकुरप्रसाद द्विवेदी पकरीबंदा, पो० सुकेखा जि० बस्ती ३)

११—बाबू अच्छैवर सिंह, नायब तहसीलदार दुधी, जि० मिर्ज़ापुर १॥)

१२—बाबू शंकरलाल धर्म्मा खुजनेर, नरसिंहगढ़ स्टेट ३)

१३—पण्डित निरंजनलाल शर्म्मा, फारा नमक भरतपुर १॥)

१४—बाबू चन्द्रिकाप्रसाद श्रीवास्तव, मध्यमेश्वर काशी १॥)

१५—बाबू जुगलकिशोर कावरा, सेठ अभयराम चुन्नीलाल की कोठी, काशी १॥)

१६—बाबू देवनन्दनसिंह दारानगर काशी १॥)

निश्चय हुआ कि ये सज्जन सभासद चुने जांय।

(५) निम्नलिखित सभासदों के इस्तीफे उपस्थित किए गए और स्वीकृत हुए।

१—पण्डित श्रीनाथ शास्त्री वेताल, काशी

२—पण्डित नारायण शास्त्री खिस्ते, काशी

३—बाबू जीवनदास ठठेरी बाज़ार, काशी

४—पण्डित देवरत्न शर्म्मा देहरादून

५—पण्डि शंकरराव कापशे—काशी

६—बाबू गोपालदास आसभैरव, काशी

(६) मंत्री ने निम्नलिखित सभासदों की मृत्यु की सूचना दी।

१—बाबू जयरामदास गुप्त राजघाट, काशी।

२—बाबू केशवदास अग्रवाल सेवक राम, सदावर्ती की गली काशी।

३—पण्डित नन्दराय चौबे काशी।

४—भाई रामसिंह शकारपुरी, काशी।

५—पण्डित गौरीप्रसादमिश्र वकील भागलपुर

६—बाबू जयमूर्तिसिंह बी० ए० डिपटी कलेक्टर उन्नाव।

७—सेठ रघुवंशलाल रायबहादुर, डिस्ट्रिक्ट एण्ड सेशन्स जज फतेहगढ़।

८—पण्डित लक्ष्मीशंकर अवस्थी, अभ्युदय आफ़िस, प्रयाग।

(९) राय पूरनचंद्र धर्मशाला घाट, पटना।

सभा ने इस पर अत्यंत शोक प्रगट किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(७) निम्नलिखित पुस्तकें धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईं:—

ओंकार बुक डिपो, प्रयाग
गौतम बुद्ध
महात्मा मार्टिन लूथर
बाबू मुरारी दास, काशी
बीसवीं सदी का महाभारत
बाबू शिवदास गुप्त, काशी
भारत की शासन प्रणाली
बाबू उमाप्रसाद जायसवाल बड़ा गणेश, काशी
प्रातःस्मरणीय चरित माला
गुजराती साहित्य परिषद्, कामटी
सृष्टिनी उत्पत्ति (गुजराती)
शारदा बुक डिपो
जार्ज वाशिंगटन
बाबू धनसुख दास हीरालाल आंवलिया मीनासर बीकानेर
श्रावक धर्मविचार
बाबू बीजराज जोरावर मल बाँठिया, जयपुर
प्रश्नोत्तर तत्त्वबोध
धर्मशिक्षा बालबोध
गतागत का थोकड़ा
जमीन चिपटी होने का सबूत
बाबू चम्पालाल, कोठी बाबू अभयराम चुन्नीलाल काशी।
भागवद्गीता भाग ३
बाबू रामाधीन दास हनुमन्तनिवास रामगंज कालपी
रामायण दिग्विजय मुक्तावली ३ भाग
हिन्दी साहित्य सम्मेलन कार्यालय प्रयाग
भारतगीता
— हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास
बाबू द्वारकादास केदारबक्स भगत ४ चिनीपट्टी कलकत्ता
श्रीरामनामामृत
बाबू गंगाशंकर पंचौली भरतपुतर
कालसमीकरण
राय बहादुर पण्डित गौरीशंकर हीराचन्द ओझा अजमेर।
भारतीय प्राचीन लिपिमाला
संयुक्त प्रदेश के शिक्षा विभाग के डाइरेक्टर
Sacred Books of the Hindus Vol. XXI (Yajnavalkya Smriti).
मद्रास की गवर्नमेण्ट।
A descriptive Catalogue of the Sanskrit mss in the Government Oriental mss Library Madra's Vol. XXI (Kayes)
" " Vol. XXXII. (Rhoteric & Poetic)
" " Vol. XXXIII (Medecine)
एशियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल, कलकत्ता
Memoirs of the Asiatic Society of Bengal Vol. VI P P. 217-320 Part V.
Journal and Proceedings of the Society Vol. XIV 1918 No. 7.
भारत की गवर्नमेन्ट।
Proceedings of the All-India Conference of Libraries held at Lahore 4th-8th January 1918.
स्मिथसोनियन इन्स्टीट्यूशन, वाशिंगटन।
Recent Discoveries attributed to Early Man in America. Tuton Six Music Meliocese Ocutrali-Americance ai Panameuses. Descriptions of two new birds from Haiti.

(८) बाबू हरिहरनाथ जी का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि जिस सभासद को किसी नियम के अनुसार प्रबंधकारिणी समिति में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसके सदस्य की हैसियत से उपस्थित होने का अधिकार हो वह प्रबंधकारिणी समिति का सदस्य चुना जाय ।

बाबू रामदास गौड़ ने प्रस्ताव किया कि आज प्रस्तावकर्ता उपस्थित नहीं हैं अतः यह प्रस्ताव आगामी अधिवेशन में उपस्थित किया जाय। पंडित हरनाथ तिवारी ने इसका अनुमोदन किया। अधिक सम्मति से यह अस्वीकृत हुआ ।

बाबू रामचंद्र वर्म्मा के प्रस्ताव तथा पं० विश्वेश्वरनाथ तिवारी के अनुमोदन पर सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि बाबू हरिहरनाथ का प्रस्ताव नियम संशोधन समिति के पास भेजा जाय।

(९) बाबू जयकृष्णदास का १३ नवम्बर का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रबंधकारिणी समिति का सदस्य होना अस्वीकार किया था ।

निश्चय हुआ कि बाबू जयकृष्ण दास जी के स्थान पर बाबू जगन्नाथ झुझनूवाले समिति के सदस्य चुने जांय ।

(१०) नवम साहित्य सम्मेलन के सभापति के लिए पांच सज्जनों के नाम भेजने के संबंध में साहित्य सम्मेलन के प्रधान मंत्री का पत्र उपस्थित किया गय। निश्चय हुआ कि इसके लिए निम्नलिखित महानुभावों के नाम भेजे जांय, अर्थात् माननीय पंडित मदन मोहन मालवीय, रायबहादुर पंडित गौरीशंकर हीराचंद ओझा, श्रीमान् महाराजा साहब बहादुर बड़ौदा, ग्वालियर नरेश और श्रीमान् इंदौर नरेश ।

(११) पं० श्रीकृष्ण शुक्ल आदि के १९ अक्तूबर १९१८ के पत्र के संबंध में सभापति महोदय का २६ नवम्बर १९१८ का पत्र उपस्थित किया गया। निश्चय हुआ कि इसकी प्रतिलिपि पं० श्रीकृष्ण शुक्ल आदि के पास भेज दी जाय ।

(१२) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई ।

साधारण सभा ।

शनिवार ता० २२ फरवरी १९१९ संध्या के ५ बजे
स्थान-सभाभवन

(१) बाबू रामचंद्र वर्म्मा के प्रस्ताव तथा पं० विश्वेश्वर नाथ तिवारी के अनुमोदन पर पं० रामचंद्र शुक्ल सभापति चुने गए ।

(२) गत अधिवेशन (तारीख २५ जनवरी १९१९) कार्य-विवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ ।

(३) प्रबंधकारिणी समिति का ता० १४ जनवरी १९१९ का कार्यविवरण सूचनार्थ उपस्थित किया गया ।

(४) सभासद होने के लिए पंडित उमाकांत पांडेय भेलूपुरा काशी का पत्र उपस्थित किया गया। निश्चय हुआ कि ये सभासद चुने जाँय ।

(५) बाबू लालजी सिंह का १८ फरवरी का पत्र उपस्थित किया गया जिस में उन्होंने लिखा था कि यदि सभा ने पिछला चन्दा लेकर उन्हें सभासद बनाना स्वीकार किया है तो वे सभासद नहीं होना चाहते ।

निश्चय हुआ कि बाबू लालजी सिंह से पूछा जाय कि क्या वे अपना पिछला चन्दा क्षमा कराना चाहते हैं और उनका उत्तर आने पर यह विषय विचारार्थ उपस्थित किया जाय।

(६) रेवरेण्ड ई० ग्रीव्स का १८ फरवरी का पत्र उपस्थित किया गया जिस में उन्होंने लिखा था कि वे सदा के लिये भारतवर्ष से इङ्गलैण्ड जा रहे हैं अतः सभा से उनका इस्तीफ़ा स्वीकार किया जाय ।

निश्चय हुआ कि रेवरेण्ड ग्रीव्स महोदय सभा के बड़े हितैषियों में हैं अतः उनसे प्रार्थना की जाय कि वे इङ्गलैण्ड में रहकर भी इस सभा के सभासद बने रहें और वहां से उसी प्रकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभा का हित-साधन करते रहें जिस प्रकार अब तक करते रहे हैं।

(७) निम्न लिखित पुस्तकें धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईं:—

खड्गविलास प्रेस, बांकीपुर ।

The Great war and India's duty. England and allies.

बाबू परीक्षित सिंह लालाका बाज़ार, मेरठ,
रास पंचाध्यायी और भँवरगीत
सँयुक्त प्रदेश की गवर्नमेंट

Progress of Education in India 1912-1917 Vol.

(८) नियम संशोधन समिति की रिपोर्ट और संशोधित नियमावली उपस्थित की गई।

निश्चय हुआ कि यह प्रस्तावित नियमावली नागरीप्रचारिणी पत्रिका में प्रकाशित कर दी जाय और पत्रिका द्वारा ही सभासदों से प्रार्थना की जाय कि जिन सज्जनों को इसके संबंध में प्रस्ताव या सुधार करना हो वे कृपापूर्वक अधिक से अधिक १ मई १९१९ तक अपने प्रस्ताव या सुधार सभा में भेज दें। इसके अनंतर नियमावली पर विचार करने के लिए सभा का एक विशेष अधिवेशन किया जाय।

(९) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

सूचना।

सभा ने नियमों के संशोधन के लिए जो समिति बनाई थी उसकी संशोधित नियमावली नीचे प्रकाशित की जाती है। जिन सभासद महाशयों को नियमों के सम्बन्ध में कोई प्रस्ताव या सुधार करना हो वे १ मई १९१९ तक अपने सुधार या प्रस्ताव सभा में भेज दें।

अनुक्रमणिका।

अध्याय १—नाम, उद्देश्य और अधिकार
२—सभा का संगठन और उसके अंग
(१) सभासद
(२) संरक्षक
(३) बोर्ड आफ ट्रस्टीज
(४) कार्य्याधिकारी
(५) प्रबंध तथा समितियाँ
" ३—सभा के अधिवेशन और वार्षिक निर्वाचन।
" ४—सभा के विशेष कार्य्य।
१ पुस्तकालय
(२ प्रकाशन विभाग
(३) संबद्ध सभाएँ
(४) परीक्षाएँ और सुबोध व्याख्यान

पहला अध्याय।

नाम, उद्देश्य *और अधिकार।

१—इस सभा का नाम "नागरी प्रचारिणी सभा" होगा।

२—इस सभा के मुख्य उद्देश्य यह हैं—

(१) हिंदी भाषा और नागरी लिपि का प्रचार करना तथा उसे उचित अधिकार दिलाने के लिये उद्योग करना।

(२) हिंदी भाषा को उत्तम बनाना और आवश्यक विषयों के ग्रंथों से अलंकृत करना और उसके प्राचीन भांडार की रक्षा करना।

---

* इस सभा की रजिस्ट्री The Societies Registration Act 1860, अर्थात् सन् १८६० के एक्ट २१ के अनुसार हुई है, अतः जहां किसी विषय पर कोई विशेष नियम नहीं है वहां उक्त आईन के नियम प्रयुक्त होंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) हिंदी को शिक्षा का माध्यम बनाने का प्रयोग करना।

(४) अन्य ऐसे कार्य करना जो इन उद्देश्यों की पूर्त्ति के लिये उपयुक्त और आवश्यक हों।

३—हिंदी भाषा तथा नागरीलिपि संबंधी बातों के अतिरिक्त इस सभा में किसी राजनीतिक विषय वा मतमतांतर संबंधी वाद-विवाद पर विचार न किया जायगा।

अधिकार—

४—इस सभा को अधिकार होगा कि अपने उद्देश्यों की सफलता के लिये धन तथा स्थावर और जंगम संपत्ति एकत्र करे वा बढ़ावे, तथा बढ़ाने के लिये ही उनकी दशा वा स्थान में वा स्वत्व में परिवर्त्तन करे; कंपनियों के हिस्से प्राप्त करे वा बेंच दे; डिबेंचर ऋणों तथा प्रामिसरी नोट आदि धन संबंधी कागजों का लेन देन करे, तथा अन्य ऐसे व्यवहार करे जिन से सभा की आर्थिक उन्नति होते हुए उस के उद्देश्यों में किसी प्रकार की बाधा न पड़े।

५—इस सभा की समस्त आय और संपत्ति इसी सभा के उद्देश्यों की पूर्त्ति में लगाई जायगी। इसका कोई भाग उन लोगों को जो सभा के सभासद हैं वा रहे हों या उन में से किसी को वा उनके द्वारा किसी अन्य को किसी प्रकार के लाभ, आय, हिस्सा या और किसी रूप में नहीं दिया जायगा, परंतु सभा के किसी नौकर अथवा किसी सभासद या किसी दूसरे मनुष्य को यदि वह सभा का कोई काम करे तो पुरस्कार या वेतन देने में यह नियम बाधा न डालेगा।

६—सभा की जो कुछ आय हो उस पर तथा समस्त संपत्ति पर साधारण सभा का पूर्ण अधिकार होगा कि उद्देश्यों की सिद्धि के लिये (क) उनका उपयोग करे, (ख) उन में वृद्धि के उपाय करे, (ग) हानि से उनकी रक्षा करे, और (घ) इन आवश्यकताओं तथा उद्देश्यों के अनुसार (१) संरक्षक, (२) बोर्ड आफ़ ट्रस्टीज, (३) कार्याधिकारी, (४) प्रबंध समिति और (५) अन्य समितियों तथा उपसमितियों को चुने वा उनका संस्थान करे (६) अधिवेशन करे और (७) नियमों की रचना तथा नियमों में परिवर्त्तन वा परिवर्द्धन करे।

७—यदि सभा के धन वा संपत्ति के प्रबंध या प्रयोग में कोई हानि हो तो उस के लिये कोई एक सभासद उत्तरदाता न होगा जब तक कि वह हानि उसने जान बूझ कर न की हो।

८—यदि कभी इस सभा के उठ जाने पर सब लहना देना साफ कर के कुछ संपत्ति या धन बच जायगा तो वह सभा के सब सभासदों या उनमें से किसी एक को न दिया जायगा वरन् वह किसी ऐसी दूसरी सभा या समाज को दे दिया जायगा जिस के उद्देश्य इस सभा के उद्देश्यों के समान होंगे। इसका निर्णय उन सभासदों में से कम से कम $\frac{2}{3}$ के सहमत होने पर होगा जो उस समय स्वयम् या प्रतिनिधि द्वारा उपस्थित होंगे यदि ऐसा न हो सका तो इसका निर्णय किसी ऐसे जज या न्यायालय द्वारा होगा जिसको इसके संबंध में फैसला करने का अधिकार होगा। परंतु किसी विशेष दान की संपत्ति के दाता ने इस संबंध में जो शर्त्तें रखी होंगी उनके अनुसार इस अंश का प्रबंध किया जायगा।

स्थान और वर्ष—

९—इस सभा का स्थान काशी होगा और वर्ष मेष संक्राति के दिन समाप्त हुआ करेगा।

जाँच—

१०—इस सभा की समस्त स्थावर तथा जंगम संपत्ति की और आयव्यय की और हानि लाभ की जाँच एक वा अधिक प्रामाणिक ऑडिटरों द्वारा वर्ष के अंत में हुआ करेगी और वार्षिक अधिवेशन में जो लेखा उपस्थित किया जायगा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह जाँचा हुआ तथा ऑडिटर के प्रमाणपत्र सहित होगा।

मुखपत्र—

११—इस सभा की एक मुखपत्रिका होगी जिसका नाम नागरी प्रचारिणी पत्रिका होगा, जो नियत समय पर प्रकाशित हुआ करेगी जिस में विविध विषय के लेखों और समालोचनाओं के अतिरिक्त सभा के समस्त कार्य-विवरण, समाचार, सूचनाएँ तथा मासिक आय व्ययका लेखा आदि अवश्य प्रकाशित हुआ करेंगे और जिसकी एक एक प्रति प्रत्येक सभासद के पास विना मूल्य भेजी जाया करेगी। सभा संबंधी विषयों के अतिरिक्त अन्य लेखों की उत्तरदात्री सभा न होगी।

१२—इस सभा को अधिकार होगा कि अन्य समान उद्देश्योंवाली संस्थाओं से संबंध तथा सहकारिता करे, एक या अधिक पुस्तकालय वा वाचनालय स्थापित करे, पुस्तकें प्रकाशित करे और बेंचे, किसी विषय पर सुबोध व्याख्यान करावे. उपदेशक वा डेप्युटेशन अपने उद्देश्यों की पूर्त्ति के लिये भेजे।

१३—सभा की ओर से जब कभी उपदेशक, डेप्युटेशन या एजेंट बाहर भेजे जायँगे तो उन्हें सभापति और मंत्री दोनों के हस्ताक्षर और सभा की मुहर के साथ अधिकार-सूचक पत्र दिया जायगा जिस के बिना उन्हें सभा की ओर से कुछ कार्य्य करने वा धन एकत्र करने का अधिकार न होगा।

स्थायी कोष—

१४—इस सभा का एक स्थायी कोष होगा जिसमें (अ) स्थायी सदस्य होने का चंदा, (इ) साधारण सदस्यों के चन्दे का बीसवाँ अंश, (उ) स्थायी कोश के निमित्त ही दिया हुआ धन का दान, तथा (ऋ) वार्षिक आय से बचा हुआ जो अंश प्रबंध समिति दे सके, प्रतिवर्ष जमा हुआ करेगा।

१५—इस सभा के स्थायी कोश पर तथा उस की स्थावर संपत्ति पर पूर्ण अधिकार बोर्ड आफ ट्रस्टीज़ को होगा। इस बोर्ड का यह कर्त्तव्य होगा कि इस कोश तथा संपत्ति से जो आय हो उसे उद्देश्यों की पूर्त्ति के लिये ही प्रबंध समिति द्वारा व्यय करे।

१६—स्थायी कोश के मूल धन में से तब तक कोई अंश न व्यय किया जायगा जब तक प्रबंधकारिणी समिति के प्रस्ताव पर तथा सभा के विशेष अधिवेशन की स्वीकृति पर बोर्ड के सभासदों का कम से कम ⅔ भाग वैसा करने की स्पष्ट आज्ञा और सम्मति न दे। इस संबंध में पत्र द्वारा भी सम्मति मान्य होगी।

नियमन—

१७—साधारण सभा को अधिकार होगा कि समय समय पर प्रबंध-समिति बोर्ड वा सात सभासदों के सहमत प्रस्ताव पर किसी नियम में परिवर्त्तन वा परिवर्द्धन करे वा नये नियम बनावे परंतु यह संशोधन वा परिवर्द्धन पत्रिका में प्रकाशित होकर प्रबंध-समिति द्वारा एकत्र किए जावेंगे और वार्षिक अधिवेशन में स्वीकृत होने पर उनका व्यवहार होगा और उनका समावेश नियमावली में किया जायगा।

१८—कार्यालय तथा पुस्तकालय की व्यवस्था पर पुस्तक प्रकाशन वा सम्पादन पर परीक्षाओं वा पुरस्कार पर वा अन्य ऐसे विषयों पर जिनके नियम नहीं बनाए गए हैं प्रबंध समिति को अधिकार होगा कि उद्देश्यों की सीमा के भीतर ही सभा के नियमों के अनुकूल और अनुगामी उपनियम बनावे और प्रकाशित करे और साधारण सभा को अधिकार होगा कि इन उपनियमों पर विचार करे और यदि आवश्यक हो तो इनमें सुधार करे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९-जब कभी किसी नियम का परिवर्त्तन होगा तो प्रत्येक सभासद को सभा की पत्रिका द्वारा उसकी सूचना दी जायगी।

दूसरा अध्याय।

सभा का संगठन और उसके अंग।

१) सभासद।

२०—इस सभा के सभासद हिंदी भाषा और नागरी लिपि के प्रेमी मात्र हो सकते हैं। यह सभासद तीन प्रकार के होंगे।

प्रकार—

(१) "साधारण सभासद" जिनकी संख्या अपरिमित रहेगी। काशी के रहनेवाले स्थानीय और बाहर के रहनेवाले बाहरी कहलावेंगे।

(२) "मान्य सभासद" जिनकी संख्या ३० से अधिक न होगी, वे ही सज्जन हो सकेंगे जिनसे सभा हिंदी भाषा वा अपने उपकार की कुछ विशेष आशा रखती हो और जो विद्या और बुद्धि के लिये प्रसिद्ध हों।

(३) "स्थायी सभासद"—जिनकी संख्या अपरिमित होगी वे ही महाशय परिगणित हो सकेंगे जो सभासद होने के लिये सभा को १००)* रु० वा उससे अधिक धन एक बारगी वा एक वर्ष के भीतर देंगे।

२१—(क) मान्य, स्थायी वा जो सभासद ३) वा इससे अधिक वार्षिक चंदा देंगे उन्हें जब सभासद होंगे उसके बाद से ही वार्षिक विवरण, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नागरी प्रचारिणी ग्रंथमाला और नागरी प्रचारिणी लेखमाला विना मूल्य दी जायँगी। जो सभासद ३) वार्षिक देंगे उन्हें वार्षिक विवरण और उनके इच्छानुसार ग्रंथमाला अथवा लेखमाला तथा जो १॥) वार्षिक देंगे उन्हें केवल वार्षिक विवरण और पत्रिका उनके सभासद हो जाने के बाद से विना मूल्य दी जायगी। (ख) सभासदों को सभा द्वारा प्रकाशित प्रायः सभी पुस्तकें और पत्र सर्व साधारण की अपेक्षा कम मूल्य पर पानेका अधिकार होगा, परंतु इस कमी वा ऐसी पुस्तकों का निर्देश समय समय पर प्रबंध समिति किया करेगी और पत्रिका में पुस्तकों के साथ उसका स्पष्ट उल्लेख रहा करेगा।

चुनाव—

२२—(क) जिन महाशयों को सभासद होने की इच्छा हो उन्हें निम्नलिखित आशय के पत्र पर हस्ताक्षर कर मंत्री के पास भेजना होगा।

श्रीयुत मंत्री, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

महाशय,

मैं काशी नागरी प्रचारिणी सभा का सभासद होना चाहता हूँ। मैं...रु० वार्षिक चंदा दूंगा और प्रतिज्ञा करता हूँ कि सभा के नियमों का पालन करूँगा, यथासाध्य हिंदी भाषा और नागरी लिपि का स्वयं व्यवहार करूँगा तथा इनके प्रचारार्थ उद्योग करता रहूँगा।

भवदीय

तिथि..... { नाम..... पता.....

* हमारी सम्मति में ये सभासद होनेके योग्य हैं।

.....प्रस्तावकर्त्ता

सभासद ना० प्र० सभा।

यह पत्र साधरण सभा में स्वीकारार्थ उपस्थित किया जायगा। और किसी सभासद के प्रस्ताव

---

* बाबू श्यामसुंदरदास की राय में २००) रु० होना चाहिए।

* सभासद ऐसे व्यक्तियों के लिये सभासद बनाने का प्रस्ताव न करें जिनकी वृत्ति निंदनीय हो और जिनके आचरण बुरे सिद्ध हो चुके हों तथा जो सभ्य समाज में न बैठ सकते हों।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर वह सभा में पढ़ा जायगा और अधिक सम्मति से स्वीकृत होने पर सभासद को सूचना दी जायगी कि अमुक तिथि के अधिवेशन में सभा ने आपको सभासद बनाना स्वीकार किया है और वार्षिक चंदे के आने पर सभासदों की सूची में आपका नाम लिख लिया जायगा।

(ख)—मान्य तथा स्थायी सभासद प्रबंध समिति के प्रस्ताव पर साधारण सभा में बहुमत से चुने जायँगे।

(ग)—कोई सभासद जो किसी कारण से सभा से अलग किया गया हो नियमानुसार पुनः प्रार्थना करने पर और जिस कारण से अलग किया गया हो उसके दूर करने पर सभासद चुना जा सकता है।

चंदे के नियम—

२३—साधारण सभासद को अपना अग्रिम वार्षिक चंदा प्रत्येक मेष की संक्रांति के पहले दे देना होगा। जिनका अग्रिम चंदा नियत समय पर न आ जायगा उन्हें सभा की मुखपत्रिका वी. पी. द्वारा भेजी जायगी और तबतक दूसरी संख्या न भेजी जायगी जबतक चंदा न आ जायगा। चंदा भेजने की सूचना होली के पहले प्रकाशित हो जाया करेगी।

२४—प्रबंधकारिणी समिति को अधिकार होगा कि किसी को बिना चंदा के भी साधारण सभासद चुने अथवा किसी साधारण सभासद का चंदा क्षमा कर दे। ऐसे सभासदों की संख्या प्रति सैकड़ा पाँच से अधिक न होगी। परंतु ऐसे सभासदों के विषय में प्रबंधकारिणी समिति प्रति तीसरे वर्ष फिरसे विचार किया करेगी।

२५—जो महाशय वर्षके बीच में सभासद होंगे उनसे केवल उनके सभासद नियत होने के मास से वर्षांत तक का चंदा लिया जायगा।

२६—मान्य सभासदों को वार्षिक चंदा देना आवश्यक न होगा।

२७—प्रत्येक सभासद के निम्नलिखित कर्त्तव्य होंगे।

कर्त्तव्य—

(१) हिंदी भाषा तथा नागरी लिपि का स्वयं यथासाध्य व्यवहार करना और प्रचारार्थ यत्न करना तथा सभा के सहायक और सभासद बढ़ाने का उद्योग करते रहना।

(२) हिंदी भाषा के भांडार को भरना, अलंकृत करना और प्राचीन भांडार की रक्षा।

(३) सभा के अधिवेशनों में उपस्थित होना, किसी प्रस्ताव को उपस्थित अथवा अनुमोदित करना वा उपस्थित विषयों पर उचित सम्मति देना।

(४) आवश्यकता हो तो सभा का अवैतनिक कार्य-भार लेना।

(५) सभा के हानिलाभ तथा उद्देश्यों की पूर्त्ति पर सदा ध्यान रखना और सभा की भलाई के लिये यत्नशील रहना।

२८—सभासद को अधिकार होगा कि—

अधिकार—

(क) किसी दर्शक को साधारण अधिवेशन में उपस्थित करे और सभा को उसका परिचय दे।

(ख) कम से कम ४ दिन* पहले सूचना देकर सभासंबंधी किसी विषय को मंत्री से पत्र लिखकर या सभा के किसी अधिवेशन में पूछे। परंतु उत्तर को स्पष्ट करने के लिये तत्काल और प्रश्न भी चाहे तो करे।

(ग) जब आवश्यकता हो १ दिन की सूचना देकर (जोगलेकर जी को विरोध है)* जिस

* जोगलेकर जी तथा वर्म्माजी के मत से ७ दिन होना चाहिए और बाबू हरिहर नाथ के मत से १ दिन पर्य्याप्त होगा। पुराना नियम ४ दिनका ही है।

* परंतु सभा ने १७ दिसम्बर १९१८ के अधिवेशन में निश्चय किया कि दो दिन के भीतर यदि कार्य्यालय खुला रहे तो अवश्य दिखा दिये जावें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मय कार्य्यालय खुला रहे सभा के सब लिखित पत्रों को देखे, उनकी प्रतिलिपि करे, सभा के सभी या सब छपे हुए पत्रों को देखे तथा खरीदे, परंतु इनके छापने छपवाने वा सभासदों के प्रति-रिक्त अन्य किसी को दिखलाने का अधिकार उस समय तक न होगा जब तक कि प्रबंध-कारिणी समिति से इस संबंध में आज्ञा न प्राप्त कर लें। प्रतिलिपि लेनेवाला यदि चाहे तो उसके ठीक नकल होने के प्रमाण में सहायक मंत्री के हस्ता-क्षर ले ले।

(घ) सभा की प्रबंध समिति, बोर्ड वा अन्य समितियों वा उपसमितियों का सदस्य न होते हुए भी उनमें दर्शक की भाँति उपस्थित हो।

(ङ) स्वयं उपस्थित न हो सके तो सभा के कार्याधीन विषयों पर सम्मति देने के लिये प्रतिनिधिपत्र द्वारा किसी को अपना प्रतिनिधि बनाकर भेजे। इस पत्र पर एक आनेका रसीदी टिकट लगा होगा, और सभासद के हस्ताक्षर होंगे। सुभीते के लिये यह प्रतिनिधि-पत्र मंत्री के पास अधिवेशन से २४ घंटा पूर्व आ जाने चाहिएँ। प्रतिनिधि पत्र के वोट गिने जायँगे।

२९—जिस सभासद की अवस्था १८ वर्ष से कम होगी कार्याधिकारी तथा बोर्ड या किसी समिति वा उपसमिति का सभासद न हो सकेगा।

पदाधिकरण—

३०—कोई सभासद पत्र द्वारा इच्छा प्रकट करने पर सभा से अलग हो सकता है।

३१—वर्ष के पहले दिन जिन सदस्यों के ऊपर दो वर्ष का चंदा बाकी ठहरेगा उनका नाम 'ख' सूची में लिखा जायगा, उन्हें सभा-सद के अधिकार प्राप्त न होंगे और उन्हें इस विषय की सूचना एक पक्ष के भीतर ही पत्र द्वारा दी जायगी। यदि इस सूचना के जाने तथा साधा-रण सूचना के प्रकाशित होने के दो मास के भीतर चंदे की समस्त बाकी रकम न आ जायगी तो सभा को अधिकार होगा कि उनका नाम सभासद सूची से मंतव्य स्थिर करके काट दे।

३२—यदि कोई अधिकारी वा सभासद कोई ऐसा निंदनीय कार्य्य करेगा जिससे सभा की हानि हो वा उसका किसी प्रकार से उपहास हो तो वह विचार पूर्वक अपने पद से च्युत किया जायगा। जिस पर दोष लगाया जायगा उसे सूचना और अपनी सफाई का अवसर देकर इस संबंध का प्रस्ताव प्रबंध-कारिणी समिति साधा-रण सभा में करेगी और उसका निर्णय ⅔ सम्मति द्वारा होगा।

(२) संरक्षक।

३३—ऐसे नृपतिगण जो नागरी अक्षर, हिंदी भाषा अथवा सभा की विशेष सहायता करेंगे इस सभा के स्थायी सदस्य तथा संरक्षक चुने जा सकेंगे और यह चुनाव प्रबंध-कारिणी समिति के प्रस्ताव और साधारण सभा के अनुमोदन पर सभा के वार्षिक अधिवेशन में होगा। प्रबंध-कारिणी समिति अपने प्रस्ताव में इस बात को स्पष्ट करके लिख देगी कि जिनके संरक्षक चुने जाने के लिये वह प्रस्ताव करती है उन्होंने नागरी अक्षर, हिंदी भाषा अथवा सभा की क्या विशेष सहायता की है।

(३) बोर्ड आफ ट्रस्टीज।

संस्था—

३४—साधारण सभा के वार्षिक अधिवेशन में ट्रस्टीज़ की नियुक्ति ऐसे सभासदों में से हुआ करेगी जो सार्वजनिक सेवा, विद्या अथवा सभा की सेवा के लिये विशेष रूपसे प्रसिद्ध हों। बोर्ड आफ ट्रस्टीज़ में कमसे कम ११ और अधिक से अधिक ५० सभासद होंगे। ये जब तक कि स्वयं न छोड़ दें वा किसी नियम से इनका स्थान रिक्त न हो जाय यावज्जीवन सभासद रहेंगे। नागरी प्रचारिणी सभा का मंत्री बोर्ड का एक सभ्य और मंत्री होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्वाचन—

३५—वार्षिक अधिवेशन में उन्हीं सभासदों के नाम निर्वाचन सूची में ट्रस्टी चुने जाने के लिये रखे जायँगे (१) जिनके पक्ष में २५ सभासदों की लिखी सम्मतियां प्राप्त हों वा (२) जिन के पक्ष में बोर्ड तथा प्रबंध समिति दोनों में सर्वसम्मति से स्वीकृति का प्रस्ताव किया गया हो।

३६—वर्ष के बीच में ट्रस्टी का स्थान रिक्त होने पर प्रबंध समिति वर्षांत तक के लिये सर्व सम्मति से किसी सभासद को ट्रस्टी चुन सकेगी।

३७—बोर्ड अपना सभापति, दो उपसभापति और एक सहायक मंत्री चुनेगी जो ३ वर्ष तक अपने पदका कार्य करें तथा पुनः उस पद पर चुने जा सकेंगे।

३८—बोर्ड अपनी कार्य्यवाही में आवश्यकतानुसार उन्हीं नियमों को बर्त्तेगी जो साधारण सभाके अधिवेशनों के होंगे।

अधिवेशन—

३९—बोर्ड के साधारण अधिवेशन वर्ष में दो बार अर्थात् आश्विन और चैत्र में होंगे परंतु विशेष अधिवेशन सभापति अथवा मंत्री जब आवश्यकता हो, कर सकते हैं। किंतु बोर्ड के ३ सभासदों के लिखने पर वा साधारण सभा के निश्चय पर ऐसा अधिवेशन अवश्य किया जायगा।

४०—बोर्ड के साधारण अधिवेशनों की सूचना नियत तिथि से कम से कम १५ दिन पहले और विशेष अधिवेशन की कम से कम ४ दिन पहले दी जायगी और साधारण अधिवेशन में इस सूचना के साथ कौन कौन से कार्य होंगे इसकी सूचना भी दे दी जायगी। बोर्ड में सभासदों की पूर्ण संख्या २५ वा कम होने पर साधारण अधिवेशन में ३ और विशेष ५ कोरम होगा परंतु पूर्ण संख्या २५ से अधिक होगी तो कोरम क्रमशः ५ और ७ माना जायगा।

कार्यक्रम—

४१—बोर्ड की साधारण सभाओं में अन्य आवश्यक कार्यों के अतिरिक्त निम्नलिखित कार्यों का निर्वाह करना होगा।

(१) सभा के आगामी वर्ष के लिये एक वा अधिक प्रामाणिक ऑडिटरों का चुनाव।

(२) प्रबंध समिति के स्थायी कोष संबंधी बजट तथा आय-व्यय लेखा पर विचार।

(३) आवश्यकतानुसार बोर्ड के कार्याधिकारियों का चुनाव।

(४) आवश्यक विषयों पर वार्षिक अधिवेशन वा सभा के किसी अधिवेशन में उपस्थित करने के लिये प्रस्ताव।

(५) प्रबंध समिति के षाण्मासिक रिपोर्ट के उपस्थित किये जाने पर उसकी आलोचना।

४२—स्थायी कोष संबंधी रुपये का लेन देन बोर्ड की आज्ञा के अनुसार होगा और उस संबंध के चिट्ठी पत्री या चेक आदि पर बोर्ड के सभापति तथा मंत्री दोनों के हस्ताक्षर होंगे।

अनाधिकरण—

४३—प्रत्येक मेष संक्राति के पहले किसी नियत समय पर प्रबंध समिति चिट्ठियाँ डाल कर बोर्ड की तिहाई संख्या का स्थान अगले वार्षिक अधिवेशन के लिए रिक्त किया करेगी और इस प्रकार तथा अन्य रिक्त स्थानों की पूर्त्ति के लिये वार्षिक निर्वाचन सूची द्वारा प्रस्ताव किया करेगी। तिहाई संख्या यदि भिन्नांक हो तो समीपतम पूर्णांक को तिहाई माना जायगा। जो सभासद इस प्रकार बोर्ड से अलग होंगे उनका पुनर्निर्वाचन भी हो सकेगा। परंतु इस निर्वाचन में प्रबंध समिति को यह ध्यान रखना होगा कि स्थानीय ट्रस्टियों की संख्या बोर्ड की पूरी संख्या की चौथाई से कम न होगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४४—जो सभासद बोर्ड के ३ अधिवेशनों में लगातार न आ सकेगा वा लिखी सम्मति न देगा उसका स्थान चौथे अधिवेशन में रिक्त समझा जायगा।

(४) सभा के कार्याधिकारी।

उल्लेख—

४५—इस सभा के कार्यकर्त्ता एक सभापति, एक उपसभापति, एक मंत्री, एक उपमंत्री, एक वा अधिक वैतनिक सहायक मंत्री, एक वा अधिक वैतनिक वा अवैतनिक ऑडिटर तथा संपादक होंगे।

४६—सभापति तथा उपसभापतियों में से कम से कम एक का तथा आडिटर और संपादक के सिवाय अन्य सभी कार्याधिकारियों का काशीस्थ होना अनिवार्य होगा और सभा के कार्याधिकारी ही प्रबंध समितिके भी कार्याधिकारी होंगे।

अवधि—

४७—समस्त अवैतनिक कार्याधिकारियों की अवधि एक वर्ष की होगी और अगले वार्षिक निर्वाचन के समय ही उनका पदत्याग समझा जायगा। उनका पुनर्निर्वाचन हो सकेगा परंतु कोई सभासद लगातार तीन वर्ष तक कार्याधिकारी न चुना जा सकेगा।

४८—संपादक, सहायक मंत्री तथा ऑडिटरों के सिवाय सभी कार्याधिकारियों का चुनाव वार्षिक अधिवेशन में हुआ करेगा।

४९—अवधि के भीतर ही यदि किसी कार्याधिकारी वा समिति के सदस्य का स्थान रिक्त होगा तो साधारण सभा को अधिकार होगा कि उस अवधि के लिये उसके स्थान पर दूसरा अधिकारी चुने।

अनधिकरण—

५०—कोई सभासद एक ही समय एक ही सभा समिति तथा उपसमिति में दो पद पर नियुक्त न हो सकेगा।

सभापति के कर्त्तव्य—

५१—सभापति का कर्त्तव्य होगा कि—

(१) सभा के अधिवेशनों में उपस्थित होकर सभापति का आसन ग्रहण करे और उसके तथा कार्यालय के कार्यों का नियमानुकूल संचालन करे तथा (२) नियम के विरुद्ध और सभा को संकट में डालनेवाले किसी कार्य को न होने दे परंतु इस संबंध में अपनी आज्ञा का सकारण उल्लेख कार्य-विवरण में करे।

सभापति के अधिकार—

५२ - सभापति को अधिकार होगा कि (१) सभा का कोई अधिवेशन किसी समय किसी विषय के विचारार्थ करे (२) साधारण अधिवेशन में किसी समागत सज्जन को उस अधिवेशन का सभापति चुने तथा (३) किसी विषय में सम्मति का सम विभाग होने पर एक अधिक वोट देकर निर्णय करे।

उपसभापति--

५३—सभापति की अनुपस्थिति में उपसभापति उनका सब कार्य कर सकेंगे और उनके अधिकार और कर्त्तव्य सभापति के ही होंगे।

५४—मंत्री के कर्त्तव्य यह होंगे—

मंत्री के कर्त्तव्य—

(१) सभा संबंधी पत्र व्यवहारादि अपने हस्ताक्षर से करना और कार्य-प्रणाली की उचित व्यवस्था नियमानुकूल करना। (२) सभा, प्रबंध समिति तथा बोर्ड के अधिवेशनों में उपस्थित होना, कार्य-क्रम, पत्र रिपोर्ट तथा आवश्यक प्रस्ताव उपस्थित करना, प्रत्येक का कार्य विवरण तत्काल ही लिखा कर उसी अधिवेशन के अंत में स्वीकार करा लेना।

(३) सभा का रुपया प्रबंधकारिणी समिति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वारा निश्चित बंक या बंकों में रखना और आवश्यकता पड़ने पर अपने हस्ताक्षर से लेना वा निकालना।

(४) प्रत्येक बिल या पुरजे की स्वीकृति तत्संबंधी विभाग के अधिकारी से कराकर उसका रुपया चुकाना।

(५) सभा के सब कामों का प्रबंध रुपये आदि का लेन देन तथा मामले मुकदमों की व्यवस्था करना।

उपमंत्री–

५५–उपमंत्री का कर्त्तव्य होगा कि सभा कार्यालय के कर्मचारियों के कार्य का निरीक्षण करे, मंत्री को सूचना देता रहे कि काम किस प्रकार हो रहा है, लेखा और रजिस्टर पर नित्य हस्ताक्षर करे और मंत्री की अनुपस्थिति में उसके कर्त्तव्यों का पालन करे।

सहायक मंत्री––

५६- सहायक मंत्री के कर्तव्य ये होंगे–

(१) प्रत्येक पत्र और सभा संबंधी लेखादि की रक्षा।

(२) सभा के प्रत्येक कार्य को मंत्री के आदेशानुसार संपादन करते रहना और सभा की सब प्रकार की संपत्ति की रक्षा करना तथा रक्षा के लिये उत्तरदायी होना।

(३) आय व्यय का ब्योरेवार हिसाब रखना तथा हिसाब जाचनेवालों से जँचवाकर प्रबंध समिति में मंत्री द्वारा उपस्थित कराना।

(४) मंत्री तथा उपमंत्री दोनों की अनुपस्थिति में उनके कर्त्तव्यों का पालन करना।

ऑडिटर––

५७––हिसाब जाँचनेवालों को सभा का हिसाब जाँचना होगा और उस पर अपनी सम्मति लिखनी होगी। हिसाब जाँचनेवाले सभासदों के अतिरिक्त दूसरे सज्जन भी हो सकेंगे। परंतु कोई पदाधिकारी अथवा प्रबंध समिति का सभासद इस काम के लिये नहीं चुना जा सकता।

(५) प्रबन्ध तथा अन्य समितियाँ।

संस्थान––

५८––सभा के कार्यों का संपूर्ण प्रबंध एक प्रबंध समिति के अधीन रहेगा जिस में एक सभापति, दो उपसभापति, एक मंत्री ये चारों सभा के कार्याधिकारी तथा इक्कीस सभासद इस प्रकार होंगे––

(१) काशीस्थ सभासद–	१२
(२) संयुक्तप्रांत के बाहरी सभासद–	२
(३) बंगाल, बिहारोत्कल, पंजाब, बंबई, मध्यभारत, राजपूताना इन में प्रत्येक से एक एक	६
(४) मध्यप्रदेश और बरार से	१
	२१

(३) तथा (४) में लिखित प्रांतों में से किसी में जब सभासदों की संख्या १५ से कम होगी तब उस प्रांत के किसी सभासद के बदले ऐसे किसी प्रांत का कोई सभासद चुन लिया जायगा जिस में सभासदों की संख्या सब से ज्यादा हो।

५९–प्रबंध समिति के प्रत्येक सभासद की अवधि तीन वर्ष की होगी और प्रतिवर्ष सात सभासदों का चुनाव वार्षिक अधिवेशन में होगा जिन में से चार स्थानीय होंगे और तीन बाहरी।

६०–अवधि के बीच में यदि कोई सभासद कार्याधिकारी चुन लिया जाय तो जब तक वह कार्याधिकारी रहे तब तक के लिये उसके स्थान में किसी और सभासद को सभा प्रबंध समिति का सदस्य चुन देगी।

६१–सभा के कार्याधिकारी ही प्रबंध समिति के भी कार्याधिकारी होंगे परंतु उनकी अवधि एक ही वर्ष की हुआ करेगी। (क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें।

अखरावट	मूल्य ≡)	राज्यप्रबंधशिक्षा	॥)
अनन्यग्रंथावली	मूल्य ≡)	सौरीसुधार	॥)
इन्द्रावती	मूल्य ॥।)	संक्षेप लेखप्रणाली-	॥)
कविवर बिहारीलाल-	मूल्य =)	हम्मीर रासो	१)
कालबोध	मूल्य ≡)	हरिश्चन्द्र-राजा हरिश्चन्द्र का चरित्र।	=)
चित्रावली--	मूल्य)	सिंधदेश का इतिहास	।)
ऋतुवाले रोग और उनसे बचने का उपाय-	१)	दादू दयाल की बानी	॥।)
परिचर्याप्रणाली-रोगी की शुश्रूषा विधि। मूल्य	।)	दादूदयाल के शब्द	॥)
प्राचीनलेखमणिमाला	१)	हिन्दी-लेक्चर	-)
पृथ्वीराजरासो-२२ खंड मूल्य	२०) रु०	यूनान का इतिहास	॥।)
बोधचन्द्रिका	मूल्य ।=)	स्त्रियों के रोग	१)
विरहलीला-कवि आनंदघन कृत।	मूल्य =)	भगवद्गीता (हिन्दी अनुवाद)	।-)
भारतेन्दुचरित्र-	मूल्य ॥)	आर्ष प्राकृत व्याकरण	।)
भूषण ग्रंथावली-	मूल्य ॥।)	छत्रप्रकाश-लाल कवि कृत	॥।)
हिन्दी-भाषा के सामयिक पत्रों का इतिहास	।)	सुघड़दर्जिन-सिलाई और कटाई का सचित्र वर्णन	॥)
जैनभाषा	मूल्य ॥।)	सत्यहरिश्चन्द्र-(भारतेन्दु रचित)	मूल्य =)॥
समालोचनादर्श	मूल्य ≡)	भारतदुर्दशा	-)।
समालोचना	मूल्य =)	बोपदेव का जीवनचरित्र	=)
महाराणाप्रताप-बाबू राधाकृष्ण दास जी कृत	॥)	शेख मोहम्मद बाबा का जीवनचरित्र	-)
श्रीराधाकृष्णदास (जीवनी)	॥)	लेखक और नागरी लेखक	=)
स्त्रियों की योग्यता	=)	आयुर्वेद निदान समीक्षा	=)
यूरोपीयदर्शन-	॥)	भाषा-समस्त भाषाओं का संक्षिप्त विवरण	≡)॥
राजविलास-	१)	होरेशियस और मनु [illegible] सात अवस्थाएं	=)
		भर्तृहरि निर्वेद नाटकसंहित।	।)
		ललित शिक्षावली-छोटी कहानियाँ	।)

मिलने का पता—मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस [illegible]टी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०० पुस्तकों की

मनोरंजन पुस्तकमाला

की नई पुस्तक

'जरमनी का विकाश'।

इस पुस्तकमाला में सब प्रकार के विषय रहेंगे—काव्य, नाटक, उपन्यास, दर्शन, विज्ञान, इतिहास, जीवनचरित, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, वनस्पतिशास्त्र, शासनशास्त्र इत्यादि इत्यादि। प्राचीन कवियोंके ग्रंथरत्नों से चुने हुए उत्तम संग्रह भी निकलते हैं। पुस्तकें इस चित्ताकर्षक रूप में लिखी जाती हैं कि पाठक अपने मनोरंजन के साथ ही साथ विना प्रयास अनेक बातों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। अब तक ये पुस्तकें निकल चुकी हैं।

१ आदर्श-जीवन—लेखक रामचंद्र शुक्ल।
२ आत्मोद्धार—लेखक रामचंद्र वर्म्मा।
३ गुरु गोविंदसिंह—लेखक वेणीप्रसाद।
४ आदर्श हिंदू १ भाग—लेखक मेहता लज्जाराम शर्म्मा।
५ " २ " "
६ " ३ " "
७ राणा जंगबहादुर—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा।
८ भीष्म पितामह—लेखक चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्म्मा।
९ जीवन के आनंद—लेखक गणपत जानकीराम दूबे बी. ए.।
१० भौतिक-विज्ञान—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी।
११ लालचीन—लेखक व्रजनंदन सहाय।
११ कबीरवचनावली—संग्रहकर्त्ता अयोध्यासिंह उपाध्याय।
१३ महादेव गोविंद रानडे—लेखक रामनारायण मिश्र बी. ए.।
१४ बुद्धदेव—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा।
१५ मितव्यय—लेखक रामचंद्र वर्म्मा।
१ सिक्खों का उत्थान और पतन—लेखक नंदकुमार देव शर्म्मा।
१७ वीरमणि—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम. ए. और शुकदेवबिहारी मिश्र बी. ए.।
१८ नेपोलियन बोनापार्ट—लेखक राधामोहन गोकुलजी।
१९ शासनपद्धति—लेखक प्राणनाथ विद्यालंकार।
२० हिंदुस्तान, पहला खंड—लेखक दयाचंद्र गोयलीय बी. ए.।
२१ " " दूसरा खंड— " " "
२२ म[illegible] लेखक वेणीप्रसाद।
२३ उ[illegible]नवा[illegible] [illegible]क संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी.।
१४ अ[illegible] उस प[illegible] लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम. ए. और शुकदेव बिहारी मिश्र बी. ए.।
२५ सु[illegible] जाँचने संग्रहकर्ता पुरोहित हरिनारायण बी. ए.।
२६ ज[illegible]ान [illegible] विकाश—लेखक सूर्यकुमार वर्मा।

प्रत्येक पुस्तक [illegible] है, समस्त ग्रंथमाला के स्थायी ग्राहकों से ।।।) लिया जाता है। डाकव्यय अलग है।

मिलने का पता—

मंत्री—नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाग २३] [संख्या ३

नागरीप्रचारिणी पत्रिका।

मार्च १९१९

सम्पादक—रामचन्द्र शुक्ल।

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल। बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल॥
करहु विलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल। निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सबको मूल॥
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार। सब देशन सों लै करहु, भाषा माँहि प्रचार॥
उन्नति करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न। राजकाज दरबार में, फैलावहु यह रत्न॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र।

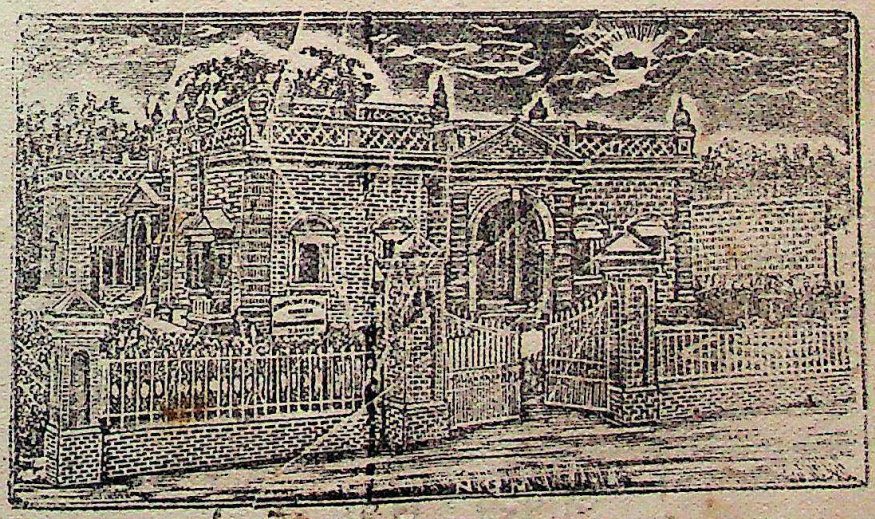

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित।

गणपति कृष्ण गुर्जर द्वारा श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस, काशी में मुद्रित।

वार्षिक मूल्य १॥) प्रति संख्या =)

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची ।

१—फाहियान का यात्राविवरण (ले० बा० जगन्मोहन वर्मा)... ... १९३
२—शाहजहाँ के समय की कुछ बातें (ले० पं० हरिश्चंद्र शुक्ल) १९७
३—श्रावस्ती २०१
४—लोभ या प्रेम २०३
५—प्राचीन भारत में नगर-प्रबन्ध ... २०६
६—नवम हिंदी साहित्यसम्मेलन की लेख सूची २०७
७—साँप और शैतान (ले० पं० केदारनाथ पाठक) २०८
८—सभा की संशोधित नियमावली २०९

मुफ्त ! मुफ्त !! मुफ्त !!!

धन्वन्तरी ।

यह आयुर्वेदीय मासिक पत्र योग्य वैद्य, डाक्टर और हकीमों को बिना मूल्य भेजा जाता है, सर्वसाधारण को नहीं ।

मैनेजर, धन्वन्तरी, विजयगढ़, अलीगढ़ ।

पदक और पुरस्कार ।

सभा द्वारा उत्तमोत्तम विषयों पर लेख लिखने के लिये प्रति वर्ष स्वर्ण और रजत पदक दिए जाते हैं । सन् १९१९ में इनके लिये निम्नलिखित विषय नियत हैं—

छन्नूलाल स्वर्ण पदक—नगरों का निर्माण ।

राधाकृष्णदास रजत पदक—प्राचीन भारतवर्ष की शासन-प्रणाली ।

रेडिचे रजत पदक—मनुष्य का भोजन ।

इन विषयों पर लेख सभा में ३१ दिसम्बर १९१९ तक आ जाने चाहिएँ ।

मेहता जोधसिंह पुरस्कार ।

जनवरी १९१७ से ३१ दिसम्बर १९१९ तक प्रकाशित होने वाली हिन्दी की पुस्तकों में जो सर्वोत्तम समझी जायगी उसके रचयिता को १००) रु० का यह पुरस्कार दिया जायगा । इसके लिये जो पुस्तकें सभा में आवेंगी उन्हीं पर विचार किया जायगा ।

गोविन्दराव जोगलेकर बी० ए०, एल-एल० बी०
मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी ।

आवश्यक सूचना ।

काशी नागरीप्रचारिणी सभा के कार्य्यकर्त्ताओं तथा प्र० का० समिति के सदस्यों के चुनाव के लिए जो सूची इस वर्ष बनेगी उसमें रखे जाने के लिए जिन सभासद महाशयों को नाम भेजने हैं वे कृपया प्रस्ताव के रूप में ३० अप्रैल तक भेज दें ।

इस वर्ष १ सभापति, २ उपसभापति, १ मंत्री और १ उपमंत्री के अतिरिक्त इन सात महाशयों के स्थान प्र० का० समिति में खाली होंगे—

बा० बलदेव दास, बा० शिवप्रसाद गुप्त, बा० जगन्नाथ दास बी० ए० और बा० वेणीप्रसाद (काशी) बा० जगन्नाथ झुनझुनवाले (बंगाल) बा० राजेन्द्रप्रसाद (बिहार) ला० दयाराम साहनी (पंजाब) ।

गोविन्दराव जोगलेकर, मंत्री ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

भाग २३ } मार्च १९१९ । { संख्या ९

फ़ाहियान का यात्राविवरण ।

फ़ाहियान के यात्राविवरण के पढ़ने से यह जान पड़ता है कि यह यात्राविवरण उस के हाथ का नहीं लिखा है। चीन देश में पहुँच कर उसने अपनी यात्रा के सारे विवरणों को अपने किसी मित्र से कहा जिसने सारी बातों को अपने स्मरण से पीछे लिखा। यही कारण है कि कितनी जगहों पर दिशा और परिमाण का अंतर है। इतना ही नहीं कितनी नदियों का जिसे उसने पार किया होगा उल्लेख तक नहीं मिलता। चालीसवें पर्व के इस वाक्य से कि "अतः यात्राविवरण लिख दिया कि पढ़नेवाले जानें कि उसने क्या क्या सुना और देखा" कितने लोग यह अर्थ निकालते हैं कि उसने अपनी यात्रा का विवरण लिखा। लेगी ने इसका अनुवाद यों किया है 'and therefore he wrote out account of his experience that worthy reader might share with him what he had heard and seen.'' पर चीनी भाषा के मूल में कोई ऐसा चिह्न नहीं है जिससे यह अर्थ निकल सके। वहां कोई सर्वनाम नहीं है जिससे यह आशय ले सके कि 'उसने' लिखा वा 'अपने' अनुभव का विवरण लिखा। सारे का सारा वाक्य सर्वनाम-रहित है। पर वहाँ पर सिवाय इसके दूसरा अभिप्राय हो ही नहीं सकता कि लेखक ने यह यात्रा विवरण इसलिये लिखा कि पाठक लोग जाने कि उसने क्या देखा और सुना।

इस अति संक्षिप्त विवरण को पढ़कर कितने ही अनुवादकों को यह सूझी है कि इसके अतिरिक्त उसके हाथ का लिखा हुआ कोई इससे पृथक्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और परिपूर्ण विवरण है जिसके ढूँढ़ने के लिये कुछ लोगों ने बहुत बड़ा प्रयास भी किया है। स्वयं लेगी महोदय को भी यही शंका थी कि कोई दूसरा पूरा यात्राविवरण उसका होगा और अपनी भूमिका में उन्होंने इसकी बहुत कुछ छानबीन की है। वे लिखते हैं कि "It is added that there is another larger work giving an account of his travel wrthin various countries... If there were ever any other account of Fa-hian's travel than the narrative of which a translation is now given it has long ceased to be in existence." सारांश यह है कि लोग कहते हैं कि एक और बृहद्ग्रंथ है जिसमें भिन्न भिन्न जनपदों में उसकी यात्रा का विवरण है। यदि कोई और बृहद्ग्रंथ फाहियान के यात्राविवरण का इसके अतिरिक्त जिसका यह अनुवाद है रहा होगा तो बहुत दिनों से वह लुप्तप्राय हो गया है।" आगे चलकर लेगी साहेब सुइवंश (५८९-६१८) के सूची पत्र का प्रतीक देते हुए लिखते हैं कि उसमें फाहियान का यात्राविवरण चार बार आया है- अंत के खंड (पृष्ठ २२) में उसकी यात्रा का प्रतीक देकर "किंग लिंग (नानकिंग का दूसरा नाम) में बुद्धभद्र के साथ रहकर उसके अनुवाद करने" का वर्णन है। दूसरे खंड (पृ० १५) में "बौद्ध जनपदों का विवरण' लिखा है और टीका में यह लिखा है कि यह श्रमण फाहियान' का ग्रंथ है। फिर पृष्ठ १३ में 'फाहियान का विवरण २ जिल्दों में" और 'फाहियान की यात्रा एक जिल्द में' लिखा है। लेगी साहेब लिखते हैं कि ये तीनों संभवतः एक ही पुस्तक की पृथक पृथक प्रतियों के ही उल्लेख हो सकते हैं। प्रथम और अंत के दोनों एक ही सूची के अलग अलग खंड हैं। आगे लेगी साहेब ने अपनी प्रति की प्राचीनता प्रमाणित करने के लिये अनेक सूचियों के प्रतीकों को उद्धृत किया है।

उपर्युक्त बातों से यह स्पष्ट है कि वह पुस्तक जिसमें फाहियान का बुद्धभद्र के साथ किंगलिंग में अनुवाद का वर्णन है संभवतः यह नहीं है। यह भी संभव है कि वह इसी का उत्तरार्द्ध हो अथवा कोई बृहद्ग्रंथ हो—हम नहीं कह सकते। पर इसमें तो बुद्धभद्र के साथ नानकिंग (किंग लिंग) में अनुवाद का कुछ भी उल्लेख नहीं है।

इस प्रकार आधुनिक रीति से विचार करने पर तो जान पड़ेगा कि यह विवरण फाहियान का लिखा नहीं है। पर जब हम पूर्व के प्राचीन लिखे हुए ग्रंथों पर दृष्टिपात करते हैं तब हम यह कहने के लिए बाध्य होते हैं कि पुराकाल में समस्त पूर्वीय देशों में लिखने की यही परिपाटी प्रचलित थी। भारतवर्ष के अति प्राचीन ग्रंथों को जाने दीजिये कौटिल्य के अर्थशास्त्र वा राजशेखर की काव्यमीमांसा ही को लीजिये जिन्हें उन्हीं की रचना निर्विवाद लोग मानते हैं। इनकी रचना देख कर कोई यह नहीं कह सकता है कि ये ग्रंथ कौटिल्य वा राजशेखर के लिखे हुए हैं। इसी प्रकार यद्यपि रचना से यह जान पड़ता है कि यह ग्रंथ फ़ाहियान का लिखा नहीं है तो भी यह मानने में कुछ भी संकोच नहीं है कि चालीसवें पर्व के अंत तक सारा ग्रंथ फाहियान ने चीन में पहुँच कर लिखा कि पढ़ने वाले जानें कि उसने क्या क्या सुना और देखा।

यद्यपि फ़ाहियान धार्मिक यात्रा करने और धर्मग्रंथों का संग्रह करने के उद्देश्य से आया था और इसी लिये उसने इतने कष्ट उठाए थे पर फिर भी उसने अपने समय के उस आचार व्यवहार का जो उसने भिक्षुसंघ में देखा था तथा देशवासियों की अवस्था का अच्छा चित्र खींचा है। विदेशियों के लेखों से किसी देश के इतिहास की सत्यता की जाँचना अच्छी बात है पर फिर भी उन्हें अक्षरशः सत्य मानना ठीक नहीं है। यही कारण है कि श्रावस्ती, कुशनगर और लुंबिनी आदि स्थानों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्णय हो जाने पर भी स्मिथ सरीखे ऐतिहा-
कों जो वर्षों फैजाबाद, बस्ती और गोरखपुर
कलेक्टरी कमिश्नरी आदि पर रह चुके थे
: स्वयं भ्रम में पड़ और अन्यों को भ्रम में
ना पड़ा है तथा फुहरर साहेब सदृश
यवादी विद्वान् पर जाल करने तक का कलंक
ाना पड़ा है।

यहाँ हम फाहियान के मार्ग का कुछ दिग्द-
करा देना उचित समझते हैं जिससे इस
त का पढ़नेवालों को समान्यतया बोध हो
य कि उसने कहाँ से अपनी यात्रा का आरंभ
या और किन जनपदों से होकर वह भारतवर्ष
या तथा किस मार्ग से होकर चीन को
ट गया।

फाहियान चांगान से ४०० ई० में विनयपिटक
खोज में भारतवर्ष की ओर चला। लंग से होकर
की में आया और वहां वर्षा में वास किया। वहां
यांगलो पर्वत पार कर चांगयी में आया वहां
स समय विप्लव मचा था। वहीं वह वर्ष भर रह
या। विप्लव शांत हो जाने पर तनहांग में आया
र वहां के शासक की सहायता से गोबी
स्तान पार किया और १७ दिनों में शेनशेन
आया। शेनशेन प्रदेश से पंद्रह दिन में उए
पहुंचा। शेनशेन प्रदेश लोबनार के आसपास
र उए तुर्किस्तान के किनारे था। ये दोनों
श गोबी मरुस्थल के दक्षिण थे और लोब-
र के आस पास सौ दो सौ मील के भीतर थे।
धिक संभव है कि वे नगर जहाँ कई बार यात्रा
ने से यूरोपीयन यात्रियों को बहुमूल्य प्राचीन
तयां मिलीं हैं इन्हीं जनपदों के रहे होंगे। पीछे
भूमि की वालुका से आच्छादित होकर वे सदा
लिये संसार से मिट गए।

ऊर से फाहियान खुतन आया और वहाँ की
यात्रा देख २५ दिनें में जीहो और जीहो से ४
में सुंगलिंग पर्वत पहुँच उसे पार कर यूह्वे
पहुंचा। जीहो और यूह्वे का पता यद्यपि यूरोपीय
विद्वानों को अब तक नहीं चला है पर इसमें
संदेह नहीं कि ये दोनों प्रदेश सीहून और जीहून
नदी के किनारे के प्रदेश हैं जहाँ दोनों नदियों के
मध्य छोटी पहाड़ी और यारकंद है।

यूह्वे वा जीहून के किनारे से फाहियान दक्षिण
पूर्व दिशा में चला और २५ दिन में पर्वतों से
हो कर कीचा पहुँचा। कीचा को कोई कोई कश-
मीर वा स्कर्द लिखते हैं पर यह वही प्रदेश जान
पड़ता है जो कराकोरम और सिंधुनद के मध्य
है। वाल्मीकीय रामायण में इसी को कैकय
जनपद और इसकी राजधानी को पर्वतों से
परिवेष्टित होने के कारण गिरिव्रज लिखा है।

कीचा वा कैकय से फ़ाहियान पंचपरिषद्
देख कर दरद में आया। दरद कैकय के पश्चिम
में पड़ गया। एक मास मार्ग में लगा। समय पर
भी विचार करने से यही ठीक जान पड़ता है
कि यूह्वे से वह पूर्व-दक्षिण में गया और फिर उधर
से पश्चिम फिरा। यूह्वे से कीचा जाने में २५ दिन
लगे और कीचा से दरद आने में एक मास।
दोनों मार्ग पहाड़ी और कठिन थे। दरद को ही
औरों ने दरदिस्तान लिखा है।

दरद से पंद्रह रोज चलकर वह एक झूले से
होकर उद्यान में आया। अंग्रेजी के अनुवादकों वा
उसके आधार पर अनुवाद करनेवालों ने इसे सिंधु
लिखा है। उनके भ्रम के लिये हेतु भी है क्योंकि
चौदहवें पर्व के अंत में भी वही चिन्ह है जहाँ
सिवाय सिंधु के दूसरी नदी नहीं है। इनमें दूसरा
संकेत पंद्रहवें पर्व के आदि में भी है। सिंधु के
लिये फाहियान ने किसी चिह्न का व्यवहार नहीं
किया है। पर उस नद के लिए वही चिह्न व्यवहृत
होता है जो हिंदुस्तान के लिये होता है। सिंधु के
कारण ही बाहरवाले हिंदू वा हिंदुस्तान कहते
आए हैं। पर उन दोनों संकेतों का अभिप्राय
जो दरद प्रदेश से उद्यान आते समय वा पोनो से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीछे आते समय पर्व ७ और चौदह में व्यवहृत हुए हैं नदी पार करने का झूला ही है। यही अर्थ डाक्टर ओफ्रेक ने भी किया है:—Hien-tu = hanging bridge (I. A. vol) अतः यही मत समीचीन जान पड़ता है। उच्चारण साम्य से अनुवादकों और टीकाकारों को भ्रम में पड़ना पड़ा है।

उद्यान में पहुँच कर फ़ाहियान वहां से सुहोतो (सुवात) गया। वहां से गांधार, गांधार से तक्षशिला और तक्षशिला से पेशावर आया। पेशावर से नगर (नगरहरा) गया और नगरहरा से हेकिंग के देहांत हो जाने पर उसने पर्वत पार किया और पोनो होता हुआ फिर एक झूले वा पुल से उतर कर पीतो आया। पीतो पंजाब का नाम है।

पीतो से दक्षिण-पूर्व चल कर मथुरा आया। फिर मथुरा से यमुना के किनारे चल कर १८ योजन पर संकाश्य नगर मिला। संकाश्य नगर में वर्षा बिता कर कान्यकुब्ज नगर पहुँचा और कान्यकुब्ज से गंगापार कर आले गांव में, जो कान्यकुब्ज से तीन योजन पर था, गया।

आले से दस योजन पर शाखे दक्षिण पूर्व में पड़ा। यह शाखे यात्राविवरण मिलाने से हुएनच्वांग का विशाखा जान पड़ता है। संभवतः यह साकेत का ही नाम है।

शाखे से ८ योजन पर कोशल की राजधानी श्रावस्ती में गया। श्रावस्ती से कपिलवस्तु की ओर गया और लुंबिनी कानन का दर्शन किया। लुंबिनी बुद्धदेव का जन्मस्थान है और भगवानपुर के पास है।

लुंबिनी से रामस्तूप होते हुए कुशनगर वा कसया गया और कसया से वैशाली (जिसे बसार कहते हैं) पहुँचा। वैशाली से पाटलीपुत्र और वहां से राजगृह गया और गृध्रकूट और सप्तपर्णी गुफा होता बुद्धगया पहुँचा।

बुद्धगया से गरुडपाद पर्वत का दर्शन कर अनालय वा अरण्य जो बलिया नगर के पास था होता हुआ वाराणसी आया। वाराणसी में ऋषिपत्तन मृगदाव के धर्मकर्मप्रवर्तन स्तूप का दर्शन कर पाटलिपुत्र लौट गया और वहाँ तीन वर्ष रह कर अनेक पुस्तकों का संग्रह किया और संस्कृत विद्या का अध्ययन किया।

पाटलिपुत्र से फ़ाहियान अठारह योजन चल चंपा गया—चंपा अब भागलपुर के ज़िले में है और चंपानगरी कहलाती है। चंपा से ताम्रलिप्त गया जिसे अब तमलूक कहते हैं। वहां वह दो वर्ष तक रह गया और पुस्तकों और चित्रों की प्रतिलिपि ली।

तमलुक से फाहियान एक व्यापारी नौका पर सवार हो सिंहल में गया और वहां दो वर्ष तक रह कर अनेक पुस्तकों की प्रतिलिपि की।

सिंहल से फाहियान जावा द्वीप गया। वहां पांच महीने पड़ा रह गया। फिर एक और जहाज़ पर चढ़ चीन को चला। तीन महीने के लगभग तूफान से भटकती हुई नौका चांगकांग के किनारे लगी। वहाँ के शासक लेए ने फाहियान का स्वागत किया और उसे अपने शासन स्थान सिंगचाव में ले गया। सिंगचाव में फाहियान एक वर्ष रहा। फिर दक्षिण को चल कर नानकिंग गया और वहां अनेक ग्रंथों का अनुवाद करने लगा।

इस यात्रा के संबंध में फाहियान ने ही लिखा है "छ वर्ष में मध्यप्रदेश पहुँचा, ६ वर्ष में वहां से फिरा और लौट कर ३ वर्ष में सिंगचाव पहुँचा ३ से कुछ ही कम जनपदों में भ्रमण किया" इस प्रकार उसे पंद्रह वर्ष लगे।

फाहियान के स्वभाव के विषय में उपसंहार के लेखक ने जो कोई उसका मित्र, भक्त वा शिष्य जान पड़ता है ये शब्द लिखे हैं "वह नम्र और सुशील था। जब से इस बड़े धर्म (महायान) का पूर्व के देश में प्रचार हुआ कोई भी निरपेक्ष धर्म का जिज्ञासु आचार्य्य ऐसा नहीं हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तः मैं तो जान गया कि सत्य के प्रभाव को कोई रोक नहीं सकता—चाहे जितना बड़ा पथ हो वह पार ही कर जाता है—मानसिक (आध्यात्मिक) बल जो काम चाहे पूरा करने में चूकता नहीं। ऐसे कार्य्यों का संपादन अनावश्यक को भूलने और भूले हुए को स्मरण करने से होता है। *

जगन्मोहन वर्मा।

शाहजहाँ के समय की कुछ बातें।

(३)

शाहजहाँ जैसा विलासी था वैसा ही कर्तव्य-परायण और परिश्रमशील भी था। उसकी विलासिता राष्ट्र के उचित प्रबंध में किसी प्रकार की रुकावट या अड़चन नहीं डालती थी। वह कर्तव्य-पालन से कभी जी नहीं चुराता था। यह उसमें एक ऐसा विशेष गुण था कि जिसने उसे लोकप्रिय बना दिया था। इससे जनता उसके वश में रहती थी और उसकी दृष्टि उसके दोषों पर नहीं पड़ने पाती थी। वह दुष्टों का दमन कर उनके अन्याय और अत्याचार से गुणी और सज्जनों की रक्षा करने में अपने भरसक कोई बात उठा न रखता था। यही कारण है कि उसकी सारी प्रजा उससे संतुष्ट रहती और उसके लिए मरने मारने को हमेशा तैयार रहती थी। वह अपने कर्मचारियों पर कड़ी नज़र रखता था। यदि उनसे कोई काम बन पड़ता तो उनका मन बढ़ाने के लिए वह उन्हें पुरस्कार आदि देने में जैसा उदार था वैसा ही यदि उनसे कोई चूक हो जाती तो उनको दण्ड देने में क्रूर भी था।

अपराधियों को दण्ड देने के लिए दरबार में उसके साथ उसका एक अफ़सर जिसके पास विषैले सापों से भरी बहुत सी टोकरियाँ रहती थीं हमेशा हाज़िर रहता था। वह अन्यायी और प्रजापीड़क हाकिमों को इन साँपों से अपने सामने कटवाता और जब तक उनका दम न निकल जाता तब तक उन्हें उसी जगह पड़ा रहने देता था।

मुहम्मद सईद नामक एक कर्मचारी बड़ा ही अत्याचारी और दुष्ट था। लूटमार से वह बहुत धनी हो गया था। उसके अत्याचार और दुष्टता का भेद खुल जाने पर बादशाह ने मेरे सामने उसके हाथ में एक विषैले साँप से कटाए जाने का हुक्म दिया और साँपों के मालिक से दरियाफ़्त किया कि वह कितनी देर तक जीता रहेगा? उसने जवाब दिया कि वह एक घंटे से ज्यादा नहीं जी सकता है। बादशाह तब तक दरबार में बैठा रहा। कर्मचारी के मर जाने पर उसका मृतक शरीर शाही हुक्म के बमूजिब दरबार के सामने मैदान में दो दिन तक पड़ा सड़ता रहा। रिशवतख़ोर और लुटेरे कर्मचारी कभी २ पागल हाथियों के पास जीते ही फेंक दिए जाते थे।

किसी आदमी ने अपनी मृत्यु के कुछ दिन पहले अपने एक रिश्तेदार को अपने पास बुला भेजा और उससे कहा, "तुमको छोड़ और किसी पर मेरा विश्वास नहीं है। अब मेरे मरने के दिन क़रीब आ गए हैं और अभी मेरा लड़का निरा बच्चा है, इस लिए जब तक वह सयाना न हो तब तक मेरी सारी संपत्ति की रक्षा का भार तुम्हारे ऊपर है।" रिश्तेदार ने उस समय उसके सामने तो इस बातको सकार लिया पर जब लड़का बालिग हुआ तब उसने उसके बाप की जायदाद उसे लौटाने से इन्कार किया। लड़के ने अदालत में उस पर अभियोग चलाया और क़ाजी को बीस हज़ार रुपए देकर अपने अनुकूल कर लिया। अभियुक्त ने भी उसे तीस हज़ार रुपये दे कर अपनी तरफ खींचना चाहा। क़ाजी ने लालच में

---

* फाहियान का अनुवाद मैंने चीनी भाषा से मिलान करके पर लेगी आदि के अनुवाद के सहारे किया है। इस उपक्रम सहित शीघ्र ही प्रकाशित होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आकर उससे रुपये तो ले लिए पर पीछे भेद खुल जाने के भय से इतनी बड़ी रक़म पचा जाने की उसकी हिम्मत न पड़ी। उसने बादशाह से इसके मिलने का सारा हाल कह सुनाया। दोनों पक्ष का बयान सुन कर बादशाह ने लड़के को उसके बाप का कुल माल और असबाब वापस दिला दिया और अभियुक्त के तीस हज़ार रुपये ज़ब्त कर लिए। इस तरह काज़ी ने अपनी चाल से बीस हज़ार रुपये भी हड़प कर लिए और अपने नाम में बट्टा भी लगने दिया।

यदि कोई सेना नायक लड़ाई के मैदान से पीठ दिखा कर भाग जाता था तो अकेला वही नहीं उसके बाल बच्चे भी दण्डनीय समझे जाते थे। कभी २ बादशाह की आज्ञा से उसकी लड़कियों के पायजामे के भीतर डराने और अपमानित करने के लिए चूहे छिपा दिए जाते थे। इससे दूसरे कर्म्मचारी अपने काम में हमेशा चौकन्ने रहा करते थे।

मुरादबख़्श के पहले गुजरात प्रदेश का शासन-सूत्र नासिर ख़ाँ के हाथ में था। यह एक क्रूर और स्वेच्छाचारी हाकिम था। यह बात की बात में गाँवों को जला कर ख़ाक कर देता, बड़े २ मकानों को ढा देता, जिसे चाहता उसे लूट लेता, किसानों की खेती उजाड़ देता और व्यापारियों से मन-माना कर वसूल करता था। इसकी स्वेच्छाचारिता से प्रजा की नाक में दम आ गया और उसने बादशाह के पास अपनी फ़रियाद पहुँचाने की एक नई तरकीब खोज निकाली।

उस देश के कुछ व्यापारियों ने दरबार में जा कर बादशाह को यह सँदेसा कहला भेजा कि गुजरात प्रांत से एक नाटक-मंडली आई है जो उसे एक नए ढंग का खेल दिखाना चाहती है। शाहजहाँ इस प्रकार के आमोद प्रमोद का प्रेमी तो था ही उसने उनको फ़ौरन दरबार में बुला भेजा। उन्हों ने अपने खेल में गुजरात प्रदेश के कुप्रबंध और नासिर के ज़ुल्म को इतना बढ़ा चढ़ा कर कर दिखलाया कि बादशाह ने कुछ अप्रसन्न हो कर उनसे कहा कि यद्यपि यह खेल एक निराले ढंग का है और इससे मेरा कुछ मनोरंजन भी अवश्य हुआ है पर इसमें निरी कल्पना से काम लिया गया है, यथार्थता का इसमें अभाव पाया जाता है। यह सुनकर सौदागरों ने ज़मीन चूम कर बादशाह से कुछ कहने की आज्ञा माँगी। इजाज़त मिलने पर उन्होंने कहा कि "जहाँपनाह! हम लोग गुजरात प्रदेश के व्यापारी हैं, हम लोगों ने आप तक अपनी पहुँच न होने से इस अभिनय द्वारा इस बात की चेष्टा की है कि आप को नासिर ख़ाँ के अन्याय और अत्याचार का थोड़ा बहुत अनुमान हो जाय; और हम आप को यह विश्वास दिलाते हैं कि इस मामले की जाँच होने पर आप को इसकी यथार्थता में जो संदेह है वह दूर हो जायगा।"

जब बादशाह को नासिर ख़ाँ की अनुचित कार्रवाइयों का ठीक २ पता लग गया तब उसने रोहतासगढ़ में उसके क़ैद किए जाने का हुक्म दिया और उसकी सारी संपत्ति छीन ली। उक्त गढ़ पटना नगर के समीप है। उसमें जो क़ैद किया जाता उसे अकसर भूखा रहना पड़ता था जिससे उसकी जीवन-शक्ति क्रमशः क्षीण हो जाती और अन्त में वह मर जाता था।

अफ़ग़ानिस्तान में दरियाए-ख़ातून नामक एक नगर है। वहाँ एक रूपवती विधवा रहती थी जो अपने रूप और मधुर भाषण से उज़बक जाति के यात्रियों को लुभाकर अपने वश में कर लेती और कुछ दिन उन्हें अपने साथ रख कर अन्त में पठानों के हाथ बेच देती थी। उस समय महावत ख़ाँ अफ़ग़ानिस्तान का हाकिम था। उसे उक्त स्त्री की इन कार्रवाइयों की ख़बर लग गई और वह पकड़ी गई। गिरफ्तार होने पर उसने ऐसे उन्नीस यात्रियों का पता दिया जिन्हें पठानों ने गुलाम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ना लिया था और जिनके पैर तोड़ कर ऐसे काम कर दिये गए थे कि वे भाग नहीं सकते थे। हाकिम ने इस मामले को संगीन समझ कर विचार के लिये बादशाह के पास भेज दिया।

उसने स्त्री के शरीर को उन सुंदर शिकारी कुत्तों से जिन्हें पठान भेड़ियों से अपने मवेशी की हिफ़ाजत के लिए पालते हैं नुचवा कर उसे मरवा डाला।

एक दिन बादशाह शिकार खेलने के लिये ज्योंहीं महल से बाहर निकला त्योंहीं एक आदमी उसके सामने आ जमीन पर लेट गया और उसका पैर पकड़ कर रोने लगा। पूछने पर मालूम हुआ कि उसके मालिक ने कई महीने से उसकी तनख्वाह रोक रक्खी है जिससे वह बड़ी मुसीबत में है। बादशाह ने फ़ौरन मालिक को बुलाया और उसके घोड़े पर नौकर को सवार करा उसे खुद घोड़े के आगे दौड़ने का हुक्म दिया। वह कुछ देर तक दौड़ता रहा पर अंत में थक कर ज़मीन पर गिर पड़ा। तब बादशाह ने खुद उस शरीफ़ आदमी को उठा कर घोड़े पर बैठाया और उससे कहा कि जैसे मैं तुम्हारे साथ पेश आता हूँ वैसे ही तुम्हें अपने नोकरों के साथ सुलूक करना चाहिए और जैसे मैं तुम्हें तुम्हारी वफ़ादारी और ख़ैरख़्वाही के बदले इनाम देकर प्रसन्न रखता हूँ वैसे ही तुमको अपने नौकरों को समय पर तनख़्वाह देकर संतुष्ट रखना चाहिए।

शाहजहाँ अपने कर्म्मचारियों और अनुचरों से आज्ञा पालन कराने में बड़ा ज़बरदस्त था। यदि उसे उनकी धृष्टता का कोई सबूत मिल जाता तो वह उन्हें जीता न छोड़ता था।

सादत खाँ नामक अपने एक गुलाम पर बादशाह की विशेष कृपा रहती थी, इससे वह बड़ा मुँह लगा हो गया था। पचास हज़ार रुपये की तनख्वाह पाता था, और उसके अधीन दो हज़ार घोड़े और कुछ सेना भी थी, उसकी ख़िदमत के लिये उसे हुगली से पकड़ कर लाई हुई एक पुर्तगाली औरत भी मिली थी। बादशाह को दरबार में पान खिलाना उसका काम था। शाहजहाँ ने कई बार देखा कि वह उसकी नज़र बचा कर दरबारियों को उसके सामने उसका पान बाँटता है। उसने उसको ऐसा करने से मना किया और उससे कहा कि अगर फिर कभी तुम मेरे सामने मेरे खाने का पान किसी दरबारी को देते हुए देखे जाओगे तो तुम्हारी सख्त सज़ा होगी। सादत खाँ पर बादशाह के इस कहने का कुछ असर न हुआ और वह अपनी हरकत से बाज़ न आया। एक दिन संयोगवश बादशाह ने उसे किसी अमीर को पान देते हुए देख पाया। उस समय तो वह चुप चाप रह गया लेकिन दरबार उठ जाने पर तफ़रीह के लिये जब बाग़ की सैर करने निकला तब उसने अपने साथ कुछ दरबारियों को और सादत खाँ को भी ले लिया। बाग़ में पहुँचते ही उसने उसको इतने कोड़े लगवाए कि वह मर गया। तब उसने दरबारियों की तरफ़ मुख़ातिब हो कर उनसे कहा कि जो बादशाह की अदूलहुक्मी करते हैं उनकी यही मुनासिब सज़ा है।

सम्राट् अकबर का यह नियम था कि यदि उसका कोई कर्म्मचारी या नौकर उसकी आज्ञा से मारा जाता या अपनी मौत से मरता था तो वह उसकी सारी जायदाद जब्त कर लेता था। बादशाह जहाँगीर ने भी इस नियम का बराबर पालन किया पर शाहजहाँ ने यह ख्याल कर कि कहीं लोग यह न समझ बैठें कि मैंने सादत खाँ को धन के लालच से मरवा डाला है उसकी बीबी को उसके कुल माल और असबाब का वारिस क़रार दिया। उक्त स्त्री ने मुसलमानी आचार व्यवहार तो ग्रहण कर लिया पर अपना धर्म्म नहीं छोड़ा था।

शहर आगरे का क़ाज़ी मुझ से बहुत मेल जोल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रखता और मैं अकसर उसके घर आया जाया करता था।

सन् १६७९ ई० में सादत खाँ के मारे जाने पर उसने एक दिन मुझे अपने घर बुला भेजा और निराले में मुझसे कहा कि मुझे इस बात की पक्की ख़बर है कि उसकी स्त्री पुर्तगाली पादड़ियों के घर में छिप कर रहती है। मुसल्मानों की दृष्टि में उसका यह आचरण उनकी सामाजिक प्रथा के प्रतिकूल होने से सर्वथा निंद्य है। उनके घर में परदे का रिवाज है और उनकी औरतों को घर के बाहर पैर निकालने की सख्त मुमानियत है। आप के लेहाज़ से मैंने पादड़ियों से इस विषय की अभी तक चर्चा भी नहीं छेड़ी है पर अगर यह बात फैलती हुई कहीं औरंगज़ेब के कान तक पहुँच गई तो उन के लेनेके देने पड जायँगे और मुझ पर भी भारी मुसीबत आ पड़ेगी; क्योंकि वह जैसा उन विधर्मियों से बुरा मानता है जो उसके मज़हब में छेड़ छाड़ करते हैं वैसा ही उन मुसल्मानों से भी द्वेष-भाव रखता है जो उनके साथ मिलजुल कर रहते और मेहरबानी का सलूक करते हैं, इसलिए आप उस स्त्री को मेरी तरफ़ से चेता दें कि जब तक मैं शहर आगरे का क़ाज़ी हूँ तब तक वह पादड़ियों के घर का रहना छोड़ दे और जहाँ तक संभव हो उनसे किसी प्रकार का संबंध न रक्खे। मैंने उसी दिन उक्त स्त्री तथा पादड़ियों से मिल कर उन्हें सावधान कर दिया और वे मेरी इस चेतावनी के लिये मेरे चिर अनुगृहीत रहे।

एक मरतबा उक्त पादड़ियों ने शाहजहाँ के मुँह पर उसके धर्म की इतनी निंदा की कि वह उनसे चिढ़ कर उनके प्रधान गिरजे की इमारत ढा देने का हुक्म दे ही चुका था पर मेरे बीच में पड़ जाने से उसने इस हुक्म को तो मंसूख कर दिया पर एक छोटे से दूसरे गिरजे को गिरवा दिया।

शाहजहाँ को अपने राज्य में न्याय और शांति के प्रचार का कैसा ध्यान रहता था पाठकों को इससे परिचित करानेवाली और दो एक बातों का उल्लेख करना यहाँ असंगत न होगा:—

बादशाह का कोई सैनिक किसी हिंदू लेखक की एक दासी पर आसक्त हो उसे निकाल ले गया। लेखक ने अदालत में उसकी इस नाजायज़ हरकत की फ़रियाद की। क़ाजी के हुक्म से स्त्री और सैनिक दोनों तलब किए गए। इज़हार लिए जाने पर सैनिक ने काजी से कहा कि वादी का यह झूठा बयान है कि दासी उसकी है और वह मुझ पर उसको बहका ले जाने का झूठा कलंक लगा रहा है। वास्तव में चेरी हमारी है। आपको मेरी बात का विश्वास न हो तो आप उस से खुद पूंछ देखें और अगर मेरी बात ग़लत ठहरे तो मेरी जो मुनासिब सज़ा हो की जाय। इस पर चेरी का बयान लिया गया और उसने सैनिक की बात तसलीम की क्योंकि वह उसके साथ रहने पर राज़ी थी।

अदालत ने इस मामले को पेचीदा समझ कर बादशाह के पास भेज दिया। उसने उक्त दासी को अपनी सेवा के लिये महल में रख लिया। एक रोज़ उसे कुछ लिखने की ज़रूरत हुई और जब उसने उससे दावात में पानी डालने के लिये कहा तब उसने इस काम को ऐसी खूबी से किया कि उसे निश्चय हो गया कि वह लेखक की सेवा में कुछ दिन ज़रूर रह चुकी है और यह शिक्षा उसने उसी से पाई है। अतएव उसने उसको लेखक के घर पहुँचवा दिया और सैनिक को नौकरी से छुड़ा कर देश से निकाल दिया।

हरिश्चन्द्र शुक्ल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रावस्ती।

बौद्ध साहित्य में श्रावस्ती का नाम बहुत आया है क्योंकि वहाँ बुद्ध-भगवान् ने बहुत दिनों तक रह कर उपदेश दिया है। इस प्राचीन नगरी के खँडहर बलरामपुर से थोड़ी दूर पर हैं और सहेट-महेट कहलाते हैं।

हरिवंश में लिखा है कि सूर्यवंशीय राजा युवनाश्व के पौत्र श्रावतनय श्रावस्त ने यह नगरी बसाई थी, विष्णुपुराण, महाभारत (वनपर्व) भागवत पुराण तथा पाणिनि (४-२-९७) में इस नगरी का उल्लेख है। त्रिकांडशेष में श्रावस्ती का दूसरा नाम धर्मपत्तन भी मिलता है। वासवदत्ता आदि संस्कृत की प्राचीन पुस्तकों में श्रावस्ती और उससे लग कर बहती हुई ईरावती (राप्ती) नदी का नाम बराबर मिलता है। पालीग्रंथों में श्रावस्ती को 'सवट्ठि' लिखा है।

बुद्ध के पूर्व श्रावस्ती नगरी किस दशा में थी इसका ठीक ठीक पता नहीं लगता। रामायण से इतना पता चलता है कि वह प्राचीन काल में उत्तर कोशल की राजधानी थी। श्रीरामचंद्र अंतिम काल में इस राजधानी को अपने पुत्र लव को दे गए थे। शाक्यमुनि के समय श्रावस्ती की गिनती प्रसिद्ध जनपदों में थी। उसके दक्षिण साकेत (अयोध्या) और पूर्व में वैशाली का राज्य पड़ता था। इससे जान पड़ता है कि प्राचीन श्रावस्ती के अंतर्गत बहराइच, गोंडा, बस्ती और गोरखपुर के ज़िले थे।

बुद्धदेव के समय में श्रावस्ती वाणिज्य द्रव्यों से परिपूर्ण और ऊँची ऊँची अट्टालिकाओं से सुशोभित थी। अरणेमि ब्रह्मदत्त के पुत्र प्रसेनजित वहाँ के राजा थे। उनकी वर्षिका नाम की क्षत्रिया धर्मपत्नी से जेत नामक एक धर्मशील पुत्र उत्पन्न हुआ। इसके बाद राजा ने कपिलवस्तु की रहने वाली मल्लिका नाम की एक ब्राह्मणकुमारी का पाणिग्रहण किया जिसके गर्भ से विरूढ़क और सागर-सान्दोलित नाम के दो पुत्र उत्पन्न हुए। इन दो पुत्रों में ज्येष्ठ विरूढ़क बौद्ध धर्म का विरोधी होकर शाक्यवंश का नाश करने पर उद्यत हुआ था। सागर-सान्दोलित तिब्बत का राजा हुआ और वहाँ उसने बौद्धधर्म का प्रचार किया।

जिस समय चीनी तीर्थयात्री फ़ाहियान (ईसा की पाँचवीं शताब्दी) भारत में आया था उस समय नगरी श्रीहीन हो चली थी, उसके बड़े बड़े प्रासाद बुरी दशा में खड़े थे। बड़े बड़े संघाराम, विहार और मठ जनशून्य हो रहे थे। धर्म और शास्त्र की चर्चा लुप्त हो गई थी, बस्ती सुनसान हो रही थी, कोई चहल पहल नहीं थी। केवल दो तीन सौ घर रह गए थे। डेढ़ सौ वर्ष पीछे जब हुएनच्वांग भारत में आया था तब उसके रहे सहे भवन भी मिट्टी में मिल गए थे। स्थान प्रायः जनशून्य सा हो रहा था। केवल दो एक बौद्ध भिक्षु बुद्ध की लीला भूमि समझ वहाँ पड़े थे।

हुएनच्वांग लिखता है कि "श्रावस्ती राज्य का विस्तार प्रायः ६००० ली है। राजधानी का विस्तार कितना था नहीं कहा जा सकता। तब भी राजप्रासाद के चारों ओर की दीवार २० ली के घेरे में होगी। बड़े बड़े भवन सब गिर रहे हैं। जो निवासी बचे हैं वे अधिकतर किसान हो गए हैं, पर फिर भी वे धर्मनिष्ठ, विनीत और परोपकारी हैं। मठ और विहार सब गिर पड़ रहे हैं। थोड़े से बौद्ध भिक्षु उनमें रहते हैं। हिंदुओं के देवमंदिर भी इस नगर में बहुत से थे।

"बुद्ध के जीवनकाल में यहाँ के राजा प्रसेनजित थे। उनके महलों के चिह्न अब तक दिखाई पड़ते हैं। उनसे पूर्व की ओर 'सद्धर्म महाशाला' नामक मंदिर था जिसके खंडहर भर अब रह गए हैं। इस शाला को राजा प्रसेनजित ने बनवाया था। इस शाला में कुछ दिन रह कर भगवान्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुद्ध ने उपदेश दिया था। इसीके पीछे वह विहार पड़ता है जिसे प्रसेनजित ने बुद्ध की मौसी प्रजापती भिक्खुनी के स्मारक में बनवाया था। इस विहार के खंडहरों पर एक स्तूप खड़ा है। इसके पूर्व में जो स्तूप है वहीं पर राजा के मंत्री और कोषाध्यक्ष सुदत्त का महल था।

"सुदत्त के मकान से लगा हुआ एक बड़ा स्तूप है जिसके पास अंगुलिमाल्य नाम की एक जाति रहती थी। इस जाति के लोग बड़े हिंसक, कदाचारी और बौद्ध-धर्म के कट्टर विरोधी थे। ये लोग जिसे मारते थे उसकी एक उँगली काट कर माला में गूँथ कर पहन लेते थे। इन लोगों का विश्वास था कि यदि कोई अंगुलिमाल्य अपनी माता या बौद्ध का वध करे तो उसे स्वर्ग मिलता है। कहते हैं कि एक बार एक अंगुलिमाल्य अपनी माता का वध करने चला। इसी बीच में उसने बुद्धदेव को आते देखा और वह उनकी ओर बढ़ा। पर बुद्ध की शांत मूर्त्ति और उपदेश से उसे ज्ञान हो गया।

"नगर से ५-६ ली दक्खिन जेतवन आराम है जो प्रसेनजित के पुत्र युवराज जेत का बगीचा था। इसी जेतवन को सुदत्त ने मोल लेकर बुद्ध के रहने के लिये उसमें एक बड़ा भारी विहार बनवा दिया था। पहले यहाँ पर एक संघाराम भी था। पर अब सब गिर पड़ गया है। दरवाजे पर दो ऊँचे स्तंभ खड़े हैं। इनमें से एक के नीचे धर्म-चक्र बना है और दूसरे के सिरे पर वृष की आकृति है। ये दोनों स्तंभ महाराज अशोक के स्थापित हैं। विहार के सब मकान गिर गए हैं केवल एक कोठरी बच रही है जिसमें बुद्ध की एक मूर्त्ति है।

"सुदत्त बड़े ही दानी और धर्मात्मा थे। उन्होंने बहुत सा धन लगा कर इस बगीचे को मोल लिया था और उसमें विहार आदि बनवाये थे। वे दरिद्रों को नित्य दान देते थे इसीसे वे 'अनाथपिंडद' के नाम से प्रसिद्ध हो गए थे। जेतवन आराम अनाथपिंडद विहार के नाम से भी प्रसिद्ध हो गया था।"

सुदत्त ने राजगृह में बुद्ध का दर्शन किया था और वहीं उनके धर्म की दीक्षा ली थी। उन्होंने अपने गुरु को श्रावस्ती में बसाने के लिये ही जेतवन ख़रीदा था। जेत ने भी उसी समय बौद्ध धर्म ग्रहण किया था। शाक्यमुनि जिस समय इस विहार में आए उन्होंने इसका नाम "जेतवन-अनाथपिंडद आराम" रखा पाली ग्रंथों में इस सुदत्त को 'महासेट्ठि' करके लिखा है। इसीसे कुछ लोग उसे 'महासेट्ठि विहार' भी कहने लगे थे। संभव है कि 'संहेट महेट' इसी 'सेट्ठि महत्' का अपभ्रंश हो।

बुद्धदेव जिस समय श्रावस्ती में रहते थे उस समय वहाँ बौद्धमत विरोधी बहुत से दार्शनिकों और पंडितों का निवास था। जैन गुरु पूर्ण काश्यप ने यहीं बुद्धदेव से परास्त होकर आत्म-हत्या की थी।

जैनग्रंथों के अनुसार तीर्थंकर संभवनाथ यहीं उत्पन्न हुए थे। इसीसे जैन लोग भी श्रावस्ती में तीर्थयात्रा के लिये जाते हैं। वे एक टूटे स्तूप को अपना आदि पीठ कहते थे। कनिहांम साहब ने जब उस स्तूप को खुदवाया तब उसके भीतर बड़ी भारी अट्टालिका के चिह्न और कुछ जैन-मूर्त्तियाँ मिलीं।

"जेतवन से ३—४ ली पूर्व एक स्तूप है। यह उस पूर्वारामविहार के सामने है जिसे प्रसिद्ध बौद्ध स्त्री विशाखा ने बनवाया था। इसी स्तूप के दक्षिण विरूढ़क ने शाक्यों की हत्या की थी।

उक्त संघाराम से ३-४ ली उत्तर पूर्व "आम्र-नेत्रधन" नामक बुद्ध का विहार था। यहाँ पर बुद्धदेव ने कई डाँकुओं को आँखें दी थीं। राजा प्रसेनजित की आज्ञा से इन डाँकुओं की आँखें निकाल ली गई थीं। इस स्थान पर विशाखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भक्ति से गद्गद हो कर बुद्ध के लिए निवासस्थान बनवाया था। यहीं द्रोणोदन के पुत्र देवदत्त ने ईर्षावश बुद्धदेव का बध करने का प्रयत्न किया था। यहीं शाक्यकुल का संहार करनेवाला विरूढ़क अपने मंत्री अंबरीष के सहित जल मरा था। बात यह हुई कि विरूढ़क ने ईर्षावश अंबरीष की सलाह से अपने सौतेले भाई जेत का वध किया। इसकी खुशी में उसने यहीं पर एक प्रमोदवन बनवाया और उसमें मंत्री के सहित रहने लगा। संयोग से सूर्य्यकांतमणि के द्वारा वन में आग लग गई और दोनों उसी में जल मरे।"

अशोक ने श्रावस्ती नगरी में बौद्धों के अनेक कीर्त्ति चिह्न बनवाए थे। उसके राजत्व काल में यह एक अत्यंत समृद्ध और सुसज्जित नगरी थी। ईसा से डेढ दो सौ वर्ष पहले प्रसिद्ध बौद्धाचार्य्य नागार्जुन ने वहीं शरीर त्याग किया था। श्रावस्ती के जेतवन संघाराम से कई विद्वान् बौद्ध चौथे महाधिसंघ में (जो ईसा की प्रथम शताब्दी में हुआ था) योग देने के लिए गए थे। उसके पीछे फाहियान के आने तक श्रावस्ती का कुछ हाल नहीं मिलता।

जान पड़ता है कि ईसा की पहली और दूसरी शताब्दी में श्रावस्ती गान्धार के शक राजाओं के अधीन रही। कारण यह है कि शकराज कनिष्क और हुविष्क के समय की मूर्त्तियाँ इसके खँड़हरों में पाई गई हैं जिन पर शकाब्द के सहित शिलालेख हैं। शकों के पीछे यह नगरी फिर किसी आस पास के राजा के अधिकार में आई। सिंहली बौद्धग्रंथों से पता चलता है कि राजा थिराधार और उसके भतीजों ने यहां ईस्वी २७५ से लेकर ३१९ तक राज्य किया। इसके पीछे श्रावस्ती मगध के गुप्त राजाओं के हाथ में आई। दूसरा चन्द्रगुप्त ही विक्रमादित्य है जिसका उल्लेख हुएनच्वांग ने किया है। उसके समय में यहाँ बौद्ध धर्म का लोप हुआ और अनेक हिंदू मंदिर बने।

गुप्तों के समय में भी बौद्ध धर्म का एक बारगी लोप नहीं हो गया। उस समय की मिट्टी की मुहरों तथा टूटी फूटी मूर्त्तियों पर गुप्त समय के अक्षरों में बौद्ध मंत्र आदि बहुत मिलते हैं। यहाँ तक कि ईसा की तेरहवीं शताब्दी का एक शिलालेख मिला है जिससे बौद्ध धर्म का आभास पाया जाता है। इसमें लिखा है श्रीवास्तव्य वंशीय बिल्वशिव के पौत्र और जनक के पुत्र विद्याधर ने बौद्ध भिक्खुओं के निवास के लिए अजावृष नगर में एक संघाराम बनवाया। यह लेख संवत् ११७८ का है। उसमें लिखा है कि जनक गाधिपुर (कन्नौज) के राजा मदन के मंत्री हुए थे। अजावृष नगर कहाँ था पता नहीं। संभवतः यह जायस नगर है।

जैन धर्म का प्रभाव भी श्रावस्ती में बहुत दिनों तक बना रहा। संवत् ११८२ तक की बनी हुई तीर्थंकरों की मूर्त्तियाँ श्रावस्ती में पाई गई हैं। श्रावस्ती के अंतिम राजा सुहृदध्वज जैन थे। ये इतिहास में सुहलदेव या सुहिराल के नाम से प्रसिद्ध हैं। ये महमूद ग़जनवी के समय में थे। महमूद गजनवी के सेनापति सालार मसऊद के साथ इन्होंने युद्ध किया था और उसे बहराइच में मारा था। यही सालार मसऊद जनसाधारण में गाजी मियाँ के नाम से प्रसिद्ध है।

लोभ या प्रेम।

(२)

पर जिनकी आत्मा समस्त भेदभाव भेद कर अत्यंत उत्कर्ष को पहुँची हुई होती है वे सारे संसार की रक्षा चाहते हैं—जिस स्थिति में भूमंडल के समस्त प्राणी, कीट पतंग से ले कर मनुष्य तक, सुख पूर्वक रह सकते हैं उसके अभिलाषी होते हैं। ऐसे लोग विरोध के परे हैं। उनसे जो विरोध रखें वे सारे संसार के विरोधी हैं; वे लोक के कंटक हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई वस्तु हमें बराबर सुख वा आनंद देती रहे और कोई वस्तु बनी रहे इन्हीं दो भावों को ले कर स्वायत्तरक्षा की इच्छा और स्वनिरपेक्ष रक्षा की इच्छा ये दो विभाग पहले किए गए हैं। अतः पहली को यदि हम अपने सुख की रक्षा की इच्छा कहें तो बहुत अनुचित न होगा। वस्तु के दूसरे के पास जाने से या नष्ट हो जाने से हमें सुख वा आनंद न मिल सकेगा इसी से हम उसकी रक्षा के लिए व्यग्र होते हैं। यदि ऐसी वस्तु को कोई उठाए लिए जाता हो और वह बीच में नष्ट हो जाय तो हमें दुःख न होगा क्योंकि जब चीज़ हमारे हाथ से निकल गई, हमें वह सुख वा आनंद दे ही नहीं सकती, तो वह चाहे रहे, चाहे नष्ट हो। यहाँ तक कि यदि ले जानेवाले के प्रति हमें क्रोध होगा या ईर्षा होगी तो हम प्रसन्न होंगे। जहाँ वस्तु-रक्षा की इच्छा होगी वहाँ यह बात न होगी। हम किसी दशा में उस वस्तु का नाश न चाहेंगे। किसी पुराने काज़ी के पास दो स्त्रियाँ एक बच्चे को ले कर लड़ती हुई आईं। एक कहती थी बच्चा मेरा है, दूसरी कहती थी मेरा। क़ाज़ी साहब ने परीक्षा के विचार से कहा "अच्छा, तुम दोनों को बच्चा काट कर आधा २ बाँट दिया जायगा"। इतना सुनते ही दोनों में से एक स्त्री घबरा कर बोल उठी "जाने दीजिए, बच्चा मुझे न चाहिए, उसी को दीजिए।" क़ाज़ी साहब समझ गए कि बच्चा इसी का है। वह स्त्री बच्चे की माँ थी अतः उसे उसका स्वनिरपेक्ष लोभ था।

अब तक लोभ के संबंध में जो कुछ कहा गया वह उसका व्यापक अर्थ लेकर। पर जैसा पहले कहा जा चुका है 'लोभ' शब्द कहने से आज कल प्रायः धन के लोभ की भावना होती है, प्राप्ति वा रक्षा की उस इच्छा की ओर ध्यान जाता है जो जीवन-निर्वाह की सामग्रियों के प्रति होती है। धन से अनेक सुखों की प्राप्ति और अनेक कष्टों का निवारण होता है अथवा यों कहिए कि धन के बिना संसार में रहना संभव नहीं। संसार में जो इतने लोग धन इकट्ठा करते दिखाई देते हैं उनमें से कुछ तो घोर कष्ट के निवारण के लिए, कुछ अधिक सुख की प्राप्ति के लिए, कुछ भविष्य में सुख के अभाव या कष्ट की आशंका से और कुछ बिना किसी उद्देश्य-भावना के। इनमें से प्रथम श्रेणी के लोग तो धन की चाहे जितनी प्रबल इच्छा करें, उसके लिए चाहे जितने आतुर हों लोभी नहीं कहला सकते। उन पर लोभ का आरोप हो नहीं सकता। धन के बिना जिन्हें पेट भर अन्न नहीं मिलता, जो शीत और ताप से अपने शरीर की रक्षा नहीं कर सकते उन्हें जो लोभी कहें वे बड़े भारी लोभी और बड़े भारी क्रूर हैं। दूसरी श्रेणी के लोगों से लोभ के आरोप की संभावना क्रमशः बढ़ते बढ़ते चौथी श्रेणी के लोगों पर जाकर निश्चय-कोटि को पहुँच जाती है। कष्ट निवारण की इच्छा, अधिक सुखप्राप्ति की इच्छा, सुखाभाव या कष्ट की आशंका ये तीनों धन और उसकी प्राप्ति की इच्छा के बीच ओट या व्यवधान रूप रहती हैं। जहां इन तीनों में से कोई परदा नहीं रहता वहाँ शुद्ध धनलोभी की जघन्य मूर्त्ति साक्षात् दिखाई पड़ती है।

धन की कितनी इच्छा लोभ के लक्षणों तक पहुँचती है इसका निर्णय कठिन है। पर किसी मनोवेग की उचित सीमा का अतिक्रमण प्रायः वहाँ समझा जाता है जहाँ और मनोवृत्तियाँ दब जाती हैं या उनके लिये बहुत कम स्थान रह जाता है। और मनोवेगों के आधिक्य से इस लोभ के आधिक्य में विशेषता यह होती है कि लोभ इन्द्रियविषयान्वेषी होने के कारण अपनी स्थिति और वृद्धि का आधार आप खड़ा करता रहता है जिससे असन्तोष की प्रतिष्ठा के साथ ही साथ और वृत्तियों के लिये स्थायी अनवकाश हो जाता है। और मनोवेगों में यह बात नहीं होती। क्रोध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही लीजिए। क्रोध कुछ बातों पर आता है पर बातों को ढूँढ़ने में प्रवृत्त नहीं होता। क्रोधी भाव का मनुष्य ऐसी बातों पर भी चिढ़ जाता जिनसे और लोग नहीं चिढ़ते पर वह सदा फेर में नहीं घूमा करता कि कोई बात चिढ़ने मिले। क्रोध से आग बबूला होने वाले तुरंत करुणा से आर्द्र और लज्जा से पानी पानी होते भी देखे जाते हैं। क्रोध आदि में अन्य दिग्गा- नी वृत्तियों का जो बाध होता है वह प्रायः णिक होता है, पर लोभ द्वारा स्थायी हो जाता। बात यह है कि लोभ का प्रथम अवयव सुखा- क होने के कारण लोभी को विषय में बराबर न रखता है। धन का लोभी धन पा कर लोभ निवृत्त नहीं हो जाता या तो भले बुरे का सब चार छोड़ रक्षा में तत्पर दिखाई देता है या र अधिक प्राप्ति में। इस प्रकार लोभ से अन्य- वृत्तियों का जो स्तम्भन होता है वह स्वभा- न्तर्गत हो जाता है। अस्तु, स्थूल रूप से उद्धत भ के दो उग्र लक्षण कहे जा सकते हैं—

(१) असन्तोष।

(२) अन्य वृत्तियों का दमन।

लोभ चाहे जिस वस्तु का हो जब बहुत बढ़ ाता है तब उस वस्तु की प्राप्ति, सान्निध्य या पभोग से जी नहीं भरता। मनुष्य चाहता है कि ह बार बार मिले या बराबर मिलती रहे। धन लोभ जब रोग हो कर चित्त में घर कर लेता तब प्राप्ति होने पर भी और प्राप्ति की इच्छा राबर जगी रहती है जिससे मनुष्य सदा आतुर र प्राप्त के आनन्द से विमुख रहता है। जितना ी है उसने के पीछे जितना है उतने से प्रसन्न होने उसे कभी अवसर ही नहीं मिलता। उसका ारा अन्तःकरण सदा अभावमय रहता है। उसके रे जो है वह भी नहीं है। असन्तोष अभाव कल्पना उत्पन्न दुःख है अतः जिस किसी में यह अभाव- ल्पना स्वाभाविक हो जाती है सुख से उसका नाता सब दिन के लिये टूट जाता है। न किसी को देख कर वह प्रसन्न होता है और न उसे देख कर कोई प्रसन्न होता है। इसी से सन्तोष सात्त्विक जीवन का एक अंग बतलाया गया है। भक्तवर तुलसीदास जी सन्तोषवृत्ति की वाञ्छा इस प्रकार करते हैं—

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो ?.....यथा लाभ सन्तोष सदा काहूसों कछु न चहौंगो।

पर जिस स्थिति से कोई कष्ट या असुविधा हो उससे असंतुष्ट रहना गृहस्थ का धर्म है क्योंकि ऐसे असन्तोष से जिस प्रयत्न की प्रेरणा होती है वह एक अच्छे फल के निमित्त होता है। ऐसे असंतोष का अभाव आलस्य सूचक होता है। पर प्राप्ति की जो इच्छा व्यसन के रूप में होती है उसका निरसन ही ठीक है।

धन का जो लोभ मानसिक व्याधि वा व्यसन के रूप में होता है उसका प्रभाव अन्तःकरण की शेष वृत्तियों पर यह होता है कि वे अनभ्यास से कुंठित हो जाती हैं। जो लोभ मान अपमान के भाव को, करुणा और दया के भाव को, न्याय अन्याय के भाव को यहाँ तक कि अपने कष्ट-निवा- रण या सुखभोग की इच्छा तक को दबा दे वह मनुष्यता कहाँ तक रहने देगा ? जो अनाथ विधवा का सर्वस्व-हरण करने के लिए कुर्कअमीन लेकर चढ़ाई करते हैं, जो अभिमानी धनिकों की दुत- कार सुन कर त्योरी पर बल नहीं आने देते, जो मिट्टी में रुपया गाड़ कर न आप खाते हैं न दूसरे को खाने देते हैं, जो अपने परिजनों का कष्टक्रं- दन सुन कर भी रुपये गिनने में लगे रहते हैं वे अधमरे होकर जीते हैं। उनका आधा अन्तःकरण मारा गया समझिए। जो किसी के लिए नहीं जीते उनका जीना न जीना बराबर है।

लोभियों का दमन योगियों के दमन से किसी प्रकार कम नहीं होता। लोभ के बल से वे काम और क्रोध को जीतते हैं, सुख की वासना का त्याग करते हैं, मान अपमान में समान भाव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रखते हैं। अब और चाहिए क्या? जिससे वे कुछ पाने की आशा रखते हैं वह यदि उन्हें दस गालियाँ भी देता है तो उनकी आकृति पर न रोष का कोई चिह्न प्रकट होता है और न मन में ग्लानि होती है। न उन्हें मक्खी चूसने में घृणा होती है और न रक्त चूसने में दया। सुंदर से सुंदर रूप देख कर वे अपनी एक कौड़ी भी नहीं भूलते। करुण से करुण स्वर सुन कर वे अपना एक पैसा भी किसी के यहाँ नहीं छोड़ते। तुच्छ से तुच्छ व्यक्ति के सामने हाथ फैलाने में वे लज्जित नहीं होते। क्रोध, दया, घृणा, लज्जा आदि करने से क्या मिलता है कि वे करने जायँ? जिस बात से उन्हें कुछ मिलता नहीं जब कि उसके लिए उनके मन के किसी कोने में जगह नहीं होती तब जिस बात से पास का कुछ जाता है वह बात उन्हें कैसी लगती होगी यह यों ही समझा जा सकता है। जिस बात में कुछ लगे वह उनके किसी काम की नहीं—चाहे वह कष्ट-निवारण हो या सुखप्राप्ति, धर्म हो या न्याय। वे शरीर सुखाते हैं; अच्छे भोजन, अच्छे वस्त्र आदि की आकांक्षा नहीं करते, लोभ के अंकुश से वे अपनी संपूर्ण इंद्रियों को वश में रखते हैं। लोभियों! तुम्हारा अक्रोध, तुम्हारा इन्द्रियनिग्रह तुम्हारी मानापमानशून्यता, तुम्हारा तप अनुकरणीय है; तुम्हारी निष्ठुरता, तुम्हारी निर्लज्जता, तुम्हारा अविवेक, तुम्हारा अन्याय विगर्हणीय है। तुम धन्य हो! तुम्हें धिक्कार है!!

पक्के लोभी लक्ष्यभ्रष्ट नहीं होते, कच्चे हो जाते हैं। किसी वस्तु को लेने के लिए कई आदमी खींचतान कर रहे हैं। उनमें से एक क्रोध में आ कर उस वस्तु को नष्ट कर देता है। उसे पक्का लोभी नहीं कह सकते क्योंकि क्रोध ने उसके लोभ को दबा दिया, वह लक्ष्यभ्रष्ट हो गया।

प्राचीन भारत में नगर-प्रबन्ध।

कौटिल्य का अर्थशास्त्र देखने से पता लगता है कि प्राचीनकाल में भारतवर्ष में नगरों के प्रबन्ध के सम्बन्ध में उसी प्रकार की सुव्यवस्था थी जिस प्रकार आज कल की म्युनिसिपेलिटियों में देखी जाती है। कुछ नियम नीचे दिए जाते हैं-

"प्रत्येक घर में ३ पद या ६॥ अरत्नी का लंबा पनाला होना चाहिए जिसमें से हो कर पानी बिना रुके हुए नगर की नालियों में गिरे। इस नियम का पालन न करने वाले को ५४ पण दंड देना होगा। दो मकानों के बीच कम से कम ३ पद का अन्तर छूटा रहना चाहिए। मिले हुए दो घरों की छाजनों के बीच या तो चार अंगुल का अंतर रहे या एक छाजन दूसरी के ऊपर रहे। मकान के मालिक जिस ढंग का चाहें उस ढंग का मकान बनावें पर इस बात का ध्यान रखें कि दूसरों को कोई कष्ट न हो। बरसात की खराबियों से बचाने के लिए छाजनों पर ऐसी चौड़ी चटाइयां रहनी चाहिए जो हवा से न उड़ सकें।

"यदि किसी गड्ढे, सीढ़ी, पनाले, कंडौर या घर के और किसी भाग के कारण दूसरों को बाधा पहुँचती हो, किसी प्रकार की असुविधा होती हो, बरसाती पानी इकट्ठा होकर पड़ोसी की नींव कमज़ोर करता हो तो स्वामी पर पाँच पण का दंड होगा। यदि मल मूत्र आदि द्वारा लोगों को कष्ट होता होगा तो इसका दूना दंड होगा। यदि नगर की नाली किसी के कारण रुकेगी तो उसे १२ पण दंड में देने पड़ेंगे।"

नगरों की स्वास्थ्यरक्षा का भी उस समय के अनुसार पूरा प्रबन्ध रहता था। रोगों की रोक और चिकित्सा की राज्य की ओर से व्यवस्था रहती थी। भैषज्यागार स्थान स्थान पर रहते थे जिनमें इतनी दवाइयाँ इकट्ठी रहती थीं जो बरसों चलें। जो दवाएँ चुक जाती थीं तुरन्त लाकर रख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाती थीं। अर्थशास्त्र में चार प्रकार के वैद्यों का उल्लेख है—भिषज वा चिकित्सक, जांगलीविद अर्थात् विष की चिकित्सा करने वाले, गर्भव्याधि-चिकित्सक या सूतिकाचिकित्सक तथा सेनाचिकित्सक। अस्त्र, यंत्र, अगदस्नेह (घावपर रखने के मरहम) और वस्त्र (पट्टी) तथा पथ्य आदि सब सामग्रियों के सहित सेनाचिकित्सक सेना के साथ साथ चलते थे। पशुओं की चिकित्सा के लिए पशुचिकित्सक थे।

जड़ी बूटियों को लगाने और उगाने का पूरा उद्योग होता था। इस काम के लिए सरकारी खेत अलग थे जिनका निरीक्षण राज्य की ओर से होता था। वैद्यों के व्यवसाय पर भी कड़ी दृष्टि रखी जाती थी।

रोगों की रोक के भी उपाय किए जाते थे। अन्न, घी, तेल, नमक, गंध द्रव्य आदि में मिलावट करने वालों को उचित दण्ड दिया जाता था सड़क पर कूड़ा फेंकना, कीचड़ करना अपराध समझा जाता था। मंदिरों, राजप्रासादों, और तीर्थस्थानों के आसपास गंदगी फैलानेवाले, कुए तालाब आदि का पानी गंदा करनेवाले दंड के भागी होते थे। नगर में किसी मनुष्य या पशु का शव फेंकना भारी जुर्म था। मुर्दों को ले जाने के लिए अलग मार्ग थे। श्मशान भूमि दूर पर होती थी।

योग्य वैद्यों द्वारा शव की चीरफाड़ बराबर होती थी। चीरने के पहले लाश तेल से तर की जाती थी जिसमें सड़ने न पावे। यदि किसी की मृत्यु विष, आघात आदि से होती थी तो उस की लाश राज वैद्यों के पास पहुँचाई जाती थी जो लक्षणों को अच्छी तरह देख कर मृत्यु का कारण निश्चित करते थे। इनमें से कई लक्षण अर्थशास्त्र में गिनाए हुए हैं। मामले की पूरी जाँच होती थी और वह न्यायालय में भेज दिया जाता था।

नागरिकों के लिए कुछ विशेष नियम रखे गए थे जिनका उन्हें पालन करना पड़ता था। नीचे उदाहरण दिया जाता है—

"जिस गृहस्वामी के पास पाँच घड़े, एक कुंभ, एक द्रोण, एक सीढ़ी एक कुल्हाड़ी, एक टोकरी (हाँक कर धुआँ निकालने के लिए) एक काँटा (जलते हुए चौकठों आदि को खींच कर बाहर करने के लिए) और चमड़े का थैला नहीं होगा उससे पण का चतुर्थांश दंड लिया जायगा। फूस की छाजन नगर में कोई न रखे। लोहार आदि जो आग के सामने काम करनेवाले हैं वे एक ही स्थान पर बसें। घर के द्वार पर सदा एक न एक घर का पुरुष रहना चाहिए। बड़ी सड़कों और चौराहों पर पानी से भरे हुए सहस्रों घड़े रखे रहें कहीं आग लगने पर यदि कोई गृहस्वामी बुझाने में सहायता न दे तो उससे १२ पण दंड में लिए जायेंगे।"

नवम हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के लिए

लेख-सूची।

वैशाख कृष्ण ४, ५ और ६ सं० १९७६ (ता० १९, २० और २१ मार्च) को बंबई में होनेवाले नवम हिंदी-साहित्य-सम्मेलन के लिएनियत विषय—

विषय।

(१) भाट और चारणों का हिंदीभाषा संबधी कार्य। (२) मराठी से हिंदी का पुराना और नया संबंध। (३) गुजराती से हिंदी का पुराना और नया संबंध। (४) हिंदी गद्य का क्रमविकास। (५) हिंदी कविता की वर्तमान स्थिति और उसमें सुधार। (६) मुसलमानों और ईसाइयों में हिंदी प्रेम प्रवर्तन के उपाय। (७) हिंदी का प्राचीन और नवीन संगीत। (८) हिंदी में अतुकांत कविता। (९) सूरदास और तुलसीदास की तुलना और जनता पर उनका प्रभाव। (१०) हिंदी प्रचार के उपयोगी साधन। (११) हिंदी में नाटक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और प्रहसन। (१२) हिंदी की उन्नति में देशी राज्यों का कार्य। (१३) उच्च शिक्षा देने के लिए हिंदी भाषा की शक्ति। (१४) देवनागरी लिपि में जो शब्द भिन्न भिन्न रूप से लिखे जाते हैं उनका एक रूप निश्चित करने पर विचार; जैसे, गयी गई, लिये लिए, इत्यादि। (१५) हिंदी में राजनैतिक साहित्य। (१७) बौद्धकाल की भाषा। (१८) भारतीय और पश्चिमीय नाटक (प्राचीन और अर्वाचीन)। (१९) साहित्य-सम्मेलन की परीक्षाओं के गुण-दोष। (२०) भारत की प्राचीन राष्ट्रभाषाएँ। (२१) चाणक्य का राष्ट्रविज्ञान (२२) हिंदी विद्यापीठ का स्वरूप। (२३) लिंगप्रयोग में प्रांतीय विभिन्नता और उसका सुधार। (२४) भारतेंदु के नाटकों की संक्षिप्त आलोचना (२५) रसों का मनोविज्ञान से संबंध। (२६) हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य। (२७) हिंदी में विज्ञान-संबंधी पारिभाषिक शब्द। (२८) भूषण के समय में महाराज शिवाजी के दरबार में हिंदी की स्थिति। (२९) भूषण के ग्रंथ (लेख ऐतिहासिक और आलोचनात्मक होना चाहिये) (३१) भारतीय राष्ट्रमिति का निश्चय।

आपके कृपाकांक्षी—

जमनादास द्वारकादास,
गोविंदलाल पीती (राजा बहादुर)
जमनालाल बजाज (रायबहादुर)
मंत्री स्वागतकारिणी समिति।

साँप और शैतान।

हे बाइबिलकार! तुम धन्य हो! तुम्हारे अनेक अनुशीलन और साधन का ही फल था जो तुम "शैतान" का चित्र खींचने में समर्थ हुए। जो मनुष्य कि पाप कर रहा है, वह तो पापी है ही, किन्तु जो प्रत्यक्ष पाप की मूर्त्ति है, जो जघन्य पापों से लदा हुआ है, जो पाप कर्म करके ही अपनी उन्नति करना चाहता है, जिसके जीवन का लक्ष्य एक मात्र पाप करना ही है, जो पाप की गठरी सिर पर रखे पाप-सागर में डूब रहा है, सर्वसाधारण के सामने ऐसे कुटिल जीव के इस महान परिश्रम के लिये एक नई आख्यायिका और नए विशेषणों के गढ़ने की आवश्यकता थी। यदि ऐसा न किया जाता तो आन्तरिक भाव प्रकट करने के लिये जिस भाषा का जन्म हुआ है वह भाषा ही अधूरी रह जाती। यही सोच-विचार बाइबिलकार ने बहुत चिंतन, अनुशीलन और साधन के उपरांत उस मूर्त्तिमान् पापात्मा का नामकरण "शैतान" किया।

इस "शैतान" का चित्र कवि की निज कल्पनाशक्ति के द्वारा प्रकट हुआ है। इस चित्र से कवि की अपूर्व और असाधारण उद्भाविनी और मनन शक्ति का अच्छा परिचय मिलता है।

पाश्चात्य कवि महामति मिल्टन ने बाइबिल-वर्णित इस "शैतान" चित्र पर अपनी कवित्वपूर्ण तूलिका (लेखनी) से रंग फेर कर काव्यजगत् में कैसी अपूर्व और चमत्कारिणी सृष्टि कर दिखाई है, यह अंगरेजी पढ़े पाठकों से छिपा न होगा। बाइबिल के कर्त्ता और "पराडाइज लास्ट" के रचयिता ने शैतान के विषय में जिन बातों का वर्णन किया है वर्त्तमान प्रबन्ध भी उसी की छाया पर लिखा गया है।

महाकवि की सृष्टि में "शैतान" और "ईश्वर" का रूप इस भाँति है—ईश्वर सर्व प्रकाशमय है, शैतान घोर अंधकारमय है। ईश्वर सुख है, शैतान दुःख है। ईश्वर शांतिमय और शैतान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रशांतिपूर्ण है। ईश्वर ने जो रचना की शैतान उसके बिगाड़ने में तत्पर हुआ। शैतान का चाहे उसमें कोई लाभ न हो पर वह कुटिलात्मा उसे नहीं देख सकता। वह ईश्वर के शुभ्र उज्वल वर्ण पर घोर कालिख फेर देने ही में सुखी होता है। शैतान हिंसा, पाप और काम से मिश्रित है अथवा यह कहना चाहिए कि उस अधमात्मा के प्रकृत स्वरूप को पहचान लेना मानव-बुद्धि से कोसों दूर है।

ईश्वर ने जब इस मनोरम विशाल ब्रह्मांड की रचना की तब इस मर्त्य और स्वर्ग लोक को सोने की ज़ंजीर के साथ बाँध दिया। मनुष्यों के आदि पुरुष (आदम-हौआ) ईश्वर के छायास्वरूप हुए। उनके उस अनिर्वचनीय रूप माधुर्य और सुकोमल समुज्वल शरीर का केवल हृदय से ही अनुभव हो सकता है, वह आँखों के देखने से संबंध नहीं रखता है। फिर उस सुंदरता के बीच कैसा सुंदर हृदय वास करता है जिसमें पाप की मलिनता का अस्तित्व भी नहीं है पुण्य और पवित्रता से जो परिपूर्ण हो रहा है। वह कैसा निर्मल निर्दोष और कलुषशून्य है। इस हाहाकार पूर्ण संसार में वैसी सरलता, वैसी पवित्रता कल्पना शक्ति में भी लाना असंभव है। संध्यासमीरणकंपिता श्याम पल्लविनी कुसुमिता लतिका के सदृश हौआ वह सौंदर्य बिखरा रही है। वह आदिपुरुष निर्वाक निर्निमेष अपनी उस गुणसम्पन्ना अलौकिक सौंदर्यमयी प्रियतमा सहधर्मिणी के मुखकी ओर एक टक देख रहा है। वह सौंदर्यमयी रमणी भी उस अनुपम रूपराशि प्राणप्रिय पति का मुख देख रही है। पलक से पलक नहीं लगती। उस आदि नारी के कैसे सुंदर नेत्र, कैसी स्निग्ध दृष्टि है! उस दृष्टि में कैसी सरल प्रीति और पवित्रता के भाव हैं। पवित्रता के बीच कैसा निरवच्छिन्न विमल प्रेम विराज रहा है। गुंजरित भ्रमर कमलिनी के धोखे में उसी सौंदर्यमय मुख की ओर बारंबार मड़रा रहा है। कुसुमित तरुशाखाओं पर बैठ उसी सुंदरी पर विमोहित हो मीठी तान से पक्षिगण मधुर संगीत गा रहे हैं। ये सब के सब दृश्य सुंदर तथा मनोरम हैं, सामने सरस्वती शांत भाव से बह रही है। वह स्वभाव सुंदरी आदि रमणी नदी के स्वच्छ जल में अपनी अकृत्रिम रूपराशि की छाया देखती देखती अपने लावण्य सौंदर्य पर मोहित हो—

"आइनः को लेके वह कहते हैं बार बार।
ऐ गुल! तू अपने हुस्न की आपी बहार देख॥"

इस उक्ति को चरितार्थ कर रही है।

फिर देखो अस्ताचल की गोद में सूर्य भगवान जा छिपे। स्त्री पुरुष दोनों ने आकाश की ओर देखा कि सूर्य्य भगवान् नहीं. चारों ओर अन्धकार है। सोचा, "हैं! यह क्या हुआ! एकाएक यह अन्धकार क्यों? हाय क्या फ़िर उसे अब न देख सकेंगे?" सोचते विचारते रात्रि व्यतीत हुई; प्रभात समय फिर सूर्य भगवान् उदयाचल से उदय हुए। बड़े आनन्दोल्लास और प्रीतिपूर्ण नेत्रों से पतिपत्नी उन्हीं की ओर देखने लगे, सोचने लगे, "ये क्या वेही सूर्य्य हैं या कोई दूसरे?" फिर संध्या हुई सूर्य्य भगवान् फिर अस्ताचल गामी हुए, ठीक समय में फिर प्रभात हुआ। प्रभात के साथ अंशुमाली भगवान् ने भी दर्शन दिया, तब स्त्री और स्वामी ने समझा कि इस एक ही सूर्य का उदय और अस्त होता है। यह केवल रात-दिन का हेरा फेरा है।

उस समय जरा, मृत्यु, शोक, ताप, कुछ न था।

इसके उपरान्त कवि दिखलाता है कि ईश्वर की इस अनुपम-सृष्टि को देखकर शैतान के हृदय मंदिर में एकाएक हिंसाग्नि प्रज्वलित हो उठी। ईश्वर स्वर्ग के राजा थे, सर्वशक्तिमान् थे। शैतान इसे न सहन कर सका अतः उसने स्वर्ग में महा उपद्रव मचा दिया. किन्तु उस उपद्रव में परास्त भी हुआ। परास्त होने पर अब कैसे ईश्वर के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ विरुद्धाचरण करे, इस बात की घात ढूँढ़ने लगा। जब ईश्वर ने इस पृथ्वी की रचना की तब शैतान ने निज हिंसावृत्ति चरितार्थ करने के लिये ईश्वर की इस सृष्टि को ही मटियामेट करने का दृढ़ संकल्प किया। शैतान सृष्टि का ध्वंस करने में तो सफल-मनोरथ न हुआ पर प्रकाश के साथ अन्धकार, पुण्य के साथ पाप, सरलता के साथ कपट को मिला कर वह अपने चित्त में आनन्द अनुभव करने में सफल हुआ। इस सुन्दर फुलवारी को मरुभूमि बनाने की उसे बड़ी ही ज़िद हुई। सृष्टि का यह प्रकाश (उज्वलता) और अनुपम शोभा उसके आँखों में कसकने लगी। जिस भाँति शरद ऋतु के अत्यन्त निर्मल और शुभ्र आकाश में एकाएक काले बादलों के टुकड़े आकर धीरे धीरे घेर लेते हैं और घोर अंधकार छा जाता है उसी भाँति शैतान की गहरी हिंसा-दावाग्नि में पड़ धीरे धीरे यह पवित्र कुसुमोद्यान जलने लगा। शैतान ने सर्प का रूप धर उस सरल और पवित्रहृदया आदि माता को भुलावा देकर पाप का स्पर्श कराया। उस आदि रमणी ने भी निज पति को उसी मार्ग का अनुगामी होने का मंत्र दिया।

कवि ने दिखाया है कि तभी से मानव जाति में पाप, अशांति जरा और मृत्यु का आविर्भाव हुआ है। इसी भांति शैतान की मनःकामना पूर्ण हुई।

इसके उपरांत कवि और भी दिखाता है। शैतान इतने पर भी शांत नहीं हुआ। मनुष्य पाप के अंधकार में फँस जाने पर भी पुण्य के पवित्र प्रकाश में आने के हेतु व्याकुलचित्त से भगवान् को बारंबार पुकारता है। ऐसे अवसर पर शैतान घोर अंधकार में लुक की भांति प्रकाश दिखा कर मनुष्य को और भी प्रलुब्ध करता है; उसे घोर अंधकार में अधः पतन की चरम सीमा पर ले जाकर खड़ा करता है और अंत में उसका सर्वनाश करके संतुष्ट होता है। अंत में कवि कहता है कि यह शैतान सदैव मनुष्य जाति के अंतःकरण में घात लगाए रहता है और मौका पाते ही मनुष्य को काट खाता है।

शैतानचरित्र की उद्भावना करने में प्रकृत बाईबल कवि ने बड़ी ही बहादुरी का काम किया है। महाकवि मिल्टन का आज संसार में जो इतना नाम प्रसिद्ध हो रहा है उसका मूल यही अमर कवि है। बाइबिल-वर्णित शैतान की छाया लेकर ही इनका सम्पूर्ण काव्यचित्र हुआ है।

इस प्रकार के शैतानधर्मी मनुष्य दास की भाँति विश्वम्भर की सृष्टि में विचरते हैं। ऐसे कल्याण के मिस अकल्याणकारी जंतु इस धराधाम में सभी स्थलों की शोभा बढ़ा रहे हैं। शैतान की तुलना कवियों ने सर्प के साथ की है। हमारी समझ में सर्प की भांति खल इस अनंत सजीव जगत् में दूसरा नहीं है। पर नहीं, यह सर्पहृदय शैतानधर्मी मनुष्य उस साँप से भी अधिक भीषण है। समझा? शैतान की कुटिलता साँप की बाँकी चाल को भी मात करती है। बुद्धिबल से सर्प तो वश में किया जा सकता है पर सर्पवत् भयंकर मनुष्य को वशीभूत करना बड़ा ही कठिन काम है। साँप का विषैला दाँत तोड़ दिया जा सकता है, साँप मंत्र बल से भी वश में लाया जा सकता है पर इस सर्पहृदय शैतानधर्मी मनुष्य को तुम किस औषधि, जादू टोने के जोर से वश में करोगे? इसे जाने दो। ऐसा भी सुना जाता है कि बिना अत्याचार या छेड़ छाड़ के भयंकर काले साँप भी बिना समय विशेष के किसी जीव प्राणी पर चोट नहीं करते। साँप की जो जीवहिंसा है वह केवल निज आत्मरक्षा के हेतु। निज प्राणभय के ही कारण कभी कभी वह दूसरों का प्राणहरण करता है। फिर हिंसा करने को ही तो साँप का जन्म हुआ है अतएव हिंसा करना ही उसका प्रधान धर्म है। इस प्रकार उसके सात खून माफ़ भी हो सकते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

। अस्तु वह सर्वथा क्षमा के योग्य है। किन्तु मानव शरीरधारी ज्ञानविवेक के अधिकारी विश्वभर भगवान् के राज्य के सर्वश्रेष्ठ प्राणी होकर तुम किस लिये, किस युक्ति या तर्क से साँप की अपेक्षा भी अधिक भीषण और भयानक बन रहे हो? कहो तो सही। साँप की तो एक पहचान भी है। साँप कहने ही से मनुष्य सात कदम पीछे हट जाता है पर हे शैतानधर्मी मनुष्य! सर्प की अपेक्षा भी तुम सैकड़ों गुना हिंसक और बाँके कुटिल हो। तुम्हें कोई किस प्रकार से पहचान सकता है? साँप के काटने की चिकित्सा है औषधि है, मंत्र है झाड़फूँक है पर हे शैतानधर्मी मानवसर्प! तुम्हारे काटने पर चिकित्सा कहाँ? औषधि कहाँ? मंत्र कहाँ? झाड़फूँक कहाँ? तुम्हारे डसने पर प्राणी को लहर भी नहीं आती। हम तुम्हें खूब जानते हैं। सर्प चाहे कैसा ही कुटिल क्यों न हो पर मानवबुद्धि के सामने उसे माथा नीचा ही करना पड़ेगा। हे शैतानधर्मी मनुष्य! किस भाँति किस बुद्धिकौशल से, मानवसमाज तुमसे बच सकता है? बताओ तो सही। साँप को तो सभी लोग जानते हैं कि यह साँप है पर तुम तो साँप-शैतान दोनों हो। भला तुमसे कोई कैसे पार पा सकता है? तुम जहाँ जिस स्थल पर अपना विष उगलते हो उसकी और उसके आस पास की भूमि की फिर किसी प्रकार रक्षा कहाँ? वहाँ की सभी वस्तुएँ जल भुन कर खाक हो जाती हैं।

कोई मनुष्य बिना तुम्हारी चोट खाए भला कहो तो तुम्हें कैसे पहचान सकता? तुम "अनेकरूपाय" बन कर कभी तो साँप की भाँति मनुष्य को धर दाबते हो, कभी ओझा बन कर झाड़ फूँक करते और मंत्रों की मूठ चलाते हो, सोशलरिफार्मर बन कर रोते झींखते हुए समाज की पुरानी खामियों का सुधार चाहते हो, कभी अपने आप को मिट्ठू बन कर नेता के रूप में लम्बी लम्बी स्पीचों से आकाश ढाते हो। अतएव तुम्हारी इस सूक्ष्म बुद्धि को एकाएक कौन पहचान सकता है? भला इतनी सामर्थ्य मनुष्य जाति में कहाँ? हम तुम से सत्य कहते हैं यदि तुम साँप होते तो भी अच्छा था, संसार का उससे कुछ हानिलाभ न था, पर तुम तो एक साथ ही साँप और शैतान दोनों हो। तुमने साँप के तो गुण दोषों को छाँट कर लिया है पर शैतान की तुमने सभी वृत्तियों को ग्रहण किया है। तब भला क्या कहना। साँप को मनुष्यजाति का शत्रु (काल) जानते हुए भी किसी किसी समय लोग उस पर विश्वास कर सकते हैं। पर हे पूरे चालीस सेर (मन भर) शैतानधर्मी मनुष्य हम लोग तुम्हारा नाम लेने से ही दहल जाते हैं, मारे भय के हमें जूड़ी आ जाती है।

तुम देवालय को ढा कर वारविलासिनियों का केलिमन्दिर निर्माण कर सकते हो, शान्तिमय स्वर्णसंसार को तुम श्मशान बना सकते हो। हे जगत् की ज्योति, प्रभा, शोभा, आभा, विभा, आलोक को न सह सकनेवाली परश्री कातर साँप-शैतानधर्मी मनुष्य! तुम्हीं ने बड़े ही आमोदपूर्ण नन्दनकानन को उजाड़ कर तहस नहस डाला तुम उसी भूमि (पर) बालू का पर्वत खड़ा कर आनन्द से नृत्य किया करते हो। हम लोग तुम्हें किस नाम से पुकारें? कहो तो सही।

केदारनाथ पाठक।

सभा की संशोधित नियमावली।

(पूर्व प्रकाशित से आगे)

अनाधिकरण—

६२—प्रबंधसमिति के जो नगरस्थ सभासद वर्ष भर में कम से कम चार अधिवेशनों में उपस्थित न होंगे अथवा जो बाहरी सभासद कम से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कम चार अधिवेशनों में कार्य पर अपनी सम्मति न भेजेंगे अथवा उसके बदले में कम से कम दो अधिवेशनों में उपस्थित न होंगे उनका स्थान खाली समझा जायगा। प्रबंधसमिति में उसके सभासदों की आई हुई सम्मतियाँ उनके वोट के स्थानों में गिनी जायँगी। कार्य्यविवरण में प्रत्येक सभासद की उपस्थिति तथा आगत सम्मतियों का स्पष्ट उल्लेख रहा करेगा।

अधिवेशन—

६३—प्रबंधसमिति का अधिवेशन प्रति मास अंतिम शनिवार के पहले ही हो जाया करेगा।

६४—सभापति, उपसभापति, मंत्री अथवा कोई तीन सभासद मंत्री द्वारा अथवा उसके न करने पर स्वयं अपने हस्ताक्षर से प्रबंधसमिति का विशेष अधिवेशन करा सकते हैं जिसमें केवल उसी विषय पर विचार होगा जिसके लिये वह अधिवेशन किया गया होगा।

६५—पाँच सभासदों के उपस्थित रहने पर प्रबंध समिति का कार्य होगा।

कर्त्तव्य—

६६—प्रबंधसमिति के कर्त्तव्य ये होंगे—

(१) सभा की स्थावर तथा जंगम संपत्ति की रक्षा।

(२) सभा के कार्यों का प्रबंध।

(३) सभा द्वारा प्रकाश्य पुस्तकों का निश्चय तथा उनकी रचना और संपादनादि का प्रबंध।

(४) सभा की पुस्तकों और लेखादि के छपने, बिकने तथा यदि आवश्यक हो तो दूसरी पुस्तकों के लेने का प्रबंध।

(५) प्रत्येक वर्ष सभा का वार्षिक विवरण प्रस्तुत करना।

(६) सभा के कार्य के लिये वेतन पर कार्य कर्त्ता नियुक्त करना वा पुरस्कार पर कोई काम कराना।

(७) सभा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये समय समय पर उचित प्रबंध करना।

अधिकार—

६७—प्रबंध-समिति के सभासदों के अतिरिक्त अन्य किसी को उसके विचाराधीन किसी विषय पर वोट देने का अधिकार न होगा परंतु समिति की आज्ञा से सम्मति देने का अधिकार होगा। पत्र द्वारा विचारार्थ सम्मति भेजने का सर्वथा अधिकार होगा।

६८—प्रबंध-समिति को अधिकार होगा कि वह किसी सभासद को अपने किसी अधिवेशन में विचाराधीन विषयों पर सम्मति देने के लिये निमंत्रित करे।

अन्य समिति वा उपसमिति का संस्थान—

६९—किसी विशेष कार्य के संपादन के लिये साधारण सभा कोई समिति, तथा प्रबंधसमिति कोई उपसमिति नियुक्त कर सकेगी जिनके सदस्य सभासदों में से ही चुने जायँगे और जिनकी संख्या ५ वा अधिक हुआ करेगी और जिनका कोरम साधारणतः तीन हुआ करेगा। समिति-रचना के साथ ही संयोजक की नियुक्ति, कर्त्तव्य का निश्चय और समय और अवधि का निर्धारण भी हुआ करेगा। ऐसी समिति वा उपसमिति का कर्त्तव्य होगा कि अपनी रचयित्री सभा वा समिति के सम्मुख नियत समय पर अपना निश्चय लिख कर समुपस्थित करे।

तीसरा अध्याय।

सभा के अधिवेशन और वार्षिक निर्वाचन

(१) अधिवेशन।

प्रकार—

७०—साधारण सभा के अधिवेशन तीन प्रकार के होंगे—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१) साधारण, विशेष और वार्षिक।

७-"साधारण अधिवेशन" प्रतिमास अंतिम शनिवार को हुआ करेगा जिसका कोरम सात सभासदों का होगा। परंतु यदि किसी कारण अंतिम शनिवार को न हो सका तो अगले शनिवार को अवश्य होगा। कार्यवाही इस प्रकार होगी।

साधारण अधिवेशन का कार्यक्रम—

(१) सभापति, वा उपसभापति, वा उनकी अनुपस्थिति में उपस्थित सभासदों में से कोई जो सभापति चुन लिया जाय, सभापति का आसन ग्रहण करेगा। तत्काल चुने हुए सभापति के कर्त्तव्य और अधिकार भी उस अधिवेशन के लिये स्थायी सभापति के ही होंगे।

(२) प्रबंधसमिति वा अन्य अंगों के भेजे हुए प्रस्तावों को छोड़कर जिन्हें मंत्री उपस्थित करेगा अन्य प्रस्ताव वा सुधार पर बिना अनुमोदन हुए विचार न किया जायगा। किसी प्रस्ताव पर यदि सुधार उपस्थित होगा तो सुधार पर पहले ही विचार किया जायगा।

(३) वे ही प्रस्ताव कार्यक्रम में रखे जायँगे जो प्रस्ताव के रूप में लिखे हुए मंत्री के पास अधिवेशन से कमसे कम दस दिन पहले पहुँच चुके रहेंगे। साधारण कार्यक्रम के अतिरिक्त प्रस्तावों की, और विशेष काम होने पर उस कामकी, पूरी सूचना अधिवेशन से ३ दिन पहले स्थानीय सभासदों को मंत्री देगा। परंतु अत्यावश्यक प्रस्ताव अधिक सम्मति से बिना पूर्व सूचना के तत्काल भी उपस्थित हो सकेंगे।

(४) प्रत्येक सभासद को प्रत्येक प्रस्ताव पर एक ही बार बोलने का अधिकार होगा परंतु प्रस्तावक अंत में उत्तर देनेका अधिकारी होगा और अनुमोदक समर्थक वा अन्य किसी सभासद को यदि सभापति चाहे तो फिर बोलने की आज्ञा दे सकता है।

(५) प्रयेक विषय पर सम्मति हाथ उठाकर, अथवा एक भी सभासद के अनुरोध पर गोली द्वारा अथवा कागज पर लिखकर ली जायगी और निश्चय अधिक सम्मति से होगा।

(६) जिस प्रस्ताव पर एक बार विचार हो चुका हो वह सात सभासदों के अनुरोध करने पर पुनः दो अधिवेशनों के अनंतर किसी अधिवेशन में विचारार्थ उपस्थित किया जा सकता है। पर इसकी सूचना पहले से देना आवश्यक होगा। किसी प्रस्ताव पर तीन बार विचार हो जाने के अनंतर वह फिर एक वर्ष के पीछे प्रबंध-समिति के अनुरोध से विचारार्थ उपस्थित किया जा सकता है।

(७) यदि ऐसे समय में जब कि न साधारण सभा और न प्रबंधसमिति हो सकती हो कोई कार्य अत्यंत आवश्यक आ जाय तो मंत्री को अधिकार होगा कि सभापति की अथवा दोनों उपसभापतियों की संमति से उस कार्य का निर्वाह करे और आगामी अधिवेशन में उसकी सकारण सूचना दे।

(८) साधारण सभा में कार्य इस प्रकार होंगे—

(क) कार्य-विवरण का सुनाया जाना।

(ख) प्रबंधसमिति के कार्यविवरण का सूचनार्थ तथा प्रस्तावों का विचारार्थ उपस्थित किया जाना।

(ग) सभासद होनेवालों के पत्र या सभासदों के त्यागपत्र आदि पर विचार होना।

(घ) पत्रों तथा प्राप्त पुस्तकों की सूची का उपस्थित किया जाना।

(ङ) पूर्व नियुक्त विषय पर वक्तृता और अगले मासके लिये विषयनिर्वाचन।

(९) यदि कोई सभासद प्रबंध समिति के किसी कार्य वा निश्चय से असंतुष्ट हो और अपना असंतोष-प्रकाशक पत्र कमसे कम पाँच सभासदों के हस्ताक्षर कराकर मंत्री के पास भेजे तो उस पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधारण सभा विचार करेगी और प्रबंध समिति को उचित आदेश देगी जिसका पालन प्रबंध समिति अवश्य करेगी। इस अधिवेशन का कार्य तभी होगा जब साधारण सभा में १५ वा उससे अधिक समासद उपस्थित होंगे। इस अधिवेशन की सूचना प्रबंध-समिति के सभासदों को विशेष रूपसे मंत्री कमसे कम ३ दिन पहले देगा और समिति के सदस्यों को चाहिए कि इस अधिवेशन में उपस्थित हों।

(१०) जिस प्रस्ताव का अनुमोदन न होगा वह उठा दिया जायगा, परंतु उसको कोई जब चाहे पुनः किसी और अधिवेशन में उपस्थित कर सकेगा।

(११) जब तक एक सभासद बोल रहा हो दूसरा कोई बोलने का अधिकारी न होगा। परंतु नियम विरुद्ध वा अश्लील वाक्यों वा व्यक्तिगत आक्षेपों के आने पर कोई सभासद रोक सकेगा और सभापति को उचित आज्ञा करने का अधिकार होगा।

(१२) प्रस्तावों पर सुधार तत्काल भी उपस्थित हो सकेंगे परंतु सुधार ऐसे शब्दों में न होंगे जिनसे अर्थ की दृष्टि से प्रस्ताव का खंडन होता हो।

(१३) इस बात का प्रस्ताव कि—

(क) अधिवेशन अमुक समय फिर होने के लिए स्थगित कर दिया जाय, वा

(ख) प्रस्तुत वादग्रस्त विषय पर अगले अधिवेशन में विचार किया जाय, वा

(ग) प्रस्तुत विषय वा प्रस्ताव उठा दिया जाय वा छोड़ दिया जाय वा।

(घ) प्रस्तुत विषय को छोड़ कर कार्य्य क्रम में निर्दिष्ट अगले विषय पर विचार किया जाय, वा

(ङ) अधिवेशन का विसर्जन कर दिया जाय।

अधिवेशन-काल में किसी भी समय उपस्थित किया जा सकेगा और इस प्रस्ताव के उपस्थित होते ही इस पर ही विचार करना अनिवार्य्य होगा। परंतु इस तरह का प्रस्ताव उस समय उपस्थित न किया जायगा जब कोई बोल रहा हो।

(१४) नियुक्त समय पर कोरम होने पर ही अधिवेशन का आरंभ होगा। कोरम के लिए नियत समय के उपरान्त १५ मिनिट तक प्रतीक्षा करना सभासदों का कर्त्तव्य होगा। उतना काल बीत जाने पर उस दिन अधिवेशन न हो सकेगा।

विशेष अधिवेशन—

७२—पांच सभासदों के लिखने पर वा सभा के आदेश से, वा स्वयं आवश्यकतानुसार, मंत्री सभा का विशेष अधिवेशन नियत करा सकता है जिस में नियत विशेष कार्य के अतिरिक्त और कोई कार्य न होगा। यदि मंत्री ऐसा न करे तो सभापति, उपसभापति या कोई सात सभासद अपने हस्ताक्षर से ऐसा अधिवेशन कर सकते हैं। विशेष अधिवेशन की अन्य साधारण कार्यवाही साधारण अधिवेशन के नियमों के अनुसार होगी। इस अधिवेशन की सूचना बाहरी सभासदों को देना आवश्यक न होगा।

वार्षिक अधिवेशन का कार्य्यक्रम—

७३—वार्षिक अधिवेशन वृष संक्रांति के बाद आनेवाले सोमवार को हुआ करेगा। वार्षिक अधिवेन का कार्यक्रम इस प्रकार होगा—

(१) वार्षिक विवरण और वार्षिक आयव्यय का स्वीकृत होना, नियमों के संबंध में प्रबंध समिति द्वारा संकलित संशोधनों पर विचार, कार्याधिकारियों और प्रबंधसमिति तथा बोर्ड के सभासदों का चुनाव, तथा इसके अतिरिक्त जो कोई और आवश्यक कार्य आ जाय उस पर विचार।

(२) निर्वाचन का परिणाम देखने के लिये सभापति द्वारा तीन ऐसे सभासद उसी स्थान पर चुन लिए जायँगे जिनके नाम निर्वाचन सूची में न आए होंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) १५ सभासदों के उपस्थित रहने पर वार्षिक अधिवेशन का कार्य किया जायगा। परंतु यदि कार्यों की अधिकता वा कोरम न होने से सभा का अधिवेशन दूसरे दिन पर टल जायगा तो दूसरे दिन केवल दस सभासदों के उपस्थित रहने पर कार्य किया जायगा।

अधिकार का विस्तार—

७४—वृष संक्रांति के बादवाले सोमवार को वा अगले दिन किसी विशेष कारण से यदि वार्षिक अधिवेशन न हो सका तो जब तक वह अधिवेशन न हो और नये कार्याधिकारी न चुने जायँ यथास्थित प्रबंधसमिति को नियमानुसार कार्य करने का पूर्ण अधिकार होगा और वही इस अवस्था में वार्षिक अधिवेशन के लिये दूसरी तिथि नियत करेगी।

(२) वार्षिक निर्वाचन

सूची निर्माण—

७५—जो सभासद कार्याधिकारी होने वा प्रबंधसमिति वा बोर्ड के सदस्य होने के योग्य हों उनकी एक निर्वाचनसूची वर्षांत के पहले प्रबंध-समिति इस प्रकार बना कर प्रकाशित किया करेगी और वार्षिक अधिवेशन में उपस्थित किया करेगी—

(१) सूची बनाने के दिन से कमसे कम एक मास पहले प्रत्येक सभासद को सूचना देगी कि निर्वाचन-संबंधी अपने प्रस्ताव उस समिति के पास नियत दिन तक भेज दें।

(२) इस प्रकार प्राप्त प्रस्तावों से विचार पूर्वक नाम चुन कर तथा जिन नामों के लिये सात वा अधिक प्रस्ताव हों उन्हें अवश्य सम्मिलित करके सूची बनावे। इस सूची में जिन सभासदों के नाम आए हों उनसे अनुमति माँगे, नियत तिथि तक जिन सभासदों ने अस्वीकार पत्र भेज दिया हो उनका नाम उस सूची से निकाल दे और संशुद्ध सूची को वार्षिक अधिवेशन के कम से कम १५ दिन पहले प्रकाशित कर दे।

(३) इस सूची की रचना में प्रबंधसमिति का कर्तव्य होगा कि इतने नाम रखे कि चुने जाने वाले नाम रिक्तस्थानों से तिगुनी संख्या में हों और प्रत्येक स्थान के लिये कम से कम तीन नए नाम चुनाव के लिये मिल सकें।

(४) आए हुए अस्वीकारपत्र तथा निर्वाचन प्रस्ताव इस सूची के साथ ही वार्षिक अधिवेशन में उपस्थित किए जायँगे और यदि कोई सभासद चाहेंगे तो ऐसे पत्र वा प्रस्ताव कोई वा सभी सुना और दिखा दिए जायँगे।

७६—प्रबंधसमिति द्वारा प्रस्तुत सूची में जो नाम होंगे उनके अतिरिक्त और किसी का चुनाव वार्षिक अधिवेशन में न किया जायगा। परंतु बीस उपस्थित सभासदों की सहमति से किसी के नाम के बढ़ाने का प्रस्ताव उससे अनुमति प्राप्त करके उपस्थित किया जायगा तो वह नाम भी तत्काल ही सम्मिलित किया जायगा।

सूचना—

७७—यह सूची तथा और जो कुछ कार्य वार्षिक अधिवेशन में होने को हो उनकी सूचना प्रत्येक सभासद के पास वार्षिक अधिवेशन के कम से कम दो सप्ताह पहले भेज दी जायगी और चुनाव के समय सभासदों की संमति लिख कर ली जायगी।

चौथा अध्याय।

सभा के विशेष कार्य्य।

(१) पुस्तकालय।

७८—सभा के अधिकार में एक पुस्तकालय होगा जिसका नाम आर्यभाषा पुस्तकालय होगा। इसके निरीक्षण के लिये प्रबंधसमिति प्रति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष अपने में से एक सभासद नियत कर दिया करेगी जो पुस्तकालय का निरीक्षक कहलावेगा और जिसके कर्त्तव्यों का निश्चय समिति करेगी।

सार्वजनिक अधिकार—

७९—पुस्तकालय की पुस्तकों और समाचार पत्रों को सर्वसाधारण पुस्तकालय में आकर पढ़ने के अधिकारी होंगे।

८०—पुस्तकालय से पुस्तकों और पत्रों के बाहर जाने, उनके मँगवाने, सुरक्षित रखने, पुस्तकालय के सहायक बनाने आदि से संबंध रखनेवाले उपनियम बनाना प्रबंध समिति का कर्त्तव्य होगा।

(२) प्रकाशन विभाग।

८१—सभा की ओर से प्रबंधसमिति के अधिकार में सम्पादन तथा प्रकाशन विभाग भी होगा जिसके द्वारा हिंदी की पुस्तकें संपादित होंगी और बेंची जायँगी। प्रबंधसमिति को अधिकार होगा कि इस कार्य के लिये संपादक और प्रकाशक तथा एजेन्ट नियुक्त करे, कार्य निरीक्षण के लिये किसी एक सदस्य को वा उपसमिति को निरीक्षक बनावे और इस विषय के उपनियम बनाकर कर्त्तव्यों का निर्देश करे।

प्रकाशन प्रबंध—

(३) सम्बद्ध सभाएँ

८२—इस सभा के समान उद्देश्य रखनेवाली सभाओं का संबंध इस सभा से हो सकेगा।

८३—जो सभाएँ इस सभा से संबंध स्थापित करना चाहें उन्हें इस विषय का आवेदन पत्र अपनी नियमावली तथा पदाधिकारियों के नाम सहित इस सभा के पास भेजना चाहिए। यह पत्र प्रबंधसमिति में उपस्थित किया जायगा। और उसके स्वीकार करने पर तथा साधारण सभा की अनुमति से संबंध स्थापित किया जायगा।

अधिकार—

८४—संबद्ध सभाओं को सभा की पत्रिका बिना मूल्य दी जायगी और जो सभाएँ पत्रिका की नियत संख्या एक साथ लेंगी उन्हें प्रबंध समिति के निश्चय के अनुसार पत्रिका कम मूल्य पर मिला करेगी। सम्बद्ध सभाओं के महत्त्व के कार्यविवरण प्राप्त होने पर उनका सार पत्रिका में प्रकाशित हुआ करेगा। तथा संबद्ध सभाओं को सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें आदि उसी मूल्य पर मिलेंगी जिस पर सभा के समासदों को प्राप्य होंगी।

अनधिकरण—

८५—संबद्ध सभाओं को कोई ऐसा कार्य न करना चाहिए जो इस सभा के उद्देश्यों के विरुद्ध हो वा जिससे इस सभा को हानि पहुँचे। यदि वे ऐसा करेंगी तो यह सभा उनसे अपना सम्बंध छोड़ देगी।

८६—संबद्ध सभाओं को उचित है कि यदि वे कोई ऐसा कार्य करें जिससे उनके नगर के अतिरिक्त और स्थानों से भी सम्बंध हो तो इस सभा को उसकी सूचना दे दें।

(४) परीक्षा और व्याख्यान

८७—सभा की ओर से समय समय पर (१) नागरी अक्षरों को सुंदर अथवा शीघ्र लिखने की परीक्षाएँ हुआ करेंगी जिन में प्रमाणपत्र, पुरस्कार वा पदक दिए जायँगे (२) हिंदी साहित्य तथा विज्ञान संबंधी लेख लिखाए जायँगे जिन पर उचित समझने पर पुरस्कार पारितोषिक पदक, प्रमाण पत्रादि देने का सभा को अधिकार होगा, और (३) हिंदी में सुबोध व्याख्यान दिलाए जायँगे तथा शिक्षा का माध्यम हिंदी बनाने के लिये इसी तरह के अन्य उपाय किए जायँगे। इस संबंध में प्रबंध समिति आवश्यक उपनियम बनाएगी तथा प्रबंध करेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें ।

प्रखरावट	मूल्य ≡)
अनन्यग्रंथावली	मूल्य ≡)
इन्द्रावती	मूल्य ॥।)
कविवर बिहारीलाल-	मूल्य =)
कालबोध	मूल्य ≡)
चित्रावली--	मूल्य २)
ऋतुवाले रोग और उनसे बचने का उपाय-	१)
परिचर्याप्रणाली-रोगी की शुश्रूषा विधि ।	मूल्य ।)
प्राचीनलेखमणिमाला	१)
पृथ्वीराजरासो-२२ खंड मूल्य	२०) रु०
प्रबोधचन्द्रिका	मूल्य ।=)
विरहलीला-कवि आनंदघन कृत ।	मूल्य =)
भारतेन्दुचरित्र-	मूल्य ॥)
भूषण ग्रंथावली-	मूल्य ॥।)
हिन्दी भाषा के सामयिक पत्रों का इतिहास	।)
रंगनामा	मूल्य ।॥)
समालोचनादर्श	मूल्य ≡)
समालोचना	मूल्य =)
महाराणाप्रताप-बाबू राधाकृष्ण दास जी कृत	॥)
मीराबाईकृष्णदास (जीवनी)	॥)
युवती योग्यता	=)
यूरोपीयदर्शन-	॥)
राजविलास-	१)
राज्यप्रबंधशिक्षा	॥)
सौरीसुधार	॥)
संक्षेप लेखप्रणाली-	॥)
हम्मीर रासो	२)
हरिश्चन्द्र-राजा हरिश्चन्द्र का चरित्र ।	=)
सिंधदेश का इतिहास	।)
दादू दयाल की बानी	॥।)
दादूदयाल के शब्द	॥)
हिन्दी लेक्चर	-)
यूनान का इतिहास	॥।)
स्त्रियों के रोग	१)
भगवद्गीता (हिन्दी अनुवाद)	।-)
आर्ष प्राकृत व्याकरण	।)
छत्रप्रकाश-लाल कवि कृत	॥।)
सुघड़दर्जिन-सिलाई और कटाई का सचित्र वर्णन	॥)
सत्यहरिश्चन्द्र-(भारतेन्दु रचित)	मूल्य =)॥
भारतदुर्दशा	-)।
बोपदेव का जीवनचरित्र	=)
शेख मोहम्मद बाबा का जीवनचरित्र	-)
लेखक और नागरी लेखक	=)
आयुर्वेद निदान समीक्षा	=)
भाषा-समस्त भाषा प्रकाशित संक्षिप्त विवरण	≡)॥
होरेशियस और म[illegible] सात अवस्थाएँ	=)
भर्तृहरि निर्वेद नाटक	।)
ललित शिक्षावली-छोटी छोटी कहानियाँ	।)

मिलने का पता—मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०० पुस्तकों की

मनोरंजन पुस्तकमाला

की नई पुस्तक

'जरमनी का विकाश'।

इस पुस्तकमाला में सब प्रकार के विषय रहेंगे—काव्य, नाटक, उपन्यास, दर्शन, विज्ञान, इतिहास, जीवनचरित, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, वनस्पतिशास्त्र, शासनशास्त्र इत्यादि इत्यादि। प्राचीन कवियोंके ग्रंथरत्नों से चुने हुए उत्तम संग्रह भी निकलते हैं। पुस्तकें इस चित्ताकर्षक रूप में लिखी जाती हैं कि पाठक अपने मनोरंजन के साथ ही साथ विना प्रयास अनेक बातों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। अब तक ये पुस्तकें निकल चुकी हैं।

आदर्श-जीवन—लेखक रामचंद्र शुक्ल।
२ आत्मोद्धार—लेखक रामचंद्र वर्म्मा।
३ गुरु गोविंदसिंह—लेखक वेणीप्रसाद।
४ आदर्श हिंदू १ भाग—लेखक मेहता लज्जाराम शर्म्मा।
५ " २ " "
६ " ३ " "
७ राणा जंगबहादुर—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा।
८ भीष्म पितामह—लेखक चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्म्मा।
९ जीवन के आनंद—लेखक गणपत जानकीराम दूबे बी. ए.।
० भौतिक-विज्ञान—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी।
लालचीन—लेखक व्रजनंदन सहाय।
कबीरवचनावली—संग्रहकर्त्ता अयोध्यासिंह उपाध्याय।
३ महादेव गोविंद रानडे—लेखक रामनारायण मिश्र बी. ए.।
४ बुद्धदेव—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा।
५ मितव्यय—लेखक रामचंद्र वर्म्मा।
६ सिक्खों का उत्थान और पतन—लेखक नंदकुमार देव शर्म्मा।
वीरमणि—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम. ए. और शुकदेवबिहारी मिश्र बी. ए.।
७ नेपोलियन बोनापार्ट—लेखक राधामोहन गोकुलजी।
८ शासनपद्धति—लेखक प्राणनाथ विद्यालंकार।
१९ हिंदुस्तान, पहला खंड—लेखक दयाचंद्र गोयलीय बी. ए.।
२० " " दूसरा खंड— " " "
२२ महर्षि सु[illegible] वेणीप्रसाद।
२३ ज्योतिवि[illegible] संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी.।
२४ आत्म[illegible] पास [illegible]र्क श्यामबिहारी मिश्र एम. ए. और शुकदेव बिहारी मिश्र बी. ए.।
२५ सुं[illegible] उपस्थित कर्ता पुरोहित हरिनारायण बी. ए.।
२६ [illegible]ने श—लेखक सूर्यकुमार वर्मा।

प्रत्येक पुस्त[illegible] का मूल्य [illegible] है, समस्त ग्रंथमाला के स्थायी ग्राहकों से ।।।) लिया जाता है। डाकव्यय अलग है।

मिलने का पता—

मंत्री—नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[संख्या १०

नागरीप्रचारिणी पत्रिका।

अप्रैल १९१९

सम्पादक—रामचन्द्र शुक्ल।

भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल। बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल॥
बिलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल। निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सबको मूल॥
विध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार। सब देशन सों लै करहु, भाषा माँहि प्रचार॥
लित करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न। राजकाज दरबार में, फैलावहु यह रत्न॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र।

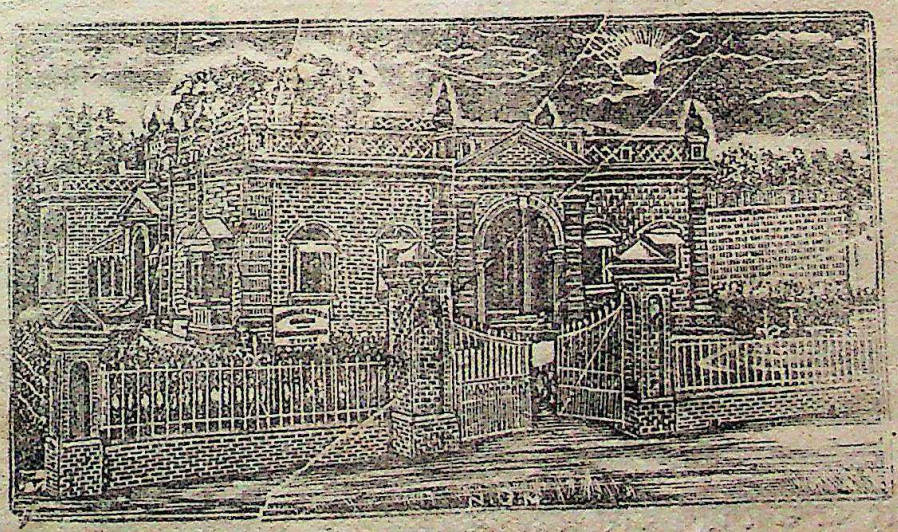

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित।

गणपति कृष्ण गुर्जर द्वारा श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस, काशी में मुद्रित।

वार्षिक मूल्य १॥)

प्रति संख्या ≈)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची ।

१—अपनी भाषा पर विचार ... २१७
२—प्राचीन भारतवर्ष का यूरप से वाणिज्य २२४
३—सभा में रवीन्द्र बाबू ... २२९
४—प्रगति वा उन्नति-उसका नियम और निदान २३१
५—सभा का कार्य-विवरण २३७

मुफ्त ! मुफ्त !! मुफ्त !!!

धन्वन्तरी ।

यह आयुर्वेदीय मासिक पत्र योग्य वैद्य, डाक्टर और हकीमों को बिना मूल्य भेजा जाता है, सर्वसाधारण को नहीं । मैनेजर, धन्वन्तरी, विजयगढ़, अलीगढ़ ।

पदक और पुरस्कार ।

सभा द्वारा उत्तमोत्तम विषयों पर लेख लिखने के लिये प्रति वर्ष स्वर्ण और रजत पदक दिए जाते हैं । सन् १९१९ में इनके लिये निम्नलिखित विषय नियत हैं—

छन्नूलाल स्वर्ण पदक—नगरों का निर्माण ।

राधाकृष्णदास रजत पदक—प्राचीन भारतवर्ष की शासन-प्रणाली ।

रेडिचे रजत पदक—मनुष्य का भोजन ।

इन विषयों पर लेख सभा में ३१ दिसम्बर १९१९ तक आ जाने चाहिएँ ।

मेहता जोधसिंह पुरस्कार ।

जनवरी १९१७ से ३१ दिसम्बर १९१९ तक प्रकाशित होने वाली हिन्दी की पुस्तकों में जो सर्वोत्तम समझी जायगी उसके रचयिता को १००) रु० का यह पुरस्कार दिया जायगा । इसके लिये जो पुस्तकें सभा में आवेंगी उन्हीं पर विचार किया जायगा ।

गोविन्दराव जोगलेकर बी० ए०, एल-एल० बी०
मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी ।

हिंदी शब्द-सागर

अर्थात्

हिंदी भाषा का एक वृहत्कोश ।

इस प्रकार का सर्वांगपूर्ण कोश अभी तक किसी देशी भाषा का नहीं निकला है । इसमें सब प्रकार के शब्दों का संग्रह है । दर्शन, ज्योतिष, आयुर्वेद, कलाकौशल इत्यादि के पारिभाषिक शब्द पूर्ण और स्पष्ट व्याख्या के सहित मिलेंगे । और कोशों के समान इसमें अर्थ के स्थान पर केवल पर्य्यायमाला नहीं दी गई है प्रत्येक शब्द का क्या भाव है यह अच्छी तरह समझा कर तब पर्य्याय रखे गए हैं । जिन प्राचीन शब्दों के कारण पुराने कवियों के ग्रंथरत्न समझ में नहीं आते उनके अर्थ इसमें मिलेंगे । अब तक १६ संख्याएं निकल चुकी हैं, मूल्य प्रति संख्या का १)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

भाग २३ } अप्रैल १९१९ । { संख्या १०

अपनी भाषा पर विचार ।

भाषा का प्रयोग मन में आई हुई भावनाओं को प्रदर्शित करने के लिये होता है। इससे यह समझना कि संसार की किसी भाषा द्वारा मनुष्य के हृदय के भीतर की सब भावनाएँ ज्यों की त्यों बाहरी सृष्टि में लाई जा सकतीं ठीक नहीं है। किन्तु किसी भाषा की श्रेष्ठता निश्चित करने के लिये यह विचार करना आवश्यक होता है कि वह अपने इस कार्य्य में कहां तक समर्थ है अर्थात् हृदयस्थित भावनाओं का कितना अंश वह प्रतिबिम्बित करके झलका सकती है। अभी तक मानव-कल्पना में ऐसे ऐसे रहस्य छिपे पड़े हैं जिनको प्रकाशित करने के लिये कोई भाषा ही नहीं बनी है। स्मरण रखिए कि यह बात मैंने भावनाओं (Impressions) के विषय में कही है, विचारों (General notions) के विषय में नहीं।

भाषा की व्यञ्जक-शक्ति दो वस्तुओं पर अवलम्बित है—'शब्द-विस्तार' और 'शब्द योजना'।

शब्द-विस्तार।

जिस भाषा में शब्दों की कमी है उसका प्रभाव मनुष्य के कार्य्य-कलाप पर बहुत थोड़ा पड़ता है। उस भाषा का बोलनेवाला बहुत सी बातों को जानता हुआ भी अनजान बना रहता है। यद्यपि शब्दों की बहुतायत से भाषा की पुष्टि होती है तथापि कई बातें ऐसी हैं जो उसकी सीमा स्थिर करती हैं। जिस जलवायु ने हमारे स्वभाव और रूपरंग को रचा उसी ने हमारे शब्दों को भी सृजा है। ये शब्द हमारे जीवन के अंश समान हैं; इनमें से हर एक हमारी किसी न किसी मानसिक अवस्था का चित्र है। इनकी ध्वनि में भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे लिये एक विशेष आकर्षण है। अपनी भाषा के किसी शब्द से जिस मात्रा का भाव उद्भूत होता है उस मात्रा का समान अर्थवाची किसी विदेशीय शब्द से नहीं होता। क्योंकि पहिले तो विजातीय शब्दों की ध्वनि ही हमारी स्वाभाविक रुचि से मेल नहीं खाती; दूसरे वे विस्तार में हमारे मानसिक संस्कार के नाप के नहीं होते। आजकल हिन्दी की अवस्था कुछ विलक्षण हो रही है। उचित पथ के सिवाय उसके लिये तीन और मार्ग खोले गए हैं—एक जिसमें बिना किसी विचार के संस्कृत के शब्द और समास बिछाए जाते हैं, दूसरा जिसको उर्दू कहना चाहिए; इनके अतिरिक्त एक 'तृतीय पथ' भी खुल रहा है जिसमें अप्रचलित अरबी, फ़ारसी और संस्कृत शब्द एक पंक्ति में बैठाए जाते हैं। मैं यह नहीं चाहता कि अरबी और फ़ारसी आदि विदेशीय भाषाओं के शब्द जो हमारी बोली में आ गए हैं, जिन्हें बिना बोले हम नहीं रह सकते, वे निकाल दिए जायँ। किन्तु क्लिष्ट और अप्रचलित विदेशीय शब्दों को व्यर्थ लाकर भाषा के सिर ऋण मढ़ना ठीक नहीं। सहायता के लिये किसी अन्य विदेशीय भाषा के शब्दों को लाना हानिकारक नहीं; किन्तु उनकी संख्या इतनी न हो कि स्थानीय भाषा के अधीन रह कर काम करने के स्थान पर, वे उसी को अधिकारच्युत करने का यत्न करने लगें। अब यहाँ पर प्रश्न हो सकता है कि अरबी वा फ़ारसी के कौन शब्द हिंदी में लिए जायँ और कौन न लिए जायँ। मेरी समझ में तो हिन्दी में वे ही अरबी फ़ारसी शब्द लिए जा सकते हैं जिनको वे लोग भी बोलते हैं जिन्हों ने उर्दू कभी नहीं पढ़ी है—जैसे ज़रूर, मुक़दमा, मज़दूर। जो शब्द लोग मौलवी साहब से सीख कर बोलते हैं उनका दूर होना ही हिन्दी के लिये अच्छा है।

राजा शिवप्रसाद मुसल्मानी हिंदी का स्वप्न ही देखते रहे कि भारतेंदु ने स्वच्छ आर्य्य हिंदी की शुभ्र छटा दिखा कर लोगों को चमत्कृत कर दिया। लोग चकपका उठे, यह बात उन्हें प्रत्यक्ष देख पड़ी कि यदि हमारे प्राचीन धर्म्म, गौरव और विचारों की रक्षा होगी तो इसी भाषा के द्वारा होगी। स्वार्थी लोग समय समय पर चक्र चलाते ही रहे किंतु भारतेंदु की स्वच्छ चंद्रिका में जो एक बेर अपने गौरव की झलक लोगों ने देख पाई वह उनके चित्त से न हटी। कहने की आवश्यकता नहीं कि भाषा ही जाति के धार्मिक और जातीय विचारों की रक्षिणी है; वही उसके पूर्व गौरव का स्मरण कराती हुई, हीन से हीन दशा में भी, उसमें आत्माभिमान का स्रोत बहाती है। किसी जाति को अशक्त करने का सब से सहज उपाय उसकी भाषा को नष्ट करना है! हमारी नस नस से स्वदेश और स्वजाति का अभिमान कैसे निकल गया, हमारे हृदय में आर्य्य भावनाओं का कैसे लोप हो गया, क्या यह भी बतलाना पड़ेगा? इधर सैकड़ों वर्षों से हम अपने पूर्वसञ्चित संस्कारों को जलाञ्जलि दे रहे थे। भारतवर्ष की भुवनमोहिनी छटा से मुँह मोड़ कर शीराज़ और इस्फ़हान की ओर लौ लगा रहे थे; गंगा जमुना के शीतल शान्तिदायक तट को छोड़ कर फ़रात और दजला के रेतीले मैदानों के लिये लालायित हो रहे थे; हाथ में अलिफ़लैला की किताब पड़ी रहती थी; एक झपकी ले लेते थे तो अलीबाबा के अस्तबल में जा पहुँचते थे। हातिम की सख़ावत के सामने कर्ण का दान और युधिष्ठिर का सत्यवाद भूल गया था; शीरीं फ़रहाद के इश्क ने नलदमयंती के सात्विक और स्वाभाविक प्रेम की चर्चा बंद कर दी थी। मालती, मल्लिका, केतकी आदि फूलों का नाम लेते या तो हमारी जीभ लटपटाती थी या हमको शर्म मालूम होती थी। वसंत ऋतु का आगमन भारत में होता था, आमों की मञ्जरी से चारों दिशाएँ आच्छादित होती थीं पर हमको कुछ ख़बर नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हती थी, हम उन दिनों गुलेलाला और गुलेनर्गिस फ़िराक़ में रहते थे; मधुकर गूँजते और कोयलें कती थीं, पर हम तनिक भी न चौंकते थे, अड्डे र कान लगाए हम बुलबुल का नाला सुनते थे।

यहाँ पर एक बात हम स्पष्ट रूप से कह देना चाहते हैं। हिंदुस्तान हमारा देश है, हिन्दी हमारी भाषा है। इस भाषा में अवश्यमेव हिंदुओं के आचार विचार का आभास रहेगा, इसमें अवश्य उनके प्राचीन गौरव की गंध रहेगी, कुढ़नेवाले भले ही कुढ़ें। सहायता के लिये भरसक यह संस्कृत ही का मुँह देखेगी। थोड़े से लोगों के लिये हम तदापि अपनी भाषा को लाञ्छित न करेंगे। यदि कुछ लोग इसे नहीं समझना चाहते तो न समझें हमारी कोई हानि नहीं। हम जरा भी शीन काफ़ के बाहर न हों और भोंदू बने विदेशी भाषा की ओर खसकते जायँ, ऐसी क्या पड़ी है। यदि कहिए कि इस प्रांत के कुछ शिक्षित लोगों की एक भाषा बन गई है, उसी को चटपट ग्रहण कर लेने से समय की बचत होगी तो भी ठीक नहीं, क्यों कि वह भाषा एक अस्वाभाविक शिक्षा से बनी है और उसी शिक्षा ही के साथ हवा हो सकती है। यदि आज से हमारे बच्चों के हाथ में खालिकबारी के स्थान पर अमरकोश दे दिया जाय और अंगरेजी के साथ उन्हें संस्कृत या हिंदी ही का अभ्यास कराया जाय तो यही उच्च हिंदी २० वर्ष के भीतर ही गली गली सुनाई देने लगे। क्या देश में मुसलमान नहीं हैं? क्या संस्कृत मिश्रित बंगभाषा के लिये वहाँ राह नहीं निकल गई? क्या छोटे छोटे बंगालियों के बालक उन संस्कृत शब्दों को मधुरता से उच्चारण करते नहीं पाए जाते जिनको सुनकर हमारे मुंशी लोग इतना चौंकते हैं? जब कि देश में राष्ट्रीयता की इतनी चर्चा फैल रही है, जब नागरी को राष्ट्र-लिपि और हिंदी को राष्ट्र भाषा बनाने का उद्योग बंगाल और महाराष्ट्र प्रदेश में भी हो रहा है उस समय हिंदी का इन प्रदेशों की भाषाओं से दूर हटना ठीक नहीं; बल्कि उसको अपने उस अंश की कुछ वृद्धि करनी चाहिए जो उन सब भाषाओं में सामान्य है। यह सामान्य अंश संस्कृत शब्दों का समूह है।

जब एक बार राजा शिवप्रसाद की मुअल्ला हिंदी को दबा कर भारतेंदु की हिंदी अग्रसर हुई और आज तक बराबर निर्विवाद रूप से स्वीकृत होती आई तब इस फ़ारसीदार हिंदी की चर्चा फिर कैसे आरम्भ हो गई इसका विचार करना है। इसका दूसरा उत्थान फिर काशी के तिलस्मी उपन्यासों में देख पड़ा जिनकी रचना उर्दू दाँ 'क ख' पहचानने वालों को भी फँसाने में समर्थ हुई। एक को लाभ उठाते देख दूसरे ने भी उसी मार्ग पर पैर रक्खा—वही ऐय्यारी, वही तिलस्म, वही भाषा वही सब कुछ। कई लोग साहस पूर्वक आगे बढ़े और उर्दू नावेलों को सामने रख और उन्हें नागरी अक्षरों में उतार कर नाम और दाम कमाने लगे। किंतु तब तक यह हवा और श्रेणी के लेखकों को नहीं लगी थी। सहसा उच्च श्रेणी के लेखकों का ध्यान सरलता की ओर जा पड़ा; इस सरलता का आदर्श पहले पहल एक प्रतिष्ठित मासिक पत्रिका में प्रकाशित हुआ। उसमें मज़ाज़, तक़रीर, दक़ीक़ा, महदूद, ऐब-जोई, हक़ीर और कोताह-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुद्धि आदि शब्दों द्वारा भाषा एकबारगी सरल कर दी गई। उसी में ये वाक्य देख पड़े—"जिस समय ईश्वर, जिसकी हस्ती की बाबत आप को शंका है, आप की ज्ञान-लवदुर्विदग्धता को खो देगा....." कहिए, यह भाषा को सरल करना है वा उसको और भी कठिन बनाना है? ऐसी भाषा लिखने के पहले 'करीमुल्लुगात' का एक नागरी संस्करण छापना चाहिए। जो लोग केवल हिंदी वा संस्कृत ही जानते हैं वे इस 'हस्ती' को 'हाथी' समझें या और कुछ?

और उदाहरण लीजिए।

"यदि यह बात वा राय सर्वथा सच नहीं है, केवल उसका कुछ ही अंश सच है तो भी यदि वह प्रकट न की जायगी—ज़ाहिर न की जायगी..." "तथापि वे कृतकार्य्य नहीं हुए—उनको कामयाबी नहीं हुई" "यह बात विधि-विरुद्ध है—ज़ाब्ते के ख़िलाफ़ है।" जो मनुष्य 'सर्वथा' और 'अंश' को समझ सकता था क्या वह 'प्रकट' को न समझता जो फिर से 'ज़ाहिर' लिखने की ज़रूरत हुई? इस प्रकार की भाषा लिखना मानो उर्दूवालों को यह कहने का अवसर देना है कि उर्दू इतनी आम फ़हम है कि बिना उसकी सहायता के हिंदी किसी को एक बात भी नहीं समझा सकती। मेरी समझ में तो फौक़ियत, ज़ुहला, मज़ामीन, मुहक़िक़ीन, तमस्खुर आदि शब्द साधारण हिंदी जाननेवाले लोग नहीं समझ सकते।

गवर्नमेंट तथा शिक्षा-विभाग की अभिरुचि का कुछ अंश भी इस प्रवृत्ति का परिचालक है। सरकार कोई निज की स्वतंत्र सम्मति तो रखती नहीं; जो हाकिमों और अधिकारियों ने सुझाया वही उसका अटल सिद्धांत हो गया, उसी पर वह जम गई। यदि और कोई प्रांत होता तो सरकार को अपनी इस कुरुचि का फल चखाने में कुछ देर भी लगती पर यह राजा शिवप्रसाद की जन्मभूमि कब उसको मीठा कह कर बाँटने वाले लोगों से ख़ाली रह सकती है?

ऐसे अप्रचलित फारसी शब्दों के बिना हमारा कोई काम भी नहीं अटकता; क्योंकि उनके स्थान पर रखने के लिये हमें न जाने कितने संस्कृत क्या हिंदी ही शब्द मिल सकते हैं। हाँ, जिन विचारों के लिए हिंदी वा संस्कृत शब्द न मिलें उनको प्रकट करने के लिये हम विजातीय शब्द ला कर अपनी भाषा की वृद्धि मान सकते हैं। एक ही वस्तु के लिये अनेक शब्दों के होने से भाषा की क्रिया में कुछ उन्नति नहीं होती। जैसे सूर्य्य के लिये रवि, मार्त्तण्ड, प्रभाकर, दिवाकर और चंद्रमा के लिये शशि, इंदु, विधु, मयङ्क आदि बहुत से शब्दों के होने से भाषा की व्यञ्जना शक्ति में कुछ भी वृद्धि नहीं होती, केवल नाद की भिन्नता वा नवीनता से हमारा मनोरंजन होता है और भाषा में एक प्रकार का चमत्कार आ जाता है जो कविता के लिये आवश्यक है। इन अनेक नामों में से साधारण गद्य में उसी शब्द को स्थान देना चाहिए जो सब से अधिक प्रचलित हो—जैसे सूर्य्य, चंद्रमा। 'रवि उदय होता है', 'भास्कर अस्त होता है' 'विधु का प्रकाश फैलता है' ऐसे ऐसे वाक्य कानों को खटकते हैं और कृत्रिम जान पड़ते हैं। हाँ, जहाँ 'प्रचंड मार्त्तंड की उद्दंडता' दिखाना हो वहाँ की बात दूसरी है। पर मैं तो वहाँ भी ऐसे शब्दों की उतनी अधिक आवश्यकता नहीं समझता। शब्दालङ्कार केवल कविता के लिये प्रयोजनीय कहा जा सकता है, गद्य में उसकी कोई विशेष आवश्यकता नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ाद्य में तो उसके और और गुणों के अन्वेषण ही से ुट्टी नहीं मिलती। गद्य की श्रेष्ठता तो भावों की ुरुता और उनकी प्रदर्शन प्रणाली की स्पष्टता वा स्वच्छता ही पर अवलम्बित है; और यह स्पष्टता ौर स्वच्छता अधिकतर व्याकरण की पाबंदी और र्कना की उपयुक्तता से संबंध रखती है। सारांश ह कि आधुनिक शैली के अनुसार गद्य में शब्द ौर अर्थ ही का विचार होता है, ध्वनि*का नहीं।

शब्द-योजना।

यहाँ तक तो शब्द-विस्तार की बात हुई। ागे भाषा के इससे भी गुरुतर और प्रयोजनीय ंश अर्थात् शब्द-योजना पर ध्यान देना है। भाषा त्पन्न करने के लिये असंख्य शब्दों का होना ही स नहीं है क्योंकि पृथक् पृथक् वे कुछ भी नहीं र सकते। वे कल्पना में इन्द्रियकम्प द्वारा खचित क एक स्वरूप के लिये भिन्न भिन्न संकेत मात्र हैं। ोई ऐसा पूरा विचार (Complete notion) त्पन्न करने के लिये जो मनुष्य की प्रकृति पर ोई प्रभाव डाले अर्थात् उसकी भौतिक वा मान-सिक स्थिति में कुछ फेरफार उत्पन्न करे, हमें ब्दों को एक साथ संयोजित करना पड़ता है। जैसे कोई मनुष्य सड़क पर चला जाता है, यदि म पीछे से उसको सुनाकर कहें कि 'मकान' तो ह मनुष्य कुछ भी ध्यान न देगा और चला ायगा; किंतु यदि पुकारें कि "मकान गिरता है" ो वह अवश्य चौंक पड़ेगा और भागने का योग करेगा। शब्द-योजना का प्रभाव देखिए! त्येक मनुष्य का धर्म्म है कि वह इस कार्य्य में ड़ी सावधानी रखे। बहुत से शब्दों को जोड़ने ी से भाषा उत्पन्न नहीं होगी; उसमें उपयुक्त म, चुनाव और परिमाण का विचार रखना ोता है। निश्चय जानिए कि शब्दों के मेल में बड़ी शक्ति है; एक भावुक मनुष्य थोड़े से शब्दों को लेकर भी वह वह चमत्कार दिखला सकता है जो एक स्तब्धचित्त का मनुष्य चार भाषाओं का कोश लेकर भी नहीं सुझा सकता। कुछ दिन पहले हमारी हिंदी की स्थिति ऐसी हो गई थी कि उसका विचारक्षेत्र में अग्रसर होना कठिन देख पड़ता था। बने बनाए समास, जिनका व्यवहार हज़ारों वर्ष पहले हो चुका था, लाकर भाषा अलंकृत की जाती थी। किसी परिचित वस्तु के लिये जो जो विशेषण बहुत काल से स्थिर थे, उनके अतिरिक्त कोई अपनी ओर से लाना मानों भारतभूमि के बाहर पैर बढ़ाना था। यहाँ तक कि उपमाएँ भी स्थिर थीं—मुख के लिये चन्द्रमा, हाथ पैर के लिये कमल, प्रताप के लिये सूर्य्य, कहाँ तक गिनावें। जहाँ इनसे आगे कोई बढ़ा कि वह साहित्य से अनभिज्ञ ठहराया गया। अर्थात् इन सब नियत उपमाओं का जानना भी आवश्यक समझा जाता था! पाठक! यह भाषा की स्तब्धता है, विचारों की शिथिलता है और जाति की मानसिक अवनति का चिह्न है। अब भी यदि हमारे कोरे संस्कृतज्ञ पंडितों से कोई बात छेड़ी जाती है तो वे चट कोई न कोई श्लोक उपस्थित कर देते हैं और उसी के शब्दों के भीतर चक्कर खाया करते हैं, हज़ार सिर पटकिए, वे उसके आगे एक पग भी नहीं बढ़ते। यदि कोई जाल वा धोखे से किसी की सम्पत्ति हर ले तो पंडित जी कदाचित् उसके सन्मुख उसके कार्य्य की आलोचना इसी चरण से करेंगे—'स्वकार्य्यं साधयेद्धीमान्'। उनकी विचारशक्ति इन श्लोकों से चारों ओर जकड़ी हुई है, उसको अपना हाथ पैर हिलाने की स्वच्छंदता कभी नहीं मिलती। ऐसी दशा में उन्नति के मार्ग में एक पग भी आगे बढ़ना कठिन होता है।

इसी प्रकार अनुप्रास से टँकी हुई शब्दों की लंबी लंबी लरी इस बात को सूचित करती है कि

* यहाँ ध्वनि से मेरा अभिप्राय "यत्रवाच्यातिसायि-नोऽर्थ स ध्वनिः" से नहीं वरन् नाद से है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेखक का ध्यान विचारों की अपेक्षा शब्दों की ध्वनि की ओर अधिक है। आरंभ ही में कहा गया है कि भाषा का प्रधान उद्देश्य लोगों को भावों वा विचारों तक पहुँचाना है न कि नाद से रिझाना जो कि संगीत का धर्म्म है। शब्द-मैत्री वा यमक दिखलाने के उद्देश्य से ही लेखनी उठाना ठीक नहीं; यदि आपकी कल्पना में सद्गुण की कोई मनोहारिणी छाया देख पड़ी हो तो आप उसे खींचकर संसार के सम्मुख उपस्थित कीजिए। यदि आपके हृदय में विचारों की रगड़ से कोई ऐसी ज्योति उत्पन्न हुई हो जिसके प्रकाश में जीव अपना भला बुरा देख सकते हों तो आप उसे बाहर लाइए; अन्यथा व्यर्थ कष्ट न उठाइए। हम देखते हैं कि इसी रुचि-वैलक्षण्य के कारण हमारे हिन्दी काव्य का अधिक भाग हमारे काम का न रहा। वहाँ विचित्र ही लीला देखने में आती है। घनाक्षरी, कवित्त और सवैया के 'कवियों' ने कुछ शब्दों का अंग भंग कर दो एक ('सु' ऐसे) अक्षरों की अगाड़ी पिछाड़ी लगाकर बलात् और निष्प्रयोजन उन्हें एक में नाथ रक्खा है। वर्णन-शक्ति की शिथिलता के कारण रसों (Sentiments) के उद्रेक के लिये अत्यंत अधिकता से ध्वनि का सहारा लिया गया है। शृंगार रस की कविता में 'सरस' 'मंजु' 'मंजुल' आदि शब्दों के हेतु कुछ स्थान खाली करना पड़ा है—"मंजुल मलिंद गुंजै मंजरीन मंजु मंजु मुदित मुरैली अलबेली डोलैं पात तात।" कवि जी ने न जाने किस लोक में मुरैलियों को पत्तों पर दौड़ते देखा है। इसी प्रकार जहाँ वीर रस की चर्चा है वहाँ द्वित्व और ट वर्ग का विस्तार है, जैसे—"डरि डरि ढरि गये अडर डराय ढह ढरढर ढर के धराधर के धरके" किंतु इस 'खड्ड बड्ड' के बिना भी वीर रस का सञ्चार किया जा सकता है, इस बात के उदाहरण-स्वरूप कवि का 'हम्मीर हठ' भारतेंदु की "विजयिनी विजय वैजयंती" और 'नील देवी' विद्यमान हैं। आज सैंकड़ा पीछे कितने आदमी मतिराम, भूषण श्रीपति और सुजान के कवित्तों को अनुराग से पढ़ते तथा उनके द्वारा किसी आवेग में होते हैं? पर वही सूर, तुलसी, केशव, रहीम और बिहारी आदि की कविता हमारे जातीय जीवन के साथ हो गई है। उनकी एक एक बात हमारे किसी काम में अग्रसर होने वा न होने का कारण होती है। इस भेद-भाव का कारण क्या है? वही एक में शब्दों का व्यर्थ आडंबर और दूसरी में भावों की स्वच्छता तथा वर्णन की उपयुक्तता। वे 'चटकीले मटकीले' शब्द लाख करने पर भी हमारे हृदय पर अधिकार नहीं जमा सकते; निकल कर हवा में मिल जाना ही उनके कार्य्य का शेष होता है। क्योंकि सृष्टि के नियमानुसार स्वर्गीय पदार्थ ही एक दूसरे में लीन होने को झुकते हैं; जल ही जल की ओर जाता है, इसी प्रकार चित्त की उपज ही चित्त में धँसती है।

प्रत्येक साहित्य के अर्थालंकार में, प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष, उपमा का प्रयोग बहुत अधिक होता है क्योंकि भौतिक पदार्थों के व्यापार, विस्तार, रूप रंग तथा मानसिक अवस्थाओं की स्थिति, क्रम, विभेद आदि का सम्यक् ज्ञान उत्पन्न करने के लिये बिना उसके काम नहीं चल सकता। इसका प्रयोग जान वा अनजान में हम हर घड़ी किया करते हैं; छोटे छोटे विचारों को व्यक्त करने में भी हम बिना उसका सहारा लिए नहीं रह सकते, यहाँ तक कि हमारे सब अगोचर-पदार्थवाची शब्द आरंभ में इसी (उपमा) की क्रिया से बने हैं; यह भाषा की बनावट के इतिहास से प्रमाणित है। जब शब्दों का यह हाल है तब फिर इस प्रकार की अपार्थिव भावनाओं का क्या कहना है। उनका अनुभव तो हम पार्थिव पदार्थों ही के गुण और व्यापार के अनुसार करते हैं। अर्थात् भौतिक वस्तुओं के गुण और धर्म्म को अपार्थिव वस्तुओं में स्थापित करके ही हम आध्यात्मिक विषयों की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मीमांसा करते हैं। साधारण दृष्टांत लीजिए—'दया ने प्रतीकार की इच्छा को दबा दिया।' उसके प्रेम से परिपूर्ण हृदय में प्रिय के दुर्गुणों के विचार की जगह न रही।" पहले में भौतिक पदार्थों के गुरुत्व और अपने से हलके पदार्थों को दबा कर उभड़ने से रोकने की क्रिया का आभास है; इसी प्रकार दूसरे में पदार्थों के स्थान छेंकने का धर्म्म स्थापित किया गया है। बात यह है कि इन नियमों से पार्थिव और आध्यात्मिक दोनों सृष्टियाँ समान रूप से बद्ध हैं।

उपमा का कार्य्य सादृश्य दिखला कर भावना को तीव्र करना है। जिस वस्तु के लिये हम कोई शब्द नहीं जानते उसका बोध हम उपमा ही के द्वारा कराते हैं। जैसे जो मनुष्य हारमोनियम का नाम नहीं जानता वह उसकी चर्चा करते समय यही कहेगा कि वह संदूक के समान एक बाजा है। यदि किसी वस्तु का विस्तार इतना बड़ा है कि हम उसे निर्दिष्ट शब्दों में नहीं बतला सकते तो हम चट उतने ही वा उससे बहुत अधिक विस्तृत किसी अन्य पदार्थ की ओर इङ्गित करते हैं, जैसे 'हरियाली चारो ओर समुद्र के समान लहराती देख पड़ी।' 'ज्वालामुखी से भाप और राख उठ कर बादल के समान आकाश में छा गई'। हम यह न देखने आयँगे कि समुद्र का विस्तार हरियाली के फैलाव से नाप में न जाने कितने वर्ग मील बड़ा है; इसकी हमें कोई आवश्यकता नहीं। यह बात निरीक्षण के समय हमारी दृष्टि की पहुँच के बाहर की है। अतएव जब तक हम विवेचना शक्ति का सहारा न लें, वह हमारी प्राप्त भावनाओं में अंतर नहीं डाल सकती। निरीक्षण के समय हमारी दृष्टि की पहुँच के भीतर इन दोनों (हरियाली और समुद्र) का अंत नहीं होता, यही उनमें समानता है। यदि किसी महाविशाल पिंड के आकार का परिज्ञान कराना रहता है तो उसकी तुलना हम समान आकारवाले किसी छोटे पदार्थ से करते हैं; तदनंतर उस छोटे पिंड में इस आकार के गुण और धर्म्म को दिखलाकर हम उनकी स्थापना बड़े पिंड में करते हैं, जैसे स्कूलों में लड़कों में कहा जाता है कि 'लड़कों! पृथ्वी नारंगी से समान गोल है,' पर यह कोई नहीं कहता कि 'नारंगी पृथ्वी के समान गोल है'; क्योंकि ऐसी उपमा से हमारा कुछ काम नहीं निकलता। पदार्थों के व्यापार, गुण और स्थिति को स्पष्ट करके उनका तीव्र अनुभव कराना उपमा का काम है, और कुछ नहीं। अतएव एकही वस्तु के लिये पचीसों उपमाओं का तार बाँध देना, उपमा कथन के हेतु ही किसी वस्तु को वर्णन करने बैठ जाना और उससे किसी अंश में समानता रखनेवाले पदार्थों की सूची तैयार करना उचित नहीं है। जैसे प्रभातकालीन सूर्य्य मंडल को देख यही बकने लगना कि "यह थाली के समान है" अथवा "शोणितसागर में बहता हुआ स्वर्णकलश है" या "स्वर्गलोक की झलक दिखलानेवाली गोल खिड़की है" किंवा "होली की महफिल में रक्खे हुए लैंप का ग्लोब है" वाणी का सदुपयोग नहीं कहा जा सकता। मेरा अभिप्राय यह है कि उपमा का प्रयोग आवश्यकतानुसार ही होता है; उसका अनावश्यक और अपरिमित प्रयोग प्रलाप है। अकेले वा पृथक् रूप में वह इस योग्य नहीं कि उसे भरने के लिये हम एक प्रबंध वा पुस्तक लिख डालें। यही बात सब अलंकारों के लिये कही जा सकती है। किसी वस्तु को उसकी सीमा के बाहर घसीटना उसको उसके गुण से च्युत करना है। यह बात हमारी हिंदी कविता में प्रत्यक्ष देखने में आती है। किसी नीतिज्ञ ने अन्योक्तियों ही का कल्पवृक्ष लगाया है; नायिका भेद के किसी भक्त ने अकेली नवोढ़ा ही का आदर्श दिखलाया है; किसी नखसिख निहारनेवाले ने 'अलक' और 'तिल' ही पर शतक बाँधा है। आप ही कहिए कि इतने संकुचित स्थान में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भीतरी और बाहरी सृष्टि के कितने अंश का व्यापार दिखलाया जा सकता है और पाठक का ध्यान बिना ऊबे हुए कब तक उसमें बद्ध रह सकता है?

धर्म्म वा व्यापार के पूर्णतया प्रत्यक्ष न होने के कारण जब किसी वस्तु की भावना धुँधली वा मंद होती है तब उसको तीक्ष्ण और चटक करने के लिये समान धर्म्म और गुणवाले अन्य अधिक परिचित पदार्थों को हम आगे रखते हैं। किंतु काव्य की उपमा में एक और बात का विचार भी रखना होता है—वह यह कि सादृश्य दिखलाने के लिये जो पदार्थ उपस्थित किए जायँ वे प्राकृतिक और मनोहर हों, कृत्रिम और क्षुद्र नहीं, जिसमें ज्ञान दान के अर्थ जो रूप उपस्थित किए जायँ वे रुचिकर होने के कारण कल्पना में कुछ देर टिकें और हमारे उन मनोवेगों (Sentiments) को उभाड़ें जो हमें चंचल कर के कार्य्य में प्रवृत्त करते हैं। उपमान और उपमेय में जितनी ही अधिक बातों में समानता होगी उतनी ही उपमा उत्कृष्ट कही जायगी।

प्राचीन भारतवर्ष का यूरप से वाणिज्य *।

बहुत प्राचीन काल से एशिया और यूरप में जितने पराक्रान्त साम्राज्य स्थापित हुए हैं, प्रायः सबने पहले भारतवर्ष पर ही विजय प्राप्त कर के प्रतिष्ठा लाभ की है। जिस समय यूरप अज्ञानता और असभ्यता के घोर अंधकार में निमग्न हो रहा था, उस समय हमारा "भारतवर्ष" ज्ञानालोक से उद्भासित और सभ्य जगत् में अति श्रेष्ठ सिंहासन प्राप्त कर चुका था। हमारे भारतवर्ष की ज्ञानज्योति पा कर ही यूरप पहलेपहल आलोकित हुआ है। यह बात किसी सभ्य समाज पर अविदित नहीं है कि भारत के साथ वाणिज्य में प्रवृत्त हो कर ही योरप ने अपने अशेष ऐश्वर्य्य के साथ साथ व्यापार व्यवसाय में भी असीम प्रभुत्व प्राप्त किया है। और वाणिज्य वृद्धि के ही साथ साथ यूरप इस परिवर्तनशील जगत में महान प्रभुत्व प्राप्त करने में समर्थ हुआ है। अतएव, भारतवर्षीय वाणिज्य ही योरप की वर्तमान उन्नति और प्रभुत्व का मूल कारण कहा जा सकता है।

महात्मा क्राइस्ट के समय के पूर्व और पश्चात् समय समय पर भारत पर भिन्न भिन्न विदेशी जातियों का आक्रमण हुआ था। प्राचीन अरब, मिसर, फारस, असीरिया, ग्रीस और रोमन ईसा के शताब्दियों पहले भारतवर्ष के साथ वाणिज्य, व्यापार में प्रवृत्त होकर प्रभूत समृद्धियों के अधिकारी हो चुके थे, और भारतवासी भी उस वाणिज्य-व्यवसाय में आज के से उदासीन न थे। ऐसा अनुमान होता है, कि उस समय भारतवर्ष का वाणिज्य अफ्रिका के पूर्वीय किनारे "सकोट्रा" (Socotra) द्वीप से ले कर जावा द्वीप तक फैला हुआ था।

धर्म्मशास्त्रकार महात्मा मनु के काल में जिस जल और स्थल मार्ग से आर्य्यों ने वाणिज्य व्यापार में निपुणता लाभ की थी और प्राचीन काल के हिंदू समुद्र यात्रा और वैदेशिक व्यापार में जितने कुशल थे, यह "मनुसंहिता *" में स्पष्ट लिखा हुआ है। संभव है, प्राचीन भारतवासियों का यह विदेशी व्यापार समुद्र के किनारे ही किनारे होता रहा हो। एक जगह "बाइबिल" में लिखा है कि ओफिर नगर भारतवर्ष में अवस्थित

---

* यह प्रबंध श्रीयुत स्वर्गीय पंडित त्रैलोक्यनाथ भट्टाचार्य लिखित बंगला (साहित्य मासिक पत्र) का मर्मानुवाद है।

अनुवादक।

* देखो ८-१५६-५७ में।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ा, इस बात पर पाश्चात्य पंडितमंडली में ारी मतभेद होने पर भी, यहूदी राजा 'सुलेमान' े समय में, बहुतेरे फिनीशियावासी यहूदी हाजों पर भारतवर्ष से नाना प्रकार के अमूल्य व्य अपने देश को ले जाते थे, बाइबिल (Kings, X. 22) में इसका स्पष्ट निर्देश मिलता है।

बहुत प्राचीन काल से अरबनिवासी चारों ोर भिन्न भिन्न देशों के साथ वाणिज्य व्यापार ें प्रवृत्त हो चुके थे। वे लोग विदेशी व्यापार के द्वारा अधिक लाभवान् भी हो गए थे। अंत में रब के कुछ प्रधान प्रधान सौदागरों ने धीरे ीरे भारतवर्ष का बाहरी वाणिज्य हर तरह से पने हाथ में कर लिया और भारत के पश्चिमी किनारे से लेकर भूमध्यसागर पर्यंत अरब का ाणिज्य फैला दिया। सिंधु देश की खाड़ी से ारतीय वाणिज्य द्रव्य लदकर जलमार्ग से फारस, ाबिलन और मस्क़त के किनारों पर जा उतरता ा। वहाँ से स्थल और जलमार्ग के द्वारा मिस्र और शाम देश को रवानगी होती थी। ईसा के आविर्भूत होने के दो शताब्दी पहले "अगाथार किडीज़" (Agatharchides) नामक एक यूनानी लेखक ने लिखा है,—"मेरे समय में असंख्य वाणिज्य नौकाएँ सबीयार (आधुनिक यमन) के किनारे से हो कर आती जाती थीं।"। प्रसिद्ध लेखक "प्लिनी" के समय अरब सौदागर सिंहल-द्वीप में वास करके भारतीय वस्तुओं के एक मात्र विक्रेता हो गए थे।

महात्मा ईसा के अंतर्धान होने के एक शताब्दी उपरांत एक सुदक्ष यवन नाविक ने अपने विख्यात ग्रंथ में लिखा है कि, "मिस्र के यूनानी लोग लोहित सागर के किनारे से कई एक दल बाँध बाहर निकले और अरब सौदागरों की प्रतिद्वंदिता करने में प्रवृत्त हुए। इस भाँति वे भारत का सारा वाणिज्य अपने हाथ में कर के अरब की उन्नति के मूल पर कुठाराघात करने की चेष्टा करने लगे।

ईसा से ३२७ वर्ष पहले भुवनविजयी सम्राट् सिकंदर पश्चिमोत्तर देश की सीमा से भारत में आ घुसा और थोड़े ही दिनों में पंजाब के बहुत से भागों को अधिकृत कर बाबिलन नगर को लौट गया। उसके प्रसिद्ध सेनापति नियारकस ने ३२६ ई० पू० सिंधु नद की राह से फ़रात नदी तक ससैन्य जल मार्ग द्वारा यात्रा की और अपनी इस लंबी यात्रा के द्वारा भारतवर्ष के साथ यूनान वालों के लिये वाणिज्य मार्ग आविष्कृत कर दिया। बाबिलन नगर में (३२३ ई० पू०) जगद्विजयी सम्राट् सिकंदर तीसरे पहर ३२ वर्ष ८ महीने की अवस्था में, (१२ वर्ष ८ महीने राज्य करके) परलोक सिधारा। उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके सेनापतियों ने उसके अतुल साम्राज्य को आपस में बाँट लिया। शाम का बादशाह 'सिल्यूकस' भारत को विजय करने के हेतु पंजाब प्रांत में आ घुसा। पर मगध देश के मौर्य्यवंशी महाराज चंद्रगुप्त से पराजित होकर उसने मित्रता स्थापित की। ३१२ ई० पू० वह अपने राज्य को लौट गया। सूक्ष्मदर्शी "मेगास्थिनीज़" को उसने मगध रासभा में अपना राजदूत बनाकर पाटलिपुत्र (पटना) में भेजा। इसी समय भारत के साथ यूनान का घनिष्ट संबंध हुआ। आपस के इस संबंध से दोनों ही देशों ने अनेक प्रकार की उन्नति की। और इसी संबंध से आज भी यूनान को योरपवालों का गुरु और शिक्षक होने का सम्मान प्राप्त है। ग्रीक लोगों के द्वारा योरपवालों ने सब से पहिले भारतवर्ष की अतुल सम्पत्ति और सभ्यता की जानकारी प्राप्त की है। यूनानी व्यवसायी भारतवासियों से साक्षात् करके वाणिज्य में प्रवृत्त हुए, और उन्होंने भारत के अतुल वाणिज्य और वैभव की बात योरप वालों में जाकर फैलाई।

मुहम्मद के पैदा होने (ई० ६११-३२) के बाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतवर्ष से यरोप का सीधा सम्बन्ध होगया और भारतवर्षीय वाणिज्य का द्वार सहसा खुल गया। भारत-महासागर और भूमध्यसागर के बीच मुसलमान अरब सौदागरों का वाणिज्य-विषयक आधिपत्य स्थापित होगया। वे लोग वाणिज्य के पदार्थों को जलमार्ग द्वारा अरब और लोहितसागर होते हुए मिस्र, एराक़ और शाम के बन्दरों में ले आने लगे। वहीं सब मूल्यवान व्यापार की चीजों को योरोप के अनेक स्थानों में बेंचकर वेनिस, जनेवा, पसा, आदि नगरों के सौदागर प्रभूत धन उपार्जित करने लगे। इस प्रकार उपर्युक्त सब नगर खूब वैभवशाली और उन्नत होगए और भूमध्यसागर भारतीय वाणिज्य द्वारा योरप की सभ्यता का एकमात्र केन्द्रस्थल बनगया।

अरबवालों के इसी गौरवमय काल में, भारतीय वाणिज्य द्रव्य के साथ २ भारतवर्ष का साहित्य, विज्ञान, शिल्प कलाकौशलादि भी मुसलमानों के द्वारा योरप देश में जा फैला। आठवीं से सोलहवीं ईसवी तक अरब, उपदेशक के सिंहासन पर बैठ कर, ज्ञान और सभ्यता की विमल ज्योति द्वारा, असभ्य और अज्ञानान्ध योरप को आलोकित करता रहा, अतएव कोई कारण नहीं दिखाई देता कि हमारे 'भारतवर्ष' देश के सामने अरब को इस शिष्यता का पहला आसन न दिया जाय। भारतीय ज्योतिष, गणित आयुर्वेद, संगीत आदि विविध शास्त्रों को पढ़कर अरब योरप को उपदेश करता रहा। इस प्रकार योरप अरबवालों से भारतवर्षीय साहित्य का आस्वादन प्राप्त कर सुसभ्य हुआ। यूनान और अरब ने ही योरप को भारतवर्ष से प्रथम परिचित कराया।

बाइजेन्टाइन (Byzantine) साम्राज्य का विध्वंस होने के साथ तुर्क राजा मुहम्मद ने १४५३ ईस्वी में कुस्तुंतुनिया (Constantinople) नगर को अधिकृत करके, तुर्क साम्राज्य का स्थापन किया, जिसके साथ ही साथ यूरप में भी नए युग का संचार होने लगा। यूनानी सभ्यता और साहित्य के द्वारा अज्ञानान्ध योरप को तुर्कों ने आलोकित करके उसकी वर्तमान उन्नति और ऐश्वर्य के लिए एक सुगम मार्ग कर दिया जिसका फल यह हुआ कि योरप ज्ञान और उन्नति के मैदान में तेजी के साथ दौड़ पड़ा। भविष्य के लिये लाभ का अंकुर उत्पन्न हो गया। सभ्यता के साथ साथ वाणिज्य में भी गहरी उन्नति होने लगी। तुर्क राज्य के प्रतिष्ठित होने के दिन से ही, इटाली का सौभाग्य-सूर्य्य अस्त होने लगा और भूमध्यसागर की जगह अब अटलान्टिक महासागर वाणिज्य तथा सभ्यता का प्रधान मार्ग होगया। योरप की दक्षिणी सीमा से लेकर उसके पश्चिमी किनारे तक सभ्यता और उन्नति की वेगवती धारा प्रवाहित होने लगी। पश्चिमी योरप नवीन उत्साह और स्फूर्ति के साथ वाणिज्य की उन्नति में अग्रसर हुआ। उस समय तुर्क साम्राज्य स्थापित होने के साथ ही साथ वेनिस, जनोआ प्रभृति नगरों में भारतीय वाणिज्य की वस्तुओं के जाने का द्वार एकदम बन्द होगया जिससे वे सब समृद्धिशाली नगर उजाड़ दशा को पहुंच चले। उसी समय से भारतवर्ष में वाणिज्यार्थ आने के हेतु योरप के व्यवसायी गण ललचने लगे। योरपवासी भारतवर्ष की ओर आने का रास्ता खोजने के लिये व्याकुल हो उठे। पुर्त्तगाल पश्चिमी योरप के इस नवीन युग का प्रवर्तक हुआ। एक छोटे से पुर्तगाल देश ने सारे योरप की आँखें खोल दीं और नेत्रोन्मीलन होने के साथ ही योरप की विशाल लोलुप दृष्टि पहले पहल भारत पर आपड़ी जिसने कि अन्त में योरप की वर्तमान उन्नति और उसके वैभव प्रचार के लिये एक बहुत ही दृढ़ आधार बना कर दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन् १३७३ ईस्वी में पुर्तगाल के राजा फर्डि-
ने इस असार संसार से मुँह मोड़ा।
से पहले ही पुर्तगाल "मूर" अरब (मुसलमान
ों को निकाल बाहर कर स्वाधीनता को प्राप्त
चुका था। स्पेन राजमहिषी उक्त राजा के
ासन पाने की एक मात्र उत्तराधिकारिणी
पर एक स्त्री को अपनी महारानी बनाकर
के सन्मुख अपनी स्वाधीनता को विसर्जित कर
ा पुर्तगाल प्रजा को पसंद न था। इससे
वार हो उन लोगों ने नियम विरुद्ध मृत राजा
भ्राता (दासी पुत्र) को ले जा कर गद्दी पर
ाया। राजा का जन्मा दूसरा पुत्र, सुप्रसिद्ध
राज हेन्री वाणिज्य विस्तार के साथ २ राज्य
तार का उद्योगी हुआ और नाविक-हेन्री के नाम
विख्यात हुआ। उसके अदम्य उत्साह और
मात्र चेष्टा से पुर्तगाल के बंदरों में बड़े बड़े
(जहाज) तैयार होने लगे, सेग्रेस नगर में
शाला (Observatory) स्थापित हुई, समुद्र
बीच दिग्दर्शकयंत्र कंपास (Compass)
व्यवहार होने लगा। १४१७ ईस्वी में उसने
डेमेटो में पुर्तगाल का पहला उपनिवेश
Colony) स्थापित किया। उसके उद्योग से
ुमी अफ्रिका के किनारे के हिस्सों में तथा
निकटस्थ छोटे छोटे टापुओं में पुर्तगाल की
जय वैजयन्ती उड़ी। उसी के आश्रित होकर
कोडिगामा और कोलंबस (Columbus)
विकता के कार्य्य की शिक्षा लेते रहे और
में पूर्ण निपुण हो उन्होंने अपनी भविष्य की
सिद्धि का सूत्रपातकर दिया। मूरलोगों को
ने अपने देशसे निकाल बाहर किया। उन्हीं के
सन में पुर्तगाल वाले मूर लोगों की समृद्धि के
ान कारण भारतवर्ष के व्यापार को अपने
ों में लाने के हेतु धीरे धीरे चेष्टा करने लगे।
ी राजकुमार ने सामान्य पुर्तगाल राज्य को
ोरप के वाणिज्य, शिक्षक और परिचालक
के पद पर बैठा कर उसके महत्व को सौगुना कर
दिखाया। उसीके अविश्रांत परिश्रम से पुर्तगाल की
राजधानी "लिसबन" नगर योरप के वाणिज्य का
एक मात्र केंद्र स्थल बन गया। १४६० ई० में यह
महामति राजकुमार परलोक सिधारा। उसी
समय अफ्रिका के पश्चिमी किनारे 'सिरालियन'
का पता लगा और समग्र उपकूलों तथा
निकटवर्ती द्वीपपुंजों पर पुर्तगाल का एकाधिपत्य
स्थापित हो गया। युवराज नाविक-हेन्री के उद्योग
और लगातार परिश्रम ने पश्चिमी योरप में इस
भाँति वाणिज्य शृंखला स्थापित करके योरप
के प्रभुत्व को संसार में फैलने का सूत्रपात
कर दिया।

यद्यपि युवराज हेन्री की मृत्यु हो गई, किंतु
उसके प्रदर्शित मार्ग का अवलम्बन करके पुर्तगाल
प्रति दिन उन्नति और सौभाग्य के पथ पर अग्रसर
होने लगा जिससे वह योरप देशमें सर्वप्रधान
राज्य बन गया। कोइब्रा नगर टूट गया और
"लिसबन" प्रधान बंदर हो गया। पुर्तगाल के
राजा लोग वाणिज्यविस्तार करने की ओर
अधिक ध्यान देने लगे। पुर्तगाल का यों सौभाग्य
सूर्य्य उदय होते देख स्पेन ईर्षा के वशीभूत हो
वाणिज्य व्यापार में पुर्तगाल को प्रतिद्वंदिता
करने को उठ खड़ा हुआ। १४७९ ई० में दोनों
जातियों के बीच संधि स्थापित हो गई और
केनारी द्वीप (Canary Isles) पुंज पर स्पेनवालों
की प्रभुता प्रतिष्ठित हो गई।

भारतवर्ष में आने जाने का सुगम मार्ग ढूंढ़
निकालना ही पुर्तगाल और स्पेन का प्रधान लक्ष्य
था। राजकुमार हेन्री की मृत्यु के २६ वर्ष पीछे
राजा दूसरे "जान" के राजत्व काल में पुर्तगाली
नाविक "बार्थोलिमिडियायज़" (Bartholome
diaz) ने १४७६ ईस्वी में अनेक कष्टों को झेल
दक्षिणी अफ्रिका के उस अंतरीप को ढूँढ़
निकाला जो आँधी से बचा था। इसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वारा भारतवर्ष आने जाने का मार्ग स्थिर हो गया। दूसरे जान ने उस अंतरीप का नाम रक्खा "उत्तमाशा"। वह भारतवर्षीय वाणिज्य हथिआने के लिये कैसा व्यग्र रहा होगा इसका पता एक इसी बात से भली भाँति मिल जाता है कि उसने इस नई भूमि द्वारा भविष्य योरप के लिये नवीन युग उपस्थित कर दिया।

अफ्रिका के पश्चिमी किनारों पर लगातार ६७ वर्ष जी तोड़ परिश्रम करके "पुर्त्तगाल" ने भारतवर्ष के साथ वाणिज्य व्यापार करने के हेतु उस बड़े फाटक को तै किया जिससे होकर "पुर्त्तगाली" सौदागर लोग आने जाने लगे। उसी समय जनोआवासी "कोलंम्बस" निज प्रतिभा द्वारा भारतवर्ष में आने जाने के लिए कोई दूसरा सुगम मार्ग निकालने पर दत्तचित्त हुआ। खूब विचार करके उसने यह निश्चय किया कि अटलांटिक महासागर से सीधे पश्चिम ओर जाने से सहज में भारतवर्ष पहुँच सकता हूँ। जिस समय इस प्रतिभाशाली नाविक के मनमें यह बात उठी उसी समय उसने इंगलैंड और फ्रांस सरकार के सामने उपस्थित होकर सहायता पाने की प्रार्थना की, किंतु खेद का स्थान है कि उस बेचारे की इस सर्व लाभदायक अभिलाषा को उक्त दोनों गवर्नमेंट पूरी न कर सकीं। इससे हताश होकर वह घर को लौट आया। परंतु कुछ ही दिन उपरांत उस साहसी पुरुष महात्मा "कोलंबस" ने फिर नवीन उत्साह के साथ स्पेन के महाराज और राजमहिषी की सेवा में उपस्थित होकर अपनी अभिलाषा प्रकट की। कोलंबस की इस प्रार्थना को उक्त राजदंपति ने सहर्ष स्वीकृत कर उसके इस यात्रा के निमित्त यथोचित सहायता प्रदान की। तब वह पेन्स बंदर से ३ जहाज अपने साथ लेकर तीसरी अगस्त १४९२ ई० को भारतवर्ष ढूँढ़ने के हेतु पश्चिम दिशा को चला। अविश्रांत परिश्रम उठा करके जिस कार्य्य को पुर्त्तगाल नाविकों के सात पुरखे न कर सके थे उसे इस साहसी पुरुष ने बात की बात में पूरा करके निज अन्वेषण प्रतिभा द्वारा संसार की आँखों में चकाचौंध उत्पन्न कर दी। अनेक क्लेशों को सहन करके ११ वीं अक्तूबर को वह बहामा द्वीप पुंज के अंतर्गत हेटीद्वीप में जा उतरा और अमेरिका महाद्वीप ढूँढ़ निकाला। उस समय तक भारतवर्ष आने जाने के मार्ग तथा इतने बड़े भूमिखंड के अस्तित्व से स्पेनवाले पूरे अनजान थे। फिर भारतवर्ष का पता लगाते हुए उसने दूसरी बार जमइका-द्वीप और तीसरी बार ट्रिनिडाड द्वीप का पता लगाया। ओरिनिको नदी के मोहाने पर खड़े होकर वह भारतवर्ष ढूँढ़ निकालने की फिर कल्पना करने लगा। इस प्रकार भारतवर्ष का पता लगाते हुए कोलंबस साहब के द्वारा अमेरिका महाद्वीप का पता लगा। स्पेनके अतुल वैभव और सौभाग्य के साथ साथ एक नए और अधिक विस्तीर्ण योरप का सूत्र पात हो गया। कोलंबस भारतवर्ष का पता लगाने में कृतकार्य न हुआ न सही पर उसके अन्वेषण ने योरप के इतिहास में युगान्तर उपस्थित होने की भविष्यवाणी कर दी।

अब से पुर्तगाल भारतवर्ष के विषय में और भी अधिक चेष्टा करने लगा। धीरे धीरे अफ्रिका के दक्षिणी और पश्चिमी किनारों का पता लग जाने पर पोर्चुगीज़ नाविक दिन प्रतिदिन भारतवर्ष की ओर बढ़ने लगे। राजा दूसरे "जान" ने भारतवर्ष की भीतरी अवस्था जानने के लिये कोविलहाओ और पैभा नामक दो साहसी पोर्चुगीज़ नवयुवकों को स्थल मार्ग से भारतवर्ष की ओर भेजा। १४९१ ई० में ये दोनों भ्रमणकारी युवा पुर्त्तगाल से जहाज पर सवार होकर अलक्षेन्द्रिया (अलकजंड्रिया) में जा उतरे और कायरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(Cairo) नगर में पहुँच कर वे एक दूसरे से अलग हो गए। पैभा ने पश्चिम की ओर मध्य अफ्रिका का अन्वेषण करने के हेतु प्रस्थान किया परंतु "कोविलहाओ" ने पूर्व की ओर यात्रा की। वह यात्रियों के एक गरोह के साथ होकर अदन बंदर में जाकर ठहरा। वहां से फिर जहाज पर सवार होकर जलमार्ग द्वारा भारतवर्ष के पश्चिमी किनारे पर पहुँचा। कोविलहाओ कोचिन, कनानोर, कलिकट और गोआ देखता हुआ फिर अदन को लौट गया और वहां से पुर्त्तगाल के राजा (दूसरे जान) के पास अपने पर्य्यटन वृतांत के संग "भारतवर्ष की भीतरी अवस्था कैसी है?" इसकी एक रिपोर्ट (विवरण) लिखकर भेज दिया।

कोबिलहाओ की इस रिपोर्ट के पहुंचने के कुछ काल उपरांत १९ जुलाई १४९७ई० को जगद्विख्यात नाविक वास्कोडिगामा अपने संग तीन जहाज लेकर भारतवर्ष की ओर आने के हेतु बिदा हुआ। निरंतर तेरह मास तक बहुतेरे दुःख और क्लेशों को सहन करके वह २० मई १४९९ ई० को कालीकट बंदर पहुँच गया। वहां कुछ काल रह कर वह २९ वीं अगस्त १४९९ई० को फिर लिसबन नगर लौट गया। गुणग्राही राजा एमानुएल ने अपने प्रधान दर्बारियों के सामने वास्कोडिगामा को उत्तमोत्तम बहुमूल्यवान पुरस्कारों से विभूषित कर अपनी गुणग्राहकता का परिचय दिया।

केदारनाथ पाठक।

सभा में रवींद्र बाबू।

५ अप्रैल को संध्या के समय ५॥ बजे नागरीप्रचारिणी सभाभवन में श्रीयुत डाक्टर सर रवींद्रनाथ ठाकुर पधारे थे। उस समय सभा में नगर के अनेक गण्य-मान्य और प्रतिष्ठित रईस, हिंदी-प्रेमी तथा अन्यान्य नागरिक उपस्थित थे। सभाभवन दर्शकों से ठसाठस भरा हुआ था। सबसे पहले पं० रामनारायण मिश्र ने आप का स्वागत किया और आपको कोश-कार्यालय तथा सभा का कार्यालय दिखलाया। सभा-कार्यालय में हिन्दी के बहुत से बड़े बड़े प्राचीन ग्रंथों की हस्तलिखित प्रतियाँ रखी हुई थीं। आपको उन सब प्रतियों का परिचय दिया गया और उनका प्राचीनत्व तथा महत्त्व समझाया गया जिससे आप बहुत प्रसन्न और संतुष्ट हुए। तदनंतर आप बड़े हाल में गए जहाँ सबसे पहले राय कृष्णदास ने बाबू मैथिलीशरण गुप्त की स्वागत-संबंधिनी कविता पढ़ी। इसके उपरांत क्रम से नागरीप्रचारिणी पत्रिका के संपादक तथा लाला भगवानदीन ने अपनी अपनी स्वागत-संबंधी कविताएँ पढ़ीं।

स्वागत।

रंक और राजों ने मिलकर
विस्तृत जिसे बनाया है।
हिंदीमाता के मंदिर में
आज सुकवि रवि आया है॥
जिसके आँगन में तुलसी ने
अपना उच्चस्थान किया।
जहाँ सूर की श्याम-घटा के
रस का हमने पान किया॥
अपने हाथों से कबीर ने
मण्डप जिसमें तान दिया।
और जहाँ फिर हरिश्चंद्र ने
अपना सरबस दान किया॥
यवन जनों ने भी जिसमें
शुचि सुमनसमूह बढ़ाया है।
हिन्दी-माता के मंदिर में
आज सुकवि रवि आया है॥
वह रवि जिसने पश्चिम को
भी पूर्व बनाकर छोड़ा है।
स्वयं सार्वभौमिक कवियों ने
जिससे नाता जोड़ा है॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहा जिधर उधर ही उसने
मार्मिक मन को मोड़ा है।
(भारत के विरोधियों पर
क्या पड़ा किरण का कोड़ा है!)
माँ-उत्सुक है जिन भावों की
भेंट यहाँ वह लाया है।
हिंदीमाता के मंदिर में
आज सुकवि रवि आया है॥

—मैथिलीशरण गुप्त।

स्वागत।

(१)

स्वागत रसिक शिरोमणि स्वागत सुबुद्धिवारे।
स्वागत सुकाव्यगढ़ के रक्षक सुभट सुखारे॥
संगीतबाटिका के कोकिल सुघोषवारे।
चित्रणकला निपुणता सब हाथ है तुम्हारे॥
स्वागत जगत दुलारे भारत के नैनतारे।
स्वागत रवीन्द्र प्यारे जातीय धन हमारे॥

(२)

भारत का मान तुमने संसार में बढ़ाया।
सच्चे सपूतवाला तुम ने इसे बनाया॥
संगीत, काव्य सोता यूरप में जा बहाया।
नोबेल इनाम तुमने निज बुद्धिबल से पाया॥
जाकर अमेरिका में निज व्यंग्य वाक्य मारे।
स्वागत रवीन्द्र प्यारे जातीय धन हमारे॥

(३)

हम सब हृदय-सिंहासन पर हैं तुम्हें बिठाते।
पादार्घ्य आचमन हित प्रेमाश्रु हैं लुढ़ाते॥
बंधुत्व-वारिधारा में स्नान हैं कराते।
अनुराग-सूत्र देकर पट प्रीति का पिन्हाते॥
शुभ कामना सुचंदन लाते हैं तन तुम्हारे।
स्वागत रवीन्द्र प्यारे जातीय धन हमारे॥

(४)

अपने सुमन-सुमन से तुम पर हैं हम चढ़ाते।
निज नेह मोद संयुत आमोद हैं सुँघाते॥
दुर्भावना जलाकर दीपक तुम्हें दिखाते।
नैवेद्य नम्रता का हम तुमको हैं चखाते॥
तांबूल दे रहे हैं हित का स्वकर पसारे।
स्वागत रवीन्द्र प्यारे जातीय धन हमारे॥

(५)

बिनती यही हमारी अपना हमें समझना।
हमको भुला न देना दोषों में मत उलझना॥
बलिहार हो रहे हैं दंहने सदैव रहना।
त्रुटियों को भूल जाना कुछ बात हमसे कहना॥
शुभ भाव ये हमारे रखना हृदय में धारे।
स्वागत रवीन्द्र प्यारे जातीय धन हमारे॥

—भगवानदीन।

याचना।

(१)

धन्य, धन्य, हे ध्वनि के धनी कवींद्र!
भावलोक के ठाकुर, उदित रवींद्र!
सारे भेदों के अभेद को खोल
लिया जगत् का तुमने मर्म टटोल—
हृदय सबके छुए,
प्राण सबके हुए॥

(२)

दर्शन से कृतकृत्य हुए हम आज।
यही माँगते सविनय सहित समाज—
आज रहे हैं नाता अपना तोड़
विविध सृष्टि से हम, उसको दो जोड़।
और किससे कहें?
मौन कैसे रहें?

(३)

नग, निर्झर, तरु, पशु विहंग के संग
मिला हुआ था कभी रंग में रंग।
प्रेमसूत्र वह, हाय! रहा है टूट,
अपनों से हम आज रहे हैं छूट।
कवे! करुणा करो,
बहे जाते धरो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४)

नित्य विश्वसंगीत तुम्हारे कान
सुनते हैं, यह बात गए सब जान,
उसके झोंकों का करके संचार
खोलो सबके आज हृदय के द्वार,
भाव जिसमें भरें,
प्रेम जिससे करें।

(५)

हँसने में हों हम कुसुमों के अंग,
चहकें हम भी पिक चातक के संग,
रोने में दें दीन दुखी का साथ,
मन को अपने रक्खें सबके हाथ
यही वर दीजिए,
लोक यश लीजिए।

रामचंद्र शुक्ल।

तीनों कविताओं के पढ़े जाने के उपरांत रवींद्र बाबू ने अपनी मातृभाषा बँगला में सभा को इस स्वागत के लिये हृदय से धन्यवाद दिया। आपको इस बात का विशेष दुःख हुआ कि आप हिन्दी में नहीं बोल सकते थे। अँगरेजी भाषा में धन्यावाद न देने तथा अपना वक्तव्य न सुनाने का कारण बताते हुए आपने कहा—"जब कि मेरा स्वागत देशी भाषा में किया गया है तब यदि मैं विदेशी भाषा में उसका उत्तर दूँ तो मानों मैं मोती लेकर उसके बदले में सीप देता हूँ।" इससे सिद्ध होता है कि विदेशी भाषाओं की अपेक्षा आप देशी भाषाओं का कितना अधिक आदर करते हैं। इसके उपरान्त आपने सभा को नागरीप्रचार करने के लिये उत्साहित किया और कहा कि इस समय इस बात की सब से बड़ी आवश्यकता है कि सब लोग अपने अपने प्रांतों में औरों के साथ अपनी राष्ट्र भाषा का भी प्रचार करें। देश में भिन्न भिन्न भाषाओं की उसी प्रकार आवश्यकता है जिस प्रकार भिन्न भिन्न नदियों की। जिन देशों की नदियां सूख जाती हैं उन देशों में अकाल पड़ जाता है और अनेक प्रकार के रोग फैलने लगते हैं। इसी प्रकार इस देश में यदि भिन्न भिन्न भाषाओं का अस्तित्व न रह जाय तो जाति की उससे बहुत बड़ी हानि होगी। इसके उपरांत आप ने अपना बनाया हुआ एक बँगला गीत गाकर सुनाया जिसे सुन कर सब लोग बहुत प्रसन्न हुए। सब के अन्त में बा० कालीप्रसन्न चटर्जी ने आपको सभा में पधारने के लिये धन्यवाद दिया और आपसे बोलपुर विद्यालय में हिन्दी पढ़ाने का भी प्रबन्ध करने की प्रार्थना की जिसके उत्तर में आपकी ओर से लोगों को सूचित किया गया कि आप बहुत दिनों से इस पर विचार कर रहे हैं परन्तु उपयुक्त शिक्षक के न मिलने से अभी तक यह कार्य नहीं हो सका है, यदि सभा किसी उपयुक्त शिक्षक का प्रबन्ध कर दे तो बोलपुर में शीघ्र ही हिन्दी भी पढ़ाई जाने लगे। प्रायः ४५ मिनट तक सभा में रह कर और सभा के कार्यों से सन्तुष्ट होकर आप ने प्रस्थान किया।

प्रगति वा उन्नति उसका नियम और निदान।

उन्नति क्या है इसकी भावना स्पष्ट और निर्दिष्ट नहीं है। 'उन्नति' शब्द से लोग भिन्न भिन्न भाव ग्रहण करते हैं। कभी तो उन्नति से केवल बढ़ती का अर्थ लिया जाता है—जैसे, जाति की उन्नति जिसका अर्थ है उसकी जन-संख्या की या उसके अधिकृत स्थान के विस्तार की वृद्धि; कृषि वा व्यापार की उन्नति कहने से कभी तो उत्पादित या प्रस्तुत द्रव्यों के परिमाण की ओर लक्ष्य रहता है, कभी उनके गुण वा उत्तमता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की ओर और कभी उत्पन्न या प्रस्तुत करने के प्रयोगों और साधनों की ओर। ज्ञान और धर्म की उन्नति जब हम कहते हैं तब हमारा तात्पर्य्य लोगों की दशा और प्रवृत्ति से होता है। विद्या और कला कौशल की उन्नति से मतलब होता है मनुष्यों के कर्म और चिन्तन का फल। इसी प्रकार और भी समझिए। उन्नति शब्द से भिन्न भिन्न भाव ही नहीं ग्रहण किए जाते प्रायः अयुक्त और भ्रान्त अर्थ भी समझे जाते हैं। लोग उन्नति के यथार्थ तत्व की ओर नहीं देखते उसके परिणामों को देखते हैं। सयाने होने पर बच्चे की या सभ्य होने पर जंगली की बुद्धि की जो उन्नति देखी जाती है उसे लोग अधिक बातों की जानकारी और अधिक नियमों का बोध समझते हैं, पर वास्तव में वह उन्नति अंतःकरण का एक ऐसा वह रूपान्तर है जिसका प्रमाण अधिक जानकारी या बोध के द्वारा मिलता है। इसी प्रकार सामाजिक उन्नति लोग वहाँ समझते हैं जहाँ आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अधिक द्रव्य प्रस्तुत किए जायँ, धन और प्राण की अधिक रक्षा हो, कार्य्य करने की अधिक स्वच्छन्दता हो। पर सच पूछिए तो सामाजिक उन्नति समाज-शरीर के ढाँचे का वह परिवर्तन है जिससे ऊपर लिखे परिणाम उपस्थित होते हैं।

उन्नति का विवेचन मनुष्य अपने उद्देश्यों की पूर्त्ति का विचार रख कर करते हैं। उन्हीं परिवर्त्तनों को लोग उन्नति समझते हैं जिनसे मनुष्य के सुख की वृद्धि होती है। पर उन्नति का यथार्थ तत्व समझने के लिए हमें चाहिए कि हम अपने हानि-लाभ का विचार अलग रखें। जैसे, आदि से लेकर अब तक इस भूपिंड की बनावट में जो जो परिवर्त्तन उत्तरोत्तर होते आए हैं उनका विचार हमें इस दृष्टि से नहीं करना चाहिए कि वे किस प्रकार मनुष्यों के निवास के अनुकूल होते गए हैं बल्कि हमें उन परिवर्त्तनों का सामान्य लक्षण देखना चाहिए-इस बात का पता लगाना चाहिए कि ये परिवर्त्तन किस प्राकृतिक नियम के अनुसार होते आए हैं। इसी प्रकार और सब जगह भी करना चाहिए। हमें हानि लाभ आदि फलों का सब विचार छोड़ यह देखना चाहिए कि वस्तुतः उन्नति है क्या।

गर्भाधान से उत्तरोत्तर आगे प्राणियों के शरीर का जो उन्नति-विधान होता है उसके मूल-तत्व का पता जर्मन तत्त्वज्ञों ने लगाया। उन्होंने अपने अनुसन्धानों द्वारा यह सिद्ध कर दिया कि बीज से वृक्ष होने में, गर्भाण्ड से पूरे आकार का प्राणी होने में जिस परिवर्त्तन-परम्परा का विधान होता है वह आकार की एकरूपता से उत्तरोत्तर अनेकरूपता की ओर गति है। आदि रूप में बीज या गर्भाण्ड यहाँ से वहाँ तक सर्वत्र एक रूप होता है—उसका ढाँचा भी सर्वत्र एक सा होता है और रासायनिक उपादान भी। उन्नति का पहला विधान है उसका दो भिन्न भागों में विभक्त होना। इसी को शरीरव्यापार-विज्ञान में भेद-विधान कहते हैं। फिर इन दोनों भागों में से प्रत्येक भाग में भी भेद पड़ता है और वह दो भागों में विभक्त होता है। इस प्रकार यह भेद-विधान बढ़ते हुए भ्रूण के प्रत्येक भाग में उत्तरोत्तर होता जाता है। यहाँ तक कि होते होते अन्त में तंतुओं और अवयवों की वह जटिल योजना होती है जिसे पूरा शरीर कहते हैं। यही विधान सजीव-सृष्टि भर में—क्या जन्तु में क्या पौधे में—होता है। अस्तु, यह निर्विवाद है कि शरीरपिंड का विकाश या उन्नति-विधान एक रूपता का अनेक रूपता में परिवर्त्तन है।

अब मेरा यहाँ पर यह कहना है कि शरीर-पिंड के उन्नति विधान का यह नियम उन्नति-विधान मात्र का सर्वव्यापक नियम है। चाहे भूपिंड की उन्नति लीजिए, चाहे उस पर की सजीव-सृष्टि की, समाज की, शासन-व्यवस्था की, व्यापार की, विज्ञान की, कला कौशल की,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषा की, साहित्य की, किसी चीज़ की भी, सर्वत्र उत्तरोत्तर भेद-विधान द्वारा सामान्य की भेदविशिष्ट में परिणति का यह नियम ठीक घटता है। जगदुत्पत्ति के आदि विधानों से लेकर आज कल की सभ्यता के नाना विधानों तक यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो यही सिद्ध होगा कि एकरूपता की अनेकरूपता में परिणति का नाम ही उन्नति है।

यदि ज्योतिष्क-नीहारिका से जगत् की उत्पत्ति का सिद्धान्त ठीक है तो इस सौरचक्र की उत्पत्ति में ही उक्त नियम का दृष्टांत मिलता है। वह द्रव्य या उपादान जिससे सूर्य्य और ग्रह उपग्रह बने हैं कभी अंतरिक्ष के बीच अत्यन्त सूक्ष्म रूप में बहुत दूर तक व्याप्त था। धीरे धीरे अणुओं के आकर्षण से उसका आकुंचन आरंभ हुआ। आदिम अवस्था में सौरचक्र अपार स्थान में प्रसरित और सर्वत्र एकरूप द्रव्य था। उसका घनत्व, उसका ताप आदि सर्वत्र समान था। आकुंचन की वृद्धि से पहला परिवर्त्तन तो यह हुआ कि उसके पिंड के अंतर्भाग और बहिर्भाग के घनत्व और ताप में भेद पड़ा। बहिर्भाग के क्रमशः भीतर की ओर सिकुड़ने से उस गति का प्रादुर्भाव हुआ जो केन्द्र के चारों ओर परिक्रमा के रूप में परिणत हुई। ये भेद विधान उत्तरोत्तर बढ़ते गए यहाँ तक कि सूर्य्य, ग्रहों और उपग्रहों की वह व्यवस्था हुई जिसे हम सौरचक्र कहते हैं। इस सौरचक्र के अंतर्गत भिन्न भिन्न पिंडों की दूरी, आकृति, गति आदि में परस्पर कितना भेद है सब लोग जानते हैं। अनंतभेदविशिष्ट इस सौरचक्र का मिलान यदि हम उस एकरस आदिम ज्योतिष्क नीहारिका से करें जिससे वह वर्त्तमान रूप में परिणत हुआ है तो कितना अंतर पाया जायगा।

ज्योतिष्क-नीहारिका की बात तो एक मत-विशेष की बात हुई। दूसरा दृष्टांत लीजिए जिस के विषय में कोई मतभेद नहीं है। भौतिक विज्ञानी और भूगर्भ-वेत्ता दोनो यह मानते हैं कि पृथ्वी कभी पिघले हुए द्रव-द्रव्य के पिंड के रूप में थी। इस अवस्था में वह सर्वत्र एकरूप थी। उसका घनत्व भी प्रायः सर्वत्र समान था और ताप भी। वह चारो ओर एक ऐसे वायव्य द्रव्य से वेष्टित थी जिसमें जल, वायु आदि की योजना करनेवाले तत्त्व थे। ज्वलन्त द्रवपिंड के ताप का ज्यों ज्यों विसर्जन होता गया वह ऊपर से ठंढा पड़ता गया यहाँ तक कि उसका ऊपरी तल पपड़ी के रूप में जम कर ठोस हो गया। उस पिंड की एकरूपता तो इस पपड़ी के जमते ही जाती रही, फिर ऊपरी तल जब और अधिक ठंढा पड़ा तब उसके ऊपर की भाप जम कर जल के रूप में हुई। इस प्रकार और भी भेद बढ़े और अनेकरूपता आई। यह जमाव ठंढे स्थानों में अधिक हुआ। अतः उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव का भेद प्रकट हुआ। फिर पृथ्वी के नाना स्तर ज्यों ज्यों बनते गए अनेकरूपता आती गई। जल के भीतर जम कर बनी हुई चट्टानों के आकार भी भिन्न भिन्न स्थानों पर भिन्न भिन्न होते गए। भूगर्भस्थ ताप के प्रभाव से पिघले हुए द्रव्यों के जमने से जो चट्टानें बनीं वे और ही ढंग की हुईं। इस ताप के द्वारा और भी अनेक प्रकार के भेद पड़ते गए, चट्टानें कहीं ऊपर को उभरीं, कहीं नीचे को धँसी, कहीं कहीं धातुओं की खानें बनीं। पृथ्वी का तल कहीं ऊँचा हुआ और कहीं नीचा। यहाँ तक कि आज पृथ्वी के तल का कोई भाग दूसरे भाग के समान नहीं है। शीतोष्ण के अनुसार भिन्न भिन्न स्थानों की प्राकृतिक दशा में भी बहुत से अंतर पड़े। कुछ भाग सूर्य्य के अधिक सामने पड़ते थे कुछ कम। पृथ्वी का तल ज्यों ज्यों ठंढा होकर जमता गया त्यों त्यों ये भेद और भी बढ़ते गए। कहीं बर्फ़ ही बर्फ़ है, कहीं तपती हुई भूमि है। तल की उँचाई निचाई के हिसाब से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी शीतोष्ण के भेद हुए। जल और स्थल के जो विभाग हुए वे भी समान नहीं। सारांश यह कि इस पृथ्वी पर कहीं कुछ हुआ कहीं कुछ। पर जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है आदिम अवस्था में यह सर्वत्र समान और एकरस द्रव्य का पिंड थी। काल पाकर ही इसमें नाना भेद प्रकट हुए हैं—अर्थात् इसकी उन्नति हुई है।

अब हम पौधों और प्राणियों की ओर आते हैं। यह बात तो सिद्ध हो चुकी है कि जन्तुओं और पौधों के जो ये असंख्य ढाँचे दिखाई पड़ते हैं वे एक ही सादे ढाँचे से निकले हैं पर इस बात को सिद्ध करने के लिए हमारे पास बहुत प्रमाण नहीं हैं कि अतीत कल्प के जो पौधे और जन्तु थे उनके शरीर का प्रत्येक भाग दूसरे भाग से उतना भिन्न नहीं था जितना आज कल के पौधों और जन्तुओं का है। इसी प्रकार हम इस बात के पूरे प्रमाण भी नहीं उपस्थित कर सकते कि आज कल पौधों और जन्तुओं के जितने अधिक भेद पाए जाते हैं उतने प्राचीन कल्प में नहीं थे। बात यह है कि भूगर्भ के भीतर अतीत युग के जो स्तर मिलते हैं काल पा कर उनमें भी अनेक परिवर्त्तन होते आए हैं। भूगर्भस्थ ताप द्वारा कहीं २ जमी हुई चट्टानें पिघल कर दूसरा रूप धारण कर लेती हैं। इसके अतिरिक्त भूगर्भ के बीच हमारी पहुँच भी बहुत कम है। पर जहाँ तक छानबीन की जा चुकी है उसके अनुसार यह कहा जा सकता है कि सजीव सृष्टि में इतने अधिक भेद जो आज दिखाई पड़ते हैं वे पृथ्वी के अर्वाचीन कल्पों में हुए हैं। दृष्टांत के लिए रीढ़वाले जंतुओं को लीजिए। भूगर्भ के भीतर सब से प्राचीन रीढ़वाले जन्तु का जो पंजरावशेष मिला है वह मछली का है। इससे हम मछली को रीढ़वाले जंतुओं में आदिम कह सकते हैं। इस मत्स्य जाति के जीवों के ढाँचे परस्पर उतने भिन्न नहीं होते। अब मछली से पीछे होने वाले सरीसृप वर्ग को देखिए तो उसमें एक दूसरे से अधिक भिन्न आकृति के अधिक जीव पाए जाँयगे जैसे, साँप, छिपकली, मगर, कछुआ। पक्षी और स्तन्य (दूध पिलाने वाले) जीव और भी पीछे हुए हैं। इनमें कितने अधिक भेद दिखाई देते हैं। इनमें स्तन्य जीवों को लीजिए। स्तन्य जीवों में सब से आदिम जंतुओं के जो अवशेष मिले हैं वे छोटे छोटे अजरायुज पिंडजों * के हैं। सब से पीछे उत्पन्न जीव मनुष्य है। स्तन्य जीवों के कितने अधिक भेद हैं और उनके ढाँचे एक दूसरे से कितने भिन्न हैं यह प्रत्यक्ष देखा जाता है। सादे ढाँचे के जीवों से जटिल ढाँचे के जीव बराबर उत्पन्न होते आए हैं। अस्तु, सजीव सृष्टि के विकाश में एकरूपता से अनेकरूपता की उत्पत्ति का सिद्धांत ठीक घटता है।

केवल मनुष्य को ही यदि लें तो हम देख सकते हैं कि जब से मनुष्य जाति की उत्पत्ति हुई तब से उसके ढाँचे आदि में नाना भेद पड़ते आए हैं। सभ्य जातियों के बीच इन भेदों की वृद्धि बहुत अधिक हुई है। असभ्य जंगली मनुष्यों के ढाँचे में जरायुज स्तन्य जीवों के सामान्य ढाँचे से उतनी अधिक विशेषताएँ नहीं दिखाई पड़ती जितनी सभ्य जातियों के ढाँचे में। आस्ट्रेलिया के आदिम निवासियों की टाँगें बहुत छोटी छोटी होती हैं। उन्हें देखने से चिंपाजी, गोरिल्ला, आदि बनमानुसों की ओर ध्यान जाता है जिनके अगले और पिछले पैरों की लंबाई आदि में विशेष भेद नहीं होता। पर सभ्य मनुष्यों की टाँगें लंबी और भारी होती हैं, उनके हाथ और पैर के ढाँचे में भी बहुत भेद

* इस वर्ग का एक जीव अब भी आस्ट्रेलिया में मिलता है और कँगारू कहलाता है। इनमें जरायु नहीं होता अतः बच्चे अच्छी तरह बनने के पहले ही उत्पन्न हो जाते हैं और माता उन्हें बहुत दिनों तक पेट के पास बनी हुई एक थैली में लिए रहती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता है। रीढ़वाले जंतुओं में उन्नति के चिह्न हैं रीढ़दंड के बीच अनेक विशेषताएँ जो बराबर उत्पन्न होती जाती हैं। उन्नत कोटि के जीवों में मस्तिष्क को ढांकनेवाली हड्डियाँ बड़ी होती हैं और जबड़ों आदि की हड्डियाँ छोटी यह बात और वनायुओं की अपेक्षा मनुष्य में अधिक पाई जाती है और मनुष्यों के बीच सभ्य जातियों में सब से अधिक। सभ्य मनुष्य के बहुत अधिक प्रकार के चेतन व्यापारों को देख यह मानना ही पड़ता है कि असभ्य मनुष्यों की अपेक्षा उसमें संवेदन सूत्रों का विधान अधिक जटिल और भेदविशिष्ट है। सभ्य जातियों के मस्तिष्क में जितने उभार और पेंच दिखाई पड़ते हैं उतने असभ्य जातियों के मस्तिष्क में नहीं। मनुष्य सब से अधिक उन्नत प्राणी हैं इससे मनुष्यों में एक दूसरे से बहुत ही अधिक भेद देखा जाता है। डील में, ढाँचे में, रंग में, विद्या में, बुद्धि में इसी प्रकार न जाने कितनी बातों में न जाने कितने भेद मनुष्यों के बीच हैं। भेद विधान की यही वृद्धि उन्नति है।

अब मनुष्य की सामाजिक उन्नति को लीजिए। सभ्यता की वृद्धि या किसी जाति की उन्नति में भी हम यही एकरूपता से अनेक रूपता की ओर गति का विधान पाते हैं। यह विधान बराबर चला जा रहा है। आदिम अवस्था में अब तक पड़े रहनेवाले असभ्य मनुष्यों का समाज केवल ऐसे व्यक्तियों का समूह होता है जिनके व्यापार और अधिकार समान होते हैं। यदि कोई भेद होता है तो स्त्री पुरुष का प्रत्येक मनुष्य योद्धा, अहेरी, मछुवाहा, कारीगर सब कुछ होता है। यही दशा आदिम काल में मनुष्य-समाज की सर्वत्र थी। फिर उन्नति के साथ साथ भेदों की नींव पड़ने लगी। जो सब से बलवान् हुआ वह शासक हुआ। उसका आदर्श सब मानने लगे। पर शासक होने पर भी बहुत काल तक वह और लोगों के समान ही रहता था। औरों की तरह वह भी अपने लिए आप शिकार करता, हथियार बनाता, घर उठाता, खेत जोतता तथा और सब काम करता था। फिर ज्यों ज्यों समाज समृद्ध होता गया राजा और प्रजा के आचार व्यवहार रहन सहन में भेद पड़ता गया। राज्य करने का अधिकार किसी कुल के हाथ में गया और वह राजकुल कहलाने लगा। जो राजा होता उसे अपने निर्वाह के लिए आप काम नहीं करना पड़ता था, दूसरे लोग उसका काम करते थे। शासन कार्य ज्यों ज्यों बढ़ता गया त्यों त्यों अनेक प्रकार के सहायकों के पद प्रतिष्ठित हुए—कोई मंत्री हुआ, कोई सेनापति, कोई न्यायाधीश।

शासक-वर्ग के साथ ही साथ प्रजावर्ग में भी अनेक प्रकार के भेदों की सृष्टि होती गई। पहले हर एक को हर एक काम करना पड़ता था। पीछे कार्य्यों का विभाग हो गया। जो हथियार औरों से अच्छा बनाता था वह हथियार ही बनाने लगा, जो घर अच्छा बनाता था वह घर ही बनाने का काम करने लगा। इस प्रकार अलग अलग पेशे स्थिर हुए जिनके अनुसार भारतवर्ष में भिन्न जातियों का विधान हुआ। भिन्न २ व्यवसायों के अवान्तर कार्य्य-विभाग हुए। जैसे घर बनाने में कोई ईंटे जोड़ने लगा, कोई लकड़ी चीरने लगा इत्यादि। यहाँ तक कि जब एक स्थान से दूसरे स्थान पर आने जाने के लिए सड़कों आदि के द्वारा अधिक सुबीते हो गए तब भिन्न भिन्न स्थानों में स्थिति के अनुकूल भिन्न २ व्यवसाय भी विशेष रूप से होने लगे। कहीं कपड़े अच्छे बनने लगे, कहीं जूते, कहीं हथियार। ने सारांश यह कि जहाँ असभ्य दशा में समाज के सब प्राणी समान-वृत्ति के थे वहाँ अनन्त कार्य्य-विभाग होते गए। एक से दूसरे की वृत्ति बहुत भिन्न होती गई। मनुष्य जाति के बीच परस्पर व्यवहार का विस्तार बराबर बढ़ता गया और एक देश के निवासियों के बीच एक प्रान्त के निवा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सियों के बीच, एक नगर के निवासियों के बीच यहाँ तक कि एक ही कारखाने में काम करनेवालों के बीच कार्य्य के अनुसार नाना भेद हो गए। जो मनुष्य पहले अपने अपने व्यापारों में सर्वथा समान थे वे उन्नत दशा को प्राप्त हो कर एक एक व्यवसाय को विशेष रूप से ग्रहण कर के भिन्न भिन्न वर्गों में बँट गए, फिर उन वर्गों के बीच भी विशेषताओं के विभाग द्वारा अनेक भेद हुए। इस प्रकार मनुष्य के सामाजिक जीवन की एकरूपता भंग हुई और उसके स्थान पर अनेकरूपता आती गई और बराबर बढ़ती जाती है।

एकरूपता से अनेकरूपता का सिद्धान्त जैसा समाज पर घटता है वैसा ही मनुष्य जाति की उन कृतियों पर भी जो उसके चिन्तन और श्रम के फल हैं। सब से पहले भाषा को ही लीजिए।

आदिम रूप में भाषा छोटे छोटे ध्वनि-खंडों के रूप में थी। एक ध्वनि वा धातु से पूरा भाव समझ लिया जाता था। पहले दो ही प्रकार के पद थे—नाम और आख्यात् अर्थात् संज्ञा और क्रिया। पीछे इनके भी भेद हुए। संज्ञा के भाववाचक, गुणवाचक आदि और क्रिया के सकर्मक अकर्मक आदि भेद हुए। इस प्रकार भेद बढ़ते गए और पुरुष, काल, वचन, लिंग आदि का विधान हुआ। एक ही धातु से निकले हुए शब्दों में अर्थभेद हुआ। पदों की योजना द्वारा यौगिक शब्दों की सृष्टि हुई। सारांश यह कि थोड़े से छोटे छोटे आदिम ध्वनिखंडों से काल पा कर लाखों शब्द बने जो एक दूसरे से अर्थ और रूप में भिन्न हुए। अस्तु, किसी एक भाषा के विकाश में हमें एकरूपता से अनेकरूपता की ओर गति स्पष्ट दिखाई पड़ती है पर भेदविधान की समाप्ति यहीं नहीं होती है। एक ही आदिम भाषा बोलने वालों के समूह भिन्न भिन्न देशों में जा कर बसते गए जिससे देश भेदसे एक ही आदिम भाषा से अनेक भाषाओं की सृष्टि हुई। उदाहरण के लिए आर्य्य-भाषाओं को ही लीजिए यह बात सिद्ध हो चुकी है कि हिंदुओं, पारसियों और यूरोपियनों के पूर्वज कभी एक ही स्थान पर रहते थे और एक ही आदिम आर्य्य भाषा बोलते थे। उसी एक आदिम भाषा से संस्कृत, फारसी, यूनानी, लैटिन तथा अंगरेजी, फरासीसी, जर्मन आदि योरप की सारी आधुनिक भाषाएँ निकलीं। अस्तु भाषा के विकाश में भी एकरूपता की अनेकरूपता में परिणति का नियम दिखाई देता है।

अब लेखन-कला को लीजिए। संसार भर की लिपियों का चित्र कला और मूर्त्ति निर्माण से घनिष्ट संबंध है। आजकल भी आस्ट्रेलिया और अफ्रिका की बहुत सी जंगली जातियाँ गुफाओं की दीवारों पर पूज्य मनुष्यों देवताओं और पशुओं आदि के भद्दे चित्र बनाया करती हैं। मिस्र के प्राचीन निवासी देवमंदिरों और राजप्रासादों में अनेक प्रकार के चित्र बनाया करते थे। इसी चित्र-रचना से क्रमशः चित्रलिपि की उत्पत्ति हुई जिसमें जिन पदार्थों को व्यक्त करना होता था उनके सादे आकार बना दिए जाते थे। मिस्र देश में इस चित्रलिपि का प्रचार बहुत प्राचीन काल से था। इसके नमूने वहां अब तक पाए जाते हैं। यूरोपवाले जब उत्तरी अमेरिका में पहले पहल पहुँचे थे तब वहां के आदिम निवासी भी चित्रलिपि का व्यवहार करते थे। धीरे धीरे यह व्यवस्था हुई कि चित्रलेख में जो आकृतियाँ बार २ आती थीं, जिनका बहुत अधिक काम पड़ता था वे संक्षिप्त होने लगीं यहाँ तक कि अंत में उनका उन पदार्थों से बहुत कम सादृश्य रह गया जिन्हें वे प्रदर्शित करती थीं। इस प्रकार संकेतात्मक लिपियों का विकाश हुआ। मिस्र के बहुत से प्राचीन लेखों में चित्रलिपि और संकेतलिपि का साथ ही साथ व्यवहार मिलता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभा का कार्य-विवरण।

प्रबंधकारिणी समिति।

शनिवार ता० २९ मार्च १९१९ संध्या के ५½ बजे स्थान सभा भवन।

(१) ता० १४ जनवरी १९१९ तथा ३ मार्च १९१९ के कार्य-विवरण पढ़े गए और स्वीकृत हुए।

(२) ता० १ दिसंबर १९१८ से ता: २८ फरवरी १९१९ तक के आय व्यय का निम्नलिखित हिसाब उपस्थित किया गया।

आय का ब्योरा।

	साधारण विभाग			पुस्तक विभाग		
गत मास की बचत	२१००	१३	१			
सभासदों का चंदा	११९२	३	०			
नागरी प्रचार	३	०	०			
फुटकर आय	२३	११	०			
पुस्तकालय	२२७	१२	०			
अमानत	३४६	१	०			
विशेष सहायता	११	०	०			
पुस्तकों की बिक्री	०	०	०	२३६	११	३
पृथ्वीराजरासो की बिक्री	०	०	०	१०२	०	०
हिंदी कोश	०	०	०	७४६	१३	०
पुस्तकों के लिये पुरस्कार	०	०	०	०	८	९
मनोरंजन पुस्तकमाला	०	०	०	११४१	८	९
भारतेंदु ग्रंथावली	०	०	०	४७	१३	६
मुंशी देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला	०	०	०	३३९	०	६
	३९०४	८	१	२६१४	७	३
				६५११॥≡)।		

व्यय का ब्योरा।

	साधारण विभाग			पुस्तक विभाग		
कार्यकर्ताओं का वेतन	३३२	१४	९	३१	१५	९
मनोरंजन पुस्तकमाला				७१९	८	९
छपाई	६२७	११	०	०	०	०
डाक व्यय	४६	१४	६	०	०	०
नागरीप्रचार	२४	१२	०			
पुस्तकालय	८६	१	३			
फुटकर व्यय	२३	११	०			
हिंदी कोश	०	०	०	७९४	९	०
अमानत	४९१	८	९	०	०	०
मुं० देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला	०	०	०	५०	८	०
हिंदी पुस्तकों की खोज	१५८	०	६			
मरम्मत	७१	११	६			
पुस्तकों की छपाई	०	०	०	१००		
भारतेंदु ग्रंथावली	०	०	०	१५८	६	०
जोड़	१८६३	५	३	१८६३	१५	६
कुल जोड़				३७२७।)॥।		
बचत				२७९१॥=)७		
				६५१८॥।≡)४		

बचत का ब्योरा।

२७०।)८	रोकड़ सभा
९=३॥।-)१	बनारस बंक चलता खाता
१०००)	फिक्स्ड डिपाजिट
२३९=)४	पोस्टल सेविंग बंक (स्थायी कोश)
२५०)	बनारस बंक सेविंग बंक (भवन निर्माण)
१०८=)॥।	बनारस बंक सेविंग बंक
२७९१॥=)७	

निश्चय हुआ कि (१) आडिटर महाशय से पूछा जाय कि वे सभा का इस वर्ष हिसाब कब कब जाँच देंगे (२) मुंशी देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला का हिसाब बनारस बंक के सेविंग बंक में जुदा खोला जाय (३) मेहता जोधसिंह पुरस्कार का १०००) रु० तथा अन्य ऐसी ही रकमें बचत में न दिखलाई जांय। वरन् ये दान में दिखलाई जाया करें और (४) १ दिसंबर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९१८ से २८ फरवरी १९१९ तक का ऊपर लिखा हुआ हिसाब स्वीकार किया जाय।

(३) पंडित रामनारायण मिश्र का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि अंग्रेज़ी स्कूलों और कन्या पाठशालाओं में हस्तलिपि परीक्षा के लिये सभा पुरस्कार नियत करे। निश्चय हुआ कि इस संबंध में विचार कर संमति देने के लिये निम्नलिखित सज्जनों की उपसमिति बना दी जाय। बाबू श्यामसुंदर दास बी० ए० पंडित गोविंदराव जोगलेकर और पंडित रामनारायण मिश्र (संयोजक)

(४) कार्माइकल लाइब्रेरी का १३ दिसंबर का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने सभा द्वारा प्रकाशित ५०॥।-)॥ की पुस्तकें बिना मूल्य मांगी थीं।

निश्चय हुआ कि उन्होंने जिन पुस्तकों के लिये लिखा है उनमें से हिंदी शब्द सागर और मनोरंजन पुस्तकमाला को छोड़ कर अन्य पुस्तकें बिना मूल्य दी जाँय।

(५) पुस्तकालय से खोई हुई पुस्तकों तथा पुस्तकालय के निरीक्षक ने गत वर्ष जिन त्रुटियों का उल्लेख अपनी रिपोर्ट में किया था उनके संबंध में पुस्तकाध्यक्ष का उत्तर निरीक्षक पत्र के सहित उपस्थित किया गया।

निश्चय हुआ कि पंडित कन्हैयालाल पुस्तकाध्यक्ष कल से एक मास तक अथवा इसके उपरांत सभा का इस संबंध में जब तक कोई निश्चय न हो तब तक के लिये मोअत्तल किए जाँय। बाबू देवनंदन सिंह उनसे कुल पुस्तकालय का चार्ज ले लें और रिपोर्ट करें कि कौन कौन पुस्तकें नहीं हैं। पंडित कन्हैयालाल को एक मास का समय दिया जाय कि वे इसके भीतर खोई हुई पुस्तकें प्रस्तुत करें और जब तक वे ऐसा न करें तब तक इस मास का वेतन उन्हें न दिया जाय और एक मास के उपरांत यह विषय प्रबंधकारिणी समिति में पुनः विचारार्थ उपस्थित किया जाय।

(६) बाबू हरिहरनाथ का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि सभा कार्यालय के द्वार के समीप एक नोटिस बोर्ड रक्खा जाय जिस पर सभा के कार्य-विवरण, अधिवेशनों की सूचना, कार्यकर्त्ताओं की नामावली वार्षिक रिपोर्ट आदि लगाई जाया करें।

निश्चय हुआ कि एक नोटिस बोर्ड रक्खा जाय जिस पर सभा की नोटिस रहा करें। सभा की वार्षिक रिपोर्ट पहले की भांति पुस्तकालय के टेबल पर रक्खी जाया करे।

(७) बाबू हरिहर नाथ का यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि सभा पंडित रामावतार पांडेय को आनरेरी सभासद चुनने के संबंध में पुनः विचार करे।

निश्चय हुआ कि पं० रामावतार पांडेय जी को इस प्रस्ताव की सूचना देकर लिखा जाय कि उनके यहाँ सभा का तीन वर्षों का जो चंदा बाकी है उसे वे भेज दें और यह भी सूचित करें कि यदि सभा उन्हें अपना आनरेरी सभासद चुने तो क्या वे स्वीकार करेंगे।

(८) बाबू श्यामसुंदरदास जी ने प्रस्ताव किया कि रेवरेंड ई० ग्रीव्स सभा के आनरेरी सभासद चुने जांय।

निश्चय हुआ कि प्रबंधकारिणी समिति इस प्रस्ताव को स्वीकार करती है और यह आगामी साधारण सभा में यह स्वीकृति के लिये उपस्थित किया जाय।

(९) बड़ौदा के एजुकेशन कमिश्नर का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि सभा उनसे हिंदी शब्दसागर का पेकिंग और रेलभाड़ा न लिया करे।

निश्चय हुआ कि उनसे पेकिंग न लिया जाय परंतु रेलभाड़ा सभा नहीं दे सकती।

(१०) पंडित गंगाप्रसाद अग्निहोत्री और पं० बालमुकुंद त्रिपाठी का यह प्रस्ताव उपस्थित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया गया कि हिंदी व्याकरण के संशोधनार्थ सभा ने जो समिति बनाई है उसमें प्रत्येक प्रांत के एक - विद्वान् रक्खे जाँय।

निश्चय हुआ कि उनसे पूछा जाय कि जो सज्जन उपसमिति के सदस्य चुने गए हैं उनके अतिरिक्त और किन सज्जनों को वे चुनना चाहते हैं।

(११) बाबू शिवप्रसाद गुप्त के ये प्रस्ताव उपस्थित किये गए कि (क) सभा में सब कागज यथा स्वदेशी बर्ते जांय और अन्य वस्तुएँ भी यथा-शक्य स्वदेशी बर्ती जांय। (ख) सभा का हिसाब महाजनी ढंग से रक्खा जाय और रुपया आना पाई औलैया देकर लिखा जाय (ग) वेतनभोगी कर्मचारियों के लिये प्रोविडेण्ट फंड स्थापित किया जाय (घ) साहित्यसंबंधी कार्य के लिये (१० रु० से १००) मासिक वेतनपर एक सहायक मंत्री नियत किया जाय।

निश्चय हुआ कि (क) यथा शक्य सभी वस्तुएँ स्वदेशी बर्ती जांय (ख) यह स्वीकार किया जाय। (ग) यद्यपि सभा इसे उचित और आवश्यक समझती है पर धनाभाव से वह इस समय इसे नहीं कर सकती (घ) सूर्यकुमारी पुस्तकमाला और देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला की कार्य प्रणाली के लिये जो उपसमिति बनाई गई है उस के पास यह प्रस्ताव भेजा जाय।

(१२) सभा के दो क्लार्कों का प्रार्थनापत्र उपस्थित किया गया कि कम वेतन पाने वाले कर्मचारियों को सभा महँगी के लिये कुछ भत्ता दे। साथ ही वेतनवृद्धि के संबंध में काशी दफ्तरी का प्रार्थनापत्र भी उपस्थित किया गया।

निश्चय हुआ कि इस संबंध में मंत्री जी बजेट देख कर अपनी सम्मति प्रधान महोदय को दें और उन्हें अधिकार दिया जाय कि वे उस पर जैसा उचित समझें करें।

(१३) सुखनंदन चपरासी का प्रार्थनापत्र उपस्थित किया गया कि उसे २९ दिन की प्रिविलेज छुट्टी का आधा वेतन दिया जाय।

निश्चय हुआ कि मंत्री की सम्मति के सहित यह आगामी अधिवेशन में उपस्थित किया जाय।

(१४) बाबू रामचंद्र वर्म्मा का पत्र उपस्थित किया गया कि बड़े लाट साहब की काउन्सिल में भारत सरकार के अर्थसचिव ने कहा है कि नोटों का नया ढाँचा या छाप बनाने का विषय सरकार के विचाराधीन है। अतः सभा उद्योग करे कि इन नए नोटों में नागरी को अवश्य स्थान दिया जाय।

निश्चय हुआ कि इस संबंध में अर्थ संचिव की स्पीच तथा अन्य पत्र बाबू गौरीशंकर प्रसाद जी के पास भेजे जांय और उनसे प्रार्थना की जाय कि वे कृपापूर्वक यह सम्मति दें कि इस संबंध में सभा का क्या कर्तव्य है।

(१५) मुंशी देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला के लिए बाबू जगन्मोहन वर्म्मा का फाहियान की यात्रा का अनुवाद बाबू श्याम सुन्दरदास जी के १ मार्च के पत्र के सहित उपस्थित किया गया।

निश्चय हुआ कि बाबू जगन्मोहन वर्मा का अनुवाद स्वीकार किया जाय और उन्हें उसके लिये २००) रु० दिया जाय। बाबू श्यामसुन्दरदास जी से प्रार्थना की जाय कि वे कृपा पूर्वक यह सम्मति दें कि मुंशी देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला किस आकार में छपे और बाबू बालमुकुन्द वर्मा इसकी जिल्द बंदी के लिये प्रेसों से इस्टिमेट लेकर उपस्थित करें।

(१६) बाबू श्यामसुन्दरदास के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ कि (History of ancient Shipping) के ग्रंथकार से प्रार्थना की जाय कि वे कृपा पूर्वक सभा को इसका हिंदी अनुवाद प्रकाशित करने की अनुमति दें और तब सभा पण्डित शिवनारायण शुक्ल का अनुवाद प्रकाशित करे अथवा इस पुस्तक का दूसरा अनुवाद करावे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१७) श्रीयुत लल्लू जी भाई नारायण जी देसाई का पत्र उपस्थित किया गया कि सभा उनकी "रामवियोग" और "गुप्त पांडव" नामक गुजराती पुस्तकों का हिंदी अनुवाद प्रकाशित करे।

निश्चय हुआ कि इन पुस्तकों के संबंध में पं० जीवनशंकर याज्ञिक से सम्मति माँगी जाय।

(१८) बाबू श्यामसुंदरदास जी के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ कि हिंदी पुस्तकों की खोज में जो उपयोगी ग्रंथ मिलें उनकी नकल करने के लिये सभा उचित वेतन पर एक लेखक नियत करे और पं० रामनारायण मिश्र से प्रार्थना की जाय कि वे इस कार्य के लिये किसी ऐसे व्यक्ति को दें जिस के अक्षर बहुत सुन्दर होते हों तथा जो शुद्ध लिख सकता हो। यह भी निश्चय हुआ कि इन ग्रंथों की नकल काश्मीरी कागज पर कराई जाय जिसके प्राप्त करने का प्रबंध बाबू श्यामसुंदरदास जी कृपा कर कर दें।

(१९) मंत्री ने सूचना दी कि सभा भवन के उत्तर ओर मैदागिन बगीचे की ११३२० स्क्वेयर फीट जमीन लेने के लिये उन्होंने म्युनिसिपल बोर्ड को लिखा था और जिस हिसाब से सभा भवन की जमीन का मूल्य दिया गया था उसी हिसाब से इसका मूल्य ११८४) रु० देने को लिखा था परंतु म्युनिसिपेलटी के चेयरमैन उसका मूल्य १०) वर्ग गज के हिसाब से माँगते हैं।

निश्चय हुआ कि म्युनिसिपल बोर्ड से प्रार्थना की जाय कि यह जमीन वह सभा को बिना मूल्य दे दे अथवा नाम मात्र के लिये सभा जो मूल्य दे रही है उसे स्वीकार करे।

(२०) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

साधारण सभा

शनिवार तारीख २९ मार्च १९१९ सन्ध्या के ५ बजे। स्थान—सभा भवन।

(१) गत अधिवेशन (ता० २२ फरवरी १९१९) का कार्य-विवरण उपस्थित किया गया और स्वीकृत हुआ।

(२) सभासद होने के लिये निम्नलिखित सज्जनों के फार्म उपस्थित किए गए:—

१—बाबू रामप्रसाद अग्रवाल, ठि० लाला हरदयाल ईश्वरदास आढ़ती कासगंज, जि० एटा ५)

२—पण्डित काशीनाथ धुले शर्म्मा, श्री भैरव बिहारी कार्यालय मथुरा १॥)

३—बाबू नवरत्नलाल मुख्तार, बाँसगांव, गोरखपुर १॥)

४—बाबू हरिहर प्रसाद बी० ए०, एल० एल० बी० वकील मुन्सिफी, बाँसगांव, जि० गोरखपुर ५)

५—बाबू शिवनारायण सिंह जमींदार तरसारा पो० इगलास, अलीगढ़ ५)

६—बाबू गुराँदित्ता खन्ना, कूचा अदुवामल चौक लोहगढ़, अमृतसर १॥)

निश्चय हुआ कि ये सज्जन सभासद चुने जायँ।

(३) निम्नलिखित सभासदों के इस्तीफे उपस्थित किए गए और स्वीकृत हुए:—

१—पण्डित रामकृष्ण राव कुदले, पंचगंगा, काशी।

२—बाबू मदनगोपाल डागा, बीकानेर।

३—बाबू बिन्द्राबनलाल।

(४) नवम हिन्दी साहित्य सम्मेलन के लिये निम्न लिखित प्रतिनिधि चुने गए—

१—बाबू शिवप्रसाद गुप्त, काशी।

२—बाबू गौरीशंकर प्रसाद जी बी० ए० एल० एल० बी० काशी।

३—बाबू रामचन्द्र बर्म्मा, काशी।

४—बाबू श्रीप्रकाश बैरिस्टर, काशी।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें।

अजरावट	मूल्य	≡)	कौरीसुधार	„	॥)
अनन्यग्रंथावली	„	≡)	संक्षेप लेखप्रणाली-	„	॥)
इन्द्रावती	„	।॥)	हम्मीर रासो	„	१)
कविवर बिहारीलाल—	„	=)	हरिश्चन्द्र—राजा हरिश्चन्द्र का चरित्र	„	=)
कालबोध	„	≡)	सिंधदेश का इतिहास	„	।)
चित्रावली--	„	२)	दादुदयाल की बानी	„	।॥)
छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय-	„	१)	दादुदयाल के शब्द	„	॥)
परिचर्याप्रणाली-रोगों की शुश्रूषा विधि।	„	।)	हिन्दी लेकचर	„	-)
प्राचीनलेखमणिमाला	„	१)	यूनान का इतिहास	„	।॥)
पृथ्वीराजरासो-२२ खण्ड	मूल्य	२०) रु०	स्त्रियों के रोग	„	१)
प्रबोधचन्द्रिका	„	।=)	भगवद्गीता (हिन्दी अनुवाद)	„	।-)
विरहलीला-कवि आनंदघन कृत।	„	=)	आर्य प्राकृत व्याकरण	„	।)
भारतेन्दुचरित्र-	„	॥)	छत्र प्रकाश-लाल कवि कृत	„	।॥)
भूषण ग्रंथावली-	„	।॥)	सुघड़दर्जिन-सिलाई कटाई का सचित्र वर्णन		॥)
हिन्दी भाषा के सामयिक पत्रों को इतिहास	„	।)	सत्यहरिश्चन्द्र-(भारततेन्दु रचित)	मूल्य	=)॥
जंगनामा	„	।॥)	भारतदुर्दशा	„	-)।
समालोचनादर्श	„	≡)	बोपदेव का जीवनचरित्र	„	≡)
समालोचना	„	=)	शेख मोहम्मद बाबा का जीवनचरित्र	„	-)
महाराणाप्रताप-बाबू राधाकृष्ण दास जी कृत		॥)	लेखक और नागरी लेखक	„	≡)
श्रीराधाकृष्णदास (जीवनी)	„	॥)	आयुर्वेद निदान समीक्षा	„	≡)
युवती योग्यता	„	=)	भाषा-समस्त भाषाओं का संक्षिप्त विवरण	„	≡)॥
यूरोपीयदर्शन-	„	॥)	होरेशियस और मनुष्य की सात अवस्थाएँ	„	≡)
राजविलास-	„	१)	भर्तृहरि निर्वेद नाटक	„	।)
राज्यप्रबंधशिक्षा	„	॥)	ललित शिक्षावली छोटी छोटी कहानियाँ	„	।)

मिलने का पता--मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा बनारस सिटी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०० पुस्तकों की

मनोरंजन पुस्तकमाला।

की नई पुस्तक

'जरमनी का विकाश'।

इस पुस्तकमाला में सब प्रकार के विषय रहेंगे—काव्य, नाटक, उपन्यास, दर्शन, विज्ञान, इतिहास, जीवनचरित, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, वनस्पतिशास्त्र, शासनशास्त्र इत्यादि इत्यादि। प्राचीन कवियोंके ग्रंथरत्नों से चुने हुए उत्तम संग्रह भी निकलते हैं। पुस्तकें इस चित्ताकर्षक रूप में लिखी जाती हैं कि पाठक अपने मनोरंजन के साथ ही साथ विना प्रयास अनेक बातों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। अब तक ये पुस्तकें निकल चुकी हैं।

१ आदर्श-जीवन—लेखक रामचंद्र शुक्ल।
२ आत्मोद्धार—लेखक रामचंद्र वर्म्मा।
३ गुरु गोविंदसिंह—लेखक वेणीप्रसाद।
४ आदर्श हिंदू १ भाग—लेखक मेहता लज्जाराम शर्म्मा।
५ ,, २ ,, ,,
६ ,, ३ ,, ,,
७ राणा जंगबहादुर—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा।
८ भीष्म पितामह—लेखक चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्म्मा।
९ जीवन के आनंद—लेखक गणपत जानकीराम दूबे बी. ए.।
१० भौतिक-विज्ञान—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी।
११ लालचीन—लेखक व्रजनंदन सहाय।
१२ कबीरवचनावली—संग्रहकर्त्ता अयोध्यासिंह उपाध्याय।
१३ महादेव गोविंद रानडे—लेखक रामनारायण मिश्र बी. ए.।
१४ बुद्धदेव—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा।
१५ मितव्यय—लेखक रामचंद्र वर्म्मा।
१ सिक्खों का उत्थान और पतन—लेखक नंदकुमार देव शर्म्मा।
१७ वीरमणि—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम. ए. और शुकदेवबिहारी मिश्र बी. ए.।
१८ नेपोलियन बोनापार्ट—लेखक राधामोहन गोकुलजी।
१९ शासनपद्धति—लेखक प्राणनाथ विद्यालंकार।
२० हिंदुस्तान, पहला खंड—लेखक दयाचंद्र गोयलीय बी. ए.।
२१ ,, ,, दूसरा खंड— ,, ,, ,,
२२ महर्षि सुकरात—लेखक वेणीप्रसाद।
२३ ज्योतिर्विनोद—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी.।
२४ आत्मशिक्षण—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम. ए. और शुकदेव बिहारी मिश्र बी. ए.।
२५ सुंदरसार—संग्रहकर्त्ता पुरोहित हरिनारायण बी. ए.।
२६ जरमनी का विकाश—लेखक सूर्यकुमार वर्मा।

प्रत्येक पुस्तक का मूल्य १) है, समस्त ग्रंथमाला के स्थायी ग्राहकों से ।।।) लिया जाता है। डाकव्यय अलग है

मिलने का पता—

नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाग २३] [संख्या ११

नागरीप्रचारिणी पत्रिका।

मई १९१६

ना० प्र० प० ११ (२०)

सम्पादक-रामचन्द्र शुक्ल।

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल। बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल॥
करहु विलम्ब न भ्रात अब, उठहु मिटावहु सूल। निज भाषा उन्नति करहु, प्रथम जु सबको मूल॥
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार। सब देशन सों लै करहु, भाषा माँहि प्रचार॥
प्रचलित करहु जहान में, निज भाषा करि यत्न। राजकाज दरबार में, फैलावहु यह रत्न॥

भारतेंदु हरिश्चंद्र।

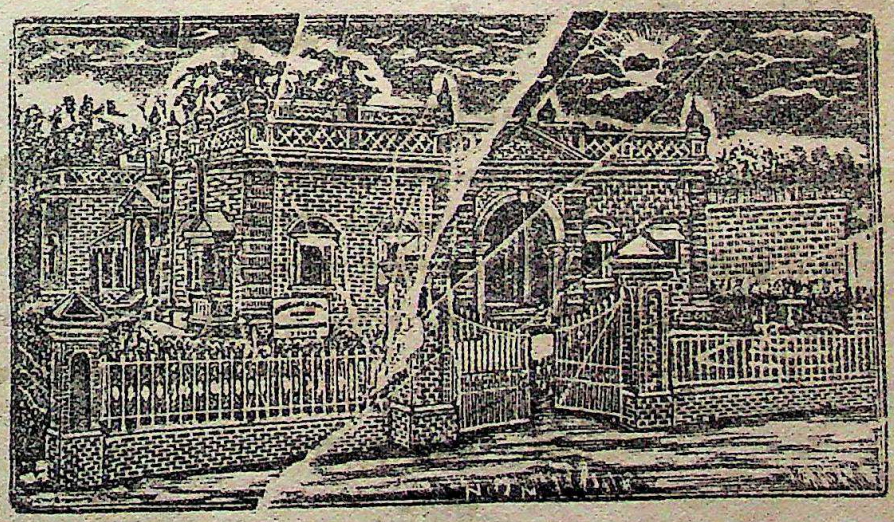

प्रति अंगरेज़ी मास में काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित।

गणपति कृष्ण गुर्जर द्वारा श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस, काशी में मुद्रित।

वार्षिक मूल्य १॥) प्रति संख्या ≈)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची ।

१—आनन्द विक्रम सम्वत् २४१
२—हिंदी-प्रचार में एक बाधा २४३
३—भारतीय प्राचीन लिपिमाला ... २४५
४—भारतवर्ष की दरिद्रता और उसका उपाय २४८
५—प्रगति वा उन्नति-उसका नियम और निदान २५३
६—फ्रेंच इतिहासकार गीज़ो २५५
७—पापनिधर और हिंदी २५७
८—सभा का कार्य-विवरण २५७

मुफ्त ! मुफ्त !! मुफ्त !!!

धन्वन्तरी ।

यह आयुर्वेदीय मासिक पत्र योग्य वैद्य, डाक्टर और हकीमों को बिना मूल्य भेजा जाता है, सर्वसाधारण को नहीं। मैनेजर, धन्वन्तरी, विजयगढ़, अलीगढ़ ।

पदक और पुरस्कार ।

सभा द्वारा उत्तमोत्तम विषयों पर लेख लिखने के लिये प्रति वर्ष स्वर्ण और रजत पदक दिए जाते हैं। सन् १९१९ में इनके लिये निम्नलिखित विषय नियत हैं—

छन्नूलाल स्वर्ण पदक—नगरों का निर्माण ।

राधाकृष्णदास रजत पदक—प्राचीन भारतवर्ष की शासन-प्रणाली ।

रेडिचे रजत पदक—मनुष्य का भोजन ।

इन विषयों पर लेख सभा में ३१ दिसम्बर १९१९ तक आ जाने चाहिएँ ।

मेहता जोधसिंह पुरस्कार ।

जनवरी १९१७ से ३१ दिसम्बर १९१९ तक प्रकाशित होने वाली हिन्दी की पुस्तकों में जो सर्वोत्तम समझी जायगी उसके रचयिता को १००) रु० का यह पुरस्कार दिया जायगा । इसके लिये जो पुस्तकें सभा में आवेंगी उन्हीं पर विचार किया जायगा ।

गोविन्दराव जोगलेकर बी० ए०, एल-एल० बी०
मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी ।

हिंदी शब्द-सागर

अर्थात्

हिंदी भाषा का एक बृहत्कोश ।

इस प्रकार का सर्वांगपूर्ण कोश अभी तक किसी देशी भाषा का नहीं निकला है। इसमें सब प्रकार के शब्दों का संग्रह है। दर्शन, ज्योतिष, आयुर्वेद, कलाकौशल इत्यादि के पारिभाषिक शब्द पूर्ण और स्पष्ट व्याख्या के सहित मिलेंगे। और कोशों के समान इसमें अर्थ के स्थान पर केवल पर्य्यायमाला नहीं दी गई है प्रत्येक शब्द का क्या भाव है यह अच्छी तरह समझा कर तब पर्य्याय रखे गए हैं। जिन प्राचीन शब्दों के कारण पुराने कवियों के ग्रंथरत्न समझ में नहीं आते उनके अर्थ इसमें मिलेंगे। अब तक १७ संख्याएं निकल चुकी हैं, मूल्य प्रति संख्या का १)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूचना ।

काशी नागरी प्रचारिणी सभा का एक विशेष अधिवेशन शनिवार ता० २१ जून १९१९ को सन्ध्या के ६ बजे सभाभवन में होगा जिसमें नियम संशोधन समिति की प्रस्तावित नियमावली तथा इस सम्बन्ध में आए हुए प्रस्ताव विचारार्थ उपस्थित किए जायंगे। सभासदों से प्रार्थना है कि नियत समय पर वे इस अधिवेशन में अवश्य पधारने की कृपा करें।

गोविन्दराव जोगलेकर ।
मंत्री ।

S. L. N. PRESS, BENARES.

। इन दोनों संख्याओं
इस अन्तर का अर्थ
प्रकार से किया है—
; अर्थात् नौ रहित।
जब संख्या ली है तो
र्थात् साधारण विक्रम
करो तो अनन्द विक्रम
ह नहीं समझ में आता

[illegible] अवस्था में मृत्यु ११५८ में लिखा है। मुसलमान ऐतिहासिक सिनहाजउद्दीन ने ५८८ हिजरी में युद्ध और उस युद्ध में राज्य का निधन लिखा है। अब ५८८ हिजरी का ११९२ इसवी साल होता है और ११९२ ई० साल का १२४९ साधारण विक्रम सम्वत् होता है। इस कारण रासो के सम्पादक ने ११५८ अनन्द विक्रम और १२४९ साधारण विक्रम कि यदि अनन्द = "नाराहित" तो साधारण विक्रम संवत की संख्या से ९ घटा देने से अनन्द संवत मिल जाना चाहिए। यदि अनन्द शब्द का अर्थ अ = रहित, नं = ९, द = १० हो, अर्थात् अनन्द = -९ × १० = -९० हो तो मेरी विवेचना में शुद्ध होगा। अब यह अर्थ व्याकरण से होना सम्भव है है या नहीं इसका विचार तो वैयाकरण पण्डित ही करें। मैं यहां दिखाना चाहता हूं कि अनन्द संवत और साधारण संवत की संख्या में ९० का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची ।

१—आनंद विक्रम सम्वत् २४१
२—हिंदी-प्रचार में एक बाधा २४३
३—भारतीय प्राचीन लिपिमाला ... २४५
४—भारतवर्ष की दरिद्रता और उसका उपाय २४८
५—प्रगति वा उन्नति-उसका नियम और निदान २५३
६—फ्रेंच इतिहासकार गीज़ो २५५
७—पापनिधर और हिंदी २५७
८—सभा का कार्य-विवरण २५७

मुफ्त ! मुफ्त !! मुफ्त !!!

धन्वन्तरी ।

यह आयुर्वेदी
सर्वसाधारण को नह

सभा द्वार
दिए जाते हैं। अन्
छन्नूलाल स्वर्ण
राधाकृष्णदास
रेडिचे रजत
इन विषयं

जनवरी
जो सर्वोत्तम समझी
लिये जो पुस्तकें स

हिंदी शब्द-सागर
अर्थात्
हिंदी भाषा का एक बृहत्कोश ।

इस प्रकार का सर्वांगपूर्ण कोश अभी तक किसी देशी भाषा का नहीं निकला है। इसमें सब प्रकार के शब्दों का संग्रह है। दर्शन, ज्योतिष, आयुर्वेद, कलाकौशल इत्यादि के पारिभाषिक शब्द पूर्ण और स्पष्ट व्याख्या के सहित मिलेंगे। और कोशों के समान इसमें अर्थ के स्थान पर केवल पर्य्यायमाला नहीं दी गई है प्रत्येक शब्द का क्या भाव है यह अच्छी तरह समझा कर तब पर्य्याय रखे गए हैं। जिन प्राचीन शब्दों के कारण पुराने कवियों के ग्रंथरत्न समझ में नहीं आते उनके अर्थ इसमें मिलेंगे। अब तक १७ संख्याएं निकल चुकी हैं, मूल्य प्रति संख्या का १)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरीप्रचारिणी पत्रिका ।

भाग २३ } मई १९१९ । संख्या १०

अनन्द विक्रम सम्वत् ।

चन्द बरदाई कृत पृथ्वीराज रासो में जहां कहीं वर्ष और समय का उल्लेख आया है वहां "अनन्द विक्रम सम्वत्" लिखा है। पृथ्वीराज का जन्म वैशाख सुदि तीज अनन्द विक्रम सम्वत् ११५५ में और ४३ वर्ष की अवस्था में मृत्यु ११५८ में लिखा है। मुसलमान ऐतिहासिक सिनहाजउद्दीन ने ५८८ हिजरी में युद्ध और उस युद्ध में राज्य का निधन लिखा है। अब ५८८ हिजरी का ११९२ इसवी साल होता है और ११९२ ई० साल का १२४९ साधारण विक्रम सम्वत् होता है। इस कारण रासो के सम्पादक ने ११५८ अनन्द विक्रम और १२४९ साधारण विक्रम सम्वत को एक ही माना है। इन दोनों संख्याओं में ९१ का अन्तर है और इस अन्तर का अर्थ सम्पादक महाशय ने इस प्रकार से किया है— अनन्द=अ=रहित, नन्द=नव; अर्थात् नौ रहित। परन्तु समझाने के लिए जब संख्या ली है तो कहते हैं १००-९=९१ अर्थात् साधारण विक्रम संवत संख्या से ९१ कम करो तो अनन्द विक्रम संवत हो जायगा। इसमें यह नहीं समझ में आता कि यदि अनन्द = "नौ रहित" तो साधारण विक्रम संवत की संख्या से ९ घंटा देने से अनन्द संवत मिल जाना चाहिए। यदि अनन्द शब्द का अर्थ अ=रहित, नं=९, द=१० हो, अर्थात् अनन्द =-९×१०=-९० हो तो मेरी विवेचना में शुद्ध होगा। अब यह अर्थ व्याकरण से होना सम्भव है है या नहीं इसका विचार तो वैयाकरण पण्डित ही करें। मैं यहां दिखाना चाहता हूं कि अनन्द संवत और साधारण संवत की संख्या में ९० का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तर है ११ का नहीं। इसका प्रमाण रासो ही से मिल जायगा।

रासो में बड़ी लड़ाई के वर्णन में है—

साक सु विक्रम रुद्र सौ अष्ट अग्र पंचास।
शनि वासर संक्रांति कर्क श्रावन अद्धौ मास॥
(समय ६६ छंद ९२८)

इससे प्रतीत होता है कि ११५८ अनन्द विक्रम संवत में कर्क की संक्रान्ति के दिन अमावास्या थी। अब देखना है कि १२४८ साधारण संवत की कर्क संक्रान्ति के दिन कौन तिथि थी और १२४९ में कौन।

वराह मिहिराचार्य्य के गणनानुसार अयन बिन्दु की वार्षिक गति ५४ विकला है। पृथ्वीराज की मृत्युको लगभग ७२५ वर्ष हुए। इस समय में

$\frac{७२५ \times ५४}{६० \times ६०}$ = कुछकम ११ अंश का अन्तर हुआ;

अर्थात् आज कल जिस अंगरेजी तारीख को कर्क की संक्रान्ति होती है उससे पृथ्वीराज के समय में ग्यारह दिन पहले होती थी।

आज कल १६ जुलाई को कर्क की संक्रान्ति होती है और सन् १७५२ में अंगरेजी जंत्री से ११ दिन गिरा दिये गए थे। तो अब १६ जुलाई से ११+११=२२ दिन पहले पृथ्वीराज के समय में (२४ जूनको) कर्क की संक्रान्ति हुई। अब यदि हिसाब लगाया जावे तो ११९१ ईसवी के २४ जून को अष्टमी मिलती है। इससे प्रमाणित होता है कि ११९१ ईसवी और ११५८ अनन्द विक्रम संवत एक ही समय है। और ११९१ ईसवी का साधारण संवत् १२४८ होता है इस कारण ११५८ अनन्द विक्रम संवत का साधारण विक्रम संवत १२४८ हुआ अर्थात् दोनों में ९० वर्ष का अन्तर हुआ।

परन्तु इस विचार से मिनहाजउद्दीन के लेख में भ्रम प्रमाणित होता है अर्थात् बड़ी लड़ाई ५८७ हिजरी में हुई ५८८ में नहीं। मिनहाजउद्दीन ने आपही स्वीकार किया है कि उनके मातामह इस लड़ाई के उपरान्त क़ाज़ी नियुक्त हुए थे। लड़ाई के थोड़े दिनों बाद उनका जन्म हुआ। उन्होंने अपने मातामह के एक सेवक से जो इस युद्ध में था ३५ वर्ष बाद ये सब बातें सुन कर लिखीं। अब एक अनपढ़ सिपाही ने ३५ वर्ष पूर्व की जो बातें अपनी याद से कही थीं उनमें ऐसी भूल चूक हो जाना आश्चर्य्य की बात नहीं है इस कारण मिनहाजउद्दीन के लेख से रासो का लेख विश्वसनीय है।

अब यदि प्रश्न किया जाय कि अनन्द शब्द का अर्थ क्या है तो यह तो आलोचना करने योग्य है। पहले तो लोगों का विश्वास था कि महाराज विक्रमादित्य के सिंहासनारोहण के वर्ष से संवत आरम्भ हुआ है परन्तु अब तो प्रमाणित हो गया है कि महाराज विक्रम के समय में भारत वर्ष में बहुत संवत् प्रचलित थे। साहूकार लोग अपने मन माने संवत् लिखते थे। इस समय समस्त भारत भूमि में व्यापार बहुत चलता था और हुंडी में भाँति भाँति के संवत् लिखे जाते थे। महाराज विक्रम ने व्यापारियों को एक ही प्रकार का संवत् लिखने की आज्ञा दी। सब मालवीय संवत् लिखने लगे। इस संवत को विक्रम अनुमोदित मालवीय संवत कहते थे। कुछ दिनों में इस लम्बे चौड़े नाम के स्थान पर केवल विक्रम संवत् कहने लगे। रासो के लेख से प्रतीत होता है कि उन दिनों इतिहास में अनन्द संवत् और हुंडी पत्रियों में केवल विक्रम संवत लिखते थे।

यहाँ निश्चित रूपसे तो केवल इतना ही प्रमाणित हुआ कि इन दोनों-संवतों में ९० का अन्तर है और बाकी तो अनुमान ही अनुमान है। जब तक कोई दृढ़ प्रमाण न मिले तब तक विज्ञ पाठकों को इसकी खोज लगानी चाहिए।

अमृतलाल शील
हैदराबाद (दक्षिण।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी-प्रचार में एक बाधा।

बहुत समय से अनेक मातृभाषा-प्रेमी सज्जनों के उद्योग और परिश्रम करते करते हिंदी-प्रचार का कार्य अब कुछ ढंग पर आ गया है। कुछ समय से इसका साहित्य एक अच्छे परिमाण में बढ़ रहा है, लोगों को इसके प्रति अधिकाधिक अनुराग होता जाता है, और बहुत सी रियासतों के राजकाज तथा दूसरे कार्यों में इसका उपयोग बढ़ रहा है। इन सब बातों से जान पड़ता है कि अब हिंदी के अच्छे दिन दूर नहीं हैं और वह शीघ्र ही अपने उच्चासन को प्राप्त करेगी।

पर बीच बीच में हम ऐसी भी अनेक बातें देखते और सुनते रहते हैं जिनसे हिंदी का भविष्य धुँधला मालूम होने लगता है, और भय होने लगता है कि कदाचित् उसे अपनी उचित पदवी प्राप्त न हो।

अब अधिकांश विद्वान् इस बात को मान गए हैं कि हिंदी उर्दू दो भाषाएँ नहीं हैं, और इनको जहाँ तक हो सके इस प्रकार लिखना चाहिए जिससे दोनों में विशेष अंतर न पड़ने पावे। अर्थात् हिंदी में संस्कृत शब्दों का अधिक प्रयोग करना और उर्दू को फ़ारसी अरबी के शब्दों से भरना ठीक नहीं। इस प्रकार भाषा का प्रश्न एक प्रकार सहल हो जाता है। अब बोल चाल की भाषा का ही, जिसमें आवश्यकतानुसार हिंदी उर्दू के शब्द मिले हों, उपयोग करना उचित समझा गया है।

अब केवल लिपि का सवाल रह गया और असल में अब तक हिंदी उर्दू का जो विरोध है वह प्रायः लिपि के कारण ही है। यह बात हर एक मनुष्य जानता है कि संसार की समस्त लिपियों में देवनागरी लिपि उत्तम है। इसके समान विज्ञानानुकूल, सरल, शुद्ध, सुबोध लिपि दूसरी नहीं। साथ में उर्दूलिपि की दुर्बोधता, जटिलता तथा अस्थिरता की बात भी किसी से छिपी नहीं है। इसी कारण बहुत समय से अनेक भारतीय सज्जन भारत में एकलिपि प्रचार की चेष्टा कर रहे हैं जिससे देश का समस्त कार्य देवनागरी लिपि में किया जाने लगे तथा सब को फायदा और सुबीता हो।

इसके अतिरिक्त हिंदी उर्दू भाषाओं की भिन्नता का मूल कारण भी यह लिपिभेद ही है। यदि उर्दूवाले फारसी लिपि काम में न लाकर नागरी लिपि से काम लेते तो वर्तमान समय में हिंदी उर्दू में कभी इतना अंतर दिखाई न पड़ता और हिंदू मुसलमानों की भाषा प्रायः एक ही होती। पर लिपि भिन्नता के कारण इसमें बाधा पड़ रही है और बहुत कुछ चेष्टा करने पर भी हिंदी उर्दू का झगड़ा समाप्त नहीं होता।

इस उद्देश्य की सिद्धि के लिये आज कल उद्योग किया जा रहा है कि अदालतों तथा दूसरे सरकारी कामों में उर्दू की जगह हिंदी काम में लाई जाय। जब वहाँ नागरी लिपि का उपयोग होने लगेगा, तब उर्दू की वर्तमान लिपि आप उठ जायगी और सर्वत्र देवनागरी लिपि का प्रचार हो जायगा।

पर अब हमारे सुनने में आता है कि देवनागरी लिपि अदालती कामों के लायक नहीं। जो लोग हिंदी के बड़े भारी प्रेमी बतलाए जाते हैं तथा जो सदा उसके प्रचार तथा वृद्धि की चेष्टा करते रहते हैं वे भी कहते हैं कि अदालतों में हिंदी से काम नहीं चल सकता। मैंने सुना है कि एक सज्जन आरंभ से हिंदी के पूर्ण हितैषी और कट्टर पक्षपाती रहे तथा सदा उसकी उन्नति के लिये जी जान से परिश्रम करते रहे पर अब जब उनको मुंसिफी का पद मिला और वे मुक़द्दमों का फैसला करने लगे तब मालूम हुआ कि हिंदी के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वारा काम करने में बड़ी देर लगती है। यदि हिंदी साफ़ साफ़ लिखते हैं तो उर्दू से दूना तिगुना। वक्त लगता है और यदि घसीट लिखते हैं तो वह उर्दू से भी दुर्बोध हो जाती है। इसी चक्कर में पड़ कर उनको बहुत कुछ झंझट उठाना पड़ा और अंत में विवश होकर बड़े दुख के साथ उनको उर्दू में काम करना आरंभ करना पड़ा।

वे ही सज्जन कहते थे कि इससे अब मुझे अनुभव हो गया है कि हिंदी अदालती भाषा नहीं बनाई जा सकती। इसके द्वारा इस कार्य को कर सकना बड़ा कठिन है। उन रियासतों में भी जहाँ हिंदी का प्रचार हो गया है यही दिक्कत पड़ती बतलाई जाती है और बहुतों का कहना है कि अंत में वहाँ पुनः उर्दू ही जारी करनी पड़ेगी। हिंदी के कारण इन रियासतों का काम बहुत बढ़ गया है और मुकद्दमों का फैसला करने में बड़ी देर लगती है। अतएव बिना उर्दू के ठीक ठीक काम हो सकना कठिन है।

यद्यपि ये बातें कुछ लोगों की निजी सम्मति स्वरूप हैं और ये बिना किसी विशेष प्रमाण के ज्यों की त्यों नहीं मान ली जा सकतीं तो भी इतना कहा जा सकता है कि साधारण आदमियों को हिंदी लिखने में अवश्य ही कुछ अधिक देर लगती है और अदालतों का काम जल्दी का है। इसलिये अगर उनको हिंदी लिखना कुछ कष्टकर प्रतीत होता हो तो कोई आश्चर्य नहीं।

दूसरी बात यह भी हो सकती है कि अभी उन लोगों को जो अदालतों, कचहरियाँ आदि में काम करते हैं उर्दू लिखने की आदत है। हिंदी की दृष्टि से वे सब नौसिखिए हैं। उनको तो हाकिम की आज्ञा से जबर्दस्ती हिंदी लिखनी पड़ती है। इससे अगर उनको हिंदी लिखने में अधिक देर लगती है अथवा असुविधा जान पड़ती है तो कोई अचंभा नहीं। जब इन कामों पर हिंदी को भलीभाँति जाननेवाले लोग रख कर काम कराया जाय तभी इस बात की सत्यता जानी जा सकती है कि हिंदी द्वारा काम करने में अधिक देर लगती है या नहीं। साथ में एक बात और भी है कि अभी जहाँ जहाँ हिंदीप्रचार हुआ है वहाँ केवल लिपि ही बदली है। भाषा ज्यों की त्यों बदस्तूर कायम है। ग्वालियर आदि में हिंदी अक्षर काम में लाए जाते हैं पर भाषा जटिल उर्दू ही है। इस लिए भी संभव है कि उर्दू को नागरी लिपि में लिखने के कारण विशेष विलंब होता हो। अतः जब तक हिंदी जाननेवाले लोग रख कर हिंदी भाषा का ही उपयोग न किया जायगा तब तक उपर्युक्त शिकायत पूर्णतः सत्य नहीं मानी जा सकती।

चाहे जो हो हमारा कर्तव्य है कि हम हिंदी हितैषिता के नाते उपर्युक्त बात पर विचार करें। इस बात का पूरा पता लगाया जाय कि क्या वास्तव में अदालतों के काम में हिंदी के कारण वैसी ही कठिनाइयाँ पड़ती हैं जैसी बतलाई गई हैं और यदि यह बात ठीक हो तो उद्योग किया जाय जिससे हिंदी का यह दोष दूर हो और शीघ्रतावालों का काम भी इससे चल सके। सब हिंदीहितैषी सज्जन अवश्य इस ओर ध्यान देने की कृपा करेंगे।

प्रयाग
२२—४—१९। } श्रीसत्य भक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय प्राचीन लिपि-माला।

(रचयिता श्रीमान् रायबहादुर पंडित गौरीशंकर हीराचंद ओझा · सुपरिंटेंडेंट राजपुताना म्यूजियम, अजमेर।)

हिंदी साहित्य के भांडार में यद्यपि अनेक बहुमूल्य रत्न संकलित हो रहे थे परंतु एक सूर्य्यकांत मणि का अभाव था जो स्वयंप्रभ होता और जिसकी प्रभा से अन्य रत्नों में भी ओप आ जाती। इस मणि को भांडार में लाकर उसकी प्रतिष्ठा बढ़ाने की यद्यपि बहुतेरे साहित्य-सेवियों को चिंता हो रही थी और वे उसके अन्वेषण में तत्पर भी थे, परंतु जब वे खोज में लगते थे तब कभी कोई साधारण मणि हाथ लग जाती थी, और वह उसे ही इत्यलम् समझ कर भांडार में रख देते थे। कभी किसी को कोई भारी रत्न भी हाथ लग जाता था, परंतु वह भी दूसरे की प्रभा से प्रकाशित होता था। इधर बहुत दिनों से हिंदी साहित्यभांडार स्वयंप्रभ रत्नों से विहीन ही रहता आया है। सत्य है, बिना समय और बिना उपयुक्त महानुभाव के सहारे कभी कोई कार्य नहीं हुआ करता। बाजीगरी तो बहुत हुआ करती हैं परंतु योगसिद्धि योगिराज द्वारा ही प्राप्त हुआ करती है। यही दशा इस मणि की प्राप्ति की भी थी।

इसमें वैदिक काल से लेकर आज तक की लिपियों की उत्पत्ति, अंकगणना, लेखन सामग्री, कालगणना संवतों आदि के ऐतिहासिक विवरणों का प्रकाश अपूर्व रूप से हुआ है। इस पुस्तक ने पुरातत्त्व के दुस्तीर्ण भ्रामक और कंटकाकीर्ण मार्ग को सुपथ बना दिया। हमारे पाठक श्रीमान् रायबहादुर पंडित गौरीशंकर हीराचंद ओझा के नाम से अवश्य परिचित होंगे। ये भारतरत्न पुरातत्त्व के एक अद्वितीय विद्वान् हैं। आप पहले उदयपुर राज्य के ऐतिहासिक विभाग में कार्य करते थे। भारतीय पुरातत्त्व पर आप ने बहुत खोज की है और बहुत से महत्त्वपूर्ण लेख तथा ऐतिहासिक ग्रंथ लिखे हैं। आप के विद्वत्त्व से संतुष्ट हो गवर्नमेंट ने आप को सम्मानसूचक रायबहादुर की उपाधि से सम्मानित किया है। आजकल आप राजपूताना म्यूजियम, अजमेर के सुपिरिंटेंडेंट हैं। आप ने कई वर्ष हुए एक छोटी पुस्तक "प्राचीन लिपि माला" नामक प्रकाशित की थी। भारतीय विद्वानों तथा गवर्नमेंट और यूनिवर्सिटियों ने आपके इस ग्रंथ का बड़ा आदर किया। यहां तक कि भारतीय यूनिवर्सिटियों ने इस ग्रंथ को उपस्थित देख प्राचीन लिपियों के ज्ञान का विषय एम० ए० क्लास की परीक्षा में रख दिया और पंडित जी की पुस्तक इस विषय की पाठ्य-पुस्तक मानी गई। पुस्तक की माँग यहां तक बढ़ी कि वह अप्राप्य हो गई। तब यह आवश्यकता हुई कि उसका दूसरा संवर्द्धित संस्करण प्रकाशित किया जाय। हमारी आलोच्य पुस्तक इसी पुस्तक का दूसरा तथा परिवर्द्धित संस्करण है।

भारतवर्ष में लेखन शैली बहुत प्राचीन काल से चली आती है। विस्तृत देश होने के कारण भिन्न भिन्न प्रांतों में भिन्न २ प्रकार की लिपियों का प्रचार रहा है। इस देश की सभ्यता की प्राचीनता का स्मरण करते हुए यह कहना भी अनुचित न होगा कि काल की कायापलट ने इन लिपियों की काया में बहुत परिवर्तन किया। इसी के साथ ही साथ तीसरी बात और भी हुई। देशांतर्गत राज्य-विप्लवों ने तथा बाह्य आक्रमणों ने भी इन लिपियों के ज्ञान के ह्रास में तथा नवीन लिपियों के प्रवेश द्वारा प्राचीन लिपियों के रूपपरिवर्तन में—कुछ न कुछ काम किया और परिणाम यह हुआ कि कुछ लिपियों का ज्ञान तो नष्ट हो गया, कुछ लिपियों ने नवीन रूप धारण कर लिया, कुछ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेख नष्ट हो गए, कुछ एक स्थान से दूसरे स्थान में जा पड़े और जनश्रुतियों ने उनके विषय में बहुत कुछ अंतर डाल दिया। ईसवी सन् की दसवीं शताब्दी तक पहुँचते पहुँचते बहुतेरी लिपियों की तो यह दशा हुई कि उनका किसी को ज्ञान ही न रहा और यदि कुछ लोगों को रहा भी तो उनकी संख्या कम होती चली गई। यह अवनति बारहवीं शताब्दी में और भी बढ़ गई और भारतवर्ष में इसी समय मुसलमानी शासन का आरंभ हुआ। इस काल में यद्यपि अनेक अच्छे अच्छे कवि हुए पर प्राचीन सामग्री का लोप क्रमशः आरंभ हो गया। यह अवस्था दिनों दिन बढ़ती गई और अंत में भारत का प्राचीन इतिहास पर्वतों की चट्टानों, प्रस्तरस्तंभों, देव मूर्तियों की चरणचौकियों आदि में रह गया। यहाँ तक उसके ज्ञान का ह्रास हुआ कि उसके संबंध में जन-श्रुतियाँ तक पलट गईं। कोई अशोक स्तंभों को भीम की गदा, कोई शिवलिंग, कोई आल्हा ऊदल का गुल्लीडंडा, कोई भैरव की लाट, कोई मस्त का सोंटा पुकारने लगा। जब फीरोज़ तुग़लक ने शिवालक स्तंभ के लेख का मर्म पूछने को भारतीय विद्वानों को एकत्रित किया तब किसी ने तो नवीन श्लोक सुना दिए, किसी ने कुबेर के कोष का संख्या का लेख बता दिया। जब कहीं कुछ लेख प्राचीन काल का किसी स्तंभ, शिलाखंड, ताम्रपत्र पर किसी को मिलता था तब कोई न कोई लाल बुझक्कड़ उसे अर्बों खर्बों की संख्या की स्वर्ण मुद्राओं का बीजक बता देता था। दिल्ली का लोह खंभ राजा वासुकि के फन पर गड़ा है। उसके लेख का मनमाना अर्थ बताया जाता था। यदि मूर्ति का लेख हुआ तो श्री रामचंद्र सगर अथवा ययाति पूजित यह मूर्ति है यही लेख का अर्थ कहा जाता था। अकबर सरीखे उद्योगी सम्राट् के पूर्ण यत्न करने पर भी दिल्ली के फ़ीरोज़शाह के कटले अथवा पहाड़ी पर के स्तंभ के लेखों के एक शब्द को भी कोई पढ़ न सका था। यह दशा भारतभारती के रत्नों की हो चुकी थी। वे यहां तक धूलि-धूसरित हो गए थे कि उनके रंग और छटा का किसी को कुछ ज्ञान ही न था। दैवयोग से होते होते शुभ समय उपस्थित हुआ। भारत की पुकार पर विद्याविलासी यूरोपीय जातियों ने उसका वृत्तांत जानना चाहा। सर विलियम जोंस, जान बीम्स, प्रिंसेप, कर्नल टाड, जनरल कनिंघम, डाक्टर ब्यूलर आदि वीरों ने लोगों को चिताना चाहा और बहुत कुछ चिता भी दिया। तब से प्राचीन इतिहास की खोज का नया युग आरंभ हुआ। तब से इस समय तक की खोज के लिपिसंबंधी ज्ञान का सारांश हिंदी में लिख कर पंडित गौरीशंकर जी यश के भागी हुए हैं।

आपने अपनी इस पुस्तक में पुष्ट प्रमाणों से, वेद, ब्राह्मण, उपनिषद, पुराण, बौद्ध तथा जैन ग्रंथों और यूनानी तथा अन्य विदेशी लेखों के आधार पर कुछ युरोपीय विद्वानों के इस मत का खंडन किया है कि प्राचीन भारतनिवासियों ने फिनीशियन लोगों से लिखना सीखा अथवा सैमेटिक अक्षरों से भारतवासियों ने लिपिज्ञान पाया। दृढ़तर प्रमाणों से आपने यह भी सिद्ध कर दिखाया है कि जब संसार के अन्यान्य देशों में सभ्यता का आरंभ भी नहीं हुआ था उस समय भारतवासियों को लिपियों का पूर्ण ज्ञान था। वे अंक तथा बीजगणित को भली भांति जानते थे और छंद रचना करते थे और व्याकरण का निर्माण कर चुके थे।

आपने भारतवर्षीय प्राचीन ब्राह्मी और खरोष्ठी आदि लिपियों की उत्पत्ति का वर्णन किया है। इस के संबंध में गुप्त लिपि, कुटिल लिपि, नागरी लिपि, शारदा लिपि, बंग लिपि पश्चिमी लिपि, मध्य प्रदेशी लिपि, तैलंग, कनाड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिपि, ग्रंथ लिपि; कलिंगी लिपि, वट्टेलुत्तु लिपि की वर्णमालाओं और उनके प्राचीन तथा नवीन रूपांतरों को दिखाया है। ब्राह्मी तथा खरोष्ठी और उनसे निकली हुई लिपियों के प्राचीन शैली के अंक, शब्दों और अक्षरों से अंक बतलाने की शैली, भारतवर्षीय वर्त्तमान लिपियों की उत्पत्ति, वर्तमान नागरी अंकों की उत्पत्ति का सविस्तर वर्णन किया है। इस एक ग्रंथ से प्राचीन लेख जो अबतक देवमंत्र के रहस्य की भाँति गुप्त थे पढ़ने में पूर्ण रूप से सुविधा होगई। इस सूर्यकांत मणि का प्रकाश पड़ने से प्राचीन से प्राचीन भारतवर्षीय लेख जो अबतक प्राप्त हो चुके हैं स्वयं प्रकाशित हो जाते हैं और अपने रहस्यों को स्वयं बताने लगते हैं। पठन-पाठन की सुविधा के लिये आपने ८४ लिपिपत्र ग्रंथ के अंत में लगा दिए हैं जिनमें प्राचीन से प्राचीन अशोककाल के लेखों से लेकर वर्त्तमान काल तक के लेखों के उदाहरण कुछ पंक्तियों में दिए हैं इससे अभ्यासी लोगों को पढ़ने का अभ्यास हो सकता है।

प्राचीन काल में लेखन सामग्री क्या थी, पुस्तकों के अंश पत्र अथवा पन्ने क्यों कहलाए, ताड़ पत्र, भूर्ज पत्र, कागज, रुईके कपड़े, लकड़ी की पट्टी, रेशमी कपड़े, चमड़े, पत्थर, ईंट, सोना चांदी, तांबा, पीतल, कांसा, लोहा किस किस प्रकार से लेखन सामग्री के रूप मे व्यवहृत होते थे, ताड़पत्र, भूर्जपत्र आदि किस प्रकार लेखन सामग्री के उपयुक्त बनाए जाते थे, लोह शलाका आदि क्या क्या वस्तु लेखनी के रूपमें काम में आती थीं, स्याहियां कितने प्रकार की व्यवहृत होती थीं और कैसे बनाई जाती थीं, काली स्याही, रंगीन स्याही, सोने और चांदी की स्याही, कलम, परकार, रेखापाटी, और कांबी (रज) आदि क्या पदार्थ थे और किस काम मे लाए जाते थे, यह सब इस में दिया गया है। इस अध्याय के पढ़ने से प्राचीन कालकी पुस्तकों के लिखने, उनको सुरक्षित रखने, स्याही आदि बनाने का बहुत अच्छा ज्ञान प्राप्त होता है।

परिशिष्ट में आपने भारतीय कालगणना का वर्णन किया है और सप्तर्षि (लौकिक), कलियुग, वीरनिर्वाण, बुद्धनिर्वाण, मौर्य, सिल्युकिडि, विक्रम शक, कलचुरि, गुप्त (वल्लभी) गांगेय, हर्ष, भाटिक कोल्लम, नेवार, चालुक्य, विक्रम सिंह, लक्ष्मणसेन पुडवैप्यु, राज्याभिषेक, वार्हस्पत्य, ग्रह परिवृत्ति सौर, चांद्र, हिजरी, शाहूर, फसली विलायती, अमली, बंगाली, मग, इजाही, ईसवी, इत्यादि संवत्सरों का सविस्तर वर्णन उनके, प्रचारकों के संक्षिप्त इतिहास के साथ किया है। ईसवी संवतसे उन संवत्सरों से कितना अंतर है और उनके प्रचारकों के काल निरूपण में भिन्न कल विद्वानों का क्या मत है और ग्रंथकर्ताका स्वयं क्या मत है इसका निरूपण हुआ है। प्रत्येक संवत्सर का प्रमाण वर्तमान कालगणना से जो दिन रात्रि अर्थात् सूर्योदय से सूर्यास्त काल तक की है कितना है यह सब विस्तार से वर्णन किया है।

वास्तव में यह संपूर्ण ग्रंथ बड़े ही महत्त्व का है। हिंदी भाषा और नागरी अक्षरों में यह ग्रंथ अपने विषय का पहला ही ग्रंथ है और हम तो मुक्तकंठ से कहने को प्रस्तुत हैं कि अद्वितीय ग्रंथ है और कदाचित् अद्वितीय ही रहेगा। क्योंकि जैसी सारगर्भित इस ग्रंथ की भूमिका है वैसा ही विद्वत्वपूर्ण परिशिष्ट का लेख है। ग्रंथ के मूल भाग की टिप्पणियां भी प्रगाढ़ परिश्रम और खोज का फल हैं, और ऐसी महत्वपूर्ण और लाभदायक हैं कि साधारण श्रेणी के पुरातत्व की रुचिवाले विद्यार्थी को एक बहुत ऊंचा पुरातत्व का ज्ञाता बना सकती हैं। संक्षेप यह कि ग्रंथ का नख-सिख सर्वप्रकारेण अलौकिक शृंगार से सजा हुआ है। हम पंडित जी को इस महत्त्वपूर्ण ग्रंथ को प्रकाशित कर हिंदी साहित्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भांडार को एक अलौकिक रत्न से अलंकृत कर देने की बधाई देते हैं और हमें इस बात का अभिमान है कि जो काम बड़े बड़े धुरंधर यूरोपीय विद्वान् संपादित न कर सके थे वह काम हमारे प्यारे एक सरलप्रकृति भारतरत्न द्वारा संपादित हुआ। पंडित जी को जो परिश्रम और व्यय इस ग्रंथ के संपादन करने में पड़ा है वह असाधारण है। उसकी तुलना में आप ने जो मूल्य इस ग्रंथ का रक्खा है वह बहुत अधिक नहीं है। आज युरोप देश की किसी सोसायटी अथवा गवर्नमेंट की ओर से ऐसा वृहत् ग्रंथ १५" × १०" ग्लेजड पेपर, सुंदर स्वच्छ छपाई, नेत्राकर्षक सुनहरी जिल्द और ८४ प्लेटों के साथ प्रकाशित हुआ होता तो उसका मूल्य सौ रुपये से कम न होता और वह अंगरेजी भाषा ही में होता। परंतु पंडित जी ने विद्याप्रेमवश पाठकों की सुविधा के लिये उसका मूल्य केवल २५) रुपया ही रक्खा है। हमारी सम्मति है कि वह पुरुष जिसे कुछ भी विद्या से प्रेम हो और जो किसी प्रकार से २५) रुपया खर्च कर सकता हो उसको उचित है कि इस ग्रंथ को मँगा कर अपने पास रख ले और इससे लाभ उठावे। जहां इस ग्रंथ के बहुतेरे उपयोग हो सकते हैं वहां एक ग्रामीण उपयोग को लिखते हुए हमें स्वयं हँसी आ जाती है और कुछ पाठकगण भी हँसेंगे। पर बात तो पते की है और कुछ लाभ की भी है। उसे बतलाए बिना हम न रहेंगे क्योंकि बैताल और विक्रम के संवाद सदा इसी तान पर टूटे हैं कि "चतुर चुप क्यों है रहे।" आप हँसें हम हँसें पर चुप्प न रहेंगे। हमारे देश में लोकमत यह चला आता है कि जहाँ कहीं कोई लेख मिला और पढ़ा न गया वहाँ यह निश्चय मान लिया गया वह किसी खजाने का बीजक है। परंतु पढ़ा न जा सकने से खजाना नहीं मिल सकता। प्रत्येक प्राचीन ग्राम के खंडहर, नालों टीलों में बहुधा कुछ न कुछ लेख हैं ही और कहीं कहीं बरसात आदि में कुछ मिल भी जाया करते हैं। ऐसी दशा में ग्रामीणमत के अनुसार यदि वे खजानों के बीजक हों तो भी ऐसी पुस्तक के घर में रहने से जिसकी सहायता से उस लेख को पढ़ कर कोष का पता लगाया जा सके असीम लाभ होगा। संक्षेप यह कि यह पुस्तक उद्भट विद्वानों से लेकर साधारण पठित ग्रामीणों तक के लिये उपयोगी और प्रत्येक श्रीमान् के घर में रहने के योग्य है। मेरी सम्मति में उस पुस्तकालय की तो शोभा ही नहीं होगी, जहाँ इस पुस्तक का अभाव रहेगा।

"भारतीय प्राचीन लिपिमाला" पंडित गौरीशंकर हीराचंद जी ओझा सुपरिंटेंडेंट राजपूताना म्यूजियम अजमेर के पास से २५) रुपये मूल्य पर प्राप्त हो सकती है। —इतिहास प्रेमी।

भारतवर्ष की दरिद्रता और उसका उपाय।

ऐसा कौन स्वदेशप्रेमी भारतवासी होगा जिसके हृदय में भारत माता की दरिद्रता कंटक की भाँति न चुभती हो? ऐसा कौन कठोर हृदय मनुष्य होगा जो अपने देश भाइयों को आधे पेट खाते तथा भूख के मारे तड़प तड़प के मरते देख कर उनकी हृदयविदारक दशा पर आंसू न बहावे और ऐसा कौन वज्रहृदय मनुष्य होगा जो ऐसी दशा देख कर भी उसके सुधार में अपना तन मन धन तक न्योछावर करने के लिये तैयार न होजावे। परंतु प्यारे पाठको! इतनी सभा सोसाइटी होते हुए भी, इतने संपत्तिशास्त्रवेत्ता होते हुए भी और इतने बड़े बड़े राजनीतिज्ञ होते हुए भी हमलोगों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को निश्चय भाव से यह मालूम नहीं है कि हम वास्तव में दरिद्रता के शिकार क्यों बने हुए हैं? कतिपय विद्वानों का मत है कि यदि भारत की तुलना इंगलैंड से की जाय तो भारत दरिद्र नहीं कहा जा सकता। इंगलैंड में थोड़े मनुष्य बहुत ही धनी हैं। परंतु यदि वहां के नीची श्रेणी के मनुष्यों की तुलना यहां के गरीब लोगों से की जाय तो भारत को दरिद्र नहीं कह सकते। यह नहीं कहा जा सकता कि यह कथन कहां तक सत्य है, परंतु यदि यहां की वर्तमान दशा पर ध्यानपूर्वक विचार किया जाय, यदि प्रत्येक प्रांत के अफ़सरों की रिपोर्टें ध्यानपूर्वक पढ़ी जाय और यदि यहां के मनुष्यों की औसत आय की दूसरे देशवासियों की आय से तुलना की जाय तो यही कहना पड़ता है कि भारत दरिद्र है।

इसी स्थान पर प्रश्न उठता है कि यदि भारत गरीब है तो क्यों? इसके दरिद्र होने के कारण क्या हैं? यह क्योंकर समृद्धिशाली बन सकता है?

भारत गरीब क्यों है? यह प्रश्न बड़ा बेढब है। इसका उत्तर कुछ आसान नहीं है क्योंकि इस के गरीब होने के कारण बहुत से हैं। कतिपय विद्वान् विना कुछ कारण बताए यही कहते हैं कि "India is poor, because it is poor"। इसके बहुत से कारण होने से निश्चय रूप से कोई भी नहीं कह सकता कि भारत क्यों दरिद्र है। कुछ कारण जो मुझे मालूम हैं उनमें से औरों को छोड़कर केवल एक पर विवेचना करके आज मैं पाठकों को सुनाता हूं।

भारत एक कृषिप्रधान देश है और कृषि सर्वदा क्रमागत ह्रासनियम के अधीन है अर्थात् कुछ समय तक भूमि श्रम और पूँजी खर्च करने पर उसका बदला देती रहती है परन्तु यदि लगातार श्रम और पूँजी बढ़ाते जायँ तो एक ऐसा समय आवेगा जब कि क्रमागत ह्रासनियम चरितार्थ होने लगेगा अर्थात् पैदावार व्यय के मुकाबले में कम होने लगेगी क्योंकि उस समय भूमि अपनी उत्पादकत्व-सीमा पर पहुँच जाती है और उससे अधिक पैदा करना उसकी शक्ति के बाहर हो जाता है। दूसरी बात यह है कि हम लोग खेती के वैज्ञानिक तरीके को भी नहीं जानते। कितनी लज्जा और शोक की बात है कि हम लोग एक कृषिप्रधान देश के निवासी होते हुए भी खेती के महत्त्व बढ़ानेवाले उपायों से अनाभिज्ञ रहें! हम लोगों में नए नए उपाय और खेती के लिए नए यंत्र सोच कर निकालने की बुद्धि ही नहीं। वही हजारों वर्ष का पुराना हल, वही पुराने प्रकार की खाद और वही हजारों वर्ष के गँवारू उपाय से निराना, गहाना और उड़ाना होता आता है। हजारों वर्ष हो गए परंतु उनमें कुछ भी उन्नति नहीं हुई। उन्नति कहां से हो? हम लोगों को शिल्प तथा वैज्ञानिक शिक्षा तो मिलती ही नहीं। खेती की तो यह दशा है परंतु खेती को उपज खपाने वाले मनुष्य दिन पर दिन बढ़ ही रहे हैं। बहुत सी संतान उत्पन्न करना भारतवासियों का एक परम कर्तव्य हो गया है। घर में खाने को एक दाना भी न हो, चाहे घर में चूहे भी नित्य एकादशी करते हों, बदन पर पहनने को चाहे एक कपड़ा भी न हो पर लड़के का विवाह अवश्य ही होना चाहिए—चाहे बरतन इत्यादि बेच कर हो चाहे कर्ज लेकर। जब विवाह हुआ तब थोड़े दिनों में लड़के बच्चे भी हुए। बस आय तो वही और खानेवाले बहुत बढ़ गए। तभी तो दुर्भिक्ष महामारी इत्यादि के इतने उपद्रव बढ़ गए हैं। देश में खाने भर को अन्न रहने नहीं पाता, करोड़ों का अन्न विदेश को भेजा जाता है। भारत में चाहे दुर्भिक्ष हो चाहे लाखों आदमी अन्न बिना मरते हों पर विदेश को अन्न अवश्य ही भेजा जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्वान् मालथस का सिद्धांत है कि "दुर्भिक्ष, महामारी, युद्ध और ब्रह्मचर्य्य व्रत इत्यादि यदि बढ़ती जनसंख्या को न रोकें तो जनसंख्या लगातार बढ़ती ही जाती है।" अंत में उसका कहना है कि यदि हम बाल्यविवाह आदि कुरीतियों को मिटा कर इस बढ़ती को न रोकें तो प्राकृतिक नियम उसके रोकने के लिये बाध्य होंगे। मालथस का यह सिद्धांत आज कल भारत पर घटित होता है। सैकड़ों वर्ष से हम नित्य प्रति देखते हैं कि जनसंख्या तो इस प्रकार चौकड़ी भरती हुई बढ़ रही है परंतु प्रतिवर्ष करोड़ों का अन्न बाहर को भेजा जाता है। इसलिये बेचारे गरीबों पर दोहरी मार पड़ती है एक तो जनसंख्या बढ़ने के कारण मज़दूरी की दर जितनी होनी चाहिए उससे बहुत कम होगई है और दूसरे बाहर जाने के कारण तथा जनसंख्या बढ़ने के कारण खाने पीने की वस्तुएं महँगी होगई हैं।

इस घोर विपत्ति को टालने के लिये पाश्चात्य संपत्तिशास्त्रवेत्ताओं ने केवल दो उपाय बतलाए हैं १—देशांतर गमन। २—शिल्प कारखानों का खुलना।

१—देशांतर गमन—मज़दूरों की हालत सुधारने तथा बढ़ती हुई जनसंख्या की आर्थिक दशा सुधारने का एक बड़ा साधन है। पहले समय में जब कि इंगलैंड की जनसंख्या बहुत बढ़ गई थी और मज़दूरी बहुत सस्ती होगई थी उस समय वहां के दूरदर्शी मनुष्यों ने देशांतरगमन की ही शरण ली। १८४८ से १८६४ ई० के बीच ३८६३००० इंगलैंड के निवासी अपने देश तथा देशभाइयों की दशा सुधारने की इच्छा से अपनी जन्मभूमि को अंतिम प्रणाम करके अमेरिका इत्यादि विदेशों में जा बसे। केवल १८८१ ई० ही में २४३००० मनुष्य इंगलैंड से बाहर चले गए। यदि ये सब मनुष्य इंगलैंड ही में रहते तो वहां की क्या दशा होगई होती? यही जो कि आजकल भारतवर्ष की है अथवा उससे भी ख़राब। परंतु भारतवर्ष में तो हिम्मत ही नहीं। यदि कोई विद्याध्ययन के ही लिये विदेश चला जाता है तो बस उसे पतित समझने लगते हैं। थोड़े से भारतवासी बेचारे अफ्रीका में जा बसे हैं। बड़ी आपत्तियों का सामना करते हुए वहाँ पर वे अपने स्वत्व की रक्षा के लिये जान तक दे रहे हैं पर हमारे कान पर जूँ तक नहीं रेंगती। इस प्रकार बाहर जानेवाले कर्मवीर मनुष्यों का उत्साह भंग कर के हमने पैरों में कुल्हाड़ी मारी।

२—शिल्प तथा कलाकौशल के कारखानों का खोलना—इस विषय में भी हमको इंग्लैंड से शिक्षा लेनी चाहिए। यह देश भी भारत की भाँति पहले कृषिप्रधान देश था परंतु इस उन्नतिशील देश ने अपनी कृषि पर ही निर्भर न रह कर शिल्प कलाओं के हज़ारों कल-कारखाने खोल दिए जिनसे करोड़ों मज़दूरों को सहायता मिलने लगी और देश का धन बढ़ने लगा। खेती का कार्य्य कम करके लोग भारत आदि अन्य देशों से अन्नादिक भोज्य सामग्री मंगाने लगे। इसी कारण इंग्लैंड धनी समझा जाता है। परंतु भारत का व्यवसाय एक प्रकार मर सा गया है। यदि हम धनोत्पादन के तीन बड़े साधन श्रम, पूंजी और उद्योग को देखें तो पाश्चात्य व्यवसाय के मुकाबले में हम लोगों का उद्धार होना असंभव सा दिखाई पड़ता है।

श्रम-भारत के श्रमजीवी लोगों में कार्य्यपटुता तथा योग्यता का अभाव सा है और जो लोग कार्य्यपटु तथा योग्य हैं वे नए आविष्कृत औज़ारों तथा मशीनों का चलाना नहीं जानते।

पूँजी—पहले भारत में है ही कम। फिर भी जिनके पास पूँजी है वे उसे व्यवसाय में लगाने से डरते हैं। वे उसे या तो जमीन में गाड़ना अथवा सूद पर देना ही जानते हैं।

उद्योग—व्यवसाय-योग्यता का तो पढ़े लिखे मनुष्यों तक में अभाव है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन सब पर विचार करने से हमारी आशा-ता एक प्रकार मुरझा सी जाती है।

अब मैं भारत के श्रम, उसकी पूंजी और उद्योग की वर्तमान दशा के कारण बतलाता हुआ श्रीयुत राधाकुमुद मुकर्जी लिखित व्यवसाय की उन्नति के तरीकों का उल्लेख करूँगा। वर्तमान श्रम पूँजी और उद्योग को काम में लाते हुए भारत फिर कैसे समृद्धिशाली बन सकता है? यदि हम व्यव-साय की उन्नति के इतिहास का ध्यानपूर्वक अध्ययन करें तो पता चलेगा कि वैज्ञानिक रीति से परिचालित बड़े २ शिल्प कारखानों के साथ ही छोटे २ व्यवसाय कारीगरी की भी उन्नति होती है। यूरप के वर्तमान इतिहास में इसके ज्वलंत उदाहरण विद्यमान हैं। यह कहना भूल है कि पाश्चात्य व्यवसाय के आगे हमारे छोटे २ व्यव-साय चल नहीं सकते।

कलाकौशल के कारबार खोलने में श्रम, पूँजी और उद्योग की बड़ी ही आवश्यकता है, परंतु वे यहां पर बहुत कम हैं। तो भी ऊपर लिखी बातों पर विचार कर के यह कह सकते हैं कि उद्योग करने से बहुत कुछ हो सकता है।

श्रम—भारत के मजदूर तथा श्रमजीवी लोग जैसा कि ऊपर कहा गया है दक्ष तथा योग्य नहीं हैं और जो चतुर हैं वे निर्माणकुशल नहीं हैं और नए आविष्कृत औज़ार तथा मशीन इत्यादि का चलाना नहीं जानते हैं। इन सब असुविधाओं का कारण केवल यही है कि हम लोगों को कला कौशल की शिक्षा नहीं दी जाती। भारतवर्ष में कलाकौशल की कितनी आवश्यकता है यह सभी विद्वान् जानते हैं परंतु भारतवर्ष में ऐसे विद्या-लय देखने में नहीं आते हैं जो विद्यार्थियों को कलाकौशल इत्यादि की शिक्षा दें। जो हैं भी वे नहीं के बराबर हैं। इसलिये इसकी भारी आव-श्यकता है कि भारतवासियों को कलाकौशल की शिक्षा देकर उन में मशीन इत्यादि चलाने की योग्यता तथा निर्माणकुशलता पैदा की जाय। जब तक ऐसे मनुष्यों का अभाव है तब तक छोटे २ कारखाने खोलने चाहिए और उनमें परंपरा से वही काम करनेवाले मनुष्यों को नियुक्त करना चाहिए और धीरे २ उन्हें मशीन इत्यादि का प्रयोग सिखाना चाहिए। ऐसे मनुष्य परंपरा से उसी काम को करते आने के कारण एक तो उसमें पारंगत हो जाते हैं और दूसरे उसी विषय की बातें यदि उन्हें सिखालाई जायं तो वे बहुत जल्दी उन्हें समझ लेते हैं और उसमें उन्नति कर दिखाते हैं। इसलिये मैनेजर को चाहिए कि वह ऐसे मनुष्यों को काम पर नियुक्त करे जो बराबर उस काम को करते आते हों। बिना सोचे विचारे अनभिज्ञ मनुष्यों को काम पर न लगावें। इसी अदूरदर्शिता के कारण स्वदेशी आन्दोलन के समय बहुत से कारखानों की उन्नति नहीं हुई। इसी संबंध में हमको यह विचारना आवश्यक है कि कारबार के निरीक्षक कैसे नियुक्त करें कि कारोबार का सब कार्य उन्हीं के द्वारा होता रहे। वर्तमान कारोबार में शिक्षित निरीक्षकों की बड़ी ही आवश्यकता है परंतु भारतवर्ष में इनका अभाव है और बिना इनके उन्नति की आशा नहीं की जा सकती। यही कारण है कि लोग अपनी पूँजी किसी कारबार में नहीं लगाते क्योंकि उन्हें निश्चय नहीं कि किसी कार-बार में रुपये लगाने से उन्हें फायदा होगा। वे नित्य कारखानेवालों का दिवाला निकलते अपनी आँखों देखते हैं। सब देशों और सब कारबारों में इन निरीक्षकों के बिना काम नहीं चलता। यह निरीक्षकों का ही व्यवसायज्ञान है जो मनुष्यों को व्यवसाय में पूँजी लगाने के लिये उत्साहित करता है। इसलिये सबसे पहले निरी-क्षक शिक्षित करने की बड़ी भारी आवश्यकता है। भारत में निरीक्षकों का अभाव उन्नति का बाधक हो रहा है। यह केवल यहाँ की शिक्षाप्रणाली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का दोष है। यह एक आश्चर्य की बात है कि भारत इतना बड़ा देश है परंतु इसमें केवल एक प्रकार की ही शिक्षा का प्रचार है। आज कल की भारतीय शिक्षा अच्छे क्लर्क, मेजिस्ट्रेट, वकील बना सकती है परंतु व्यवसायी तथा कारबार के चलानेवाले मनुष्य पैदा करना उसकी शक्ति के बाहर है। ऐसे निरीक्षक आदि व्यवसायी मनुष्य शिक्षित करने के लिये नए प्रकार की शिक्षा की आवश्यकता है।

लाभ तुरंत ही मिल जाय और एक वर्ष में जितना फायदा हो सके उतना ही अच्छा क्योंकि इस फ़ायदे को देख कर अन्य धनी मनुष्य भी अपनी अपनी पूँजी उस कारबार में लगाने को उत्साहित होंगे। प्रोफेसर मारशल का सिद्धांत है कि "वे व्यवसायी मनुष्य जो कि एक बार में बहुत सा माल बेचते हैं और जिनको बहुत जल्दी अपनी लगाई हुई पूँजी का प्रतिफल मिल जाता है सैकड़ा पीछे एक का नफा होते हुए भी बहुत जल्दी धनी हो जाते हैं" इस सिद्धांत के अनुसार काम करता हुआ व्यवसायी मनुष्य अपनी पूँजी को ऐसी वस्तु बनाने के कारबार में व्यय करे जिसकी माँग बहुत ज्यादा हो और जो सर्वदा एक सी बनी रहती हो। साथ ही उसको उसके सस्तेपन का ध्यान रखना चाहिए क्योंकि सस्ते माल की अधिक खपत होती है।

पूँजी की उन्नति के विषय में इतिहास देखने से ज्ञात होता है कि वाणिज्य ने उसके बढ़ाने में बड़ी उन्नति की इस लिये साथ ही साथ वाणिज्य की उन्नति अवश्य करनी चाहिए।

भारत, जैसा कि ऊपर कहा गया है, एक कृषि-प्रधान देश है इस लिये खेती की उन्नति के विषय में भी कुछ अवश्य वक्तव्य है। खेती की उन्नति का भार बेचारे कृषकों पर नहीं है जिनके पास न तो पूँजी है और न शिक्षा। इसकी उन्नति का भार ज़मीदारों तालुकेदारों, और उन मनुष्यों पर है जो जमींदार भी हैं और मालदार भी हैं। इनको चाहिए कि अपने आदर्श कार्य्यालय बनावें। परंपरा से वही धंधा करनेवाले निरीक्षकों तथा दूसरे कारबारियों को निरीक्षण करने तथा मेशीन चलाने और बनाने के काम में अच्छी तरह पारंगत होना चाहिये और उनको यह अच्छी तरह मालूम होना चाहिए कि बाज़ार में हिंदुस्तान की किस वस्तु की ज्यादा माँग है। उनको स्वयं सफ़र कर के प्रदर्शिनी इत्यादिकों में जा कर छोटी छोटी तथा बड़ी फैक्टरियों के कारबार का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। इसके साथ ही साथ हम को अन्वेषणसमितियाँ नियत करनी चाहिए जो कच्चे माल तथा सामान को वैज्ञानिक तथा रासायनिक रीति से काम में लाने की नई नई रीतियां सोंचे और नवयुवकों को उनकी शिक्षा दें। सुना है कि बंगाल की जातीय शिक्षा-समिति ने इन्हीं तरीकों पर शिक्षा देने का पूरा प्रबंध किया है। इसकी बहुत जल्दी उन्नति होगी क्योंकि इसके सहायक देश के बड़े बड़े नामी तथा अग्रगण्य व्यक्ति हैं। कला कौशल की ऐसी शिक्षा की बड़ी आवश्यकता है जिससे शिक्षित मनुष्य अच्छे एजेंट, बैंकर और व्यवसायी बन सकें। अब जो कुछ कि हमारे पास पूँजी है उसे हमें कैसे काम में लाना चाहिए? एक तो हमारे पास इतनी पूंजी नहीं जिससे बड़े बड़े कारबार चल सकें और दूसरे जितनी पूंजी है उसे हम कारबार में लगाने में उत्साहित नहीं होते या पीछे हटते हैं। बात यह है कि वर्तमान दशा को देख कर कोई भी पूंजी लगाने को उत्साहित नहीं हो सकता। इस लिये थोड़े दिनों तक हमको अपनी पूंजी इस तरह से और ऐसे कारबार में लगानी चाहिए कि जिसमें हानि की संभावना ही न हो और अच्छा लाभ हो। छोटी छोटी पूंजियों को हम होशियार कृषकों के लाभ के लिये लगावें और निरीक्षण के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिये होशियार और अनुभव प्राप्त शिक्षित निरीक्षक नियुक्त करें। भारत की कृषि की उन्नति के लिये ज़मींदार की पूंजी, शिक्षित तथा होशियार निरीक्षक का वैज्ञानिक ज्ञान और परम्परा से वही काम करनेवाले कृषकों का श्रम—ये ही तीनों आवश्यक साधन हैं।

प्रत्येक कार बार की उन्नति चार बातों पर निर्भर है। प्रत्येक व्यवसायी मनुष्य को ये चार बातें सर्वदा याद रखनी चाहिए:—

१—प्रत्येक कारबार में परंपरा से वही काम करनेवाले अनुभवलब्ध मनुष्यों का लगाना।

२—हाथ से चलनेवाले तथा स्टीम से चलनेवाले औजार तथा मशीनों को अनुभव प्राप्त तरीकों से काम में लाना।

३—उपयोगी कच्चे माल का रासायनिक तरीकों से उपयोग करना।

४—कच्चे माल की खपत का ध्यान रखना।

प्रगति वा उन्नति-उसका नियम और निदान।

(२)

प्राचीन आकृति-चित्रों से जिस प्रकार लेखनकला का विकाश हुआ उसी प्रकार चित्रकला और मूर्त्तिकारी का भी। प्राचीन काल में देवताओं, राजाओं, मनुष्यों और पशुओं की जो आकृतियाँ बनाई जाती थीं वे रेखाओं के द्वारा। इन रेखाओं के भीतर के स्थानों में रंग भर दिया जाता था। कभी कभी रेखाएँ इतनी गहरी खींची जानें लगीं कि उनसे घिर कर बनी हुई आकृतियाँ उभरी हुई जान पड़ने लगीं। धीरे धीरे यह हुआ कि रेखाओं के बाहर की सतह टाँकी से छील कर नीचा करने लगे जिससे आकृतियाँ और भी उभरी हुई होने लगीं। इस प्रकार पत्थर या काठ की सतह पर उभरी हुई नक्काशी के रूप में मूर्त्तिनिर्माण का आरंभ हुआ। मिस्र, असुर, भारतवर्ष, पारस इत्यादि के प्राचीन खँडहरों में इस प्रकार की दीवारें बहुत मिलती हैं जिन पर उभरी हुई मूर्त्तियाँ खोद कर बनाई हुई हैं। मिस्र में मूर्त्तिनिर्माण कला की विशेष उन्नति हुई। वहाँ इन दीवारों पर खोदी जानेवाली मूर्त्तियों से अलग मूर्त्ति गढ़ने की कला क्रमशः निकली। इन मूर्त्तियों के अंगों की गोलाई आदि तो पूरी बनने लगी पर बहुत दिनों तक उनका पृष्ठ भाग उस पत्थर के ढोंके से लगा हुआ होता था जिससे वे मूर्त्तियाँ गढ़ी जाती थीं। ऐसी मूर्त्तियाँ अब भी गढ़ी जाती हैं और मंदिरों में दिखाई पड़ती हैं। धीरे धीरे बिल्कुल अलग मूर्त्तियाँ गढ़ी जाने लगीं। इस प्रकार प्राचीन रेखाकृतियों से क्रमशः लेखन कला, चित्रकला, नक्काशी और मूर्त्तिकारी का विकाश हुआ।

एकरूपता से अनेकरूपता को प्राप्त होने का जो व्यापक नियम रेखाकृति से लेखनकला, मूर्त्तिकारी आदि के विकाश में देखा जाता है वही इन कलाओं की अलग अलग उन्नति में भी चरितार्थ होता है। आज कल की किसी मूर्त्ति या चित्र को देखिए तो प्राचीन मूर्त्ति या चित्र से उसके भिन्न भिन्न अंगों और भागों में कहीं अधिक विभेद दिखाई देंगे। बहुत प्राचीन चित्रों में जो पदार्थ दिखाए गए हैं वे आँख से बराबर दूरी पर जान पड़ते हैं पर आधुनिक चित्र में कुछ पदार्थ आँख से अधिक दूरी पर दिखाए जाते हैं और कुछ कम। दूसरी बात यह है कि प्राचीन चित्रों में सब पदार्थों पर एक ही मात्रा का प्रकाश दिखाया जाता है पर आधुनिक चित्र में भिन्न भिन्न स्थानों में आलोक और छाया की भिन्न भिन्न मात्रा रहती है जिससे उनके भाग बहुत भिन्न भिन्न दिखाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ते हैं। रंगों के संबंध में भी यही बात है। प्राचीन चित्रों में केवल पाँच छ मुख्य रंग ही होते हैं पर आज कल के चित्रों में न जाने कितने रंग होते हैं। प्राचीन चित्रों में शरीर की भिन्न भिन्न मुद्राएँ भी इतनी अधिक नहीं दिखाई जाती थीं जितनी आधुनिक चित्रों में। प्राचीन काल में चित्रों में पदार्थों की आकृतियाँ बँधी होती हुई थीं जिनके अतिक्रमण का साहस चित्रकार प्रायः नहीं करते थे।

आदिम रूपमें काव्य, संगीत और नृत्य एक ही विधान के अंतर्गत थे। बँधे शब्द, बँधा स्वर और बँधी गति इन तीनों का अनुष्ठान साथ ही होता था। यह बात आज कल की कुछ जंगली जातियों में अब भी पाई जाती है। उनकी कविता, उनका गान और उनका नाच एक दूसरे से अलग नहीं है। प्राचीन काल में भी ये तीनों एक ही थे। फिर क्रमशः ये तीनों कलाएँ एक दूसरे से अलग हुईं और क्रमशः इनमें भी अनेक शाखाओं की सृष्टि हुई। काव्य के अनेक भेद और उपभेद हुए। संगीत में भी स्वर ग्राम की पूरी क़वायद तैयार हुई। नृत्य के असंख्य भेद हुए। सारांश यह कि एक ही विधान से क्रमशः तीन कलाओं और तीन कलाओं की अनेक शाखाओं का विकाश हुआ। एकरूपता से अनेकरूपता की प्राप्ति का सर्वव्यापक नियम यहाँ भी स्पष्ट है।

अब इस सर्वव्यापक नियम का मूल क्या है? इसका उत्तर देने में नामरूपात्मक दृश्य जगत् से आगे हम जा नहीं सकते। जगत् का मूल कारण वस्तुतः क्या है इसका समझना हमारी बुद्धि के परे है। पर हम इतना कर सकते हैं कि दृश्य जगत् के व्यापारों का क्रमशः व्यापक नियमों में अंतर्भाव करते जायँ और एक ऐसे सर्वव्यापक नियम तक पहुँचें जिसके भीतर जगत् के समस्त व्यापार आ जायँ। अब सब प्रकार की उन्नतियों का यदि हम एक में विचार करते हैं तो यही कहना पड़ता है कि उन्नति विकार-विधान के अतिरिक्त और कुछ नहीं, अतः विकार-विधान या परिवर्त्तनक्रम के ही किसी नियम द्वारा ऊपर के प्रश्न का उत्तर हो सकता है। मेरी समझ में वह नियम यह है—"प्रत्येक गति-शक्ति द्वारा एक से अधिक परिवर्तन होते हैं—प्रत्येक कारण के एक से अधिक कार्य होते हैं।"

इस बात के कुछ उदाहरण लीजिए। जब एक वस्तु दूसरी वस्तु से टकराती है तब उसका फल या कार्य साधारणतः एक या दोनों वस्तुओं का स्थान या स्थिति बदलना ही समझा जाता है। पर थोड़ा विचारने से जान पड़ेगा कि और भी बातें होती हैं। आघात रूप व्यापार के अतिरिक्त शब्द भी होता है—अर्थात् टकराने वाली वस्तु के कंप द्वारा आसपास की हवा में कंप पहुँचता है। इस कंप के द्वारा लहरें उठती हैं। इसके अतिरिक्त जिस स्थान पर टक्कर लगती है वहाँ के अंणुओं के स्थितिविधान में भी अंतर पड़ता है जिससे कभी कभी आकुंचन होता है। इस आकुंचन के साथ ही साथ ताप भी छूटता है, और किसी किसी अवस्था में प्रकाश या चिनगारी भी उत्पन्न होती है। इस प्रकार एक आघात नामक व्यापार से इतने फल या कार्य उत्पन्न हुए। इसी प्रकार और भी समझिए। एक व्यापार से कई फल—एक कारण से कई कार्य—उत्पन्न होते हैं और फिर एक फल से न जाने कितने फल निकलते हैं।

फलों की यह अनेकता जो हमें नित्यप्रति दिखाई देती है वह आदि काल से चली आ रही है। यह जगत् के छोटे से छोटे और बड़े से बड़े व्यापार में दिखाई देती है। एक गति-शक्ति से एक से अधिक परिवर्त्तन होते हैं। इस नियम को मान लेने पर यह मानना ही पड़ेगा कि पूर्व काल से बराबर पदार्थविधान में जटिलता आती गई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है—एक रूपता अनेकरूपता में परिवर्तित होती आई है। *

फ्रेञ्च इतिहासकार गीज़ो।

अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में फ्रांस की ऐतिहासिक अवस्था बड़ी ही शोचनीय थी। सन् १७७४ ई० में लुई सोलहवाँ राज्य का स्वामी हुआ। इसके अन्याय, अनीति तथा द्रव्यलोलुपता के कारण प्रजा को महान् कष्ट पहुँचा। फल यह हुआ कि निर्धन कृषक तथा मध्य श्रेणी के सर्वसाधारण रणचंडिका की रक्तपिपासा शान्त करने के लिये एवं अन्यायी, क्रूर एवं मदांध सरकार को उचित शिक्षा देने के लिये, राज्यक्रांति करने पर उद्यत हुए। यह देख लुई महाराज घबराये और प्रजा को लालच देकर शांत करने की चेष्टा करने लगे। परन्तु प्रजा उनके झूठे वायदों से भली प्रकार परिचित थी। इस कारण शान्ति के स्थान में अशांति बढ़ती ही गई। राजकर्मचारी प्रजादल के नेताओं, उनके साथियों तथा संदिग्ध मनुष्यों को पकड़ कर दंड देने लगे इसी दल में एक विख्यात देशभक्त पकड़ा गया और उसे फांसी की आज्ञा दीगई। यह सुन फ्रांस के अच्छे से अच्छे कुलों में शोक का बादल छा गया। उसकी स्त्री भी देशभक्त थी। इस कारण वह ईश्वर से बार २ यही प्रार्थना करती थी कि "हे ईश्वर हमें एक महान् कष्ट के सहन करने की शक्ति दो।" उसकी यह प्रार्थना कदापि न थी कि उसका पति देश के लिये आत्म-परित्याग न करे वरन् वह यही प्रार्थना करती थी कि दुःख सहन करने की शक्ति दो। इसी पवित्र माता के गर्भ से प्रसिद्ध लेखक गीज़ो उत्पन्न हुआ था।

इस महान् लेखक के विषय में एक शोकजनक बात उल्लेखनीय है। फ्रांस में महान् राज्यक्रान्ति के पहले धार्मिक मतभेदों से कितनी ही हानियाँ होती रहती थीं। ईसाईधर्म के प्रोटेस्टेंट लोगों के प्रति कैथलिक सम्प्रदायी यथासाध्य क्रूरता करने में कमी न करते थे। हमारा ग़रीब भारवर्ष धार्मिक मतभेदों के लिये बदनाम किया जाता है और बात बात में यह भेद ज़ोरों के साथ प्रदर्शित किया जाता है। परंतु उन आक्षेप-प्रेमी मनुष्यों को और और देशों की प्राचीन दशा की ओर भी ध्यान देना उचित है। यदि ऐसे मत-भेद और धार्मिक विप्लवों के होते हुए भी योरोप सब बातों के योग्य समझा जाता था तो कोई कारण नहीं है कि यह देश (जहां धार्मिक विवादों में जीव-हिंसा आदि कुछ नहीं होती केवल मौखिक वार्ता ही हुआ करती है) इस बीसवीं शताब्दी में भी अपने को किसी योग्य न समझे। गीज़ों के माता-पिता प्रोटेस्टेंड थे। इस कारण उनका विवाह सबंध गुप्तरीति से हुआ था। अतः वह अनियमित गिना जाता था। इस प्रकार गीज़ों की माता पर दो आपत्तियाँ थीं—एक तो पति की मृत्यु और दूसरे उसका नियमविरुद्ध विवाह होना।

बाल्यावस्था।

पति की मृत्यु के बाद गीज़ो की माता जिनेवा गई। वह एक विदुषी महिला थी और इस कारण अपने पुत्र के पठन पाठन का विशेष ध्यान रखती थी। वह शिल्पकला तथा दस्तकारी को शिक्षा का एक प्रधान अंग मानती थी इसी कारण उसने अपने पुत्र गीज़ो को बढ़ई का काम सिखाना आरंभ किया। थोड़े ही समय में उसने यह विद्या सीख ली और उसके हाथ का बनाया हुआ एक "टेबुल" अभी तक फ्रांस में विद्यमान है। बाल्यावस्था ही से उसे पढ़ने का व्यसन हो गया

* Herburt Spencer के Progress its law and causes का मर्म।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

110762

था। चार वर्षों के परिश्रम के बाद उसने यहाँ तक शक्ति प्राप्त कर ली थी कि वह डिमोस्थिनीज़, सिसरो, शेक्सपियर, टेसिटस, शिलर, गेथे, गिबर आदि विद्वानों की पुस्तकें उनकी मूल भाषाओं ही में अच्छी तरह पढ़ सकता था। गीज़ो की प्रवृत्ति इतिहास तथा तत्वज्ञान की ओर अधिक थी। स्मरणशक्ति तीव्र होने के कारण १८ वर्ष की अवस्था से ही वह लेख लिखा करता था सामयिक पत्र-पत्रिकाओं में जिनका आदर होता था।

विवाह।

गीज़ो के विवाह की अलौकिक कथा भी सुनने योग्य है। 'पोलिन म्युलन' नामक एक बालिका, जिसके मातापिता राज्यविप्लव के कारण निर्धन हो गए थे, उदर निर्वाहार्थ लेखक का कार्य करती थी। कुछ समय पश्चात् उसने एक पत्र निकालना आरंभ किया। गीज़ो इस पत्र को आदर की दृष्टि से देखता था। एक बार उक्त संपादिका महाशया पर रोग ने कृपा की और उसकी दशा दिनों दिन बिगड़ती गई। पत्र के संचालन में विघ्न आता देख गीज़ो ने गुप्त रीति से लेखों तथा टिप्पणियों द्वारा उस महिला की सहायता करना आरंभ किया। लेखों तथा टिप्पणियों के विचार उस महिला के विचारों से एक दम मिलते जुलते होते थे। इसकारण वह बड़ी प्रसन्न हुई और उस महान् परोपकारी लेखक की खोज करने लगी। लेख पर गीज़ो महाशय अपना नाम न देते थे इस कारण उसने अपने पत्र में अनेक प्रकार से प्रार्थना करके उनका (गीज़ो का) हाल जानना चाहा। वह सहायता करता ही जाता था परंतु नाम प्रकट करने पर वह तत्पर न हुआ। इधर वह विदुषी महिला भी उद्योग करती ही रही। निदान "जापर जाकर सत्य सनेहू। सो तेहि मिलै न कछु सन्देहू" इस बात के अनुसार दोनों एक दूसरे से मिले। इसके पश्चात् दोनों ने मिल कर साहित्य-क्षेत्र में कार्य करना आरंभ किया। इनके सम्मिलन से साहित्य-क्षेत्र में नवीन जीवन का संचार हुआ और दोनों की शुद्ध मैत्री थोड़े समय के पश्चात् विवाह रूप में और भी सुदृढ़ हो गई। साहित्यप्रवृत्ति का यह एक अच्छा उदाहरण है।

साहित्य-सेवा।

गीज़ो के साहित्य प्रेम, तथा उसकी विलक्षण तर्कबुद्धि से मोहित हो विश्वविद्यालयों के प्रधान अध्यक्ष फाँन्टे ने उसको बोर्बोन यूनिवर्सीटी में इतिहास का प्रोफेसर नियुक्त किया। गीज़ो की सुन्दर वक्तृत्वशक्ति का दिनों दिन मान बढ़ाता गया और राज्यसञ्चालन में अनेक पदों पर भी कार्य करने का अवसर उसे दिया गया। लिखने की आवश्यकता नहीं कि प्रत्येक पद पर उसके कार्य की सराहना होती थी।

इन सब कार्यों के करते रहने पर भी गीज़ो महाशय ग्रंथ लिखते रहे। परंतु उनके सब ग्रंथों में "यूरोप के सुधार का इतिहास" नामक ग्रंथ सर्वोत्तम समझा जाता है। इस पुस्तक की लेखनशैली, शब्द तथा वाक्ययोजना, विषय की गंभीरता आदि सभी बातें ऐसी हैं जिनके कारण प्रायः योरोपीय सभी भाषाओं में इसके अनुवाद हो चुके है। भारतीय भाषाओं में भी इस ग्रंथ के अनुवाद के प्रकाशित होने की अत्यावश्यकता है। अहमदाबाद की "गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटी" ने इस ग्रन्थ का एक उत्तम अनुवाद प्रकाशित किया है। आशा है राष्ट्रभाषा हिंदी में भी इसका सम्मान होगा।

महाशय गीज़ो के जीवन से निस्वार्थता तथा अटूट परिश्रम के करते रहने की शिक्षा मिलती है। साहित्यक्षेत्र के सच्चे सेवक को इनके जीवन से यह भी ज्ञात होगा कि उसे नाम के पीछे जान देने की विशेष आवश्यकता नहीं है। बिना परिश्रम प्रसिद्धि चाहनेवालों को इससे उद्योग का माहात्म्य ज्ञात होगा।

साँवल जी नागर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पायनियर और हिंदी।

गत ७ मई के पायनियर में हिंदुस्तान की व्यापक भाषा के नाम से एक अग्रलेख निकला है। कह नहीं सकते कि वह संपादक महाशय का ही उद्गार है या और किसी का। लेखक को यह बात बहुत खटकी है कि जिस हिंदी का पचास वर्ष पहले कचहरियों और दफ्तरों में कोई नाम नहीं लेता था आज जहाँ देखो वहाँ उसकी चर्चा सुनाई पड़ती है, उसमें न जाने कितने पत्र और पुस्तकें निकलती हैं। लेखक की समझ में यह यह बात घोर आन्दोलन द्वारा हुई है जो बड़ी कूटनीति और व्यवस्था के साथ चलाया गया है। आन्दोलनकारी कोई दूसरे नहीं हैं, वे ही हैं जो राजनैतिक आन्दोलन किया करते हैं। यह सब उन्हीं की करामात है। उनके कौशल और सूझ की तारीफ़ है।

हिंदी इस प्रकार अपना अधिकार बढ़ाती गई और उर्दूवाले चुपचाप ताकते रहे। यह नहीं कि डंडा लेकर उठें)। उनके इस भोलेपन और सिधाई पर आपको बहुत तर्स आया है। उन्हीं को ख़बरदार करने के लिए शायद आपने क़लम में जोत कर अपनी अक़्ल बेतहाशा दौड़ाई है। पर आपको यह समझ रखना चाहिए कि उर्दू के जितने सच्चे और समझदार प्रेमी हैं उन्होंने बराबर उसकी उन्नति की ओर ही ध्यान दिया है। उन्हें दूसरे का घर गिराने की अपेक्षा अपना घर बनाने की फ़िक्र ज़्यादा है। उन्हें हिंदी की समृद्धि पर अभिमान है। वे चाहते हैं कि हिंदी और उर्दू एक दूसरे का हाथ पकड़े हुए ज्ञान के उस शिखर तक पहुँचें जहाँ से सब के कल्याण का मार्ग दिखाई पड़े। बाक़ी बचे थोड़े से नासमझ लोग, उन्हें आपके उपदेश की कोई ज़रूरत नहीं। उनकी समझ पर डालने के लिए और पत्थर इकट्ठे करने का श्रम आपने व्यर्थ उठाया। उनसे जहाँ तक बना उन्होंने अपने धर्म का पालन किया, हिंदी के मार्ग में अनेक बाधाएँ खड़ी कीं और अब भी खड़ी करते रहते हैं। पर उनके प्रयत्नों की न हिंदी के सच्चे सेवक परवा करते हैं न उर्दू के सच्चे सेवक प्रशंसा। हिंदी और उर्दू के झगड़े का ज़माना अब गया। अब दूसरा समय है।

लेखक महाशय को अकस्मात् इतनी घबराहट हुई क्यों? बंबई में हिंदी साहित्य-सम्मेलन का होना सुनकर जिसमें हिंदीभाषियों के अतिरिक्त गुजराती, पंजाबी महाराष्ट्र, तैलंग सब थे। आपको तो यह विश्वास ही नहीं पड़ता कि माननीय श्री मालवीय जी ने हिंदी में व्याख्यान दिया होगा। हिंदी का व्याख्यान भिन्न भिन्न प्रदेशों के निवासियों ने समझा कैसे होगा? मालवीय जी ने अवश्य अंगरेज़ी में भाषण किया होगा। इस अनोखे अनुमान से आपको अत्यंत आनन्द प्राप्त हुआ है। अच्छा होता यदि इसी प्रकार के 'मनमोदक' खाते आप चुपचाप बैठे रहते।

सभा का कार्य्यविवरण।

(गतांक से आगे)

(५) निम्नलिखित पुस्तकें धन्यवादपूर्वक स्वीकृत हुईं:—

संयुक्त प्रदेश की गवर्नमेंट—

General Report on Public Instruction in U. P. for the year ending 31st March 1918.

Gazetteer of United Provinces B. Vol. Rampur-State

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत की गवर्नमेंट—

Fauna of British India.

श्रीयुत लल्लू भाई नारायण जी देसाई

गुप्त पांडव

राम वियोग

बाबू लक्ष्मीनारायण गुप्त काशी

गौतम बुद्ध

महारानी शैव्या

महात्मा मार्टिन लूथर

Indian Antiquary for June and July 1918.

Report on Aircraft-Supply of Great Britain

On periodicity of solar variations.

Early mesozoic physiography of the Southern rocky mountains

The atmospheric scattering of light

The mosses. collected by the Smithsonian African Expedition.

A new river dolphin from China

The marine algae and marine Spermatophytes of the Tomas Barrera expeditios to Cuba.

Explorations and field-work of the Smithsonian Institution in Uganda mosses. collected by R. Dummer and others.

पंडित तारकनाथ मिश्र कन्नौज

ईश पताका

हिंदी पुस्तक एजेंसी कलकत्ता-

विवेक वचनावली

— खरीदी गई

नूरजहां

सुख और सफलता के मूल सिद्धांत

आत्म रहस्य

जमशदेजी नसरवान् जी ताता का जीवन-चरित्र

जैसे चाहो वैसे बन जाओ

मुक्ति का मार्ग

शाहजहां

प्रातःकाल और सायंकाल के विचार

विजयी जीवन

सुख की प्राप्ति का मार्ग

सेवा-सदन

चार दोने

चतुर जापानी

तनमन और परिस्थितियों का नेता मनुष्य

हृदय की परख

बच्चों का जीवन सुधार

साधारण सभा।

शनिवार ता० २६ अप्रैल १९१९ संध्या के ५½ बजे स्थान-सभाभवन।

(१) पं० रामप्रसाद पाण्डेय के प्रस्ताव तथा बा० गोपालदास के अनुमोदन पर लाला भगवानदीन सभापति चुने गए।

(२) गत अधिवेशन ता० (२९ मार्च १९१९) का कार्यविवरण पढ़ा गया और स्वीकृत हुआ।

(३) सभासद होने के लिये निम्नलिखित सज्जनों के फार्म उपस्थित किए गए—

१—बाबू विश्वम्भर प्रसाद नं० १९/१९ रेवड़ी तालाब काशी १॥)

२—बाबू हंसराज धारसी, विश्वेश्वरगंज काशी १॥)

३—बाबू रामपलटसिंह फर्स्ट इयर क्लास क्वीन्स कालेज बोर्डिंग हाउस, काशी १॥)

४—पं० गोकुलचंद्र दीक्षित भरतपुर राज्य १॥)

५—बा० श्यामलाल लाइब्रेरियन-भरतपुर १॥)

६—पं० जगदीश, दीन पाँड़े-गायघाट-काशी १॥)

७—बाबू शिवप्रसाद ३६ बुलानाला, काशी १॥)

८—बाबू धनपतिसिंह कोठारी, उपमंत्री ना० प्र० पाठशाला चूरू ५)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९—बाबू महाराजसिंह जमीन्दार बाँसगाँव जि० गोरखपुर १॥)

१०—बाबू ब्रजमोहनसिंह उपसभापति-सरस्वतीसदन-पुस्तकालय, बाँसगाँव जिला गोरखपुर १॥)

११—बाबू वासुदेवसिंह जमींदार, बाँसगाँव जिला गोरखपुर १॥)

१२—बा० मार्कण्डेय सिंह जमींदार, बाँसगाँव जि० गोरखपुर १॥)

१३—पं० जगन्नाथ पुच्छुरत एफ० टी० एस० अमृतसर १॥)

१४—बाबू कृष्णानंद-नवाब की ड्योढ़ी—काशी १॥)

निश्चय हुआ कि ये सज्जन सभासद चुने जायँ।

(४) निम्न लिखित पुस्तकें धन्यवाद पूर्वक स्वीकृत हुईं।

बाबू रामचन्द्र वर्म्मा, काशी।

भूकंप।

पं० महादेव भट्ट—अहियापुर प्रयाग।

साहित्य सुमन।

खरीदी गईं:—

अभागिनी, लार्ड किचनर, भारतीय राष्ट्र-निर्माण, कर्म्मवीर गांधी, शान्तिमार्ग, महात्मा शेखसादी, प्रतिनिधिशासन, सीता, भीष्म, मणिभद्र, ब्रजभाषा बनाम खड़ी बोली, अस्तोदय और स्वावलम्बन, चन्द्रगुप्त, स्वामी सेवादास, जयपुर, रज्जबजी की वाणी।

(५) प्रबंधकारिणी समिति का यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि रेवरेंड ई० गीब्स सभा के आनरेरी सभासद चुने जायँ।

सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

(६) बाबू श्यामसुंदरदास जी का १ अप्रैल का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने सभापति के पद से इस्तीफा दिया था।

बाबू हरिहरनाथ ने प्रस्ताव किया कि सभा को दुःख है कि सभापति जी सभापतित्व का पद त्याग करते हैं और किसी कारण से इसके कारण का उल्लेख करना नहीं चाहते। वर्ष का अंत बहुत समीप है अतएव उनसे प्रार्थना की जाय कि शेष समय तक वे कृपापूर्वक अपना त्यागपत्र रोक रक्खें।

पं० केदारनाथ पाठक ने इस प्रस्ताव का अनुमोदन किया।

पं० रामप्रसाद पांडेय ने यह कह कर इसका विरोध किया कि सभापति महोदय कुछ अच्छा ही सोच कर ऐसा करते होंगे अतएव उनके निश्चय का भंग करना ठीक नहीं जान पड़ता।

अधिक सम्मति से बाबू हरिहरनाथ का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। इस प्रस्ताव के पक्ष में लाला भगवानदीन, पं० हरिनाथ तिवारी, पं० बद्रीप्रसाद पांडेय तथा बा० हरिहरनाथ ने सम्मति दी थी तथा विपक्षमें पंडित रामप्रसाद पांडेय थे।

(७) बाबू लालजीसिंह का ३ अप्रैल का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि उन्हें प्रथम सभासद काल के चन्दे का हिसाब और उस समय उसके त्यागने का कारण स्मरण नहीं है परंतु इतना स्मरण है कि उन्होंने उचित कारणवश चंदा नहीं दिया था और इस कारण वे पिछला चंदा नहीं दे सकते।

निश्चय हुआ कि केवल असमर्थ सदस्यों का ही चंदा क्षमा किया जाता है अतएव सभा आशा करती है कि बाबू लालजी सिंह अपने पिछले चंदे का ६) रु० देकर ही सभासद बनेंगे।

(८) पं० रामप्रसाद पांडेय ने कहा कि वे अक्तूबर १९१८ में सभा के सभासद चुने गए थे और उन्होंने दिसंबर १९१८ से अपना चंदा दिया था पर वह नियम १८ के अनुसार अक्तूबर १९१८ से उनके हिसाब में जमा किया। अतः इस सम्बन्ध में आज विचार होना चाहिए।

अधिक सम्मति से निश्चय हुआ कि सभासद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुने जाने की तिथि से चंदा देने की आवश्यकता नहीं है। जो सज्जन जब से चाहें अपना चंदा दे सकते हैं। अतः पंडित रामप्रसाद पांडेय का चंदा दिसंबर १९१८ से ही जमा किया जाय।

इस निश्चय के पक्ष में ५ सज्जनों ने और विपक्ष में चार सज्जनों ने सम्मति दी थी।

(९) सभापति को धन्यवाद दे सभा विसर्जित हुई।

प्रबंधकारिणी समिति।

शनिवार ता० २३ मई १९१९ संध्या के ६ बजे—स्थान सभाभवन।

(१) गत अधिवेशन (ता० २९ मार्च १९१९) का कार्यविवरण उपस्थित किया गया और स्वीकृत हुआ।

(२) मार्च और अप्रैल १९१९ के आय-व्यय का निम्नलिखित हिसाब उपस्थित किया गया।

आय का ब्योरा	साधारण विभाग	पुस्तक विभाग
गतमास की बचत	२७९१-१४—७	
सभासदों का चंदा	७१—३—०	
नागरी प्रचार	२—२—६	
फुटकर आय	१४—५—०	
पुस्तकालय	१५९-१२—०	
अमानत	२९४—३—०	
पुस्तकों की बिक्री	०—०—०	१७६-३—०
पृथ्वीराज रासो बिक्री	०—०—०	६२-८—०
हिंदी कोश	०—०—०	१९५५-१४-०
मनोरंजन पुस्तकमाला	०—०—०	६५८-४—०
भारतेंदु ग्रन्थावली	०—०—०	११-१४-६
हिंदी पुस्तकों की खोज	५००—०—०	" " "
भवन निर्माण	३-१४—६	" " "
मेहतर जोधसिंह पुरस्कार	३२—१-११	" " "
	३८६९-८—६	२८६४-११-६
	६७३४।)	

व्यय का ब्योरा	साधारण विभाग	पुस्तक विभाग
कार्यकर्त्ताओं के वेतन	२३१-९—०	२५-१३—९
मनोरंजन पुस्तकमाला	" " "	८०४-१३-९
छपाई	४१०-८—९	" " "
डाकव्यय	४१-१५—७	" " "
नागरीप्रचार	१६—८—०	" " "
पुस्तकालय	५७—०—९	" " "
फुटकर व्यय	१९—१—९	" " "
हिंदी कोश	" " "	१४३४-९-९
अमानत	७१५—७—०	" " "
मुंशी देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला	" " "	२००—०—०
हिंदी पुस्तकों की खोज	५४-५—३	" " "
पुस्तकों की छपाई	" " "	१२१-१४-९
पारितोषिक	४०—०—०	" " "
	१५८६-८-३	२५८७-४—

कुल जोड़ ४१७३।।।)

बचत २६०।≡)।।।

६७३४।)

बचत का ब्योरा

२३)८ रोकड़ सभा

९०।।-)१० बनारस बंक चलता खाता

१०००) बनारस बंक फिक्स्ड डिपाजिट

२३९=)४ पोस्टल सेविंग बैंक (स्थायी कोश)

२५३।।।=)।। बनारस बंक सेविंग बंक

(भवन निर्माण)

१४०।।।)५ " " (जोधसिंह पुरस्कार)

२५६०।≡)।।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय और अमानत खाते में जो रुपया जमा है वह बंक में जुदा खाता खोल कर रक्खा जाय।

(३) हिंदी-साहित्यसम्मेलन के परीक्षामंत्री का पत्र उपस्थित किया गया जिस में उहोंने काशी को परीक्षा का केंद्र नियत करने की सूचना दी थी और सभा के मंत्री को इस केंद्र का व्यवस्थापक चुना था।

निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय और मंत्री इस परीक्षा का प्रबंध करें।

(४) पं० मन्नन द्विवेदी गजपुरी लिखित "मुसलमान समय के भारतवर्ष के इतिहास" के संबंध में राय बहादुर पं० गौरी शंकर हीराचंद ओझा, अजमेर और पं०चंद्रधर शर्म्मा गुलेरी की संमति उपस्थित की गई कि इस ग्रंथको देवी प्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला में न छापकर मनोरंजन पुस्तकमाला में प्रकाशित करना चाहिए। साथ ही 'देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला' में कौन कौन सी पुस्तकें प्रकाशित की जाँय इस पर उन्होंने संमति दी थी।

निश्चय हुआ कि पं० मन्नन द्विवेदी गजपुरी लिखित "मुसलमान समयका इतिहास" मनोरंजन पुस्तकमाला में प्रकाशित किया जाय और इसके पुरस्कार का रुपया पं० मन्नन द्विवेदी जीको भेज दिया जाय।

यह भी निश्चय हुआ कि देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तक माला में वे ग्रंथ क्रमशः छापे जाँय जिनके विषय में पं० चंद्रधर शर्म्मा तथा राय बहादुर पं० गौरीशंकर हीराचंद ओझाने संमति दी है। साथ ही उनके लिये निम्न लिखित प्रबंध किया गया—

(१) फ़ाहियान का अनुवाद तैयार है।

(२) व्हेन्सांग का अनुवाद-बील और वाटर के संस्करण मंगवाए जाँय।

(३) व्हेंन्सांग का जीवनचरित्र—इसका अंग्रेजी अनुवाद मँगवाया जाय।

(४) राजतरंगिणी—पं० चंद्रधर गुलेरी से प्रार्थना की जाय कि वे कृपापूर्वक इसका अनुवाद कर दें।

(५) प्राचीन सिक्कों के विषय की पुस्तक-राय बहादुर पं० गौरी शंकर हीराचंद ओझा और पं० चंद्रधर शर्मा गुलेरी से प्रार्थना की जाय कि वे इसे शीघ्र तयार कर दें जिसमें इस पुस्तकमाला में दूसरी पुस्तक यही छापी जाय।

(६) मूता नैणसी की ख्यात—पं० रामनारायण डूगर से प्रार्थना की जाय कि वे कृपापूर्वक इसका संस्करण तैयार कर दें।

(७) फिरिश्ता—मुंशीदेवी प्रसाद जी से इसका अनुवाद करने के लिये मंत्री ने प्रार्थना की है वह स्वीकार की जाय और लेखक का जो व्यय हो दिया जाय।

(८) फ़ार्ब्स की रास माला नामक पुस्तक मंगाई जाय।

(९) महासिल उमरा—इसके अनुवाद का प्रबंध आगे चल कर यथासमय किया जाय।

(५) डाक्टर राधाकुमुद मुकर्जी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उहों ने लिखा था कि Indian Shipping के हिंदी अनुवाद का स्वत्व वे सभा को इस शर्त पर दे सकते हैं कि सभा उन्हें पुस्तक के पूरे मूल्य पर १२॥) सैकड़े पुरस्कार दे।

निश्चय हुआ कि डाक्टर राधाकुमुद मुकर्जी को लिखा जाय कि यदि वे कृपापूर्वक बिना कुछ पुरस्कार लिए हुए इसका अनुवाद प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने की आज्ञा सभा को दें तो सभा इसे प्रकाशित कर सकेगी क्योंकि सभा का उद्देश्य इससे आर्थिक लाभ उठाने का नहीं है और न इसकी आशा ही है।

(६) पं० कार्तिक झा का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने हिंदीशब्दसागर से मुहाविरा के संग्रह करने की अनुमति माँगी थी।

अधिक संमति से निश्चय हुआ कि सभा का कोश पूरा होने पर इस संबंध में विचार किया जा सकता है।

(७) आगामी वर्ष के लिये पदाधिकारीयों और प्रबंधकारिणी समिति के सदस्यों के चुनाव के संबंध में पं० श्रीकृष्ण शुक्ल आदि तथा पं० केदारनाथ पाठक आदि की भेजी हुई नामावलियाँ उपस्थित की गईं।

निश्चय हुआ कि इस चुनाव के लिये निम्नलिखित सूची बनाई जाय—

एक सभापति और दो उपसभापति।

बाबू श्यामसुंदर दास बी० ए०
पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी
पं० श्यामबिहारी मिश्र एम० ए०
पं० शुकदेव बिहारी मिश्र बी० ए०
पं० गोविंदनारायण मिश्र रायबहादुर
पं० गौरीशंकर हीराचंद ओझा
मुंशी देवीप्रसाद मुंसिफ,
पं० रामनारायण मिश्र बी० ए०
बा० गौरीशंकरप्रसाद बी० ए एल एल बी०
बाबू भगवान दास एम० ए०

एक मंत्री और एक उपमंत्री।

बाबू श्रीप्रकाश बी० ए, एल एल बी, बैरिस्टर
पं० गोविंदराव जोगलेकर बी० ए एल एल० बी
बा० बालमुकुंद वर्म्मा
बा० कृष्णदेव प्रसाद गौड़
बाबू मुरारीदास
पं० जानकीशरण त्रिपाठी
बा० शिवकुमारसिंह
पं० साँवलजी नागर
बा० वेणीप्रसाद

काशी से चार सभासद।

बा० बलदेवदास
बा० जगन्नाथदास
पं० इकबाल नारायण गुर्टू
मिस्टर एस० पी० दास
राय कृष्णदास
बा० केशवदास
पं० गोविंद नारायण मिश्र
बा० गंगाप्रसाद गुप्त
पं० निष्कामेश्वर मिश्र
बा० बाँकेबिहारी लाल
बा० वेणीप्रसाद,
मुंशी भगवानदीन
बा० मुरारी दास
बाबू रामदास गौड़ एम० ए०
पं० यज्ञनारायण उपाध्याय
बा० शिवप्रसादगुप्त
पं० साँवल जी नागर
बा० हरिदास माणिक
पं० हरिप्रसाद पालधि बी० ए०
बा० हरिहरनाथ बी० ए०
पं० श्रीकृष्ण शुक्ल
बा० शिवकुमार सिंह

विदेशी सभासद।

बंगाल से १—बाबू जगन्नाथ झुनझुनवाला
लाला राधामोहन गोकुल जी
बा० दामोदरदास खंडेलवाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिहार से १—पं० भुवनेश्वर मिश्र
बा० काशी प्रसाद जायसवाल
बा० राजेन्द्र प्रसाद।

(८) बा० श्यामसुन्दर दास जी का २६ अप्रल का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रस्ताव किया था कि मुंशी देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला डबल क्राउन सोलहपेजी आकार में छपनी चाहिए, इसकी दो हजार प्रतियों के संस्करण छपने चाहिएँ, छपाई का प्रबंध कलकत्ते में होना चाहिए और पुस्तकों के अनुवाद के लिये किसी व्यक्ति को वेतन पर नियत करना उत्तम होगा।

निश्चय हुआ कि डबलक्राउन सोलहपेजी आकार में इसके दो हजार प्रतियों के संस्करण छपवाए जायँ और पहली पुस्तक (फाहियान की यात्रा) परीक्षार्थ वणिक प्रेस कलकत्ते में छपवाई जायँ।

(९) निश्चय हुआ कि निम्नलिखित सज्जनों की एक उपसमिति बना दी जाय जो इस संबंध में विचार कर संमति दे कि सभा की पुस्तकों का मूल्य किस हिसाब से रक्खा जाय:—

बा० शिवप्रसाद गुप्त (संयोजक) बा० श्याम सुंदर दास बी० ए० और बा० बालमुकुंद वर्म्मा।

(१०) ग्वालियर तथा संयुक्त प्रदेश की हिंदी हस्तलिपि-परीक्षा के पर्चे उपस्थित किए गए।

निश्चय हुआ कि निम्नलिखित सज्जनों की एक सब-कमेटी बना दी जाय जो लिपिपत्रों पर विचार कर सभा को संमति दे कि किन किन बालकों को पारितोषिक और प्रशंसापत्र दिए जाने चाहिए—

पं० रामनारायण मिश्र बी० ए०, ठाकुर शिवकुमार सिंह, बा० श्यामसुंदर दास बी० ए० (संयोजक)

(११) कलकूरी के मुहर्रिर का प्रार्थनापत्र उपस्थित किया गया जिसमें उसने एक दरी के लिए प्रार्थना की थी और लिखा था कि बिछौना बिछानेवाले के लिये ।) मासिक स्वीकार किया जाय।

निश्चय हुआ कि मंत्री ५) तक की एक दरी खरीद दें। और १ जून सन् १९१९ से ।) मासिक बिछौने वाले का दिया जाय।

(१२) पाँच सभासदों के पत्र उपस्थित किए जिनमें किसी किसी सज्जन ने लिखा था कि ग्रंथमाला और लेखमाला की जो संख्याएँ नहीं निकल सकी हैं उनके बदले में जिन पुस्तकों को सभा ने सभासदों को देना निश्चित किया है वे उन्हें अर्द्धमूल्य पर दी जायँ, किसी ने लिखा था कि उनके बदले में हिंदी-शब्दसागर आदि भी दिए जायँ और किसी ने यह लिखा था कि उन संख्याओं का मूल्य उनके वार्षिक चंदे में जमा कर लिया जाय।

निश्चय हुआ कि इस संबंध में सभा जो पहले निश्चय कर चुकी है उसी के अनुसार कार्य्य किया जाय। चंदे में यह रुपया नहीं जमा किया जा सकता। न अर्द्धमूल्य में पुस्तकें दी जा सकती हैं और न मनोरंजन पुस्तकमाला तथा हिंदी शब्दसागर ही बदले में दिए जा सकते हैं।

(१३) जिन सभासदों के यहाँ २ वर्ष से अधिक का और जिनके यहाँ दो वर्ष का चंदा बाकी है उनकी नामावली उपस्थित की गई।

निश्चय हुआ कि इन सभासदों को सूचना दी जाय। यदि ३० जून १९१९ तक इनका चंदा न आ जाय तो इनके नाम सभासदों की नामावली से काट दिए जायँ।

(१४) छन्नूलाल मेडल के लिये बाबू प्रियानाथ वसक के "ग्रामों की सफाई तंदुरस्ती" विषयक लेख पर ठाकुर शोभाराम और कालीचरण दूबे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की यह संमति उपस्थित की गई कि यह लेख मेडल के योग्य नहीं है।

निश्चय हुआ कि इस लेख के लिये मेडल नहीं दिया जा सकता।

(१५) बा० वेणीप्रसाद का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने समय के अभाव से पुस्तकालय के निरीक्षक के पद से इस्तीफा दिया था।

निश्चय हुआ कि उनसे प्रार्थना की जाय कि यह वर्ष अब समाप्ति पर है अतः थोड़े दिनों तक वे कृपापूर्वक कार्य्य कर दें।

(१६) पं० गंगाप्रसाद अग्निहोत्री और पं० बालमुकुंद त्रिपाठी के पत्र उपस्थित किए गए जिनमें उन्होंने व्याकरण संशोधक समिति के कुछ सज्जनों के नाम बढ़ाए जाने के लिये लिखे थे।

निश्चय हुआ कि पं० सकलनारायण पाँड़े का नाम उस समिति में बढ़ा दिया जाय।

(१७) साहित्याचार्य पं० रामावतार पाण्डेय का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि उन्हें सभा यदि आनरेरी सभासद चुने तो वे इसे स्वीकार करेंगे।

निश्चय हुआ कि यह पत्र साधारण सभा में उनके चुनाव के लिये भेजा जाय।

(१८) बंगाल की एशियाटिक सोसाइटी का पत्र उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने लिखा था कि इस संसार में जिन भाषाओं के लोप हो जाने का भय है उनके हस्त लिखित ग्रंथों का संग्रह करने के लिये वे एक स्कीम तैयार कर रहे हैं। अतः इस संबंध में सभा उन्हें अपनी सम्मति दे कि (क) ऐसी कौन भाषाएँ हैं जिनके लोप हो जाने का भय है और जिनके हस्तलिखित ग्रंथ प्राप्त हो सकते हैं (ख) इन ग्रंथों को प्राप्त करने को सब से अच्छा उपाय क्या होगा (ग) ऐसी भाषाओं के विषय में जानने योग्य अन्य बातों का पता कैसे लग सकता है।

निश्चय हुआ कि बा० श्यामसुन्दर दास जी से प्रार्थना की जाय कि वे कृपापूर्वक इसका उत्तर दे दें।

(१९) गवर्नमेंट आफ इंडिया के फ़ाइनेन्स डिपार्टमेन्ट का १३ मई सन् १९१९ का पत्र नं० १२३१—एफ़ सूचनार्थ उपस्थित किया गया जिसमें लिखा था कि नोटों पर नागरी अक्षरों के संबंध में सभा से उन्हें जो पत्र भेजा गया उस पर विचार हो रहा है।

(२०) बाबू रामचंद्र वर्म्मा का पत्र उपस्थित किया गया गया जिसमें उन्होंने सभा के टाइपराइटर का मूल्य २००) रु० देने के लिये लिखा था।

निश्चय हुआ कि २००) में टाइपराइटर बेच दिया जाय। इसमें से १००) उनसे नकद लिया जाय और बाकी १००) रु० का हैण्डनोट लिखवा कर १०) रु० मासिक उनके वेतन से काट लिया जाय।

(२१) सहायक मंत्री का पत्र उपस्थित किया गया कि पुस्तकों का गत वर्षों का हिसाब ठीक करने के लिये अकाउन्टेन्ट को कुछ पुरस्कार देकर सबेरे के समय उनसे कार्य लिया जाय।

निश्चय हुआ कि मंत्री जी इसका उचित प्रबंध करें।

(२२) समय अधिक हो जाने के कारण निश्चय हुआ कि सभा इस समय विसर्जित की जाय और शेष कार्य्यों के लिये कल ता० [illegible] मई सन् १९१९ को संध्या के ६ बजे पुनः अधिवेशन हो।

मंत्री।

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें।

116762
गुरु नानकी विश्वविद्यालय

अजरावट	मूल्य ≡)	औरीसुधार	„ ॥)
अनन्यग्रंथावली	„ ≡)	संक्षेप लेखप्रणाली-	„ ॥)
[illegible]वती	„ ।॥)	हम्मीर रासो	„ १)
[illegible]र विहारीलाल—	„ =)	हरिश्चन्द्र—राजा हरिश्चन्द्र का चरित्र	„ =)
[illegible]	„ ≡)	सिंधदेश का इतिहास	„ ।)
चित्रावली--	„ २)	दादुदयाल की बानी	„ ।॥)
छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय-	„ १)	दादुदयाल के शब्द	„ ॥)
परिचर्याप्रणाली-रोगों की शुश्रूषा विधि।	„ ।)	हिन्दी लेकचर	„ -)
प्राचीनलेखमणिमाला	„ १)	यूनान का इतिहास	„ ।॥)
पृथ्वीराजरासो-२२ खण्ड	मूल्य २०) रु०	स्त्रियों के रोग	„ १)
प्रबोधचन्द्रिका	„ ।=)	भगवद्गीता (हिन्दी अनुवाद)	„ ।-)
विरहलीला-कवि आनंदघन कृत।	„ =)	आर्य प्राकृत व्याकरण	„ ।)
भारतेन्दुचरित्र-	„ ॥)	छत्र प्रकाश-लाल कवि कृत	„ ।॥)
भूषण ग्रंथावली-	„ ॥।)	सुघड़दर्जिन-सिलाई कटाई का सचित्र वर्णन	॥)
हिन्दी भाषा के सामयिक पत्रों का इतिहास	„ ।)	सत्यहरिश्चन्द्र-(भारततेन्दु रचित)	मूल्य =)॥
जंगनामा	„ ।॥)	भारतदुर्दशा	„ -)।
समालोचनादर्श	„ ≡)	बोपदेव का जीवनचरित्र	„ =)
समालोचना	„ =)	शेख मोहम्मद बाबा का जीवनचरित्र	„ -)
महाराणाप्रताप-बाबू राधाकृष्ण दास जी कृत	॥)	लेखक और नागरी लेखक	„ =)
श्रीराधाकृष्णदास (जीवनी)	„ ॥)	आयुर्वेद निदान समीक्षा	„ =)
युवती योग्यता	„ =)	भाषा-समस्त भाषाओं का संक्षिप्त विवरण	„ ≡)॥
यूरोपीयदर्शन-	„ ॥)	होरेशियस और मनुष्य की सात अवस्थाएँ	„ =)
राजविलास-	„ १)	भर्तृहरि निर्वेद नाटक	„ ।)
राज्यप्रबंधशिक्षा	„ ॥)	ललित शिक्षावली छोटी छोटी कहानियाँ	„ ।)

मिलने का पता--मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा बनारस सिटी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०० पुस्तकों की

मनोरंजन पुस्तकमाला।

की नई पुस्तक

'जरमनी का विकास'।

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

इस पुस्तकमाला में सब प्रकार के विषय रहेंगे—काव्य, नाटक, उपन्यास, दर्शन, विज्ञान, इतिहास, जीवनचरित, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, वनस्पतिशास्त्र, शासनशास्त्र इत्यादि इत्यादि। प्राचीन कवियोंके ग्रंथरत्नों से चुने हुए उत्तम संग्रह भी निकलते हैं। पुस्तकें इस चित्ताकर्षक रूप में [illegible] जाती हैं कि पाठक अपने मनोरंजन के साथ ही साथ बिना प्रयास अनेक बातों की जानकारी [illegible] कर सकते हैं। अब तक ये पुस्तकें निकल चुकी हैं।

१ आदर्श-जीवन—लेखक रामचंद्र शुक्ल।
२ आत्मोद्धार—लेखक रामचंद्र वर्म्मा।
३ गुरु गोविंदसिंह—लेखक वेणीप्रसाद।
४ आदर्श हिंदू १ भाग—लेखक मेहता लज्जाराम शर्म्मा।
५ " २ " "
६ " ३ " "
७ राणा जंगबहादुर—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा।
८ भीष्म पितामह—लेखक चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्म्मा।
९ जीवन के आनंद—लेखक गणपत जानकीराम दूबे बी. ए.।
१० भौतिक-विज्ञान—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी.।
११ लालचीन—लेखक ब्रजनंदन सहाय।
१२ कबीरवचनावली—संग्रहकर्त्ता अयोध्यासिंह उपाध्याय।
१३ महादेव गोविंद रानडे—लेखक रामनारायण मिश्र बी. ए.।
१४ बुद्धदेव—लेखक जगन्मोहन वर्म्मा।
१५ मितव्यय—लेखक रामचंद्र वर्म्मा।
१६ सिक्खों का उत्थान और पतन—लेखक नंदकुमार देव शर्म्मा।
१७ वीरमणि—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम. ए. और शुकदेवबिहारी मिश्र बी. ए.
१८ नेपोलियन बोनापार्ट—लेखक राधामोहन गोकुलजी।
१९ शासनपद्धति—लेखक प्राणनाथ विद्यालंकार।
२० हिंदुस्तान, पहला खंड—लेखक दयाचंद्र गोयलीय बी. ए.।
२१ " " दूसरा खंड— " " "
२२ महर्षि सुकरात—लेखक वेणीप्रसाद।
२३ ज्योतिर्विनोद—लेखक संपूर्णानंद बी. एस-सी., एल. टी.।
२४ आत्मशिक्षण—लेखक श्यामबिहारी मिश्र एम. ए. और शुकदेव बिहारी मिश्र बी. ए.
२५ सुंदरसार—संग्रहकर्त्ता पुरोहित हरिनारायण बी. ए.।
२६ जरमनी का विकाश—लेखक सूर्यकुमार वर्मा।

प्रत्येक पुस्तक का मूल्य ।) है, समस्त ग्रंथमाला के स्थायी ग्राहकों से ।।।) लिया जाता है। डाकव्यय अलग।

मिलने का पता—

मंत्री—नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह पुस्तक वितरित न की जाय
NOT TO BE ISSUED

सन्दर्भ ग्रन्थ
REFRENCE BOOK

Checked
1990-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri